॥ ઓમ્ ॥

યજુર્વેદ ભાષ્ય

(સ્વામી દયાનંદ સરસ્વતીજીના ભાષ્ય અનુસાર મૂળ મંત્ર, પદાર્થ અને ભાવાર્થ સહિત)



: અનુવાદ :

વૈદ્ય દયાલમુનિ આર્ય

<u>પ્રકાશક</u>

વાનપ્રસ્થ સાધક આશ્રમ, આર્યવન, રોજડ

પો. સાગપુર, જિ. સાબરકાંઠા, ગુજરાત-૩૮૩૩૦૭.

ફોન : (૦૨૭૭૪) ૨૭૭૨૧૭, (૦૨૭૭૦) ૨૫૭૨૨૪, ૨૮૭૪૧૭, ૨૯૧૪૯૬

E-mail : darshanyog@gmail.com Website : www.darshanyog.org

યજુર્વેદ ભાષ્ય

(સ્વામી દયાનંદ સરસ્વતીજીના ભાષ્ય અનુસાર ગુજરાતી અનુવાદ)

પ્રકાશન તિથિ : પોષ, ૨૦૬૫ વિક્રમી, ડિસેમ્બર સન ૨૦૦૮,
સૃષ્ટિ સંવત ૧,૯૬,૦૮,૫૩,૧૦૯

સંસ્કરણ (ગુજરાતી) : પ્રથમ (પ્રત ૫૦૦૦)

● મુખ્ય વિતરક ●

શ્રી રણસિંહ આર્ય
દ્વારા ડૉ. સદ્ગુણા આર્યા
'સમ્યક્', કર્મચારી સોસાયટી પાસે, પો. ગાંધીગ્રામ, જૂનાગઢ – ૩૬૨૦૦૧

આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, રાયપુર દરવાજા બહાર, અમદાવાદ-૨૨.
આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, હાથીખાના, રાજકોટ-૩૬૦૦૦૧.
આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, પોરબંદર-૩૬૦૫૭૫.
આર્યસમાજ, નવાડેરા, ભરૂચ-૩૯૨૦૦૧.
આર્યસમાજ, સ્ટેશન રોડ, આણંદ-૩૮૮૦૦૧
આર્યસમાજ, ૪૪-૪૫, સરદારનગર, ભરતનગર રોડ, ભાવનગર.
આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, ધ્રાંગ્રધ્રા. જિ. સુરેન્દ્રનગર-૩૬૩૩૧૦
આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, ખંભાળિયા નાકા, જામનગર-૫.
આર્યસમાજ, મહર્ષિ દયાનંદ માર્ગ, સૈજપુર બોઘા, અમદાવાદ-૪૫.
આર્યસમાજ, વિશ્રામબાગ કોલોની, મકરપુરા રોડ, પ્રતાપનગર, વડોદરા-૪.
આર્યસમાજ, સોની ફળિયા, સુરત-૩૯૫૦૦૩
આર્યસમાજ, આર્યસમાજ માર્ગ, વિસાવદર, જિ. જૂનાગઢ-૩૬૨૧૩૦.
આર્યસમાજ, સેક્ટર-૨૪, ગાંધીનગર-૩૮૨૦૨૪
આર્યસમાજ, દાતાર રોડ, જૂનાગઢ-૩૬૨૦૦૧.
આર્યસમાજ, ન્યૂ માણેકલાલ એસ્ટેટ, ઘાટકોપર(પ.) મુંબઈ-૪૦૦૦૮૬.
શ્રી અરવિંદ રાણા, ૭૯૧-ડી-૩ પંચશીલ પાર્ક, સેક્ટર-૨૧, ગાંધીનગર.
શ્રી મહેન્દ્રભાઈ ગાંધી, પ્લોટ નં. ૪૩૯, સેક્ટર-૨૩, ગાંધીનગર.
શ્રી ચંદ્રેશ આહુજા, ૩૧૦, ૧૧-બી સાધૂ વાસવાણી સોસા., ગોપાલપુરી, ગાંધીધામ.
સર્વોદય સાહિત્ય મંદિર, પ્લેટ ફોર્મ નં.-૧, રેલવે સ્ટેશન, અમદાવાદ.
શ્રી સુરેશ ચાવડા, 'પ્રેમ મોહન', ૯ નૂતનનગર, કાલાવડ રોડ, રાજકોટ.

મૂલ્ય : ૫૦૦-૦૦ રૂ.
લેસર ટાઈપ સેટિંગ : *રાજ ગ્રાફિક્સ,* અમદાવાદ. ફોન : ૨૬૫૭૫૦૨૯
રંગ સજ્જા : *વિનાયક ગ્રાફિક્સ,* અમદાવાદ. ફોન : ૯૮૭૯૦૯૪૩૨૫
આવરણ : *રાજકલ્પ મુદ્રણાલય,* અમદાવાદ. ફોન : (૦૨૭૧૭)૨૪૪૦૧૬
પુસ્તક બંધન : *રૉયલ ક્રિએશન કંપની,* અમદાવાદ. ફોન : ૨૫૫૦૭૦૩૩
મુદ્રક : *પ્રિન્ટ કૉન,* અમદાવાદ. ફોન : ૩૨૯૮૩૧૧૮

प्रकाशकीय

प्रातः पूर्व दिशा में सूर्य के उदय होते ही समस्त विश्व की वस्तुओं की यथार्थता का ज्ञान हो जाता है वैसे ही मानव समाज में वेद ज्ञान रूपी सूर्य के उपस्थित होने पर ही सच्चे ईश्वर, धर्म, संस्कृति, सभ्यता, आचार, विचार और आदर्श परम्पराओं से सम्बन्धित सिद्धांतों का ज्ञान होता है इसके विपरीत वेदों के अध्ययन की गुरुकुलीय आर्ष परम्परा के अभाव में अनेक प्रकार के अवैदिक मत पन्थ सम्प्रदाय चल पड़ते हैं । उनके कारण अन्धपरम्परा, पाखण्ड, आडम्बर आदि का प्रचलन हो जाता है । मानव समाज में सत्य, न्याय, दया, श्रद्धा, प्रेम, विश्वास, संयम, व्रत आदि का लोप हो जाता है और उसके स्थान पर सर्वत्र संशय, भय, भ्रम, छल, कपट, द्वेष, स्वार्थ, अशान्ति और दुःख व्याप्त हो जाते हैं ।

वेद सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ है । यह बात न केवल भारतीय हिन्दू अपितु पाश्चात्य विद्वान् भी मानते हैं । सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर महाभारत के काल तक समस्त विश्व के लोग मात्र इसे ही ईश्वरीय ग्रन्थ मानते आये हैं । मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी, योगिराज श्री कृष्ण चन्द्र जी, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, कपिल, कणाद, व्यास, बादरायण आदि ऋषि-महर्षि, सभी महानुभावों ने इन्हीं वेदों का गुरुकुलों में अध्ययन किया था ।

गीता, रामायण, महाभारत, ब्राह्मण, स्मृतियाँ, दर्शन, उपनिषद्, पुराण आदि पुस्तकों में भी वेद को ईश्वरीय ज्ञान माना है । वेदों में न केवल व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय व विश्वस्तरीय की भौतिक विकास की बातों का वर्णन है अपितु जीवन में सुख, शान्ति, सन्तोष, निर्भीकता और स्वतन्त्रता प्राप्त करानेवाली आध्यात्मिक विद्याओं का भी वर्णन सूत्ररूप में है। उदाहरण के रूप में गणित, भाषा, रसायन, चिकित्सा, भवन निर्माण, अस्त्र-शस्त्र निर्माण, युद्ध, वनस्पति, कृषि, उद्योग, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, राजनीति, न्याय, आयुर्वेद, संगीत, भूगोल, खगोल, सृष्टि उत्पत्ति विज्ञान, पर्यावरण, विमान, दूरसंचार आदि अपरा विद्या के साथ साथ इन्हीं वेदों में शरीर, आत्मा और मन को पवित्र तथा उत्तम बनाकर मोक्ष की प्राप्ति के लिये संस्कार, मनोनियंत्रण, जप, तप, ध्यान, वैराग्य, समर्पण, निष्कामकर्म, समाधि आदि परा विद्या के विषय भी बीज रूप में विद्यमान हैं । इतनी विद्याओं का उल्लेख वेदों के अतिरिक्त अन्य किसी भी तथाकथित ईश्वरीय ग्रन्थ में नहीं है । इसी के आधार पर वेदों को ईश्वरीय ज्ञान कहा गया है ।

ईश्वरीय ज्ञान के ग्रन्थ में जो जो विशेषतायें होनी चाहिए वे सभी इन वेद ग्रन्थों में उपलब्ध हैं जैसे कि -

१. जो सर्वाधिक प्राचीन हो ।

२. जिसमें मानवीय इतिहास न हो ।

३. जिसमें जैसा ईश्वर है वैसा ही ईश्वर का वर्णन पाया जाता हो ।

४. जिसमें मनुष्यों की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए समस्त ज्ञान-विज्ञान विद्यमान हो।

५. जिसमें वर्णित सिद्धान्तों, नियमों में परस्पर विरोघ न हो ।

६. जो किसी देश, जाति, मत, सम्प्रदाय विशेष के लिए न होकर मानव मात्र के लिए हो ।

७. जिसमें प्रत्यक्ष आदि प्रमाण तथा विज्ञान के विरूद्ध कोई कथन न हो ।

८. जिसमें जादू, टोना, चमत्कार, अन्धविश्वास, पाखण्ड से सम्बन्धित बातें न हो।

९. जिसमें सृष्टिक्रम विरूद्ध किसी भी असम्भव बात का वर्णन न हो ।

देश विदेश में गुजराती भाषी सज्जनों के समक्ष चर्चा या प्रवचनों में जब मैं वेद की चर्चा करता था तो लोग पूछते थे कि क्या गुजराती में वेद उपलब्ध है ? हम पढ़ना चाहते हैं । जब मैं निषेध कर दिया करता था तो लोग निराश हो जाया करते थे । मेरे मन में भी यह स्थिति खटकती थी । पिछले कुछ वर्षों से वेदों का गुजराती अनुवाद कराने और उन्हें प्रकाशित कराके गुजरात के प्रबुद्धवर्ग, राज्याधिकारी, शासनाध्यक्ष, न्यायाधीश, धर्माचार्यों, कथाकारों, सन्तों, महन्तों, बापुओं, लेखकों, बुद्धिजीवी प्रतिष्ठित महानुभावों, संचार-माध्यमों, विश्व विद्यालयों, पुस्तकालयों, मन्दिरों, आश्रमों में सर्वत्र यह पुस्तक पहुँचाने की इच्छा प्रबल हो रही थी । जो आज आंशिक रूप से पूरी हो रही है ।

आज देश-विदेश में धर्म, अध्यात्म के नाम पर पण्डित, पुरोहित, आचार्य, सन्त, बापू, संन्यासी, कथाकार अपने प्रवचनों और उपदेशों में प्राय: गीता, रामायण, महाभारत, पुराण, भागवत आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों की ही कथाएं करते हैं, सर्वमान्य वेद-मन्त्रों का आधार लेकर शुद्ध सैद्धान्तिक ज्ञान का वर्णन नहीं करते हैं । यदि उपर्युक्त विद्वान् अपने प्रवचनों व कथाओं में वेदों को स्वीकार कर लें तो अनायास ही समस्त विश्व में सच्चे ईश्वर, धर्म, शिक्षा, नीति, आचार, सिद्धान्त व व्यवहार का ज्ञान हो जाये, और समाज में प्रचलित अनेक प्रकार की भ्रान्तियां, संशय, पाखण्ड, आडम्बर आदि समाप्त हो जाए, धार्मिक व्यक्तियों के घन, समय व शक्ति का अपव्यय भी बच जाए और समस्त मनुष्य समाज अपने जीवन को सब प्रकार से उन्नत बनाकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अधिकारी

बन जाए।

वेदों का गुजराती भाषा में अनुवाद करवा कर प्रकाशन करवाना एक बहुत बड़ा पुरुषार्थ साध्य कार्य था । बार-बार निवेदन करने पर वानप्रस्थी दयालमुनि जी ने अति व्यस्त होने पर भी समय निकालकर अल्प काल में ही यजुर्वेद का गुजाराती भाषा में पदार्थ और भावार्थ लिखकर पाण्डुलिपि तैयार कर दी । अब आई बात प्रकाशन की, यदि चार पांच लाख की लागत व्यय से सम्पन्न होने वाला कार्य होता तो हम बिना किसी सूचना के प्रकाशित कर देते किन्तु इस कार्य के सम्पन्न होने में बहुत बड़ी राशि की अपेक्षा थी इसलिए पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लोगों को वेद भाष्य प्रकाशन की सूचना दी गई और हमें प्रसन्नता हुई कि मात्र एक दो मास में ही आर्य सज्जनों ने उत्साहपूर्वक आधी से अधिक राशि प्रदान कर दी, आशा है अवशिष्ट राशि भी प्राप्त हो जाएगी ।

ग्रन्थ के प्रकाशनार्थ जिन धार्मिक दानी सज्जनों ने आर्थिक सहयोग किया है या अग्रिम ग्राहक बने हैं उनका हम धन्यवाद करते हैं । जिन्होंने परोक्षरूप से भाग-दौड़ करके, बुद्धि लगाकर, अपनी जीवनचर्या को अस्त व्यस्त करके भी इसके मुद्रण, प्रकाशन, आदि में सहयोग किया है वे भी धन्यवाद के पात्र हैं । विशेष कर श्री शशिकान्त जी आर्य (प्रिन्ट कॉन) जिन्होनें अल्प व्यय पर, शीघ्र और सुन्दर रूप में यह पुस्तक प्रकाशित कराई एतदर्थ उनका भी धन्यवाद करता हूँ । विदेश में प्रचार तथा अन्यान्य कार्यों में व्यस्त होने के कारण मैं इसके प्रकाशन में पर्याप्त समय नहीं लगा पाया किन्तु ब्रह्मचारी दिनेश कुमार जी आर्य ने प्रारम्भ से लेकर अन्त तक हर प्रकार से इसको सम्पन्न कराने में पर्याप्त पुरुषार्थ किया है । ब्रह्मचारी प्रियेश जी आर्य आदि विद्यालय के ब्रह्मचारियों तथा श्री हीरालाल जी पाटील आदि वानप्रस्थ आश्रम के साधकों ने भी इस ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु बहुत श्रम किया है वे भी धन्यवाद के पात्र हैं ।

चारों वेदों का गुजराती में अनुवाद कराके प्रकाशित कराने की इच्छा है । प्रथम यजुर्वेद भाष्य आपके हाथों में है जिसका आधार स्वामी दयानंद सरस्वती जी द्वारा निरुक्त आदि वैदिक व्याकरण से प्रमाणित और प्राचीन ऋषियों की परम्परा के अनुरूप किया संस्कृत भाष्य है । दूसरा सामवेद, जिसका भी अनुवाद हो चुका है, वह भी शीघ्र प्रकाशित करके आपको प्राप्त कराने का प्रयास करेंगे । आप महानुभावों से अपेक्षा है कि स्वयं परिवार के साथ इस ग्रन्थ का नियमित स्वाध्याय करेंगे साथ ही न केवल देश में अपितु विदेशों में भी अपने परिचित गणमान्य, बुद्धिजीवी, प्रतिष्ठित सज्जनों तक इस ग्रन्थ को पहुँचाकर अधिकाधिक इसका प्रचार प्रसार करके हमारे सहयोगी बनेंगे, इसी आशा और विश्वास के साथ -

वानप्रस्थ साधक आश्रम
आर्य वन, रोजड़.
मार्गशीर्ष शुक्ल ४-२०६५
(१-१२-२००८)

शुभेच्छु
ज्ञानेश्वरार्यः

અનુવાદકીય

વેદ

બ્રહ્મની અમૃતવાણી,

આદિ ગુરુ પરમપિતાનું પીયૂષપાન,

ઈશ્વરીય જ્ઞાનનો ખજાનો,

અપૌરુષેય વિજ્ઞાનનો ભંડાર.

માનવ સૃષ્ટિનાં પ્રાંગણમાં સંધ્યાના સોનલવરણાં કિરણોનો પરમેશ્વરીય જ્ઞાનપ્રકાશ !

તે ઋચાઓ-મંત્રો પ્રભાતનાં ખિલેલાં મઘમઘતાં પુષ્પો ! પ્રાક્ કાળથી મહાભારત સુધી એ જ્ઞાન પ્રકાશ ઝળહળાટ ઝગમગતો અવનિને અજવાળતો રહ્યો.

એ પુષ્પોની સૌરભ સંસારના પટ પર મહેંકતી રહી.

પરંતુ મધ્યકાલીન સાયણ વગેરે ભાષ્યકારોએ વેદોને માત્ર યજ્ઞના કર્મકાંડની પોથી બનાવી દીધી.

વેદોમાં પશુબલિ, માંસભક્ષણ, મદિરાપાન, બહુદેવતાવાદ, મૂર્તિપૂજા, અવતારવાદ, દેવો, ઋષિઓ અને રાજાઓનો ઈતિહાસ, તેઓની અશ્લીલ કથાઓ, અનેક કપોલ-કલ્પિત વાર્તાઓ રચીને વેદોના નામે પ્રચલિત કરી.

એ જ રીતે પાશ્ચાત્ય ભાષ્યકારોએ પોતાની મલિન મનોકામના પૂર્ણ કરવા વેદોનું વિકૃત અને ભ્રષ્ટ

સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કર્યું.

આ રીતે મધ્યકાલીન અને પાશ્ચાત્ય ભાષ્યકારોએ વેદોને વિકૃત, અશ્લીલ અને બીભત્સ બનાવ્યાં.

ત્યારે-વર્તમાનકાલીન એક આર્ષદ્રષ્ટા, યુગપુરુષે વેદોનાં ભાષ્ય કરીને તેનો પુનરુદ્ધાર કર્યો.

એ યુગપુરુષ વેદ દિવાકર દયાનંદ !

એ આર્ષદ્રષ્ટા દયાનંદે વેદભાષ્યો કરીને, મધ્યકાલીન અને પાશ્ચાત્ય ભાષ્યકારોના વિકૃત અને અશ્લીલ અર્થોને દૂર કરીને, વેદોને વિશુદ્ધ ઈશ્વરીય જ્ઞાન-વિજ્ઞાન રૂપમાં પ્રકાશિત કર્યાં.

એ વેદ ભાસ્કરના દિવ્યજ્ઞાન પ્રકાશ આડે આવેલા અનાર્ષ સિદ્ધાન્તોના કાળાડિંભ વાદળોને દૂર કરી આર્યાવર્તને ઝગમગાટ ઝળકાવવા એ આર્ષદ્રષ્ટા દયાનંદનું હૃદય પોતાની આત્મકથામાં ધબકે છે :

"પરમાત્માની કૃપાથી (જો) મારું શરીર હશે અને વેદભાષ્ય સંપૂર્ણ થાય તેવા કુશળ દિવસો જોવામાં આવશે, તો નિઃસંદેહ આર્યાવર્ત દેશમાં સૂર્ય સમાન પ્રકાશ ફેલાઈ જશે.... પરંતુ (કદાચ) સૂર્યની સામે ગ્રહણ આવશે, તો (પણ) થોડા જ સમયમાં ફરી ઉગ્રહ (ગ્રહણ મુક્ત) અર્થાત્ નિર્મળ બની

જશે.''

મહર્ષિ દયાનંદના વેદભાષ્યથી સમસ્ત સંસારમાં જ્ઞાનપ્રકાશનાં સોનેરી કિરણો ઝળહળી ઊઠ્યાં.

બ્રહ્મર્ષિ દયાનંદની વેદ પરની અપ્રતિમ આસ્થા હતી કે - ''વેદ સર્વ સત્યવિદ્યાઓનું પુસ્તક છે. વેદ ભણવા-ભણાવવા અને સાંભળવા-સંભળાવવા એ આર્યોનો પરમ ધર્મ છે.''

ઋષિપ્રવર દયાનંદ ચારેય વેદોનું ભાષ્ય કરીને મનુષ્ય માત્રને શ્રેષ્ઠ અને સુખી જોવા ઈચ્છતા હતા; પરંતુ તેમાં યજુર્વેદનું સંપૂર્ણ અને ઋગ્વેદનાં અપૂર્ણ ભાષ્યના ૭૫૯૫ મંત્રોનું વેદામૃત આપીને નિર્વાણ પામ્યા.

અનુવાદ : સ્વામી દયાનંદે મૂળ વેદભાષ્ય સંસ્કૃતમાં કરેલ છે; તેનો હિંદીમાં અનુવાદ સ્વયં માર્ગદર્શન દ્વારા શિષ્યો-પંડિતો દ્વારા કરાવેલ છે; તેનું પ્રકાશન પરોપકારિણી સભા-અજમેર દ્વારા થયેલ છે. તદનુસાર સાર્વદેશિક સભા તથા અન્યો દ્વારા હિંદી અનુવાદ પ્રકાશિત થયેલ છે. મેં આ અનુવાદમાં તેનો આધાર રાખેલ છે.

પ્રસ્તુત અનુવાદમાં મેં મૂળ મંત્ર, મંત્રના સંસ્કૃત પદ = શબ્દ સાથે પદાર્થ = પદનો અર્થ અને અન્તમાં ભાવાર્થનો ક્રમ રાખીને ભાષ્યનો સંપૂર્ણ અનુવાદ કરેલ છે.

ભાષ્યના અનુવાદની હિંદી ભાષા સવાસો વર્ષ જૂની તથા મુદ્રણમાં અલ્પ વિરામ વગેરે રહિત હોવાથી અનુવાદ તથા વાક્ય રચના વગેરેમાં આચાર્ય સુદર્શનદેવ રચિત 'દયાનંદ યજુર્વેદ ભાષ્ય - ભાસ્કર'નો માર્ગદર્શકરૂપે ઉપયોગ કરેલ છે.

ભાવાર્થ : મેં સ્વામીજીના મૂળ સંસ્કૃત ભાવાર્થનો પ્રાયઃ અનુવાદ કરવા પ્રયાસ કરેલ છે. તેમ છતાં તેમાં વિદ્વદ્વર્ય આચાર્ય સુદર્શનદેવનો ઉક્ત ગ્રંથ તથા પં. સત્યાનંદ વેદવાગીશ સંપાદિત 'ભાવાર્થ પ્રકાશ' માર્ગદર્શક બની રહેલ હોઈ તેઓનો આભાર માનું છું.

સ્વામીજીના યજુર્વેદ ભાષ્યનો ગુજરાતીમાં અભાવ દીર્ઘકાળથી ખટકતો હતો. પરંતુ આયુર્વેદ સાહિત્ય લેખનમાં અતિ વ્યસ્ત હતો; તેમજ આ અનુવાદનું કાર્ય મહાન અને દુષ્કર પણ હતું.

આચાર્યશ્રી જ્ઞાનેશ્વરજી આર્ય વેદોના ગુજરાતી અનુવાદ માટે મને વારંવાર પ્રેરિત અને પ્રોત્સાહિત કરતા હતા અંતે તેમના માર્ગદર્શન સાથે આ કાર્ય સંપન્ન કરેલ છે. તે બદલ તથા પ્રકાશન માટે હું તેઓશ્રીનો અન્તઃકરણપૂર્વક આભારી છું.

અનુવાદ મૂળ ગ્રંથાનુરૂપ કરવાના યથાશક્ય પ્રયાસ છતાં સહજ માનુષ પ્રમાદના કારણે ત્રુટિ રહેવી સ્વાભાવિક છે, તે બદલ ક્ષમાપ્રાર્થી છું.

ઋષિ દયાનંદે સત્યવિદ્યારૂપ વેદને ભણવાને-સ્વાધ્યાયને આર્યોનો 'પરમધર્મ' કહેલ છે. તદનુસાર આ અનુવાદરૂપ સ્વાધ્યાયથી મેં આનંદ પ્રાપ્ત કરેલ છે અને તેમાં સહભાગી બનવા આપ સર્વેને આવકારું છું.

'પ્રણવ', ટંકારા. વિદુષાં કૃપૈષી
૨૦૬૩ અષાઢ સુદ ૧૫ — દયાલ મુનિ આર્ય

॥ ओ३म् ॥

अथ यजुर्वेदभाषाभाष्यारम्भः क्रियते ॥

यो जीवेषु दधाति सर्वसुकृतज्ज्ञानं गुणैरीश्वरः । तं नत्वा क्रियते परोपकृतये सद्यः सुबोधाय च ॥
ऋग्वेदस्य विधाय वै गुणगुणिज्ञानप्रदातुर्वरम् । भाष्यं काम्यमथो क्रियामययजुर्वेदस्य भाष्यं मया ॥१॥

चतुस्त्र्यङ्कैरङ्कैरवनिसहितैर्विक्रमसरे । शुभे पौषे मासे सितदलभविश्वोन्मिततिथौ ।
गुरोर्वारे प्रातःप्रतिपदमतीष्टं सुविदुषां । प्रमाणैर्निर्बद्धं शतपथनिरुक्तादिभिरपि ॥ २ ॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥

હવે યજુર્વેદ ભાષ્યનો આરંભ કરવામાં આવે છે.

जो निर्गुण गुणपुञ्ज से देत सुकृत विज्ञान । प्रणतपाल जगदीश्वरहि करि प्रणाम तिहि ध्यान ॥ १ ॥
ज्ञानदायि ऋग्वेद का भाष्याभीष्ट विधाय । पर-उपकार विचारि करि शीघ्र सुबोध निधाय ॥ २ ॥
शतपथ ब्राह्मण आदि पुनि निघण्टु निरुक्त निहारि । यजुर्वेद जो क्रिया पर वर्णौं ताहि विचारि ॥ ३ ॥
एक सहस्र नवशत अधिक विक्रमसर चौंतीस । पौष शुक्ल तेरसि तिथि दिन अधीश वागीश ॥

વિક્રમ સંવત ૧૯૩૪ના પોષ સુદ ૧૩ને ગુરુવારે યજુર્વેદનું ભાષ્ય કરવાનો આરંભ કરવામાં આવે છે. विश्वानि..... મંત્રનો અર્થ ભૂમિકામાં આપવામાં આવ્યો છે.

ઈશ્વરે ઋગ્વેદમાં ગુણ અને ગુણીના વિજ્ઞાનના પ્રકાશ દ્વારા સર્વ પદાર્થ જાહેર કર્યા છે. મનુષ્ય તે પદાર્થથી જે જે રીતે યથાયોગ્ય ઉપકાર મેળવવા માટે ક્રિયા કરવી જોઈએ તથા જે ક્રિયાના જે અંગ વા સાધન છે તે યજુર્વેદમાં દર્શાવવામાં આવ્યાં છે. કેમ કે જ્યાં સુધી ક્રિયા કરવાનું દૃઢ જ્ઞાન ન હોય ત્યાં સુધી તે જ્ઞાનથી ઉત્તમ સુખ મળી શકતું નથી અને વિજ્ઞાનનો હેતુ એવો છે કે જે ક્રિયાપ્રકાશ અવિદ્યાની નિવૃત્તિ અધર્મમાં અપ્રવૃત્તિ તથા ધર્મ અને પુરુષાર્થનો સંયોગ કરવાનો છે જે કર્મકાંડ છે તે વિજ્ઞાનના નિમિત્ત અને જે વિજ્ઞાન કાંડ છે તે ક્રિયાનું ફળ આપનાર હોય છે. કોઈ જીવ એવો નથી જે મન, પ્રાણ, વાયુ, ઈન્દ્રિય અને શરીરના ચલાવ્યા વિના એક ક્ષણ પણ રહી શકે, કેમકે જીવ અલ્પજ્ઞ એકદેશવર્તી ચેતન છે. તેથી જે ઈશ્વરે ઋગ્વેદના મંત્રોથી સર્વ પદાર્થના ગુણગુણીના જ્ઞાન અને યજુર્વેદના મંત્રોથી સર્વ ક્રિયા કરવા જણાવ્યું છે કેમકે **ऋक्** અને **यजुः** એ બન્ને શબ્દના અર્થ પણ એ જ છે કે જેથી મનુષ્ય ઈશ્વરથી લઈ પૃથિવી પર્યંત પદાર્થોના જ્ઞાનથી ધાર્મિક વિદ્વાનોનો સંગ, સર્વ શિલ્પક્રિયા સહિત વિદ્યાઓની સિદ્ધિ, શ્રેષ્ઠ વિદ્યા, શ્રેષ્ઠ ગુણ વા વિદ્યાના દાન, યથાયોગ્ય ઉક્ત વિદ્યાના વ્યવહારથી સર્વોપકારને અનુકૂળ દ્રવ્યાદિ પદાર્થોના ખર્ચ કરે તેથી એનું નામ યજુર્વેદ છે. વળી એ શબ્દોનો અભિપ્રાય ભૂમિકામાં જાહેર કર્યો છે ત્યાં જોઈ લેવો જોઈએ. કેમકે તે ભૂમિકા ચારે વેદની એક જ છે.

આ યજુર્વેદમાં બધું મળીને ચાળીસ અધ્યાય છે. એ એક એક અધ્યાયમાં કેટલા કેટલા મંત્ર છે તે નીચેના કોઠામાં દર્શાવ્યું છે અને ચાળીસે અધ્યાય મળીને એકંદર ૧૯૭૫ મંત્ર છે.

अध्याय	मंत्र	अध्याय	मंत्र	अध्याय	मंत्र	अध्याय	मंत्र	अध्याय	मंत्र	अध्याय	मंत्र
૧	૩૧	૮	૬૩	૧૫	૬૫	૨૨	૩૪	૨૯	૬૦	૩૬	૨૪
૨	૩૪	૯	૪૦	૧૬	૬૬	૨૩	૬૫	૩૦	૨૨	૩૭	૨૧
૩	૬૩	૧૦	૩૪	૧૭	૯૯	૨૪	૪૦	૩૧	૨૨	૩૮	૨૮
૪	૩૭	૧૧	૮૩	૧૮	૭૭	૨૫	૪૭	૩૨	૧૬	૩૯	૧૩
૫	૪૩	૧૨	૧૧૭	૧૯	૯૫	૨૬	૨૬	૩૩	૯૭	૪૦	૧૭
૬	૩૭	૧૩	૫૮	૨૦	૯૦	૨૭	૪૫	૩૪	૫૮	કુલ મંત્ર	
૭	૪૮	૧૪	૩૧	૨૧	૬૧	૨૮	૪૬	૩૫	૨૨	૧૯૭૫	

★ ★ ★

ओ३म्

यजुर्वेद-भाष्य

॥ अथ प्रथमोऽध्यायः ॥

ओ३म् इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशंसो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सविता-સર્વ જગતના ઉત્પાદક, સંપૂર્ણ ઐશ્વર્યયુક્ત देवः-સર્વ સુખોના દાતા અને સર્વ વિદ્યાઓના પ્રકાશક પરમાત્મા છે, તે वः-આપણાં અને આપણાં મિત્રોનાં જે वायवः-સર્વ ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરનારાં, સ્પર્શ ગુણવાળાં પ્રાણ, અન્તઃકરણ અને ઇન્દ્રિયો स्थ-છે, તેને श्रेष्ठतमाय-અત્યુત્તમ कर्मणे-કરવા યોગ્ય, સર્વને ઉપકારક યજ્ઞ વગેરે કર્મો માટે प्रार्पयतु-સારી રીતે સંયુક્ત કરે.

અમે લોકો इषे-અન્નાદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થો, વિજ્ઞાન પ્રાપ્તિની ઇચ્છા અને ऊर्जे-પરાક્રમ અર્થાત્ ઉત્તમ રસની પ્રાપ્તિ માટે भागम्-સેવા કરવા યોગ્ય ધન અને જ્ઞાનથી પૂર્ણ, त्वा-ઉક્ત ગુણયુક્ત, તથા त्वा-અનંત પરાક્રમાદિ ગુણોને આપનાર આપનો સદા આશ્રય કરીએ છીએ. હે મિત્રો મનુષ્યો ! તમે પણ એવા બનીને आप्यायध्वम्-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરો તથા અમે પણ ઉન્નતિ પ્રાપ્ત કરીએ.

હે ભગવન્ જગદીશ્વર ! અમોને इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે प्रजावतीः-જે અધિક પ્રજા-સંતતિયુક્ત તથા જે अनमीवाः-વ્યાધિ અને अयक्ष्माः-રાજયક્ષ્મા ક્ષય વગેરે રોગ રહિત છે તે अघ्न्या-ઉન્નતિ કરવા યોગ્ય ગાય વગેરે પશુઓ હિંસા કરવા યોગ્ય નથી અથવા ઇન્દ્રિયો અથવા પૃથિવી આદિ લોક છે, તેને સદા प्रार्पयतु-સંયુક્ત કરો.

હે જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી અમારામાંથી દુઃખ આપનાર કોઈ अघशंसः-પાપી તથા स्तेनः-ચોર, ડાકુ मा ईशत-કદી પણ ઉત્પન્ન નહિ થાઓ.

આપ એ यजमानस्य-પરમેશ્વર અને સર્વોપકારક ધર્મનું સેવન કરનારા મનુષ્યના पशून्-પશુઓ ગાય, ઘોડા, હાથી વગેરે તથા લક્ષ્મી અને પ્રજાની पाहि-નિરંતર રક્ષા કરો, જેથી એ પદાર્થોનું હરણ કરવાને પૂર્વોક્ત કોઈ (પાપી કે ચોર) દુષ્ટ મનુષ્ય સમર્થ ન બને.

अस्मिन्-એ ધાર્મિક गोपतौ-પૃથિવી વગેરે પદાર્થોની રક્ષા ઇચ્છનારા ધાર્મિક સજ્જન મનુષ્ય પાસે बह्वीः-વિપુલ ઉક્ત પદાર્થો ध्रुवाः-નિશ્ચલ સુખદાયક स्यात-રહે.

આ મંત્રની વ્યાખ્યા શતપથ બ્રાહ્મણમાં કરવામાં આવી છે.

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ હંમેશાં પરમેશ્વર અને ધર્મયુક્ત પુરુષાર્થનો આશ્રય કરીને, ઋગ્વેદના અધ્યયનથી ગુણ અને ગુણીને જાણીને, સર્વ પદાર્થોના સંપ્રયોગથી પુરુષાર્થની સિદ્ધિ માટે શ્રેષ્ઠતમ ક્રિયાઓથી સંયુક્ત થવું જોઈએ.

જેથી ઈશ્વરની કૃપાપૂર્વક સર્વ મનુષ્યોના સુખ અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ થાય. સમ્યક્ ક્રિયા — શુભકર્મોથી પ્રજાની રક્ષા તથા શિક્ષણ હંમેશાં કરવાં જોઈએ, જેથી કોઈ પણ રોગરૂપી વિઘ્ન તથા ચોર કદાપિ બળવાન ન બને અને પ્રજા તથા પુત્રાદિ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે.

હે મનુષ્યો ! જેણે આ વિચિત્ર આશ્ચર્યરૂપ સૃષ્ટિની રચના કરી છે, તે જગદીશ્વરનો હંમેશાં ધન્યવાદ કરીએ. તેમ કરવાથી પરમ દયાળુ ઈશ્વર તમારા પર કૃપા કરીને સદા રક્ષા કરશે એમ માનવું જોઈએ. (૧)

वसोः पवित्रमसि द्यौरसि पृथिव्यसि मातरिश्वनो घर्मोऽसि विश्वधाऽअसि।
परमेण धाम्ना दृꣳहस्व मा ह्वार्मा ते यज्ञपतिर्ह्वार्षीत्॥ २॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું જે वसोः-યજ્ઞ पवित्रम्-શુદ્ધિનો હેતુ असि-છે, द्यौः-જે વિજ્ઞાન પ્રકાશનો હેતુ અને સૂર્ય કિરણોમાં સ્થિર થનાર असि-છે, पृथिवी—વાયુની સાથે દેશ-દેશાંતરમાં ફેલાનાર असि-છે, मातरिश्वनः-વાયુને घर्मः-શુદ્ધ કરનાર असि-છે, विश्वधाः-સંસારને ધારણ કરનાર असि-છે તથા જે परमेण-ઉત્તમ धाम्ना-સ્થાનથી दृꣳहस्व-સુખની વૃદ્ધિ કરનાર છે.

એ યજ્ઞનો माह्वाः-ત્યાગ ન કર. તથા ते-તારા यज्ञपतिः-યજ્ઞની રક્ષા કરનાર યજમાન પણ તેનો मा ह्वार्षीत-ત્યાગ કરે નહિ.

ધાત્વર્થના અભિપ્રાયથી યજ્ઞ શબ્દનો અર્થ ત્રણ પ્રકારનો થાય છે : (૧) આ લોક અને પરલોકના સુખ માટે વિદ્યા, જ્ઞાન અને ધર્માચરણના સેવનથી વૃદ્ધ વિદ્વાનોનો સત્કાર કરવો. (૨) સારી રીતે પદાર્થોના ગુણોના મેળ અને વિરોધના જ્ઞાનથી શિલ્પ વિદ્યાનું પ્રત્યક્ષ કરવું તથા (૩) વિદ્વાનોનો નિત્ય સમાગમ અર્થાત્ શુભ વિદ્યા, સુખ ધર્માદિ ગુણો તથા સત્યનું નિત્ય દાન કરવું. (૨)

ભાવાર્થ : વિદ્યા અને ઉત્તમ ક્રિયા દ્વારા વિધિપૂર્વક કરવામાં આવેલ યજ્ઞથી મનુષ્યોમાં પવિત્રતાનો પ્રકાશ, પૃથ્વીનું રાજ્ય, વાયુરૂપી પ્રાણ સમાન રાજનીતિ, પરાક્રમ, સર્વની રક્ષા, આ લોક અને પરલોકમાં પરમસુખની વૃદ્ધિ, પરસ્પર સરળતાથી વ્યવહાર અને કુટિલતાનો ત્યાગ વગેરે શ્રેષ્ઠ ગુણો પ્રાપ્ત થાય છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ પરોપકાર અને પોતાના સુખ માટે વિદ્યા અને પુરુષાર્થથી પ્રીતિપૂર્વક યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૨)

वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्।
देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः॥ ३॥

પદાર્થ : જે वसोः-યજ્ઞ शतधारम्-અસંખ્ય સંસારને ધારણ કરનાર અને पवित्रम्-શુદ્ધિ કરનાર કર્મ असि-છે તથા જે वसोः-યજ્ઞ सहस्त्रधारम्-અનેકવિધ બ્રહ્માંડને ધારણ કરનાર અને पवित्रम्-શુદ્ધિનો હેતુ અને સુખદાયક છે, त्वा-તે યજ્ઞને देवः-સ્વયં પ્રકાશસ્વરૂપ सविता-વસુ વગેરે તેત્રીસ દેવોની ઉત્પત્તિ કરનાર પરમેશ્વર पुनातु-પવિત્ર કરે.

હે જગદીશ્વર ! આપ અમારાથી સેવિત જે वसोः-યજ્ઞ છે તે पवित्रेण-પવિત્રકારક વેદ વિજ્ઞાન કર્મથી शतधारेण-વિપુલ વિદ્યાઓના ધારણ કરનાર વેદ અને सुप्वा-સારી રીતે પવિત્ર કરનાર યજ્ઞ દ્વારા અમોને પવિત્ર કરો.

હે વિદ્વાન પુરુષ અથવા જિજ્ઞાસુ મનુષ્ય ! તું काम्-તું વેદની શ્રેષ્ઠ વાણીઓમાંથી કઈ-કઈ વાણીના અભિપ્રાયને अधुक्षः-તારા મનમાં પૂર્ણ કરવા અર્થાત્ જાણવા ઈચ્છે છે ? (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પૂર્વોક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને પવિત્ર બની જાય છે તેને પરમેશ્વર અનેક પ્રકારનાં વિજ્ઞાનથી યુક્ત કરીને, અનેક પ્રકારનું સુખ પ્રદાન કરે છે. પરંતુ જે કર્મશીલ - એવી ક્રિયાઓ કરનાર અને પરોપકારી હોય છે, તેને જ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે; અન્ય આળસુને પ્રાપ્ત થતું નથી. આ મંત્રમાં 'कामधुक्षः' *એ પદોથી વાણીના વિષયમાં પ્રશ્ન છે. (૩)*

सा विश्वायुः सा विश्वकर्मा सा विश्वधायाः।
इन्द्रस्य त्वा भागꣳसोमेनातनच्मि विष्णो हव्यꣳरक्ष ॥ ४॥

પદાર્થ : हे विष्णो-ચરાચર જગતમાં વ્યાપક ઈશ્વર ! આપ જે વાણીને ધારણ કરો છો, सा-તે (૧) विश्वायुः-પૂર્ણ આયુદાતા, सा-તે (૨) विश्वकर्मा-સંપૂર્ણ ક્રિયાકાંડને સિદ્ધ કરનાર તથા सा-તે (૩) विश्वधायाः-સર્વ જગતને વિદ્યા અને ગુણો દ્વારા ધારણ કરનારી છે. પૂર્વ મંત્રના પ્રશ્નના ઉત્તરમાં એ ત્રણ પ્રકારની વાણી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે.

એ વાણી દ્વારા હું इन्द्रस्य-પરમેશ્વરના भागम्-સેવન કરવા યોગ્ય યજ્ઞને सोमेन-વિદ્યા દ્વારા સિદ્ધ થયેલા રસ અથવા આનંદથી, आ तनच्मि-મારા હૃદયમાં દૃઢ કરું છું.

હે પરમેશ્વર ! हव्यम्-પૂર્વોક્ત યજ્ઞસંબંધી આપવાનાં તથા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો અથવા વિજ્ઞાનની આપ रक्ष-નિરંતર રક્ષા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : વાણી [વિદ્યા] ત્રણ પ્રકારની છે : પ્રથમ તે જે બ્રહ્મચર્ય-આશ્રમમાં પૂર્ણ વિદ્યા અધ્યયન અને પૂર્ણ આયુ પ્રાપ્ત કરવા માટે સેવન કરવામાં આવે છે.

બીજી તે જે ગૃહાશ્રમમાં અનેક પ્રકારની ક્રિયાઓ દ્વારા ઉદ્યોગોથી સુખદાયક વિસ્તારથી પ્રકટ કરવામાં આવે છે.

ત્રીજી તે જે [આ સંસારમાં] સર્વ મનુષ્યો દ્વારા સર્વ મનુષ્યોના શરીર અને આત્માના સુખની વૃદ્ધિ માટે ઈશ્વર વગેરે પદાર્થોના વિજ્ઞાનને પ્રકાશિત કરનારી છે, તે વાણીનો વાનપ્રસ્થ અને સંન્યાસ આશ્રમમાં ઉપદેશ કરવામાં આવે છે.

આ ત્રણ પ્રકારની વાણી વિના કોઈને પણ સંપૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી; કારણ કે તેના દ્વારા જ મનુષ્યે પૂર્વોક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન અને વ્યાપક ઈશ્વરની સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપાસના કરવી યોગ્ય છે.

આ રીતે સેવિત આ યજ્ઞ સંસારમાં રક્ષાનું કારણ બને છે, તથા પ્રેમપૂર્વક સત્યભાવથી પ્રાર્થના કરવાથી ઈશ્વર તેની સદા રક્ષા કરે છે.

પરંતુ જે ક્રિયામાં નિપુણ, ધાર્મિક, પરોપકારી મનુષ્યો છે, તેઓ ઈશ્વર અને ધર્મને જાણીને શ્રેષ્ઠ કર્મ અને સાધન દ્વારા લોક - સાંસારિક અને પરલોક - મોક્ષના સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહીં. (૪)

अग्ने॑ व्रतपते व्र॒तं च॑रिष्यामि॒ तच्छ॑केयं॒ तन्मे॑ राध्यताम्।
इ॒दम॒हमनृ॑तात् स॒त्यमुपै॑मि॥ ५॥

પદાર્થ : हे व्रतपते-સત્યભાષણાદિ ધર્મોનું પાલન કરનાર અને अग्ने-સત્યધર્મના ઉપદેશક પરમેશ્વર ! હું अनृतात्-અસત્યથી પૃથક્, सत्यम्-વેદવિદ્યા, પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણો, સૃષ્ટિક્રમ, વિદ્વાનોનો સંગ, શ્રેષ્ઠ વિચાર તથા આત્માની શુદ્ધિ વગેરે પ્રકારો દ્વારા જે ભ્રાંતિરહિત, સર્વહિતકારી, તત્ત્વ અર્થાત્ સિદ્ધાંતનો પ્રકાશ કરનારાથી સિદ્ધ થયેલ, સારી રીતે પરીક્ષા કરેલ व्रतम्-સત્યભાષણ, સત્ય આચરણ અને સત્ય માનવારૂપ વ્રત છે, તેનું उपैमि-અનુષ્ઠાન અર્થાત્ નિયમપૂર્વક ગ્રહણ કરવું, જાણવું તેની પ્રાપ્તિની ઈચ્છા કરું છું. मे-મારા तत्-તે-સત્યવ્રતને આપ राध्यताम्-સારી રીતે સિદ્ધ કરો. જેથી अहम्-હું તે સત્યવ્રતના પાલનમાં शकेयम्-સમર્થ બનું તથા હું इदम्-આ સત્યવ્રતનું પ્રત્યક્ષરૂપમાં આચરણ चरिष्यामि-કરીશ. (૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને નિયમથી પાલન કરવા યોગ્ય ધર્મનો ઉપદેશ કરે છે - જે ન્યાયયુક્ત, પક્ષપાતરહિત, સુપરીક્ષિત, સત્ય-લક્ષણોથી યુક્ત, સર્વહિતકારી, લોક - સાંસારિક અને પરલોક - મોક્ષના સુખનું કારણ છે, તે ધર્મનું જ સર્વ મનુષ્યોએ સદા આચરણ કરવું જોઈએ અને તેનાથી વિરુદ્ધ જે અધર્મ છે તેનું આચરણ કોઈએ કદાપિ કરવું ન જોઈએ. આ રીતે સર્વેએ પ્રતિજ્ઞા કરવી જોઈએ કે -

હે પરમેશ્વર ! અમે વેદોમાં આપના દ્વારા પ્રકાશિત એ સત્યધર્મનું આચરણ કરવા ઈચ્છીએ છીએ. આપની કૃપાથી અમારી એ ઈચ્છા સારી રીતે પૂર્ણ થાય.

જેથી અમે અર્થ, કામ અને મોક્ષરૂપ ફળને સરળતાથી પ્રાપ્ત કરી શકીએ તથા અધર્મનો સર્વથા ત્યાગ કરીને અનર્થ, કુકર્મ, બંધનરૂપ દુઃખ ફળયુક્ત પાપોને છોડવા અને છોડાવવામાં સમર્થ બનીએ.

જેમ આપ સત્યવ્રતના પાલક હોવાથી વ્રતપતિ છો, તેમ અમે પણ આપની કૃપા અને પુરુષાર્થથી યથાશક્તિ સત્યવ્રત પાલક બનીએ.

આ રીતે સદા ધર્મ કરવાની ઈચ્છાથી અને સત્કર્મ દ્વારા સમસ્ત સુખોને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપનાર બનીએ. એવી ઈચ્છા સર્વ મનુષ્યોએ કરવી જોઈએ.

શતપથ બ્રાહ્મણમાં આ મંત્રની વ્યાખ્યામાં કહ્યું છે કે - મનુષ્યોનું આચરણ સત્ય અને અસત્ય એમ બે પ્રકારનું હોય છે. તેમાં જે વાણી, મન અને શરીરથી સત્યનું આચરણ કરે છે, તેઓ દેવ કહેવાય છે; અને જે અસત્યનું આચરણ કરે છે, તેઓ મનુષ્ય અર્થાત્ અસુર તથા રાક્ષસ છે. (૫)

कस्त्वा युनक्ति स त्वा युनक्ति कस्मै त्वा युनक्ति तस्मै त्वा युनक्ति। कर्मणे वां वेषाय वाम्॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! कः-કોણ त्वाम्-તને સારાં કર્મનું અનુષ્ઠાન કરવા માટે युनक्ति-આજ્ઞા આપે છે ? सः-તે જગદીશ્વર त्वा-તને વિદ્યા વગેરે શુભગુણોને પ્રકટ કરવા માટે વિદ્વાન અથવા વિદ્યાર્થી બનવા આજ્ઞા આપે છે.

कस्मै-ક્યા પ્રયોજન માટે त्वा-તને અને મને युनक्ति-યુક્ત કરે છે ? तस्मै-પૂર્વોક્ત સત્યવ્રતના આચરણરૂપ યજ્ઞ કરવા માટે, त्वा-ધર્મપ્રચારમાં પુરુષાર્થી તને युनक्ति-આજ્ઞા આપે છે.

सः-તે જ ઈશ્વર कर्म्मणे-પૂર્વોક્ત શ્રેષ્ઠ કર્મ કરવા માટે वाम्-કર્મ કરનાર તથા કરાવનારને નિયુક્ત કરે છે. वेषाय-શુભ ગુણ અને વિદ્યા પ્રાપ્તિ માટે वाम्-વિદ્યાના અધ્યયન અને અધ્યાપન માટે તમોને ઉપદેશ આપે છે અર્થાત્ આજ્ઞા આપે છે. (૬)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પ્રશ્ન-ઉત્તર દ્વારા ઈશ્વર જીવોને ઉપદેશ આપે છે : (૧) કોઈ બીજાને પ્રશ્ન કરે - મને સત્યકર્મમાં કોણ પ્રવૃત્ત કરે છે ? ઉત્તર - ઈશ્વર પુરુષાર્થયુક્ત કર્મ કરવાનો તને આદેશ આપે છે. (૨) કોઈ વિદ્યાર્થી વિદ્વાનને પ્રશ્ન કરે - કોણ મારા આત્મામાં અન્તર્યામી રૂપમાં સત્યને પ્રકાશિત કરે છે ? ઉત્તર - સર્વવ્યાપક જગદીશ્વર. (૩) પ્રશ્ન - ક્યા પ્રયોજન માટે સત્યને પ્રકાશિત કરે છે ? ઉત્તર - સુખ અને પરમેશ્વરની પ્રાપ્તિ માટે. (૪) પ્રશ્ન - ક્યા પ્રયોજન માટે મને આજ્ઞા આપે છે ? ઉત્તર - સત્યવિદ્યા અને ધર્મના પ્રચાર માટે. (૫) પ્રશ્ન - મને અને તને - બંનેને ક્યાં ક્યાં કામ કરવા માટે ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે ? ઉત્તર - પરસ્પર જવાબ આપવો કે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરવા માટે. (૬) પ્રશ્ન - ક્યા પદાર્થની પ્રાપ્તિ માટે આજ્ઞા આપે છે ? ઉત્તર - સમસ્ત વિદ્યાની અને સર્વ સુખોની પ્રાપ્તિ માટે તથા તેના પ્રચાર માટે આજ્ઞા આપે છે.

મનુષ્યોએ બે પ્રયોજનો માટે પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ : એક - અત્યંત પુરુષાર્થ અને શરીરના આરોગ્યથી ચક્રવર્તી રાજ્યરૂપી લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ કરવી. બીજું - સમસ્ત વિદ્યાઓનું સમ્યક્ અધ્યયન કરીને તેનો સર્વત્ર પ્રચાર કરવો જોઈએ. કોઈ મનુષ્યે ક્યારેય પણ પુરુષાર્થ છોડીને આળસમાં નહિ પડ્યા રહેવું જોઈએ. (૬)

प्रत्युष्टꣳरक्षः प्रत्युष्टाऽअरातयो निष्टप्तꣳरक्षो निष्टप्ताऽअरातयः। उर्वन्तरिक्षमन्वेमि॥ ७॥

પદાર્થ : મને ઉચિત છે કે પુરુષાર્થ દ્વારા रक्षः-દુષ્ટ ગુણ અને દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત [રાક્ષસ] મનુષ્યને प्रत्युष्टम्-નિર્મૂળ કરું તથા अरातयः-જે રાતિ અર્થાત્ દાન વગેરે ધર્મથી રહિત અને દયાહીન દુષ્ટ શત્રુ

છે તેને प्रत्युष्टाः-પ્રત્યક્ષ નિર્મૂળ કરું તથા रक्षः-દુષ્ટ સ્વભાવ, દુષ્ટગુણી, વિદ્યાવિરોધી અને સ્વાર્થી મનુષ્ય તથા निष्टप्तम्-अरातयः-છલયુક્ત-કપટી, વિદ્યાદાન અને ગ્રહણથી રહિત દુષ્ટ પ્રાણીઓને निष्टप्ताः-નિરંતર સંતાપયુક્ત કરું. આ રીતે કરીને अन्तरिक्षम्-સુખની પ્રાપ્તિ કરનારા ઉત્તમ સ્થાન અને उरू-અપાર સુખને अन्वेमि-પ્રાપ્ત કરું. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા કરે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ પોતાનો દુષ્ટ સ્વભાવ છોડીને તથા અન્યોને વિદ્યા અને ધર્મોપદેશથી દુષ્ટતા વગેરે અધર્મયુક્ત વ્યવહાર છોડાવવો જોઈએ; તેમજ અનેકવિધ જ્ઞાન અને સુખ આપીને સર્વ મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓને વિદ્યા, ધર્મ અને પુરુષાર્થથી યુક્ત કરીને સદા સુખ સંપન્ન કરવાં જોઈએ. (૭)

धूर॑सि धूर्व धूर्व॑न्तं धूर्व तं यो॒ऽस्मान् धूर्व॑ति तं धू॒र्व यं व॒यं धूर्वा॑मः।
दे॒वाना॑मसि॒ वह्नि॑तम॒ꣳसस्नि॑तमं॒ पप्रि॑तमं॒ जुष्ट॑तमं देव॒हूत॑मम्॥ ८॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપ धूः-સર્વ દોષનાશક અને સર્વ રક્ષક असि-છો, આથી અમે ઈષ્ટ બુદ્ધિથી देवानाम्-વિદ્વાનોને વિદ્યા, મોક્ષ અને સુખમાં वह्नितमम्-યથાયોગ્ય પહોંચાડનાર, सस्नितमम्-અત્યંત શુદ્ધ અને શુદ્ધિકારક, पप्रितमम्-સર્વ વિદ્યા અને આનંદથી સંસારને અથવા મૂર્ત દ્રવ્યોને પૂર્ણ કરનાર, जुष्टतमम्-ધાર્મિક ભક્તજનોની સેવા કરવા યોગ્ય અને देवहूतमम्-વિદ્વાનોની સ્તુતિ કરવા યોગ્ય છો. त्वा-આપની અમે નિત્ય ઉપાસના કરીએ છીએ.

यः-જે કોઈ દ્વેષી, છલી, કપટી, પાપી અને કામક્રોધાદિ યુક્ત મનુષ્ય अस्मान्-ધર્માત્મા તથા સર્વને સુખયુક્ત કરનારા અમોને धूर्वति-દુઃખ આપે છે. તથા यम्-જે પાપીને वयम्-અમે धूर्वामः-દુઃખ આપીએ છીએ तम्-તેને આપ धूर्व-શિક્ષા કરો. તથા જે સર્વનો દ્રોહ કરનારા અથવા દુઃખ આપનારાને આપ હંમેશાં धूर्व-તાડના - શિક્ષા કરો.

દ્વિતીય-ભૌતિક અર્થ :

હે શિલ્પવિદ્યાના ઈચ્છુક મનુષ્ય ! તું જે ભૌતિક અગ્નિ धूः-સર્વ પદાર્થોનું છેદન કરનાર હોવાથી હિંસક અને અંધકારનાશક असि-છે. તે કલા - કૌશલથી યાનોમાં - વાહનોમાં પ્રયોગ કરવા યોગ્ય તથા देवानाम्-પૃથિવી વગેરેનો પ્રકાશક છે. તે वह्नितमम्-યથાયોગ્ય સુખોનું સાધન છે. सस्नितमम्-શુદ્ધિનો હેતુ, શિલ્પવિદ્યાનો હેતુ, વ્યાપનશીલ पप्रितमम्-પોતાની વ્યાપ્તિથી જગતના મૂર્ત પદાર્થો તથા શિલ્પવિદ્યાથી સાધ્ય અંગોને પૂર્ણ કરનાર, जुष्टतमम्-શિલ્પીજનોથી અત્યંત સેવનીય देवहूतमम्-દેવ અર્થાત્ વિદ્વાનો દ્વારા અત્યંત સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અગ્નિનું वयम्-અમે धूर्वामः-તાડન કરીએ છીએ.

यः-જે અગ્નિનું યુક્તિથી સેવન ન કરવામાં આવે તો अस्मान्-धूर्वति-પીડા આપે છે, तम्-તે धूर्वन्तम्-પીડા કરનાર અગ્નિનું धूर्व-તાડન અથવા યાન વગેરેમાં ઉપયોગ કર.

હે વીરપુરુષ ! તું यः-જે દુષ્ટ શત્રુ अस्मान्-અમને દુઃખ આપે છે, तम्-તેનો धूर्व-નાશ કર તથા જે કોઈ ચોર વગેરે છે તેનો પણ धूर्व-નાશ કર. (૮)

ભાવાર્થ : જે ધાતા ઈશ્વર સર્વ જગતને ધારણ કરે છે, તે પાપી દુષ્ટ જીવોને તેણે કરેલા પાપનું ફળ આપીને તાડના કરે છે અને ધાર્મિકોની રક્ષા કરે છે.

તે સર્વ સુખદાતા, આત્મશુદ્ધિ કરનાર, પૂર્ણ વિદ્યાના દાતા, વિદ્વાનોથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અને પ્રીતિપૂર્વક ઈષ્ટ બુદ્ધિથી સેવન કરવા યોગ્ય છે; તે જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ભક્તિ કરવા યોગ્ય છે.

જે ભૌતિક અગ્નિ શિલ્પવિદ્યાની ક્રિયાનો મુખ્ય સાધક તથા પૃથ્વી વગેરે પદાર્થોનો અત્યંત પ્રકાશક હોવાથી શ્રેષ્ઠ છે.

જેના પ્રયોગથી આગ્નેયાસ્ત્ર વગેરે વિદ્યા દ્વારા શત્રુઓનો પરાજય થાય છે, તેનું શિલ્પી લોકો વિદ્યા યુક્તિથી અગ્નિહોત્ર તથા વાહનોની ક્રિયાની સિદ્ધિ માટે સેવન - પ્રયોગ કરવા યોગ્ય છે. (૮)

अह्रुतमसि हविर्धानं दृꣳहस्व मा ह्वार्मा ते यज्ञपतिर्ह्वार्षीत्।
विष्णुस्त्वा क्रमतामुरु वातायापहतꣳरक्षो यच्छन्तां पञ्च॥ ९॥

પદાર્થ : હે ઋત્વિક્ મનુષ્યો ! તું જે અગ્નિથી વૃદ્ધિ પામેલ अह् नुतम्-કુટિલતા રહિત हविर्धानम्-હોમ દ્રવ્યોનો આધાર યજ્ઞ છે તેની दृंहस्व-વૃદ્ધિ કરો. પરંતુ કોઈ પણ સમયે मा ह्वाः-તેનો ત્યાગ ન કરો. તથા ते-તમારા यज्ञपतिः-યજમાન પણ યજ્ઞના અનુષ્ઠાનનો ત્યાગ ન કરે.

આ રીતે તમે पञ्च-ઉપર, નીચે, અંગસંકોચન, ફેલાવવા અને હરવા-ફરવાનાં પાંચ કર્મોથી હવન યોગ્ય દ્રવ્યોથી અગ્નિમાં यच्छन्ताम्-હવન કરો.

त्वा-તે હવન કરેલ દ્રવ્યને विष्णुः-વ્યાપનશીલ સૂર્ય अपहतम् रक्षः-દુર્ગંધ વગેરેનો નાશ કરીને उरुवाताय-વાયુની અત્યંત શુદ્ધિ અને સુખની વૃદ્ધિ માટે આકાશમાં ફેલાવે છે. (૯)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય પરસ્પર પ્રેમથી કુટિલતાનો ત્યાગ કરીને, શિક્ષક અને શિષ્ય બનીને, એ અગ્નિવિદ્યાને વિજ્ઞાન અને ક્રિયા દ્વારા જાણીને તેનો પ્રયોગ કરે છે, ત્યારે મહાન શિલ્પવિદ્યાને સિદ્ધ કરીને શત્રુ તથા દરિદ્રતાનું નિવારણ કરીને સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
अग्नये जुष्टं गृह्णाम्यग्नीषोमाभ्यां जुष्टं गृह्णामि॥ १०॥

પદાર્થ : सवितुः-સર્વજગતના ઉત્પાદક, સકલ ઐશ્વર્યદાતા, देवस्य-સર્વજગતના પ્રકાશક, સુખદાતા પરમેશ્વરે प्रसवे-રચેલા આ જગતમાં अश्विनोः-સૂર્ય અને ચન્દ્રનાં बाहुभ्याम्-બળ અને વીર્યથી તથા पूष्णः-પુષ્ટિ કરનાર પ્રાણના हस्ताभ्याम्-ગ્રહણ તથા ત્યાગથી अग्नये-અગ્નિવિદ્યા સિદ્ધ કરવા માટે जुष्टम्-વિદ્યાભિલાષી જે કર્મનું સેવન કરે છે, त्वा-તેનો હું गृह्णामि-સ્વીકાર કરું છું.

એ રીતે अग्नीषोमाभ्याम्-અગ્નિ અને જલ વિદ્યા દ્વારા जुष्टम्-વિદ્વાનોએ જે સુંદર ફળની કામના કરી છે તે ફળનો હું गृह्णामि-સ્વીકાર કરું છું. (૧૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યને ઉચિત છે કે, વિદ્વાનોના સમાગમથી અને સારી રીતે પુરુષાર્થ દ્વારા ઈશ્વર દ્વારા રચેલ આ સૃષ્ટિ અર્થાત્ સંસારમાં સંપૂર્ણ વિદ્યાઓની સિદ્ધિ માટે અને સૂર્ય, ચંદ્ર, અગ્નિ, જલ વગેરે પદાર્થોથી સર્વનાં બલ અને વીર્યની વૃદ્ધિ માટે સર્વ વિદ્યાઓનું સેવન કરીને તેનો પ્રચાર કરવો જોઈએ. જેમ જગદીશ્વરે સર્વ પદાર્થોની ઉત્પત્તિ અને તેનું ધારણ કરીને ઉપકાર કર્યો છે, તેમ આપણે પણ નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧૦)

भूताय त्वा नारातये स्वरभिविख्येषं दृꣳहन्तां दुर्याः पृथिव्यामुर्वन्तरिक्षमन्वेमि। पृथिव्यास्त्वा नाभौ सादयाम्यदित्याऽउपस्थेऽग्ने हव्यꣳरक्ष॥ ११ ॥

પદાર્થ : હું જે યજ્ઞની भूताय-પ્રાણીઓના સુખ તથા अरातये-દરિદ્રતા વગેરે દોષોના નિવારણ માટે अदित्या-વેદવાણી અથવા વિજ્ઞાનપ્રકાશના उपस्थे-ગુણોમાં सादयामि-સ્થાપના કરું છું તથા त्वा-તે યજ્ઞનો કદી પણ न-ત્યાગ કરતો નથી.

હે વિદ્વાનો ! આપ पृथिव्याम्-વિસ્તૃત ભૂમિ પર दुर्याः-ઘરોની दृंहन्ताम्-વૃદ્ધિ કરો. હું पृथिव्याः-શુદ્ધ વિસ્તૃત ભૂમિના नाभौ-મધ્યમાં જે ગૃહોમાં स्वः-જલ વગેરે સુખના પદાર્થોને अभिविख्येषम्-સર્વ રીતે જોઉં उर्वन्तरिक्षम्-તે પૃથિવીમાં ઘણો અવકાશ આપીને સુખથી રહેવા યોગ્ય સ્થાન રચીને अन्वेमि-પ્રાપ્ત કરું.

હે अग्ने-જગદીશ્વર ! આપ हव्यम्-આપ અમારા આપવા અને લેવા યોગ્ય પદાર્થોનું रक्ष-સદા રક્ષણ કરો.

દ્વિતીય પક્ષ : હે અગ્ને પરમેશ્વર ! હું भूताय-સંસારી જીવોના સુખ अरातये-દરિદ્રતાનો નાશ તથા દાનાદિ ધર્મ કરવા માટે पृथिव्याः-પૃથિવીની नाभौ-મધ્યમાં [ઈશ્વરની સત્તા તથા તેની ઉપાસનાથી] स्वः-સુખ સ્વરૂપ त्वा-શાન્તિ માટે આપને अभिविख्येषम्-સર્વત્ર જોઉં તથા આપની કૃપાથી અમારા ગૃહ વગેરે પદાર્થો તથા તેમાં રહેનારાં મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓ दृंहन्ताम्-નિત્ય વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય.

હું पृथिव्याम्-વિસ્તૃત ભૂમિ પર उरु-બહુ જ अन्तरिक्षम्-વ્યાપક અવકાશયુક્ત સ્થાનના નિવાસ માટે अदित्या उपस्थे-સર્વત્ર વ્યાપક આપની સમક્ષ સદા अन्वेमि-પ્રાપ્ત થાઉં. त्वा-આપનો કદી પણ ત્યાગ न-ન કરું. હે જગદીશ્વર ! આપ મારા हव्यम्-અર્થાત્ ઉત્તમ પદાર્થોની સર્વદા रक्ष-રક્ષા કરો.

તૃતીય પક્ષ : હું શિલ્પ વિદ્યાનો જ્ઞાતા યજમાન भूताय-સાંસારિક પ્રાણીઓના સુખ અને अरातये-દરિદ્રતાદિ દોષોના વિનાશ અર્થાત્ દાનાદિ ધર્મ કરવાની ઈચ્છાથી पृथिव्या नाभौ-આ પૃથ્વી પર શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ કરનાર अग्ने-અગ્નિને હોમ અને શિલ્પવિદ્યા માટે सादयामि-સ્થાપિત કરું છું. કારણ કે શિલ્પવિદ્યા તેના દ્વારા સિદ્ધ થાય છે.

अदित्याः-એ અગ્નિ અન્તરિક્ષમાં સ્થિત મેઘમંડલમાં હોમ દ્વારા પહોંચેલાં શ્રેષ્ઠ દ્રવ્યોની રક્ષા કરે છે. એટલા માટે અગ્નિનું पृथिव्याम्-પૃથિવી પર સ્થાપન કરીને उर्वन्तरिक्षम्-બહુ અવકાશયુક્ત સ્થાન અને વિવિધ સુખોને अन्वेमि-પ્રાપ્ત કરું છું. આથી તે અગ્નિને પૃથિવી પર સ્થાપિત કરું છું. આ રીતે

શ્રેષ્ઠ કર્મો કરતાં કરતાં स्वः-અનેક સુખોને अभिविख्येषम्-જોઉં. તથા મારા दुर्याः-ગૃહ અને તેમાં નિવાસ કરનાર મનુષ્યોમાં दृंहन्ताम्-શુભ ગુણ અને સુખની વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય એટલા માટે હું તે ભૌતિક અગ્નિનો કદી ત્યાગ न-કરું નહિ. (૧૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર મનુષ્યને આજ્ઞા આપે છે. - હે મનુષ્ય ! હું તને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપવા માટે પૃથિવી પર સ્થાપિત કરું છું.

તું વેદવિદ્યા અને ધર્માનુષ્ઠાનયુક્ત પુરુષાર્થથી સુંદર, સર્વ ઋતુઓમાં સુખપ્રદ તથા વિશાળ અવકાશયુક્ત ઘર બનાવીને સુખ પ્રાપ્ત કર.

મારી સૃષ્ટિમાં જેટલા પદાર્થો છે, તેના ગુણોનું સમ્યક્ અન્વેષણ તથા અનેક વિદ્યાઓનું પ્રત્યક્ષ કરીને તેની સદા રક્ષા અને પ્રચાર કર. [જેથી સર્વ પ્રાણીઓના સુખની વૃદ્ધિ થાય.]

મનુષ્યે અહીં એમ માનવું જોઈએ કે - સર્વવ્યાપક, સર્વના સાક્ષી, સર્વના મિત્ર, સર્વ સુખોના વર્ધક, ઉપાસના યોગ્ય અને સર્વશક્તિમાન પરમેશ્વરને જાણીને સર્વનો ઉપકાર, વિવિધ વિદ્યાની વૃદ્ધિ, ધર્મમાં પ્રવૃત્તિ, અધર્મમાં નિવૃત્તિ, કલાકૌશલ સંપાદન તથા યજ્ઞ ક્રિયાનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૧૧)

प॒वित्रे॑ स्थो वैष्ण॒व्यौ॑ सवि॒तुर्वः॑ प्रस॒व उत्पु॑ना॒म्यच्छि॑द्रेण प॒वित्रे॑ण॒ सूर्य॑स्य र॒श्मिभिः॑। देवी॑रापोऽअग्रेगुवोऽअग्रेपुवोऽग्र॑ऽइ॒मम॒द्य य॒ज्ञं न॑य॒ताग्रे॑ य॒ज्ञप॑तिꣳ सु॒धातुं॑ य॒ज्ञप॑तिं देव॒युव॑म्॥ १२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ सवितुः-પરમેશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા આ જગતમાં अच्छिद्रेण-નિર્દોષ અને पवित्रेण-પવિત્ર કરવાના હેતુ सूर्यस्य-સૂર્યનાં रश्मिभिः-કિરણો છે, તેનાથી वैष्णव्यौ-યજ્ઞ સંબંધી પ્રાણ અને અપાનની ગતિ તથા पवित्रे-પદાર્થોને પણ પવિત્ર કરવાનો હેતુ બને. જેમ તે સૂર્યનાં કિરણોથી अग्रगुवः-આગળ સમુદ્ર અને અંતરિક્ષમાં જનાર, अग्रेपुवः-પ્રથમ પૃથિવીમાં રહેનાર સોમ ઔષધિનું સેવન કરનાર તથા देवीः-દિવ્યગુણયુક્ત वः-તે आपः-જલ પવિત્ર થાય;

તેમ नयत-પવિત્ર પદાર્થોનો હોમ અગ્નિમાં કરો. હું પણ તેમ જ अद्य-આજે इमम्-આ यज्ञम्-પૂર્વોક્ત ક્રિયા સંબંધી યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરીને अग्रे-જે પ્રથમ सुधातुम्-શ્રેષ્ઠ મન આદિ ઇન્દ્રિય તથા સુવર્ણ આદિ ધનયુક્ત यज्ञपतिम्-યજ્ઞ કરનાર તથા देवयुवम्-વિદ્વાનો તથા શ્રેષ્ઠ ગુણોને સ્વયં પ્રાપ્ત તથા અન્યોને પણ પ્રાપ્ત કરાવનાર તથા यज्ञपतिम्-યજ્ઞની કામના કરનારને उत्पुनामि-પવિત્ર કરું છું. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે પદાર્થ સંયોગથી વિકારને પ્રાપ્ત થાય છે, તે અગ્નિથી અતિસૂક્ષ્મ પરમાણુરૂપ બનીને વાયુમાં વિચરણ કરે છે અને શુદ્ધ બને છે.

જેમ યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી વાયુ અને જલની ઉત્તમ શુદ્ધિ અને પુષ્ટિ થાય છે, તેમ અન્ય પ્રકારથી થઈ શકતી નથી. જેથી હોમ-ક્રિયાથી શુદ્ધ થયેલ વાયુ, અગ્નિ અને જલ વગેરેથી શિલ્પવિદ્યા દ્વારા યાનો

- વાહનો બનાવીને પોતાની અને અન્યોની કામના સિદ્ધ કરવી જોઈએ.

જે જલ પૃથિવી સ્થાનથી અન્તરિક્ષરૂપ સમુદ્રમાં ચડીને ત્યાંથી ફરી પૃથિવી આદિ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેને પ્રથમ જલ કહે છે; અને જે વાદળામાં સ્થિત છે, તેને દ્વિતીય જલ કહે છે.

શતપથ બ્રાહ્મણમાં મેઘ - વાદળને વૃત્ત અને સૂર્યને ઈન્દ્ર નામથી વર્ણન કરીને યુદ્ધકથા રૂપમાં આ મંત્રની વ્યાખ્યામાં મેઘકથા બતાવી છે. (૧૨)

युष्माऽइन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्ये प्रोक्षिता स्थ। अग्नये त्वा जुष्टं प्रोक्षाम्यग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि। दैव्याय कर्मणे शुन्धध्वं देवयज्यायै यद्वोऽशुद्धाः पराजघ्नुरिदं वस्तच्छुन्धामि॥ १३॥

પદાર્થ : જેમ એ इन्द्रः-સૂર્યલોક वृत्रतूर्ये-મેઘ-વાદળાંનાં વધ માટે युष्माः-તે પૂર્વોક્ત જળોનો अवृणीत-સ્વીકાર કરે છે, જેમ જળ इन्द्रम्-વાયુનો अवृणीध्वम्-સ્વીકાર કરે છે, તેમ यूयम्-હે મનુષ્યો ! તેમ તમે એ જળ ઔષધિ રસોને શુદ્ધ કરવા માટે वृत्रतूर्ये-મેઘના શીઘ્ર વેગમાં प्रोक्षिताः-સંસારી પદાર્થોને સીંચનાર જલનો अवृणीध्वम्-સ્વીકાર કરો.

જેમ એ જલ શુદ્ધ स्थ-થાય છે, તેમ તમે પણ શુદ્ધ બનો. આથી હું યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર - યજમાન दैव्याय-સર્વને શુદ્ધ કરનાર कर्मणे-ઉપર, નીચે, આકુંચન, પ્રસારણ અને ગમનાદિ પાંચ પ્રકારનાં કર્મો તથા देवयज्यायै-વિદ્વાન અથવા શ્રેષ્ઠ ગુણોની દિવ્ય ક્રિયા માટે अग्नये-ભૌતિક અગ્નિના સુખ માટે, जुष्टम्-સારી ક્રિયાઓથી સેવન કરવા યોગ્ય त्वा-તે યજ્ઞને प्रोक्षामि-કરું છું, તથા अग्निषोमाभ्याम्-અગ્નિ અને સોમથી વર્ષા નિમિત્ત जुष्टम्-પ્રીતિ આપનાર અને પ્રીતિથી સેવન કરવા યોગ્ય त्वा-ઉક્ત યજ્ઞને प्रोक्षामि-મેઘમંડળમાં પ્રેરિત કરું છું.

આ રીતે યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ જલ शुन्धध्वम्-સારી રીતે શુદ્ધ થાય છે. यत्-યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ वः-તે જલના અશુદ્ધિ વગેરે દોષો पराजघ्नुः-નિવૃત્ત થાય છે. तत्-માટે અશુદ્ધિની નિવૃત્તિ સુખદાયક બને તે માટે હું शुन्धामि-સારી રીતે શુદ્ધ કરું છું.

દ્વિતીય અર્થ : હે યજ્ઞ કરનારા મનુષ્યો ! यत्-જે કારણે इन्द्रः-સૂર્યલોક वृत्रतूर्ये-મેઘ વાદળોનાં વધ માટે युष्माः-પૂર્વોક્ત જલ અને इन्द्रम्-વાયુનો अवृणीत-સ્વીકાર કરે છે. તથા જે કારણે સૂર્ય वृत्रतूर्ये-મેઘની શીઘ્રતાના કારણે युष्माः-પૂર્વોક્ત જલ प्रोक्षिताः-પદાર્થોનું સિંચન स्थ-કરેલ છે. એથી यूयम्-તમે त्वा-ઉક્ત યજ્ઞનો સ્વીકાર કરીને नयत-સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો.

આ રીતે સર્વ મનુષ્યો दैव्याय-શ્રેષ્ઠ કર્મ અથવા देवयज्यायै-વિદ્વાન અને દિવ્ય ગુણોની શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓ તથા अग्नये-પરમેશ્વરની પ્રાપ્તિ માટે जुष्टम्-પ્રીતિ કરાવનાર યજ્ઞનું प्रोक्षामि-સેવન કરો તથા अग्निषोमाभ्याम्-અગ્નિ અને સોમથી પ્રકાશિત યજ્ઞને મેઘમંડલમાં પહોંચાડો.

હે મનુષ્યો ! આ રીતે તમે સર્વ પદાર્થો તથા સર્વ મનુષ્યોને शुन्धध्वम्-શુદ્ધ કરો. यत्-જેથી वः-તમારા અશુદ્ધિ વગેરે દોષો સદા पराजघ्नुः-નિવૃત્ત થતા રહે. એ જ રીતે હું વેદોનો પ્રકાશ કરનાર તમારા લોકોની શુદ્ધિની शुन्धामि-સારી રીતે વૃદ્ધિ કરું છું. (૧૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે અગ્નિ અને સૂર્યની એટલા માટે રચના કરી છે કે, તે સર્વ પદાર્થોમાં પ્રવેશ કરીને,

તે જલ અને ઔષધિના રસને છિન્ન-ભિન્ન કરે છે. [તે સૂક્ષ્મ બનેલ રસ] વાયુને પ્રાપ્ત થઈને મેઘસમૂહમાં પહોંચીને ત્યાંથી પૃથિવી પર આવીને શુદ્ધ અને સુખકર્તા બને છે.

એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઉત્તમ સુખની પ્રાપ્તિ માટે અગ્નિમાં સુગંધિત પદાર્થોના હોમથી વાયુ અને જલની શુદ્ધિ કરીને દિવ્ય સુખોની ઉત્પત્તિ માટે અતિપ્રેમથી નિત્ય યજ્ઞ કરવો જોઈએ. જેથી સર્વ દોષો નાશ પામીને આ સંસારમાં નિરંતર શુદ્ધ ગુણ પ્રકાશિત થાય.

એટલા માટે હું ઈશ્વર એ શુદ્ધિનો આદેશ આપું છું કે, તમે પરોપકાર માટે નિત્ય શુદ્ધ કર્મ કરો.

આ રીતે જ વાયુ, અગ્નિ અને જલના ગુણોનું ગ્રહણ કરીને તેનો શિલ્પવિદ્યામાં પ્રયોગ કરીને અનેક યાનો તથા યંત્ર-કલાઓ રચીને પુરુષાર્થથી સદા સુખી રહો. (૧૩)

शर्मा॒स्यव॑धूत॒ꣳरक्षोऽव॑धूता॒ऽअरा॑त॒योऽदि॑त्या॒स्त्वग॑सि॒ प्रति॒ त्वादि॑तिर्वेत्तु।
अद्रि॑रसि वान॒स्प॒त्यो ग्रावा॑सि पृथुबु॑ध्न॒: प्रति॒ त्वादि॑त्या॒स्त्वग्वे॑त्तु॥ १४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારાં ઘર शर्म-સુખદાતા असि-હો, તે ઘરથી रक्षः-દુષ્ટ સ્વભાવવાળાં પ્રાણીઓ अवधूतम्-દૂર રહે. अरातयः-દાન વગેરે ધર્મરહિત શત્રુ अवधूताः-દૂર રહે અને તે ઘર अदित्याः-પૃથિવીની त्वक्-ત્વચા-આવરણ સમાન असि-હો, अदितिः-જ્ઞાન સ્વરૂપ ઈશ્વરથી જ તે ઘરને प्रतिवेत्तु-સર્વ મનુષ્યો જાણે અને પ્રાપ્ત કરે.

જે वानस्पत्यः-વનસ્પતિથી ઉત્પન્ન થનાર पृथुबुध्नः-અતિ વિસ્તૃત અન્તરિક્ષમાં નિવાસ કરનાર તથા ग्रावा-જલને ગ્રહણ કરનાર अद्रिः-મેઘ असि-છે. તે અને આ વિદ્યાને अदितिः-જગદીશ્વર તમારા માટે वेत्तु-કૃપા કરીને જણાવે. વિદ્વાન પુરુષ પણ अदित्याः-પૃથિવીની त्वक्-ત્વચા સમાન त्वा-તે ઘરની રચનાને प्रतिवेत्तु-જાણે (૧૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર મનુષ્યોને આજ્ઞા આપે છે - મનુષ્ય શુદ્ધ અને સર્વ તરફની અવકાશયુક્ત - વિસ્તારયુક્ત પૃથિવી - ભૂમિ પર સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક ઘર બનાવીને તેમાં સુખપૂર્વક રહે. તે ઘરથી સર્વ દુષ્ટ મનુષ્યો અને દોષોને દૂર કરે. તથા ત્યાં સર્વ સાધનો સ્થાપિત કરે. તેમ કરવાથી વાયુ, વર્ષા અને જલની શુદ્ધિ દ્વારા સંસારમાં મહાન સુખની સિદ્ધિ - પ્રાપ્તિ થાય છે. (૧૪)

अ॒ग्नेस्त॒नूर॑सि वा॒चो वि॒सर्ज॑नं दे॒ववी॑तये त्वा गृह्णामि बृ॒हद् ग्रावा॑सि वानस्प॒त्यः स॒ऽइ॒दं दे॒वेभ्यो॑ ह॒विः श॑मीष्व सु॒शमि॑ शमीष्व। हवि॑ष्कृ॒देहि॒ हवि॑ष्कृ॒देहि॑॥ १५॥

પદાર્થ : હું સર્વ જનોની સમાન જે हविः-પદાર્થના સંસ્કાર માટે वृहद्ग्रावासि-મોટા પથ્થર असि-છે. અને वानस्पत्यः-કાષ્ઠના મૂસળ વગેરે પદાર્થો છે. देवेभ्यः-વિદ્વાન અથવા દિવ્યગુણો માટે યજ્ઞને देववीतये-શ્રેષ્ઠ ગુણોના પ્રકાશ અને શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન અથવા વિવિધ ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે प्रतिगृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું.

હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે देवेभ्यः-વિદ્વાનોના સુખ માટે सु एमि-સારી રીતે દુ:ખને શાંત કરનારા हविः-યજ્ઞ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને शमीष्व-शमीष्व-અત્યંત શુદ્ધ કરો. જે મનુષ્ય વેદાદિ શાસ્ત્રોનું પ્રીતિપૂર્વક પઠન અને પાઠન કરે છે, તેને આ हविष्कृत्-હોમમાં ચડાવવા યોગ્ય પદાર્થોનું વિધાન કરનારી જે યજ્ઞના

વિસ્તાર માટે વેદના ભણવાથી બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય, વૈશ્ય અને શૂદ્રોની શુદ્ધ, સુશિક્ષિત અને પ્રસિદ્ધ વાણી પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય વેદાદિ શાસ્ત્રો દ્વારા યજ્ઞની ક્રિયા અને તેના ફળને જાણીને ઉત્તમ પ્રકારે તૈયાર કરેલ હવિથી યજ્ઞ કરે છે, ત્યારે તે સુગંધી વગેરે દ્રવ્યોના હોમ દ્વારા પરમાણુરૂપ બનીને વાયુ અને વર્ષાના જલમાં વિસ્તૃત થઈને, સર્વ પદાર્થોને શ્રેષ્ઠ બનાવીને દિવ્ય સુખો ઉત્પન્ન કરે છે.

જે મનુષ્ય આ રીતે પ્રાણીઓના સુખ માટે પૂર્વોક્ત ત્રણે પ્રકારના યજ્ઞને નિત્ય કરે છે, તેનો સર્વ લોકો 'હે हविष्कृत् *- હવિ આપનાર આવો, યજ્ઞકર્તા આવો, તેમ કહીને સત્કાર કરે છે. (૧૫)*

कुक्कुटोऽसि मधुजिह्वऽइषमूर्जमावद त्वया वयꣳसङ्घातꣳसङ्घातं जेष्म वर्षवृद्धमसि प्रति त्वा वर्षवृद्धं वेत्तु परापूतꣳ रक्षः परापूता अरातयोऽपहतꣳ रक्षो वायुर्वो विविनक्तु देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना॥ १६ ॥

પદાર્થ : જે કારણે આ યજ્ઞ मधुजिह्वः-જેમાં મધુર ગુણયુક્ત વાણી છે, कुक्कुटः-ચોર અને શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર असि-છે, इषम्-અન્નાદિ પદાર્થો તથા ऊर्जम्-વિદ્યાદિ બલ અથવા અત્યુત્તમ રસને પ્રાપ્ત કરાવે છે. જેથી તેનું સદા અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ.

હે વિદ્વાનો ! તમે એ ત્રણ પ્રકારના જે યજ્ઞ છે, તેનું અનુષ્ઠાન અને ગુણોના જ્ઞાતા असि-છો. આથી તેના ગુણોનો અમોને आवद-ઉપદેશ કરો. જેથી वयम्-અમે त्वया-તમારી સાથે संघातं संघातम्-જેમાં ઉત્તમ રીતે શત્રુઓનો પરાજય થાય છે અર્થાત્ અતિ ભારે સંગ્રામોમાં વારંવાર आ जेष्म-સર્વ પ્રકારથી જીતીએ. કારણ કે આપ યુદ્ધ વિદ્યાને જાણનાર असि-છો.

એથી સર્વ મનુષ્ય वर्षवृद्धम्-શસ્ત્ર અને અસ્ત્રોની વર્ષાની વૃદ્ધિ કરનાર त्वा-આપ તથા वर्षवृद्धम्-વર્ષાની વૃદ્ધિ કરનાર એ યજ્ઞને प्रतिवेत्तु-જાણે.

આ રીતે સંગ્રામ કરીને મનુષ્યોએ परापूतम्-પવિત્રતા વગેરે ગુણોથી રહિત रक्षः-દુષ્ટ, परापूताः-શુદ્ધિરહિત, તથા अरातयः-દાન વગેરે ધર્મથી રહિત શત્રુઓ તથા रक्षः-ડાકુઓનો હંમેશાં अपहतम्-નાશ થાય તેવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ.

જેમ જે हिरण्यपाणिः-જ્યોતિ જેનો હાથ છે. એવો જે वायुः-ભૌતિક વાયુ છે, તે अच्छिद्रेण-એકરસ पाणिना-પોતાના ગમનાગમન વ્યવહારથી યજ્ઞ અને સંસારમાં અગ્નિ તથા સૂર્યથી અતિ સૂક્ષ્મ બનેલ પદાર્થો - કણોને प्रतिगृभ्णातु-ગ્રહણ કરે છે.

જેમ हिरण्यपाणिः-કિરણ જેના હાથ છે તે કિરણ વ્યવહારથી सविता-વર્ષા અને પ્રકાશ દ્વારા દિવ્ય ગુણોને ઉત્પન્ન કરવામાં હેતુ देवः-પ્રકાશમય સૂર્યલોક છે, वः-તે પદાર્થોને विविनक्तु-પૃથક્ અર્થાત્ પરમાણુ રૂપ બનાવે છે, તેમ પરમેશ્વર અને વિદ્વાન મનુષ્ય अच्छिद्रेण-નિરંતર पाणिना-પોતાના ઉપદેશરૂપ કિરણોના વ્યવહારથી સર્વ વિદ્યાઓનું विविनक्तु-વિશ્લેષણ કરે છે. તેમ જ કૃપા કરીને પ્રીતિપૂર્વક वः-

તમને અત્યંત આનંદ આપવા માટે प्रतिगृभ्णातु-ગ્રહણ કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને આજ્ઞા આપે છે કે - મનુષ્યોએ યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન યુદ્ધમાં, દુષ્ટ શત્રુઓ પર વિજય, પદાર્થોના ગુણોનું જ્ઞાન, વિદ્યા-વૃદ્ધોની સેવા, દુષ્ટ મનુષ્યો તથા દોષોનું નિરાકરણ, સર્વ પદાર્થોને છિન્ન-ભિન્ન કરનાર અગ્નિ અને સૂર્ય છે અને સર્વ પદાર્થોને ધારણ કરનાર વાયુ છે, તેનું જ્ઞાન અને પરમેશ્વરની ઉપાસના તથા વિદ્વાનોનો સંગ કરીને તથા સમસ્ત વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

धृष्टिरस्यपाऽग्नेऽअग्निमामादं जहि निष्क्रव्यादꣳसेधा देवयजं वह।

ध्रुवमसि पृथिवीं दृꣳह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजातवन्युपदधामि भ्रातृव्यस्य वधाय॥ १७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પરમેશ્વર ! આપ धृष्टिः-આપ અત્યંત નિર્ભય असि-છો. એથી निष्क्रव्यादम्-પાકેલા પદાર્થો છોડીને आमादम्-કાચા પદાર્થોને પકાવનાર અને देवयजम्-વિદ્વાન અને દિવ્ય ગુણોનો મેળાપ - પ્રાપ્ત કરાવનાર अग्निम्-ભૌતિક અથવા વીજળીરૂપ અગ્નિને આપ सेध-સિદ્ધ કરો. આ રીતે અમને મંગલ - ઉત્તમ સુખ માટે શાસ્ત્રોની શિક્ષા આપીને દુઃખોને अपजहि-દૂર કરો અને આનંદને आवह-પ્રાપ્ત કરાવો.

હે પરમેશ્વર ! આપ ध्रुवम्-નિશ્ચય સુખ આપનાર असि-છો, એથી पृथिवीम्-વિસ્તૃત ભૂમિ તથા તેમાં રહેનાર મનુષ્યોને दृंह-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી વૃદ્ધિયુક્ત કરો.

હે अग्ने-જગદીશ્વર ! જેથી આપ અત્યંત પ્રશંસનીય છો, તેથી હું भातृव्यस्य-દુષ્ટ અને શત્રુના वधाय-વિનાશ માટે ब्रह्मवनि-બ્રાહ્મણ અર્થાત્ વિદ્વાનના રક્ષક, क्षत्रवनि-ક્ષત્રિયોના રક્ષક, सजातवनि-મારા સમાન અન્ય મનુષ્યોના રક્ષક, त्वा-આપને उपदधामि-હૃદયમાં ધારણ કરું છું. (૧૭)

દ્વિતીય અર્થ : હે વિદ્વાન યજમાન ! જે કારણે એ अग्ने-ભૌતિક અગ્નિ धृष्टिः-અતિ તીક્ષ્ણ હોવાથી તથા નિકૃષ્ટ પદાર્થોને છોડીને ઉત્તમ પદાર્થોથી देवयजम्-વિદ્વાન અથવા દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર યજ્ઞને आवह-પ્રાપ્ત કરાવે છે. આથી આપ निष्क्रव्यादम्-પક્વ - ભસ્મ પદાર્થોને છોડીને आमादम्-કાચા પદાર્થોને બાળનાર તથા देवयजम्-વિદ્વાન અર્થાત્ દિવ્યગુણો પ્રાપ્ત કરાવનાર अग्निम्-પ્રત્યક્ષ વીજળીરૂપી અગ્નિને आवह-પ્રાપ્ત કરાવો, તથા અન્યોને એ રીતે શિક્ષિત सेध-કરો, તેના અનુષ્ઠાનમાં રહેલા દોષોને अपजहि-દૂર કરો.

જે કારણે એ અગ્નિ સૂર્યરૂપે ध्रुवम्-નિશ્ચલ असि-છે. આથી તે આકર્ષણ શક્તિથી पृथिवीम्-વિસ્તૃત ભૂમિ અને તેમાં રહેલ પ્રાણીઓને दृंह-ધારણ કરે છે અને ઉત્તમ ગુણોની વૃદ્ધિ કરે છે. આથી હું त्वा-તે ब्रह्मवनि-બ્રાહ્મણ અર્થાત્ બ્રાહ્મણોના રક્ષક, क्षत्रवनि-ક્ષત્રિયોના રક્ષક તથા सजातवनि-અન્ય પુરુષોના પણ રક્ષક અગ્નિને भ्रातृव्यस्य-શત્રુના वधाय-વિનાશ માટે યજ્ઞવેદી અથવા વિમાન વગેરેમાં उपदधामि-સ્થાપિત કરું છું. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વશક્તિમાન ઈશ્વરે ભૌતિક અગ્નિને આમ અર્થાત્ કાચા પદાર્થને બાળનાર બનાવેલ છે. જેથી તે ભસ્મરૂપ પદાર્થોને બાળવામાં સમર્થ થતો નથી. તેથી મનુષ્યો કાચા પદાર્થોને પકાવીને ખાય

છે. જેથી ઉદરનું ખાધેલું અન્ન પાકે છે તેને 'આમાત્' , અને જે મૃત શરીરને બાળે છે તેને 'ક્વ્યાત્' અગ્નિ કહે છે.

જેણે દિવ્ય ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ રચેલ છે, પૃથ્વીનું ધારણ, આકર્ષણ અને પ્રકાશ આપનાર સૂર્ય રચેલ છે, જે બ્રહ્મ અર્થાત્ વેદજ્ઞાતા બ્રાહ્મણો, ધનુર્વેદ જ્ઞાતા ક્ષત્રિયો તથા અન્ય સમાન જન્મવાળા મનુષ્યો દ્વારા સમ્યક્ સેવન કરવામાં આવે છે.

જે સર્વ ઉત્પન્ન પદાર્થોમાં વિદ્યમાન રહેનાર પરમેશ્વર અથવા ભૌતિક અગ્નિ છે, તેમાં પરમેશ્વર સર્વનો ઉપાસ્ય છે અને ભૌતિક અગ્નિ ક્રિયાઓની સિદ્ધિ માટે કરવા યોગ્ય છે. (૧૭)

अग्ने ब्रह्म गृभ्णीष्व धरुणमस्यन्तरिक्षं दृꣳह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजातवन्युपदधामि भ्रातृव्यस्य वधाय। धर्त्रमसि दिवं दृꣳह ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि सजातवन्युपदधामि भ्रातृव्यस्य वधाय। विश्वाभ्यस्त्वाशाभ्यऽउपदधामि चित स्थोर्ध्वचितो भृगूणामङ्गिरसां तपसा तप्यध्वम्॥ १८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પરમેશ્વર ! આપ धरुणम्-સર્વ લોકને ધારણ કરનાર असि-છો. એથી અમારી ब्रह्म-વૈદિક સ્તુતિને गृभ्णीष्व-ગ્રહણ કરો, अन्तरिक्षम्-અમારા આત્મામાં સ્થિત અક્ષય જ્ઞાન છે, તેની दृंह-વૃદ્ધિ અને દૃઢ કરો.

હું भ्रातृव्यस्य-શત્રુઓના वधाय-વિનાશ માટે ब्रह्मवनि-સર્વ મનુષ્યોના સુખ માટે વેદના શાખા-શાખાન્તર વિભાગ કરનારા બ્રાહ્મણ, क्षत्रवनि-રાજધર્મનું આચરણ કરનાર, सजातवनि-સર્વ વિદ્યાઓને સમાનરૂપમાં સર્વને પ્રદાન કરનાર त्वाम्-આપને उपदधामि-હૃદયમાં ધારણ કરું છું.

હે સર્વને ધારણ કરનાર પરમેશ્વર ! આપ धर्त्रम्-લોકોને ધારણ કરનાર असि-છો. તેથી કૃપા કરીને અમારામાં दिवम्-અતિ શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનની दृंह-વૃદ્ધિ કરો. હું भ्रातृव्यस्य-શત્રુઓના वधाय-વિનાશ માટે ब्रह्मवनि-क्षत्रवनि-सजातवनि-ઉક્ત વેદ, રાજ્ય તથા પરસ્પર સમાન વિદ્યા અથવા રાજ્યાદિ વ્યવહારોનો યથાયોગ્ય વિભાગ કરનાર त्वा-આપને उपदधामि-વારંવાર હૃદયમાં ધારણ કરું છું.

હું त्वा-આપને સર્વવ્યાપક જાણીને विश्वाभ्यः-સર્વ आशाभ्यः-દિશાઓથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા આપને વારંવાર उपदधामि-મનમાં ધારણ કરું છું.

હે મનુષ્યો ! તમે મને એ રીતે જાણીને चितः-વિજ્ઞાની ऊर्ध्वचितः-ઉત્તમ જ્ઞાનવાન પુરુષોની પ્રેરણાથી કપાલોને અગ્નિ પર રાખીને તથા भृगूणाम्-જેનાથી વિદ્યા વગેરે ગુણો પ્રાપ્ત થાય છે, એવા अङ्गिरसाम्-પ્રાણોને तपसा-પ્રભાવથી तप्यध्वम्-તપો અને તપાવો.

દ્વિતીય અર્થ : હે વિદ્વાન ધર્માત્મા પુરુષ ! જે अग्ने-ભૌતિક અગ્નિ દ્વારા धरुणम्-સર્વ લોકોને ધારણ કરનાર તેજ ब्रह्म-વેદ અને अन्तरिक्षम्-આકાશમાં રહેલ પદાર્થોનું ગ્રહણ તથા વૃદ્ધિ કરવામાં આવે છે. त्वा-તેને તમે હોમ અને શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ માટે गृभ्णीष्व-ગ્રહણ કરો અને दृंह-વિદ્યાયુક્ત ક્રિયાઓથી વૃદ્ધિ કરો.

હું પણ भ्रातृव्यस्य-શત્રુઓના वधाय-વિનાશ માટે त्वा-તે ब्रह्मवनि-क्षत्रवनि-सजातवनि-સંસારી મૂર્ત પદાર્થોનો પ્રકાશ કરવા તથા રાજગુણોનો દૃષ્ટાન્તરૂપ પ્રકાશ કરનાર ભૌતિક અગ્નિને શિલ્પવિદ્યા વગેરે વ્યવહારોમાં उपदधामि-સ્થાપન કરું છું. એ સ્થાપિત અગ્નિ આપણાં અનેક સુખોને ધારણ કરે છે - સુખદાયક બને છે.

એ જ રીતે સર્વ લોકોને धर्त्रम्-ધારણ કરનાર વાયુ असि-છે. તથા दिवम्-પ્રકાશમય સૂર્યલોકને दृंह-દૃઢ કરે છે. હે મનુષ્યો ! તેને હું भ्रातृव्यस्य-જેમ શત્રુઓના वधाय-વિનાશ માટે ब्रह्मवनि-क्षत्रवनि-सजातवनि-વેદ, રાજ્ય તથા પરસ્પર સમાન શ્રેષ્ઠ શિલ્પ વિદ્યાઓને યથાયોગ્ય કાર્યોમાં યુક્ત કરનાર તે ભૌતિક અગ્નિને उपदधामि-સ્થાપિત કરું છું, તેમ તમે પણ શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓમાં યુક્ત કરીને વિદ્યાના બળ દ્વારા दृंह-વૃદ્ધિ કરો.

હે વિદ્યાના ઈચ્છુક પુરુષ ! જે વાયુ, પૃથિવી અને સૂર્ય વગેરે લોકોને ધારણ કરી રહેલ છે, તેને તમે પોતાના જીવન વગેરેના સુખ તથા શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ - પ્રાપ્તિ માટે યથાયોગ્ય કાર્યોમાં સંલગ્ન કરીને તેની વિદ્યાની दृंह-વૃદ્ધિ કરો; જેમ અમે શત્રુઓના વિનાશ માટે ब्रह्मवनि-क्षत्रवनि-सजातवनि-અગ્નિના ઉક્ત ગુણોની સમાન વાયુને શિલ્પવિદ્યા વગેરેના વ્યવહારોમાં उपदधामि-સંયુક્ત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ પોતાનાં અનેક દુઃખોના વિનાશ માટે તેને યથાયોગ્ય કાર્યોમાં સંયુક્ત - સંલગ્ન કરો.

હે મનુષ્યો ! જેમ હું વાયુ વિદ્યાનો જ્ઞાતા त्वा-તે અગ્નિ તથા વાયુને विश्वाभ्यः-સર્વ आशाभ्यः-દિશાઓથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે યથાયોગ્ય શિલ્પ વ્યવહારોમાં उपदधामि-ધારણ કરું છું, તેમ તમે પણ ધારણ કરો.

શિલ્પવિદ્યા તથા હોમ કરવા માટે चितः ऊर्ध्वचितः [स्थ]-પદાર્થોથી ભરેલાં પાત્રો અને યાનોમાં સ્થાપન કરેલ કલાયંત્રોને भृगुणाम्-જેથી પદાર્થોને પકાવે છે તે अङ्गिरसाम्-અંગારોના तपसा-તાપથી तप्यध्वम्-ઉક્ત પદાર્થોને પકાવો. (૧૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોની ઉન્નતિ, મૂર્ખતાનો વિનાશ, સર્વ શત્રુઓના નિવારણ દ્વારા રાજ્યની વૃદ્ધિ માટે વેદ વિદ્યાને ગ્રહણ કરો.

જે અગ્નિની વૃદ્ધિનો હેતુ અને સર્વધારક વાયુ છે તથા અગ્નિમય સૂર્ય અને ઈશ્વર છે, તેને સર્વ દિશાઓમાં વ્યાપક જાણીને, યજ્ઞની સિદ્ધિ, વિમાનાદિની રચના તથા તેનું સંચાલન કરીને, દુઃખોને દૂર કરીને, શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરો. (૧૮)

शर्मा॑स्यव॑धूत॒ꣳ रक्षोऽव॑धूता॒ऽअरा॑तयोऽदि॑त्या॒स्त्वग॑सि॒ प्रति॒ त्वादि॑तिर्वे॑त्तु। धिषणा॑सि पर्व॒ती प्रति॒ त्वादि॑त्या॒स्त्वग्वे॑त्तु दि॒व स्क॑म्भ॒नीर॑सि धिषणा॑सि पार्वते॒यी प्रति॑ त्वा पर्व॒ती वे॑त्तु॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ લોકો જે આ યજ્ઞ शर्म-સુખદાયક असि-છે, अदितिः-નાશરહિત છે. જેથી रक्षः-દુષ્ટ અને દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત મનુષ્ય अवधूतम्-વિનાશ પામે છે તથા अरातयः-દાનાદિ ધર્મરહિત

- લોભી મનુષ્ય अवधूताः-નાશ પામે છે અને તે યજ્ઞ अदित्याः-અન્તરિક્ષ અને પૃથિવીની त्वक्-ત્વચા - આવરણ સમાન असि-છે, त्वा-તેને प्रति वेत्तु-જાણો.

જે વિદ્યા નામક યજ્ઞથી पर्वती-બહુ જ જ્ઞાનવાળી, दिवः-પ્રકાશમાન સૂર્યાદિ લોકને स्कम्भनीः-રોકનારી [असि-] છે તથા पार्वतेयी-પર્વત અર્થાત્ મેઘની પુત્રી સમાન અર્થાત્ પૃથિવી સમાન धिषणा-વેદવાણી [असि-] છે. अदित्याः-પૃથિવીની त्वक्-શરીરને આચ્છાદિત કરનારી ત્વચા સમાન વિસ્તારને પ્રાપ્ત થાય છે. त्वा-તે યજ્ઞ તથા તે દ્યૌને प्रति वेत्तु-યથાવત્ જાણો.

જે સત્ સંગતિ નામક યજ્ઞથી पर्वती-શ્રેષ્ઠ બ્રહ્મજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવનારી धिषणा-દ્યૌઃ અર્થાત્ પ્રકાશરૂપી બુદ્ધિ असि-પ્રાપ્ત થાય છે, त्वा-તેને પણ प्रतिवेत्तु-યથાવત્ જાણો (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા પોતાના વિજ્ઞાનથી સારી રીતે સામગ્રી સંપાદન કરીને જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરવામાં આવે છે, તે વર્ષા અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરનાર છે. તે અગ્નિ અને મનથી સારી રીતે સિદ્ધ કરેલ સૂર્યપ્રકાશની ત્વચા સમાન સેવા કરે છે. (૧૯)

धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा। दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि॥ २०॥

પદાર્થ : યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ જે धान्यम्-પુષ્ટિકારક, સુખકારક અને રોગનાશક અન્ન તથા पयः-જલ असि-છે, તે देवान्-વિદ્વાનો, જીવો તથા ઇન્દ્રિયોને धिनुहि-દીપ્ત કરે છે. તેથી હે મનુષ્યો ! જે રીતે त्वा-તેને प्राणाय-જીવન ધારણ માટે, त्वा-તેને उदानाय-સ્ફૂર્તિ, બળ અને પરાક્રમ માટે, त्वा-તેને व्यानाय-શુભ ગુણ-કર્મ અને વિદ્યાનાં અંગોમાં વ્યાપ્ત કરવા માટે, दीर्घाम्-ઘણા દિવસો સુધી, प्रसितिम्-અતિ ઉત્તમ સુખબંધનયુક્ત, आयुषे-પૂર્ણ આયુ ભોગવવા માટે धाम्-ધારણ કરું છું. તેમ જ તમે પણ તે પ્રયોજન માટે તેને નિત્ય ધારણ કરો.

જેમ वः-અમને हिरण्यपाणिः-મોક્ષ આપવાનો વ્યવહાર છે, તે સર્વ જગતના ઉત્પાદક देवः-सविता-સર્વ ઐશ્વર્ય દાતા ઈશ્વર अच्छिद्रेण-પોતાની વ્યાપકતા અને पाणिना-ઉત્તમ વ્યવહારથી महीनाम्-વાણીના चक्षुषे-પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન માટે प्रत्यनुगृभ्णातु-પોતાના અનુગ્રહથી ગ્રહણ કરે છે, તેમ અમે પણ તે ઈશ્વરને अच्छिद्रेण-નિરંતર पाणिना-સ્તુતિ વગેરે ગ્રહણ કરીએ - સ્તુતિ કરીએ.

જેમ हिरण्यपाणिः-પદાર્થોના પ્રકાશ આપનાર देवः सविता-સૂર્યલોક महीनाम्-લોકલોકાન્તરોની પૃથિવીમાં નેત્ર સંબંધી વ્યવહાર માટે अच्छिद्रेण-નિરંતર તીવ્ર પ્રકાશથી पयः-જલને प्रतिगृभ्णातु-ગ્રહણ કરીને અન્ન વગેરે પદાર્થોની પુષ્ટિ કરે છે, તેમ અમે પણ તેને अच्छिद्रेण-નિરંતર पाणिना-વ્યવહારથી महीनाम्-પૃથિવીના चक्षुषे-પદાર્થોની દૃષ્ટિગોચરતા માટે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ અન્ન, જલ અને વાયુ વગેરે પદાર્થો છે, તે સર્વની શુદ્ધિ, બળ, પરાક્રમ અને સ્થિર દીર્ઘ આયુની પ્રાપ્તિમાં સમર્થ બને છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ તે યજ્ઞ કર્મનું નિત્ય

અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ.

પરમેશ્વરે જે અતિ પૂજનીયા વેદવાણીનો પ્રકાશ કરેલ છે, તેને પ્રત્યક્ષ કરવા માટે ઈશ્વરની કૃપાની અપેક્ષા તથા સદા સ્વ પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર પરોપકારી મનુષ્યો પર કૃપા કરે છે, તેમ આપણે પણ સર્વ પ્રાણીઓ પર નિત્ય કૃપા કરવી જોઈએ.

જેમ એ અન્તર્યામી ઈશ્વર આત્મા અને વેદોમાં સત્યજ્ઞાનને તથા સૂર્યલોક મૂર્ત - ભૌતિક પદાર્થોને નિરંતર પ્રકાશિત કરે છે, તેમ આપણે સર્વ મનુષ્યોએ સર્વના સુખ માટે સમસ્ત વિદ્યાઓનું પ્રત્યક્ષ [પ્રાપ્ત] કરીને તેને નિત્ય પ્રકાશિત કરવી જોઈએ અને તેથી પૃથિવીનું (ચક્રવર્તી) રાજ્ય વગેરે ઉત્તમ સુખોને નિત્ય પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૨૦)

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। सं व॑पामि समाप॒ऽओष॑धीभिः समोष॑धयो रसे॑न। स॑ꣳरे॒वती॒र्जग॑तीभिः पृच्यन्ता॒ꣳ सं मधु॑मती॒र्मधु॑मतीभिः पृच्यन्ताम्॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું सवितुः-સકલ ઐશ્વર્ય દાતા देवस्य-પરમેશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા પ્રત્યક્ષ સંસારમાં, સૂર્યલોકના પ્રકાશમાં अश्विनोः-સૂર્ય અને ભૂમિના તેજની बाहुभ्याम्-દૃઢ રીતે पूष्णः-પુષ્ટિ કરનાર વાયુના हस्ताभ्याम्-પ્રાણ અને અપાનથી त्वा-પૂર્વોક્ત ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞનો संवपामि-વિસ્તાર કરું છું, તેમ તમે પણ તેનો - યજ્ઞનો વિસ્તાર કરો.

જેમ આ ઉત્પન્ન સંસારમાં औषधीभिः-યવ વગેરે ઔષધિઓથી आपः-જલ અને औषधयः-ઔષધિ रसेन-આનંદદાયક રસથી તથા जगतीभिः-ઉત્તમ ઔષધિઓથી रेवतीः-ઉત્તમ જલ અને मधुमतीभिः-મધુર રસયુક્ત ઔષધિઓથી मधुमतीः-અત્યંત ઉત્તમ રસરૂપ જલ, એ સર્વ મળીને વૃદ્ધિ પામે છે.

એ રીતે આપણે પણ ઔષધિઓથી જલ અને ઔષધિ, ઉત્તમ જલથી તથા ઉત્તમ ઔષધિઓથી રસયુક્ત જલ અને અત્યુત્તમ મધુર રસયુક્ત ઔષધિઓથી પ્રશંસનીય રસરૂપ જલ, એ સર્વનો યથાયોગ્ય પરસ્પર संपृच्यन्ताम्-યુક્તિપૂર્વક વૈદક અને શિલ્પશાસ્ત્રની રીતિ - વિધિથી મેળ કરવો જોઈએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ ઈશ્વર દ્વારા ઉત્પાદિત અને સૂર્ય દ્વારા પ્રકાશિત આ સંસારમાં અનેક પ્રકારનાં સંયુક્ત કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો મેળવીને ત્રણ પ્રકારનો યજ્ઞ નિત્ય કરવો જોઈએ.

જેમ કે જલ પોતાના રસથી જે ઔષધિઓની વૃદ્ધિ કરે છે, તે ઔષધિઓ ઉત્તમ રસના યોગથી રોગનાશક હોવાથી સુખદાયક બને છે.

જેમ ઈશ્વર કારણમાંથી કાર્ય [જગત] ની યથાવત્ રચના કરે છે, સૂર્ય સર્વ સંસારને પ્રકાશિત કરીને, નિરંતર રસને સૂક્ષ્મ કરીને પૃથિવી વગેરેનું પોતાની તરફ આકર્ષણ કરે છે તથા વાયુ ધારણ કરીને પુષ્ટિ કરે છે.

એ જ પ્રમાણે આપણે પણ યથાવત્ શુદ્ધ કરેલ અને પરસ્પર મિશ્રિત દ્રવ્યોથી વિદ્વાનોનો સંગ, વિદ્યાની ઉન્નતિ, હોમ અને શિલ્પ નામક યજ્ઞો દ્વારા વાયુ, વર્ષા અને જલની શુદ્ધિ નિત્ય કરવી જોઈએ. (૨૧)

जनयत्यै त्वा संयौमीदमग्नेरिदमग्नीषोमयोरिषे त्वा घर्मोऽसि विश्वायुरुरुप्रथाऽउरु प्रथस्वोरु। ते यज्ञपतिः प्रथतामग्निष्टे त्वचं मा हिंसीद्देवस्त्वा सविता श्रपयतु वर्षिष्ठेऽधि नाके॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે રીતે હું जनयत्यै-સર્વ સુખોને ઉત્પન્ન કરનારી રાજ્યલક્ષ્મી માટે त्वा-તે યજ્ઞને संयौमि-અગ્નિની વચ્ચે પદાર્થોને છોડીને યુક્ત કરું છું, તેમ તમારે પણ અગ્નિના સંયોગથી સિદ્ધ કરવું જોઈએ. અમે इदम्-આ સંસ્કાર કરેલો હવિ अग्नेः-અગ્નિમાં નાખવામાં આવે છે, इदम्-તે હવિ ફેલાઈને अग्निषोमयोः-અગ્નિ [સૂર્ય] અને સોમ [ચન્દ્ર]ની મધ્યમાં પહોંચીને इषे-અન્ન વગેરેને ઉત્પન્ન કરવામાં હેતુ બને છે.

જે विश्वायुः-પૂર્ણ આયુ તથા उरुप्रथाः-બહુ સુખ આપનાર धर्मः-યજ્ઞ असि-છે, તેનો હું જેમ વિસ્તાર કરું છું, તેમ त्वा-તેનો હે પુરુષો ! તમે પણ उरु प्रथस्व-વિસ્તાર કરો.

આ રીતે વિસ્તાર કરનાર ते-આપના માટે એ यज्ञपतिः-યજ્ઞના સ્વામી अग्निः-ભૌતિક યજ્ઞ સંબંધી અથવા શરીરસ્થ અગ્નિ તથા ते-सविता-અન્તર્યામી देवः-જગદીશ્વર उरु प्रथताम्-અનેક રીતે સુખની વૃદ્ધિ કરે. [ते त्वचं-તમારા શરીરનો] मा हिंसीत्-કદી પણ નાશ ન કરે. તથા તે પરમેશ્વર वर्षिष्ठे-અત્યંત વિકાસ પામીને अधिनाके-જે અત્યુત્તમ સુખ છે, તેમાં त्वा-તમને श्रपयतु-સુખથી યુક્ત કરે.

દ્વિતીય અર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું જે विश्वायुः-પૂર્ણ આયુ તથા उरुप्रथाः-બહુ સુખદાતા धर्मः-યજ્ઞ असि-છે, त्वा-તે યજ્ઞને जनयत्यै-રાજ્યલક્ષ્મી તથા इषे-અન્નાદિ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરવા માટે संयौमि-સંયુક્ત કરું છું. તથા તેની સિદ્ધિ માટે इदम्-આ अग्नेः-અગ્નિમાં અને इदम्-એ अग्नीषोमयोः-અગ્નિ અને સોમ [સૂર્ય અને ચંદ્ર]માં શુદ્ધ કરેલ હવિ संवपामि-પહોંચાડું છું; તેમ તમે પણ તે યજ્ઞનો उरुप्रथस्व-વિસ્તાર કરો, જેથી એ अग्निः-ભૌતિક અગ્નિ ते-તમારા त्वचम्-શરીરને मा हिंसीत्-રોગોથી નષ્ટ ન કરે.

જેમ देवः-જગદીશ્વર सविता-અન્તર્યામી वर्षिष्ठे-અત્યધિક વૃદ્ધિ પામેલ જે अधिनाके-અત્યુત્તમ સુખ છે, તેમાં त्वा-તે યજ્ઞને અગ્નિમાં પરિપક્વ કરે છે. તેમ તમે પણ એ યજ્ઞને श्रपयतु-પરિપક્વ કરો અને ते-તમારા यज्ञपतिः-યજ્ઞના સ્વામી પણ તે યજ્ઞને उरु प्रथताम्-વિસ્તારયુક્ત કરે. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ પ્રકારનો યજ્ઞ નિત્ય કરવો જોઈએ કે જે પૂર્ણ લક્ષ્મી, સંપૂર્ણ આયુ, અન્નાદિ પદાર્થ, રોગનાશ તથા સર્વ સુખોનો વિસ્તાર કરે છે. તે યજ્ઞ કોઈએ કદી પણ છોડવો ન જોઈએ.

કારણ કે તે વાયુ, વર્ષા, જલ અને ઔષધિઓની શુદ્ધિ કરનાર છે. એ યજ્ઞ વિના કોઈ પ્રાણી સારી રીતે સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતું નથી. આથી તે જગદીશ્વર યજ્ઞાનુષ્ઠાનની સર્વ મનુષ્યોને આજ્ઞા આપે છે. (૨૨)

मा भेर्मा संविक्थाऽअतमेरुर्यज्ञोऽतमेरुर्यजमानस्य प्रजा भूयात् त्रिताय त्वा

द्विताय॑ त्वैकताय॑ त्वा॥ २३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન પુરુષો ! તમે अतमेरु-શ્રદ્ધાળુ બનીને यजमानस्य-યજમાનના યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી मा भेः-ડરો નહિ, તેનાથી मा संविक्थाः-વિચલિત ન બનો. એ રીતે यज्ञः-યજ્ઞ કરતાં તમે શ્રેષ્ઠ, अतमेरु-ગ્લાનિરહિત અને શ્રદ્ધાવાન प्रजा-સંતાન भूयात्-પ્રાપ્ત કરો.

હું त्वा-તે ભૌતિક અગ્નિને ઉક્ત ગુણયુક્ત તથા एकताय-સત્ય સુખ માટે द्विताय-વાયુ તથા વૃષ્ટિ જળની શુદ્ધિ તથા त्रिताय-અગ્નિ, કર્મ અને હવિને માટે संयौमि-નિશ્ચિત - સ્થાપિત કરું છું. (૨૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર પ્રત્યેક મનુષ્યને આજ્ઞા અને આશીર્વાદ આપે છે કે - કોઈ પણ મનુષ્યે યજ્ઞ, સત્યાચરણ અને વિદ્યાગ્રહણથી ડરવું નહિ અને વિચલિત થવું નહિ. કારણ કે એ યજ્ઞાદિ શુભ કર્મોથી જ તમે ઉત્તમ સંતાન તથા શારીરિક, વાચિક અને માનસિક નિશ્ચલ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકો છો. (૨૩)

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। आद॑देऽध्वर॒कृतं॑ दे॒वेभ्य॒ऽइन्द्र॑स्य बा॒हुर॑सि दक्षि॑णः स॒हस्र॑भृष्टिः श॒तते॑जा वा॒युर॑सि ति॒ग्मते॑जा द्वि॒ष॒तो व॒धः॥ २४॥

પદાર્થ : હું सवितुः-અન્તર્યામી પ્રેરણા કરનાર તથા देवस्य-સર્વ આનંદદાયક પરમેશ્વરની प्रसवे-પ્રેરણાથી अश्विनोः-સૂર્ય, ચંદ્ર અને અધ્વર્યુનાં बाहुभ्यां-બળ અને વીર્યથી તથા पूष्णः-પુષ્ટિકારક વાયુથી, हस्ताभ्याम्-જે ગ્રહણ અને ત્યાગના હેતુથી ઉદાન અને અપાન છે, તેનાથી देवेभ्यः-વિદ્વાનો અથવા દિવ્ય સુખોની પ્રાપ્તિ માટે अध्वरकृतम्-યજ્ઞથી સુખકારક [त्वा-તે] કર્મને आददे-સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું.

મેં જે યજ્ઞ કર્યો છે તે इन्द्रस्य-સૂર્યના सहस्त्रभृष्टिः-અનેક પ્રકારના પદાર્થોને પચાવી - પાક કરવાનું સામર્થ્ય તથા शततेजाः-અનેક પ્રકારનાં તેજ તથા दक्षिणः-પ્રાપ્ત કરનાર बाहुः-કિરણસમૂહ असि-છે.

જે इन्द्रस्य-સૂર્યના મેઘમંડળના तिग्मतेजाः-તીક્ષ્ણ તેજવાળા वायुः-વાયુ માટે असि-છે, તેનાથી અમને અનેક પ્રકારનાં સુખોની પ્રાપ્તિ અને द्विषतः-શત્રુઓનો वधः-નાશ કરવો જોઈએ. (૨૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - મનુષ્યોથી સારી રીતે સિદ્ધ કરેલ યજ્ઞ જે અગ્નિમાં હોમ કરેલાં દ્રવ્યોને ઉપર લઈ જાય છે, તે સૂર્યનાં કિરણોમાં સ્થિર થાય છે, વાયુ તેને ધારણ કરે છે અને સર્વના ઉપકાર માટે હજારો પ્રકારનાં સુખો પ્રાપ્ત કરાવીને દુઃખોનો વિનાશ કરનાર બને છે. (૨૪)

पृथि॑वि देवयज॒न्योष॑ध्यास्ते॒ मूलं॒ मा हि॑ꣳसिषं व्र॒जं ग॑च्छ गो॒ष्ठानं॒ वर्ष॑तु ते॒ द्यौर्ब॑धा॒न दे॑व सवितः प॒रमस्यां॑ पृथि॒व्याꣳ श॒तेन॒ पाशै॒र्यो॒ऽस्मान्द्वेष्टि॒ यं च॑ व॒यं द्वि॒ष्मस्तम॑तो॒ मा मौक्॥ २५॥

પદાર્થ : હે देव-સૂર્યાદિ જગતના પ્રકાશક, सवितः-રાજ્ય અને ઐશ્વર્યદાતા પરમેશ્વર ! ते-આપની કૃપાથી હું देवयजनि-વિદ્વાનોનું યજ્ઞ કરવાનું સ્થાન ते-આ જે पृथिवि-ભૂમિ છે [તથા औषध्याः-જે યવાદિ ઔષધિ છે], તેના मूलम्-વૃદ્ધિ કરનારા મૂળનો मा हिंसिषम्-નાશ ન કરું.

હું पृथिव्याम्-અનેક પ્રકારની સુખદાતા ભૂમિમાં यः-જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરું છું, તે व्रजम्-જલની વૃષ્ટિ કરનાર મેઘને गच्छ-પ્રાપ્ત થાય; ત્યાં જઈને गोष्ठानम्-સૂર્યનાં કિરણોના ગુણોથી वर्षतु-વરસાવે છે અને द्यौः-સૂર્યના પ્રકાશને वर्षतु-વરસાવે છે - પ્રકાશ પાથરે છે.

હે વીર પુરુષો ! આપ अस्याम्-આ ઉત્કૃષ્ટ પૃથિવીમાં यः-જે કોઈ અધર્મી, ડાકુ अस्मान्-સર્વનો ઉપકાર કરનાર ધર્માત્મા સજ્જન એવા અમારો द्वेष्टि-વિરોધ કરે છે, च-તથા यम्-જે દુષ્ટ શત્રુથી वयम्-અમે ધાર્મિક શૂર લોકો द्विष्मः-વિરોધ કરીએ છીએ, तम्-તે દુષ્ટ परम्-શત્રુને शतेन-અનેક पाशैः-બંધનોથી बधान-બાંધો અને તેને अतः-એ બંધનથી કદી मा मौक्-મુક્ત કરો નહિ. (૨૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - વિદ્વાન મનુષ્યોએ પૃથિવીમાં રાજ્ય, ત્રિવિધ યજ્ઞ અને ઔષધિઓનો કદી પણ નાશ ન કરવો જોઈએ.

અગ્નિમાં હોમ કરેલ દ્રવ્યોના સુગંધ વગેરે ગુણોથી યુક્ત ધૂમ, મેઘમંડળમાં પહોંચીને, સૂર્ય તથા વાયુથી સૂક્ષ્મ, આકર્ષિત અને ધારણ કરેલ જલસમૂહને શુદ્ધ કરીને મહાન સુખ ઉત્પન્ન કરે છે. આથી તે યજ્ઞનો કોઈ કદી ત્યાગ કરે નહિ.

જે દુષ્ટ મનુષ્ય છે, તેને આ પૃથિવી પર અનેક બંધનોથી બાંધીને, દુષ્ટ કર્મોથી હટાવીને, તેને ક્યારેય મુક્ત ન કરે તથા પરસ્પર દ્વેષનો ત્યાગ કરીને એકબીજાનાં સુખની વૃદ્ધિ માટે હંમેશાં પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨૫)

अपा॒ररुं॑ पृथि॒व्यै दे॑व॒यज॑नाद्वध्यासं व्र॒जं ग॑च्छ गो॒ष्ठानं॑ व॒र्षतु ते॒ द्यौर्ब॑धा॒न दे॑व सवितः पर॒मस्यां॑ पृथि॒व्याᳬं श॒तेन॒ पाशै॒र्यो॒३॑ऽस्मान्द्वेष्टि यं च॑ व॒यं द्वि॒ष्मस्तमतो॒ मा मौक्। अर॑रो॒ दिवं॒ मा प॑प्तो द्र॒प्सस्ते॒ द्यां मा स्क॑न् व्र॒जं ग॑च्छ गो॒ष्ठानं॑ व॒र्षतु ते॒ द्यौर्ब॑धा॒न दे॑व सवितः पर॒मस्यां॑ पृथि॒व्याᳬं श॒तेन॒ पाशै॒र्यो॒३॑ऽस्मान्द्वेष्टि यं च॑ व॒यं द्वि॒ष्मस्तमतो॒ मा मौक्॥ २६॥

પદાર્થ : હે देव-સર્વ આનંદદાતા જગદીશ્વર ! सवितः-સર્વ પ્રાણીઓના અન્તર્યામી, સત્ય પ્રકાશક, આપની કૃપાથી અમે વિદ્વાનો પરસ્પર ઉપદેશ કરીએ કે, જેમ સર્વનો પ્રકાશક સૂર્યલોક આ પૃથિવીમાં અનેક બંધનકારક કિરણો દ્વારા આકર્ષણથી પૃથિવી વગેરે સર્વ પદાર્થોને બાંધે છે, તેમ આપ પણ દુષ્ટોને બાંધીને શુભ ગુણોને પ્રકાશિત કરો.

જેમ હું पृथिव्यै-પૃથિવીમાં देवयजनात्-વિદ્વાનો જે સંગ્રામમાં સારા પદાર્થોને તથા ઉત્તમ વિદ્વાનોના સત્સંગને પ્રાપ્ત કરું છું, તેથી अररुम्-દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત શત્રુઓને अपवध्यासम्-મારું છું, તેમ તમે પણ

તેને મારો.

જેમ હું व्रजम्-હું ઉત્તમ ગુણીજનનો સંગ પ્રાપ્ત કરું છું, તેમ તમે પણ તેને गच्छ-પ્રાપ્ત કરો.

જેમ હું गोष्ठानम्-અધ્યયન-અધ્યાપનરૂપ વ્યવહારની મેઘગર્જના સમાન વેદવાણીને શ્રેષ્ઠ શબ્દોરૂપી બુંદોને વરસાવું છું, તેમ તમે પણ वर्षतु-વરસાવો.

જેમ મારી વિદ્યાનો द्यौः-પ્રકાશ સર્વને દૃશ્યમાન છે, તેમ ते-તમારી વિદ્યા પણ પ્રકાશિત બનો.

જેમ હું यः-જે મૂર્ખ લોકો अस्मान्-અમો વિદ્યાપ્રચારકોનો द्वेष्टि-વિરોધ કરે છે, च-અને यम्-જે વિદ્યા વિરોધીઓને वयम्-અમે વિદ્વાનો द्विष्मः-દુષ્ટ સમજીએ છીએ, तम्-તે परम्-વિદ્યા શત્રુને अस्याम्-સર્વ પદાર્થોને ધારણ કરનારી पृथिव्याम्-પૃથિવીમાં शतेन-અનેક पाशैः-બંધનોથી નિત્ય બાંધું છું, અને તેને કદી છોડતો નથી, તેમ હે વીરો ! તમે પણ તેને बधान-બાંધો અને કદી પણ તેને अतः-એ બંધનથી मा मौक्-મુક્ત કરો નહિ.

જે દુષ્ટજન અમારો વિરોધ કરે અને જે દુષ્ટોનો અમે વિરોધ કરીએ તેને તે બંધનથી કોઈ મનુષ્ય મુક્ત કરે નહિ. એ રીતે સર્વ લોકો - વિદ્વાનો તેને ઉપદેશ કરતા રહે કે - હે अररो-દુષ્ટ પુરુષ ! તું दिवम्-વિદ્યા પ્રકાશથી ઉન્નતિને मा पप्तः-નહિ પામે. તથા ते-તારા द्रप्सः-આનંદપ્રદ વિદ્યારૂપી રસ द्याम्-આનંદને मा स्कन्-નહિ પામે.

હે કલ્યાણમાર્ગના જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! જેમ હું व्रजम्-વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ માર્ગને પ્રાપ્ત કરું છું, તેમ તમે પણ गच्छ-તેને પ્રાપ્ત કરો.

જેમ द्यौः-સૂર્યનો પ્રકાશ गोष्ठानम्-પૃથિવીના નિવાસસ્થાન અન્તરિક્ષને પોતાની વર્ષાથી પૂર્ણ કરે છે, તેમ ઈશ્વર અથવા વિદ્વાન પુરુષ ते-તમારી કામનાઓને वर्षतु-વરસાવે અર્થાત્ ક્રમથી પૂર્ણ કરે.

જેમ देव-વ્યવહારનો હેતુ सवितः-સૂર્યલોક अस्याम्-બીજ વાવવા યોગ્ય पृथिव्याम्-બહુ પ્રજાયુક્ત પૃથિવીમાં शतेन-અનેક पाशैः-બંધનરૂપ કિરણો દ્વારા આકર્ષણથી પૃથિવી વગેરે સર્વ પદાર્થોને બાંધે છે, તેમ તમે પણ દુષ્ટોને બાંધો અને यः-જે ન્યાય વિરોધી अस्मान्-ન્યાયાધીશ અમારો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે છે, च-અને यम्-અન્યાયકારી જનોનું वयम्-સર્વ હિત સાધક અમે द्विष्मः-કોપ કરીએ છીએ. तम्-તે परम्-શત્રુને अस्याम्-આ पृथिव्याम्-ઉક્ત ગુણયુક્ત પૃથિવીમાં शतेन-અનેક पाशैः-સામ, દામ, દંડ અને ભેદ વગેરે કર્મોથી બાંધું છું તથા જેમ હું તેને તે દંડ અર્થાત્ શિક્ષા દ્વારા બાંધીને છોડતો નથી, તેમ તમે પણ बधान-બાંધો અર્થાત્ બંધનરૂપ શિક્ષાથી તેને કદી પણ मा मौक्-મુક્ત કરો નહિ. (૨૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોનાં કાર્યોમાં વિઘ્ન કરનાર દુષ્ટ પ્રાણીઓનો નાશ કરો. શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યાની નિત્ય વૃદ્ધિ કરો.

જે રીતે અનેક ઉપાયોથી શ્રેષ્ઠોની હાનિ અને દુષ્ટોની વૃદ્ધિ ન થાય તેવું આચરણ કરો. સદા શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર અને દુષ્ટોને દંડ આપીને તેમનું બંધન કરવું જોઈએ.

પરસ્પર પ્રેમથી વિદ્યા અને શરીર બળ સંપાદન કરીને કલા દ્વારા કલાયંત્રોથી અનેક યાનોની રચના કરીને સર્વને સુખ આપવું જોઈએ. નિરંતર ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન તથા તેની ઉપાસના કરવી

જોઈએ. (૨૬)

गा॒य॒त्रेण॑ त्वा॒ छन्द॑सा॒ परि॑गृह्णामि॒ त्रैष्टु॑भेन त्वा॒ छन्द॑सा॒ परि॑गृह्णामि॒ जाग॑तेन त्वा॒ छन्द॑सा॒ परि॑गृह्णामि॒। सु॒क्ष्मा चासि॑ शि॒वा चा॑सि स्यो॒ना चासि॑ सु॒षदा॑ चा॒स्यूर्ज॑स्वती॒ चासि॒ पय॑स्वती च॥ २७॥

પદાર્થ : જે યજ્ઞના કારણે આ પૃથિવી શ્રેષ્ઠ પદાર્થોથી सुक्ष्मा-શોભાયમાન असि-બને છે; च-તથા કલ્યાણકારી ગુણોથી च-તથા મનુષ્યોથી એ शिवा-મંગલકારી असि-બને છે च-તથા અતિ શ્રેષ્ઠ સુખોથી એ स्योना-સુખદાયક असि-બને છે. च-અને શ્રેષ્ઠ સુખકારી ગતિથી એ सुषदा-સારી રીતે સ્થિતિ કરવા યોગ્ય असि-બને છે च-તથા જે શ્રેષ્ઠ જવ વગેરે અન્નોથી અનેક પ્રકારનાં ऊर्जस्वती-ધાન્યથી સંપન્ન असि-બને છે, च-અને જે શ્રેષ્ઠ મધુરાદિ રસોયુક્ત ફળોથી યુક્ત એ પૃથિવી पयस्वती-પ્રશંસનીય રસવાળી असि-બને છે.

त्वा-તે યજ્ઞનો જ્ઞાતા હું गायत्रेण-ગાયત્રી छन्दसा-જે ચિત્તને પ્રસન્ન કરનાર છે, તેથી परिगृह्णामि-સર્વ રીતે સિદ્ધ કરું છું અને હું त्रैष्टुभेन-ત્રિષ્ટુભ્ छन्दसा-જે સ્વતંત્રતાથી આનંદપ્રદાતા છે, તેનાથી त्वा-પદાર્થસમૂહને परिगृह्णामि-સર્વ રીતે એકત્ર કરું છું, અને હું जागतेन-જગતી કે જે छन्दसा-અત્યન્ત આનંદનો પ્રકાશ કરવાવાળો છે તેનાથી त्वा-તે ભૌતિક અગ્નિને परिगृह्णामि-સારી રીતે સ્વીકાર કરું છું.

ભાવાર્થ : વેદોના પ્રકાશક ઈશ્વર આપણને ઉપદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમને વેદમંત્રોનું અધ્યયન, તેના અર્થોનું જ્ઞાન તથા યજ્ઞ અનુષ્ઠાન વિના સુખરૂપ ફળની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી. આથી એ ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞની સિદ્ધિ પ્રયત્નથી કરીને સદા સુખમાં રહેવું જોઈએ.

જે આ સૃષ્ટિમાં વાયુ, જલ તથા ઔષધિઓને દૂષિત કરનાર દુર્ગંધ વગેરે દોષો તથા દુષ્ટ મનુષ્યો છે, તેમનું સર્વદા નિવારણ કરવું જોઈએ. (૨૭)

पु॒रा क्रू॒रस्य॑ वि॒सृपो॑ विरप्शिन्नुदा॒दाय॑ पृथि॒वीं जी॒वदा॑नुम्। यामैर॑यँ॒श्च॒न्द्रम॑सि स्व॒धाभि॒स्तामु॒ धीरा॑सोऽअनु॒दिश्य॑ यजन्ते। प्रो॒क्षणी॒रासा॑दय द्विष॒तो व॒धो॒ऽसि॥ २८॥

પદાર્થ : હે विरप्शिन्-મહાન ગુણોથી યુક્ત જગદીશ્વર ! આપે याम्-જે स्वधाभिः-અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત અને जीवदानुम्-પ્રાણીઓને જીવનદાન આપનાર પદાર્થો તથા पृथिवीम्-અનેક પ્રજાયુક્ત પૃથિવીને उदादाय-ઉપર ઉઠાવીને चन्द्रमसि-ચંદ્રલોકની સમીપ સ્થાપિત કરી છે, એથી ताम्-એ પૃથિવીને धीरासः- ધીર બુદ્ધિ [મેધાવી] લોકો પ્રાપ્ત થઈને આપને अनुदिश्य-અનુકૂળ બનીને यजन्ते-યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરે છે.

જેમ चन्द्रमसि-આનંદમાં રહીને धीरासः-બુદ્ધિમાન પુરુષ याम्-જે जीवदानुम्-જીવોની હિતકારક पृथिवीम्-પૃથિવીના अनुदिश्य-આશ્રિત બનીને સેના અને શસ્ત્રોને उदादाय-ક્રમશઃ विसृपः-જે યુદ્ધપુરુષનો

પ્રભાવ દેખાડવા યોગ્ય અને क्रूरस्य-શત્રુઓનાં અંગોને કાપીને, સંગ્રામમાં શત્રુઓને જીતીને રાજ્યને ऐरयन्-પ્રાપ્ત કરે છે.

જેમ એ રીતે ધીરપુરુષ पुरा-પૂર્વ સમયમાં પ્રાપ્ત કરેલ જે ક્રિયાઓથી प्रोक्षणीः उ-સારી રીતે પદાર્થોને સીંચીને તેને आसादय-સંપાદન - પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ विरप्शिन्-મહાન ઐશ્વર્યના ઇચ્છુક પુરુષ ! તું પણ તેને પ્રાપ્ત થઈને ઈશ્વરનું પૂજન અને પદાર્થની સિદ્ધિ કરનાર - પ્રાપ્ત કરનાર શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓનું સંપાદન કર અને જે રીતે द्विषतः-શત્રુઓનો वधः-નાશ असि-થાય, તેમ તેનો નાશ કરીને નિત્ય આનંદમાં રહે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે અંતરિક્ષમાં પૃથિવીઓ, તેની સમીપ ચંદ્ર અને તેની સમીપ પૃથિવીઓ, એકબીજાની સમીપ સ્થિત નક્ષત્ર, સર્વની મધ્યમાં સૂર્યલોક અને તેમાં અનેક પ્રકારની પ્રજાઓ રચીને સ્થાપિત કરેલ છે. તેમાં રહેલા સર્વ મનુષ્યોએ તે ઈશ્વરની ઉપાસના કરવી યોગ્ય છે.

જ્યાં સુધી મનુષ્યો બળ અને ક્રિયાઓ પુરુષાર્થથી યુક્ત થઈને શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરતા નથી, ત્યાં સુધી તેમને રાજ્ય સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. યુદ્ધ અને બળ વિના શત્રુ કદી પણ ડરતા નથી. વિદ્યા, ન્યાય તથા વિનય વિના પ્રજાનું યથાવત્ પાલન થઈ શકતું નથી.

આથી સર્વેએ જિતેન્દ્રિય બનીને ઉક્ત રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને સર્વના સુખ માટે નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨૮)

प्रत्युष्टꣳरक्षः प्रत्युष्टाऽअरातयो निष्टप्तꣳरक्षो निष्टप्ताऽअरातयः। अनिशितोऽसि सपत्नक्षिद्वा-जिनं त्वा वाजेध्यायै सम्मार्ज्मि। प्रत्युष्टꣳरक्षः प्रत्युष्टाऽअरातयो निष्टप्तꣳरक्षो निष्टप्ताऽअरातयः। अनिशिताऽसि सपत्नक्षिद्वाजिनीं त्वा वाजेध्यायै सम्मार्ज्मि॥ २९॥

પદાર્થ : હું, જે अनिशितः-અતિ વિસ્તૃત सपत्नक्षित्-શત્રુઓનો નાશ કરનાર સંગ્રામથી प्रत्युष्टं रक्षः-વિઘ્નકારી પ્રાણી અને प्रत्युष्टा अरातयः-સત્યવિરોધી શત્રુઓ બળબળતી શિક્ષા - દંડને પ્રાપ્ત असि-થાય છે અથવા निष्टप्तं रक्षः-જે બંધનથી બાંધવા યોગ્ય निष्टप्ता अरातयः-વિદ્યા વિરોધી હંમેશાં સંતાપ પામે છે. त्वा-તે वाजिनम्-વેગવાન યુદ્ધને वाजेध्यायै-અન્નાદિ પદાર્થોથી બળવાન કરવા યોગ્ય સેના છે, તેના માટે યુદ્ધનાં સાધનોને समार्ज्मि-સારી રીતે યુદ્ધ કરું છું અર્થાત્ તેના દોષોનો વિનાશ કરું છું.

હું જે सपत्नक्षित्-શત્રુનો નાશ કરનાર અને अनिशिता-અતિ વિસ્તીર્ણ સેનાથી प्रत्युष्टं रक्षः-પારકું સુખ સહન ન કરનાર મનુષ્ય અથવા प्रत्युष्टा अरातयः-એવા દુર્ગુણયુક્ત અનેક મનુષ્યો निष्टप्तं रक्षः-જુગારી, પરસ્ત્રીગામી તથા निष्टप्ता अरातयः-બીજાને દુઃખ આપનાર મનુષ્યને સારી રીતે હાંકી કાઢવામાં આવે असि-છે.

त्वा-તે वाजिनीम्-બળ અને વેગ આદિ ગુણયુક્ત સેનાને वाजेध्यायै-બહુ સાધનોથી પ્રકાશિત કરવા માટે संमार्ज्मि-સારી રીતે શ્રેષ્ઠ શિક્ષાથી શુદ્ધ કરું છું.

[દ્વિતીય અર્થ :] હું જે अनिशितः-મહાન ક્રિયાઓથી સિદ્ધ થનાર અને सपत्नक्षित्-દોષો અથવા શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર प्रत्युष्टं रक्षः-વિઘ્નકારી પ્રાણી અને प्रत्युष्टा अरातयः-જેમાં સત્યના વિરોધીઓ સારી રીતે સંતાપરૂપ અર્થાત્ શિક્ષાને પ્રાપ્ત असि-થાય છે અને निष्टप्तं रक्षः-જે બંધનથી બાંધવા યોગ્ય निष्टप्ता अरातयः-વિદ્યાના વિઘ્નકારીઓ નિરંતર સંતાપને પ્રાપ્ત થાય છે. त्वा-તે वाजिनम्-યજ્ઞને वाजेध्यायै-અન્ન આદિ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરવા માટે संमार्ज्मि-શુદ્ધતાથી પ્રાપ્ત કરું છું.

[એ રીતે જે सपत्नक्षित्-શત્રુઓનો નાશ કરનારી अनिशिता-અતિ વિસ્તારયુક્ત ક્રિયાથી प्रत्युष्टं रक्षः-વિઘ્નકારી પ્રાણી તથા प्रत्युष्टा अरातयः-દુર્ગુણ અને નીચ મનુષ્ય નાશ પામે છે. निष्टप्तं रक्षः-કામ, ક્રોધાદિ રાક્ષસી ભાવ દૂર થાય છે. निष्टप्ता अरातयः-જેમાં દુઃખ અને દુર્ગંધ વગેરે દોષો નાશ असि-પામે છે. त्वा-તે वाजिनीम्-સત્ક્રિયાને वाजेध्यायै-અન્નાદિ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરવા માટે सम्मार्ज्मि-સારી રીતે સિદ્ધ કરું છું. એ જ રીતે આપ પણ એ યજ્ઞ તથા સત્ક્રિયાને પવિત્રતાપૂર્વક સિદ્ધ કરો.] (૨૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્યા અને શુભ ગુણોના પ્રકાશ તથા દુષ્ટ શત્રુઓની નિવૃત્તિ માટે નિત્ય પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ.

ઉત્તમ શિક્ષાથી, શસ્ત્ર-અસ્ત્ર તથા સત્પુરુષોથી ઉત્તમ સેના દ્વારા શ્રેષ્ઠ જનોની રક્ષા તથા દુષ્ટજનોનો વિનાશ કરવો જોઈએ. જેથી અશુદ્ધિ વગેરે દોષોનો નાશ અને સર્વત્ર પવિત્રતા પ્રસારિત થાય. (૨૯)

अदि॑त्यै॒ रास्ना॑सि॒ विष्णो॑र्वे॒ष्पो॒ऽस्यू॒र्जे त्वाऽद॑ब्धेन त्वा॒ चक्षु॒षाव॑पश्यामि। अ॒ग्नेर्जि॒ह्वासि॑ सु॒हूर्दे॒वेभ्यो॒ धाम्ने॑ धाम्ने मे भव॒ यजु॑षे यजुषे॥ ३०॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ अदित्यै-પૃથિવીના रास्ना-રસ વગેરે પદાર્થો ઉત્પન્ન કરનાર असि-છો, હે विष्णोः-વ્યાપક वेष्पः-પૃથિવી વગેરે પદાર્થોમાં પણ રહેલ असि-છો, अग्नेः-ભૌતિક અગ્નિની जिह्वा-જીભરૂપ असि-છો, તથા देवेभ्यः-વિદ્વાનો માટે धाम्ने धाम्ने-જેમાં તે વિદ્વાનો સુખકારક પદાર્થો પ્રાપ્ત કરે છે તે ત્રણે ધામ અર્થાત્ સ્થાન, નામ અને જન્મ છે, તે ધામોની પ્રાપ્તિ તથા यजुषे यजुषे-યજુર્વેદના પ્રત્યેક મંત્રના જ્ઞાન માટે सुहूः-જે શ્રેષ્ઠથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય છે. એ રીતે त्वा-આપને હું अदब्धेन-પ્રેમ-સુખયુક્ત चक्षुषा-વિજ્ઞાનથી ऊर्जे-પરાક્રમ, अदित्यै-પૃથિવી देवेभ्यः શ્રેષ્ઠ ગુણો તથા धाम्ने धाम्ने-સ્થાન, નામ અને જન્મ આદિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ તથા यजुषे यजुषे-યજુર્વેદના પ્રત્યેક મંત્રના આશયના જ્ઞાન માટે [त्वा-આપને] अवपश्यामि-જ્ઞાનરૂપી નેત્રોથી નિહાળું છું. આપ કૃપા કરીને [मे-] મને વિદિત અને મારી પૂજાને ગ્રહણ भव-કરો.

દ્વિતીય અર્થ : જે કારણે આ યજ્ઞ अदित्यै-અન્તરિક્ષને रास्ना-રસયુક્ત કરનાર असि-છે, विष्णोः-યજ્ઞસંબંધી કાર્યોનો वेष्पः-વ્યાપક असि-છે, अग्नेः-ભૌતિક અગ્નિની जिह्वा-જીભરૂપ असि-છે, देवेभ्यः-તથા દિવ્યગુણ धाम्ने धाम्ने-કીર્તિ, સ્થાન અને જન્મની પ્રાપ્તિ તથા [मे-] મારા માટે यजुषे यजुषे-યજુર્વેદના પ્રત્યેક મંત્રના આશયના જ્ઞાન માટે, सुहूः-સારી રીતે પ્રશંસા કરવા યોગ્ય भव-બને છે. આથી

त्वा-તે યજ્ઞને હું अदब्धेन-સુખપૂર્વક, चक्षुषा-પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ દ્વારા નેત્રોથી अवपश्यामि-નિહાળું છું. તથા त्वा-તેને अदित्यै-પૃથિવી વગેરે પદાર્થ देवेभ्यः-શ્રેષ્ઠ ગુણ ऊर्जे-પરાક્રમ, धाम्ने धाम्ने-સ્થાન-સ્થાન તથા यजुषे यजुषे-યજુર્વેદના મંત્રથી હિત થવા માટે अवपश्यामि-ક્રિયાની કુશળતાથી નિહાળું છું.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એમ માનવું જોઈએ કે, એ જગદીશ્વર પ્રત્યેક વસ્તુમાં રહેલ છે, વેદોમાં પ્રતિપાદિત છે અને પૂજાને યોગ્ય છે.

પ્રત્યેક મંત્રથી વિધિપૂર્વક કરવામાં આવતો આ યજ્ઞ સર્વ પ્રાણીઓને પ્રત્યેક વસ્તુઓમાં પરાક્રમ અને બળ આપનાર છે. (૩૦)

स॒वि॒तुस्त्वा॑ प्रस॒वऽउत्पु॑ना॒म्यच्छि॑द्रेण प॒वित्रे॑ण॒ सूर्य॑स्य र॒श्मिभि॑ः। स॒वि॒तुर्वः॑ प्रस॒वऽउत्पु॑ना॒म्यच्छि॑द्रेण प॒वित्रे॑ण सूर्य॑स्य र॒श्मिभि॑ः। तेजो॑ऽसि शु॒क्रम॑स्य॒मृत॑मसि धाम॒ नामा॑सि प्रि॒यं दे॒वाना॒मना॑धृष्टं दे॒वयज॑नमसि॥ ३१॥

પદાર્થ : જે યજ્ઞ सवितुः-પરમેશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં अच्छिद्रेण-નિરંતર पवित्रेण-પવિત્ર તથા सूर्यस्य-પ્રકાશમય સૂર્યનાં કિરણોની रश्मिभिः-કિરણો સાથે મળીને સર્વ પદાર્થોને શુદ્ધ - પવિત્ર કરે છે. त्वा-તે યજ્ઞ તથા યજ્ઞકર્તાને હું उत्पुनामि-ઉત્કૃષ્ટતા સાથે પવિત્ર કરું છું.

એ રીતે सवितुः-પરમેશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં अच्छिद्रेण-નિરંતર पवित्रेण-શુદ્ધિકારક सूर्यस्य-જે ઐશ્વર્ય હેતુઓના પ્રેરક પ્રાણને रश्मिभिः-અંતરથી પ્રકાશિત કરનાર ગુણ છે, તેનાથી वः-તમને તથા પ્રત્યક્ષ પદાર્થોને યજ્ઞ કરીને उत्पुनामि-પવિત્ર કરું છું.

હે બ્રહ્મન્ ! આપ तेजोऽसि-સ્વયં પ્રકાશમાન, शुक्रमसि-શુદ્ધ, अमृतमसि-નાશરહિત, धामासि-સર્વ પદાર્થોના આધાર, नामासि-વંદના કરવા યોગ્ય, देवानाम्-વિદ્વાનોને प्रियम्-પ્રીતિકારક, अनाधृष्टम्-નિર્ભય તથા देवयजनमसि-વિદ્વાનોને પૂજ્ય છો. તેથી હું त्वा-આપનો જ આશ્રય - શરણ ગ્રહણ કરું છું.

દ્વિતીય અર્થ : જે યજ્ઞ तेजोऽसि-પ્રકાશ, शुक्रमसि-શુદ્ધિનો હેતુ, अमृतमसि-મોક્ષ સુખદાતા, धामासि-અન્નાદિ પદાર્થોની પુષ્ટિ કરનાર, नामासि-જલનો હેતુ, देवानाम्-શ્રેષ્ઠ ગુણોની प्रियम्-પ્રીતિ કરાવનાર તથા अनाधृष्टम्-કોઈને ખંડન કરવા યોગ્ય નથી અર્થાત્ અત્યંત ઉત્કૃષ્ટ અને देवयजनम्-વિદ્વાનોને પરમેશ્વરની પૂજા કરાવનાર असि-છે. આથી એ યજ્ઞથી હું सवितुः-જગદીશ્વરે સર્જેલા સંસારમાં अच्छिद्रेण-નિરંતર पवित्रेण-અતિ શુદ્ધ યજ્ઞ તથા सूर्यस्य-ઐશ્વર્ય ઉત્પન્ન કરનાર પરમેશ્વરના ગુણ અથવા ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર સૂર્યનાં रश्मिभिः-વિજ્ઞાનાદિ પ્રકાશ અથવા કિરણોથી वः-તમને તથા તે પ્રત્યક્ષ - એ સર્વ પદાર્થોને उत्पुनामि-પવિત્ર કરું છું. (૩૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર યજ્ઞવિદ્યાના ફળનો ઉપદેશ આપે છે કે - તમારા દ્વારા કરવામાં આવેલ યજ્ઞ સૂર્યનાં કિરણો દ્વારા વિહાર કરે છે. તે પોતાના નિરંતર શુદ્ધ ગુણથી સર્વ પદાર્થોને પવિત્ર કરે છે.

એ પવિત્ર ગુણથી સૂર્યનાં કિરણો દ્વારા સર્વ પદાર્થોને તેજસ્વી, શુદ્ધ, અમૃતરસથી યુક્ત, સુખદાયક, પ્રસન્નતાકારક, દૃઢ તથા યજ્ઞને યોગ્ય બનાવે છે; જેથી અનેક ભોજન, વસ્ત્રથી શરીરની પુષ્ટિ, બુદ્ધિબળ વગેરે તથા શુદ્ધ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ જીવોને સુખ આપે છે. (૩૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : ઈશ્વરે આ અધ્યાયમાં મનુષ્યોને શુભ કર્મોનું અનુષ્ઠાન (૧), દોષ અને શત્રુઓનું નિવારણ (૨૮), યજ્ઞ ક્રિયાનાં ફળ જાણવાં (૧૦), શ્રેષ્ઠ રીતે પુરુષાર્થ કરવા (૯), વિદ્યાનો વિસ્તાર કરવા (૮) ધર્મપૂર્વક પ્રજાનું પાલન કરવા (૭), ધર્મના અનુષ્ઠાનમાં નિર્ભયતાથી રહેવા (૨૩), સર્વની સાથે મિત્રતાથી વર્તવા (૮), વેદનાં અધ્યયન-અધ્યાપનથી સર્વ વિદ્યા ગ્રહણ કરાવવા (૨૭), શુદ્ધિ તથા પરોપકાર માટે પ્રયત્ન કરવા (૩૧) ની આજ્ઞા આપી છે. તેનું સર્વ મનુષ્યોએ અનુષ્ઠાન કરવું યોગ્ય છે.

॥ इति प्रथमोऽध्यायः ॥



॥ अथ द्वितीयाध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

कृष्णोऽस्याखरेष्ठोऽग्नये त्वा जुष्टं प्रोक्षामि वेदिरसि बर्हिषे त्वा जुष्टां प्रोक्षामि बर्हिरसि स्रुग्भ्यस्त्वा जुष्टं प्रोक्षामि॥ १ ॥

પદાર્થ : જેથી એ યજ્ઞ आखरेष्ठः-વેદીની રચનાથી ખોદેલ સ્થાનમાં સ્થિર થઈને कृष्णः-ભૌતિક અગ્નિથી છિન્ન અર્થાત્ સૂક્ષ્મરૂપ તથા વાયુના ગુણથી આકર્ષણને પ્રાપ્ત असि-થાય છે, તેથી હું अग्नये-ભૌતિક અગ્નિમાં હવન કરવા માટે जुष्टम्-પ્રેમથી શુદ્ધ કરેલ त्वा-તે યજ્ઞ અર્થાત્ હુત સામગ્રીને प्रोक्षामि-ઘૃત વગેરેથી સીંચીને શુદ્ધ કરું છું.

જે કારણે એ वेदिः-અંતરિક્ષમાં સ્થિત असि-થાય છે, તેથી હું बर्हिषे-હોમ કરેલ દ્રવ્યોને અંતરિક્ષમાં પહોંચાડવા માટે जुष्टाम्-પ્રેમથી સંપાદન કરેલી त्वा-તે વેદીને प्रोक्षामि-ઘૃત વગેરે સુંદર પદાર્થોથી સિંચું છું.

જેથી એ बर्हिः-જળ અંતરિક્ષમાં સ્થિર થઈને પદાર્થોને શુદ્ધ કરનાર असि-બને છે, તેથી त्वा-તેની શુદ્ધિ માટે શુદ્ધ કરેલ जुष्टम्-પુષ્ટિકારક હુત દ્રવ્યોને હું स्रुग्भ्यः-સ્રુવા વગેરે સાધન દ્વારા અગ્નિમાં હોમવા માટે प्रोक्षामि-શુદ્ધ કરું છું.

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ વેદી રચીને, પાત્ર વગેરે સામગ્રીને ગ્રહણ કરીને, સારી રીતે શુદ્ધ કરેલ તે હવિનો અગ્નિમાં હોમ કરીને કરવામાં આવેલો યજ્ઞ, શુદ્ધ વર્ષાના જલથી સર્વ ઔષધિઓને પુષ્ટ કરે છે. આ યજ્ઞના અનુષ્ઠાનથી સર્વ પ્રાણીઓને નિત્ય સુખ આપવું એ મનુષ્યોનો પરમ ધર્મ છે. (૧)

अदित्यै व्युन्दनमसि विष्णो स्तुपोऽस्यूर्णम्रदसं त्वा स्तृणामि स्वासस्थां देवेभ्यो भुवपतये स्वाहा भुवनपतये स्वाहा भूतानां पतये स्वाहा॥ २ ॥

પદાર્થ : જેથી આ યજ્ઞ अदित्यै-પૃથિવીના व्युन्दनम्-વિવિધ ઔષધિ વગેરે પદાર્થોને સિંચનાર असि-બને છે, તેથી હું તેનું અનુષ્ઠાન કરું છું. विष्णोः-એ યજ્ઞની સિદ્ધિ કરાવનાર स्तुपः શિખારૂપ ऊर्णम्रदसम्-ઉલૂખલ [ખાંડણિયો] असि-છે, त्वा-તેથી હું તે અન્નનાં ફોતરાં દૂર કરનાર પથ્થર - સાંબેલું અને ખાંડણિયાને स्तृणामि-ઢાંકું છું.

વેદી देवेभ्यः-વિદ્વાનો તથા દિવ્ય સુખોની પ્રાપ્તિ માટે હિતકારી असि-હોય છે, જેથી હું તેને स्वासस्थाम्-એવી બનાવું છું, કે જેમાં હોમ કરેલા પદાર્થો સારી રીતે રહે.

જેથી આ સંસાર, ભુવન અર્થાત્ લોકલોકાન્તર અને સંસારી પદાર્થોના પતિ પરમેશ્વર પ્રસન્ન થાય છે. અથવા ભૌતિક અગ્નિ સુખોને સિદ્ધ કરનાર બને છે. આથી भुवपतये स्वाहा-भुवनपतये स्वाहा-भूतानां पतये स्वाहा-તે પરમેશ્વરની પ્રસન્નતા અને આજ્ઞાપાલન માટે વેદીના ગુણો, સત્યભાષણ અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ વાક્ય વગેરે ઉત્તમ વાણીયુક્ત વેદ છે, તેના મંત્રો સાથે સ્વાહા શબ્દના અનેક ઉચ્ચાર સાથે યજ્ઞ વગેરે શ્રેષ્ઠ કર્મોનું વિધાન કરવામાં આવે છે. એ પ્રયોજન માટે વેદીને રચું છું. (૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યોને ઉપદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે વેદી વગેરે યજ્ઞનાં સાધનોને સિદ્ધ - પ્રાપ્ત કરીને સર્વ પ્રાણીઓના સુખ માટે તથા પરમેશ્વરની પ્રસન્નતા માટે સારી રીતે ક્રિયાયુક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરો. સદા સત્ય જ બોલો. જેમ હું ન્યાયથી સમસ્ત વિશ્વનું પાલન કરું છું, તેમ તમે પણ પક્ષપાત છોડીને સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરીને સુખ સંપાદન કરો. (૨)

गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः। इन्द्रस्य बाहुरसि दक्षिणो विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः। मित्रावरुणौ त्वोत्तरतः परिधत्तां ध्रुवेण धर्मणा विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिडऽईडितः॥ ३॥

પદાર્થ : વિદ્વાનોએ જે આ गन्धर्वः-પૃથિવી અથવા વાણીને ધારણ કરનાર, विश्वावसुः-વિશ્વને વસાવનાર, परिधिः-સર્વ તરફથી સંપૂર્ણ વસ્તુઓને ધારણ કરનાર, इडः-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, अग्निः-સૂર્યરૂપ અગ્નિની, ईडितः-સ્તુતિ असि-કરે છે. જે विश्वस्य-સંસારના અને વિશેષ કરીને यजमानस्य-યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનના अरिष्ट्यै-દુઃખ નિવારણથી સુખપ્રદાન કરીને યજ્ઞને परिदधातु-ધારણ કરે છે. આથી વિદ્વાન त्वा-તેને વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે परिदधातु-ધારણ કરે.

વિદ્વાનો દ્વારા જે વાયુ इन्द्रस्य-સૂર્યનું बाहुः-બળ અને दक्षिणः-વર્ષાની પ્રાપ્તિ કરાવનાર અથવા परिधिः-શિલ્પવિદ્યાના અભિલાષી इडः-દાહ, પ્રકાશ વગેરે ગુણયુક્ત હોવાથી સ્તુતિ યોગ્ય ईडितः-શોધાયેલા અને अग्निः-પ્રત્યક્ષ અગ્નિ असि-છે, તે વાયુ અને અગ્નિનો સારી રીતે શિલ્પવિદ્યામાં ઉપયોગ કરીને यजमानस्य-શિલ્પવિદ્યા પ્રેમી તથા विश्वस्य-સર્વ પ્રાણીઓના अरिष्ट्यै-સુખ માટે असि-હોય છે.

જે બ્રહ્માંડમાં રહેનાર, ગમનાગમન સ્વભાવવાળા मित्रावरुणौ-પ્રાણ અને અપાન વાયુ છે, તે ध्रुवेण-નિશ્ચલ धर्मणा-પોતાની ધારણા શક્તિથી उत्तरतः-પૂર્વોક્ત વાયુ અને અગ્નિથી ઉત્તરકાલમાં विश्वस्य-ચરાચર જગત્ તથા यजमानस्य-સર્વની સાથે મિત્રભાવે વર્તનાર સજ્જન પુરુષના अरिष्ट्यै-સુખકારક त्वा-તે પૂર્વોક્ત યજ્ઞને परिधत्ताम्-સર્વ રીતે ધારણ કરે છે.

જે વિદ્વાન દ્વારા इडः-વિદ્યાપ્રાપ્તિ માટે સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અને परिधिः-સર્વ શિલ્પવિદ્યાનું પરિધાન તથા ईडितः-વિદ્યાભિલાષીઓથી પ્રશંસનીય अग्निः-વીજળીરૂપ અગ્નિ असि-છે; તે પણ એ યજ્ઞને સર્વ પ્રકારથી ધારણ કરે છે. તેના ગુણોને જાણીને મનુષ્યે પણ યથાવત્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે જે સૂર્ય, વીજળી અને પ્રત્યક્ષ ભૌતિક અગ્નિ રૂપમાં ત્રણ પ્રકારના અગ્નિ નિર્માણ કરેલ છે; તે મનુષ્ય દ્વારા વિદ્યા દ્વારા સારી રીતે પ્રયોગમાં લેવામાં આવતાં અનેક પ્રકારનાં કાર્યો સિદ્ધ કરે છે. (૩)

वीतिहोत्रं त्वा कवे द्युमन्तꣳसमिधीमहि। अग्ने बृहन्तमध्वरे॥ ४॥

પદાર્થ : હે कवे-સર્વજ્ઞ તથા પ્રત્યેક પદાર્થમાં ક્રમશઃ વિજ્ઞાનયુક્ત अग्ने-જ્ઞાનસ્વરૂપ પરમેશ્વર !

અમે अध्वरे-મિત્રભાવે રહેવા માટે बृहन्तम्-સર્વને મહાન તથા અપાર સુખની વૃદ્ધિ કરનાર, द्युमन्तम्-અત્યંત પ્રકાશમાન તથા वीतिहोत्रम्-અગ્નિહોત્ર વગેરે યજ્ઞોને જણાવનાર, त्वा-આપ - પરમેશ્વરને समिधीमहि-હૃદયમાં સારી રીતે પ્રકાશિત કરીએ.

દ્વિતીય અર્થ : અમે લોકો अध्वरे-હિંસાથી રહિત અર્થાત્ જે કદી ત્યાગ કરવા યોગ્ય નથી તે શ્રેષ્ઠ યજ્ઞમાં वीतिहोत्रम्-પદાર્થોની પ્રાપ્તિ કરવા માટે અગ્નિહોત્ર વગેરે ક્રિયાઓ જેથી સિદ્ધ થાય છે તથા द्युमन्तम्-અત્યંત પ્રચંડ જ્વાળાયુક્ત, बृहन्तम्-અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરવા તથા कवे-પદાર્થોમાં ક્રમશઃ દૃષ્ટિગોચર થનાર त्वा-તે अग्ने-ભૌતિક અગ્નિને समिधीमहि-સારી રીતે પ્રકાશિત - પ્રજ્વલિત કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : સંસાર જેટલાં પણ ક્રિયાઓનાં સાધન તથા ક્રિયાઓથી સાધ્ય - સિદ્ધ થનાર પદાર્થ છે, તે સર્વને ઈશ્વરે રચીને ધારણ કરેલ છે.

મનુષ્યોએ તેનાથી તેના ગુણોનાં જ્ઞાન દ્વારા અને ક્રિયાઓ દ્વારા અનેક પ્રકારના ઉપકારો ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૪)

स॒मिद॑सि सूर्य॑स्त्वा पु॒रस्ता॑त् पा॒तु कस्या॑श्चिद॒भिश॑स्त्यै।

स॒वि॒तुर्बा॒हू स्थ॒ऽऊर्ण॑म्रदसं त्वा स्तृणामि स्वा॒स॒स्थं दे॒वेभ्य॒ऽआ त्वा॒ वस॑वो रु॒द्राऽआ॑दि॒त्याः स॑दन्तु॥ ५॥

પદાર્થ : चित्-જેમ કોઈ મનુષ્ય સુખ પ્રાપ્તિ માટે ક્રિયા દ્વારા પ્રાપ્ત થયેલા પદાર્થોની રક્ષા કરતાં આનંદ પામે છે, તેમ એ યજ્ઞ समित्-વસંત ઋતુ સમાન સારી રીતે પ્રકાશિત असि-થાય છે. त्वा-તેના सूर्य्यः-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિનો હેતુ સૂર્યલોક कस्याः-સર્વ પદાર્થોના अभिशस्त्यै-પ્રકટીકરણ માટે पुरस्तात्-પ્રથમથી જ તેની पातु-રક્ષા કરનાર હોય છે.

જે सवितुः-સૂર્યલોકનાં बाहू-બળ અને વીર્ય स्थः-છે, જેથી એ યજ્ઞ નિત્ય વિસ્તારને પ્રાપ્ત થાય છે. त्वा-તે ऊर्णम्रदसम्-સુખનાં વિઘ્નોનો નાશ કરવા स्वासस्थम्-તથા શ્રેષ્ઠ અન્તરિક્ષરૂપી આસન પર વિરાજમાન થનાર યજ્ઞને वसवः-અગ્નિ વગેરે આઠ વસુ અર્થાત્ અગ્નિ, પૃથિવી, વાયુ, અન્તરિક્ષ, સૂર્ય, પ્રકાશ, ચન્દ્રમા અને તારાગણ એ વસુ; रुद्राः-પ્રાણ, અપાન, વ્યાન, ઉદાન, સમાન, નાગ, કૂર્મ, કૃકલ, દેવદત્ત, ધનંજય અને જીવાત્મા એ અગિયાર રુદ્ર તથા आदित्याः-બાર મહિના सदन्तु-પ્રાપ્ત કરાવે છે.

त्वा-તે યજ્ઞ ऊर्णम्रदसम्-અત્યંત સુખવર્ધક, स्वासस्थम्-અને અંતરિક્ષમાં સ્થિર થનાર તે યજ્ઞને હું પણ સુખની પ્રાપ્તિ તથા देवेभ्यः-દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરવા માટે आस्तृणामि-સારી રીતે સામગ્રીથી આચ્છાદિત કરીને સિદ્ધ કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર સર્વને એ ઉપદેશ આપે છે કે - મનુષ્ય દ્વારા વસુ, રુદ્ર અને આદિત્યોથી જે-જે ઉપકાર લઈ શકાય છે; તે સર્વની રક્ષા માટે નિત્ય લેવા જોઈએ.

જે અગ્નિમાં દ્રવ્યોનો હોમ કરવામાં આવે છે, તે સૂર્ય અને વાયુને પ્રાપ્ત થાય છે, તે સૂર્ય અને વાયુ તે પૃથક્ દ્રવ્યોની રક્ષા કરીને, ફરી પૃથિવી પર છોડી દે છે. જેથી પૃથિવી પર દિવ્ય ઔષધિ વગેરે

પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે અને તેનાથી પ્રાણીઓને નિત્ય સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. આથી ઉક્ત યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૫)

घृताच्यसि जुहूर्नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद घृताच्यस्युपभृन्नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद धृताच्यसि ध्रुवा नाम्ना सेदम्प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद। प्रियेण धाम्ना प्रियꣳ सदऽआसीद। ध्रुवाऽअसदन्नृतस्य योनौ ता विष्णो पाहि पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपतिं पाहि मां यज्ञन्यम्॥ ६ ॥

પદાર્થ : જે [नाम्ना-] जुहूः-હવિ અગ્નિમાં હોમવા માટે સુખ ઉત્પન્ન કરનાર घृताची-ઘૃતને પ્રાપ્ત કરાવનાર આદાન ક્રિયા असि-છે, सा-તે યજ્ઞમાં પ્રયુક્ત થયેલ સાર ગ્રહણની ક્રિયા છે. તે प्रियेण-સુખોથી તૃપ્ત કરનાર શોભાયમાન धाम्ना-સ્થાનથી યુક્ત इदम्-આ प्रियम्-તૃપ્ત કરનાર सदः-ઉત્તમ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. તેને आसीद-સિદ્ધ કરે છે.

જે नाम्ना-પ્રસિદ્ધિથી उपभृत्-સમીપ પ્રાપ્ત પદાર્થોને ધારણ કરનાર તથા घृताची-જલને પ્રાપ્ત કરાવનાર હસ્તક્રિયા असि-છે, सा-તે યજ્ઞમાં પ્રયુક્ત થયેલ प्रियेण-પ્રીતિકારક धाम्ना-સ્થાનથી યુક્ત इदम्-આ ઔષધિ વગેરે પદાર્થોનો સમૂહ प्रियम्-જે આરોગ્યથી સુખદાયક અને सदः-દુઃખનાશક છે, તેને आसीद-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવે છે.

જે [नाम्ना-] ध्रुवा-સ્થિર સુખો તથા घृताची-આયુને પ્રાપ્ત કરાવનારી વિદ્યા असि-છે, सा-તે સારી રીતે શ્રેષ્ઠ કાર્યોમાં સ્થાપિત કરેલી प्रियेण-પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરનાર [धाम्ना-] સ્થિતિ હેતુ इदम्-આ प्रियम्-આનંદપ્રદ જીવન તથા सदः-વસ્તુને आसीद-પ્રાપ્ત કરાવે છે.

જે ક્રિયા દ્વારા प्रियेण-પ્રસન્નતા કરનાર धाम्ना-હૃદયથી प्रियम्-પ્રીતિકારક सदः-જ્ઞાન आसीद-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, सा-તે વિજ્ઞાન બધાએ નિત્ય સિદ્ધ કરવું જોઈએ.

હે विष्णो-વ્યાપક પરમેશ્વર ! જેમ ऋतस्य योनौ-શુદ્ધ યજ્ઞમાં જે-જે ध्रुवा-સ્થિર વસ્તુ असदन्-હોય, તેમ તેની નિરંતર पाहि-રક્ષા કરો તથા કૃપા કરીને [यज्ञं-] યજ્ઞની पाहि-રક્ષા કરો, यज्ञन्यम्-યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરવા यज्ञपतिम्-યજ્ઞના પાલક યજમાનની पाहि-રક્ષા કરો અને યજ્ઞને પ્રકાશિત કરનાર माम्-હું હોતા, च-અને અધ્વર્યુ, ઉદ્‌ગાતા અને બ્રહ્માની पाहि-રક્ષા કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે યજ્ઞ પૂર્વોક્ત મંત્રમાં વસુ, રુદ્ર અને આદિત્યથી સિદ્ધ થાય છે, તે વાયુ અને જલની ક્રિયા શુદ્ધિ દ્વારા સર્વ સ્થાનો તથા સર્વ વસ્તુઓને પ્રિય, સ્થિર, સુખદાયક અને જ્ઞાનવર્ધક બનાવે છે; તેની વૃદ્ધિ અને રક્ષા માટે સર્વ મનુષ્યોએ વ્યાપક ઈશ્વરની પ્રાર્થના તથા ઉત્તમ પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. (૬)

अग्ने वाजजिद् वाजं त्वा सरिष्यन्तं वाजजितꣳ सम्मार्ज्मि।
नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यः सुयमे मे भूयास्तम्॥ ७॥

પદાર્થ : જેથી એ अग्ने-અગ્નિ वाजजित्-અર્થાત્ જે ઉત્કૃષ્ટ અન્નને પ્રાપ્ત કરાવનાર સર્વ પદાર્થોને શુદ્ધ કરે છે, એથી હું त्वा-તે वाजम्-વેગવાન सरिष्यन्तम्-સર્વ પદાર્થોને અન્તરિક્ષમાં પહોંચાડનાર અને वाजजितम् [वाज-] અર્થાત્ યુદ્ધને જીતાડનાર ભૌતિક અગ્નિ છે, તેને सम्मार्ज्मि-સારી રીતે શુદ્ધ કરું છું.

યજ્ઞમાં પ્રયુક્ત જે અગ્નિથી देवेभ्यः-દિવ્ય સુખદાયક પૂર્વોક્ત વસુ વગેરેથી સુખ માટે नमः-અત્યંત મધુર શ્રેષ્ઠ જલ તથા पितृभ्यः-પાલન કરનારી વસંત વગેરે ઋતુઓ છે તેના દ્વારા આરોગ્ય માટે स्वधा-અમૃતરૂપ અન્ન થાય છે, તે सुयमे-બળ તથા પરાક્રમ આપનાર છે, તે યજ્ઞથી मे-મારા માટે પણ भूयास्तम्-બળ અને પરાક્રમ આપનાર બને. (૭)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે - મનુષ્યે પૂર્વ મંત્રમાં વર્ણિત અગ્નિને મુખ્ય સાધન બનાવવો જોઈએ. કારણ કે અગ્નિ ઉપર જવાના સ્વભાવવાળો હોવાથી સર્વ પદાર્થોનો છેદક છે. યાન અને અસ્ત્રોમાં અગ્નિનો વિધિપૂર્વક ઉપયોગ કરવાથી તે શીઘ્ર ગતિ અને વિજયનો હેતુ બનીને, ઋતુઓ દ્વારા દિવ્ય પદાર્થોને સિદ્ધ કરીને, અન્ન-જલને શુદ્ધ કરીને સુખદાયક બનાવે છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૭)

अस्कन्नमद्य देवेभ्यऽआज्यꣳ संभ्रियासमङ्घ्रिणा विष्णो मा त्वावक्रमिषं वसुमतीमग्ने ते छायामुपस्थेषं विष्णो स्थानमसीतऽइन्द्रो वीर्यमकृणोदूर्ध्वोऽध्वरऽआस्थात्॥ ८॥

પદાર્થ : હું देवेभ्यः-ઉત્તમ સુખોની પ્રાપ્તિ માટે જે अस्कन्नम्-નિશ્ચલ સુખદાયક आज्यम्-ઘૃત વગેરે શ્રેષ્ઠ પદાર્થ છે તેને अंघ्रिणा-ગતિ સાધનરૂપ અગ્નિ દ્વારા अद्य-આજ संभ्रियासम्-ધારણ કરું અને त्वा-તેનો હું मा-अवक्रमिषम्-પરિત્યાગ ન કરું.

હે અગ્નિ જગદીશ્વર ! ते-આપનો वसुमतीम्-પદાર્થ દાતા छायाम्-આશ્રયને उपस्थेषम्-પ્રાપ્ત કરું.

જે એ अग्ने-અગ્નિ विष्णोः-યજ્ઞના स्थानम्-નિવાસનું સ્થાન असि-છે, તેને પણ वसुमतीम्-ઉત્તમ પદાર્થ દાતા छायाम्-આશ્રયને હું उपस्थेषम्-પ્રાપ્ત થઈને યજ્ઞને સિદ્ધ કરું. તથા જે ऊर्ध्वः-આકાશ અને अध्वरः-યજ્ઞ-અગ્નિમાં રહેનાર आ-સર્વ રીતે अस्थात्-સ્થિત રહે છે, તેને इन्द्रः-સૂર્ય અને વાયુ ધારણ કરીને वीर्यम्-વીર પુરુષનાં કર્મ અથવા પરાક્રમ अकृणोत्-બનાવી દે છે. (૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે - જે પૂર્વોક્ત યજ્ઞ દ્વારા અન્ન અને જલ શુદ્ધ થઈને અધિક માત્રામાં ઉત્પન્ન થાય છે, જેથી તે યજ્ઞને સિદ્ધ કરવા માટે મનુષ્યોએ અધિક સામગ્રી એકત્ર કરવી જોઈએ.

જેમ હું સર્વત્ર વ્યાપક છું, મારી આજ્ઞાનું કદી પણ ઉલ્લંઘન ન કરવું જોઈએ. જે અનેકવિધ સુખોને આપનાર મારા આશ્રયને ગ્રહણ કરીને અગ્નિમાં જે યજ્ઞ કરવામાં આવે છે, જેને સૂર્ય પોતાનાં કિરણોથી સૂક્ષ્મ કરીને વાયુની સહાયતાથી ઉપર ખેંચીને ઉપર મેઘમંડલમાં સ્થાપિત કરે છે, ફરી ત્યાંથી ભૂમિ પર પાડે છે, જેથી ભૂમિમાં મહાન પરાક્રમ - શક્તિ ઉત્પન્ન થાય છે; તે યજ્ઞનું સદા અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૮)

अग्ने वेर्होत्रं वेर्दूत्यमवतां त्वां द्यावापृथिवीऽअव त्वं द्यावापृथिवी स्विष्टकृद्देवेभ्यऽइन्द्रऽआज्येन हविषा भूत्स्वाहा सं ज्योतिषा ज्योतिः॥ ९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પરમેશ્વર ! જે द्यावापृथिवी-પ્રકાશમય સૂર્યલોક અને પૃથિવી યજ્ઞની अवताम्-રક્ષા કરે છે, તેની त्वम्-આપ वेः-રક્ષા કરો. જેમ એ ભૌતિક અગ્નિ होत्रम्-યજ્ઞ અને दूत्यम्-દૂતકર્મ द्यावापृथिवी-પ્રકાશમય સૂર્યલોક અને પૃથિવીનું રક્ષણ કરે છે, તેમ હે ભગવાન્ ! देवेभ्यः-વિદ્વાનો માટે स्विष्टकृत्-તેની ઇચ્છાનુસાર ઉત્તમ ઇષ્ટ કાર્યો માટે આપ અમારી अव-રક્ષા કરો.

જેમ એ आज्येन યજ્ઞ અને અગ્નિ હોમવા યોગ્ય ઘૃત વગેરે ઉત્તમ પદાર્થો हविषा- સંસ્કૃત અર્થાત્ સારી રીતે શુદ્ધ કરેલ હોમનાં દ્રવ્યો કેસર વગેરે પદાર્થો અને ज्योतिषा-પ્રકાશયુક્ત લોકોની સાથે ज्योतिः-પ્રકાશમય કિરણોથી स्विष्टकृत्-બહુ જ ઇષ્ટકારી इन्द्रः-સૂર્યલોક પણ द्यावापृथिवी-અમારા ન્યાય તથા પૃથિવીના રાજ્યની રક્ષા કરનાર अभूत्-બને છે, તેમ આપ ज्योतिः-વિજ્ઞાનરૂપ જ્યોતિના દાનથી અમારી अव-રક્ષા કરો. એમ स्वाहा-વેદવાણી એ કર્તવ્ય-કર્મનો ઉપદેશ કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે મનુષ્યોને વેદોમાં ઉપદેશ આપેલ છે કે મનુષ્યો દ્વારા જે-જે અગ્નિ, પૃથિવી, સૂર્ય તથા વાયુ વગેરે પદાર્થોથી અગ્નિહોત્ર અને દૂતકર્મને કર્મના નિમિત્ત માનીને કરવામાં આવે છે, તે કર્મ ઇચ્છિત સુખ આપનાર હોય છે. આઠમાં મંત્રમાં યજ્ઞના સાધન કહેલ તેનું ફળ નવમાં મંત્રમાં પ્રકાશિત કરેલ છે. (૯)

मयीदमिन्द्रऽइन्द्रियं दधात्वस्मान् रायो मघवानः सचन्ताम्। अस्माकꣳ सन्त्वाशिषः सत्या नः सन्त्वाशिषऽउपहूता पृथिवी मातोप मां पृथिवी माता ह्वयतामग्निराग्नीध्रात् स्वाहा॥ १०॥

પદાર્થ : इन्द्रः-પરમેશ્વરે मयि-મારામાં इदम्-પ્રત્યક્ષ इन्द्रियम्-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિનાં ચિહ્નો છે, તે પરમેશ્વરે પોતાના જ્ઞાનથી જોયાં છે અને પ્રકાશિત કર્યાં છે તથા સર્વ સુખોને સિદ્ધ કરનારા વિદ્વાનોને પ્રદાન કર્યાં છે. જેને ઇન્દ્ર અર્થાત્ વિદ્વાનો પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરે છે તેને તથા रायः-વિદ્યા, સુવર્ણ અને ચક્રવર્તી રાજ્યાદિ સંપત્તિને दधातु-નિત્ય સ્થાપન કરે.

પરમેશ્વરની કૃપા અને અમારા પુરુષાર્થથી मघवानः-જેમાં વિપુલ ધન, રાજ્યાદિ પદાર્થો વિદ્યમાન છે, તેને અમે પૂર્ણ ઐશ્વર્યયુક્ત સંપત્તિને પ્રાપ્ત કરીએ, તેમ ધન नः-અમે પરોપકાર કરનારા ધર્માત્મા લોકોને सचन्ताम्-પ્રાપ્ત થાય અને આ રીતે अस्माकम्-અમે પરોપકાર કરનારા ધર્માત્માની आशिषः-કામના सत्याः-સિદ્ધ सन्तु-થાય તથા તે રીતે नः-અમારી आशिषः-ન્યાયપૂર્વકની ઇચ્છાયુક્ત ક્રિયાઓ सत्याः-સિદ્ધ सन्तु-થાય.

એ રીતે माता-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિને માન્ય કરનારી વિદ્યા અને पृथिवी-અત્યંત સુખકારી ભૂમિ છે, उपहूता-જેને રાજ્ય વગેરે સુખ માટે મનુષ્ય ક્રમથી પ્રાપ્ત કરે છે, તે माम्-સુખની ઇચ્છા કરનાર મને उपह्वयताम्-સારી રીતે ઉપદેશ કરે છે.

મેં અનુષ્ઠાન કરેલ એ अग्निः-ભૌતિક અગ્નિને आग्नीध्रात्-બળતણ વગેરે પ્રજ્વલિત કરે છે, તે અમોને વાંછિત સુખો આપનાર બનીને नः-અમોને સુખ આપનાર બને. કારણ કે એ રીતે સારી રીતે હોમને પ્રાપ્ત થઈને ઇચ્છિત કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર છે. स्वाहा-સર્વ મનુષ્યો માટે આ યજ્ઞકર્મ કરવાનો

વેદવાણી ઉપદેશ આપે છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પુરુષાર્થી અને ઈશ્વરનો ઉપાસક છે, તે જ સ્વચ્છ મન, શ્રેષ્ઠ તથા ઉત્તમ ધન અને સત્ય કામના પ્રાપ્ત કરે છે; અન્ય નહીં.

સર્વને માન આપવાના કારણે આ મંત્રમાં પૃથિવી શબ્દથી ભૂમિ અને વિદ્યા પ્રકાશિત કરેલ છે. સર્વે તે બંનેથી સદા ઉપકાર કરે. એવો ઈશ્વરે આ મંત્રમાં ઉપદેશ કરેલ છે.

નવમાં મંત્ર દ્વારા, સિદ્ધ કરવામાં આવેલ અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી ઈષ્ટ સુખોની પ્રાપ્તિનો ઉપદેશ કરેલ છે. તે આ દશમાં મંત્ર દ્વારા પણ પ્રકાશિત કરેલ છે. (૧૦)

उप॑हूतो॒ द्यौष्पि॒तोप॒ मां द्यौष्पि॒ता ह्व॑यताम॒ग्निरा॑ग्नी॑ध्रात् स्वाहा॑। दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। प्रति॑गृह्णाम्य॒ग्नेष्ट्वा॒स्ये॒न प्राश्ना॑मि॥ ११॥

પદાર્થ : મારા દ્વારા જે द्यौः-પ્રકાશસ્વરૂપ पिता-સર્વપાલક ઈશ્વરની उपहूतः-ઉપાસના કરનાર माम्-સુખોપભોગ કરનાર મને उपह्वयताम्-સારી રીતે સ્વીકારો.

એ રીતે જે द्यौः-પ્રકાશસ્વરૂપ पिता-સર્વ ઉત્તમ ઉત્તમ ક્રિયાઓના પાલક સૂર્યલોક મને उपहूतः-ક્રિયામાં પ્રયુક્ત કરનાર माम्-સર્વ સુખના ભોક્તા મને વિદ્યા - જ્ઞાન उपह्वयताम्-પ્રદાન કરે છે.

જે अग्निः-જઠરાગ્નિ स्वाहा-સારા ભોજનને आग्नीध्रात्-ઉદરમાં પચાવી દે છે. તેથી હું देवस्य-આનંદદાયક सवितुः-સર્વ જગતને ઉત્પન્ન કરનાર પરમેશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલ સંસારમાં વિદ્યમાન છે, त्वा-તે, ઉક્ત ભોગને अश्विनोः-પ્રાણ અને અપાનના बाहुभ्याम्-આકર્ષણ અને ધારણ ગુણ - શક્તિ દ્વારા તથા पूष्णः-પુષ્ટિકારક સમાન વાયુના हस्ताभ्याम्-શોધન અને શરીરના પ્રત્યેક અંગમાં પહોંચાડવાના ગુણોથી प्रतिगृह्णामि-સારી રીતે - નિત્ય ગ્રહણ કરું છું.

ગ્રહણ કરીને अग्नेः-પ્રજ્વલિત ભૌતિક પાચક અગ્નિમાં પકાવીને त्वा-તે ભક્ષ્ય પદાર્થને आस्येन-પોતાના મુખથી प्राश्नामि-સારી રીતે ભોજન કરું છું. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે પોતાના આત્માની શુદ્ધિ માટે અનંત વિદ્યાના પ્રકાશક પરમેશ્વરની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. તથા વિદ્યાની સિદ્ધિ માટે નેત્રોથી સારી રીતે જોઈને સંસ્કાર કરેલ પ્રમાણયુક્ત ભોજન નિત્ય કરવું જોઈએ.

ઈશ્વર દ્વારા સંસારમાં ઉત્પન્ન પદાર્થોથી જે સર્વ પ્રકારના ભોગ સિદ્ધ - પ્રાપ્ત થાય છે, તેને વિદ્યા તથા ધર્મયુક્ત વ્યવહાર સાથે સ્વયં ભોગવવા જોઈએ તથા અન્યોને ભોગવાવા જોઈએ.

પૂર્વ મંત્રથી પૃથિવી પર વિદ્યા દ્વારા પ્રાપ્ત થનાર તથા માન હેતુ જે પદાર્થ કહેલ છે, તેનો સર્વેએ ધર્મ અને યુક્તિપૂર્વક ઉપભોગ કરવો જોઈએ. એ વાત આ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. (૧૧)

ए॒तं ते॑ देव सवितर्य॒ज्ञं प्राहु॒र्बृह॒स्पत॑ये ब्र॒ह्मणे॑। तेन॑ य॒ज्ञम॑व॒ तेन॑ य॒ज्ञप॑तिं॒ तेन॒

मार्मव॥ १२॥

પદાર્થ : હે देव-દિવ્ય સુખ અને શ્રેષ્ઠ ગુણોના દાતા ! सवितः-સકલ ઐશ્વર્યના વિધાતા જગદીશ્વર ! વેદ અને વિદ્વાન આપનાથી પ્રકાશિત થયેલ एतम्-એ પૂર્વોક્ત યજ્ઞને प्राहुः-સારી રીતે કહે છે. જેથી बृहस्पतये-મહત્તમ વેદવાણીનું પાલન કરનાર ब्रह्मणे-ચારેય વેદોના અધ્યયનથી જેણે બ્રહ્માની પદવી પ્રાપ્ત કરેલ છે, તે વિદ્વાનને સુખ અને શ્રેષ્ઠ અધિકાર પ્રાપ્ત થાય છે.

એ यज्ञम्-યજ્ઞ સંબંધી ધર્માનુષ્ઠાનથી यज्ञपतिम्-યજ્ઞ કરનારા અને સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપનાર વિદ્વાન અને તે વિદ્યા-ધર્મરૂપ પ્રકાશ દ્વારા मा-મારી પણ अव-રક્ષા કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે સૃષ્ટિના આરંભમાં દિવ્ય ગુણવાન અગ્નિ, વાયુ, આદિત્ય અને અંગિરા નામક ઋષિઓને ચારે વેદોના ઉપદેશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા પ્રાપ્તિજન્ય સુખ માટે યજ્ઞના અનુષ્ઠાનની વિધિ બતાવી છે, જેથી સર્વની રક્ષા થાય છે.

કારણ કે વિદ્યા અને શુદ્ધિ ક્રિયા વિના કોઈને પણ સુખ તથા રક્ષણ પ્રાપ્ત થઈ શકતાં નથી. આથી સર્વેએ પરસ્પર પ્રેમ માટે તેની પ્રયત્નપૂર્વક વૃદ્ધિ અને રક્ષા કરવી જોઈએ.

જે અગિયારમાં મંત્ર દ્વારા યજ્ઞ ફળ અને ઉપભોગનો ઉપદેશ કરેલ છે, તેનો પ્રકાશ ઈશ્વરે જ કરેલ છે, તેમ જ્ઞાત થાય છે. (૧૨)

मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳसमिमं दधातु। विश्वे देवासऽइह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठ॥ १३॥

પદાર્થ : जूतिः-મારું અત્યંત વેગથી કર્મોમાં વ્યાપ્ત मनः-મનનશીલ અને જ્ઞાનપ્રાપ્તિનું સાધન મન आज्यस्य-યજ્ઞ સામગ્રીનું जुषताम्-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરે.

बृहस्पतिः-મહાન પ્રકૃતિ અને પ્રકાશ વગેરેના રક્ષક જગદીશ્વર જે इमम्-આ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ अरिष्टम्-અહિંસનીય यज्ञम्-સુખરૂપી યજ્ઞનો तनोतु-વિસ્તાર કરે इदम्-આ યજ્ઞ अरिष्टम्-ત્યાજ્ય નથી. यज्ञम्-જે અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિરૂપ યજ્ઞ છે, તેને सन्दधातु-સારી રીતે ગ્રહણ કરાવે.

હે विश्वे देवासः-સર્વ વિદ્વાનો ! તમે પાલન કરવા યોગ્ય તે બંને યજ્ઞનો વિસ્તાર કરીને इह-આ સંસાર અથવા આપણાં મનમાં मादयन्ताम्-આનંદિત થાઓ.

હે ओ३म्-ઓંકાર અર્થ જગદીશ્વર ! આપ बृहस्पतिः-પ્રકૃતિ વગેરેનું પાલન કરનાર इह-આ સંસારમાં અથવા વિદ્વાનોના હૃદયમાં प्रतिष्ठ-કૃપા કરીને યજ્ઞ અથવા વેદવિદ્યાની સ્થાપના કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમારું મન શુભ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થાય. મારા દ્વારા સંસારમાં જે યજ્ઞ કરવાની આજ્ઞા આપું છું, તેનું અનુષ્ઠાન કરીને સ્વયં સુખી બનો તથા અન્યને સુખી કરો.

ઓમ્ એ પરમેશ્વરનું નામ છે. જેમ પિતા અને પુત્રનો પ્રિય સંબંધ છે, તેમ ઈશ્વર સાથે ઓંકારનો સંબંધ છે.

શુભ કર્મો વિના કોઈની પણ પ્રતિષ્ઠા - સન્માન થઈ શકતું નથી. આથી સર્વ મનુષ્યોએ અધર્મનો ત્યાગ કરીને ધર્મકાર્યોનું સેવન કરવું જોઈએ, જેથી સંસારમાં અવિદ્યારૂપી અંધકારનું નિવારણ થઈને વિદ્યારૂપી સૂર્ય પ્રકાશિત થાય.

બારમાં મંત્રમાં જે યજ્ઞનો ઉપદેશ કરેલ હતો, તેના અનુષ્ઠાનથી સર્વને સન્માન અને સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તે આ મંત્ર દ્વારા પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ છે. (૧૩)

एषा तेऽअग्ने समित्तया वर्धस्व चा च प्यायस्व।
वर्धिषीमहि च वयमा च प्यासिषीमहि।
अग्ने वाजजिद्वाजं त्वा ससृवाꣳसं वाजजितꣳसम्मार्ज्मि॥ १४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પરમેશ્વર ! ते-આપની જે एषा-આ समित्-સારી રીતે પદાર્થોના ગુણોને પ્રકાશિત કરનારી વેદવિદ્યા છે, तया-તે વિદ્યા દ્વારા અમે કરેલી સ્તુતિને પ્રાપ્ત કરીને આપ નિત્ય वर्धस्व-અમારા જ્ઞાનમાં વૃદ્ધિ કરો. च-એ અને તે વેદવિદ્યાથી અમારી પણ નિત્ય વૃદ્ધિ કરો.

હે ભગવન્ ! એ રીતે આપના ગુણોને જાણનારા અમે લોકોથી च-પણ પ્રકાશિત થઈને આપ आ प्यायस्व-અમારા આત્મામાં પણ વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરાવો. એ રીતે અમારી પણ વૃદ્ધિ કરો.

હે ભગવન્ ! अग्ने-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ અને વિજય પ્રદાન કરનાર, वाजजित्-સર્વના વેગને જીતનાર પરમેશ્વર ! वाजम्-જ્ઞાન સ્વરૂપ, ससृवांसम्-સર્વને જાણનાર त्वा-આપની वर्धिषीमहि-સ્તુતિઓથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે. च-અને આપ કૃપા કરીને અમને પણ સર્વના વેગના વિજેતા, જ્ઞાનવાન - સર્વના મનના જ્ઞાતા કરો, જેમ वयम्-અમે आ + प्यासिषीमहि-આપની અધિકમાં અધિક સ્તુતિ કરીએ, તેમ આપ પણ અમારાં સર્વ શ્રેષ્ઠ ગુણો અને સુખોની आप्यायस्व-વૃદ્ધિ કરો. અમે આપના આશ્રયને પ્રાપ્ત થઈને આપની આજ્ઞાના પાલન દ્વારા सम्मार्ज्मि-સારી રીતે શુદ્ધ બનીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે एषा-આ अग्ने-ભૌતિક અગ્નિ છે, ते-તેને समित्-સારી રીતે પ્રદીપ્ત કરનાર કાષ્ઠાદિ સમૂહ છે. તેથી तया-એ અગ્નિની वर्धस्व-વૃદ્ધિ અને आप्यायस्व-પરિપૂર્ણ પણ થાય છે. અમે त्वा-તે वाजम्-વેગવાન અને ससृवांसम्-શિલ્પવિદ્યાના ગુણોને પ્રાપ્ત કરવા તથા वाजजितम्-સંગ્રામને જીતવાના સાધનરૂપ અગ્નિની વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે અધિક वर्धिषीमहि-વૃદ્ધિ કરીએ છીએ. च-અને आप्यासिषीमहि-કલાઓમાં પરિપૂર્ણ પણ કરીએ છીએ. જેથી એ અગ્નિ શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ વિમાનાદિ યાનો દ્વારા વેગયુક્ત, શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા તથા સંગ્રામમાં વિજેતા અમને વિજય-પ્રદાનથી વૃદ્ધિ કરે છે; त्वा-તેથી અમે એ અગ્નિનો सम्मार्ज्मि-સારી રીતે પ્રયોગ કરીએ છીએ.

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં 'वर्धस्व' અને 'प्यायस्व' તે બે ક્રિયાપદો આદર માટે જાણવાં જોઈએ. જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન તથા ક્રિયા-કૌશલમાં ઉન્નતિ કરે છે, તે વિદ્યામાં સર્વને આનંદિત કરીને, દુષ્ટ શત્રુઓને જીતીને, શુદ્ધ બનીને, સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. અન્ય આળસુ મનુષ્ય નહીં.

મંત્રમાં આવેલા ચાર 'च' પદોથી એમ જાણવું જોઈએ કે ઈશ્વરની ધર્માનુકૂળ આજ્ઞા સ્થૂલ અને

સૂક્ષ્મ ભેદથી અનેક પ્રકારની છે. તથા ક્રિયાકાંડમાં કર્તવ્ય કર્મ પણ અનેક પ્રકારનાં છે.

તેમાં મંત્રમાં જે વેદવિદ્યાનું પ્રતિપાદન કરેલ છે, તેથી સુખ પ્રાપ્તિ માટે યજ્ઞનું વિધાન કરેલ છે. આ મંત્રમાં એ વેદવિદ્યા દ્વારા એ રીતે પુરુષાર્થ કરવાનું પ્રતિપાદન કરેલ છે. (૧૪)

अग्नीषोमयोरुज्जितिमनूज्जेषं वाजस्य मा प्रसवेन प्रोहामि। अग्नीषोमौ तमपनुदतां योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मो वाजस्यैनं प्रसवेनापोहामि। इन्द्राग्न्योरुज्जितिमनूज्जेषं वाजस्य मा प्रसवेन प्रोहामि। इन्द्राग्नी तमपनुदतां योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मो वाजस्यैनं प्रसवेनापोहामि॥ १५॥

પદાર્થ : હું अग्निषोमयोः-પ્રસિદ્ધ ભૌતિક અગ્નિ અને ચંદ્રલોકના उज्जितिम्-દુઃખદાયક શત્રુઓને अनुज्जेषम्-અનુક્રમથી જીતું અને वाजस्य-યુદ્ધના प्रसवेन-ઉત્પાદનથી વિજય કરનારને मा-મને પોતાને प्रोहामि-સારી રીતે શુદ્ધ તર્કોથી સંયુક્ત કરું.

જે મારાથી સારી રીતે વિદ્યા દ્વારા ક્રિયા - કુશળતામાં સંયુક્ત કરેલ अग्नीषोमौ-ઉક્ત અગ્નિ અને ચંદ્રલોક છે, તે यः-જે અન્યાયકારી દુષ્ટ મનુષ્ય अस्मान्-ન્યાય કરનારા અમે લોકોથી द्वेष्टि-શત્રુભાવ રાખે છે. यं च-અને જે અન્યાયકારીથી वयम्-અમે ન્યાયાધીશ લોકો द्विष्मः-વિરોધ કરીએ છીએ, तम्-તે શત્રુ અને રોગોને अपनुदताम्-દૂર કરીએ.

હું एनम्-એ દુષ્ટ શત્રુને वाजस्य-યાન વેગાદિ ગુણોથી યુક્ત સેનાના સંગ્રામની प्रसवेन-સારી રીતે પ્રેરણાથી अपोहामि-દૂર કરું છું.

હું इन्द्राग्न्योः-વાયુ અને વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિની उज्जितिम्-વિદ્યાથી સારી રીતે ઉત્કર્ષને अनूज्जेषम्-અનુક્રમથી પ્રાપ્ત કરું.

હું वाजस्य-જ્ઞાનની પ્રેરણા દ્વારા વેગની પ્રાપ્તિના प्रसवेन-ઐશ્વર્યના માટે ઉત્પન્ન કરીને વાયુ અને વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણનાર माम्-હું પોતે નિત્ય प्रोहामि-સારી રીતે તર્કો દ્વારા સુખોને પ્રાપ્ત કરું.

મારા દ્વારા ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરેલ इन्द्राग्नी-વાયુ અને વિદ્યુત્ અગ્નિ છે, તે यः-જે મૂર્ખ મનુષ્ય अस्मान्-અમે વિદ્વાનોનો द्वेष्टि-અપ્રીતિથી વર્તે છે; च-અને यम्-જે મૂર્ખથી वयम्-અમે વિદ્વાનો द्विष्मः-અપ્રીતિ કરીએ છીએ; तम्-તે વેર કરનાર મૂઢ મનુષ્યને अपनुदताम्-દૂર કરીએ.

હું પણ एनम्-એને वाजस्य-વિજ્ઞાનના प्रसवेन-પ્રકાશ દ્વારા अपोहामि-શ્રેષ્ઠતમ શિક્ષા આપીને શુદ્ધ કરું છું. (૧૫)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે - સર્વ મનુષ્યોએ આ સંસારમાં વિદ્યા અને યુક્તિથી અગ્નિ અને જલના મેળથી, કલા - કૌશલથી વેગ આદિ ગુણોના પ્રકાશથી તથા વાયુ અને વિદ્યુત્‌ની વિદ્યાથી

સંપૂર્ણ દરિદ્રતાનો નાશ અને શત્રુઓ પર વિજયની સાથે સુશિક્ષાથી મનુષ્યોની મૂર્ખતાને દૂર કરીને, વિદ્વત્તાને પ્રાપ્ત કરાવીને વિવિધ સુખોને સ્વયં પ્રાપ્ત કરે તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવે.

આ રીતે સમસ્ત પદાર્થ વિદ્યાઓને જગતમાં પ્રકાશિત કરે. પૂર્વ મંત્ર દ્વારા જે કાર્ય પ્રકાશિત કરેલ તેની આ મંત્ર દ્વારા પુષ્ટિ કરવામાં આવી છે. (૧૫)

वसुभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यस्त्वादित्येभ्यस्त्वा संजानाथां द्यावापृथिवी मित्रावरुणौ त्वा वृष्ट्यावताम्। व्यन्तु वयोक्तꣳरिहाणा मरुतां पृषतीर्गच्छ वशा पृश्निर्भूत्वा दिवं गच्छ ततो नो वृष्टिमावह। चक्षुष्पाऽअग्नेऽसि चक्षुर्मे पाहि॥ १६॥

પદાર્થ : અમે वसुभ्यः-અગ્નિ આદિ આઠ વસુઓથી त्वा-તે યજ્ઞને તથા रुद्रेभ्यः-અગિયાર રુદ્રોથી त्वा-તે યજ્ઞને અને आदित्येभ्यः-બાર મહિનાઓથી त्वा-તે ક્રિયા સમૂહને નિત્ય ઉત્તમ તર્કોથી જાણીએ, તથા યજ્ઞ દ્વારા એ द्यावापृथिवी-સૂર્યપ્રકાશ અને ભૂમિ संजानाथाम्-તેનાથી ઉત્પન્ન થનારી શિલ્પ વિદ્યા, સિદ્ધ કરનાર છીએ.

मित्रावरुणौ-જે મિત્ર અર્થાત્ બાહ્ય પ્રાણવાયુ અને વરુણ અર્થાત્ આંતરિક ઉદાનવાયુ જે શરીરમાં રહેનાર છે તે वृष्ट्या-શુદ્ધ જળની વર્ષાથી त्वा-દ્યાવા પૃથિવીમાં સ્થિત સંસારની अवताम्-રક્ષા કરે છે.

वयः-જેમ પક્ષી પોતાના માળા બાંધે છે અને व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તે [ગાયત્રી વગેરે] છંદો દ્વારા रिहाणाः-ઈશ્વરપૂજક અમે લોકો त्वा-તે છંદો દ્વારા યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીએ છીએ.

જે યજ્ઞમાં આપેલી આહુતિ पृश्निः-અંતરિક્ષમાં સ્થિર वशा-શોભાયમાન भूत्वा-થઈને मरुताम्-વાયુના સંગથી दिवम्-સૂર્યના પ્રકાશને गच्छ-પ્રાપ્ત થાય છે.

તે ततः-ત્યાંથી नः-અમારા સુખ માટે वृष्टिम्-વર્ષાને आवह-સારી રીતે વરસાવે છે. તે વર્ષાનું જલ पृषतीः-નદી-નાળાને પ્રાપ્ત થાય છે.

જેથી એ ભૌતિક અગ્નિ चक्षुष्पाः-નેત્રોનો રક્ષક असि-છે, તેથી मे-અમારાં चक्षुः-બાહ્ય અને આંતરિક ચક્ષુ વિજ્ઞાનની पाहि-રક્ષા કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : '**प्रोहामि**' *તથા* '**अपोहामि**' *તે બે પદોની અનુવૃત્તિ છે.*

મનુષ્યો અગ્નિમાં જે આહુતિ આપે છે, તે વાયુના સંયોગથી મેઘમંડલમાં જઈને, સૂર્યથી ખેંચેલા જલને શુદ્ધ કરીને, ફરી ત્યાંથી પૃથિવી પર આવીને ઔષધિઓની પુષ્ટિ કરે છે. તે આહુતિઓ વેદમંત્રો દ્વારા જ આપવી જોઈએ. જેથી તેના ફળ-જ્ઞાનમાં નિત્ય શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થતી રહે.

એ અગ્નિ સૂર્યરૂપ થઈને સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, તેથી જોવાના વ્યવહારની રક્ષા થાય છે. એ વસુ વગેરેથી વિદ્યારૂપ ઉપકાર ગ્રહણ કરીને, દુષ્ટ ગુણ તથા દુષ્ટ પ્રાણીઓનું નિત્ય નિવારણ કરવું જોઈએ. એ જ સર્વની પૂજા અને સત્કાર છે. પૂર્વ મંત્રમાં કહે છે તે જ આ મંત્રમાં વિશેષરૂપે પ્રકાશિત કરેલ છે. (૧૬)

य परिधिं पर्यधत्थाऽग्ने देवपणिभिर्गुह्यमानः। तं तऽएतमनु जोषं भराम्येष नेत्त्वदपचेतयाताऽअग्नेः प्रियं पाथोऽपीतम्॥ १७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-સર્વત્ર વ્યાપક ઈશ્વર ! આપ देवपणिभिः-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્વાનોની સ્તુતિઓથી गुह्यमानः-સારી રીતે આપના ગુણોના વર્ણનને પ્રાપ્ત થઈને यम्-તે ગુણોને અનુકૂળ जोषम्-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરવા યોગ્ય परिधिम्-પ્રભુતાને पर्यधत्थाः-નિરંતર ધારણ કરો છો. तम्-આપની પ્રભુતાને इत्-જ एषः-હું अनुभरामि-પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરું છું.

હું त्वत्-આપનાથી मा-अपचेतयातै-કદી પ્રતિકૂળ ન બનું. अग्ने-જગદીશ્વર ! આપની સૃષ્ટિમાં મેં જે प्रियम्-પ્રીતિકારક पाथः-શરીરની રક્ષા કરનાર અન્ન अपीतम्-ગ્રહણ કરેલ છે, તેનાથી પણ કદી मा-अपचेतयातै-પ્રતિકૂળ ન બનું.

દ્વિતીય અર્થ : હે જગદીશ્વર ! ते-આપની સૃષ્ટિમાં एषः-જે अग्ने-ભૌતિક અગ્નિ અને देवपणिभिः-દિવ્યગુણયુક્ત પૃથિવી વગેરે પદાર્થો गुह्यमानः-સારી રીતે સ્વીકાર કરેલ यम्-જે परिधिम्-વિદ્યાદિ ગુણો અને जोषम्-પ્રીતિપૂર્વક યોગ્ય કર્મને पर्यधत्थाः-સર્વ પ્રકારથી ધારણ કરે છે, तमित्-તેને હું अनुभरामि-તેની પશ્ચાત્ સ્વીકાર કરું છું. અને તેથી કદી પણ मा-अपचेतयातै-પ્રતિકૂળ બનતો નથી.

મેં જે अग्नेः-એ અગ્નિના સંબંધથી प्रियम्-પ્રીતિકારક અને पाथः-શરીરની રક્ષા કરનાર અન્ન अपीतम्-ગ્રહણ કરેલ છે, તેને હું जोषम्-અત્યંત પ્રીતિપૂર્વક નિત્ય अनुभरामि-ક્રમથી પ્રાપ્ત કરું છું. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પ્રત્યેક પદાર્થોમાં વ્યાપક રહીને તેને ધારણ કરનાર, વિદ્વાનો દ્વારા સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વર છે, તેની નિત્ય પ્રીતિપૂર્વક ઉપાસના કરવી જોઈએ, જેથી તેની આજ્ઞા પાલન કરવાથી પ્રિય સુખ પ્રાપ્ત થાય છે.

ઈશ્વરે પ્રકાશ, દાહ તથા વેગ વગેરે ગુણોથી યુક્ત મૂર્તિમાન દ્રવ્યોમાં વ્યાપક અગ્નિ રચેલ છે. મનુષ્ય તેનો કલા-કૌશલ વગેરેમાં પ્રયોગ કરીને મનુષ્યોએ અગ્નિથી સર્વ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ, જેથી સર્વ સુખ સિદ્ધ - પ્રાપ્ત થાય.

પૂર્વ મંત્રમાં જે અગ્નિને વર્ષાદિનો સાધક કહેલ છે, તે અગ્નિની આ મંત્રમાં વ્યાપકતા બતાવેલ છે. આ [બંને મંત્રો]માં સંગતિ છે. (૧૭)

सꣳस्रवभागा स्थेषा बृहन्तः प्रस्तरेष्ठाः परिधेयाश्च देवाः। इमां वाचमभि विश्वे गृणन्तऽआसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वꣳस्वाहा वाट्॥ १८॥

પદાર્થ : હે बृहन्तः-સ્વયં વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થનાર, प्रस्तरेष्ठाः-શ્રેષ્ઠ ન્યાય વિદ્યારૂપી આસનમાં સ્થિર થનાર, परिधेयाः સર્વ પ્રકારની ધારણા બુદ્ધિયુક્ત, च-અને इमाम्-આ પ્રત્યક્ષ वाचम्-ચારે વેદોની વાણીનો ઉપદેશ કરનારા देवाः-વિદ્વાનો ! તમે इषा-પોતાના જ્ઞાનથી संस्रवभागाः-ઘૃત આદિ પદાર્થો હોમ કરનાર स्थ-બનો.

स्वाहा-સારાં - મધુર વચનોથી वाट्-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર ક્રિયાને પ્રાપ્ત થઈને अस्मिन्-પ્રત્યક્ષ

बर्हिषि-જ્ઞાન અને કર્મકાંડમાં मादयध्वम्-આનંદિત બનો, તેમજ અન્યને પણ આનંદિત કરો.

એ જ રીતે ઉક્ત જ્ઞાનને કર્મકાંડમાં ઉક્ત વાણીની પ્રશંસા કરતાં તમે પોતાના વિચારથી ઉત્તમ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થનારી ક્રિયાને પ્રાપ્ત થઈને बृहन्तः-વૃદ્ધિ અને प्रस्तरेष्ठाः-ઉત્તમ કાર્યોમાં સ્થિત થનાર विश्वे-સર્વ देवाः-શ્રેષ્ઠતમ પદાર્થ परिधेयाः-ધારણ કરો તથા અન્યોને ધારણ કરાવો અને તેની સહાયતાથી ઉક્ત જ્ઞાન અને કર્મકાંડમાં સદા मादयध्वम्-આનંદ પામો. (૧૮)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - જે ધાર્મિક અને પુરુષાર્થી મનુષ્ય વેદવિદ્યાના પ્રચારમાં તથા શ્રેષ્ઠ વ્યવહારમાં નિત્ય પ્રવૃત્ત રહે છે, તેને જ મહાન સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. પૂર્વમંત્રમાં જે અગ્નિ શબ્દથી ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિરૂપ બે અર્થ કહેલ છે, તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરવાનું આ મંત્રમાં જણાવેલ છે. (૧૮)

घृताची स्थो धुर्यौं पातᳪं सुम्ने स्थः सुम्ने मा धत्तम्। यज्ञ नमश्च तऽउप च यज्ञस्य शिवे सन्तिष्ठस्व स्विष्टे मे सन्तिष्ठस्व॥ १९॥

પદાર્થ : જે અગ્નિ અને વાયુ धुर्यौ-યજ્ઞના મુખ્ય અંગને પ્રાપ્ત કરાવનાર च-અને सुम्ने-સુખરૂપ स्थ-છે તથા घृताची-જલને પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયા કરાવનાર स्थः-છે, જે સર્વ જગતનું पातम्-પાલન કરે છે, તે મારાથી સારી રીતે ઉત્તમ ક્રિયા - કુશળતાથી યુક્ત થઈ मा-મને - યજ્ઞ કરનારને सुम्ने-સુખમાં धत्तम्-સ્થાપન કરે છે.

જેમ આ यज्ञ-જગદીશ્વર च-તથા नमः-નમ્રતા એ બંને ते-તારા शिवे-કલ્યાણ માટે उपसंतिष्ठस्व-સમીપ - પાસે રહે છે, તેમજ मे-મારી પાસે પણ રહે છે. આથી જેમ હું યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને सुम्ने-સુખને પ્રાપ્ત કરું છું, તેમ તમે પણ તેમાં संतिष्ठस्व-સ્થાન પામો. (૧૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર ઉપદેશ આપે છે કે - હે મનુષ્યો ! તમે એ રસનું છેદન અને ધારણ કરનાર, સંસારના પાલક, સુખદાયક, ક્રિયાકાંડના કારણભૂત, ઉપર તથા તિરછી ગતિ કરનાર અગ્નિ અને વાયુના કાર્યને સિદ્ધ કરીને, સ્થિર સુખને પ્રાપ્ત કરો.

મારી આજ્ઞાનું પાલન અને મને સદા નમસ્કાર કરો. પૂર્વ મંત્રમાં વર્ણિત ઉપકારોથી પરમ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તે આ મંત્રમાં જણાવેલ છે. (૧૯)

अग्नेऽदब्धायोऽशीतम पाहि मा दिद्योः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ट्यै पाहि दुरद्मन्याऽअविषं नः पितुं कृणु सुषदा योनौ स्वाहा वाडग्नये संवेशपतये स्वाहा सरस्वत्यै यशोभगिन्यै स्वाहा॥ २०॥

પદાર્થ : હે अदब्धायो-નિર્વિઘ્ન આયુ આપનાર अग्ने-જગદીશ્વર ! આપ अशीततमम्-ચરાચર જગતમાં વ્યાપક યજ્ઞને दुरिष्ट्यै-દુષ્ટ અર્થાત્ વેદવિરુદ્ધ યજ્ઞથી पाहि-રક્ષા કરો, मा-મને दिद्योः-અતિ દુઃખથી पाहि-રક્ષા કરો. प्रसित्यै-ભારે બંધનોથી पाहि-રક્ષા કરો અને दुरद्मन्यै-દુષ્ટ ભોજનથી पाहि-રક્ષા કરો.

नः-અમારા માટે अविषम्-વિષાદિ દોષરહિત पितुम्-અન્ન વગેરે પદાર્થો कृणु-ઉત્પન્ન કરો.

नः-અમને सुषदा-સુખથી સ્થિરતા આપનાર ઘરમાં स्वाहा-वाट्-વેદોક્ત વાક્યોથી સિદ્ધ થનારી શ્રેષ્ઠ ક્રિયાઓમાં સ્થિર कृणु-કરો, જેથી અમે यशोभगिन्यै-યશ, સત્ય વચન વગેરે શ્રેષ્ઠ કર્મોનું સેવન કરનારી सरस्वत्यै-પદાર્થોને પ્રકાશિત કરનારી શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત વેદવાણી માટે स्वाहा-ધન્યવાદ તથા संवेशपतये-સારી રીતે જે પૃથિવી વગેરે લોકોમાં પ્રવેશ કરે છે તેના આપ પતિ અર્થાત્ પાલનહાર છો, अग्नये-આપ છો તે માટે स्वाहा-ધન્યવાદ અને नमः-નમસ્કાર કરીએ છીએ. (૨૦)

દ્વિતીય અર્થ : હે ભગવન્ જગદીશ્વર ! જે આપે આ अदब्धायो-નિર્વિઘ્ન આયુ આપનાર अग्ने-ભૌતિક અગ્નિ રચેલ છે, તે પણ अशीततमम्-સર્વત્ર વ્યાપક યજ્ઞની दुरिष्ट्यै-દુષ્ટ યજ્ઞથી पाहि-રક્ષા કરે છે. તે मा-મારી दिद्योः-અતિ દુઃખોથી पाहि-રક્ષા કરે છે. प्रसित्यै-ભારે દારિદ્ર બંધનોથી पाहि-રક્ષા કરે છે. તથા दुरद्मन्यै-દુષ્ટ ભોજન કરવાની ક્રિયાઓથી पाहि-રક્ષા કરે છે.

नः-અમારા पितुम्-અન્ન વગેરે પદાર્થો अविषम्-વિષાદિ દોષરહિત कृणु-કરી દે છે, તે सुषदा-સુખદાયક ઘર અથવા જન્માન્તરમાં स्वाहा જેને અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ; वाट्-જે યજ્ઞાદિ શુભ કર્મોનું કારણ છે. અમે તે संवेशपतये-પૃથિવી વગેરે પદાર્થોનું પાલન કરનાર अग्नये-ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ કરીને स्वाहा-હોમ તથા સાથે यशोभगिन्यै-सरस्वत्यै-ઉક્ત ગુણયુક્ત વેદવાણીની પ્રાપ્તિ માટે स्वाहा-પરમાત્માનો ધન્યવાદ કરીએ છીએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વ પ્રકારનાં દુઃખોથી રક્ષા કરનાર, ઉત્તમ જન્મના કારણભૂત શુભ કર્મો [કરવાનો] ઉપદેશ કરનાર તથા ઉત્તમ ભોગોના દાતા જગદીશ્વર છે, તેની સદા ઉપાસના કરવી જોઈએ.

તે ઈશ્વરે સૃષ્ટિમાં સૂર્ય, વીજળી તથા પ્રત્યક્ષરૂપમાં જે અગ્નિ પ્રકાશિત કરેલ છે, તેનો પણ ઉત્તમ રીતે વિદ્યાપૂર્વક ઉપકાર-કાર્યોમાં પ્રયોગ કરવાથી સર્વ પ્રકારની રક્ષા અને ઉત્તમ ભોગોનું કારણ બને છે.

જે કીર્તિની કારણભૂત, સત્ય લક્ષણોથી યુક્ત વેદરૂપી વાણી - વિદ્યા દ્વારા ઉત્તમ જન્મોની પ્રાપ્તિ અને સર્વ પદાર્થોથી શ્રેષ્ઠ વિદ્યા પ્રકાશિત થાય છે, તે સદા સ્વયં સ્વીકાર કરવા યોગ્ય તથા અન્યોથી પણ સ્વીકાર કરાવવા યોગ્ય છે.

આ મંત્રમાં 'नमः' અને 'यज्ञ' એ બે પદો પૂર્વ મંત્રથી ગ્રહણ કરેલ છે. પૂર્વ મંત્રમાં કહેલ મનુષ્યો દ્વારા અનુષ્ઠાન કરેલ કર્મોનું ફળ આ મંત્રમાં જણાવેલ છે. (૨૦)

वेदोऽसि येन त्वं देव वेद देवेभ्यो वेदोऽभवस्तेन मह्यं वेदो भूयाः। देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पतऽइमं देव यज्ञꣳस्वाहा वाते धाः॥ २१॥

પદાર્થ : હે देव-શુભગુણોના દાતા જગદીશ્વર ! त्वम्-આપ वेदः-ચરાચર જગતના જ્ઞાતા असि-છો. સર્વ જગતને वेद-જાણો છો, તથા येन-જે વિજ્ઞાન અથવા વેદથી देवेभ्यः-વિદ્વાનો માટે वेदः-પદાર્થોને જણાવનાર अभवः-બનો છો, तेन-તે વિજ્ઞાનના પ્રકાશથી આપ मह्यम्-મારા માટે જે હું વિશેષ જ્ઞાનની ઈચ્છા રાખું છું वेदः-વિજ્ઞાન આપનાર भूयाः-બનો.

હે गातुविदः-સ્તુતિ જ્ઞાતા देवाः-વિદ્વાનો ! જે વેદોથી મનુષ્યો સર્વ વિદ્યા જાણે છે, તેના દ્વારા તમે

गातुम्-વિશેષ જ્ઞાનને वित्त्वा-પ્રાપ્ત થઈને गातुम्-પ્રશંસા કરવા યોગ્ય વેદને इत-પ્રાપ્ત થાઓ. मनसस्पते-વિજ્ઞાનના પાલક देव-સર્વ જગત્ પ્રકાશક પરમેશ્વર, આપ इमम्-પ્રત્યક્ષ અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય यज्ञम्-ક્રિયાકાંડથી સિદ્ધ થનાર, યજ્ઞરૂપ સંસારની स्वाहा-ક્રિયાને અનુકૂળ वाते-પવન વચ્ચે धाः-સ્થિર કરો.

હે વિદ્વાનો ! એ વિજ્ઞાનથી વિશેષ જ્ઞાન આપનારા પરમેશ્વરની જ નિત્ય ઉપાસના કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે જે સર્વજ્ઞ ઈશ્વરે વેદવિદ્યા પ્રકાશિત કરી છે, તેને ઉપાસના યોગ્ય જાણીને, કર્મકાંડનું અનુષ્ઠાન કરીને સર્વનું કલ્યાણ કરો.

કારણ કે વેદના વિશેષ જ્ઞાન અને વેદોક્ત વિધાન અનુસાર આચરણ કર્યા વિના મનુષ્યોને કદી પણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી.

વેદવિદ્યા દ્વારા સર્વના સાક્ષી - દૃષ્ટા ઈશ્વર દેવને સર્વવ્યાપક માનીને જ તમે નિત્ય ધર્મના આચરણકર્તા બની શકો છો. (૨૧)

सं बर्हिरङ्क्ताᳬंहविषा घृतेन समादित्यैर्वसुभिः सम्मरुद्भिः।

समिन्द्रो विश्वदेवेभिरङ्क्तां दिव्यं नभो गच्छतु यत् स्वाहा॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે यत्-હવન કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો हविषा-હોમ કરવા યોગ્ય घृतेन-ઘી વગેરે સુગંધીયુક્ત પદાર્થોથી સંયુક્ત કરીને હવન કરશો, ત્યારે તે आदित्यैः-બાર મહિના वसुभिः-અગ્નિ વગેરે આઠ નિવાસસ્થાન અને मरुद्भिः-પ્રજાજનો સાથે મળીને સુખનો सम् अंक्ताम्-સારી રીતે પ્રકાશ કરશે.

इन्द्रः-સૂર્યલોક જે યજ્ઞમાં નાખેલ स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી સુગંધી વગેરે પદાર્થોયુક્ત હવિ संगच्छतु-પહોંચાડે છે, તેથી सम्-સારી રીતે મિશ્રિત થયેલ विश्वदेवेभिः-પોતાનાં કિરણોથી दिव्यम्-જે તેના પ્રકાશમાં એકત્ર થનાર नभः-જલને सम् अंक्ताम्-સારી રીતે પ્રકટ કરે છે. (૨૨)

ભાવાર્થ : યજ્ઞમાં શુદ્ધ કરેલ જે હવિ અગ્નિમાં હોમવામાં આવે છે, તે અન્તરિક્ષમાં વાયુ, જલ અને સૂર્યનાં કિરણોની સાથે મળીને ચોતરફ ફેલાઈને આકાશમાં રહેલ સર્વ પદાર્થોને દિવ્ય ગુણયુક્ત બનાવીને પ્રજાને નિરંતર સુખ આપે છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ ઉત્તમ સામગ્રી તથા શ્રેષ્ઠ સાધનો દ્વારા ત્રિવિધ યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૨૨)

कस्त्वा विमुञ्चति स त्वा विमुञ्चति कस्मै त्वा विमुञ्चति तस्मै त्वा विमुञ्चति।

पोषाय रक्षसां भागोसि॥ २३॥

પદાર્થ : कः-કોણ સુખ આપનાર યજમાન મનુષ્ય त्वा-યજ્ઞનો विमुञ्चति-ત્યાગ કરે છે ? કોઈ નહિ. જે યજ્ઞનો ત્યાગ કરે છે, त्वा-તેનો सः-યજ્ઞનું પાલન કરાવનાર - યજ્ઞસ્વરૂપ પરમેશ્વર પણ विमुञ्चति-ત્યાગ કરે છે.

જે યજ્ઞ કરનાર મનુષ્ય યજ્ઞદ્રવ્યોને યજ્ઞમાં નાખે છે, त्वा-તે कस्मै-શા માટે અગ્નિમાં विमुञ्चति-નાખે છે तस्मै-જેથી સર્વને સુખ પ્રાપ્ત થાય તથા पोषाय-પુષ્ટિ વગેરે ગુણો માટે त्वा-તે પદાર્થોને विमुञ्चति-

નાખે છે. જે પદાર્થો સર્વના ઉપકાર માટે યજ્ઞમાં સંયુક્ત કરવામાં આવતા નથી, તે રક્ષસામ્-દુષ્ટ પ્રાણીઓના ભાગઃ-અંશ અસિ-બને છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઈશ્વર દ્વારા વેદના માધ્યમથી આપેલ આજ્ઞાના વ્યવહારનો ત્યાગ કરે છે, તે સર્વ સુખોથી હીન બનીને, દુષ્ટોથી પીડિત થઈને સદા દુઃખી થાય છે.

કોઈએ પૂછ્યું કે - જે યજ્ઞનો ત્યાગ કરે છે, તેનું શું થાય છે ? ઉત્તર મળ્યો - ઈશ્વર પણ તેનો ત્યાગ કરે છે.

તેણે ફરી પૂછ્યું - કયા પ્રયોજન માટે તેનો ત્યાગ કરે છે ? ઉત્તર - દુઃખ ભોગવવા માટે.

જે ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, તે સુખોથી યુક્ત - પુષ્ટ રહે છે; અને જે તેની આજ્ઞાનો ત્યાગ કરે છે, તે રાક્ષસ કહેવાય છે. (૨૩)

सं वर्चसा पयसा सन्तनूभिरगन्महि मनसा सꣳशिवेन।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनुमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम्॥ २४॥

પદાર્થ : અમે પુરુષાર્થી બનીને વર્ચ્ચસા-જેમાં સર્વ પદાર્થો પ્રકાશિત બને છે, તે વેદાધ્યયનથી પયસા-જેનાથી સર્વ પદાર્થો જાણી શકાય છે, તે જ્ઞાનથી મનસા-જેનાથી સર્વ વ્યવહાર વિચારી શકાય છે, તે અન્તઃકરણથી શિવેન-સર્વ સુખ અને તનૂભિઃ-જેમાં વિપુલ સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તે શરીરોની સાથે રાયઃ-શ્રેષ્ઠ વિદ્યા અને ચક્રવર્તી રાજ્યાદિ ધન સમગન્મહિ-પ્રાપ્ત કરીએ. સુદત્રઃ-સારી રીતે સુખ આપનાર, ત્વષ્ટા-સર્વ દુઃખોને તથા પ્રલયકાલમાં સર્વ પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનાર ઈશ્વર કૃપા કરીને અમારા માટે રાયઃ-વિદ્યાદિ પદાર્થોને સંવિદધાતુ-સારી રીતે સંયુક્ત રાખે. અમારા તન્વઃ-શરીરની યત્-જેટલી વિલિષ્ટમ્-વ્યવહારોની સિદ્ધિ કરવાની પરિપૂર્ણતા છે, તેને સમ્ અનુમાર્ષ્ટુ-સારી રીતે નિરંતર શુદ્ધ કરે. (૨૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ કામનાઓને પૂર્ણ કરનાર ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન તથા ઉત્તમ પુરુષાર્થ દ્વારા વિદ્યા-અધ્યયન, વિજ્ઞાન, શરીરબળ, મનની શુદ્ધિ, કલ્યાણની પ્રાપ્તિ અને સર્વોત્તમ લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ હંમેશાં કરવી જોઈએ. તથા સર્વ વ્યવહાર અને પદાર્થોને નિત્ય શુદ્ધ રાખવા જોઈએ. (૨૪)

दिवि विष्णुर्व्यक्रꣳस्त जागतेन च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मोऽन्तरिक्षे विष्णुर्व्यक्रꣳस्त त्रैष्टुभेन च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः। पृथिव्यां विष्णुर्व्यक्रꣳस्त गायत्रेण च्छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मोऽस्मादन्नादस्यै प्रतिष्ठाया अगन्म स्वः सं ज्योतिषाभूम॥ २५॥

પદાર્થ : जागतेन-સર્વને સુખદાતા, छन्दसः-આહ્લાદકારક જગતી છંદ અને અનુષ્ઠાન કરેલ આ विष्णुः-અન્તરિક્ષમાં સ્થિત પદાર્થોમાં વ્યાપક યજ્ઞ दिवि-સૂર્ય પ્રકાશમાં व्यक्रं स्त-જાય છે, પછી ततः-ત્યાંથી निर्भक्तः-વિભાગ અર્થાત્ પરમાણુરૂપ બનીને સર્વ જગતને તૃપ્ત કરે છે. यः-જે વિરોધી શત્રુ

अस्मान्-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનારા અમારા લોકોનો द्वेष्टि-વિરોધ કરે છે; च-તથા यम्-દંડ આપીને શિક્ષા કરવા યોગ્ય જે દુષ્ટ પ્રાણીથી वयम्-અમે યજ્ઞના અનુષ્ઠાન કરનારાઓ द्विष्मः-અપ્રીતિ - વિરોધ કરીએ છીએ અને તેને યજ્ઞથી દૂર કરીએ છીએ.

અમે જે विष्णुः-યજ્ઞને त्रैष्टुभेन-ત્રણ પ્રકારથી કરનાર અને छन्दसा-સ્વતંત્રતા આપનાર ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી અગ્નિમાં સારી રીતે સંયુક્ત કરેલ છે તે अन्तरिक्षे-આકાશમાં व्यक्रंस्त-પહોંચીને ત્યાંથી ફરી ततः-તે અન્તરિક્ષથી निर्भक्तः-પૃથક્ થઈને વાયુ અને વર્ષા જલની શુદ્ધિ દ્વારા સર્વ સંસારને સુખી કરે છે. यः-જે દુઃખ આપનાર પ્રાણી अस्मान्-સર્વના ઉપકારક અમોને द्वेष्टि-દુઃખ આપે છે च-તથા यम्-સર્વના અહિત કરનારા દુષ્ટોને वयम्-અમે સર્વના હિતકારી અમોને द्विष्मः-પીડા આપે છે તેને એ યજ્ઞથી દૂર કરીએ છીએ.

અમારા દ્વારા જે विष्णुः-યજ્ઞ गायत्रेण-સંસારની રક્ષા કરનાર અને छन्दसा-અતિ આનંદદાયક ગાયત્રી છંદથી નિરંતર કરવામાં આવે છે, તે पृथिव्याम्-વિશાળ પૃથિવીમાં व्यक्रंस्त-વિવિધ સુખોની પ્રાપ્તિ માટે ફેલાય છે. ततः-તે પૃથિવીથી निर्भक्तः-પૃથક્ થઈને અન્તરિક્ષમાં જઈને પૃથિવીના પદાર્થોની પુષ્ટિ કરે છે. यः-જે પુરુષ અમારા રાજ્યના વિરોધી अस्मान्-અમે ન્યાય કરનાર છીએ તેનાથી द्वेष्टि-વેર કરે છે; च-તથા यम्-જે શત્રુથી वयम्-અમે ન્યાયાધીશ द्विष्मः-વેર કરે છે તેને એ યજ્ઞથી રોકીએ છીએ.

અમે अस्मात्-એ યજ્ઞથી પ્રત્યક્ષ શુદ્ધ કરેલ अन्नात्-ભોજન કરવા યોગ્ય અન્નથી स्वः-સુખરૂપી સ્વર્ગને अगन्म-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ.

अस्यै-એ પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત થનારી प्रतिष्ठायै-પ્રતિષ્ઠા અર્થાત્ સન્માન માટે ज्योतिषा-વિદ્યા અને ધર્મનો પ્રકાશ કરનાર પરમેશ્વરની સાથે समभूम-સદા સંયુક્ત રહે. (૨૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય દ્વારા જેટલાં સુગંધી વગેરે ગુણયુક્ત દ્રવ્યો અગ્નિમાં નાખવામાં આવે છે, તે સૂક્ષ્મ થઈને સૂર્ય-પ્રકાશ, આકાશ અને ભૂમિમાં વિચરણ કરીને સર્વ સુખોને સિદ્ધ - પ્રાપ્ત કરાવે છે.

જે વાયુ, અગ્નિ, જલ, પૃથિવી વગેરે પદાર્થો, શિલ્પ વિદ્યાથી સિદ્ધ કલાયન્ત્રો દ્વારા વિમાન વગેરે યાનોમાં પ્રયુક્ત કરવામાં આવે છે, તે સૂર્યપ્રકાશ અને અંતરિક્ષમાં સર્વ પ્રાણીઓને સુખપૂર્વક વિહાર કરાવે છે.

જે દ્રવ્યો સૂર્ય કિરણો અને અગ્નિ દ્વારા સૂક્ષ્મ બનીને અન્તરિક્ષમાં અને ત્યાર પછી પૃથિવી પર આવીને, ફરી ભૂમિ પરથી ઉપર જઈને ફરી ત્યાંથી આવે છે.

આ રીતે મનુષ્યોએ વારંવાર પુરુષાર્થ દ્વારા દોષો, દુઃખો અને શત્રુઓનું સારી રીતે નિવારણ કરીને સ્વયં સુખનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ તથા અન્યોને કરાવવો જોઈએ.

યજ્ઞ દ્વારા શુદ્ધ કરેલ વાયુ, જલ, ઔષધિ અને અન્ન દ્વારા આરોગ્ય, બુદ્ધિ અને શારીરિક બળની વૃદ્ધિ કરીને, મહાન સુખ પ્રાપ્ત કરીને વિદ્યાના પ્રકાશથી નિત્ય પ્રતિષ્ઠા પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૨૫)

स्वयंभूरसि श्रेष्ठो रश्मिर्वर्चोदाऽअसि वर्चो मे देहि। सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते॥ २६ ॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન ! આપ श्रेष्ठः-અત્યંત પ્રશંસનીય, रश्मिः-પ્રકાશક તથા પ્રકાશમાન स्वयंभूः- સ્વયંભૂ, અનાદિ સ્વરૂપ असि-છો. તથા वर्च्चोदा-વિદ્યા દાતા असि-છો. તેથી આપ मे-મને वर्च्चः-વિજ્ઞાન અને પ્રકાશ देहि-આપો. सूर्यस्य-આપ ચરાચર જગતના આત્મા છો, તેમાં आवृतम्-નિરંતર સજ્જન લોકો વર્તમાન રહે છે. હું તે ઉપદેશનો अन्वावर्ते સ્વીકાર કરું છું. (૨૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરનાં તથા જ્ઞાનવાન - ચેતન જીવનાં કોઈ માતા-પિતા નથી. પરંતુ તે પરમેશ્વર જ સર્વના માતા-પિતા છે. એથી ઉત્તમ પ્રકાશનું કારણ તથા વિદ્યા પ્રદાન કરનાર અન્ય કોઈ નથી. આથી સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર અને વિદ્વાનની આજ્ઞામાં વર્તવું જોઈએ. (૨૬)

अग्ने॑ गृहपते सुगृहपतिस्त्वया॑ऽग्ने॒ऽहं गृह॒पतिना भूयास॑ꣳसुगृहप॒तिस्त्वं मया॑ऽग्ने गृह॒पतिना भूयाः। अ॒स्थूरि णौ॒ गार्ह॑पत्यानि सन्तु श॒तꣳ हिमा॒ः सूर्य॑स्या॒वृत॒मन्वावर्ते॥ २७॥

પદાર્થ : હે गृहपते-ઘરનું પાલન કરનાર अग्ने-પરમેશ્વર તથા વિદ્વાન त्वम्-આપ सुगृहपतिः-બ્રહ્માંડ, શરીર અને નિવાસનાં ઘરોના શ્રેષ્ઠ પાલનહાર असि-છો, તે गृहपतिना-શ્રેષ્ઠ ગુણવાન त्वया-આપની સાથે अहम्-હું सुगृहपतिः-મારું પોતાનું ઘર સારી રીતે ચલાવનાર भूयासम्-બનું.

હે પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન मया-હું શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનાર गृहपतिना-ધર્માત્મા અને પુરુષાર્થી મનુષ્ય છું. મને ઉપાસનાથી પ્રાપ્ત થયેલ મારા ઘરના આપ પાલનહાર भूयाः-બનો. આ રીતે नौ-અમે સ્ત્રી-પુરુષ ઘરના પતિ છીએ. જે અમારા गार्हपत्यानि-અર્થાત્ ગૃહપતિના સંયોગથી ઘરનાં કામ સિદ્ધ થાય છે, તે अस्थूरि-આળસ રહિત સિદ્ધ सन्तु-થાય.

આ રીતે અમે સ્ત્રી-પુરુષ વર્તન કરતાં सूर्यस्य-આપ અને વિદ્વાનના आवृतम्-વર્તમાન અર્થાત્ જેમાં સારી રીતે રાત-દિવસ બને છે, તેમાં शतं हिमाः-સો વર્ષ અથવા સો વર્ષથી અધિક વર્તીએ. (૨૭)

ભાવાર્થ : અમે બંને સ્ત્રી-પુરુષ પુરુષાર્થી બનીને, જે સર્વ પદાર્થોની સ્થિતિ યોગ્ય સંસારરૂપી ગૃહના નિરંતર રક્ષક જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન છે, તેનો આશ્રય કરીને ભૌતિક અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી, સ્થિર સુખોને કરનાર સર્વ કાર્ય સિદ્ધ કરીને, સો વર્ષ સુધી જીવીએ અને જિતેન્દ્રિયતાથી સો વર્ષથી પણ અધિક સુખપૂર્વક જીવનનો ઉપભોગ કરીએ. (૨૭)

अग्ने॑ व्रतपते व्र॒तम॑चारिषं॒ तद॑शकं॒ तन्मे॑ऽराधी॒दम॒हं यऽए॒वाऽस्मि॒ सो॒ऽस्मि॥ २८॥

પદાર્થ : હે व्रतपते-ન્યાયોચિત્ કર્મોના પતિ ! अग्ने-સત્ય સ્વરૂપ પરમેશ્વર ! આપ કૃપા કરીને मे-મારા માટે व्रतम्-સત્ય લક્ષણ અને પ્રસિદ્ધ નિયમોયુક્ત સત્યાચરણ વ્રતને अराधि-સારી રીતે સિદ્ધ કર્યું છે. तत्-તે સ્વ આચરણ કરવા યોગ્ય સત્ય નિયમને अशकम्-સારી રીતે આચરવા સમર્થ બનું. अचारिषम्-તેવો મને બનાવો. यः-મેં જે ઉત્તમ અને અધમ કર્મો કર્યાં છે तदेवाहम्-તેને ભોગવું છું. હજી જેવાં કર્મ હું કરનાર अस्मि-છું તેવાં કર્મનાં ફળ ભોગનાર अस्मि-બનું છું

ભાવાર્થ : મનુષ્યે એ નિશ્ચય કરવો જોઈએ કે, હું જે કર્મ કરું છું, તેવું પરમેશ્વરની વ્યવસ્થા દ્વારા ફળ ભોગવું છું અને ભોગવીશ.

કોઈ પણ જીવને - પ્રાણીને પોતાના કર્મથી વિરુદ્ધ - અધિક કે ન્યૂન ફળ પ્રાપ્ત થતું નથી. આથી સુખરૂપ ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે ધર્માનુસાર કર્મો કરવાં જોઈએ, જેથી કદી દુઃખ પ્રાપ્ત થાય નહિ. (૨૮)

अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा सोमाय पितृमते स्वाहा।
अपहताऽअसुरा रक्षांꣳसि वेदिषदः॥ २९॥

પદાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે કે कव्यवाहनाय-વિદ્વાનોનું હિત કરનારા, કર્મોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા તથા अग्नये-સર્વ પદાર્થોને ભસ્મ કરીને દેશાન્તરમાં પ્રાપ્ત કરાવનાર ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ કરીને સુખ માટે स्वाहा-વેદવાણીથી पितृमते-જેમાં વસંત વગેરે ઋતુ પાલનમાં હેતુ હોવાથી પિતર સંયુક્ત રહે છે. सोमाय-જેમાં ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર સોમલતા માટે स्वाहा-પોતાના પદાર્થોને ધારણ કરનાર ધર્મયુક્ત વિધાન કરીને જે वेदिषदः-પૃથિવીમાં રહેનાર रक्षांसि-અન્યોને દુઃખ આપનાર સ્વાર્થી જનો તથા असुराः-દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત મૂર્ખ છે, તેમનો अपहताः-વિનાશ કરી દેવો જોઈએ.(૨૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો દ્વારા યુક્તિપૂર્વક પ્રયોગ કરવામાં આવેલ એ અગ્નિ શિલ્પીજનોનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. જેથી સંસારના ઉપકારથી સર્વ સુખ અને પૃથિવી પર દુષ્ટજનો તથા દોષોની નિવૃત્તિ થાય, એવો વિદ્વાનોએ નિત્ય પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૨૯)

ये रूपाणि प्रतिमुञ्चमानाऽसुराः सन्तः स्वधया चरन्ति ।
परापुरो निपुरो ये भरन्त्यग्निष्टाँल्लोकात् प्रणुदात्यस्मात्॥ ३०॥

પદાર્થ : ये-જે મનુષ્ય रूपाणि-પોતાના અન્તઃકરણમાં જે જ્ઞાન છે તેને प्रतिमुञ्चमानाः-છુપાવે છે અને વિપરીત ભાવને પ્રકટ કરે છે, અર્થાત્ પોતાના અસલ રૂપને છુપાવે છે. असुराः-ધર્મનો લોપ सन्तः-કરે છે, અસુર બનીને स्वधया-પૃથિવી પર चरन्ति-વિચરે છે.

જે परापुरः-સ્વાર્થી, પોતાના સુખ માટે અધર્મનાં કાર્યો કરનાર निपुरः-નીચ, દુષ્ટ સ્વભાવયુક્ત જનોની સહાયતા કરનાર सन्तः-અન્યાયથી બીજાના પદાર્થો પડાવનાર છે तान्-તે દુષ્ટોને अग्निः-જગદીશ્વર अस्मात्-પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ લોકથી प्रणुदाति-દૂર કરે. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે દુષ્ટ મનુષ્ય મન, શરીર, વાણીથી મિથ્યા આચરણ કરીને, પૃથિવી પર અન્યાયથી અન્ય પ્રાણીઓને પીડા આપીને, પોતાના સુખ માટે પારકાના પદાર્થોનો સંગ્રહ કરે છે, ઈશ્વર તેને દુઃખયુક્ત કરે છે અને નીચ યોનિમાં જન્મ આપે છે. જે પાપનાં ફળો ભોગવીને ફરી મનુષ્ય શરીર ધારણ કરવા યોગ્ય બને છે. જેથી મનુષ્યોએ એવા લોકોથી અને પાપકર્મોથી હંમેશાં દૂર રહીને ધર્મનું સેવન કરવું જોઈએ. (૩૦)

अत्र पितरो मादयध्वं यथभागमावृषायध्वम्।
अमीमदन्त पितरो यथाभागमावृषायिषत॥ ३१॥

પદાર્થ : હે पितरः-ઉત્તમ વિદ્યા તથા ઉત્તમ શિક્ષા અને વિદ્યાદાન દ્વારા પાલન કરનારા વિદ્વાનો ! अत्र-અમારા સત્કારયુક્ત વ્યવહાર અથવા સ્થાનમાં यथाभागम्-યથાયોગ્ય પદાર્થોના ભાગને आवृषायध्वम्-જેમ બળદ પોતાની પાસે નીરેલું ઘાસ આનંદથી આરોગે છે, તેમ સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો અને मादयध्वम्-આનંદિત બનો. તથા જેવી રીતે અમે यथाभागम्-યથાયોગ્ય પોતાની બુદ્ધિને અનુકૂળ ગુણ વિભાગને પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, તેમ તમે आवृषायिषत-વિદ્યા અને ધર્મનું રક્ષણ કરો અને अमीयदन्त-સર્વને આનંદ આપો.

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - માતા-પિતા આદિ, વિદ્વાન અધ્યાપક, ધર્માત્મા તથા અન્ય પિતૃજન - એ લોકો સમીપ રહેતા હોય અથવા અન્ય સ્થાનથી આવતા હોય, ત્યારે તેમને જોઈને આમ પ્રાર્થનાપૂર્વક વાક્યો કહેવાં અને સેવા કરવી જોઈએ.

હે અમારા પિતૃજનો ! આપનું સ્વાગત છે, આપ અમારી સમીપ પધારો અને અમારા દ્વારા પ્રદાન કરેલ યથાયોગ્ય ભોગ્ય પદાર્થો તથા આસન વગેરે સ્વીકાર કરીને સુખને પ્રાપ્ત કરો. જે-જે આપની આવશ્યક વસ્તુ હોય, તે લાવવાની આજ્ઞા કરો.

આ રીતે અમારા સત્કારને પ્રાપ્ત કરીને આપ અમોને પ્રશ્ન-ઉત્તર રીતિથી, સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મ વિદ્યાથી તથા ધર્મના ઉપદેશથી ઉન્નત કરો. આપના સદુપદેશથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત અમે લોકો નિત્ય ઉત્તમ ક્રિયાઓ સ્વયં કરીને, અન્યોને કરાવીને, સર્વ પ્રાણીઓની સુખ અને વિદ્યાની ઉન્નતિ નિત્ય કરીએ. (૩૧)

नमो॑ वः पितरो॒ रसा॑य॒ नमो॑ वः पितरः॒ शोषा॑य॒ नमो॑ वः पितरो जी॒वाय॒ नमो॑ वः पितरः॒ स्व॒धायै॒ नमो॑ वः पितरो घो॒राय॒ नमो॑ वः पितरो म॒न्यवे॒ नमो॑ वः पितरः॒ पित॑रो॒ नमो॑ वो गृहान्नः॑ पितरो दत्त स॒तो वः॑ पितरो देष्मै॒तद्वः॑ पितरो॒ वास॑ः ॥ ३२ ॥

પદાર્થ : હે पितरः-વિદ્યાનો આનંદ આપનારા વિદ્વાનો ! रसाय-વિજ્ઞાનરૂપી આનંદની પ્રાપ્તિ માટે वः-તમને અમારા नमः-નમસ્કાર છે.

હે पितरः-દુઃખનાશક અને રક્ષક વિદ્વાનો ! शोषाय-દુઃખ અને શત્રુઓની નિવૃત્તિ માટે वः-તમને અમારા नमः-નમસ્કાર છે.

હે पितरः-ધર્માનુસાર જીવિકાનું જ્ઞાન આપનાર વિદ્વાનો ! जीवाय-જેથી પ્રાણ ધારણ થાય છે તે જીવિકા માટે वः-તમને અમારા नमः-નિરાભિમાનતાપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે पितरः-વિદ્યા, અન્ન વગેરે ભોગોની શિક્ષા આપનાર વિદ્વાનો स्वधायै-અન્ન, પૃથિવી, રાજ્ય અને ન્યાયનો પ્રકાશ કરવા માટે वः-તમને અમારા नमः-સુશીલતાપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે पितरः-પાપ અને આપત્કાલના નિવારક વિદ્વાનો घोराय-દુઃખ સમૂહની નિવૃત્તિ માટે वः-તમને અમારા नमः-નમ્રતાપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે पितरः-શ્રેષ્ઠોના પાલક વિદ્વાનો ! मन्यवे-દુષ્ટાચરણ કરનાર દુષ્ટ જીવો પર ક્રોધ કરવા માટે वः-

તમને અમારા नमः-ક્રોધત્યાગપૂર્વક નમસ્કાર છે.

હે पितरः-જ્ઞાની વિદ્વાનો ! वः-તમને વિદ્યા માટે नमः-અમારી વિજ્ઞાન ગ્રહણની ઈચ્છા માટે નમસ્કાર છે.

હે पितरः-પ્રેમપૂર્વક રક્ષા કરનાર વિદ્વાનો ! वः-તમારા સત્કાર માટે અમારા नमः-સત્કારપૂર્વક નમસ્કાર છે. આપ नः-અમારા गृहान्-ઘેર નિત્ય આવો અને આવીને રહો.

હે पितरः-વિદ્યાદાતા વિદ્વાનો ! नः-અમારા માટે શિક્ષા અને વિદ્યા નિત્ય दत्त-આપતા રહો.

હે [पितरः]- માતા-પિતાદિ વિદ્વાનો ! અમે वः-આપને માટે જે-જે सतः-પદાર્થો વિદ્યમાન છે તે નિત્ય देष्म-આપીએ.

હે पितरः-સેવા કરવા યોગ્ય પિતૃજનો ! અમારા દ્વારા આપેલા वासः-વસ્ત્રાદિને ગ્રહણ કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં અનેક 'नमः' શબ્દ અનેક શુભ ગુણો તથા સત્કાર દર્શક છે. જેમ કે વસંત, ગ્રીષ્મ, વર્ષા, શરદ્, હેમંત, શિશિર એ છ ઋતુઓ ક્રમશઃ રસ, શોષણ, જીવન, અન્ન, ઘનત્વ અને ક્રોધને ઉત્પન્ન કરનાર છે.

એ જ રીતે પિતરજનો અનેક વિદ્યાઓના ઉપદેશોથી મનુષ્યોને નિરંતર તૃપ્ત કરે છે. તેઓનો ઉત્તમ પદાર્થોથી સત્કાર કરીને, તેઓથી નિરંતર વિદ્યા અને ઉપદેશોને ગ્રહણ કરવાં જોઈએ. (૩૨)

आधत्त पितरो गर्भं कुमारं पुष्करस्त्रजम्। यथेह पुरुषोऽसत्॥ ३३॥

પદાર્થ : હે पितरः-વિદ્યાદાનથી રક્ષા કરનારા વિદ્વાનો ! આપ यथा-જેમ આ બ્રહ્મચારી इह-આ સંસારમાં અથવા અમારા કુળમાં પોતાના શરીર અને આત્માના બળને પ્રાપ્ત કરીને વિદ્યા અને પુરુષાર્થયુક્ત મનુષ્ય असत्-બનો, તેમ गर्भम्-ગર્ભની સમાન पुष्करस्त्रजम्-વિદ્યાગ્રહણ કરવા માટે માળા ધારણ કરેલા कुमारम्-બ્રહ્મચારીનો आधत्त-સારી રીતે સ્વીકાર ધારણ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - વિદ્વાન પુરુષો અને વિદુષી દેવીઓ ક્રમશઃ વિદ્યાના અભિલાષી કુમારો તથા કુમારીકાઓને વિદ્યાદાન માટે ગર્ભની સમાન ધારણ કરે. જેમ ગર્ભમાં ક્રમશઃ શરીરની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ અધ્યાપક લોકો ઉત્તમ શિક્ષાથી કુમાર અને કુમારિકાઓની સદ્‌વિદ્યામાં વૃદ્ધિ કરે તથા તેમનું પાલન કરે. જેથી વિદ્યા દ્વારા ધાર્મિક અને પુરુષાર્થી બનીને હંમેશાં સુખી રહે. તેવું સદા અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૩૩)

ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्त्रुतम्।
स्वधा स्थ तर्पयत मे पितॄन्॥ ३४॥

પદાર્થ : હે પુત્રાદિ જનો ! તમે मे-મારા पितॄन्-પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત પિતરોને ऊर्जम्-અનેક પ્રકારના શ્રેષ્ઠતમ રસ वहन्तीः-સુખદાયક સ્વાદિષ્ટ જલ अमृतम्-સર્વ રોગનાશક ઔષધિ, મિષ્ઠાન્ન પદાર્થો पयः-દૂધ घृतम्-ઘી कीलालम्-ઉત્તમ રીતે પકાવેલ પવિત્ર અન્ન તથા परिस्रुतम्-રસ ઝરતાં પાકાં ફળો આપીને

तर्पयत-તૃપ્ત કરો. આ રીતે તેના સેવનથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને स्वधाः-પરધનનો ત્યાગ કરીને પોતાના ધનનું સેવન કરનાર स्थ-બનો. (૩૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર આજ્ઞા આપે છે કે - મનુષ્ય પોતાના પુત્ર, નોકર વગેરેને આ રીતે આદેશ આપે કે, તમે લોકોએ આપણાં માતા-પિતા તથા વિદ્યાદાતા પિતૃજનોની પ્રેમપૂર્વક નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. જેમ તેઓએ બાલ્યાવસ્થા તથા વિદ્યા ભણાવવા સમયે આપણું પાલન કરેલ છે, તેમ આપણે પણ તેઓનો હંમેશાં સર્વ પ્રકારે સત્કાર કરવો જોઈએ. જેથી આપણામાં ક્યારેય વિદ્યાનાશ અને કૃતઘ્નતાનો દોષ ઉત્પન્ન ન થાય.

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : ઈશ્વરે આ અધ્યાયમાં જે-જે વેદી વગેરેની રચના (૧), યજ્ઞની ફળ પ્રાપ્તિનાં સાધનો (૨), યજ્ઞ સામગ્રીનું ધારણ (૩), અગ્નિના દૂતકર્મનું પ્રકાશન (૯), આત્મા અને ઈન્દ્રિય વગેરેની શુદ્ધિ (૧૦), સુખોનો ભોગ (૧૧), વેદોનો પ્રકાશ (૧૨), પુરુષાર્થની સિદ્ધિ (૧૪), યુદ્ધમાં વિજય (૧૫) શત્રુનું નિવારણ (૧૫), દ્વેષનો ત્યાગ (૧૫), અગ્નિ વગેરે પદાર્થોનો યાનોમાં પ્રયોગ (૧૭), ઈશ્વરમાં પ્રીતિ (૧૮), પૃથિવી વગેરેથી ઉપકાર લેવો (૧૯), દિવ્ય ગુણોનો વિસ્તાર (૧૯), સર્વની રક્ષા (૨૦), વેદ શબ્દના અર્થનું વર્ણન (૨૧), વાયુ, અગ્નિ વગેરે પદાર્થોને પરસ્પર મેળવવા (૨૨), પુરુષાર્થનું ગ્રહણ (૨૪), ઉત્તમ પદાર્થોનો સ્વીકાર કરવો (૨૪), યજ્ઞમાં હોમ કરેલ પદાર્થોનું ત્રણે લોકમાં જવું અને ફરી ત્યાંથી આવવું (૨૫), સ્વયંભૂ શબ્દના અર્થનું વર્ણન (૨૬), ગૃહસ્થોનું કર્તવ્ય (૨૭), સત્યનું આચરણ (૨૮), અગ્નિમાં હવન કરવો (૨૯), દુષ્ટોનું નિવારણ (૩૭) અને પિતરજનોની સેવા (૩૧-૩૪)નો ઉપદેશ કરેલ છે. તેનું મનુષ્યોએ પ્રેમપૂર્વક સેવન કરવું જોઈએ. આ પ્રમાણે પ્રથમાધ્યાયના અર્થ સાથે દ્વિતીયાધ્યાયના અર્થની સંગતિ સમજવી જોઈએ.

॥ इति द्वितीयोऽध्यायः ॥



॥ अथ तृतीयोऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥

स॒मिधा॒ग्निं दु॑वस्यत घृ॒तैर्बो॑धय॒ताति॑थिम्। आस्मि॑न् ह॒व्या जु॑होतन॥ १॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે समिधा-સારી રીતે અગ્નિને પ્રદીપ્ત કરનાર સમિધાથી શુદ્ધ સુગંધી વગેરેથી યુક્ત ઘૃત વગેરેથી તથા યાનો-વાહનોમાં જળ-વરાળ વગેરેથી अग्निम्-ભૌતિક અગ્નિને बोधयत- પ્રદીપ્ત કરો તથા જેની अतिथिम्-આવવા જવાની તિથિ નક્કી નથી તે સંન્યાસી વગેરે અતિથિની સમાન તે અગ્નિનું दुवस्यत-સેવન કરો.

अस्मिन्-એ અગ્નિમાં हव्या-હોમ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યો જેવાં કે કેસર-કસ્તૂરી વગેરે સુગંધી, ગોળ-સાકરાદિ મધુર, ઘૃત-દૂધાદિ પુષ્ટ અને રોગનાશક ગળો તથા સોમલતાદિ ઔષધિ - એ ચાર પ્રકારના સાકલ્ય દ્વારા आ + जुहोतन-ઉત્તમ રીતિથી હોમ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ ગૃહસ્થ લોકો આસન, અન્ન, જળ, વસ્ત્ર અને પ્રિયવચન વગેરેથી ઉત્તમ ગુણયુક્ત અતિથિની સેવા કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ યજ્ઞવેદી, કલાયંત્ર તથા યાનોમાં અગ્નિ સ્થાપિત કરીને યથાયોગ્ય બળતણ, ઘૃત, જળ વગેરેથી પ્રજ્વલિત કરીને વાયુ, વર્ષા જલની શુદ્ધિ તથા યાન સંબંધી કાર્ય નિત્ય કરવા જોઈએ - તેનાં દ્વારા સંસારનો ઉપકાર કરવો જોઈએ. (૧)

सुस॑मिद्धाय शो॒चिषे॑ घृ॒तं ती॒व्रं जु॑होतन। अ॒ग्नये॑ जा॒तवे॑दसे॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે सुसमिद्धाय-સારી રીતે પ્રજ્વલિત, शोचिषे-શુદ્ધ, દોષ નિવારક, जातवेदसे-સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન अग्नये-રૂપ, દાહ, પ્રકાશ, છેદન વગેરે ગુણ-સ્વભાવયુક્ત અગ્નિમાં तीव्रम्-સર્વ દોષોનું નિવારણ કરવામાં તીક્ષ્ણ સ્વભાવયુક્ત घृतम्-ઘૃત, મધુર વગેરે પદાર્થોનો जुहोतन-સારી રીતે હોમ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ આ પ્રજ્વલિત અગ્નિમાં શીઘ્ર દોષ-નિવારક અને શુદ્ધ કરેલ પદાર્થોનો હોમ કરીને સર્વ સુખોને સિદ્ધ - પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૨)

तं त्वा॑ स॒मिद्भि॑रङ्गिरो घृ॒तेन॑ वर्द्धयामसि। बृ॒हच्छो॑चा यविष्ठ्य॥ ३॥

પદાર્થ : અમે લોકો જે अङ्गिरः-સુખદાયક, અત્યંત યુવા यविष्ठ्य પદાર્થોને પૃથક્ કરવામાં અતિ બળવાન बृहत्-મહાન તેજથી યુક્ત शोच-પ્રકાશ કરે છે, त्वा-તે ભૌતિક અગ્નિની समिद्भिः-સમિધા તથા घृतेन-ઘૃત વગેરેથી પ્રદીપ્ત કરીને वर्धयामसि-વૃદ્ધિ કરીએ છીએ. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ગુણોના કારણે મહાન પૂર્વોક્ત અગ્નિ છે, તેને હોમ અને શિલ્પવિદ્યાની સિદ્ધિ - પ્રાપ્તિ માટે બળતણ વગેરે સાધનો દ્વારા પ્રજ્વલિત કરીને નિત્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩)

उप॑ त्वाग्ने ह॒विष्म॑तीर्घृ॒ताची॑र्यन्तु हर्यत। जु॒षस्व॑ स॒मिधो॒ मम॑॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે हर्यत-સુખદાયક, કામના કરવા યોગ્ય अग्ने-અગ્નિ છે, તે मम-મારા समिधः-સમિધા વગેરે સામગ્રીનું जुषस्व-સેવન કરે છે. જેમ तम्-તે અગ્નિ સમિધા - ઘૃતાદિ પદાર્થો यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે हविष्मतीः-શ્રેષ્ઠ હવિ घृताचीः-ઘૃતાદિ પદાર્થોયુક્ત સમિધા વગેરેનો સંચય કરો. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યારે આ અગ્નિમાં સમિધાઓ તથા ઘૃત વગેરેની આહુતિઓ આપે છે, ત્યારે તે એને અતિ સૂક્ષ્મ કરીને વાયુ દ્વારા દેશાન્તરમાં પહોંચાડીને, દુર્ગંધ વગેરે દોષોનું નિવારણ કરીને સર્વને સુખ પ્રદાન કરે છે. (૪)

भूर्भुव॒: स्व॒: द्यौरि॑व भू॒म्ना पृ॑थि॒वीव॑ वरि॒म्णा।
तस्या॑स्ते पृथिवि देवयजनि पृ॒ष्ठेऽग्निम॑न्ना॒दम॒न्नाद्या॒याद॑धे॥ ५॥

પદાર્થ : હું अन्नाद्याय-ભક્ષણ કરવા યોગ્ય અન્ન માટે भूम्ना-વિભુ અર્થાત્ ઐશ્વર્યથી द्यौरिव-આકાશમાં સૂર્યસમાન वरिम्णा-સારા ગુણોથી पृथिवीव-વિશાળ ભૂમિ સમાન ते-પ્રત્યક્ષ અથવા तस्याः-અપ્રત્યક્ષ અર્થાત્ આકાશાદિ લોકમાં સ્થિત देवयजनि-દેવ - વિદ્વાનો જ્યાં યજ્ઞ કરે છે અથવા पृथिवी-ભૂમિના पृष्ठे-પટ પર भूः-ભૂમિ भुवः-અન્તરિક્ષ स्वः-દિવ અર્થાત્ પ્રકાશ સ્વરૂપ સૂર્યલોક તેની અન્તર્ગત સ્થિત તથા अन्नादम्-જવ વગેરે સર્વ અન્નોનું ભક્ષણ કરનાર अग्निम्-પ્રસિદ્ધ અગ્નિને आदधे-સ્થાપિત કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઈશ્વર-રચિત ત્રણે લોકોના ઉપકારક, પોતાની વ્યાપ્તિથી સૂર્યપ્રકાશ સમાન, શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પૃથિવી સમાન, પોત-પોતાના લોકોમાં સ્થિત એ અગ્નિના કાર્યની સિદ્ધિ માટે યત્નપૂર્વક ઉપયોગ કરો. (૫)

आयं गौः पृश्नि॑रक्रमी॒दस॑दन् मा॒तर॑ पु॒रः। पि॒तर॑ च प्र॒यन्त्स्व॑ः॥ ६॥

પદાર્થ : अयम्-આ પ્રત્યક્ષ गौः-ગોળરૂપ પૃથિવી पितरम्-પાલક स्वः-સૂર્યલોકની पुरः-આગળ-આગળ असदत्-ઘૂમે છે તથા मातरम्-પોતાની યોનિ - ઉત્પત્તિરૂપ જળની સાથે સહવર્તમાન प्रयन्-સારી રીતે ચાલતી पृश्निः-અન્તરિક્ષ - આકાશમાં आक्रमीत्-ચોતરફ ઘૂમે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જળ અને અગ્નિના નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થયેલ આ પૃથિવીનો ગોળો આકાશમાં પોતાની કક્ષામાં પોતાના રક્ષક સૂર્યના આકર્ષણથી પ્રતિક્ષણ ચોતરફ ઘૂમે છે. જેથી રાત-દિવસ, શુક્લ-કૃષ્ણપક્ષ, ઋતુ અને અયન વગેરેનો ક્રમશઃ કાલ વિભાગ બને છે. (૬)

अ॒न्तश्च॑रति रोच॒नास्य प्रा॒णाद॑पान॒ती। व्य॑ख्यन् महि॒षो दिव॑म्॥ ७॥

પદાર્થ : જે अस्य-આ અગ્નિની प्राणात्-બ્રહ્માંડ અને શરીરની વચ્ચે ઉપર જનારા વાયુથી अपानती-નીચે જનાર વાયુને ઉત્પન્ન કરતી रोचना-દીપ્તિ - પ્રકાશરૂપી વિદ્યુત્ अन्तः-બ્રહ્માંડ અને શરીરની વચ્ચે

चरति-ચાલે છે તે महिषः-પોતાના ગુણોથી મહાન અગ્નિ दिवम्-સૂર્યલોકને व्यख्यत्-પ્રકટ કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિ વિદ્યુત્ નામથી પ્રસિદ્ધ, સર્વના મધ્યમાં કાન્તિરૂપ રહેલ છે, તે પ્રાણ અને અપાનની સાથે સંયુક્ત થઈને, પ્રાણ, અપાન, અગ્નિ અને પ્રકાશની ગતિ વગેરે ચેષ્ટાઓના વ્યવહારોને પ્રકટ કરે છે, એમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૭)

त्रिꣳशद्धाम् विराजति वाक् पतङ्गाय धीयते। प्रति वस्तोरह द्युभिः॥ ८॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ જે અગ્નિ द्युभिः-પ્રકાશાદિ ગુણોથી प्रतिवस्तोः-પ્રતિદિન त्रिंशत्-અન્તરિક્ષ, આદિત્ય અને અગ્નિ સિવાયના પૃથિવી વગેરે જે ત્રીસ વસુ વગેરે દેવોનાં धाम-સ્થાન છે તેને विराजति-પ્રકાશિત કરે છે. તે पतङ्गाय-ચાલવા-ચલાવવા વગેરે ગુણોથી પ્રકાશયુક્ત અગ્નિ માટે प्रतिवस्तोः-પ્રતિદિન વિદ્વાનોએ अह-સારી રીતે वाक्-વાણી धीतये-અવશ્ય ધારણ કરવી જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે વાણી પ્રાણયુક્ત શરીરમાં સ્થિત વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ દ્વારા નિત્ય પ્રકાશિત થાય છે, તે અગ્નિના ગુણોને પ્રકાશિત કરવા માટે વિદ્વાનોએ તે વાણીનો ઉપદેશ અને શ્રવણ નિત્ય કરવાં જોઈએ. (૮)

अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा।
अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।
ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा॥ ९॥

પદાર્થ : अग्निः-પરમેશ્વર स्वाहा-સત્યવાણીને, ज्योतिः-વિજ્ઞાનપ્રકાશથી યુક્ત કરીને સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા આપે છે. એ રીતે अग्निः-જે પ્રસિદ્ધ અગ્નિ ज्योतिः-શિલ્પવિદ્યા સાધનોને પ્રકાશ આપે છે.

सूर्यः-જે ચરાચર સર્વ જગતનો આત્મા પરમેશ્વર ज्योतिः-સર્વના આત્મામાં પ્રકાશ અથવા જ્ઞાન તથા સર્વ વિદ્યાઓનો ઉપદેશ આપે છે કે स्वाहा-મનુષ્ય જેવું હૃદયથી જાણે છે, તેવું જ બોલે.

सूर्यः-પોતાના પ્રકાશથી પ્રેરણા માટે સૂર્યલોક ज्योतिः-મૂર્તિમાન પદાર્થોનો પ્રકાશ કરે છે.

अग्निः-સર્વ વિદ્યાઓના પ્રકાશક પરમેશ્વર મનુષ્યોને માટે वर्चः-સર્વ વિદ્યાઓની પ્રાપ્તિના સાધન ચારે વેદોને પ્રકટ કરે છે, જે ज्योतिः-શરીર અને બ્રહ્માંડમાં રહેલ વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ वर्चः-વિદ્યા અને વૃષ્ટિનો હેતુ છે. सूर्यः સર્વ વિદ્યા પ્રકાશક જગદીશ્વર સર્વ મનુષ્યો માટે स्वाहा-વેદવાણીથી वर्चः-બધી વિદ્યાનો પ્રકાશ અને ज्योतिः-વિદ્યુત્, સૂર્ય અને અગ્નિ નામના તેજનો પ્રકાશ કરે છે. જે सूर्यः-સૂર્યલોક પણ वर्चः-શરીર અને આત્માના બળનો પ્રકાશ કરે છે.

જે सूर्य :-પ્રાણવાયુ वर्चः-સકલ વિદ્યા પ્રકાશક જ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરે છે અને ज्योतिः-પ્રકાશસ્વરૂપ જગદીશ્વર સારી રીતે હવન કરેલા પદાર્થોને પોતાના રચેલા પદાર્થોમાં પોતાની શક્તિથી સર્વત્ર ફેલાવે છે. તે પરમાત્મા જ સર્વનો ઉપાસ્ય દેવ અને ભૌતિક અગ્નિ કાર્યસિદ્ધિનું સાધન છે. (૯)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં 'स्वाहा' શબ્દનો અર્થ નિરુક્તકારની પદ્ધતિથી ગ્રહણ કરેલ છે. ઈશ્વર કારણરૂપ - રૂપતન્માત્રા અગ્નિથી સ્થૂલ અગ્નિ જગતને પ્રકાશિત કરે છે. તેમાં અગ્નિ પોતાના પ્રકાશથી સ્વયંને

તથા પોતાથી ભિન્ન વિશ્વને પ્રકાશિત કરે છે.

પરમેશ્વર વેદો દ્વારા સંપૂર્ણ વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરે છે. એ રીતે અગ્નિ અને સૂર્ય પણ શિલ્પવિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરે છે. (૯)

सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या। जुषाणोऽअग्निर्वेतु स्वाहा।
सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या। जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा॥ १०॥

પદાર્થ : अग्निः-જે ભૌતિક અગ્નિ देवेन-સર્વ જગતને જ્ઞાન આપવા તથા सवित्रा-સર્વ જગતના ઉત્પાદક ઈશ્વરના રચેલા જગતની સાથે सजूः-સમાનરૂપમાં जुषाणः-સેવન કરતા इन्द्रवत्या-વીજળીથી યુક્ત रात्र्या-અંધકારરૂપ રાત્રિ સાથે स्वाहा-વાણીનું સેવન કરતાં वेतु-સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત થાય છે.

એ જ રીતે सूर्यः-જે સૂર્યલોક देवेन-સર્વ પ્રકાશક તથા सवित्रा-સર્વના અન્તર્યામી પરમેશ્વરના ઉત્પન્ન અને ધારણ કરેલા જગતની સાથે सजूः-સમાનરૂપમાં जुषाणः-સેવન કરતાં इन्द्रवत्या-સૂર્યપ્રકાશયુક્ત उषसा-પ્રાતઃકાલના પ્રકાશ સાથે स्वाहा-અગ્નિમાં હોમ કરેલી આહુતિઓનું जुषाणः-સેવન કરતાં વ્યાપ્ત થઈને હવન કરેલ પદાર્થોને वेतु-દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે. તેનાથી સર્વ વ્યવહાર સિદ્ધ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે આ અગ્નિ ઈશ્વરે રચેલ છે, તે તેની સત્તાથી પોતાના સ્વરૂપને ધારણ કરીને રાત્રિના વ્યવહારોને પ્રકાશિત કરે છે.

એ જ રીતે સૂર્ય ઉષા કાલને પ્રાપ્ત થઈને સર્વ મૂર્ત દ્રવ્યોને પ્રકાશિત કરવામાં સમર્થ બને છે. એમ તમે જાણો. (૧૦)

उपप्रयन्तोऽअध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्नये। आरेऽअस्मे च शृण्वते॥ ११॥

પદાર્થ : अध्वरम्-ક્રિયામય યજ્ઞને उपप्रयन्तः-સારી રીતે જાણીને અમે अस्मे-અમારાથી आरे-દૂર તથા च-નજીક शृण्वते-સાચું - ખોટું સાંભળનારા अग्नये-વિજ્ઞાનરૂપી અન્તર્યામી જગદીશ્વર છે. તેના માટે मन्त्रम्-જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવનાર મંત્રોનું वोचेम्-નિત્ય ઉચ્ચારણ અને વિચાર કરીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદ મંત્રો દ્વારા ઈશ્વરની સ્તુતિ અને યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને, જે ઈશ્વર અંદર અને બહાર વ્યાપક હોવાથી બધું સાંભળી રહેલ છે, માટે તેનાથી ડરીને ક્યારેય પણ અધર્મ કરવાની ઈચ્છા કરવી નહિ.

જ્યારે મનુષ્ય એ ઈશ્વરને જાણે છે ત્યારે તેની સમીપ સ્થિત છે, અને જ્યારે તેને જાણતો નથી ત્યારે તે દૂર રહેલ છે, તેમ માનવું જોઈએ. (૧૧)

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्। अपाᳬ रेताᳬसि जिन्वति॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે अयम्-જે કાર્યકારણથી પ્રત્યક્ષ ककुत्-સર્વથી મહાન मुर्द्धा-સર્વ ઉપર વિરાજમાન, अग्निः-સર્વના સ્વામી જગદીશ્વર दिवः-તે પ્રકાશમાન સૂર્યાદિ જગત તથા पृथिव्याः-

પ્રકાશરહિત પૃથિવી વગેરે જગતનું पतिः-રક્ષણ-પાલન કરીને अपाम्-પ્રાણ અને रेतांसि-વીર્ય - બળવાન जिन्वति-બનાવવાની રચના જાણે છે. તેથી તે જગદીશ્વરને પૂજ્ય માનો.

દ્વિતીય અર્થ : अयम्-જે પૂર્વોક્ત પ્રકાશાદિ ગુણોથી યુક્ત ભૌતિક અગ્નિ છે, તે ककुत्-મહાન છે. કારણ કે दिवः-પ્રકાશમાન સૂર્યાદિ જગત સર્વથી मूर्द्धा-ઉપર વિરાજમાન શિર છે અને पृथिव्याः-પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ જગતના पतिः-પાલનના હેતુ છે. કારણ કે તે પ્રાણો તથા अपाम्-જલોને रेतांसि-વીર્યને - બળને जिन्वति-ઉત્પન્ન કરે છે અને સર્વને સુખ પહોંચાડે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિ - ઈશ્વર પ્રકાશયુક્ત સૂર્ય વગેરે અને પ્રકાશરહિત પૃથિવી વગેરે બે પ્રકારનાં જગતની રચના તથા પાલન કરીને પ્રાણોમાં બળ સ્થાપિત કરે છે.

જે ભૌતિક અગ્નિ પૃથિવી વગેરે જગતના પાલનનો હેતુ છે તથા વિદ્યુત અને જઠરાગ્નિ રૂપ છે, તે પ્રાણો અને જળોના બળને ઉત્પન્ન કરે છે, તે ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિ સુખને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે. (૧૨)

उभा वामिन्द्राग्नीऽआहुवध्याऽउभा राधसः सह मादयध्यै।
उभा दातारविषाᳬंरयीणामुभा वाजस्य सातये हुवे वाम्॥ १३॥

પદાર્થ : હું જે उभा-બે दातारौ-સુખ આપનાર इन्द्राग्नी-વાયુ અને અગ્નિ છે. वाम्-તેના आहुवध्यै-ગુણ જાણવા માટે हुवे-ગ્રહણ કરું છું.

राधसः-ઉત્તમ સુખયુક્ત રાજ્યાદિ ધનોના ભોગની सह-સાથે मादयध्यै-આનંદ માટે वाम-તે उभा-બંનેને हुवे-ગ્રહણ કરું છું.

इषाम्-સર્વને ઈષ્ટ रयीणाम्-અત્યંત શ્રેષ્ઠ ચક્રવર્તી રાજ્યાદિ ધન તથા वाजस्य-અત્યંત શ્રેષ્ઠ અન્નનો सातये-સારી રીતે ઉપભોગ કરવા માટે उभौ-તે બન્ને - વાયુ અને અગ્નિને हुवे-ગ્રહણ કરું છું. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઈશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં નિશ્ચયપૂર્વક સારી રીતે અગ્નિ અને વાયુના ગુણોને જાણીને, તેનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને કાર્ય સિદ્ધ કરે છે, તે સાર્વભૌમ રાજ્યાદિ સમસ્ત ધનને પ્રાપ્ત કરીને નિત્ય પ્રસન્ન રહે છે, અન્ય નહીં. (૧૩)

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः।
तं जानन्नग्नऽआरोहाथा नो वर्द्धया रयिम्॥ १४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-જગદીશ્વર ! ते-આપની સૃષ્ટિમાં જે ऋत्वियः ઋતુ-ઋતુમાં પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય અગ્નિ અને વાયુથી जातः-પ્રસિદ્ધ થયેલા अरोचथाः-સર્વ પ્રકારથી પ્રકાશ કરે છે. તથા જે સૂર્ય વગેરે રૂપમાં પ્રકાશ કરનાર લોકોની आरोह-ઉન્નતિ કરે છે, ઊંચે ચઢી જાય છે. તે नः-અમારા रयिम्-રાજ્યાદિ ધનની વૃદ્ધિ કરે છે. तम्-તે અગ્નિને जानन्-જાણીને આપ તેનાથી नः-અમારા रयिम्-સર્વ ભૂગોળના રાજ્યાદિથી સિદ્ધ કરેલ ધનની वर्द्धय-વૃદ્ધિ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વકાલમાં યથાવત્ પ્રયોગ કરવા યોગ્ય છે, જે વાયુના કારણે ઉત્પન્ન થાય છે તથા જે અનેક કાર્યોની સિદ્ધિ કરનાર હોવાથી સર્વને સુખ આપનાર છે, તે [અગ્નિને] યથાવત્ જાણીને તથા તેનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને કાર્ય સિદ્ધ કરવાં જોઈએ. (૧૪)

अ॒यमि॒ह प्र॑थ॒मो धा॑यि धा॒तृभि॒र्होता॒ यजि॑ष्ठोऽअध्व॒रेष्वीड्यः॑।

यमप्न॑वानो॒ भृग॑वो विरुरु॒चुर्वनेषु चि॒त्रं वि॒भ्वं॑ वि॒शेवि॑शे॥ १५॥

પદાર્થ : अप्नवानः-જે વિદ્યા સંતાન - વિદ્યા ભણાવીને વિદ્વાન બનાવનાર भृगवः-યજ્ઞ વિદ્યાના જાણનાર વિદ્વાન છે. તે इह-આ સંસારમાં वनेषु-સેવન કરવા યોગ્ય अध्वरेषु-ઉપાસના તથા અગ્નિહોત્રથી લઈને અશ્વમેધ સુધી અથવા શિલ્પ વિદ્યા અન્તર્ગત યજ્ઞોમાં विशे विशे-પ્રત્યેક પ્રજામાં विभ्वम्-વ્યાપક चित्रम्-અદ્‌ભુત ગુણયુક્ત यम्-જે ઈશ્વર અને અગ્નિને विरुरुचुः-પ્રજ્વલિત કરે છે, अयम्-તે धातृभिः-ઈશ્વર અથવા ભૌતિક અગ્નિ યજ્ઞને ધારણ કરનાર વિદ્વાનો દ્વારા ईड्यः-યજ્ઞમાં ઉપાસના યોગ્ય प्रथमः-અથવા યજ્ઞમાં પ્રથમ સાધન છે. તથા ઉપાસના કે પૂજા યોગ્ય છે. होता-યજ્ઞનું ગ્રહણ કરનાર છે, यजिष्ठः-અત્યંત ઉપાસના અને શિલ્પ વિદ્યાના હેતુ છે, તે इह-અગ્નિને આ સંસારમાં धायि-ઉક્ત વિદ્વાનો દ્વારા ધારણ કરવામાં આવે છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ યજ્ઞ ક્રિયાની સિદ્ધિ માટે ઉપાસના યોગ્ય ઈશ્વરની સ્તુતિ તથા સાધનરૂપ ભૌતિક અગ્નિનું ગ્રહણ કરીને આ સૃષ્ટિમાં પ્રજાનાં સર્વ સુખોને સિદ્ધ કરવાં જોઈએ. (૧૫)

अ॒स्य प्र॒त्नामनु॒ द्युत॑ꣳशु॒क्रं दु॑दुह्रे॒ऽअह्र॑यः। पयः॑ सहस्र॒सामृषि॑म्॥ १६॥

પદાર્થ : अह्रयः સર્વ વિદ્યા પ્રસારક વિદ્વાનો ! अस्य-એ ભૌતિક અગ્નિની सहस्रसाम्-અસંખ્ય કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર ऋषिम्-કાર્ય સિદ્ધિમાં હેતુ प्रत्नाम्-પ્રાચીન અનાદિ સ્વરૂપથી નિત્ય વર્તમાન द्युतम्-કારણમાં રહેનાર દીપ્તિને જાણીને शुक्रम्-શુદ્ધ કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર पयः-જલને अनु दुदुह्रे-સારી રીતે પૂરણ કરે છે અર્થાત્ અગ્નિમાં હવન વગેરે કરીને વૃષ્ટિથી સંસારને પૂર્ણ કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ ગુણયુક્ત અગ્નિનું કારણરૂપ તથા અનાદિ હોવાથી નિત્યતા જાણવી યોગ્ય છે, તેમ સંસારના અન્ય પદાર્થોનું પણ કારણરૂપથી અનાદિત્વ જાણવું જોઈએ. તેને જાણીને એ અગ્નિ વગેરે પદાર્થોનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને વ્યવહારોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૬)

त॒नू॒पाऽअ॑ग्ने॒ऽसि त॒न्वं॑ मे पाह्यायु॒र्दाऽअ॑ग्ने॒ऽस्यायु॑र्मे देहि वर्चो॒दाऽअ॑ग्ने॒ऽसि वर्चो॑ मे देहि। अग्ने॒ यन्मे॑ त॒न्वा॒ऽऊ॒नं तन्म॒ऽआपृ॑ण॥ १७॥

હે अग्ने-સર્વરક્ષક જગદીશ્વર ! यत्-આપ तनूपाः-સર્વ પદાર્થોનાં શરીરોના રક્ષક असि-છો, જેથી मे-મારા तन्वम्-શરીરની પણ पाहि-રક્ષા કરો.

હે अग्ने-જગદીશ્વર ! આપ आयुर्दाः-આયુષ્ય દાતા असि-છો, જેથી मे-મને आयुः-પૂર્ણ આયુ

અર્થાત્ સો વર્ષ સુધી જીવન देहि-આપો.

હે अग्ने-સર્વ વિદ્યામય ઈશ્વર ! આપ वर्चोदाः-વિજ્ઞાનદાતા असि-છો, જેથી मे-મને સારી રીતે वर्चः-પૂર્ણ વિદ્યા देहि-આપો.

હે अग्ने-કામના પૂર્ણ કરનાર ઈશ્વર ! मे-મારા तन्वाः-અન્તઃકરણ નામક શરીરમાં यत्-જેટલા ऊनम्-બુદ્ધિ, બલ અને શૌર્ય વગેરેની ન્યૂનતા છે तत्-તેને आपृण-પૂર્ણ કરો.

દ્વિતીય અર્થ : अग्ने-આ ભૌતિક અગ્નિ यत्-જેમ तनूपाः-શરીરની રક્ષાનો હેતુ असि-છે, તેમ જઠરાગ્નિરૂપથી मे-મારા तन्वम्-શરીરની पाहि-રક્ષા કરે છે.

अग्ने-જ્ઞાનનો હેતુ અગ્નિ आयुर्दाः-જીવનનો હેતુ असि-છે, તેમ मे-મને आयुः-જીવન માટે ક્ષુધાદિ ગુણો देहि-આપે છે.

अग्ने-જેમ અગ્નિ वर्चोदाः-વિજ્ઞાન પ્રાપ્તિનો હેતુ असि-છે, તેમ मे-મને वर्चः-વિદ્યાપ્રાપ્તિ માટે બુદ્ધિ-બળ વગેરે देहि-આપે છે.

अग्ने-અગ્નિ કામના પૂર્તિનો હેતુ છે, તે यत्-જેટલી मे-મારા तन्वाः શરીરમાં બુદ્ધિ વગેરે સામર્થ્યની ऊनम्-ન્યૂનતા છે, तत्-તેટલા ગુણોનું आपृण-પૂર્ણ કરે છે. (૧૭)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરે આ સંસારમાં જે કારણે સર્વ પ્રાણીઓના માટે શરીર, આયુના નિમિત્ત, વિદ્યાનો પ્રકાશ અને સમસ્ત અંગોની પૂર્ણતા રચેલ છે, જેથી સર્વ પદાર્થો પોતાના સ્વરૂપને ધારણ કરી રહેલ છે.

એ જ રીતે પરમેશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં પ્રકાશ વગેરે ગુણવાન હોવાથી તે અગ્નિ પણ સર્વ પદાર્થોના પાલનનો મુખ્ય સાધક છે. તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૧૭)

इन्धा॑नास्त्वा श॒तꣳ हिमा॑ द्यु॒मन्त॒ꣳ समि॑धीमहि। वय॑स्वन्तो वय॒स्कृत॒ꣳ सहस्वन्तः सह॒स्कृत॑म्। अग्ने॑ सपत्न॒दम्भ॑न॒मद॑ब्धासो॒ऽ अदा॑भ्यम्। चित्रा॑वसो स्व॒स्ति ते॑ पा॒रम॑शीय॥ १८॥

પદાર્થ : હે चित्रावसो-આશ્ચર્યરૂપ ધનયુક્ત अग्ने-પરમેશ્વર ! अदब्धासः-દંભ, અહંકાર અને હિંસાદિ દોષ રહિત, वयस्वन्तः-પ્રશંસનીય પૂર્ણ આયુ યુક્ત, सहस्वन्तः-અત્યંત સહનશીલ, अदाभ्यम्-માનવા યોગ્ય, सपत्नदम्भनम्-શત્રુનો નાશ કરવા, वयस्कृतम्-અવસ્થાની પૂર્તિ કરવા, सहस्कृतम्-સહન કરવા કરાવવા, द्युमन्तम्-અનંત પ્રકાશયુક્ત, त्वा-આપનો इन्धानाः-ઉપદેશ તથા શ્રવણ કરતાં અમે शतम्-સો વર્ષ અથવા તેથી અધિક વર્ષો हिमाः-હેમન્ત ઋતુયુક્ત समिधीमहि-સારી રીતે જીવીએ. આ રીતે કરતાં હું પણ ते-આપની કૃપાથી સર્વ દુઃખોને पारम्-પાર કરીને स्वस्ति-સુખોને अशीय-પ્રાપ્ત કરું.

દ્વિતીય અર્થ : अदब्धासः-દંભ, અહંકાર, હિંસાદિ દોષરહિત, वयस्वन्तः-પૂર્ણ આયુયુક્ત, सहस्वन्तः-અત્યંત સહનશીલ, त्वा-તે अदाभ्यम्-ઉપયોગ કરવા યોગ્ય, सपत्नदम्भनम्-આગ્નેયાદિ શસ્ત્ર અસ્ત્ર વિદ્યામાં હેતુ હોવાથી શત્રુઓને જીતવા, वयस्कृतम्-અવસ્થાની વૃદ્ધિ કરવા, सहस्कृतम्-સહનશક્તિ આપનાર, द्युमन्तम्-સારી રીતે પ્રકાશયુક્ત अग्ने-કાર્યોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિને इन्धानाः-પ્રજ્વલિત

કરતાં અમે शतम्-સો વર્ષ સુધી हिमाः-હેમન્ત ઋતુ સાથે समिधीमहि-જીવીએ. આ રીતે કરતાં હું પણ જે એ चित्रावसो-આશ્ચર્યરૂપ ધનની પ્રાપ્તિનું સાધન ભૌતિક અગ્નિ છે ते-તેના પ્રકાશથી દરિદ્રતા વગેરે દુઃખોથી पारम्-પાર કરીને स्वस्ति-અત્યંત સુખોને अशीय-પ્રાપ્ત કરું. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પુરુષાર્થ, ઈશ્વરની ઉપાસના તથા અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી ઉપકાર-ગ્રહણ કરીને, સર્વ દુઃખોનો અંત - નાશ તથા ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરીને સો વર્ષ સુધી જીવિત રહેવું જોઈએ.

કોઈ પણ મનુષ્યે એક ક્ષણ પણ આળસમાં રહેવું નહીં. પરંતુ જેથી પુરુષાર્થ - વૃદ્ધિ થાય તેમ આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૮)

सं त्वम॑ग्ने सूर्य॑स्य वर्च॑सागथाः समृषी॑णाᳬस्तुतेन॑।
सं प्रियेण धाम्ना सम॒हमायु॑षा सं वर्च॑सा सं प्रजया सᳫ रायस्पोषेण ग्मिषीय॥ १९॥

પદાર્થ : अग्ने-જગદીશ્વર ! જે આપ सूर्यस्य-સર્વની અન્તર્ગત પ્રાણ તથા ऋषीणाम्-વેદવેત્તા, મંત્ર દ્રષ્ટા વિદ્વાનોની જે संस्तुतेन-સ્તુતિ કરવા, संप्रियेण-પ્રસન્નતાથી માનવા, सवर्चसा-વિદ્યાધ્યયન અને પ્રકાશ કરવાનું धाम्ना-સ્થાન समायुषा-શ્રેષ્ઠ જીવન, संप्रजया-સંતાન અને રાજ્ય તથા रायस्पोषेण-શ્રેષ્ઠ ધનના ભોગથી પુષ્ટિ સાથે समगथाः-પ્રાપ્ત થાય છે, તેની સાથે अहम्-હું પણ સર્વ સુખોને संग्मिषीय-પ્રાપ્ત કરું.

દ્વિતીય અર્થ : જે अग्ने-ભૌતિક અગ્નિ પૂર્વોક્ત સર્વથી समगथाः-સંગત થઈને પ્રકાશને પ્રાપ્ત થાય છે. તે સિદ્ધિ માટે અગ્નિ સાથેના अहम्-હું વ્યવહાર દ્વારા સર્વ સુખોને संग्मिषीय-પ્રાપ્ત કરું. (૧૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરની આજ્ઞા પાલનથી મનુષ્ય ઉત્તમ પુરુષાર્થ દ્વારા તથા અગ્નિ વગેરે પદાર્થોના ઉચિત પ્રયોગથી સર્વ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૯)

अन्ध॒ स्थान्धो॑ वो भक्षीय॒ मह॑ स्थ॒ महो॑ वो भक्षी॒यार्ज॒ स्थोर्जं॑ वो भक्षीय रा॒यस्पोष॑ स्थ रा॒यस्पोषं॑ वो भक्षीय॥ २०॥

પદાર્થ : જે अन्धः-બળવાન વૃક્ષ અને ઔષધિ વગેરે પદાર્થો स्थ-છે, वः-તેના પ્રકાશથી હું अन्धः-વીર્યને પુષ્ટ કરનાર અન્નોનું भक्षीय-ગ્રહણ કરું, महः-મહાન વાયુ, અગ્નિ વગેરે અથવા વિદ્યાદિ પદાર્થો स्थ-છે, वः-તેનાથી હું महः-મહાન ક્રિયાઓની સિદ્ધિ કરનારાં કર્મોનું भक्षीय-સેવન કરું.

જે ऊर्जः-જલ, દૂધ, ઘી, મધુર તથા ફળ વગેરે રસયુક્ત પદાર્થો स्थ-છે, वः-તેનાથી હું ऊर्जम्-પરાક્રમયુક્ત રસનો भक्षीय-ભોગ કરું.

જે रायस्पोषः- અનેક ગુણયુક્ત પદાર્થો स्थ-છે वः-ચક્રવર્તી રાજ્ય અને શ્રી વગેરે પદાર્થોથી હું रायस्पोषम्-શ્રેષ્ઠ ધનનો ભોગ भक्षीय-સેવન કરું. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જગતના પદાર્થોના ગુણોને જાણીને ક્રિયા - કૌશલથી ઉપકારને ગ્રહણ કરીને સર્વ સુખોને ભોગવે. (૨૦)

रेवती रमध्वमस्मिन्योनावस्मिन् गोष्ठेऽस्मिँल्लोकेऽस्मिन् क्षये।
इहैव स्त मापगात॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે रेवतीः-વિદ્યા, ધન, ઇન્દ્રિય, પશુ અને પૃથિવીના રાજ્ય વગેરેથી યુક્ત શ્રેષ્ઠ નીતિ स्त-છે, તે अस्मिन्-આ योनौ-જન્મસ્થળમાં, अस्मिन्गोष्ठे-ઇન્દ્રિય તથા પશુ વગેરેનાં રહેવાનાં સ્થાન अस्मिन् ल्लोके-સંસાર તથા अस्मिन् क्षये-અમે બનાવેલાં ઘરોમાં रमध्वम्-રમણ કરવાની ઇચ્છા કરનાર તમે इहैव-તેમાં રહો. અર્થાત્ मापगात-એનાથી કદી દૂર ન જાવ. (૨૧)

ભાવાર્થ : જ્યાં વિદ્વાન નિવાસ કરે છે, ત્યાં વિદ્યાદિ ગુણોના નિવાસના કારણે પ્રજાઓ વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ધનથી સંપન્ન બનીને નિત્ય સુખી રહે છે તેથી સર્વેએ એવી ઇચ્છા કરવી જોઈએ કે અમારાથી વિદ્વાનો તથા વિદ્વાનોથી અમે કદી પણ દૂર ન થઈએ - સદા સમાગમ બની રહે. (૨૧)

सꣳहितासि विश्वरूप्यूर्जा माविश गौपत्येन।
उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम्। नमो भरन्तऽएमसि॥ २२॥

પદાર્થ : नमः-અન્નને भरन्तः-ધારણ કરતાં અમે धिया-પોતાની બુદ્ધિ તથા કર્મથી જે अग्ने-વીજળીરૂપ અગ્નિથી સર્વ પદાર્થોની संहिता-સાથે ऊर्जा-વેગ અને પરાક્રમ વગેરે ગુણયુક્ત, विश्वरूपी-સર્વ પદાર્થોમાં રૂપગુણયુક્ત, गौपत्येन- ઇન્દ્રિય અને પશુઓના પાલન કરનાર જીવની સાથે વર્તમાન હોવાથી मा-મારામાં आविश-પ્રવેશ કરે છે. त्वा-તે दोषावस्तः-રાત્રિને પોતાના તેજથી દૂર કરનાર अग्ने-વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિને જ્ઞાનના પ્રકાશ માટે दिवेदिवे-પ્રતિદિન उपैमसि-સમીપ પ્રાપ્ત કરીએ છીએ. (૨૨).

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ કે, જે ઈશ્વરે સર્વ મૂર્ત દ્રવ્યોમાં વિદ્યુત્ રૂપથી વ્યાપ્ત, સર્વ રૂપોના પ્રકાશક, ચેષ્ટા વગેરે વ્યવહારોનો હેતુ અને વિચિત્ર ગુણયુક્ત અગ્નિની રચના કરેલ છે. તે ઈશ્વરની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૨)

राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्। वर्द्धमानꣳ स्वे दमे॥ २३॥

પદાર્થ : नमः અન્નથી સત્કારપૂર્વક भरन्तः-ધારણ કરનારા અમે धिया-બુદ્ધિ અને કર્મથી अध्वराणाम्-અગ્નિહોત્રથી લઈને અશ્વમેધ સુધીના યજ્ઞ તથા गोपाम्-ઇન્દ્રિય તથા પૃથિવી વગેરેની રક્ષા કરવા राजन्तम्-પ્રકાશમાન ऋतस्य-અનાદિ સત્યસ્વરૂપ કારણથી दीदिविम्-વ્યવહાર કરવા स्वे-પોતાના दमे-મોક્ષરૂપ સ્થાનમાં वर्धमानम्-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરનારા પરમાત્માને उपैमसि-નિત્ય પ્રાપ્ત કરીએ છીએ. (૨૩)

દ્વિતીય અર્થ : જે પરમાત્માએ अध्वराणाम्-શિલ્પ વિદ્યાથી સાધ્ય યજ્ઞ તથા गोपाम्-ઇન્દ્રિય તથા પશુ આદિના રક્ષક, राजन्तम्-પ્રકાશમાન ऋतस्य-જલ दीदिविम्-વ્યવહાર યોગ્ય બનાવનાર स्वे-પોતાના दमे-શાન્ત રૂપમાં वर्धमानम्-વૃદ્ધિ પામતાં જે અગ્નિને પ્રકાશિત કરેલ છે, તે અગ્નિને नमः-સત્ક્રિયાથી भरन्तः-ધારણ કરીને અમે धिया-કર્મ અને બુદ્ધિ દ્વારા उपैमसि-હંમેશા પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર અનાદિ સ્વરૂપ કારણ-પ્રકૃતિથી સર્વ કાર્યોની રચના કરે છે, તેમ ભૌતિક અગ્નિ જલની પ્રાપ્તિથી સર્વ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૨૩)

स नः॑ पि॒तेव॑ सू॒नवेऽग्ने॑ सूपाय॒नो भ॑व। सच॑स्वा नः स्व॒स्तये॑॥ २४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-કરુણામય, વિજ્ઞાન સ્વરૂપ, સર્વના પિતા જગદીશ્વર ! આપ કૃપા કરીને જેમ सूनवे-પુત્રને पितेव-પિતા સારા ગુણો શીખવે છે, તેમ આપ પિતા સમાન नः-અમને सूपायनः-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન આપનાર भव-છો, તેમ सः-આપ नः-અમને स्वस्तये-સદા સુખથી सचस्व-સંયુક્ત રાખો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે સર્વના પિતા ઈશ્વર ! જેમ કૃપાળુ વિદ્વાન પિતા પોતાનાં સંતાનોને સુરક્ષિત અને સુશિક્ષિત કરીને વિદ્યા, ધર્મ અને સુશીલતા વગેરે ગુણોમાં સંયુક્ત કરે છે, તેમ આપ અમારી નિરંતર રક્ષા કરીને અમને શ્રેષ્ઠ વ્યવહારોમાં સંયુક્ત કરો. (૨૪)

अग्ने॒ त्वं नो॒ऽअन्त॑मऽउ॒त त्रा॒ता शि॒वो भ॑वा वरू॒थ्यः॑।
वसु॑र॒ग्निर्वसु॑श्रवा॒ऽअच्छा॑ नक्षि द्यु॒मत्त॑मꣳ र॒यिं दाः॑॥ २५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-સર્વ રક્ષક જગદીશ્વર ! જે त्वम्-આપ वसुश्रवाः-સર્વને સાંભળવા માટે શ્રેષ્ઠ કાન આપનાર, वसुः-સર્વ પ્રાણીઓ જેમાં રહે છે તથા સર્વ પ્રાણીઓમાં આપ રહો છો, अग्निः-વિજ્ઞાન પ્રકાશયુક્ત नक्षि-સર્વવ્યાપક આપ नः-અમારામાં अन्तमः-અન્તર્યામી રૂપમાં રહીને જીવનના અત્યંત त्राता-રક્ષા કરનાર वरूथ्यः-શ્રેષ્ઠ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત અને शिवः-મંગલમય અને મંગલકારક भव છો.

उत-અને આપ नः-અમારા માટે द्युमत्तमम्-અત્યંત પ્રકાશયુક્ત रयिम्-વિદ્યા, ચક્રવર્તી રાજ્ય વગેરે ધન अच्छ दाः-સારી રીતે પ્રદાન કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ એમ જાણવું જોઈએ કે, પરમેશ્વર સિવાય અમારી રક્ષા કરનાર બીજું કોઈ નથી, કારણ કે તે સર્વશક્તિમાન હોવાથી સર્વત્ર વ્યાપક છે. (૨૫)

तं त्वा॑ शोचिष्ठ दीदिवः सु॒म्नाय॑ नू॒नमी॑महे॒ सखि॑भ्यः।
स नो॑ बोधि श्रु॒धी हव॑मुरु॒ष्या णो॑ऽअघाय॒तः सम॑स्मात्॥ २६॥

પદાર્થ : હે शोचिष्ठ-અત્યંત શુદ્ધ સ્વરૂપ दीदिवः-સ્વયં પ્રકાશમાન આનંદપ્રદ જગદીશ્વર ! અમે नः-અમારા તથા सखिभ्यः-મિત્રોના सुम्नाय-સુખ માટે तं त्वा-આપની પાસે ईमहे-યાચના કરીએ છીએ.

જે આપ नः-અમને बोधि-સારી રીતે વિજ્ઞાન આપો છો. सः-તે આપ नः-અમારા हवम्-સાંભળવા-સંભળાવવા યોગ્ય સ્તુતિસમૂહ યજ્ઞને श्रुधि-કૃપા કરીને સાંભળો नः-અમને समस्मात्-સર્વ अघायतः-પાપાચરણોથી અર્થાત્ અન્યને પીડા કરવાનાં પાપોથી उरुष्य-દૂર રાખો. (૨૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પોતાના માટે, મિત્રો માટે અને સર્વ પ્રાણીઓના સુખની પ્રાપ્તિ માટે પરમેશ્વરની પ્રાર્થના કરવી જોઈએ અને તેવું આચરણ કરવું જોઈએ.

પ્રાર્થના કરવાથી જગદીશ્વર અધર્મથી દૂર રહેવાની ઈચ્છા કરનાર મનુષ્યને પોતાની સત્તાથી સર્વ પાપોથી પૃથક્ કરે છે. એ જ રીતે સર્વ મનુષ્યોએ પોતાના વિચાર અને પુરુષાર્થથી સર્વ પાપોથી દૂર રહીને

નિત્ય ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. એમ જાણવું જોઈએ. (૨૬)

इडऽएह्यदितऽएहि काम्याऽएत। मयि वः कामधरणं भूयात्॥ २७॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી इडे-આ પૃથિવી મને રાજ્ય કરવા માટે एहि-અવશ્ય પ્રાપ્ત થાય.

अदिते-સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર નાશરહિત રાજનીતિ પણ एहि-પ્રાપ્ત થાય. એ જ રીતે હે ભગવન્ ! મને પૃથિવી અને રાજનીતિ દ્વારા काम्याः-ઈચ્છિત પદાર્થો एत-પ્રાપ્ત થાય તથા मयि-મને वः-તે પદાર્થોની कामधरणम्-કામના भूयात्-સદા બની રહે. (૨૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ કામના કરવા યોગ્ય પદાર્થોની કામના નિરંતર કરવી જોઈએ. તેની પ્રાપ્તિ માટે પરમેશ્વરને પ્રાર્થના તથા [સ્વયં] પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. કોઈ પણ મનુષ્ય એક ક્ષણ પણ કામના વિના રહી શકતો નથી. માટે અધર્મના વ્યવહારથી કામનાને હટાવીને, ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં જેટલી કામના વધારી શકાય તેટલી વધારવી જોઈએ. (૨૭)

सोमानꣳ स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं यऽऔशिजः॥ २८॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मणस्पते-સનાતન વેદશાસ્ત્રના પાલક જગદીશ્વર ! આપ यः-જે હું औशिजः-સર્વ વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાનના પુત્ર સમાન છું, તો મને कक्षीवन्तम्-વિદ્યા અધ્યયનમાં શ્રેષ્ઠ નીતિયુક્ત स्वरणम्-સર્વ વિદ્યાઓનું પ્રવચન કરનાર તથા सोमानम्-ઔષધિઓનો રસ પ્રાપ્ત કરાવવા અને સર્વ વિદ્યાની સિદ્ધિ કરનાર कृणुहि-બનાવો. (૨૮)

ભાવાર્થ : પુત્ર બે પ્રકારના હોય છે : એક ઔરસ - શરીરથી ઉત્પન્ન, બીજા વિદ્યાજ - વિદ્યાથી ઉત્પન્ન. આ પ્રકારના પુત્રોની પ્રાપ્તિ માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. જેથી અમે વિદ્યાથી પ્રકાશિત, સર્વ ક્રિયાઓમાં કુશળ અને પ્રીતિપૂર્વક વિદ્યાનું અધ્યયન કરાવનાર પુત્રથી યુક્ત બનીએ. (૨૮)

यो रेवान् योऽअमीवहा वसुवित् पुष्टिवर्द्धनः। स नः सिषक्तु यस्तुरः॥ २९॥

પદાર્થ : यः-જે વેદશાસ્ત્રનું પાલન કરવા, रेवान्-વિદ્યાદિ અનંત ધનવાન अमीवहा-અવિદ્યાદિ રોગોને દૂર કરવા-કરાવવા, वसुवित्-વસ્તુઓને યથાયોગ્ય જાણવા, पुष्टिवर्द्धनः-શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ અને तुरः-સારાં કામોમાં જલદી પ્રવેશ કરનાર તથા કરાવનાર જગદીશ્વર છે. सः-તે नः-અમને શ્રેષ્ઠતમ કર્મ અને ગુણોની સાથે सिषक्तु-સંયુક્ત કરે. (૨૯)

ભાવાર્થ : સમસ્ત સંસારમાં જે ધન છે, તે સર્વ ઈશ્વરનું જ છે. મનુષ્ય ઈશ્વરને જેવી પ્રાર્થના કરે છે, તેવો તેને સ્વયં પુરુષાર્થ પણ કરવો જોઈએ. જેમ ઈશ્વર 'रेवान'-ઐશ્વર્યવાન છે, એ વિશેષણ બોલવા કે સાંભળવા માત્રથી કૃતકૃત્ય બની જતો નથી. પરંતુ પોતાના પરમ પુરુષાર્થ દ્વારા પણ ધનની વૃદ્ધિ અને રક્ષા નિરંતર કરવી જોઈએ.

જેમ તે ઈશ્વર अमीवहा-રોગવિનાશક છે, તેમ મનુષ્યોએ પણ નિત્ય રોગ નષ્ટ કરવા જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર वसुवित्-વસ્તુઓનો જ્ઞાતા છે, તેમ મનુષ્યોએ યથાશક્તિ પદાર્થવિદ્યા જાણવી જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર पुष्टिवर्द्धनः*-સર્વની પુષ્ટિ-વર્ધક છે, તેમ મનુષ્યોએ સર્વની પુષ્ટિની નિત્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.*

જેમ ઈશ્વર तुरः-શીઘ્રકારી છે, તેમ મનુષ્યોએ અભીષ્ટ કાર્યો શીઘ્ર કરવાં જોઈએ.

જેમ ઈશ્વરના શુભ ગુણ, કર્મની પ્રાપ્તિ માટે પ્રાર્થના કરવામાં આવે છે, તેમ (ઈશ્વર) સર્વ મનુષ્યોને અત્યંત પુરુષાર્થથી શુભ ગુણ, કર્મ આચરણોથી નિત્ય યુક્ત કરે. (૨૯)

मा नः शꣳसोऽअररुषो धूर्तिः प्रणङ् मर्त्यस्य। रक्षा णो ब्रह्मणस्पते॥ ३०॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मणस्पते-જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી नः-અમારી વેદવિદ્યા मा प्रणक्-કદી નાશ ન પામે અને જે अररुषः-દાન આદિ ધર્મરહિત અને પરધન ગ્રહણ કરનાર मर्त्यस्य-મનુષ્યની धूर्तिः-હિંસા કે દ્રોહ છે તેનાથી नः-અમારી નિરંતર रक्ष-રક્ષા કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય હંમેશાં પ્રશંસનીય કર્મ કરે, નિન્દનીય નહીં. કોઈથી દ્રોહ અને દુષ્ટોનો સંગ ન કરે. ધર્મની રક્ષા અને ઈશ્વરની ઉપાસના હંમેશાં કરે. (૩૦)

महि त्रीणामवोऽस्तु द्युक्षं मित्रस्यार्यम्णः। दुराधर्षं वरुणस्य॥ ३१॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मणस्पते-જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી मित्रस्य-બહાર તથા અંદર રહેનાર પ્રાણવાયુ તથા अर्यम्णः-જે આકર્ષણથી પૃથિવી આદિ અન્ય પદાર્થોને ધારણ કરનાર સૂર્યલોક અને वरुणस्य-જલ त्रीणाम्-એ ત્રણેના પ્રકાશથી नः-અમારામાં द्युक्षम्-નીતિનો પ્રકાશ રહેલો છે અથવા दुराधर्षम्-અતિ કષ્ટથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય દૃઢ महि-મહાન વેદવિદ્યાની अवः-રક્ષા अस्तु-થાવ. (૩૧)

ભાવાર્થ : અહીં પૂર્વમંત્રથી 'ब्रह्मणस्पते' તથા 'नः' એ બે પદોની અનુવૃત્તિ સમજવી.

મનુષ્યોએ સર્વ પદાર્થોથી પોતાની અને બીજાની ન્યાયપૂર્વક રક્ષા કરીને યથાવત્ રાજ્યનું પાલન કરવું જોઈએ. (૩૧)

नहि तेषाममा चन नाध्वसु वारणेषु। ईशे रिपुरघशꣳसः॥ ३२॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય ઈશ્વરના ઉપાસક છે, तेषाम्-તેમનાં अमा-ઘરમાં अध्वसु-માર્ગોમાં અને वारणेषु-ચોર, ડાકુ, શિકારી વગેરેનું નિવારણ કરનાર સંગ્રામોમાં चन-પણ अघशंसः-પાપ કર્મોનું કથન કરનાર रिपुः-શત્રુ नहि-ઉભો રહેલો નથી. न-તેને દુઃખ-ક્લેશ આપી શકતો નથી. તે ઈશ્વર અને ધાર્મિક વિદ્વાનોને પામવાને હું ईशे-સમર્થ બનું. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે ધર્માત્મા અને સર્વના ઉપકારક મનુષ્યો છે, તેઓને કોઈનો ભય હોતો નથી. જે અજાતશત્રુ છે, તેનો કોઈ શત્રુ હોતો નથી. (૩૨)

ते हि पुत्रासोऽअदितेः प्र जीवसे मर्त्याय। ज्योतिर्यच्छन्त्यजस्रम्॥ ३३॥

પદાર્થ : જે अदितेः-અવિનાશી કારણરૂપી શક્તિના पुत्रासः-બાહ્ય અને અંદર રહેનાર પ્રાણ, સૂર્યલોક, વાયુ અને જલ વગેરે પુત્ર છે, ते-તે પૂર્વોક્ત हि-જ मर्त्याय-મનુષ્યોના મૃત્યુ અને जीवसे-જીવન માટે

अजस्त्रम्-નિરંતર ज्योतिः-તેજ કે પ્રકાશ यच्छन्ति-આપે છે. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે કારણરૂપી સમર્થ પદાર્થોથી ઉત્પન્ન થયેલ પ્રાણ [સૂર્યલોક, વાયુ અને જલ] વગેરે પદાર્થો છે, તે સદા જ્યોતિ પ્રદાન કરીને સર્વના જીવન અને મૃત્યુના નિમિત્ત બને છે. (૩૩)

कदा चन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे।
उपोपेन्नु मघवन् भूयऽइन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते॥ ३४॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સુખદાતા ઈશ્વર ! આપ स्तरीः-સુખોથી આચ્છાદિત કરનાર असि-છો તથા दाशुषे-વિદ્યા વગેરે દાન કરનાર મનુષ્ય માટે कदाचन-ક્યારે इत्-જ્ઞાન नु-જલદી सञ्चसि-પ્રાપ્ત न-નથી કરાવતા ? તે કાલમાં હે मघवन्-વિદ્યાદિ ધનવાન જગદીશ્વર ! देवस्य-કર્મફળના આપનાર ते-આપના दानम्-આપેલ इत्-જ જ્ઞાનને दाशुषे-વિદ્યાદિ આપનાર માટે भूयः-ફરી नु-જલદી उपोपपृच्यते-પ્રાપ્ત कदाचन-ક્યારે न-થતાં નથી ? (૩૪)

ભાવાર્થ : જો ઈશ્વર કર્મફળના દાતા ન હોય તો કોઈ પણ જીવ વ્યવસ્થાપૂર્વક કર્મફળને પ્રાપ્ત કરી શકે નહિ. (૩૪)

तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥ ३५॥

પદાર્થ : અમે सवितुः-સર્વ જગતના ઉત્પત્તિકર્તા, देवस्य-પ્રકાશમય, શુદ્ધ સ્વરૂપ, સર્વ સુખદાતા પરમેશ્વર જે वरेण्यम्-અતિ શ્રેષ્ઠ અને भर्गः-પાપરૂપ દુઃખોના મૂળને નષ્ટ કરનાર તેજઃ-સ્વરૂપ છે, तत्-તેને धीमहि-ધારણ કરીએ.

यः-જે સવિતા દેવ અર્થાત્ અન્તર્યામી પરમેશ્વર સર્વ સુખદાતા છે, તે પોતાની કરુણા કરીને नः-અમારી धियः-બુદ્ધિને ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવમાં प्रचोदयात्-પ્રેરિત કરે. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સમસ્ત સંસારના ઉત્પત્તિકર્તા, સર્વથી શ્રેષ્ઠ, સમસ્ત દોષનાશક અને શુદ્ધ સ્વરૂપ પરમેશ્વરની નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. કયા પ્રયોજન માટે ? તે પ્રશ્નના ઉત્તરમાં વેદ કહે છે :

તે ઈશ્વરની સ્તુતિ, ધારણા, પ્રાર્થના અને ઉપાસના કરવાથી અમને સર્વ દુષ્ટ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી પૃથક્ રાખે છે અને સર્વ શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી નિત્ય પ્રવૃત્ત કરે છે. જેથી પરમાત્માની સ્તુતિ વગેરે કરવાં જોઈએ.

પ્રાર્થનાનો એ જ મુખ્ય સિદ્ધાન્ત છે કે જેવી પ્રાર્થના કરો તેવાં કર્મ કરવાં જોઈએ. (૩૫)

परि ते दूडभो रथोऽस्माँ२ऽअश्नोतु विश्वतः। येन रक्षसि दाशुषः॥ ३६॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ येन-જે જ્ઞાનથી दाशुषः-વિદ્યાદિ દાન કરનાર વિદ્વાનોની विश्वतः-સર્વ રીતે रक्षसि-રક્ષા કરો છો અને જે ते-આપના दूडभः-દુઃખથી પણ નાશ નહિ પામનાર रथः-સર્વને જાણવા યોગ્ય વિજ્ઞાન સર્વ દિશાઓથી રક્ષા કરવા માટે તે अस्मान्-આપની આજ્ઞાનું પાલન કરનાર અમને परि-સર્વ રીતે अश्नोतु-પ્રાપ્ત થાય. (૩૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વના રક્ષક પરમેશ્વરની અને વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે પ્રાર્થના અને પુરુષાર્થ નિત્ય કરવાં જોઈએ. જેથી રક્ષા પામીને આપણે દુષ્ટ - અસત્ વિદ્યા અને અધર્મ વગેરે દોષોનો ત્યાગ કરીને શ્રેષ્ઠ વિદ્યા તથા ધર્મ વગેરે શુભ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખી રહીએ. (૩૬)

भूर्भुवः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्याꣳ सुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः।
नर्य प्रजां मे पाहि शꣳस्य पशून् मे पाह्यथर्य पितुं मे पाहि॥ ३७॥

પદાર્થ : હે नर्य-નીતિમાન મનુષ્યો પર કૃપાળુ પરમેશ્વર ! આપ કૃપા કરીને मे-મારી प्रजाम्-પુત્રાદિ પ્રજાની पाहि-રક્ષા કરો. मे-મારાં पशून्-ગાય, ઘોડા, હાથી વગેરે પશુઓની पाहि-રક્ષા કરો. હે अथर्य-સંદેહરહિત જગદીશ્વર ! આપ मे-મારા पितुम्-અન્નની पाहि-રક્ષા કરો. હે शंस्य-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વર ! આપની કૃપાથી હું भूर्भुवः स्वः-જે પ્રિયસ્વરૂપ પ્રાણ, બળના હેતુ ઉદાન તથા સર્વ ચેષ્ટા વગેરે વ્યવહારોનો હેતુ વ્યાન વાયુ છે, તેની સાથે યુક્ત થઈને प्रजाभिः-પોતાને અનુકૂળ સ્ત્રી, પુત્ર, વિદ્યા, ધર્મ, મિત્ર, નોકર અને પશુ વગેરે પદાર્થો સાથે सुप्रजाः-ઉત્તમ વિદ્યા, ધર્મયુક્ત પ્રજા સહિત वीरैः-શૌર્ય, ધૈર્ય, વિદ્યા, શત્રુઓનું નિવારણ તથા પ્રજાપાલનમાં કુશળની સાથે सुवीरः-શ્રેષ્ઠ શૂરવીરયુક્ત અને पोषैः-પુષ્ટિકારક પૂર્ણ વિદ્યાથી ઉત્પન્ન થયેલ વ્યવહારોની સાથે सुपोषः-શ્રેષ્ઠ પુષ્ટિ ઉત્પાદન કરનાર स्याम्-સદા બની રહું. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની ઉપાસના તથા ઈશ્વરની આજ્ઞા પાલનનો આશ્રય લઈને ઉત્તમ નિયમો તથા ઉત્તમ પુરુષાર્થ દ્વારા શ્રેષ્ઠ પ્રજા, વીર પુરુષ તથા પુષ્ટિ વગેરે કારણોથી પ્રજાનું પાલન કરીને નિત્ય સુખને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૩૭)

आगन्म विश्ववेदसमस्मभ्यं वसुवित्तमम्। अग्ने सम्राडभि द्युम्नमभि सहऽआयच्छस्व॥ ३८॥

પદાર્થ : હે सम्राट्-પ્રકાશસ્વરૂપ अग्ने-જગદીશ્વર ! આપ अस्मभ्यम्-અમે ઉપાસકો માટે द्युम्नम्-પ્રકાશસ્વરૂપ ઉત્તમ યશ તથા सहः-ઉત્તમ બળને अभ्यायच्छस्व-સર્વ બાજુથી વિસ્તૃત કરો છો, જેથી અમે वसुवित्तमम्-પૃથિવી વગેરે લોકોને જાણવા તથા विश्ववेदसम्-સર્વ સુખના જ્ઞાતા આપને अभ्यागन्म-સર્વ પ્રકારથી પ્રાપ્ત કરીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે सम्राट्-પ્રકાશ કરનાર अग्ने-ભૌતિક અગ્નિ अस्मभ्यम्-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર અમે લોકો માટે द्युम्नम्-ઉત્તમ યશ તથા सह-બળ अभ्यायच्छस्व-સર્વ બાજુથી વિસ્તૃત કરે છે તે वसुवित्तमम्-પૃથિવી વગેરે લોકોને સૂર્યરૂપથી પ્રકાશ કરીને विश्ववेदसम्-સર્વ સુખોને જણાવનાર ભૌતિક અગ્નિને અમે अभ्यागन्म-પ્રાપ્ત કરીએ. (૩૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિના ગુણોનું વિજ્ઞાન જાણીને, તેના અનુસાર આચરણ કરીને બધી બાજુથી કીર્તિ અને બળનો નિત્ય વિસ્તાર કરવો જોઈએ. (૩૮)

अ॒यम॒ग्निर्गृ॒हप॑ति॒र्गार्ह॑पत्यः प्र॒जाया॑ वसु॒वित्त॑मः।
अग्ने॑ गृहपते॒ऽभि द्यु॒म्नम॒भि सह॒ऽआय॑च्छस्व॥ ३९॥

પદાર્થ : હે गृहपते-ઘરના પાલક अग्ने-પરમેશ્વર ! જે अयम्-આ गृहपतिः-સ્થાન વિશેષમાં પાલન માટે गार्हपत्यः-ઘરના પાલકની સાથે સંયુક્ત प्रजया वसुवित्तमः-પ્રજાને માટે સર્વ પ્રકારનું ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર છો. જેથી આપ द्युम्नम्-સુખ અને પ્રકાશયુક્ત ધન अभ्यायच्छस्व-સારી રીતે આપો તથા सहः-ઉત્તમ બળ-પરાક્રમ अभ्यायच्छस्व-સારી રીતે આપો.

દ્વિતીય અર્થ : જે કારણે गृहपतिः-ઘરના પાલક હેતુ प्रजायाः-પુત્ર, મિત્ર, સ્ત્રી અને નોકર વગેરે પ્રજાને वसुवित्तमः-દ્રવ્ય વગેરે પ્રદાન કરનાર गार्हपत्यः-ઘરના સ્વામીથી સંયુક્ત अयम्-આ अग्ने-વિદ્યુત્, સૂર્ય અથવા જ્વાળામય ભૌતિક અગ્નિ છે, તેથી તે गृहपते-ઘરનો પાલક તે अग्ने-અગ્નિ અમોને अभिद्युम्नम्-બધી બાજુથી શ્રેષ્ઠ ધન અને सहः-બળને अभ्यायच्छस्व-ચોતરફથી વિસ્તારયુક્ત કરે છે. (૩૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થો દ્વારા જ્યારે ઈશ્વરની ઉપાસના તથા તેની આજ્ઞામાં રહીને અગ્નિનો કાર્ય સિદ્ધિ માટે સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે, ત્યારે તે અગ્નિ અનેક પ્રકારનાં ધન અને બળનો વિસ્તાર કરે છે. કારણ કે પ્રજાની મધ્યમાં તે અગ્નિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે સર્વોત્તમ સાધક છે. [અત્યંત સિદ્ધિ કરાવનાર છે.] (૩૯)

अ॒यम॒ग्निः पु॑री॒ष्यो᳖ र॒यि॒मान् पु॑ष्टि॒वर्द्ध॑नः।
अग्ने॑ पुरीष्या॒भि द्यु॒म्नम॒भि सह॒ऽआय॑च्छस्व॥ ४०॥

પદાર્થ : હે पुरीष्य-કર્મો પરિપૂર્ણ કરનાર સર્વોત્તમ अग्ने-શ્રેષ્ઠતમ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન ! આપ જે अयम्-આ पुरीष्यः-સર્વ સુખોને પૂર્ણ કરવામાં અત્યુત્તમ रयिमान्-શ્રેષ્ઠતમ ધનયુક્ત पुष्टिवर्द्धनः-પુષ્ટિવર્ધક अग्निः-ભૌતિક અગ્નિથી અમે લોકો માટે अभिद्युम्नम्-ઉત્તમ ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર તથા अभिसहः-ઉત્તમ શરીર અને આત્માના બળનો आयच्छस्व-સર્વ રીતે વિસ્તાર કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની કૃપા અને સ્વયં પુરુષાર્થ દ્વારા અગ્નિવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને અનેક પ્રકારનાં ધન અને બળનો સર્વતઃ વિસ્તાર કરવો જોઈએ. (૪૦)

गृहा॑ मा बि॑भीत॒ मा वे॑पध्व॒मूर्जं॑ बिभ्र॑त॒ऽएम॑सि।
ऊर्जं॑ बिभ्र॑द्वः सु॒मनाः॑ सु॒मे॒धा गृ॒हानै॑मि॒ मन॑सा॒ मोद॑मानः॥ ४१।

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચર્યાશ્રમથી સર્વ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરેલ ગૃહાશ્રમી તથા ऊर्जम्-શૌર્યાદિ પરાક્રમોને बिभ्रतः-ધારણ કરેલ गृहाः-બ્રહ્મચર્યાશ્રમ પશ્ચાત્ ગૃહસ્થાશ્રમને પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા રાખનાર મનુષ્યો ! તમે ગૃહસ્થાશ્રમને યથાવત્ પ્રાપ્ત કરો.

તે ગૃહસ્થાશ્રમના અનુષ્ઠાનથી मा बिभीत-ડરો નહિ તથા मा वेपध्वम्-કંપો નહિ.

પરાક્રમોને ધારણ કરેલ અમે गृहान्-ગૃહસ્થાશ્રમને પ્રાપ્ત થયેલ તમને एमसि-નિત્ય પ્રાપ્ત થઈ રહીએ અને वः-તમારામાં રહીને ગૃહસ્થાશ્રમમાં વર્તમાન सुमनाः-ઉત્તમ જ્ઞાન, सुमेधाः-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિયુક્ત मनसा-

વિજ્ઞાનથી मोदमानः-હર્ષ ઉત્સાહયુક્ત ऊर्जम्-અનેક પ્રકારનાં બળોને बिभ्रत्-ધારણ કરીને હું અત્યંત સુખોને एमि-નિરંતર પ્રાપ્ત કરું. (૪૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પૂર્ણ બ્રહ્મચર્ય આશ્રમનું સેવન કરીને, યુવાવસ્થામાં સ્વયંવર-વિધિથી પોતાના સમાન સ્વભાવ, વિદ્યા, તપ અને બળયુક્ત તથા સારી રીતે પરીક્ષા કરેલી સ્ત્રી સાથે વિવાહ કરીને, શરીર અને આત્માના બળને ઉત્પન્ન કરીને, સંતાનોત્પત્તિ કરીને સર્વ સાધનોથી શ્રેષ્ઠ વ્યવહારોમાં સ્થિર રહેવું જોઈએ.

કોઈ મનુષ્યે ગૃહસ્થાશ્રમ કરવાથી કદી પણ ડરવું નહિ અને કંપવું નહિ. કારણ કે સર્વ શ્રેષ્ઠ વ્યવહારો અને આશ્રમોનું મૂળ ગૃહસ્થાશ્રમ છે. તેથી તેનું સમ્યક્ રીતે અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. તેના વિના મનુષ્યની વૃદ્ધિ અને રાજ્યની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી. (૪૧)

येषा॒मध्येति॒ प्र॒वस॒न् येषु॒ सौमन॒सो ब॒हुः।
गृ॒हानुप॑ह्वयामहे॒ ते नो॑ जानन्तु जा॒न॒तः॥ ४२॥

પદાર્થ : प्रवसन्-પ્રવાસ કરતો અતિથિ येषाम्-જે ગૃહસ્થનું अध्येति-સ્મરણ કરે છે, येषु-જે ગૃહસ્થોમાં बहुः-અધિક सौमनसः-પ્રીતિભાવ છે, તે गृहान्-તે ગૃહસ્થોની અમે અતિથિઓ उपह्वयामहे-હંમેશાં પ્રશંસા કરીએ છીએ. જે પ્રેમ રાખનાર ગૃહસ્થી છે, ते-તેઓ जानतः-જાણીને ધાર્મિક नः-અમે અતિથિઓને जानन्तु-યથાવત્ જાણે - સત્કાર કરે. (૪૨)

ભાવાર્થ : સર્વ ગૃહસ્થીઓએ સર્વ ધાર્મિક વિદ્વાન અતિથિઓ સાથે તથા અતિથિઓએ ગૃહસ્થીઓ સાથે અત્યંત સુહૃદ્—મિત્રતાભાવ રાખવો જોઈએ, પરંતુ દુષ્ટો સાથે નહિ.

અતિથિ-વિદ્વાનોની સાથે સંગતિથી પરસ્પર વાર્તાલાપ કરીને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. જે પરોપકારી વિદ્વાન અતિથિ છે, તેની ગૃહસ્થીઓએ નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ; અન્યની નહિ. (૪૨)

उप॑हूताऽइ॒ह गाव॒ऽउप॑हूतोऽअजा॒वयः। अथो॒ऽअन्न॑स्य की॒लाल॒ऽउप॑हूतो गृ॒हेषु॑ नः। क्षेमा॑य व॒ः शान्त्यै॒ प्रप॑द्ये शि॒वꣳ श॒ग्मꣳ शं॒योः शं॒योः॥ ४३॥

પદાર્થ : इह-આ ગૃહસ્થાશ્રમમાં અથવા આ સંસારમાં वः-તમારા शान्त्यै-સુખ માટે नः-અને અમારી क्षेमाय-રક્ષા માટે गृहेषु-નિવાસ યોગ્ય સ્થાનોમાં गावः-દૂધ આપનારી ગાયો उपहूताः-સમીપ પ્રાપ્ત તથા अजावयः-ઘેટાં-બકરાં હોય. उपहूताः-સમીપ પ્રાપ્ત अथो-તત્પશ્ચાત્ अन्नस्य-પ્રાણોને ધારણ કરનારા कीलालः-અન્નાદિ પદાર્થો उपहूताः-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય. તે સર્વનું રક્ષણ કરતાં રહી હું ગૃહસ્થ शंयोः-સર્વ સુખનાં સાધનોથી शिवम्-કલ્યાણ અને शग्मम्-આનંદને प्रपद्ये-પ્રાપ્ત કરું. (૪૩)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોને ઉચિત છે કે, ઈશ્વરની ઉપાસના તથા તેની આજ્ઞા પાલન દ્વારા ગાય, હાથી, ઘોડા વગેરે પશુઓ અને ભક્ષ્ય - ચણા વગેરે ચાવવાના, ભોજ્ય - ભાત વગેરે ખાવાના, લેહ્ય - ચાટવાના ચટણી વગેરે, તથા ચૂષ્ય - શેરડી વગેરે ચૂષવાના પદાર્થોનો પોતાની પાસે સંગ્રહ કરીને, પોતાની તથા બીજાની રક્ષા કરીને વિજ્ઞાન, ધર્મ અને પુરુષાર્થથી સાંસારિક અને પારમાર્થિક સુખોનું સેવન કરવું જોઈએ.

કોઈએ પણ આળસું બનવું નહિ.

પરંતુ જે મનુષ્ય પુરુષાર્થી બનીને ધર્મપૂર્વક ચક્રવર્તી રાજ્ય વગેરેનું ઉપાર્જન કરીને તેની રક્ષા અને વૃદ્ધિ કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેને શ્રેષ્ઠ માનવામાં આવે છે. અન્યને નહિ. (૪૩)

प्रघासिनो हवामहे मरुतश्च रिशादसः। करम्भेण सजोषसः॥ ४४॥

પદાર્થ : અમે ગૃહસ્થીઓ करंभेण-અવિદ્યારૂપી દુઃખથી પૃથક્ બની, सजोषसः-સમાન રૂપથી સર્વની સાથે પ્રીતિ કરનાર रिशादसः-દોષ અને શત્રુઓનો નાશ કરનાર, प्रधासिनः-ઉત્તમ ભોજન કરનાર અતિથિઓ मरुत्तः-અતિથિ च-તથા ઋત્વિજો - યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનોનો हवामहे-સત્કાર કરી નિત્ય આમંત્રિત કરતા રહીએ. (૪૪)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થીઓને ઉચિત છે કે, વૈદ્યો, શૂરવીરો અને યજ્ઞ કરનારા ઋત્વિજોને બોલાવીને તથા તેમની સેવા કરીને તેઓની પાસેથી વિદ્યા અને શિક્ષા નિત્ય ગ્રહણ કરવા જોઈએ. (૪૪)

यद् ग्रामे यदरण्ये यत् सभायां यदिन्द्रिये।
यदेनश्चकृमा वयमिदं तदवयजामहे स्वाहा॥ ४५॥

પદાર્થ : वयम्-કર્મનું અનુષ્ઠાન કરનારા અમે, यद्-ग्रामे-જે ગૃહસ્થોથી સેવિત ગામ, यत् अरण्ये-વાનપ્રસ્થો સેવિત વન, यत् सभायाम्-જે સભાનું વિદ્વાનો સેવન કરે છે. यत् इन्द्रिये-યોગી લોકો જે મન અને શ્રોતાદિ ઇન્દ્રિયોનું સેવન કરે છે. તેમાં સ્થિત થઈને જે एनः-પાપ તથા અધર્મ चकृम-કરે છે અથવા કરાવે છે તે સર્વને अवयजामहे-દૂર કરતાં રહીશું તથા જે જે એ સ્થાનોમાં स्वाहा-સત્યવાણીથી પુણ્ય અથવા ધર્માચરણ चकृम-કરવા યોગ્ય છે, तत्-તેને यजामहे-પ્રાપ્ત થતાં રહીએ. (૪૫)

ભાવાર્થ : ચારે આશ્રમોમાં રહેનારા મનુષ્યોએ મન, વચન અને કર્મથી સદા સત્ય કર્મનું આચરણ કરીને, પાપનો ત્યાગ કરીને સભા અર્થાત્ વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યા અને શિક્ષાના પ્રચારથી પ્રજાનાં સુખોની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪૫)

मो षू णऽइन्द्रात्र पृत्सु देवैरस्ति हि ष्मा ते शुष्मिन्नवयाः।
महश्चिद्यस्य मीढुषो यव्या हविष्मतो मरुतो वन्दते गीः॥ ४६॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-શૂરવીર ! આપ अत्र-આ સંસારમાં पृत्सु-યુદ્ધોમાં देवैः-વિદ્વાનોની સાથે नः-અમારી सु-સારી રીતે રક્ષા કરો તથા मो-હણો નહિ.

હે शुष्मिन्-પૂર્ણ બળયુક્ત શૂરવીર ! हि-નિશ્ચય રીતે चित्-જેમ ते-આપની महः-મહાન गीः-વેદ પ્રમાણયુક્ત વાણી मीढुषः-વિદ્યા વગેરે ઉત્તમ ગુણોથી સિંચનાર हविष्मतः-ઉત્તમ હવિ અર્થાત્ પદાર્થયુક્ત मरुतः-ઋતુ-ઋતુઓમાં યજ્ઞ કરનારા વિદ્વાનોના वन्दते-ગુણોને પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ વિદ્વાનો આપના ગુણોનો અમારા માટે નિરંતર પ્રકાશ કરીને આનંદિત કરે છે, તેમ જે अवयाः-

યજ્ઞ કરનાર યજમાન अस्ति-છે, તે આપની આજ્ઞાથી જે यव्या-ઉત્તમ યવ વગેરેનો અગ્નિમાં હોમ કરે છે, તે પદાર્થ સર્વ પ્રાણીઓને સુખ આપનાર બને છે. (૪૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આરાધના કરીને, સમ્યક્ રીતે સામગ્રીનો સંગ્રહ કરીને, યુદ્ધોમાં શત્રુઓને જીતીને, ચક્રવર્તી રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને તથા તેનું પાલન કરીને મહાન આનંદનું સેવન કરે છે, ત્યારે સુરાજ્ય બને છે. (૪૬)

अक्रन् कर्म कर्मकृतः सह वाचा मयोभुवा। देवेभ्यः कर्म कृत्वास्तं प्रेत सचाभुवः॥ ४७॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય मयोभुवा-સુખદાયક, સત્યપ્રિય, મંગલકારી वाचा-વેદવાણી અથવા પોતાની વાણીની सह-સાથે सचाभुवः-પરસ્પર સંગી બનીને कर्मकृतः-શુભ કર્મોને કરતાં कर्म-પોતાનાં અભીષ્ટ કર્મો अक्रन्-કરે છે, તે देवेभ्यः-વિદ્વાન અથવા ઉત્તમ ગુણ અને સુખને માટે कर्म-કરવા યોગ્ય કર્મનું कृत्वा-અનુષ્ઠાન કરીને अस्तम्-સંપૂર્ણ સુખયુક્ત ઘરને प्रेत-પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યને યોગ્ય છે કે, આળસનો ત્યાગ કરીને સદા પુરુષાર્થ કરે. મૂર્ખતાનો ત્યાગ કરીને વેદવિદ્યાની પવિત્ર વાણીથી યુક્ત રહે. સદા પરસ્પર સહાયતા કરે.

જે આવો વ્યવહાર કરે છે તેઓ દિવ્ય સુખોથી પરિપૂર્ણ મોક્ષ નામક આનંદને તથા વ્યાવહારિક આનંદને પ્રાપ્ત કરીને પ્રસન્ન રહે છે. પરંતુ આળસુ લોકો ક્યારેય પણ આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૪૭)

अवभृथ निचुम्पुण निचेरुरसि निचुम्पुणः।
अव देवैर्देवकृतमेनोऽयासिषमव मर्त्यैर्मर्त्यकृतं पुरुराव्णो देव रिषस्पाहि॥ ४८॥

પદાર્થ : હે अवभृथ-વિદ્યા તથા ધર્મના અનુષ્ઠાનથી શુદ્ધ निचुम्पुण-ધૈર્યથી શબ્દ વિદ્યાને ભણાવનાર વિદ્વાન્ ! જેમ હું निचुम्पुणः-જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરનાર, निचेरु-નિરંતર વિદ્યાનો સંગ્રહ કરનાર, देवैः-પ્રકાશ સ્વરૂપ મન વગેરે ઇન્દ્રિયોથી देवकृतम्-ક્રિયમાણ કર્મ અથવા मर्त्यैः-મરણધર્મા मर्त्यकृतम्-શરીરોથી કરેલાં एनः-પાપ કર્મને अव अयासिषम्-દૂર કરીને શુદ્ધ બનું છું, તેમ તું પણ असि-બન.

હે देव-જગદીશ્વર ! આપ અમને पुरुराव्णः-બહુ દુઃખ આપનાર તથા रिषः-મારવા યોગ્ય શત્રુ તથા પાપથી पाहि-રક્ષા કરો અર્થાત્ તેને દૂર કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને ઉચિત છે કે, પાપની નિવૃત્તિ અને ધર્મમાં પ્રવૃત્તિ માટે પરમેશ્વરને નિત્ય પ્રાર્થના કરીને, મન-વચન-કર્મથી જે પાપ થાય છે તેથી દૂર રહે.

જે કોઈ અજ્ઞાનવશ પાપ કરેલ છે, તેનું ફળ દુઃખ માનીને ફરી બીજીવાર ન કરે. પરંતુ સર્વકાલમાં પવિત્ર કર્મોના આચરણની વૃદ્ધિ કરે. (૪૮)

पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत।

वस्नेव विक्रीणावहाऽइषमूर्जं शतक्रतो॥ ४९॥

પદાર્થ : જે दर्वि-પાકને સિદ્ધ કરનાર અને હોમ યોગ્ય પદાર્થોને ગ્રહણ કરનારી ચમચી - કડછી છે તે पूर्णा-દ્રવ્યોથી ભરેલી આહુતિ परापत-હોમેલા પદાર્થોના અંશોને ઉપર પહોંચાડી, આકાશમાં વૃષ્ટિ દ્વારા सुपूर्णा-પૂર્ણ થઈ पुनरापत-ફરી સારી રીતે પૃથિવીમાં ઉત્તમ જલરસને પ્રાપ્ત કરાવે છે. તેથી હે शतक्रतो-અસંખ્ય કર્મ તથા પ્રજ્ઞાવાન જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી અમે યજ્ઞ કરાવનાર - હોતા તથા કરનાર યજમાન બન્ને इषम्-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થો ऊर्जम्-પરાક્રમયુક્ત વસ્તુઓને वस्नेव-વૈશ્યોના વ્યવહાર સમાન विक्रीणावहै-આપીએ અથવા ગ્રહણ કરીએ. (૪૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા જે સુગંધિત વગેરે દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરવામાં આવે છે, તે ઉપર જઈને વાયુ અને વર્ષા-જલને શુદ્ધ કરીને ફરી પૃથિવી પર આવે છે, જેથી જવ વગેરે ઔષધિઓ શુદ્ધ બનીને સુખ અને પરાક્રમ આપનાર બને છે.

જેમ વેપારી રૂપિયા વગેરે દઈને અથવા લઈને બીજા પદાર્થોને ખરીદે છે અથવા વેચે છે, તેમ [યજ્ઞકર્તા મનુષ્ય] અગ્નિમાં દ્રવ્યોને આપીને - હોમીને વર્ષા તથા સુખ વગેરે ખરીદે છે અને વર્ષા ઔષધિ વગેરેને લઈને ફરી વર્ષા માટે વેચે છે, અર્થાત્ અગ્નિમાં હોમ કરવામાં આવે છે. (૪૯)

देहि मे ददामि ते नि मे धेहि नि ते दधे।
निहारं च हरासि मे निहारं निहराणि ते स्वाहा॥ ५०॥

પદાર્થ : હે મિત્ર ! તું स्वाहा-જેમ સત્યવાણી હૃદયથી બોલે છે, તેમ मे-મને એ વસ્તુ देहि-આપે છે તથા હું ते-તને એ વસ્તુ ददामि-આપું અથવા આપીશ; તું मे-મારી તે વસ્તુ निधेहि-ધારણ કર, હું ते-તારી એ વસ્તુ निदधे-ધારણ કરું છું.

તું मे-મને निहारम्-મૂલ્યથી ખરીદવા યોગ્ય વસ્તુ हरासि-આપ, હું ते-તને निहारम्-પદાર્થોનું મૂલ્ય निहराणि-નિશ્ચયથી આપું. स्वाहा-આ સર્વ વ્યવહારો સત્યવાણીથી કરવા અન્યથા વ્યવહાર સિદ્ધ થતા નથી. (૫૦)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ લેણ-દેણ, અનામત - થાપણ રાખવાનો વ્યવહાર સત્યપૂર્વક કરવો જોઈએ. જેમ કોઈએ કહ્યું, 'આ વસ્તુ તમે આપશો કે નહિ ?' જો તે કહે કે, 'આપું છું અથવા આપીશ.' તો તે રીતે આચરણ કરવું જોઈએ.

કોઈએ કહ્યું 'તું મારી આ વસ્તુ તારી પાસે રાખ, મને જરૂર પડે ત્યારે આપજે,' એ જ રીતે 'હું તારી વસ્તુ રાખું છું અને આવ ત્યારે આપીશ. અથવા તમારી પાસે આવીને આપીશ અથવા મારી પાસે આવી જજે' વગેરે વ્યવહાર સત્યવાણીથી કરવો જોઈએ. સત્ય વ્યવહાર વિના કોઈની પ્રતિષ્ઠા અને કાર્ય સિદ્ધિ થતી નથી. તથા પ્રતિષ્ઠા અને કાર્ય સિદ્ધિ વિના કોઈ નિરંતર સુખને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૫૦)

अक्ष॒न्नमी॑मदन्त॒ ह्यव॑ प्रि॒याऽअ॑धूषत।
अस्तो॑षत॒ स्वभा॑नवो॒ विप्रा॒ नवि॑ष्ठया म॒ती योजा॒ न्वि॒न्द्र ते॒ हरी॑॥ ५१॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સભાપતિ ! જે ते-આપના સંબંધી મનુષ્ય स्वभानवः-પોતાના જ તેજથી પ્રકાશિત થનાર તથા अव प्रियाः-અન્યને પ્રસન્ન કરનાર विप्राः-વિદ્વાનો છે, તે नविष्ठया-સર્વથા નવીન मती-બુદ્ધિથી हि-નિશ્ચયપૂર્વક પરમાત્માની अस्तोषत-સ્તુતિ અને अक्षन्-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થોનું ભક્ષણ કરતા अमीमदन्त-આનંદને પ્રાપ્ત કરતા અને તેથી તે શત્રુ અને દુઃખોને न्वधूषत-શીઘ્ર ધ્રુજાવે છે, તેમ એ યજ્ઞમાં इन्द्र-હે સભાપતિ ! ते-આપની સહાયથી આ યજ્ઞમાં નિપુણ બને અને તું हरी-પોતાનાં બળ અને પરાક્રમને અમારી સાથે योज-સંયુક્ત કર. (૫૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રતિદિન નવીન વિજ્ઞાન અને ક્રિયાઓની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. જેમ મેધાવી લોકો વિદ્વાનોના સંગ અને શાસ્ત્રોના અધ્યયનથી નવી-નવી બુદ્ધિ અને ક્રિયાને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ કરવું જોઈએ. (૫૧)

सु॒स॒न्दृशं॑ त्वा व॒यं मघ॑वन् वन्दिषी॒महि॑।
प्र नू॒नं पू॒र्णब॑न्धुर स्तु॒तो या॑सि वशाँ॒२ऽअनु॒ योजा॒ न्वि॒न्द्र ते॒ हरी॑॥ ५२॥

પદાર્થ : હે मघवन् ! ઉત્તમ વિદ્યાદિ ધનયુક્ત इन्द्र-પરમાત્મન્ ! वयम्-અમે सुसंदृशम्-સારી રીતે વ્યવહારોને જોનારા त्वा-આપની नूनम्-નિશ્ચયપૂર્વક वन्दिषीमहि-સ્તુતિ કરીએ અને [હે पूर्णबन्धुरः-સંપૂર્ણ જગતના પૂર્ણ બંધુ - હિતકારી પ્રભુ !] અમો स्तुतः-સ્તુતિ કરનારને આપ वशान्-ઈચ્છિત પદાર્થો यासि-પ્રાપ્ત કરાવો છો અને ते-આપનાં हरी-બળ-પરાક્રમોને આપ अनुप्रयोज-અમારી સહાય માટે યુક્ત કરો.

દ્વિતીય અર્થ : वयम्-અમે सुसंदृशम्-સારી રીતે પદાર્થોને દેખાડનાર, मघवन्-ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર અને पूर्णबन्धुरः-સંપૂર્ણ જગતને બાંધનાર त्वा-એ સૂર્યલોકની नूनम्-નિશ્ચયપૂર્વક वन्दिषीमहि-સ્તુતિ કરીએ છીએ.

स्तुतः-સૂર્યના ગુણોને પ્રકાશિત કરવાથી, તે वशान्-ઉત્તમ વ્યવહારોથી સિદ્ધ કરાવનાર કામનાઓને यासि-પ્રાપ્ત કરાવે છે.

હે વિદ્વાન ! આપ नु-જેમ ते-સૂર્યના हरी-ધારણ અને આકર્ષણ શક્તિ જગતમાં ઉપયોગી છે, તેમ વિદ્યાના સિદ્ધિકારક ગુણોને अनुप्रयोज-પ્રયોગમાં લાવો. (૫૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ જગતના હિતકારી જગદીશ્વરનું અભિનંદન અને સ્તુતિ કરવાં જોઈએ, અન્યની નહિ.

જેમ સૂર્ય મૂર્ત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઉપાસનાથી તે જગદીશ્વર પણ ભક્તજનોના આત્મામાં વિજ્ઞાન ઉત્પન્ન કરીને, સર્વ સત્ય વ્યવહારોને પ્રકાશિત કરે છે. આથી ઈશ્વરને છોડીને અન્યની ઉપાસના કરવી નહીં. (૫૨)

मनो॒ न्वाह्वामहे नाराश॒ꣳसेन॒ स्तोमे॑न। पि॒तॄणां च॒ मन्म॑भिः॥ ५३॥

પદાર્થ : અમે नाराशंसेन-પુરુષોના અત્યન્ત પ્રશંસનીય स्तोमेन-સ્તુતિયુક્ત વ્યવહાર અને पितृणाम्-પાલક ઋતુઓ અથવા જ્ઞાની મનુષ્યોના, मन्मभिः-જેથી સર્વ ગુણો જાણી શકાય છે, તે ગુણોની સાથે मनः-સંકલ્પ-વિકલ્પ આત્મક્ મન न्वाह्वामहे-સર્વ તરફથી હટાવીને દૃઢ કરીએ છીએ. [વિદ્યાદિ ગુણોમાં યુક્ત કરીએ છીએ.]. (૫૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે મનુષ્ય જન્મની સફળતા માટે પોતાના મનને વિદ્યાદિ ગુણોથી યુક્ત કરવું જોઈએ. જેમ ઋતુઓ પોતાના ગુણોને ક્રમથી પ્રકાશિત કરે છે અને જેમ વિદ્વાનો ક્રમથી અનેક પ્રકારની વિદ્યાનો સાક્ષાત્ કરે છે, તેમ નિરંતર પુરુષાર્થ કરીને વિદ્યા અને પ્રકાશની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ. (૫૩)

आ न॑ऽएतु मन॒ः पुन॒ः क्रत्वे॒ दक्षा॑य जी॒वसे॑। ज्योक् च॒ सूर्यं॑ दृ॒शे॥ ५४॥

પદાર્થ : मनः-જે સ્મરણ કરનાર ચિત્ત, ज्योक्-નિરંતર सूर्यम्-પરમેશ્વર, સૂર્યલોક અથવા પ્રાણને दृशे-જોવા, क्रत्वे-ઉત્તમ વિદ્યા અને ઉત્તમ કર્મની સ્મૃતિ जीवसे-સો વર્ષથી અધિક જીવવા च-અને અન્ય શુભ કર્મોના અનુષ્ઠાન માટે છે, તે नः-અમને पुनः-વારંવાર પ્રત્યેક જન્મમાં आ-સર્વ રીતે एतु-પ્રાપ્ત થાય. (૫૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે ઉત્તમ કર્મ દ્વારા ચિત્તશુદ્ધિ કરીને ફરી પુનર્જન્મમાં [ઉત્તમ] ચિત્તની પ્રાપ્તિની આકાંક્ષા કરવી જોઈએ, જેથી મનુષ્ય-જન્મ પ્રાપ્ત કરીને ઈશ્વરની ઉપાસના સિદ્ધ કરીને નિરંતર શ્રેષ્ઠ ધર્મનું આચરણ કરી શકાય. (૫૪)

पुन॑र्नः पितरो॒ मनो॒ ददा॑तु॒ दैव्यो॒ जनः॑। जी॒वं व्रात॑ꣳसचेमहि॥ ५५॥

પદાર્થ : હે पितरः-ઉત્પાદક, અન્ન વગેરે તથા વિદ્યા આપીને રક્ષણ કરનાર માતા-પિતા [તથા ગુરુજનો] ! આપની શિક્ષાથી दैव्यः-વિદ્વાનોમાં ઉત્પન્ન થયેલ जनः-વિદ્યા અને ધર્મથી બીજા માટે ઉપકારોને પ્રકટ કરનાર વિદ્વાન મનુષ્ય नः-અમારા માટે पुनः-આ જન્મ કે બીજા જન્મમાં मनः-ધારણાવતી બુદ્ધિ ददातु-આપો, જેથી અમે जीवम्-જ્ઞાનસંપન્ન જીવન તથા व्रातम्-સત્યવાણી વગેરે ગુણ સમુદાયને सचेमहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન માતા-પિતા - આચાર્યોની સુશિક્ષા વિના મનુષ્યોના માનવજીવનની સફળતા સંભવ નથી અને તે શિક્ષા વિના મનુષ્ય પરિપૂર્ણ જીવન અને કર્મનું નિર્માણ તથા સંપાદન કરી શકતો નથી. આથી માતા-પિતા-આચાર્યે પોતાનાં સંતાનોને ઉત્તમ ઉપદેશ દ્વારા શરીર અને આત્માના બળથી સંપન્ન બનાવવાં જોઈએ. (૫૫)

व॒यꣳसो॑म व्र॒ते तव॒ मन॑स्त॒नूषु॒ बिभ्र॑तः। प्र॒जाव॑न्तः सचेमहि॥ ५६॥

પદાર્થ : હે सोम-સર્વ જગતના સર્જનહાર જગદીશ્વર ! तव-આપના व्रते-સત્ય ભાષણાદિ ધર્મના અનુષ્ઠાનમાં પ્રવૃત્ત થઈને तनूषु-વિસ્તૃત સુખયુક્ત શરીરોમાં मनः-અન્તઃકરણની અહંકારાદિ વૃત્તિને

बिभ्रतः-ધારણ કરીને प्रजावन्तः-બહુપુત્ર આદિ તથા રાષ્ટ્ર આદિ ધનયુક્ત થઈને અમે सचेमहि-સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરીએ.

દ્વિતીય અર્થ : तव-આ सोम-સોમલતા વગેરે ઔષધિઓના व्रते-સત્ય વિજ્ઞાન માટે तनूषु-સુખયુક્ત શરીરોમાં मनः-ચિત્તની વૃત્તિને बिभ्रतः-ધારણ કરીને प्रजावन्तः-પુત્ર, રાજ્ય વગેરે ધનયુક્ત થઈને वयम्-અમે सचेमहि-સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૬)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરની આજ્ઞામાં રહેનાર મનુષ્ય શરીર અને આત્માના સુખને નિત્ય પ્રાપ્ત કરે છે. એ રીતે યુક્તિથી સોમ વગેરે ઔષધિઓનું સેવન કરનાર પણ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહિ. (૫૬)

एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राम्बिकया तं जुषस्व स्वाहा। एष ते रुद्र भागऽआखुस्ते पशुः॥ ५७॥

હે रुद्र-અન્યાયકારી મનુષ્યોને રડાવનાર વિદ્વાન ! જે ते-તારો एषः-આ भागः-સેવન કરવા યોગ્ય પદાર્થ સમૂહ છે, તેને તું अम्बिकया-વેદવાણી તથા स्वस्रा-ઉત્તમ વિદ્યા અને ક્રિયાની सह-સાથે जुषस्व-સેવન કર.

હે रुद्र-વિદ્વાન ! જે ते-તારો एषः-આ भागः-ધર્મથી પ્રાપ્ત ભાગ તથા स्वाहा-વેદવાણી છે, તેનું સેવન કર.

હે रुद्र-વિદ્વાન ! જે ते-તારો તારું एषः-આ आखुः-ખોદવા યોગ્ય શસ્ત્ર-સાધન તથા पशुः-ભોગ્ય પદાર્થ છે. तम्-તેનું जुषस्व-સેવન કર.

દ્વિતીય અર્થ : જે एषः-આ रुद्र-પ્રાણ છે ते-જેનો एषः-આ भागः-ધર્મથી પ્રાપ્ત ભાગ છે. જેને अम्बिकया-વાણી તથા स्वस्रा-વિદ્યા-ક્રિયાથી सह-સાથે जुषस्व-સેવન કરતા તથા જે ते-જેનો स्वाहा-સત્યવાણી રૂપ भागः-ભાગ છે અને જે તેનું आखुः-ખોદવા યોગ્ય પદાર્થ તથા पशुः-દર્શનીય ભોગ્ય પદાર્થ છે. જેનું એ जुषस्व-સેવન કરે છે, તેનું સેવન સર્વ મનુષ્યો સદા કરે. (૫૭)

ભાવાર્થ : જેમ ભાઈ પોતાની પ્રિય વિદુષી બહેનની સાથે વેદાદિ શબ્દવિદ્યા ભણીને આનંદ ભોગવે છે.

જેમ આ પ્રાણ શ્રેષ્ઠ શબ્દવિદ્યાથી પ્રિય લાગે છે, તેમ વિદ્વાન મનુષ્ય શબ્દવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને સુખી બને છે.

એ બંને વિના કોઈ પણ સત્ય જ્ઞાન અને સુખ-ભોગને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૫૭)

अव रुद्रमदीमह्यव देवं त्र्यम्बकम्।

यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा नो व्यवसाययात्॥ ५८॥

પદાર્થ : અમે त्र्यम्बकम्-ત્રણે કાળમાં એકરસ જ્ઞાનયુક્ત, देवम्-સુખ આપનાર તથા रुद्रम्-દુષ્ટોને રડાવનાર જગદીશ્વરની ઉપાસના કરીને સર્વ દુઃખોનો अवादीमहि-સારી રીતે નાશ કરીએ.

यथा-જેમ પરમેશ્વર नः-અમને वस्यसः-ઉત્તમ વાસ કરનાર अवाकरत्-સારી રીતે બનાવે. यथा-જેમ नः-અમને श्रेयसः-અત્યંત શ્રેષ્ઠ करत्-બનાવે यथा-જેમ नः-અમને व्यवसाययात्-નિશ્ચયયુક્ત બનાવે, તેમ સુખપૂર્વક નિવાસ કરાવવા તથા ઉત્તમ ગુણયુક્ત અને સત્યપણાથી દઢ નિશ્ચય પ્રદાતા પરમેશ્વરની પ્રાર્થના કરીએ. (૫૮)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય ઈશ્વરની ઉપાસના વિના સર્વ દુઃખોનો અન્ત કરી શકતો નથી.

જે ઈશ્વર સર્વને સુખમય નિવાસયુક્ત, પ્રશંસનીય અને સત્ય નિશ્ચય કરનાર બનાવે છે, તેની આજ્ઞાનું પાલન સર્વેએ કરવું જોઈએ. (૫૮)

भेषजमसि भेषजङ्गवेऽश्वाय पुरुषाय भेषजम्। सुखम्मेषाय मेष्यै॥ ५९॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ भेषजम्-શરીર, અન્તઃકરણ, ઇન્દ્રિય અને ગાય વગેરે પશુઓના રોગોનો નાશ કરનાર असि-છો.

भेषजम्-અવિદ્યા વગેરે ક્લેશોને દૂર કરનાર असि-છો, તે આપ नः-અમારા માટે गवे-ગાય વગેરે अश्वाय-ઘોડા વગેરે पुरुषाय-સર્વ મનુષ્યો मेषाय-ઘેટાં અને मेष्यै-ઘેટી વગેરે માટે सुखम्-શ્રેષ્ઠ સુખ પ્રદાન કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની ઉપાસના વિના શરીર, આત્મા અને પ્રજાનાં દુઃખો દૂર થઈ સુખ ઉત્પન્ન થતું નથી.

એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર અને ઔષધના સેવનથી શરીર, આત્મા, પ્રજા તથા પશુઓનાં દુઃખોની પ્રયત્નપૂર્વક નિવૃત્તિ કરીને સુખને ઉત્પન્ન કરવું જોઈએ. (૫૯)

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। ऊर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्। त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः॥ ६०॥

પદાર્થ : અમે सुगन्धिम्-શુદ્ધ ગંધયુક્ત पुष्टिवर्धनम्-શરીર આત્મા અને સમાજના બળની વૃદ્ધિ કરનાર, त्र्यम्बकम्-રુદ્રરૂપ જગદીશ્વર છે તેની यजामहे-નિરંતર સ્તુતિ કરીએ.

તેની કૃપાથી उर्वारुकमिव-જેમ એક જાતની કાકડી પાકીને बन्धनात्-વેલાથી છુટી પડીને અમૃતતુલ્ય બને છે, તેમ અમે પણ मृत्योः-પ્રાણ અને શરીરના વિયોગથી मुक्षीय-છૂટી જઈએ અને अमृतात्-મોક્ષરૂપ સુખથી मा-કદી પણ શ્રદ્ધારહિત ન બનીએ.

અમે सुगन्धिम्-શ્રેષ્ઠ ગંધયુક્ત पतिवेदनम्-રક્ષણ કરનાર સ્વામીને આપનાર त्र्यम्बकम्-સર્વના અધ્યક્ષ જગદીશ્વરનું यजामहे-નિરંતર સત્કારપૂર્વક ધ્યાન ધરીએ.

એના અનુગ્રહથી उर्वारुकमिव-જેમ કાકડી પાકીને बन्धनात्-વેલાથી છૂટી પડી અમૃત સમાન મીઠી બને છે, તેમ અમે પણ इतः-આ શરીરથી मुक्षीय-છૂટી જઈ अमुतः-મોક્ષ તથા અન્ય જન્મનાં સુખ

અને સત્યધર્મનાં ફળથી मा-પૃથક્ ન બનીએ. (૬૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરને છોડીને કોઈ અન્યની પૂજા ન કરે, કારણ કે વેદમાં તેનું વિધાન ન હોવાથી દુઃખરૂપી ફળદાયક છે. જેમ કાકડી ફળ વેલામાં લાગેલ હોય તે સ્વયં પાકીને સમય થતાં વેલાના બંધનથી છૂટીને ઉત્તમ સ્વાદયુક્ત બને છે, તેમ અમે પૂર્ણ આયુ ભોગવીને શરીરનો ત્યાગ કરીને મુક્તિને પ્રાપ્ત કરીએ.

અમે કદી પણ મોક્ષપ્રાપ્તિનાં કર્મોથી, પરલોકથી અથવા પરજન્મથી વિરક્ત - ઉદાસ ન બનીએ.

અમે કદીપણ નાસ્તિકતાનો આશ્રય લઈને ઈશ્વરનો અનાદર ન કરીએ.

જેમ લોકો સાંસારિક સુખ માટે અન્ન, જળ વગેરે પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છે છે, તેમ જ અમે ઈશ્વર, વેદ, વેદોક્ત ધર્મ અને મુક્તિમાં નિત્ય શ્રદ્ધા રાખીએ. (૬૦)

एतत्ते॑ रुद्राव॒सं तेन॑ प॒रो मूज॑व॒तोऽती॑हि।

अव॑ततधन्वा॒ पिना॑कावस॒ः कृत्ति॑वासा॒ऽअहि॑ꣳसन्नः शिवोऽती॑हि॥ ६१॥

પદાર્થ : હે रुद्र-શત્રુઓને રડાવનાર, યુદ્ધવિદ્યામાં કુશળ સેનાધ્યક્ષ વિદ્વાન ! अवततधन्वा-યુદ્ધ માટે વિશાળ ધનુષ્યને ધારણ કરનાર, पिनाकावसः-પિનાક અર્થાત્ જે શસ્ત્રથી શત્રુઓના બળનો નાશ કરી પોતાનું રક્ષણ કરનાર, कृत्तिवासः-ચામડાં અને કવચ સમાન દૃઢ વસ્ત્ર ધારણ કરનાર, शिवः-સર્વ સુખ આપનાર અને परः- ઉત્તમ સામર્થ્યયુક્ત - બળવાન શૂરવીર પુરુષ ! આપ मूजवतः-મુંજ ઘાસ વગેરે યુક્ત પર્વતની પર બીજા દેશમાં શત્રુઓને अतीहि-પ્રાપ્ત કરો [ભગાડી મૂકો].

एतत्-જે આ ते-આપનું अवसम्-રક્ષણ કરવું છે तेन-તેથી नः-અમારી अहिंसन्-હિંસા છોડીને રક્ષા કરતા આપ अतीहि-અમારો સર્વ રીતે સત્કાર કરો. (૬૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અજાતશત્રુ [શત્રુરહિત] બનીને, રાજ્યને શત્રુરહિત કરીને તથા સર્વ અસ્ત્ર-શસ્ત્ર તૈયાર કરીને, દુષ્ટોને દંડ આપીને તથા તેમનો નાશ કરીને શ્રેષ્ઠોના પાલનકર્તા બનો. જેથી દુષ્ટ સુખી અને શ્રેષ્ઠ દુઃખી કદી ન બને. (૬૧)

त्र्या॒यु॒षं ज॒मद॑ग्नेः क॒श्यप॑स्य त्र्या॒यु॒षम्।

यद्दे॒वेषु॑ त्र्या॒यु॒षं तन्नो॑ऽअस्तु त्र्या॒यु॒षम्॥ ६२॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ यत्-જે देवेषु-વિદ્વાનોના વર્તમાનમાં त्र्यायुषम्-બ્રહ્મચારી, ગૃહસ્થ, વાનપ્રસ્થ અને સંન્યાસ આશ્રમોના પરોપકારયુક્ત આયુ વર્તનથી જે जमदग्नेः-ચક્ષુ વગેરે ઇન્દ્રિયોને त्र्यायुषम्-શુદ્ધિ, બળ અને પરાક્રમયુક્ત ત્રણ ગણી આયુ અને જે कश्यपस्य-ઈશ્વરપ્રેરિત त्र्यायुषम्-ત્રણ ગણી અર્થાત્ ત્રણસો વર્ષથી અધિક પણ આયુ વિદ્યમાન છે, तत्-તે શરીર, આત્મા અને સમાજને આનંદ આપનાર त्र्यायुषम्-ત્રણસો વર્ષથી અધિક પણ આયુને नः-અમને પ્રાપ્ત કરાવો. (૬૨)

ભાવાર્થ : અહીં ચક્ષુ સર્વ ઈન્દ્રિયોમાં તથા કશ્યપ - સર્વદૃષ્ટા ઈશ્વર નિર્માણ કરનારાઓમાં ઉત્તમ

છે, તેમ સમજવું જોઈએ.

'त्र्यायुषम्'- પદની ચાર વાર આવૃત્તિથી ત્રણ ગણી આયુથી અધિક ચાર ગણી આયુનું ગ્રહણ કરીને તથા તેની પ્રાપ્તિ માટે ઈશ્વરને પ્રાર્થના કરીને સ્વયં પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. જેમ કે -

હે જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી જેમ વિદ્વાન લોકો વિદ્યા, પરોપકાર અને ધર્માનુષ્ઠાન દ્વારા આનંદપૂર્વક ત્રણસો વર્ષો સુધીની આયુ ભોગવે છે. -

તેમ ત્રણ પ્રકારનાં દુ:ખોથી રહિત, શરીર, ઈન્દ્રિય, અન્તઃકરણ તથા પ્રાણ સંબંધી સુખોથી પરિપૂર્ણ અને વિદ્યાવિજ્ઞાનથી સંપન્ન આયુ છે, તેને અમે પ્રાપ્ત કરીને ત્રણસો વર્ષની અથવા ચાર સો વર્ષની આયુ સુખપૂર્વક ભોગવીએ. (૬૨)

शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः। निवर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय॥ ६३॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર અને ઉપદેશક વિદ્વાન ! જે આપ स्वधिति-અવિનાશી હોવાથી વજ્રમય असि-છો, જે ते-આપનું शिवः-સુખસ્વરૂપ વિજ્ઞાન આપનાર नाम-નામ असि-છે.

આપ મારા पिता-પાલનહાર असि-છો ते-આપને મારા नमः-સત્કારપૂર્વક નમસ્કાર अस्तु-છે.

આપ मा-મને मा हिंसीः-અલ્પ આયુથી મુક્ત કરો, [દીર્ઘાયુષી કરો] અને હું આપને आयुषे-પૂર્ણ આયુ ભોગવવા अन्नाद्याय-અન્ન વગેરે ભોગવવા, सुप्रजास्त्वाय-ઉત્તમ પુત્રાદિ તથા ચક્રવર્તી રાજ્યાદિની પ્રાપ્તિ કરવા सुवीर्याय-ઉત્તમ શરીર, આત્મામાં બળ પરાક્રમ માટે તથા रायस्पोषाय-વિદ્યા અને સુવર્ણ વગેરે ધનની પુષ્ટિ માટે वर्त्तयामि-વર્તાવું અને વર્તું છું.

આ રીતે વર્તન કરવાથી સર્વ દુઃખોને છોડાવીને, મારા આત્મામાં ઉપાસ્ય રૂપમાં નિશ્ચય કરીને અન્તર્યામી સ્વરૂપ આપનો આશ્રય કરીને સર્વ સાથે વર્તાવ કરું છું. (૬૩)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય મંગલમય અને સર્વના પિતા પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન અને ઉપદેશકોના સંગ વિના સાંસારિક અને પારલૌકિક [આધ્યાત્મિક] સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.

કોઈએ પણ નાસ્તિક બનીને ઈશ્વર અને વિદ્વાનોનો અનાદર ન કરવો જોઈએ.

જે નાસ્તિક બનીને ઈશ્વરનો અને વિદ્વાનોનો અનાદર કરે છે, તેનો સર્વત્ર અનાદર થાય છે. આથી મનુષ્યે સદા આસ્તિક રહેવું જોઈએ. (૬૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ ત્રીજા અધ્યાયમાં અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞોનું વર્ણન (૧-૩), અગ્નિના સ્વભાવનું પ્રતિપાદન (૪, ૫), પૃથિવીના ભ્રમણનું લક્ષણ (૬), અગ્નિ શબ્દથી ઈશ્વર અને ભૌતિક અગ્નિનું પ્રતિપાદન (૧૨, ૧૪, ૧૮ ઈશ્વર-ભૌતિક, ૨૪, ૨૯ ઈશ્વર), અગ્નિહોત્રના મંત્રોનો પ્રકાશ (૧-૩), ઈશ્વરનું ઉપસ્થાન (૧૧), અગ્નિનું સ્વરૂપ (૭, ૮, ૯, ૧૬), ઈશ્વરની પ્રાર્થના, ઉપાસના અને તેનાં ફળોનું વર્ણન (૨૭, ૩૦, ૩૧), ઈશ્વરના સ્વભાવનું પ્રતિપાદન (૩૫), સૂર્યનાં કિરણોનાં કાર્યનું વર્ણન (૩૩), નિત્ય ઉપાસના (૩૫), સાવિત્રી મંત્રનું પ્રતિપાદન (૩૫), ઈશ્વર ઉપાસના (૩૫),

યજ્ઞફળનું પ્રકાશન (૪૯), ભૌતિક અગ્નિનું વર્ણન (૪૦), ગૃહાશ્રમનું અનુષ્ઠાન અને લક્ષણ (૪૧), ઈન્દ્ર અને મરુતનું કાર્ય (૪૬), પુરુષાર્થ કરવો આવશ્યક (૪૭), પાપોથી નિવૃત્તિ (૪૮), યજ્ઞની સમાપ્તિ આવશ્યક (૪૯), સત્યતાથી લેણ-દેણનો વ્યવહાર કરવો (૫૦), વિદ્વાન અને ઋતુઓના સ્વભાવનું વર્ણન (૨૧), ચાર અન્તઃકરણનું લક્ષણ (૫૩, ૫૪, ૫૫), રુદ્ર શબ્દના અર્થનું પ્રતિપાદન (૫૭-૬૩), ત્રણસો વર્ષની આયુનું સંપાદન (૬૨), ધર્મથી આયુ વગેરે પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરવાનું વર્ણન છે. તેથી બીજા અધ્યાયની સાથે આ ત્રીજા અધ્યાયના અર્થની સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति तृतीयोऽध्यायः ॥



॥ अथ चतुर्थोऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

एदमगन्म देवयजनं पृथिव्या यत्र देवासोऽअजुषन्त विश्वे।

ऋक्सामाभ्याᳬंसन्तरन्तो यजुर्भी रायस्पोषेण समिषा मदेम।

इमाऽआपः शमु मे सन्तु देवीः ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनᳬं हिᳬंसीः॥ १॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ पृथिव्याः-ભૂમિ પર મનુષ્ય જન્મને પ્રાપ્ત કરીને इदम्-આ देवयजनम्-વિદ્વાનોનું યજન-પૂજન, સત્કાર અને દાનને પ્રાપ્ત કરીને यत्र-જે દેશમાં ऋक्सामाभ्याम्-ઋગ્વેદ, સામવેદ તથા यजुर्भिः-યજુર્વેદના મંત્રોમાં કહેલાં કર્મ, रायस्पोषेण-ધનની પુષ્ટિ, समिषा-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાદિની ઈચ્છા તથા અન્નાદિથી દુઃખોનો सन्तरन्तः-અંત કરીને - પાર કરીને विश्वे-સર્વ देवासः-વિદ્વાન - અમે વિદ્વાનો સુખોને अगन्म-પ્રાપ્ત કરીએ अजुषन्त-તથા સર્વ રીતે તેનું સેવન કરીને मदेम-સુખી રહીએ.

उ-અને मे-મારા દ્વારા સુનિયમ, વિદ્યા, શ્રેષ્ઠ શિક્ષાની સાથે સેવન કરેલ इमाः-આ देवीः-શુદ્ધ आपः-જલ સુખ આપનાર બને છે, તેમ ત્યાં તું પણ તેને પ્રાપ્ત કરીને जुषस्व-સેવન કરીને આનંદને પ્રાપ્ત કર, તે જલ વગેરે પદાર્થો પણ તને शम्-સુખકારક सन्तु-બને.

જેમ ओषधे-સોમલતા વગેરે ઔષધિગણ સર્વ રોગોથી રક્ષા કરે છે, તેમ તું પણ અમારી त्रायस्व-રક્ષા કર.

स्वधिते-રોગનાશકમાં વજ્ર સમાન બનીને एनम्-એ યજમાન તથા પ્રાણીમાત્રને मा हिंसीः-કદી માર નહિ (૧)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય અંગ અને ઉપનિષદો સહિત ચારે વેદોને ભણીને, અન્યોને ભણાવીને, વિદ્યાને પ્રકાશિત કરીને, વિદ્વાન બનીને, શ્રેષ્ઠ કર્મોનાં અનુષ્ઠાનથી સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે;

તેમ એ વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને, તેમની પાસેથી વૈદિક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, શ્રેષ્ઠ આચરણ અને ઔષધિ સેવનથી દુઃખનો નાશ કરીને, શારીરિક તથા આત્મિક પુષ્ટિથી ધન-સંચય કરીને, સર્વ મનુષ્યોએ આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૧)

आपोऽअस्मान् मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु।

विश्वᳬं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूतऽएमि।

दीक्षातपसोस्तनूरसि तां त्वा शिवाᳬं शग्मां परिदधे भद्रं वर्णं पुष्यन्॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ भद्रम्-અતિ સુંદર वर्णम्-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય અતિ સુંદર રૂપને पुष्यन्-પુષ્ટ કરતો હું घृतप्वः-ઘીને પવિત્ર કરવા देवीः-દિવ્ય ગુણયુક્ત मातरः-માતા-પિતા સમાન પાલન કરનારા

आपः-જલ रिप्रम्-વ્યક્ત વાણીથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય અને જાણવા યોગ્ય विश्वम्-સર્વને प्रवहन्ति-પ્રાપ્ત કરે છે, હે વિદ્વાનો ! अस्मान्-અમો મનુષ્યોને शुन्धयन्तु-બાહ્ય દેશને શુદ્ધ કરો અને જે घृतेन-જલ ઘી સમાન પુષ્ટ કરનાર છે, તેથી नः-અમને સુખ આપીને તેનાથી पुनन्तु-પવિત્ર કરો.

જેમ હું इत्-પણ उत्-સારી રીતે आभ्यः-એ જલોથી शुचिः-પવિત્ર તથા आपूतः-શુદ્ધ થઈને दीक्षातपसोः-બ્રહ્મચર્ય વગેરેના ઉત્તમ નિયમોના પાલનથી, જે ધર્મના અનુષ્ઠાન માટે तनूः-શરીર असि-છે, તે शिवाम्-કલ્યાણકારી शग्माम्-સુખસ્વરૂપ શરીરને एमि-પ્રાપ્ત કરીને परिदधे-સર્વ રીતે ધારણ કરું છું, તેમ તમે પણ તે જલ અને ताम्-તે त्वाम्-અત્યુત્તમ શરીરને ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, પ્રાણોને ધારણ કરાવનાર તથા માતા-પિતા સમાન પાલન કરનાર જલ છે, તેનાથી સર્વ પ્રકારથી પવિત્ર થઈને, તેને શુદ્ધ કરીને, મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ.

તેનાથી સુંદર વર્ણ અને રોગરહિત શરીર બનાવીને, નિત્ય પ્રયત્નપૂર્વક ધર્મનું આચરણ કરીને, પુરુષાર્થથી આનંદ પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૨)

महीनां पयोऽसि वर्चोदाऽअसि वर्चो मे देहि।
वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दाऽअसि चक्षुर्मे देहि॥ ३॥

પદાર્થ : જે આ महिनाम्-પૃથિવી વગેરેના पयः-જલરસના નિમિત્ત असि-છે, वर्चोदाः-દીપ્તિ આપનાર असि-છે, જે मे-મારા માટે वर्चः-પ્રકાશ देहि-આપે છે, જે वृत्रस्य-મેઘનો कनीनकः-પ્રકાશિત કરનાર असि-છે. તથા જે चक्षुर्दाः-નેત્રના વ્યવહારને સિદ્ધ કરનાર [અર્થાત્ જોવાનું સાધન ચક્ષુ આપનાર] असि-છે, તે સૂર્ય मे-મારા માટે चक्षुः-નેત્ર વ્યવહારને देहि-પ્રદાન કરે છે. (૩)

ભાવાર્થ : સૂર્યના પ્રકાશ વિના વર્ષાની ઉત્પત્તિ અને નેત્રોના વ્યવહારની [જોવાની] સિદ્ધિ થતી નથી, તેથી જેણે એ સૂર્યની રચના કરી છે, તે ઈશ્વરને કરોડો ધન્યવાદ આપવા જોઈએ. એમ મનુષ્યોએ જાણવું યોગ્ય છે. (૩)

चित्पतिर्मा पुनातु वाक्पतिर्मा पुनातु देवो मा सविता पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्॥ ४॥

પદાર્થ : હે पवित्रपते-પવિત્રજનોના પાલક પરમેશ્વર ! चित्पतिः-વિજ્ઞાનના સ્વામી, वाक्पतिः-વાણીને નિર્મળ અને सविता-સર્વ જગતને ઉત્પન્ન કરનાર, देवः-દિવ્ય સ્વરૂપ આપ पवित्रेण-શુદ્ધ કરનાર, अच्छिद्रेण-અવિનાશી વિજ્ઞાનથી सूर्यस्य-સૂર્ય તથા પ્રાણના रश्मिभिः-પ્રકાશ અને ગમનાગમનથી मा-મને તથા મારા ચિત્તને पुनातु-પવિત્ર કરો. मा-મને તથા મારી વાણીને पुनातु-પવિત્ર કરો. मा-મને તથા મારા ચક્ષુને पुनातु-પવિત્ર કરો.

જે पवित्रपूतस्य-શુદ્ધ સ્વાભાવિક વિજ્ઞાન વગેરે ગુણોથી પવિત્ર ते-આપની કૃપાથી यत्कामः-જે ઉત્તમ કામનાયુક્ત હું पुने-પવિત્ર બનું છું.

જે ते-આપની ઉપાસનાથી तत्-તે અતિ શ્રેષ્ઠ કર્મ કરવા शकेयम्-સમર્થ બનું છું. [तस्य]-તે આપ

જગદીશ્વરની હું સેવા કેમ ન કરું ? (૪)

ભાવાર્થ : જે વેદોના વિશેષ જ્ઞાતા અને રક્ષક સ્વામી પરમેશ્વરે વિદ્યા, પૃથિવી, જલ, વાયુ અને સૂર્ય આદિ શુદ્ધિકારક પદાર્થોની રચના કરી છે, તેની ઉપાસનાથી મનુષ્યોએ કામનાની પરિપૂર્ણતા અને પવિત્રતા પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૪)

आ वो देवासऽईमहे वामं प्रयत्यध्वरे।
आ वो देवासऽआशिषो यज्ञियासो हवामहे॥ ५॥

પદાર્થ : હે देवासः-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોથી પ્રકાશિત વિદ્વાનો ! જેમ અમે वः - તમને प्रयति-સુખયુક્ત अध्वरे-હિંસા કરવાને અયોગ્ય યજ્ઞના અનુષ્ઠાનમાં वः-તમારા वामम्-પ્રશંસનીય ગુણસમૂહની आ ईमहे-સારી રીતે યાચના કરીએ છીએ.

હે देवासः-વિદ્વાનો ! જેમ અમે આ સંસારમાં આપનાથી यज्ञिया-યજ્ઞને સિદ્ધ કરવા યોગ્ય आशिषः-ઈચ્છાઓનો आ हवामहे-સારી રીતે સ્વીકાર કરી શકીએ, તેમ જ આપ અમારા માટે સદા પ્રયત્ન કરતા રહો. (૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમ વિદ્વાનો દ્વારા ઉત્તમ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને, પોતાની ઈચ્છાઓ પૂર્ણ કરીને, એ વિદ્વાનોનો સંગ અને સેવા કરવાં જોઈએ. (૫)

स्वाहा यज्ञं मनसः स्वाहोरोरन्तरिक्षात् स्वाहा द्यावापृथिवीभ्याᳬस्वाहा वातादारभे स्वाहा॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું स्वाहा-વેદોક્ત, स्वाहा-ઉત્તમ શિક્ષા સહિત, स्वाहा-વિદ્યાઓનો પ્રકાશ, स्वाहा-સત્ય અને સર્વ જીવોનું કલ્યાણ કરનારી વાણી અને स्वाहा-સારી રીતે પ્રયુક્ત કરેલ ઉત્તમ ક્રિયાથી उरोः-વિશાળ अन्तरिक्षात्-આકાશ અને वातात्-વાયુની શુદ્ધિ કરીને द्यावापृथिवीभ्याम्-શુદ્ધ પ્રકાશ [દ્યુલોક] અને ભૂમિના પદાર્થો मनसः-વિજ્ઞાન અને ઠીક-ઠીક ક્રિયાથી यज्ञम्-યજ્ઞને પૂર્ણ કરવા માટે પુરુષાર્થનો आरभे-નિત્ય આરંભ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જે વેદોક્ત રીતિથી મન-વચન-કર્મથી જે યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તે અન્તરિક્ષ વગેરેમાં વાયુની શુદ્ધિથી પ્રકાશ અને પૃથિવીની પવિત્રતા કરીને સર્વને સુખી કરે છે. (૬)

आकूत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहा मेधायै मनसेऽग्नये स्वाहा दीक्षायै तपसेऽग्नये स्वाहा सरस्वत्यै पूष्णेऽग्नये स्वाहा। आपो देवीर्बृहतीर्विश्वशम्भुवो द्यावापृथिवीऽउरोऽअन्तरिक्ष। बृहस्पतये हविषा विधेम स्वाहा॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ અમે आकूत्यै-ઉત્સાહ, प्रयुजे-શ્રેષ્ઠ ધર્મયુક્ત ક્રિયાઓ, अग्नये-અગ્નિ પ્રદીપન, स्वाहा-વેદવાણીનો પ્રચાર, सरस्वत्यै-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, पूष्णे-પુષ્ટિ કરવા, बृहस्पतये-મોટા

મોટા અધિપતિઓ થવા, अग्नये-વિદ્યુત્‌ની વિદ્યાનું ગ્રહણ, स्वाहा-ભણવા-ભણાવવાથી વિદ્યા, मेधायै-બુદ્ધિની વૃદ્ધિ, मनसे-વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ, अग्नये-કારણરૂપ, स्वाहा-સત્યવાણીની પ્રવૃત્તિ, दीक्षायै-ધર્મનિયમ અને આચરણની રીતિ, तपसे-પ્રતાપ, अग्नये-જઠરાગ્નિની શુદ્ધિ, स्वाहा-ઉત્તમ સ્તુતિયુક્ત વાણી દ્વારા बृहतीः-મહાન ગુણોથી યુક્ત, विश्वशम्भुवः-સર્વને સુખ ઉત્પન્ન કરાવનાર, देवीः-દિવ્યગુણસંપન્ન, आपः-પ્રાણ અને જલથી, स्वाहा-સત્યભાષણ, द्यावापृथिवी-ભૂમિ અને પ્રકાશની શુદ્ધિ માટે, उरो-બહુ સુખ પ્રાપ્તિ, अन्तरिक्ष-અન્તરિક્ષમાં રહેનારા પદાર્થોને શુદ્ધ અને જે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી તથા વેદવાણીથી યજ્ઞ સિદ્ધ થાય છે, તે સર્વને हविषा-સત્ય અને પ્રેમભાવથી विधेम-સિદ્ધ કરીએ, તેમ તમે પણ કર્યા કરો. (૭)

ભાવાર્થ : યજ્ઞના અનુષ્ઠાન વિના ઉત્સાહ, બુદ્ધિ, સત્યવાણી, દીક્ષા, તપ, ધર્માચરણ, વિદ્યા અને પુષ્ટિની પ્રાપ્તિ સંભવ નથી અને તેના વિના કોઈ પણ મનુષ્ય પરમેશ્વરની આરાધના કરવામાં સફળતા પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.

આથી સર્વ મનુષ્યોએ એ સર્વનું અનુષ્ઠાન કરીને સંપૂર્ણ આનંદને પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૭)

विश्वो॑ दे॒वस्य॑ ने॒तुर्मर्त्तो॑ वुरीत स॒ख्यम्।
विश्वो॑ रा॒यऽइ॑षुध्यति द्यु॒म्नं वृ॑णीत पु॒ष्यसे॒ स्वाहा॑॥ ८॥

પદાર્થ : જેમ विश्वः-સર્વ मर्त्तः-મનુષ્ય नेतुः-સર્વને પ્રાપ્ત તથા देवस्य-સર્વ પ્રકાશક પરમેશ્વરની સાથે सख्यम्-મિત્રતા અને ગુણ-કર્મ સમૂહનો वुरीत-સ્વીકાર અને विश्वः-સર્વ राये-ધનની પ્રાપ્તિ માટે इषुध्यति-બાણને ધારણ કરે છે અને તે द्युम्नम्-ધનનો वृणीत-સ્વીકાર કરે છે અર્થાત્ પોતાનું બનાવે છે, તેમ હે મનુષ્ય ! એ સર્વનું અનુષ્ઠાન કરીને स्वाहा-શુભકર્મથી તું પણ पुष्यसे-પુષ્ટ બન. (૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના અને પરસ્પર મિત્રતા કરીને, યુદ્ધમાં દુષ્ટોને જીતીને, રાજ્યલક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરીને, સુખી રહેવું જોઈએ. (૮)

ऋ॒क्सा॒मयोः॒ शिल्पे॑ स्थ॒स्ते वा॒मार॑भे॒ ते मा॑ पात॒मास्य य॒ज्ञस्योदृ॒चः।
शर्मा॑सि शर्म॑ मे यच्छ॒ नम॑स्तेऽअस्तु॒ मा मा॑ हिꣳसीः॥ ९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! આપ જે હું ऋक्सामयोः-ઋગ્વેદ અને સામવેદના અધ્યયન પછી उदृचः-જેમાં સારી રીતે ઋચાઓ પ્રત્યક્ષ કરવામાં આવે છે, अस्य-આ यज्ञस्य-શિલ્પવિદ્યાથી સિદ્ધ થયેલ યજ્ઞ સંબંધી वाम्-એ शिल्पे-મન તથા પ્રસિદ્ધ ક્રિયાથી સિદ્ધ થનાર વિદ્યાઓ स्थ-છે, ते-તે બન્નેથી आरभे-આરંભ કરું છું.

જે मा-મારી आ-સર્વ તરફથી पातम्-રક્ષા કરે છે, ते-તેઓ स्थः-છે. તેમને વિદ્વાનોના સાનિધ્યથી ગ્રહણ કરું છું.

હે વિદ્વન્ મનુષ્ય ! ते-તારા માટે मे-મારા नमः-અન્નાદિ સત્કારપૂર્વક નમસ્કાર अस्तु-છે. તથા તમે मा-મને ચલાયમાન ન કરો અને यत्-જે शर्म-સુખ असि-છે, તે शर्म-સુખને मे-મારા માટે यच्छ-પ્રદાન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનો પાસેથી વેદોનું અધ્યયન કરીને, શિલ્પવિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, હસ્તક્રિયાઓથી સ્વયં સાક્ષાત્કાર કરીને, વિમાનાદિ યાનોની રચનાઓનું નિર્માણ કરીને, સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૯)

ऊर्गस्याङ्गिरस्यूर्णम्रदाऽऊर्जं मयि धेहि। सोमस्य नीविरसि विष्णोः शर्मासि शर्म यजमानस्येन्द्रस्य योनिरसि सुऽसस्याः कृषीस्कृधि। उच्छ्रयस्व वनस्पतऽऊर्ध्वो मा पाह्यꣳहसऽआस्य यज्ञस्योदृचः॥ १०॥

પદાર્થ - હે वनस्पते-પ્રકાશનીય વિદ્યાનો પ્રચાર કરનારા વિદ્વાન ! તું જે अङ्गिरसि-અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી સિદ્ધ કરેલી ऊर्णम्रदाः-આચ્છાદનને હટાવનાર ऊर्क्-પરાક્રમ તથા અન્નાદિને પ્રદાન કરનારી શિલ્પ વિદ્યા असि-છે, અથવા જે ऊर्जम्-પરાક્રમ તથા અન્નાદિને ધારણ કરે असि-છે, જે सोमस्य-ઉત્પન્ન પદાર્થોનું नीविः-આચ્છાદન કરનાર असि-છે.

જે विष्णोः-શિલ્પવિદ્યામાં વ્યાપક બુદ્ધિ, यजमानस्य-શિલ્પક્રિયાને જાણનાર, इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત મનુષ્યના शर्म-સુખનું योनिः-કારણ असि-છે.

જે अस्य-આ उदृचः-ઋચાઓને પ્રત્યક્ષ કરનાર यज्ञस्य-શિલ્પક્રિયા-સાધ્ય યજ્ઞ માટે शर्म-સુખકારક असि-છે, તેને मयि-શિલ્પવિદ્યાને જાણવાના ઈચ્છુક મારામાં આ धेहि-સારી રીતે ધારણ કરે છે.

सुसस्याः-ઉત્તમ ધાન્ય ઉત્પન્ન કરવા તથા कृषीः-ખેતી તથા ભૂમિનું વિલેખન કરનારી ક્રિયાઓને कृधि-સિદ્ધ કરીને ऊर्ध्वः-ઉપર સ્થિત થનાર मा-મને उच्छ्रयस्व-ઉત્તમ ધાન્યયુક્ત ખેતીનું સેવન કરાવો અને अंहसः-પાપ અને દુ:ખોથી पाहि-રક્ષા કરો. જે વિમાન વગેરે યાનોમાં તથા યજ્ઞોમાં वनस्पते-વૃક્ષની શાખા ઉપર રાખવામાં આવે છે, તેનો પણ उच्छ्रयस्व-ઉપયોગ કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે વિદ્વાનોથી શિલ્પવિદ્યાનો સાક્ષાત્કાર કરીને તથા તેનો પ્રચાર કરીને સર્વ મનુષ્યોને સમૃદ્ધિયુક્ત બનાવવા જોઈએ. (૧૦)

व्रतं कृणुताग्निर्ब्रह्माग्निर्यज्ञो वनस्पतिर्यज्ञियः। दैवीं धियं मनामहे सुमृडीकामभिष्टये वर्चोधां यज्ञवाहसꣳ सुतीर्था नोऽअसद्वशे। ये देवा मनोजाता मनोयुजो दक्षक्रतवस्ते नोऽवन्तु ते नः पान्तु तेभ्यः स्वाहा॥ ११॥

પદાર્થ : અમે જે ब्रह्म-બ્રહ્મપદવાચ્ય अग्निः-નામથી પ્રસિદ્ધ असत्-છે, જે यज्ञः-અગ્નિસંજ્ઞક અને જે वनस्पतिः-વનોનો પાલક યજ્ઞ अग्निः-અગ્નિ નામે છે, તેની ઉપાસના કરીને, તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરીને, अभिष्टये-ઈષ્ટ સિદ્ધિ માટે જે सुतीर्था-જેથી અત્યુત્તમ, દુ:ખોથી તારનાર, વેદાધ્યયનાદિ તીર્થ પ્રાપ્ત થાય છે, તે सुमृडीकाम्-ઉત્તમ સુખયુક્ત वर्चोधाम्-વિદ્યારૂપી પ્રકાશને ધારણ કરવા તથા दैवीम्-દિવ્યગુણ સંપન્ન धियम्-બુદ્ધિ અને ક્રિયાને मनामहे-જાણીએ.

ये-જે दक्षक्रतवः-શરીર અને આત્માનાં બળ, બુદ્ધિ તથા ક્રિયાથી યુક્ત मनोजाताः-વિજ્ઞાનથી ઉત્પન્ન થયેલ मनोयुजः-સત્ય-અસત્યને જાણીને देवाः-વિદ્વાનો वशे-પ્રકાશયુક્ત કર્મમાં રહે છે. તથા જેનાથી

स्वाहा-વિદ્યાયુક્ત વાણી પ્રાપ્ત થાય છે. तेभ्यः-તેનાથી પૂર્વોક્ત પ્રજ્ઞા બુદ્ધિની मनामहे-યાચના કરીએ છીએ. ते-તેઓ नः-અમને अवन्तु-વિદ્યા, ઉત્તમ ક્રિયા તથા શિક્ષા વગેરેમાં પ્રવિષ્ટ [કરાવે] અને नः-અમારી નિરંતર पान्तु-રક્ષા કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે જેનું 'અગ્નિ' નામ છે, તે બ્રહ્મને જાણીને તથા તેની ઉપાસના કરીને ઉત્તમ બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ.

વિદ્વાન લોકો જે બુદ્ધિ દ્વારા શિલ્પ યજ્ઞોને સિદ્ધ કરે છે, તે વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, સ્વતંત્ર વ્યવહારમાં સદા સ્થિર રહેવું જોઈએ.

બુદ્ધિ વિના કોઈ પણ મનુષ્ય સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. માટે સર્વ વિદ્વાનોને ઉચિત છે કે સર્વ મનુષ્યોને બ્રહ્મવિદ્યા, પદાર્થવિદ્યા અને બુદ્ધિ પ્રદાન કરીને તેમની નિરંતર રક્ષા કરવી જોઈએ

અને એ રક્ષિત લોકોએ પરમેશ્વર અને ધાર્મિક વિદ્વાનોનાં ઉત્તમ પ્રિય કાર્યો નિત્ય કરવાં જોઈએ. (૧૧)

श्वात्राः पीता भवत यूयमापोऽअस्माकमन्तरुदरे सुशेवाः।
ताऽअस्मभ्यमयक्ष्माऽअनमीवाऽअनागसः स्वदन्तु देवीरमृताऽऋतावृधः॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અમે पीताः-પાન કરેલ अस्माकम्-મનુષ્યોના अन्तः-મધ્ય તથા उदरे-શરીરની અંદર રહેલું अस्मभ्यम्-મનુષ્યો વગેરે માટે सुशेवाः-ઉત્તમ સુખયુક્ત अनमीवाः-જ્વર વગેરે રોગસમૂહથી રહિત अयक्ष्माः-ક્ષય વગેરે રોગકારક દોષોથી રહિત अनागसः-પાપ દોષોનાં કારણોથી રહિત ऋतावृधः-સત્યવર્ધક अमृताः-નાશરહિત અમૃતરસયુક્ત देवीः-દિવ્યગુણ સંપન્ન आपः-પ્રાણ અથવા જલ છે. ताः-તેનું આપ स्वदन्तु-સારી રીતે સેવન કરો.

આનુ અનુષ્ઠાન કરીને यूयम्-તમે સર્વ મનુષ્યો સુખ ભોગવનાર भवत-નિત્ય રહો.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોના સંગથી અને ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, સર્વ પ્રકારથી સુપરીક્ષિત, શુદ્ધ, પવિત્ર, શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરનાર, તથા રોગનાશક જલ વગેરે પદાર્થોનું સેવન કરવું જોઈએ.

વિદ્યા અને આરોગ્ય વિના કોઈ પણ મનુષ્ય નિરંતર કર્મ કરી શકતો નથી. આથી તેનું - જલાદિ પદાર્થોનું સદા સેવન કરવું જોઈએ. (૧૨)

इयं ते यज्ञिया तनूरपो मुञ्चामि न प्रजाम्।
अꣳहोमुचः स्वाहाकृताः पृथिवीमाविशत पृथिव्या सम्भव॥ १३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેમ ते-તારું જે इयम्-આ यज्ञिया-યજ્ઞને યોગ્ય तनूः-શરીર अपः-જલ અને પ્રાણ તથા प्रजाम्-પ્રજાની રક્ષા કરે છે, જેને તું છોડતો નથી. હું પણ મારા તે શરીરને પૂર્ણ આયુ ભોગવ્યા વિના પ્રમાદથી અધવચ્ચે न मुञ्चामि-છોડતો - ત્યાગ કરતો નથી.

હે મનુષ્યો ! જેમ તમે पृथिव्या-ભૂમિ સાથે વૈભવયુક્ત થઈને अंहोमुचः-દુઃખોને છોડાવવા તથા स्वाहाकृताः-વાણીથી સિદ્ધ કરેલ अपः-જલ અને पृथिवीम्-ભૂમિને आविशत-સારી રીતે વિજ્ઞાનથી પ્રવેશ કરો [છો], હું પણ તેનાથી ઐશ્વર્ય સહિત અને તેમાં [પૃથિવીમાં] પ્રવેશ કરું છું, તેમ તું પણ सम्भव-બન અને પૃથિવીમાં પ્રવેશ કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્યાથી પદાર્થોને પરસ્પર મેળવીને તથા તેનું સેવન કરીને રોગરહિત શરીર અને આત્માનું પાલન કરી સુખી રહેવું જોઈએ. (૧૩)

अग्ने त्वꣳ सु जागृहि वयꣳ सु मन्दिषीमहि। रक्षा णोऽअप्रयुच्छन् प्रबुधे नः पुनस्कृधि॥ १४॥

પદાર્થ : अग्ने-જે અગ્નિ प्रबुधे-જાગવાના સમયે सुजागृहि-સારી રીતે જગાડે જેથી वयम्-જગત્‌નાં કર્મ કરનારા અમે सुमन्दिषीमहि-આનંદપૂર્વક સૂઈએ છીએ અને જે अप्रयुच्छन्-પ્રમાદ રહિત બનીને नः-અમે પ્રમાદ રહિતની रक्ष-રક્ષા કરે છે તથા પ્રમાદ કરનારનો નાશ કરે છે અને જે नः-અમારી સાથે पुनः-વારંવાર આ રીતે कृधि-વ્યવહાર કરે છે, તેનું યુક્તિપૂર્વક સર્વ મનુષ્યોએ સેવન કરવું જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે અગ્નિ સૂવા, જાગવા, જીવન અને મરણનો હેતુ છે, તેનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરવું જોઈએ. (૧૪)

पुनर्मनः पुनरायुर्मऽआगन् पुनः प्राणः पुनरात्मा मऽआगन् पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं मऽआगन्। वैश्वानरोऽदब्धस्तनूपाऽअग्निर्नः पातु दुरितादवद्यात्॥ १५॥

પદાર્થ : જેના સંબંધ અથવા કૃપાથી मे-મને જે मनः-વિજ્ઞાનસાધક મન आयुः-જીવન पुनः-ફરી-ફરી आगन्-પ્રાપ્ત થાય છે.

मे-મને प्राणः-શરીરનો આધાર પ્રાણ पुनः-ફરી आगन्-પ્રાપ્ત થાય છે.

आत्मा-સર્વત્ર વ્યાપક સર્વાન્તર્યામી પરમાત્માનું વિજ્ઞાન आगन्-પ્રાપ્ત થાય છે.

मे-મન चक्षुः-જોવા માટે નેત્ર पुनः-ફરી आगन्-પ્રાપ્ત થાય છે અને श्रोत्रम्-શબ્દ ગ્રહણ કરનાર કાન आगन्-પ્રાપ્ત થાય છે.

તે अदब्धः-હિંસા કરવા અયોગ્ય तनूपाः-શરીર તથા આત્માની રક્ષા કરવા તથા वैश्वानरः-શરીરને પ્રાપ્ત થનાર अग्निः-અગ્નિ અથવા પ્રાપ્ત થનાર પરમેશ્વર नः-અમને अवद्यात्-નિંદિત दुरितात्-પાપથી ઉત્પન્ન થયેલ દુઃખ અથવા દુષ્ટ કર્મોથી पातु-રક્ષા કરે છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે જીવ શયન અથવા મરણને પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે જે કાર્ય સિદ્ધ કરનારી મન વગેરે ઈન્દ્રિયો છે, તે અંતર્લીન સમાન થઈને ફરીથી પુનઃ જાગવાથી અથવા જન્માન્તરમાં પ્રાપ્ત થાય

છે, તે જે વિદ્યુત્ અગ્નિ વગેરેના સંબંધથી તથા પરમેશ્વરની સત્તા તથા વ્યવસ્થાથી ગોલકયુક્ત બનીને કાર્ય કરવામાં સમર્થ બને છે.

તે સારી રીતે સેવન કરેલ જઠરાગ્નિ સર્વની રક્ષા કરે છે તથા ઉપાસના કરેલ જગદીશ્વર પાપકર્મથી હટાવીને, ધર્મમાં સંલગ્ન કરીને, વારંવાર મનુષ્યજન્મ પ્રદાન કરીને, દુષ્ટ આચરણ અને દુઃખોથી પૃથક્ કરીને, સાંસારિક અને મોક્ષવિષયક સુખ પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧૫)

त्वम॑ग्ने व्रत॒पाऽअ॑सि दे॒वऽआ मर्त्ये॒ष्वा। त्वं य॒ज्ञेष्वीड्यः॑।
रास्वेय॑त्सो॒मा भूयो॑ भर दे॒वो नः॑ सवि॒ता वसो॑र्दा॒ता वस्व॑दात्॥ १६॥

પદાર્થ : હે सोम-ઐશ્વર્યદાતા अग्ने-જગદીશ્વર ! જે त्वम्-આપ मर्त्येषु-મનુષ્યોમાં व्रतपाः-સત્યાચરણની રક્ષા सविता-સર્વ જગત્‌ના ઉત્પાદક यज्ञेषु-સત્કાર અને ઉપાસના વગેરેમાં ईड्यः-સ્તુતિને યોગ્ય देवः-પ્રકાશક દેવ असि-છો. नः-અમારા માટે वसोः-ધનનું दाता-દાન કરનાર वसु-ધન अदात्-આપે છે. તે इयत्-પ્રાપ્ત કરતાં આપ भूयः-વારંવાર પુષ્કળ ધન आरास्व-આપો आभर-સર્વ સુખોથી પોષણ કરો.

દ્વિતીય અર્થ : त्वम्-જે अग्ने-અગ્નિ मर्त्येषु-મરણધર્મી મનુષ્યોનાં કાર્યોમાં व्रतपाः-નિયમાચરણનું પાલન देवः-પ્રકાશક દેવ यज्ञेषु-અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞોમાં ईड्यः-ખોજવા યોગ્ય, सोमः-ઐશ્વર્ય આપવા सविता-સર્વ જગતના પ્રેરક देवः-પ્રકાશમાન અગ્નિ છે તે नः-અમારા માટે वसोः-ધનને दाता-પ્રાપ્ત इयत्-કરાવતા भूयः અત્યધિક वसु-ધનને अदात्-આપે છે અને आरास्व-ધન આપવાના નિમિત્ત બનીને आभर-સર્વ પ્રકારનાં સુખોથી પુષ્ટ કરે છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સત્યસ્વરૂપ, પૂજાયોગ્ય, સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક, સકલ સુખદાતા પરમેશ્વરની જ ઉપાસના કરીને સુખી બનવું જોઈએ.

અને એ રીતે કાર્ય સિદ્ધિ માટે ભૌતિક અગ્નિનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને સર્વ સુખો પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૧૬)

ए॒षा ते॑ शुक्र त॒नूरे॒तद्वर्च॒स्तया॒ सम्भ॑व॒ भ्राजं॑ गच्छ। जूर॑सि धृ॒ता मन॑सा जुष्टा॒ विष्ण॑वे॥ १७॥

પદાર્થ : હે शुक्र-વીર્ય પરાક્રમયુક્ત વિદ્વાન ! ते-તારા જે विष्णवे-પરમેશ્વર અથવા યજ્ઞ માટે તેં જેને धृता-ધારણ કરેલ છે तया-તેનાથી તું जूः-જ્ઞાની અને વેગયુક્ત બનીને एतत्-આ वर्चः-વિજ્ઞાન અને તેજયુક્ત सम्भर-સંપન્ન બની સારી રીતે વિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા માટે तनूः-શરીર असि-છે. તેનાથી તું भ्राजम्-પ્રકાશને गच्छ-પ્રાપ્ત કર અને धृता-ધારણ કરેલ मनसा-વિજ્ઞાનથી પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત કર. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરવાના કારણે વિજ્ઞાન સંપન્ન થયેલ મન દ્વારા શરીર અને આત્માના આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરીને તથા યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને વિજ્ઞાનયુક્ત મનથી સદા

સુખી રહેવું જોઈએ. (૧૭)

तस्यास्ते सत्यसवसः प्रसवे तन्वो यन्त्रमशीय स्वाहा।
शुक्रमसि चन्द्रमस्यमृतमसि वैश्वदेवमसि॥ १८॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! सत्यसवसः-સત્ય ઐશ્વર્યયુક્ત અથવા જગતના નિમિત્ત કારણરૂપ ते-આપના प्रसवे-સર્જેલા સંસારમાં આપની કૃપાથી જે स्वाहा-વાણી અથવા વિદ્યુત્ છે, तस्याः-તે બન્નેના સાનિધ્યથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને યુક્ત હું જે शुक्रम्-શુદ્ધ असि-છે, चन्द्रम्-આહ્લાદકારક असि-છે अमृतम्-અમૃતાત્માનો વ્યવહાર તથા પરમાર્થથી સુખને સિદ્ધ કરનાર असि-છે અને वैश्वदेवम्-સર્વ દેવ અર્થાત્ વિદ્વાનોને સુખ આપનાર असि-છે, तत्-તે यन्त्रम्-સંકોચન, વિકાસન-વૃદ્ધિ, ચાલન, બંધન કરનાર યંત્રને अशीय-પ્રાપ્ત કરું. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર દ્વારા રચેલ આ સૃષ્ટિમાં વિદ્યા દ્વારા કલાયંત્રોની સિદ્ધિના માધ્યમથી, અગ્નિ વગેરે પદાર્થોથી સમ્યક્ ઉપકાર ગ્રહણ કરીને સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૧૮)

चिदसि मनासि धीरसि दक्षिणासि क्षत्रियासि यज्ञियास्यदितिरस्युभयतः-शीर्ष्णी। सा नः सुप्राची सुप्रतीच्येधि मित्रस्त्वा पदि बध्नीतां पूषाऽध्वन-स्पात्विन्द्रायाध्यक्षाय॥ १९॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! सत्यसवसः-સત્ય ઐશ્વર્યયુક્ત ते-આપના प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલ સંસારમાં જે चित्-વિદ્યા વ્યવહાર ચેતાવનારી असि-છે, જે मना-જ્ઞાનની સાધક असि-છે, જે धीः-બુદ્ધિ અને કર્મને પ્રાપ્ત કરનારી असि-છે, જે दक्षिणा-વિજ્ઞાન અને વિજય પ્રાપ્ત કરવા क्षत्रिया-રાજાના પુત્ર સમાન વર્તનારી असि-છે, જે यज्ञिया-યજ્ઞ કરાવવા યોગ્ય असि-છે, જે उभयतःशीर्ष्णी-બન્ને પ્રકારથી શિર સમાન, ઉત્તમ ગુણ યુક્ત અને अदितिः-નાશરહિત વાણી તથા વીજળી असि-છે, सा-તે नः-અમને सुप्राची-પૂર્વકાળ અને सुप्रतीची-પશ્ચિમ કાળમાં સુખ આપનારી एधि-બને.

જે पूषा-પુષ્ટિ કરનાર मित्रः-સર્વના મિત્ર બનીને મનુષ્યત્વ માટે त्वा-તે વાણી તથા વીજળીને पदि-પ્રાપ્તિ યોગ્ય ઉત્તમ વ્યવહારમાં अध्यक्षाय-સારી રીતે વ્યવહાર જોઈને इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વર, અધ્યક્ષ અને શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર માટે बध्नीताम्-બંધનયુક્ત કરે.

તે આપ अध्वनः-વ્યવહાર અને પરમાર્થની સિદ્ધિ કરાવનાર માર્ગમાં नः-આપ અમારી નિરંતર पातु-રક્ષા કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે બહાર અને અંદરથી રક્ષા કરવાના કારણે સર્વોત્તમ વાણી અને વિદ્યુત્ છે, તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન કાળમાં સુખદાયી છે, એમ જાણવું જોઈએ.

જે કોઈ મનુષ્ય અને સભાપતિની પ્રસન્નતા તથા તેની આજ્ઞાપાલન માટે તથા ઉત્તમ વ્યવહારોની સિદ્ધિ માટે, સત્ય વાણી અને વિદ્યુત્ વિદ્યાને દૃઢતાપૂર્વક વશમાં કરી લે છે, તે જ મનુષ્ય સર્વનો રક્ષક બને છે. (૧૯)

अनु॑ त्वा मा॒ता म॑न्यताम॒नु॑ पि॒ताऽनु॒ भ्राता॒ सग॑र्भ्यो॒ऽनु॒ सखा॒ सयू॑थ्यः। सा दे॑वि दे॒वमच्छे॒हीन्द्रा॑य॒ सोम॑ꣳ रु॒द्रस्त्वाव॑र्त्तयतु स्व॒स्ति सोम॑सखा॒ पुन॒रेहि॑॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે रुद्रः-પરમેશ્વર અથવા ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યના અખંડ પાલનથી પૂર્ણ વિદ્વાન્ त्वा-તને જે વાણી, વિદ્યુત્ અને सोमम्-ઉત્તમ પદાર્થોનો સમૂહ स्वस्ति-સુખના इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે आवर्त्तयतु-પ્રવૃત્ત કરે; અને જેનાથી सा-તે सोमसखा-વિદ્યાપ્રકાશયુક્ત વાણી અને देवि-દિવ્યગુણ વિદ્યુત્ देवम्-ઉત્તમ ધર્માત્મા વિદ્વાનને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તેને તું पुनः-વારંવાર अच्छ-સારી રીતે इहि-પ્રાપ્ત કર.

એ વિદ્યાને ગ્રહણ કરવા માટે त्वा-તને माता-ઉત્પન્ન કરનારી જનની अनुमन्यताम्-અનુમતિ અર્થાત્ આજ્ઞા આપે. એ જ રીતે पिता-જનક सगर्भ्यः-તે ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થયેલ અર્થાત્ भ्राता-સહોદર ભાઈ અને सयूथ्यः-સમૂહમાં રહેનાર सखा-મિત્ર સર્વે પ્રસન્નતાપૂર્વક આજ્ઞા આપે, તે વિદ્યાને તું पुनरेहि-અત્યંત પુરુષાર્થથી પ્રાપ્ત કર. (૨૦)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરસ્પર એવો વ્યવહાર કરવો જોઈએ કે - જેમ ધર્મપરાયણ વિદુષી માતા, ધર્માત્મા વિદ્વાન પિતા, ભાઈ અને મિત્ર વગેરે સત્ય વ્યવહારમાં પ્રવૃત્ત રહે, તેમ પુત્ર વગેરેએ પણ અનુકરણ કરવું જોઈએ.

તથા જેમ વિદ્વાન ધાર્મિક પુત્ર વગેરે ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં પ્રવૃત્ત રહે, તેમ માતા-પિતાદિએ પણ અનુસરણ કરવું જોઈએ. આ રીતે સર્વે પરસ્પર વર્તાવ કરીને આનંદમાં રહે. (૨૦)

व॒स्व्य॒स्यदि॑तिरस्यादि॒त्यासि॑ रु॒द्रासि॑ च॒न्द्रासि॑।
बृह॒स्पति॑ष्ट्वा सु॒म्ने र॑म्णातु रु॒द्रो वसु॑भि॒राच॑के॥ २१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ જે वस्वी-અગ્નિ વગેરે પદાર્થ નામક વસુ વિદ્યાથી સંબંધિત તથા જેને ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનારાઓએ પ્રાપ્ત કરેલ असि-છે, જે अदितिः-પ્રકાશકારક असि-છે, रुद्रा-પ્રાણવાયુથી સંબંધિત અને જેણે ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન કરનારાઓએ પ્રાપ્ત કરેલ असि-છે.

જે आदित्या-સૂર્યસમાન સર્વ વિદ્યાઓનો પ્રકાશ કરનારી અને જેનું અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરીને ગ્રહણ - સ્વીકાર કરેલ असि-છે, જે चन्द्रा-આહ્‌લાદદાયક असि-છે, જેને बृहस्पतिः-સર્વોત્તમ रुद्रः-દુષ્ટોને રડાવનાર પરમેશ્વર અથવા વિદ્વાન सुम्ने-સુખમાં रम्णातु-રમણ કરતાં અને જે वसुभिः-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાનોની સાથે - સંગ રહેનારી વાણી અથવા વિદ્યુતનું आचके-નિર્માણ તથા ઈચ્છા કરતાં અથવા જેની હું ઈચ્છા કરું છું, તેમ તું પણ त्वा-તેને रम्णातु-રમણયુક્ત અથવા તેને સિદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કર. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે વાણી અને વિદ્યુત્ પ્રાણ અને પૃથિવી વગેરે સાથે રહીને અનેક વ્યવહારોની સિદ્ધિનો હેતુ - સાધક છે.

જે જિતેન્દ્રિયતા અને ધર્માચરણપૂર્વક યથાયોગ્ય બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનારા મનુષ્યો દ્વારા વિજ્ઞાનપૂર્વક ક્રિયાઓમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરેલ વાણી અને વિદ્યુત્ અત્યંત સુખકારક બને છે, [હે મનુષ્ય] તું પણ તે બંનેનું સેવન કર. (૨૧)

अदित्यास्त्वा मूर्द्धन्नाजिघर्मि देवयजने पृथिव्याऽइडायास्पदमसि घृतवत् स्वाहा। अस्मे रमस्वास्मे ते बन्धुस्त्वे रायो मे रायो मा वयः रायस्पोषेण वियौष्म तोतो रायः॥ २२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું જેમ देवयजने-વિદ્વાનોના સંગ કરવામાં તથા દાન આપવામાં એ अदित्याः-અન્તરિક્ષ पृथिव्याः-ભૂમિ અને इडायाः-વાણીને स्वाहा-સારી રીતે યજ્ઞક્રિયાના મધ્યમાં જે मूर्द्धन्-સર્વથી ઉપર રહેલ घृतवत्-પુષ્ટિકારક ઘૃતસમાન पदम्-જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદવી [વાણી અને વિદ્યુત્] असि-છે. જેને હું आ+जिधर्मि-પ્રદીપ્ત કરું છું, તેમ त्वा-તેને તું પણ પ્રદીપ્ત કર.

જે अस्मे-અમારામાં વિભૂતિ રમણ કરે છે, તે તમારામાં પણ रमस्व-રમણ કરાવો.

જે अस्मे-અમારા बन्धुः-ભાઈ છે, તે ते-તારા પણ થાય અને જે रायः-વિદ્યાદિ અને સુવર્ણાદિ ધનસમૂહ त्वे-તારી પાસે છે, તે मे-મારી પાસે પણ થાય.

જે तोतः-જાણવા, પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય रायः-વિદ્યારૂપી ધન મારામાં છે, તે તારામાં પણ થાય; જે रायः-તમારી અને મારી સમૃદ્ધિ છે, તે સર્વના સુખ માટે પ્રયુક્ત થાય.

આ રીતે જાણીને નિશ્ચય કરતાં તથા આચરણ કરતાં તમે वयम्-અમે અને સર્વ જનો रायस्पोषेण-ધનની પુષ્ટિથી કદી પણ मा वियौष्म-પૃથક્ ન રહીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે સત્યવિદ્યા અને ધર્મથી સંસ્કૃત વાણી અને વિદ્યા તથા ક્રિયા દ્વારા સમ્યક્ પ્રયુક્ત વિદ્યુત્ વગેરેની વિદ્યા છે, તેનો સર્વને ઉપદેશ કરીને, ગ્રહણ કરીને, સર્વની સુખ-દુઃખની વ્યવસ્થાને સમાન જાણીને, સમસ્ત ઐશ્વર્યને પરોપકારમાં લગાવીને સદા સુખી રહેવું જોઈએ.

જેથી પોતાના તથા અન્યના ઐશ્વર્યનો હ્રાસ થાય એવો વ્યવહાર કદી પણ કરવો નહિ. (૨૨)

समख्ये देव्या धिया सं दक्षिणयोरुचक्षसा।

मा मऽआयुः प्रमोषीर्मोऽअहं तव वीरं विदेय तव देवि सन्दशि॥ २३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ अहम्-હું दक्षिणया-જ્ઞાનસાધક અને અજ્ઞાનનાશક उरुचक्षसा-અત્યંત સ્પષ્ટ કથન અથવા દર્શનયુક્ત देव्या-પ્રકાશમાન धिया-પ્રજ્ઞા અથવા કર્મથી तव-આપની देवि-દિવ્યગુણોથી શોભાયમાન તે વાણી અથવા વિદ્યુત્‌ને संदशि-સારી રીતે જોવા યોગ્ય વ્યવહારમાં જીવનને समख्ये-કથનથી પ્રકટ કરું છું.

તે मे-મારા आयुः-જીવનનો मा प्रमोषीः-નાશ ન કરે. તેને હું અવિદ્યાથી मो-નષ્ટ ન કરું. तव-હે સર્વના મિત્ર ! અન્યાયથી આપના वीरम्-શૂરવીરને मा संविदेय-પ્રાપ્ત ન કરું, તેમ તું પણ સર્વ આચરણ

અને અન્યાયથી મારા શૂરવીરોને પ્રાપ્ત ન કર. (૨૩)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો શુદ્ધ કર્મ અને બુદ્ધિ દ્વારા વાણી-વિદ્યા અને વિદ્યુત-વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને, આયુની વૃદ્ધિ કરીને, વીરોને વિદ્યાદિ ગુણોમાં સિદ્ધ કરીને સદા સુખી રહે. (૨૩)

एष ते गायत्रो भागऽइति मे सोमाय ब्रूतादेष ते त्रैष्टुभो भागऽइति मे सोमाय ब्रूतादेष ते जागतो भागऽइति मे सोमाय ब्रूताच्छन्दोनामानाᳬसाम्राज्यङ्गच्छेति मे सोमाय ब्रूतात्। आस्माकोऽसि शुक्रस्ते ग्रह्यो विचितस्त्वा विचिन्वन्तु॥ २४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું કોણ એ યજ્ઞનો गायत्रः-વેદસ્થ ગાયત્રી છંદયુક્ત મંત્રોના સમૂહોથી પ્રતિપાદિત भागः-સેવન કરવા યોગ્ય ભાગ છે ? इति-એમ વિદ્વાનને પૂછ.

તે વિદ્વાન ते-તને એ યજ્ઞનો આ પ્રત્યક્ષ છે इति-એ રીતે सोमाय-પદાર્થવિદ્યા સંપાદન કરનાર मे-મારા માટે છે, તેમ ब्रूतात्-કહે.

તું કોણ તે યજ્ઞનો त्रैष्टुभः-ત્રિષ્ટુપ છંદથી પ્રતિપાદિત भागः-ભાગ છે ? इति-એમ વિદ્વાનને પૂછ.

તે વિદ્વાન ते-તને એ યજ્ઞનો एषः-આ ભાગ છે. इति-એ રીતે પ્રત્યક્ષરૂપથી સમાધાન सोमाय-ઉત્તમ રસને સંપાદન કરનાર मे-મારા માટે છે તેમ ब्रूतात्-કહે - ઉપદેશ કરે.

તું કોણ એ યજ્ઞનો जागतः-જગતી છંદથી કથિત भागः-અંશ છે ? इति-એમ આપ્તને પૂછ.

તે [આપ્ત] ते-તને એ યજ્ઞનો एषः-આ પ્રસિદ્ધ ભાગ છે, इति-એ રીતે सोमाय-પદાર્થવિદ્યાને સંપાદન કરનાર मे-મારા માટે ઉત્તર ब्रूतात्-કહે - આપે.

જેમ આપ छन्दोनामानाम्-ઉષ્ણિક વગેરે છંદોના મધ્યમાં કહેલ યજ્ઞના ઉપદેશમાં साम्राज्यम्-સારી રીતે રાજ્યને गच्छ-પ્રાપ્ત થા इति-એ રીતે सोमाय-ઐશ્વર્યયુક્ત मे-મારા માટે સાર્વભૌમ રાજ્યની પ્રાપ્તિ માટેનો ઉપાય ब्रूतात्-કહો - ઉપદેશ કરો.

જે કારણે આપ आस्माकः-અમને शुक्रः-પવિત્ર કરનાર ઉપદેશક असि-છો, તેમ હું ते-આપનો ग्रह्यः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય विचितः-ઉત્તમ ધનાદિ દ્રવ્ય અને ગુણોથી યુક્ત શિષ્ય છું.

આપ મને સર્વ ગુણોથી ઉન્નત કરો. એ કારણે હું त्वा-આપને વૃદ્ધિયુક્ત કરું છું અને સર્વ મનુષ્ય त्वा-આપ તથા એ યજ્ઞ અને મને विचिन्वन्तु-વૃદ્ધિયુક્ત - ઉન્નત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્વાનોને પ્રશ્ન કરીને સર્વ વિદ્યાઓનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ અને વિદ્વાનો એ વિદ્યાને ગ્રહણ કરાવે.

પરસ્પર અનુગ્રહ ભાવથી વર્તાવ કરીને સર્વ લોકો વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને ચક્રવર્તી રાજ્યનું સેવન કરો. (૨૪)

अभि त्यं देवᳬ सवितारमोण्योः कविक्रतुमर्चामि सत्यसवᳬ रत्नधामभि प्रियं मतिं कविम्। ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भाऽअदिद्युतत्सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत। सुक्रतुः

कृपा स्वः। प्रजाभ्यस्त्वा प्रजास्त्वाऽनुप्राणन्तु प्रजास्त्वमनुप्राणिहि॥ २५॥

પદાર્થ : હું यस्य-જે સચ્ચિદાનંદાદિ લક્ષણયુક્ત પરમેશ્વર, ધાર્મિક સભાપતિ અને પ્રજાજનના सवीमनि-સર્જાયેલા સંસારમાં ऊर्ध्वा-ઉત્તમ अमतिः-સ્વરૂપ भाः-પ્રકાશમાન अदिद्युतत्-પ્રકાશિત છે, જેની कृपा-કરુણા स्वः-સુખદાતા છે.

हिरण्यपाणिः-જેણે સૂર્ય વગેરે જ્યોતિ વ્યવહારમાં ઉત્તમ ગુણ કર્મોને યુક્ત કર્યા છે. सुक्रतुः-જે શ્રેષ્ઠ પ્રજ્ઞા અને કર્મયુક્ત ઈશ્વર, સભા-સ્વામી અને પ્રજાજનને स्वः-સૂર્ય અને સુખને अमिमीत-સ્થાપિત કર્યાં છે.

त्यम्-તે ओण्योः-દ્યુલોક અને પૃથિવીલોક તથા सवितारम्-અગ્નિ વગેરેને ઉત્પન્ન અને સંપ્રયોગ કરનાર તથા कविक्रतुम्-સર્વજ્ઞ અને સર્વ વિદ્યાથી યુક્ત બુદ્ધિમાન रत्नधाम्-રમણીય રત્નોને ધારણ કરનાર सत्यसवम्-સત્ય ઐશ્વર્યયુક્ત प्रियम्-સર્વના પ્રીતિકારક मतिम्-વેદાદિ શાસ્ત્ર તથા વિદ્વાનોને માન્ય कविम्-વેદવિદ્યાનો ઉપદેશ કરનાર તથા देवम्-સુખદાતા પરમેશ્વર, સભાધ્યક્ષ અને પ્રજાજનનું अर्चामि-પૂજન કરું છું. त्वा-આપને प्रजाभ्यः-ઉત્પન્ન થયેલી સૃષ્ટિથી પૂજું છું, તે આપની સૃષ્ટિમાં प्रजाः-મનુષ્યાદિ अनुप्राणन्तु-આયુ ભોગવે त्वम्-અને આપ કૃપા કરીને प्रजाः-પ્રજાને જીવોને અનુકૂળ अनुप्राणिहि-અનુગ્રહ કરો [જીવન પ્રદાન કરો]. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત સંસારના રચયિતા, નિરાકાર, વ્યાપક, સર્વશક્તિમાન અને સચ્ચિદાનંદ વગેરે લક્ષણયુક્ત પરમેશ્વરની, પ્રજાપાલનમાં તત્પર અને ધાર્મિક પ્રજાજનોની પૂજા નિત્ય કરવી જોઈએ. તેનાથી ભિન્ન બીજા કોઈની નહિ કરવી જોઈએ.

વિદ્વાનોએ પ્રજાજનોના સુખ માટે તેની [ઈશ્વરની] સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપદેશ [ક્રમશઃ] નિત્ય કરવાં જોઈએ. જેથી સમસ્ત પ્રજા તેની આજ્ઞાની અનુકૂળ સદા રહે. જેમ પ્રાણોમાં સમસ્ત જીવોને પ્રેમ છે, તેમ પરમાત્મા વગેરેમાં રાખવો જોઈએ. (૨૫)

शुक्रं त्वा शुक्रेण क्रीणामि चन्द्रं चन्द्रेणामृतममृतेन। सग्मे ते गोरस्मे ते चन्द्राणि तपसस्तनूरसि। प्रजापतेर्वर्णः परमेण पशुना क्रीयसे सहस्त्रपोषं पुषेयम्॥ २६॥

પદાર્થ : જેમ सग्मे-પૃથિવી સાથે રહેલ યજ્ઞમાં तपसः-પ્રતાપયુક્ત અગ્નિ અથવા તપસ્વી અર્થાત્ ધર્માત્મા વિદ્વાનનું तनूः-શરીર असि-છે. તેને શિલ્પવિદ્યા તથા સત્યોપદેશને પ્રાપ્ત કરવા માટે पशुना-વેચાયેલાં ગાય વગેરે પશુઓ કરીને, ધન વગેરે સામગ્રીથી ગ્રહણ કરીને, प्रजापतेः-પ્રજાના પાલક સૂર્યનું वर्णः-વરણ કરવા - સ્વીકાર કરવા યોગ્ય તેજ क्रीयसे-ખરીદાય છે. તેથી सहस्त्रपोषम्-અસંખ્ય પોષણ સાધનોથી પુષ્ટ થઈને હું पुषेयम्-પુષ્ટ કે બળવાન બનું.

હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જે ते-આપને गोः-પૃથિવીના રાજ્યના સાનિધ્યથી चन्द्राणि-સુવર્ણ વગેરે ધાતુ પ્રાપ્ત થાય છે, તે अस्मे-અમારા માટે પણ થાય.

જેમ હું परमेण-ઉત્તમ शुक्रेण-શુદ્ધ ભાવથી शुक्रम्-શુદ્ધિકારક યજ્ઞ चन्द्रेण-સુવર્ણથી चन्द्रम्-સુવર્ણ અને अमृतेन-નાશરહિત વિજ્ઞાનથી अमृतम्-મોક્ષ સુખને क्रीणामि-ગ્રહણ કરું છું, તેમ તું પણ त्वा-તેને ગ્રહણ કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ શરીર, મન, વાણી અને ધન દ્વારા ઈશ્વરની ઉપાસના વગેરે લક્ષણોયુક્ત યજ્ઞનું નિરંતર અનુષ્ઠાન કરીને અગણિત અને અનુપમ પુષ્ટિ પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૨૬)

मित्रो नऽएहि सुमित्रधऽइन्द्रस्योरुमाविश दक्षिणमुशन्नुशन्तꣳ स्योनः स्योनम्। स्वान भ्राजाङ्घारे बम्भारे हस्त सुहस्त कृशानवेते वः सोमक्रयणास्तान्रक्षध्वं मा वो दभन्॥ २७॥

પદાર્થ : હે स्वान-ઉપદેશ કરનાર, भ्राज-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરનાર, अंङ्घारे-છળના શત્રુ, बम्भारे-વિચાર-વિરોધીઓના શત્રુ, हस्त-પ્રસન્ન કરનાર, सुहस्त-સારી રીતે હસ્ત ક્રિયાને જાણનાર, कृशानो-દુષ્ટોને કૃશ કરનાર, सुमित्रधः-શ્રેષ્ઠ મિત્રોને ધારણ કરનાર, मित्रः-સર્વના મિત્ર, स्योनः-સુખની उशन्-કામના કરનાર સભાધ્યક્ષ ! આપ नः-અમને आ इहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાઓ.

दक्षिणम्-ઉત્તમ અંગયુક્ત, उरुम्-બહુ ઉત્તમ પદાર્થોથી યુક્ત તથા સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, उशन्तम्-કામના કરવા યોગ્ય, स्योनम्-સુખમાં आविश-પ્રવેશ કરો.

હે સભાધ્યક્ષો ! एते-જે इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત સભાધ્યક્ષ વિદ્વાનના सोमक्रयणाः-સોમ અર્થાત્ ઉત્તમ પદાર્થો ખરીદનાર પ્રજા અને નોકર વગેરે મનુષ્ય वः-તમારી રક્ષા કરે અને તમે લોકો પણ તેની रक्षध्वम्-સદા રક્ષા કરો.

જેમ તે શત્રુઓ तान्-તે वः-તમારી હિંસા કરવા સમર્થ मा दभन्-ન બને, તેમ એ રીતે પરસ્પર મળીને સમ્યક્ પ્રીતિપૂર્વક આચરણ કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોએ પરસ્પર પ્રેમથી ઉપકારમાં તથા ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં રહીને, શત્રુઓનું નિવારણ કરીને, અવિદ્યારૂપી અંધકારનો નાશ કરીને, ચક્રવર્તી રાજ્ય પર શાસન કરીને સદા આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૨૭)

परि माग्ने दुश्चरिताद्बाधस्वा मा सुचरिते भज।
उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृताँ२ऽअनु॥ २८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-જગદીશ્વર ! આપ કૃપા કરીને જે કર્મથી स्वायुषा-ઉત્તમતાયુક્ત પ્રાણ ધારણ કરનાર आयुषा-આ જીવનથી अमृतान्-જીવનમુક્ત અને મોક્ષને પ્રાપ્ત વિદ્વાનો અથવા મોક્ષરૂપી આનંદોને उदस्थाम्-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું.

તેથી मा-મને સંયુક્ત કરીને दुश्चरितात्-દુષ્ટાચરણથી उत् बाधस्व-પૃથક્ કરીને मा-મને सुचरिते-અત્યુત્તમ ધર્માચરણયુક્ત વ્યવહારમાં अन्वाभज-સારી રીતે સ્થાપિત કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા અધર્મત્યાગ અને ધર્મગ્રહણ કરવા માટે સાચા ભાવથી પ્રાર્થના કરેલ એ પરમેશ્વર જેમ તેને અધર્મથી છોડાવીને ધર્મમાં શીઘ્ર પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ મનુષ્યે સ્વયં આજીવન ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત રહીને સંસારનાં અને મુક્તિનાં સુખોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૨૮)

प्रति पन्थामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम्। येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु॥ २९॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપના અનુગ્રહથી યુક્ત પુરુષાર્થી બનીને અમે येन-જે માર્ગથી વિદ્વાન મનુષ્ય विश्वाः-સર્વ द्विषः-શત્રુસેના અથવા દુઃખદાયી ભોગ ક્રિયાઓથી परिवृणक्ति-સર્વ પ્રકારથી દૂર કરી वसु-સુખદાયક ધનને विन्दते-પ્રાપ્ત થાય છે, તે अनेहसम्-હિંસારહિત स्वस्तिगाम्-સુખપૂર્વક જવા યોગ્ય पन्थाम्-માર્ગને प्रत्यपद्महि-પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત કરીએ.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ દ્વેષ વગેરેનો ત્યાગ, વિદ્યા ધનની પ્રાપ્તિ તથા ધર્મમાર્ગનો પ્રકાશ પ્રાપ્ત કરવા માટે ઈશ્વરની પ્રાર્થના, ધર્મનું સેવન અને વિદ્વાનોની નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. (૨૯)

अदित्यास्त्वगस्यदित्यै सदऽआसीद। अस्तभ्नाद् द्यां वृषभोऽअन्तरिक्षममिमीत वरिमाणम्पृथिव्याः। आसीदद्विश्वा भुवनानि सम्राड् विश्वेत्तानि वरुणस्य व्रतानि॥ ३०॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેથી वृषभः-શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત આપ अदित्याः-પૃથિવીનું त्वक्-આચ્છાદન કરનાર असि-છો, अदित्यै-પૃથિવી વગેરે સૃષ્ટિ માટે सदः-સ્થાપન કરવા યોગ્ય आसीद-વ્યવસ્થાને સ્થાપિત કરો છો. તથા द्याम्-સૂર્યાદિને अस्तम्नात्-રચો છો. वरिमाणम्-અત્યંત ઉત્તમ अन्तरिक्षम्-અંતરિક્ષને अमिमीत-રચો છો. सम्राट्-સારી રીતે પ્રકાશ પ્રાપ્ત સર્વના અધિપતિ આપ पृथिव्याः-અન્તરિક્ષના મધ્યમાં विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોકોનું आसीदत्-સ્થાપન કરો છો, એથી तानि-એ विश्वा-સર્વ वरुणस्य-શ્રેષ્ઠરૂપ ते-આપનાં इत्-જ व्रतानि-સત્ય સ્વભાવ અને કર્મ છે એમ અમે अपद्महि-જાણીએ છીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે वृषभः-અત્યુત્તમ सम्राट्-સ્વયં પ્રકાશમાન સૂર્ય અને વાયુ अदित्याः-પૃથિવી વગેરેને त्वक्-આચ્છાદિત કરનાર असि-છે તથા अदित्यै-પૃથિવી વગેરે સૃષ્ટિ માટે सदः-લોકોને आसीद-સ્થાપન द्याम्-પ્રકાશને अस्तभ्नात्-ધારણ वरिमाणम्-શ્રેષ્ઠ अन्तरिक्षम्-આકાશની अमिमीत-રચના અને पृथिव्याः-આકાશની મધ્યમાં विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોકોને आसीदत्-સ્થાપન કરે છે. तानि-તે विश्वा-બધા ते-તે वरुणस्य-સૂર્ય અને વાયુનો इत्-જ व्रतानि-સ્વભાવ અને કર્મ છે એમ અમે अपद्महि-જાણીએ છીએ. (૩૦)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરનો એ સ્વભાવ છે, કે તે આ સર્વ સંસારમાં વ્યાપક છે, તેને રચીને, તેને ધારણ કરે છે; એ રીતે સૂર્ય અને વાયુનો પણ પ્રકાશ કરવો અને લોકોને ધારણ કરવાનો સ્વભાવ છે. પૂર્વ મન્ત્રમાંથી 'अपद्महि' પદની અનુવૃત્તિ આવેલ છે. (૩૦)

वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान वाजमर्वत्सु पयऽउस्त्रियासु।

हृत्सु क्रतुं वरुणो विक्ष्वाग्निं दिवि सूर्यमदधात् सोममद्रौ॥ ३१॥

પદાર્થ : જે वरुणः-અત્યુત્તમ, પરમેશ્વર, સૂર્ય અથવા પ્રાણવાયુ છે તે वनेषु-કિરણ અથવા વનોમાં अन्तरिक्षम्-આકાશને विततान-વિસ્તારયુક્ત કરેલ અથવા કરતાં अर्वत्सु-અત્યુત્તમ વેગાદિ ગુણયુક્ત વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થ અને ઘોડા વગેરે પશુઓમાં वाजम्-વેગ उस्त्रियासु-ગાયોમાં पयः-દૂધ हृत्सु-હૃદયોમાં क्रतुम्-પ્રજ્ઞા તથા કર્મ विक्षु-પ્રજામાં अग्निम्-અગ્નિ दिवि-પ્રકાશમાં सूर्यम्-સૂર્ય अद्रौ-પર્વત તથા મેઘ-વાદળોમાં सोमम्-સોમવલ્લી વગેરે ઔષધિ અને શ્રેષ્ઠ રસને अदधात्-ધારણ કર્યા કરે છે, તે ઈશ્વરની ઉપાસના તથા તે બંનેનો ઉપયોગ કરીએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેમ [वरुणः =] પરમેશ્વર પોતાની વિદ્યાના પ્રકાશ અને જગતની રચના દ્વારા સમસ્ત પદાર્થોમાં તે-તે સ્વભાવયુક્ત ગુણોને સ્થાપિત કરીને, વિજ્ઞાન આદિ તથા વાયુ અને સૂર્ય વગેરેનો વિસ્તાર કરે છે, તેમ જ વાયુ અને સૂર્ય પણ સર્વના સુખનો વિસ્તાર કરે છે. (૩૧)

सूर्यस्य चक्षुरारोहाग्नेरक्ष्णः कनीनकम्। यत्रैतशेभिरीयसे भ्राजमानो विपश्चिता॥ ३२॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! यत्र-જ્યાં આપ एतशेभिः-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોથી भ्राजमानः-પ્રકાશમાન विपश्चिता-મેધાવી વિદ્વાનથી ईयसे-વિજ્ઞાત થાવ છો.

જ્યાં આપ પ્રાણવાયુ તથા વિદ્યુત્ एतशेभिः-વેગાદિ ગુણો તથા विपश्चिता-વિદ્વાનથી भ्राजमानः-પ્રકાશિત થઈને ईयसे-વિજ્ઞાત થાવ છો.

જ્યાં આપ પ્રાણ તથા વિદ્યુત્ सूर्यस्य-સૂર્ય અથવા વિદ્યુત્ અને अग्नेः-ભૌતિક અગ્નિને अक्ष्णः-જોવાનાં સાધન कनीनकम्-પ્રકાશક चक्षुः-નેત્રોને आरोह-બતાવો છો, ત્યાં અમે આપની ઉપાસના અને તે બન્ને પ્રાણ અને વિદ્યુત્નો ઉપયોગ કરીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા વિજ્ઞાનપૂર્વક ઈશ્વરની ઉપાસના કરવામાં આવે છે અને પ્રાણ તથા વિદ્યુત્નો સમ્યક્ પ્રયોગ કરવામાં આવે છે, તેમ જ મનુષ્યો દ્વારા વિજ્ઞાનપૂર્વક [ઈશ્વરની] ઉપાસના કરવી જોઈએ. [પ્રાણનો] ઉપયોગ કરવો જોઈએ અને [વિદ્યુત્નો] સમ્યક્ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૩૨)

उस्त्रावेतं धूर्षाहौ युज्येथामनश्रूऽअवीरहणौ ब्रह्मचोदनौ।
स्वस्ति यजमानस्य गृहान् गच्छतम्॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્યા અને શિલ્પક્રિયાને પ્રાપ્ત કરવાના ઇચ્છુક લોકો ब्रह्मचोदनौ-અન્ન અને વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે अनश्रू-અવ્યાપી अवीरहणौ-વીરોનું રક્ષણ કરનાર उस्त्रौ-જ્યોતિયુક્ત તથા નિવાસના હેતુ धूर्षाहौ-પૃથિવી અને ધર્મના ભારને ધારણ કરનાર વિદ્વાન आ इतम्-સૂર્ય અને વાયુને પ્રાપ્ત થતાં અથવા युज्येथाम्-જોડાતાં અને यजमानस्य-ધાર્મિક યજમાનના गृहान्-ઘેર स्वस्ति-સુખપૂર્વક गच्छतम्-ગમન કરે છે, તેમ તમે પણ તેને યુક્તિથી સંયુક્ત કરીને કાર્યોને સિદ્ધ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને વિદ્વાન ક્રમશઃ સર્વને પ્રકાશિત, ધારણ, સહન, યુક્ત અને પ્રાપ્ત કરીને

સુખને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમજ શિલ્પવિદ્યાના કર્મકર્તા દ્વારા યાનોમાં યુક્તિથી સંયુક્ત કરેલ અગ્નિ અને જલ સુખપૂર્વક સર્વત્ર સર્વની ગતિ કરાવે છે. (૩૩)

भद्रो मेऽसि प्रच्यवस्व भुवस्पते विश्वान्यभि धामानि। मा त्वा परिपरिणो विदन्मा त्वा परिपन्थिनो विदन्मा त्वा वृकाऽअघायवो विदन्। श्येनो भूत्वा परापत यजमानस्य गृहान् गच्छ तन्नौ सँस्कृतम्॥ ३४॥

પદાર્થ : હે भुवः-પૃથિવીના पते-પાલક વિદ્વાન ! તું मे-મારો भद्रः-કલ્યાણકાર બંધુ असि-છે.

તે તું नौ-મારું અને તારું જે संस्कृतम्-શિલ્પવિદ્યાથી સંસ્કાર કરેલ યાન છે तत्-તેથી विश्वानि-સર્વ धामानि-સ્થાનો પર अभि प्रच्यवस्व-સારી રીતે જા. જેથી સર્વ સ્થાન પર જતાં त्वा-તને જેમ परिपरिणः-છળથી રાત્રિમાં અન્યના પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર वृकाः-ચોર मा विदन्-ન મળે, એવો પ્રયત્ન કર.

પરદેશમાં જનાર त्वा-તને જેમ परिपन्थिनः-માર્ગમાં લૂંટનાર ડાકુ मा विदन्-ન મળે, તેમ કર.

જેમ પરમૈશ્વર્યયુક્ત त्वा-તને अघायवः-પાપના ઈચ્છુક દુષ્ટ મનુષ્ય मा विदन्-ન મળે તેવાં કર્મ સદા કર.

તું श्येनः-બાજ પક્ષી સમાન વેગ અને બલયુક્ત भूत्वा-બનીને તે દુષ્ટોથી परापत-દૂર રહે અને એ દુષ્ટોને દૂર પણ કર, આમ કરીને यजमानस्य-ધાર્મિક યજમાનના गृहान्-ઘર અને દેશ-દેશાન્તરોમાં गच्छ-જા, અને જતાં માર્ગમાં તને કોઈ પણ દુઃખ ન આપે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ વિમાન આદિ યાન બનાવીને, તેમાં બેસીને તથા તેને યથોચિત્ રૂપે ચલાવીને, બાજ પક્ષીની સમાન દ્વીપ આદિ અન્ય દેશોમાં જઈને, ધન પ્રાપ્ત કરીને, ત્યાંથી આવીને, દુષ્ટ પ્રાણીઓથી દૂર રહીને, સદા સુખનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૩૪)

नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवाय तदृतꣳ सपर्यत।
दूरेदशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्याय शꣳसत॥ ३५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે मित्रस्य-સર્વના મિત્ર वरुणस्य-શ્રેષ્ઠ दिवः-પ્રકાશસ્વરૂપ પરમેશ્વરનું ऋतम्-સત્યસ્વરૂપ છે तत्-તે ચેતનની સેવા-પૂજા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ તેનું સેવન સદા सपर्य्यत-કરો.

જેમ તે महः-મહાન दूरेदशे-દૂર રહેલા પદાર્થોને દેખાડવા चक्षसे-સર્વને જોવા देवजाताय-દિવ્ય ગુણોથી પ્રસિદ્ધ केतवे-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ देवाय-દિવ્યગુણયુક્ત पुत्राय-પવિત્ર કરનાર सूर्याय-ચરાચર જગતના આત્મા પરમેશ્વરને नमः-નમસ્કાર કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ प्रशंसत्-તેની સ્તુતિ કરો.

દ્વિતીય અર્થ : હે મનુષ્યો ! જે मित्रस्य-પ્રકાશ वरुणस्य-શ્રેષ્ઠ दिवः-પ્રકાશસ્વરૂપ સૂર્યલોકનું ऋतम्-યથાર્થ સ્વરૂપ છે तत्-તે પ્રકાશ સ્વરૂપને તમે પણ વિદ્યાથી सपर्य्यत-સેવન કરો.

જેમ અમે જે चक्षसे-સર્વને જોવા देवजाताय-દિવ્યગુણોથી પ્રસિદ્ધ केतवे-જ્ઞાન કરાવનાર અગ્નિનો पुत्राय-પુત્ર दूरदशे-દૂર રહેલા પદાર્થોને દેખાડવા महः-મહાન देवाय-દિવ્યગુણોથી યુક્ત सूर्याय-સૂર્યના

માટે પ્રવૃત્ત થઈએ. [પ્રયત્ન કરીએ], તેમ તમે પણ પ્રવૃત્ત થાવ. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેની કૃપાથી અથવા પ્રકાશથી ચોર, ડાકુ વગેરે દૂર ભાગી જાય છે અને પરમેશ્વર સમાન સમર્થ અને સૂર્ય સમાન લોક નથી, આથી સર્વ મનુષ્યોએ તેની પ્રશંસા કરવી યોગ્ય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૫)

वरु॑णस्यो॒त्तम्भ॑नमसि॒ वरु॑णस्य स्कम्भ॒सर्ज॑नी स्थो॒ वरु॑णस्यऽऋत॒सद॑न्यसि वरु॑णस्यऽऋत॒सद॑नमसि॒ वरु॑णस्यऽऋत॒सद॒नमासी॑द॥ ३६॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેથી આપ वरुणस्य-ઉત્તમ જગતનો उत्तम्भनम्-પ્રતિબંધ અર્થાત્ બાંધનાર असि-છો. જે वरुणस्य-વાયુના स्कम्भसर्जनी-આધારરૂપી પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરનાર वरुणस्य-સૂર્યની ऋतसदनी-જળની ગમનાગમન કરાવનારી ક્રિયા स्थः-છે, તેને ધારણ કરનાર છો.

જે वरुणस्य-ઉત્તમ ऋतसदनम्-પદાર્થોનું સ્થાન असि-છો वरुणस्य-ઉત્તમ ऋतसदनम्-સત્યજ્ઞાનોનાં સ્થાનને आसीद-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરાવો છો. એથી અમે આપનો આશ્રય લઈએ છીએ.

દ્વિતીય અર્થ : જે वरुणस्य-જગતને उत्तम्भनम्-ધારણ કરનાર असि-છે, જે वरुणस्य-વાયુના स्कम्भसर्जनी-આધારોને ઉત્પન્ન કરનાર તથા જે वरुणस्य-સૂર્યની ऋतसदनी-જળની ગમનાગમન કરાવનારી ક્રિયા स्थः-છે. તેને ધારણ કરનાર તથા જે वरुणस्य-ઉત્તમ ऋतसदनम्-સત્ય પદાર્થોના સ્થાનરૂપ असि-છે. તે वरुणस्य-ઉત્તમ ऋतसदनम्-પદાર્થોના સ્થાનને आसीद-સારી રીતે પ્રાપ્ત અને ધારણ કરે છે, તેનો ઉપયોગ કેમ ન કરવામાં આવે ? (૩૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર વિના સર્વ જગતની રચના, ધારણ, પાલન અને પૂર્ણ જ્ઞાન કોઈ કરી શકતા નથી. સૂર્ય વિના કોઈ સમસ્ત ભૂમિ આદિ સંસારને પ્રકાશિત અથવા ધારણ કરી શકતા નથી. એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની ઉપાસના અને સૂર્યનો યથાવત્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૩૬)

या ते॒ धामा॑नि ह॒विषा॒ यज॑न्ति॒ ता ते॒ विश्वा॑ परि॒भूर॑स्तु य॒ज्ञम्।
ग॒य॒स्फान॑ः प्र॒तर॑णः सु॒वीरो॒ऽवीर॑हा॒ प्रच॑रा सोम॒ दुर्या॑न्॥ ३७॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેમ વિદ્વાન લોકો या-જે ते-આપનાં धामानि-સ્થાનોનું हविषा-દેવાં-લેવાં યોગ્ય દ્રવ્યોથી यजन्ति-સત્કારપૂર્વક ગ્રહણ કરે છે, તેમ અમે પણ ता-તે विश्वा-સર્વનું ગ્રહણ કરીએ.

જેમ ते-આપનો તે યજ્ઞ વિદ્વાનોને गयस्फानः-સંતાન, ધન અને ઘરની વૃદ્ધિ કરનાર प्रतरणः-દુઃખોથી પાર કરનાર सुवीरः-ઉત્તમ વીરોનો યોગ કરનાર अवीरहा-કાયર, દરિદ્રતાયુક્ત અવીર અર્થાત્ પુરુષાર્થહીન મનુષ્ય તથા શત્રુઓનો નાશ કરનાર તથા परिभूः-સર્વપ્રકારથી સુખદાયક છે, તેમ તે આપની કૃપાથી અમારા માટે अस्तु-બને. જેનું વિદ્વાન લોકો यजन्ति-યજન કરે છે, તે यज्ञम्-યજ્ઞ અમે પણ કરીએ.

હે सोम-સોમ વિદ્યાનું સંપાદન કરનાર વિદ્વાન્ ! જેમ અમે એ યજ્ઞ કરીને ઘરોમાં આનંદ કરીએ, એમાં કર્મ કરીએ, તેમ તું પણ એને કરીને दुर्यान्-ઘરોમાં प्रचर-સુખનો પ્રચાર કર, જાણ અને અનુષ્ઠાન કર.

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન લોકો ઈશ્વરમાં પ્રેમ અને સંસારમાં યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેમજ સર્વ મનુષ્યોએ આચરણ કરવું જોઈએ. (૩૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં શિલ્પવિદ્યા (૯, ૧૦), વૃષ્ટિની પવિત્રતાનું સંપાદન (૨), વિદ્વાનોનો સંગ (૫), યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન(૬), ઉત્સાહ આદિ ગુણોની પ્રાપ્તિ (૭), યુદ્ધ કરવું (૮), શિલ્પ વિદ્યાની સ્તુતિ (૯), યજ્ઞના ગુણોનું વર્ણન (૧૦), સત્યવ્રતનું ધારણ (૧૧), જલ અને અગ્નિના ગુણોનું વર્ણન (૧૨, ૧૩, ૧૪), પુનર્જન્મનું કથન (૧૫), ઈશ્વર પ્રાર્થના (૨૮, ૨૯), યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન (૧૭), પુત્રાદિ દ્વારા માતા-પિતાદિનું અનુકરણ (૨૦), યજ્ઞની વ્યાખ્યા (૨૪), દિવ્ય બુદ્ધિ - મેધાની પ્રાપ્તિ (૨૩), પરમેશ્વરની પૂજા (૨૫), સૂર્યના ગુણોનું વર્ણન (૩૩), પદાર્થોના ક્રય-વિક્રયનો ઉપદેશ (૨૬), મિત્રતા કરવી (૨૭), ધર્મનો પ્રચાર (૨૮), પરમેશ્વર તથા સૂર્યના ગુણોનો પ્રકાશ (૩૦ થી ૩૩), ચોર વગેરેનું નિવારણ (૩૪), ઈશ્વર અને સૂર્ય આદિના ગુણોનું વર્ણન (૩૫, ૩૬) અને યજ્ઞનું ફળ (૩૭) કહેવામાં આવેલ છે. તેથી આ અધ્યાયાર્થની ત્રીજા અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ. ઊવટ અને મહીધર આદિએ આ અધ્યાયની વ્યાખ્યા શબ્દાર્થ વિરુદ્ધ કરેલ છે. (૩૭)

॥ इति चतुर्थोऽध्यायः ॥



॥ अथ पञ्चमाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

अ॒ग्नेस्त॒नूर॑सि विष्ण॑वे त्वा॒ सोम॑स्य त॒नूर॑सि विष्ण॑वे॒ त्वाऽति॑थेराति॒थ्यम॑सि विष्ण॑वे त्वा श्ये॒नाय॑ त्वा सोम॒भृते॒ विष्ण॑वे त्वा॒ऽग्नये॑ त्वा रायस्पोष॒दे विष्ण॑वे त्वा॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ હું હવિ अग्नेः-વિદ્યુત્ પ્રસિદ્ધ રૂપ અગ્નિના तनूः-શરીર સમાન असि-છે. त्वा-તે હવિનો विष्णवे-યજ્ઞના અનુષ્ઠાન માટે સ્વીકાર કરું છું.

જે सोमस्य-જગતમાં ઉત્પન્ન થયેલા પદાર્થોની तनूः-વિસ્તારપૂર્વક સામગ્રી असि-છે, त्वा-તે સામગ્રીનો विष्णवे-વાયુની શુદ્ધિ માટે ઉપયોગ કરું છું.

જે अतिथेः-સંન્યાસી વગેરેનું आतिथ्यम्-અતિથિપણું તથા સેવા-સત્કારરૂપ કર્મ असि-છે, त्वा-તેને विष्णवे-વિજ્ઞાન-યજ્ઞની પ્રાપ્તિ માટે ગ્રહણ કરું છું.

જે श्येनाय-જે બાજ પક્ષી સમાન શીઘ્રગમન માટે પ્રવૃત્ત થાય असि-છે, त्वा-તે દ્રવ્યને અગ્નિમાં નાખું છું.

જે विष्णवे-વિદ્યા કર્મયુક્ત सोमभृते-સોમને ધારણ કરનાર યજમાન માટે સુખ असि-છે, त्वा-તેને ગ્રહણ કરું છું.

જે अग्नये-અગ્નિની વૃદ્ધિ માટે કાષ્ઠ વગેરે છે, त्वा-તેનો સ્વીકાર કરું છું.

જે रायस्पोषदे-જે ધનની પુષ્ટિ આપનાર તથા विष्णवे-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ અને વિદ્યાની વ્યાપ્તિ માટે સમર્થ પદાર્થ છે, त्वा-તેને ગ્રહણ કરું છું. તેમ જ તમે પણ તેનું સેવન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ મંત્રમાં કહેલ ફળોની પ્રાપ્તિ માટે ત્રણ પ્રકારના યજ્ઞોનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૧)

अ॒ग्नेर्ज॒नित्र॑मसि॒ वृष॑णौ स्थऽउ॒र्वश्य॑स्या॒युर॑सि पु॒रूर॒वा॑ऽअसि। गा॒य॒त्रेण॑ त्वा॒ छन्द॑सा मन्थामि॒ त्रैष्टु॑भेन त्वा॒ छन्द॑सा मन्थामि॒ जाग॑तेन त्वा॒ छन्द॑सा मन्थामि॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું જે अग्ने-આગ્નેય અસ્ત્રાદિની સિદ્ધિ કરનારા અગ્નિને जनित्रम्-ઉત્પન્ન કરનાર હવિ असि-છે, જે वृषणौ-વર્ષા કરનાર સૂર્ય અને વાયુ अस्थः-છે, જે उर्वशी-અનેક સુખોને આપનારી ક્રિયા असि-છે, જે आयुः-જીવન असि-છે, જે पुरूरवाः-અનેક શાસ્ત્રોનો ઉપદેશ કરવાને નિમિત્ત असि-છે.

त्वा-તે અગ્નિને गायत्रेण-ગાયત્રી छन्दसा-આનંદકારક છંદ ક્રિયાથી मन्थामि-મંથન કરું છું. त्वा-તે સોમ આદિ ઔષધ સમૂહને त्रैष्टुभेन-ત્રિષ્ટુપ छन्दसा-છંદથી मन्थामि-મંથન કરું છું. त्वा-તે શત્રુ-

દુઃખ સમૂહને जागतेन-જગતી छन्दसा-છંદથી मन्थामि-તાડન કરીને નિવારણ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ આ રીતિથી સેવન કરેલ પૂર્વોક્ત યજ્ઞથી પરોપકાર કરવો જોઈએ. (૨)

भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञहिंꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः॥ ३॥

પદાર્થ : જે अरेपसौ-પ્રાકૃત મનુષ્યોનાં ભાષારૂપી વચનથી રહિત समनसौ-સમાન વિજ્ઞાનયુક્ત सचेतसौ-સમાન જાણવા-જણાવવાયુક્ત जातवेदसौ-વેદ અને ઉપવિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરેલ ભણવા-ભણાવનાર વિદ્વાન नः-અમારા માટે ઉપદેશ આપનાર भवतम्-બને.

જે यज्ञम्-ભણવા-ભણાવવારૂપ યજ્ઞ તથા यज्ञपतिम्-વિદ્યાપ્રદ યજ્ઞનું પાલન કરનાર યજમાનને मा हिंसिष्टम्-કષ્ટ ન આપે. તે [બન્ને] अद्य-આજ नः-અમારા માટે शिवौ-મંગલકારક भवतम्-બને. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યા પ્રચાર માટે, અધ્યયન અને અધ્યાપનનો તથા મંગલ આચરણનો કદી પણ ત્યાગ કરવો નહિ; કારણ કે તે સર્વોત્તમ છે. (૩)

अग्नावग्निश्चरति प्रविष्टऽऋषीणां पुत्रोऽअभिशस्तिपावा।
स नः स्योनः सुयजा यजेह देवेभ्यो हव्यꣳ सदमप्रयुच्छन्त्स्वाहा॥ ४॥

પદાર્થ : જે अभिशस्तिपावा-સર્વ પ્રકારની હિંસા કરનારાથી રહિત अग्नौ-વિદ્યુત્ અગ્નિની વિદ્યામાં प्रविष्टः-પ્રવેશ કરનાર-કરાવનાર ऋषिणाम्-વેદાદિ શાસ્ત્રોના શબ્દ, અર્થ અને સંબંધોને યથાવત્ જાણનારે पुत्रः-ભણાવેલ स्योनः-સર્વથા સુખકારક सुयजा-વિદ્યાઓનો સારી રીતે પ્રત્યક્ષ સંગ કરાવનારા अग्निः-પ્રકાશ આત્મા [વિદ્વાન] अप्रयुच्छन्-પ્રમાદ રહિત અધ્યાપક વિદ્વાન चरति-આચરણ કરે છે.

જે नः-અમારા માટે इह-આ સંસારમાં देवेभ्यः-વિદ્વાન તથા દિવ્યગુણોથી हव्यम्-લેવા-દેવા યોગ્ય પદાર્થ તથા सदम्-જ્ઞાન અને स्वाहा-હવન કરવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ અન્નાદિને પ્રાપ્ત કરે છે. सः-તેથી આપ यज-સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવો. (૪)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે અગ્નિ કાર્ય-કારણ ભેદથી બે પ્રકારનો છે, તેમાં કાર્યરૂપથી સૂર્ય આદિમાં અને કારણરૂપથી વિદ્યુત્ નામક સર્વ ભૌતિક પદાર્થોમાં પ્રવિષ્ઠ થઈને રહે છે. મનુષ્યોએ તેના [વિષયમાં] વિજ્ઞાનપૂર્વક પ્રવેશ કરીને તથા એ બન્ને અગ્નિઓનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને કાર્યોમાં ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૪)

आपतये त्वा परिपतये गृह्णामि तनूनप्त्रे शाक्वराय शक्वनऽओजिष्ठाय। अनाधृष्टमस्यनाधृष्यं देवानामोजोऽनभिशस्त्यभिशस्तिपाऽअनभिशस्तेन्यमञ्जसा सत्यमुपगेषꣳ स्विते मा धाः॥ ५॥

પદાર્થ : હું હે પરમાત્મન્ ! જેનાથી આપ હિંસારૂપી કર્મોથી અલગ રહેનારા અને રાખનારા છો,

તેનાથી त्वा-આપને आपतये-સર્વ રીતે સ્વામી હોવાથી परिपतये-સર્વ બાજુથી રક્ષા शाक्वराय-સર્વ સામર્થ્યની પ્રાપ્તિ शक्वने-શૂરવીરયુક્ત સેના ओजिष्ठाय-જેમાં સર્વોત્કૃષ્ટ પરાક્રમ હોય છે, તે વિદ્યા હોવાથી तनूनप्त्रे-જેથી ઉત્તમ શરીર થાય છે. તેના માટે गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું.

આપ કૃપા કરીને તે देवानाम्-વિદ્વાનોના अनाधृष्टम्-જેનું કોઈ અપમાન કરી શકતા નથી. જે अनाधृष्यम्-કોઈથી અપમાન કરવાને યોગ્ય નથી. अनभिशस्ति-કોઈથી હિંસા કરવા યોગ્ય નથી. अभिशस्तेन्यम्-અહિંસારૂપી ધર્મની પ્રાપ્તિ કરાવનાર सत्यम्-અવિનાશી ओजः-તેજ છે. તેનું ગ્રહણ કરાવીને स्विते-સારી રીતે, જે વ્યવહારમાં સુખ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમાં मा-મને धाः-ધારણ કરો. જેથી सत्यम्-સત્યવ્યવહારને उपगेषम्-જાણીને કરું.

દ્વિતીય અર્થ : હું જે अनाधृष्टम्-ન દૂર થનાર, अनाधृष्यम्-ન કોઈથી નષ્ટ થનાર अनभिशस्ति-ન હિંસા કરનાર अनभिशस्तेन्यम्-અને હિંસા રહિત ધર્મ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય देवानाम्-વિદ્વાન્ તથા પૃથિવી વગેરેમાં વિદ્યમાન सत्यम्-કારણરૂપ નિત્ય ओजः-પરાક્રમ સ્વરૂપયુક્ત अभिशस्तिपाः-હિંસાથી રક્ષાના હેતુરૂપ વિદ્યુત્ असि-છે.

જે मा-મને स्विते-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વ્યવહારમાં धाः-ધારણ કરે છે. अञ्जसा-સહજ રીતે ओजिष्ठाय-અત્યંત તેજસ્વી आपतये-સારી રીતે પાલન કરવા યોગ્ય વ્યવહાર परिपतये-જેમાં સર્વ રીતે પાલન કરનાર હોય છે. तनूनप्त्रे-જેમાં ઉત્તમ શરીર પ્રાપ્ત થાય છે. शाक्वराय-શક્તિને ઉત્પન્ન કરનાર અને शक्वने-શક્તિયુક્ત વીરસેનાની પ્રાપ્તિ માટે છે, त्वा-તેને गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. જેથી તે સત્ય કારણરૂપ પદાર્થોને उपगेषम्-જાણી શકું. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને પરમાત્માના વિજ્ઞાન વિના સાચું સુખ અને વિદ્યુત્ આદિની વિદ્યા તથા કલાકૌશલ વિના સર્વ સાંસારિક સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. માટે તે સર્વ પ્રયત્નથી કરવા જોઈએ. (૫)

अग्ने॑ व्रतपा॒स्त्वे व्र॑तपा॒ या तव॑ त॒नूरि॒यꣳ सा मयि॒ यो मम॑ त॒नूरे॒षा सा त्वयि॑।
स॒ह नौ॑ व्रतपते व्र॒तान्यनु॑ मे दी॒क्षां दी॒क्षाप॑ति॒र्मन्य॑ता॒मनु॑ त॒पस्तप॑स्पतिः॥ ६॥

પદાર્થ : જેના માટે હે अग्ने-व्रतपते-જગદીશ્વર ! આપ તથા વિદ્યુત્ સત્ય ધર્માદિ નિયમોનું व्रतपाः-પાલન કરાવનાર છો. તેથી त्वे-તે આપ તથા વિદ્યુત્માં હું व्रतपाः-પૂર્વોક્ત વ્રતોનું પાલન કરનારી ક્રિયાયુક્ત બનું છું. या-જે इयम्-આ तव-આપ અને તેની तनूः-વ્યાપક વ્યાપ્તિ છે. सा-તે मयि-મારામાં यो-જે एषा-આ मम-મારા तनूः-શરીરમાં છે. सा-તે त्वयि-આપ તથા તેમાં છે.

व्रतानि-જે બ્રહ્મચર્યાદિ વ્રત છે તે મારામાં રહે અને જે मे-મારામાં છે તે त्वयि-તમારામાં છે. જે આપ તથા તે तपस्पतिः-જિતેન્દ્રિયત્વાદિપૂર્વક ધર્માનુષ્ઠાનના પાલન નિમિત્ત છે. તે मे-મારા માટે तपः-પૂર્વોક્ત તપને अनुमन्यताम्-વિજ્ઞાપિત કરો અથવા કરે છે અને જે આપ તથા તે दीक्षापतिः-વ્રતોપદેશની રક્ષા કરનાર છો, તે मे-મારા માટે दीक्षाम्-વ્રતોપદેશને अनुमन्यताम्-આજ્ઞા કરે અથવા કરે છે. તેથી પણ नौ-હું અને આપ ભણનાર-ભણાવનાર બન્ને પ્રેમપૂર્વક વર્તીને વિદ્વાન અને ધાર્મિક બનીએ. જેથી

બન્નેની વિદ્યાવૃદ્ધિ સદા થતી રહે. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક ઉપકાર બુદ્ધિથી પરમેશ્વરમાં અથવા વિદ્યુત્‌માં પોતાના તથા અન્યોના પુરુષાર્થની વ્યાપ્ય-વ્યાપક સંબંધી વિદ્યાને જાણીને ધર્માચરણમાં નિરંતર પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૬)

अꣳशुरꣳशुष्टे देव सोमाप्यायतामिन्द्रायैकधनविदे । आ तुभ्यमिन्द्रः प्यायतामा त्वमिन्द्राय प्यायस्व। आप्याययास्मान्त्सखीन्त्सन्न्या मेधया स्वस्ति ते देव सोम सुत्यामशीय। एष्टा रायः प्रेषे भगायऽऋतमृतवादिभ्यो नमो द्यावापृथिवीभ्याम्॥ ७॥

પદાર્થ : હે सोम-પદાર્થ વિદ્યાના જાણનાર અથવા देव-દિવ્યગુણ સંપન્ન જગદીશ્વર અથવા વિદ્વાન ! વિદ્યુદ્વા જેથી वे-આપ અથવા એ વિદ્યુત્‌નું સામર્થ્ય अंशुरंशुः-પ્રત્યેક અવયવ-અંગની आप्यायताम्-રક્ષાથી વૃદ્ધિ કરે અથવા કરાવે છે.

इन्द्रः-જે આપ વા વિદ્યુત્ एवधनविदे-અર્થાત્ ધર્મવિજ્ઞાનથી ધનથી પ્રાપ્ત થનાર इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત મારા માટે आप्यायताम्-વૃદ્ધિ કરે અથવા કરાવે છે. [त्वम्-આપ તેને इन्द्राय-દુઃખ નાશ માટે] आप्यायस्व-વૃદ્ધિયુક્ત કરો અથવા કરે છે. તે આપ વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોના સાચા અર્થોની પ્રાપ્તિને सन्न्या-પ્રાપ્તિ કરાવનાર मेधया-પ્રજ્ઞાથી अस्मान्-અમને सखीन्-સર્વ મિત્રોને आप्यायस्व-આગળ વધારો. જેથી स्वस्ति-સુખની સદા વૃદ્ધિ થતી રહે.

सोम-હે પદાર્થ વિદ્યાના જ્ઞાતા ઈશ્વર અથવા વિદ્વાન ! આપની શિક્ષા તથા વિદ્યુત્ વિદ્યાથી યુક્ત થઈને હું सुत्याम्-શ્રેષ્ઠતમ ઉત્પન્ન કરનારી ક્રિયામાં કુશળ બની इषे-સિદ્ધિની ઈચ્છા તથા અન્ન આદિ भगाय-ઐશ્વર્ય માટે एष्टाः-ઈચ્છિત સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર रायः-ધનસમૂહને अशीय-પ્રાપ્ત કરું અને ऋतवादिभ्यः-સત્યવાદી વિદ્વાનોને એ ધન આપીને સત્યવિદ્યા અને द्यावापृथिवीभ्याम्-પ્રકાશ અને ભૂમિથી ऋतम्-અન્નને પ્રાપ્ત કરું. (૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના, વિદ્વાનોની સેવા, વિદ્યુત્ વિદ્યાનો પ્રચાર કરીને, શરીર અને આત્માને પુષ્ટ કરનારી ઔષધિઓ તથા ધનના સંગ્રહથી ચિકિત્સા શાસ્ત્ર અનુસાર વ્યવહાર કરીને સર્વ આનંદનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૭)

या तेऽअग्नेऽयःशया तनूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा। उग्रं वचोऽअपावधीत्त्वेषं वचोऽअपावधीत् स्वाहा। या तेऽअग्ने रजःशया तनूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा। उग्रं वचोऽअपावधीत्त्वेषं वचोऽअपावधीत् स्वाहा। या तेऽअग्ने हरिशया तनूर्वर्षिष्ठा गह्वरेष्ठा। उग्रं वचोऽअपावधीत्त्वेषं वचोऽअपावधीत् स्वाहा॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને या-જે ते-તે अग्ने-વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિના अयःशया-સુવર્ણ આદિમાં શયન કરનાર वर्षिष्ठा-અત્યંત મહાન गह्वरेष्ठा-અંદર રહેનાર तनूः-શરીર उग्रम्-ક્રૂર, ભયંકર वचः-

વચનનો अपावधीत्-નાશ કરે છે. त्वेषम्-પ્રદીપ્ત वचः-શબ્દ વા स्वाहा-ઉત્તમતાથી હવન કરેલા અન્નને अपावधीत्-દૂર કરે છે.

જે ते-આ अग्ने-વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિના वर्षिष्ठा-અત્યંત વિસ્તીર્ણ गह्वरेष्ठा-અંદર રહેલ रजःशया-લોકોમાં શયન કરનાર तनूः-શરીર उग्रम्-ક્રૂર वचः-કથનનો अपावधीत्-નાશ કરે છે. त्वेषम्-પ્રદીપ્ત वचः-કથન વા स्वाहा-ઉત્તમ વાણીને अपावधीत्-નષ્ટ કરે છે. તેને જાણીને તેની પાસેથી કામ લેવું જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યુત્‌ની જે વ્યાપ્તિ મૂર્ત અને અમૂર્ત પદાર્થોમાં છે, તેને યુક્તિપૂર્વક ઉત્તમ રીતિથી જાણીને તથા તેનો ઠીક ઉપયોગ કરીને સર્વ દુઃખોનો નાશ કરવો જોઈએ. (૮)

त॒प्ताय॑नी मेऽसि वि॒त्ताय॑नी मे॒ऽस्यव॑तान्मा नाथि॒तादव॑तान्मा व्यथि॒तात्। वि॒देद॒ग्निर्नभो॒ नामाग्नेऽअङ्गिर॒ऽआयु॑ना नाम्नेहि॒ यो॒ऽस्यां पृ॑थि॒व्यामसि॒ यत्तेऽना॑धृष्टं॒ नाम॑ य॒ज्ञियं॒ तेन॒ त्वा द॑धे वि॒देद॒ग्निर्नभो॒ नामाग्नेऽअङ्गिर॒ऽआयु॑ना नाम्नेहि॒ यो द्वि॒तीय॑स्यां पृथि॒व्यामसि॒ यत्तेऽना॑धृष्टं॒ नाम॑ य॒ज्ञियं॒ तेन॒ त्वा द॑धे वि॒देद॒ग्निर्नभो॒ नामाग्नेऽअङ्गिर॒ऽआयु॑ना नाम्नेहि॒ यस्तृ॒तीय॑स्यां पृथि॒व्यामसि॒ यत्तेऽना॑धृष्टं॒ नाम॑ य॒ज्ञियं॒ तेन॒ त्वा द॑धे। अनु॑ त्वा दे॒ववी॑तये॥ ९॥

પદાર્થ : હે વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન ! જેમ હું यत्-જે तप्तायनी-સ્થાપન કરવા યોગ્ય વસ્તુઓના સ્થાનયુક્ત વિદ્યુત્ असि-છે, વા જે वित्तायनी-ભોગ અને પ્રતીત પદાર્થને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્યુત્ જ્વાળા असि-છે. त्वा-તેની વિદ્યા જાણું છું. તેમ તું પણ એને मे-મારી પાસેથી एहि-પ્રાપ્ત કર.

જેમ આ यत्-જે अग्निः-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ नभः-જલ અને પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરાવીને मा-મારું व्यथितात्-ભયથી अवतात्-રક્ષા કરે છે, नाथितात्-ઐશ્વર્ય પ્રદાનથી अवतात्-રક્ષા કરે છે, તેમ તારાથી સેવન કરેલ અગ્નિ તારું પણ રક્ષણ કરશે.

જેમ હું तेन-તે સાધનથી જે अग्ने-જઠરરૂપ अङ्गिरः-અંગમાં રહેનાર આ અગ્નિ आयुना-જીવન नाम्ना-નામક પ્રસિદ્ધિથી अस्याम्-આ पृथिव्याम्-પૃથિવીમાં नाम-પ્રસિદ્ધ છે, त्वा-તેને જાણું છું. તેમ તું પણ તેને मे-મારાથી एहि-સારી રીતે જાણ.

જેમ હું तेन-તે જ્ઞાનથી यत्-જે अनाधृष्टम्-નાશ પામવા યોગ્ય નથી. यज्ञियम्-યજ્ઞાંગસમૂહ. नाम-પ્રસિદ્ધ તેજ છે, त्वा-તેને देववीतये-દિવ્ય ગુણોની પ્રાપ્તિ માટે त्वा-તે યજ્ઞને आदधे-ધારણ કરું છું, તેમ તું તેના દ્વારા ઉત્તમ ગુણોને પ્રાપ્ત કરવા ધારણ કર. તેમ સર્વ મનુષ્યો પણ તેનાથી એને विदेत्-પ્રાપ્ત કરે.

જેમ હું तेन-જે द्वितीयस्याम्-અન્ય पृथिव्याम्-ભૂમિમાં अग्ने + अङ्गिरः-અંગારોમાં રહેનાર અગ્નિ आयुना-જીવન તથા नाम्ना-પ્રસિદ્ધથી नाम-પ્રસિદ્ધ છે. यः-જે नभः-સુખ આપે છે. तेन-त्वा-તેનાથી તેને પ્રાપ્ત થયેલ છું, તેમ તું તેનાથી એને ऐहि-જાણ અને સર્વ મનુષ્યો પણ તેનાથી એને विदेत्-પ્રાપ્ત કરે.

જેમ હું तेन-પુરુષાર્થથી જે अनाघृष्टम्-પ્રગલ્ભ ગુણ સહિત यज्ञियम्-યજ્ઞસંબધી नाम-પ્રસિદ્ધ તેજ

છે. त्वा-તેને ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે आदधे-ધારણ કરું છું, તેમ તું તેને માટે ધારણ કર અને સર્વ મનુષ્યો પણ विदेत्-ધારણ કરે.

જેમ હું तेन-તે ક્રિયાકૌશલથી જે अग्निः-અગ્નિ आयुना-જીવન વા પ્રસિદ્ધિથી अङ्गिरः-અંગોનું સૂર્ય રૂપથી પોષણ કરનાર नाम-પ્રસિદ્ધ છે. અથવા જે नभः-આકાશને પ્રકાશિત કરે છે. त्वा-તેને ધારણ કરું છું, તેમ તું પણ તેને ધારણ કર અને સર્વ લોકો પણ अनुवेदित्-તેને સારી રીતે જાણીને કાર્ય સિદ્ધ કરે.

જેમ હું तेन-ઈન્ધન-બળતણાદિ સામગ્રીથી જે अनाधृष्टम्-પ્રગલ્ભસહિત यज्ञियम्-શિલ્પવિદ્યા સંબંધી नाम-પ્રસિદ્ધ તેજ છે. त्वा-તેને વિદ્વાનોની પ્રાપ્તિ માટે आदधे-ધારણ કરું છું, તેમ તું પણ તેનાથી તેની પ્રાપ્તિ માટે अन्वेहि-શોધ કર અને મનુષ્યો પણ વિદ્યાનો પ્રયોગ કરે. (૯)

ભાવાર્થ : જે પ્રસિદ્ધ, સૂર્ય અને વિદ્યુત્‌રૂપથી ત્રણ પ્રકારનો અગ્નિ સર્વ લોકોમાં બહાર અને અંદર વિદ્યમાન છે, તેને જાણીને તથા જણાવીને સર્વ મનુષ્યોએ સર્વ કાર્યની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૯)

सिꣳह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः कल्पस्व सिꣳह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः। शुन्धस्व सिꣳह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः शुम्भस्व॥ १०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! તું જે सपत्नसाही-જેનાથી શત્રુઓ સહન કરે છે તે देवेभ्यः-ઉત્તમ ગુણો શૂરવીરો માટે कल्पस्व-અધ્યાપન અને ઉપદેશ કરીને પ્રાપ્ત કર. सिंही-જે દોષોનો નાશ કરનારી વા શબ્દોના ઉચ્ચારણ કરનારી વાણી असि-છે. તેને देवेभ्यः-વિદ્વાન, દિવ્યગુણ વા વિદ્યાના ઇચ્છુક મનુષ્યો માટે शुन्धस्व-શુદ્ધતાથી પ્રકાશિત કર.

જે सपत्नसाही-દોષોનો નાશ તથા सिंही-અવિદ્યાનો નાશ કરનારી વાણી असि-છે, તેને देवेभ्यः-ધાર્મિક જનો માટે शुन्धस्व-શુદ્ધ કર.

જે सपत्नसाही-દુષ્ટ સ્વભાવ અને सिंही-દુષ્ટ દોષોનો નાશ કરનારી વાણી असि-છે, તેને देवेभ्यः-સુશીલ વિદ્વાનો માટે शुम्भस्व-સુશોભિત કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : વાણી ત્રણ પ્રકારની હોય છે : એક શિક્ષા અને વિદ્યાથી સંસ્કૃત, બીજી સત્યભાષણયુક્ત અને ત્રીજી મધુર. તેનો મનુષ્યોએ સદા સ્વીકાર કરવો જોઈએ. (૧૦)

इन्द्रघोषस्त्वा वसुभिः पुरस्तात्पातु प्रचेतास्त्वा रुद्रैः पश्चात्पातु मनोजवास्त्वा पितृभिर्दक्षिणतः पातु विश्वकर्मा त्वादित्यैरुत्तरतः पात्विदमहं तप्तं वार्बहिर्धा यज्ञान्निःसृजामि॥ ११॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ प्रचेताः-ઉત્તમ જ્ઞાનયુક્ત इन्द्रघोषः-પરમાત્મા, વેદવિદ્યા તથા વિદ્યુત્‌નો ઘોષ અર્થાત્ શબ્દ, અર્થ અને સંબંધથી બોધ કરાવનાર विश्वकर्मा-સર્વ કર્મવાળો હું विज्ञान-અધ્યયન-અધ્યાપન તથા હોમરૂપ યજ્ઞથી इदम्-અંદર રહેનાર तप्तम्-ઉષ્ણ જલ बहिर्धा-બહાર ધારણ કરેલ શીતળ वाः-જળનું निःसृजामि-સંપાદન અથવા નિક્ષેપ કરું છું, તેમ આપ પણ કરો.

જે वसुभिः-અગ્નિ આદિ પદાર્થ તથા ચોવીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાલન કરેલ મનુષ્યોની સાથે રહેલ इन्द्रघोषः-પરમેશ્વર, જીવ અને વિદ્યુત્‌ના અનેક શબ્દો સંબંધી વાણી છે તેની पुरस्तात्-પૂર્વદેશથી જેમ હું રક્ષા કરું છું, તેમ આપ પણ पातु-રક્ષા કરો.

જે रुद्रैः-પ્રાણ વા ચુંમાળીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાળનાર વિદ્વાનોની સાથે રહીને प्रचेताः-ઉત્તમ જ્ઞાન કરાવનારી વાણી છે, તેની पश्चात्-પશ્ચિમ દેશથી રક્ષા કરું છું, તેમ આપ પણ पातु-રક્ષા કરો.

જે पितृभिः-જ્ઞાની વા ઋતુઓની સાથે રહેલ मनोजवाः-મનના સમાન વેદવાણી છે, તેનું दक्षिणतः-દક્ષિણ દેશથી પાલન કરું છું, તેમ આપ પણ पातु-રક્ષા કરો.

જે आदित्यैः-બાર મહિના વા અડતાળીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાળનાર વિદ્વાનોની સાથે રહીને विश्वकर्मा-સર્વ કર્મયુક્ત વાણી છે, તેનું उत्तरतः-ઉત્તર દેશથી પાલન કરું છું, તેમ આપ પણ पातु-રક્ષા કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વસુ, રુદ્ર, આદિત્ય અને પિતૃજનો દ્વારા સેવિત તથા યજ્ઞ દ્વારા અધિકૃત વાણી અને જલની વિદ્યા તથા સત્ક્રિયા સાથે સેવન કરીને, તેને નિરંતર શુદ્ધ અને નિર્મળ બનાવવી જોઈએ. (૧૧)

सि॒ꣳह्य॑सि॒ स्वाहा॑ सि॒ꣳह्य॑स्यादित्य॒वनि॒ः स्वाहा॑ सि॒ꣳह्य॑सि ब्रह्म॒वनि॑ः क्षत्र॒वनि॒ः स्वाहा॑ सि॒ꣳह्य॑सि सुप्रजा॒वनी॑ रायस्पोष॒वनि॒ः स्वाहा॑ सि॒ꣳह्य॑स्या॒वह दे॒वान्यज॑मानाय॒ स्वाहा॑ भू॒तेभ्य॑स्त्वा ॥ १२ ॥

પદાર્થ : હું જે आदित्यवनिः-મહિનાઓનું વિભાગ કરનારી सिंही-ક્રૂરતા વગેરે દોષોનો નાશ કરનારી स्वाहा-જ્યોતિઃશાસ્ત્રથી સંસ્કારયુક્ત વાણી असि-છે;

જે ब्रह्मवनिः-પરમાત્મા, વેદ અને વેદને જાણનારા મનુષ્યો સેવન કરે છે તે सिंही-બળથી મૂર્ખતાનો નાશ કરનારી स्वाहा-પઠન-પાઠન વ્યવહારયુક્ત વાણી असि-છે;

જે क्षत्रवनिः-રાજ્ય, ધનુર્વિદ્યા અને શૂરવીરોનું સેવન કરનારી અને सिंही-ચોર, ડાકુ અને અન્યાયનો નાશ કરનારી स्वाहा-રાજ્યવ્યવહારમાં ચતુર વાણી असि-છે;

જે रायस्पोषवनिः-વિદ્યાદિ ઉત્તમ ધનોની પુષ્ટિનું સેવન કરનારી અને सिंही-અવિદ્યા નાશક स्वाहा-વાણી असि-છે;

જે सुप्रजावनिः-ઉત્તમ પ્રજાનું સેવન કરનારી તથા सिंही-સર્વ દુષ્ટોનો નાશ કરનારી स्वाहा-વ્યવહારથી ધન પ્રાપ્ત કરાવનારી વાણી असि-છે;

જે यजमानाय-વિદ્વાનોનું પૂજન કરનાર યજમાનના માટે स्वाहा-દિવ્ય વિદ્યા સંપન્ન વાણી देवान्-વિદ્વાન, દિવ્યગુણ વા ભોગોને आवह-પ્રાપ્ત કરાવે છે, त्वा-તેને भूतेभ्यः-સર્વ પ્રાણીઓ માટે यज्ञात्-યજ્ઞ દ્વારા निःसृजामि-સંપાદન (પ્રાપ્ત) કરું છું. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અધ્યયન આદિ દ્વારા ઐશ્વર્યયુક્ત લક્ષણવાળી વેદાદિ વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને તથા

તેને સર્વ મનુષ્યોને ભણાવીને સર્વને આનંદિત કરવા જોઈએ. (૧૨)

ध्रुवोऽसि पृथिवीं दृꣳह ध्रुवक्षिदस्यन्तरिक्षं दृꣳहाच्युतक्षिदसि दिवं दृꣳहाग्नेः पुरीषमसि॥ १३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જે યજ્ઞ ध्रुवः-નિશ્ચલ पृथिवीम्-ભૂમિને વિસ્તારે असि-છે, તેને તમે दंह-વિસ્તારો.

જે ध्रुवक्षित्-નિશ્ચલ સુખ અને શાસ્ત્રોના નિવાસ કરાવનારા असि-છે અને अन्तरिक्षम्- આકાશમાં સ્થિત પદાર્થોને પુષ્ટ કરે છે, તેને તમે दंह-વિસ્તારો.

જે अच्युतक्षित्-નાશરહિત પદાર્થોનો નિવાસ કરાવનાર असि-છે અને दिवम्-વિદ્યાદિ પ્રકાશને પ્રકાશિત કરે છે, તેને તમે दंह-વિસ્તારો.

જે अग्नेः-વિદ્યુતાદિ અગ્નિ અને पुरीषम्-પશુઓની પૂર્તિ કરાવનાર યજ્ઞ असि-છે, તેનું તમે અનુષ્ઠાન કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યા અને ક્રિયા દ્વારા સિદ્ધ કરેલ, ત્રણે લોકોના પદાર્થોને પુષ્ટ કરનાર અને વિદ્યા તથા ક્રિયાથી યુક્ત યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને સુખી બનવું જોઈએ. (૧૩)

युञ्जते मनऽउत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेकऽइन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः स्वाहा॥ १४॥

પદાર્થ : જેમ જે विहोत्राः-લેનાર-આપનાર विप्राः-બુદ્ધિમાન મનુષ્યો છે, તે જે बृहतः-સર્વથી મહાન विप्रस्य-અનંત જ્ઞાન-કર્મયુક્ત विपश्चितः-સર્વ વિદ્યા સહિત सवितुः-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક देवस्य-સર્વ પ્રકાશક મહેશ્વરની मही-મહાન परिष्टुतिः-સર્વ પ્રકારની સ્તુતિરૂપ स्वाहा-સત્યવાણીને જાણીને मनः-મનને युञ्जते-યુક્ત કરે છે, उत-અને धियः-બુદ્ધિઓને પણ युञ्जते-સ્થિર કરે છે, તેમ वयुनावित्-ઉત્તમ કર્મોને જાણનાર एकः-સહાય રહિત હું એકલો તેને જાણીને તેમાં મારું મન અને બુદ્ધિને विदधे-સદા નિશ્ચલ રાખું છું. (૧૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વરમાં જ મન અને બુદ્ધિને યુક્ત કરીને વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, અન્યોને પણ એ રીતે ઉપદેશ કરવો જોઈએ. (૧૪)

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा॥ १५॥

પદાર્થ : विष्णुः-જે સર્વ જગતમાં વ્યાપક જગદીશ્વર, જે કાંઈ આ જગતમાં છે તેની विचक्रमे-રચના કરતાં इदम्-આ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ જગત્‌ને त्रेधा-ત્રણ રીતે ધારણ કરે છે.

अस्य-આ પ્રકાશવાન, પ્રકાશરહિત અને અદૃશ્ય ત્રણ પ્રકારના પરમાણુ આદિ રૂપ स्वाहा-સારી રીતે જોવા અને બતાવવા યોગ્ય જગતને ગ્રહણ કરીને इदम्-આ समूढम्-સારી રીતે વિચાર કરીને કથન

કરવા યોગ્ય અદૃશ્ય જગતને पांसुरे-અન્તરિક્ષમાં સ્થાપન કરે છે, તે જ જગદીશ્વર સર્વ મનુષ્યોને ઉપાસનીય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરે પ્રથમ પ્રકાશમય સૂર્ય આદિ, બીજી પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ પ્રસિદ્ધ જગત્ રચેલ છે, અને ત્રીજું પરમાણુ આદિ અદૃશ્ય જગત્ છે, તે સર્વને કારણભૂત અવયવોથી રચીને અન્તરિક્ષમાં સ્થાપિત કરેલ છે.

તેમાં ઔષધિ આદિને પૃથિવી પર, અગ્નિ આદિને સૂર્યમાં અને પરમાણુ આદિને આકાશમાં સ્થાપિત કરેલ છે - રાખેલ છે. અને એ સર્વને પ્રાણોના શિર પર રાખેલ છે.

આ જગત્નું નામ ગાયત્રી છે, કારણ કે તે ગયોમાં વિસ્તરેલ છે. ગયનો અર્થ પ્રાણ છે. જેથી પ્રાણોમાં વિસ્તરેલ છે. તેથી તેને ગાયત્રી કહે છે. (૧૫)

इरावती धेनुमती हि भूतꣳ सूयवसिनी मनवे दशस्या।

व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्त्थ पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा॥ १६॥

પદાર્થ : હે विष्णो-સર્વવ્યાપી જગદીશ્વર ! આપ જે इरावती-ઉત્તમ અન્નયુક્ત धेनुमती-પ્રશંસનીય અનેક વાણીયુક્ત પ્રજા વા પશુયુક્ત सूयवसिनी-અનેક મિશ્રિત - અમિશ્રિત વસ્તુઓથી યુક્ત ભૂમિ વા વાણી पृथिवीम्-ભૂમિ हि-નિશ્ચયપૂર્વક स्वाहा-વેદવાણી વા भूतम्-ઉત્પન્ન થયેલ સર્વ જગત્ને मयूखैः-જ્ઞાનપ્રકાશ આદિ ગુણોથી अभितः-બધી બાજુથી दाधर्त्थ-ધારણ કરો છો.

रोदसी-પ્રકાશ લોકો તથા પૃથિવી લોકોનું व्यस्कभ्नाः-સમ્યક્ સ્તંભન કરો છો તે मनवे-વિજ્ઞાનયુક્ત दशस्या-દશન અર્થાત્ દાંતોની વચ્ચે સ્થિત જિહ્વા સમાન આચરણ કરનાર આપને માટે एते-એ અમે લોકો જગત્ને નિવેદન કરીએ છીએ.

દ્વિતીય અર્થ :

જે विष्णो-વ્યાપક પ્રાણ જે इरावती-ઉત્તમ અન્નયુક્ત धेनुमती-પશુયુક્ત सूयवसिनी-બહુજ મિશ્રિત - અમિશ્રિત પદાર્થયુક્ત ભૂમિ વા વાણી છે તે पृथिवीम्-ભૂમિ स्वाहा-વા ઇન્દ્રિયોને मयूखैः-કિરણો પોતાના બળ આદિથી अभितः-સર્વ રીતે दाधर्त्थ-ધારણ કરે છે અને रोदसी-પ્રકાશલોક અને પૃથિવીલોકનું व्यस्कभ्नाः-સ્તંભન કરે છે તે दशस्या-દાંતની સમાન આચરણ કરનાર તથા मनवे-વિજ્ઞાનયુક્ત સૂર્ય માટે भूतं हि-નિશ્ચયપૂર્વક સર્વ જગતને કરવા માટે ઈશ્વરે આપેલ છે, એમ एते-એ અમે સર્વે જાણીએ છીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાનાં કિરણોથી અને પોતાની આકર્ષણમયી જ્યોતિઓથી સમસ્ત પૃથિવી આદિ જગતને રોકીને તથા આકૃષ્ટ કરીને ધારણ કરે છે, તેમ જ પરમેશ્વર અથવા પ્રાણ પોતાના સામર્થ્યથી સમસ્ત જગત્ને રચીને તથા ધારણ કરીને વ્યવસ્થિત કરે છે. (૧૬)

देवश्रुतौ देवेष्वाघोषतं प्राची प्रेतमध्वरं कल्पयन्तीऽऊर्ध्वं यज्ञं नयतं मा जिह्वरतम्। स्वं गोष्ठमावदतं देवी दुर्येऽआयुर्मा निर्वादिष्टं प्रजां मा निर्वादिष्टमत्र रमेथां वर्ष्मन् पृथिव्याः॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ જે देवेषु-વિદ્વાન વા દિવ્યગુણોમાં देवश्रुतौ-વિદ્વાનો પાસેથી શ્રવણ કરેલા પ્રાણ અપાનવાયુ घोषतम्-ઘોષ કરે - શબ્દ વ્યક્ત કરે અને જે प्राची-પ્રાપ્ત કરનારી વા कल्पयन्ती-સામર્થ્યયુક્ત પ્રકાશ અને ભૂમિ ऊर्ध्वम्-ઉત્તમ ગુણયુક્ત यज्ञम्-વિજ્ઞાન અને શિલ્પમય યજ્ઞને प्रेतम्-જણાવતા રહીને नयतम्-પ્રાપ્ત કરે. मा जिह्वरतम्-કુટિલ ગતિયુક્ત ન હોય.

જે देवी-દિવ્યગુણોથી સંપન્ન दुर्ये-ગૃહરૂપ स्वयं-પોતાના गोष्ठम्-કિરણ અને અવયવોના સ્થાનના आवदतम्-ઉપદેશ નિમિત્ત હોય आयुः-જીવનને मा निर्वादिष्टम्-નષ્ટ ન કરે. प्रजाम्-ઉત્પન્ન સૃષ્ટિને मा निर्वादिष्टम्-નષ્ટ ન કરે અને તે पृथिव्याः-આકાશ અને પૃથિવીની મધ્ય अत्र-આ वर्ष्मन्-સુખથી સેવન કરવા યોગ્ય જગત્‌માં रमेथाम्-રમણ કરે તેમ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેટલું જગત્ અન્તરિક્ષના મધ્યમાં રહેલ છે, તે સર્વથી મનુષ્યોએ અત્યધિક સુખોનું સંપાદન કરવું જોઈએ. (૧૭)

विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजांꣳसि।
योऽअस्कभायदुत्तरꣳ सधस्थे विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायो विष्णवे त्वा॥ १८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે यः-જે विचक्रमाणः-જગત્ રચનાના કારણ અંશોને - દ્રવ્યોને યુક્ત કરીને उरुगायः-વેદ દ્વારા બહુ અર્થોનો ઉપદેશ કરનાર જગદીશ્વર पार्थिवानि-પૃથિવીના વિકાર અર્થાત્ પૃથિવીના ગુણોથી ઉત્પન્ન થનાર વા અન્તરિક્ષમાં જણાવેલા त्रेधा-ત્રણ પ્રકારના रजांसि-લોકોને विममे-અનેક પ્રકારથી રચે છે.

જે उत्तरम्-અંતિમ અવયવોને सधस्थम्-સાથે રહેનારાં કારણોને अस्कभायत्-રોકી રાખે છે. यः-જેનો विष्णवे-ઉપાસના આદિ યજ્ઞ માટે આશ્રય લેવામાં આવે છે. તે विष्णोः-વ્યાપક પરમેશ્વરના वीर्याणि-પરાક્રમયુક્ત કર્મોનું प्रवोचम्-કથન કરું છું અને હે પરમેશ્વર ! नु-શીઘ્ર જ कम्-સુખસ્વરૂપ त्वा-આપનો આશ્રય કરું છું - શરણ ગ્રહણ કરું છું. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે પરમેશ્વરે પૃથિવી, સૂર્ય અને ત્રસરેણુ ભેદથી ત્રણ પ્રકારનું જગત્ રચીને ધારણ કરેલ છે, તેની ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૮)

दिवो वा विष्णऽउत वा पृथिव्या महो वा विष्णऽउरोरन्तरिक्षात्।

उभा हि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणादोत सव्याद्विष्णवे त्वा॥ १९॥

પદાર્થ : હે विष्णो-સર્વવ્યાપી પરમેશ્વર ! આપ કૃપા કરીને અમને दिवः-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ वा-અથવા વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિથી वसुना-દ્રવ્ય સાથે आपृणस्व-સુખોથી પૂર્ણ કરો.

पृथिव्याः-ભૂમિથી ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થો उत-પણ वा-અથવા महः-મહત્ત્વ અવ્યક્ત પ્રકૃતિથી અને उत-પણ उरोः-બહુ अन्तरिक्षात्-અન્તરિક્ષનાં દ્રવ્યોની સાથે સુખોને हि-નિશ્ચય કરીને પૂર્ણ કરો.

विष्णो-સર્વમાં પ્રવિષ્ટ ઈશ્વર ! આપ दक्षिणात्-દક્ષિણ उत-અને सव्यात्-વામ પાર્શ્વથી સુખોને પ્રદાન કરો. त्वा-તે આપને विष्णवे-યોગવિજ્ઞાન યજ્ઞ માટે પૂજન કરે છે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે વ્યાપક ઈશ્વર દ્વારા મહત્ત્વ, સૂર્ય, ભૂમિ, અન્તરિક્ષ, વાયુ, અગ્નિ અને જલ આદિ પદાર્થોને તથા તેમાં સ્થિત ઔષધિ આદિ અને મનુષ્ય આદિને રચીને, ધારણ કરીને, સર્વ પ્રાણીઓ માટે સુખ સ્થાપિત કરવામાં આવે છે, તેની ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૯)

प्र तद्विष्णु स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा॥ २०॥

પદાર્થ : यस्य-જેના उरुषु-અત્યંત त्रिषु-त्रिविक्रमणेषु-વિવિધ પ્રકારનાં કર્મોમાં विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોક अधिक्षियन्ति-નિવાસ કરે છે. અને वीर्येण-પોતાના પરાક્રમથી भीमः-ભય કરનાર कुचरः-નિંદિત પ્રાણીઓનો વધ કરનાર અને गिरिष्ठाः-પર્વતમાં રહેનાર मृगः-સિંહ न-સમાન પાપીઓને શોધી શોધીને દુઃખ આપીને प्रस्तवते-ઉપદેશ કરે છે तत्-તેને કદી પણ ભૂલવા ન જોઈએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ સિંહ પોતાના પરાક્રમથી યથેષ્ટ વિચરણ કરે છે, તેમ જ જગદીશ્વર પણ પોતાના પરાક્રમથી સર્વ લોકોને નિયમમાં રાખે છે. (૨૦)

विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि।
वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥ २१॥

પદાર્થ : જે આ અનેક પ્રકારનું જગત છે, તે विष्णोः-વ્યાપક પરમેશ્વરના પ્રકાશથી रराटम्-ઉત્પન્ન થઈને પ્રકાશિત છે. विष्णोः-સર્વ સુખોથી ભરપૂર ઈશ્વરથી स्यूः-વિસ્તૃત असि-છે. સર્વ જગત્ वैष्णवम्-યજ્ઞનું સાધન असि-છે.

विष्णोः-સર્વમાં પ્રવિષ્ટ જે ઈશ્વરે श्नप्त्रे-જડ અને ચેતનની સમાન બે પ્રકારનું શુદ્ધ જગત્ છે, તે સર્વ જગત્ના ઉત્પાદક જગદીશ્વર ! અમે त्वा-આપનો विष्णवे-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરવા આશ્રય લઈએ છીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમેશ્વર જ આ સમસ્ત સંસારના રચયિતા, ધારણકર્તા, તેમાં વ્યાપક અને

સર્વના ઈષ્ટ દેવ છે, તેમ જાણીને સર્વ કામનાઓની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૧)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। आददे नार्यसीदमहꣳ रक्षसां ग्रीवाऽअपि कृन्तामि। बृहन्नसि बृहद्रवा बृहतीमिन्द्राय वाचं वद॥ २२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ હું देवस्य-સર્વ પ્રકાશક, આનંદદાતા सवितुः-સકલ જગત્ ઉત્પાદક ઈશ્વરના प्रसवे-રચેલા સંસારમાં જે યજ્ઞને आददे-ગ્રહણ કરું છું, તેમ તું પણ त्वा-તેને ગ્રહણ કર.

જેમ હું नारी-યજ્ઞક્રિયા વા इदम्-યજ્ઞના અનુષ્ઠાનનું ગ્રહણ કરું છું, તેમ તું પણ ગ્રહણ કર.

જેમ अहम्-હું रक्षसाम्-દુષ્ટ સ્વભાવના શત્રુઓના ग्रीवाः-શિરોનું अपिकृन्तामि-છેદન કરું છું, તેમ તું પણ છેદન કર.

જેમ હું આ અનુષ્ઠાનથી बृहद्रवाः-મોટાઈ પામી મોટો બનું છું, તેમ તું પણ બન.

જેમ હું इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે बृहतीम्-મહાન वाचम्-વાણીનો ઉપદેશ આપું છું, તેમ તું પણ वद-આપ. (૨૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન મનુષ્યો ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં વિદ્યા દ્વારા પદાર્થોની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, તેનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જ સર્વ મનુષ્યોએ એ યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરવાં જોઈએ. (૨૨)

रक्षोहणं बलगहनं वैष्णवीमिदमहं तं बलगमुत्किरामि यं मे निष्ट्यो यममात्यो निचखानेदमहं तं बलगमुत्किरामि यं मे समानो यमसमानो निचखानेदमहं तं बलगमुत्किरामि यं मे सबन्धुर्यमसबन्धुर्निचखानेदमहं तं बलगमुत्किरामि यं मे सजातो यमसजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि॥ २३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ अहम्-હું बलगहनम्-બળનું મંથન કરનારાં અને रक्षोहणम्-રાક્ષસોને હણનારાં કર્મ અને वैष्णवीम्-વ્યાપક ઈશ્વરની વેદવાણીનું અનુષ્ઠાન કરીને यम्-જે बलगम्-બલદાયક યજ્ઞને उत्किरामि-ઉત્કૃષ્ટપણાથી પ્રેરિત અર્થાત્ આ સંસારમાં પ્રકાશિત કરું છું, तम्-તે યજ્ઞને તેમજ તું પણ इदम्-એને પ્રકાશિત કર.

જેમ मे-મારા निष्ट्यः-યજ્ઞમાં કુશળ अमात्यः-મેધાવી વિદ્વાન મનુષ્ય यम्-જે યજ્ઞ અને इदम्-ભૂગર્ભ વિદ્યાની પરીક્ષા માટે સ્થાનને निचखान-નિઃસંદેહ ખનન-ખોદે છે, તેમ तम्-તેને તારો નોકર પણ ખોદે.

જેમ अहम्-ભૂગર્ભ વિદ્યાનો જ્ઞાતા હું यम्-बलगम्-બલ પ્રાપ્ત કરાવનારા ખેતી આદિ યજ્ઞ તથા इदम्-ખોદકામને उत्किरामि-સારી રીતે સંપાદન કરું છું, તેમ तम्-તેને તું પણ કર.

જેમ मे-મારા समानः-સમાન અથવા અસમાન મનુષ્ય यम्-જે કર્મને निचखान-ખોદકામ કરે છે, તેમ તારું પણ ખોદકામ કરે.

જેમ अहम्-ભણનાર-ભણાવનાર હું यम्-જે बलगम्-આત્મબલ આપનાર યજ્ઞ વા इदम्-ભણવા-ભણાવવા રૂપી કાર્યને उत्किरामि-સંપાદન કરું છું, તેમ तम्-તેને તું પણ કર.

જેમ मे-મારા सबन्धुः-ભાઈ સમાન અથવા મિત્ર असबन्धुः-ભાઈની અસમાન અર્થાત્ અમિત્ર यम्-જે પાલનરૂપી યજ્ઞ અથવા એ કાર્યને निचखान-નિઃસંદેહ કરે છે, તેમ તારું કાર્ય પણ કરે.

જેમ अहम्-સર્વનો મિત્ર હું यम-જે बलगम्-રાજ્યબલ પ્રાપ્ત કરાવનાર યજ્ઞ વા इदम्-એ કાર્યને उत्किरामि-સંપન્ન કરું છું, તેમ तम्-તેને તું પણ કર.

જેમ सजातः-સાથે ઉત્પન્ન થયેલા असजातः-પૃથક્ ઉત્પન્ન થયેલા મનુષ્ય यम्-જે યજ્ઞ વા कृत्याम्-ઉત્તમ ક્રિયાને निचखान-નિઃસંદેહ કરે છે, તેમ તારા એ યજ્ઞ અથવા એ ક્રિયાને નિઃસંદેહ કરે.

જેમ હું આ પૂર્વોક્ત સર્વ કર્મને उत्किरामि-સંપાદન કરું છું, તેમ તું પણ કર. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં ધાર્મિક વિદ્વાનોનું અનુકરણ કરવું જોઈએ, અન્યોનું નહીં. (૨૩)

स्वराडसि सपत्नहा सत्रराडस्यभिमातिहा जनराडसि रक्षोहा सर्वराडस्यमित्रहा॥ २४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જે કારણે આપ स्वराट्-સ્વયં પ્રકાશમાન असि-છો, તેથી सपत्नहा-શત્રુઓને મારનાર છો, તેથી તમે सत्रराट्-યજ્ઞોમાં પ્રકાશમાન असि-છો, તેથી अभिमातिहा-અભિમાનીનો નાશ કરનાર છો, જેથી આપ जनराट्-ધાર્મિક વિદ્વાનોમાં પ્રકાશમાન છો, તેથી रक्षोहा-દુષ્ટ રાક્ષસજનોનો નાશ કરનાર છો. જેથી આપ सर्वराट्-સર્વમાં પ્રકાશિત છો, તેથી अमित्रहा-અમિત્ર અર્થાત્ શત્રુઓનો વિનાશ કરનાર છો.

દ્વિતીય અર્થ : જેથી આ સૂર્યલોક स्वराट्-સ્વયં असि-પ્રકાશમાન છે. તેથી सपत्नहा-મેઘ-વાદળાંના અવયવોને કાપનાર છો,એ કારણે એ सत्रराट्-યજ્ઞોમાં પ્રકાશમાન છો. તેથી अभिमातिहा-અભિમાની ચોર વગેરેનું હનન કરનાર છો; જે કારણે એ जनराट्-ધાર્મિક વિદ્વાનોના મનમાં પ્રકાશિત असि-છો. તેથી रक्षोहा-રાક્ષસ તથા દુષ્ટોનો નાશ કરનાર છો. જેથી એ सर्वराट्-સર્વમાં પ્રકાશમાન असि-છો. તેથી अमित्रहा-દુષ્ટોને દંડ આપવાના નિમિત્ત છો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વન્ (રાજન્) ! જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી ચોર અને વ્યાઘ્ર વગેરેને ડરાવીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ તું પણ શત્રુઓનું નિવારણ કરીને સર્વને સુખી કર. (૨૪)

रक्षोहणो वो बलगहनः प्रोक्षामि वैष्णवान्नक्षोहणो वो बलगहनोऽवनयामि वैष्णवान्रक्षोहणौ वा बलगहनोऽवस्तृणामि वैष्णवान्रक्षोहणौ वां

बलगहनाऽउपदधामि वैष्णवी रक्षोहणौ वां बलगहनौ पर्यूहामि वैष्णवी वैष्णवमसि वैष्णवा स्थ॥ २५॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ આદિ મનુષ્યો ! જેમ તમે रक्षोहणः-દુઃખોનો નાશ કરનાર છો, તેમ શત્રુઓના બળનું વેરણ-છેરણ કરનાર હું वैष्णवान्-યજ્ઞ દેવતાવાળા वः-આપ લોકોનો સત્કાર કરીને યુદ્ધમાં શસ્ત્રોથી प्रोक्षामि-એ ઘમંડી મનુષ્યોને શુદ્ધ કરું.

જેમ આપ रक्षोहणः-અધર્માત્મા, દુષ્ટ, દસ્યુઓને મારનાર છો, તેમ बलगहनः-શત્રુ સેનાનો અંદાજ લેનાર હું वैष्णवान्-યજ્ઞ સંબંધી वः-તમને માન્ય કરીને દુષ્ટોને अवनयामि-દૂર કરું છું.

જેમ बलगहनः-પોતાની સેનાની વ્યૂહની શિક્ષાનું મંથન કરનાર હું रक्षोहणः-શત્રુઓને મારવા તથા वैष्णवान्-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર वः-તમને अवस्तृणामि-સુખથી આચ્છાદિત કરું છું, તેમ તમે પણ કરો.

જેમ रक्षोहणौ-રાક્ષસોને મારનાર તથા बलगहनौ-બળોનું મંથન કરનાર वाम्-યજ્ઞપતિ તથા યજ્ઞ કરાવનાર વિદ્વાનનું ધારણ કરો છો, તેમ હું પણ उपदधामि-ધારણ કરું છું.

જેમ रक्षोहणौ-રાક્ષસોને મારનાર बलगहनौ-બળોનું મંથન કરનાર वाम्-પ્રજા, સભાધ્યક્ષ આપ वैष्णवी-સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપક વિદ્વાનોની ક્રિયા તથા वैष्णवम्-વિષ્ણુ સંબંધી જ્ઞાન છે, તે બધાને તર્કથી જાણો છો, તેમ હું પણ पर्यूहामि-તર્કથી સારી રીતે જાણું.

જેમ આપ સર્વ લોકો वैष्णवाः-વ્યાપક પરમેશ્વરની ઉપાસના કરનાર स्थ-છો, તેમ હું પણ બનું. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના તથા ઉચિત વ્યવહારથી શરીર અને આત્માના પૂર્ણ બળને પ્રાપ્ત કરીને યજ્ઞથી પ્રજાનું પાલન કરીને તથા શત્રુઓને જીતીને સાર્વભૌમ રાજ્યનું શાસન કરવું જોઈએ. (૨૫)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। आददे नार्यसीदमहꣳ रक्षसां ग्रीवाऽअपिकृन्तामि । यवोऽसि यवयास्मद्द्वेषो यवयारातीर्दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वा शुन्धन्ताँल्लोकाः पितृषदनाः पितृषदनमसि॥ २६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્ય ! જેમ હું सवितुः-સર્વ જગતના ઉત્પાદક અને देवस्य-સર્વ આનંદ આપનાર પરમેશ્વરના प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં अश्विनोः-પ્રાણ અને અપાનના बाहुभ्याम्-બળ અને વીર્ય તથા पूष्णः-અતિપુષ્ટ વીરના हस्ताभ्याम्-પ્રબળ પ્રતાપયુક્ત ભુજા અને દંડથી અનેક ઉપકારોને आददे-ગ્રહણ કરું છું તથા इदम्-આ જગતની રક્ષા કરીને रक्षसाम्-દુષ્ટ કર્મ કરનાર પ્રાણીઓના ग्रीवाः-શિરોનું अपि-कृन्तामि-છેદન કરું છું, તથા જેમ પદાર્થોના ઉત્તમ ગુણોને મિશ્રિત કરું છું, તેમ તું પણ ઉપકાર

પ્રાપ્ત કર અને यवय-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પદાર્થોને સંયુક્ત કર.

જેમ હું द्वेषः-ઈર્ષા વગેરે દોષો તથા अरातीः-શત્રુઓને अस्मत्-પોતાનાથી દૂર કરું છું, તેમ તું પણ यवय-દૂર કર.

હે વિદ્વન્ ! જેમ અમે दिवे-ઐશ્વર્યાદિ ગુણોનો પ્રકાશ કરવા માટે त्वा-તને अन्तरिक्षाय-આકાશમાં રહેનાર પદાર્થોને શુદ્ધ કરવા માટે त्वा-આપને पृथिव्यै-પૃથિવીના પદાર્થોની પુષ્ટિ કરવા માટે त्वा-આપનું સેવન (આશ્રય) કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો.

જેમ पितृषदनम्-વિદ્યાવાન જ્ઞાની લોકોનું સ્થાન असि-છે. અને જેથી पितृषदनाः-જેમ જ્ઞાની લોકોમાં રહીને પવિત્ર બને છે, તેમ હું શુદ્ધ બનું. તથા સર્વ મનુષ્યો शुन्धन्ताम्-પોતાની શુદ્ધિ કરે અને હે नारि-સ્ત્રી ! તું પણ આ સર્વ ઉપદેશોનું એ રીતે આચરણ કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ક્રિયા અનુસાર તથા યથાક્રમ વિદ્વાનોનો આશ્રય કરીને યજ્ઞાનુષ્ઠાનથી સર્વની શુદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૬)

उद्दिवꣳ स्तभानान्तरिक्षं पृण दृꣳहस्व पृथिव्यां द्युतानस्त्वा मारुतो मिनोतु मित्रावरुणौ ध्रुवेण धर्मणा। ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनि रायस्पोषवनि पर्यूहामि। ब्रह्म दृꣳह क्षत्रं दृꣳहायुर्दृꣳह प्रजां दृꣳह॥ २७॥

પદાર્થ : હે પરમ વિદ્વાન ! જેમ त्वा-આપને मारुतः-વાયુ ध्रुवेण-નિશ્ચલ धर्मणा-ધર્મથી मिनोतु-પ્રયુક્ત કરે છે, मित्रावरुणौ-પ્રાણ અને અપાન પણ ધર્મથી પ્રયુક્ત કરે છે, તેમ આપ કૃપા કરીને અમારા માટે दिवम्-વિદ્યા ગુણોના પ્રકાશથી उत्तभान-અજ્ઞાનને દૂર કરો. તથા अन्तरिक्षम्-સર્વ પદાર્થોના અવકાશને आ पृण-પરિપૂર્ણ કરો.

पृथिव्याम्-ભૂમિ પર द्युतानः-સદ્‌વિદ્યાના ગુણોનો વિસ્તાર કરીને આપ સુખોની दृंहस्व-વૃદ્ધિ કરો; ब्रह्म-વેદવિદ્યાની दृंह-વૃદ્ધિ કરો, क्षत्रम्-રાજ્યની વૃદ્ધિ કરો, आयुः-જીવનની दृंह-વૃદ્ધિ કરો. તથા प्रजाम्-ઉત્પન્ન થયેલ સંતાનોની दृंह-વૃદ્ધિ કરો.

તેથી હું ब्रह्मवनि-બ્રહ્મવિદ્યાનું સેવન કરનાર અને કરાવનાર, क्षत्रवनि-રાજ્યનું સેવન કરનાર અને કરાવનાર रायस्पोषवनि-અને ધનસમૂહની પુષ્ટિનું સેવન કરનાર અને કરાવનાર આપને पर्यूहामि-સર્વ પ્રકારના તર્કોથી નિશ્ચય કરું છું, તેમ આપ મને સર્વથા સુખદાયક બનો તથા આપને સર્વ મનુષ્યો તર્કથી જાણે. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ જગદીશ્વરની સત્ય ભાવથી પ્રાર્થના કરવાથી તથા શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનની સેવા કરવાથી એ સર્વને સુખ આપે છે, તેમજ આ યજ્ઞ પણ વિદ્યા આદિની વૃદ્ધિ કરીને સર્વ મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ તમે જાણો. (૨૭)

ध्रुवासि ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात्।

घृतेन॒ द्यावापृथिवी पूर्येथा॒मिन्द्र॑स्य छ॒दिर॑सि विश्वज॒नस्य॑ छा॒या॥ २८॥

પદાર્થ : હે યજ્ઞ કરનાર યજમાનની પત્ની ! જેમ તું प्रजया-રાજ્ય અથવા પોતાનાં સંતાન અને पशुभिः-હાથી, ઘોડા, ગાય, વગેરે પશુઓ સહિત अस्मिन्-આ आयतने-જગતમાં, પોતાના સ્થાન-ઘરમાં અથવા સર્વનો સત્કાર કરવા યોગ્ય યજ્ઞમાં ध्रुवा-દઢ સંકલ્પ असि-છે, તેમ अयम्-આ यजमानः-યજ્ઞ કરનાર તારા પતિ યજમાન પણ ध्रुवः-દઢ સંકલ્પ રહે.

તમે બન્ને घृतेन-ઘૃતાદિ સુગંધી પદાર્થો દ્વારા द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિને पूर्येथाम्-પરિપૂર્ણ કરો.

હે યજ્ઞ કરનારી પત્ની ! તું इन्द्रस्य-અત્યંત ઐશ્વર્યને પણ પોતાના યજ્ઞથી छदिः-પ્રાપ્ત કરનારી असि-છે. હવે તું અને તારો પતિ યજમાન विश्वजनस्य-સંસારમાં छाया-સુખ કરનાર भूयात्-બનો. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે યજ્ઞ કરનાર યજમાન અને યજમાન - પત્ની દ્વારા તથા જે યજ્ઞ દ્વારા નિશ્ચલ વિદ્યા અને સુખ પ્રાપ્ત થઈને દુઃખ નાશ પામે, તે બંનેનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ અને યજ્ઞનું નિત્ય અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૨૮)

परि॑ त्वा गिर्वणो॒ गिर॑ऽइ॒मा भ॑वन्तु वि॒श्वतः॑। वृ॒द्धायु॒मनु॒ वृद्ध॑यो॒ जुष्टा॑ भवन्तु॒ जुष्ट॑यः॥ २९॥

પદાર્થ : હે गिर्वणः-સ્તુતિઓથી - વાણીથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વર ! વા સભાપતિ ! इमाः-એ મારી કરેલી विश्वतः-સમસ્ત गिरः-સ્તુતિઓ परि-સર્વ પ્રકારથી भवन्तु-પ્રાપ્ત થાવ અને મારી સ્તુતિ તે સમય પૂરતી અર્થાત્ ક્ષણિક ન હોય પરંતુ वृद्धायुम्-વૃદ્ધોની સમાન આચરણ કરનાર આપની अनु-પશ્ચાત્ वृद्धयः-અત્યંત વધતી અને जुष्टयः-પ્રીતિ કરવા યોગ્ય जुष्टाः-પ્રેમાળ હોય. (૨૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સમસ્ત શુભ ગુણ-કર્મની સાથે વર્તમાન જગદીશ્વર અથવા સભાપતિ સ્તુતિ યોગ્ય છે, તેમ તમારે પણ બનવું જોઈએ. (૨૯)

इन्द्र॑स्य॒ स्यू॒रसीन्द्र॑स्य ध्रु॒वो॒ऽसि ऐ॒न्द्रम॑सि वैश्वदे॒वम॑सि॥ ३०॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર તથા સભાપતિ ! જેમ वैश्वदेवम्-સમસ્ત પદાર્થોનું નિવાસસ્થાન અન્તરિક્ષ છે, તેમ આપ ऐन्द्रम्-સર્વનો આધાર છો, તેથી અમને इन्द्रस्य-પરમૈશ્વર્યનો स्यूः-સંયોગ કરનાર असि-છો. અને इन्द्रस्य-સૂર્ય આદિ લોક અને રાજ્યને ध्रुवः-નિશ્ચલ કરનાર असि-છો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જેમ સકલ ઐશ્વર્યનો આધાર ઈશ્વર છે, તેમ સભાધ્યક્ષાદિ મનુષ્યો પણ હોવા જોઈએ. (૩૦)

वि॒भूर॑सि प्र॒वाह॑णो॒ वह्नि॑रसि हव्य॒वाह॑नः।
श्वा॒त्रो॒ऽसि प्रचे॑तास्तु॒थो॒ऽसि वि॒श्ववे॑दाः॥ ३१॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર તથા વિદ્વાન્ ! જેથી આપ જેમ વ્યાપક આકાશ અને प्रवाहणः-જેમ વાયુ

મહાન નદ હોય છે, ઐશ્વર્યયુક્ત રાજા હોય છે, તેમ विभूः-વ્યાપક અને ઐશ્વર્યયુક્ત असि-છો.

वह्निः-જેમ હવન કરેલા પદાર્થોને યોગ્ય સ્થાનમાં પહોંચાડનાર અગ્નિ છે, તેમ हव्यवाहनः-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોનું સંપાદન કરનાર असि-છો.

જેમ જીવોમાં પ્રાણ છે, તેમ प्रचेताः-ચેતના કરનાર श्वात्रः-વિદ્વાન असि-છે.

જેમ સૂત્રાત્મા વાયુ સર્વમાં વ્યાપક છે, તેમ विश्ववेदाः-વિશ્વને જાણવા तुथः-જ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરનાર असि-છો. જેથી આપ સત્કાર કરવા યોગ્ય છો, એમ અમે જાણીએ છીએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વર અને વિદ્વાનોના સત્કારનો કદી ત્યાગ ન કરવો જોઈએ, એ બન્નેની પ્રાપ્તિ વિના કોઈને વિદ્યા તથા સુખનો લાભ થઈ શકતો નથી. તેથી એ બન્ને સર્વ રીતે જાણવા યોગ્ય છે. (૩૧)

उशिगसि कविरङ्घारिरसि बम्भारिरवस्यूरसि दुवस्वाञ्छुन्ध्यूरसि मार्जालीयः। सम्राडसि कृशानुः परिषद्योऽसि पवमानो नभोऽसि प्रतक्वा मृष्टोऽसि हव्यसूदनऽऋतधामासि स्वर्ज्योतिः॥ ३२॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જેથી આપ उशिक्-કાન્તિમાન્ असि-છો, अंघारिः-વિપથગામી જીવોના શત્રુ તથા कविः-ક્રાન્તમતિ असि-છો. बम्भारिः-બંધનના શત્રુ તથા તાર આદિ તંતુઓનો વિસ્તાર કરનાર असि-છો. दुवस्वान्-પ્રશંસનીય સેવાયુક્ત સ્વયં शुन्ध्यूः-શુદ્ધ असि-છો मार्जालीयः-સર્વને શુદ્ધ કરનાર सम्राट्-અને સારી રીતે પ્રકાશમાન असि-છો कृशानुः-પદાર્થોને અતિ સૂક્ષ્મ पवमानः-પવિત્ર અને परिषद्यः-સભામાં કલ્યાણ કરનાર असि-છો.

જેમ આપ प्रतक्वा-હર્ષિત અને नभः-પર પદાર્થોને હરનારને મારનાર असि-છો. हव्यसूदनः-હોમનાં દ્રવ્યોને (શુદ્ધ કરીને) યથાયોગ્ય વ્યવહારમાં લાવનાર તથા मृष्टः-સુખ - દુઃખને સહન કરનાર તથા કરાવનાર असि-છો.

જેમ स्वर्ज्योतिः-અન્તરિક્ષને પ્રકાશિત કરનાર અને ऋतधामा-સત્યધામ યુક્ત असि-છો, તેમજ ઉક્ત ગુણોથી પ્રસિદ્ધ આપ સર્વ મનુષ્યોને ઉપાસના કરવા યોગ્ય છો. એમ અમે જાણીએ છીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વરે જેવા ગુણોવાળો સંસાર રચેલ છે, તેવા ગુણોથી પ્રસિદ્ધ તે ઈશ્વર સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૨)

समुद्रोऽसि विश्वव्यचा अजोऽस्येकपादहिरसि बुध्न्यो वागस्यैन्द्रमसि सदोऽस्यृतस्य द्वारौ मा मा सन्ताप्तमध्वनामध्वपते प्र मा तिर स्वस्ति मेऽस्मिन् पथि देवयाने भूयात्॥ ३३॥

પદાર્થ : જેમ પરમેશ્વર समुद्रः-સર્વ પ્રાણીઓનું ગમનાગમન કરાવનાર विश्वव्यचाः-જગતમાં વ્યાપક

અને अजः-અજન્મા असि-છે, एकपात्-જેના એક ચરણમાં સંપૂર્ણ વિશ્વ છે. अहिः-વ્યાપનશીલ बुध्न्यः-તથા અન્તરિક્ષમાં વ્યાપક થનાર असि-છે, અને वाक्-વેદવાણી રૂપ असि-છે.

ऐन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યના सदः-સ્થાનરૂપ છે અને ऋतस्य-સત્યનાં द्वारौ-મુખોને मा संताप्तम्-સંતાપ કરાવનાર નથી. अध्वपते-હે ધર્મ-વ્યવહારના માર્ગોનું પાલન કરનારા વિદ્વાનો ! તેમ તમે પણ સંતાપ કરો નહિ.

હે ઈશ્વર ! मा-મને अध्वनाम्-ધર્મ-શિલ્પના માર્ગથી प्रतिर-પાર કરો. અને मे-મારા अस्मिन्-એ देवयाने-વિદ્વાનોનો જવા-આવવા યોગ્ય पथि-માર્ગમાં જેમ स्वस्ति-સુખ भूयात्-હોય તેવો અનુગ્રહ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ કૃપાળુ ઈશ્વર આ સંસારમાં સર્વ જીવોની શિક્ષા આદિ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ વિદ્વાનોએ પણ પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ.

જેમ ઈશ્વર, જગતનું કારણ - પ્રકૃતિ અને જીવ અનાદિ અને અજન્મા હોવાથી અવિનાશી છે, તેમ પોતાનું પણ સમજવું જોઈએ.

જેમ પરમેશ્વરની કૃપા, ઉપાસના દ્વારા સૃષ્ટિ-વિદ્યા તથા પુરુષાર્થથી સંપન્ન મનુષ્યોને વિદ્વાનોના માર્ગની પ્રાપ્તિ થાય છે અને તેમાં સુખ ઉત્પન્ન થાય છે, તેમ અન્યોને થતાં નથી. (૩૩)

मि॒त्रस्य॑ मा॒ चक्षु॑षेक्षध्व॒मग्न॑यः सगरा॒ः सग॑रा स्थ॒ सग॑रेण॒ नाम्ना॒ रौद्रे॒णानी॑केन पा॒त मा॑ग्नयः पिपृ॒त मा॑ग्नयो गोपा॒यत॑ मा॒ नमो॑ वोऽस्तु॒ मा मा॑ हिꣳसिष्ट॥ ३४॥

પદાર્થ : હે सगराः-અન્તરિક્ષ અવકાશયુક્ત अग्नयः-શ્રેષ્ઠ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરનારા વિદ્વાનો ! તમે मा-મને मित्रस्य-મિત્રની દૃષ્ટિએ ईक्षध्वम्-નિહાળો. આપ सगराः-વિદ્યોપદેશ અવકાશયુક્ત स्थ-રહો.

જેમ આપ अग्नयः-સાંસારિક વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિઓની રક્ષા કરો છો, તેમ सगरेण-અન્તરિક્ષની સાથે रौद्रेण-શત્રુઓને રડાવનારી नाम्ना-પ્રસિદ્ધ अनीकेन-સેનાથી मा-મારું पात-રક્ષણ કરો.

अग्नयः-જેમ જ્ઞાનીજનો સર્વને સર્વ પ્રકારનું સુખ આપે છે, તેમ पिपृत-સુખોથી પૂર્ણ કરો. गोपायत-સર્વ રીતે પાલન કરો અને કદી मा-મને मा हिंसिष्ट-નષ્ટ ન કરો. वः-એથી આપને માટે मे-મારા नमः-નમસ્કાર अस्तु-હો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યાના દાન દ્વારા વિદ્વાન લોકો સર્વ મનુષ્યોને સુખી કરે છે, તેમ એ વિદ્વાનોને વિદ્યા નિમિત્ત કાર્યોમાં લાગેલા વિદ્યાર્થીઓ પણ સુખી રાખે. (૩૪)

ज्योति॑रसि वि॒श्वरू॑पं॒ विश्वे॑षां दे॒वाना॑ꣳ स॒मित्। त्वꣳ सो॑म तनू॒कृद्भ्यो॒ द्वेषो॑भ्यो॒ऽन्यकृ॑तेभ्यऽउ॒रु य॒न्तासि॒ वरू॑थ॒ꣳ स्वाहा॑ जुषा॒णो अ॒प्तुराज्य॑स्य वेतु॒ स्वाहा॑॥ ३५॥

પદાર્થ : હે सोम-ઐશ્વર્યદાતા જગદીશ્વર ! આપ विश्वेषाम्-સર્વ देवानाम्-વિદ્વાનોના विश्वरूपम्-સર્વ રૂપયુક્ત ज्योतिः-સર્વ પ્રકાશક समित्-સારા સુંદર પ્રકાશિત असि-છો.

तनुकृद्भ्यः-શરીરોનું સંપાદન કરનાર द्वेषोभ्यः-દ્વેષ કરનાર જીવો તથા अन्यकृतेभ्यः-અન્ય મનુષ્યો માટે દુષ્ટ કર્મોના यन्ता-નિયામક असि-છો.

તેના દ્વારા उरु-બહુ वरूथम्-ઉત્તમ ગૃહ स्वाहा-વાણી अप्तुः-વ્યાપક आज्यस्य-વિજ્ઞાનનું जुषाणः-સેવન કરતા મનુષ્ય स्वाहा-વેદવાણીને वेतु-જાણે. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેથી પરમેશ્વર સર્વ લોકોના નિયંતા છે, તેથી એ સર્વ લોકો નિયમમાં ચાલે છે. (૩૫)

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽउक्तिं विधेम॥ ३६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-સર્વને સન્માર્ગે વાળનાર देव-અને સર્વ આનંદદાતા विद्वान्-સમસ્ત વિદ્યાવાન જગદીશ્વર ! આપની કૃપાથી राये-મોક્ષરૂપ ઉત્તમ ધન માટે सुपथा-જેમ ધાર્મિક જન ઉત્તમ માર્ગ દ્વારા विश्वानि-સમસ્ત वयुनानि-ઉત્તમ કર્મ, વિજ્ઞાન અને પ્રજાને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ अस्मान्-અમને नय-પ્રાપ્ત કરાવો.

जुहुराणम्-કુટિલ एनः-દુઃખફળરૂપી પાપને अस्मत्-અમારાથી युयोधि-દૂર કરો.

અમે ते-આપની भूयिष्ठाम्-અત્યંત नम उक्तिम्-નમસ્કારરૂપ વાણી विधेम-સદા બોલીએ. (૩૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રેમથી ઉપાસના કરવાથી જગદીશ્વર જીવોને દુષ્ટ માર્ગથી છોડાવીને, ધર્મ માર્ગમાં સ્થાપિત કરીને તેને તેના તે તે કર્મ અનુસાર સાંસારિક અને પારલૌકિક સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ ન્યાયાધીશોએ પણ કરવું જોઈએ. (૩૬)

अयं नोऽअग्निर्वरिवस्कृणोत्वयं मृधः पुरऽएतु प्रभिन्दन्।
अयं वाजाञ्जयतु वाजसातावयꣳ शत्रूञ्जयतु जर्हृषाणः स्वाहा॥ ३७॥

પદાર્થ : આ अग्निः-પરમેશ્વરના ઉપાસકજન नः-અમે પ્રજાસ્થ જીવોની वरिवः-નિરંતર રક્ષા कृणोतु-કરે. જેમ કોઈ વીર પુરુષ પોતાની સેનાને લઈને સંગ્રામમાં નિંદિત દુષ્ટ શત્રુઓને પ્રથમથી જ ઘેરી લે છે, તેમ अयम्-આ યુદ્ધ કુશળ સેનાપતિ वाजसातौ-સંગ્રામમાં દુષ્ટ શત્રુઓને पुरः-પ્રથમથી જ एतु-ઘેરી લે.

જેમ अयम्-આ વીરોને હર્ષ દેનાર સેનાપતિ દુષ્ટ શત્રુઓને प्रभिन्दन्-છિન્ન-ભિન્ન કરીને वाजान्-સંગ્રામોને जयतु-જીતે છે, તેમ अयम्-આ વિજય કરાવનાર સેનાપતિ जर्हृषाणः-નિરંતર પ્રસન્ન બનીને स्वाहा-યુદ્ધ પ્રબંધકની શ્રેષ્ઠ વાણી બોલતા जयतु-વિજયને પ્રાપ્ત કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની ઉપાસના કરતો નથી, તેનો સર્વત્ર વિજય થતો નથી. જે સુશિક્ષિત વીરોની સત્કારપૂર્વક સેનાની રક્ષા નથી કરતાં, તેનો સર્વત્ર પરાજય થાય છે.

તેથી [પરમાત્માની ઉપાસના અને વીરોનો સત્કાર] એ બે કાર્યો મનુષ્યોએ સદા કરવાં જોઈએ. (૩૭)

उरु विष्णो विक्रमस्वोरु क्षयाय नस्कृधि। घृतं घृतयोने पिब प्रप्र यज्ञपतिं तिर स्वाहा॥ ३८॥

પદાર્થ : જેમ સર્વવ્યાપક પરમેશ્વર સર્વ જગતની રચના કરતાં જગતના કારણને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ જગતની રચના કરે છે, તેમ હે વિદ્યાદિ ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનાર વીર પુરુષ ! પોતાની વિદ્યાના ફળને उरु-બહુ જ वि-સારી રીતે क्रमस्व-પહોંચીને क्षयाय-નિવાસ કરવા યોગ્ય ગૃહ અને વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિને યોગ્ય नः-અમને कृधि-બનાવો.

હે घृतयोने-વિદ્યાદિ શિક્ષાયુક્ત પુરુષ ! જેમ અગ્નિ ઘૃત પીને પ્રદીપ્ત થાય છે, તેમ તું પણ પોતાના ગુણોમાં घृतम्-ઘીનું प्रप्र पिब-વારંવાર પાન કરીને શરીર-બળ આદિથી પ્રકાશમાન બન.

જેમ ઋત્વિગાદિ વિદ્વાન જન यज्ञपतिम्-યજમાનની રક્ષા કરીને તેને યજ્ઞથી પાર કરે છે, તેમ તું પણ स्वाहा-યજ્ઞની ક્રિયાથી यज्ञम्-યજ્ઞથી तिर-પાર થા. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર વ્યાપક હોવાથી સમસ્ત સંસારની રચના કરવા તથા રક્ષા કરવામાં સમર્થ છે તથા સર્વને સુખી કરે છે, તેમ સર્વેએ આનંદિત રહેવું જોઈએ.

જેમ અગ્નિ બળતણને સળગાવે છે, તેમ શત્રુઓને બાળી નાખવા જોઈએ.

જેમ હોતા વગેરે મનુષ્યો ધાર્મિક યજમાનને પ્રાપ્ત કરી પોતાનાં કાર્યો સિદ્ધ કરે છે, તેમ પ્રજાના લોકો ધર્માત્મા સભાપતિને પ્રાપ્ત કરીને સુખોને સિદ્ધ કરે. (૩૮)

देव सवितरेष ते सोमस्तꣳ रक्षस्व मा त्वा दभन्। एतत्त्वं देव सोम देवो देवाँ२ऽउपागाऽइदमहं मनुष्यान्त्सह रायस्पोषेण स्वाहा निर्वरुणस्य पाशान्मुच्ये॥ ३९॥

પદાર્થ : હે देव-સકલ વિદ્યાના પ્રકાશક ઐશ્વર્યવાન્ વિદ્વાન સભાધ્યક્ષ ! જેમ હું આપની સહાયતાથી મારા ઐશ્વર્યની રક્ષા કરું છું, તેમ તું જે एषः-આ ते-તારો सोमः-ઐશ્વર્ય સમૂહ છે. तम्-તેની रक्षस्व-રક્ષા કર.

જેમ મને શત્રુઓ દુઃખ આપી શકતા નથી, તેમ त्वाम्-તને પણ मा दभन्-આપી શકે નહિ.

હે देव-સુખદાતા અને सोम-સજ્જનોના માર્ગમાં ચલાવનાર રાજા ! त्वम्-તું एतत्-એથી સભાધ્યક્ષ અને देवः-પરિપૂર્ણ વિદ્યાથી પ્રકાશિત देवान्-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોની उप-સમીપ अगाः-જા અને હું પણ જાઉં.

જેમ હું इदम्-એ આચરણથી रायः-અત્યંત ધનથી पोषेण-પુષ્ટિયુક્ત થઈને मनुष्यान्-વિચારવાન પુરુષ અને देवान्-વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને वरुणस्य-દુઃખથી તિરસ્કાર કરનાર દુષ્ટ જનના पाशात्-બંધનથી मुच्ये-છૂટું, તેમ તું પણ निः-નિરંતર મુક્ત બન. (૩૯)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને એ યોગ્ય છે, કે અપ્રાપ્ત ઐશ્વર્યની પુરુષાર્થથી પ્રાપ્તિ અને તેની રક્ષા તથા ઉન્નતિ કરીને, ધાર્મિક મનુષ્યોનો સંગ કરીને તથા ઐશ્વર્યથી તેનો સત્કાર કરીને, ધર્મનું અનુષ્ઠાન કરીને તથા વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ કરીને દુઃખરૂપી બંધનથી મુક્ત બને. (૩૯)

अग्ने॑ व्रतपा॒स्ते व्र॑तपा॒ या तव॑ त॒नूर्मय्यभू॑द॒षा सा त्वयि॒ यो मम॑ त॒नूस्त्वय्यभू॑दि॒यꣳसा मयि॑। य॒था॒य॒थं नौ॑ व्रतपते व्र॒तान्यनु॑ मे दी॒क्षां दी॒क्षाप॑ति॒रम॒ꣳस्तानु॑ तप॒स्तप॑स्पतिः॥ ४०॥

પદાર્થ : व्रतपाः-જેમ સત્યનું પાલન કરનાર વિદ્વાન હોય, તેમ अग्ने-હે વિજ્ઞાનથી સમુન્નત વિદ્વાન ! જે મારા व्रतपाः-સત્ય ગુણોનું પાલન કરનાર આચાર્ય अभूत्-હતા, તેમ હું ते-તારો બનું [અર્થાત્ તારા બતાવેલ વ્રતોનું પાલન કરનાર બનું].

या-જે तव-તારું तनूः-વિદ્યા આદિ ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનાર શરીર છે, सा-તે मयि-તારા મિત્રો તારામાં પણ હોય एषा-આ त्वयि-મારા મિત્ર મારામાં પણ હોય.

या-જે मम्-મારી तनूः-વિદ્યાનો વિસ્તાર છે, सा-તે त्वयि-મારા અધ્યાપક તારામાં હોય. इयम्-આ मयि-તારા શિષ્ય મારામાં બુદ્ધિ હોય.

व्रतपते-હે સત્ય આચરણાદિ વ્રતોના પાલક ! જેમ સત્ય ગુણ, સત્ય ઉપદેશના રક્ષક વિદ્વાન હોય છે, તેમ હું અને તું यथायथम्-મિત્ર બનીને व्रतानि-સત્ય આચરણોનું વર્તન કરીએ.

હે મિત્ર ! જેમ तव-તારા दीक्षापतिः-યથોક્ત ઉપદેશનું પાલન કરનાર આચાર્ય તને दीक्षाम्-સત્ય ઉપદેશ अमंस्त-સમજે છે, તેમ મારા માટે अनु-બતાવે.

જેમ તારા तपस्पतिः-અખંડ બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનાર આચાર્ય તારા માટે तपः-પ્રથમ કષ્ટ અને પછી સુખ આપનાર બ્રહ્મચર્યની શિક્ષા આપે છે. તેમ મારા અખંડ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરનાર આચાર્ય तपः-પ્રથમ કષ્ટ અને પછી સુખ આપનાર બ્રહ્મચર્યની શિક્ષા આપે. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ પહેલાં વિદ્વાનોના નિર્માતા અધ્યાપક થયા હતા, તેમ અમે પણ બનીએ.

જ્યાં સુધી મનુષ્યો સુખ-દુઃખ તથા હાનિ-લાભની વ્યવસ્થાના વિષયમાં પરસ્પર પોતાના આત્મા સમાન વ્યવહાર નથી કરતાં, ત્યાં સુધી પૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ તે સર્વનું અનુષ્ઠાન શા માટે ન કરવું જોઈએ ? (૪૦)

उ॒रु वि॑ष्णो॒ विक्र॑मस्वो॒रु क्षया॑य नस्कृधि। घृ॒तं घृ॑तयोने पिब॒ प्रप्र॑ य॒ज्ञप॑तिं तिर॒ स्वाहा॑॥ ४१॥

પદાર્થ : જેમ સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત થનાર વાયુ ચાલે છે, તેમ હે વિદ્યા ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનાર વિદ્વાન ! उरु-અતિ વિસ્તારયુક્ત क्षयाय-વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ માટે विक्रमस्व-પોતાની વિદ્યાનાં અંગોથી પરિપૂર્ણ - સંપન્ન બનો અને नः-અમને સુખી कृधि-કરો.

જેમ જલનું નિમિત્ત વિદ્યુત્ છે, તેમ પદાર્થ ગ્રહણ કરનાર વિદ્વન્ ! વિદ્યુત્‌ની સમાન घृतम्-જલનું पिब-પાન કરો.

જેમ હું યજ્ઞપતિને દુઃખથી પાર ઉતારું છું, તેમ તું પણ स्वाहा-સારી રીતે હવન આદિ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરીને प्रप्रतिर-સારી રીતે દુઃખને પાર કર. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ પવન સર્વને સુખ આપીને સર્વનું અધિષ્ઠાન છે, તેમ વિદ્વાનો પણ બને. (૪૧)

अत्यन्याँ२ऽअगां नान्याँ२ऽउपांगामर्वाक् त्वा परेभ्योऽविदं परोऽवरेभ्यः तं त्वा जुषामहे देव वनस्पते देवयज्यायै देवास्त्वा देवयज्यायै जुषन्तां विष्णवे त्वा। ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनꣳ हिꣳसीः॥ ४२॥

પદાર્થ : હે वनस्पते-જડી-બુટ્ટીઓની રક્ષા કરનાર देव-વિદ્વાન ! જેમ તું अन्यान्-વિદ્વાનોના વિરોધી મૂર્ખજનોને છોડીને अन्यान्-મૂર્ખોના વિરોધી વિદ્વાનો સમીપ જાય છે, તેમ હું પણ વિદ્વાનોના વિરોધીઓને છોડીને उप-સમીપ अगाम्-જાઉં.

જેમ તમે परेभ्यैः-ઉત્તમથી परः-ઉત્તમ અને अवरेभ्यः-નાનાથી अर्वाक्-નાના હોય तम्-त्वाम्-તેને હું अविदम्-પ્રાપ્ત કરું.

જેમ देवाः-વિદ્વાન લોકો देवयज्यायै-ઉત્તમ ગુણ આપવા માટે त्वा-તને ચાહે છે, તેમ અમે પણ त्वा-તને जुषामहे-ચાહીએ.

જેમ અમે देवयज्यायै-ઉત્તમ ગુણોના સંગથી त्वा-તને ચાહીએ છીએ, તેમ અન્ય એ લોકો પણ ચાહે.

જેમ ઔષધિઓનો સમૂહ विष्णवे-યજ્ઞ માટે સિદ્ધ થઈ સર્વની રક્ષા કરે છે, તેમ હે રોગોને દૂર કરનાર અને स्वधिते-દુઃખોનો વિનાશ કરનાર વિદ્વાન ! અમે त्वा-તને યજ્ઞ માટે ચાહીએ.

હે શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન જન ! જેમ હું આ યજ્ઞનો વિનાશ કરવા નથી ઈચ્છતો, તેમ તું પણ एनम्-આ યજ્ઞનો मा हिंसीः-વિનાશ ન કર.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ નીચ વ્યવહારો અને નીચ પુરુષોનો ત્યાગ કરીને ઉત્તમ વ્યવહારો અને ઉત્તમ પુરુષોની પ્રતિદિન કામના કરવી જોઈએ.

ઉત્તમ મનુષ્યોથી ઉત્તમ શિક્ષા અને સાધારણ મનુષ્યોથી સાધારણ શિક્ષા ગ્રહણ કરવી જોઈએ.

યજ્ઞ અને યજ્ઞ સામગ્રીનો કદી પણ નાશ ન કરવો જોઈએ. સર્વએ પરસ્પર સુખથી રહેવું જોઈએ. (૪૨)

द्यां मा लेखीरन्तरिक्षं मा हिꣳसीः पृथिव्या सम्भव। अयꣳहि त्वा स्वधितिस्तेतिजानः प्रणिनाय महते सौभगाय। अतस्त्वं देव वनस्पते शतवल्शो विरोह सहस्रवल्शा वि वयꣳ रुहेम॥ ४३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ હું સૂર્યની સામે રહીને द्याम्-તેનો પ્રકાશ દૃષ્ટિગોચર કરતો નથી, તેમ તું પણ તેને मा लेखीः-દૃષ્ટિગોચર કર નહિ.

જેમ હું अन्तरिक्षम्-યથાર્થ પદાર્થોના અવકાશને બગાડતો નથી, તેમ તું પણ તેને मा-हिंसीः-બગાડ નહિ.

જેમ હું पृथिव्या-પૃથિવીની સાથે પ્રકટ થાઉં છું, તેમ તું પણ सम्-भव-તેની સાથે પ્રકટ રહે.

हि-જે કારણે જેમ तेतिजानः-અત્યંત તીક્ષ્ણ स्वधितिः-વજ્ર શત્રુઓનો વિનાશ કરીને ઐશ્વર્ય આપે છે. अतः-એ કારણે अयम्-આ त्वा-તને महते-અત્યંત શ્રેષ્ઠ सौभगाय-સૌભાગ્ય માટે સંપન્ન કરે. તથા અન્ય પદાર્થ પણ જેમ ઐશ્વર્યને प्रणिनाय-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તને ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવે.

હે देव-આનંદયુક્ત वनस्पते-વનોની રક્ષા કરનાર વિદ્વાન્ ! જેમ शतवल्शः-સેંકડો અંકુરોવાળું વૃક્ષ વિશેષતઃ ફળે છે - વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ તું પણ એ ઉક્ત પ્રશંસનીય સૌભાગ્યથી वि-रोह-વિવિધ રીતે - સારી રીતે વૃદ્ધિ પામ.

જેમ सहस्त्रवल्शाः-હજારો અંકુરોવાળા વૃક્ષ ફળે - વૃદ્ધિ પામે, તેમ અમે પણ એ સૌભાગ્યથી ફળીએ-ફૂલીએ - વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં કોઈ મનુષ્યે વિદ્યારૂપી પ્રકાશનો અભ્યાસ કદી છોડવો નહિ અને સ્વતંત્રતાનો અભ્યાસ, ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ તથા યોગ દ્વારા અગણિત ઉન્નતિ કરવી; તેનો કદી પણ ત્યાગ કરવો નહિ. (૪૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : યજ્ઞાનુષ્ઠાનનું સંપાદન (૧, ૨) યજ્ઞ સંપાદક વિદ્વાન (૩), પરમાત્માની પ્રાર્થના (૫), વિદ્યા પ્રાપ્તિ અને વિદ્વાનોની વિદ્યામાં વ્યાપ્તિનું નિરૂપણ (૪), અગ્નિ આદિથી યજ્ઞની સિદ્ધિ (૯), સર્વ વિદ્યા નિમિત્ત વાણીની વ્યાખ્યા (૧૦, ૧૧), અધ્યયન-અધ્યાપનરૂપ યજ્ઞનું વિવરણ (૧૨), યોગાભ્યાસનું લક્ષણ (૧૪), સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિ (૧૫), ઈશ્વર અને સૂર્યનાં કર્મોનું કથન (૧૬, ૧૭), પ્રાણ-અપાનની ક્રિયાનું નિરૂપણ (૧૬), વિભુ ઈશ્વરની વ્યાપ્તિનું લક્ષણ (૧૮-૨૧), યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન (૨૨) સૃષ્ટિથી ઉપકાર ગ્રહણ (૨૩), સૂર્ય અને સભાધ્યક્ષના ગુણોની કામના (૨૪), યજ્ઞાનુષ્ઠાનની શિક્ષા આપવી (૨૫, ૨૬), ઈશ્વર અને સભાધ્યક્ષનાં કાર્યોનો ઉપદેશ (૨૯), યજ્ઞની સિદ્ધિ (૨૭, ૨૮), ઈશ્વર અને સભાધ્યક્ષથી કાર્ય સિદ્ધિ (૩૦), તથા તેના સ્વરૂપ અને કાર્યનું વર્ણન (૩૨), ઈશ્વર સમાન વિદ્વાનોના વર્તાવ અને લક્ષણ (૩૩), ઈશ્વરની ઉપાસના (૩૬), શૂરવીરોના ગુણોનું કથન (૩૭), ઈશ્વર અને વિદ્યુત્ના ગુણોનું વર્ણન (૩૮), પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ (૪૩), આકાશાદિ દૃષ્ટાન્તથી વિદ્યુત્ના ગુણોનું વર્ણન (૪૧), ઈશ્વરના ઉપાસકોના ગુણોનું પ્રકાશન, સર્વ બંધનથી મુક્તિ, પરસ્પર વર્ણનનો પ્રકાર, દુષ્ટોનો ત્યાગ અને વિદ્વાનોના સંગની આવશ્યકતા (૪૨) યજ્ઞ સિદ્ધિ માટે વિદ્યા-સંગ્રહનો ઉપદેશ કરેલ છે. આમ પંચમ અધ્યાયમાં કહેલ અર્થોની ચતુર્થ અધ્યાયમાં કહેલ અર્થોની સાથે સંગતિ છે તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति पञ्चमोऽध्यायः ॥



॥ अथ षष्ठाध्यायस्यारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। आद॑दे॒ नार्य॑सी॒दम॒हꣳ रक्ष॑सां ग्री॒वाऽअपि॑कृन्तामि । यवो॑ऽसि य॒वया॒स्मद्द्वेषो॑ य॒वयारा॑तीर्दि॒वे त्वा॒ऽन्तरि॑क्षाय त्वा पृथि॒व्यै त्वा॒ शुन्ध॑न्तांल्लो॒काः पि॑तृ॒षद॑नाः पि॑तृ॒षद॑नमसि॥ १॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જેમ पितृषदनाः-પિતરોમાં રહેનારા વિદ્વાનો देवस्य-પ્રકાશમય અને सवितुः-સમસ્ત વિશ્વના ઉત્પાદક જગદીશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં अश्विनोः-પ્રાણ અને અપાનનાં बाहुभ्याम्-બળ અને ઉત્તમ વીર્યથી તથા पूष्णः-પુષ્ટિકારક પ્રાણના हस्ताभ्याम्-ધારણ અને આકર્ષણથી त्वा-તને ગ્રહણ કરે છે, તેમ હું પણ आददे-ગ્રહણ કરું છું.

જેમ હું रक्षसाम्-દુષ્ટ કામ કરનાર જીવોના ग्रीवाः-ગળાં कृन्तामि-કાપું છું, તેમ त्वम्-તું अपि-પણ કાપ.

હે સભાધ્યક્ષ ! જે કારણે તું यवः-સંયોગ-વિભાગ કરનાર असि-છો, એ કારણે अस्मत्-મારાથી द्वेषः-દ્વેષ અર્થાત્ અપ્રીતિ કરનાર શત્રુઓને यवय-દૂર કર, અને अरातीः-જે મારા નિરંતર શત્રુ છે તેને यवय-પૃથક્ કર.

જેમ હું ન્યાય વ્યવહારથી રક્ષા કરવા યોગ્ય જન दिवे-વિદ્યાદિ ગુણોના પ્રકાશ કરવા માટે त्वाम्-ન્યાય - પ્રકાશક તને अन्तरिक्षाय-આભ્યન્તર વ્યવહારમાં રક્ષા કરવા માટે त्वाम्-તારા સત્યના અનુષ્ઠાન કરવાનો અવકાશ આપનારને તથા पृथिव्यै-ભૂમિના રાજ્ય માટે त्वा-તારા રાજ્યનો વિસ્તાર કરનારને પવિત્ર કરું છું, તેમ એ લોકો પણ त्वा-આપને शुन्धन्ताम्-પવિત્ર કરે.

જેમ તું पितृषदनम्-વિદ્વાનોના ઘરની સમાન असि-છો. પિતાની સમાન સર્વ પ્રજાનું પાલન કર.

હે સભાપતિની नारि-સ્ત્રી ! તું પણ એમ જ કર.

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાના નિષ્ણાત વિદ્વાન લોકો ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં પોતાની અને અન્યોની દુષ્ટતાને દૂર કરીને રાજ્યનું સેવન કરે છે તેઓ સદા સુખી રહે છે. (૧)

अ॒ग्रे॒णीर॑सि स्वावे॒शऽउ॑न्नेतृ॒णामे॒तस्य॑ वित्ता॒दधि॑ त्वा स्थास्यति दे॒वस्त्वा॑ सवि॒ता मध्वा॑नक्तु सुपिप्प॒लाभ्य॒स्त्वौष॑धीभ्यः। द्यामग्रे॑णास्पृक्ष॒ऽआन्तरि॑क्षं मध्ये॑नाप्राः

पृथिवीमुपरेणादृꣳहीः॥ २॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! જેમ अग्रेणीः-અધ્યાપક પોતાના શિષ્યોને અને પિતા પોતાના પુત્રોને અભ્યાસના આરંભ પહેલાં જ તેને ઉત્તમ શિક્ષાથી સુશીલ, જિતેન્દ્રિય અને ધાર્મિક્તાયુક્ત કરે છે, તેમ અમારા સૌ માટે તમે असि-છો.

उन्नेतृणाम्-જે ઉન્નતિ કરનારનું રાજ્ય હોય, તેમ स्वावेशः-સારા ગુણોમાં પ્રવેશ કરનારા સમાન બનીને તું एतस्य-આ રાજ્યનું પાલન કરવાનું वित्तात्-જાણ.

હે રાજન્ ! જેમ त्वा-તને સભાસદો सुपिप्पलाभ्यः-ઉત્તમ ફળોવાળી ओषधीभ्यः-ઔષધિઓથી मध्वा-પ્રાપ્ત થયેલ મધુર ગુણોથી યુક્ત રસોથી अनक्तु-સીંચે, તેમ પ્રજાજન પણ તને સીંચે.

તું આ રાજ્યમાં પોતાના अग्रेण-પ્રથમ યશથી द्याम्-વિદ્યા અને રાજનીતિના પ્રકાશને अस्पृक्षः-સ્પર્શ કર. मध्यमेन-મધ્યમ અર્થાત્ ત્યારબાદ વધારેલા યશથી अन्तरिक्षम्-ધર્મનો વિચાર કરવાના માર્ગને आप्राः-પૂર્ણ કર અને उपरेण-પોતાના રાજ્યના નિયમોથી पृथिवीम्-આ ભૂમિના રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને अदृꣳहीः-દૃઢ કરીને વૃદ્ધિ કર.

देवः-સમસ્ત રાજાઓના પણ રાજા सविता-સર્વ જગતને અન્તર્યામી રૂપે પ્રેરણા આપનાર જગદીશ્વર त्वा-તને રાજા બનાવીને તારા ઉપર स्थास्यति-અધિષ્ઠાતા બની રહેશે. (૨)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય રાજપુરુષો તથા પ્રજાજનોની સ્વીકૃતિ વિના રાજ્ય કરવાને યોગ્ય બની શકતો નથી.

રાજા તથા સભાની સંમતિ વિના કોઈ પણ મંત્રીત્વની ક્રમશઃ યશોવૃદ્ધિ વિના સેનાપતિત્વને, દંડનાયકત્વને તથા સર્વ લોકાધીશત્વને યોગ્ય બની શકતા નથી. (૨)

या ते धामान्युश्मसि गमध्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गाःअयासः। अत्राह तदुरुगायस्य विष्णोः परमं पदमवभारि भूरि। ब्रह्मवनि त्वा क्षत्रवनी रायस्पोषवनि पर्यूहामि। ब्रह्म दृꣳह क्षत्रं दृꣳहायुर्दृꣳह प्रजां दृꣳह॥ ३॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! या-જેમાં ते-તારા धामानि-ધામ અર્થાત્ જેમાં પ્રાણી સુખ પ્રાપ્ત કરે તે સ્થાનોનો અમે गमध्यै-उश्मसि-પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા કરીએ છીએ. તે સ્થાનો સૂર્યના પ્રકાશ જેવાં છે, તેમ यत्र-જેમાં उरुगायस्य-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય विष्णोः-સર્વવ્યાપક પરમેશ્વરની भूरिशृंगाः-અત્યંત પ્રકાશમાન गावः-કિરણો अयासः-ફેલાયેલ છે.

अत्र-अह-એમાં જ तत्-તે પરમેશ્વરના परमम्-સર્વ રીતે ઉત્તમ पदम्-અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પરમપદ વિદ્વાનોએ भूरि अव भारि-બહુધા ધારણ કરેલ છે. તેથી त्वा-તને ब्रह्मवनि-પરમેશ્વર અને વેદવિજ્ઞાન क्षत्रवनि-રાજ્ય અને વીરોની ચાહના रायस्पोषवनि-ધનની પુષ્ટિના વિભાગ કરનાર આપને હું पर्यूहामि-વિવિધ તર્કોથી સમજાવું છું.

તું ब्रह्म-પરમાત્મા અને વેદને दृंह-દઢ કર, અર્થાત્ પોતાના ચિત્તમાં સ્થિર કર, આગળ વધ. क्षत्रम्-રાજ્ય અને ધનુર્વેદવેત્તા ક્ષત્રિયોની दृंह-ઉન્નતિ કરીને आयुः-પોતાની અવસ્થાની दृंह-વૃદ્ધિ કર. અર્થાત્ બ્રહ્મચર્ય અને રાજ્યધર્મથી દઢ કર તથા प्रजाम्-પોતાનાં સંતાન અને રક્ષા કરવા યોગ્ય પ્રજાજનોની दृंह-ઉન્નતિ કર. (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય સભાધ્યક્ષથી રક્ષિત સ્થાનની કામના વિના સુખ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.

કોઈ પણ મનુષ્ય પરમેશ્વરનો અનાદર કરીને ધર્મરાજ્યનો ભોગ કરી શકતો નથી.

કોઈ પણ મનુષ્ય વિજ્ઞાન, સેના, જીવન અર્થાત્ અવસ્થા અને પ્રજાની રક્ષા વિના વૃદ્ધિ - ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૩)

विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे। इन्द्रस्य युज्यः सखा॥ ४॥

પદાર્થ : હે સભાસદો ! જેમ इन्द्रस्य-પરમેશ્વરના युज्यः-સદાચારયુક્ત सखा-મિત્ર विष्णोः-તે વ્યાપક ઈશ્વરના कर्माणि-જે સંસારની રચના, પાલન અને સંહાર કરવાના સત્ય ગુણ છે, તેને જોતાં હું यतः-જે જ્ઞાનથી व्रतानि-પોતાના મનમાં સત્ય ભાષણાદિ નિયમોને पस्पशे-બાંધું છું અર્થાત્ નિયમ કરું છું, તેમ તે જ્ઞાનથી તમે પણ પરમેશ્વરના ઉત્તમ ગુણોને पश्यत-દઢતાથી જુઓ કે જેથી રાજ્ય આદિ કાર્યોમાં સત્યતાપૂર્વક અનુષ્ઠાન કરનાર બની શકો. (૪)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય પરમેશ્વરના અવિરોધ-અનુકૂળતા અને સત્યાચરણ વિના ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવોને દેખી - જાણી શકતો નથી; અને તેમ કર્યા વિના રાજ્યકાર્યોનું યથાર્થ રૂપમાં સંપાદન કરી શકાતું નથી. નિશ્ચય સત્યાચરણ વિના રાજ્યની વૃદ્ધિમાં કોઈ સમર્થ બની શકતું નથી. (૪)

तद्विष्णोः परमं पदꣳ सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्॥ ५॥

પદાર્થ : હે સભ્યજનો ! જે પૂર્વોક્ત કર્મથી सूरयः-સ્તુતિ કરનારા વેદવેત્તાઓ विष्णोः-સંસારની ઉત્પત્તિ, પાલન અને સંહાર કરનાર પરમેશ્વરના જે परमम्-સર્વોત્કૃષ્ટ पदम्-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદને दिवि-સૂર્યના પ્રકાશમાં आततम्-વ્યાપ્ત चक्षुः-નેત્રની इव-સમાન सदा-ત્રણે કાળમાં पश्यन्ति-જુએ છે, तत्-તેને તમે પણ નિરંતર જુઓ. (૫)

ભાવાર્થ : નિર્મળ વૃત્તિવાળા વિદ્વાનો પોતાની વિદ્યાના પ્રકાશથી જેમ ઈશ્વરના ગુણો જોઈને વિશુદ્ધ આચરણશીલ બની જાય છે, તેમ અમે પણ બનીએ. (૫)

परिवीरसि परि त्वा दैवीर्विशो व्ययन्तां परीमं यजमानꣳ रायो मनुष्याणाम्।
दिवः सूनुरस्येष ते पृथिव्याँल्लोकऽआरण्यस्ते पशुः॥ ६॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ રાજન ! તું परिवीः-સર્વ વિદ્યાઓમાં સારા આપ્ત થનાર સમાન असि-છે त्वाम्-તને दैवीः-વિદ્વાનોના विशः-સંતાનના સમાન પ્રજા परि + व्ययन्ताम्-સર્વ વ્યાપ્ત અર્થાત્ સર્વ સ્થાનમાં વ્યાપ્ત થયેલા તારા કાર્યકારી હોય.

दिवः-પ્રકાશના પુંજ સૂર્યથી सूनुः-ઉત્પન્ન થયેલ કિરણ સમુદાય સમાન તું असि-છે. ते-તારો पृथिव्याम्-પૃથિવીમાં लोकः-રાજધાનીનો દેશ હોય અને आरण्यः-વન્ય સિંહાદિ દુષ્ટ પશુઓ તારા વશમાં હોય. (૬)

ભાવાર્થ : રાજ્યકર્તા રાજાનો આશ્રય લઈને પ્રજાજન તેને 'કર' પ્રદાન કરે.

તે રાજા પ્રજાપાલન માટે સિંહ આદિ પશુઓ તથા ડાકુ આદિ પુરુષોને મારીને, પોતાની પ્રજાને યથોચિત્ત રીતિથી ધર્મમાં સ્થિત રાખે. (૬)

उपावीरस्युप देवान्दैवीर्विशः प्रागुरुशिजो वह्नितमान्। देव त्वष्टर्वसु रम हव्या तें स्वदन्ताम्॥ ७॥

પદાર્થ : હે देव-દિવ્યગુણ સંપન્ન त्वष्टः-સર્વ દુઃખોનું છેદન કરનાર સભાધ્યક્ષ ! જેથી તું उपावीः-શરણાગત પાલક સમાન असि-છે. તેથી दैवीः-વિદ્વાનો સાથે સંબંધ રાખનાર દિવ્યગુણ સંપન્ન विशः-પ્રજા જેમ उशिजः-શ્રેષ્ઠ ગુણથી શોભિત કામના કરવા યોગ્ય वह्नितमान्-અતિશય ધર્મમાર્ગમાં ચાલનાર અને ચલાવનાર देवान्-વિદ્વાનોને उपप्रागुः-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તને પણ પ્રાપ્ત થાય.

જેમ તારા આશ્રયથી પ્રજા ધનાઢ્ય બનીને સુખી બને, તેમ તું પણ પ્રાપ્ત પ્રજાજનોથી સત્કાર પામી रमस्व-હર્ષ પામ.

જેમ તું પ્રજાના પદાર્થોનો ભોગ કરે છે, તેમ પ્રજા પણ તારા हव्या-ભોગ્ય યોગ્ય મૂલ્યવાન वसु-ધનાદિ પદાર્થોને स्वदन्ताम्-ભોગવે. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ ગુણગ્રાહીજનો ઉત્તમ ગુણોનું સેવન કરે છે, તેમ પ્રજાએ ન્યાયકુશળ રાજાનું સેવન કરવું, જેથી પરસ્પરની પ્રીતિપૂર્વક સર્વની ઉન્નતિ થાય છે. (૭)

रेवती रमध्वं बृहस्पते धारया वसूनि।

ऋतस्य त्वा देवहविः पाशेन प्रतिमुञ्चामि धर्षा मानुषः॥ ८॥

પદાર્થ : હે रेवतीः-પ્રશસ્ત ધનવાળાં સંતાનો ! પ્રજાજનો ! તમે વિદ્યા અને સુશિક્ષામાં रमध्वम्-રમણ કરો-ક્રીડા કરો.

હે बृहस्पते-વેદવાણીનું પાલન કરનાર વિદ્વાન ! આપ ऋतस्य-સત્ય અને ન્યાયના વ્યવહારથી પ્રાપ્ત वसूनि-ધન અર્થાત્ અમને આપેલા દ્રવ્ય આદિ પદાર્થોનો धारय-સ્વીકાર કરો. [હવે ગુરુ શિષ્યને ઉપદેશ આપે છે.]

હે રાજન ! અથવા પ્રજાજન ! मानुषः-સર્વ શાસ્ત્રનો વિચાર કરનાર હું पाशेन-અવિદ્યારૂપી બંધનથી તને प्रति मुञ्चामि-મુક્ત કરું છું. તું વિદ્યા અને સુશિક્ષામાં धर्षा-સમર્થ બન. (૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ ઉત્તમ શિક્ષાથી કુમારો અને કુમારિકાઓને જગદીશ્વરથી લઈને પૃથિવી સુધીના પદાર્થોનું જ્ઞાન કરાવવું જોઈએ; જેથી તેઓ અવિદ્યાના બંધનનો ત્યાગ કરીને સદા સુખી રહે. (૮)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं नियुनज्मि। अद्भ्यस्त्वौषधीभ्योऽनु त्वा माता मन्यतामनु पितानु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः। अग्नीषोमाभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि॥ ९॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય હું सवितुः-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત देवस्य-વેદવિદ્યાનો પ્રકાશ કરનાર પરમેશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા આ જગતમાં अश्विनोः-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના बाहुभ्याम्-ગુણોથી તથા पूष्णः-પૃથિવીના हस्ताभ्याम्-હાથોની સમાન ધારણ અને આકર્ષણરૂપ ગુણોથી त्वाम्-તને आददे-સ્વીકાર કરું છું.

अग्निषोमाभ्याम्-અગ્નિ અને સોમના તેજ અને શાન્તિ ગુણોથી जुष्टम्-પ્રીતિ કરતાં त्वा-તને જે બ્રહ્મચર્ય ધર્મને અનુકૂળ જલ ઔષધિ છે, તે अद्भ्यः-જલ અને ओषधीभ्यः-ઘઉં વગેરે અન્નાદિ પદાર્થોથી नियुनज्मि-નિયુક્ત કરું છું.

તને મારી પાસે રહેવા માટે તારી माता-જનની अनु + मन्यताम्-અનુમતિ આપે. पिता-પિતા અનુમતિ આપે सगर्भ्यः-સહોદર भ्राता-ભાઈ अनु-અનુમતિ આપે. सखा-મિત્ર अनु-અનુમતિ આપે અને सयूथ्यः-સહવાસી अनु-અનુમતિ આપે.

अग्नीषोमाभ्याम्-અગ્નિ અને સોમના તેજ અને શાન્તિ ગુણોનું [ગ્રહણ કરાવવા માટે] जुष्टम्-પ્રેમપૂર્વક त्वा-તને प्र उक्षामि-તે ગુણોથી બ્રહ્મચર્યના નિયમોનું પાલન કરવા માટે અભિષિક્ત કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં માતા, પિતા, બંધુવર્ગ અને મિત્રવર્ગ પોતાનાં સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપીને તેમને બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરાવે, જેથી તેઓ શ્રેષ્ઠ ગુણવાન બની શકે. (૯)

अपां पेरुरस्यापो देवीः स्वदन्तु स्वात्तं चित्सद्देवहविः।

सं ते प्राणो वातेन गच्छतासꣳ समङ्गानि यजत्रैः सं यज्ञपतिराशिषा॥ १०॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! તું अपाम्-જળ આદિ પદાર્થોનું पेरुः-રક્ષણ કરનાર असि-છે. સંસારના સર્વ જીવ તારા યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલા देवीः-દિવ્ય સુખ આપનાર (आपः) જલને चित्-તથા स्वात्तम्-ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી પ્રાપ્ત થયેલા પદાર્થોને देवहविः-વિદ્વાનોને ભોગવવા સમાન संस्वदन्तु-સારી રીતે ભોગવે.

आशिषा-મારા આશીર્વાદથી ते-તારા अङ्गानि-શિર વગેરે અવયવો यजत्रैः-યજ્ઞ કરાવનારની સાથે सम्-સમ્યક્ નિયુક્ત રહે અને प्राणः-પ્રાણ वातेन-પવનની સાથે सङ्गच्छताम्-ઉત્તમતાથી રક્ષણ કરે અને તું यज्ञपतिः-વિદ્યાપ્રચારરૂપી યજ્ઞનો પાલક બન. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે યજ્ઞમાં આહુતિઓ આપવામાં આવે છે, તે સૂર્ય [કિરણો] માં પ્રાપ્ત થાય છે. સૂર્યની આકર્ષણ શક્તિ દ્વારા પૃથિવી તથા જલના આકર્ષણથી વર્ષા થાય છે. વર્ષાથી અન્ન અને અન્નથી પ્રાણીઓ જીવિત રહે છે. આ રીતે પરંપરાના સંબંધથી યજ્ઞ દ્વારા શુદ્ધ જલ અને આહુતિ આપેલ પદાર્થોનો સર્વ જીવો ઉપયોગ કરે છે. (૧૦)

घृतेनाक्तौ पशूँस्त्रायेथाᳬं रेवति यजमाने प्रियं धाऽआविश। उरोरन्तरिक्षात्सजूर्देवेन वातेनास्य हविषस्त्मना यज समस्य तन्वा भव। वर्षो वर्षीयसि यज्ञे यज्ञपतिं धाः स्वाहा देवेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा॥ ११॥

પદાર્થ : હે घृतेन, अक्तौ-ઘૃતપ્રસક્ત અર્થાત્ ઘૃતપ્રિય યજ્ઞ કરનાર અને કરાવનારાઓ ! તમે पशून्-ગાય આદિ પશુઓ त्रायेथाम्-પાળો, તમે એક-એક જન देवेन-સર્વગત वातेन-પવનથી सजूः-સમાન પ્રેમ રાખીને સમાન उरोः-વિસ્તૃત अन्तरिक्षात्-અન્તરિક્ષથી ઉત્પન્ન થયેલ प्रियम्-પ્રિય સુખને रेवति-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય સંપન્ન यजमाने-યજ્ઞ કરનાર ધનવાન પુરુષમાં धाः-સ્થાપના કરો અને आविश-તેના અભિપ્રાયને પ્રાપ્ત થાવ અને अस्य-એના हविषः-હોમયોગ્ય પદાર્થોને त्मना-આપજ નિષ્પાદન કરેલ સમાન यज-અગ્નિમાં હોમો અર્થાત્ યજ્ઞની કોઈ ક્રિયાથી વિપરીત ભાવ ન કરો. અને अस्य-એના तन्वा-શરીરની સાથે सम् + भव-એકી ભાવ રાખો, પરંતુ વિરોધથી ભેદભાવનું આચરણ ન કરો.

હે वर्षो-યજ્ઞ કર્મથી સર્વ સુખ પહોંચાડનારા ! देवेभ्यः-स्वाहा-देवेभ्यः-स्वाहा-સત્કર્મના અનુષ્ઠાનથી પ્રકાશિત ધર્મિષ્ઠ જ્ઞાની પુરુષ જે યજ્ઞ જોવાની ઈચ્છા કરીને વારંવાર યજ્ઞમાં આવે છે, તે વિદ્વાનો માટે સારી સત્કારયુક્ત વાણીઓનું ઉચ્ચારણ કરીને યજ્ઞપતિને वर्षीयसि-સર્વ સુખની વર્ષા કરનાર યજ્ઞમાં धाः-સ્થિર કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : યજ્ઞ માટે ઘૃત આદિ પ્રાપ્ત કરવાના ઈચ્છુક મનુષ્યોએ ગાય આદિ પશુઓ રાખવાં જોઈએ. ઘૃત આદિ ઉત્તમ દ્રવ્યોથી અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞો કરીને તેના દ્વારા જલ અને વાયુની સારી રીતે શુદ્ધિ કરીને પ્રાણીઓના અભીષ્ટ સુખ ઉત્પન્ન કરવાં જોઈએ. (૧૧)

माहिर्भूर्मा पृदाकुर्नमस्तऽआतानानर्वा प्रेहि। घृतस्य कुल्याऽउपऽऋतस्य पथ्याऽअनु॥ १२॥

પદાર્થ : હે आतान-સારી રીતે સુખનો વિસ્તાર કરનાર વિદ્વાન્ ! તું मा-ન अहिः-સાપ સમાન કુટિલ માર્ગગામી मा-ન पृदाकुः-મૂર્ખજન સમાન અભિમાની અથવા વ્યાઘ્ર સમાન હિંસક भूः-બન. ते नमः-સર્વ સ્થાનમાં તારા સુખ માટે અન્ન આદિ પદાર્થો પ્રથમથી જ પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છે.

अनर्वा-ઘોડા વગેરેની સવારી વિના નિરાશ્રય પુરુષ જેમ घृतस्य-જલની कुल्याः-મોટી ધારાઓને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ ऋतस्य-સત્યના पथ्याः-માર્ગોને પ્રાપ્ત થા. (૧૨)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્યે ધર્મના માર્ગમાં, કુટિલમાર્ગી સર્પની સમાન કુટિલ આચરણવાળા ન બનવું જોઈએ, પરંતુ સદા સરળ સ્વભાવવાળા બનવું જોઈએ. (૧૨)

देवीरापः शुद्धा वोड्ढ्वᳪ सुपरिविष्टा देवेषु सुपरिविष्टा वयं परिवेष्टारो

भूयास्म॥ १३॥

પદાર્થ : હે કુમારીકાઓ ! તમે જેમ आपः-શ્રેષ્ઠ ગુણોને પ્રાપ્ત કરનારી शुद्धाः-સત્યકર્મ - અનુષ્ઠાનથી પવિત્ર देवीः-વિદ્યા પ્રકાશમાન વિદુષી સ્ત્રીઓ देवेषु-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન પતિઓમાં सुपरिविष्टाः-સેવાભાવથી પ્રવિષ્ટ થઈને પોતાના પતિઓને वोढ्वम्-પ્રાપ્ત થાવ છો અને તે વિદ્વાન પતિજનો તે સ્ત્રીઓને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે અને અમે परिवेष्टा-એ કર્મની યોગ્યતાને भूयास्म-પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદુષી મહિલાઓ અને વિદ્વાનોની પત્નીઓ પતિવ્રત ધર્મનું પાલન કરનાર હોય છે, તેમ બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓ તે પ્રકારના ગુણ તથા સ્વભાવયુક્ત બને અને બ્રહ્મચારી છાત્ર ગુરુજનોના સ્વભાવયુક્ત બને, જેથી ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા સ્ત્રી-પુત્ર આદિની રક્ષામાં તત્પર બની શકે. (૧૩)

वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रं ते शुन्धामि नाभिं ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि पायुं ते शुन्धामि चरित्राँस्ते शुन्धामि॥ १४॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! હું વિવિધ શિક્ષાઓથી ते-તારી वाचम्-ભાષણની સાધન વાણીને शुन्धामि-શુદ્ધ અર્થાત્ સદ્ધર્માનુકૂળ કરું છું.

ते-તારા चक्षुः-દર્શનના સાધન નેત્રને शुन्धामि-શુદ્ધ કરું છું, ते-તારી नाभिम्-જેથી નાડી આદિ બાંધવાના સાધનરૂપ નાભિને शुन्धामि-પવિત્ર કરું છું, ते-તારા मेढ्रम्-મૂત્રોત્સર્ગાદિ કરનાર ઉપસ્થ ઈન્દ્રિયને शुन्धामि-નિર્મળ કરું છું, ते-તારી पायुम्-જેથી રક્ષા કરવામાં આવે છે તે ગુદેન્દ્રિયને शुन्धामि-પવિત્ર કરું છું. चरित्रान्-સમસ્ત વ્યવહારોને शुन्धामि-પવિત્ર અર્થાત્ શુદ્ધ ધર્મને અનુકૂળ કરું છું તથા ગુરુપત્નીના પક્ષમાં સર્વત્ર 'કરી રહી છું' એમ યોજના કરવી જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : ગુરુઓ અને ગુરુપત્નીઓએ વેદ, ઉપવેદ, અંગ, ઉપાંગોની શિક્ષાથી શરીર, ઈન્દ્રિય, અન્તઃકરણ, આત્મા અને મનની શુદ્ધિ, શરીરની પુષ્ટિ અને પ્રાણોની સંતુષ્ટિનો ઉપદેશ પ્રદાન કરીને સર્વ કુમાર અને કન્યાઓને શુભ ગુણોમાં પ્રવૃત્ત કરવાં જોઈએ. (૧૪)

मनस्तऽआप्यायतां वाक्तऽआप्यायतां प्राणस्तऽआप्यायतां चक्षुस्तऽआप्यायताꣳ श्रोत्रं तऽआप्यायताम्। यत्ते क्रूरं यदास्थितं तत्तऽआप्यायतां निष्ट्यायतां तत्ते शुध्यतु शमहोभ्यः। ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनꣳहिꣳसीः॥ १५॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! મારી શિક્ષાથી ते-તારું मनः-મન आप्यायताम्-પર્યાપ્ત ગુણયુક્ત બને, ते-તારા प्राणः-પ્રાણ आप्यायताम्-બલાદિ ગુણયુક્ત બને, ते-તારી चक्षुः-દૃષ્ટિ आप्यायताम्-નિર્મળ બને, ते-તારા श्रोत्रम्-કાન आप्यायताम्-સદ્ગુણ વ્યાપ્ત બને.

ते-તારો यत्-જે क्रूरम्-દુષ્ટ વ્યવહાર છે તે निः-स्त्यायताम्-દૂર થાય. यत्-જે ते-તારો आस्थितम्-નિશ્ચય છે તે आप्यायताम्-પૂરો થાય. આ રીતે ते-તારો સમસ્ત વ્યવહાર शुध्यतु-શુદ્ધ થાય અને अहोभ्यः-પ્રતિદિન તારા માટે शम्-સુખરૂપ બને.

હે ओषधे-પ્રવર અધ્યાપક ! આપ एनम्-આ શિષ્યની त्रायस्व-રક્ષા કરો અને मा हिंसीः-વ્યર્થ તાડના-મારપીટ કરો નહિ.

હે स्वधिते-પ્રશસ્ત અધ્યાપિકે ! તું આ કુમારિકા શિષ્યાની त्रायस्व-રક્ષા કર અને એને વ્યર્થ તાડન ન કર. (૧૫)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ કર્મો કરવાથી સર્વની ઉન્નતિ થાય છે. આથી સર્વ મનુષ્યોએ ગુરુ શિક્ષા અનુસાર સમસ્ત ઉત્તમ કર્મો કરવાં જોઈએ. ગુરુજનો ગુણોના ગ્રહણ માટે તાડના કરે છે, જેથી તેઓનું એ કર્મ સાંસારિક ઉન્નતિ અને મોક્ષનું સાધન બને છે, એમ જાણવું જોઈએ.

પતિ અને પત્ની પરસ્પર આ રીતે ઉપદેશ કરે - હે પતિદેવ ! આપ, જે રીતે આ શિષ્ય શીઘ્ર વિદ્વાન બને તેવો પ્રયત્ન કરો.

હે ધર્મપત્ની ! આપ જેમ આ કન્યા શીઘ્ર વિદુષી બને તેવો ઉપાય કરો. (૧૫)

रक्षसां भागोऽसि निरस्तꣳ रक्षऽइदमहꣳ रक्षोऽभितिष्ठामीदमहꣳ रक्षोऽवबाधऽइदमहꣳ रक्षोऽधमं तमो नयामि। घृतेन द्यावापृथिवी प्रोर्णुवाथां वायो वे स्तोकानामग्निराज्यस्य वेतु स्वाहा स्वाहाकृतेऽऊर्ध्वनभसं मारुतं गच्छतम्॥ १६ ॥

પદાર્થ : હે દુષ્ટ કર્મ કરનાર મનુષ્ય ! તું रक्षसाम्-દુષ્ટો અર્થાત્ પરાર્થ નાશ કરીને પોતાના સ્વાર્થની રક્ષા કરનારનો भागः-એક ભાગ असि-છે, એથી रक्षः-રાક્ષસ સ્વભાવના તું निरस्तम्-નીકળી જા. अहम्-હું इदम्-એવા रक्षः-સ્વાર્થીનો अभितिष्ठामि-તિરસ્કાર કરવા માટે સન્મુખ આવું છું અને માત્ર સન્મુખ જ નહિ પરંતુ अहम्-હું इदम्-એવા रक्षः-દુષ્ટજનને अवबाधे-અત્યંત તિરસ્કારપૂર્વક ફટકારું છું - નાશ કરું છું, જેથી તે ફરી સામે આવે નહીં અને अहम्-હું इदम्-એવા रक्षः-દુષ્ટજનને अधमम्-દુ:સહ नयामि-દુ:ખ આપું છું.

હવે શ્રેષ્ઠ ગુણગ્રાહી શિષ્ય માટે ઉપદેશ છે - હે वायो-ગુણને ગ્રહણ કરનાર સત્-અસત્ વ્યવહારની વિવેચના કરનાર તું स्तोकानाम्-સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ વ્યવહારને वेः-જાણ, અને તારા યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ જલથી द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને ભૂમિ प्रोर्णुवाथाम्-સારી રીતે આચ્છાદિત રહે.

अग्निः-સમસ્ત વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાન્ તારા ઘૃતાદિ પદાર્થોથી स्वाहा-સારી રીતે હોમ કરેલને वेतु-જાણે તથા स्वाहाकृते-હવન કરેલાં સ્નેહ દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત પૂર્વોક્ત જે સૂર્ય અને ભૂમિ છે તે ऊर्ध्वनभसम्-તારા યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ જલને ઉપર પહોંચાડનાર मारुतम्-વાયુને गच्छतम्-પ્રાપ્ત થાય. (૧૬)

ભાવાર્થ : બુદ્ધિમાન, સત્ય અને અસત્યનું વિવેચન કરનાર વિદ્વાન પોતાના શિષ્યોમાં યથાયોગ્ય શિક્ષાનો ઉપદેશ કરે છે.

યજ્ઞકર્મથી જલ અને વાયુથી શુદ્ધિ થઈને વર્ષા થાય છે, વર્ષાથી જ સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૬)

इदमापः प्रवहतावद्यं च मलं च यत्। यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्च शेपेऽअभीरुणम्।

आपो मा तस्मादेनसः पवमानश्च मुञ्चतु॥ १७॥

પદાર્થ : હે आपः-સર્વ વિદ્યાવ્યાપક વિદ્વાનો ! આપ જેમ आपः-જલની શુદ્ધિ કરો છો, તેમ મારું यत्-જે अवद्यम्-અકથનીય નિંદ્યકર્મ च-અને વિકાર તથા यत्-જે मलम्-અવિદ્યારૂપી મળ છે इदम्-એને प्रवहत-વહાવી દો અર્થાત્ દૂર કરો. च-અને यत्-જે હું अनृतम्-મિથ્યા કોઈથી दुद्रोह-દ્રોહ કરતો હોઉં च-અને यत्-જે अभीरुणम्-નિર્ભય નિરપરાધી પુરુષને शेपे-ઠપકો આપું છું. तस्मात्-તે ઉક્ત एनसः-પાપથી मा-મને પૃથક્ રાખો. च-અને જેમ पवमानः-પવિત્ર વ્યવહાર मा-મને પાપ વ્યવહારથી પૃથક્ રાખે છે, તેમ च-અન્ય મનુષ્યોને પણ રાખે. (૧૭)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યે જલની સમાન સાંસારિક પદાર્થોના શોધક બનીને ધર્માનુસાર કર્મોનું આચરણ કરવું જોઈએ.

સર્વ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની પ્રાર્થનાથી દુષ્ટ આચરણથી પૃથક્ થઈને નિર્મળ-શુદ્ધ વિદ્યાદિ ગ્રહણ કરવાનાં કર્મોમાં સદા પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૧૭)

सं ते मनो मनसा सं प्राणः प्राणेन गच्छताम्। रेडस्यग्निष्ट्वा श्रीणात्वापस्त्वा समरिणन्वातस्य त्वा ध्राज्यै पूष्णो रंह्या ऽऊष्मणो व्यथिषत्प्रयुतं द्वेषः॥ १८॥

પદાર્થ : હે શૂરવીર યોદ્ધા ! સંગ્રામમાં ते-તારું मनः-મન मनसा-વિદ્યાબળ અને प्राणः-પ્રાણ प्राणेन-પ્રાણની સાથે सम् + गच्छताम्-સાથે રહે.

હે વીર ! તું रेट्-શત્રુઓને મારનાર असि-છે. त्वा-તને अग्निः-યુદ્ધથી ઉત્પન્ન ક્રોધનો અગ્નિ श्रीणातु-પરિપક્વ બનાવે. તું प्रयुतम्-કરોડો શત્રુઓની સેનાને પ્રાપ્ત થાય છે. તને તેથી ઉત્પન્ન ऊष्मणः-સંતાપયુક્ત द्वेष-દ્વેષથી मा व्यथिषत्-વ્યથિત ન કરે. જેથી वातस्य ध्राज्यै-પવનની ગતિ સમાન ગતિ કરવા માટે અથવા पूष्णः-પુષ્ટિકારક સૂર્યની रंह्यै-વેગ સમાન વેગ માટે અર્થાત્ યથાર્થરૂપથી યુદ્ધ ભૂમિમાં પ્રવૃત્તિ થવા માટે आपः-શ્રેષ્ઠતમ જલ सम-अरिणन्-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યુદ્ધમાં મન લગાવીને, પોતાના બળની વૃદ્ધિ કરનાર અન્ન-પાનનું [સેવન કરીને] અને શસ્ત્રાસ્ત્ર આદિ પદાર્થોની તૈયારી કરીને શત્રુઓને મારીને, સંગ્રામમાં વિજયી બનવું જોઈએ. (૧૮)

घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रदिशऽआदिशो विदिशऽ उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा॥ १९॥

પદાર્થ : હે घृतपावानः-જલપાન કરનારા વીરપુરુષો ! તમે घृतम्-અમૃત સમાન જલનું पिबत-પાન કરો.

હે वसापावानः-નીતિનું પાલન કરનારા વીરો ! તમે वसाम्-જે વીર રસથી પૂર્ણ વાણી અર્થાત્ શત્રુઓનું સ્તંભન કરનારી વાણી છે, તેનું पिबत-પાન કરો.

હે સેનાધ્યક્ષ ! ચક્રવ્યૂહાદિ સેનાના રચયિતા ! તું પ્રત્યેક વીરને જેથી अन्तरिक्षस्य-આકાશનો हविः-અવરોધ અર્થાત્ યુદ્ધમાં અનેકોની વચ્ચે શત્રુઓને વિવિધ વ્યૂહોથી ઘેરનાર असि-છે. તે स्वाहा-શોભાયમાન વાણીથી જે दिशः-પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર, દક્ષિણ प्रदिशः-આગ્નેય, નૈઋત્ય, વાયવી અને ઈશાની ઉપદિશા आदिशः-સામેની દિશા विदिशा-પાછળની દિશા અને उद्दिशः-જ્યાં શત્રુ હોય તે લક્ષ્ય દિશા છે તે સર્વ दिग्भ्यः-દિશાઓથી યથાયોગ્ય વીરોને વિભક્ત કરીને શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિઓને એ ઉચિત છે, કે તેઓ પોતાના સૈનિક વીરોને શારીરિક બળથી યુક્ત તથા યુદ્ધવિદ્યામાં સુશિક્ષિત કરીને, યુદ્ધમાં સર્વ દિશાઓમાં યથોચિત્ત રૂપમાં પોતાની સેનાના ભાગોને સ્થાપિત કરીને, સર્વ શત્રુઓને ઘેરીને તથા તેમને જીતીને ન્યાયપૂર્વક પ્રજાનું પાલન કરે. (૧૯)

ऐन्द्रः प्राणोऽअङ्गेऽअङ्गे निदीध्यदैन्द्रऽउदानोऽअङ्गेऽअङ्गे निधीतः। देव त्वष्टर्भूरि ते सꣳसमेतु सलक्ष्मा यद्विषुरूपं भवाति। देवत्रा यन्तमवसे सखायोऽनु त्वा माता पितरो मदन्तु॥ २०॥

પદાર્થ : હે त्वष्टः-શત્રુબળ વિદારક देव-દિવ્ય વિદ્યાસંપન્ન સેનાપતિ ! આપ अवसे-રક્ષા આદિ માટે अङ्गे-अङ्गे-જેમ અંગ-અંગમાં ऐन्द्रः-ઈન્દ્ર અર્થાત્ જીવ જેનો દેવતા છે, તે શરીરમાં રહેલો પ્રાણવાયુ સર્વ વાયુઓનો તિરસ્કાર કરીને સ્વયં પ્રકાશિત થાય છે, તેમ આપ સંગ્રામમાં સર્વ શત્રુઓનો તિરસ્કાર કરીને निदीध्यत्-પ્રકાશિત બનો.

અથવા अङ्गे-अङ्गे-જેમ પ્રત્યેક અંગમાં उदानः-અન્ન આદિ પદાર્થોને ઉપર પહોંચાડનાર ઉદાન વાયુ પ્રવૃત્ત છે, તેમ પોતાના વૈભવથી સર્વ વીરોને ઉત્સાહિત કરતા સંગ્રામમાં निधीतः-નિરંતર સ્થાપિત કરેલ સમાન પ્રકાશિત બનો.

यत्-જે ते-આપનું विषुरूपम्-વિવિધ રૂપ सलक्ष्म-પરસ્પર યુદ્ધનું લક્ષણ भवाति-છે, તે संग्रामे-સંગ્રામમાં भूरि-વિસ્તારથી संसम् + एतु-પ્રવૃત્ત થાય.

હે સેનાધ્યક્ષ ! તારી રક્ષા માટે બધા શૂરવીર પુરુષો सखायः-મિત્ર સમાન વર્તન કરે. माता-માતા पितरः-પિતા, કાકા, મોટા કાકા, નોકર અને શુભચિંતક देवत्रा-દેવો અર્થાત્ વિદ્વાનો ધર્મયુદ્ધ અને વ્યવહારને यंतम्-પ્રાપ્ત કરીને त्वा-તારું अनुमदन्तु-અનુમોદન કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : સર્વના મિત્ર સેનાપતિ જેમ પ્રાણ અને ઉદાન પ્રત્યેક અંગમાં વિચરણ કરે છે, તેમ યુદ્ધમાં વિચરણ કરતા સૈનિક વીરોને અને પ્રજાજનોને હર્ષિત કરીને શત્રુઓને જીતે. (૨૦)

समुद्रं गच्छ स्वाहाऽन्तरिक्षं गच्छ स्वाहा देवꣳ सवितारं गच्छ स्वाहा। मित्रावरुणौ गच्छ स्वाहाऽहोरात्रे गच्छ स्वाहा छन्दाꣳसि गच्छ स्वाहा द्यावापृथिवी गच्छ स्वाहा यज्ञं गच्छ स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा दिव्यं नभो गच्छ स्वाहाग्निं

वैश्वानरं गच्छ स्वाहा मनो मे हार्दि यच्छ दिवं ते धूमो गच्छतु स्वर्ज्योतिः पृथिवीं भस्मना पृण स्वाहा॥ २१॥

પદાર્થ : હે ધર્માદિ રાજ્યકર્મ કરનાર શિષ્ય ! તું स्वाहा-અશ્વતરી નૌકા અર્થાત્ મોટા જહાજ આદિ બનાવવાની વિદ્યાથી નૌકાદિ યાન પર બેસીને समुद्रम्-સમુદ્રમાં गच्छ-જા. स्वाहा-ખગોળને પ્રકાશિત કરનારી વિદ્યાથી બનાવેલ વિમાનાદિ યાનો દ્વારા अन्तरिक्षम्-આકાશમાં गच्छ-જા.

स्वाहा-વેદવાણીથી देवम्-પ્રકાશમાન सवितारम्-સર્વ ઉત્પાદક પરમેશ્વરને गच्छ-જાણ. स्वाहा-વેદ અને સજ્જનોના સંગથી શુદ્ધ સંસ્કારને પ્રાપ્ત થયેલ વાણીથી मित्रावरुणौ-પ્રાણ અને ઉદાનને गच्छ-જાણ.

स्वाहा-જ્યોતિષ વિદ્યા દ્વારા अहोरात्रे-દિવસ અને રાત અથવા તેના ગુણોને गच्छ-જાણ - પ્રાપ્ત કર. स्वाहा-વેદાંગ વિજ્ઞાન સહિત વાણીથી छन्दांसि-ઋગ્, યજુઃ, સામ અને અથર્વ એ ચારે વેદોને गच्छ-સારી રીતે જાણ.

स्वाहा-ભૂમિયાન, આકાશમાર્ગ વિમાન અને ભૂગોળ અથવા ભૂગર્ભ વગેરે યાનો બનાવવાની વિદ્યાથી द्यावापृथिवी-ભૂમિ અને સૂર્યપ્રકાશસ્થ - તેના અન્તર્ગત ઇચ્છિત દેશ-દેશાન્તરોને गच्छ-જાણ અને પ્રાપ્ત કર.

स्वाहा-સંસ્કૃત વાણીથી यज्ञम्-અગ્નિહોત્ર, શિલ્પ અને રાજનીતિ વગેરે યજ્ઞોને गच्छ-પ્રાપ્ત કર.

स्वाहा-વૈદક વિદ્યાથી सोमम्-ઔષધિસમૂહ અર્થાત્ સોમલતાને गच्छ-જાણ.

स्वाहा-જલના ગુણ અને દોષનું જ્ઞાન કરાવનાર વિદ્યાથી दिव्यम्-વ્યવહારમાં લાવવા યોગ્ય પવિત્ર नभः-જલને गच्छ-જાણ.

स्वाहा-વિદ્યુત્, આગ્નેય અસ્ત્રાદિ, તારબર્કી [વીજળીથી ખબર આપનાર તાર] તથા પ્રસિદ્ધ સર્વ કલાયંત્રોને પ્રકાશિત કરનારી વિદ્યાથી अग्निम्- વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિને गच्छ-સારી રીતે જાણ.

मे-મારા मनः-મનને हार्दि-પ્રેમપૂર્વક यच्छ-સત્યધર્મમાં સ્થિત કરીને અર્થાત્ મારા ઉપદેશને અનુકૂળ વર્તન કર. ते-તારી धूमः-કલાઓ અને યજ્ઞના અગ્નિનો ધુમાડો दिवम्-સૂર્યપ્રકાશને તથા ज्योतिः-તેની જ્યોતિ स्वः-અન્તરિક્ષને गच्छतु-પ્રાપ્ત થાય અને તું યંત્રકલા અગ્નિમાં स्वाहा-કાષ્ઠાદિ પદાર્થોને ભસ્મ કરીને તે भस्मना-રાખથી पृथिवीम्-પૃથ્વીને आपृण-ભરી દે અર્થાત્ આચ્છાદિત કરી દે. (૨૧)

ભાવાર્થ : ધર્મ આદિ, રાજ્ય અને વ્યાપાર વૃત્તિના ઇચ્છુક મનુષ્યે ભૂમિયાન, અન્તરિક્ષયાન, આકાશયાન અને વિવિધ યંત્રકલાની રચનાઓથી સર્વ સામગ્રી સિદ્ધ કરીને દ્રવ્યોનો સંચય કરવો જોઈએ. (૨૧)

मापो मौषधीर्हिꣳसीर्धाम्नोः धाम्नो राजँस्ततो वरुण नो मुञ्च। यदाहुरघ्न्याऽइति वरुणेति शपामहे ततो वरुण नो मुञ्च। सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु

दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः॥ २२॥

પદાર્થ : હે राजन्-સભાપતિ ! આપ પોતાનાં પ્રત્યેક સ્થાનોમાં आपः-જલ અને ओषधीः-અન્ન-પાન પદાર્થ તથા કરિયાણું વગેરે તથા વનજ પદાર્થોને मा हिंसीः-નષ્ટ કરો નહિ અર્થાત્ પ્રત્યેક સ્થાનથી અમને સર્વ ઈચ્છિત પદાર્થો મળતાં રહે, કેવળ એટલું જ નહિ, પરંતુ ततः-તે धाम्नः धाम्नः-સ્થાન-સ્થાનથી नः-અમને मा + मुञ्च-ત્યાગો નહિ.

હે वरुण-ન્યાય કરનાર સભાપતિ ! કરેલા ન્યાયમાં अघ्न्याः-મારવાને અયોગ્ય ગાય આદિ પશુના સોગન-શપથ છે. इति-એમ આપ કહો છો અને અમે પણ शपामहे-શપથ-સોગન લઈએ છીએ. આપ પણ એ પ્રતિજ્ઞાનો ત્યાગ કરો નહિ અને અમે પણ ત્યાગ નહિ કરીએ.

હે વરુણ ! આપના રાજ્યમાં नः-અમને आपः-જલ અને ઔષધિઓ सुमित्रियाः-શ્રેષ્ઠ મિત્ર સમાન सन्तु-બની રહે. તથા यः-જે अस्मान्-અમારાથી द्वेष्टि-વેર-દ્વેષ રાખે છે. च-અને वयम्-અમે यम्-જેનાથી द्विष्मः-વેર કરીએ છીએ, तस्मै-તેને માટે તે ઔષધિઓ दुर्मित्रियाः-દુઃખ આપનાર અને શત્રુ સમાન सन्तु-બની રહે. (૨૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ પ્રજાજનો પાસેથી અનીતિપૂર્વક ધન ગ્રહણ ન કરે. રાજા - રાજ્યની રક્ષાની પ્રતિજ્ઞા કરે, કે અમે અન્યાય કરીશું નહિ અને દુષ્ટોને સદા દંડ આપશું. (૨૨)

हविष्मतीरिमाऽआपो हविष्माँ२ऽआविवासति।
हविष्मान्देवो ऽअध्वरो हविष्माँ२ऽअस्तु सूर्यः॥ २३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન લોકો ! તમે એવા કામો કરો કે જેથી इमाः-એ आपः-જલ हविष्मतीः-ઉત્તમ દાન અને આદાન ક્રિયા શુદ્ધિ તથા સુખ આપનાર હોય અર્થાત્ જેથી અનેક પ્રકારનાં ઉપકાર કરવામાં આવે हविष्मान्-પવન ઉપકાર અનુપકારકને आ-સારી રીતે विवासति-પ્રાપ્ત કરે છે.

देवः-સુખદાતા अध्वरः-યજ્ઞ પણ हविष्मान्-પરમ આનંદપ્રદ सूर्यः-તથા સૂર્યલોક પણ हविष्मान्-સુગંધાદિયુક્ત થઈને સુખદાયક अस्तु-બની રહે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે વાયુ અને જલના સંયોગથી અનેક સુખ સિદ્ધ કરવામાં આવે છે, જેથી અનેક દેશ દેશાન્તરોમાં જવાથી વસ્તુઓની પ્રાપ્તિ થાય છે; તેના દ્વારા એ કાર્ય, કોઈ ક્રિયા કરવામાં અતિ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય જ કરી શકે છે.

જે અનેક પ્રકારની ક્રિયાઓને પ્રકાશિત કરનાર છે, તે યજ્ઞ વૃષ્ટિ આદિ સુખનો ઉત્પાદક છે. (૨૩)

अग्नेर्वोऽपन्नगृहस्य सदसि सादयामीन्द्राग्न्योर्भागधेयी स्थ मित्रावरुणयोर्भागधेयी स्थ विश्वेषां देवानां भागधेयी स्थ। अमूर्याऽ उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह ता नो हिन्वन्त्वध्वरम्॥ २४॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓ ! अमूः-તે याः-જે સ્વયંવર વિવાહથી પતિની વરણી કરી છે, તેની સમાન જે इन्द्राग्न्योः-સૂર્ય અને વિદ્યુત્‌ના ગુણોને भागधेयीः-અલગ-અલગ જાણનારી स्थ-છે.

मित्रावरुणयोः-પ્રાણ અને ઉદાનના ગુણોને भागधेयीः-પૃથક્-પૃથક્ જાણનારી स्थ-છે, विश्वेषाम्-વિદ્વાન અને પૃથિવી આદિ પદાર્થોને भागधेयीः-સેવન કરનારી स्थ-છે, તે वः-તમે સર્વને अपन्नगृहस्य-જેને ગૃહકાર્ય પ્રાપ્ત થયેલ નથી તે બ્રહ્મચર્યનું અનુષ્ઠાન કરનારા અને अग्नेः-સર્વ વિદ્યાદિ ગુણોથી પ્રકાશિત શ્રેષ્ઠ બ્રહ્મચારીની सदसि-સભામાં હું सादयामि-સ્થાપિત કરું છું.

જે याः उप सूर्ये-સૂર્યલોકના ગુણોમાં उप-ઉપસ્થિત થાય છે, वा-અથવા याभिः-જેની सह-સાથે सूर्य-સૂર્યલોકમાં રહેલ જે સૂર્યના ગુણોમાં અતિ ચતુર છે, ताः-તે સર્વ नः-અમારા अध्वरम्-ઘરના કામકાજને વિવાહ કરીને हिन्वन्तु-વૃદ્ધિ કરે. (૨૪)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચર્ય ધર્મનું પાલન કરનારી કન્યાઓનો, અવિવાહિત અને તે કન્યાઓની સમાન ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત પુરુષોની સાથે વિવાહ કરવો ઉચિત છે.

એટલા માટે ગુરુપત્નીઓ બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓને એવો જ ઉપદેશ આપે. માત્ર આપત્કાળમાં પૂર્વ વિવાહિત સ્ત્રીપુરુષોનો નિયોગ થઈ શકે છે, અન્યથા નહિ. (૨૪)

हृदे त्वा मनसे त्वा दिवे त्वा सूर्याय त्वा। ऊर्ध्वमिममध्वरं दिवि देवेषु होत्रा यच्छ॥ २५॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારિણી કન્યા ! તું જેમ અમે સર્વે देवेषु-પોતાને સુખ આપનાર પતિઓની પાસે રહેનારી અને होत्राः-અગ્નિહોત્ર આદિ કર્મનું અનુષ્ઠાન કરનારી છીએ તેવી થા.

જેમ અમે हृदे-હાર્દિક સુખ માટે त्वा-તને, मनसे-સારું-નરસું વિચારવા માટે त्वा-તને दिवे-સર્વ સુખોનો પ્રકાશ કરવા માટે त्वा-તને, सूर्याय-સૂર્યની સમાન ગુણો માટે त्वा-તને શિક્ષણ આપીએ છીએ, તેમ તું પણ दिवि-સમસ્ત સુખોના પ્રકાશમાં નિમિત્ત इमम्-આ अध्वरम्-નિરંતર સુખ આપનાર ગૃહાશ્રમ રૂપી યજ્ઞને ऊर्ध्वम्-ઉત્કૃષ્ટ રીતિથી यच्छ-ગ્રહણ કર.

ભાવાર્થ : જેમ પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓ સાથે પ્રિય આચરણ કરીને, અગ્નિહોત્ર આદિ કર્મોમાં તલ્લીન રહે છે, તેમ બ્રહ્મચારિણી કન્યાઓએ વિવાહ પછી બ્રહ્મચારિણીઓ અને બ્રહ્મચારીઓએ પણ પરસ્પર વર્તવું જોઈએ. (૨૫)

सोम राजन्विश्वास्त्वं प्रजाऽउपावरोह विश्वास्त्वां प्रजाऽउपावरोहन्तु। शृणोत्वग्निः समिधा हवं मे शृण्वन्त्वापो धिषणाश्च देवीः। श्रोता ग्रावाणो विदुषो न यज्ञꣳ शृणोतु देवः सविता हवं मे स्वाहा॥ २६॥

પદાર્થ : હે सोम-શ્રેષ્ઠ ઐશ્વર્યયુક્ત राजन्-સમસ્ત ઉત્કૃષ્ટ ગુણોથી પ્રકાશમાન સભાધ્યક્ષ ! त्वम्-તું પિતા સમાન विश्वाः-સમસ્ત प्रजाः-પ્રજાજનોની उपावरोहन्तु-સમીપસ્થ રહીને રક્ષા કર અને त्वाम्-

તને विश्वाः-સમસ્ત प्रजाः-પ્રજાજન પુત્ર સમાન આશ્રિત હોય.

હે સભાધ્યક્ષ ! આપ જેમ समिधा-પ્રદીપ્ત કરનાર પદાર્થથી अग्निः-સર્વ ગુણયુક્ત અગ્નિ પ્રકાશિત થાય છે, તેમ मे-મારી हवम्-પ્રગલ્ભ વાણી-સ્તુતિ श्रृणोतु-સાંભળીને ન્યાયથી પ્રકાશિત બનો. च-અને आपः-સર્વગુણોમાં વ્યાપ્ત धिषणाः-વિદ્યા, બુદ્ધિયુક્ત देवीः-શ્રેષ્ઠતમ ગુણોથી પ્રકાશમાન તારી પત્ની પણ માતાઓની સમાન સ્ત્રીજનોના ન્યાયને शृण्वन्तु-સાંભળે.

હે ग्रावाणः-સત્યાસત્યનો વિવેક કરનારા વિદ્વાન સભાસદો ! તમે અમારા અભિપ્રાયને અમારા કહેવાથી श्रोत-સાંભળો તથા देवः-વિદ્યાથી પ્રકાશિત सविता-ઐશ્વર્યવાન સભાપતિ विदुषः-વિદ્વાનોના यज्ञम्-યજ્ઞની न-સમાન मे-અમારા પ્રજાજનોના हवम्-નિવેદનને स्वाहा-સ્તુતિરૂપ વાણી જેવી હોય તેવી श्रृणोतु-સાંભળો. (૨૬)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજા પરસ્પર સંમતિથી સમસ્ત રાજ્ય વ્યવહારોનું પાલન કરે. (૨૬)

देवीरापोऽअपां नपाद्यो वऽऊर्मिर्हविष्यऽइन्द्रियावान् मदिन्तमः।

तं देवेभ्यो देवत्रा दत्त शुक्रपेभ्यो येषां भाग स्थ स्वाहा॥ २७॥

પદાર્થ : હે आपः-શ્રેષ્ઠ ગુણોથી સંપન્ન देवीः-શુભકર્મોથી પ્રકાશમાન પ્રજાજનો ! તમે રાજભક્ત स्थ-બનો शुक्रपेभ्यः-શરીર અને આત્માના પરાક્રમના રક્ષક देवेभ्यः-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્વાનો માટે येषाम्-જે वः-તમારા બળવાન વિદ્વાનોની यः-જે अपां नपात्-જળના નાશરહિત ऊर्मिः-જલતરંગ સમાન પ્રજારક્ષક इन्द्रियावान्-જેમાં પ્રશંસનીય ઈન્દ્રિયો બને છે તથા मदिन्तमः-આનંદદાયક हविष्यः-ભોગ યોગ્ય પદાર્થોથી નિષ્પન્ન भागः-ભાગ છે, તે તમે સર્વ तम्-તેને स्वाहा-આદરસહિત ગ્રહણ કરો. જેમ રાજા આદિ સભ્યજન देवत्रा-દિવ્યભોગ આપે છે, તેમ તમે પણ આને આનંદ दत्त-આપો. (૨૭)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોને એ ઉચિત છે, કે ઉત્કૃષ્ટ ગુણયુક્ત સભાપતિનો સ્વીકાર કરીને, રાજ્યની રક્ષા માટે કર - પ્રદાન કરીને ન્યાયને પ્રાપ્ત કરે. (૨૭)

कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्याऽउन्नयामि । समापोऽअद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः॥ २८॥

પદાર્થ : હે વૈશ્યજન ! તું कार्षिः-હળથી ભૂમિને ખેડનાર असि-છે. त्वा-તને समुद्रस्य-અન્તરિક્ષમાં अक्षित्यै-પરિપૂર્ણ થવા માટે सम् उत् नयामि-સારી રીતે ઉત્સાહિત કરું છું. તમે સર્વ લોકો अद्भिः-યજ્ઞથી શુદ્ધ થયેલ જલોથી आपः-જલ અને ओषधीभिः-ઔષધિથી ओषधीः-ઔષધિઓને सम् अग्मत-પ્રાપ્ત કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : ખેતર વગેરે ભૂમિઓમાં અનેક પ્રકારની ઔષધિઓ ઉત્પન્ન થાય છે. ઔષધિઓથી અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ કરવામાં આવે છે, યજ્ઞોથી અન્તરિક્ષ જલના પરમાણુઓ પરિપૂર્ણ બને છે.

આથી વિદ્વાન લોકો બુદ્ધિ રહિતના મનુષ્યોને ખેતરો વગેરે [કાર્ય માટે] લઈ જાય છે કારણ કે તેઓ વિદ્યાભ્યાસ કરવામાં સમર્થ હોતા નથી. (૨૮)

यमग्ने पृत्सु मर्त्यमवा वाजेषु यं जुनाः। स यन्ता शश्वतीरिषः स्वाहा॥ २९॥

પદાર્થ : હે (अग्ने)-જ્યારે ક્યારેક વિવેક કરનારા આપ [વિદ્વાન] ! पृत्सु-સંગ્રામોમાં यम्-જે મનુષ્યની अवाः-રક્ષા કરો છો અને वाजेषु-અન્ન આદિ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે यम्-જેને जुनाः-નિયુક્ત કરો છો, सः-તે शश्वतीः-નિરંતર અનાદિરૂપ इषः-પોતાની પ્રજાઓનો यन्ता-નિર્વાહ કરનાર બને છે અર્થાત્ તેમને નિયમોમાં રાખે છે. (૨૯)

ભાવાર્થ : ગુરુજનોની શિક્ષાથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ થાય છે. (૨૯)

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। आददे रावासि गभीरमिममध्वरं कृधीन्द्राय सुषूतमम्। उत्तमेन पविनोर्जस्वन्तं मधुमन्तं पयस्वन्तं निग्राभ्या स्थ देवश्रुतस्तर्पयत मा॥ ३०॥

પદાર્થ : સર્વ સુખદાતા सवितुः-તથા સમસ્ત ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર જગદીશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા સંસારમાં अश्विनोः-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના बाहुभ्याम्-બલ અને પરાક્રમ ગુણોથી पूष्णः-પુષ્ટિ કરનાર સોમ આદિ ઔષધિગણના हस्ताभ्याम्-રોગનાશક તથા ધાતુઓને સામ્ય રાખનાર ગુણોથી त्वा-તને કર - ધન આપનારનો आददे-સ્વીકાર કરું છું.

તું इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યવાન મારા માટે उत्तमेन-ઉત્તમ અર્થાત્ સભ્ય पविना-વાણીથી इमम्-આ गभीरम्-અત્યંત સમજવા યોગ્ય सुषूतमम्-સર્વ પદાર્થોથી ઉત્પન્ન થયેલા ऊर्जस्वन्तम्-રાજ્યને બળવાન બનાવનાર मधुमन्तम्-સમસ્ત મધ આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થોયુક્ત पयस्वन्तम्-દૂધ આદિ સહિત કર-ધનને अध्वरम्-નિષ્કપટ कृधि-કરો. देवश्रुतः-શ્રેષ્ઠ રાજ્યગુણોને સાંભળનાર તમે મારા માટે निग्राभ्यः-નિરંતર સ્વીકાર કરવા યોગ્ય स्थ-છો. मा-મને આ કર પ્રદાનથી तर्पयत-તૃપ્ત કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોને યોગ્ય છે, કે તેઓ રાજા સમીપ આવીને પોતાના સર્વ ભોગ્ય પદાર્થોનો યથાયોગ્ય ભાગ તેને પ્રદાન કરે, કારણ કે તે ભૂમિમાં ઉત્પન્ન થનાર પદાર્થોના અંશભાગી હોય છે. (૩૦)

मनो मे तर्प्पयत वाचं मे तर्प्पयत प्राणं मे तर्प्पयत चक्षुर्मे तर्प्पयत श्रोत्रं मे तर्प्पयतात्मानं मे तर्प्पयत प्रजां मे तर्प्पयत पशून्मे तर्प्पयत गणान्मे तर्प्पयत गणा मे मा वितृषन्॥ ३१॥

પદાર્થ : હે સભ્યજનો અને પ્રજાજનો ! તમે પોતાના ગુણો દ્વારા मे-મારાં मनः-મનને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો. मे-મારી वाचम्-વાણીને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો. मे-મારા प्राणम्-પ્રાણને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો. मे-મારા चक्षुः-નેત્રોને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો. मे-મારા श्रोत्रम्-કાનોને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો. मे-મારા आत्मानम्-આત્માને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો.

मे-મારી प्रजाम्-સંતાનાદિ પ્રજાને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો. मे-મારા पशून्-ગાય, હાથી, ઘોડા આદિ પશુઓને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો, मे-મારા गणान्-નોકરોને तर्प्पयत-તૃપ્ત કરો, જેથી मे-મારા गणाः-રાજ્ય કે પ્રજા કર્માધિકારી અથવા સેવકજન કામોમાં मा वितृषन्-ઉદાસ રહે નહિ. (૩૧)

ભાવાર્થ : રાજ્યનો પ્રબંધ સભાને આધીન થવા યોગ્ય છે, જેથી સર્વ પ્રજાજન, રાજાના સેવકો અને રાજપુરુષો પ્રજાના સેવક બનીને તથા સ્વકાર્યોમાં પ્રવૃત્ત રહીને એકબીજાને પ્રસન્ન રાખી શકે. (૩૧)

इन्द्राय त्वा वसुमते रुद्रवतऽइन्द्राय त्वादित्यवतऽइन्द्राय त्वाभिमातिघ्ने। श्येनाय त्वा सोमभृतेऽग्नये त्वा रायस्पोषदे॥ ३२॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! वसुमते-જે કર્મમાં ચોવીસ વર્ષ બ્રહ્મચર્ય પાલનથી તેના દ્વારા અનેક સારા વિદ્વાન્ ઉત્પન્ન થાય છે. रुद्रवते-જે ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરે છે તે इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત કર્મ માટે त्वा-આપને ગ્રહણ કરે છે. आदित्यवते-જે અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરે છે તે સૂર્યસમાન પરમ વિદ્વાન્ બને છે.

इन्द्राय-ઉત્તમ ગુણોની પ્રાપ્તિ માટે त्वा-આપના अभिमातिघ्ने-જે કર્મમાં મોટા-મોટા અભિમાની શત્રુજન માર્યા જાય તે इन्द्राय-પરમોત્કૃષ્ટ શત્રુ વિદારક કામ માટે त्वा-આપ सोमभृते-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય ધારણ કરનારા श्येनाय-યુદ્ધ આદિ કાર્યોમાં બાજ પક્ષીની સમાન ઝપટ મારનાર त्वा-આપનો रायस्पोषदे-ધનથી પુષ્ટ કરનાર अग्नये-વિદ્યુતાદિ પદાર્થોના ગુણોનો પ્રકાશ કરવા માટે त्वा-આપનો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ.

ભાવાર્થ : જે ઈન્દ્ર, વાયુ, યમ, સૂર્ય, અગ્નિ, વરુણ, ચન્દ્ર અને ધનવાન ગુણોથી યુક્ત, વિદ્વાનોને પ્રિય, વિદ્યાના પ્રચારક અને સર્વને સુખ આપનાર હોય, તેને જ રાજા માનવો જોઈએ. (૩૨)

यत्ते सोम दिवि ज्योतिर्यत्पृथिव्यां यदुरावन्तरिक्षे। तेनास्मै यजमानायोरु राये कृद्ध्यधि दात्रे वोचः॥ ३३॥

પદાર્થ : હે सोम-સમસ્ત ઐશ્વર્યપ્રેરક સભાપતિ ! ते-તારા यत्-જે दिवि-સૂર્યલોકમાં पृथिव्याम्-પૃથિવીમાં અને यत्-જે उरौ-વિસ્તૃત अन्तरिक्षे-આકાશમાં ज्योतिः-જેમ જ્યોતિ હોય, તેમ રાજકર્મ છે. तेन-તેથી તું अस्मै-એ પરોપકાર માટે यजमानाय-યજ્ઞ કરતા યજમાન માટે उरु-कृधि-અત્યંત ઉપકાર કર તથા राये-ધનવૃદ્ધિ માટે अधि, वोचः-અધિકમાં અધિક રાજ્યનો પ્રબંધ કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : સભાપતિ રાજા પોતાના રાજ્યના ઉત્કર્ષથી સર્વ લોકોને વિદ્યાદિ શુભ ગુણ કર્મોમાં સુશિક્ષિત કરીને, પુરુષાર્થી બનાવે, જેથી તેઓ પુરુષાર્થ કરીને ધન આદિ પદાર્થોની સદા વૃદ્ધિ કરે. (૩૩)

श्वात्रा स्थ वृत्रतुरो राधोगूर्त्ताऽअमृतस्य पत्नीः। ता देवीर्देवत्रेमं यज्ञं नयतोपहूताः सोमस्य पिबत॥ ३४॥

પદાર્થ : હે देवीः-વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીઓ ! તમે वृत्रतुरः-વીજળીની સમાન મેઘ - વાદળાંના વરસાદની સમાન સુખદાયક ગતિથી ચાલનાર राधोगूर्त्ताः-ધનનો ઉદ્યોગ - વૃદ્ધિ કરવા पत्न्यः-અને યજ્ઞમાં સહયોગિની स्थ-બનો.

देवत्रा-તથા શ્રેષ્ઠ ગુણોથી પ્રકાશિત વિદ્વાન્ પતિઓમાં પ્રેમપૂર્વક રહો. इदम्-આ યજ્ઞને नयत-સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કર્યા કરો અને उपहूताः-બોલાવેલી પોતાના પતિઓની સાથે अमृतस्य-અતિ સ્વાદયુક્ત સોમ આદિ

ઔષધિઓના રસનું पिबत-પાન કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનોની વિદુષી સ્ત્રીઓ પોતાના ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી પોતાના પતિઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ પુરુષોએ પણ પોતાની સ્ત્રીઓને સદા પ્રસન્ન રાખવી જોઈએ. (૩૪)

मा भेर्मा संविक्थाऽऊर्जं धत्स्व धिषणे वीड्वी सती वीडयेथामूर्जं दधाथाम्। पाप्मा हता न सोमः॥ ३५॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું वीड्वी सती-શરીર અને આત્માથી બલવતી થઈને પતિથી मा भेः-ડર નહિ. मा संविक्थाः-કંપ નહિ અને ऊर्ज्जम्-દેહ તથા આત્માના બલ અને પરાક્રમને धत्स्व-ધારણ કર.

હે પુરુષ ! તું પણ પોતાની પત્નીથી તેમજ વર્ત. તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ धिषणे-સૂર્ય અને ભૂમિ સમાન પરોપકાર અને પરાક્રમને ધારણ કરો, જેથી वीडयेथाम्-દૃઢ બલયુક્ત બનો. આ રીતે પરસ્પર અનુકૂળ વર્તન કરતાં તમારાં બન્નેના पाप्मा-અપરાધો हतः-નાશ પામો. અને सोमः-ચંદ્ર न-સમાન આનંદ અને શાન્તિ આદિ ગુણોની વૃદ્ધિ કરીને પરસ્પરના આનંદની વૃદ્ધિ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ એવી રીતે વ્યવહાર કરે, કે જેથી પરસ્પરના ભય અને ઉદ્વેગ નાશ પામે. તથા આત્માનો દૃઢ-ઉત્સાહ, પ્રેમ અને ગૃહાશ્રમના વ્યવહારોની સિદ્ધિ અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ થાય.

બંનેના દોષો અને દુઃખોને દૂર કરીને ચંદ્રમા સમાન પરસ્પર હર્ષકારી બનો. (૩૫)

प्रागपागुदगधराक्सर्वतस्त्वा दिशऽआधावन्तु। अम्ब निष्पर समरीर्विदाम्॥ ३६॥

પદાર્થ : હે अम्ब-પ્રેમભાવથી પ્રાપ્ત થનારી માતા ! જો તારી अरीः-સંતાનાદિ પ્રજા प्राक्-પૂર્વ अपाक्-પશ્ચિમ उदक्-ઉત્તર अधराक्-દક્ષિણ અને सर्वतः-સર્વ दिशः-દિશાઓથી त्वा-તને आ + धावन्तु-દોડીને પ્રાપ્ત થાય, તેને निः + पर-નિરંતર પ્રેમ કર, અને તે પણ તને सम्-સારી રીતે विदाम्-જાણે અર્થાત્ સેવા કરે. (૩૬)

ભાવાર્થ : માતાપિતાને યોગ્ય છે, કે પોતાનાં સંતાનોને વિદ્યાદિ શ્રેષ્ઠ ગુણોમાં લગાવીને નિરંતર તેમની રક્ષા કરે. સંતાનોને યોગ્ય છે, કે તેઓ સર્વ રીતે માતા-પિતાની સેવા કરે. (૩૬)

त्वमङ्ग प्रशꣳसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम्।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः॥ ३७॥

પદાર્થ : હે अङ्ग-પ્રિય शविष्ठ-અત્યંત બલયુક્ત मघवन्-ઈશ્વર સમાન સમૃદ્ધ इन्द्र-રિદ્ધિ-સિદ્ધિ આપનાર સભાપતિ ! त्वम्-આપ मर्त्यम्-પ્રજાના મનુષ્યોને प्रशंसिषः-પ્રશંસાયુક્ત કરો.

આપ देवः-દેવ અર્થાત્ શત્રુઓને જીતનાર त्वदन्यः-તમારાથી અન્ય मर्डिता-સુખ આપનાર न-કોઈ નથી, એમ હું ते-આપને वचः-પૂર્વોક્ત રાજ્ય પ્રબંધને અનુકૂળ વચન ब्रवीमि-કહું છું. (૩૭)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર પક્ષપાતરહિત, સર્વના મિત્ર છે, તેને અનુકૂળ સભાપતિ રાજ્યધર્મના પાલક રાજા પણ પ્રશંસનીયની પ્રશંસા, નિંદનીયની નિંદા, દંડનીયને દંડ અને રક્ષા કરવા યોગ્યની રક્ષા કરીને

સર્વની ઈચ્છા સિદ્ધ કરે. (૩૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં રાજ્યાભિષેકપૂર્વક શિક્ષા (૧), રાજ્યનાં કાર્યો (૨), પ્રજાએ રાજાનો આશ્રય લેવો (૩), સભાધ્યક્ષ આદિનું કર્તવ્ય (૪), વિષ્ણુના પરમપદનું વર્ણન (૫), સભાધ્યક્ષ દ્વારા વિષ્ણુની ઉપાસના (૬), રાજા અને સભાનું પરસ્પર કર્તવ્ય (૭), ગુરુ દ્વારા શિષ્યનો સ્વીકાર કરવો અને તેને શિક્ષા આપવી (૮, ૯), યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન (૧૦), હોમ કરેલ દ્રવ્યનું ફળ (૧૧), વિદ્વાનનું લક્ષણ (૧૨), મનુષ્યનું કર્તવ્ય (૧૩), મનુષ્યનો પરસ્પર વ્યવહાર (૧૪-૧૬), દુષ્ટ દોષોની નિવૃત્તિનું ફળ અને ઈશ્વરને શું-શું પ્રાર્થના કરવી (૧૭), રણમાં યોદ્ધાનું વર્ણન (૧૮), રણમાં પરસ્પર વ્યવહારનો પ્રકાર (૨૦), યોદ્ધાઓને અનુમોદન (૨૧), રાજ્યનો પ્રબંધ કરવો (૨૨), સાધ્ય કાર્યનું સાધન (૨૩), રાજ્યકાર્ય કરવા માટે ઈશ્વરનો ઉપદેશ (૨૪), રાજ્યકાર્યોનું અનુષ્ઠાન (૨૫), રાજા અને પ્રજાનું કર્તવ્ય (૨૬), પ્રજા અને રાજસભાનો પરસ્પર વ્યવહાર (૩૧), પ્રજા દ્વારા સભાપતિનો ઉત્કર્ષ (૩૨), પ્રજા પ્રતિ સભાપતિની પ્રેરણા (૩૩), પ્રજા દ્વારા સભાપતિનો સ્વીકાર કરવો (૩૨), સભાપતિનું લક્ષણ (૩૨), પ્રજા અને રાજસભાની પરસ્પર પ્રતિજ્ઞા (૩૧), સભાપતિનો સ્વીકાર કરવાનું પ્રયોજન (૩૨), પ્રજાના સુખ માટે સભાપતિનાં કર્તવ્ય કર્મોનું અનુષ્ઠાન (૩૩) સભાપતિ વગેરેની પત્નીઓ શું શું કર્મ કરે (૩૪), સ્ત્રી-પુરુષોનો પરસ્પર વ્યવહાર (૩૫), માતા-પિતા પ્રત્યે સંતાનોનું કર્તવ્ય (૩૬), સભાપતિ પ્રત્યે પ્રજાજનોના ઉપદેશનું વર્ણન (૩૬) છે. આથી પાંચમા અધ્યાયમાં કહેલ અર્થોની સાથે આ છઠ્ઠા અધ્યાયના અર્થોની સંગતિ છે.

॥ इति षष्ठोध्यायः ॥



॥ अथैकादशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

यु॒ञ्जा॒नः प्र॑थ॒मं मन॑स्त॒त्त्वाय॑ सवि॒ता धियः॑।

अ॒ग्नेर्ज्योति॑र्नि॒चाय्य॑ पृथि॒व्याऽअध्याभ॑रत्॥ १॥

પદાર્થ : જે सविता-ઐશ્વર્યની કામના કરનાર મનુષ્ય ! तत्त्वाय-તે પરમેશ્વર આદિ પદાર્થોના જ્ઞાતા માટે प्रथमम्-આદિમાં मनः-વિચાર સ્વરૂપ અન્તઃકરણની વૃત્તિઓને धियः-ધારણાત્મક અંતઃકરણની વૃત્તિઓને युञ्जानः-યોગાભ્યાસ અને ભૂગર્ભવિદ્યામાં યુક્ત કરીને अग्नेः-પૃથ્વી આદિમાં રહેનારી વિદ્યુત્‌ના ज्योतिः-પ્રકાશને निचाय्य-નિશ્ચય કરીને पृथिव्याः-ભૂમિને अधि-ઉપર आभरत्-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરે, તે યોગી અને ભૂગર્ભવિદ્યાના જ્ઞાતા બને. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય યોગવિદ્યા અને ભૂગર્ભવિદ્યા પ્રાપ્ત કરવા ઈચ્છે, તે યમ આદિ યોગના અંગો અને ક્રિયા-કૌશલથી પોતાના હૃદયને પવિત્ર કરીને, તત્ત્વોના વિજ્ઞાન માટે બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને, તેને ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી જાણીને તેનો ઉપયોગ કરે.

તદનંતર જે પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ પદાર્થોના પ્રકાશક બ્રહ્મ છે, તેને જાણીને, તેનો પોતાના આત્મામાં નિશ્ચય કરીને પોતાના પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરે. (૧)

यु॒क्तेन॒ मन॑सा व॒यं दे॒वस्य॑ सवि॒तुः स॒वे। स्व॒र्ग्या॒य॒ शक्त्या॑॥ २॥

પદાર્થ : હે યોગ અને તત્ત્વવિદ્યાના જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! જેમ वयम्-અમે યોગીઓ युक्तेन-યોગાભ્યાસથી યુક્ત मनसा-વિજ્ઞાન અને शक्त्या-પોતાના સામર્થ્યથી देवस्य-સર્વના પ્રકાશક सवितुः-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક ઈશ્વરના सवे-જગત્ રૂપ ઐશ્વર્યમાં स्वर्ग्याय-સુખની પ્રાપ્તિના સાધનો માટે પ્રકાશને અધિક રીતે ધારણ કરીયે છીએ, તેમ તમે પણ પ્રકાશને ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આ સૃષ્ટિમાં સમાધિસ્થ બનીને યોગ અને તત્ત્વવિદ્યાનું યથાશક્તિ સેવન કરે;

તે સુંદર આત્મજ્ઞાનના પ્રકાશથી યુક્ત બનીને યોગ અને પદાર્થ વિજ્ઞાનનો અભ્યાસ કરે, તો અવશ્ય સિદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૨)

यु॒क्त्वाय॑ सवि॒ता दे॒वान्त्स्व॑र्य॒तो धि॒या दिव॑म्।

बृ॒हज्ज्योतिः॑ करिष्य॒तः स॑वि॒ता प्रसु॑वाति॒ तान्॥ ३॥

પદાર્થ : જે सविता-યોગ અને પદાર્થજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરનાર પરમાત્મામાં મનને युक्त्वाय-યુક્ત

કરીને धिया-બુદ્ધિથી दिवम्-વિદ્યાના પ્રકાશને તથા स्वः સુખને यतः-પ્રાપ્ત કરનારા, बृहत्-મહાન ज्योतिः વિજ્ઞાનને करिष्यतः ઉત્પન્ન કરનારા તે देवान्-દિવ્યગુણોને प्र+सुवाति-ઉત્પન્ન કરે છે; तान्-તે દિવ્ય ગુણોને અન્ય જન પણ सविता-પ્રેરણાવાન બનીને ઉત્પન્ન કરે. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યોગ અને પદાર્થવિદ્યાનો અભ્યાસ કરે છે, તેઓ અવિદ્યાદિ ક્લેશોના નિવારક શુદ્ધ ગુણોને ઉત્પન્ન કરી શકે છે.

જે મનુષ્યો ઉપદેશકથી યોગ અને તત્ત્વજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને, એ રીતે અભ્યાસ કરે, તે પણ એ દિવ્યગુણોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩)

युञ्जते मनऽउत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेकऽइन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः॥ ४॥

પદાર્થ : જે होत्राः-દાન દેવા અને લેવાના સ્વભાવ યુક્ત विप्राः-બુદ્ધિમાન પુરુષ यस्य-જે बृहतः-મહાન विपश्चितः-સંપૂર્ણ વિદ્યાઓથી યુક્ત આપ્ત વિદ્વાન સમાન, विप्रस्य-સર્વશાસ્ત્રના જ્ઞાતા બુદ્ધિમાન વિદ્વાનથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને-જે सवितुः-સર્વ જગતના ઉત્પાદક અને देवस्य-સર્વના પ્રકાશક જગદીશ્વરની मही-મહાન परिष्टुतिः-સર્વ પ્રકારની સ્તુતિ છે, તે તત્ત્વજ્ઞાનના વિષયમાં જેમ मनः-પોતાના ચિત્તને युञ्जते-પરમાત્મા વા તત્ત્વજ્ઞાનમાં સમાધિસ્થ કરે છે उत-અને धियः-પોતાની બુદ્ધિઓને યુક્ત કરે છે, તેમ वयुनावित्-પ્રકૃષ્ટજ્ઞાન યુક્ત एकः-અન્યની સહાયની અપેક્ષા વિના इत-જ હું वि+दधे-મન અને બુદ્ધિને યુક્ત કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : જે યુક્ત આહાર-વિહાર કરનાર યોગી એકાન્ત દેશમાં પરમાત્મામાં સમાધિસ્થ બને છે, તે તત્ત્વજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને, નિત્ય-સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिर्वि श्लोकऽएतु पथ्येव सूरेः।
शृण्वन्तु विश्वेऽअमृतस्य पुत्राऽआ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः॥ ५॥

પદાર્થ : હે યોગશાસ્ત્રના જ્ઞાનના જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! આપ જેમ श्लोकः-સત્યવાણીથી યુક્ત હું યોગી नमोभिः-સ્તુતિ, પ્રાર્થના, ઉપાસના રૂપ સત્કારોથી જે पूर्व्यम्-પૂર્વ યોગીઓએ પ્રત્યક્ષ કરેલ ब्रह्म-સર્વથી મહાન વ્યાપક ઈશ્વરનો युजे-પોતાના આત્મામાં સાક્ષાત્ કરું છું, તે ઈશ્વર वाम्-તમે યોગનું અનુષ્ઠાન કરનાર-યોગી અને ઉપદેશ કરનાર બન્નેને सूरेः-વિદ્વાનને જેમ पथ्येव-ઉત્તમ ગતિને માટે માર્ગ પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ वि+एतु-વિવિધ પ્રકારથી પ્રાપ્ત થાય.

જેમ विश्वे-સર્વ पुत्राः-ઉત્તમ સંતાનો સમાન આજ્ઞાકારી મોક્ષને પ્રાપ્ત કરેલ વિદ્વાનો अमृतस्य-અવિનાશી ઈશ્વરના યોગથી दिव्यानि-સુખના પ્રકાશમાન धामानि-સ્થાનોને आतस्थुः-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ હું પણ તેને પ્રાપ્ત કરું, (૫)

ભાવાર્થ : યોગ-જિજ્ઞાસુજનો, યોગારૂઢ આપ્ત વિદ્વાનોનો સંગ કરે, તેના સંગથી યોગની વિધિ જાણીને બ્રહ્મનો સાક્ષાત્કાર કરે.

જેમ વિદ્વાનો દ્વારા પ્રકાશિત ધર્મનો માર્ગ સર્વને સુખથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ યોગીજનોથી યોગની વિધિ સરળતાથી પ્રાપ્ત થાય છે.

તેથી સર્વ લોકો યોગવિધિથી પરબ્રહ્મની ઉપાસના કરે. (૫)

यस्य॑ प्र॒याण॒मन्व॒न्यऽइद्य॒युर्दे॒वा दे॒वस्य॑ महि॒मान॒मोज॑सा।

यः पार्थि॑वानि वि॒म॒मे सऽए॒त॑शो॒ रजां॑ᳬसि दे॒वः स॑वि॒ता म॑हि॒त्व॒ना॥ ६॥

પદાર્થ : હે યોગીજનો ! તમે यस्य-જે देवस्य-સર્વ સુખોના દાતા ઈશ્વરની महिमानम्-સ્તુતિને प्रयाणम्-સર્વ સુખ પ્રાપ્તિના સાધન શ્રેષ્ઠ પ્રાણને अनु-કર્મ પછી अन्ये-જીવ આદિ देवाः-વિદ્વાનો ययुः-પ્રાપ્ત કરે છે.

यः-જે एतशः-પોતાની વ્યાપ્તિથી સર્વ જગતમાં પ્રાપ્ત, सविता-સમસ્ત જગતના નિર્માતા, देवः-શુદ્ધ સ્વરૂપ ભગવાન છે, તે महित्वना-પોતાની મહિમાથી અને ओजसा-પરાક્રમથી पार्थिवानि-પૃથ્વી પર પ્રસિદ્ધ रजांसि-સર્વ જનોને वि+ममे-વિમાન આદિ યાનોની સમાન નિર્માણ કરે છે, सः-તે इत्-જ નિરંતર ઉપાસનીય છે. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન સર્વ જગત્‌ને અન્તરિક્ષમાં અનન્ત બળથી ધારણ કરનાર, જગતના નિર્માતા, સુખોના દાતા, શુદ્ધ સ્વરૂપ, સર્વશક્તિમાન અને સર્વાન્તર્યામી, ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે-તે જ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નહીં. (૬)

देव॑ सवितः॒ प्रसु॑व य॒ज्ञं प्रसु॑व य॒ज्ञप॑तिं॒ भगा॑य।

दि॒व्यो ग॑न्ध॒र्वः कै॑त॒पूः केत॑न्नः पुनातु वा॒चस्पति॒र्वाच॑ नः स्वदतु॥ ७॥

પદાર્થ : હે देव-સત્યયોગ વિદ્યા દ્વારા ઉપાસનાને યોગ્ય શુદ્ધ જ્ઞાનના દાતા सवितः-સર્વ સિદ્ધિઓને ઉત્પન્ન કરનાર પરમેશ્વર ! આપ नः-અમારા भगाय-સમગ્ર ઐશ્વર્ય માટે यज्ञम्-સુખદાયક વ્યવહારને प्र+सुव-ઉત્પન્ન કરો, यज्ञपतिम्-એ સુખદાયક વ્યવહારના રક્ષકજનને प्र+सुव-ઉત્પન્ન કરો.

આપ गन्धर्वः-પૃથ્વીને ધારણ કરનાર, दिव्यः-શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોમાં સર્વ શ્રેષ્ઠ, केतपूः-વિજ્ઞાનથી પવિત્ર કરનાર છો, તે આપ नः-અમારા केतम्-વિજ્ઞાનને पुनातु-પવિત્ર કરો.

આપ वाचस्पतिः-સત્ય વિદ્યાઓથી યુક્ત વેદવાણીના પ્રચારથી રક્ષા કરનાર છો, તે આપ नः-અમારી वाचम्-વાણીને स्वदतु-સ્વાદિષ્ટ-મધુર અને મૃદુ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે સમસ્ત ઐશ્વર્યથી યુક્ત, શુદ્ધ બ્રહ્મની ઉપાસના કરે છે, યોગની પ્રાપ્તિ માટે પ્રાર્થના કરે છે, તે સકલ ઐશ્વર્ય, આત્મશુદ્ધિ અને યોગને પ્રાપ્ત કરી શકે છે.

જે જગદીશ્વરની વેદવાણીની સમાન પોતાની વાણીને શુદ્ધ કરી લે છે, તે સત્યવાદી બનીને સર્વ ક્રિયાઓનાં ફળને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

इमं नो॑ देव सवितर्य॒ज्ञं प्रण॑य देवा॒व्य॑ꣳ सखि॒विद॑ꣳ सत्रा॒जितं॑ धन॒जित॑ꣳस्व॒र्जित॑म्। ऋ॒चा स्तोम॑ꣳ सम॑र्धय गाय॒त्रेण॑ रथन्त॒रं बृ॒हद् गा॑य॒त्रव॑र्त्तनि॒ स्वाहा॑॥ ८॥

પદાર્થ : હે देव-સત્ય કામનાઓને પૂર્ણ કરનાર અને सवितः-અન્તર્યામી રૂપથી આત્મામાં પ્રેરણા કરનાર જગદીશ્વર ! આપ नः-અમારા इमम्-પૂર્વોક્ત અને હવે પછી કહેવાશે તે देवाव्यम्-દિવ્ય વિદ્વાનો વા ગુણોના રક્ષક, सखिविदम्-મિત્રોને જાણનાર, सत्राजितम्-સત્યનો વિજય કરાવનાર, धनजितम्-ધનની ઉન્નતિ કરનાર, स्वर्जितम्-સુખને વધારનાર અને ऋचा-ઋગ્વેદથી જેની स्तोमम्-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, यज्ञम्-વિદ્યા અને ધર્મનો સંયોગ કરાવનાર યજ્ઞને स्वाहा-સત્ય ક્રિયાથી प्रणय-પ્રાપ્ત કરાવો.

गायत्रेण-ગાયત્રી આદિ છંદથી જ गायत्रवर्त्तनि-ગાયત્રી આદિ છંદોની ગાનવિદ્યાને बृहत्-મહાન रथन्तरम्-ઉત્તમ યાનોથી જેના દ્વારા પાર કરાય તે માર્ગને समर्धय-સારી રીતે વધારો. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઈર્ષા, દ્વેષ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને, ઈશ્વરની સમાન સર્વની સાથે મિત્રભાવ રાખે છે, તે વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૮)

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। आद॑दे गाय॒त्रेण॒ छन्द॑साङ्गिर॒स्वत्पृ॑थिव्याः स॒धस्था॑द॒ग्निं पु॑री॒ष्य॒मङ्गिर॒स्वदाभ॑र॒ त्रैष्टु॑भेन॒ छन्द॑साङ्गि-र॒स्वत्॥ ९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! હું જે त्वा-આપને देवस्य-સૂર્ય આદિ સર્વ જગતને પ્રકાશ આપનાર અને सवितुः-સર્વ ઐશ્વર્યમાં प्रसवे-નિષ્પન્ન ઐશ્વર્યમાં अश्विनोः-પ્રાણ અને ઉદાનના बाहुभ्याम्-બલ અને આકર્ષણથી पूष्णः-પુષ્ટિકારક વિદ્યુત્‌થી हस्ताभ्याम्-ધારણ અને આકર્ષણથી अङ्गिरस्वत्-અંગારા સમાન आददे-ગ્રહણ કરું છું.

આપ गायत्रेण-ગાયત્રી મંત્રથી પ્રતિપાદિત छन्दसा-આનંદદાયક અર્થની સાથે पृथिव्याः-પૃથિવીના सधस्थात्-એક સ્થાનથી अङ्गिरस्वत्-પ્રાણોની સમાન અને त्रैष्टुभेन-ત્રિષ્ટુપ્‌થી નીકળેલા छन्दसा-સ્વતંત્ર અર્થની સાથે अङ्गिरस्वत्-ચિહ્નોની સમાન पुरीष्यम्-જલને ઉત્પન્ન કરનાર अग्निम्-વિદ્યુત્ આદિ ત્રણ પ્રકારના અગ્નિને आ+भर-ધારણ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની સૃષ્ટિનાં ગુણોના જ્ઞાતા વિદ્વાનની સેવા કરીને, પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન અગ્નિનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. (૯)

अभ्रि॑रसि॒ नार्य॑सि॒ त्वया॑ व॒यम॒ग्निꣳ श॑केम॒ खनि॑तुꣳ स॒धस्थ॒ आ। जाग॑तेन॒ छन्द॑साङ्गिर॒स्वत्॥ १०॥

પદાર્થ : હે શિલ્પી ! જે त्वया-તારી સાથે सधस्थे-એક સ્થાનમાં વિદ્યમાન वयम्-અમે જે अभ्रिः-લોખંડથી બનેલ ભૂમિ ખોદવાનું સાધન પાવડો છે, જે નર માટે नारी-નારીની સમાન કાર્યોને સિદ્ધ કરનાર असि-છે, જેથી શિલ્પીઓ ભૂગર્ભ વિદ્યાને જાણી શકે માટે તેને ગ્રહણ કરીને जागतेन-જગતી મંત્રના વિધાન માટે छन्दसा-સુખદાયક સ્વતંત્ર સાધનથી अङ्गिरस्वत्-પ્રાણોની સમાન अग्निम्-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિને खनितुम्-ખોદવા માટે आ+शकेम-સર્વ રીતે સમર્થ બની શકે તેને [અભ્રિને]તું બનાવ (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે અભ્રિ-ખોદવા આદિના ઉત્તમ સાધનોથી પૃથિવી આદિને ખોદીને, અગ્નિથી સંયુક્ત કરીને, સુવર્ણ આદિનું નિર્માણ કરવું જોઈએ પરન્તુ પ્રથમ ભૂગર્ભ સંબંધી પદાર્થ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને તેમ કરી શકે છે, તેમ નિશ્ચિત જાણવું જોઈએ. (૧૦)

हस्त॑ऽआ॒धाय॑ सवि॒ता बिभ्र॑द॒भ्रिꣳ हि॒र॒ण्ययी॑म्।

अ॒ग्नेर्ज्योति॑र्नि॒चाय्य॑ पृथि॒व्याऽअध्याभ॑र॒दानु॑ष्टुभेन॒ छन्द॑साङ्गि॒र॒स्वत्॥ ११॥

પદાર્થ : सविता-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર શિલ્પી आनुष्टुभेन-અનુષ્ટુપ છંદમાં પ્રતિપાદિત छन्दसा-સ્વતંત્ર અર્થના યોગથી हिरण्ययीम्-તેજોમય ધાતુથી નિર્મિત્ अभ्रिम्-ખોદવાના સાધન વિશેષ શસ્ત્રને हस्ते-હાથમાં आधायबिभ्रत्-ધારણ કરીને अङ्गिरस्वत्-પ્રાણ સમાન अग्नेः-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિની જ્યોતિ ज्योतिः-તેજ ને निचाय्य-નિશ્ચય કરીને તેને पृथिव्याः-પૃથિવીના अधि-ઉપર आ+भरत्-સારી રીતે ધારણ કરે, પકડે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે-જેમ લોખંડ અને પથ્થરોમાં વિદ્યુત્ વિદ્યમાન છે, તેમજ સર્વ પદાર્થોમાં પ્રવિષ્ટ છે, તે વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણીને, કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને ભૂમિ પર અગ્નેય આદિ શસ્ત્રો અથવા વિમાન આદિ યાનોને સિદ્ધ કરે. (૧૧)

प्रतू॑र्त्तं वाजि॒न्नाद्र॑व॒ वरि॑ष्ठा॒मनु॑ सं॒वत॑म्।

दि॒वि ते॒ जन्म॑ पर॒मम॒न्तरि॑क्षे॒ तव॒ नाभि॑ः पृथि॒व्यामधि॒ योनि॒रित्॥ १२॥

પદાર્થ : હે वाजिन्-પ્રશંસિત જ્ઞાનથી યુક્ત વિદ્વાન ! જે ते-આપની શિલ્પવિદ્યા દ્વારા दिवि-સૂર્યના પ્રકાશમાં परमम्-ઉત્તમ जन्म-પ્રસિદ્ધિ છે, तव-આપની अन्तरिक्षे-આકાશમાં नाभिः-બંધન છે, पृथिव्याम्-પૃથિવી પર योनिः-નિમિત્ત પ્રયોજન છે, તેથી આપ વિમાન આદિ યાનોમાં બેસીને वरिष्ठाम्-અત્યંત શ્રેષ્ઠ संवतम्-ઉત્તમ રીતિથી प्रतूर्त्तम्-અતિ તીવ્ર इत्-જ अनु-પશ્ચાત્ आ + द्रव-સારી રીતે ગતિશીલ બનો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય વિદ્યા અને હસ્ત ક્રિયામાં પરમ પ્રયત્નમાં પ્રવૃત્ત થઈને વિમાન આદિ યાનો બનાવીને શીઘ્ર યાતાયાત કરે છે, ત્યારે તેને સુલભ રીતે ધન પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૨)

यु॒ञ्जाथा॒ꣳ रास॑भं यु॒वम॒स्मिन् यामे॑ वृषण्वसू। अ॒ग्निं भर॑न्तमस्म॒युम्॥ १३॥

પદાર્થ : હે वृष्णावसू-સૂર્ય અને વાયુની સમાન સુખ વરસાવનાર અથવા સુખમાં વસનારા શિલ્પીઓ તથા તેના સ્વામીજનો ! युवम्-તમે બન્ને अस्मिन्-આ यामे-યાનમાં रासभम्-જલ અને અગ્નિના વેગ-ગુણ રૂપ અશ્વને, अस्मयुम्-અમને લઈ જનાર, भरन्तम्-ધારણ કરનાર, अग्निम्-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ અથવા વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને युञ्जाथाम्-યુક્ત કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જે યાનમાં યન્ત્ર, કલા, જલ અને અગ્નિનો પ્રયોગ કરે છે, તે સુખથી દેશાન્તરમાં ગમન કરી શકે છે. (૧૩)

योगेयोगे तवस्तरं वाजेवाजे हवामहे। सखाय ऽइन्द्रमूतये॥ १४॥

પદાર્થ : હે सखायः-પરસ્પર મિત્રો ! જેમ અમે ऊतये-રક્ષા આદિ માટે योगेयोगे-પ્રત્યેક કાર્યમાં, वाजेवाजे-પ્રત્યેક સંગ્રામમાં, तवस्तरम्-અત્યંત બળવાન इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યવાન પુરુષને રાજા हवामहे-માનીએ છીએ, તેમ તમે પણ માનો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો પરસ્પર મિત્ર બનીને એક-બીજાની રક્ષા માટે અત્યંત બળવાન, ધાર્મિક રાજાનો સ્વીકાર કરે છે, તે નિર્વિઘ્ન બનીને સુખની વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૧૪)

प्रतूर्वन्नेह्यवक्रामन्नशस्ती रुद्रस्य गाणपत्यं मयोभूरेहि।

उर्वन्तरिक्षं वीहि स्वस्तिगव्यूतिरभयानि कृण्वन् पूष्णा सयुजा सह॥ १५॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! स्वस्तिगव्यूतिः-સુખથી યુક્ત માર્ગવાળા આપ सयुजा-એક સાથે સંયુક્ત થનારી पूष्णा-બલ, પુષ્ટિ યુક્ત પોતાની સેનાની सह-સાથે-સહાયથી अशस्तीः-નિંદિત શત્રુઓની સેનાઓને प्रतूर्वन्-મારતા एहि-આવો. શત્રુઓનાં દેશોનું अवक्रामन्-ઉલ્લંઘન કરીને एहि-આવો. मयोभूः-સુખને ઉત્પન્ન કરનાર આપ रुद्रस्य-શત્રુઓને રડાવનાર પોતાના સેનાપતિના गाणपत्यम्-સેના સમૂહના સ્વામિત્વને एहि-પ્રાપ્ત કરો. अभयानि-પોતાના રાજ્યમાં સર્વ પ્રાણીઓને નિર્ભયતા कृण्वन्-ઉત્પન્ન કરીને अन्तरिक्षम् + उरू-પરિપૂર્ણ આકાશમાં वीहि-વિવિધ ગતિ પ્રાપ્ત કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : રાજા સદા પોતાની સેનાને સુશિક્ષિત અને હૃષ્ટ-પુષ્ટ રાખે. જ્યારે શત્રુઓથી યુદ્ધ કરવા ઈચ્છે, ત્યારે પોતાના રાજ્યને ઉપદ્રવરહિત કરીને યુક્તિ તથા બલથી શત્રુઓનો નાશ કરે.

અથવા—શ્રેષ્ઠોનું પાલન—રક્ષા કરીને સર્વત્ર સુંદર કીર્તિનો પ્રસાર કરે. (૧૫)

पृथिव्याः सधस्थादग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वदाभराग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वदच्छेमोऽग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वद्भरिष्यामः॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ અમે पृथिव्याः-ભૂમિ વા અન્તરિક્ષના सधस्थात्-એક સ્થાનથી अङ्गिरस्वत्-પ્રાણોની સમાન पुरीष्यम्-ઉત્તમ સુખ આપનાર अग्निम्-સ્થૂલ અથવા વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને अच्छ-ઉત્તમ રીતિથી इमः-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, અને જેમ अङ्गिरस्वत्-પ્રાણોની સમાન पुरीष्यम्-ઉત્તમ સુખદાયક

अग्निम्-અન્તરિક્ષસ્થ વિદ્યુત્‌ને भरिष्यामः-ધારણ કરીએ, તેમ આપ પણ अङ्गिरस्वत्-સૂર્યની સમાન पुरीष्यम्-ઉત્તમ સુખદાયક अग्निम्-પૃથિવી પર વિદ્યમાન અગ્નિને आ + भर-ધારણ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે વિદ્વાનોનું અનુસરણ કરવું જોઈએ. અવિદ્વાનોનું નહિ. અને સર્વથા ઉત્સાહથી અગ્નિ આદિ પદાર્થોની વિદ્યાનું ગ્રહણ કરીને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

अन्वग्निरुषसामग्रमख्यदन्वहानि प्रथमो जातवेदाः।
अनु सूर्यस्य पुरुत्रा च रश्मीननु द्यावापृथिवीऽआततन्थ॥ १७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જેમ प्रथमः + जातवेदाः-ઉત્પન્ન થયેલા પદાર્થોમાં પ્રથમથી જ વિદ્યમાન સૂર્યલોક અને अग्निः + उषसाम्-ઉષાકાલથી अग्रम्-પ્રથમ જ अहानि દિવસોને अन्वख्यत्-પ્રસિદ્ધ કરે છે, सूर्यस्य-સૂર્યના अग्रम्-પ્રથમ पुरुत्रा-અનેક रश्मीन्-કિરણોને अन्वाततन्थ-ફેલાવે છે, અને द्यावापृथिवीच-સૂર્ય અને પૃથિવી લોકને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ આપ વિદ્યાના વ્યવહારની પ્રવૃત્તિ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ કારણ કાર્યરૂપ વિદ્યુત્ =અગ્નિ અનુક્રમથી સૂર્ય, ઉષા અને દિવસોને ઉત્પન્ન કરીને પૃથિવી આદિને પ્રકાશિત કરે છે; તેમ વિદ્વાનોએ સુશિક્ષા કરીને, બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યા, ધર્માચરણ અને સુશીલતાનો સર્વત્ર પ્રચાર કરીને, સર્વજનોને જ્ઞાન અને આનંદથી પ્રકાશિત કરવા જોઈએ. (૧૭)

आगत्य वाज्यध्वानꣳ सर्वा मृधो विधूनुते।
अग्निꣳ सधस्थे महति चक्षुषा निचिकीषते॥ १८॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! આપ જેમ वाजी-વેગવાન ઘોડાઓ अध्वानम्-પોતાના માર્ગને आगत्य-પ્રાપ્ત કરીને सर्वाः-સર્વ मृधः-સંગ્રામોને विधूनुते-કંપાયમાન કરે છે, અને જેમ ગૃહસ્થ પુરુષ चक्षुषा-નેત્રોથી महति-સુંદર-વિશાળ सधस्थे-એક સ્થાનમાં अग्निम्-અગ્નિનું निचिकीषते-ચયન કરવા ઈચ્છે છે, તેમ સર્વ સંગ્રામોને કંપાયમાન કરો તથા પ્રત્યેક ઘરોમાં વિદ્યાનો પ્રચાર કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોએ ઘોડાની સમાન ગમન-આગમન કરીને, શત્રુઓને જીતીને, આગ્નેયાસ્ત્ર-વિદ્યાને સિદ્ધ કરીને, પોતાના બલાબલનો વિચાર કરીને, રાગ-દ્વેષ આદિ દોષોને શાન્ત કરીને, અધર્મી પુરુષોને જીતવા જોઈએ. (૧૮)

आक्रम्य वाजिन् पृथिवीमग्निमिच्छ रुचा त्वम्।
भूम्या वृत्वाय नो ब्रूहि यतः खनेम तं वयम्॥ १९॥

પદાર્થ : હે वाजिन्-પ્રશંસિત જ્ઞાનયુક્ત સભાપતિ વિદ્વાન રાજન્ ! त्वम्-આપ रुचा-પ્રીતિથી શત્રુઓને आक्रम्य-પદાક્રાન્ત કરીને, पृथिवीम्-પૃથિવીનું રાજ્ય અને अग्निम्-અગ્નિ વિદ્યાની इच्छ-ઈચ્છા કરો.

भूम्याः-પૃથિવી પર नः-અમને वृत्वाय-સ્વીકાર કરીને ब्रूहि-ભૂગર્ભવિદ્યા અને અગ્નિવિદ્યાનો ઉપદેશ કરો, यतः-જેથી वयम्-અમે तम्-તે વિદ્યામાં खनेम-પ્રવિષ્ટ થઈએ-પ્રાપ્ત કરીએ.

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ભૂગર્ભવિદ્યા અને અગ્નિવિદ્યા દ્વારા પાર્થિવ પદાર્થોની સુપરીક્ષા કરીને સુવર્ણ આદિ

રત્નોને ઉત્સાહ પૂર્વક પ્રાપ્ત કરે. તેમજ જે ખોદવાવાળા નોકર-મજૂર લોકો છે, તેને પણ ભૂગર્ભ અને અગ્નિવિદ્યાનો ઉપદેશ કરે. (૧૯)

द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी सधस्थमात्मान्तरिक्षꣳ समुद्रो योनिः।

विख्याय चक्षुषा त्वमभि तिष्ठ पृतन्यतः॥ २०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન રાજન્ ! જે ते-આપના द्यौः પ્રકાશ સમાન વિનયયુક્ત पृष्ठम्-પાછળનો વ્યવહાર છે, पृथिवी-પૃથિવીની સમાન सधस्थम्-વિશાળ સ્થાન છે, अन्तरिक्षम्-આકાશ સમાન અવિનાશી ક્ષોભરહિત-ધૈર્યયુક્ત आत्मा-પોતાનું સ્વરૂપ છે, समुद्रः-સમુદ્ર સમાન योनिः-નિમિત્ત-પ્રયોજન છે, તે त्वम्-આપ चक्षुषा-વિચારની સાથે-વિવેકથી विख्याय-પોતાની ઐશ્વર્ય પ્રસિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને पृतन्यतः-પોતાની સેનાને લડાવવાને ઈચ્છુક મનુષ્ય-શત્રુજનની अभि-સન્મુખ तिष्ठ-સ્થિત કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ન્યાયમાર્ગ પર ચાલનાર, દૃઢ ઉત્સાહી, દૃઢ સ્થાન અને દૃઢ આત્મા યુક્ત છે. તથા - જેનું પ્રયોજન વિવેક સાધ્ય છે, તેની સેના વીર હોય છે. તે નિશ્ચિત વિજય પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ બને છે. (૨૦)

उत्क्राम महते सौभगायास्मादास्थानाद् द्रविणोदा वाजिन्।

वयꣳ स्याम सुमतौ पृथिव्याऽअग्निं खनन्तऽउपस्थेऽअस्याः॥ २१॥

પદાર્થ : હે वाजिन्-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત વિદ્વાન ! જેમ द्रविणोदाः-ધનધાતા अस्याः-આ पृथिव्याः-ભૂમિના अस्मात्-આ आस्थानात्-નિવાસ સ્થાનથી उपस्थे-સમીપમાં अग्निम्-અગ્નિવિદ્યાની खनन्तः-શોધ કરતાં वयम्-અમે महते-મહાન सौभगाय-સુંદર ઐશ્વર્ય માટે सुमतौ-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાં પ્રવૃત્ત स्याम-થઈએ છીએ, તેમ આપ उत्क्राम-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે આ સંસારમાં ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. પરસ્પર સંમતિ કરીને પૃથિવી આદિથી રત્નોને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૨૧)

उदक्रमीद् द्रविणोदा वाज्यर्वाकः सुलोकꣳ सुकृतं पृथिव्याम्।

ततः खनेम सुप्रतीकमग्निꣳ स्वो रुहाणाऽअधिनाकमुत्तमम्॥ २२॥

પદાર્થ : હે ભૂગર્ભ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન ! જેમ द्रविणोदाः-ધનદાતા આપ જેમ वाजी-બળવાન अर्वा-ઘોડા ચાલે-ઉછળે છે, તેમ पृथिव्याम्-ભૂમિથી अधि + उदक्रमीत्-સર્વાધિક ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરો. सुकृतम्-ધર્માચરણથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય, सुलोकम्-દર્શનીય, उत्तमम्-અતિશ્રેષ્ઠ, नाकम्-સર્વ દુઃખોથી રહિત સુખને अकः-સિદ્ધ-પ્રાપ્ત કરો. ततः-ત્યારપછી स्वः-સુખપૂર્વક रुहाणाः-પ્રાપ્ત કરતાં અમે પણ આ પૃથિવી પર सुप्रतीकम्-સુંદર પ્રીતિનો વિષય अग्निम्-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની खनेम-શોધ કરીએ-પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપણે સર્વ મળીને, જેમ પૃથિવી પર ઘોડો ચાલે છે, તેમ પુરુષાર્થી બનીને, પૃથિવી આદિની વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, દુઃખોને દૂર કરીને, સર્વોત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૨)

आ त्वा जिघर्मि मनसा घृतेन प्रतिक्षियन्तं भुवनानि विश्वा।
पृथुं तिरश्चा वयसा बृहन्तं व्यचिष्ठमन्नै रभसं दृशानम्॥ २३॥

પદાર્થ : હે જ્ઞાન ઈચ્છુક પુરુષ ! જેમ હું मनसा-મન તથા घृतेन-ઘૃતથી યુક્ત विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોકસ્થ વસ્તુઓમાં प्रतिक्षियन्तम्-પ્રત્યક્ષ નિવાસ અને નિશ્ચયકારક, तिरश्चा-તિરછી ગતિ રૂપ वयसा-જીવનથી पृथुम्-વિશાળ અને बृहन्तम्-મહાન अन्नैः-જવ આદિ અન્નોની સાથે रभसम्-બલયુક્ત व्यचिष्ठम्-વેગથી ફેંકનાર दृशानम्-દર્શનીય વાયુના ગુણોને आजिघर्मि-સારી રીતે પ્રકાશિત કરું છું-ધારણ કરું છું, તેમ त्वा-આપને પણ એ વાયુના ગુણોને ધારણ કરાવું છું. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય અગ્નિ દ્વારા સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોને વાયુમાં નાખીને-પહોંચાડીને, તે સુગંધિત વાયુથી નીરોગ બનીને દીર્ઘાયુને પ્રાપ્ત કરે. (૨૩)

आ विश्वतः प्रत्यञ्चं जिघर्म्यरक्षसा मनसा तज्जुषेत।
मर्य्यश्री स्पृहयद्वर्णोऽअग्निर्नाभिमृशे तन्वा जर्भुराणः॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! न-જેમ विश्वतः-સર્વ તરફથી अग्निः-વિદ્યુત્ અને પ્રાણવાયુ શરીરમાં વ્યાપક બનીને अभिमृशे-સહન કરનાર માટે હિતકારક છે, જેમ तन्वा-શરીર દ્વારા जर्भुराणः-શીઘ્ર હાથ-પગ આદિ અંગોને ગતિમાન કરતા स्पृह्यद्वर्णः-ઇચ્છાવાળાએ સ્વીકાર્યા સમાન मर्यश्रीः-મનુષ્યની શોભા સમાન વાયુની સમાન વેગવાન બનીને, હું જે प्रत्यञ्चम्-શરીરને નિરંતર ગતિ આપનાર વિદ્યુત્‌ને अरक्षसा-રાક્ષસોની દુષ્ટતાથી રહિત मनसा-ચિત્તથી आजिघर्मि-પ્રકાશિત કરું છું, તેમ तत्-તે તેજનું-અગ્નિનું जुषेत-તું સેવન કર. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરાવનાર અગ્નિ આદિ પદાર્થોને જાણીને, તેમને કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને શ્રીમાન-ધનવાન બનો. (૨૪)

परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्। दधद्रत्नानि दाशुषे॥ २५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે वाजपतिः અન્નાદિના રક્ષક ગૃહસ્થ સમાન, कविः-ક્રાન્તદર્શી, દાની ગૃહસ્થ પુરુષ, दाशुषे-દાન આપવા યોગ્ય વિદ્વાન માટે रत्नानि-સુવર્ણ આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થ दधत्-ધારણ કરનાર સમાન अग्निः-પ્રકાશમાન પુરુષ हव्यानि-આપવા યોગ્ય વસ્તુઓને परि-સર્વ તરફથી अक्रमीत्-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તું જાણ. (૨૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન પુરુષ અગ્નિ દ્વારા પૃથિવસ્થ પદાર્થોથી ધન પ્રાપ્ત કરીને, શ્રેષ્ઠ માર્ગ પર ચાલનારા સત્પાત્રોમાં દાન કરીને, વિદ્યાના પ્રચારથી સર્વને સુખ પ્રદાન કરે. (૨૫)

परि॑ त्वाग्ने॒ पुरं॑ व॒यं विप्र॑ꣳ सहस्य धीमहि।
धृ॒षद्व॑र्णं दि॒वेदि॑वे ह॒न्तारं॑ भङ्गु॒रा-व॑ताम्॥ २६॥

પદાર્થ : હે सहस्य-સ્વ બલના ઈચ્છુક अग्ने-અગ્નિવત્ વિદ્યાથી પ્રકાશમાન વિદ્વાન પુરુષ ! જેમ वयम्-અમે दिवेदिवे-પ્રતિદિન भङ्गुरावताम्-કુત્સિત સ્વભાવ-વાળાના पुरम्-નગરને અગ્નિ સમાન हन्तारम्-સંહારનાર, धृषद्वर्णम्-ઉત્તમ વર્ણયુક્ત-રૂપવાન विप्रम्-વિદ્વાન त्वा-આપને परि-સર્વ રીતે धीमहि-ધારણ કરે, તેમ તું અમને ધારણ કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાજન ન્યાયથી પ્રજાના રક્ષક, અગ્નિ સમાન શત્રુઓના સંહારક અને સર્વદા સુખ આપનાર પુરુષને સેનાપતિ બનાવે. (૨૬)

त्वम॑ग्ने द्यु॒भिस्त्वमा॑शुशु॒क्षणि॒स्त्वम॒द्भ्यस्त्वमश्म॑न॒स्परि॑ ।
त्वं वने॑भ्य॒स्त्वमोष॑धीभ्य॒स्त्वं नृ॒णां नृ॑पते जाएसे॒ शुचि॑ः॥ २७॥

પદાર્થ : હે नृपते-મનુષ્યોના પાલક अग्ने-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન ન્યાયાધીશ રાજન્ ! त्वम्-આપ द्युभिः સૂર્ય સમાન પ્રકાશમાન ન્યાયાદિ ગુણોથી યુક્ત છો, त्वम्-આપ आशुशुक्षणिः-શીઘ્ર દુષ્ટોના સંહારક છો, त्वम्-આપ अद्भ्यः વાયુ વા જલોથી, त्वम्-આપ अश्मनः-મેઘ વા પાષાણાદિથી, त्वम्-આપ वनेभ्यः-વન વા કિરણોથી, त्वम्-આપ ओषधीभ्यः સોમલતાદિ ઔષધિઓથી, त्वम्-આપ नृणाम्-મનુષ્યોમાં शुचिः-પવિત્ર परि-સર્વ રીતે जायसे-પ્રસિદ્ધ છો, તેથી આપનો આશ્રય ગ્રહણ કરીને અમે પણ એવા બનીએ. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે રાજા અથવા સભાસદ પુરુષ સર્વ પદાર્થોનાં ગુણોનું ગ્રહણ, વિદ્યા અને ક્રિયા કૌશલથી ઉપકારોનું ગ્રહણ કરી શકે છે, અને જે ધર્માચરણથી પવિત્ર તથા શીઘ્રકારી હોય છે, તે સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, અન્ય આળસુ મનુષ્ય નહિ. (૨૭)

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्या॑ं पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। पृथि॒व्याः स॒धस्था॑द॒ग्निं पु॑री॒ष्य॒मङ्गि॒र॒स्वत् ख॑नामि। ज्योति॑ष्मन्तं त्वाग्ने सु॒प्रती॑क॒मज॑स्रेण भा॒नु॒ना दीद्य॑तम्। शिवं प्र॒जाभ्योऽहि॑ꣳसन्तं पृथि॒व्याः स॒धस्था॑द॒ग्निं पु॑री॒ष्य॒मङ्गि॒र॒स्वत् ख॑नामः॥ २८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-ભૂગર્ભ અને શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન ! જેમ હું सवितुः-સર્વ જગતના ઉત્પાદક देवस्य-પ્રકાશમાન ઈશ્વરના प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલ આ સંસારમાં अश्विनोः-આકાશ અને પૃથિવીના बाहुभ्याम्-આકર્ષણ અને ધારણ શક્તિ સમાન ભુજાઓથી, पूष्णः-પ્રાણના બલ અને પરાક્રમ સમાન हस्ताभ्याम्-હાથોથી त्वा-આપને આગળ કરીને पृथिव्याः ભૂમિના सधस्थात्-એક સ્થાનથી पुरीष्यम्-પૂર્ણ સુખદાતા ज्योतिष्मन्तम्-અનેક જ્યોતિયુક્ત अजस्रेण-નિરંતર भानुना-દીપ્તિથી दीद्यतम्-અત્યંત પ્રકાશમાન पुरीष्यम्-

સુંદર રક્ષક अग्निम्-વાયુસ્થ વિદ્યુત્‌ને अङ्गिरस्वत्-વાયુ સમાન खनामि-સિદ્ધ કરું છું.

જેમ त्वा-આપનો આશ્રય ગ્રહણ કરીને અમે पृथिव्याः-અન્તરિક્ષના सधस्थात्-એક પ્રદેશથી अङ्गिरस्वत्-સૂક્ષ્મરૂપ વાયુના સમાન વિદ્યમાન, अहिंसन्तम्-દુઃખરહિત, पुरीष्यम्-પાલક સાધનોમાં ઉત્તમ વિદ્યમાન, प्रजाभ्यः પ્રજા માટે शिवम्-મંગલકારક अग्निम्-અગ્નિને खनामः-પ્રકટ કરીએ છીએ. તેમ સર્વજનો કર્યા કરે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન સર્વત્ર વિદ્યમાન વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને સર્વ પદાર્થોથી સાધનો-ઉપસાધનો દ્વારા પ્રસિદ્ધ-પ્રકટ કરીને તેનો કાર્યોમાં પ્રયોગ કરે છે, તેઓ મંગલમય ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. કોઈપણ ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થ વિદ્યુત્‌ની વ્યાપ્તિથી રહિત નથી. એમ સર્વ લોકો જાણે. (૨૮)

अपां पृष्ठमसि योनिरग्नेः समुद्रमभितः पिन्वमानम्।

वर्धमानो महाँ२आ च पुष्करे दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथस्व॥ २९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેથી આપ अग्नेः-સર્વત્ર વ્યાપક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિથી ગતિ કરનારા, योनिः-સંયોગ-વિભાગને જાણનારા महान्-પૂજનીય वर्धमानः-વિદ્યા તથા ક્રિયાની કુશળતાથી નિત્ય વૃદ્ધિ કરનારા આપ असि-છો, તેથી अभितः-સર્વ તરફથી पिन्वमानम्-જલ વરસાવનાર, अपाम्-જલોના पृष्ठम्-આધારભૂત, पुष्करे-અન્તરિક્ષમાં વિદ્યમાન, दिवः-દીપ્તિની मात्रया-માત્રાથી વધનાર, समुद्रम्-જેનાથી જલ ઉપર તરફ જાય છે તે સમુદ્રને च-અને તેમાં વિદ્યમાન સર્વ મૂર્ત પદાર્થોને જાણીને वरिम्णा-અધિકતાથી आ+प्रथस्व-ઉત્તમ સુખોનો વિસ્તાર કરનાર બનો. (૨૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ પૃથિવી આદિ મૂર્ત પદાર્થોમાં વિદ્યુત્ વિદ્યમાન છે, તેમ જલમાં પણ છે, એમ માનીને તેના દ્વારા ઉપકાર ગ્રહણ કરીને મહાન વિસ્તૃત સુખોને સિદ્ધ કરો. (૨૯)

शर्म च स्थो वर्म च स्थोऽछिद्रे बहुलेऽउभे।

व्यचस्वती संवसाथां भृतमग्निं पुरीष्यम्॥ ३०॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને शर्म-ગૃહાશ્રમ च-અને તેની સામગ્રીને પ્રાપ્ત થયેલ स्थः-છો, वर्म-સર્વ તરફથી સુરક્ષા च-અને તેના સુરક્ષાના સહાયક પદાર્થોને उभे-બે बहुले-અધિક પદાર્થોને ગ્રહણ-પ્રાપ્ત કરાવનાર, व्यचस्वती-સુખની પ્રાપ્તિથી યુક્ત अच्छिद्रे-નિર્દોષ વિદ્યુત્ અને અન્તરિક્ષની સમાન જે ઘરમાં ધર્મ, અર્થનાં કાર્યો स्थः-છે, તે ઘરમાં भृतम्-પોષણ કરનાર पुरीष्यम्-રક્ષકોમાં શ્રેષ્ઠ अग्निम्-અગ્નિને ગ્રહણ કરીને संवसाथाम्-ઉત્તમ રીતે આચ્છાદન કરીને વસો. (૩૦)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થો બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક સત્કાર, ઉપકાર અને ક્રિયા-કુશળતાથી વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને, અનેક દ્વારો યુક્ત, સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક, સર્વ તરફથી સુરક્ષિત, અગ્નિ-વિદ્યુત્ આદિ સાધનોથી યુક્ત ઘરો બનાવીને તેમાં સુખપૂર્વક નિવાસ કરે. (૩૦)

संवसाथाᳪस्वर्विदा समीचीऽउरसा त्मना।
अग्निमन्तर्भरिष्यन्ती ज्योतिष्मन्तमजस्रमित्॥ ३१॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને समीची-સારી રીતે પદાર્થોને જાણનારા भरिष्यन्ती-સર્વનું પાલન કરનારા અને स्वर्विदा-સુખને પ્રાપ્ત કરનારા અને ज्योतिष्मन्तम्-પ્રશંસનીય જ્યોતિથી યુક્ત अन्तः સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને इत्-જ त्मना-આત્મા અને उरसा-અન્તઃકરણથી अजस्रम्-નિરંતર संवसाथाम्-ઉત્તમરીતિથી આચ્છાન કરો, તો લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરી શકો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્યુત્‌ને ઉત્પન્ન કરીને ગ્રહણ કરી શકે છે, તે વ્યવહારમાં કદી દરિદ્ર બનતો નથી. (૩૧)

पुरीष्योऽसि विश्वभराऽअथर्वा त्वा प्रथमो निरमन्थदग्ने।
त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत। मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः॥ ३२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-ક્રિયા-કુશળતાને સિદ્ધ કરનાર વિદ્વાન્ ! જે वाघतः-શાસ્ત્રવિદ્-મેધાવી આપ पुरीष्यः-પશુઓને સુખ આપનાર असि-છો, તે त्वा- આપના अथर्वा-રક્ષક प्रथमः-ઉત્તમ विश्वभराः સર્વના પોષક વિદ્વાન विश्वस्य-સમસ્ત સંસારના मूर्ध्नः-શિર સમાન पुष्करात्-અન્તરિક્ષથી अधि-સમીપ અગ્નિનું निः + अमन्थत्-નિત્ય મંથન કરીને ગ્રહણ કરે છે, તે ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે આ જગતમાં વિદ્વાન છે, તે સુવિચાર અને પુરુષાર્થ દ્વારા અગ્નિ-આદિ વિદ્યાને સિદ્ધ કરીને તેની સર્વને શિક્ષા આપે. (૩૨)

तमु त्वा दध्यङ्ङृषिः पुत्रऽईधेऽअथर्वणः। वृत्रहणं पुरन्दरम्॥ ३३॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ अथर्वणः-રક્ષક વિદ્વાનના पुत्रः-પવિત્ર શિષ્ય दध्यङ्-સુખોને ધારણ કરનાર અગ્નિ આદિ પદાર્થોના જ્ઞાતા છે, તે ऋषिः-વેદાર્થના જાણનાર उ-તર્ક-વિતર્ક સાથે સકલ વિદ્યાઓના જાણકાર બનીને જે वृत्रहणम्-સૂર્ય સમાન શત્રુનાશક અને पुरन्दरम्-શત્રુઓના નગરનો નાશ કરનાર આપને ईधे-તેજસ્વી કરે છે, તેમ तम्, त्वा-તે આપને સર્વ વિદ્વાનો વિદ્યા અને વિનયથી ઉન્નતિ યુક્ત કરે. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે સાંગોપાંગ વેદોનું અધ્યયન કરીને વિદ્વાન અને વિદુષીઓ હોય, તે રાજપુત્ર આદિ અને રાજકન્યા આદિને વિદ્વાન અને વિદુષી બનાવીને, તેના દ્વારા ધર્મપૂર્વક રાજ્યવ્યવહાર અને પ્રજા વ્યવહાર કરાવે. (૩૩)

तमु त्वा पाथ्यो वृषा समीधे दस्युहन्तमम्। धनञ्जयᳪ रणेरणे॥ ३४॥

પદાર્થ : હે વીર પુરુષ ! જે આપ पाथ्यः અન્ન-જલ આદિ પદાર્થોનો ઉત્તમ રીતિથી ઉપયોગ કરનાર, તથા वृषा-પરાક્રમ, रणेरणे-શૂરવીરતા આદિ યુક્ત વિદ્વાન છે, तम्-પૂર્વોક્ત પદાર્થ વિદ્યાને જાણનાર,

धनञ्जयम्-શત્રુઓના ધનને જીતનાર उ-અને दस्युहन्तमम्-દસ્યુઓનું અત્યંત હનન કરનાર त्वा-આપને વીરોની સેના દ્વારા વિદ્વાન રાજધર્મની શિક્ષાથી समीधे-ઉદ્દીપ્ત કરે. (૩૪)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ રાજપુરુષ આપ્ત વિદ્વાનોથી વિનય અને યુદ્ધવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, પ્રજાની રક્ષા માટે ચોરોનો નાશ કરીને, શત્રુઓને જીતીને પરમ ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરે. (૩૪)

सीदं होतः स्वऽउं लोके चिकित्वान्त्सादयां यज्ञꣳसुकृतस्य योनौं।

देवावीर्देवान् हविषां यजास्यग्नें बृहद्यजमाने वयोंधाः॥ ३५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન ! होतः-દાન આપનાર चिकित्वान्-વિજ્ઞાનથી યુક્ત આપ लोके-દર્શનીય स्वे-સુખમાં सीद-સ્થિત-વિરાજમાન રહો. सुकृतस्य-ઉત્તમ કર્મ કરનાર ધાર્મિક પુરુષના योनौ-કારણમાં यज्ञम्-ધર્મયુક્ત રાજ્ય અને પ્રજાના વ્યવહારને सादय-પ્રાપ્ત કરાવો.

देवावीः-વિદ્વાનોથી રક્ષિત અને શિક્ષિત થતા આપ हविषा-દેવા-લેવા યોગ્ય ન્યાયથી देवान्-વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોનો यजासि-સત્કાર, સેવા અને સંગ કરો તથા यजमाने-યજમાને-રાજા આદિ મનુષ્યોમાં वयः-દીર્ઘ આયુને धाः-ધારણ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો આ જગતમાં બે કર્મો નિરંતર કરે. પ્રથમ-બ્રહ્મચર્ય અને જિતેન્દ્રિયતા આદિની શિક્ષાથી શરીરનું આરોગ્ય અને બલ આદિથી યુક્ત દીર્ઘ આયુ કરે.

બીજું-વિદ્યા અને ક્રિયા-કુશળતા ગ્રહણ કરીને આત્મિક બલને પ્રાપ્ત કરે.

જેથી સર્વ મનુષ્યો શારીરિક અને આત્મિક બલથી યુક્ત બનીને સદા આનંદમાં રહે. (૩૫)

नि होतां होतृषदंने विदांनस्त्वेषो दींदिवाँ२ऽअंसदत्सुदक्षंः।

अदंब्धव्रतप्रमतिर्वसिंष्ठः सहस्रम्भरः शुचिंजिह्वोऽअग्निः॥ ३६॥

પદાર્થ : જે જન મનુષ્યજન્મને પ્રાપ્ત કરીને होतृषदने-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાનોના સ્થાન-ઘરમાં, दीदिवान्-ધર્મયુક્ત વ્યવહાર કરવાને ઈચ્છુક, त्वेषः-શુભ ગુણોથી પ્રકાશમાન, विदानः જ્ઞાન વૃદ્ધિનો જિજ્ઞાસુ, शुचिजिह्वः-સત્ય ભાષણથી પવિત્ર વાણીયુક્ત, सुदक्षः-ઉત્તમ બલયુક્ત, अदब्धव्रतप्रमतिः-રક્ષા કરવા યોગ્ય ધર્માચરણ રૂપી વ્રતોથી ઉત્તમ બુદ્ધિયુક્ત, वसिष्ठः-અત્યંત સમીપ રહેનાર-અન્તેવાસી, सहस्रम्भरः-અસંખ્ય શુભ ગુણોને ધારણ કરનાર, होता-શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર પુરુષ નિરંતર न्यसदत्-વિદ્યમાન રહે, તો સમસ્ત સુખને પ્રાપ્ત કરે. (૩૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે માતા-પિતા પોતાનાં પુત્રો અને કન્યાઓને સુશિક્ષા આપીને પછી વિદ્વાનો અને વિદુષીઓની સમીપ ચિરકાલ સુધી રાખીને અધ્યયન કરાવે;

ત્યારે-તે સૂર્ય સમાન કુલ અને દેશના પ્રકાશક બની શકે છે. (૩૬)

सꣳसींदस्व महाँ२ऽअंसि शोचंस्व देववीतंमः।

वि धूममग्ने अरुषं मियेध्य सृज प्रशस्त दर्शतम्॥ ३७॥

પદાર્થ : હે प्रशस्त-પ્રશંસનીય, मियेध्य-દુષ્ટોને દૂર કરનાર, अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન ! देववीतमः-વિદ્વાનોને અત્યંત ઈષ્ટ આપ विधूमम्-નિર્મલ, दर्शतम्-દર્શનીય, अस्त्रम्-સુંદર સ્વરૂપને सृज-સિદ્ધ કરો અને शोचस्व-પવિત્ર બનો.

જે કારણે આપ महान्-મહાન ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાન્ असि-છો, તેથી અધ્યાપન કાર્યમાં-સ્થાનમાં संसीदस्व-વિરાજમાન રહો. (૩૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્વાનોના અત્યંત પ્રિય, સુંદર રૂપ, ગુણ અને લાવણ્યથી યુક્ત, પવિત્ર, મહાન, આપ્ત વિદ્વાન હોય, તે જ શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરાવી શકે છે. (૩૭)

अपो देवीरुपसृज मधुमतीरयक्ष्माय प्रजाभ्यः।
तासामास्थानादुज्जिहतामोषधयः सुपिप्पलाः॥ ३८॥

પદાર્થ : હે શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય ! આપ मधुमतीः-પ્રશંસનીય મધુરાદિ ગુણયુક્ત देवीः-પવિત્ર अपः-જલોને उपसृज-સિદ્ધ કરો, જેથી तासाम्-તે જલોના अस्थानात्-આશ્રયથી सुपिप्पलाः-સુંદર ફળોયુક્ત ओषधयः-સોમલતા આદિ ઔષધિઓને प्रजाभ्यः-રક્ષા કરવા યોગ્ય પ્રાણીઓને अयक्ष्माय-યક્ષ્મા આદિ રોગોના નિવારણ માટે उज्जिहताम्-પ્રાપ્ત થાય.

ભાવાર્થ : રાજા બે પ્રકારના વૈદ્યોનું સંરક્ષણ કરે, એક-સુગંધિ પદાર્થોના હોમથી વાયુ, વૃષ્ટિ અને ઔષધિઓને શુદ્ધ કરે. બીજા-શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય વિદ્વાન જન નિદાન આદિ દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓને સદા નીરોગ રાખે. કારણકે-આ કર્મ વિના સમાજને કદી પણ સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકતું નથી. (૩૮)

सं ते वायुर्मातरिश्वा दधातूत्तानाया हृदयं यद्विकस्तम्।
यो देवानां चरसि प्राणथेन कस्मै देव वषडस्तु तुभ्यम्॥ ३९॥

પદાર્થ : હે પત્ની રાણી ! उत्तानायाः-મહાન શુભ લક્ષણોના વિસ્તારથી યુક્ત ते-આપનું यत्-જે विकस्तम्-અનેક પ્રકારની શિક્ષાથી સંપન્ન हृदयम्-અન્તઃકરણ છે, તેને યજ્ઞથી પવિત્ર થયેલો मातरिश्वा-આકાશમાં વિચરણ કરનાર वायुः-પવન सम्+दधातु-સારી રીતે પુષ્ટ કરે.

હે देव-સ્વામિન્, ઉત્તમ સુખદાતા પતિ દેવ ! यः-જે આપ વિદ્વાન प्राणथेन-સુખના હેતુ પ્રાણવાયુથી देवानाम्-ધર્માત્મા વિદ્વાનોના જે વિવિધ પ્રકારથી શિક્ષિત હૃદયને चरसि-પ્રાપ્ત થાય છે, તે कस्मै-સુખસ્વરૂપ तुभ्यम्-આપને માટે મને वषट्-ક્રિયાની કુશળતા अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. (૩૯)

ભાવાર્થ : પૂર્ણ યુવાન પુરુષ બ્રહ્મચારિણી સાથે વિવાહ કરે, તેના પ્રત્યે અપ્રિય આચરણ કદીપણ ન કરે. જે સ્ત્રી-કન્યા જે બ્રહ્મચારીની સાથે વિવાહ કરે, તેનું અનિષ્ટ મનમાં કદી પણ વિચારે નહિ.

આ રીતે બન્ને-સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રસન્ન બનીને પ્રીતિપૂર્વક ઘરનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરે.-સંભાળે. (૩૯)

सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमासदत्स्वः।

वासोंऽअग्ने विश्वरूपꣳ संव्ययस्व विभावसो॥ ४०॥

પદાર્થ : હે विभावसो-વિવિધ પ્રકાશયુક્ત ધનથી યુક્ત अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી, ज्योतिषा-વિદ્યાપ્રકાશથી सह-યુક્ત, सुजातः-સુપ્રસિદ્ધ ગૃહસ્થ આપ स्वः-સુખદાયક, वरूथम्-શ્રેષ્ઠ, शर्म-ઘરમાં आसदत्-સારી રીતે રહો, विश्वरूपम्-વિવિધ સ્વરૂપવાળા वासः-વસ્ત્રને सम्+व्ययस्व-ધારણ કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ સુંદર વસ્ત્ર અને આભૂષણોથી શોભાયમાન બનીને ઘર આદિ વસ્તુઓને સદા પવિત્ર રાખે. (૪૦)

उदु तिष्ठ स्वध्वरावा नो देव्या धिया।

दृशे च भासा बृहता सुशुक्वनिराग्ने याहि सुशस्तिभिः॥ ४१॥

પદાર્થ : હે स्वध्वर-સજ્જન, વિદ્વાન, માનનીય વ્યવહાર કરનાર ગૃહસ્થ ! આપ નિરંતર उत्तिष्ठ-પુરુષાર્થ દ્વારા ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરીને અન્ય મનુષ્યોને સદા પ્રાપ્ત કરાવો. देव्या-શુદ્ધ વિદ્યા અને શિક્ષાથી યુક્ત धिया-બુદ્ધિ વા ક્રિયાથી नः-અમારી अव-રક્ષા કરો.

હે अग्ने-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ ! सुशुक्वनिः-ઉત્તમ પવિત્ર પદાર્થોના વિભાગ કરનાર આપ उ-તર્કથી-વિચારપૂર્વક दृशे-સુખને જોવા માટે बृहता-મહાન્ भासा-પ્રકાશરૂપ સૂર્ય સમાન सुशस्तिभिः-સુંદર, પ્રશંસનીય ગુણોથી સર્વ વિદ્યાઓને आ, याहि-પ્રાપ્ત કરો, च-અને અમારા માટે પણ સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવો. (૪૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ પવિત્ર વિદ્યા અને બુદ્ધિના દાનથી સર્વની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ. કારણ કે સુશિક્ષા વિના મનુષ્યોના સુખના માટે અન્ય કોઈ આશ્રય નથી. એથી આલસ્ય અને કપટ આદિ કુકર્મોનો ત્યાગ કરીને વિદ્યા પ્રચાર માટે સદા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૪૧)

ऊर्ध्वऽऊ षु णऽऊतये तिष्ठा देवो न सविता।

ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्भिर्विह्वयामहे॥ ४२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન અધ્યાપક ! આપ ऊर्ध्वः-ઉપર આકાશમાં વિદ્યમાન देवः-પ્રકાશક सविता-સૂર્યની न-સમાન नः-અમારી ऊतये-રક્ષા આદિ માટે सुतिष्ठ-સુસ્થિર રહો.

यत्-જે આપ अञ्जिभिः-પ્રકટ કરનાર કિરણોની સમાન वाघद्भिः-યુદ્ધ વિદ્યામાં કુશળ બુદ્ધિમાનોની સાથે वाजस्य-વિજ્ઞાનનું सनिता-સેવન કરનાર બનો. उ-તેને અમે विह्वयामहे-વિશેષ કરીને બોલાવીએ છીએ-[કામના કરીએ છીએ.] (૪૨)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો-જેમ સૂર્ય, ભૂમિ અને ચન્દ્ર આદિની ઉપર સ્થિત થઈને પોતાની જ્યોતિથી સર્વની રક્ષા કરીને પ્રકાશ કરે છે, તેમ ઉત્કૃષ્ટ ગુણોથી વિદ્યા અને ન્યાયને પ્રકાશિત કરીને સર્વ પ્રજાને સુશોભિત કરે. (૪૨)

स जा॒तो गर्भो॑ऽअसि॒ रोद॑स्यो॒रग्ने॒ चारु॒र्विभृ॑त॒ऽओष॑धीषु।
चि॒त्रः शिशु॒ः परि॒ तमा॑ᳫं॒स्य॒क्तून् प्र मा॒तृभ्यो॒ऽअधि॒ कनि॑क्रदद् गाः॥ ४३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન ! જે આપ જેમ रोदस्योः-આકાશ અને પૃથિવીમાં जातः-પ્રસિદ્ધ चारु-સુંદર ओषधीषु-સોમલતાદિ ઔષધિઓમાં विभृतः-વિશેષ રૂપમાં ધારણ અને પોષણ કરેલ चित्रः-આશ્ચર્યરૂપ गर्भः-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય સૂર્ય છે, તે मातृभ्यः-માનનીય માતા અર્થાત્ કિરણોથી तमांसि-રાત્રિરૂપ अक्तून्-અંધકારને पर्यधिकनिक्रदत्-સર્વ તરફથી અધિક ગતિ કરતા गाः-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ જ शिशुः-બાલ્યાવસ્થામાં गाः-વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરે. (૪૩)

ભાવાર્થ : જેમ બ્રહ્મચર્ય વગેરે શ્રેષ્ઠ નિયમોથી ઉત્પન્ન પુત્ર વિદ્યાઓ ભણીને માતા-પિતાને સુખી કરે છે, તેમ માતા-પિતાએ પણ પ્રજા-સંતાનોને સુખ આપવું જોઈએ. (૪૩)

स्थि॒रो भ॑व वी॒ड्व॒ङ्ग॒ऽआ॒शुर्भ॑व वा॒ज्यर्व॑न्।
पृ॒थुर्भ॑व सु॒षद॒स्त्वम॒ग्नेः पु॑रीष॒वाह॑णः॥ ४४॥

પદાર્થ : હે अर्वन्-વિજ્ઞાનવાન્ પુત્ર ! તું વિદ્યા ગ્રહણ કરવા માટે स्थिरः દૃઢ-નિશ્ચલ भव-બન.

वाजी-નીતિને પ્રાપ્ત થઈને, वीड्वङ्ग-દૃઢ અને અત્યંત બળવાન અવયવોથી યુક્ત आशुः-શીઘ્ર કાર્ય કરનાર भव-બન.

त्वम्-તું अग्नेः-અગ્નિ સંબંધી सुषदः-ઉત્તમ વ્યવહારોમાં વિદ્યમાન અને पुरीषवाहणः-પાલન આદિ શુભ કર્મોને કરનાર पृथुः-સુખનો વિસ્તાર કરનાર भव-બન. (૪૪)

ભાવાર્થ : હે ઉત્તમ સંતાનો ! તમે બ્રહ્મચર્યથી શરીરના બળને તથા વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી આત્મ બળને પૂર્ણ દૃઢ કરીને સ્થિરતાથી તેની રક્ષા કરો.

આગ્નેય આદિ અસ્ત્ર વિદ્યાથી શત્રુઓનો વિનાશ કરો. આ રીતે માતા-પિતા પોતાના સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપે. (૪૪)

शि॒वो भ॑व प्र॒जाभ्यो॒ मानु॑षीभ्य॒स्त्वम॑ङ्गिरः।
मा द्यावा॑पृथि॒वीऽअ॒भि शो॑ची॒र्मान्तरि॑क्षं॒ मा व॒नस्पती॑न्॥ ४५॥

પદાર્થ : હે अङ्गिरः-પ્રાણોની સમાન પ્રિય સુસંતાન ! त्वम्-તું मानुषीभ्यः-મનુષ્ય આદિ प्रजाभ्यः-પ્રસિદ્ધ પ્રજાઓ માટે शिवः-કલ્યાણકારી અને મંગલમય भव-બન.

द्यावापृथिवी-વિદ્યુત્ અને ભૂમિના વિષયમાં मा+अभि+शोचीः-અતિ શોક ન કર. अन्तरिक्षम्-આકાશના વિષયમાં मा-શોક ન કર. वनस्पतिन्-વડ આદિ વનસ્પતિઓનો मा-શોક ન કર. (૪૫)

ભાવાર્થ : ઉત્તમ સંતાન પ્રજા પ્રત્યે મંગલ આચરણમાં રહીને-પૃથિવી આદિ પદાર્થોના વિષયોમાં શોકરહિત રહે, પરન્તુ એ પૃથિવી આદિની રક્ષા કરીને ઉપકાર માટે ઉત્સાહથી પ્રયત્ન કરે. (૪૫)

प्रैतु वाजी कनिक्रदन्नानदद्रासभः पत्वा। भरन्नग्निं पुरीष्यं मा पाद्यायुषः पुरा। वृषाग्निं वृषणं भरन्नपां गर्भं समुद्रियम्। अग्नऽआयाहि वीतये॥ ४६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-ઉત્તમ સંતાન વિદ્વાન ! તું कनिक्रदत्-ગતિ કરનાર, नानदत्-અધિક શબ્દ કરનાર, रासभः-દાન કરવા યોગ્ય, पत्वा-ગતિશીલ વા वाजी-ઘોડાની સમાન, आयुषः-નિયત વર્ષોના જીવનથી पुरा-પૂર્વે मा + प्रैतु-મૃત્યુ ન પામે.

पुरीष्यम्-રક્ષાનાં સાધનોમાં શ્રેષ્ઠ अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને भरन्-ધારણ કરીને मा पादि-આમ-તેમ ન જાઓ.

જેમ वृषा-અતિ બલવાન, अपाम्-જલોના समुद्रियम्-સમુદ્રમાં થયેલ गर्भम्-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, वृषणम्-વર્ષા કરનાર, अग्निम्-સૂર્યને भरन्-ધારણ કરીને वीतये-વિવિધ સુખોની વ્યાપ્તિ માટે आयाहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય. (૪૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો વિષય-લોલુપતાના ત્યાગથી તથા બ્રહ્મચર્ય સેવનથી પૂર્ણ આયુને ધારણ કરીને અગ્નિ આદિ પદાર્થોના વિજ્ઞાનથી ધર્મયુક્ત વ્યવહારને ઉન્નત કરે. (૪૬)

ऋतं सत्यमृतं सत्यमग्निं पुरीष्यमङ्गिरस्वद्भरामः। ओषधयः प्रतिमोदध्वमग्निमेतं शिवमायन्तमभ्यत्र युष्माः। व्यस्यन् विश्वाऽअनिराऽअमीवा निषीदन्नोऽअप दुर्मतिं जहि॥ ४७॥

પદાર્થ : હે સુસંતાનો ! જેમ અમે ऋतम्-યથાર્થ, सत्यम्-નાશરહિત, ऋतम्-અવ્યભિચારી, सत्यम्-સત્પુરુષોમાં શ્રેષ્ઠ તથા સત્ય માનવું, બોલવું અને કરનાર, पुरीष्यम्-રક્ષાના સાધનોમાં ઉત્તમ, अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને अङ्गिरस्वत्-વાયુની સમાન भरामः-ધારણ કરીએ છીએ. અને एतम्-એ પૂર્વોક્ત आयन्तम्-પ્રાપ્ત કરેલ, शिवम्-મંગલકારી, अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને ધારણ-પ્રાપ્ત કરીને તમે પણ अभिमोदध्वम्-આનંદિત રહો. જે ओषधयः-જવ આદિ ઔષધિ युष्माः-તમારા માટે प्रति-પ્રાપ્ત થાય છે તેને અમે ધારણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો.

હે વૈદ્ય ! આપ विश्वाः-સર્વ अनिराः-સર્વથા આપવા અયોગ્ય अमीवाः-એવા રોગોની પીડાઓને व्यस्यन्-વિવિધ પ્રકારથી દૂર કરીને, अत्र-એ આયુર્વેદ વિદ્યામાં निषीदन्-વિરાજમાન બનીને नः-અમારી दुर्मतिम्-દુષ્ટ બુદ્ધિને अपजहि-સર્વ રીતે દૂર કરો. આ રીતે એ વૈદ્યની પ્રાર્થના કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો-પ્રથમ-ઋત સત્ય અર્થાત્ સૂક્ષ્મ, સત્ય કારણ બ્રહ્મને, બીજું-ઋત સત્ય અર્થાત્ અવ્યક્ત જીવને, સત્યાભાષણ આદિથી તથા પ્રકૃતિથી ઉત્પન્ન ઔષધિઓને જાણીને-

શરીરના જ્વર વગેરે રોગો તથા આત્માના અવિદ્યા આદિ રોગોને દૂર કરીને, માદક દ્રવ્યોના ત્યાગથી સુમતિને સંપાદન કરીને, સુખ પ્રાપ્ત કરીને નિત્ય આનંદમાં રહે. (૪૭)

ओषधयः प्रतिगृभ्णीत पुष्पवतीः सुपिप्पलाः।

अ॒यं वो॒ गर्भ॑ऽऋ॒त्वियः॑ प्र॒त्नꣳ स॒धस्थ॒मास॑दत्॥ ४८॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! તમે જે ओषधयः-સોમલતાદિ ઔષધિઓ છે, જેના દ્વારા अयम्-એ ऋत्वियः-સમ્યક્ ઋતુકાલને પ્રાપ્ત થયેલ गर्भः-ગર્ભ वः-તમારા प्रत्नम्-પ્રાચીન सधस्थम्-નિયત સ્થાન-ગર્ભાશયને પ્રાપ્ત થાય તે पुष्पवतीः-શ્રેષ્ઠ પુષ્પોવાળી सुपिप्पलाः-સુંદર ફળોથી યુક્ત ઔષધિઓને प्रतिगृभ्णीत-નિશ્ચયપૂર્વક ગ્રહણ કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : માતા-પિતા કન્યાઓને વ્યાકરણ આદિ ભણાવીને, વૈદ્યક શાસ્ત્રને પણ ભણાવે, જેથી તે આરોગ્યકારક ગર્ભને સંપાદન કરનારી ઔષધિઓને જાણીને, ઉત્તમ સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને સદા પ્રસન્ન રહે. (૪૮)

वि पाज॑सा पृ॒थुना॒ शोशु॑चानो॒ बाध॑स्व द्वि॒षो र॒क्षसो॒ऽअमी॑वाः।
सु॒शर्म॑णो बृह॒तः शर्म॑णि स्याम॒ग्नेर॒हꣳ सु॒हव॑स्य॒ प्रणी॑तौ॥ ४९॥

પદાર્થ : હે પતે ! જે આપ पृथुना-વિસ્તૃત તથા वि-વિવિધ પ્રકારના पाजसा-બલની સાથે शोशुचानः-અતિ પવિત્ર બનીને સદા વર્તાવ કરો, अमीवाः-રોગોની સમાન પ્રાણીઓને પીડા આપનાર रक्षसः-દુષ્ટ द्विषः-શત્રુરૂપ વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓને बाधस्व-તાડના કરો તો હું बृहतः-મહાન, सुशर्मणः-ઉત્તમ શોભાયમાન सुहवस्य-સુંદર લેવા-દેવાનો વ્યવહાર જેમાં હોય એવા अग्नेः-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન આપના शर्मणि-સુખકારક ઘરમાં અને प्रणीतौ-ઉત્તમ ધર્મયુક્ત નીતિમાં अहम्-આપની સ્ત્રી स्याम-બનું. (૪૯)

ભાવાર્થ : વિવાહના સમયે પુરુષ અને સ્ત્રી વ્યભિચાર ત્યાગની પ્રતિજ્ઞા કરીને, વ્યભિચારિણી સ્ત્રી અને લંપટ પુરુષનો સર્વથા સંગ છોડીને, પરસ્પર પણ અતિ વિષયાશક્તિનો પરિત્યાગ કરીને, ઋતુગામી બનીને પરસ્પર પ્રીતિપૂર્વક બળવાન સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે.

વ્યભિચારની સમાન સ્ત્રી અને પુરુષ માટે અનિષ્ટકારી, આયુનાશક અને અપયશકારક બીજું કોઈ કર્મ નથી. માટે તેનો સર્વથા ત્યાગ કરીને ધર્માચારી બનીને દીર્ઘાયુ પ્રાપ્ત કરે. (૪૯)

आपो॒ हि ष्ठा म॑यो॒भुव॒स्ता न॑ऽऊ॒र्जे द॑धातन। म॒हे रणा॑य॒ चक्ष॑से॥ ५०॥

પદાર્થ : હે आपः-જળથી સમાન શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત થનારી શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ ! જે તમે मयोभुवः-સુખને ભોગવનારી स्थ-છો, ताः-તે તમે ऊर्जे-બલયુક્ત પરાક્રમ અને महे-મહાન चक्षसे-ખ્યાતિને યોગ્ય रणाय-સંગ્રામ માટે नः-અમને हि-નિશ્ચય કરીને दधातन-ધારણ કરો. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ પતિ પોતાની સ્ત્રીઓને સદા સુખી રાખે. એ પતિ યુદ્ધકર્મમાં પણ તેનાથી અલગ ન રહે અર્થાત્ બન્ને સદા સાથે રહે. (૫૦)

यो वः॑ शि॒वत॑मो॒ रस॒स्तस्य॑ भाजयते॒ह नः॑। उ॒श॒तीरि॑व मा॒तरः॑॥ ५१॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! वः-તમારા અને नः-અમારા इह-ગૃહાશ્રમમાં यः-જે शिवतमः-અત્યંત સુખકારી

रसः-કર્તવ્ય આનંદ છે, तस्य-તેનો मातरः + उशतीरिव-જેમ કામના કરતી માતા પોતાના પુત્રોનું સેવન કરે છે, તેમ भाजयत-સેવન કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓએ જેમ માતા-પિતા પોતાના પુત્રોની સેવા કરે છે, તેમ પોતાના પતિની પ્રીતિપૂર્વક સેવા કરવી જોઈએ.

જેમ તૃષાતુરને જલ તૃપ્ત કરે છે, તેમ સુશીલતાપૂર્વક આનંદથી સ્ત્રી-પુરુષ તૃપ્ત રહે. (૫૧)

तस्मा॒ऽअरं॑ गमाम वो॒ यस्य॒ क्षया॑य॒ जिन्व॑थ। आपो॑ ज॒नय॑था च नः॥ ५२॥

પદાર્થ : હે आपः-જલોની સમાન શાન્ત સ્વભાવથી વિદ્યમાન સ્ત્રીઓ ! જે તમે नः-અમને क्षयाय-નિવાસ સ્થાન માટે जिन्वथ-તૃપ્ત च-અને जनयथ-ઉત્તમ સંતાન ઉત્પન્ન કરો, તે वः-તમને અમે अरम्-સામર્થ્યની સાથે गमाम-પ્રાપ્ત કરીએ. यस्य-જે ધર્મયુક્ત વ્યવહારની પ્રતિજ્ઞા કરો, તેનું પાલન કરનારી બનો અને અમે પણ તેનું પાલન કરનારા બનીએ. (૫૨)

ભાવાર્થ : પુરુષ જે સ્ત્રીનો પતિ હોય અને જે પુરુષની જે સ્ત્રી હોય, તે પુરુષ અને સ્ત્રી પરસ્પર કદીપણ અનિષ્ટ કરે નહિ.

આ રીતે સુખ વિસ્તારથી અલંકૃત બનીને ધર્મપૂર્વક ગૃહકાર્ય કરો. (૫૨)

मित्रः स॒ꣳसृज्य॑ पृथि॒वीं भूमिं॑ च॒ ज्योति॑षा स॒ह।
सु॒जा॑तं जा॒तवे॑दसमय॒क्ष्माय॑ त्वा॒ सꣳसृ॑जामि प्र॒जाभ्यः॑॥ ५३॥

પદાર્થ : હે પતે ! જે આપ मित्रः-સર્વના મિત્ર બનીને प्रजाभ्यः-પાલન કરવા યોગ્ય પ્રજાના अयक्ष्माय-આરોગ્ય માટે ज्योतिषा-વિદ્યા, ન્યાય અને સુશિક્ષાના પ્રકાશની सह-સાથે पृथिवीम्-અન્તરિક્ષ च અને भूमिम्-પૃથિવીની સાથે संसृज्य-સંબંધ કરીને મને સુખ આપો છો, તે सुजातम्-અતિ પ્રસિદ્ધ जातवेदसम्-વેદને જાણનાર त्वा-આપને હું संसृजामि-તે કાર્ય માટે તૈયાર કરું છું. (૫૩)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ ઉત્તમ ગુણોયુક્ત વિદ્વાનોના સંગથી શ્રેષ્ઠ આચાર ગ્રહણ કરીને, શરીર અને આત્માના આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરીને ઉત્તમ પ્રજાની ઉત્પત્તિ કરવી જોઈએ. (૫૩)

रु॒द्राः स॒ꣳसृज्य॑ पृथि॒वीं बृ॒हज्ज्योति॒ः समी॑धिरे।
तेषां॑ भा॒नुरज॑स्र॒ऽइच्छु॒क्रो दे॒वेषु॒ रोचते॥ ५४॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! इत्-જેમ रुद्राः-પ્રાણવાયુના અવયવરૂપ સમાનાદિ વાયુ संसृज्य-સૂર્યને ઉત્પન્ન કરીને पृथिवीम्-ભૂમિને बृहत्-મહાન ज्योतिः-પ્રકાશને समीधिरे-પ્રકાશિત કરે છે, तेषाम्-તેનાથી ઉત્પન્ન થયેલ शुक्रः-કાન્તિમાન भानुः-સૂર્ય देवेषु-દિવ્ય પૃથિવી આદિમાં अजस्रः-નિરંતર रोचते-પ્રકાશ કરે છે, તેમ વિદ્યારૂપી ન્યાય સૂર્યને ઉત્પન્ન કરીને પ્રજાજનોને પ્રકાશિત અને તેનાથી પ્રજાઓમાં દિવ્ય સુખોનો પ્રચાર કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સૂર્યનું, સૂર્ય પ્રકાશનું, પ્રકાશ નેત્રથી જોવાના વ્યવહારનું કારણ છે, તેમ સ્ત્રી-

પુરુષ પરસ્પરના સુખનાં સાધનો-ઉપસાધનો બનાવીને સુખોને સિદ્ધ કરે. (૫૪)

सꣳसृष्टां वसुभी रुद्रैर्धीरैः कर्मण्यां मृदम्।
हस्ताभ्यां मृद्वीं कृत्वा सिनीवाली कृणोतु ताम्॥ ५५॥

પદાર્થ : હે પતે ! આપ જેમ શિલ્પીજનો हस्ताभ्याम्-હાથોની कर्मण्याम्-ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલી मृदम्-માટીને ઘાટ આપે છે, તેમ धीरैः-અતિ સંયમી, वसुभिः-જે ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન કરીને વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરનાર, रुद्रैः-અને જેણે ચુંવાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન કરીને વિદ્યાબળને પૂર્ણ કરેલ છે, તેના દ્વારા संसृष्टाम्-ઉત્તમ શિક્ષા પ્રાપ્ત કરેલ બ્રહ્મચારિણી યુવતીને मृद्वीम्-મૃદુ ગુણ અને સ્વભાવયુક્ત कृणोतु-બનાવો. અને જે સ્ત્રી सिनीवाली-પ્રેમબદ્ધ કન્યાઓને બળવાન કરનારી છે, ताम् તેને પોતાની સ્ત્રી कृत्वा-બનાવીને સુખી કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : જેમ કુંભાર વગેરે શિલ્પીઓ-કારીગરો જલથી માટીને કોમળ બનાવીને, તેનાથી ઉત્પન્ન ઘડા વગેરે બનાવીને સુખના કાર્યો સિદ્ધ કરે છે.

એ રીતે વિદ્વાન માતા-પિતા દ્વારા શિક્ષિત, પ્રિય કન્યાઓને બ્રહ્મચારીઓ વિવાહ માટે ગ્રહણ કરીને ગૃહાશ્રમનાં સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કરે. (૫૫)

सिनीवाली सुकपर्दा सुकुरीरा स्वौपशा।
सा तुभ्यमदिते मह्योखां दधातु हस्तयोः॥ ५६॥

પદાર્થ : હે महि-સત્યકારને યોગ્ય अदिते-અખંડિત આનંદ ભોગવનારી સ્ત્રી ! જે सिनीवाली-પ્રેમથી યુક્ત सुकपर्दा-ઉત્તમ કેશયુક્ત, सुकुरीरा-સુંદર શ્રેષ્ઠ કર્મોને કરનારી, स्वौपशा-ઉત્તમ સ્વાદિષ્ટ ભોજન બનાવનારી, જે तुभ्यम्-તારા માટે हस्तयोः-હાથોમાં उखाम्-દાળ વગેરે બનવવાનું સાધન તાંબડી दधातु-ધારણ કરે सा-તેનું તું સેવન કર. (૫૬)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ સુશિક્ષિત, ચતુર સેવિકાઓને રાખે. જેથી રસોઈ આદિથી સંબંધિત સર્વ કાર્ય યથાસમય થતું રહે. (૫૬)

उखां कृणोतु शक्त्या बाहुभ्यामदितिर्धिया।
माता पुत्रं यथोपस्थे साग्निं बिभर्त्तु गर्भऽआ। मखस्य शिरोऽसि॥ ५७॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થ પુરુષ ! જે કારણથી તું मखस्य-યજ્ઞના शिरः-શિર સમાન असि-છે, તે કારણે આપ धिया-જ્ઞાન વા કર્મથી शक्त्या-પાક વિદ્યાના સામર્થ્ય અને बाहुभ्याम्-બન્ને ભુજાઓથી उखाम्-પકાવવાની તાંબડીને कृणोतु-સિદ્ધ કરો-નિર્માણ કરો.

જે अदितिः-પુત્ર ઉત્પન્ન કરનારી જનની તારી સ્ત્રી છે सा-તે गर्भे-પોતાની કૂખમાં, यथा-જેમ माता-માતા उपस्थे-પોતાના ખોળામાં पुत्रम्-પુત્રને સુખપૂર્વક બેસાડે છે, તેમ अग्निम्-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વીર્યને आबिभर्तु-ધારણ કરે, (૫૭)

ભાવાર્થ : કુંવારી કન્યા અને કુમાર વર બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા પૂર્ણ કરીને, બલ, બુદ્ધિ તથા પરાક્રમથી યુક્ત સંતાનોને ઉત્પન્ન કરવા માટે વિવાહ કરીને, વૈદ્યક શાસ્ત્રની રીતિથી, મહાન ઔષધિઓથી પાક બનાવીને;

વિધિપૂર્વક ગર્ભાધાન કરીને, પછી પથ્યનું પાલન કરે, પરસ્પર મિત્રતાથી રહીને, બાળકોના ગર્ભાધાન આદિ કર્મ કરે. (૫૭)

वस॑वस्त्वा कृण्वन्तु गा॒य॒त्रेण॒ छन्द॑साऽङ्गिर॒स्वद्ध्रु॒वासि॑ पृथि॒व्य॒सि धा॒रया॒ मयि॑ प्र॒जाꣳरा॒यस्पोषं॑ गौप॒त्यꣳ सु॒वीर्य॑ꣳसजा॒तान्यज॑मानाय रु॒द्रास्त्वा॑ कृण्वन्तु त्रैष्टु॑भेन॒ छन्द॑साऽङ्गिर॒स्वद्ध्रु॒वास्य॒न्तरि॑क्षमसि धा॒रया॒ मयि॑ प्र॒जाꣳरा॒यस्पोषं॑ गौप॒त्यꣳसु॒वीर्य॑ꣳसजा॒तान्यज॑मानायाऽऽदि॒त्यास्त्वा॑ कृण्वन्तु जाग॑तेन॒ छन्द॑सा-ङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वासि द्यौर॑सि धा॒रया॒ मयि॑ प्र॒जाꣳ रा॒यस्पोषं॑ गौप॒त्यꣳ सु॒वीर्य॑ꣳ सजा॒तान्यज॑मानाय॒ विश्वे॑ त्वा दे॒वा वैश्वान॒राः कृण्व॒न्त्वानु॑ष्टुभेन॒ छन्द॑साङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वासि दिशो॑ऽसि धा॒रया॒ मयि॑ प्र॒जाꣳ रा॒यस्पोषं॑ गौप॒त्यꣳ सु॒वीर्य॑ꣳ सजा॒ता॑न्य-ज॑मानाय ॥ ५८ ॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારિણી કુમારી સ્ત્રી ! જે તું अङ्गिरस्वत्-ધનંજય પ્રાણની સમાન ध्रुवा-નિશ્ચલ असि-છે. અને તું पृथिव्यसि-વિસ્તૃત સુખ કરનારી असि-છે. તે त्वा-તને गायत्रेण-વેદમાં વિધાન કરેલ छन्दसा-ગાયત્રી આદિ છંદોથી वसवः-ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચારી રહેનાર વિદ્વાન મારી સ્ત્રી कृण्वन्तु-બનાવે.

હે કુમાર બ્રહ્મચારી પુરુષ ! જે તું अङ्गिरस्वत्-પ્રાણવાયુની સમાન ध्रुवः-નિશ્ચલ છે અને पृथिवी-પૃથિવીની સમાન ક્ષમાશીલ असि-છે. તે त्वा-તને वसवः-ઉક્ત વસુ નામક વિદ્વાન गायत्रेण-વેદમાં પ્રતિપાદિત छन्दसा-ગાયત્રી આદિ છંદોથી મારા પતિ कृण्वन्तु-બનાવે. તે તું मयि-તારાથી પ્રસન્ન મારી પત્નીમાં प्रजाम्-સુંદર સંતાનો, रायः-ધનની पोषम्-પુષ્ટિને गौपत्यम्-ગૌ અર્થાત્ ગાય, પૃથિવી અથવા વાણીના પતિ ભાવને, सुवीर्यम्-સુંદર પરાક્રમને धारय-સ્થાપિત કર. હું અને તું બન્ને सजातान्-એક ગર્ભાશયથી ઉત્પન્ન સર્વ સંતાનોને यजमानाय-વિદ્યાના દાતા આચાર્યને વિદ્યા ગ્રહણ માટે સમર્પિત કરીએ.

હે સ્ત્રી ! જે તું अङ्गिरस्वत्-આકાશની સમાન ध्रुवा-નિશ્ચય असि-છે અને अन्तरिक्षम्-અવિનાશી-અક્ષય પ્રેમથી યુક્ત असि-છે, તે त्वा-તને रुद्राः-રુદ્ર નામક વિદ્વાન ચુંવાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરનાર વિદ્વાન त्रैष्टुभेन-વેદમાં કહેલ छन्दसा-ત્રિષ્ટુપ છંદથી મારી સ્ત્રી कृण्वन्तु-બનાવે.

હે વીર પુરુષ ! જે તું આકાશ સમાન નિશ્ચલ છે અને દઢ પ્રેમથી યુક્ત છે, તે તને ચુંવાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરનાર વિદ્વાન વેદમાં પ્રતિપાદિત ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી મારો સ્વામી બનાવે. તે તું मयि- મારી પ્રિય પત્નીમાં प्रजाम्-સત્ય, બલ અને ધર્મથી યુક્ત સંતાનોને, रायः-રાજ્યલક્ષ્મીની पोषम्-પુષ્ટિને गौपत्यम्-અધ્યાપક ભાવને તથા सुवीर्यम्-ઉત્તમ પરાક્રમને धारय-ધારણ કર, હું-તું-બન્ને

सजातान्-એક ઉદરથી ઉત્પન્ન સર્વ સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપીને, વેદવિદ્યાના અધ્યયન માટે यजमानाय-અંગ-ઉપાંગો સહિત વેદને ભણાવનાર અધ્યાપકને પ્રદાન કરીએ.

હે વિદુષી સ્ત્રી ! જે તું अङ्गिरस्वत्-આકાશની સમાન ध्रुवा-નિશ્ચલ असि-છે, द्यौः-સૂર્ય સમાન પ્રકાશમાન असि-છે, તે त्वा-તને आदित्याः-અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરીને પૂર્ણ વિદ્યા અને બલની પ્રાપ્તિથી યુક્ત આપ્ત, સત્યવાદી, ધર્માત્મા વિદ્વાન जागतेन-વેદમાં કહેલ छन्दसा-જગતી છંદથી મારી પત્ની कृण्वन्तु-કરે.

હે વિદ્વાન પુરુષ ! જે તું આકાશ સમાન દૃઢ અને સૂર્ય સમાન તેજસ્વી છે, તે તને અડતાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરનાર પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત, ધર્માત્મા વિદ્વાન વેદોક્ત જગતી છંદથી મારા પતિ બનાવે. તે તું मयि-મારી પ્રિય પત્નીમાં प्रजाम्-શુભ ગુણોથી યુક્ત સંતાનોને रायः-ચક્રવર્તી રાજ્યલક્ષ્મીને पोषम्-પુષ્ટિને, गौपत्यम्-સકલ વિદ્યાના અધિપતિ-ભાવને તથા सुवीर्यम्-સુંદર પરાક્રમને धारय-ધારણ કર. હું-તું-બન્ને सजातान्-પોતાના સંતાનોને જન્મથી ઉત્તમ ઉપદેશ આપીને સર્વ વિદ્યાઓને ગ્રહણ કરવા માટે यजमानाय-ક્રિયા-કૌશલ સહિત સર્વ વિદ્યાના પ્રવક્તા-આચાર્યને સોંપીએ.

હે સુંદર ઐશ્વર્યયુક્ત પત્ની ! જે તું अङ्गिरस्वत्-સૂક્ષ્મ પ્રાણવાયુ સમાન ध्रुवा-નિશ્ચલ असि-છે અને दिशः-સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિવાળી असि-છે. તે તને वैश्वानराः-સર્વ મનુષ્યોમાં શોભાયમાન विश्वे-સર્વ देवाः-ઉપદેશક વિદ્વાનો आनुष्टुभेन-વેદમાં કહેલ छन्दसा-અનુષ્ટુપ્ છંદથી મારા આધીન कृण्वन्तु-કરે.

હે પુરુષ ! જે તું સૂક્ષ્મ વાયુની સમાન સ્થિત છે, दिशः-સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિમાન असि-છે, જે त्वा-તને સર્વ પ્રજાઓમાં શોભાયમાન, સર્વ વિદ્વાન મારા આધિન કરે, તે આપ मयि-મારામાં प्रजाम्-શુભ લક્ષણ યુક્ત સંતાનોને रायः-સર્વ ઐશ્વર્યની पोषम्-પુષ્ટિને गौपत्यम्-વાણીની ચતુરાઈને તથા सुवीर्यम्-સુંદર પરાક્રમને धारय-ધારણ કર. હું-તું-બન્ને ઉત્તમ ઉપદેશ માટે सजातान्-આપણાં સંતાનોને यजमानाय-સત્યના ઉપદેશક અધ્યાપકની સમીપ સમર્પણ કરીએ. (૫૮)

ભાવાર્થ : જ્યારે સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પરીક્ષા કરીને એક-બીજ દૃઢ પ્રીતિ યુક્ત બને, ત્યારે વેદ વિધિ અનુસાર યજ્ઞ કરીને, વેદોક્ત નિયમોનો સ્વીકાર કરીને વિવાહ કરે. તથા સંતાન ઉત્પન્ન કરે.

જ્યાં સુધી પુત્ર-પુત્રીઓ આઠ વર્ષ સુધીના થાય ત્યાં સુધી માતા-પિતા તેને ઉત્તમ શિક્ષા આપે. ત્યાર પછી બ્રહ્મચર્ય વ્રત ધારણ કરાવી, વિદ્યા અધ્યયન માટે પોતાના ઘરથી અતિ દૂર આપ્ત વિદ્વાનો અને વિદુષીઓની પાઠશાળામાં મોકલે.

આ કાર્યમાં જેટલું ધન વ્યય કરવા યોગ્ય હોય તેટલું ખર્ચ કરે, સંતાનોને વિદ્યા દાનથી અધિક બીજો કોઈ ઉપકાર અને ધર્મ નથી. માટે તેનું નિરંતર અનુષ્ઠાન કર્યા કરે. (૫૮)

अदित्यै रास्नास्यदितिष्टे बिलं गृभ्णातु। कृत्वाय सा महीमुखां मृन्मयीं योनिमग्नये। पुत्रेभ्यः प्रायच्छददितिः श्रपयानिति॥ ५९॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપિકા વિદુષી ! જે કારણે તું अदित्यै-વિદ્યાપ્રકાશ માટે रास्ना-દાનશીલ असि-છે. તેથી ते-તારી પાસેથી बिलम्-બ્રહ્મચર્યને ધારણ कृत्वाय-કરીને अदितिः-પુત્ર અને કન્યા વિદ્યાઓને

गृभ्णातु-ગ્રહણ કરે.

તે सा-તું अदितिः-માતા मृन्मयीम्-માટીની બનેલી योनिम्-પદાર્થોને મિશ્ર કરનારી महीम्-મોટી उखाम्-પાકસ્થાલી-તાંબડીને अग्नये-અગ્નિ પર સ્થાપિત કરવા માટે पुत्रेभ्यः-સંતાનોને प्रायच्छत्-પ્રદાન કરે. તેઓ વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત બનીને उखाम्-તાંબડીમાં इति-એવી રીતે श्रपयान्-અન્ન આદિ પદાર્થો પકાવે . (૫૯)

ભાવાર્થ : કુમાર પુરુષોની પાઠશાળામાં અને કન્યાઓ સ્ત્રીઓની પાઠશાળામાં જઈને, બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરીને સુશીલતાથી વિદ્યાઓ અને પાક વિધિને શીખે-ગ્રહણ કરે, આહાર-વિહારોનું પણ નિયમાનુસાર સેવન કરે,

વિષયોની કથા કદી સાંભળે પણ નહિ, મદ્ય, માંસ આળસ અને અતિનિદ્રાનો ત્યાગ કરીને, અધ્યાપકોની સેવા અને અનુકૂળતા અનુસાર વર્તાવ કરીને ઉત્તમ વ્રતોને ધારણ કરે. (૫૯)

वसवस्त्वा धूपयन्तु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद् रुद्रास्त्वा धूपयन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वदादित्यास्त्वा धूपयन्तु जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वद् विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा धूपयन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वदिन्द्रस्त्वा धूपयतु वरुणस्त्वा धूपयतु विष्णुस्त्वा धूपयतु॥ ६०॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મચારી વા બ્રહ્મચારિણી ! જે वसवः-વસુ નામક પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન છે, તે गायत्रेण-छन्दसा-વેદના ગાયત્રી છંદથી त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-પ્રાણોની સમાન સુગંધિત અન્નાદિ સમાન धूपयन्तु-સંસ્કારયુક્ત-શુદ્ધ કરે.

रुद्राः-જે મધ્યમ કોટિના રુદ્ર નામક વિદ્વાન છે, તે त्रैष्टुभेन-छन्दसा-વેદોક્ત ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી अङ्गिरस्वत्-વિજ્ઞાનની સમાન त्वा-તારો धूपयन्तु-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી સંસ્કાર-શુદ્ધ કરે.

आदित्याः-સર્વોત્તમ અધ્યાપક વિદ્વાન जागतेन-छन्दसा-વેદોક્ત જગતી છંદથી अङ्गिरस्वत्-બ્રહ્માંડના શુદ્ધ વાયુની સમાન त्वा-તારો धूपयन्तु-ધર્મયુક્ત વ્યવહારના ગ્રહણથી સંસ્કાર કરે.

वैश्वानराः-સર્વ મનુષ્યોમાં સત્ય, ધર્મ અને વિદ્યાનો પ્રકાશ કરનાર विश्वे-સર્વ देवाः-સત્યના ઉપદેશક વિદ્વાન आनुष्टुभेन-વેદોક્ત અનુષ્ટુપ્ छन्दसा-છંદથી अङ्गिरस्वत्-વિદ્યુત્‌ની સમાન त्वा-તારો धूपयन्तु-સત્યોપદેશથી સંસ્કાર કરે.

इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજા त्वा-તારો धूपयतु-રાજનીતિ વિદ્યાથી સંસ્કાર કરે.

वरुणः-શ્રેષ્ઠ ન્યાયાધીશ त्वा-તારો धूपयतु-ન્યાયક્રિયાથી સંયુક્ત કરે.

विष्णुः-સકલ વિદ્યા અને યોગાંગોનું આચરણ કરનાર યોગીરાજ त्वा-તને धूपयतु-યોગવિદ્યાથી સંસ્કારયુક્ત કરે. તું એ સર્વની સેવા કર્યા કર. (૬૦)

ભાવાર્થ : સર્વ અધ્યાપક અને સંપૂર્ણ અધ્યાપિકા સર્વ ઉત્તમ ક્રિયાઓથી બ્રહ્મચારીઓ અને બ્રહ્મચારિણીઓને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી શીઘ્ર યુક્ત કરે.

જેથી તેઓ બ્રહ્મચર્ય પૂર્ણ કરીને, યથા સમય ગૃહાશ્રમ આદિનું સેવન કરે. (૬૦)

अदि॑तिष्ट्वा दे॒वी वि॒श्वदे॑व्यावती पृथि॒व्याः स॒धस्थे॑ऽअङ्गि॒र॒स्वत् ख॑नत्ववट दे॒वानां॑ त्वा॒ पत्नी॑र्दे॒वीर्वि॒श्वदे॑व्यावतीः पृथि॒व्याः स॒धस्थे॑ऽअङ्गि॒र॒स्वद्द॑धतूखे धि॒षणा॑स्त्वा दे॒वीर्वि॒श्वदे॑व्यावतीः पृथि॒व्याः स॒धस्थे॑ऽअङ्गि॒र॒स्वद॒भीन्ध॑तामुखे॒ वरू॑त्रीष्ट्वा दे॒वीर्वि॒श्वदे॑व्यावतीः पृथि॒व्याः स॒धस्थे॑ऽअङ्गि॒र॒स्वच्छ्र॑पयन्तूखे॒ ग्नास्त्वा॑ दे॒वीर्वि॒श्वदे॑व्यावतीः पृथि॒व्याः स॒धस्थे॑ऽअङ्गि॒र॒स्वत्प॑चन्तूखे॒ जन॑य॒स्त्वाऽच्छि॑न्नपत्रा दे॒वीर्वि॒श्वदे॑व्यावतीः पृथि॒व्याः स॒धस्थे॑ऽअङ्गि॒र॒स्वत्प॑चन्तूखे ॥ ६१ ॥

પદાર્થ : હે अवट-અવગુણ અને નિંદારહિત [અકથનીય આનંદયુક્ત.] બાળક ! विश्वदेव्यावती-સર્વ વિદ્વાનોમાં પ્રશસ્ત જ્ઞાનવાણી, अदितिः-અખંડ વિદ્યા ભણાવનારી, देवी-વિદુષી સ્ત્રી, पृथिव्याः-ભૂમિના सधस्थे-એક શુભ સ્થાનમાં त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-અગ્નિની સમાન खनतु-જેમ ભૂમિને ખોદીને જલ પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્યાયુક્ત કરે.

હે उखे-જ્ઞાનયુક્ત કન્યા ! देवानाम्-વિદ્વાનોની पत्नीः-સ્ત્રી જે विश्वदेव्यावतीः-સંપૂર્ણ વિદ્વાનોમાં અધિક વિદ્યાયુક્ત देवीः-વિદુષી છે. पृथिव्याः-પૃથિવીના सधस्थे-એક સ્થાનમાં अङ्गिरस्वत्-પ્રાણની સમાન त्वा-તને दधतु-ધારણ કરે.

હે उखे-વિજ્ઞાનની ઈચ્છુક કન્યા विश्वदेव्यावतीः-સર્વ વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ धिषणाः-પ્રશંસિત વાણીયુક્ત બુદ્ધિમતી देवीः-વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી पृथिव्याः-પૃથિવીના सधस्थे-એક સ્થાનમાં त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-પ્રાણની સમાન अभीन्धताम्--પ્રદીપ્ત કરે.

હે उखे-અન્ન આદિ પકાવવાની તાંબડી સમાન વિદ્યાને ધારણ કરનારી કન્યા ! विश्वदेव्यावतीः-ઉત્તમ વિદુષી वरूत्रीः-વિદ્યા ગ્રહણ માટે સ્વીકાર કરવા યોગ્ય देवीः-રૂપવતી સ્ત્રી पृथिव्याः-ભૂમિના सधस्थे-એક શુધ્ધ સ્થાનમાં त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-સૂર્યની સમાન श्रपयन्तु-શુદ્ધ તેજસ્વિની કરે.

હે उखे-જ્ઞાનની ઈચ્છુક કન્યા ! विश्वदेव्यावतीः સર્વ વિદ્યાવાનોમાં ઉત્તમ देवीः-શુદ્ધવિદ્યાથી યુક્ત ग्नाः-વેદવાણીની જ્ઞાતા સ્ત્રી पृथिव्याः-ભૂમિના એક सधस्थे-ઉત્તમ સ્થાનમાં त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-વિદ્યુત્‌ની સમાન पचन्तु-દૃઢ બલધારિણી કરે.

હે उखे-જ્ઞાન જિજ્ઞાસુ કુમારી ! विश्वदेव्यावतीः ઉત્તમ વિદ્યા ભણેલી अच्छिन्नपत्राः-અખંડિત નવીન શુદ્ધ વસ્ત્રોને ધારણ કરનાર તથા યાનોમાં જનારી जनयः-શુભગુણોથી પ્રસિદ્ધ देवीः-દિવ્યગુણોને આપનારી સ્ત્રી पृथिव्याः-ભૂમિના सधस्थे-ઉત્તમ પ્રદેશમાં त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-ઔષધિઓના રસની સમાન पचन्तु-સંસ્કાર યુક્ત કરે.

હે કુમારી કન્યે ! તું એ પૂર્વોક્ત સર્વ સ્ત્રીઓથી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા ગ્રહણ કર. (૬૧)

ભાવાર્થ : જેમ નિપુણ રસોયા દ્વારા તાંબડી-પાત્ર આદિમાં અન્નાદિ સંસ્કૃત કરીને શ્રેષ્ઠ બનાવવામાં

આવે છે તેમ, માતા-પિતા, આચાર્ય અને અતિથિઓ કુમાર અને કુમારિકાઓને તેની બાલ્યાવસ્થાથી લઈને વિવાહથી પૂર્વ સુધી ઉત્તમ બનાવે. (૬૧)

मित्रस्य॑ चर्षणीधृतोऽवो॑ देवस्य॑ सान॒सि। द्यु॒म्नं चित्रश्र॑वस्तमम्॥ ६२॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું चर्षणीधृतः-સુશિક્ષાથી મનુષ્યોને ધારણ કરનાર मित्रस्य-મિત્ર देवस्य-કામના યોગ્ય પતિના चित्रश्रवस्तमम्-ચિત્ર = આશ્ચર્ય રૂપ અન્નાદિ પદાર્થના હેતુ सानसि-સેવન કરવા યોગ્ય પ્રાચીન-જૂના द्युम्नम्-ધનની अवः-રક્ષા કર. (૬૨)

ભાવાર્થ : ગૃહકાર્યોમાં કુશળ સ્ત્રી સર્વ આન્તરિક ગૃહકાર્યોને સ્વાધીન રાખીને તેને યથાવત્ ઉન્નત કરે. (૬૨)

दे॒वस्त्वा॑ सवि॒तोद्व॑पतु सुपा॒णिः स्व॑ङ्गुरिः सु॑बा॒हुरु॒त शक्त्या॑।
अव्य॑थमाना पृथि॒व्यामाशा॒ दिश॒ऽआपृ॑ण॥ ६३॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! सुबाहुः-સુંદર ભુજાઓયુક્ત, सुपाणिः-સુંદર હાથયુક્ત, स्वङ्गुरिः-સુંદર આંગળીઓ યુક્ત, सविता-સૂર્ય સમાન ઐશ્વર્યદાતા, देवः-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, અને સ્વભાવયુક્ત પતિ છે, તે शक्त्या-પોતાના સામર્થ્યથી पृथिव्याम्-પૃથિવી પર સ્થિર કરીને त्वा-તને उद्वपतु-વૃદ્ધિની સાથે ગર્ભવતી કરે. उत-અને તું પણ પોતાના સામર્થ્યથી अव्यथमाना-નિર્ભય બનીને પતિના સેવનથી પોતાની आशाः-ઈચ્છા અને કીર્તિથી સર્વ दिशः-દિશાઓને आपृण-પૂર્ણ કર. (૬૩)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રેમયુક્ત, હૃદયને રુચિકર, સુપરીક્ષિત બનીને, પોતાની ઈચ્છાનુસાર સ્વયંવર વિધિથી વિવાહ કરીને, અતિ વિષયાસક્તિનો ત્યાગ કરીને, ઋતુગામી બનીને, પોતાના સામર્થ્ય-બલની હાનિ કદી પણ ન કરે.

કારણ કે જિતેન્દ્રિય સ્ત્રી-પુરુષોમાં રોગોની ઉત્પત્તિ અને તેના બલની હાનિ થતી નથી. તેથી તેઓ એ સંયમનું પાલન કરતા રહે. (૬૩)

उ॒त्थाय॑ बृह॒ती भ॒वोदु॑ तिष्ठ ध्रु॒वा त्वम्।
मित्रै॒तां त॒ऽउ॒खां परि॑ददा॒म्यभि॑त्या॒ऽए॒षा मा भे॑दि॥ ६४॥

પદાર્થ : હે વિદુષી કન્યા ! त्वम्-તું ध्रुवा-મંગલકાર્યોમાં નિશ્ચલ બુદ્ધિયુક્ત, बृहती-મહાન પુરુષાર્થયુક્ત, भव-બન. વિવાહ કરવા માટે उत्तिष्ठ-પ્રયત્ન કર. उत्थाय-આલસ્ય ત્યાગીને એ પતિનો સ્વીકાર કર.

હે मित्र-સુહૃદ્પતિ ! ते-તારા માટે एताम्-એ उखाम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય કન્યાને अभित्यै-નિર્ભયતા માટે परि+ददामि-સર્વ પ્રકારે પ્રદાન કરું છું. उ-તેથી તું एषा-એ પ્રત્યક્ષ પ્રાપ્ત થયેલી સ્ત્રીને मा भेदि-ભિન્ન કર નહિ. (૬૪)

ભાવાર્થ : કન્યા અને વર ક્રમશઃ પોતાને પ્રિય પુરુષ અને પોતાને પ્રિય કન્યાને સ્વયં પરીક્ષા કરીને

તેનો સ્વીકાર કરવાની ઇચ્છા કરે.

જ્યારે બન્નેના વિવાહ કરવાનો નિશ્ચય થાય, ત્યારે માતા, પિતા, આચાર્ય આદિ તે બન્નેના વિવાહ કરે.

તેઓ બન્ને પરસ્પર ભેદભાવ અને વ્યભિચાર કદી ન કરે પરન્તુ પુરુષ સ્ત્રી-વ્રતી અને સ્ત્રી પતિવ્રતા બનીને સાથે મળીને રહે. (૬૪)

वसवस्त्वाछृन्दन्तु गायत्रेण छन्दसाङ्गिरस्वद्रुद्रास्त्वाछृन्दन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वदादित्यास्त्वाछृन्दन्तु जागतेन छन्दसाङ्गिरस्वद्विश्वे त्वा देवा वैश्वानराऽआछृन्दन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत्॥ ६५॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! वसवः-વસુ નામક પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન્ गायत्रेण-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાઓનું જેમાં જ્ઞાન કરવામાં આવે તે વેદના વિભાગ રૂપ સ્તોત્ર छन्दसा-ગાયત્રી છંદથી જે त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-અગ્નિની સમાન आछृन्दन्तु-પ્રકાશમાન કરે.

रुद्राः-મધ્યમ કોટિના રુદ્રનામક વિદ્વાન્ त्रैष्टुभेन-જેમાં જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના સ્થિત છે. તે छन्दसा-વેદના સ્તોત્ર ભાગથી अङ्गिरस्वत्-પ્રાણની સમાન त्वा-તને आछृन्दन्तु-પ્રજ્વલિત કરે.

आदित्याः-ઉત્તમ કોટિના આદિત્ય નામક વિદ્વાન્ जागतेन-જગત્‌ની વિદ્યાના પ્રકાશક छन्दसा-વેદના સ્તોત્ર ભાગથી त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-સૂર્ય સમાન તેજસ્વી आछृन्दन्तु-શુદ્ધ કરે.

वैश्वानराः-સમસ્ત મનુષ્યોમાં શોભાયમાન देवाः સત્ય ઉપદેશ આપનાર विश्वे-સર્વ વિદ્વાન્ आनुष्टुभेन-વિદ્યા ગ્રહણ કર્યા પછી જે દુઃખોથી છોડાવે તે छन्दसा-વેદના ભાગથી त्वा-તને अङ्गिरस्वत्-સમસ્ત ઔષધિઓના રસની સમાન आछृन्दन्तु-શુદ્ધ રૂપમાં સંપન્ન કરે. (૬૫)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને, જે વિદ્વાન્ અને વિદુષીઓ શરીર અને આત્માના બલની વૃદ્ધિ કરનાર ઉપદેશથી [સર્વને] સુશોભિત કરે, તેની સેવા અને સંગ નિરંતર કરો, અન્ય શૂદ્ર જનોનો નહિ. (૬૫)

आकूतिमग्निं प्रयुजꣳ स्वाहा मनो मेधामग्निं प्रयुजꣳ स्वाहा चित्तं विज्ञातमग्निं प्रयुजꣳ स्वाहा वाचो विधृतिमग्निं प्रयुजꣳ स्वाहा प्रजापतये मनवे स्वाहाऽग्नये वैश्वानराय स्वाहा॥ ६६॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે વેદના ગાયત્રી આદિ મંત્રોથી स्वाहा-સત્યક્રિયાથી आकूतिम्-ઉત્સાહ આપનાર ક્રિયાથી प्रयुजम्-પ્રેરણા કરનાર अग्निम्-પ્રસિદ્ધ અગ્નિને स्वाहा-સત્યવાણીથી मनः-ઇચ્છાના સાધનને मेधाम्-બુદ્ધિ અને प्रयुजम्-સંબંધ કરનારી अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને स्वाहा-સત્ય વ્યવહારોથી विज्ञातम्-જાણેલા વિષયને प्रयुजम्-વ્યવહારમાં પ્રયોગ કરેલ अग्निम्-અગ્નિ સમાન પ્રકાશિત चित्तम्-ચિત્તને स्वाहा-યોગક્રિયાની રીતિથી वाचः-વાણીઓની विधृतिम्-વિવિધ પ્રકારની ધારણાઓને प्रयुजम्-પ્રયોગ

કરેલ अग्निम्-યોગાભ્યાસથી ઉત્પન્ન કરેલ વિદ્યુત્‌ને प्रजापतये-પ્રજાના સ્વામી मनवे-મનનશીલ પુરુષ માટે स्वाहा-સત્યવાણીને તથા अग्नये-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ वैश्वानराय-સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન જગદીશ્વરને માટે स्वाहा-ધર્મયુક્ત ક્રિયાને યુક્ત કરાવીને નિરંતર आछृन्दन्तु-ઉત્તમ રીતે શુદ્ધ કરો. (૬૬)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પુરુષાર્થથી વેદાદિ શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરીને તથા ઉત્સાહાદિને વધારીને વ્યવહાર તથા પરમાર્થની ક્રિયાઓના સંબંધથી આ લોક અને પરલોકનાં સુખોને પ્રાપ્ત કરે. (૬૬)

विश्वो॑ दे॒वस्य॑ ने॒तुर्मर्तो॑ वुरीत स॒ख्यम्।
विश्वो॑ रा॒यऽइ॑षुध्यति द्यु॒म्नं वृ॑णीत पु॒ष्यसे॒ स्वाहा॑॥ ६७॥

પદાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યની સમાન विश्वः સર્વ मर्त्तः-મનુષ્ય नेतुः-સર્વના નાયક, देवस्य-સર્વજગતના પ્રકાશક પરમેશ્વરની सख्यम्-મિત્રતાનો वुरीत-સ્વીકાર કરે.

विश्वः-સર્વ મનુષ્યો राये-શોભા અને લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ માટે इषुध्यति-બાણ આદિ શસ્ત્રોને ધારણ કરે. (૬૭)

स्वाहा-સત્યવાણી અને द्युम्नम्-પ્રકાશયુક્ત યજ્ઞને વા અન્નને वृणीत-ગ્રહણ કરે અને જેમ તેનાથી તું पुष्यसे-પુષ્ટ બને છે, તેમ અમે પણ બનીએ. (૬૭)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થ મનુષ્યોએ પરમેશ્વર સાથે મિત્રતા કરીને, સત્ય વ્યવહાર દ્વારા ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, યશસ્વી કાર્યો નિત્ય કર્યા કરે. (૬૭)

मा सु भि॒त्था॒ मा सु रि॒षोऽम्ब॑ धृ॒ष्णु वी॒रय॑स्व॒ सु।
अ॒ग्निश्चे॒दं क॑रिष्यथः॥ ६८॥

પદાર્થ : હે अम्ब-માતા ! તું અમને વિદ્યાથી मा + सु + भित्थाः-પૃથક ન કર, मा + सु + रिषः-દુઃખ ન આપ, धृष्णु-દઢતાપૂર્વક सु + वीरयस्व-આરંભ કરે સુંદર કર્મને પૂર્ણ આ રીતે આચરણ કરતાં તમે માતા અને પુત્ર બન્ને अग्निः-અગ્નિ સમાન च-इदम्-કરવા યોગ્ય એ સર્વ કર્મોને करिष्यथः-કરી શકશો. (૬૮)

ભાવાર્થ : માતા પોતાના સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા આપે, જેથી તેઓ પરસ્પર પ્રેમી અને વીર બને. જે કરવા યોગ્ય હોય તે કર્મ કરે અને ન કરવા યોગ્ય ન કરે. (૬૮)

दृꣳह॑स्व देवि पृथिवि स्व॒स्तय॑ऽआसु॒री मा॒या स्व॒धया॑ कृ॒तासि॑।
जुष्टं॑ दे॒वेभ्य॑ऽइ॒दम॑स्तु ह॒व्यमरि॑ष्टा॒ त्वमुदि॑हि य॒ज्ञेऽअ॒स्मिन्॥ ६९॥

પદાર્થ : હે पृथिवि-ભૂમિ સમાન વિદ્યાના વિસ્તારને પ્રાપ્ત થયેલી देवि-વિદ્યાથી યુક્ત પત્ની ! તને स्वस्तये-સુખ માટે स्वधया-અન્ન વા જલથી જે आसुरी-પ્રાણપોષક પુરુષોની माया-બુદ્ધિ છે તેને कृता-સિદ્ધ કરેલ असि-છે, તેથી त्वम्-તું પતિની-મારી दृंहस्व-ઉન્નતિ કર. अरिष्टा-હિંસા રહિત બનીને

अस्मिन्-એ यज्ञे-સંગ કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમમાં उदिहि-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કર. તેં જે जुष्टम्-સેવન કરેલ इदम्-એ हव्यम्-દાન આપવા-લેવા યોગ્ય પદાર્થ છે, તે देवेभ्यः-વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોની પ્રાપ્તિ માટે अस्तु-થાય. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી પતિને પ્રાપ્ત કરીને ઘરમાં રહે છે, તે સુબુદ્ધિથી સુખ માટે પ્રયત્ન કરે.

તે શ્રેષ્ઠ રીતે અન્નાદિ પદાર્થોને રુચિકારક બનાવે અને કદી કોઈને દુઃખ અથવા કોઈ સાથે વૈર બુદ્ધિ ન રાખે. (૬૯)

द्रुवन्नः सर्पिरासुतिः प्रत्नो होता वरेण्यः। सहसस्पुत्रोऽअद्भुतः॥ ७०॥

પદાર્થ : હે પતે ! તું द्रवन्नः-વૃક્ષ આદિ ઔષધિઓ યુક્ત, અથવા અન્ન યુક્ત છે એવા सर्पिरासुतिः-ઘૃત આદિ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરનાર, प्रत्नः-સનાતન होता-આદાન-પ્રદાન કરનાર, वरेण्यः-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, सहसः-બળવાનના पुत्रः-પુત્ર અને अद्भुतः-અદ્ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ યુક્ત આપ સુખ માટે એ ગૃહાશ્રમમાં શોભાયમાન બનો. (૭૦)

ભાવાર્થ : કન્યા-જેના પિતા બ્રહ્મચર્ય સેવનથી બલવાન હોય, જે પુરુષાર્થથી અન્ન આદિ વિવિધ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરી શકે અને પવિત્ર સ્વભાવ યુક્ત પુરુષ હોય, તેની સાથે વિવાહ કરીને-નિરંતર સુખનો ભોગ કરે. (૭૦)

परस्याऽअधि संवतोऽवराँ२ऽअभ्यातर। यत्राहमस्मि ताँ२ऽअव॥ ७१॥

પદાર્થ : હે કન્યા ! જે परस्याः-ઉત્તમ કન્યા હું તારો अधि-પતિ બનવા ઈચ્છું છું, તે તું सम्वतः-વિભક્ત अवरान्-નીચ ગુણ, સ્વભાવને अभि+आ+तर-દૂર કર અને यत्र-જે કુળમાં अहम्-હું अस्मि-છું तान्-તે ઉત્તમ મનુષ્યોની अव-રક્ષા કર. (૭૧)

ભાવાર્થ : કન્યા-પોતાનાથી અધિક બલ અને વિદ્યા યુક્ત અથવા સમાન હોય તેવા પતિનો સ્વીકાર કરે પરન્તુ અલ્પનો નહિ. જેનાથી પાણિ-હસ્ત ગ્રહણ કરે તેના સંબંધી અને મિત્રોને સદા સંતુષ્ટ કરે. (૭૧)

परमस्याः परावतो रोहिदश्वऽइहागहि।
पुरीष्यः पुरुप्रियोऽग्ने त्वं तरा मृधः॥ ७२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વીન્ વિજ્ઞાનયુક્ત પતે ! रोहिदस्वः-રોહિત્-અગ્નિ આદિ પદાર્થોથી યુક્ત અશ્વ-વાહનોથી યુક્ત, पुरीष्यः-પાલકોમાં શ્રેષ્ઠ, पुरुप्रियः અનેક મનુષ્યોથી પ્રીતિ રાખનાર, त्वम्-આપ इह-આ ગૃહાશ્રમમાં परावतः-દૂર દેશથી परमस्याः-અતિ ઉત્તમ ગુણ, રૂપ અને સ્વભાવયુક્ત કન્યાની કીર્તિ સાંભળીને आगहि-આવો અને તેની સાથે मृधः-બીજાના પદાર્થોની ઈચ્છા કરનારા શત્રુઓનો तर-તિરસ્કાર કરો. (૭૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાની કન્યા અથવા પુત્રનો વિવાહ સમીપ દેશમાં કદી કરવો નહિ. જેટલો દૂર દેશમાં વિવાહ કરવામાં આવે છે, તેટલું અધિક સુખ મળે છે. સમીપ દેશમાં કરવાથી કંકાસ જ થાય છે. (૭૨)

यदग्ने कानि कानि चिदा ते दारूणि दुध्मसि।
सर्वं तदस्तु ते घृतं तज्जुषस्व यविष्ठ्य॥ ७३॥

પદાર્થ : હે यविष्ठ्य-અત્યંત યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત થયેલ अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન પુરુષ વા સ્ત્રી ! આપ જેમ कानि कानि चित्-કઈ, કઈ પણ વસ્તુઓ ते-તારી છે, તેને અમે दारुणि-કાષ્ઠના પાત્રમાં-કબાટમાં आदध्मसि-ધારણ કરીએ.-રાખીએ.

यत्-જે કંઈ અમારી વસ્તુ છે, तत्-તે सर्वम्-બધી ते-તારી अस्तु-જ થાય, જે અમારા घृतम्-ઘૃત આદિ પદાર્થો છે, तत्-તેનું તું जुषस्व-સેવન કર. यत्-જે કંઈ તારા પદાર્થો છે. તે બધાં અમારા છે અને જે તારા ઘૃત વગેરે પદાર્થો છે તેને અમે ગ્રહણ કરીએ. (૭૩)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચારી આદિ મનુષ્ય પોતાના સર્વ પદાર્થો સર્વના [ઉપકાર] માટે રાખે. કદીપણ ઈર્ષાથી પરસ્પર જુદા ન પડે, જેથી સર્વના સર્વ સુખોની વૃદ્ધિ થાય અને વિઘ્ન ન પડે. આ રીતે સ્ત્રી-પુરુષ પણ પરસ્પર વર્તન કરે. (૭૩)

यदत्त्युपजिह्विका यद्वम्रोऽअतिसर्पति।
सर्वं तदस्तु ते घृतं तज्जुषस्व यविष्ठ्य॥ ७४॥

પદાર્થ : હે यविष्ठ्य-અત્યંત યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત પતે ! આપ અને उपजिह्विका-જેની જિહ્વા ઈન્દ્રિય અનુકૂળ અર્થાત્ વશમાં હોય એવી સ્ત્રી यत्-જે अत्ति-ભોજન કરે છે, यत्-જે वम्रः-મુખથી બહાર નીકળેલ પ્રાણવાયુ अति+सर्पति-અત્યંત તીવ્ર ગતિ કરે છે, तत्-તે सर्वम्-સર્વ ते-તારા अस्तु-બને. જે તારા घृतम्-ઘૃત આદિ ઉત્તમ પદાર્થો છે तत्-તેનું તું जुषस्व-સેવન કર. (૭૪)

ભાવાર્થ : જે તરફ પતિ પ્રવૃત્ત હોય અથવા જે તરફ પત્ની પ્રવૃત્ત હોય, તદનુસાર પતિ-પત્ની બન્ને પ્રવૃત્ત રહે. જે પત્નીના ધન આદિ પદાર્થો હોય તે પતિના અને જે પતિના ધન આદિ પદાર્થો હોય તે પત્નીના બને. આ વિષયમાં કદીપણ કોઈ પ્રકારનો દ્વેષ ન કરવો જોઈએ. પરન્તુ પરસ્પર મળીને બન્ને આનંદ ભોગવે. (૭૪)

अहरहरप्रयावं भरन्तोऽश्वायेव तिष्ठते घासमस्मै।
रायस्पोषेण समिषा मदन्तोऽग्ने मा ते प्रतिवेशा रिषाम॥ ७५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન પુરુષ ! अहरहः-પ્રતિદિન तिष्ठते-વિદ્યમાન अश्वायेव-જેમ ઘોડાને ખાવા માટે ઘાસ આદિ પદાર્થ ધરવામાં આવે છે, તેમ अस्मै-એ ગૃહસ્થ પુરુષ માટે अप्रयावम्-અન્યાયથી પૃથક્ ગૃહાશ્રમને યોગ્ય घासम्-ભોગ્ય પદાર્થોને भरन्तः-ધારણ કરતાં रायः-ધનની पोषेण-પુષ્ટિ તથા इषा-અન્નાદિથી सम्+मदन्तः-સમ્યક્ આનંદિત થઈને प्रतिवेशाः-ધર્મપ્રવેશમાં પ્રસિદ્ધ બનીને અમે ते-તારા ઐશ્વર્યને मा रिषाम-કદી નષ્ટ ન કરીએ. (૭૫)

ભાવાર્થ : જેમ અશ્વપાલક અશ્વ આદિ પશુઓ માટે જવ તથા દૂધ આદિ પદાર્થોનો નિત્ય સંચય કરે છે, તેમ ગૃહસ્થજનોએ ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરીને સર્વને સુખી કરે. ધનના અભિમાનમાં કોઈની સાથે કદી ઈર્ષા ન કરે. અન્યોની ઉન્નતિ સાંભળીને/જોઈને સદા આનંદ માણે. (૭૫)

नाभा पृथिव्याः समिधानेऽअग्नौ रायस्पोषाय बृहते हवामहे।

इरम्मदं बृहदुक्थं यजत्रं जेतारमग्निं पृतनासु सासहिम्॥ ७६ ॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થો ! જેમ અમે बृहते-મહાન रायः-લક્ષ્મીની-ઐશ્વયની पोषाय-પુષ્ટિ કરનાર પુરુષ માટે पृथिव्याः-પૃથિવીના नाभा-મધ્યમાં समिधाने-ઉત્તમ રીતે પ્રદીપ્ત अग्नौ-અગ્નિમાં અને पृतनासु-સેનાઓમાં सासहिम्-અત્યંત સહનશીલ, इरम्मदम्-અન્નથી આનંદિત થનાર बृहदुक्थम्-ભારે પ્રશંસાયુક્ત, यजत्रम्-સંગ્રામ કરવા યોગ્ય, अग्निम्-વિદ્યુત્‌ની સમાન શીધ્રતા કરનાર, जेतारम्-વિજેતા સેનાપતિ પુરુષને हवामहे-બોલાવીએ છીએ, તેમ તમે પણ બોલાવો (૭૬)

ભાવાર્થ : પૃથિવી પર રાજ્ય કરનાર લોકોએ શસ્ત્રાસ્ત્રોનો સંચય કરીને, પૂર્ણ બુદ્ધિ, વિદ્યા, શરીર તથા આત્માના બળથી સંપન્ન પુરુષને સેનાપતિ બનાવીને નિર્ભયતાપૂર્વક પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૭૬)

याः सेनाऽअभीत्वरीराव्याधिनीरुगणाऽउत।

ये स्तेना ये च तस्करास्ताँस्तेऽअग्नेऽपिदधाम्यास्ये॥ ७७॥

પદાર્થ : હે સેના અને સભાના સ્વામી ! જેમ હું याः-જે अभीत्वरीः-સન્મુખ બનીને યુદ્ધ કરનારી, आव्याधिनीः-અનેક રોગોથી યુક્ત વા તાડન કરવા યોગ્ય, उगणाः-શસ્ત્રો લઈને વિરોધમાં ઉદ્યત થયેલી सेनाः-સેના છે, તેને उत-અને ये-જે स्तेनाः-સુરંગ લગાવીને પર-પદાર્થોનું અપહરણ કરનાર છે, च-અને ये-જે तस्कराः-જુગાર આદિ છળ-કપટથી અન્યોનાં પદાર્થોનું અપહરણ કરનાર છે. तान्-તેને ते-એ अग्ने-અગ્નિની आस्ये-સળગતી જ્વાળાઓમાં अपिदधामि-નાખું છું, તેમ તું પણ તેને તેમાં નાંખ. (૭૭)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક, રાજપુરુષોને જે અનુકૂળ સેનાઓ અને પ્રજાઓ છે, તેનો નિરંતર સત્કાર કરીને, જે વિરોધી [સેનાઓ અને પ્રજાઓ] છે; તથા જે ડાકુ આદિ ચોર, દુષ્ટ વચનયુક્ત, જૂઠું બોલનારા તથા વ્યભિચારી મનુષ્ય હોય. તેને અગ્નિ દ્વારા દગ્ધ કરવા આદિ ઉગ્ર દંડોથી અત્યંત તાડના કરીને વશમાં કરવા જોઈએ. (૭૭)

दᳬष्ट्राभ्यां मलिम्लून् जम्भ्यैस्तस्कराँ२ऽउत।

हनुभ्याᳬ स्तेनान् भगवस्ताँस्त्वं खाद सुखादितान्॥ ७८ ॥

પદાર્થ : હે भगवः-ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ અને સેનાપતિ રાજા ! જેમ त्वम्-આપ जम्भ्यैः-મુખમાં રહેલ જિહ્‌વા આદિ અવયવો તથા दंष्ट्राभ्याम्-તીક્ષ્ણ દાંતોથી જે मलिम्लून्-મલિન આચરણયુક્ત સિંહ આદિને તથા हनुभ्याम्-જડબાથી तस्करान्-ચોરોની સમાન વિદ્યમાન सुखादितान्-અન્યાયથી બીજાના

પદાર્થોને ભોગવનાર અને स्तेनान्-રાત્રિમાં દીવાલ આદિ તોડ-ફોડ કરીને પારકો માલ લઈ જનારા મનુષ્યોને खाद-મૂળથી નષ્ટ કરો છો, તેમ तान्-તેને અમે उत-પણ નષ્ટ કરીએ. (૭૮)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ જે ગાય આદિની હિંસા કરનાર પશુઓ તથા મનુષ્ય અને જે ચોર આદિ હોય, તેઓને અનેક પ્રકારથી બંધન, તાડન અને વિનાશ દ્વારા વશમાં કરવા જોઈએ. (૭૮)

ये जनेषु मलिम्लव स्तेनासस्तस्करा वने।
ये कक्षेष्वघायवस्ताँस्ते दधामि जम्भयोः॥ ७९॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! હું સેનાપતિ-ये-જે जनेषु-મનુષ્યોમાં मलिम्लवः-મલિન સ્વભાવથી આવા-ગમન કરનાર स्तेनासः-ગુપ્ત ચોર જે वने-વનમાં तस्कराः-પ્રસિદ્ધ ચોર, લુંટારાઓ અને ये-જે कक्षेषु-ઘર-મકાન આદિમાં अघायवः-પાપ કરીને જીવનની ઈચ્છા કરનારા છે तान्-તેઓને ते-આપના जम्भयोः-પહોળા કરેલા મુખમાં કોળિયા સમાન दधामि-રાખું છું. (૭૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષોનું એ કર્તવ્ય છે, કે જે ગામમાં અથવા વનમાં રહેલા પ્રસિદ્ધ અથવા અપ્રસિદ્ધ ચોર અને પાપાચારી મનુષ્યો છે, તેને રાજાને આધીન કરે. (૭૯)

योऽअस्मभ्यमरातीयाद्यश्च नो द्वेषते जनः।
निन्दाद्योऽअस्मान् धिप्साच्च सर्वं तं मस्मसा कुरु॥ ८०॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ અને સેનાપતિ ! આપ यः-જે जनः-મનુષ્ય अस्मभ्यम्-અમારી ધાર્મિક જનોની अरातीयात्-શત્રુતા કરે, यः-જે नः-અમારી સાથે द्वेषते-દુષ્ટતા કરે, च-અને અમારી निन्दात्-નિંદા કરે, यः-જે अस्मान्-અમને धिप्सात्-દંભ બતાવે च-અને છળ-કપટ કરે तम्-તે सर्वम्-સર્વને भस्मसा-સળગાવીને સંપૂર્ણ ભસ્મ कुरु-કરી નાંખો. (૮૦)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક, ઉપદેશક અને રાજપુરુષોને યોગ્ય છે, કે તેઓ અધ્યાપન, શિક્ષા અને ઉપદેશથી તથા દંડ વિધાનથી વિરોધનો નિરંતર વિનાશ કરે. (૮૦)

सꣳशितं मे ब्रह्म सꣳशितं वीर्यं बलम्।
सꣳशितं क्षत्रं जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहितः॥ ८१॥

પદાર્થ : अहम्-હું यस्य-જે યજમાન પુરુષનું पुरोहितः-પ્રથમ ધારણ કરનાર अस्मि-છું, તેનું તથા मे-મારા संशितम्-પ્રશંસિત ब्रह्म-વેદનું વિજ્ઞાન તથા તે યજમાનનું संशितम्-પ્રશંસનીય वीर्यम्-પરાક્રમ પ્રશંસિત बलम्-બળ संशितम्-અને પ્રશંસા યોગ્ય जिष्णु-વિજેતા સ્વભાવનું क्षत्रम्-ક્ષત્રિય કુળ બને.

ભાવાર્થ : જે જેના પુરોહિત અને યજમાન હોય, તે બન્ને પરસ્પર જે વિદ્યા, યોગ બળ અને ધર્માચરણથી આત્માની ઉન્નતિ, બ્રહ્મચર્ય દ્વારા જિતેન્દ્રિયતા અને આરોગ્યથી શરીર બળની વૃદ્ધિ થાય, તે કર્મ સદા કરે. (૮૧)

उदे॑षां बा॒हूऽअति॑र॒मुद्वर्चो॒ऽअथो॒ बल॑म्।
क्षि॒णोमि॒ ब्रह्म॑णा॒मित्रा॒नुन्न॑यामि॒ स्वाँ२ऽअ॒हम्॥ ८२॥

પદાર્થ : अहम्-હું યજમાન વા પુરોહિત ब्रह्मणा-વેદ અને ઈશ્વરના વિજ્ઞાનના પ્રદાનથી, एषाम्-એ પૂર્વોક્ત ચોર આદિ દુષ્ટોના बाहू-બળ અને પરાક્રમનું उदतिरम्-સારી રીતે ઉલ્લંઘન કરું. वर्चः-તેજ તથા बलम्-સામર્થ્યને તથા अमित्रान्-શત્રુઓને उत्क्षिणोमि-મારું છું, अथो-ત્યારપછી स्वान्-પોતાના મિત્રોના તેજ અને સામર્થ્યને उन्नयामि-વૃદ્ધિ સાથે પ્રાપ્ત કરું. (૮૨)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ યજમાનોએ તથા પુરોહિતોએ પાપીઓના સર્વસ્વની હાનિ અને ધર્માત્માઓના સર્વસ્વની સર્વ પ્રકારે વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૮૨)

अन्न॑प॒तेऽन्न॑स्य नो देह्यनमी॒वस्य॑ शु॒ष्मिण॑ः।
प्रप्र॑ दा॒तारं॑ तारिष॒ऽऊर्जं॑ नो धेहि द्वि॒पदे॒ चतु॑ष्पदे॥ ८३॥

પદાર્થ : હે अन्नपते-ઔષધિ-અન્નોના પાલક યજમાન વા પુરોહિત ! આપ नः-અમારા માટે अनमीवस्य-રોગનાશક, સુખવર્ધક, शुष्मिणः-અતિ બળદાયક, अन्नस्य-અન્નને प्र+प्र+देहि-અતિ ઉત્તમ રીતિથી પ્રદાન કરો. એ અન્નના दातारम्-દાતાને तारिषः-તૃપ્ત-કરો. તથા नः-અમારા द्विपदे-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ તથા चतुष्पदे-ચાર પગવાળા ગાય આદિ પશુઓ માટે ऊर्जम्-પરાક્રમને धेहि-ધારણ કરો. (૮૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય સદા આરોગ્ય અને બલકારક અન્નનું સ્વયં સેવન કરે અને અન્યોને પણ પ્રદાન કરે. મનુષ્ય તથા પશુઓનાં સુખ તથા બળની વૃદ્ધિ કરે, જેથી ઈશ્વર અને સૃષ્ટિ-ક્રમના અનુકૂળ આચરણથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ અને સદા ઉન્નતિ પ્રાપ્ત થાય. (૮૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં ગૃહસ્થ, રાજા, પુરોહિત, સેનાપતિ, પ્રજાના કર્તવ્યો-કર્મનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયમાં કહેલ અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થ સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति एकादशोऽध्यायः ॥



॥ अथ द्वादशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

दृ॒शा॒नो रु॒क्मऽउ॒र्व्या व्य॑द्यौद् दु॒र्मर्ष॒मायुः॑ श्रि॒ये रु॑चा॒नः।
अ॒ग्निर॒मृतो॑ऽअभव॒द्वयो॑भि॒र्यदे॑नं॒ द्यौरज॑नयत्सु॒रेताः॑॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ दृशानः-દર્શક, द्यौः-સ્વયં પ્રકાશસ્વરૂપ, अग्निः-સૂર્યરૂપ અગ્નિ उर्व्या-અતિ સ્થૂલ ભૂમિની સાથે સર્વ મૂર્તિમાન પદાર્થોને वि+अद्यौत्-વિવિધ રીતે પ્રકાશિત કરે છે, તેમ જે श्रिये-रुचानः-સૌભાગ્ય લક્ષ્મીને માટે રુચિકર્તા रुक्मः-સુશોભિત જન अभवत्-બને છે,

यत्-જે सुरेताः-ઉત્તમ વીર્યવાન, अमृतः-નાશરહિત दुर्मर्षम्-શત્રુઓનાં દુ:ખોથી નિવારણ કરવા યોગ્ય, आयुः-જીવનને अजनयत्-પ્રકટ કરે છે, वयोभिः-વય-અવસ્થાઓની સાથે एनम्-એ વિદ્વાન્ પુરુષને પ્રકટ કરે છે, તે [પરમેશ્વર]નું તમે સદા નિરંતર સેવન-ઉપાસના કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ આ જગતમાં સૂર્ય આદિ સર્વ પદાર્થો પોતાનાં દૃષ્ટાન્તોથી પરમેશ્વરનો નિશ્ચય કરાવે છે, તેમ વિદ્વાન મનુષ્ય પણ પરમેશ્વરનો નિશ્ચય કરાવે. (૧)

नक्तो॒षासा॒ सम॑नसा॒ विरू॑पे धा॒पये॑ते॒ शिशु॒मेक॑ꣳ समी॒ची।
द्यावा॒क्षामा॑ रु॒क्मोऽअ॒न्तर्वि॑भा॑ति दे॒वाऽअ॒ग्निं धा॑रयन् द्रविणो॒दाः॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને द्रविणोदाः-બળ આપનાર देवाः-દિવ્ય પ્રાણ धारयन्-ધારણ કરે છે, જે रुक्मः-રુચિકારક બનીને अन्तः-અન્તઃકરણમાં वि+भाति-પ્રકાશિત થાય છે.

જે समनसा-સમાન વિજ્ઞાનયુક્ત, विरूपे-અંધકાર અને પ્રકાશથી વિરુદ્ધ રૂપયુક્ત समीची-સર્વને સર્વ રીતે પ્રાપ્ત થનારી, द्यावाक्षामा-પ્રકાશ અને ભૂમિ તથા नक्तोषासा-રાત અને દિવસ છે, તે જેમ एकम्-એક शिशुम्-બાળકને બે માતા धापयेते-દૂધ પાય છે, તેમ વર્તાવ કરનારી તે અગ્નિ-વિદ્યુત્‌ને તમે જાણો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ માતા અને ધાત્રી એ બન્ને બાળકને દૂધપાન કરાવે છે, તેમ દિવસ અને રાત સર્વનું પાલન કરે છે, જે વિદ્યુત્ રૂપથી સર્વત્ર વ્યાપક છે, તે અગ્નિ સૂર્ય આદિનું કારણ છે, તેમ તમે સર્વ નિશ્ચય કરો. (૨)

विश्वा॑ रू॒पाणि॒ प्रति॑मुञ्चते क॒विः प्रासा॑वीद् भ॒द्रं द्वि॒पदे॒ चतु॑ष्पदे।
वि नाक॑मख्यत्सवि॒ता वरे॑ण्योऽनु॒ प्र॒याण॑मु॒षसो॒ विरा॑जति॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वरेण्यः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય, कविः-જેની દૃષ્ટિ અને બુદ્ધિ સર્વત્ર છે

અથવા સર્વજ્ઞ, सविता-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક જગદીશ્વર વા સૂર્ય, उषसः-પ્રભાતની प्रयाणम्-ઉત્તમ પ્રાપ્તિને अनु + वि + राजति-પ્રકાશિત કરે છે, विश्वा-સર્વ रूपाणि-પદાર્થોના સ્વરૂપને प्रति + मुञ्चते-પ્રકટ કરે છે.

द्विपदे-મનુષ્ય આદિ બે પગવાળા चतुष्पदे-તથા ગાય આદિ ચોપગા પ્રાણીઓ માટે नाकम्-સર્વ દુઃખોથી રહિત भद्रम्-સેવન કરવા યોગ્ય સુખને व्यख्यत्-પ્રકાશિત કરે છે અને प्र + असावीत्-ઉત્પન્ન કરે છે, એવા તે સૂર્ય લોકને ઉત્પન્ન કરનાર ઈશ્વરને તમે જાણો. (૩)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વરે સંપૂર્ણ રૂપવાન પદાર્થોના પ્રકાશક પ્રાણીઓનાં સુખ માટે પ્રકાશમાન સૂર્યની રચના કરેલ છે, તે [પરમેશ્વર]ની ભક્તિ સર્વ મનુષ્યો કરે. (૩)

सुपर्णोऽसि गरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ। स्तोमऽआत्मा छन्दाᳬंस्यङ्गानि यजूᳬंषि नाम। साम ते तनूर्वामदेव्यं यज्ञायज्ञियं पुच्छं धिष्ण्याः शफाः। सुपर्णोऽसि गरुत्मान्दिवं गच्छ स्वः पत॥ ४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે કારણે ते-આપના त्रिवृत्-જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના એ ત્રણેથી યુક્ત शिरः-દુઃખોના વિનાશક છે, गायत्रम्-ગાયત્રી-છંદથી કહેલ વિજ્ઞાનરૂપ હેતુ चक्षुः-નેત્ર સમાન છે, बृहद्रथन्तरे-મોટા રથોથી દુઃખોને છોડાવનાર पक्षौ-પાંખોની સમાન છે, स्तोमः-સ્તુતિ યોગ્ય ઋગ્વેદ आत्मा-પોતાનું સ્વરૂપ છે, छन्दांसि-ઉષ્ણિક્ આદિ છંદ अङ्गानि-કાન આદિ અંગો છે, यजूंषि-યજુર્વેદના મંત્ર नाम-નામ यज्ञायज्ञियम्-ગ્રહણ અને ત્યાગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારોના પ્રકાશક वामदेव्यम्-વામદેવ ઋષિ દ્વારા વિજ્ઞાત વા ઉપદિષ્ટ साम-ત્રીજો સામવેદ ते-આપનું तनूः-શરીર છે, તેથી આપ गरुत्मान्-મહાત્મા, सुपर्णः-સુંદર, સંપૂર્ણ લક્ષણોથી યુક્ત असि-છો.

જેથી धिष्ण्याः-શબ્દ કરનાર હેતુઓમાં શ્રેષ્ઠ शफाः-ખરી તથા पुच्छम्-લાંબી પૂંછની સમાન અન્તિમ અવયવ છે, તેની સમાન गरुत्मान्-પ્રશંસિત શબ્દોચ્ચારણ કરનાર, सुपर्णः-સુંદર ઉડનાર असि-છે, તે પક્ષી સમાન આપ दिवम्-સુંદર વિજ્ઞાનને गच्छ-પ્રાપ્ત કરો, અને स्वः-સુખને पत-ગ્રહણ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સુંદર ડાળીઓ, પાંદડાં, પુષ્પો, ફળો અને મૂળયુક્ત વૃક્ષ શોભા આપે છે, તેમ વેદાદિ શાસ્ત્રોનું અધ્યયન-અધ્યાપન કરાવનાર લોકો શોભા આપે છે.

જેમ પશુઓ પોતાના પૂંછ આદિ અવયવોથી પોતાનું કાર્ય કરે છે. અને જેમ પક્ષી પોતાની પાંખોથી આકાશ માર્ગથી આવાગમન કરીને પ્રસન્ન થાય છે; તેમ મનુષ્યે વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને પુરુષાર્થ દ્વારા સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૪)

विष्णोः क्रमोऽसि सपत्नहा गायत्रं छन्दऽआरोह पृथिवीमनु विक्रमस्व विष्णोः क्रमोऽस्यभिमातिहा त्रैष्टुभं छन्दऽआरोहान्तरिक्षमनु विक्रमस्व विष्णोः क्रमोऽस्यरातीयतो हन्ता जागतं छन्दऽआरोह दिवमनु विक्रमस्व विष्णोः

क्रमो॑ऽसि शत्रूय॒तो ह॒न्तानु॑ष्टुभं॒ छन्द॒ऽआरो॑ह॒ दिशो॒ऽनु॒ वि क्र॑मस्व॥ ५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જેથી આપ विष्णोः-વ્યાપક જગદીશ્વરના क्रमः-વ્યવહારના શોધક सपत्नहा-અને શત્રુઓના ઘાતક असि-જ છો તેથી गायत्रम्-ગાયત્રી મંત્રથી નીકળેલ छन्दः-શુદ્ધ અર્થ પર आ + रोह-આરુઢ રહો, पृथिवीम्-પૃથિવી આદિ પદાર્થો अनु + वि + क्रमस्व-અનુકૂળ વ્યવહારમાં લાવો.

જે કારણે આપ विष्णोः-વ્યાપક કારણ-પ્રકૃતિના क्रमः-કાર્યરૂપ अभिमातिहा-અભિમાનીઓને મારનારા असि-છો, તેથી આપ त्रैष्टुभम्-ત્રણ પ્રકારના સુખોથી યુક્ત छन्दः-બલદાયક વેદાર્થને आरोह-ગ્રહણ કરો અને अन्तरिक्षम्-આકાશની-ખગોળ વિદ્યાને अनु + वि + क्रमस्व-અનુકૂળ વ્યવહારમાં લાવો.

જેથી આપ विष्णोः-વ્યાપ્તિશીલ વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિના क्रमः-જાણનાર, अरातीयतः-વિદ્યા આદિ દાનના વિરોધી પુરુષોના हन्ता-નાશક असि-છો, તેથી जागतम्-જગતના જ્ઞાનના સાધન छन्दः-સૃષ્ટિ વિદ્યાના બળકારી વેદાર્થ વિજ્ઞાનને आरोह-પ્રાપ્ત કરો અને दिवम्- સૂર્ય આદિ અગ્નિવિદ્યાને अनु+वि+क्रमस्व-વ્યવહારમાં લાવો.

જે આપ विष्णोः-હિરણ્યગર્ભ વાયુના क्रमः-જ્ઞાપક તથા शत्रूयतः-પોતાથી શત્રુતાનો વર્તાવ કરનાર પુરુષોના हन्ता-નાશક असि-છો, તે આપ आनुष्टुभम्-અનુકૂળતાથી સુખ સંબંધના હેતુ छन्दः-આનંદકારક વેદ ભાગને आरोह-ઉપયુક્ત કરો અને दिशः-પૂર્વ આદિ દિશાઓને अनु+वि+क्रमस्व-અનુકૂળ બનાવવાનો પ્રયત્ન કરો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદવિદ્યા દ્વારા ભૂગર્ભ આદિ વિદ્યાઓનો નિશ્ચય કરીને, તેની પરાક્રમપૂર્વક ઉન્નતિ કરીને, રોગ આદિ શત્રુઓનો નાશ કરવો જોઈએ. (૫)

अक्र॑न्दद॒ग्नि स्त॒नय॑न्निव॒ द्यौः क्षामा॒ रेरि॑हद्वी॒रुधः॑ सम॒ञ्जन्।
स॒द्यो ज॑ज्ञा॒नो वि हीमि॒द्धोऽअख्य॒दा रोद॑सी भा॒नुना॑ भात्य॒न्तः॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સભાપતિ सद्यः-એક દિવસમાં जज्ञानः-પ્રસિદ્ધ થઈ द्यौः-સૂર્યપ્રકાશરૂપ अग्निः-વિદ્યુત્ અગ્નિ સમાન स्तनयन्निव-ગર્જના કરતાં શત્રુઓને अक्रन्दत्-પ્રાપ્ત થાય છે.

જેમ क्षामा-પૃથિવી वीरुधः-વૃક્ષોને ફળ-ફૂલોથી યુક્ત કરે છે, તેમ પ્રજાઓને સુખદાયક रेरिहत्-શુભ-અશુભ કર્મોનું ફળ શીઘ્ર આપે છે.

જેમ સૂર્ય इद्धः-પ્રદીપ્ત થઈને समञ्जन्-સમ્યક્ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરતા रोदसी-આકાશ અને પૃથિવીને वि + अख्यत्-પ્રકાશિત કરે છે, भानुना-પોતાની દીપ્તિથી अन्तः-સર્વ લોકોની મધ્યમાં आभाति-પ્રકાશિત થાય છે, તેમ જે સભાપતિ શુભ ગુણ, કર્મ સ્વભાવથી પ્રકાશિત હોય તેને તમે રાજ્ય કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ સૂર્ય સર્વ લોકોની મધ્યમાં સ્થિત થઈને સર્વને પ્રકાશિત અને આકર્ષણ કરે છે. જેમ પૃથિવી અધિક ફળોને પ્રદાન કરનારી છે, તેમ એવા ગુણયુક્ત પુરુષનો રાજ્ય કાર્યોમાં સારી રીતે ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૬)

अग्नेऽभ्यावर्त्तिन्नभि मा निवर्त्तस्वायुषा वर्चसा प्रजया धनेन।
सन्या मेधया रय्या पोषेण॥ ७॥

પદાર્થ : હે अभ्यावर्त्तिन्-સન્મુખ સારો વર્તાવ કરનાર, अग्ने-તેજસ્વી, પુરુષાર્થી વિદ્વાન ! આપ आयुषा-ચિર આયુથી, वर्चसा-અન્ન તથા અધ્યયન આદિથી, प्रजया-સંતાનોથી, धनेन-ધનથી, सन्या-સર્વ વિદ્યાઓનો વિભાગ કરનારી मेधया-મેધા બુદ્ધિથી, रय्या-વિદ્યાની શોભા અને पोषेण-પુષ્ટિથી યુક્ત થઈને अभि+नि+वर्त्तस्व-નિરંતર વિદ્યમાન રહો તથા मा-મને પણ એ ઉક્ત પદાર્થોથી સંયુક્ત કરો.

ભાવાર્થ : મનુષ્યો ભૂગર્ભ આદિ વિદ્યા વિના ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. અને મેધા-બુદ્ધિ વિના વિદ્યા પ્રાપ્ત થઈ શકતી નથી. (૭)

अग्नेऽअङ्गिरः शतं ते सन्त्वावृतः सहस्त्रं तऽउपावृतः।
अधा पोषस्य पोषेण पुनर्नो नष्टमाकृधि पुनर्नो रयिमाकृधि॥ ८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પદાર્થવિદ્યાના જ્ઞાતા अङ्गिरः-વિદ્યા રસિક વિદ્વાન્ ! જે પુરુષાર્થી ते-આપની અગ્નિની સમાન, शतम्-સેંકડો आवृतः-વિદ્યાની આવૃત્તિ રૂપ ક્રિયાઓ તથા सहस्त्रम्-હજારો ते-આપની उपावृतः-આવૃત્તિરૂપ સુખોના ભોગ सन्तु-થાય.

अधः-એ પછી આપ એનાથી पोषस्य-પોષક મનુષ્યની पोषेण-રક્ષાથી नष्टम्-પરોક્ષ વિજ્ઞાનને પણ नः-અમારા માટે पुनः-ફરી પણ आ+कृधि-સારી રીતે કરો. તથા બગડેલ रयिम्-પ્રશંસિત શોભાને पुनः-ફરી પણ नः-અમારા માટે आ+कृधि-સારી રીતે કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્યાઓમાં સેંકડો આવૃત્તિઓ અને શિલ્પવિદ્યાઓમાં હજારો પુનરાવૃત્તિઓ કરીને, લુપ્ત થતી પ્રકટ વિદ્યાઓને પ્રકાશિત કરીને સર્વના માટે ઐશ્વર્ય-સુખ ઉત્પન્ન કરવા જોઈએ. (૮)

पुनरूर्जा निवर्त्तस्व पुनरग्नऽइषायुषा। पुनर्नः पाह्यंहसः॥ ९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ नः-અમને अंहसः-પાપોથી पुनः-વારંવાર निवर्त्तस्व-બચાવો, पुनः-વારંવાર અમારી पाहि-રક્ષા કરો. पुनः-ફરી વારંવાર इषा-ઈચ્છાથી તથા आयुषा-અન્નથી ऊर्जा-પરાક્રમ-યુક્ત કર્મોને પ્રાપ્ત કરાવો. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સર્વ ઉપદેશને યોગ્ય મનુષ્યોને પાપથી નિરંતર દૂર હટાવીને, તેને શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત કરીને, સ્વયં પાપથી રહિત બનીને પરમ પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. (૯)

सह रय्या निवर्त्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया। विश्वप्स्न्या विश्वतस्परि॥ १०॥

પદાર્થ : હે अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન ! આપ દુષ્ટ વ્યવહારથી नि+वर्त्तस्व-દૂર રહો. विश्वप्स्न्या-સર્વ ભોગ્ય વસ્તુઓનું ભક્ષણ કરનારી, धारया-સકલ વિદ્યાને ધારણ કરનારી વાણીથી તથા रय्या-ધનની सह-

સાથે विश्वतः-સર્વ પ્રકારથી परि-સર્વ રીતે पिन्वस्व-સુખોનું સેવન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો કદી પણ અધર્મનું આચરણ ન કરે તથા અન્યોને તેનો ઉપદેશ ન આપે. એ રીતે સમસ્ત શાસ્ત્રોની વિદ્યાથી સંપન્ન બનીને પ્રશંસાને પાત્ર બને. (૧૦)

आ त्वाहार्षमन्तरभूर्ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत्॥ ११॥

પદાર્થ : હે શુભ ગુણ અને લક્ષણોથી યુક્ત સભાપતિ રાજન્ ! त्वा-આપને રાજ્યની રક્ષા માટે હું अन्तः-સભાની મધ્યમાં आ+अहार्षम्-સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું.

આપ સભાની મધ્યમાં अभूः-વિરાજમાન રહો. अविचाचलिः-સર્વથા નિશ્ચલ તથા ध्रुवः-ન્યાયથી રાજ્યપાલનમાં નિશ્ચિત બુદ્ધિ બનીને तिष्ठ-સ્થિર રહો.

सर्वाः-સંપૂર્ણ विशः-પ્રજા त्वा-આપને वाञ्छन्तु-ચાહે. त्वत्-આપના પાલનથી राष्ट्रम्-રાજ્ય मा + अधि + भ्रशत्-નષ્ટ ન થાય. (૧૧)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ પ્રજાજન સર્વશ્રેષ્ઠ પુરુષને સભાધ્યક્ષ રાજા બનાવીને તેને ઉપદેશ આપે.

આપ જિતેન્દ્રિય બનીને સદા ધર્માત્મા અને પુરુષાર્થી બનો. આપના અનાચારથી રાષ્ટ્રનો કદી નાશ થાય નહિ. જેથી આપના [શુભ આચરણથી] સમસ્ત પ્રજા આપને અનુકૂળ રહેશે. (૧૧)

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳ श्रथाय।

अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम॥ १२॥

પદાર્થ : હે वरुण-શત્રુઓને બાંધનાર, आदित्य-અવિનાશી સ્વરૂપ, સૂર્ય સમાન સત્ય અને ન્યાયથી પ્રકાશિત રાજન્ ! આપ अस्मत्-અમારા अधमम्-નિકૃષ્ટ, मध्यमम्-મધ્યમ અને उत्तमम्-ઉત્તમ पाशम्-બંધનને उत्+अव+वि+श्रथाय-સર્વથા મુક્ત કરો.

अथ-અને वयम्-અમે પ્રજાજન अदितये-પૃથિવીના અખંડિત રાજ્ય માટે तव-આપના व्रते-સત્ય અને ન્યાયના પાલનરૂપ વ્રતમાં अनागसः-નિર્દોષ स्याम-બની રહીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ અનુસાર ધાર્મિક જન સત્ય આચરણમાં સ્થિત રહીને, પાપોના બંધનથી મુક્ત બનીને સુખી થાય છે, તેમ શ્રેષ્ઠ રાજાને પ્રાપ્ત કરીને પ્રજાજન આનંદિત રહે છે. (૧૨)

अग्रे बृहन्नुषसामूर्ध्वोऽअस्थान्निर्जगन्वान् तमसो ज्योतिषागात्।

अग्निर्भानुना रुशता स्वङ्गऽआ जातो विश्वा सद्मान्यप्राः॥ १३॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જે આપ अग्रे-પ્રથમથી જેમ સૂર્ય स्वङ्गः-સુંદર અવયવોથી યુક્ત, आ + जातः-

પ્રસિદ્ધ, बृहन्-મહાન, उषसाम्-પ્રભાતોના ऊर्ध्वः-ઉપર આકાશમાં अस्थात्-સ્થિત છે, स्रुशता-સુંદર, भानुना-દીપ્તિ, ज्योतिषा-પ્રકાશથી યુક્ત તથા तमसः-અંધકારથી निर्जगन्वान्-રહિત બનીને आगात्-સર્વ લોક-લોકાન્તરોને પ્રાપ્ત થાય છે. विश्वा-સર્વ सद्मानि-સ્થૂલ સ્થાનોમાં अप्राः-વ્યાપ્ત થાય છે, તેમ આપ પ્રજાની મધ્યમાં વ્યાપ્ત બનો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે સૂર્ય સમાન સદ્‌ગુણોને કારણે મહાન, સજ્જનોની શિક્ષાથી ઉત્તમ બનેલ, દુર્વ્યસનોથી દૂર રહેનાર, સત્ય અને ન્યાયના કારણે સર્વત્ર પરિચિત, સુંદર અંગો યુક્ત, પ્રસિદ્ધ, સર્વના સત્કારને યોગ્ય, જાણવા યોગ્ય વ્યવહારના જ્ઞાતા અને દૂતો દ્વારા સર્વ પ્રજાઓના હૃદયના અભિપ્રાયને જાણનાર મનુષ્ય; શ્રેષ્ઠ ન્યાય દ્વારા પ્રજામાં વ્યાપ્ત બની જાય છે, તે જ રાજા બનવાને યોગ્ય છે. (૧૩)

हुꣳसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजाऽऋतजाऽअद्रिजाऽऋतं बृहत्॥ १४॥

પદાર્થ : હે પ્રજાજનો ! તમે જે हंसः-દુષ્ટ કર્મોના નાશક, शुचिषत्-પવિત્ર વ્યવહારોમાં વિદ્યમાન, वसुः-સજ્જનોમાં વાસ કરનાર વા તેને વસાવનાર, अन्तरिक्षसत्-ધર્મસ્થાનમાં સ્થિત, होता-સત્યનું ગ્રહણ કરનાર અને કરાવનાર, वेदिषत्-પૃથિવી અથવા યજ્ઞશાલામાં સ્થિત, अतिथिः-પૂજનીય વા રાજ્યની રક્ષા માટે યથોચિત ભ્રમણ કરનાર, दुरोणसत्-સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક, આકાશમાં વ્યાપ્ત વા ઘરમાં રહેનાર, नृषत्-સેના આદિના નાયકોના અધિષ્ઠાતા, वरसत्-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોની આજ્ઞામાં સ્થિત, ऋतसत्-સત્યાચરણમાં સ્થિત, व्योमसत्-આકાશની સમાન સર્વવ્યાપક ઈશ્વર વા જીવમાં સ્થિત, अब्जाः-પ્રાણોના જનક, गोजाः-ઈન્દ્રિયો વા પશુઓના ઉત્પાદક, ऋतजाः-સત્ય વિજ્ઞાનના ઉત્પાદક, अद्रिजाः-મેઘોને વરસાવનાર વિદ્વાન, ऋतम्-સત્યસ્વરૂપ, बृहत्-મહાન, બ્રહ્મ અને જીવ છે, તેને જાણે છે તે સભાપતિને રાજા બનાવીને નિરંતર આનંદમાં રહો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરની સમાન પ્રજાનું પાલન કરનાર તથા તેને સુખી કરવામાં સમર્થ હોય, તે જ રાજા બનવા યોગ્ય છે. રાજા વિના પ્રજા સુખી બની શકતી નથી. (૧૪)

सीद त्वं मातुरस्याऽउपस्थे विश्वान्यग्ने वयुनानि विद्वान्।
मैनां तपसा मार्चिषाऽभिशोचीरन्तरस्याꣳ शुक्रज्योतिर्विभाहि॥ १५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્યા પ્રાપ્તિના ઈચ્છુક બાળક त्वम्-તું अस्याम्-એ માતાની વિદ્યમાનતામાં विभाहि-પ્રકાશિત બન. शुक्रज्योतिः-શુદ્ધ આચરણ રૂપ પ્રકાશયુક્ત विद्वान्-વિદ્વાન બનીને તું अस्याः-પૃથિવીની સમાન આધાર मातुः-એ માતાની उपस्थे-ગોદમાં सीद-બેસ એ માતાથી विश्वानि-દરેક પ્રકારની वयुनानि-બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કર. एनाम्-એ માતાના अन्तः-અન્તઃકરણમાં तपसा-સંતાપથી अर्चिषा-તેજથી मा+अभि+शोचीः-શોકયુક્ત ન કર. પરંતુ માતાથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને પ્રકાશિત બન. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે વિદુષી માતા દ્વારા વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, માતાનો સેવક બનીને, જનનીની સમાન પ્રજાનું પાલન કરે, તે રાજ્યના ઐશ્વર્યથી પ્રકાશિત બને છે. (૧૫)

अन्तरग्ने रुचा त्वमुखायाः सदने स्वे।
तस्यास्त्वꣳ हरसा तपञ्जातवेदः शिवो भव॥ १६॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-વેદોના જ્ઞાતા अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! त्वम्-આપ જે उखायाः-પ્રાપ્ત થયેલ પ્રજાની નીચેથી અગ્નિ સમાન स्वे-પોતાના सदने-અભ્યાસ સ્થાનમાં तपन्-શત્રુઓને સંતાપયુક્ત કરતાં अन्तः-મધ્યમાં रुचा-પ્રીતિથી વર્તાવ કરો, तस्याः-તે પ્રજાના हरसा-પ્રજ્વલિત તેજથી त्वम्-આપ શત્રુઓનું નિવારણ કરતાં शिवः-મંગલકારી भव-બનો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ સભાપતિ રાજા ન્યાયાસન પર બેસીને રાજ્ય પાલન સંબંધી કાર્યો કરે, તેમ પ્રજા રાજાને સુખી કરીને દુષ્ટોની તાડના કરે. (૧૬)

शिवो भूत्वा मह्यमग्नेऽअथो सीद शिवस्त्वम्।
शिवाः कृत्वा दिशः सर्वाः स्वं योनिमिहासदः॥ १७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન શત્રુઓને બાળનાર વિદ્વાન્ પુરુષ ! त्वम्-આપ मह्यम्-અમો પ્રજાજન માટે शिवः-સ્વયં મંગલકારી भूत्वा-બનીને इह-આ સંસારમાં शिवः-મંગલકારી થતાં सर्वाः-સર્વ दिशः-દિશાઓમાં રહેનારી પ્રજાઓને शिवाः-મંગલાચરણથી યુક્ત कृत्वा-કરીને स्वम्-પોતાના योनिम्-રાજધર્મના આસન પર आ+असदः-બેસો अथो-અને રાજધર્મમાં सीद-સ્થિર બનો. (૧૭)

ભાવાર્થ : રાજા સ્વયં ધાર્મિક બનીને, પ્રજાજનોને ધાર્મિક બનાવીને, ન્યાય-આસન પર બેસીને નિરંતર ન્યાય કરે. (૧૭)

दिवस्परि प्रथमं जज्ञेऽअग्निरस्मद्द्वितीयं परि जातवेदाः।
तृतीयमप्सु नृमणाऽअजस्रमिन्धानऽएनं जरते स्वाधीः॥ १८॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ રાજન્ ! જે अग्निः-અગ્નિ સમાન આપ अस्मत्-અમારા સાન્નિધ્યથી दिवः-વિદ્યુત્થી परि-ઉપર जज्ञे-પ્રકટ થાવ છો. તે एनम्-આપને प्रथमम्-પ્રથમ यः-જે जातवेदाः-બુદ્ધિમાનોમાં પ્રસિદ્ધ ઉત્પન્ન થયેલાં તે આપને द्वितीयम्-બીજા જે नृमणाः-મનુષ્યોમાં વિચારશીલ આપને तृतीयम्-ત્રીજા अप्सु-પ્રાણ વા જલ ક્રિયાઓમાં વિદિત્ થયેલ તે આપને अजस्रम्-નિરંતર इन्धानः-પ્રકાશિત કરતા વિદ્વાન परिजरते-સર્વ રીતે સ્તુતિ કરે છે, તે આપ स्वाधीः-સુંદર ધ્યાનથી યુક્ત પ્રજાઓને પ્રકાશિત કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પ્રથમ બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા, દ્વિતીય ગૃહાશ્રમથી ઐશ્વર્ય, તૃતીય વાનપ્રસ્થથી તપસ્યા, અને ચતુર્થ સંન્યાસાશ્રમમાં નિત્ય વેદવિદ્યા અને ધર્મનો પ્રકાશ કરે. (૧૮)

विद्मा तेऽअग्ने त्रेधा त्रयाणि विद्मा ते धाम विभृता पुरुत्रा।

विद्मा ते नाम॑ पर॒मं गुहा॒ यद्विद्मा तमुत्सं॒ यत॑ऽआज॒गन्थ॑॥ १९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ પુરુષ ! ते-આપના જે त्रेधा-ત્રણ પ્રકારથી त्रयाणि-ત્રણ કર્મ છે, તેને અમે विद्म-જાણીએ.

હે સ્થાનોના સ્વામી ! ते-આપના જે विभृत-વિશેષ ધારણ કરવા યોગ્ય पुरुत्रा-અનેક धाम-નામ, જન્મ અને સ્થાનરૂપ છે, તેને અમે विद्म-જાણીએ.

હે વિદ્વાન પુરુષ ! ते-આપના यत्-જે गुहा-બુદ્ધિમાં સ્થિત ગુપ્ત परमम्-શ્રેષ્ઠ नाम-નામ છે તેને અમે विद्म-જાણીએ.

यतः-જેથી આપ आजगन्थ-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાવ तम्-તે उत्सम्-કૂવા સમાન તૃપ્ત કરનાર આપને विद्म-અમે જાણીએ. (૧૯)

ભાવાર્થ : પ્રજા અને રાજા રાજનીતિના કાર્યો, સ્થાનો અને સર્વના નામો જાણે. જેમ ખેડૂત કૂવાથી જલ કાઢીને ખેતર વગેરેને તૃપ્ત કરે છે, તેમ પ્રજાજન ધન આદિથી રાજાને તૃપ્ત કરે અને રાજા પણ પ્રજાને તૃપ્ત કરે. (૧૯)

स॒मु॒द्रे त्वा॑ नृ॒मणा॑ऽअ॒प्स्व॒न्तर्नृ॒चक्षा॑ऽईधे दि॒वो अ॑ग्न॒ऽऊध॑न्।

तृ॒तीये॑ त्वा॒ रज॑सि तस्थि॒वास॑ꣳसम॒पामु॒पस्थे॑ महि॒षाऽअ॑वर्धन्॥ २०॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ પુરુષ ! नृमणाः-નેતાઓને વિચારનારો હું જે त्वा-આપને समुद्रे-આકાશમાં અગ્નિ સમાન ईधे-પ્રદીપ્ત કરું છું, नृचक्षाः-અનેક મનુષ્યોને જોનાર હું अप्सु-અન્ન અને જલોની अन्तः-મધ્યમાં પ્રકાશિત કરું છું, दिवः-સૂર્ય પ્રકાશના ऊधन्-પ્રાતઃ-કાલમાં પ્રકાશિત કરું છું, तृतीये-ત્રીજા रजसि-લોકમાં तस्थिवांसम्-સ્થિત સૂર્ય સમાન જે त्वा-આપને अपाम्-જલોની उपस्थे-સમીપ महिषाः-મહાત્મા વિદ્વાનો अवर्धन्-ઉન્નતિ પ્રાપ્ત કરે, તે આપ અમારી નિરંતર ઉન્નતિ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : પ્રજામાં વિદ્યમાન સર્વ પ્રધાન પુરુષો રાજવર્ગની નિત્ય ઉન્નતિ કરે અને રાજપુરુષો પ્રજાજનોની ઉન્નતિ કરે. (૨૦)

अक्र॑न्दद॒ग्नि स्त॒नय॑न्निव॒ द्यौः क्षामा॒ रेरि॑हद् वी॒रुधः॑ सम॒ञ्जन्।

स॒द्यो ज॑ज्ञा॒नो वि हीमि॒द्धोऽअख्य॒दा रोद॑सी भा॒नुना॑ भात्य॒न्तः॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ द्यौः-સૂર્યલોક अग्निः-વિદ્યુત્ स्तनयन्निव-શબ્દ કરવા સમાન वीरुधः-ઔષધિઓને समञ्जन्ः-પ્રકટ કરતાં सद्यः-શીઘ્ર हि-જ अक्रन्दत्-પદાર્થોને અહીં-તહીં ચલાવી क्षामा-પૃથિવીને रेरिहत् ધ્રુજાવે છે.

એ जज्ञानः-પ્રસિદ્ધ થઈને इद्धः-જ પ્રકાશમાન બનીને भानुना-કિરણો સાથે रोदसी-પ્રકાશ અને પૃથિવીને ईम्-સર્વત્રથી व्यख्यत्-વિખ્યાત કરે છે. અને બ્રહ્માંડની अन्तः-વચ્ચે आभाति-સારી રીતે શોભાયમાન થાય છે, તેમ તમે પણ બનો. (૨૧)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે જે માટે સૂર્યલોકને ઉત્પન્ન કરેલ છે, તે વિદ્યુત્‌ની સમાન સર્વ લોકોનું આકર્ષણ અને પ્રકાશન કરીને, ઔષધિ આદિ પદાર્થોની વૃદ્ધિનો હેતુ બનીને સર્વ ભૂગોળોની મધ્યમાં જેમ વિરાજમાન છે, તેમ રાજા આદિ મનુષ્યોએ પણ થવું જોઈએ. (૨૧)

श्रीणामुदारो धरुणो रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः।
वसुः सूनुः सहसोऽअप्सु राजा विभात्यग्रऽउषसामिधानः॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે उषसाम्-પ્રભાત સમયમાં अग्रे-આરંભમાં इधानः-પ્રદીપ્યમાન સૂર્ય સમાન, श्रीणाम्-સર્વ ઉત્તમ લક્ષ્મીનું, उदारः-પરીક્ષા પૂર્વક ઉત્તમ દાન કરનાર, रयीणाम्-ધનોના धरुणः-ધારણ કરનાર, मनीषाणाम्-બુદ્ધિઓને प्रार्पणः-પ્રાપ્ત કરાવનાર, सोमगोपाः-ઔષધિઓ વા ઐશ્વર્યની રક્ષા કરનાર, सहसः-બ્રહ્મચર્ય સેવિત જિતેન્દ્રિય બળવાન પિતાના सूनुः-પુત્ર, वसुः-બ્રહ્મચારી બનીને, अप्सु-પ્રાણોમાં राजा-પ્રકાશમાન બનીને विभाति-શુભ ગુણોનો પ્રકાશ કરે છે, તેને સર્વના અધ્યક્ષ-રાજા બનાવો. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; સુપાત્રોને દાન આપનાર, ધનનો વ્યર્થ વ્યય ન કરનાર, સર્વને વિદ્યા અને બુદ્ધિ પ્રદાન કરનાર, બ્રહ્મચર્ય સેવિત જિતેન્દ્રિય પિતાનો પુત્ર, યોગાંગોના સેવનથી પ્રકાશમાન, સૂર્યની સમાન, શત્રુઓના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી અધિક તેજસ્વી અને પિતા સમાન પ્રજાનું પાલન કરનાર મનુષ્ય છે, તેનો રાજ્ય કરવા માટે અભિષેક કરવો જોઈએ. (૨૨)

विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भऽआ रोदसीऽअपृणाज्जायमानः।
वीडुं चिदद्रिमभिनत् परायञ्जना यदग्निमयजन्त पञ्च॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે यत्-જે વિદ્વાન विश्वस्य-સર્વ भुवनस्य-લોકોના केतुः-પિતા સમાન રક્ષક અને પ્રકાશમાન, गर्भः-તેની મધ્યમાં રહેનાર, जायमानः-ઉત્પન્ન થનાર परायन्-શત્રુઓના ઉચ્છેદક બનીને रोदसी-પ્રકાશ અને પૃથિવીને आपृणात्-પરિપૂર્ણ કરે, वीडुम्-અત્યંત બલવાન अद्रिम्-મેઘને अभिनत्-છિન્ન-ભિન્ન કરે, જેમ पञ्च-પાંચ जनाः-પ્રાણરૂપ પુરુષ अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને अयजन्त-સંયુક્ત કરે છે, चित्-તેમ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોને કરે, તેને ન્યાયાધીશ રાજા માનો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ આ ભુવન [સૌર મંડલ]ની મધ્યમાં સૂર્ય- [પ્રકાશ પ્રાપ્ત કરાવનાર] અને આકર્ષણથી [સર્વને ધારણ કરનાર છે, તેમ જે] સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવનાર, રાજ્યને ધારણ કરનાર, શત્રુઓનો આમૂલ નાશ કરનાર, સુખોને ઉત્પન્ન કરનાર અને જેમ માતા ગર્ભનું પાલન કરે છે, તેમ પ્રજાનું પાલન કરનાર વિદ્વાન હોય, તેને રાજ્યમાં અધિકારી બનાવવો જોઈએ. (૨૩)

उशिक् पावको अरतिः सुमेधा मर्त्येष्वग्निरमृतो नि धायि।
इयर्त्ति धूममरुषंभरिभ्रदुच्छुक्रेण शोचिषा द्यामिनक्षन्॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઈશ્વરને मर्त्येषु-મનુષ્યોમાં જે उशिक्-માનનીય, पावकः-પવિત્ર કરનાર,

अरतिः-જ્ઞાનવાન, सुमेधाः-મેધાવી વિદ્વાન તથા अमृतः-અવિનાશી अग्निः-આકાશરૂપ જ્ઞાનનો પ્રકાશ नि+धायि-સ્થાપિત કરેલ છે.

જે शुक्रेण-શીઘ્રકારી, शोचिषा-પ્રકાશથી द्याम्-સૂર્યલોકમાં इनक्षन्-વ્યાપ્ત થઈને धूमम्-ધુમાડાના अस्रम्-રૂપને भरिभ्रत्-અત્યંત ધારણ કરીને વા ગાઢ બનાવીને उत् + इयर्त्ति-ઉપર પહોંચાડે છે-પ્રાપ્ત કરાવે છે, તે ઈશ્વરની ઉપાસના કરો વા અગ્નિનો ઉપકાર પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વર રચિત પદાર્થોના કારણ-કાર્ય-પૂર્વક વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૪)

दृशानो रुक्मऽउर्व्या व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्रिये रुचानः।

अग्निरमृतोऽअभवद्वयोभिर्यदेनं द्यौरजनयत्सुरेताः॥ २५॥

પદાર્થ ! હે મનુષ્યો તમે यत्-જે કારણે दृशानः-દેખાડનાર, रुक्मः-સોનેરી, श्रिये-શોભા માટે, रुचानः-પ્રદીપક, दुर्मर्षम्-સર્વ દુઃખોથી રહિત, आयुः-જીવન બનાવનાર, अमृतः-અવિનાશી, अग्निः-તેજસ્વરૂપ, उर्व्या-પૃથિવીની સાથે પદાર્થોને वि+अद्यौत्-પ્રકાશિત કરે છે, वयोभिः-વ્યાપક ગુણોથી યુક્ત अभवत्-ઉત્પન્ન થનાર અને જે द्यौः-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ सुरेताः-ઉત્તમ પરાક્રમવાળા જગદીશ્વરને यत्-જેના માટે एनम्-એ અગ્નિને अजनयत्-ઉત્પન્ન કરે છે, તે ઈશ્વર. આયુ અને અગ્નિને જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સંસારના રચયિતા અનાદિ ઈશ્વરને તથા જગતના અનાદિ કારણ-પ્રકૃતિને ગુણ-કર્મ-સ્વભાવો સાથે જાણીને-ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે, તેઓ દીર્ઘાયુ અને ધનવાન્ બને છે. (૨૫)

यस्तेऽअद्य कृणवद्भद्रशोचेऽपूपं देव घृतवन्तमग्ने।

प्र तं नय प्रतरं वस्योऽअच्छाभि सुम्नं देवभक्तं यविष्ठ॥ २६॥

પદાર્થ : હે भद्रशोचे-સેવન કરવા યોગ્ય દીપ્તિમાન यविष्ठ-અત્યંત યુવક, देव-દિવ્ય ભોગોના પ્રદાતા, अग्ने-વિદ્વાન્ ! यः-જે ते-આપના घृतवन्तम्-બહુ ઘૃત આદિ પદાર્થોથી યુક્ત, अभि+सुम्नम्-સુખ સ્વરૂપ, देवभक्तम्-વિદ્વાનોના સેવન યોગ્ય, अपूपम्-ભોજન યોગ્ય પદાર્થ યુક્ત, वस्यः-અત્યંત ભોગ્ય अच्छ-ઉત્તમ-ઉત્તમ પદાર્થોને कृणवत्-બનાવે तम्-તે प्रतरम्-રસોઈયાને આપ अद्य-આજે જ प्रणय-પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો વિદ્વાનો દ્વારા સુશિક્ષિત અત્યુત્તમ વ્યંજનો-વાનગીઓ તથા અત્યંત સ્વાદિષ્ટ અને રુચિકારક અન્નોના નિર્માતા રસોઈયાને ગ્રહણ કરે. (૨૬)

आ तं भज सौश्रवसेष्वग्नऽउक्थऽउक्थऽआभज शस्यमाने।

प्रियः सूर्ये प्रियोऽअग्ना भवात्युज्जातेन भिनदुदुज्जनित्वैः॥ २७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! આપ જે सौश्रवसेषु-સુંદર ધનોમાં વિદ્યમાન છો. तम्-તેનું आभज-સેવન કરો, शस्यमाने-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય उक्थे उक्थे-અત્યંત વાક્ વ્યવહારમાં प्रियः-પ્રીતિ રાખો,

જે सूर्ये-સ્તુતિકારક પુરુષોમાં થયેલા વ્યવહાર અને अग्ना-અગ્નિવિદ્યામાં प्रियः-સેવવા યોગ્ય, जातेन-ઉત્પન્ન થયેલ અને जनित्वैः-ઉત્પન્ન થનાર પુરુષની સાથે उत्+भवाति-ઉત્પન્ન થાય અને શત્રુઓને उत्+भिनदत्-છિન્ન-ભિન્ન કરે, तम्-તેનું આપ आभज-સેવન કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પાક કાર્યમાં કુશળ, સર્વનો પ્રિય, અન્ન અને વ્યંજનોનો ભેદક જે રસોઈયો હોય તેનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. (૨૭)

त्वाम॑ग्ने॒ यज॑माना॒ऽअनु॒ द्यून्॒ विश्वा॒ वसु॒ दधिरे॒ वार्या॑णि।

त्वया॑ स॒ह द्रवि॑णमि॒च्छमा॑ना व्र॒जं गोम॑न्तमु॒शिजो॒ विव॑व्रुः॥ २८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન ! જે त्वाम्-આપનો આશ્રય કરીને उशिजः-બુદ્ધિમાન यजमानाः-સંગતિકારક લોકો त्वया-આપની सह-સાથે अनुद्यून्-અનુકૂળ દિવસોમાં विश्वा-સર્વ वार्याणि-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય वसु-દ્રવ્યોને दधिरे-ધારણ કરે, द्रविणम्-ધનની इच्छमानाः-ઈચ્છા કરતા गोमन्तम्-સુંદર કિરણોના રૂપથી યુક્ત व्रजम्-મેઘ વા ગોસ્થાનને वि+वव्रुः-વિવિધ પ્રકારથી ગ્રહણ કરે, તેમ અમે પણ બનીએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રયત્નશીલ વિદ્વાનોના સંગમાં પુરુષાર્થ સાથે પ્રતિદિન વિદ્યા અને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૮)

अस्ता॑व्य॒ग्निर्न॒राꣳ सु॒शेवो॑ वैश्वान॒रऽऋषि॑भिः सोम॑गोपाः।

अ॒द्वे॒षे द्यावा॑पृथिवी हु॑वेम॒ देवा॑ ध॒त्त र॒यिम॒स्मे सु॒वीर॑म्॥ २९॥

પદાર્થ : હે देवाः-શત્રુઓને જીતવાની ઈચ્છા કરનાર વિદ્વાનો ! જે ऋषिभिः-ઋષિઓ દ્વારા તમોને नराम्-નાયક વિદ્વાનોમાં, सुशेवः-સુંદર સુખયુક્ત, वैश्वानरः-સર્વ મનુષ્યોના આધાર, अग्निः-પરમેશ્વરની अस्तावि-સ્તુતિ કરી છે.

જે તમે अस्मे-અમારા માટે सुवीरम्-જેથી શ્રેષ્ઠ વીરો હોય તે रयिम्-રાજ્યલક્ષ્મીને धत्त-ધારણ કરો, તેને આશ્રિત सोमगोपाः-ઐશ્વર્યના રક્ષક અમે अद्वेषे-દ્વેષ કરવાને અયોગ્ય, પ્રીતિ વિષયક द्यावापृथिवी-પ્રકાશસ્વરૂપ રાજનીતિ અને પૃથિવીનું રાજ્ય हुवेम-ધારણ કરીએ. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે સચ્ચિદાનંદ ઈશ્વરના સેવક ધાર્મિક વિદ્વાન છે, તેઓ પરોપકારી હોવાના કારણે 'આપ્ત' હોય છે. એવા લોકોની સંગતિ વિના કોઈપણ પોતાની વિદ્યા તથા પોતાના રાજ્યને સુસ્થિર બનાવી શકતા નથી. (૨૯)

स॒मिधा॒ग्निं दु॑वस्यत घृ॒तैर्बो॑धय॒ताति॑थिम्। आस्मि॑न्ह॒व्या जु॑होतन॥ ३०॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થો ! તમે જેમ समिधा-ઉત્તમ રીતે બળતણથી अग्निम्-અગ્નિને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઉપદેશક વિદ્વાનોનું दुवस्यत-સેવન કરો.

જેમ સંસ્કૃત અન્ન તથા घृतैः-ઘી વગેરે પદાર્થોને અગ્નિમાં હોમીને જગદુપકાર કરે છે, તેમ अतिथिम्-અનિયત્ તિથિવાળા ઉપદેશક વિદ્વાનોને बोधयत-સ્વાગત અને ઉત્સાહાદિથી સચેત કરો.

अस्मिन्-આ જગતમાં हव्या-દેવા યોગ્ય પદાર્થોનું आजुहोतन-સારી રીતે દાન કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો સત્પુરુષોની સેવા કરે અને સત્પાત્રોને જ દાન આપે. જેમ અગ્નિમાં ઘૃત આદિનો હોમ કરીને સંસારનો ઉપકાર કરે છે, તેમ વિદ્વાનોને ઉત્તમ પદાર્થોનું દાન કરીને જગતમાં વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિ કરી વિશ્વને સુખી કરો. (૩૦)

उदु त्वा विश्वे देवाऽअग्ने भरन्तु चित्तिभिः।

स नो भव शिवस्त्वꣳ सुप्रतीको विभावसुः॥ ३१॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! જે त्वा-આપને विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાન પુરુષ चित्तिभिः-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનોની સાથે અગ્નિ સમાન उद्+उ+भरन्तु-પુષ્ટ કરે. सः-તે विभावसुः-જેનાથી વિવિધ પ્રકારની શોભા વા વિદ્યા પ્રકાશિત થાય. सुप्रतीकः-સુંદર લક્ષણોથી યુક્ત त्वम्-આપ नः-અમારા માટે शिवः-મંગલમય વચનોના ઉપદેશક भव-બનો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જેમ વિદ્વાનોથી વિદ્યાનો સંચય કરે છે, તેમ અન્યોને પણ વિદ્યાયુક્ત બનાવે. (૩૧)

प्रेदग्ने ज्योतिष्मान् याहि शिवेभिरर्चिभिष्ट्वम्।

बृहद्भिर्भानुभिर्भासन् मा हिꣳसीस्तन्वा प्रजाः॥ ३२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્યા પ્રકાશક વિદ્વાન ! त्वम्-તું જેમ ज्योतिष्मान्-સૂર્યની જ્યોતિઓથી યુક્ત शिवेभिः-મંગલકારી अर्चिभिः-પૂજિત बृहद्भिः-મહાન્ भानुभिः-પ્રકાશ ગુણોથી इत्-જ भासन्-પ્રકાશમાન છે, તેમ प्रयाहि-સુખોને પ્રાપ્ત કરો. અને त्वा-શરીરથી प्रजाः-પાલન યોગ્ય પ્રાણીઓને मा हिंसीः-મારો નહિ. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો સહિત રાજન્ ! તું શરીરથી અપરાધ ન કરનાર કોઈ પણ પ્રાણીની હિંસા ન કરીને, વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રકાશથી પ્રજાઓનું પાલન કરતાં, જીવિત અવસ્થામાં સાંસારિક સુખ અને મૃત્યુ પછી મુક્તિ સુખને પ્રાપ્ત કર. (૩૨)

अक्रन्ददग्नि स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद् वीरुधः समञ्जन्।

सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धोऽअख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः॥ ३३॥

પદાર્થ : હે પ્રજાજનો ! તમે જેમ द्यौः-સૂર્ય પ્રકાશકર્તા છે, તેમ વિદ્યા અને ન્યાયનો પ્રકાશ કરનાર

તથા अग्निः-પાચકની સમાન શત્રુઓનો નાશ કરનાર વિદ્વાન स्तनयन्निव-વિદ્યુત્‌ની સમાન अक्रन्दत्-ગર્જના કરતાં અને वीरुधः-વનના વૃક્ષોની समञ्जन्-ઉત્તમ રીતે રક્ષા કરતાં क्षामा-પૃથિવી પર रेरिहत्-યુદ્ધ કરે.

जज्ञानः-રાજનીતિથી પ્રસિદ્ધ થયેલ इद्धः-શુભ લક્ષણોથી પ્રકાશિત सद्यः-શીઘ્ર व्यख्यत्-ધર્મયુક્ત ઉપદેશ કરે તથા भानुना-પુરુષાર્થના પ્રકાશથી हि-જ रोदसी-અગ્નિ અને ભૂમિને अन्तः-રાજધર્મમાં સ્થિર રાખતાં आभाति-સારી રીતે પ્રકાશ કરે છે, તે પુરુષ રાજા થવાને યોગ્ય છે એમ નિશ્ચિત જાણો. (૩૩)

ભાવાર્થ : વનના વૃક્ષોની રક્ષા વિના વરસાદની અધિકતા અને આરોગ્ય પ્રાપ્ત થતાં નથી. વિદ્યુત્ વ્યવહારની સમાન દૂરના સમાચારોનું ગ્રહણ, શત્રુઓનો વિનાશ, રાજ્યમાં વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રકાશ વિના સુરાજ્ય થતું નથી. (૩૩)

प्रप्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वि यत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः ।
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ दीदाय दैव्योऽअतिथिः शिवो नः ॥ ३४ ॥

પદાર્થ : હે રાજા અને પ્રજાના પુરુષો ! તમે यत्-જે अयम्-એ अग्निः-સેનાપતિ सूर्यः-સૂર્યની न-સમાન बृहद्भाः-અત્યંત પ્રકાશયુક્ત प्रप्र-અત્યંત પ્રકાશની સાથે रोचते-પ્રકાશિત થાય છે, यः-જે नः-અમારી पृतनासु-સેનાઓમાં पूरुम्-પૂર્ણ બલયુક્ત સેનાધ્યક્ષની નજીક अभि+तस्थौ-સર્વ રીતે સ્થિર રહે.

दैव्यः-વિદ્વાનોમાં પ્રિય, अतिथिः-નિત્ય ભ્રમણ કરનાર અતિથિ शिवः-મંગલદાતા વિદ્વાન્ પુરુષ विद्या + दीदाय-વિદ્યા અને ધર્મને પ્રકાશિત કરે,-જેને હું भरतस्य-સેવવા યોગ્ય રાજ્યના રક્ષક शृण्वे-સાંભળું છું, તેને સેનાના અધિપતિ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે પુણ્ય યશવાળા પુરુષની, શત્રુઓ પર વિજય અને વિદ્યા પ્રચારની વાત સાંભળવામાં આવે છે, તે કુલીન પુરુષ જ સેનાથી યુદ્ધ કરાવનાર [સેનાપતિ] ના રૂપમાં અધિકારી બનાવવા યોગ્ય છે. (૩૪)

आपो देवीः प्रतिगृभ्णीत भस्मैतत्स्योने कृणुध्वꣳ सुरभाऽउ लोके ।
तस्मै नमन्तां जनयः सुपत्नीर्मातेव पुत्रं बिभृताप्स्वेनत् ॥ ३५ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જે आपः પવિત્ર જલની સમાન સંપૂર્ણ શુભ ગુણો અને વિદ્યાઓમાં વ્યાપક બુદ્ધિ देवीः-સુંદર રૂપ સુશીલ સ્વભાવયુક્ત કન્યાઓ सुरभौ-ઐશ્વર્યના પ્રકાશક આ लोके-દર્શનીય લોકમાં પોતાના પતિઓને પ્રસન્ન-સુખી કરે છે તેને प्रतिगृभ्णीत-સ્વીકાર કરો તથા તેને સુખયુક્ત कृणुध्वम्-કરો.

જે एतत्-એ भस्म-પ્રકાશક તેજ છે. तस्मै-તેને માટે જ सुपत्नीः-સુંદર પત્નિઓ जनयः-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા પ્રસિદ્ધ થઈ નમસ્તે કરે છે, તેના પ્રત્યે આપ લોકો પણ नमन्ताम्-નમ્ર બનો.

उ-તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ મળીને पुत्रम्-પુત્રને मातेव-માતા સમાન अप्सु-પ્રાણોમાં एनत्-એ પુત્રને बिभृत-ધારણ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરસ્પર પ્રસન્નતાથી સ્વયંવર કરીને, ધર્મપૂર્વક સંતાન ઉત્પન્ન કરીને તથા તેને વિદ્વાન બનાવીને ગૃહાશ્રમના ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૩૫)

अप्स्वग्ने सधिष्टव सौषधीरनुरुध्यसे। गर्भे सञ्जायसे पुनः॥ ३६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન વિદ્વાન જીવ ! જે सधिः-સહનશીલ તું अप्सु-જલોમાં ओषधीः-સોમલતા આદિ ઔષધિઓને अनु+रुध्यसे-પ્રાપ્ત થાય છે, सः-તે जायसे-ગર્ભમાં सन्-રહીને पुनः-ફરી-ફરી જન્મ-મરણ એ तव-તારા ક્રમ-અનુક્રમ રહે, એમ જાણ. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે જીવ શરીર ત્યાગ કરે છે, તે વાયુ અને ઔષધિ આદિમાં ભ્રમણ કરીને, ગર્ભને પ્રાપ્ત કરી, યથાસમય શરીર ધારણ કરીને ફરી જન્મ પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૬)

गर्भोऽअस्योषधीनां गर्भो वनस्पतीनाम्।
गर्भो विश्वस्य भूतस्याग्ने गर्भोऽअपामसि॥ ३७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-બીજા શરીરને પ્રાપ્ત થનાર જીવ ! જેથી તું અગ્નિની સમાન જે ओषधीनाम्-સોમલતા આદિ વા યવાદિ ઔષધિઓના गर्भः-દોષોના મધ્ય गर्भः-ગર્ભ वनस्पतीनाम्-પીપળ આદિ વનસ્પતિઓની મધ્ય गर्भः-શોધક विश्वस्य-સર્વ भूतस्य-ઉત્પન્ન થયેલ સંસારની મધ્ય गर्भः-ગ્રહણ કરનાર અને જે अपाम्-પ્રાણ અથવા જલોના गर्भः-ગર્ભરૂપ અંદર રહેનાર असि-તેથી તું અજ અર્થાત્ સ્વયં જન્મરહિત असि-છે. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્યુત્‌ની સમાન સર્વની અન્તર્ગત શરીર ધારણ કરનાર જીવ છે, તેને જાણો. (૩૭)

प्रसद्य भस्मना योनिमपश्च पृथिवीमग्ने।
सꣳसृज्य मातृभिष्ट्वं ज्योतिष्मान् पुनरासदः॥ ३८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પ્રકાશમાન પુરુષ, સૂર્ય સમાન ज्योतिष्मान्-પ્રશંસિત પ્રકાશથી યુક્ત જીવ ! त्वम्-તું भस्मना-શરીર દાહ પછી पृथिवीम्-પૃથિવી च-અગ્નિ આદિ અને अपः-જલની મધ્યમાં योनिम्-દેહ ધારણના કારણને प्रसद्य-પ્રાપ્ત થઈને मातृभिः-માતાના ઉદરમાં વાસ કરીને पुनः-ફરી आसदः-શરીરને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે જીવો ! આપ જ્યારે શરીર છોડો છો, ત્યારે તેને ભસ્મીભૂત કરીને પૃથિવી આદિ-પંચભૂતોની સાથે સંયુક્ત કરો.

તમે અને તમારા આત્માઓ માતાઓના શરીરોમાં ગર્ભાશયમાં દાખલ થઈને ફરી શરીર ધારણ કરીને વિદ્યમાન બનો છો. (૩૮)

पुन॑रा॒सद्य॒ सद॑नम॒पश्च॑ पृथि॒वीम॑ग्ने।
शेषे॑ मा॒तुर्यथो॒पस्थे॒ऽन्तर॑स्याᳬ शि॒वत॑मः॥ ३९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-ઈચ્છા આદિ ગુણોથી પ્રકાશિત જીવ ! જે કારણે તું अपः-જલો च-અને पृथिवीम्-ભૂમિતલના सदनम्-સ્થાનને पुनः-ફરી-ફરી आसद्य-પ્રાપ્ત થઈને अस्याम्-એ માતાના अन्तः-ગર્ભાશયમાં शिवतमः-અત્યંત મંગલકારી બનીને यथा-જેમ બાળક मातुः-માતાની उपस्थे-ગોદમાં शेषे-સૂએ છે, તેમ માતાની સેવામાં મંગલકારી બન. (૩૯)

ભાવાર્થ : જેમ માતાઓ પોતાના સંતાનોને સુખ આપે છે, તેમ જ પુત્રોએ અનુકૂળતાપૂર્વક સેવા દ્વારા પોતાની માતાઓને નિરંતર આનંદિત રાખવી જોઈએ. માતા-પિતાથી કદીપણ વિરોધ ન કરવો જોઈએ અને માતા-પિતાએ તેને અધર્મ અને કુશિક્ષાથી યુક્ત કદીપણ ન કરવા જોઈએ. (૩૯)

पुन॑रू॒र्जा निव॑र्त्तस्व॒ पुन॑रग्नऽइ॒षायु॑षा। पुन॑र्नः पा॒ह्यꣳह॑सः॥ ४०॥

પદાર્થ : હે अग्ने-તેજસ્વીન્ માતા-પિતા ! આપ इषायुषा-અન્ન અને જીવન સાથે नः-અમારી ઉન્નતિ કરો, पुनः-ફરી-વારંવાર अंहसः-દુષ્ટ આચરણોથી पाहि-રક્ષા કરો.

હે પુત્ર ! તું ऊर्जा-પરાક્રમ સાથે પાપોથી निवर्त्तस्व-દૂર રહે અને पुनः-ફરી અમને પણ પાપોથી બચાવ.

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન માતા-પિતા ઉત્તમ સંતાનોને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા દુષ્ટાચરણથી દૂર રાખે, તેમ સંતાન પણ તેને પાપાચરણથી સદા પૃથક્ રાખે. તે વિના સર્વ ધાર્મિક બની શકતા નથી. (૪૦)

स॒ह र॒य्या निव॑र्त्त॒स्वाग्ने॒ पिन्व॑स्व॒ धार॑या। वि॒श्वप्स्न्या॑ वि॒श्वत॒स्परि॑॥ ४१॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન પુરુષ ! આપ विश्वप्स्न्या સર્વ પદાર્થોના ભોગનું સાધન धारया-સુસંસ્કૃત વાણી रय्या-અને ધનની सह-સાથે विश्वतस्परि-સર્વ જગતના મધ્યમાં नि-નિરંતર वर्त्तस्व-નિશ્ચયથી વિદ્યમાન રહો અને અમારું पिन्वस्व-સેવન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ આ સંસારમાં સુબુદ્ધિ અને પુરુષાર્થ દ્વારા શ્રીમાન બનીને અન્યોને પણ ધનવાન બનાવવા જોઈએ. (૪૧)

बोधा॑ मेऽअ॒स्य वच॑सो यविष्ठ॒ मꣳहि॑ष्ठस्य॒ प्रभृ॑तस्य स्वधावः।
पीय॑ति त्वो॒ऽअनु॑ त्वो गृणाति॒ व॒न्दारु॑ष्टे त॒न्वं॒ वन्देऽअग्ने॥ ४२॥

પદાર્થ : હે यविष्ठ-અત્યંત યુવક ! स्वधावः-પ્રશંસિત બહુ અન્નોવાળા, अग्ने-ઉપદેશને યોગ્ય શ્રોતાજન ! તું मे-મારા प्रभृतस्य-ઉત્તમ રીતિથી ધારણ વા પોષણ કરનાર, मंहिष्ठस्य-સર્વથા ભાષણને યોગ્ય अस्य-આ वचसः-વચનને અભિપ્રાયને बोध-જાણી જે त्वः-નિંદક પુરુષ पीयति-નિંદા કરે त्वः-કોઈ अनु-પરોક્ષમાં गृणाति-સ્તુતિ કરે તે ते-આપના तन्वम्-શરીરને वन्दारू-અભિવાદન કરનાર હું वंदे-સ્તુતિ કરું છું. (૪૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે કોઈ, કોઈને ભણાવે અથવા ઉપદેશ આપે, ત્યારે ભણનાર અને સાંભળનારે ધ્યાન આપીને ભણવું અને સાંભળવું જોઈએ. જ્યારે સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય થઈ જાય ત્યારે સત્યનું ગ્રહણ કરી, અસત્યનો ત્યાગ કરવો જોઈએ.

આમ કરવાથી કોઈ નિંદા કરે અથવા કોઈ પ્રશંસા કરે, તેમ છતાં સત્યનો કદી ત્યાગ ન કરવો અને અસત્યનું ગ્રહણ કરવું નહિ. આ મનુષ્ય માટે વિશેષ ગુણ છે. (૪૨)

स बौधि सूरिर्मघवा वसुपते वसुदावन्।

युयोध्युस्मद्द्वेषांꣳसि विश्वकर्मणे स्वाहा॥ ४३॥

પદાર્થ : હે વસુપતે-ધનોના પાલક, વસુદાવન્-સુપાત્રોને ધન આપનાર ! જે મઘવા-પ્રશંસિત વિદ્યાથી યુક્ત સૂરિઃ-મેધાવી વિદ્વાન્ ! આપ સત્યને બોધિ-જાણો સઃ-તે આપ વિશ્વકર્મણે-સર્વ શુભ કર્મોના અનુષ્ઠાન માટે સ્વાહા-સત્યવાણીથી ઉપદેશ કરતાં આપ અસ્મત્-અમને દ્વેષાંસિ-દ્વેષયુક્ત કર્મોથી વિ+યુયોધિ-સદા દૂર કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય બ્રહ્મચર્યથી જિતેન્દ્રિય બનીને દ્વેષનો ત્યાગ કરીને, ધર્મના માધ્યમથી ઉપદેશ આપીને તથા સાંભળીને પ્રયત્નશીલ રહે છે, તે જ ધાર્મિક વિદ્વાન સત્ય અને અસત્યને જાણનાર અને તેનો ઉપદેશ કરવામાં સમર્થ બને છે, અન્ય હઠાગ્રહી, અભિમાની અને ક્ષુદ્રાશય-નીચ હૃદયના મનુષ્યો નહિ. (૪૩)

पुनस्त्वाऽऽदित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः।

घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः॥ ४४॥

પદાર્થ : હે વસુનીથ-વેદાદિ શાસ્ત્રના બોધરૂપ ધન અને સુવર્ણાદિ ધનને પ્રાપ્ત કરાવનાર અધ્યાપક વા શ્રોતા ! ત્વમ્-આપ યજ્ઞૈઃ-અધ્યયન-અધ્યાપન આદિ ક્રિયારૂપ યજ્ઞોથી તથા ઘૃતેન-સુસંસ્કૃત ઘૃત આદિ વા જલથી તન્વમ્-શરીરને નિત્ય વર્ધયસ્વ-વધારો. પુનઃ-પઠન-પાઠન પછી ત્વા-આપને આદિત્યાઃ-પૂર્ણ વિદ્યા બળથી યુક્ત રુદ્રાઃ-મધ્યમકોટિના વિદ્વાન વસવઃ-પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન, બ્રહ્માણઃ-ચારેય વેદોના અધ્યયનથી 'બ્રહ્મા' પદને પ્રાપ્ત વિદ્વાન સમ + ઇન્ધતામ્-સમ્યક્ પ્રકાશિત કરે, આ રીતે અનુષ્ઠાન કરવાથી યજમાનસ્ય-યજ્ઞ, સત્સંગ અને વિદ્વાનોનો સત્કાર કરનાર પુરુષની કામાઃ-અભિલાષાઓ સત્યાઃ-સત્ય સન્તુ-બને. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો પ્રયત્નથી સમસ્ત વિદ્યાઓ ભણીને-ભણાવીને વારંવાર સત્સંગ કરે છે. વળી કુપથ્ય અને વિષયોનો ત્યાગ કરી શરીર અને આત્માના આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરીને નિત્ય પુરુષાર્થ કરે છે. તેઓના સંકલ્પો સિદ્ધ થાય છે. અન્યોના નહીં. (૪૪)

अपेत वीत वि च सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतनाः।

अदाद्यमोऽवसानं पृथिव्याऽअक्रन्निमं पितरो लोकमस्मै॥ ४५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! ये-જે अत्र-આ સમયે पृथिव्याः-ભૂમિ પર વિદ્યમાન पुराणाः-પ્રથમ વિદ્યા ભણી ચૂક્યા છે, च-અને ये-જે नूतनाः-વર્તમાનમાં વિદ્યાભ્યાસ કરનારા, पितरः-પિતા, અધ્યાપક વા પરીક્ષક स्थ-છે. ते-તેઓ अस्मै-એ સત્ય સંકલ્પી મનુષ્ય માટે इमम्-આ लोकम्-વૈદિક જ્ઞાન લોકને अक्रन्-પ્રાપ્ત કરે.

જે તમને यमः-પ્રાપ્ત થયેલ પરીક્ષક अवसानम्-અવકાશ વા અધિકાર अदात्-પ્રદાન કરે, તે તમે अतः-એ અધર્મથી अप+इत-દૂર રહો, અને ધર્મને वि+इत-વિશેષ રીતે પ્રાપ્ત કરો. अत्र-અને આ સમયે જ वि+सर्पत-વિશેષતાથી પ્રાપ્ત કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : માતા, પિતા અને આચાર્યનો એ પરમ ધર્મ છે, કે સંતાનોને વિદ્યા અને સુશિક્ષાની પ્રાપ્તિ કરાવે. જે અધર્મથી મુક્ત અને ધર્મથી યુક્ત તથા પરોપકાર પ્રેમી વૃદ્ધ અને યુવા વિદ્વાન છે, તેઓ નિરંતર સત્ય ઉપદેશથી અવિદ્યાને દૂર કરીને વિદ્યાને પ્રવૃત્ત કરીને કૃત-કૃત્ય બને. (૪૫)

संज्ञानमसि कामधरणं मयि ते कामधरणं भूयात्।

अग्नेर्भस्मास्यग्नेः पुरीषमसि चित स्थ परिचितऽऊर्ध्वचितः श्रयध्वम्॥ ४६ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જે संज्ञानम्-સંપૂર્ણ વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત असि-છો, જે આપ अग्नेः-અગ્નિથી બનેલ भस्म-રાખ સમાન દોષોને ભસ્મ કરો असि-છો, अग्नेः-વિદ્યુત્‌ના જે पुरीषम्-પૂર્ણ બળને પ્રાપ્ત કરેલ असि-છો, તે વિજ્ઞાન, ભસ્મ અને બળ મને પ્રાપ્ત કરાવો.

જે ते-આપના જે कामधरणम्-સંકલ્પનો આધાર અન્તઃકરણ છે, તે कामधरणम्-કામનો આધાર मयि-મારામાં પણ भूयात्-બને.

જેમ તમે વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોથી चितः-એકત્ર થઈ, परिचितः-સર્વ પદાર્થોને સર્વત્રથી એકત્ર કરનાર ऊर्ध्वचितः-ઉત્કૃષ્ટ ગુણોના સંચયકર્તા પુરુષાર્થનું श्रयध्वम्-સેવન કરો છો, તેમ અમે પણ કરીએ. (૪૬)

ભાવાર્થ : જિજ્ઞાસુ લોકો સદા વિદ્વાનોને વિદ્યાઓની ઈચ્છા કરીને પ્રાર્થનાપૂર્વક પૂછે, કે જેટલું આપમાં પદાર્થ વિજ્ઞાન છે, તેટલું સર્વ અમારામાં સ્થાપિત કરો. જેટલી હસ્તક્રિયાઓ આપ જાણો છો, તેટલી અમને પણ શીખવો. જેમ અમે આપને આશ્રિત રહીએ, તેમ તમે પણ અમારા આશ્રિત રહો. (૪૬)

अयꣳसोऽअग्निर्यस्मिन्त्सोममिन्द्रः सुतं दधे जठरे वावशानः।

सहस्रियं वाजमत्यं न सप्तिꣳ ससवान्त्सन्त्स्तूयसे जातवेदः॥ ४७॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરેલ વિદ્વાન્ ! જેમ ससवान्-દાન કરતાં सन्-આપ स्तूयसे-પ્રશંસાને યોગ્ય છો. अयम्-એ अग्निः-અગ્નિ અને इन्द्रः-સૂર્ય यस्मिन्-જેમાં सोमम्-સર્વ ઔષધિઓના રસને ધારણ કરે છે, જે सुतम्-તૈયાર કરેલ પદાર્થ जठरे-પેટમાં હું दधे-ધારણ કરું છું, सः-તે હું वावशानः-શીઘ્ર કામના કરતાં, सहस्रियम्-સાથે વિદ્યમાન મારી સ્ત્રી-પત્નીને ધારણ કરું છું, અને આપની સાથે

वाजम्-અન્ન આદિ પદાર્થોને अत्यम्-વ્યાપ્ત હોવા યોગ્યની न-સમાન सप्तिम्-ઘોડાને दधे-ધારણ કરું છું, તેમ તું પણ કર. (૪૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ અને સૂર્ય સર્વ રસોને ગ્રહણ કરીને સમસ્ત સંસારને રસયુક્ત કરે છે, જેમ પતિની સાથે સ્ત્રી અને સ્ત્રીની સાથે પતિ આનંદ ભોગવે છે, તેમ હું તે રસને ધારણ કરું છું. જેમ સદ્‌ગુણોથી યુક્ત થઈને આપ સ્તુતિ પાત્ર બનો છો, તેમ હું પણ પ્રશંસિત બનું. (૪૭)

अग्ने यत्ते दिवि वर्चः पृथिव्यां यदोषधीष्वप्स्वा यजत्र।
येनान्तरिक्षमुर्वाततन्थ त्वेषः स भानुरर्णवो नृचक्षाः॥ ४८॥

પદાર્થ : હે यजत्र-સંગ કરવા યોગ્ય अग्ने-વિદ્વાન્ ! यत्-જે ते-આપનું અગ્નિ સમાન दिवि-દીપ્તિમય આત્મામાં वर्चः-વિજ્ઞાનનો પ્રકાશ છે, यत्-જે पृथिव्याम्-પૃથિવી ओषधीषु-જવ વગેરે ઔષધિઓ અને अप्सु-પ્રાણો અથવા જલોના વિષયમાં वर्चः-તેજ અર્થાત્ વિજ્ઞાન પ્રકાશ છે. येन-જેથી नृचक्षाः-મનુષ્યોને બતાવનાર भानुः-સૂર્ય अर्णवः-અધિક જલયુક્ત त्वेषः-સાગર વિસ્તૃત છે, येन-જેથી अन्तरिक्षम्-આકાશને उरु-અધિક आततन्थ-ચોતરફ વિસ્તાર યુક્ત છે, તેમ सः-આપ તે વિજ્ઞાનપ્રકાશને અમારામાં સ્થાપિત કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : આ જગતમાં જેને સૃષ્ટિના પદાર્થોનું વિજ્ઞાન જેવું હોય, તેવું અન્યોને શીઘ્ર ગ્રહણ કરાવે. જો ગ્રહણ ન કરાવે તો તે નષ્ટ પામેલું અન્યોથી પ્રાપ્ત થઈ શકશે નહિ. (૪૮)

अग्ने दिवोऽअर्णमच्छा जिगास्यच्छा देवाँ२ऽऊचिषे धिष्ण्या ये।
या रोचने परस्तात् सूर्यस्य याश्चावस्तादुपतिष्ठन्तऽआपः॥ ४९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! જે આપ दिवः-પ્રકાશથી अर्णम्-વિજ્ઞાનને याः જે आपः-પ્રાણ વા જલ सूर्यस्य-સૂર્યના रोचने-પ્રકાશમાં परस्तात्-ઉપર છે. च-અને याः-જે अवस्तात्-નીચે उपतिष्ठन्ते-સમીપમાં સ્થિત છે, તેની अच्छ-સારી રીતે जिगासि-સ્તુતિ કરો છો.

ये-જે धिष्ण्याः-ઉપદેશ કરનાર છે તે देवान्-દિવ્યગુણયુક્ત વિદ્યાર્થીઓ વા વિદ્વાનો પ્રત્યે વિજ્ઞાનને अच्छ-સારી રીતે ऊचिषे-ઉપદેશ કરો છો, તેનો આપ અમારા માટે પણ ઉપદેશ કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે અત્યંત વિચારપૂર્વક વિદ્યુત્ અને સૂર્યના કિરણોમાં ઉપર, નીચે રહેનાર જલ અને વાયુ સંબંધી બોધને જેવા પ્રાપ્ત કરે છે, તેનો અન્યોને પણ સમ્યક્ ઉપદેશ કરે. (૪૯)

पुरीष्यासोऽअग्नयः प्रावणेभिः सजोषसः।
जुषन्तां यज्ञमद्रुहोऽनमीवाऽइषो महीः॥ ५०॥

પદાર્થ : સર્વ મનુષ્યો प्रावणेभिः વિવિધ વિજ્ઞાનોથી યુક્ત થઈને अनमीवाः-રોગરહિત, अद्रुहः-દ્રોહરહિત, सजोषसः-સમાન સેવા અને પ્રીતિયુક્ત, पुरीष्यासः-પૂર્ણ ગુણ-કર્મોમાં નિપુણ अग्नयः-અગ્નિસમાન વિદ્યમાન તેજસ્વી વિદ્વાન यज्ञम्-વિદ્યા, વિજ્ઞાન, દાન અને ગ્રહણરૂપ યજ્ઞ અને महीः-મહાન इषः-ઈચ્છાઓનું जुषन्ताम्-સેવન કરે. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ અવિરુદ્ધ-અનુકૂળ બનીને સત્તા-સામાન્ય રૂપથી સર્વ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેમ રોગ તથા દ્રોહ આદિ દોષોથી રહિત વિદ્વાન્ મનુષ્ય પરસ્પર પ્રેમી બનીને તથા વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરનાર યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરીને મહાન સુખોનો સદા ભોગ કરે. (૫૦)

इडामग्ने पुरुदꣳसꣳसनिं गोः शश्वत्तमꣳ हवमानाय साध।

स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे॥ ५१॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! ते આપની सा-તે सुमतिः-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ अस्मे-અમારી भूतु-બને, જેથી આપના नः-અને અમારા જે विजावा-વિવિધ ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક सूनुः-ઉત્પન્ન થનાર तनयः-પુત્ર स्यात्-બને.

તે સુબુદ્ધિથી તે हवमानाय-વિદ્યાગ્રહણની સ્પર્ધા કરનાર તે પુત્ર માટે इडाम्-સ્તુતિ યોગ્ય વાણીને गोः-વાણી સંબંધી शश्वत्तमम्-અનાદિ રૂપ અત્યંત વેદ જ્ઞાનને તથા पुरुदंसम्-જેનાથી અનેક કર્મો સિદ્ધ થાય એવા सनिम्-ઋગ્વેદાદિ વેદ વિભાગને साध-સિદ્ધ કરો અને अग्ने-હે વિદ્વાન્-અધ્યાપક અમે પણ સિદ્ધ કરીએ. (૫૧)

ભાવાર્થ : માતા-પિતાએ પોતાના આચાર્યના નિર્દેશ અનુસાર સાવધાનીથી ગર્ભાધાન આદિ સંસ્કારોની વિધિથી સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને વેદ અને ઈશ્વરના વિજ્ઞાનથી પરિપૂર્ણ લક્ષ્મીનું ઉપાર્જન કરવું જોઈએ.

અન્ય કોઈ એવો ધર્મ-વ્યવહાર નથી, કે જે સંતાન સુખના કોષ-ભંડારની સમાન હોય, તેમ નિશ્ચય જાણો. (૫૧)

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः।

तं जानन्नग्नऽआ रोहाथा नो वर्धया रयिम्॥ ५२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન શુદ્ધ અન્તઃકરણ યુક્ત વિદ્વાન્ ! જે ते આપના ऋत्वियः-ઋતુકાલમાં પ્રાપ્ત થયેલ अयम्-એ પ્રત્યક્ષ योनिः-દુઃખનાશક અને સુખકારક વ્યવહાર છે, यतः-જેથી जातः-ઉત્પન્ન થયેલ આપ अरोचथाः-પ્રકાશિત બનો, तम्-તેને जानन्-જાણતા આપ आरोह-શુભ ગુણોથી ઉન્નત બનો, अथ-તદનન્તર नः-અમારા માટે रयिम्-પ્રશંસિત લક્ષ્મીની वर्धय-વૃદ્ધિ કરો. (૫૨)

ભાવાર્થ : હે માતા, પિતા અને આચાર્ય આપ પુત્ર અને પુત્રીઓને ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યના સેવનથી શ્રેષ્ઠ વિદ્યાને ઉત્પન્ન કરીને ઉપદેશ કરો - હે સંતાનો ! તમે શ્રેષ્ઠ વિદ્યા અને સદાચારથી અમને ઉત્તમ

સેવા અને ધનથી સદા સુખી કરો. (૫૨)

चिर्दसि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद।

परिचिर्दसि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद॥ ५३॥

પદાર્થ : હે કન્યે ! જે તું चित-જ્ઞાનયુક્ત असि-છો. तया-તે देवतया-દિવ્ય ગુણ પ્રાપ્ત કરાવનારી વિદ્વાન્ સ્ત્રી સાથે अङ्गिरस्वत्-પ્રાણોની સમાન ध्रुवा-નિશ્ચલ सीद-સ્થિર રહે.

હે બ્રહ્મચારિણી ! જે તું परिचित्-વિવિધ વિદ્યાને પ્રાપ્ત થયેલી असि-છો, તે તું तया-તે देवतया-ધર્માનુષ્ઠાનથી યુક્ત દિવ્ય સુખદાયક ક્રિયાની સાથે अङ्गिरस्वत्-ઈશ્વરની સમાન ध्रुवा-અચલ सीद-રહે. (૫૩)

ભાવાર્થ : સર્વ માતા-પિતાઓ, અધ્યાપિકાઓ તથા વિદુષીઓએ કન્યાઓને આ રીતે સંબોધન કરવું જોઈએ. હે કન્યાઓ ! તમે સર્વ પૂર્ણ અખંડ બ્રહ્મચર્યથી સંપૂર્ણ વિદ્યાઓ અને ઉત્તમ શિક્ષાઓને પ્રાપ્ત કરીને યુવતીઓ બનીને - પોતાની સમાન વરોની સાથે સ્વયંવર વિવાહ કરીને ગૃહાશ્રમ કરો તો સર્વ સુખોને પામો અને ઉત્તમ સંતાન પણ ઉત્પન્ન થાય. (૫૩)

लोकं पृण छिद्रं पृणाथो सीद ध्रुवा त्वम्।

इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिरस्मिन् योनावसीषदन्॥ ५४॥

પદાર્થ : હે કન્યે ! જે त्वा-તને योनौ-બંધનોથી છોડાવનાર, મોક્ષ પ્રાપ્ત કરાવનાર अस्मिन्-એ વિદ્યાના બોધમાં इन्द्राग्नी-માતા-પિતા તથા बृहस्पतिः-મહાન વેદવાણીઓની રક્ષા કરનાર અધ્યાપિકા સ્ત્રી असीषदन्-શિક્ષાઓ શીખવે, તેમાં त्वम्-તું ध्रुवा-દૃઢ નિશ્ચયપૂર્વક सीद-સ્થિત બન. अथो-ત્યાર પછી छिद्रम्-છિદ્રને पृण-પૂર્ણ કર, [અર્થાત્-ન્યૂનતાને પૂર્ણ કર.]તથા लोकम्-જોવા યોગ્ય પ્રાણીઓને पृण-તૃપ્ત કર. (૫૪)

ભાવાર્થ : માતા, પિતા અને આચાર્ય કન્યાઓને ધાર્મિક વિદ્યા અને શિક્ષાનો ઉપદેશ કરે. જે શિક્ષાઓનો સ્વીકાર કરીને કન્યાઓ નિશ્ચિત બનીને, સર્વ દુર્વ્યસનોનો ત્યાગ કરીને, સમાવર્તન સંસ્કાર પછી વિવાહ કરીને પૂર્ણ પુરુષાર્થ દ્વારા આનંદમાં રહે. (૫૪)

ताऽअस्य सूददोहसः सोमꣳश्रीणन्ति पृश्नयः।

जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः॥ ५५॥

પદાર્થ : જે देवानाम्-દિવ્ય વિદ્વાન પતિઓની सूददोहसः-સુંદર રસોઈયા અને ગાય આદિને દોહનારી સેવકોયુક્ત पृश्नयः-અત્યંત કોમળ અને સુડોલ શરીર યુક્ત પત્નીઓ છે, તે जन्मन्-બીજા વિદ્યા-રૂપ જન્મમાં વિદુષી બનીને दिवः-દિવ્ય अस्य-એ ગૃહાશ્રમના सोमम्-ઉત્તમ ઔષધિઓના રસથી યુક્ત

ભોજન श्रीणन्ति-પકાવે છે, ताः-તે બ્રહ્મચારિણી आरोचने-સારા રુચિકર વ્યવહારમાં त्रिषु-ત્રણે અર્થાત્ ભૂત-ભવિષ્ય-વર્તમાન કાલોમાં સુખદાયક બને છે. તથા विशः-ઉત્તમ સંતાનોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે સુશિક્ષિત યુવકોની પોતાના સમાન રૂપ અને ગુણોથી યુક્ત સ્ત્રીઓ હોય, ત્યારે ગૃહાશ્રમમાં સદા સુખ રહે અને ઉત્તમ સંતાન ઉત્પન્ન થાય છે. તેના વિના વર્તમાનમાં સાંસારિક ઉન્નતિ તથા મૃત્યુ પછી મોક્ષ પ્રાપ્તિ સંભવ નથી. (૫૫)

इन्द्रं विश्वाअवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः।

रथीतमः रथीनां वाजानाᳬ सत्पतिं पतिम्॥ ५६॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ विश्वाः સર્વ गिरः-વેદ વિદ્યાથી સંસ્કૃત વાણીઓ समुद्रव्यचसम्-સમુદ્ર સમાન વ્યાપ્તિયુક્ત वाजानाम्-સંગ્રામો તથા रथीनाम्-પ્રશંસિત રથોવાળા વીર પુરુષોમાં रथीतमम्-અત્યંત પ્રશંસિત રથવાળા અર્થાત્ મહારથી, सत्यपतिम्-સત્ અર્થાત્ ઈશ્વર, વેદ, ધર્મ વા શ્રેષ્ઠ પુરુષોના રક્ષક, पतिम्-સર્વ ઐશ્વર્યના સ્વામીને अवीवृधन्-વધારે અને इन्द्रम्-સર્વ ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે, તેમ સર્વ પ્રાણીઓની વૃદ્ધિ કરે. (૫૬)

ભાવાર્થ : જે કુમાર અને કુમારીઓ દીર્ઘકાલ સુધી બ્રહ્મચર્ય સેવન પૂર્વક સાંગોપાંગ વેદને ભણીને પોતાની પ્રસન્નતાથી સ્વયંવર વિવાહ કરીને ઐશ્વર્ય માટે પ્રયત્ન કરે છે.

ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી વ્યભિચાર રહિત રહીને ઉત્તમ સંતાનો ઉત્પન્ન કરીને પરોપકારમાં પ્રવૃત્ત રહે છે. તેઓ આ લોક અને પરલોકમાં સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય અવિદ્વાન્ નહિ. (૫૬)

समितःसं कल्पेथाᳬ संप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ।

इषमूर्जमभि संवसानौ॥ ५७॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને संप्रियौ-પરસ્પર સમ્યક્ પ્રીતિયુક્ત, रोचिष्णू-વિષયાશક્તિથી રહિત હોવાના કારણે દેદીપ્યમાન, सुमनस्यमानौ-બે મિત્ર વિદ્વાનોની સમાન વિદ્યમાન, सवसानौ-સુંદર વસ્ત્રો અને આભૂષણોથી યુક્ત બનીને इषम्-ઈચ્છાને सम+इतम्-મળીને પ્રાપ્ત કરો અને ऊर्जम्-પરાક્રમને अभि-સન્મુખ संकल्पेथाम्-સમાન અભિપ્રાયથી સમર્પિત કરો. (૫૭)

ભાવાર્થ : જો સ્ત્રી અને પુરુષ સર્વથા વિરોધ છોડીને, પરસ્પર પ્રિય આચરણમાં સંલગ્ન, વિદ્યા અને વિચારથી યુક્ત, ઉત્તમ વસ્ત્રો અને આભૂષણોથી અલંકૃત બનીને પ્રયત્નશીલ બને, તો ઘરમાં કલ્યાણ આરોગ્યની વૃદ્ધિ થાય છે. પરંતુ જો સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર દ્વેષ કરનારા હોય તો દુઃખસાગરમાં ડૂબે છે. (૫૭)

सं वां मनाᳬसि सं व्रता समु चित्तान्याकरम्।

अग्ने पुरीष्याधिपा भव त्वं न इषमूर्जं यजमानाय धेहि॥ ५८॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ હું આચાર્ય वाम्-તમે બન્નેને संमनांसि-એક ધર્મમાં અર્થાત્ સંકલ્પ-વિકલ્પ આદિ અન્તઃકરણની વૃત્તિઓને, संवृता-સત્યભાષણ આદિ વ્રતોને, उ-અને सम् चित्तानि-ઉપદિષ્ટ ધર્મયુક્ત કર્મોને आ-સારી રીતે अकरम्-સિદ્ધ કરું છું, તેમ તમે બન્ને મારી પ્રીતિ અનુકૂળ આચરણ કરો.

હે पुरीष्य-રક્ષા યોગ્ય વ્યવહારોમાં વિદ્યમાન अग्ने-ઉપદેશક, આચાર્ય અથવા રાજન્ ! त्वम्-આપ नः-અમારી अधिपाः-અધિક રક્ષા કરનાર भव-બનો. यजमानाय-ધર્માનુકૂલ સત્સંગના સ્વભાવના પુરુષ અથવા સ્ત્રીઓ માટે इषम्-અન્ન આદિ શ્રેષ્ઠ પદાર્થો તથા ऊर्जम्-શરીર તથા આત્માના બલને धेहि-ધારણ કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : ઉપદેશકજન શક્ય તેટલા એક ધર્મ, એક કર્મ, એક નિષ્ઠા તથા સમાન સુખ-દુઃખ જેમ બની શકે, તેવી શિક્ષા આપે.

સર્વ સ્ત્રી-પુરુષ આપ્ત વિદ્વાન્ રૂપી ઉપદેશક અને અધ્યાપકની જ સેવા કરે અને તેઓ તેના ઐશ્વર્ય તથા પરાક્રમની વૃદ્ધિ કરે.

સર્વના એક ધર્મ વિના આત્માઓમાં મિત્રતા ઉત્પન્ન થતી નથી અને તેના વિના નિરંતર સુખ પણ [સંભવ] નથી. (૫૮)

अग्ने त्वं पुरीष्यो रयिमान् पुष्टिमाँ२ ॥असि।

शिवाः कृत्वा दिशः सर्वाः स्वं योनिमिहासदः॥ ५९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-ઉપદેશક વિદ્વાન્ ! જેથી त्वम्-આપ इह-આ સંસારમાં पुरीष्यः-એકમત પાલનમાં તત્પર, रयिमान्-વિદ્યા, વિજ્ઞાન અને ધનથી યુક્ત તથા पुष्टिमान्-પ્રશંસિત શરીર અને આત્માના બલથી યુક્ત असि-છો, તેથી सवाः-સર્વ दिशः-ઉપદેશને યોગ્ય પ્રજાને शिवाः-કલ્યાણકારી ઉપદેશથી યુક્ત कृत्वा-કરીને स्वम्-પોતાના योनिम्-સુખદાયક અને દુઃખનાશક ઉપદેશને आ+असदः-સ્થાપિત કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાજનોએ જે આ સંસારમાં જિતેન્દ્રિય, ધાર્મિક અને પરોપકાર-પ્રિય વિદ્વાન્ હોય, તેઓને પ્રજામાં ઉપદેશ માટે નિયુક્ત કરવા જોઈએ.

ઉપદેશકોએ પ્રયત્નપૂર્વક સર્વને શિક્ષા દ્વારા એક ધર્મથી યુક્ત, સદા અવિરોધી અને સુખ સંપન્ન બનાવે. (૫૯)

भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ।

मा यज्ञꣳ हिꣳसिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः॥ ६०॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને नः-અમારા માટે समनसौ-સમાન વિચારયુક્ત सचेतसौ-સમાન જ્ઞાનયુક્ત, अरेपसौ-અપરાધ રહિત-નિર્દોષ भवतम्-બનો, यज्ञम्-પ્રાપ્ત થનાર ધર્મની मा हिंसिष्टम्-હિંસા ન કરો, यज्ञपतिम्-ઉપદેશ દ્વારા ધર્મના રક્ષકને मा-મારો નહિ. अद्य-આજ नः-

અમારા માટે जातवेदसौ-સંપૂર્ણ વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત થઈ शिवौ-મંગલકારી भवतम्-બનો. (૬૦)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ સત્ય ઉપદેશ અને અધ્યાપન માટે પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત, પ્રગલ્ભ, ચતુર, નિષ્કપટ, આપ્ત વિદ્વાનોને નિત્ય પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. વળી વિદ્વાનોએ સર્વ માટે એવો ઉપદેશ આપવો જોઈએ, કે જેથી સર્વ ધાર્મિક બને. (૬૦)

मातेव पुत्रं पृथिवी पुरीष्यमग्निꣳ स्वे योनावभारुखा।

तां विश्वैर्देवैर्ऋतुभिः संविदानः प्रजापतिर्विश्वकर्मा वि मुञ्चतु॥ ६१॥

પદાર્થ : જે उखा-જાણવા યોગ્ય पृथिवी-ભૂમિ સમાન વિદ્યમાન વિદુષી સ્ત્રી स्वे-પોતાના योनौ-ગર્ભાશયમાં पुरीष्यम्-પુષ્ટિકારક ગુણોથી યુક્ત, अग्निम्-વિદ્યુત્ સમાન સુપ્રકાશથી યુક્ત ગર્ભરૂપ पुत्रम्-પુત્રને मातेव-માતાની સમાન अभाः-પુષ્ટ વા ધારણ કરે છે, ताम्-તે સ્ત્રીને संविदानः-સમ્યક્ બોધ આપતાં विश्वकर्मा-સર્વ ઉત્તમ કર્મ કરનાર, प्रजापतिः-પરમેશ્વર-विश्वैः-સર્વ देवैः-દિવ્યગુણો અને ऋतुभिः-વસંત આદિ ઋતુઓ દ્વારા નિરંતર દુઃખથી वि + मुञ्चतु-દૂર રાખે. (૬૧)

ભાવાર્થ : જેમ માતા સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને પાલન કરે છે, તેમ પૃથિવી કારણરૂપ વિદ્યુત્‌ને પ્રકટ કરીને તેની રક્ષા કરે છે.

જેમ પરમેશ્વર પૃથિવી આદિના ગુણોને યથાર્થ રૂપમાં જાણે છે, પ્રત્યેકને નિયત સમય પર ઋતુ આદિ અને પૃથિવી આદિને ધારણ કરીને, પોત-પોતાની નિયત પરિધિમાં ચલાવીને, પ્રલય સમયમાં ભેદન કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ પોતાની બુદ્ધિ અનુસાર સર્વ પદાર્થોને જાણીને કાર્ય સિદ્ધિ માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૬૧)

असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य।

अन्यमस्मदिच्छ सा तऽइत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु॥ ६२॥

પદાર્થ : હે निर्ऋते-પૃથિવી સમાન વિદ્યમાન देवि-વિદુષી સ્ત્રી ! તું अस्मत्-અમારાથી ભિન્ન स्तेनस्य-અપ્રસિદ્ધ ચોર અને तस्करस्य-પ્રસિદ્ધ ચોરના સંબંધીને છોડીને अन्यम्-કોઈ બીજાની इच्छ-કામના કર. અને असुन्वन्तम्-અભિષવ આદિ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનથી રહિત अयजमानम्-દાનધર્મથી રહિત પુરુષની इच्छ-ઈચ્છા ન કર. અને તું જે इत्याम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ક્રિયાનું अनु + इहि-અનુગમન કરે सा-તે इत्या-ક્રિયા ते-તારી બને. તથા તે तुभ्यम्-તારા માટે नमः-અન્ન વા સત્કાર अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. (૬૨)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! તમે પુરુષાર્થથી રહિત, ચોર લોકોના સંબંધી પુરુષોને પતિ રૂપમાં ઈચ્છો નહિ. પરન્તુ આપ્ત પુરુષોની નીતિ યુક્ત પુરુષોનું ગ્રહણ કરો.

જેમ પૃથિવી અનેક ઉત્તમ ફલ પ્રદાન કરવાથી લોકોને રંજિત કરે છે, તેમ તમે બનો. એવા ગુણવાળા તમારો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. જેમ અમે આળસુ અને ચોરોથી દૂર રહીએ છીએ, તેમ તમે પણ

દૂર રહો. (૬૨)

नमः॒ सु ते॑ निर्ऋते तिग्मतेजोऽय॒स्मयं॒ विचृ॑ता ब॒न्धमे॒तम्।

य॒मेन॒ त्वं य॒म्या संविदा॒नोत्त॒मे नाके॒ऽअधि॑ रोहयैनम्॥ ६३॥

પદાર્થ : હે निर्ऋते-નિરંતર સત્ય આચરણથી યુક્ત સ્ત્રી ! જે ते-તારા तिग्मतेजः-તીવ્ર તેજવાળા अयस्मयम्-સુવર્ણ આદિ અને नमः-અન્ન આદિ પદાર્થ છે તે त्वम्-તું एतम्-એ बन्धम्-બંધનના હેતુ અજ્ઞાનને सु+विचृत-સારી રીતે ખોલ, यमेन-ન્યાયાધીશ તથા यम्या-ન્યાય કરનારી સ્ત્રીની સાથે संविदाना-સમ્યક્ બુદ્ધિયુક્ત થઈને एनम्-એ પોતાના પતિને उत्तमे-ઉત્તમ नाके-આનંદ ભોગવવામાં अधिरोहय-આરુઢ કર. (૬૩)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ આ પૃથિવી-અગ્નિ, સુવર્ણ અને અન્ન આદિથી સંબંધિત છે; તેવી તમે બનો. જેમ તમારા પતિ ન્યાયાધીશ બનીને, દોષિત અને નિર્દોષોનું સત્ય ન્યાયથી વિવેચન કરીને, દોષિતને દંડ આપે છે. અને નિર્દોષોનો સત્કાર કરે છે. અને તેમને શ્રેષ્ઠ આનંદ પ્રદાન કરે છે, તેમ તમે પણ બનો. (૬૩)

यस्या॑स्ते घोरऽआ॒सन् जु॒होम्ये॒षां ब॒न्धाना॑मव॒सर्ज॑नाय।

यां त्वा॒ जनो॒ भूमि॒रिति॑ प्र॒मन्द॑ते निर्ऋ॑तिं त्वा॒हं परि॑ वेद वि॒श्वतः॑॥ ६४॥

પદાર્થ : હે घोरे-દુષ્ટોને ભયકારક સ્ત્રી ! यस्याः-જે સુંદર નિયમયુક્ત ते-તારા आसन्-મુખમાં एषाम्-આ बन्धानाम्-દુઃખ દેનારને રોકનારના अवसर्जनायः-ત્યાગ માટે અમૃતરૂપ અન્નાદિ પદાર્થો जुहोमि-પ્રદાન કરું છું.

જે जनः-મનુષ્ય भूमिरिति-પૃથિવીની સમાન याम्-જે त्वा-તને प्रमन्दते-આનંદિત કરે છે તે તને अहम्-હું विश्वतः-સર્વત્રથી निर्ऋतिम्-પૃથિવી સમાન त्वा-તને परि+वेद સર્વ રીતે જાણું, તેમ તું પણ મને જાણ. (૬૪)

ભાવાર્થ : જેમ પતિઓ પોતાના આનંદ માટે સ્ત્રીઓનું ગ્રહણ કરે છે, તેમ સ્ત્રીઓ આનંદ માટે પતિઓનું ગ્રહણ કરે. આ ગૃહાશ્રમમાં પતિવ્રતા સ્ત્રી અને પત્નીવ્રત પતિ સુખના ભંડાર સમાન છે. સ્ત્રી ક્ષેત્રરૂપ છે અને પુરુષ બીજરૂપ છે.

જો શુદ્ધ અને બલવાન શરીર યુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ બન્નેના સમાગમથી ઉત્તમ અને વિવિધ પ્રકારની પ્રજા ઉત્પન્ન થાય, તો સદા કલ્યાણ થાય છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૬૪)

यं ते॑ दे॒वी निर्ऋ॑तिराब॒बन्ध॒ पाशं॑ ग्री॒वास्व॑विचृ॒त्यम्। तं ते॒ विस्या॒म्यायु॑षो॒ न मध्या॒दथै॒तं पि॒तुम॑द्धि॒ प्रसू॑तः। नमो॒ भूत्यै॒ येदं च॒कार॑॥ ६५॥

પદાર્થ : હે પતે ! निर्ऋतिः-પૃથિવી સમાન હું देवी ते-તારા ग्रीवासु-કંઠમાં अविचृत्यम्-ત્યાગને અયોગ્ય यम्-જે पाशम्-ધર્મયુક્ત બંધનને आ+बबन्ध-સારી રીતે બાંધુ છું, तम्-તેને ते-તારા માટે પણ आयुषः-જીવનના સાધન અન્નની न-સમાન वि+स्यामि-પ્રવિષ્ટ કરું છું. अथ-અને मध्यात्-આપણાં બન્નેમાંથી કોઈપણ નિયમથી વિરુદ્ધ ન ચાલીએ. જેમ હું एतम्-એ पितुम्-અન્નાદિ પદાર્થોને ભોગવું છું, તેમ प्रसूतः-લોકમાં ઉત્પન્ન થયેલ તું પણ એ અન્નાદિને अद्धि-ભોગવ.

હે સ્ત્રી ! या-જે देवी-દિવ્યગુણયુક્ત તું इदम्-એ પતિવ્રતરૂપ ધર્મથી સંસ્કાર પામેલી પ્રત્યક્ષ નિયમને चकार-પાળે તે भूत्यै-ઐશ્વર્ય કરનારી તારા માટે नमः-અન્નાદિ પદાર્થ આપું છું. (૬૫)

ભાવાર્થ : વિવાહ સમયે સ્ત્રી-પુરુષ જે અવ્યભિચાર આદિ નિયમોની પ્રતિજ્ઞા કરે, તેથી વિપરીત આચરણ કદી પણ ન કરે, કારણ કે પાણિગ્રહણ-વિવાહ કરે છે, ત્યારથી પુરુષનું જેટલું પણ પોતાનું [શરીર આદિ] છે, તે સર્વ સ્ત્રીનું અને સ્ત્રીનું કંઈ પણ [શરીર આદિ] છે, તે પુરુષનું બની જાય છે.

જો પુરુષ વિવાહિત સ્ત્રીને છોડીને પરસ્ત્રીગામી અને સ્ત્રી [પોતાના વિવાહિત પતિને છોડીને] પર પુરુષગામિની બને, તો બન્ને ચોર સમાન પાપાત્મા બને છે. તેથી પત્નીની અનુમતિ વિના પતિ અને પતિની આજ્ઞા વિના સ્ત્રી કોઈપણ કાર્ય ન કરે. અવ્યભિચાર એ જ સ્ત્રી અને પુરુષના પ્રેમની વૃદ્ધિ કરનાર કર્મ છે. (૬૫)

नि॒वेश॑नः स॒ङ्गम॑नो॒ वसू॑नां॒ विश्वा॑ रू॒पाऽभिच॑ष्टे॒ शची॑भिः।

दे॒वऽइ॑व सवि॒ता स॒त्यध॒र्मेन्द्रो॒ न त॑स्थौ सम॒रे प॑थी॒नाम्॥ ६६॥

પદાર્થ : જે सत्यधर्मा-સત્યધર્મથી યુક્ત, सविता-સકલ જગતના ઉત્પાદક देवइव-ઈશ્વરની સમાન निवेशनः-સ્ત્રીના સાથી सङ्गमनः-શીઘ્રગતિથી યુક્ત शचीभिः-બુદ્ધિ વા કર્મોથી वसूनाम्-પૃથિવી આદિ પદાર્થોના विश्वा-સર્વ रूपा-રૂપોને अभिचष्टे-જુએ છે.

इन्द्रः-સૂર્યના न-સમાન समरे-યુદ્ધમાં पथीनाम्-પથિકોની સન્મુખ तस्थौ-ઊભો રહે છે, તે જ ગૃહસ્થને યોગ્ય બને છે. (૬૬)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વરે મનુષ્યના ઉપકાર માટે કારણ-પ્રકૃતિથી કાર્યરૂપ અનેક પદાર્થો રચેલ છે, તેનો મનુષ્ય ઉપયોગ કરે છે.

જેમ સૂર્ય મેઘ-વાદળાની સાથે યુદ્ધ માટે તૈયાર રહે છે, તેમ સૃષ્ટિક્રમના વિજ્ઞાનથી અને ઉત્તમ ક્રિયાથી ભૂમિ આદિ પદાર્થોથી અનેક વ્યવહારોને સિદ્ધ કરો. (૬૬)

सीरा॑ युञ्जन्ति क॒वयो॑ यु॒गा वित॑न्वते॒ पृथ॑क्। धीरा॑ दे॒वेषु॑ सुम्न॒या॥ ६७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ धीराः-ધ્યાનશીલ कवयः-બુદ્ધિમાન જન सीराः-હળ અને युगा-ધૂંસરી આદિને युञ्जन्ति-યુક્ત કરે છે, અને सुम्नया-સુખથી देवेषु-વિદ્વાનોમાં पृथक्-જુદા वितन्वते-વિસ્તાર યુક્ત કરે છે, તેમ સર્વ લોકો એ ખેતી કાર્યનું અનુષ્ઠાન કરે. (૬૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સંસારમાં વિદ્વાનોની શિક્ષાથી ખેતીના કાર્યોની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. જેમ યોગીજન નાડીઓમાં પરમેશ્વરનો સમાધિ યોગથી સાક્ષાત્ કરે છે, તેમ ખેતીના કાર્ય દ્વારા સુખોનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૬૭)

युनक्त सीरा वि युगा तनुध्वं कृते योनौ वपतेह बीजम्।
गिरा च श्रुष्टिः सभरा असन्नो नेदीयऽइत्सृण्यः पक्वमेयात्॥ ६८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે इह-આ પૃથિવી વા બુદ્ધિમાં સાધનોને वि+तनुध्वम्-વિવિધ પ્રકારથી વિસ્તાર યુક્ત કરો. सीरा-ખેતીના સાધન હળ આદિ વા નાડીઓ અને युगा-ધૂંસરીને युनक्तः-યુક્ત કરો कृते-હળ આદિમાં જોડેલ અથવા યોગના અંગોથી શુદ્ધ કરેલ योनौ-અન્તઃકરણમાં અથવા ખેતરમાં बीजम्-યવ આદિના વા સિદ્ધિના મૂળને वपत-વાવો.

गिरा-ખેતી વિષયક કર્મોની ઉપયોગી સુશિક્ષિત વાણી च-અને સુવિચારથી सभराः-સમાન રીતે ધારણ અને પોષણમાં યુક્ત श्रुष्टिः-શીઘ્ર બનો.

જે सृण्यः-ખેતરમાં ઉત્પન્ન જવ આદિ અન્ન જાતિના પદાર્થો છે. તેમાં જે नेदीयः-અત્યંત સમીપ पक्वम्-પાકેલ असत्-બને, તે इत्-જ नः-અમને आ+इयात्-પ્રાપ્ત થાય. (૬૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનો અને ખેડૂતોથી ખેતી અને યોગની શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, અનેક સાધનો સિદ્ધ કરીને ખેતી અને યોગ સિદ્ધ કરો. તેના દ્વારા જે જે પાક તૈયાર થાય તેને લઈને સ્વયં ખાવ અને અન્યોને ખવડાવો. (૬૮)

शुनꣳ सु फाला वि कृषन्तु भूमिꣳ शुनं कीनाशाऽअभि यन्तु वाहैः।
शुनासीरा हविषा तोशमाना सुपिप्पलाऽओषधीः कर्त्तनास्मे॥ ६९॥

પદાર્થ : જે कीनाशाः-પરિશ્રમથી કષ્ટ ભોગનાર ખેતી કરનાર છે. તેઓ फालाः-ભૂમિને વિસ્તીર્ણ કરવાનું સાધન ફાલ = હળનું ફળું આદિથી યુક્ત કરીને वाहैः-બળદ આદિની સાથે રહેલ હળ આદિથી भूमिम्-ભૂમિને विकृषन्तु-ખેડો शुनम्-સુખને अभियन्तु-પ્રાપ્ત કરો.

हविषा-શુદ્ધ કરેલ ઘી આદિથી શુદ્ધ तोशमाना-સંતોષકારક शुनासीरा-વાયુ અને સૂર્ય સમાન ખેતીના સાધન अस्मे-અમારા માટે सुपिप्पलाः-સુંદર ફળોથી યુક્ત ओषधीः-જવ આદિને कर्त्तन-ઉત્પન્ન કરો અને તે ઔષધિઓથી सु-ઉત્તમ शुनम्-સુખ ભોગવો. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે ચતુર ખેડૂત ગાય તથા બળદ આદિની રક્ષા કરીને ખેતી કરે છે, તેઓ અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. એ ખેતરમાં કોઈપણ અમેધ્ય-અપવિત્ર વસ્તુ નાખવી ન જોઈએ. પરન્તુ બીજ પણ સુગંધી આદિ ગુણોથી યુક્ત કરીને વાવવા જોઈએ. જેથી અન્ન આરોગ્યદાયક બનીને બલ અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરે. (૬૯)

घृतेन सीता मधुना समज्यतां विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
ऊर्जस्वती पयसा पिन्वमानास्मान्त्सीते पयसाभ्या ववृत्स्व॥ ७०॥

પદાર્થ : विश्वैः-સર્વ देवैः-અન્ન આદિ પદાર્થોની ઈચ્છા કરનાર વિદ્વાન मरुद्भिः-મનુષ્યની अनुमता-આજ્ઞાથી પ્રાપ્ત पयसा-જલ વા દૂધથી ऊर्जस्वती-પરાક્રમ સંબંધી पिन्वमाना-સિંચન વા સેવન કરેલ सीता-હળની કોસ घृतेन-ઘી તથા मधुना-મધ વા સાકર આદિથી समज्यताम्-સંયુક્ત કરે. તે सीते-હળની કોસ अस्मान्-અમને ઘી આદિ પદાર્થોથી સંયુક્ત કરશે એ માટે पयसा-જલથી अभ्याववृत्स्व-પરિવૃત કરો. (૭૦)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્વાન્ ખેડૂત વિદ્યાથી અનુકૂળ, ઘૃત, મધ અને જલ આદિથી સુસંકૃત કરી સ્વીકાર કરેલ ખેતીની પૃથિવી-ભૂમિને અન્નને ઉત્પન્ન કરનારી-ઉપજાઉ બનાવે છે.

જેમ બીજોને સુગંધી આદિ ગુણોથી યુક્ત કરીને વાવે છે, તેમ એ ભૂમિને સુગંધથી સંસ્કાર યુક્ત કરે. (૭૦)

लाङ्गलं पवीरवत्सुशेवं सोमपित्सरु।
तदुद्वपति गामविं प्रफर्व्यं च पीवरीं प्रस्थावद्रथवाहनम्॥ ७१॥

પદાર્થ : હે કિસાનો ! તમે જે सोमपित्सरु-જવ આદિ ઔષધિઓના રક્ષકોને-વાંકા-ચૂંકા ચલાવનાર, पवीरवत्-ઉત્તમ ફાલયુક્ત, सुशेवम्-સુંદર સુખદાયક लाङ्गलम्-હળ અને તેના છેડે જે દઢતા માટે લગાવેલ કાષ્ઠ વિશેષ છે, તે च-અને प्रफर्व्यम्-ચલાવવા યોગ્ય प्रस्थावत्-પ્રશંસિત પ્રસ્થાન-ગતિયુક્ત रथवाहनम्-રથનું વહન કરનાર બળદ આદિ સાધન છે, જેથી अविम्-રક્ષા આદિ માટે पीवरीम्-સર્વ પદાર્થો ભોગાવવા માટે સ્થૂલ गाम्-પૃથિવીને उत् + वपति-પ્રજા વાવે છે, तत्-તેને તમે સિદ્ધ કરો. (૭૧)

ભાવાર્થ : ખેડૂતે સ્થૂલ-ભારે માટીની એ અન્ન આદિના ઉત્પાદન માટે રક્ષા કરનારી [છે કે નહિ તેની] સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, હળ આદિ સાધનોથી ખેડીને, તેને એક સરખી કરીને, તેમાં સુંદર સંસ્કાર કરેલ બીજ વાવીને, ઉત્તમ ધાન્ય ઉત્પન્ન કરીને તેનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૭૧)

कामं कामदुघे धुक्ष्व मित्राय वरुणाय च।
इन्द्रायाश्विभ्यां पूष्णे प्रजाभ्यऽओषधीभ्यः॥ ७२॥

પદાર્થ : હે कामदुघे-પાકશાસ્ત્ર નિપુણ મનોકામના પૂર્ણ કરનારી રસોયણ સ્ત્રી ! તું પૂર્વોક્ત પૃથિવી સમાન સુંદર સંસ્કાર કરેલ અન્નોની मित्राय-મિત્ર, वरुणाय-ઉત્તમ વિદ્વાન, च-અને અતિથિ, અભ્યાગત, इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત, अश्विभ्याम्-પ્રાણ અને અપાન, पूष्णे-પુષ્ટિકારક જન, प्रजाभ्यः-સંતાનો અને ओषधीभ्यः-સોમલતા આદિ ઔષધિઓથી कामम्-ઈચ્છાને धुक्ष्व-પૂર્ણ કર. (૭૨)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી વા પુરુષ ભોજન બનાવે તે સ્ત્રી વા પુરુષને પાક-વિદ્યા શીખવીને, રુચિકારક અન્ન બનાવીને, તેનું સેવન કરીને, સર્વ રોગોને દૂર કરે. (૭૨)

वि मुच्यध्वमघ्न्या देवयानाअगन्म तमसस्पारमस्य। ज्योतिरापाम॥ ७३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો-જેમ તમે अघ्न्याः-રક્ષા યોગ્ય देवयानाः-દિવ્ય ભોગોની પ્રાપ્તિ માટે ગાયોને પ્રાપ્ત કરી, સુંદર સંસ્કાર કરેલ અન્નોનું ભોજન કરીને રોગોથી विमुच्यध्वम्-વિમુક્ત રહો છો, તેમ અમે પણ રોગોથી વિમુક્ત રહીએ.

જેમ તમે तमसः-રાત્રિ-અંધકારને पारम्-પાર કરો છો, તેમ અમે પણ अगन्म-પ્રાપ્ત કરીએ. જેમ તમે अस्य-આ સૂર્યના ज्योतिः-પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરો છો, તેમ અમે પણ आपाम-પ્રાપ્ત કરીએ. (૭૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ગાય આદિ પશુઓની કદીપણ હત્યા કરે નહિ અને હત્યા કરાવે નહિ. જેમ સૂર્યોદયથી રાત્રિ નિવૃત્ત થાય છે, તેમ વૈદ્યક શાસ્ત્રની રીતિથી હિતકારી અન્નનું સેવન કરીને આપ લોકો રોગોથી નિવૃત્ત રહો. (૭૩)

सजूरब्दोऽअयवोभिः सजूरुषाऽअरुणीभिः।

सजोषसावश्विना दꣳसोभिः सजूः सूरऽएतशेन सजूर्वैश्वानरऽइडया घृतेन स्वाहा॥ ७४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે સર્વ સ્ત્રી-પુરુષો જેમ अयवोभिः-એકરસ ક્ષણ આદિ કાલના અવયવોથી सजूः-સંયુક્ત अब्दः-વર્ષ अरुणीभिः રક્તપ્રભાથી सजूः-યુક્ત उषाः-પ્રભાત કાલ दंसोभिः-કર્મો દ્વારા सजोषसौ-પરસ્પર સમાન રૂપથી સેવા કરનાર अश्विना-પ્રાણ અને અપાનની સમાન સ્ત્રી-પુરુષ =દંપતી વા एतशेन-ચાલતા ઘોડા સમાન વ્યાપ્તિશીલ વેગવાન, કિરણના નિમિત્ત વાયુના सजूः-સહિત सूरः-સૂર્ય છે, અને इडया-અન્નાદિની નિમિત્ત પૃથિવી વા घृतेन-જલથી स्वाहा-સત્યવાણીથી सजूः-યુક્ત वैश्वानरः-વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિ વિદ્યમાન છે, તેમજ પ્રીતિથી સંયુક્ત રહે. (૭૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોમાં જ્યાં સુધી પરસ્પર સૌહાર્દ-મિત્રતા રહે છે, ત્યાં સુધી જ સુખ રહે છે. અને જ્યાં સુધી શત્રુતા રહે છે, ત્યાં સુધી દુઃખ રહે છે. તેથી સર્વ સ્ત્રી-પુરુષોએ પરોપકાર કર્મની સાથે જ સદા વ્યવહાર કરવો જોઈએ. (૭૪)

या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।

मनै नु बभ्रूणामहꣳ शतं धामानि सप्त च॥ ७५॥

પદાર્થ : अहम्-હું याः-જે ओषधीः-સોમલતા આદિ ઔષધિઓ देवेभ्यः-પૃથિવી આદિથી त्रियुगम्-ત્રણ વર્ષ पुरा-પૂર્વ पूर्वाः-પૂર્ણ સુખદાનમાં ઉત્તમ जाताः-પ્રસિદ્ધ અર્થાત્ ઉત્પન્ન થયેલી છે, જે बभ्रूणाम्-

ધારણ કરનાર રોગીઓના शतम्-સો च-અને सप्त-સાત धामानि-જન્મ વા નાડીઓના મર્મોમાં વ્યાપ્ત થાય છે, તેને नु-શીઘ્ર मनै-જાણું. (૭૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પૃથિવી પર અને જલમાં જે ઔષધિઓ ઉત્પન્ન થાય છે [તેમાં જે]ત્રણ વર્ષની હોય, તેનો સંગ્રહ કરીને, વૈદ્યક શાસ્ત્રવિધિ અનુસાર તેનું સેવન કરે છે, તો તે સેવન કરેલી ઔષધિઓ સમસ્ત મર્મ સ્થાનોમાં વ્યાપ્ત થઈને રોગોને દૂર કરીને, શારીરિક સુખોને શીઘ્ર ઉત્પન્ન કરી શકે છે. (૭૫)

शतं वोऽअम्ब धामानि सहस्रमुत वो रुहः।

अधा शतक्रत्वो यूयमिमं मेऽअगदं कृत॥ ७६॥

પદાર્થ : હે शतक्रत्वः-સેંકડો પ્રકારની બુદ્ધિ વા ક્રિયાઓથી યુક્ત [વૈદ્ય]જનો ! यूयम्-તમે જેનાથી शतम्-સેંકડો उत-વા सहस्रम्-હજારો रुहः-નાડીઓના અંકુરો છે તે ઔષધિઓથી मे-મારા इमम्-આ શરીરને अगदम्-રોગરહિત कृत-કરો.

अध-અને સ્વયં वः-પોતાના શરીરોને પણ રોગ રહિત કરો. જે वः-તમારા અસંખ્ય धामानि-મર્મ સ્થાનો છે. તેને પ્રાપ્ત કરો.

હે अम्ब-માતા ! તું પણ એમ જ આચરણ કર. (૭૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યનું એ પ્રથમ કર્તવ્ય છે, કે ઔષધિઓનું સેવન, પથ્ય પાલન અને સુનિયમયુક્ત વ્યવહાર કરીને શરીરને સ્વસ્થ રાખવું. તેના વિના કોઈપણ ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષનું અનુષ્ઠાન કરી શકતા નથી. (૭૬)

ओषधीः प्रतिमोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।

अश्वाऽइव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः॥ ७७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે अश्वा इव-ઘોડાની સમાન सजित्वरीः-શરીરથી સંયુક્ત અને રોગોને જીતનારી, वीरुधः-સોમલતા આદિ पारयिष्णवः રોગના દુઃખોથી પાર લઈ જનારી, पुष्पवतीः-પ્રશંસિત પુષ્પોથી યુક્ત, प्रसूवरीः-સુખોને ઉત્પન્ન કરનારી ओषधीः-સોમ આદિ ઔષધિ સેવન કરીને प्रति+मोदध्वम्-નિત્ય આનંદિત રહો. (૭૭)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડેસ્વાર વીર લોકો શત્રુઓને જીતીને, વિજય પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત બને છે, તેમ ઉત્તમ ઔષધનું સદા સેવન કરનાર, પથ્યનું પાલન કરનાર અને જિતેન્દ્રિય લોકો સ્વાસ્થ્ય પ્રાપ્ત કરીને, નિત્ય પ્રસન્ન રહે છે. (૭૭)

ओषधीरिति मातरस्तद्वो देवीरुप ब्रुवे।

सनेयमश्वं गां वासऽआत्मानं तव पूरुष॥ ७८॥

પદાર્થ : હે ओषधीः-ઔષધિઓ इति-સમાન સુખદાયક देवीः-સુંદર વિદુષી मातरः-માતાઓ ! હું પુત્ર वः-તમને तत्-શ્રેષ્ઠ પથ્યરૂપ કર્મ उपब्रुवे-સમીપસ્થ બનીને ઉપદેશ કરું.

હે पुरुष ! પુરુષાર્થ શ્રેષ્ઠ સંતાનો ! હું માતા तव-તારા अश्वम्-ઘોડા આદિ गाम्-ગાય આદિ વા પૃથિવી આદિ वासः-વસ્ત્ર આદિ વા ઘર અને आत्मानम्-જીવની નિરંતર सनेयम्-સેવા કરું. (૭૮)

ભાવાર્થ : જેમ જવ ઔષધિનું સેવન કરવાથી શરીરોની પુષ્ટિ કરે છે, તેમ માતાઓ વિદ્યા અને સુશિક્ષાના ઉપદેશથી સંતાનોને પુષ્ટ બનાવે.

જે માતાનું ઐશ્વર્ય છે, તે સંતાનનો ભાગ છે, અને જે સંતાનનું છે તે માતાનું છે, એ રીતે સર્વે પ્રીતિપૂર્વક આચરણ કરી પરસ્પર સુખોની સદા વૃદ્ધિ કરે. (૭૮)

अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।

गोभाजऽइत् किलासथ यत् सनवथ पूरुषम्॥ ७९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઔષધિઓની સમાન यत्-જે કારણે वः-તમારું अश्वत्थे-કાલ રહે અથવા ન રહે એવા શરીરમાં निषदनम्-નિવાસ છે અને वः-તમારા पर्णे-કમળના પત્ર પર જલની સમાન ચલાયમાન સંસારમાં ઈશ્વરે वसतिः-નિવાસ कृता-કર્યો છે, તેથી गोभाजः-પૃથિવીનું સેવન કરતાં किल-જ पूरुषम्-અન્ન આદિથી પૂર્ણ દેહવાળા પુરુષને सनवथ-ઔષધિ આપીને સેવન કરો. અને સુખ પ્રાપ્ત કરતાં इत्-આ સંસારમાં असथ-રહો. (૭૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ માનવું જોઈએ કે અમારા શરીર અનિત્ય છે, સ્થિતિ ચંચળ છે, માટે શરીરને નીરોગી રાખીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષનું અનુષ્ઠાન શીઘ્ર કરીને અનિત્ય સાધનોથી નિત્ય સુખને પ્રાપ્ત કરે. જેમ ઔષધિ ઘાસ આદિ પત્ર, પુષ્પ, ફળ, મૂળ કંદ અને શાખાઓ વગેરેથી શોભિત બને છે, તેમ નીરોગ શરીરથી શોભાયમાન બનો. (૭૯)

यत्रौषधीः समग्मत राजानः समिताविव।

विप्रः सऽउच्यते भिषग्रक्षोहामीवचातनः॥ ८०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે यत्र-જે સ્થાનોમાં ओषधीः-સોમલતા આદિ ઔષધિ છે, તેને જેમ राजानः-રાજધર્મથી યુક્ત વીર પુરુષ समिताविव-યુદ્ધમાં શત્રુઓને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ समग्मत-પ્રાપ્ત થાવ.

જે रक्षोहा-દુષ્ટ રોગોના નાશક अमीवचातनः-રોગ નિવારક विप्रः-બુદ્ધિમાન भिषक्-વૈદ્ય છે, सः-તે તમારા પ્રત્યે उच्यते-ઔષધિઓના ગુણોનો ઉપદેશ કરે, તમે તે વૈદ્ય અને ઔષધિઓનું સેવન કરો. (૮૦)

ભાવાર્થ : જેમ સેનાપતિ દ્વારા સુશિક્ષિત રાજકીય વીરપુરુષ પરમ પ્રયત્નથી બીજા દેશમાં જઈને, શત્રુઓને જીતીને રાજ્ય પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ ઉત્તમ વૈદ્ય દ્વારા સુશિક્ષિત તમે ઔષધિવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરો, જે શુદ્ધ દેશમાં ઔષધિઓ છે, તેને જાણીને તેનો ઉપયોગ કરો તથા અન્યોને તેનો ઉપદેશ કરો. (૮૦)

अ॒श्वा॒व॒तीᳬं सो॑माव॒तीमू॒र्जय॑न्ती॒मुदो॑जसम्।
आवि॑त्सि॒ सर्वा॒ऽओष॑धीर॒स्माऽअ॑रि॒ष्टता॑तये॥ ८१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું अरिष्टतातये-દુઃખદાયક રોગોથી છૂટવા માટે अश्वावतीम्-પ્રશંસિત શુભ ગુણોથી યુક્ત, सोमावतीम्-બહુ રસયુક્ત उदोजसम्-અત્યંત પરાક્રમ વર્ધક ऊर्जयन्तीम्-બળદાયક શ્રેષ્ઠ ઔષધિઓને आ-સર્વ રીતે अवित्सि-જાણું, જેથી सर्वाः-સર્વ ओषधीः-ઔષધિઓ अस्मै-મારા માટે સુખદાયક બને, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૮૧)

ભાવાર્થ : મનુષયોનું પ્રથમ એ કર્મ છે, કે રોગોનું નિદાન, ચિકિત્સા, ઔષધ અને પથ્યનું પાલન, ઔષધિઓનું ગુણ વિજ્ઞાન અને તેનો યથાવત્ ઉપયોગ કરવો. જેથી રોગ નિવૃત્તિ થઈને સદા પુરુષાર્થની વૃદ્ધિ થાય. (૮૧)

उच्छुष्मा॒ ओष॑धीनां॒ गावो॑ गो॒ष्ठादि॑वेरते।
धन॑ᳪं सनि॒ष्यन्ती॑नामा॒त्मानं॒ तव॑ पूरुष॥ ८२॥

પદાર્થ : હે पूरुष-પુરુષ ! પૂર અર્થાત્ દેહમાં શયન કરનાર વા દેહને ધારણ કરનાર જીવ ! धनम्-ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનારને सनिष्यन्तीनाम्-સેવન કરતી ओषधीनाम्-સોમલતા વા જવ આદિ ઔષધિઓના સંબંધથી જેમ शुष्माः-ઉત્તમ બલ કરનારી गावः-ગાય વા કિરણ गोष्ठादिव-પોતાના સ્થાનથી જેમ વાછરડા વા પૃથિવીનું અને ઔષધિઓ વા તત્ત્વ तव-તારા आत्मानम्-આત્માને उदीरते-પ્રાપ્ત થાય છે. તે સર્વની તું સેવા કર. (૮૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સારી રીતે પાળેલી ગાય દૂધ આદિ દ્વારા પોતાના વાછરડા અને મનુષ્ય આદિનું પોષણ કરીને બલ પ્રદાન કરે છે, તેમ ઔષધિઓ તમારા આત્માઓ અને શરીરોને સારી રીતે પુષ્ટ કરીને પરાક્રમી બનાવે છે.

જો કોઈ અન્ન આદિ ઔષધનું સેવન ન કરે, તો ક્રમશઃ તે બલ અને વિજ્ઞાનના ક્ષયને પ્રાપ્ત થાય છે. જેથી તે ગાયો અને ઔષધિઓ શરીર અને આત્માના બલ અને વિજ્ઞાન માટે છે તેમ જાણવું જોઈએ. (૮૨)

इष्कृ॑ति॒र्नाम॑ वो मा॒ताथो॑ यू॒यᳬं स्थ॒ निष्कृ॑तीः।
सी॒राः प॑त॒त्रिणी॑ स्थन॒ यदा॒मय॑ति॒ निष्कृ॑थ॥ ८३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यूयम्-તમે જે वः-તમારી इष्कृतिः-કાર્ય સિદ્ધ કરનારી माता-માતાની સમાન ઔષધિ नाम-પ્રસિદ્ધ છે, તેની સેવા કરવા સમાન સેવન કરેલી ઔષધિઓને જાણનાર स्थ-બનો, पतत्रिणीः-વહેતી सीराः-નદીઓ સમાન निष्कृतीः-પ્રત્યુપકાર કરનાર स्थन-બનો, अथो-અને यत्-જે ક્રિયા વા

ઔષધિ અથવા વૈદ્ય आमयति-રોગની વૃદ્ધિ કરે તેનો निष्कृथ-ત્યાગ કરો. (૮૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ માતા-પિતા તમારી સેવા કરે છે, તેમ તમે પણ સેવા કરો. જે-જે કર્મ રોગને ઉત્પન્ન કરનારા છે, તેનો તમે ત્યાગ કરો. આ રીતે [આચરણ કરવાથી] સારી રીતે સેવન કરેલી ઔષધિયો પ્રાણીઓને માતા સમાન પુષ્ટ કરે છે. (૮૩)

अति विश्वाः परिष्ठा स्तेनऽइव व्रजमक्रमुः।

ओषधीः प्राचुच्यवुर्यत्किं च तन्वो रपः॥ ८४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે परिष्ठाः-સર્વત્ર વિદ્યમાન विश्वाः-સર્વ ओषधीः-સોમલતા વા જવ આદિ ઔષધિ છે, તે व्रजम्-જેમ ગૌશાળાની स्तेन इव-દીવાલને કૂદીને ચોર ભાગી જાય છે, તેમ अति+अक्रमुः-પૃથિવીને ફાડીને નીકળે છે.

यत्-જે किञ्च-કંઈ तन्वः-શરીરના रपः-પાપોના ફળ સમાન રોગ રૂપ દુઃખ છે, તે સર્વનો प्र+अचुच्यवुः-નાશ કરે છે, તે ઔષધિઓનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરો. (૮૪)

ભાવાર્થ : જેમ ચોર ગાયોના સ્વામી દ્વારા ધમકાવવાથી ગૌશાળાની દીવાલ આદિથી કૂદીને ભાગી જાય છે, તેમ ઉત્તમ ઔષધિ દ્વારા તાડન કરેલ રોગ નાશ પામે છે. (૮૪)

यदिमा वाजयन्नहमोषधीर्हस्तऽआदधे।

आत्मा यक्ष्मस्य नश्यति पुरा जीवगृभो यथा॥ ८५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यथा-જે રીતે पुरा-પૂર્વ वाजयन्-પ્રાપ્ત કરતાં अहम्-હું यत्-જે-इमाः-એ ओषधीः-ઔષધિઓને हस्ते-હાથમાં आदधे-ધારણ કરું છું, જેથી जीवगृभः-જીવને પકડનારી વ્યાધિ અને यक्ष्मस्य-ક્ષય અર્થાત્ રાજરોગ નું आत्मा-મૂળ नश्यति-નાશ પામે છે, તે ઔષધિઓનો શ્રેષ્ઠ યુક્તિ દ્વારા ઉપયોગ કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, ઉત્તમ હસ્તક્રિયાથી ઔષધિઓને સારી રીતે સિદ્ધ કરીને, ક્રમાનુસાર તેનો ઉપયોગ કરીને રાજ્યક્ષમા આદિ રોગોનું નિવારણ કરીને નિત્ય આનંદ માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૮૫)

यस्यौषधीः प्रसर्पथाङ्गमङ्गं परुष्परुः।

ततो यक्ष्मं विबाधध्वऽउग्रो मध्यमशीरिव॥ ८६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે यस्य-જેથી अङ्गमङ्गम्-પ્રત્યેક અવયવોમાં તથા परुष्परुः-પ્રત્યેક મર્મ સ્થાનમાં વિદ્યમાન છે. તેના તે उग्रः-તીવ્ર यक्ष्मम्-ક્ષય રોગના मध्यमशीरिव-મધ્યના મર્મસ્થાનોને છેદવા સમાન वि+बाधध्वे-વિશેષરૂપથી દૂર કરીને ततः-ત્યારપછી ओषधीः-ઔષધિઓને प्र+सर्पथ-પ્રાપ્ત કરો. (૮૬)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો શાસ્ત્ર અનુસાર ઔષધિઓનું સેવન કરે, તો તેઓ પ્રત્યેક અંગોથી રોગોને

નિવૃત કરીને નીરોગ બની જાય છે. (૮૬)

साकं यक्ष्म प्र पत चाषेण किकिदीविना।
साकं वातस्य ध्राज्या साकं नश्य निहाकया॥ ८७॥

પદાર્થ : હે વૈદ્ય વિદ્વાન ! તમે किकिदीविना-જ્ઞાનવર્ધક चाषेण-આહારથી साकम्-ઔષધિયુક્ત પદાર્થોની સહાયથી यक्ष्म-રાજરોગ प्र + पत-દૂર થાય છે, જેમ તે वातस्य-વાયુની ध्राज्या- ગતિની साकम्-સહાયથી એ नश्य-નાશ પામે અને निहाकया-નિરંતર ત્યાગ યોગ્ય પીડાની साकम्-સાથે દૂર થાય, તે માટે પ્રયત્ન કરો. (૮૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઔષધ સેવન, પ્રાણાયામ અને વ્યાયામથી રોગોનો નાશ કરીને સુખપૂર્વક રહેવું જોઈએ. (૮૭)

अन्या वोऽअन्यामवत्वन्यान्यस्याऽउपावत।
ताः सर्वाः संविदानाऽइदं मे प्रावता वचः॥ ८८॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! संविदानाः-પરસ્પર સંવાદ કરતી તમે मे-મારા इदम्-એ वचः-વચનનું प्रावत-પાલન કરો. ताः-તે सर्वाः-ઔષધિઓની अन्याऽन्यस्याः-પોતાની પરસ્પરની રક્ષા સમાન उपावत-સમીપથી રક્ષા કરો.

જેમ अन्या-એક अन्याम्-બીજીની રક્ષા કરે છે, તેમ वः-તમારી અધ્યાપિકા अवतु-તમારી રક્ષા કરે. (૮૮)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમ આચરણવાળી સ્ત્રીઓ એકબીજીની રક્ષા કરે છે, તેમ અનુકૂળતાથી મિશ્ર કરેલી ઔષધિઓ સર્વ રોગોથી રક્ષા કરે છે. હે સ્ત્રીઓ ! તમે ઔષધવિદ્યા માટે પરસ્પર સંવાદ કરો. (૮૮)

याः फलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पा याश्च पुष्पिणीः।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वꣳहसः॥ ८९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! याः-જે फलिनीः-અનેક ફળોથી યુક્ત, याः-જે अफलाः-ફલોથી રહિત, याः-જે अपुष्पाः-ફૂલોથી રહિત च-અને જે पुष्पिणीः-અનેક ફૂલોથી યુક્ત, बृहस्पतिप्रसूताः-વેદવાણીના સ્વામી ઈશ્વરથી ઉત્પન્ન થયેલી ઔષધિ नः-અમને अंहसः-રોગજન્ય દુઃખથી જેમ मुञ्चन्तु-મુક્ત કરે છે, ताः-તેમ તમને પણ મુક્ત કરે. (૮૯)

ભાવાર્થ : ઈશ્વરે સર્વ પ્રાણીઓના જીવનધારણ માટે અને રોગનિવારણ માટે જે ઔષધીઓ બનાવી છે, તેનાથી મનુષ્યોએ વૈદ્યકશાસ્ત્ર વર્ણિત ઉપયોગ અનુસાર સર્વ રોગોને નષ્ટ કરીને, પાપાચરણથી દૂર રહીને, ધર્મમાં નિત્ય પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૮૯)

मु॒ञ्चन्तु॑ मा शप॒थ्या॒दथो॑ वरु॒ण्या॒दु॒त।
अथो॑ य॒मस्य॒ पड्वी॑शा॒त्सर्व॑स्माद् देवकिल्वि॒षात्॥ ९०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ જેમ તે ઔષધિઓ રોગોથી દૂર રાખે છે, તેમ शपथ्यात्-શપથ સંબંધ કર્મથી, अथो-અને वरुण्यात्-શ્રેષ્ઠજનોમાં થનાર અપરાધથી अथो-અને यमस्य-ન્યાયાધીશના पड्वीशात्-ન્યાય વિરુદ્ધ આચરણથી, उत-અને सर्वस्मात्-સર્વ देवकिल्विषात्-વિદ્વાનોમાં થનાર અપરાધથી मा-મને मुञ्चन्तु-પૃથક રાખો. તેમ તમને પણ પૃથક રાખે. (૯૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રમાદકારી ઔષધનો ત્યાગ કરીને અન્ય ઔષધનું સેવન કરવું જોઈએ.

સોગંદ-શપથ ક્યારેય ખાવા નહિ, શ્રેષ્ઠો પ્રત્યે કરવામાં આવતા અપરાધથી, ન્યાય વિરોધથી, પાપાચરણથી અને વિદ્વાનોની ઈર્ષા કરવારૂપ કર્મથી દૂર રહીને [શ્રેષ્ઠ આદિનો] અનુકૂળતાથી વર્તાવ કરવો જોઈએ. (૯૦)

अ॒व॒पत॑न्तीरवदन्दि॒वऽओष॑धय॒स्परि॑।
यं जी॒वम॒श्नवा॑महै॒ न स रि॑ष्याति॒ पूरु॑षः॥ ९१॥

પદાર્થ : અમે જે दिवः-પ્રકાશથી अवपतन्तीः-નીચે આવતી ओषधयः-સોમલતા આદિ ઔષધિઓ છે, જેનો વિદ્વાનો परि+अवदन्-સર્વ રીતે ઉપદેશ કરે છે. यम्-જેનાથી जीवम्-પ્રાણધારણને अश्नवामहै-પ્રાપ્ત કરે છે, सः-તે पूरुषः-પુરુષ न-रिष्याति-રોગોથી કદી પીડિત થતાં નથી. (૯૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો સર્વ મનુષ્યોને દિવ્ય ઔષધિઓની વિદ્યા પ્રદાન કરે. જેથી સર્વ લોકો દીર્ઘ જીવન પ્રાપ્ત કરે. એ ઔષધિઓને કદી કોઈએ નષ્ટ ન કરવી જોઈએ. (૯૧)

याऽओष॑धी॒: सोम॑राज्ञीर्ब॒ह्वीः श॒तवि॑चक्षणाः।
तासा॑मसि॒ त्वमु॑त्त॒मारं॒ कामा॑य॒ शꣳ हृ॒दे॥ ९२॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેથી त्वम्-તું याः-જે शतविचक्षणाः-અસંખ્ય શુભ ગુણોથી યુક્ત, बह्वीः-અનેક सोमराज्ञीः-સોમ જેનો રાજા અર્થાત્ સર્વોત્તમ છે. તે ओषधीः-ઔષધી છે. तासाम्-તેના વિષયમાં उत्तमा-ઉત્તમ વિદ્વાન असि-છે. એથી शम्-કલ્યાણકારી हृदे-હૃદય માટે अरम्-સમર્થ कामाय-ઈચ્છા-સિદ્ધિ માટે યોગ્ય હોય છે. તેનો અમારા માટે ઉપદેશ કરો. (૯૨)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓએ ઔષધવિદ્યા અવશ્ય ગ્રહણ કરવી જોઈએ. એ વિદ્યા વિના કામનાઓનું પૂર્ણ સુખ પ્રાપ્ત કરી શકાતું નથી. તથા રોગોનું નિવારણ પણ કરી શકાતું નથી. (૯૨)

याऽओष॑धी॒: सोम॑राज्ञी॒र्विष्ठि॑ताः पृथि॒वीमनु॑।
बृह॒स्पति॑प्रसूताऽअ॒स्यै सन्द॑त्त वी॒र्य॒म्॥ ९३॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત પુરુષ ! याः-જે सोमराज्ञीः-જેમાં સોમ ઉત્તમ છે, તે बृहस्पतिप्रसूताः-બૃહત્ કારણ રૂપ પ્રકૃતિના રક્ષક-પાલક ઈશ્વરની રચનાથી ઉત્પન્ન થયેલ ओषधीः-ઔષધિઓ છે, તે पृथिवीम्-પૃથિવીના अनु-પૃષ્ઠ ભાગ પર विष्ठिताः-વિશેષ કરીને સ્થિત છે, તેનાથી अस्यै-એ પત્ની માટે वीर्यम्-બીજનું દાન કર.

હે વિદ્વાનો ! આપ એ ઔષધિઓનું વિજ્ઞાન સર્વ મનુષ્યો માટે संदत्त-સારી રીતે પ્રદાન કરો. (૯૩)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ મહા ઔષધિઓનું સેવન કરીને ઉત્તમ નિયમો અનુસાર ગર્ભાધાન કરવું જોઈએ અને વિદ્વાનો દ્વારા ઔષધિઓનું વિશેષ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ (૯૩)

याश्चेदमुपशृण्वन्ति याश्च दूरं परागताः।

सर्वाः सङ्गत्य वीरुधोऽस्यै सन्दत्त वीर्यम्॥ ९४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ याः-જેને च-જાણો છો. અર્થાત્ પ્રસિદ્ધ છે અને જેને उपश्रृण्वन्ति-સાંભળો છો, याः-જે च-સમીપ છે અને જે दूरम्-દૂર દેશમાં परागताः-પ્રાપ્ત થઈ શકે છે, તે सर्वाः સર્વ वीरुधः-વૃક્ષાદિ ઔષધિઓને संगत्य-નજીક પ્રાપ્ત કરીને इदम्-એ वीर्यम्-શરીરના પરાક્રમને જેમ વૈદ્યો સિદ્ધ કરે છે, તેમ તે ઔષધિઓનું વિજ્ઞાન अस्यै-એ કન્યાને संदत्त-સારી રીતે પ્રદાન કરો. (૯૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જે ઔષધિઓ દૂર અથવા સમીપસ્થ છે, રોગોનું હરણ કરનારી તથા બલની વૃદ્ધિ કરનારી સાંભળવામાં આવે છે, તેનો ઉપયોગ કરીને તમે નીરોગ રહો. (૯૪)

मा वो रिषत् खनिता यस्मै चाहं खनामि वः।

द्विपाच्चतुष्पादस्माकꣳ सर्वमस्त्वनातुरम्॥ ९५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! अहम्-હું यस्मै-જે પ્રયોજન માટે ઔષધિને खनामि-ઉપાડું છું અથવા ખોદું છું. તેમાં खनिता-ખોદેલી वः-તમને मा रिषत्-દુઃખ ન આપે, કારણ કે वः-તમારા च-અને अस्माकम्-અમારા द्विपात्-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ તથા चतुष्पात्-ગાય આદિ सर्वम्-સર્વ પ્રજા એ ઔષધિથી अनातुरम्-રોગજન્ય દુઃખથી રહિત अस्तु-બને. (૯૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઔષધિઓને ખોદે તે મૂળ-બીજ રહિત ન કરે, જેટલી જરૂરી હોય, તેટલી પ્રતિદિન લઈને રોગોનું નિવારણ કરે અને ઔષધિઓના ઉત્પાદનની વૃદ્ધિ કરે. જેથી સર્વ પ્રાણીઓ રોગજન્ય કષ્ટોને પ્રાપ્ત ન થાય અને સુખી રહે. (૯૫)

ओषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा।

यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तꣳ राजन् पारयामसि॥ ९६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सोमेन राज्ञा-સર્વોત્તમ સોમલતાની सह-સાથે વિદ્યમાન ओषधयः-ઔષધિઓ છે. તેના વિજ્ઞાન માટે આપ सम्+अवदन्त-પરસ્પર સંવાદ કરો.

હે વૈદ્ય राजन्-રાજપુરુષ ! અમે ब्राह्मणः-વેદ અને ઉપવેદોના જાણનાર यस्मै-જે રોગી માટે એ ઔષધિઓને ગ્રહણ कृणोति-કરે છે. तम्-તે રોગીને રોગ સાગરથી તે ઔષધિઓ દ્વારા पारयामसि-પાર કરીએ છીએ. (૯૬)

ભાવાર્થ : વૈદ્યો પરસ્પર પ્રશ્નોત્તરથી ઔષધિ વિજ્ઞાનને ઉત્તમ કરીને રોગથી રોગીઓને પાર પહોંચાડીને નિરંતર તેઓને સુખી કરે. વળી તે વૈદ્યોમાં જે સર્વોત્તમ વિદ્વાન્ હોય, તે સર્વને આયુર્વેદ ભણાવે, (૯૬)

नाशयित्री बलासस्यार्शसऽउपचितामसि।

अथो शतस्य यक्ष्माणां पाकारोरसि नाशनी॥ ९७॥

પદાર્થ : હે વૈદ્યો ! बलासस्य-અતિશય વધેલા કફની, अर्शसः-ગુદેન્દ્રિયની વ્યાધિ વા उपचिताम्-અન્ય વધેલા રોગોની नाशयित्री-નાશ કરનારી ઔષધિ असि-છે.

अथो-અને જે शतस्य-અસંખ્ય यक्ष्माणाम्-ક્ષય અર્થાત્ રાજરોગો, ભગંદરાદિ તથા पाकारोः-મૂખરોગો અને મર્મછેદક શૂલનું नाशनी-નાશ કરનારી असि-છે, તે ઔષધિને તમે જાણો. (૯૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે એમ જાણવું જોઈએ કે જેટલા રોગો છે, તેટલી જ તેને દૂર કરનારી ઔષધિઓ છે. તેના વિજ્ઞાનથી રહિત પ્રાણી રોગોથી પીડિત રહે છે. જો રોગોની ઔષધિઓ જાણી લે, તો તે રોગોના નિવારણથી તેઓ સુખી રહે. (૯૭)

त्वां गन्धर्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत॥ ९८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે ઔષધિના સેવનથી રોગી यक्ष्मात्-ક્ષયરોગથી अमुच्यत-મુક્ત બની જાય છે, અને જે ओषधे-ઔષધિનો તમે ઉપયોગ કરો છો, त्वाम्-તેને गन्धर्वाः-ગાન વિદ્યામાં કુશળ ગન્ધર્વ अखनन्-ખોદે છે, અર્થાત્ ગ્રહણ કરે છે, त्वाम्-તેને इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન્ રાજા, त्वाम्-તેને बृहस्पतिः-વેદના જાણનારા અને त्वाम्-તેને सोमः-સુંદર ગુણોથી યુક્ત विद्वान्-સર્વશાસ્ત્રના જાણનાર राजा-પ્રકાશમાન રાજા त्वाम्-તે ઔષધિને ખોદે. (૯૮)

ભાવાર્થ : જે કોઈ ઔષધિઓ મૂળથી, કોઈ શાખા આદિથી, કોઈ પુષ્પોથી, કોઈ પત્રોથી, કોઈ ફલોથી,કોઈ સમસ્ત સંયોગથી રોગોને દૂર કરે છે, તેનું સેવન મનુષ્યોએ યથાવત્ કરવું જોઈએ. (૯૮)

सहस्व मेऽअरातीः सहस्व पृतनायतः।

सहस्व सर्वं पाप्मानꣳ सहमानास्योषधे॥ ९९॥

પદાર્થ : ओषधे-ઔષધિની સમાન ઔષધિવિદ્યાને જાણનારી સ્ત્રી ! જેમ ઔષધિ सहमाना-બળનું નિમિત્ત असि-છે, मे-મારા રોગોનું નિવારણ કરીને બળની વૃદ્ધિ કરનારી છે, તેમ अरातीः-શત્રુઓને

सहस्व-વશમાં કરીને, પોતાની पृतनायतः-સેના, યુદ્ધની ઈચ્છા કરનારને सहस्व-વશમાં કર અને सर्वम्-સર્વ पाप्मानम्-રોગાદિને सहस्व-વશમાં કર. (૯૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઔષધિઓના સેવનથી બળની વૃદ્ધિ કરીને પ્રજાના અને પોતાના શત્રુઓને તથા પાપીજનોને વશમાં કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરવા જોઈએ. (૯૯)

दी॒र्घायु॑स्तऽओषधे खनि॒ता यस्मै॑ च त्वा॒ खना॑म्य॒हम्।
अथो॒ त्वं दी॒र्घायु॑र्भू॒त्वा श॒तव॑ल्शा॒ वि रो॑हतात्॥ १००॥

પદાર્થ : હે ओषधे-ઔષધિની સમાન ઔષધિઓના ગુણ, દોષને જાણનારા વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેથી ते-તારી જે ઔષધિનું खनिता-સેવન કરનાર अहम्-હું यस्मै-જે પ્રયોજન માટે च-અને જે પુરુષ માટે खनामि-ખોદું તેથી તું दीर्घायुः-દીર્ઘાયું બન. अथो-અને दीर्घायुः-દીર્ઘાયુ भूत्वा-બનીને त्वम्-તું જે शतवल्शा-અસંખ્ય અંકુરો યુક્ત ઔષધિ છે, त्वा-તેનું સેવન કરીને સુખી બન. અને वि+रोहतात्-વિશેષ ઉન્નતિ કર.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઔષધિઓના સેવનથી દીર્ઘાયુ બનો. અને ધર્માચરણશીલ બનીને સર્વને ઔષધિ સેવનથી દીર્ઘાયુ અને ધર્માચારી બનાવો. (૧૦૦)

त्वमु॑त्त॒मास्यो॑षधे॒ तव॑ वृ॒क्षाऽउप॑स्तयः।
उप॑स्तिरस्तु॒ सो॒ऽस्माकं॒ योऽअ॒स्माँ२ऽअ॑भि॒दास॑ति॥ १०१॥

પદાર્થ : હે વૈદ્ય ! यः-જે अस्मान्-અમને अभिदासति-ઈચ્છિત સુખ આપે છે सः-તે त्वम्-તું अस्माकम्-અમારો उपस्तिः-સંગ કરનાર अस्तु-બને, જે उत्तमा-ઉત્તમ ओषधे-ઔષધિ असि-છે, તથા तव-જેના वृक्षाः-વડ આદિ વૃક્ષ उपस्तयः-સમીપ એકત્ર થનાર છે, [અર્થાત્ સંઘાતરૂપ છે] તે ઔષધિથી અમને સુખ આપ. (૧૦૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કદીપણ વિરોધી વૈદ્યની ઔષધિ ન લેવી જોઈએ. તેમજ વિરોધી મિત્રની પણ લેવી નહિ. પરન્તુ જે વૈદ્યકશાસ્ત્રના અર્થોનો જ્ઞાતા, આપ્ત, અજાતશત્રુ, સર્વનો ઉપકારકર્તા અને સર્વનો મિત્ર હોય, તેના દ્વારા ઔષધવિદ્યાનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૧૦૧)

मा मा॑ हि॑ꣳसीज्जनि॒ता यः पृ॑थि॒व्या यो वा॒ दिव॑ꣳ स॒त्यध॑र्मा॒ व्यान॑ट्।
यश्चा॒पश्च॒न्द्राः प्र॑थ॒मो ज॒जान॒ कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम॥ १०२॥

પદાર્થ : यः જે सत्यधर्मा-સત્યધર્મયુક્ત જગદીશ્વર पृथिव्याः-પૃથિવીના जनिता-ઉત્પન્ન કરનાર છે, वा-અથવા यः-જે दिवम्-સૂર્ય આદિ જગતને च-અને पृथिवी-તથા अपः-જલ અને વાયુને व्यानट्-ઉત્પન્ન કરીને વ્યાપ્ત બને છે, च-તથા चन्द्राः-ચન્દ્રમા આદિ લોકોને जजान-ઉત્પન્ન કરે છે.

જે कस्मै-સુખસ્વરૂપ સુખકારક, देवाय-દિવ્ય ગુણોના પ્રદાતા, વિજ્ઞાન સ્વરૂપ ઈશ્વરનું हविषा-

ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ભક્તિયોગથી અમે विधेम-સેવન કરીએ, તે જગદીશ્વર मा-મને मा हिंसीत्-કુસંગથી તાડિત ન થવા દે. [અર્થાત્ પીડિત ન કરે.] (૧૦૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સત્ય ધર્મની પ્રાપ્તિ માટે તથા ઔષધિ આદિના વિજ્ઞાન માટે પરમેશ્વરને પ્રાર્થના કરવી જોઈએ. (૧૦૨)

अभ्यावर्त्तस्व पृथिवि यज्ञेन पयसा सह।
वपां तेऽअग्निरिषितोऽअरोहत्॥ १०३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું જે पृथिवी-ભૂમિ यज्ञेन-સંગતિકારક યજ્ઞથી पयसा-જલથી सह-યુક્ત છે, તેને अभ्यावर्तस्व-બન્ને તરફથી શીઘ્ર વર્તાવમાં લાવ. જે ते-આપના वपाम्-વાવેલાને इषितः-પ્રેરિત કરેલ अग्निः-અગ્નિ अरोहत्-ઉત્પન્ન કરે છે, તે અગ્નિના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ સર્વેએ જાણવા જોઈએ. (૧૦૩)

ભાવાર્થ : જે ભૂમિ સર્વનો આધાર, રત્નોનો ભંડાર, જીવનપ્રદ અને વિદ્યાથી યુક્ત છે, તેનું વિશેષ વિજ્ઞાન ભૂગર્ભ વિદ્યાથી સર્વ મનુષ્યોએ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૧૦૩)

अग्ने यत्ते शुक्रं यच्चन्द्रं यत्पूतं यच्च यज्ञियम्। तद्देवेभ्यो भरामसि॥ १०४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! यत्-જે અગ્નિના शुक्रम्-શીઘ્રકારી यत्-જે चन्द्रम्-સુવર્ણ સમાન આનંદ આપનાર, यत्-જે पूतम्-પવિત્ર च-અને यत्-જે यज्ञियम्-યજ્ઞાનુષ્ઠાન યોગ્ય સ્વરૂપ છે, तत्-તે ते-આપના અને देवेभ्यः-દિવ્યગુણો માટે भरामसि-અમે ધારણ કરીએ. (૧૦૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દિવ્ય ગુણ, કર્મોની પ્રાપ્તિ માટે વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિવિદ્યાઓનું પ્રત્યક્ષ કરવું જોઈએ. (૧૦૪)

इषमूर्जमहमितऽआदमृतस्य योनिं महिषस्य धाराम्।
आ मा गोषु विशत्वा तनूषु जहामि सेदिमनिराममीवाम्॥ १०५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अहम्-હું इतः-એ પૂર્વોક્ત વિદ્યુત્સ્વરૂપથી आदम्-ભોગવવા યોગ્ય इषम्-અન્ન ऊर्जम्-પરાક્રમ महिषस्य-મહાન ऋतस्य-સત્યના योनिम्-કારણ धाराम्-ધારણ કરનારી વાણીને પ્રાપ્ત કરું છું, જેમ અન્ન અને પરાક્રમ मा-મને आविशतु-પ્રાપ્ત થાય, જેથી મારા गोषु-ઇન્દ્રિયો અને तनूषु-શરીરમાં પ્રવેશ થયેલ सेदिम्-દુઃખના કારણો અને अनिराम्-જેમાં અન્નનું સેવન ન કરી શકું એવી अमीवाम्-રોગોથી ઉત્પન્ન થયેલી પીડાનો आ, जहामि-ત્યાગ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. (૧૦૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય અગ્નિનું જે સફેદ આદિથી યુક્ત સ્વરૂપ છે, તેનાથી રોગોનો નાશ કરે. ઈન્દ્રિયો અને શરીરોને સ્વસ્થ અને નીરોગ કરીને કાર્ય અને કારણનું જ્ઞાન કરાવનારી વિદ્યાયુક્ત વાણીને પ્રાપ્ત

કરે તથા યુક્ત આહાર-વિહાર કરે. (૧૦૫)

अग्ने तव श्रवो वयो महि भ्राजन्तेऽअर्चयो विभावसो।

बृहद्भानो शवसा वाजमुक्थ्यं दधासि दाशुषे कवे॥ १०६॥

પદાર્થ : હે बृहद्भानो-અગ્નિની સમાન મહાન વિદ્યાના પ્રકાશથી યુક્ત, विभावसो-વિવિધ પ્રકારની કાન્તિમાં નિવાસ કરનાર, कवे-અત્યંત બુદ્ધિમાન, अग्ने-અગ્નિની સમાન વિદ્યમાન વિદ્વાન્ ! જેથી આપ शवसा-બલથી दाशुषे-વિદ્યાદાન યોગ્ય વિદ્યાર્થી માટે उक्थ्यम्-ઉપદેશ આપવા યોગ્ય वाजम्-વિજ્ઞાનને दधासि-ધારણ કરો છો, તેથી तव-આપનું અગ્નિ સમાન महि-પૂજા યોગ્ય મહાન श्रवः-સાંભળવા યોગ્ય શબ્દ वयः-યૌવન અને अर्चयः-દીપ્તિ भ्राजन्ते-પ્રકાશિત થાય છે-ચમકે છે. (૧૦૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય અગ્નિની સમાન ગુણી, આપ્ત પુરુષ સમાન શ્રેષ્ઠ કીર્તિયુક્ત બનીને પ્રકાશિત થાય છે, તે પરોપકાર માટે અન્યોને વિદ્યા, વિનય અને ધર્મનો નિરંતર ઉપદેશ કરે. (૧૦૬)

पावकवर्चाः शुक्रवर्चाऽअनूनवर्चाऽउदियर्षि भानुना।

पुत्रो मातरा विचरन्नुपावसि पृणक्षि रोदसीऽउभे॥ १०७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ पुत्रः-બ્રહ્મચર્યાદિ આશ્રમોમાં विचरन्-વિચરણ કરતાં વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરે છે. અને भानुना-પ્રકાશથી पावकवर्चाः-शुक्रवर्चाः-વિદ્યુત્ અને સૂર્યના પ્રકાશ સમાન ન્યાય કરનાર અને अनूनवर्चाः-પૂર્ણ વિદ્યાભ્યાસ કરનાર તથા જેમ उभे-બન્ને रोदसी-આકાશ અને પૃથિવી પરસ્પર સંબંધ ધરાવે છે, તેમ उत्, इयर्षि-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરતાં રાજ્યનો पृणक्षि-સંબંધ કરે છે. અને मातरा-માતા -પિતાની उपावसि-રક્ષા કરે છે એથી તું ધર્માત્મા છે. (૧૦૭)

ભાવાર્થ : માતા-પિતા આદિને એ અત્યંત ઉચિત છે, કે તેઓ સંતાનોને જન્મ આપીને, બાલ્યાવસ્થામાં જ તેને સ્વયં શિક્ષા આપીને, ત્યારે બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરાવીને, આચાર્ય કુલમાં વિદ્યા ગ્રહણ કરવા માટે મોકલીને વિદ્યાપ્રાપ્તિનો સુઅવસર પ્રદાન કરે.

સંતાનોને પણ એ અતિ ઉચિત છે, કે તેઓ વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત બનીને, પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરીને, અભિમાન અને ઈર્ષાથી રહિત બનીને પ્રીતિપૂર્વક માતા-પિતાની મન, વચન અને કર્મથી યથાવત્ સેવા કરે. (૧૦૭)

ऊर्जो नपाज्जातवेदः सुशस्तिभिर्मन्दस्व धीतिभिर्हितः।

त्वेऽइषः सन्दधुर्भूरिवर्पसश्चित्रोतयो वामजाताः॥ १०८॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-બુદ્ધિ અને ધનથી યુક્ત પુત્ર ! જે त्वे-તારામાં भूरिवर्पसः-અનેક પ્રશંસા યોગ્ય રૂપોથી યુક્ત, चित्रोतः-આશ્ચર્ય સમાન રક્ષા આદિ કર્મ કરનારી, वामजाताः-પ્રશંસાને યોગ્ય કુળ અને કર્મોમાં પ્રસિદ્ધ વિદ્યાપ્રિય અધ્યાપિકા માતા આદિ વિદ્વાન સ્ત્રીઓ इषः-અન્નને संदधुः-ઘરે-ભોજન કરાવે.

તે તું सुशस्तिभिः-ઉત્તમ પ્રશંસાયુક્ત ક્રિયાઓ કરનારી धीतिभिः-આંગળીઓથી બોલાવેલા ऊर्जः-પરાક્રમને नपात्-ધર્માનુકૂળ પરાક્રમયુક્ત સર્વના हितः-હિતને ધારણ કરતાં સદા मन्दस्व-આનંદ કર. (૧૦૮)

ભાવાર્થ : જે બાળકો અને બાલિકાઓની માતાઓ વિદ્યાપ્રિય વિદુષી હોય, તે જ નિરંતર સુખ પ્રાપ્ત કરે છે.

જે માતા-પિતાના સંતાન વિદ્યા, સુશિક્ષા અને બ્રહ્મચર્ય દ્વારા શારીરિક તથા આત્મિક બલથી યુક્ત ધર્માચારી હોય છે, તે જ સદા સુખી રહે છે. (૧૦૮)

इरज्यन्नग्ने प्रथयस्व जन्तुभिरस्मे रायोऽअमर्त्य।
स दर्शतस्य वपुषो विराजसि पृणक्षि सानसिं क्रतुम्॥ १०९॥

પદાર્થ : હે अमर्त्य-નાશ અને સંસારી મનુષ્યોના સ્વભાવથી રહિત अग्ने-અગ્નિ સમાન પુરુષાર્થી ! જે इरज्यन्-ઐશ્વર્યનો સંચય કરનાર આપ दर्शतस्य-દર્શનીય वपुषः-રૂપને सानसिम्-સનાતન क्रतुम्-બુદ્ધિનો पृणक्षि-સંબંધ રાખો છો અને તે બુદ્ધિમાં વિશેષ કરીને विराजसि-શોભિત-વિરાજમાન રહો છો सः-તે આપ अस्मे-અમારા માટે जन्तुभिः-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓથી रायः-ધનોનો प्रथयस्व-વિસ્તાર કરો. (૧૦૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યને સનાતન વિદ્યા આપે છે, સ્વયં શોભનીય વેશ અને આચરણમાં વિરાજમાન રહે છે, તે ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવી શકે છે. (૧૦૯)

इष्कर्त्तारमध्वरस्य प्रचेतसं क्षयन्तꣳ राधसो महः।
रातिं वामस्य सुभगां महीमिषं दधासि सानसिꣳ रयिम्॥ ११०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ अध्वरस्य-વિસ્તારવા યોગ્ય યજ્ઞને इष्कर्त्तारम्-સિદ્ધ કરનાર प्रचेतसम्-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન वामस्य-પ્રશંસિત महः-મહાન્ राधसः-ધનના रातिम्-દાતાને; क्षयन्तम्-નિવાસ કરનાર પુરુષ અને सुभगाम्-સુંદર ઐશ્વર્યની આપનારી महीम्-પૃથિવી તથા इषम्-અન્ન આદિને તથા सानसिम्-પ્રાચીન रयिम्-ધનને दधासि-ધારણ કરો છો, એથી અમારા સત્કારને યોગ્ય છો. (૧૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પોતાના સુખ માટે ઈચ્છા કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ કરે, તે આપ્ત પુરુષ પૂજ્ય બને છે. (૧૧૦)

ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निꣳ सुम्नाय दधिरे पुरो जनाः।
श्रुत्कर्णꣳ सप्रथस्तमं त्वा गिरा दैव्यं मानुषा युगा॥ १११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ जनाः-વિદ્યા અને વિજ્ઞાનથી પ્રસિદ્ધ મનુષ્ય गिरा-વાણીથી सुम्नाय-સુખ માટે दैव्यम्-વિદ્વાનોમાં કુશળ, श्रुत्कर्णम्-બહુશ્રુત, विश्वदर्शतम्-સર્વ જોનાર [સર્વ વિદ્યા-બોધનો દ્રષ્ટા],

सप्रथस्तमम्-અત્યંત વિદ્યાના વિસ્તારથી યુક્ત, ऋतावानम्-અત્યંત સત્યાચરણથી યુક્ત महिषम्-મહાન્ अग्निम्-વિદ્વાનને અને मानुषा-મનુષ્યોના युगा-વર્ષો વા સતયુગ આદિ पुरः-પ્રથમ दधिरे-ધારણ કરેલ છે, તેવા વિદ્વાનને અને વર્ષોને તું પણ ધારણ કર. એ त्वा-તને શિખવું છું. (૧૧૧)

ભાવાર્થ : જે સત્પુરુષો થઈ ગયા છે તેનું મનુષ્યોએ અનુકરણ કરવું જોઈએ. અન્ય અધર્મીઓનું નહિ. (૧૧૧)

आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवा वाजस्य सङ्गथे॥ ११२॥

પદાર્થ : હે सोम-ચંદ્રમા સમાન કાન્તિમાન રાજપુરુષ ! જેમ સોમગુણયુક્ત વિદ્વાનના સંગથી ते-તારા માટે वृष्ण्यम्-વીર્યવાન્-બલવાન પુરુષના કર્મને विश्वतः-સર્વત્રથી समेतु-પ્રાપ્ત થાય, તેથી આપ आप्यायस्व-આગળ વધીને वाजस्य-વિજ્ઞાન અને વેગથી સંગ્રામના જાણનારા બનીને संगथे-યુદ્ધમાં વિજય કરનાર भव-બનો. (૧૧૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષે નિત્ય વીર્ય-બલની વૃદ્ધિ કરીને શત્રુઓથી વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૧૧૨)

सं ते पयांꣳसि समु यन्तु वाजाः सं वृष्ण्यान्यभिमातिषाहः।
आप्यायमानोऽअमृताय सोम दिवि श्रवांꣳस्युत्तमानि धिष्व॥ ११३॥

પદાર્થ : હે सोम-શાન્તિયુક્ત પુરુષ ! જે ते-તમારા માટે पयांसि-જલ વા દૂધ संयन्तु-પ્રાપ્ત થાય; अभिमातिषाहः-અભિમાની શત્રુઓનું નિવારણ કરનાર वाजाः-ધનુર્વેદનું વિજ્ઞાન सम्-પ્રાપ્ત થાય; उ-અને वृष्ण्यानि-પરાક્રમ सम्-પ્રાપ્ત થાય, તે आप्यायमानः-સારી રીતે આગળ વધતાં આપ दिवि-પ્રકાશસ્વરૂપ ઈશ્વરમાં अमृताय-મોક્ષ માટે उत्तमानि, श्रवांसि-ઉત્તમ શ્રવણને धिष्व-ધારણ કરો. (૧૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો શરીર અને આત્માના બલની નિત્ય વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ યોગાભ્યાસથી મોક્ષના આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧૩)

आप्यायस्व मदिन्तम सोम विश्वेभिरꣳशुभिः।
भवा नः सुप्रथस्तमः सखा वृधे॥ ११४॥

પદાર્થ : હે मदिन्तम-અત્યંત આનંદી सोम-ઐશ્વર્યયુક્ત પુરુષ ! આપ अंशुभिः-જેમ કિરણોથી સૂર્ય વધે છે તેમ विश्वेभिः-સર્વ સાધનોથી आप्यायस्व-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો. सप्रथस्तमः-અત્યંત વિસ્તારયુક્ત સુખ કરનાર सखा-મિત્ર બનીને नः-અમારી वृधे-વૃદ્ધિ માટે भव-તત્પર બનો. (૧૧૪)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે સર્વનું હિત કરનાર મનુષ્ય છે તેની સર્વ રીતે વૃદ્ધિ થાય છે ઈર્ષા કરનારની નહિ. (૧૧૪)

आ ते वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात्। अग्ने त्वाङ्कामया गिरा॥ ११५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન પુરુષ ! त्वाङ्कामया-તમને કામના કરવા માટે

गिरा-વાણીથી જે ते-તારું मनः-ચિત્ત જેમ परमात्-ઉત્તમ सधस्थात्-એક સ્થાનથી चित्-જ वत्सः-વાછરડું ગાયને મળે, તેમ आ+यमत्-સ્થિર થાય છે, તેમ તું મુક્તિને કેમ પ્રાપ્ત ન થાય ? (૧૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે મન અને વાણીને સદા પોતાના વશમાં રાખવા જોઈએ. (૧૧૫)

तुभ्यं ताऽअङ्गिरस्तम विश्वाः सुक्षितयः पृथक्। अग्ने कामाय येमिरे॥ ११६ ॥

પદાર્થ : હે अङ्गिरस्तम-અત્યંત સારને ગ્રહણ કરનાર अग्ने-પ્રકાશમાન રાજન્ ! જે विश्वाः-સર્વ सुक्षितयः-શ્રેષ્ઠ પ્રજાજન पृथक्-અલગ कामाय-ઈચ્છા સિદ્ધિ માટે तुभ्यम्-તારા માટે येमिरे-પ્રાપ્ત થાય છે ताः-તે પ્રજાઓની નિરંતર રક્ષા કર. (૧૧૬)

ભાવાર્થ : જ્યાં પ્રજા ધાર્મિક રાજાને પ્રાપ્ત કરીને પોતપોતાની ઈચ્છા પૂર્ણ કરી લે છે, ત્યાં રાજાની વૃદ્ધિ કેમ ન થાય ? (૧૧૬)

अग्निः प्रियेषु धामसु कामो भूतस्य भव्यस्य। सम्राडेको विराजति॥ ११७॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય सम्राट्-સમ્યક્ પ્રકાશક एकः-એકજ પરમેશ્વર સમાન कामः-સ્વીકારવા યોગ્ય अग्निः-અગ્નિ સમાન વિદ્યમાન સભાપતિ भूतस्य-ભૂત અને भव्यस्य-ભવિષ્ય સમયના प्रियेषु-પ્રિય धामसु-જન્મ, સ્થાન અને નામોમાં विराजति-વિરાજમાન રહે, તે જ રાજ્યના અધિકારી થવાને યોગ્ય છે. (૧૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમાત્માના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવની અનુકૂળ પોતાના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ કરે છે, તે જ સામ્રાજ્યનો ભોગ કરી શકે છે. (૧૧૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં સ્ત્રી, પુરુષ, રાજા, પ્રજા, ખેતી અને પઠન-પાઠન આદિ કર્મોનું વર્ણન છે. તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થ સાથે સંગતિ સમજવી જોઈએ.

॥ इति द्वादशोऽध्याय ॥



॥ अथ त्रयोदशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

मयि गृह्णाम्यग्रे अग्निᳬ रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय।

मामु देवताः सचन्ताम्॥ १॥

પદાર્થ : હે કુમાર અને કુમારીઓ ! જેમ હું अग्रे-પ્રથમ मयि-મારામાં रायः-વિજ્ઞાન આદિ ધનથી पोषाय-પુષ્ટિ सुप्रजास्त्वाय-ઉત્તમ પ્રજા થવા માટે, सुवीर्य्याय-રોગરહિત સુંદર પરાક્રમની પ્રાપ્તિ માટે अग्निम्-ઉત્તમ વિદ્વાનને गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું; જેથી माम्-મને उ-નિશ્ચયથી देवताः-ઉત્તમ વિદ્વાન્ વા ઉત્તમ ગુણ सचन्ताम्-પ્રાપ્ત થાય, તેમ તમે પણ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને એ ઉચિત છે, કે બ્રહ્મચર્યયુક્ત બાલ્યાવસ્થામાં વેદોના અધ્યયન દ્વારા પદાર્થ વિદ્યા, યોગાભ્યાસ, ઈશ્વરોપાસના અને બ્રહ્મજ્ઞાનને ગ્રહણ કરે.

જેથી-દિવ્ય ગુણો અને આપ્ત વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને ઉત્તમ ધન, સંતાન અને પરાક્રમને પ્રાપ્ત કરી શકે. (૧)

अपां पृष्ठमसि योनिरग्नेः समुद्रमभितः पिन्वमानम्।

वर्धमानो महाँ२ऽआ च पुष्करे दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथस्व॥ २॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું अभितः-સર્વત્રથી अपाम्-સર્વત્ર વ્યાપક પરમેશ્વર આકાશ, દિશા, વિદ્યુત્, પ્રાણો વા જલોના पृष्ठम्-આધાર समुद्रम्-આકાશ સમાન સાગરને पिन्वमानम्-સિંચનાર છો, अग्नेः-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિના योनिः-કારણે दिवः-પ્રકાશિત પદાર્થોનું मात्रया-નિર્માણ કરનારી બુદ્ધિથી पुष्करे-હૃદયરૂપ અન્તરિક્ષમાં वर्धमानः-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત થયેલ च-અને महान्-સર્વ શ્રેષ્ઠ વા સર્વના પૂજ્ય असि-છો, તે આપ અમારા માટે वरिम्णा-વ્યાપક શક્તિથી आ+प्रथस्व-પ્રસિદ્ધ બનો. (૨)

ભાવાર્થ : જે સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ, સમસ્ત સંસારના રચયિતા, સર્વત્ર વ્યાપક, સર્વથી ઉત્તમ અને સર્વશક્તિમાન ઈશ્વરની ઉપાસના કરીને સંપૂર્ણ વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, તેનું મનુષ્યોએ સેવન કેમ ન કરવું જોઈએ. (૨)

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेनऽआवः।

स बुध्न्याऽउपमाऽअस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः॥ ३॥

પદાર્થ : જે पुरस्तात्-સૃષ્ટિની આદિમાં जज्ञानम्-સર્વના ઉત્પાદક અને જ્ઞાતા, प्रथमम्-વિસ્તારયુક્ત અને વિસ્તાર કર્તા, ब्रह्म-સર્વથી મહાન છે, જે सुरुचः-સુંદર પ્રકાશયુક્ત અને સુંદર રુચિના વિષય,

वेनः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, જે अस्य-એથી बुध्न्याः જલ સંબંધી આકાશમાં વિદ્યમાન સૂર્ય, ચન્દ્રમા, પૃથિવી અને નક્ષત્ર આદિ विष्ठाः-વિવિધ સ્થાનોમાં રહેલા છે, उपमाः-ઈશ્વર જ્ઞાન માટે ઉપમા-દૃષ્ટાન્ત છે, તે સર્વને सः-તે आवः-પોતાની વ્યાપ્તિથી આચ્છાદન કરે છે, તે ઈશ્વર विसीमतः-મર્યાદાથી सतः-વ્યક્ત असतः-અવ્યકત-કારણ =પ્રકૃતિ च-અને કારણના योनिम्-આકાશરૂપ સ્થાનને विवः-ગ્રહણ કરે છે. તે બ્રહ્મની સર્વ લોકોએ નિત્ય ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરના વિશેષ જ્ઞાન માટે પ્રસિદ્ધ અને અપ્રસિદ્ધ લોક દૃષ્ટાન્ત છે.

જે બ્રહ્મ સર્વમાં વ્યાપક બનીને સર્વને આચ્છાદિત કરે છે, સર્વને પ્રકાશિત કરે છે, સર્વને ઉત્તમ નિયમથી પોત-પોતાની કક્ષામાં ચલાવે છે.

તે અન્તર્યામી બ્રહ્મ પરમાત્મા સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે, તેથી પૃથક કોઈ વસ્તુ ભક્તિ કરવા યોગ્ય નથી. (૩)

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે જે એ भूतस्य-ઉત્પન્ન સંસારના जातः-જનક पतिः-પાલક एकः-અદ્વિતીય हिरण्यगर्भः-સૂર્યાદિ તેજોમય પદાર્થોના આધાર अग्रे-જગતની રચના પૂર્વે समवर्त्तत-વિદ્યમાન आसीत्-હતા सः-તેણે इमाम्-આ સૃષ્ટિને રચી उत-અને पृथिवीम्-પ્રકાશરહિત ભૂગોલાદિ અને द्याम्-પ્રકાશયુક્ત સૂર્યાદિ લોકોને दाधार-ધારણ કરેલ છે, તે कस्मै-સુખસ્વરૂપ પ્રજાપતિ देवाय-પ્રકાશમાન પરમાત્માની हविषा-આત્મા આદિ સામગ્રીથી विधेम-પરિચર્યા-સેવા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ તે પરમાત્માની સેવા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે ઈશ્વર ! આ વ્યક્ત સૃષ્ટિના પૂર્વે [હિરણ્યગર્ભ] ઈશ્વર જ જાગરુક હતા. જેણે આ લોકોને ધારણ કરેલ છે અને પ્રલય સમયમાં છિન્ન-ભિન્ન કરે છે. તે ઈશ્વરને તમે ઉપસના યોગ્ય માનો. (૪)

द्रप्सश्चस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः।
समानं योनिमनु संचरन्तं द्रप्सं जुहोम्यनु सप्त होत्राः॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું सप्त-પાંચ પ્રાણ, મન અને આત્મા એ સાત होत्राः-અનુગ્રહણ કરનાર છે, यः-જે इमाम्ः-આ पृथिवीम्-પૃથિવી द्याम्-પ્રકાશમય દ્યુલોક च-અને योनिम्-કારણ-પ્રકૃતિને अनु-અનુકૂળ यः-જે पूर्वः-સંપૂર્ણ સ્વરૂપ द्रप्सः-આનંદ અને ઉત્સાહને अनु-અનુકૂળતાથી चस्कन्द-પ્રાપ્ત થાય છે, તે योनिम्-સ્થાનને अनु-અનુસાર संचरन्तम्-સંચારી समानम्-સમાન રૂપથી द्रप्सम्-સર્વત્ર અભિવ્યાપ્ત આનંદને હું अनु + जुहोमि-અનુકૂળતાથી ગ્રહણ કરું છું, તેમ તમે પણ ગ્રહણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વરનું આનંદમય સ્વરૂપ સર્વત્ર ઉપલબ્ધ છે, તેની પ્રાપ્તિ માટે

તમે યોગાભ્યાસ કરો. (૫)

नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु।

येऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः॥ ६॥

પદાર્થ : જે के-કોઈ આ જગતમાં લોક-લોકાન્તર અને પ્રાણીઓ છે तेभ्यः-તે सर्पेभ्यः-લોકોના જીવો માટે नमः-અન્ન अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

ये-જે अन्तरिक्षे-આકાશમાં ये-જે दिवि-પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ લોકોમાં च-અને ये-જે पृथिवीम्-ભૂમિની अनु-ઉપર ચાલે છે-ગતિ કરે છે તે सर्पेभ्यः-પ્રાણીઓ માટે नमः-અન્ન પ્રાપ્ત થાય. (૬)

ભાવાર્થ : આ જેટલા લોકો જોવામાં આવે છે અને જે જોવામાં નથી આવતા તે સર્વ પોત-પોતાની કક્ષામાં નિયત કરેલ આકાશમાં ભ્રમણ કરે છે.

તે સર્વ લોકોમાં જે પ્રાણીઓ વિચરે છે તેને માટે ઈશ્વરે [અન્નાદિ] રચેલ છે, તેનાથી તેઓનું જીવન યાપન થાય છે, એમ તમે જાણો. (૬)

याऽइषवो यातुधानानां ये वा वनस्पतीँ१ऽरनु।

ये वावटेषु शेरते तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે याः-જે यातुधानानाम्-પારકા પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરનારા ડાકૂઓની इषवः-ગતિ-ચાલ છે, वा-અથવા ये-જે वनस्पतीन्-વડ આદિ વનસ્પતિઓના વનમાં अनु-આશ્રિત રહે છે. અને ये-જે वा અથવા अवटेषु-ગુપ્ત માર્ગોમાં शेरते-સૂએ છે तेभ्यः-તે सर्पेभ्यः-ચંચળ દુષ્ટ પ્રાણીઓને માટે नमः-વજ્ર ચલાવો. (૭)

ભાવાર્થ : માર્ગોમાં અને વનોમાં જે ઠગ લોકો દિવસમાં એકાન્તમાં સૂએ છે, તે ડાકૂઓનું અને સર્પોનું મનુષ્યો શસ્ત્ર તથા ઔષધિ આદિથી નિવારણ કરે. (૭)

ये वामी रोचने दिवो ये वा सूर्यस्य रश्मिषु।

येषामप्सु सदस्कृतं तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! ये-જે अमी-પરોક્ષમાં રહેનાર दिवः-વિદ્યુત્‌ના रोचने-પ્રકાશમાં, वा-અથવા ये-જે सूर्यस्य-સૂર્યના रश्मिषु-કિરણોમાં, वा-અથવા ये-જે येषाम्-જેના अप्सु-જલોમાં सदः-સ્થાન कृतम्-બનેલા છે, तेभ्यः-તે સર્વ सर्पेभ्यः-દુષ્ટ પ્રાણીઓને नमः-વજ્રથી મારો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોને યોગ્ય છે, કે તેઓ જે જલ અને અન્તરિક્ષમાં સર્પ આદિ દુષ્ટ પ્રાણીઓ રહે છે, તેની વજ્રના પ્રહારથી નિવૃત્તિ કરે. (૮)

कृणुष्व पाजः प्रसितिं न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ२ऽइभेन।

तृष्वीमनु प्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्य रक्षसस्तपिष्ठैः॥ ९॥

પદાર્થ : હે સેનાપતિ ! આપ पाजः-બલ-સેનાને कृणुष्व-બનાવી प्रसितिम्-જાળની न-સમાન पृथिवीम्-ભૂમિને याहि-કરો જેથી આપ अस्ता-બાણ આદિને ફેંકનાર असि-છો, એથી इभेन-હાથીથી अमवान्-અનેક દૂતોવાળા राजेव-રાજાની સમાન तपष्ठैः-અત્યંત દુઃખદાયી શસ્ત્રોથી प्रसितिम्-બંધન જાલથી સિદ્ધ કરીને रक्षसः-શત્રુઓનો द्रूणानः-સંહાર કરતા तृष्वीम्-શીઘ્ર अनु-સામે આવીને विध्य-તાડન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : રાજાની સમાન સેનાપતિએ પૂર્ણ બલ-સેનાને બનાવીને, અનેક બંધનોથી શત્રુઓને બાંધીને, બાણ આદિથી વીંધીને તથા તેને જેલમાં રાખીને શ્રેષ્ઠોનું પાલન કરવું જોઈએ. (૯)

तव भ्रमासऽआशुया पतन्त्यनु स्पृश धृषता शोशुचानः।
तपूंष्यग्ने जुह्वा पतङ्गानसन्दितो विसृज विष्वगुल्काः॥ १०॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી સેનાપતિ ! शोशुचानः-અત્યંત પવિત્ર આચરણ કરનાર આપ જે तव-આપના भ्रमासः-ભ્રમણશીલ વીર, જેમ विष्वक्-સર્વત્રથી आशुया-શીઘ્ર ગતિ યુક્ત उल्काः-વિદ્યુત્‌ની ચિનગારીઓ પડે છે, તેમ पतन्ति-બાજ પક્ષી સમાન શત્રુઓના દળ પર પડે છે. તેને धृषता-દૃઢ સેનાથી अनु-અનુકૂળ स्पृश-પ્રાપ્ત કરો. અને असन्दितः-અખંડિત બનીને जुह्वा-ઘી ના હવન કરવાના સાધન-સુવાથી અગ્નિના तपूंषि-તેજ સમાન શત્રુઓ પર સર્વત્રથી વિદ્યુત્‌ને विसृज-છોડો અને पतङ्गान्-ઘોડાઓને સુંદર શિક્ષાયુક્ત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : રાજા, સેનાપતિ, સેના અને રાજ કર્મચારીઓએ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક બલ-સેના વધારીને, વીરોને હર્ષ પમાડીને, તેઓથી યુદ્ધ કરાવીને, આગ્નેય શસ્ત્ર આદિથી તથા તોપ આદિથી શત્રુઓ પર વિદ્યુત્ વર્ષા કરવી જોઈએ. જેથી શીઘ્ર વિજય પ્રાપ્ત થાય. (૧૦)

प्रति स्पशो विसृज तूर्णितमो भवा पायुर्विशोऽअस्या अदब्धः।
यो नो दूरेऽअघशꣳसो योऽअन्त्यग्ने माकिष्टे व्यथिरादधर्षीत्॥ ११॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન શત્રુઓનું દહન કરનાર સેનાપતિ ! ते-આપના અને नः-અમારા यः-જે व्यथिः-વ્યથા આપનાર अघशंसः-પાપ કરવામાં પ્રવૃત્ત ચોર શત્રુઓ दूरे-દૂર તથા यः-જે अन्ति-નજીક છે. જેથી તે અમને माकिः + आ + दधर्षीत्-દુઃખ ન આપે. તે શત્રુના प्रति-પ્રત્યે આપ तूर्णितमः-શીઘ્ર દંડદાતા બનીને स्पशः-બંધન विसृज-રચો અને अस्याः-એ વિદ્યમાન विशः-પ્રજાના पायुः-રક્ષક अदब्धः-હિંસારહિત भव-બનો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે સમીપ અને દૂર રહેનારા, પ્રજાઓને દુઃખ આપનારા દુષ્ટ ચોર છે, તેને રાજા આદિજનો સામ, દામ, દંડ, ભેદ આદિ ઉપાયો દ્વારા શીઘ્ર વશમાં કરીને, દયા અને ન્યાય દ્વારા ધાર્મિક પ્રજાઓનું નિરંતર પાલન કરે. (૧૧)

उदग्ने तिष्ठ प्रत्यातनुष्व न्युमित्राँ२ऽ ओषतात्तिग्महेते।
यो नोऽअरातिꣳसमिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम्॥ १२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-તેજધારી સભાધ્યક્ષ ! આપ રાજધર્મનું उत्+तिष्ठ-ઉત્થાન કરો. ધર્માત્માઓ प्रति-પ્રત્યે आतनुष्व-સુખોનો વિસ્તાર કરો.

હે तिग्महेते-તીવ્ર દંડ આપનાર રાજપુરુષ ! अमित्रान्-ધર્મના દ્વેષી શત્રુઓનું नि+ओषतात्-નિરંતર દહન કરો.

હે समिधान-સમ્યક્ તેજસ્વી સભાધ્યક્ષ ! यः-જે नः-અમારા अरातिम्-શત્રુઓને ઉત્સાહી चक्रे-કરે છે तम्-તેને नीचा-તિરસ્કૃત કરીને शुष्कम्-સૂકા अतसम्-લાકડાની न-સમાન धक्षि-દહન કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ સભાસદ ધર્મ અને વિજયમાં દત્તચિત બનીને મિત્રોને જલની સમાન શીતલતા આપે, તથા અગ્નિની સમાન શત્રુઓને બાળી નાખે.

જે ઉદાસીન બનીને અમારા શત્રુઓને ઉત્પન્ન કરે તેને દૃઢતાથી બાંધીને નિષ્કંટક કરે. (૧૨)

ऊर्ध्वो भव प्रति विध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने। अव स्थिरा तनुहि यातुजूनां जामिमजामिं प्रमृणीहि शत्रून्। अग्नेष्ट्वा तेजसा सादयामि॥ १३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! જે માટે આપ ऊर्ध्वः-ઉત્તમ भव-બનો, प्रति-અનુકૂળ બનીને विध्य-દુષ્ટ શત્રુઓની તાડના કરો. अस्मत्-અમારા स्थिरा-નિશ્ચલ दैव्यानि-વિદ્વાનોએ રચેલ પદાર્થોને आविः + कृणुष्व-પ્રકટ કરીને-આવિષ્કાર કરીને, સુખોનો तनुहि-વિસ્તાર કરો, यातुजूनाम्-પારકા પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરનારા અને વેગવાન્ શત્રુઓના जामिम्-ભોજનના સ્થાન તથા अजामिम्-અન્ય વ્યવહાર સ્થાનોને अव-સારી રીતે વિસ્તારપૂર્વક નાશ કરો, शत्रून्-શત્રુઓનો प्रमृणीहि-બળપૂર્વક સંહાર કરો, જેથી त्वा-આપની अग्नेः-અગ્નિના तेजसा-પ્રકાશની अधि-સન્મુખ सादयामि-સ્થાપન કરું છું. [અર્થાત્ સભાપતિ પદ પર સ્થાપિત કરું છું.] (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય રાજાના ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને ઉત્તમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત બને. પ્રજા અને દરિદ્રોને સદા સુખ આપે. ધર્મમાં સ્થિર બનીને દુષ્ટ, અધર્માચારી મનુષ્યોને નિરંતર શિક્ષા કરે અને સર્વથી શ્રેષ્ઠ પુરુષને સભાપતિ બનાવે. (૧૩)

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्।
अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति। इन्द्रस्य त्वौजसा सादयामि॥ १४॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ अयम्-એ अग्निः-સૂર્ય दिवः-પ્રકાશયુક્ત આકાશની મધ્યમાં અને पृथिव्याः-ભૂમિના मूर्द्धा-સર્વ પ્રાણીઓના શિર સમાન શ્રેષ્ઠ ककुत्-મહાન पतिः-સર્વ પદાર્થોના રક્ષક બનીને अपाम्-જલના रेतांसि-સત્વથી પ્રાણીઓને जिन्वति-તૃપ્ત કરે છે, તેમ આપ પણ બનો. હું त्वा-આપને इन्द्रस्य-સૂર્યના ओजसा-પરાક્રમ સહિત રાજ્ય માટે सादयामि-[સભાપતિ પદ પર] સ્થાપિત

કરું છું. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સૂર્ય સમાન ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવયુક્ત, ન્યાયથી પ્રજાપાલનમાં તત્પર અને ધાર્મિક વિદ્વાન્ હોય, તેનો સર્વ મનુષ્યો રાજા તરીકે સ્વીકાર કરે. (૧૪)

भुवो यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुद्भिः सचसे शिवाभिः।

दिवि मूर्द्धानं दधिषे स्वर्षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम्॥ १५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ રાજન્ ! यत्र-જે રાજ્યમાં આપ જેવા नियुभ्दिः-પોતાના વેગ આદિ ગુણો સહિત વાયુ रजसः-લોક વા ઐશ્વર્યના नेता-નેતા બનીને दिवि-ન્યાયના પ્રકાશમાં मूर्द्धानम्-શિરને ધારણ કરે છે, તેમ यत्र-જ્યાં शिवाभिः-કલ્યાણકારક નીતિઓથી भुवः-પોતાની પૃથિવી-ભૂમિનું यज्ञस्य-રાજધર્મનું પાલન કરનાર બનીને, सचसे-સંયુક્ત બનીને શ્રેષ્ઠ પુરુષોથી રાજ્યને दधिषे-ધારણ કરે છે, हव्यवाहम्-અનેકવિધ પ્રજ્ઞાનને આપવામાં સમર્થ વિદ્વાન स्वर्षाम्-સુખોનું સેવન કરનાર जिह्वाम्-શ્રેષ્ઠ વિષયોની ગ્રાહક વાણીને चकृषे-સિદ્ધ કરે છે, તે રાજ્યમાં સર્વ સુખોની વૃદ્ધિ થાય છે. એમ નિશ્ચિત જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે રાજ્યમાં રાજાઆદિ સર્વે ધાર્મિક, મંગલાચારી લોકો ધર્મપૂર્વક પ્રજાઓનું પાલન કરે, ત્યાં વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી ઉત્પન્ન સુખની વૃદ્ધિ કેમ ન થાય ? (૧૫)

ध्रुवासि धरुणास्तृता विश्वकर्मणा।

मा त्वा समुद्रऽउद्वधीन्मा सुपर्णोऽ व्यथमाना पृथिवीं दृꣳह॥ १६॥

પદાર્થ : હે રાજપત્ની ! જેથી विश्वकर्मणा-સર્વ ધર્મયુક્ત કર્મો કરનાર પોતાના પતિની સાથે વર્તીને आस्तृता-વસ્ત્ર, આભૂષણ અને શ્રેષ્ઠ ગુણોથી સારી રીતે આચ્છાદિત, धरुणा-વિદ્યા અને ધર્મને ધારણ કરનારી, તું ध्रुवा-સ્થિર असि-છો. તે તું अव्यथमाना-પીડાથી રહિત બની पृथिवीम्-પોતાની રાજ્યભૂમિની उत्+द्दंह-સારી રીતે વૃદ્ધિ કર, त्वा-તને समुद्रः-કામુક અર્થાત્ વિષયી લોકોનો વ્યવહાર मा+वधीत्-પીડિત ન કરે, અને सुपर्णः-સુંદર રક્ષા કરેલા અંગોથી યુક્ત તારો પતિ मा-મારે નહિ. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેવી રાજનીતિ-વિદ્યા રાજા ભણેલ હોય, તેવી રાણી પણ ભણેલી હોય. સદા બન્ને પતિવ્રતા અને સ્ત્રીવ્રત બનીને ન્યાયથી ન્યાયપાલન અને પ્રજાનું પાલન કરે.

વ્યભિચાર અને કામપીડાથી રહિત બનીને ધર્મપૂર્વક સંતાનો ઉત્પન્ન કરીને, સ્ત્રીઓનો ન્યાય સ્ત્રી અને પુરુષોનો ન્યાય પુરુષ કરે. (૧૬)

प्रजापतिष्ट्वा सादयत्वपां पृष्ठे समुद्रस्येमन्।

व्यचस्वतीं प्रथस्वतीं प्रथस्व पृथिव्यसि॥ १७॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રી ! જેમ प्रजापतिः-પ્રજાના સ્વામી રાજા समुद्रस्य-સમુદ્રના अपाम्-જલોના

एमन्-પ્રાપ્તિ સ્થાનથી पृष्ठे-જલની પીઠ પર નૌકા સમાન व्यचस्वतीम्-અનેક વિદ્યાની પ્રાપ્તિ તથા સત્કારથી યુક્ત प्रथस्वतीम्-પ્રશંસિત કીર્તિવાળી त्वा--તને सादयतु સ્થાપિત કરે, કારણકે તું पृथिवी-ભૂમિ સમાન સુખદાયક असि-છો તેથી સ્ત્રીઓને ન્યાય કરવામાં प्रथस्व-પ્રસિદ્ધ છો, તેમ તારો પતિ પુરુષોનો ન્યાય કરે. (૧૭)

ભાવાર્થ : રાજાપુરુષ આદિ સ્વયં જે રાજકર્મમાં પ્રવૃત્ત હોય, તેમાં પોત-પોતાની પત્નીઓને પણ સ્થાપિત કરે. જે પુરુષ પુરુષોના ન્યાયાધિકારમાં સ્થિત હોય, તેમાં તેની સ્ત્રી સ્ત્રીઓના ન્યાયાસન પર વિરાજમાન થાય. (૧૭)

भूर॑सि भूमि॑र॒स्यदि॑तिरसि वि॒श्वधा॑या॒ विश्व॑स्य॒ भुव॑नस्य ध॒र्त्री।
पृ॒थि॒वीं य॑च्छ पृथि॒वीं दृ॑ꣳह पृथि॒वीं मा हि॑ꣳसीः॥ १८॥

પદાર્થ : હે રાણી ! જેથી તું भूः-ભૂમિની સમાન असि-છે. તેથી पृथिवीम्-ભૂમિને यच्छ-નિરંતર ગ્રહણ કર. કારણ કે તું विश्वधायाः-સર્વ ગૃહાશ્રમ અને રાજ્ય સંબંધી વ્યવહારો તથા विश्वस्य-સર્વ भुवनस्य-રાજ્યને धर्त्री-ધારણ કરનારી भूमिः-પૃથિવી સમાન असि-છે. તેથી पृथिवीम्-પૃથિવીની दृंह-વૃદ્ધિ કર અને જે કારણે તું अदितिः-અખંડ ઐશ્વર્ય યુક્ત અને આકાશ સમાન ક્ષોભ રહિત असि-છે, તેથી पृथिवीम्-ભૂમિની मा+हिंसीः-હિંસા ન કર. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે રાજ્યકુળની સ્ત્રીઓ પૃથિવી આદિ સમાન ધૈર્ય આદિ ગુણોથી યુક્ત હોય, તો તે રાજ્ય કરવા યોગ્ય બની શકે છે. (૧૮)

विश्व॑स्मै प्रा॒णाया॑पा॒नाय॑ व्या॒नायो॑दा॒नाय॑ प्रति॒ष्ठायै॑ च॒रित्रा॑य। अ॒ग्निष्ट्वा॒भिपा॑तु म॒ह्या स्व॒स्त्या छ॒र्दिषा॒ शन्त॑मेन॒ तया॑ दे॒वत॑याङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वा सी॑द॥ १९॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે अग्निः-વિજ્ઞાનયુક્ત તારો પતિ છે તેમ मह्या-મહાન स्वस्त्या-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયાથી, छर्दिषा-પ્રકાશયુક્ત કર્મથી, शन्तमेन-અત્યંત સુખદાયક કર્મ સહિત, विश्वस्मै-સંપૂર્ણ प्राणाय-જીવન માટે अपानाय-દુઃખોથી નિવૃત્તિ માટે व्यानाय-વિવિધ ઉત્તમ વ્યવહારની સિદ્ધિ માટે, उदानाय-શ્રેષ્ઠ બલ માટે, प्रतिष्ठायै-સત્કાર માટે અને चरित्राय-ધર્મના આચરણ માટે જે त्वा-તારી अभिपातु-સન્મુખ બનીને રક્ષા કરે, તે તું तया-તે देवतया-દિવ્ય સ્વરૂપ પતિ સાથે अङ्गिरस्वत्-જેમ કારણ-કાર્યનો સંબંધ છે, તેમ ध्रुवा-નિશ્ચલ-સ્થિર सीद-પ્રતિષ્ઠાયુક્ત રહે. (૧૯)

ભાવાર્થ : પુરુષો પોત-પોતાની પત્નીઓનો સત્કાર, સુખ પ્રદાન અને અવ્યભિચારથી પ્રિયાચરણ અને પાલન આદિ નિરંતર કરે. સ્ત્રીઓ પણ તેમ જ કરે. પોતાની પત્ની સિવાય પુરુષ અને પોતાના પતિ સિવાય સ્ત્રી અન્યોનો સંગ ન કરે. આ રીતે પરસ્પર પ્રિય આચરણવાળા બનીને બન્ને નિત્ય વર્તાવ કરે. (૧૯)

काण्डा॑त्काण्डात्प्र॒रोह॑न्ती॒ परु॑षःपरुष॒स्परि॑।

एवा नौ दूर्वे प्रतनु सहस्त्रेण शतेन च॥ २०॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું જેમ सहस्त्रेण-અસંખ્ય च-અને शतेन-અનેક પ્રકાર સહિત काण्डात् काण्डात्-સર્વ અવયવો અને परुषः परुषः-ગાંઠો ગાંઠોથી परि-સર્વત્રથી प्ररोहन्ती-અત્યંત વિસ્તરતી दूर्वे-ધરો-ઘાસ થાય છે, તેમ एव-જ नः-અમને પુત્ર-પૌત્ર અને ઐશ્વર્યથી प्रतनु-વિસ્તૃત કર. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે ધરો ઔષધિ રોગોના નાશ કરનારી, સુખવર્ધક, અતિ વિસ્તૃત અને ચિરસ્થાયી હોય છે, તેમ સતી, વિદુષી, સ્ત્રી પોતાના કુળની સેંકડો અને હજારો રીતે વૃદ્ધિ કરે, તેમ પુરુષ પણ પ્રયત્ન કરે. (૨૦)

या शतेन प्रतनोषि सहस्त्रेण विरोहसि।

तस्यास्ते देवीष्टके विधेम हविषा वयम्॥ २१॥

પદાર્થ : હે इष्टके-ઈંટ સમાન દૃઢ અંગો યુક્ત અને શુભ ગુણોથી સુશોભિત, देवि-પ્રકાશમાન્ સ્ત્રી ! જેમ ઈંટ સેંકડો સંખ્યાથી મકાનને વિસ્તૃત અને હજાર સંખ્યાથી મહાન બનાવી દે છે, તેમ या-જે તું અમને शतेन-સેંકડો પુત્ર-પૌત્રાદિ સંપત્તિથી प्रतनोषि-કરીને सहस्त्रेण-હજાર પ્રકારના પદાર્થોથી विरोहसि-વિવિધ પ્રકારથી વૃદ્ધિ કરે છે तस्याः-તે ते-તારી हविषा-આપવા યોગ્ય પદાર્થોથી वयम्-અમે विधेम-સેવા કરીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ સેંકડો તથા હજારો ઈંટો ઘરના આકારને ધારણ કરીને સર્વને સુખ આપે છે, તેમ જે સુશીલ સ્ત્રીઓ પુત્ર, પૌત્ર, સેવક આદિ દ્વારા સર્વને આનંદિત કરે, તેનો પુરુષ સદા સત્કાર કરે. કારણકે સુશીલ પુરુષો અને સ્ત્રીઓના સમાગમ વિના શુભ ગુણયુક્ત સંતાનો ઉત્પન્ન થઈ શકતા નથી. આવા ગુણયુક્ત સંતાનો વિના માતા-પિતાઓને સુખ ક્યાંથી મળી શકે છે ? (૨૧)

यास्तेऽअग्ने सूर्ये रुचो दिवमातन्वन्ति रश्मिभिः।

ताभिर्नोऽ अद्य सर्वाभी रुचे जनाय नस्कृधि॥ २२॥

પદાર્થો : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વિની વિદુષી અધ્યાપિકા સ્ત્રી ! याः-જે ते-તારી રુચિ છે, ताभिः-તે सर्वाभिः-સર્વ રુચિઓથી યુક્ત नः-અમને જેમ रुचः-દીપ્તિઓ सूर्ये-સૂર્યમાં रश्मिभिः-કિરણોથી दिवम्-પ્રકાશને आतन्वन्ति-સારી રીતે વિસ્તૃત કરે છે. તેમ તું પણ સારી રીતે વિસ્તૃત સુખ યુક્ત કર અને अद्य-આ જ रुचे-રુચિ કરાવનારા जनाय-પ્રસિદ્ધ મનુષ્યો માટે नः-અમને પ્રીતિયુક્ત कृधि-કર. (૨૨)

ભાવાર્થ : જેમ બ્રહ્માંડમાં સૂર્યની જ્યોતિઓ સર્વ વસ્તુઓને પ્રકાશિત કરીને તેને પ્રદીપ્ત કરે છે, તેમ વિદુષી, સાધ્વી, પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ સર્વ ગૃહકાર્યોને પ્રકાશિત કરે છે. જ્યાં સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રીતિયુક્ત હોય, ત્યાં સર્વ રીતે કલ્યાણ જ થાય છે. (૨૨)

या वो॑ देवा॒: सूर्ये॒ रुचो॒ गोष्वश्वे॑षु॒ या रुच॑:।
इन्द्रा॑ग्नी॒ ताभि॒: सर्वा॑भी॒ रुचं॑ नो धत्त बृहस्पते॥ २३॥

પદાર્થ : देवाः-વિદ્વાનો ! તમે સર્વ याः-જે वः-તમારી सूर्ये-સૂર્યમાં रुचः-રુચિ છે અને याः-જે गोषु-ગાયો અને अश्वेषु-ઘોડાઓ આદિમાં रुचः-રુચિ સમાન પ્રીતિ છે, ताभिः-તે सर्वाभिः-સર્વ રુચિઓથી नः-અમારામાં रुचम्-કામના इन्द्राग्नी-વિદ્યુત્ અને સૂર્ય સમાન તેજસ્વી અધ્યાપક અને ઉપદેશક જેમ ધારણ કરે કેમ धत्त-ધારણ કરો.

હે बृहस्पते-પક્ષપાત રહિત પરીક્ષા કરનાર પૂર્ણ વિદ્યા યુક્ત આપ नः-અમારી પરીક્ષા કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યોને વિદ્વાનોના સંગમાં ઈશ્વરમાં અને તેની સૃષ્ટિમાં રુચિ ઉત્પન્ન થતી નથી અને પરીક્ષા થતી નથી, ત્યાં સુધી વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ થતી નથી. (૨૩)

वि॒राड् ज्योति॑रधारयत् स्व॒राड् ज्योति॑रधारयत्। प्र॒जाप॑तिष्ट्वा सादयतु पृ॒ष्ठे पृ॑थिव्या ज्योति॑ष्मतीम्। विश्व॑स्मै प्रा॒णाया॑पा॒नाय॑ व्या॒नाय॒ विश्वं॒ ज्योति॑र्यच्छ। अ॒ग्निष्टेऽधि॑पति॒स्तया॑ दे॒वत॑याङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वा सी॑द॥ २४॥

પદાર્થ : જે विराट्-અનેક પ્રકારની વિદ્યાઓમાં સ્ત્રી ज्योतिः-વિદ્યાની ઉન્નતિ अधारयत्-ધારણ કરે અને કરાવે. જે स्वराट्-સર્વ ધર્મયુક્ત વ્યવહારોમાં શુદ્ધાચારી પુરુષ ज्योतिः-વિદ્યુત્ આદિના પ્રકાશને अधारयत् ધારણ કરે અને કરાવે તે સ્ત્રી અને પુરુષ બન્ને સંપૂર્ણ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે.

હે સ્ત્રી ! જે अग्निः-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિજ્ઞાન યુક્ત ते-તારા अधिपतिः-સ્વામી છે, तया-તે देवतया-સુંદર દેવસ્વરૂપ પતિની સાથે તું अङ्गिरस्वत्-સૂક્ષ્મ વાયુની સમાન ध्रुवा-દૃઢતાથી [સ્થિર બનીને] सीद-રહે.

હે પુરુષ ! જે અગ્નિના સમાન તેજધારિણી તારી રક્ષા કરનારી સ્ત્રી છે, તે દેવીની સાથે તું પ્રાણોની સમાન પ્રીતિપૂર્વક નિશ્ચયથી સ્થિર રહે.

હે સ્ત્રી ! प्रजापतिः-પ્રજાનો રક્ષક તારો પતિ पृथिव्याः-ભૂમિના पृष्ठे-ઉપર विश्वस्मै સર્વ प्राणाय-સુખ પ્રાપ્તિ માટે अपानाय-દુઃખ નિવૃત્તિના સાધન, व्यानाय-સર્વ સુંદર ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોના પ્રચાર માટે પ્રાણવિદ્યા માટે જે ज्योतिष्मतीम्-પ્રશંસિત વિદ્યાના જ્ઞાનથી યુક્ત त्वा-તને सादयतु-ઉત્તમ પદ પર સ્થાપિત કરે, તે તું विश्वम्-સમસ્ત ज्योतिः-વિજ્ઞાનને यच्छ-ગ્રહણ કર અને તે વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે પોતાના પતિને સ્થિર કર. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષ સત્સંગ અને વિદ્યાભ્યાસ દ્વારા વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોની વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સુખી બને છે.

પતિ સ્ત્રીનો સત્કાર કરે અને સ્ત્રી પતિનો સત્કાર કરે, એ રીતે પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક સુખનો ઉપભોગ કરે. (૨૪)

मधु॑श्च॒ माध॑वश्च॒ वास॑न्तिकावृ॒तूऽअ॒ग्नेर॑न्तःश्ले॒षो॒ऽसि कल्पे॑तां॒ द्यावा॑पृथिवी कल्प॑न्ता॒माप॒ऽओष॑धय॒ः कल्प॑न्ताम॒ग्नय॒ः पृथ॒ङ् मम॒ ज्यैष्ठ्या॑य॒ सव्र॑ताः। येऽअ॒ग्नय॒ः सम॑नसो॒ऽन्त॒रा द्यावा॑पृथिवीऽइ॒मे वास॑न्तिकावृ॒तूऽअ॑भिकल्प॑माना॒ऽइन्द्र॑मिव दे॒वाऽअ॑भिसंवि॑शन्तु तया दे॒वत॑याङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वे सी॑दतम्॥ २५॥

પદાર્થ : જેમ मम-મારા ज्यैष्ठयाय-જેઠ મહિનામાં વ્યવહાર અથવા મારી શ્રેષ્ઠતા માટે જે अग्नेः-ઉષ્ણતાને નિમિત્ત અગ્નિથી ઉત્પન્ન થનાર છે, જેની अन्तःश्लेषः-અંદર અનેક પ્રકારના વાયુનો સંબંધ असि-થાય છે, તે मधुः-મધુર સુગંધ યુક્ત ચૈત્ર च અને माधवः-મધુર આદિ ગુણના નિમિત્ત વૈશાખ च-તેના પદાર્થ યુક્ત वासंतिकौ વસંત મહિનામાં મળતા ऋतू-સર્વને સુખ પ્રાપ્તિનાં સાધન ઋતુ સુખ માટે कल्पेताम्-સમર્થ બને. જે ચૈત્ર અને વૈશાખ મહિનાઓના આશ્રયથી द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને ભૂમિ आपः-જલ પણ ભોગમાં कल्पन्ताम्-આનંદ દાયક બને. पृथक्-ભિન્ન-ભિન્ન ओषधयः-જવ અને સોમલતા આદિ ઔષધિઓ અને अग्नयः-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ પણ कल्पन्ताम्-કાર્યસાધક બને.

હે सव्रताः-નિરંતર સત્યભાષણાદિ વ્રતોથી યુક્ત રહેનાર समनसः-વિજ્ઞાનયુક્ત देवाः- વિદ્વાન્ ये-જે वासन्तिकौ ऋतू વસંત ઋતુમાં પ્રાપ્ત થનાર ચૈત્ર અને વૈશાખ છે અને ये-તેની अन्तरा-મધ્યમાં अग्नयः અગ્નિ છે, તેને अभिकल्पमानाः-સન્મુખ બનીને કાર્યમાં યુક્ત કરતા આપ इन्द्रमिव-જેમ ઉત્તમ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત થાય, તેમ अभिसंविशन्तु-સર્વત્રથી પ્રવેશ કરો-પ્રાપ્ત કરો.

જેમ इमे-એ द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને ભૂમિ तया-તે देवतया-પરમપૂજ્ય પરમેશ્વર રૂપ દેવતાના સામર્થ્ય સાથે अङ्गिरस्वत्-પ્રાણની સમાન ध्रुवे-દૃઢતાથી વર્તે છે, તેમ તમે સ્ત્રી-પુરુષ બન્ને સંયુક્ત सीदतम्-સ્થિર રહો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વસંતઋતુમાં કફ ઉત્પન્ન થાય છે, જેમાં પ્રકાશ તીવ્ર, પૃથિવી રૂક્ષ, જલ મધ્ય સ્થિતિમાં અને ઔષધિઓ નવા ફૂલ, ફળ અને પત્રોથી યુક્ત અગ્નિની જ્વાળાઓ સમાન છે, તેનું યુક્તિથી સેવન કરીને તમે પુરુષાર્થથી સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરો.

જેમ વિદ્વાન્ પરમ પ્રયત્નથી ઋતુ અનુસાર સુખ માટે ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૨૫)

अषा॑ढासि॒ सह॑माना॒ सह॒स्वारा॑ती॒ः सह॑स्व पृतनाय॒तः।
स॒हस्र॑वीर्यासि॒ सा मा॑ जिन्व॥ २६॥

પદાર્થ : હે પત્ની ! જે તું अषाढा-શત્રુઓ દ્વારા અસહ્ય असि-છે, તું सहमाना-પતિ આદિ સંબંધીઓને સહન કરતી, મારા ઉપદેશ-વચનને सहस्व-સહન કર.

જે તું सहस्त्रवीर्या-અસંખ્ય પ્રકારના પરાક્રમોથી યુક્ત असि-છે, सा-તે તું पृतनायतः-પોતાની સેનાની ઈચ્છુક अरातीः-શત્રુઓનું सहस्व-મર્ષણ કર.

જેમ હું તને પ્રસન્ન રાખું છું, તેમ मा-મને-પતિને जिन्व-તૃપ્ત-પ્રસન્ન કર. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે દીર્ઘકાલ સુધી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરીને બળવાન, જિતેન્દ્રિય, વસંત આદિ ઋતુઓના કર્મોમાં વિલક્ષણ, પતિના અપરાધને ક્ષમા કરનારી, શત્રુઓનું નિવારણ કરનારી અને શ્રેષ્ઠ પરાક્રમવાળી સ્ત્રી પોતાના પતિને સદા પ્રસન્ન રાખે છે, તેમ તેને તેનો પતિ પણ સદા આનંદમય રાખે. (૨૬)

मधु वाताऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વસંત ઋતુમાં नः-અમારા માટે वाताः-વાયુ मधु-મધુરતા પૂર્વક ऋतायते-જલની સમાન ચાલે છે, सिन्धवः-નદીઓ વા સમુદ્ર मधु-કોમળતા પૂર્વક चरन्ति-વર્ષે છે. અને ओषधीः-ઔષધિઓ माध्वीः-મધુર રસના ગુણોથી યુક્ત सन्तु-બને, તેવાં અમે પ્રયત્નો કરીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે વસંત ઋતુનું આગમન થાય છે, ત્યારે પુષ્પ આદિની સુગંધથી યુક્ત વાયુ આદિ પદાર્થો બને છે, તે ઋતુમાં ભ્રમણ કરવું પથ્ય બને છે, તેમ જાણો. (૨૭)

मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः। मधु द्यौरस्तु नः पिता॥ २८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વસંત ઋતુમાં नक्तम्-રાત્રિ मधु-કોમળતાથી-મધુરતાથી યુક્ત, उत-અને उषसः-પ્રાતઃકાલથી લઈને દિવસ મધુર पार्थिवम्-પૃથ્વિના रजः-દ્વપણુક કે ત્રસરેણુ વગેરે मधुमत्-મધુર ગુણોથી યુક્ત અને द्यौः-પ્રકાશ પણ मधु-મધુરતાયુક્ત पिता-રક્ષા કરનાર સમાન સમય नः-અમારા માટે अस्तु-બને, તેમ તમે પણ વસંત ઋતુનુ યુક્તિથી સેવન કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જ્યારે વસંત ઋતુનું આગમન થતાં પક્ષી પણ મધુર શબ્દોનું ગાન કરે છે. અને પ્રાણીઓ આનંદિત બને છે. (૨૮)

मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ२ऽअस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः॥ २९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ વસંત ઋતુમાં नः-અમારા માટે वनस्पतिः-પીપળ આદિ વનસ્પતિ मधुमान्-પ્રશંસિત કોમળ-મધુરતા ગુણયુક્ત અને सूर्यः-સૂર્ય પણ मधुमान्-પ્રશંસિત મધુ-તેજ યુક્ત अस्तु-બને. અને नः-અમારા માટે गावः-ગાયોની સમાન माध्वीः-કોમળ ગુણયુક્ત કિરણો भवन्तु-બને, તેવો ઉપદેશ કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વસંત ઋતુને પ્રાપ્ત કરીને જે પ્રકારનાં દ્રવ્યોના હોમથી વનસ્પતિ આદિ પદાર્થો મધુર આદિ ગુણયુક્તબને, તેવો યજ્ઞ કરો. આ રીતે તમે સર્વે વસંત ઋતુના સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૨૯)

अपां गम्भन्त्सीद मा त्वा सूर्योऽभिताप्सीन्माग्निर्वैश्वानरः।
अच्छिन्नपत्राः प्रजाऽअनुवीक्षस्वानु त्वा दिव्या वृष्टिः सचताम्॥ ३०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું વસંત ઋતુમાં अपाम्-જલનો गम्भन्-આધાર મેઘમાં सीद-સ્થિર રહે, જેથી

सूर्यः-સૂર્ય त्वा-તને मा-ન अभिताप्सीत्-સંતપ્ત કરે, वैश्वानरः સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન अग्निः-અગ્નિ-વિદ્યુત્ त्वा-તને मा-ન अभिताप्सीत्-સંતપ્ત કરે, अच्छिन्नपत्राः-સુંદર પૂર્ણ અવયવો યુક્ત प्रजाः-પ્રજા अनु त्वा-તને અનુકૂળ બને. અને दिव्या-શુદ્ધ ગુણોથી યુક્ત वृष्टिः-વર્ષા सचताम्-પ્રાપ્ત થાય, તેમ अनुवीक्षस्व-અનુકૂળતાથી વિશેષરૂપથી વિચાર કર. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય વસંત અને ગ્રીષ્મ ઋતુઓમાં જલાશયના મધ્યમાં સ્થિત શીતળ સ્થાનનું સેવન કરે, જેથી તે ગરમીથી સંતપ્ત ન બને.

જે યજ્ઞથી પુષ્કળ વરસાદ થાય અને પ્રજા આનંદિત બને, તેનું તમે અનુષ્ઠાન કરો. (૩૦)

त्रीन्त्समुद्रान्त्समसृपत् स्वर्गानपां पतिर्वृषभऽइष्टकानाम्।
पुरीषं वसानः सुकृतस्य लोके तत्र गच्छ यत्र पूर्वे परेताः॥ ३१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ अपाम्-પ્રાણોના पतिः-રક્ષક, वृषभः-વર્ષાના હેતુ [વાદળા] पुरीषम्-પૂર્ણ સુખકારી જલને वसानः-ધારણ કરતાં સૂર્ય इष्टकानाम्-કામનાઓને પ્રાપ્ત કરાવનાર અભીષ્ટ પદાર્થોમાંથી त्रीन्-ઉપર, નીચે અને મધ્યમાં રહેનાર ત્રણ પ્રકારના समुद्रान्-સર્વ પદાર્થોના સ્થાન ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન स्वर्गान्-સુખ પ્રાપ્તિ કરાવનાર લોકોને समसृपत्-પ્રાપ્ત થાય છે. તેમ આપ પણ પ્રાપ્ત કરો.

यत्र-જે ધર્મયુક્ત વસંતના માર્ગમાં सुकृतस्य-ધર્મ કરનારા પુરુષોના लोके-માર્ગે पूर्वे-પ્રાચીન લોકોએ परेताः-સુખ પ્રાપ્ત કરેલ છે, तत्र-તે વસંતના સેવન રૂપ માર્ગમાં આપ પણ गच्छ-ચાલો. (૩૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધાર્મિક જનોના માર્ગમાં ચાલીને શારીરિક, વાચિક અને માનસિક એ ત્રણ પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. જ્યાં કામનાઓ પૂર્ણ થઈ શકે, ત્યાં પ્રયત્નો કરવા જોઈએ.

જેમ વસંત આદિ ઋતુઓ ક્રમથી વિદ્યમાન રહીને પોત-પોતાના ચિહ્નોને પ્રકટ કરે છે. તેમ ઋતુ અનુસાર વ્યવહારો કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૩૧)

मही द्यौः पृथिवी च नऽइमं यज्ञं मिमिक्षताम्। पिपृतां नो भरीमभिः॥ ३२॥

પદાર્થ : હે માતા અને પિતા ! જેમ मही-મહાન્ द्यौः-સૂર્યલોક, च-અને पृथिवी-સર્વ સંસારનું સિંચન અને પાલન કરે છે, તેમ તમે બન્ને नः-અમારા इमम्-એ यज्ञम्-સેવવા યોગ્ય વિદ્યા-ગ્રહણરૂપ વ્યવહારને मिमिक्षताम्-સિંચન અર્થાત્ પૂર્ણ કરવાની ઈચ્છા કરો, અને भरीमभिः-ધારણ, પોષણ આદિ કર્મોથી नः-અમારું पिपृताम्-પાલન કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ભૂમિ સર્વનું ધારણ, પ્રકાશ અને પાલન કરે છે, તેમ માતા-પિતાએ પોતાના સંતાનોને અન્ન, વિદ્યાદાન અને સુશિક્ષા આપીને તેને પૂર્ણ વિદ્વાન્ અને પુરુષાર્થી બનાવવા જોઈએ. (૩૨)

विष्णो॒ःकर्मा॑णि पश्यत॒ यतो॑ व्र॒तानि॑ पस्प॒शे। इन्द्र॑स्य॒ युज्य॒ः सखा॑॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક જીવ-યોગીને युज्यः-ઉપાસના કરવા યોગ્ય सखा-મિત્રની સમાન વિદ્યમાન છે, यतः-જેના પ્રતાપથી એ જીવ विष्णोः-વ્યાપક ઈશ્વરના कर्माणि-જગતની રચના, પાલન અને પ્રલય તથા ન્યાય આદિ કર્મો અને व्रतानि-સત્યભાષણાદિ નિયમોને पस्पशे-સ્પર્શ કરે છે, તેથી એ પરમાત્માના એ કર્મો અને વ્રતોને તમે પણ पश्यत-ધારણ કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વરના મિત્ર, ઉપાસક, ધાર્મિક, વિદ્વાન્ પોતાના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ અનુસાર સૃષ્ટિક્રમો અનુસાર આચરણ કરે અને જાણે. તેમજ અન્ય મનુષ્યો પણ કરે અને જાણે. (૩૩)

ध्रु॒वासि॑ ध॒रुणे॒तो ज॑ज्ञे प्रथ॒मम॒ेभ्यो योनि॑भ्यो॒ऽअधि॑ जा॒तवे॑दाः।

स गा॑यत्र्या त्रि॒ष्टुभा॑नु॒ष्टुभा॑ च दे॒वेभ्यो॑ ह॒व्यं व॑हतु प्रजा॒नन्॥ ३४॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ તું धरुणा-શુભ ગુણોને ધારણ કરનારી, ध्रुवा-અને સ્થિર असि-છે, જેમ एभ्यः એ योनिभ्यः-કારણોથી सः-તે जातवेदाः-પ્રસિદ્ધ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન વાયુ प्रथमम्-આદિ કાર્યરૂપમાં अधिजज्ञे-અધિકતાથી પ્રકટ થાય છે, તેમ इतः-એ કર્મના અનુષ્ઠાનથી સર્વોપરિ પ્રસિદ્ધ બનો.

જેમ તારો પતિ गायत्र्या-ગાયત્રી त्रिष्टुभा-ત્રિષ્ટુપ્ च-અને अनुष्टुभा-અનુષ્ટુપ્ મંત્રથી પ્રતિપાદિત વિદ્યા દ્વારા प्रजानन्-બુદ્ધિમાન બનીને देवेभ्यः-ઉત્તમ ગુણો વા વિદ્વાનોથી हव्यम्-આપવા યોગ્ય વિજ્ઞાનને वहतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ એ વિદ્યાથી બુદ્ધિમતી બનીને આપ સ્ત્રીઓથી બ્રહ્મચારિણી કન્યા વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે જગદીશ્વર, સૃષ્ટિક્રમ અને નિમિત્ત-કારણને જાણીને, વિદ્વાન્ બનીને, જેમ પુરુષોને શાસ્ત્રો ઉપદેશ આપે છે, તેમજ સ્ત્રીઓએ પણ તેને જાણીને, સ્ત્રીઓને વેદાર્થના નિષ્કર્ષસારનો ઉપદેશ કરે. (૩૪)

इ॒षे रा॒ये र॑मस्व॒ सह॑से द्यु॒म्नऽऊ॒र्जेऽअप॑त्याय।

स॒म्राड॑सि स्व॒राड॑सि सारस्व॒तौ त्वोत्सौ॒ प्राव॑ताम्॥ ३५॥

પદાર્થ : હે પુરુષ ! જે તું सम्राट्-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોથી સ્વયં પ્રકાશમાન असि-છે.

હે સ્ત્રી ! જે તું स्वराट्-સ્વયં વિજ્ઞાન અને સત્ય આચરણથી શોભાયમાન असि-છે.

તમે બન્ને-પુરુષ અને સ્ત્રી-इषे-વિજ્ઞાન, राये-ધન, सहसे-બલ, द्युम्ने-યશ અને અન્ન, ऊर्जे-પરાક્રમ અને अपत्याय-સંતાનોની પ્રાપ્તિ માટે रमस्व-રમણ કરો-યત્ન કરો.

उत्सौ-કૂવાના જલની સમાન કોમળ સ્વભાવ પ્રાપ્ત કરીને सारस्वतौ-વેદવાણીના ઉપદેશમાં કુશળ બનીને તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષો આ સ્વ શરીર અને અન્નાદિ પદાર્થોની प्रावताम्-રક્ષા આદિ કરો, એવો त्वा-તમને ઉપદેશ આપું છું. (૩૫)

ભાવાર્થ : વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક, વિદ્વાન્ બનીને તથા વસંત ઋતુમાં પુરુષાર્થથી લક્ષ્મીવાન અને સદ્‌ગુણી બનીને, એક-બીજાની રક્ષા કરતાં ધર્મથી સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને, આ સંસારમાં નિત્ય આનંદ-વિહાર કરે. (૩૫)

अग्ने युक्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः। अरं वहन्ति मन्यवे॥ ३६॥

પદાર્થ : હે देव-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાથી યુક્ત अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! ये-જે तव-આપના साधवः-અભિષ્ટ સાધન યુક્ત अश्वासः-શિક્ષિત ઘોડા मन्यवे-શત્રુઓ પર ક્રોધ કરવા માટે अरम्-સામર્થ્યથી वहन्ति-રથ આદિમાં વહન કરે છે, તેને हि-નિશ્ચય કરીને युक्ष्व-રથાદિથી યુક્ત કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : રાજાઓએ વસંત ઋતુમાં પ્રથમ ઘોડાઓને સુશિક્ષિત કરીને તથા સારથીઓને રથો પર નિયુક્ત કરીને શત્રુઓ પર વિજય કરવા જવું જોઈએ. (૩૬)

युक्ष्वा हि देवहूतमाँ२ऽअश्वाँ२ऽअग्ने रथीरिव। नि होता पूर्व्यः सदः॥ ३७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! पूर्व्यः-પૂર્વ વિદ્વાનોથી સુશિક્ષિત होता-દાનશીલ આપ देवहूतमान्-વિદ્વાનો દ્વારા સ્પર્ધા વા શિક્ષા પામેલ अश्वान् ઘોડાઓને रथीरिव-જેમ શત્રુઓની સાથે અનેક રથ આદિ સેનાના અંગોવાળા યોદ્ધા યુદ્ધ કરે છે, તેમ યુદ્ધ કરવા માટે युक्ष्व-યુક્ત કરો हि-નિશ્ચય કરીને ન્યાયાસન પર निषदः-નિરંતર સ્થિત રહો. (૩૭)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ રાજપુરુષ મહારથી સમાન ઘોડા આદિ સેનાના અંગોને કાર્યોમાં સંયુક્ત કરે. સભાપતિ આદિ જનો ન્યાયના આસન પર બેસીને ધર્માનુસાર ન્યાય કરે. (૩૭)

सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेनाऽअन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः।
घृतस्य धाराऽअभि चाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्येऽअग्नेः॥ ३८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अग्नेः વિદ્યુત્‌ના मध्ये-મધ્યમાં વિદ્યમાન हिरण्ययः-તેજોભાગ સમાન તેજસ્વી કીર્તિની ઈચ્છા રાખનાર હું જે घृतस्य-જલની वेतसः-વેગવન્ત धाराः-પ્રવાહરૂપ सरितः-નદીઓની न-સમાન अन्तः-અંદર हृदा-અન્તઃકરણના मनसा-વિજ્ઞાનવાન ચિત્તથી पूयमानाः-પવિત્ર બનેલી धेनाः-વાણીઓ सम्यक्-ઉત્તમ રીતિથી स्रवन्ति-ચાલે છે, તેને अभिचाकशीमि-સન્મુખ બનીને સર્વને માટે શીઘ્ર પ્રકાશિત કરું છું, તેમ તમે પણ વાણીઓને પ્રાપ્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ સમગતિ અને વિષમગતિથી ચાલતી અને શુદ્ધ થતી જતી નદીઓ સમુદ્રમાં પહોંચીને સ્થિરતા પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ વિદ્યા, સુશિક્ષા અને ધર્મથી પવિત્ર બનેલી નિશ્ચલ વાણીઓને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવવી જોઈએ. (૩૮)

ऋचे त्वा रुचे त्वा भासे त्वा ज्योतिषे त्वा।

अभूदिदं विश्वस्य भुवनस्य वाजिनमग्नेर्वैश्वानरस्य च॥ ३९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે તને विश्वस्य-સમસ્ત भुवनस्य-સંસારના સર્વ પદાર્થો च-અને वैश्वानरस्य-સર્વ મનુષ્યોમાં શોભાયમાન अग्नेः-વિદ્યુત્ રૂપ वाजिनम्-જ્ઞાની લોકોના અવયવ રૂપ इदम्-એ વિજ્ઞાન अभूत्-પ્રસિદ્ધ થયેલ છે, તે ऋचे-સ્તુતિ માટે त्वा-તને रुचे-પ્રીતિ માટે त्वा-તને भासे-વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે અને ज्योतिषे-ન્યાયના પ્રકાશ માટે પણ त्वा-અમે લોકો તારો આશ્રય કરીએ છીએ. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યને સંસારના સમસ્ત પદાર્થોનું યથાર્થ જ્ઞાન હોય, તેની સેવા કરીને સર્વ મનુષ્યોએ પદાર્થવિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૩૯)

अग्निर्ज्योतिषा ज्योतिष्मान् रुक्मो वर्चसा वर्चस्वान्।
सहस्रदाऽअसि सहस्राय त्वा॥ ४०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ ज्योतिषा-વિદ્યાના પ્રકાશથી अग्निः-અગ્નિની સમાન ज्योतिष्मान्-પ્રશંસિત પ્રકાશથી યુક્ત वर्चसा-પોતાના તેજથી वर्चस्वान्-જ્ઞાનદાતા અને रुक्मः-સુવર્ણ સુખ આપે છે, તેમ सहस्रदा-અસંખ્ય સુખપ્રદાતા असि-છો. તે त्वा-આપના सहस्राय-અતુલ વિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ માટે અમે સત્કાર કરીએ. (૪૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે અગ્નિ તથા સૂર્યની વિદ્યાથી પ્રકાશયુક્ત વિદ્વાન્ હોય, તેનાથી વિદ્યા ભણીને સર્વ વિદ્યાઓ ગ્રહણ કરવી જોઈએ. (૪૦)

आदित्यं गर्भं पयसा समङ्धि सहस्रस्य प्रतिमां विश्वरूपम्।
परिवृङ्धि हरसा माभि मंꣳस्थाः शतायुषं कृणुहि चीयमानः॥ ४१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જેમ વિદ્યુત્ पयसा-જલથી सहस्रस्य-અસંખ્ય પદાર્થોનું प्रतिमाम्-પરિમાણ [માપ]કરનાર સૂર્ય સમાન નિશ્ચય કરનારી બુદ્ધિને; તથા विश्वरूपम्-સર્વ રૂપવાન પદાર્થોના દર્શક, गर्भम्-સ્તુતિને યોગ્ય, आदित्यम्-સૂર્યને ધારણ કરે છે, તેમ અન્તઃકરણને समङ्धि-સારી રીતે શુદ્ધ કરો. हरसा-પ્રજ્વલિત અગ્નિથી રોગોને परि-સર્વત્રથી वृङ्धि-દૂર કરો, चीयमानः-વૃદ્ધિ પ્રાપ્ત થઈને शतायुषम्-સો વર્ષના આયુયુક્ત પુત્રને कृणुहि-પ્રાપ્ત કરો. અને કદી પણ माऽभिमंस्थाः-અભિમાન ન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોના હોમથી સૂર્યનો પ્રકાશ, જલ અને વાયુને શુદ્ધ કરીને, નીરોગ બનીને, સો વર્ષની આયુવાળા સંતાનોનું નિર્માણ કરો.

જેમ વિદ્યુત્ દ્વારા બનેલ સૂર્યથી રૂપવાન પદાર્થોનું દર્શન અને માપ થાય છે, તેમ વિદ્યાવાન સંતાન થાય છે. એથી કદી પણ અભિમાની બનીને પ્રમાદથી વિદ્યા અને આયુનો વિનાશ કરો નહિ. (૪૧)

वातस्य जूतिं वरुणस्य नाभिमश्वं जज्ञानꣳ सरिरस्य मध्ये।

शिशुं नदीनाᳩं हरिमद्रिबुध्नमग्ने मा हिंᳬसीः परमे व्योमन्॥ ४२॥

પદાર્થ : હે अग्ने તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ परमे-ઉત્તમ व्योमन्-વ્યાપક આકાશમાં, वातस्य-વાયુના मध्ये-મધ્યમાં, जूतिम्-વેગરૂપ अश्वम्-ઘોડાને सरिरस्य-જલમય वस्णस्य-ઉત્તમ સમુદ્રના नाभिम्-બંધનને, તથા नदीनाम्-નદીઓના પ્રભાવથી जज्ञानम्-પ્રકટ કરનાર, शिशुम्-બાળક સમાન વર્તાવ યુક્ત हरिम्-નીલવર્ણ યુક્ત अद्रिबुध्नम्-સૂક્ષ્મ મેઘને माहिंसीः-નષ્ટ ન કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રમાદથી આકાશમાં વિદ્યમાન વાયુના વેગને, વર્ષાની અવસ્થાને તથા મેઘનો—વાદળાંનો નાશ ન કરીને જીવનની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪૨)

अजस्त्रमिन्दुमरुषं भुरण्युमग्निमीडे पूर्वचित्तिं नमोभिः।

स पर्वभिर्ऋतुशः कल्पमानो गां मा हिंᳬसीरदितिं विराजम्॥ ४३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ હું पूर्वभिः-પૂર્ણ સાધનયુક્ત नमोभिः-અન્નો સહિત વિદ્યમાન इन्दुम्-જલરૂપને अस्त्रम्-ઘોડાની સમાન, भुरण्युम्-પોષણ કરનારી, पूर्वचितिम्-પ્રથમ નિર્મિત, अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને अजस्त्रम्-નિરંતર ईडे-અધિકતાથી શોધું છું.

તેને ऋतुशः-સર્વ ઋતુઓમાં कल्पमानः-સમર્થ કરતાં अदितिम्-અખંડિત विराजम्-વિવિધ પદાર્થોથી સુશોભિત गाम्-પૃથિવીને નષ્ટ કરતો નથી, તેમ सः-આપ એ અગ્નિ અને પૃથિવીને मा हिंसीः-નષ્ટ કરો નહિ. (૪૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે ઋતુઓ અનુકૂળ કરેલી ક્રિયાઓથી અગ્નિ, જલ અને અન્નનું સેવન કરીને, રાજ અને ભૂમિની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ જેથી સર્વ સુખ ઉત્પન્ન થાય છે. (૪૩)

वरूत्रीं त्वष्टुर्वरुणस्य नाभिमविं जज्ञानाᳩंरजसः परस्मात्।

महीᳩं साहस्त्रीमसुरस्य मायामग्ने मा हिंᳬसीः परमे व्योमन्॥ ४४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! આપ त्वष्टुः-છેદનકર્તા સૂર્યને वस्त्रीम्-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય, वस्णस्य-જલને नाभिम्-રોકનારી, परस्मात्-શ્રેષ્ઠ रजसः-લોકથી जज्ञानाम्-ઉત્પન્ન થયેલ, असुरस्य-મેઘની मायाम्-જ્ઞાપક વિદ્યુત્‌ને તથા साहस्त्रीम्-અસંખ્ય ભૂગોળ યુક્ત ફલ પ્રદાન કરનારી, अविम्-રક્ષા આદિના નિમિત્ત, परमे-સર્વથી ઉત્તમ व्योमन्-આકાશ સમાન વ્યાપ્ત જગદીશ્વરમાં વિદ્યમાન महीम्-વિશાળ ભૂમિને मा हिंसीः-નષ્ટ ન કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે આ પૃથિવી શ્રેષ્ઠ સૂક્ષ્મ કારણથી ઉત્પન્ન, સૂર્યના આકર્ષણથી સંબંધ, જલની આધારભૂતા, મેઘની નિમિત્ત, વિશાળ ભૂગોળના આકાર યુક્ત, અગણિત સુખોને પ્રદાન કરનારી પરમેશ્વરે રચેલી છે.

તેને ગુણ, કર્મ, સ્વભાવથી જાણીને, તેના સુખ માટે સમ્યક્ ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૪૪)

योऽअग्निरग्नेरध्यजायत शोकात्पृथिव्याऽउत वा दिवस्परि।
येन प्रजा विश्वकर्मा जजान तमग्ने हेडः परि ते वृणक्तु॥ ४५॥

હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! यः-જે पृथिव्याः-પૃથિવીને शोकात्-સૂકવનાર-શોષક અગ્નિ उत-वा-અથવા दिवः-સૂર્યથી अग्नेः-વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિથી अग्निः-પ્રત્યક્ષ અગ્નિ अध्यजायत-ઉત્પન્ન થાય છે.

येन-જેથી विश्वकर्मा-સર્વકર્મોના આધાર ઈશ્વર प्रजाः-પ્રજાને परि-સર્વત્રથી जजान-ઉત્પન્ન કરે છે, तम्-તે અગ્નિને ते-તારો हेडः-ક્રોધ परि+वृणक्तु-સર્વત્રથી છિન્ન-નષ્ટ કરે.

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે અગ્નિ પૃથિવીને ભેદીને-ફાડીને ઉત્પન્ન થાય છે અને જે સૂર્ય આદિથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે વિઘ્નકારી અગ્નિથી તમે સર્વ પ્રાણીઓને પૃથક્ રાખો.

જે અગ્નિ દ્વારા ઈશ્વર સર્વની રક્ષા કરે છે, તે અગ્નિ-વિદ્યાને તમે જાણો. (૪૫)

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः।
आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳ सूर्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च॥ ४६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે જગદીશ્વર देवानाम्-પૃથિવી આદિ દિવ્ય પદાર્થોની મધ્યમાં चित्रम्-આશ્ચર્યરૂપ अनीकम्-સેનાની સમાન કિરણ સમૂહ સમાન છે, જે मित्रस्य-પ્રાણ, वरुणस्य-ઉદાન અને अग्नेः-પ્રસિદ્ધ અગ્નિના चक्षुः-દર્શક सूर्यः-સૂર્યની સમાન उदगात्-ઉદિત છે, જે जगतः-ચેતન च-અને तस्थुषः-જડ જગતના आत्मा-અન્તર્યામી બનીને द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને અપ્રકાશરૂપ જગતને તથા अन्तरिक्षम्-આકાશને आ-સારી રીતે अप्राः-વ્યાપ્ત કરી રહેલ છે, તે જગતના નિર્માતા, પાલન કરનાર કે રક્ષક, અને સંહાર-પ્રલય કરનાર વ્યાપક બ્રહ્મની નિરંતર ઉપાસના કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : નિશ્ચય જ આ સંસાર કર્તારહિત તથા અધિષ્ઠાતારહિત [અર્થાત્] ઈશ્વરરહિત નથી. જે બ્રહ્મ સર્વાન્તર્યામી, સર્વ જીવોના પાપ-પુણ્યોના ફળોને આપવાની વ્યવસ્થા કરનાર તથા અનન્ત જ્ઞાન તથા પ્રકાશવાળા છે, મનુષ્યે-તે બ્રહ્મની ઉપાસના કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ રૂપી ફલની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ. (૪૬)

इमं मा हिꣳसीर्द्विपादं पशुꣳ सहस्राक्षो मेधाय चीयमानः। मयुं पशुं मेधमग्ने जुषस्व तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद। मयुं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु॥ ४७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિથી સમાન મનુષ્ય-જન્મને પ્રાપ્ત मेधाय-સુખની પ્રાપ્તિ માટે चीयमानः-વૃદ્ધિ પામેલા सहस्राक्षः-હજારો-અસંખ્ય પ્રકારની દૃષ્ટિ યુક્ત રાજન ! તું इमम्-આ द्विपादम्-મનુષ્યાદિ

અને मेधम्-પવિત્રકારક ફલપ્રદ मयुम्-જંગલી पशुम्-ગાય આદિ પશુ-જીવોની मा हिंसीः-હિંસા ન કર, તે पशुम्-પશુઓની जुषस्व-સેવા કર. तेन-તે પશુઓથી चिन्वानः-વૃદ્ધિ પામતો તું तन्वः-શરીરમાં निषीद-નિરંતર સ્થિર રહે. એ ते-તારા शुक्-શોક मयुम्-શસ્ય-ખેતી આદિ નાશક જંગલી હિંસક પશુઓને ऋच्छतु-થાય. ते તારા यम्-જે શત્રુથી અમે द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ तम्-તેને शुक्-શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય છે. (૪૭)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્યે ઉપકારી પશુઓની હિંસા ન કરવી જોઈએ. પરન્તુ-તેનું પાલન કરવું જોઈએ અને તેનાથી ઉપહાર પ્રાપ્ત કરીને સર્વ મનુષ્યોએ આનંદિત રહેવું જોઈએ.

જે જંગલી હિંસક [પશુઓ] થી અન્ય પશુઓની, ખેતીની અને મનુષ્યોની હાનિ થાય, તેનો રાજપુરુષોએ નાશ કરવો જોઈએ અથવા તેને પકડી લેવા જોઈએ. (૪૭)

इमं मा हिꣳसीरेकशफं पशुं कनिक्रदं वाजिनं वाजिनेषु। गौरमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद। गौरं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु॥ ४८॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! તું वाजिनेषु-સંગ્રામોના કામોમાં इमम्-એ एकशफम्-એક ખરીયુક્ત कनिक्रदम्-અત્યંત વ્યથાને પ્રાપ્ત થનાર वाजिनम्-વેગવાળા पशुम्-દર્શનીય ઘોડા વગેરે પશુઓને मा हिंसीः-માર નહિ.

હું ઈશ્વર ते-તારા માટે यम्-જે आरण्यम्-જંગલી गौरम्-ગોરા વર્ણના પશુઓની दिशामि-શિક્ષા-ઉપદેશ કરું છું, तेन-તેના રક્ષણથી चिन्वानः-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થઈ तन्वः-શરીરમાં निषीद-નિરંતર સ્થિર રહે.

ते-તારાથી गौरम्-શ્વેત્ વર્ણવાળા પશુ પ્રત્યે शुक्-શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય અને यम्-જે શત્રુનો અમે द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ तम्-તેને ते-તારાથી शुक्-શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એક ખરીવાળા ઘોડા આદિ પશુઓ કદી મારવા ન જોઈએ. તેમજ ઉપકારી જંગલી પશુઓને પણ મારવા ન જોઈએ.

જેને મારવાથી સંસારની હાનિ અને રક્ષણથી ઉપકાર થાય છે, તેનું સદા પાલન કરવું જોઈએ અને હાનિકારક હિંસક પશુઓને મારવા જોઈએ. (૪૮)

इमꣳसाहस्रꣳ शतधारमुत्सं व्यच्यमानꣳ सरिरस्य मध्ये। घृतं दुहानामदितिं जनायाग्ने मा हिꣳसीः परमे व्योमन्। गवयमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद। गवयं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु॥ ४९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-દયાને પ્રાપ્ત થયેલ પરોપકારક રાજન્ ! તું जनाय-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓ માટે इमम्-

આ साहस्त्रम्-અસંખ્ય સુખોનાં સાધન, शतधारम्-અસંખ્ય દૂધની ધારાવાળા, व्यच्यमानम्-અનેક પ્રકારથી પાલનને યોગ્ય, उत्सम्-કૂવા સમાન રક્ષક અને વીર્યના સિંચક ખૂંટ-બળદની અને घृतम्-ઘીને दुहानाम्-પૂર્ણ કરતી अदितिम्-ન મારવા યોગ્ય ગાયને मा हिंसीः-માર નહિ.

ते-તારા રાજ્યમાં જે आरण्यम्-જંગલમાં રહેનારી गवयम्-ગાય સમાન નીલગાયથી ખેતીને હાનિ થાય છે તો તેને अनुदिशामि-ઉપદેશ કરું છું. तेन-તેને મારવાથી સુરક્ષિત અન્નથી परमे-ઉત્કૃષ્ટ व्योमन्-સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્મા અને सरिरस्य-વિસ્તૃત વ્યાપક આકાશની मध्ये-મધ્યમાં चिन्वानः-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થયેલ તું तन्वः-શરીરની મધ્યમાં निषीद-નિવાસ કર. ते-તારા शुक्-શોક तम्-તે गवयम्-રોઝ-[નીલગાય]ને ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય અને यम्-જે ते-તારા શત્રુનો द्विष्मः-અમે દ્વેષ કરીએ તેને પણ शुक्-શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય. (૪૯)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ જે બળદ આદિઓથી કાર્ય થાય છે, જે ગાય આદિથી દૂધ આદિ પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે, અને જે પદાર્થોથી સર્વની રક્ષા થાય છે તેની કદી પણ હિંસા ન કરવા દેવી જોઈએ. જે તેની હિંસા કરે તેને રાજા આદિ ન્યાયાધીશ અતિ દંડ આપે. જે જંગલી નીલગાય-રોઝ આદિ પશુ પ્રજાની હાનિ કરે તેનો નાશ કરવો જોઈએ. (૪૯)

इ॒मामू॒र्णा॒युं वरु॑णस्य॒ नाभिं॒ त्वचं॑ पशू॒नां द्वि॒पदां॒ चतु॑ष्पदाम्। त्वष्टुः॑ प्र॒जानां॑ प्रथ॒मं ज॒नित्र॒मग्ने॒ मा हि॑ꣳसीः पर॒मे व्यो॑मन्। उष्ट्र॑मार॒ण्यमनु॑ ते दिशामि॒ तेन॑ चिन्वा॒नस्त॒न्वो॒ निषी॑द। उष्ट्रं॑ ते॒ शुगृ॑च्छतु॒ यं द्वि॒ष्मस्तं ते॒ शुगृ॑च्छतु॥ ५०॥

પદાર્થ : હે अग्ने વિદ્યાને પ્રાપ્ત રાજન્ ! તું वरुणस्य-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ સુખથી नाभिम्-સંયોગ કરનાર इमम्-એ द्विपदाम्-બે પગવાળા મનુષ્ય, પક્ષી આદિ चतुष्पदाम्-ચાર પગવાળા पशूनाम्-ગાય આદિ પશુઓના त्वचम्-ચામડાથી ઢાંકનાર અને त्वष्टुः સુખકારક ઈશ્વરની प्रजानाम्-પ્રજાઓની प्रथमम्-આદિ जनित्रम्-ઉત્પત્તિના હેતુની, परमे-ઉત્તમ, व्योमन्-આકાશમાં વિદ્યમાન ऊर्णायुम्-ઘેટાં આદિની मा हिंसीः-હિંસા ન કર-માર નહિ.

ते-તારા માટે હું ઈશ્વર यम्-જે आरण्यम्-જંગલી उष्ट्रम्-ઊંટને अनु+दिशआमि-બતાવું છું, तेन-તેથી સુરક્ષિત અન્નાદિથી चिन्वानः-પુષ્ટ બનીને तन्वः-શરીરમાં निषीद નિવાસ કર.

ते-તારો शुक्-શોક તે જંગલી उष्ट्रम्-ઊંટને ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય અને જે દ્વેષી જનથી અમે द्विष्मः-અપ્રીતિ અર્થાત્ દ્વેષ કરીએ तम्-તેને ते-તારો शुक्-શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય. (૫૦)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જે ઘેટાં આદિની ઊન અને ચામડું પણ મનુષ્યોના સુખ માટે સમર્થ બને છે અને જે ઊંટ ભાર વહન કરીને મનુષ્યોને સુખ આપે છે, તેને જે મારવા ઈચ્છે, તેને સંસારને પીડા આપનાર જાણવા જોઈએ, [જેથી] તેને સમ્યક્ દંડ આપવો જોઈએ. વળી, જે જંગલી ઊંટ હાનિકારક હોય તેને પણ દંડ દેવો જોઈએ. (૫૦)

अजो ह्यग्नेरजनिष्ट शोकात्सोऽअपश्यज्जनितारमग्रे। तेन देवा देवतामग्रमायँस्तेन रोहमायन्नुप मेध्यासः। शरभमारण्यमनु ते दिशामि तेन चिन्वानस्तन्वो निषीद। शरभं ते शुगृच्छतु यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु॥ ५१॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! તું જે हि-નિશ્ચિત अजः બકરાં अजनिष्ट-ઉત્પન્ન થાય છે सः-તે अग्रे-પ્રથમ जनितारम्-ઉત્પાદકને अपश्यत्-જુએ છે, જેથી मेध्यासः-પવિત્ર થયેલ देवाः-વિદ્વાન अग्रम्-ઉત્તમ સુખ અને देवताम्-દિવ્યગુણોને સુખપૂર્વક उप+आयन्-પ્રાપ્ત કરે છે. જેથી रोहम्-વૃદ્ધિ યુક્ત પ્રસિદ્ધિને आयन् પ્રાપ્ત થાય તેથી तेन-તેના દ્વારા ઉતમ ગુણો અને ઉત્તમ સુખ તથા तेन-તેનાથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કર.

જે आरण्यम्-જંગલી शरभम्-તીડ તે તારી પ્રજાને હાનિ કરનાર છે, તેને अनुदिशामि-બતાવું છું. तेन-તેનાથી બચાવેલા પદાર્થોથી चिन्वानः-પુષ્ટ બનીને तन्वः-શરીરમાં निषीद-નિવાસ કર.

तम्-તે शरभम्-તીડને ते-તારો शुक्-શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય.

ते-તારા यम्-જે શત્રુથી અમે द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ છીએ તેને शोकात्-શોકરૂપ अग्नेः-અગ્નિથી शुक्-શોક અર્થાત્ અત્યંત શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય (૫૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ બકરી વગેરે પશુઓને ન મારીને તેની સમ્યક્ રક્ષા કરીને તેઓને ઉપકાર માટે યોજવા જોઈએ. જે ઉત્તમ પશુ, પક્ષીઓના હિંસક હોય તેને અત્યંત તાડન કરવા જોઈએ. પરન્તુ સાહુડી હાનિકારક હોય, તો પ્રજાપાલનની દૃષ્ટિએ મારવી જોઈએ. (૫૧)

त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः। रक्षा तोकमुत त्मना॥ ५२॥

પદાર્થ : यविष्ठ-અત્યંત યુવક ! त्वम्-તું એ સંરક્ષિત પશુઓથી दाशुषः-સુખદાતા नॄन्-ધર્મરક્ષક મનુષ્યોની पाहि-રક્ષા કર. એ गिरः-સત્ય વાણીને शृणुधि-સાંભળ અને त्मना-પોતાના આત્માથી મનુષ્ય उत्-અને પશુઓના तोकम्-બચ્ચાઓની रक्ष-રક્ષા કર. (૫૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય, મનુષ્ય આદિના રક્ષક પ્રાણીઓની વૃદ્ધિ કરે છે અને કરુણામય ઉપદેશોને સાંભળે અને સંભળાવે છે, તેઓ સંતાનસુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૨)

अपां त्वेमन्त्सादयाम्यपां त्वोद्मन्त्सादयाम्यपान्त्वा भस्मन्त्सादयाम्यपां त्वा ज्योतिषि सादयाम्यपां त्वायने सादयाम्यर्णवे त्वा सदने सादयामि समुद्रे त्वा सदने सादयामि। सरिरे त्वा सदने सादयाम्यपां त्वा क्षये सादयाम्यपां त्वा सधिषि सादयाम्यपां त्वा सदने सादयाम्यपां त्वा सधस्थे सादयाम्यपां त्वा योनौ सादयाम्यपां त्वा पुरीषे सादयाम्यपां त्वा पाथसि सादयामि। गायत्रेण त्वा छन्दसा सादयामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा सादयामि जागतेन त्वा छन्दसा सादयाम्यानुष्टुभेन

त्वा छन्दसा सादयामि पाङ्क्तेन त्वा छन्दसा सादयामि॥ ५३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ હું શિક્ષક-अपाम्-પ્રાણોની રક્ષા માટે एमन्-ગતિશીલ વાયુમાં त्वा-તને सादयामि-સ્થાપિત કરું છું, अपाम्-જલોની ओद्मन्-આર્દ્ર ઔષધિઓમાં त्वा-તને सादयामि-સ્થાપિત કરું છું, अपाम्-પ્રાપ્ત થયેલ કાષ્ઠોની भस्मन्-રાખમાં त्वा-તને सादयामि-સ્થાપિત કરું છું अपाम्-વ્યાપક વીજળી વગેરે અગ્નિના ज्योतिषि-પ્રકાશમાં त्वा-તને सादयामि-નિયુક્ત કરું છું अपाम्-અવકાશ યુક્ત अयने-સ્થાનમાં त्वा-તને सादयामि-બેસાડું છું सदने-સ્થિતિને યોગ્ય अर्णवे-પ્રાણ વિદ્યામાં त्वा-તને सादयामि-સંયુક્ત કરું છું. सदने-ગમનશીલ समुद्रे-મનના વિષયમાં त्वा-તને सादयामि-સંબદ્ધ કરું છું,

सदने-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય सरिरे-વાણીના વિષયમાં त्वा-તને सादयामि-સંયુક્ત કરું છું, अपाम्-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય પદાર્થોના સંબંધિત क्षये-ઘરમાં त्वा-તને सादयामि-સ્થાપિત કરું છું, अपाम्-અનેક પ્રકારના વ્યાપ્ત શબ્દોના સંબંધી सधिषि-તે પદાર્થોમાં કે જેથી જીવ અનેક શબ્દો સાંભળે છે અર્થાત્ કાનના વિષયમાં त्वा-તને सादयामि-સ્થિત કરું છું;

अपाम्-જલોના सदने-અન્તરિક્ષરૂપ સ્થાનમાં त्वा-તને सादयामि-સ્થાપિત કરું છું, अपाम्-જલના सधस्थे-સમાન સ્થાનમાં त्वा-તને सादयामि-સ્થાપિત કરું છું, अपाम्-જલના योनौ-સમુદ્રમાં त्वा-તને सादयामि-નિયુક્ત કરું છું, अपाम्-જલની पुरीषे-રેતીમાં त्वा-તને सादयामि-નિયુક્ત કરું છું, अपाम्-જલના पाथसि-અન્નમાં त्वा-તને सादयामि-પ્રેરણા કરું છું;

गायत्रेण-ગાયત્રી છંદથી પ્રતિપાદિત छन्दसा-સ્વતંત્ર અર્થની સાથે त्वा-તને सादयामि-સંયુક્ત કરું છું, त्रैष्टुभेन-ત્રિષ્ટુભ મંત્રથી પ્રતિપાદિત छन्दसा-શુદ્ધ અર્થની સાથે त्वा-તને सादयामि-સંયુક્ત કરું છું, जागतेन-જગતી છંદમાં કહેલ छन्दसा-આનંદદાયક અર્થ સાથે त्वा-તને सादयामि-નિયુક્ત કરું છું, आनुष्टुभेन-અનુષ્ટુપ્ મંત્રમાં કહેલ छन्दसा-શુદ્ધ અર્થ સાથે त्वा-તને सादयामि-પ્રેરણા કરું છું અને पाङ्क्तेन-પંક્તિ મંત્રથી પ્રકાશિત થયેલ छन्दसा-સ્વચ્છ અર્થની સાથે त्वा-તને सादयामि-પ્રેરિત કરું છું, તેમ તું વર્તાવ કર. (૫૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સર્વ પુરુષો અને સ્ત્રીઓને વેદ ભણાવીને, જગતમાં સ્થિત વાયુ આદિ પદાર્થોની વિદ્યાઓમાં નિપુણ બનાવીને તે પદાર્થોના પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરવામાં તેઓને પ્રવૃત્ત કરવા જોઈએ. (૫૩)

अयं पुरो भुवस्तस्य प्राणो भौवायनो वसन्तः प्राणायनो गायत्री वासन्ती गायत्र्यै गायत्रं गायत्रादुपाᳬशुरुपाᳬशोस्त्रिवृत् त्रिवृतो रथन्तरं वसिष्ठऽऋषिः। प्रजापतिगृहीतया त्वया प्राणं गृह्णामि प्रजाभ्यः॥ ५४॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! अयम्-એ पुरो भुवः-પ્રથમ ઉત્પન્ન અગ્નિ છે तस्य-તેના भौवायनः-સિદ્ધ કારણથી રચાયેલા प्राणः-જીવનનો હેતુ પ્રાણ છે, प्राणायनः પ્રાણો જેનાથી બનેલ છે તે वसन्तः-સુગંધિ આદિમાં વસાવનાર વસંતઋતુ છે, वासन्ती-વસંત ઋતુનું જેમાં વ્યાખ્યાન છે તે गायत्री-ગાનારના રક્ષક, ગાયત્રી મંત્ર માટે ઈશ્વર, गायत्र्यै-ગાયત્રી મંત્રના गायत्रम्-ગાયત્રી છંદ, गायत्रात्-ગાયત્રીથી उपांशुः-સમીપમાં

ગ્રહણ કરવામાં આવે, उपांशोः-તે જપથી त्रिवृत्-ત્રણ-જ્ઞાન, કર્મ ઉપાસનાથી યુક્ત પુરુષ त्रिवृतः-તે ત્રણ પ્રકારના ફૂળથી रथन्तरम्-રમણીય પદાર્થોથી તારનારા સુખ અને वसिष्ठः-અત્યંત નિવાસના હેતુ, ऋषिः-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન્, प्रजापति गृहीतया-પોતાના સંતાનોના રક્ષક પતિને ગ્રહણ કરનારી त्वया-તારી સાથે प्रजाभ्यः સંતાનોત્પત્તિ માટે प्राणम्-બલયુક્ત જીવન ધારણ કરે છે, તેમ તારી સાથે હું સંતાન માટે બલને गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. (૫૪)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ અગ્નિ આદિ પદાર્થોનો ઉપયોગ કરીને, પરસ્પર પ્રેમથી અત્યંત વિષય વાસનાનો ત્યાગ કરીને, સમસ્ત જગતમાં બળનો સંગ્રહ કરીને સંતાન ઉત્પન્ન કરવા જાઈએ. (૫૪)

अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य मनो वैश्वकर्मणं ग्रीष्मो मानसस्त्रिष्टुब् ग्रैष्मी त्रिष्टुभः स्वारम्। स्वारादन्तर्यामोऽन्तर्यामात्पञ्चदशः पञ्चदशाद् बृहद् भरद्वाजऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया मनो गृह्णामि प्रजाभ्यः॥ ५५॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ दक्षिणा-દક્ષિણ દિશામાં अयम्-એ विश्वकर्मा-સર્વ કર્મ-ચેષ્ટાઓનો હેતુ વાયુના સમાન વિદ્વાન્ ગતિ કરે છે, तस्य-તે વાયુના યોગથી वैश्वकर्मणम्-જેથી સર્વ કર્મો સિદ્ધ થાય છે, તે मनः-વિચાર સ્વરૂપ પ્રેરક મન, मानसः-મનની ઉષ્મા-ગરમીથી ઉત્પન્ન સમાન ग्रीष्मः-રસોની નાશક ગ્રીષ્મ ઋતુ, ग्रैष्मी-ગ્રીષ્મ ઋતુની વ્યાખ્યા કરનાર त्रिष्टुप्-ત્રિષ્ટુપ્ છંદ, त्रिष्टुभः-ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી स्वारम्-તાપથી ઉત્પન્ન તેજ, स्वारात्-અને તેજથી अन्तर्यामः-મધ્યાહ્નના પ્રહરમાં વિશેષ દિવસ, અને अन्तर्यामात्-મધ્યાહ્નના વિશેષ દિવસથી पञ्चदशः-પંદર તિથિઓની પૂરક સ્તુતિ યોગ્ય પૂર્ણમાસી, पञ्चदशात्-તે પૂર્ણમાસીથી बृहत्-મહાન્ भरद्वाजः-અન્ન વા વિજ્ઞાનની પુષ્ટિ તથા ધારણ કરનાર નિમિત્ત, ऋषिः-શબ્દ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવનાર કાન, प्रजापतिगृहीतया-પ્રજાપાલક પતિ રાજાએ ગ્રહણ કરેલી વિદ્યાથી ન્યાયનું ગ્રહણ કરે છે, તેમ હું त्वया-તારી સાથે प्रजाभ्यः-પ્રજાઓ માટે मनः-વિચાર સ્વરૂપ વિજ્ઞાનયુક્ત ચિત્તના ગ્રહણ વિજ્ઞાનનું गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. (૫૫)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ પ્રાણને વશ કરનાર મન છે અને મનને વશ કરનાર પ્રાણછે, તેમ જાણીને પ્રાણાયામથી મનની શુદ્ધિ કરીને, સમસ્ત સૃષ્ટિના પદાર્થ વિજ્ઞાનનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. (૫૫)

अयं पश्चाद् विश्वव्यचास्तस्य चक्षुर्वैश्वव्यचसं वर्षाश्चाक्षुष्यो जगती वार्षी जगत्याऽऋक्सम्। ऋक्समाच्छुक्रः शुक्रात्सप्तदशः सप्तदशाद्वैरूपं जमदग्निर्ऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया चक्षुर्गृह्णामि प्रजाभ्यः॥ ५६॥

પદાર્થ : હે સુંદર મુખવાળી સ્ત્રી ! अयम्-આ સૂર્યની સમાન વિદ્વાન્ विश्वव्यचाः-સમસ્ત સંસારને સર્વત્રથી પ્રકાશથી વ્યાપક બનીને પ્રકટ કરનાર બનીને पश्चात्-પશ્ચિમ દિશામાં વિદ્યમાન સૂર્ય છે, तस्य-તે સૂર્યના वैश्वव्यचसम्-પ્રકાશક કિરણરૂપ चक्षुः-નેત્ર છે, चाक्षुष्यः-નેત્રથી જોવા યોગ્ય वर्षाः-જે સમયે વાદળાઓ વર્ષે છે તે વર્ષાઋતુ છે, वार्षी-વર્ષાઋતુની વ્યાખ્યા કરનાર जगती-જગત્ પ્રસિદ્ધ જગતી છંદ

છે, जगत्याः-જગતી છંદથી ऋक्समम्-ઋચાઓના સેવનનો હેતુ વિજ્ઞાન છે, ऋक्समात्-તે વિજ્ઞાનથી शुक्रः-પરાક્રમ છે, शुक्रात्-પરાક્રમથી सप्तदशः-સત્તર તત્ત્વોનું પૂરક વિજ્ઞાન છે, सप्तदशात्-તે વિજ્ઞાનથી वैरूपम्-વિવિધ રૂપોનું કારણ જગતનું જ્ઞાન છે અને જેમ जमदग्निः-પ્રકાશસ્વરૂપ ऋषिः-રૂપને પ્રાપ્ત કરાવનાર નેત્ર છે, प्रजापतिगृहीतया-સંતાન રક્ષક પતિએ ગ્રહણ કરેલ વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીની સાથે प्रजाभ्यः-પ્રજાઓ માટે चक्षुः-વિદ્યારૂપી નેત્રનું ગ્રહણ કરે છે, તેમ હું त्वया-તારી સાથે સંસારથી બલનું गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. (૫૬)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ સામવેદના અધ્યયન દ્વારા સૂર્ય આદિ રૂપમાં પ્રસિદ્ધ સંસારને વાસ્તવિક દૃષ્ટિથી જાણીને, સમસ્ત સૃષ્ટિથી ઉત્તમ દર્શન અને ચરિત્રનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૫૬)

इदमुत्तरात् स्वस्तस्य श्रोत्रꣳ सौवꣳ शरच्छ्रौत्र्यनुष्टुप् शारद्यनुष्टुभऽऐडमैडान् मन्थीमन्थिनऽएकविꣳशऽएकविꣳशाद् वैराजं विश्वामित्रऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया श्रोत्रं गृह्णामि प्रजाभ्यः॥ ५७॥

પદાર્થ : હે સૌભાગ્યવતી ! જેમ इदम्-આ उत्तरात्-સર્વથી ઉત્તર ભાગમાં स्वः-સુખોનું સાધન દિશારૂપ છે, तस्य-તેના सौवम्-સુખનાં સાધન श्रोत्रम्-કાન છે, श्रौत्री-કાનથી સંબંધ રાખનારી शरत्-શરદઋતુ शारदी-શરદ ઋતુની વ્યાખ્યા કરનાર अनुष्टुप्-પ્રવદ્ધ અર્થ યુક્ત અનુષ્ટુપ છંદ છે, अनुष्टुभः-તેથી ऐडम्-વાણીના વ્યાખ્યાનથી યુક્ત મંત્ર છે, ऐडात्-તે મંત્રથી मन्थी-પદાર્થોનું મંથન કરનારી મંથી-સાધન છે, मन्थिनः-તે સાધનથી एकविंशः-એકવીસ વિદ્યાઓને પૂર્ણ કરનાર સિદ્ધાન્ત-વિજ્ઞાન છે, एकविंशात्-તે સિદ્ધાન્તથી वैराजम्-વિવિધ પદાર્થોના પ્રકાશક साम-સામવેદના જ્ઞાનને પ્રાપ્ત विश्वामित्रः-સર્વને મિત્ર બનાવનાર અને ऋषिः-શબ્દનું જ્ઞાન કરાવનાર કાન અને प्रजाभ्यः-ઉત્પન્ન થયેલ વિદ્યુત્ આદિને માટે श्रोत्रम्-સાંભળવાના સાધનને ગ્રહણ કરે છે, તેમ प्रजापतिगृहीतया-પ્રજાપાલક પતિ ગ્રહણ કરેલી, त्वा-તારી સાથે પ્રસિદ્ધ થયેલી વિદ્યુત્ આદિથી श्रोत्रम्-સાંભળવાના સાધન કાનને गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છુ. (૫૭)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા ભણેલ અને પછી વિવાહ કરેલ સ્ત્રી-પુરુષ બહુશ્રુત બને. આપ્ત વિદ્વાનોથી ઉપદેશ શ્રવણ કર્યા વિના, ભણેલ વિદ્યા પણ ફળદાયી બનતી નથી. તેથી સદા ઉપદેશ સાંભળીને સત્યને ધારણ કરે અને અસત્યનો ત્યાગ કરે. (૫૭)

इयमुपरि मतिस्तस्यै वाङ्मात्या हैमन्तो वाच्यः पङ्क्तिर्हैमन्ती पङ्क्त्यै निधनवन्निधनवतऽआग्रयणः। आग्रयणात् त्रिणवत्रयस्त्रिꣳशौ त्रिणव-त्रयस्त्रिꣳशाभ्याꣳशाक्वररैवते विश्वकर्मऽऋषिः प्रजापतिगृहीतया त्वया वाचं गृह्णामि प्रजाभ्यः॥ ५८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ સ્ત્રી ! જે इयम्-એ उपरि-સર્વથી ઉપર વિરાજમાન मतिः-બુદ્ધિ છે, तस्यै-તે

मात्या-બુદ્ધિનું હોવું વા કર્મ वाक्-વાણી છે, वाच्यः-વાણિત્વ અર્થાત્ વાણીનું હોવું વા કર્મ हेमन्तः-ઉષ્ણતાની નાશક હેમન્ત ઋતુ છે, हैमन्ती-હેમન્ત ઋતુની વ્યાખ્યા કરનારી पङ्क्तिः-પંકિત છન્દ છે, पङ्क्त्यै-તે પંકિત છન્દના निधनवत्-મૃત્યુના પ્રશંસિત વ્યાખ્યાયુક્ત સામવેદનો ભાગ છે, निधनवतः-તે સામના आग्रयणः-પ્રાપ્તિના સાધન જ્ઞાનનું ફળ કે વિજ્ઞાન છે, आग्रयणात्-તે વિજ્ઞાનથી त्रिणवत्रयस्त्रिंशौ-૩ + ૯ = ૧૨-બાર અને તેત્રીસ સામવેદના સ્રોત છે, त्रिणवत्रयस्त्रिंशाभ्याम्-તે સ્રોતોથી शाक्वररैवते-શક્તિ અને ધનના સાધક સામને જાણીને विश्वकर्मा-સર્વ સુકર્મોનું સેવન કરનાર ऋषिः-વેદાર્થના વક્તા ઋષિ છે. તેમ હું प्रजापतिगृहीतया-પ્રજાપતિ-પ્રજાપાલક પતિએ ગ્રહણ કરેલી त्वया-તારી સાથે प्रजाभ्याम्-પ્રજા માટે वाचम्-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા યુક્ત વાણીને गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. (૫૮)

ભાવાર્થ : પતિ અને પત્નીએ વિદ્વાનોની વાણી સાંભળીને બુદ્ધિ વધારવી જોઈએ, તે બુદ્ધિથી હેમન્ત ઋતુમાં કરવા યોગ્ય કાર્ય અને સામગાનને જાણીને, મહર્ષિની સમાન વર્તન કરીને, વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા સંસ્કારયુક્ત-શુદ્ધ વાણીનો સ્વીકાર કરીને પ્રજાઓ માટે તેના સદા ઉપદેશ કરવા જોઈએ. (૫૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં ઈશ્વર અને પતિ-પત્નીના વ્યવહારના પ્રતિપાદનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થ સાથે સંગતિ છે, એમ જાણો.

॥ इति त्रयोदशोऽध्यायः ॥



॥ अथ चतुर्दशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव॥ १॥

ध्रुवक्षितिर्ध्रुवयोनिर्ध्रुवासि ध्रुवं योनिमासीद साधुया।

उख्यस्य केतुं प्रथमं जुषाणा अश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा॥ १॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું साधुया-શ્રેષ્ઠ ધર્મની સાથે उख्यस्य-વટલોઈ અર્થાત્ તાંબડીમાં રાંધેલ અન્નથી સંબંધિત અને प्रथमम्-વિસ્તૃત केतुम्-બુદ્ધિને जुषाणा-પ્રીતિપૂર્વક કરતી ध्रुवक्षितिः-નિશ્ચલ રહેનારી અને ध्रुवयोनिः-નિશ્ચલ ઘરમાં રહેનારી, ध्रुवा-દૃઢ ધર્મયુક્ત, असि-છે, તેથી તું ध्रुवम्-નિશ્ચલ योनिम्-ઘરમાં आसीद-સ્થિર બન. त्वा-તને इह-આ ગૃહાશ્રમમાં अध्वर्यू-પોતાના માટે રક્ષણીય ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞના ઈચ્છુક अश्विना-સમસ્ત વિદ્યાઓથી યુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક सादयताम्-સારી રીતે સ્થાપિત કરે. (૧)

ભાવાર્થ : કુમારી કન્યાઓને બ્રહ્મચર્યકાલમાં અધ્યાપિકા તથા ઉપદેશિકા વિદુષીઓ ગૃહસ્થ આશ્રમની તથા ધર્મશિક્ષા આપીને શ્રેષ્ઠ બનાવે. (૧)

कुलायिनी घृतवती पुरन्धिः स्योने सीद सदने पृथिव्याः। अभि त्वा रुद्रा वसवो गृणन्त्विमा ब्रह्म पीपिहि सौभगायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा॥ २॥

પદાર્થ : હે स्योने-સુખ આપનારી ! જે त्वा-તને वसवः-પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન્ અને रुद्राः-મધ્યમ કક્ષાના વિદ્વાન્ इमा-એ ब्रह्म-વિદ્યાધન આપનાર ગૃહસ્થોની अभि-સન્મુખ થઈ गृणन्तु-પ્રશંસા કરે, તેથી તું सौभगाय-સુંદર સંપત્તિ તે વિદ્યાધનને पीपिहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત કર.

घृतवती-અધિક જલયુક્ત અને पुरन्धिः-અનેક સુખોને ધારણ કરનારી, कुलायिनी-શ્રેષ્ઠ કુળને પ્રાપ્ત કરનારી બનીને पृथिव्याः-પોતાની ભૂમિના सदने-ઘરમાં सीद-સ્થિત બની રહે.

अध्वर्यू-પોતાના રક્ષણીય ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞના ઈચ્છુક अश्विना-સર્વવિદ્યાઓમાં વ્યાપક અને ઉપદેશક પુરુષ त्वा-તને इह-આ ગૃહાશ્રમમાં सादयताम्-સ્થાપિત કરે. (૨)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓ સાંગોપાંગ વેદજ્ઞાનથી યુક્ત તથા ઐશ્વર્ય સુખના ઉપભોગ માટે પોતાની સમાન પતિઓ સાથે વિવાહ કરીને વિદ્યા અને સુવર્ણ આદિ ધન પ્રાપ્ત કરીને - સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયક ઘરમાં નિવાસ કરે, વિદ્વાનોનો સંગ અને શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ સદા કરતી રહે. (૨)

स्वैर्दक्षैर्दक्षपितेह सीद देवानाꣳ सुम्ने बृहते रणाय। पितेवैधि सूनवऽआ सुशेवा स्वावेशा तन्वा संविशस्वाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा॥ ३॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું જેમ स्वैः-પોતાના दक्षैः-બળ અને ચતુર નોકરો સાથે વિદ્યમાન देवानाम्-

ધાર્મિક વિદ્વાનોની મધ્યમાં વિદ્યમાન बृहते-મહાન रणाय-સંગ્રામ માટે सुम्ने-સુખમાં दक्षपिता-બળ તથા ચતુર નોકરોનો પાલક પુરુષ વિજયથી વધે છે, તેમ इह-આ લોકમાં एधि-વધતી રહે, सुम्ने-સુખમાં आसीद-સ્થિર રહે.

पितेव-જેમ પિતા सूनवे-પોતાના પુત્રને સુંદર સુખ આપે છે, તેમ सुशेवा-સુંદર સુખ આપનારી, स्वावेशा-ઉત્તમ પ્રીતિ, સુંદર, શુદ્ધ શરીર, વસ્ત્ર અને અલંકારને ધારણ કરનારી બનીને तन्वा-શરીરની સાથે संविशस्व-પ્રવેશ કર.

अध्वर्यू-ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞથી પોતાના માટે ઈચ્છા કરનાર अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક त्वा-તને इह-આ ગૃહાશ્રમમાં सादयताम्-સ્થાપિત કરે. (૨)

ભાવાર્થ : સ્ત્રીઓ યુદ્ધમાં પણ પોતાના પતિઓ સાથે રહે. પોતાના નોકર, પુત્ર અને પશુઓનું પિતા સમાન પાલન કરે. સદા અતિ શ્રેષ્ઠ વસ્ત્રો અને આભૂષણોથી પોતાના શરીરોને સુશોભિત કરતી રહે.

વિદ્વાનો તેને સદા એ રીતે ઉપદેશ કરે અને સ્ત્રીઓ પણ એ [વિદ્વાન્ પતિઓ]ને એ રીતે ઉપદેશ કર્યા કરે. (૩)

पृथिव्याः पुरीषमस्यप्सो नाम तां त्वा विश्वेऽअभिगृणन्तु देवाः। स्तोमपृष्ठा घृतवतीह सीद प्रजावदस्मे द्रविणा यजस्वाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा॥ ४॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે स्तोमपृष्ठा-સ્તુતિઓને જાણવાની ઈચ્છુક તું इह-આ ગૃહાશ્રમમાં पृथिव्याः-પૃથિવીની पुरीषम्-રક્ષા, अप्सः-સુંદર રૂપ તથા नाम-પ્રસિદ્ધિ છે અને घृतवती-ઉત્તમ ઘી આદિ પ્રશંસિત પદાર્થોથી યુક્ત असि-છે. ताम्-તેથી त्वा-તારો विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો अभिगृणन्तु-સત્કાર કરે, इह-આ ગૃહાશ્રમમાં सीद-વિદ્યમાન રહે અને જે त्वा-તને अध्वर्यू-પોતાના રક્ષણીય ગૃહાશ્રમ આદિ યજ્ઞના ઈચ્છુક अश्विना-સકલ વિદ્યાઓથી યુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક इह-આ ગૃહાશ્રમમાં सादयताम्-સ્થિત કરે, તેથી તું अस्मे-અમારા માટે प्रजावत्-પ્રશંસિત સંતાન માટે द्रविणा-ધનને यजस्व-પ્રદાન કર. (૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓ ગૃહાશ્રમની વિદ્યા અને ક્રિયાકૌશલમાં વિદુષી હોય, તે જ સર્વને સુખ આપી શકે છે. (૪)

अदित्यास्त्वा पृष्ठे सादयाम्यन्तरिक्षस्य धर्त्रीं विष्टम्भनीं दिशामधिपत्नीं भुवनानाम्। ऊर्मिर्द्रप्सो अपामसि विश्वकर्मा तऽऋषिरश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा॥ ५॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે ते-તારા विश्वकर्मा-સર્વ શુભકર્મોથી યુક્ત, ऋषिः-વિજ્ઞાનદાતા પતિમાં-अन्तरिक्षस्य-અન્તઃકરણના નાશરહિત વિજ્ઞાનને धर्त्रीम्-ધારણ કરનારી, दिशाम्-પૂર્વ આદિ દિશાઓને विष्टम्भनीम्-સ્થિર કરનારી भुवनानाम्-સંતાનોત્પત્તિ નિમિત્ત ઘરોની अधिपत्नीम्-અધિષ્ઠાત્રી બનીને પાલન કરનારી, त्वा-તને સૂર્યનાં કિરણો સમાન अदित्याः-પૃથિવીની पृष्ठे-પીઠ ઉપર सादयामि-ઘરની અધિકારિણી

સ્થાપિત કરું છું.

જે તું अपाम्-જલના ऊर्मिः-તરંગ સમાન द्रप्सः-આનંદયુક્ત असि-છે, તેથી त्वा-તને इह-આ ગૃહાશ્રમમાં अध्वर्यू-રક્ષા માટે યજ્ઞ કરનાર अश्विना-વિદ્યામાં વ્યાપક બુદ્ધિયુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક सादयताम्-સ્થાપિત કરે. (૫)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓ અક્ષય સુખને ઉત્પન્ન કરનારી, સર્વ દિશાઓમાં પ્રસિદ્ધ યશવાળી, વિદ્વાન્ પતિઓવાળી તથા નિત્ય આનંદમાં રહે છે, તે જ ગૃહાશ્રમ ધર્મના પાલન અને તેની ઉન્નતિમાં સમર્થ બને છે. (૫)

शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे। ग्रैष्मावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम्॥ ६॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ मम-મારી ज्यैष्ठ्याय-પ્રશંસાને યોગ્ય બનવા માટે જે शुक्रः-શીઘ્ર ધૂળની વર્ષા અને તીવ્ર તાપથી આકાશને મલિન કરનાર જેઠ મહિનો च-અને शुचिः-પવિત્ર કરનાર અષાઢ મહિનો च-એ બન્ને મળીને પ્રત્યેક ग्रैष्मौ-ગ્રીષ્મ ऋतू-ઋતુ કહેવાય છે, જેમાં अग्नेः-અગ્નિના अन्तःश्लेषः-મધ્યમાં કફના રોગોનું નિવારણ असि-થાય છે. જેથી ગ્રીષ્મઋતુના મહિનાઓમાં द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને અન્તરિક્ષ कल्पेताम्-સમર્થ બને છે, आपः-જલ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને છે, ओषधयः-યવ અને સોમલતા આદિ ઔષધિઓ તથા अग्नयः-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ पृथक्-અલગ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને છે.

જેમ समनसः-વિચારશીલ, सव्रताः-સત્યાચરણ રૂપ નિયમોથી યુક્ત अग्नयः-અગ્નિ સમાન તેજસ્વીને अन्तरा + ग्रैष्मौ + ऋतू + अभिकल्पमानाः-સન્મુખ થઈને સમર્થ કરતા देवाः-વિદ્વાનો इन्द्रमिव-વિદ્યુત્ સમાન તે અગ્નિઓની વિદ્યાઓમાં अभिसंविशन्तु-સર્વત્રથી ઉત્તમ રીતે પ્રવેશ કરે છે. તેમ तया-તે देवतया-પરમેશ્વર દેવતાની સાથે તમે બન્ને [સ્ત્રી-પુરુષ] इमे-એ द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને પૃથિવીને ध्रुवे-નિશ્ચલ રૂપથી એના પણ अङ्गिरस्वत्-અવયવોના કારણરૂપ રસની સમાન सीदतम्-વિશેષ કરીને જ્ઞાન કરી પ્રવર્તમાન રહો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પૃથિવી આદિ સ્થિત તથા શરીર, આત્મા અને મનમાં સ્થિત અગ્નિઓ છે, જેના વિના ગ્રીષ્મ ઋતુનો સંભવ થતો નથી. તેને જાણીને તથા તેનો ઉપયોગ કરીને તમે સર્વને સુખ પ્રદાન કરો. (૬)

सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजूर्देवैः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजूर्वसुभिः

सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाऽध्वर्यू सादयतामिह त्वा सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजू रुद्रैः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजूरादित्यैः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा सजूर्ऋतुभिः सजूर्विधाभिः सजूर्विश्वैर्देवैः सजूर्देवैर्वयोनाधैरग्नये त्वा वैश्वानरायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा॥ ७॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! જે त्वा-તને इह-આ જગતમાં अध्वर्यू-રક્ષા કરનાર अश्विना-સકલ વિદ્યાઓથી યુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક પુરુષ અને સ્ત્રી वैश्वानराय-સર્વ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે अग्नये-અગ્નિવિદ્યા માટે सादयताम्-નિયુક્ત અર્થાત્-સ્થાપિત કરે અને અમે પણ त्वा-તમોને સ્થાપિત કરીએ.

તું ऋतुभिः-વસંત અને વર્ષાદિ ઋતુઓમાં सजूः-એક સમાન તૃપ્તિ વા સેવન કરનાર, विधाभिः-જલોથી सजूः-પ્રીતિયુક્ત, देवैः-શ્રેષ્ઠ ગુણોની સાથે सजूः-સમાન પ્રીતિવાળી વા પ્રીતિવાળા તથા वयोनाधैः-જીવન આદિ વા ગાયત્રી આદિ છંદોની સાથે સંબંધ માટે देवैः-દિવ્ય સુખ આપનાર પ્રાણોની સાથે सजूः-સમાન રૂપથી પ્રીતિ અને તેનું સેવન કરનાર બનો.

હે પુરુષાર્થી સ્ત્રી વા પુરુષ ! જે त्वा-તને इह-આ ગૃહાશ્રમમાં वैश्वानराय-સર્વ જગતના નાયક अग्नये-વિજ્ઞાનદાતા ઈશ્વરની પ્રાપ્તિ માટે अध्वर्यू-રક્ષક अश्विना-સકલ વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક सादयताम्-સ્થાપિત કરે, જે त्वा-તને સ્ત્રી વા પુરુષને અમે સ્થાપિત કરીએ.

તું ऋतुभिः-ઋતુઓની સાથે, सजूः-પુરુષાર્થી, विधाभिः-વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોના ધારણ માટે પ્રાણોની ચેષ્ટાઓ સાથે, सजूः-સમાન સેવન કરનાર, वसुभिः-અગ્નિ આદિ આઠ પદાર્થોની સાથે सजूः-પ્રીતિયુક્ત અને वयोनाधैः-વિજ્ઞાનનો સંબંધ કરાવનાર देवैः-સુંદર વિદ્વાનો સાથે सजूः-સમાન પ્રીતિવાળી બનો.

હે વિદ્યાધ્યયનમાં પ્રવૃત્ત બ્રહ્મચારિણી વા બ્રહ્મચારી ! જે त्वा-તને इह-આ બ્રહ્મચર્યાશ્રમમાં वैश्वानराय-સર્વ મનુષ્યોના સુખનાં સાધન अग्नये-શાસ્ત્રોના વિજ્ઞાન માટે अध्वर्यू-પાલક अश्विना-સકલ વિદ્યાયુક્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક सादयताम्-નિયુક્ત કરે અને જે त्वा-અમે પણ તને સ્થાપિત કરીએ.

તું ऋतुभिः-ઋતુઓની સાથે सजूः-અનુકૂળ સેવન કરનાર विधाभिः-વિવિધ પદાર્થોના ધારણ માટે પ્રાણની ચેષ્ટાઓથી सजूः-સમાન પ્રીતિયુક્ત रुद्रैः-પ્રાણ, અપાન, વ્યાન, ઉદાન, સમાન, નાગ, કૂર્મ, કૃકલ, દેવદત્ત, ધનંજય અને જીવાત્મા એ અગિયાર सजूः-અનુસાર સેવા કરાવનાર અને वयोनाधैः-વેદાદિ શાસ્ત્રોના અધ્યાપનનો પ્રબંધ કરનાર देवैः-વિદ્વાનની સાથે सजूः-સમાન પ્રીતિવાળા બનો.

હે પૂર્ણ વિદ્યાથી યુક્ત સ્ત્રી વા પુરુષ ! જે त्वा-તને इह-સંસારમાં वैश्वानराय्-સર્વ મનુષ્યો માટે પૂર્ણ સુખ સાથે अग्नये-પૂર્ણ વિજ્ઞાન માટે अध्वर्यू-રક્ષક अश्विना-શીઘ્ર જ્ઞાનદાતા सादयताम्-નિયત કરે અને જે-त्वा-તને અમે નિયુક્ત કરીએ.

તું ऋतुभिः-ઋતુઓની સાથે सजूः-અનુકૂળ આચરણ સાથે विधाभिः-વિવિધ પ્રકારની સત્યક્રિયાઓ સાથે सजूः-સમાન પ્રીતિયુક્ત आदित्यैः-વર્ષના બાર મહિનાઓની સાથે सजूः-અનુકૂળ આહારવિહારયુક્ત

અને वयोनाधैः-પૂર્ણવિદ્યાનું વિજ્ઞાન અને પ્રચારનો પ્રબંધ કરનાર देवैः-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત વિદ્વાનોના सजूः-અનુકૂળ પ્રીતિવાળા બનો.

હે સત્ય અર્થોનો ઉપદેશ કરનારી સ્ત્રી વા પુરુષ જે त्वा-તને इह-આ જગતમાં वैश्वानराय-સર્વ મનુષ્યોને હિતકારી अग्नये-ઉત્તમ શિક્ષાના પ્રકાશ માટે अध्वर्यू-બ્રહ્મવિદ્યાના રક્ષક अश्विना-શીઘ્ર ભણાવનાર-અધ્યાપક અને ઉપદેશક सादयताम्-સ્થિત કરે અને જે त्वा-તને અમે નિયત કરીએ.

તું ऋभुभिः-કાલ, ક્ષણ આદિ સર્વ અવયવો સાથે सजूः-અનુકૂળ સેવન કરનાર विधाभिः-સુખોમાં વ્યાપક સર્વ ક્રિયાઓ सजूः-અનુસાર બનીને विश्वैः-સર્વ देवैः-સત્યોપદેશક વિદ્વાનોની સાથે सजूः-સમાન પ્રીતિ યુક્ત અને वयोनाधैः-કામનાને યોગ્ય જીવનનો સંબંધ કરાવનાર देवैः-પરોપકાર માટે સત્ય અને અસત્યના જ્ઞાતાઓની સાથે सजूः-સમાન પ્રીતિવાળા બનો. (૭)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં મનુષ્યનો જન્મ પ્રાપ્ત કરીને સ્ત્રીઓ વિદુષી અને પુરુષો વિદ્વાન્ બનીને જે બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યા અને સુશિક્ષાગ્રહણ આદિ શુભ કર્મોમાં સ્વયં પ્રવૃત્ત બનીને જે અન્યોને પ્રવૃત્ત કરે, તેઓ એ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત બનીને, પરમેશ્વરથી લઈને પૃથિવી પર્યન્તના પદાર્થોના યથાર્થ વિજ્ઞાનથી ઉપયોગ ગ્રહણ કરીને, સર્વ ઋતુઓમાં સ્વયં સુખી રહે તથા અન્યોને પણ સુખી કરે. (૭)

प्राणम्मे पाह्यपानम्मे पाहि व्यानम्मे पाहि चक्षुर्मऽउर्व्या विभाहि श्रोत्रम्मे श्लोकय। अपः पिन्वौषधीर्जिन्व द्विपादव चतुष्पात्पाहि दिवो वृष्टिमेरय॥ ८॥

પદાર્થ : હે પતિ વા સ્ત્રી ! તું उर्व्या-અનેક પ્રકારની ક્રિયાથી मे-મારી प्राणम्-નાભિથી ઉપર ચાલનાર પ્રાણવાયુની पाहि-રક્ષા કર, मे-મારા अपानम्-નાભિની નીચે ગતિ કરનાર અપાન વાયુની पाहि-રક્ષા કર, मे-મારા व्यानम्-વિવિધ શરીરની સંધિઓમાં ગતિ કરનાર વ્યાન વાયુની पाहि-રક્ષા કર, मे-મારા चक्षुः-નેત્રોને विभाहि-પ્રકાશિત કર, मे-મારા श्रोत्रम्-કાનોને श्लोकय-શાસ્ત્રના શ્રવણથી સંયુક્ત કર, अपः-પ્રાણોને पिन्व-પુષ્ટ કર, ओषधीः-સોમલતા વા જવ આદિ ઔષધિઓને जिन्व-પ્રાપ્ત કર, द्विपात्-મનુષ્ય આદિ બે પગવાળા પ્રાણીઓની अव-રક્ષા કર, चतुष्पात्-ચોપગા ગાય આદિની पाहि-રક્ષા કર.

જેમ સૂર્ય दिवः-પોતાના પ્રકાશથી वृष्टिम्-વર્ષા કરે છે, તેમ ઘરના કાર્યોને एरय-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત કર. (૮)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ સ્વયંવર વિવાહ કરીને અત્યંત પ્રેમપૂર્વક પરસ્પર પ્રાણોની સમાન પ્રિય આચરણ, શાસ્ત્રોનું શ્રવણ અને ઔષધિ આદિનું સેવન કરીને યજ્ઞથી વરસાદ વરસાવે. (૮)

मूर्धा वयः प्रजापतिश्छन्दः क्षत्रं वयो मयन्दं छन्दो विष्टम्भो वयोऽधिपतिश्छन्दो विश्वकर्मा वयः परमेष्ठी छन्दो वस्तो वयो विबलं छन्दो वृष्णिर्वयो विशालं छन्दः पुरुषो वयस्तन्द्रं छन्दो व्याघ्रो वयोऽनाधृष्टं छन्दः सिꣳहो वयश्छदिश्छन्दः

पष्ठ॒वाड् वयो॑ बृह॒ती छन्द॑ऽउ॒क्षा वयः॑ क॒कुप् छन्द॑ऽऋष॒भो वयः॑ स॒तोबृ॑हती॒ छन्दः॑ ॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! मूर्धा-શિરની સમાન ઉત્તમ બ્રાહ્મણનું કુળ તથા प्रजापतिः-પ્રજાના રક્ષક રાજા સમાન તું वयः-કામનાને યોગ્ય, मयन्दम्-સુખદાયક, छन्दः-બલયુક્ત, क्षत्रम्-ક્ષત્રિય કુળને પ્રેરણા કર-પ્રાપ્ત કર.

विष्टम्भः-વૈશ્યોની રક્ષા માટે अधिपतिः-અધિષ્ઠાતા પુરુષ રાજા સમાન તું वयः-ન્યાય, અને વિનયયુક્ત छन्दः-સ્વાધીન પુરુષને પ્રેરણા કર.

विश्वकर्मा-સર્વ શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનાર परमेष्ठी-સર્વના સ્વામી રાજાની સમાન તું वयः-કામના કરવા યોગ્ય छन्दः-સ્વાધીનતાની एरय-વૃદ્ધિ કર.

वस्तः-સર્વ વ્યવહારોથી યુક્ત પુરુષ સમાન તું वयः-અનેક પ્રકારના વ્યવહારોમાં વ્યાપી विबलम्-વિવિધ બળ માટે छन्दः-આનંદની વૃદ્ધિ કર.

वृष्णिः-સુખનું સિંચન કરનાર સમાન તું विशालम्-વિસ્તારયુક્ત वयः-સુખદાયક छन्दः-સ્વાધીનતાની વૃદ્ધિ કર.

पुरुषः-પુરુષાર્થની જેમ તું वयः-કામના કરવા યોગ્ય तन्द्रम्-કુટુંબના ધારણરૂપ કર્મ छन्दः-અને બળની વૃદ્ધિ કર.

व्याघ्रः-જે વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોને સારી રીતે સૂંઘે છે, તે જન્તુ સમાન રાજા તું वयः-કામના કરવા યોગ્ય अनाधृष्टम्-દૃઢ छन्दः-બળની વૃદ્ધિ કર.

सिंहः-પશુ આદિને મારનાર સિંહ સમાન પરાક્રમી રાજા તું वयः-પરાક્રમ સાથે छदिः-નિરોધ [આચ્છાદન] અને छन्दः-પ્રકાશની વૃદ્ધિ કર.

पष्ठवाट्-પીઠ પર વજન ઉપાડનારા ઊંટ વગેરે સમાન વૈશ્ય તું बृहती-મહાન वयः-બળયુક્ત छन्दः-પરાક્રમને પ્રેરણા કર-પ્રાપ્ત કર.

उक्षा-[વીર્ય] સેચન કરનાર વૃષભ-બળદ સમાન શૂદ્ર તું वयः-અતિ બળ માટે ककुप्-દિશાઓ અને छन्दः-આનંદની વૃદ્ધિ કર.

ऋषभः-ગતિશીલ પશુ સમાન નોકર તું वयः-બળની સાથે सतोबृहती-મહાન छन्दः-સ્વતંત્રતાની પ્રેરણા કર-પ્રાપ્ત કર. (૯)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ બ્રાહ્મણ આદિ વર્ણોને સ્વતંત્ર કરીને, વેદ આદિનો પ્રચાર કરીને, આળસ આદિનો ત્યાગ કરીને, શત્રુઓનું નિવારણ કરીને મહાન બળની સદા વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ (૯)

अ॒न॒ड्वान्वयः॑ प॒ङ्क्तिश्छन्दो॑ धे॒नुर्वयो॒ जग॑ती॒ छन्द॒स्त्र्यवि॒र्वय॑स्त्रि॒ष्टुप् छन्दो॑ दित्य॒वाड् वयो॑ वि॒राट् छन्द॒: पञ्चा॑वि॒र्वयो गाय॒त्री छन्द॑स्त्रिव॒त्सो वय॑ऽ उ॒ष्णिक् छन्द॑स्तु॒र्य॒वाड् वयो॑ऽनु॒ष्टुप् छन्दः॑ ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! अनड्वान्-ગાય અને બળદની સમાન બળવાન બનીને તું पंक्तिः-પ્રકટ छन्दः-સ્વતંત્ર वयः-બળની પ્રેરણા કર.

धेनुः-દૂધ આપનારી ગાય સમાન તું जगती-જગતના ઉપકારક छन्दः-આનંદની वयः-કામનાઓની વૃદ્ધિ કર.

त्र्यविः-ત્રણ-ઘેંટી, બકરી અને ગાયના અધ્યક્ષ સમાન વૃદ્ધિયુક્ત બનીને તું त्रिष्टुप्-જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના માટે छन्दः-સ્વતંત્ર वयः-ઉત્પત્તિની વૃદ્ધિ કર.

दित्यवाड्-પૃથિવી-ભૂમિ ખેડવાથી ઉત્પન્ન થયેલ જવ આદિને પ્રાપ્ત કરાવનારી ક્રિયા સમાન તું विराट्-વિવિધ પ્રકાશયુક્ત छन्दः-આનંદકારક वयः-પ્રાપ્તિની વૃદ્ધિ કર.

पञ्चाविः-પાંચ ઈન્દ્રિયોની રક્ષા હેતુ ઔષધિ સમાન તું गायत्री-ગાયત્રી छन्दः-મંત્રના वयः-વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ કર त्रिवत्स-જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસનાના ઈચ્છુક સમાન તું उष्णिक्-દુઃખનાશક छन्दः-સ્વતંત્ર वयः-પરાક્રમની વૃદ્ધિ કર.

तुर्यवाट्-ચારેય વેદોની પ્રાપ્તિ કરાવનાર પુરુષની સમાન તું अनुष्टुप्-અનુકૂળ સ્થિતિ માટે छन्दः-સુખસાધક वयः-ઈચ્છાની પ્રતિદિન વૃદ્ધિ કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ બળદ વગેરેની રક્ષા કરીને, ખેડૂત લોકો અન્ન આદિ ઉત્પન્ન કરીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ સ્ત્રી-પુરુષ વિદ્યાઓનો પ્રચાર કરીને સર્વને આનંદિત કરે છે. (૧૦)

इन्द्राग्नीऽअव्यथमानामिष्टकां दृꣳहतं युवम्।
पृष्ठेन द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षं च विबाधसे॥ ११॥

પદાર્થ : હે इन्द्राग्नी-વિદ્યુત્ અને સૂર્યસમાન વિદ્યમાન સ્ત્રી-પુરુષો ! युवम्-તમે બન્ને अव्यथमानाम्-અચલ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને इष्टकाम्-ઈંટ સમાન ગૃહાશ્રમને दृंहतम्-દૃઢ કરો.

જેમ द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને ભૂમિ पृष्ठेन-પીઠથી अन्तरिक्षम्-આકાશને બાધિત કરે છે, તેમ તમે દુઃખો અને શત્રુઓને બાધિત-પીડિત કરો.

હે પુરુષ ! જેમ તું સ્વપત્નીની પીડાને विबाधसे-વિશેષ રૂપથી દૂર કરે છે, તેમ એ સ્ત્રી પણ તારી સર્વ પીડાને દૂર કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યુત્ અને સૂર્ય જલ વરસાવીને ઔષધિ આદિની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ કુટુંબની વૃદ્ધિ કરે.

જેમ પ્રકાશ અને પૃથિવી આકાશને આચ્છાદિત કરે છે, તેમ ગૃહાશ્રમના વ્યવહારને સ્ત્રી-પુરુષ સુશોભિત કરે. (૧૧)

विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीमन्तरिक्षं यच्छान्तरिक्षं दृꣳहान्तरिक्षं मा हिꣳसीः। विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय। वायुष्ट्वाभिपातु मह्या स्वस्त्या छर्दिषा शन्तमेन तया

देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद॥ १२॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! विश्वकर्मा-સર્વ શુભકર્મોમાં કુશળ પતિ જેમ व्यचस्वतीम्-પ્રશસ્ત વિદ્વાન્ અને સત્કારવાળી, प्रथस्वतीम्-ઉત્તમ વિસ્તૃત વિદ્યાવાળી, अन्तरिक्षस्य-પ્રકાશના पृष्ठे-એક ભાગમાં त्वा-તને सादयतु-સ્થાપિત કરે.

તું विश्वस्मै-સર્વ प्राणाय-પ્રાણ, अपानाय-અપાન, व्यानाय-વ્યાન અને उदानाय-ઉદાનરૂપ શરીરના વાયુ તથા प्रतिष्ठायै-પ્રતિષ્ઠા, चरित्राय-શુભ કર્મોના આચરણ માટે अन्तरिक्षम्-જલાદિને यच्छ-આપ્યા કર ; अन्तरिक्षम्-પ્રશંસિત શુદ્ધ જલયુક્ત અન્ન અને ધન આદિની दृंह-વૃદ્ધિ કર; अन्तरिक्षम्-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત રોગનાશક આકાશમાં રહેલાં સર્વ પદાર્થોનો माहिंसीः-નાશ ન કર.

જે त्वा-તને वायुः-પ્રાણ સમાન પ્રિય પતિ मह्या-स्वस्त्या-સુખરૂપ ક્રિયાથી, छर्दिषा-પ્રકાશથી शन्तमेन-અત્યંત સુખકારક વિજ્ઞાનથી તારી अभिपातु-સર્વત્રથી રક્ષા કરે છે, તેથી તું तया-તે देवतया-દિવ્ય સુખ પ્રદાન કરનાર વિદ્યમાન પ્રતિરૂપ દેવતા સાથે अङ्गिरस्वत्-વ્યાપક વાયુની સમાન ध्रुवा-નિશ્ચલ જ્ઞાનથી યુક્ત सीद-સ્થિર રહે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ પુરુષ સ્ત્રીને શુભ કર્મોમાં નિયુક્ત કરે, તેમ સ્ત્રી પણ પોતાના પતિને પ્રેરિત કરે જેથી નિરંતર આનંદની વૃદ્ધિ થાય. (૧૨)

राज्ञ्यसि प्राची दिग्विराडसि दक्षिणा दिक् सम्राडसि प्रतीची दिक् स्वराडस्युदीची दिगधिपत्न्यसि बृहती दिक्॥ १३॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું प्राची-પૂર્વ दिक्-દિશા સમાન राज्ञी-પ્રકાશમાન असि-છે; दक्षिणा-દક્ષિણ दिक्-દિશા સમાન विराट्-વિવિધ વિનય, વિદ્યા અને પ્રકાશયુક્ત असि-છે; प्रतीची--પશ્ચિમ दिक्-દિશા સમાન सम्राट्-ચક્રવર્તી રાજા સમાન ઉત્તમ સુખયુક્ત પૃથિવી પર પ્રકાશમાન असि-છે; उदीची-ઉત્તર दिक्-દિશાની સમાન स्वराट्-સ્વયં પ્રકાશમાન असि-છે; बृहती-મહાન दिक्-ઉપર અને નીચેની દિશા સમાન अधिपत्नी-ઘરમાં અધિકાર પ્રાપ્ત કરેલી પત્ની असि-છે તેથી તું સર્વ પતિ આદિને તૃપ્ત કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ દિશાઓ સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, સર્વને સ્થાન આદિ બતાવનાર છે અને ક્ષોભ રહિત છે, તેમ સ્ત્રી પણ શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવથી યુક્ત બને. (૧૩)

विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे ज्योतिष्मतीम्। विश्वस्मै प्राणायाऽपानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ। वायुष्टेऽधिपतिस्तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद॥ १४॥

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે ज्योतिष्मतीम्-અતિ વિજ્ઞાનવાળી त्वा-તને विश्वस्मै-સર્વ प्राणाय-પ્રાણ, अपानाय-અપાન, व्यानाय-વ્યાનની પુષ્ટિ માટે अन्तरिक्षस्य-જલના पृष्ठे-ઉપરના ભાગમાં विश्वकर्मा-સર્વ શુભ કર્મોના ઇચ્છુક પતિ सादयतु-સ્થાપિત કરે; તેથી તું विश्वम्-સંપૂર્ણ ज्योतिः-વિજ્ઞાનને यच्छ-

ગ્રહણ કર. (૧૪)

જે वायुः-પ્રાણ સમાન પ્રિય ते-તારો अधिपतिः-સ્વામી છે तया-તે देवतया-દેવ સ્વરૂપ પતિની સાથે ध्रुवा-દૃઢ अङ्गिरस्वत्-સૂર્ય સમાન सीद-સ્થિર રહે. (૧૪)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સ્વયં વિદુષી બનીને શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ માટે પોતાના સંતાનોને સદા વિજ્ઞાન પ્રદાન કરે. (૧૪)

नभ॑श्च नभ॒स्य॑श्च॒ वार्षि॑कावृ॒तूऽअ॒ग्नेर॑न्तःश्ले॒षो॑ऽसि कल्पे॑तां॒ द्यावा॑पृथिवी कल्प॑न्ता॒माप॒ऽओष॑धयः॒ कल्प॑न्ताम॒ग्नयः॒ पृथ॒ङ् मम॒ ज्यैष्ठ्या॑य॒ सव्र॑ताः। येऽअ॒ग्नयः॒ सम॑नसोऽन्त॒रा द्यावा॑पृथिवीऽइ॒मे। वार्षि॑कावृ॒तूऽअ॑भिकल्प॑माना॒ऽइन्द्र॑मिव दे॒वाऽअ॑भिसंवि॑शन्तु॒ तया॑ दे॒वत॑याङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वे सीद॑तम्॥ १५॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને-જે नभः-વાદળોને બાંધનાર શ્રાવણ મહિનો છે च-અને नभस्यः-વર્ષાનો મધ્યભાગી ભાદરવો મહિનો છે च-એ બન્ને वार्षिकौ-વર્ષા ऋतू-ઋતુના મહિનાઓ मम-મારા ज्येष्ठ्याय-પ્રશંસા પાત્ર છે, જેમાં अग्नेः-ઉષ્ણ તથા अन्तःश्लेषः-જેવા મધ્યમાં શીત સ્પર્શ असि-થાય છે. જેથી द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિ સમર્થ બને છે, તેના ભોગમાં તમે બન્ને कल्पेताम्-સમર્થ બનો.

જેમ ઋતુયોગ आपः-જલ અને ओषधयः-ઔષધિઓ વા अग्नयः-અગ્નિ पृथक्-જલથી અલગ સમર્થ બને છે, તેમ सव्रताः-સમાન વ્રત શ્રેષ્ઠ નિયમ समनसः-સમાનમન-જ્ઞાન આપનાર अग्नयः-તેજસ્વી વિદ્વાન્ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને.

ये-જે इमे-द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિ વર્ષાઋતુના ગુણોમાં સમર્થ બને છે તેને वार्षिकौ-ऋतू-વર્ષાઋતુરૂપ अभिकल्पमानाः-સર્વત્રથી સુખ માટે સમર્થ કરતાં देवाः-વિદ્વાન इन्द्रमिव-વિદ્યુત્ સમાન પ્રકાશ અને બળને तया-તે देवतया-દિવ્યવર્ષા સાથે अभिसंविशन्तु-સન્મુખ થઈને સારી રીતે રહે, अन्तरा-તે બન્ને મહિનાઓમાં પ્રવેશ કરીને अङ्गिरस्वत्-પ્રાણની સમાન પરસ્પર પ્રેમયુક્ત ध्रुवे-નિશ્ચલ सीदतम्-રહો. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સમાન વર્ષાઋતુમાં [ઉપયોગી] સામગ્રીનો [પ્રથમથી] સંગ્રહ કરી લેવો જોઈએ. જેથી વર્ષાઋતુમાં સર્વ સુખ પ્રાપ્ત થાય. (૧૫)

इ॒षश्चो॒र्जश्च॑ शा॒र॒दावृ॒तूऽअ॒ग्नेर॑न्तःश्ले॒षो॑ऽसि कल्पे॑तां॒ द्यावा॑पृथिवी कल्प॑न्ता॒माप॒ऽओष॑धयः॒ कल्प॑न्ताम॒ग्नयः॒ पृथ॒ङ् मम॒ ज्यैष्ठ्या॑य॒ सव्र॑ताः। येऽअ॒ग्नयः॒ सम॑नसोऽन्त॒रा द्यावा॑पृथिवीऽइ॒मे। शा॒र॒दावृ॒तूऽअ॑भिकल्प॑माना॒ऽइन्द्र॑मिव दे॒वाऽअ॑भिसंवि॑शन्तु॒ तया॑ दे॒वत॑याङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वे सीद॑तम्॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ इषः-કામના યોગ્ય આસો મહિનો છે च-અને ऊर्जः-જેમાં સર્વ પદાર્થ

બલ પ્રાપ્ત કરે છે તે કારતક મહિનો છે च-એ બન્ને મહિનાઓ शारदौ-શરદ ऋतू-ઋતુના મહિનાઓ मम-મારા ज्यैष्ठ्याय:-પ્રશંસાપાત્ર સુખ આપવા માટે છે, જેના अन्त:श्लेष:-મધ્યમાં કિંચિત્ શીતસ્પર્શ असि-થાય છે, તે द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિને कल्पेताम्-સમર્થ કરે છે, आप:-જલ અને ओषधय:-ઔષધિઓ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને છે, सव्रता:-સર્વ કાર્યોના નિયમ કરનાર अग्नय:-શરીરના અગ્નિ पृथक्-અલગ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને છે ये-જે अन्तरा-મધ્યમાં समनस:-મન સંબંધી अग्नय:-બહારનો અગ્નિ इमे-એ द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિને कल्पेताम्-સમર્થ કરે.

शारदौ-શરદ ऋतू-ઋતુના બન્ને મહિનાઓમાં इन्द्रमिव-પરમ ઐશ્વર્ય સમાન अभिकल्पमाना:-સર્વત્રથી આનંદની ઈચ્છા કરતાં देवा:-વિદ્વાનો अभिसंविशन्तु-પ્રવેશ કરે, तया-તે देवतया-દિવ્ય શરદ ઋતુ રૂપ દેવતાના નિયમની સાથે ध्रुवे-નિશ્ચલ સુખ सीदतम्-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ તમે ज्यैष्ठयाय-પ્રશંસિત સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે યોગ્ય છો. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! શરદ ઋતુમાં જે ઉપયોગી પદાર્થ છે, તેને સમ્યક્ રીતે સંસ્કૃત કરીને તમે તેનું સેવન કરો. (૧૬)

आयुर्मे पाहि प्राणं मे पाह्यपानं मे पाहि व्यानं मे पाहि चक्षुर्मे पाहि श्रोत्रं मे पाहि वाचम्मे पिन्व मनो मे जिन्वात्मानम्मे पाहि ज्योतिर्मे यच्छ॥ १७॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! मे-મારા आयु:-જીવનની पाहि-રક્ષા કર; मे-મારા प्राणम्-પ્રાણની पाहि-રક્ષા કર; मे-મારા अपानम्-અપાનવાયુની पाहि-રક્ષા કર; मे-મારા व्यानम्-વ્યાનની पाहि-રક્ષા કર; मे-મારા चक्षु:-નેત્રોની पाहि-રક્ષા કર; मे-મારા श्रोत्रम्-કાનોની पाहि-રક્ષા કર; मे-મારી वाचम्-વાણીને पिन्व-સુશુક્ષિાથી યુક્ત કર; मे-મારા मन:-મનને जिन्व-તૃપ્ત કર; मे-મારા आत्मानम्-ચેતન આત્માની पाहि-રક્ષા કર અને मे-મને ज्योति:-વિજ્ઞાન यच्छ-પ્રદાન કર. (૧૭)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી પુરુષની અને પુરુષ સ્ત્રીની જેમ આયુની વૃદ્ધિ થાય, તેમ નિત્ય આચરણ કરે. (૧૭)

मा च्छन्द: प्रमा च्छन्द: प्रतिमा च्छन्दोऽअस्त्रीवयश्छन्द: पङ्क्ति श्छन्दऽउष्णिक् छन्दो बृहती छन्दोऽनुष्टुप् छन्दो विराट् छन्दो गायत्री छन्दस्त्रिष्टुप् छन्दो जगती छन्द:॥ १८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે मा-પરિમાણ-માપ માટે छन्द:-આનંદકારક છે, प्रमा-પ્રમાણનો હેતુ બુદ્ધિ छन्द:-બળ છે, प्रतिमा-પ્રતીતિ નિશ્ચયની હેતુ ક્રિયા छन्द:-સ્વતંત્રતા છે, अस्त्रीवय:-બળ અને કાન્તિ કરનાર અન્નાદિ પદાર્થ छन्द:-બલકારી વિજ્ઞાન છે, पङ्क्ति:-પાંચ અવયવોથી યુક્ત યોગ छन्द:-પ્રકાશ છે, उष्णिक्-સ્નેહ छन्द:-પ્રકાશ છે, बृहती-મહાન પ્રવૃત્તિ छन्द:-આશ્રય છે, अनुष्टुप्-સુખોનું આલંબન छन्द:-ભોગ છે, विराट्-વિવિધ વિદ્યાઓનો પ્રકાશ छन्द:-વિજ્ઞાન છે, गायत्री-ગાયકના રક્ષક ઈશ્વર छन्द:-તેનો બોધ છે, त्रिष्टुप्-ત્રણે સુખોના આશ્રય छन्द:-આનંદકારી છે અને जगती-જેમાં સર્વ જગત્ ગતિ કરે છે તે छन्द:-પરાક્રમ છે તેને ગ્રહણ કરીને તથા જાણીને સર્વને સુખયુક્ત કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રમાણ = બુદ્ધિ આદિ દ્વારા ધર્મયુક્ત કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સુખોથી શોભાયમાન બને છે. (૧૮)

पृथिवी छन्दो॒ऽन्तरि॑क्षं॒ छन्दो॒ द्यौश्छन्द॒: समा॒श्छन्दो॒ नक्ष॑त्राणि॒ छन्दो॒ वाक् छन्दो॒ मन॒श्छन्द॑: कृ॒षिश्छन्दो॒ हिर॑ण्यं॒ छन्दो॒ गौश्छन्दो॒ऽजाच्छन्दोऽ-श्व॒श्छन्द॑: ॥ १९ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તને જેમ पृथिवी-ભૂમિ छन्दः-સ્વતંત્ર છે, अन्तरिक्षम्-આકાશ छन्दः-આનંદકારી છે, द्यौः-પ્રકાશ छन्दः-વિજ્ઞાન છે, समाः-વર્ષ छन्दः-બુદ્ધિ છે, नक्षत्राणि-નક્ષત્રો छन्दः-સ્વતંત્ર છે, वाक्-વાણી छन्दः-સત્ય છે, मनः-મન छन्दः-નિષ્કપટ છે, कृषिः-ખેતી छन्दः-ઉત્પત્તિ છે, हिरण्यम्-સુવર્ણ छन्दः-સુખદાયી છે, गौः-ગાય छन्दः-આનંદકારક છે, अजा-બકરી छन्दः-સુખકારક છે અને अश्वः-ઘોડા આદિ छन्दः-સ્વાધીન છે, તેમ વિદ્યા, વિનય અને ધર્માચરણમાં, સ્વાધીનતાથી આચરણ કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ સ્વચ્છ-શુદ્ધ વિદ્યા અને ક્રિયા-આચરણથી સ્વતંત્રતાપૂર્વક પૃથિવી આદિ પદાર્થોના ગુણ આદિને જાણીને, ખેતી આદિ કર્મોથી સુવર્ણ આદિ પ્રાપ્ત કરીને, ગાય આદિ પશુઓની સમ્યક્ રક્ષા કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૯)

अ॒ग्निर्दे॒वता॒ वातो॑ दे॒वता॒ सूर्यो॑ दे॒वता॑ च॒न्द्रमा॑ दे॒वता वस॑वो दे॒वता॑ रु॒द्रा दे॒वता॑ऽऽदि॒त्या दे॒वता॑ म॒रुतो॑ दे॒वता॒ विश्वे॑ दे॒वा दे॒वता॒ बृह॒स्पति॑र्दे॒वतेन्द्रो॑ दे॒वता॒ वरु॑णो दे॒वता॑ ॥ २० ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમોને યોગ્ય છે, કે अग्निः-પ્રસિદ્ધ અગ્નિ देवता-દિવ્ય ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, वातः-વાયુ देवता-શુદ્ધ ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, सूर्यः-સૂર્ય देवता-ઉત્તમ ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, चन्द्रमाः-ચંદ્રમા देवता-શુદ્ધ ગુણ યુક્ત હોવાથી દેવતા, वसवः-પ્રસિદ્ધ આઠ અગ્નિ આદિ વા પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાન્ देवता-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી, रुद्राः-પ્રાણ આદિ અગિયાર વા મધ્યમ કક્ષાના વિદ્વાન देवता-શુદ્ધ ગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, आदित्याः-બાર મહિના વા ઉત્તમ કક્ષાના વિદ્વાનો देवता-શુદ્ધ હોવાથી દેવતા, मरुतः-મનન કર્તા વિદ્વાન, ઋત્વિજો देवता-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, विश्वे-સર્વ देवता-શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત વા દિવ્ય પદાર્થ देवता-દેવસંજ્ઞાયુક્ત છે. बृहस्पतिः-બૃહદ્વચન વા બ્રહ્માંડના રક્ષક પરમાત્મા देवता-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા, इन्द्रः-વિદ્યુત્ વા ઉત્તમ ધન देवता-દિવ્યગુણયુક્ત હોવાથી દેવતા અને वरुणः-જલ વા શ્રેષ્ઠ ગુણવાળા પદાર્થો देवता-શ્રેષ્ઠ ગુણોયુક્ત છે. તેને તમે ઉત્તમ રીતે જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે દિવ્ય પદાર્થો અને વિદ્વાનો છે, તેઓ દિવ્ય-ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત હોવાથી 'દેવતા' કહેવાય છે.

જે દેવતાઓના દેવતા હોવાથી મહાદેવ, સર્વના ધારણકર્તા, રચયિતા, પાલનકર્તા, વ્યવસ્થાપક, પ્રલયકર્તા, સર્વશક્તિમાન અને અજન્મા છે, તે પરમેશ્વરને પણ સર્વના અધિષ્ઠાતા પરમાત્મા સર્વ મનુષ્યો જાણે. (૨૦)

मूर्द्धासि राड् ध्रुवासि धरुणा धर्त्र्यसि धरणी।
आयुषे त्वा वर्चसे त्वा कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा॥ २१॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું સૂર્ય સમાન मूर्द्धा-ઉત્તમ असि-છે, राट्-પ્રકાશમાન નિશ્ચલ સમાન ध्रुवा-નિશ્ચલ શુદ્ધ असि-છે, धरुणा-પુષ્ટિ કરનાર धरणी-આધારરૂપ પૃથિવી સમાન धर्त्री-ધારણ કરનારી असि-છે, તે त्वा-તને आयुषे-જીવન માટે તે त्वा-તને वर्चसे-અન્ન માટે તે त्वा-તને कृष्यै-ખેતી માટે त्वा-તને क्षेमाय-રક્ષા માટે હું સર્વત્રથી ગ્રહણ કરું છું. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ ઉત્તમાંગરૂપ શિર દ્વારા સર્વનું જીવન, [જેના પર] રાજ્ય કરવાથી લક્ષ્મી, ખેતી કરવાથી અન્ન આદિ અને નિવાસ કરવાથી રક્ષા થાય છે.

તેમ એ સર્વની આધારભૂતા અને માતાની સમાન માન્ય કરનારી ભૂમિ છે, તેમજ સજ્જન વિદુષી સ્ત્રી હોવી જોઈએ. (૨૧)

यन्त्री राड् यन्त्र्यसि यमनी ध्रुवासि धरित्री।
इषे त्वोर्जे त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा॥ २२॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું यन्त्री-યંત્ર સમાન સ્થિત, राट्-પ્રકાશમાન, यन्त्री-યંત્રોની નિમિત્ત પૃથિવી સમાન असि-છે, यमनी-આકર્ષણ શક્તિથી નિયમન કરનારી ध्रुवा-આકાશ સમાન દૃઢ નિશ્ચલ, धर्त्री-સર્વ ગુણોને ધારણ કરનારી असि-છે, त्वा-તને इषे-ઇચ્છા સિદ્ધિ માટે, त्वा-તને ऊर्जे-પરાક્રમની પ્રાપ્તિ માટે, त्वा-તને रय्यै-લક્ષ્મી માટે અને त्वा-તને पोषाय-પુષ્ટિ માટે હું ગ્રહણ કરું છું. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી ભૂમિ સમાન ક્ષમાયુક્ત, આકાશ સમાન ક્ષોભ રહિત-નિશ્ચલ અને યંત્રોની સમાન જિતેન્દ્રિય હોય છે, તે કુલદીપિકા હોય છે. (૨૨)

आशुस्त्रिवृद्भान्तः पञ्चदशो व्योमा सप्तदशो धरुणऽएकविँशः प्रतूर्त्तिरष्टादशस्तपो नवदशोऽभीवर्त्तः सविँशो वर्चो द्वाविँशः सम्भरणस्त्रयोविँशो योनिश्चतुर्विँशः। गर्भाः पञ्चविँश ओजस्त्रिणवः क्रतुरेकत्रिँशः प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिँशो ब्रध्नस्य विष्टपं चतुस्त्रिँशो नाकः षट्त्रिँशो विवर्त्तोऽष्टाचत्वारिँशो धर्त्रं चतुष्टोमः॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે સંવત્સર-વર્ષમાં आशुः-શીઘ્ર त्रिवृत्-શીત, ઉષ્ણ અને શીતોષ્ણ ત્રણ પ્રકારનો भान्तः-પ્રકાશ છે, पञ्चदशः-પંદર પ્રકારના व्योमा-આકાશની સમાન વિસ્તાર યુક્ત છે, सप्तदशः-

સત્તર પ્રકારના धरुण:-ધારણ ગુણ છે, एकविंश:-એકવીસ પ્રકારની प्रतूर्त्ति:-શીઘ્ર ગતિ છે, अष्टादश:-અઢાર પ્રકારના तप:-સંતાપી ગુણ છે, नवदश:-ઓગણીસ પ્રકારના अभीवर्त्त:-મુખ્ય વર્તાવ છે, सविंश:-એકવીસ પ્રકારની वर्च:-દીપ્તિ છે, द्वाविंश:-બાવીસ પ્રકારના सम्भरण:-ઉત્તમ ધારણ કરવા જેવા ગુણ છે, त्रयोविंश:-તેવીસ પ્રકારના योनि:-સંયોજક અને વિયોજક ગુણ છે, चतुर्विंश:-ચોવીસ પ્રકારની गर्भा:-ગર્ભ ધારણની શક્તિ છે, पंचविंश:-પચ્ચીસ પ્રકારના ओज:-પરાક્રમ त्रिणव:-સત્તાવીસ પ્રકારના क्रतु:-કર્મ વા બુદ્ધિ છે, एकत्रिंश:-એકત્રીસ પ્રકારની प्रतिष्ठा-સર્વની સ્થિતિની નિમિત્ત ક્રિયા છે, त्रयस्त्रिंश:-તેત્રીસ પ્રકારની ब्रध्नस्य-મહાન ઈશ્વરની विष्टपम्-વ્યાપિત છે, चतुस्त्रिंश:-ચોત્રીસ પ્રકારનો नाक:-આનંદ છે षट्त्रिंश:-છત્રીસ પ્રકારના विवर्त्त:-વિવિધ પ્રકારથી વર્તાવ છે, अष्टाचत्वारिंश:-અડતાલીસ પ્રકારના धर्त्रम्-ધારણ ગુણ છે તથા चतुष्टोम:-ચાર સ્તુતિઓના આધાર છે, તેને સંવત્સર જાણો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે સંવત્સર-વર્ષના સંબંધી ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન આદિ અવયવો છે, તેના સંબંધથી એ મંત્રોક્ત વ્યવહાર થાય છે, તેમ તમે જાણો. (૨૩)

अग्नेर्भागोसि दीक्षायाऽआधिपत्यं ब्रह्म स्पृतं त्रिवृत्स्तोमः। इन्द्रस्य भागोऽसि विष्णोराधिपत्यं क्षत्रꣳ स्पृतं पञ्चदश स्तोमः। नृचक्षसां भागोऽसि धातुराधिपत्यं जनित्रꣳस्पृतꣳसप्तदश स्तोमः। मित्रस्य भागोऽसि वरुणस्याधिपत्यं दिवो वृष्टिर्वात स्पृतऽएकविꣳश स्तोमः॥ २४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે તું अग्ने:-સૂર્યના भाग:-વિભાગને યોગ્ય સંવત્સરના સમાન असि-છે, તે તું दीक्षाया:-બ્રહ્મચર્ય આદિની દીક્ષાનું स्पृतम्-પ્રીતિથી સેવન કરતાં आधिपत्यम्-ब्रह्म-બ્રહ્મજ્ઞ કુલના અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે त्रिवृत्-શરીર, વાણી અને માનસ સાધનોથી શુદ્ધ स्तोम:-સ્તુતિ યોગ્ય, इन्द्रस्य-વિદ્યુત્ વા ઉત્તમ ઐશ્વર્યના भाग:-વિભાગ સમાન असि-છે; તું विष्णो:-વ્યાપક ઈશ્વરની स्पृतम्-પ્રીતિથી સેવા યોગ્ય क्षत्रम्-ક્ષત્રિયોના ધર્મને અનુકૂળ રાજકુળના आधिपत्यम्-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું पञ्चदश:-પંદરમાં स्तोम:-સ્તુતિકર્તા, नृचक्षसाम्-મનુષ્યોથી વ્યાખ્યા કરવા યોગ્ય પદાર્થોના भाग:-વિભાગ સમાન असि-છે, તે તું धातु:-ધારણકર્તાના स्पृतम्-સેવા जनित्रम्-જન્મ [સૃષ્ટિ] અને आधिपत्यम्-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું सप्तदश:-સત્તરમાં स्तोम:-સ્તુતિ યોગ્ય मित्रस्य-પ્રાણના भाग:-વિભાગની સમાન असि-છે, તે તું वरुणस्य-શ્રેષ્ઠ જલ સમૂહના आधिपत्यम्-અધિપતિ-ભાવને પ્રાપ્ત કર.

જે તું वात:-स्पृत:-વાયુ સમાન સેવિત અને एकविंश:-એકવીસમા स्तोम:-સ્તુતિના સાધન સમાન असि-છે, તે તું दिव:-પ્રકાશરૂપ સૂર્યથી वृष्टि:-વર્ષા થવા માટે હવન આદિ ઉપાય કર. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે બાલ્યાવસ્થાથી લઈને સજ્જનો દ્વારા ઉપદેશ કરેલી વિદ્યાને ગ્રહણ કરવા માટે પ્રયત્ન

પૂર્વક આધિપતિત્વ પ્રાપ્ત કરે છે તેઓ-

સ્તુતિ યોગ્ય કર્મો કરીને, શ્રેષ્ઠ બનીને, પ્રકાર સહિત [ભેદોપભેદો સહિત] કાલને જાણીને અન્યોને બતાવી શકે છે. (૨૪)

वसूनां भागोऽसि रुद्राणामाधिपत्यं चतुष्पात् स्पृतं चतुर्विꣳश स्तोमः। आदित्यानां भागोऽसि मरुतामाधिपत्यं गर्भाः स्पृताः पञ्चविꣳश स्तोमः। अदित्यै भागोऽसि पूष्णऽआधिपत्यमोज स्पृतं त्रिणव स्तोमः। देवस्य सवितुर्भागोऽसि बृहस्पतेराधिपत्यꣳ समीचीर्दिश स्पृताश्चतुष्टोम स्तोमः॥ २५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે તું वसूनाम्-અગ્નિઆદિ આઠ વા પ્રથમ કોટિના વિદ્વાનોના भागः-સેવવા યોગ્ય असि-છે, તે તું रुद्राणाम्-દશપ્રાણ આદિ અગિયારમો જીવ વા મધ્યમકોટિના વિદ્વાનના आधिपत्यम्-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું चतुर्विंशः-ચોવીસ પ્રકારના स्तोमः-સ્તુતિકર્તા, आदित्यानाम्-બાર મહિનાઓ વા ઉત્તમ કોટિના વિદ્વાનોના भागः-સેવન યોગ્ય असि-છે, તે તું चतुष्पात्-ગાય આદિ પશુઓનું स्पृतम्-સેવન કર; તથા मरुताम्-મનુષ્ય વા પશુઓના आधिपत्यम्-અધિપતિ-ભાવને પ્રાપ્ત કર.

જે તું पञ्चविंशः-પચીસ પ્રકારના स्तोमः-સ્તુતિ યોગ્ય, अदित्यै-અખંડિત આકાશના भागः-વિભાગ સમાન असि-છે તે તું पूष्णः-પુષ્ટિકારક પૃથિવીથી स्पृतम्-સેવન યોગ્ય ओजः-બળને પ્રાપ્ત થઈને आधिपत्यम्-અધિકારને प्राप्नुहि-પ્રાપ્ત કર.

જે તું त्रिणवः-સત્તાવીસ પ્રકારના स्तोमः-સ્તુતિ યોગ્ય, देवस्य-સુખદાતા सवितुः-પિતાના भागः-વિભાગ असि-છે, તે તું बृहस्पतेः-મહાન વેદવાણીના પાલક ઈશ્વરે આપેલ आधिपत्यम्-અધિકારને પ્રાપ્ત કર.

જે તું चतुष्टोमः-ચારે વેદોથી કહેવા યોગ્ય સ્તુતિકર્તા છે, તે તું गर्भाः-ગર્ભની સમાન વિદ્યાદિ શુભ ગુણોથી આચ્છાદિત स्पृताः-પ્રીતિમાન સજ્જનો જેને જાણે છે, તે समीचीः-સમ્યક્ પ્રાપ્તિના સાધન स्पृताः-પ્રીતિના વિષય दिशः-પૂર્વ દિશાને જાણ. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો સુશીલતા આદિ ગુણોને ગ્રહણ કરે છે, તેઓ વિદ્વાનોને પ્રિય બનીને સર્વના અધિપતિ-ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે.

જે અધિપતિ-અધિષ્ઠાતા હોય, તે મનુષ્યો પ્રત્યે પિતાતુલ્ય વ્યવહાર કરે. (૨૫)

यवानां भागोऽस्ययवानामाधिपत्यं प्रजा स्पृताश्चतुश्चत्वारिꣳश स्तोमः। ऋभूणां भागोऽसि विश्वेषां देवानामाधिपत्यं भूतꣳ स्पृतं त्रयस्त्रिꣳश स्तोमः॥ २६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તું यवानाम्-મળેલાં પદાર્થોનું भागः-સેવન કરનાર શરદ ઋતુની સમાન

असि-છે; જે अयवानाम्-પૃથક્-પૃથક્ ધર્મવાળા પદાર્થોના आधिपत्यम्-અધિપતિભાવને પ્રાપ્ત કરીને स्पृताः-પ્રીતિથી प्रजाः-પાલન યોગ્ય પ્રજાઓને स्पृताः-પ્રસન્ન કરે છે; જે चतुश्चत्वारिंशः-ચુંમાલીસ પ્રકારના स्तोमः-સ્તુતિયોગ્ય, ऋभूणाम्-બુદ્ધિમાનોના भागः-સેવવા યોગ્ય असि-છે; विश्वेषाम्-સર્વ देवानाम्-વિદ્વાનોના भूतम्-થઈ ચૂકેલા स्पृतम्-સેવન કરેલા आधिपत्यम्-અધિકારને પ્રાપ્ત કરીને જે त्रयस्त्रिंशः-તેત્રીસમા स्तोमः-સ્તુતિના વિષય સમાન असि-છે, તે તું અમારા સત્કારને યોગ્ય છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે એ [પૂર્વોક્ત] શરદઋતુના ગુણ કહેલ છે. તેનું યથાવત્ સેવન કરવું જોઈએ. (૨૬)

सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ्मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे हैमन्तिकावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम्॥ २७॥

પદાર્થ : હે મિત્ર ! જે मम-મારા ज्यैष्ठ्याय-વૃદ્ધ શ્રેષ્ઠજનો હોવા માટે सहः-બલકારી માગસર માસ च-અને सहस्यः-બળમાં વિદ્યમાન પોષ માસ च-એ બે મહિનાઓ हैमन्तिकौ ऋतू-હેમન્ત ઋતુમાં તેના ચિહ્ન-લક્ષણ જાણનાર अङ्गिरस्वत्-તે ઋતુના પ્રાણસમાન सीदतम्-સ્થિર છે.

જે ઋતુની अन्तःश्लेषः-મધ્યમાં સ્પર્શ થાય છે તેની સમાન તું असि-છે, તે તું તે ઋતુથી द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિ कल्पेताम्-સમર્થ બને છે, आपः-જલ, ओषधयः-ઔષધિઓ, अग्नयः-શ્વેતિમાયુક્ત અગ્નિ पृथक्-અલગ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને છે, એમ જાણ.

ये-જે अग्नयः-અગ્નિઓની સમાન अन्तरा-અંદર પ્રવેશ થનાર सव्रताः-નિયમધારી समनसः-અવિરુદ્ધ વિચાર કરનારા इमे-આ ध्रुवे-દૃઢ द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિને कल्पन्ताम्-સમર્થ કરે છે.

इन्द्रमिव-ઐશ્વર્યની સમાન हैमन्तिकौ-ऋतू-હેમન્ત ઋતુના બન્ને મહિનાઓ अभिकल्पमानाः-સન્મુખ થઈને સમર્થ કરનારા देवाः-દિવ્યગુણ વિદ્યુત્‌ની સમાન अभिसंविशन्तु-ઘરમાં પ્રવેશ કરે છે, તે સજ્જન तया-તે देवतया-પ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્મા દેવની સાથે પ્રેમબદ્ધ થઈને નિયમથી આહાર અને વિહાર કરીને સુખી રહે. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન લોકો પોતાના સુખ માટે હેમન્ત ઋતુના પદાર્થો સેવન કરે, તેમ તેઓ તેનું અન્ય લોકોને પણ સેવન કરાવે. (૨૭)

एकयास्तुवत प्रजाऽअधीयन्त प्रजापतिरधिपतिरासीत् तिसृभिरस्तुवत ब्रह्मासृज्यत ब्रह्मणस्पतिरधिपतिरासीत्। पञ्चभिरस्तुवत भूतान्यसृज्यन्त भूतानां

पतिरधिपतिरासीत्। सप्तभिरस्तुवत सप्तऋषयोऽसृज्यन्त धाताधिपतिरासीत्॥ २८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે प्रजापतिः-પ્રજાના પાલક अधिपतिः-સર્વના અધ્યક્ષ પરમેશ્વર आसीत्-છે, તેની एकया-એક વાણીથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો અને જેણે સર્વ प्रजाः-પ્રજાને વેદ દ્વારા अधीयन्त-વિદ્યાવાન્ કરેલ છે.

જે ब्रह्मणस्पतिः-વેદના રક્ષક-પાલક अधिपतिः-સર્વના સ્વામી પરમાત્મા आसीत्-છે, જેણે આ ब्रह्म-સકલ વિદ્યાયુક્ત વેદોને असृज्यत-રચેલ છે, તેની तिसृभिः-ત્રણ-પ્રાણ, ઉદાન અને વ્યાન ગતિથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે भूतानि-પૃથિવી આદિ પંચભૂતોને असृज्यन्त-રચેલ છે, જે भूतानाम्-સર્વ ભૂતોના पतिः-રક્ષક, अधिपतिः-રક્ષકોના પણ રક્ષક आसीत्-છે, તેની સર્વ મનુષ્યો पञ्चभिः-સમાનવાયુ, ચિત્ત, બુદ્ધિ, અહંકાર અને મનથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે सप्तऋषयः-પાંચ મુખ્ય પ્રાણ, મહત્તત્વ સમષ્ટિ અને અહંકાર સાત પદાર્થો असृज्यन्त-રચેલ છે, જે धाता-ધારક વા પોષક अधिपतिः-સર્વના સ્વામી आसीत्-છે, તેની सप्तभिः-નાગ, કર્મ, કૃકલ, દેવદત્ત, ધનંજય, ઈચ્છા અને પ્રયત્ન એ સાતથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત સંસારના ઉત્પત્તિકર્તા, ન્યાયાધીશ પરમેશ્વરની સ્તુતિ કરવી જોઈએ. [તેના વિષયમાં] શ્રવણ, મનન અને નિદિધ્યાસન [ધ્યાન કરવાની ઈચ્છા] કરવા જોઈએ.

જેમ હેમન્ત ઋતુમાં સર્વ પદાર્થો શીતળ બને છે, તેમ પરમેશ્વરની ઉપાસના કરવાથી આપ લોકો શાન્તિયુક્ત બનો. (૨૮)

नवभिरस्तुवत पितरोऽसृज्यन्तादितिरधिपत्न्यासीत्। एकादशभिरस्तुवतऽऋतवोऽसृज्यन्तार्त्तवाऽअधिपतयऽआसन्। त्रयोदशभिरस्तुवत मासाऽअसृज्यन्त संवत्सरोऽधिपतिरासीत्। पञ्चदशभिरस्तुवत क्षत्रमसृज्यतेन्द्रोऽधिपतिरासीत्। सप्तदशभिरस्तुवत ग्राम्याः पशवोऽसृज्यन्त बृहस्पतिरधिपतिरासीत्॥ २९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેણે पितरः-રક્ષક મનુષ્ય असृज्यन्त-ઉત્પન્ન કરેલ છે, જ્યાં अदितिः-રક્ષાને યોગ્ય अधिपत्नी-અત્યંત રક્ષક માતા आसीत्-છે, તે પરમાત્માની नवभिः-નવ પ્રાણોથી अस्तुवत-ગુણ પ્રશંસા કરો.

જેણે ऋतवः-વસંત આદિ ઋતુઓ असृज्यन्त-રચી છે, જ્યાં आर्त्तवाः-તે-તે ઋતુઓના ગુણો अधिपतयः-પોતાના વિષયમાં અધિપતિ રૂપમાં आसन्-છે, તેની एकादशभिः-દશ પ્રાણો અગિયારમાં આત્માથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે मासाः-ચૈત્ર આદિ બાર મહિનાઓ असृज्यन्त-રચ્યા છે, पञ्चदशभिः-પંદર તિથિઓ સહિત

संवत्सरः-વર્ષ अधिपतिः-સર્વ કાલના અધિષ્ઠાતા રચેલ आसीत्-છે તેની त्रयोदशभिः-દશ પ્રાણો અને અગિયારમાં જીવાત્મા અને બે પ્રતિષ્ઠાઓથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે इन्द्रः-પરમ સંપત્તિના હેતુ સૂર્ય अधिपतिः-અધિષ્ઠાતા ઉત્પન્ન કરેલ आसीत्-છે, જેણે क्षत्रम्-રાજ્ય વા ક્ષત્રિય કુળને असृज्यत-રચેલ છે, તેને सप्तदशभिः-પગની દશ આંગળીઓ, બે જંઘા, બે ગોઠણ, બે પ્રતિષ્ઠા અને એક નાભિથી ઉપરનું અંગ એ સત્તરની अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે बृहस्पतिः-મહાન પદાર્થોના રક્ષક વૈશ્યને अधिपतिः-રચેલ आसीत्-છે અને ग्राम्याः-ગામમાં રહેનારા पशवः-ગાય આદિ પશુઓ असृज्यन्त-રચ્યા છે, તે પરમેશ્વરની પૂર્વોક્ત સર્વ પદાર્થોથી યુક્ત બનીને अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ-જેણે ઋતુ આદિ પ્રજાના પાલક [પદાર્થો] તથા [ગાય આદિ] પાલન કરવા યોગ્ય [પદાર્થો] રચેલ છે અને જેણે કાલના નિર્માણકર્તા સૂર્ય આદિ સર્વ પદાર્થો ઉત્પન્ન કરેલ છે, તે પરમાત્માની ઉપાસના કરો. (૨૯)

नवदशभिरस्तुवत शूद्रार्याव॑सृज्येतामहोरात्रेऽअधिपत्नीऽआस्ताम्। एमेक॑विंशत्यास्तुवतैक॑शफाः पशवो॑ऽसृज्यन्त वरुणोऽधिपतिरासीत्। त्रयो॑विंशत्यास्तुवत क्षुद्राः पशवो॑ऽसृज्यन्त पूषाधिपतिरासीत्। पञ्च॑विंशत्यास्तुवताऽरण्याः पशवो॑ऽसृज्यन्त वायुरधिपतिरासीत्। सप्तविंशत्यास्तुवत द्यावापृथिवी व्यैतां वस॑वो रुद्राऽआदित्याऽअनुव्यायँस्तऽएवाधिपतयऽआसन्॥ ३०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેણે ઉત્પન્ન કરેલ अहोरात्रे-દિવસ અને રાત્રિ अधिपत्नी-સર્વ કામ કરાવવા અધિકારી-અધિષ્ઠાતા आस्ताम्-છે, જેણે शुद्राच्यौ-શુદ્ર અને આર્ય-દ્વિજ એ બન્ને असृज्येताम्-રચેલ છે, તેની नवदशभिः-દશ પ્રાણ, પાંચ મહાભૂત, મન, બુદ્ધિ, ચિત્ત અને અહંકારથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે ઉત્પન્ન કરેલ वरुणः-જલ अधिपतिः-પ્રાણની સમાન પ્રિય અધિષ્ઠાતા आसीत्-છે, જેણે एकशफाः-એક ખરી વાળા ઘોડા આદિ पशवः-પશુઓ असृज्यन्त-રચેલ છે, તેની एकविंशत्या-મનુષ્યોના એકવીસ અવયવોથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે રચેલા पूषा-પુષ્ટિ કારક ભૂગોળ अधिपतिः-રક્ષા કરનાર आसीत्-છે, જેણે क्षुद्रः-અતિ સૂક્ષ્મ पशवः-પશુઓ असृज्यन्त-રચેલ છે, તેની त्रयोविंशत्या-પશુઓના તેવીસ અવયવોથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે ઉત્પન્ન કરેલા वायुः-વાયુ अधिपतिः-પાલન કરનાર-અધિષ્ઠાતા आसीत्-છે, જેણે आरण्याः-વનના पशवः-સિંહ આદિ પશુઓ असृज्यन्त-રચેલ છે, તેની पञ्चविंशत्या-પચીશ ક્ષુદ્ર પશુઓના અવયવો

અથવા અવયવોની કારીગરી સાથે अस्तुवत-પ્રશંસા કરો.

જેણે રચેલા द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિ व्यैताम्-વિવિધ રૂપોથી પ્રાપ્ત છે, જેની રચનાથી वसवः-અગ્નિ આદિ પદાર્થો વા પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાન, रुद्राः-પ્રાણ આદિ વા મધ્યમ વિદ્વાન, आदित्याः-બાર મહિનાઓ વા ઉત્તમ વિદ્વાન્ अनुव्यायन्-અનુકૂળતાથી ઉત્પન્ન થયા છે, ते एव-તેઓ અગ્નિ આદિ વા વિદ્વાન્ अधिपतयः-અધિષ્ઠાતા आसन्-છે, તેની सप्तविंशत्या-સત્તાવીશ વનના પશુઓના ગુણોથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેણે આર્ય, શૂદ્ર અને ડાકૂ આદિ મનુષ્યો ઉત્પન્ન કરેલ છે, જેણે પ્રાણીઓના સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મ શરીર તથા નાના-મોટા પશુઓ તથા તેના પાલનના સાધન રચેલ છે.

જેની સૃષ્ટિમાં અલ્પવિદ્યા અને પૂર્ણવિદ્યાવાળા વિદ્વાન થયા છે, તે [ઈશ્વર]ને તમે ઉપાસના યોગ્ય માનો. (૩૦)

नवविꣳशत्यास्तुवत वनस्पतयोऽसृज्यन्त सोमोऽधिपतिरासीत्।
एकत्रिꣳशतास्तुवत प्रजाऽअसृज्यन्त यवाश्चायवाश्चाधिपतयऽआसन्।
त्रयस्त्रिꣳशतास्तुवत भूतान्यशाम्यन् प्रजापतिः परमेष्ठ्यधिपतिरासीत्॥ ३१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેના બનાવવાથી सोमः-ઔષધિઓમાં શ્રેષ્ઠ સોમ अधिपतिः-અધિષ્ઠાતા आसीत्-છે, જેણે તે वनस्पतयः-પીપળ આદિ વનસ્પતિઓને असृज्यन्त-રચેલ છે, તે પરમાત્માની नवविंशत्या-ઓગણત્રીસ પ્રકારના વનસ્પતિના ગુણોથી अस्तुवत-સ્તુતિ કરો.

જેણે ઉત્પન્ન કરેલ यवाः-સમષ્ટિરૂપ અર્થાત્ જેના અવયવ મિશ્રિત મળેલા છે તે પર્વત આદિ च-અને ત્રસરેણુ આદિ, अयवाः-જેના અવયવ અમિશ્રિત-પૃથક્ પૃથક્ છે તે પ્રકૃતિના અવયવ સત્ત્વ, રજ અને તમોગુણ च-તથા પરમાણુ આદિ अधिपतयाः-મુખ્ય કારણરૂપ અધ્યક્ષ-અધિષ્ઠાતા आसन्-છે, તે प्रजाः-પ્રસિદ્ધ ઔષધિઓને જેણે असृज्यन्त-રચેલ છે તે ઈશ્વરની एकत्रिंशता-એકત્રીસ પ્રજાના અવયવોથી अस्तुवत-પ્રશંસા કરો.

જેના પ્રભાવથી भूतानि-પ્રકૃતિના પરિણામ મહત્તત્ત્વના ઉપદ્રવ अशाम्यन्-શાન્ત બની જાય છે, જે प्रजापतिः-પ્રજાના રક્ષક परमेष्ठी-પરમેશ્વરની સમાન આકાશમાં વ્યાપક બનીને સ્થિત છે, તે પરમેશ્વર अधिपतिः-અધિષ્ઠાતા आसीत्-છે, તેની त्रयस्त्रिंशता-મહાભૂતોની તેત્રીસ ગુણોથી अस्तुवत-પ્રશંસા કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વર લોકોની રક્ષા માટે વનસ્પતિ આદિ રચી ધારણ અને વ્યવસ્થિત કરી રહેલ છે, તેની જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં વસંત આદિ ઋતુઓના વર્ણનથી અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે તેમ જાણો.

॥ इति चतुर्दशोऽध्यायः ॥



॥ अथ पञ्चदशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

अग्ने जातान् प्रणुदा नः सपत्नान् प्रत्यजातान्नुद जातवेदः।
अधि नो ब्रूहि सुमनाऽअहेडँस्तव स्याम शर्मँस्त्रिवरूथऽउद्भौ॥ १॥

પદાર્થ : હે अग्ने-રાજન્ વા સેનાપતિ ! આપ नः-અમારા जातान्-પ્રસિદ્ધ सपत्नान्-શત્રુઓને प्र + नुद-દૂર કરો.

હે जातवेदः-પ્રસિદ્ધ બળવાન ! આપ अजातान्-અપ્રસિદ્ધ શત્રુઓને नुद-પ્રેરણા કરો અને અમારો अहेडन्-અનાદર ન કરતાં सुमनाः-પ્રશન્નચિત્ત આપ नः-અમારા प्रति-પ્રત્યે अधि + ब्रूहि-અધિક ઉપદેશ કરો. જેથી અમે तव-આપના उद्भौ-ઉત્તમ પદાર્થોથી યુક્ત, त्रिवरूथे-આધ્યાત્મિક, આધિભૌતિક અને આધિદૈવિક એ ત્રણે સુખોવાળા शर्मन्-ઘરમાં स्याम-સુખી રહીએ. (૧)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ સભાસદોએ ગુપ્તચરો દ્વારા પ્રકટ અને અપ્રકટ શત્રુઓનો નિશ્ચય કરીને તેને વશમાં કરવા જોઈએ. કોઈપણ ધાર્મિક પુરુષોનો અનાદર અને અધાર્મિકનો આદર ન કરવો જોઈએ. જેથી સર્વ સજ્જનો વિશ્વાસપૂર્વક રાષ્ટ્રમાં વાસ કરે. (૧)

सहसा जातान् प्रणुदा नः सपत्नान् प्रत्यजातान् जातवेदो नुदस्व।
अधि नो ब्रूहि सुमनस्यमानो वयꣳस्याम प्रणुदा नः सपत्नान्॥ २॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનયુક્ત રાજન્ ! આપ नः-અમારા सहसा-બળની સાથે जातान्-પ્રસિદ્ધ થયેલા सपत्नान्-શત્રુઓને प्रणुद-જીતો, તે प्रति + अजातान्-યુદ્ધમાં છૂપા શત્રુઓના સેવક મિત્રોને नुदस्व-પૃથક્ કરો.

सुमनस्यमानः-ઉત્તમ વિચાર કરતાં આપ नः-અમને अधि + ब्रूहि-અધિકતાથી વિજય વિધાનનો ઉપદેશ કરો. वयम्-અમે આપના સહાયક स्याम-બનીએ. જે नः-અમારા सपत्नान्-વિરોધમાં પ્રવૃત્ત સંબંધીઓને આપ प्र + णुद-મારે, તેને અમે પણ મારીએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે રાજ કર્મચારીઓ શત્રુઓના નિવારણમાં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરતા નથી તેને સારી રીતે દંડ આપવો જોઈએ. જે પોતાના સહાયક હોય, તેનો રાજાએ સત્કાર કરવો જોઈએ. (૨)

षोडशी स्तोम ओजो द्रविणं चतुश्चत्वारिꣳश स्तोमो वर्चो द्रविणम्। अग्नेः पुरीषमस्यप्सो नाम तां त्वा विश्वेऽअभि गृणन्तु देवाः। स्तोमपृष्ठा घृतवतीह

सीद प्रजावदस्मे द्रविणा यजस्व॥ ३॥

પદાર્થ : જે षोडशी-પ્રશંસિત સોળ કળાઓથી યુક્ત स्तोमः-સ્તુતિને યોગ્ય ओजः-પરાક્રમ द्रविणम्-ધન છે, જે चतुश्चत्वारिंश-ચુંમાળીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્યનું આચરણ કરનાર स्तोमः-સ્તુતિનાં સાધન नाम-પ્રસિદ્ધ वर्चः-અધ્યયન द्रविणम्-બળ આપે છે, જે अग्नेः-અગ્નિની पुरीषम्-પૂર્તિ કરનારને પ્રાપ્ત થઈને अप्सः-અન્યના પદાર્થોના ભોગની ઈચ્છાથી રહિત असि-છે, તે त्वा-પુરુષ તથા ताम्-સ્ત્રી ની विश्वे-સ ર્વ देवाः-વિદ્વાનો अभिगृणन्तु-પ્રશંસા કરે. તે તું स्तोमपृष्ठा-ઈષ્ટ સ્તુતિઓને જણાવનારી घृतवती-ઉત્તમ ઘી વગેરે પદાર્થોથી યુક્ત બનીને इह-ગૃહાશ્રમમાં सीद-સ્થિર રહે અને अस्मे-અમારા માટે प्रजावत्-અધિક સંતાનો માટે द्रविणा-ધનને यजस्व-પ્રદાન કરે. (૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સોળ કળાઓથી યુક્ત જગતમાં વિદ્યા અને બળનો વિસ્તાર કરીને, ગૃહાશ્રમ કરીને, વિદ્યા-દાન આદિ શુભ કર્મોને નિરંતર કર્યા કરવા જોઈએ. (૩)

एवश्छन्दो वरिवश्छन्दः शम्भूश्छन्दः परिभूश्छन्दऽआच्छच्छन्दो मनश्छन्दो व्यचश्छन्दः सिन्धुश्छन्दः समुद्रश्छन्दः सरिरं छन्दः ककुप् छन्दस्त्रिककुप् छन्दः काव्यं छन्दोऽअङ्कुपं छन्दोऽक्षरपङ्क्तिश्छन्दः पदपङ्क्तिश्छन्दो विष्टारपङ्क्तिश्छन्दः क्षुरश्छन्दो भ्रजश्छन्दः॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે પરમ પ્રયત્નથી एवः-छन्दः-આનંદદાયક જ્ઞાન છે, वरिवः-સત્ય સેવન-રૂપ छन्दः-સુખદાયક છે, शम्भूः-સુખનો અનુભવ छन्दः-આનંદકારી વ્યવહાર છે, परिभूः-સર્વત્રથી પુરુષાર્થી छन्दः-સત્યનો પ્રકાશક છે, आच्छत्-દોષ નિવારણરૂપ छन्दः-જીવન છે, मनः-સંકલ્પ વિકલ્પાત્મક छन्दः-પ્રકાશ કરનાર છે, व्यचः-શુભગુણોની વ્યાપ્તિ छन्दः-આનંદકારી છે, सिन्धुः-નદીની સમાન ગતિ छन्दः-સ્વતંત્રતા છે, समुद्रः-સમુદ્ર સમાન ગંભીરતા छन्दः-પ્રયોજન સિદ્ધકારી છે, सरिरम्-જલ સમાન મૃદુતા छन्दः-શાન્તિદાયક છે, ककुप्-દિશાઓ સમાન ઉજ્જ્વળ કીર્તિ छन्दः-પ્રતિષ્ઠા આપનાર છે, त्रिक्कुप-અધ્યાત્માદિ ત્રણ સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર કર્મ छन्दः-આનંદદાયક છે, काव्यम्-દીર્ઘદર્શી કવિકૃત કાવ્ય छन्दः-પ્રકાશક વિજ્ઞાનદાયક છે, अङ्कुपम्-તિર્યક્ ગતિયુક્ત જલ छन्दः-ઉપકારી છે, अक्षरपङ्क्तिः-પરલોક छन्दः-આનંદકારી છે, पदपङ्क्तिः-આ લોક छन्दः-સુખદાયક છે, विष्टारपङ्क्तिः-સર્વ દિશાઓ छन्दः-સુખદાયક છે, क्षुरः-છરાની સમાન સર્વ પદાર્થોનો છેદક સૂર્ય छन्दः-વિજ્ઞાન સ્વરૂપ भ्रजः-પ્રકાશમય छन्दः-સ્વચ્છ અને આનંદકારક છે, તેને સુખ માટે સિદ્ધ કરો. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધર્મયુક્ત કર્મ તથા પુરુષાર્થના અનુષ્ઠાનથી પ્રિય બને છે, તેઓ સૃષ્ટિના પદાર્થોથી સુખોને ગ્રહણ કરી શકે છે. (૪)

आ॒च्छच्छन्दः॑ प्र॒च्छच्छन्दः॑ सं॒यच्छन्दो॑ वि॒यच्छन्दो॑ बृ॒हच्छन्दो॑ रथन्त॒रञ्छन्दो॑ निका॒यश्छन्दो॑ विव॒धश्छन्दो॒ गिर॒श्छन्दो॒ भ्रज॒श्छन्दः॑ स॒ꣳस्तुप् छन्दो॑ऽनु॒ष्टुप् छन्द॒ऽए॒व॒श्छन्दो॒ वरि॑व॒श्छन्दो॒ वय॒श्छन्दो॑ वय॒स्कृच्छन्दो॒ विष्प॑र्द्धा॒श्छन्दो॑ विशा॒लं छन्द॑श्छ॒दिश्छन्दो॑ दूरोह॒णं छन्द॑स्त॒न्द्रं छन्दो॑ऽअङ्का॒ङ्कं छन्दः॑ ॥ ५ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ आच्छत्-સારી રીતે પાપ નિવારક કર્મ छन्दः-પ્રકાશ છે, प्रच्छत्-પ્રયત્નથી દુષ્ટ સ્વભાવ દૂર કરાવનાર કર્મ छन्दः-ઉત્સાહ છે, संयत्-સંયમ छन्दः-બળ છે, वियत्-વિવિધ પ્રકારના યત્નો કરવા छन्दः-ધૈર્ય છે, बृहत्-મહાન બુદ્ધિ छन्दः-સ્વતંત્રતા છે, रथन्तरम्-સમુદ્રરૂપ સંસાર પાર કરનાર પદાર્થ छन्दः-સ્વીકાર યોગ્ય છે, निकायः-સંયોગનો હેતુ વાયુ छन्दः-સ્વીકાર યોગ્ય છે विवधः-વિશેષ રીતે પદાર્થોના રહેવાનું સ્થાન અન્તરિક્ષ छन्दः-પ્રકાશ છે, गिरः-ભોગવવા યોગ્ય અન્ન छन्दः-સ્વીકારવા યોગ્ય છે, भ्रजः-પ્રકાશરૂપ અગ્નિ छन्दः-સ્વીકાર યોગ્ય છે, संस्तुप्-શબ્દ, અર્થ અને સંબંધને શ્રેષ્ઠતાથી જણાવનારી વાણી छन्दः-આનંદકારક છે, अनुष्टुप्-શ્રવણ પછી શાસ્ત્રોને જણાવનારી મનની ક્રિયા छन्दः-ઉપદેશ છે, एवः-પ્રાપ્તિ કરવી/કરાવવી छन्दः-પ્રયત્ન છે, वरिवः-વિદ્વાનોની સેવા छन्दः-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય છે, वयः-જીવન छन्दः-સ્વાધીનતા છે, वयस्कृत्-આયુવર્ધક જીવનના સાધન छन्दः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, विष्पर्द्धाः-વિશેષ કરીને જેનાથી ઈર્ષા કરે તે छन्दः-પ્રકાશ છે, विशालम्-વિસ્તૃત કર્મ छन्दः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, छदिः-વિઘ્નોને દૂર કરવા छन्दः-સુખદાયક છે, दूरोहणम्-દુઃખથી વધનાર छन्दः-બળ છે. तन्द्रम्-સ્વતંત્રતા પ્રાપ્ત કરવી छन्दः-પ્રકાશ છે અને अङ्काङ्कम्-ગણિત વિદ્યા छन्दः-સમ્યક્ સ્થાપન યોગ્ય છે, તેનો સ્વીકાર કરીને તેના પ્રચાર માટે પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પુરુષાર્થ દ્વારા નિરંતર પરતંત્રતાનો નાશ અને સ્વતંત્રતાની પ્રાપ્તિ કરવી જોઈએ (૫)

र॒श्मिना॑ स॒त्याय॑ स॒त्यं जि॑न्व॒ प्रेति॑ना॒ धर्म॑णा॒ धर्मं॑ जिन्वा॒न्वित्या॑ दि॒वा दिवं॑ जिन्व स॒न्धिना॒न्तरि॑क्षेणा॒न्तरि॑क्षं जिन्व प्रति॒धिना॑ पृथि॒व्या पृ॑थि॒वीं जि॑न्व वि॒ष्टम्भे॑न॒ वृष्ट्या॒ वृष्टिं॑ जिन्व प्र॒वया॒ऽह्नाह॑र्जिन्वानु॒या रात्र्या॒ रात्रीं॑ जिन्वो॒शिजा॒ वसु॑भ्यो॒ वसू॑ञ्जिन्व प्रके॒तेना॑दि॒त्येभ्य॑ऽआदि॒त्याञ्जि॑न्व ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તું रश्मिना-કિરણોથી सत्याय-વિદ્યમાન સૂર્ય સમાન નિત્ય સુખની તથા સ્થૂલ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ માટે सत्यम्-અવ્યભિચારી કર્મને जिन्व-પ્રાપ્ત કર, प्रेतिना-ઉત્તમ વિજ્ઞાનથી યુક્ત धर्मणा-ન્યાયાચરણથી धर्मम्-ધર્મને जिन्व-જાણ, પ્રાપ્ત કર, अन्वित्या-શોધ માટે दिवा-ધર્મના પ્રકાશથી दिवम्-સત્યના પ્રકાશને जिन्व–પ્રાપ્ત કર, सन्धिना-સંધિરૂપ अन्तरिक्षेण-આકાશથી अन्तरिक्षम्-અવકાશને जिन्व-જાણ, पृथिव्या-ભૂગર્ભવિદ્યાના प्रतिधिना-સંબંધથી पृथिवीम्-ભૂમિને जिन्व-જાણ, विष्टम्भेन-શરીર ધારણ માટે આહારના રસથી તેમજ वृष्टया–વર્ષાની વિદ્યાથી वृष्टिम्-વર્ષાને જાણ, प्रवया-કાન્તિમાન अह्ना-દિવસની વિદ્યાથી अहः-દિવસને जिन्व-જાણ, अनुया-પ્રકાશની પાછળ ચાલનાર रात्र्या-

રાત્રિની વિદ્યાથી रात्रीम्-રાત્રિને जिन्व-જાણ, उशिजा-કામનાઓથી वसुभ्यः-અગ્નિ વગેરે આઠ વસુઓની વિદ્યાથી वसून्-તે અગ્નિ આદિ વસ્તુઓને जिन्व-જાણ અને प्रके तेन-ઉત્તમ વિજ્ઞાન દ્વારા आदित्येभ्यः-બાર મહિનાઓની વિદ્યાથી आदित्यान्-બાર મહિનાઓને जिन्व-તત્ત્વ સ્વરૂપથી જાણ. (૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જેમ પદાર્થોના પરીક્ષણો દ્વારા પદાર્થ વિદ્યા જાણવી જોઈએ, તેમ [તેનો] અન્યોને ઉપદેશ પણ કરવો જોઈએ. (૬)

तन्तुना रायस्पोषेण रायस्पोषं जिन्व सꣳसर्पेण श्रुताय श्रुतं जिन्वैडेनौषधीभिरोषधीर्जिन्वोत्तमेन तनूभिस्तनूर्जिन्व वयोधसाधीतेनाधीतं जिन्वाभिजिता तेजसा तेजो जिन्व॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું तन्तुना-વિસ્તારયુક્ત रायः-ધનની पोषेण-પુષ્ટિથી रायः-ધનની पोषम्-પુષ્ટિને जिन्व-પ્રાપ્ત કર, संसर्पेण-સમ્યક્ પ્રાપ્તિના કારણે श्रुताय-સાંભળવા માટે श्रुतम्-શાસ્ત્રને સાંભળવા માટે जिन्व-પ્રાપ્ત કર, ऐडेन-અન્નના સંસ્કાર તથા ओषधीभिः-જલ તથા ઔષધિઓની વિદ્યાથી ओषधीः-ઔષધિઓને जिन्व-પ્રાપ્ત કર, उत्तमेन-ઉત્તમકર્મના આચરણ तनूभिः-શુદ્ધ શરીરોથી तनूः-શરીરોને जिन्व-પ્રાપ્ત કર, वयोधसा-જીવનને ધારણ કરનારી आधीतेन-ધારણશક્તિથી [સારી રીતે ભણીને] आधीतम्-સર્વત્રથી ધારણ કરનારી વિદ્યાને जिन्व-પ્રાપ્ત કર, अभिजिता-સામે આવેલા શત્રુઓને જીતવા માટે तेजसा-તીક્ષ્ણ-તેજપૂર્ણ કર્મથી तेजः-દઢતાને जिन्व-પ્રાપ્ત કર. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિસ્તૃત પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરીને, સાર્વજનિક હિત સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૭)

प्रतिपदसि प्रतिपदे त्वानुपदस्यनुपदे त्वा सम्पदसि सम्पदे त्वा तेजोऽसि तेजसे त्वा॥ ८॥

પદાર્થ : હે પુરુષાર્થિની વિદુષી સ્ત્રી ! જે કારણે તું प्रतिपत्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય લક્ષ્મી સમાન असि-છે તેથી प्रतिपदे-ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે त्वा-તને જે अनुपत्-પશ્ચાત્ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય શોભા સમાન असि-છે, તે अनुपदे-વિદ્યાધ્યયન પશ્ચાત્ પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય त्वा-તને જે તું संपत्-સંપત્તિ સમાન असि-છે, તે सम्पदे-ઐશ્વર્ય માટે त्वा-તને જે તું तेजः-તેજ સમાન असि-છે, તેથી तेजसे-તેજ-ચાતુર્ય પ્રાપ્તિ માટે त्वा-તને ગ્રહણ કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ સુખોની સિદ્ધિ માટે સમાન ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવવાળા સ્ત્રી-પુરુષો સાથે સ્વયંવર વિવાહ દ્વારા પરસ્પરનો સ્વીકાર કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૮)

त्रिवृदसि त्रिवृते त्वा प्रवृदसि प्रवृते त्वा विवृदसि विवृते त्वा सवृदसि सवृते त्वाऽऽक्रमोऽस्याक्रमाय त्वा संक्रमोऽसि संक्रमाय त्वोत्क्रमोऽस्युत्क्रमाय त्वोत्क्रान्तिरस्युत्क्रान्त्यै त्वाऽधिपतिनोर्जोर्जं जिन्व॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે તું त्रिवृत्-સત્વગુણ, રજોગુણ અને તમોગુણથી યુક્ત અવ્યક્ત પ્રકૃતિનો જાણનાર असि-છે, તે त्रिवृते-ત્રણે ગુણોના કારણના જ્ઞાન માટે त्वा-તને, જે તું प्रवृत्-જે કાર્યરૂપથી પ્રવૃત્ત સંસારનો જ્ઞાતા असि-છે. प्रवृते-તે કાર્યરૂપ સંસારને જાણવા માટે त्वा-તને, જે તું विवृत्-વિવિધ પ્રકારના પ્રવૃત્ત સંસારનો જ્ઞાતા असि-છે. विवृते-તે કાર્યરૂપ સંસારને જાણવા માટે त्वा-તને, જે તું सवृत्-જે સમાન ધર્મ સાથે વિદ્યમાન પદાર્થોનો જાણનાર असि-છે, તે सवृते-સાધર્મ્ય પદાર્થોના જ્ઞાન માટે त्वा-તને, જે તું आक्रमः-સારી રીતે પદાર્થોના રહેવાના સ્થાન અન્તરિક્ષને જાણનાર असि-છે, તે आक्रमाय-અન્તરિક્ષને જાણવા માટે त्वा-તને, જે તું संक्रमः-સમ્યક્ પદાર્થોનો જાણનાર असि-છે, તે संक्रमाय-તે પદાર્થના જ્ઞાન માટે त्वा-તને, જે તું उत्क्रमः-ઉપર મેઘમંડલની ગતિનો જાણનાર असि-છે, તે उत्क्रमाय-તે મેઘમંડલની ગતિ જાણવા માટે त्वा-તને તથા હે સ્ત્રી ! જે તું उत्क्रान्तिः-સમ-વિષમ પદાર્થોના ઉલ્લંઘન માટે વિદ્યાની જાણનારી असि-છે, તે उत्क्रान्त्यै-ગતિ [ગમન] વિદ્યાને જાણવા માટે त्वा-તને હું સર્વ પ્રકારથી ગ્રહણ કરું છું. તે अधिपतिना-પોતાના પતિની સાથે રહીને તું ऊर्जा-પરાક્રમથી ऊर्जम्-બળને जिन्व-પ્રાપ્ત કર. (૯)

ભાવાર્થ : પૃથિવી આદિ પદાર્થોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોના વિશેષ જ્ઞાન વિના કોઈ પણ વિદ્વાન્ બની શકતો નથી. તેથી કાર્યકારણ સમુદાયને સારી રીતે જાણીને તેનો અન્યને ઉપદેશ કરવો જોઈએ.

જેમ અધ્યક્ષની સાથે સેના વિજયને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ પોતાના સ્વામી-પતિની સાથે સ્ત્રી સર્વ દુઃખોને જીતી લે છે. (૯)

राज्ञ्यसि प्राची दिग्वसवस्ते देवाऽअधिपतयोऽग्निर्हेतीनां प्रतिधर्त्ता त्रिवृत्। त्वा स्तोमः पृथिव्याꣳश्रयत्वाज्यमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु रथन्तरꣳ साम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु॥ १०॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! ते-તારો अधिपतिः-પાલક પતિ હું-જેમ જેના वसवः-અગ્નિ આદિ देवाः-પ્રકાશમાન अधिपतयः-અધિષ્ઠાતા છે, તેમ તું प्राची-પૂર્વ दिक्-દિશા સમાન राज्ञी-રાણી असि-છે.

જેમ हेतीनाम्-વજ્રાદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રને प्रतिधर्त्ता-પ્રત્યક્ષ ધારણ કરનાર त्रिवृत्-વિદ્યુત, ભૂમિસ્થ અગ્નિ અને સૂર્યરૂપ ત્રણ પ્રકારની વિદ્યમાન स्तोमः-સ્તુતિયુક્ત ગુણો સહિત अग्निः-મહાવિદ્યુત્ ધારણ કરનારી છે, તેમ त्वा-તને હું તારો પતિ ધારણ કરું છું.

તું पृथिव्याम्-ભૂમિ પર अव्यथायै-શરીર પીડાના અભાવ માટે उक्थम्-પ્રશંસનીય आज्यम्-ઘૃત આદિ પદાર્થોને श्रयतु-ધારણ [સેવન] કર, प्रतिष्ठित्यै-પ્રતિષ્ઠા માટે रथन्तरम्-રથ આદિથી તારનાર साम-સિદ્ધાન્ત કર્મને स्तभ्नातु-ધારણ કર.

જેમ अन्तरिक्षे-આકાશમાં दिवः-વિદ્યુત્‌નો मात्रया-લેશ સંબંધ અને वरिम्णा-મહાપુરુષાર્થથી देवेषु-વિદ્વાનોમાં प्रथमजाः-પૂર્વે થયેલા ऋषयः-વેદાર્થવિત્ વિદ્વાન્ त्वा-તને प्रथन्तु-શુભગુણોથી વિશાળ બુદ્ધિ યુક્ત કરે.

च-અને જેમ अयम्-એ विधर्त्ता-વિવિધ રીતે ધારણકર્તા ते-તારો પતિ તારી સાથે વર્તાવ કરે, તેમ તેની સાથે તું વર્તન કર.

च-અને જેમ सर्वे-સર્વ संविदानाः-ઉત્તમ વિદ્વાન્ नाकस्य-અવિદ્યમાન દુઃખના पृष्ठे-મધ્યમાં स्वर्गे-જે સ્વર્ગ અર્થાત્ અત્યંત સુખ પ્રાપ્તિ लोके-દર્શનીય છે, તેમાં त्वा-તને च-અને यजमानम्-તારા પતિને सादयन्तु-સ્થાન આપે તેમ તમે બન્ને-સ્ત્રી પુરુષ વર્તન રાખો. (૧૦)

ભાવાર્થ : પૂર્વ દિશા એટલા માટે ઉત્તમ છે, કારણ કે સૂર્ય પ્રથમ ત્યાં ઉદય થાય છે.

જે પૂર્વ દિશાથી વાયુ વહે છે-આવે છે, તે કોઈ દેશ-સ્થાનમાં વર્ષા ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે.

એ અગ્નિ સર્વનો ધારણકર્તા છે અને વાયુના કારણે વૃદ્ધિ પામે છે, જે તેને જાણે છે, તે સંસારમાં સુખનું સ્થાપન કરે છે. (૧૦)

विराडसि दक्षिणा दिग्रुद्रास्ते देवाऽअधिपतयऽइन्द्रो हेतीनां प्रतिधर्त्तापञ्चदशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याꣳश्रयतु प्रउगमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु बृहत्साम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું विराट्-વિવિધ પદાર્થોથી પ્રકાશમાન दक्षिणा-दिक्-દક્ષિણ દિશા સમાન असि-છે, જે ते-તારો પતિ रुद्राः-વાયુ देवाः-દિવ્ય ગુણયુક્ત વાયુ अधिपतयः-અધિષ્ઠાતાઓની સમાન છે, हेतीनाम्-વજ્રોના प्रतिधर्त्ता-નિશ્ચિત રીતે ધારણ કરનાર પુરુષ, पञ्चदशः-પંદર સંખ્યાના પૂરક स्तोमः-સ્તુતિના સાધક ઋચાઓના અર્થોના ભાગી તથા इन्द्रः-સૂર્ય त्वा-તારું पृथिव्याम्-પૃથિવી પર श्रयतु-સેવન કરે-સેવા કરો, अव्यथायै-માનસ ભયથી રહિત તારા માટે प्रउगम्-કથનીય उक्थम्-ઉપદેશ યોગ્ય વચનને स्तभ्नातु-સ્થિર કરે, તથા प्रतिष्ठित्यै-પ્રતિષ્ઠા માટે बृहत्-અનેક અર્થયુક્ત साम-સામવેદને સ્થિર કરે.

च-અને જેમ अन्तरिक्षे-આકાશમાં देवेषु-કામના યોગ્ય પદાર્થોમાં प्रथमजाः-પૂર્વ ઉત્પન્ન થયેલા ऋषयः-જ્ઞાનના હેતુ પ્રાણ, दिवः-પ્રકાશકારક અગ્નિના मात्रया-ઓછા ભાગ અને वरिम्णा-અધિકતાથી યુક્ત છે, તેમ વિદ્વાનો त्वा-તને प्रथन्तु-ઉપદેશ કરે-પ્રસિદ્ધ કરે.

જેમ विधर्त्ता-વિવિધ પ્રકારના આકર્ષણથી પૃથિવી આદિ લોકોનું ધારણ च-તથા પોષણ કરનાર अधिपतिः-સર્વ પ્રકાશક પદાર્થોમાં શ્રેષ્ઠ સૂર્ય त्वा-તને પુષ્ટ કરે, તેમ संविदानाः-સમ્યક્ વિચારશીલ વિદ્વાનો છે ते-તેઓ सर्वे-સર્વ नाकस्य-દુઃખરહિત આકાશના पृष्ठे-પૃષ્ઠ ભાગમાં स्वर्गे-સુખકારક लोके-

જાણવા યોગ્ય દેશમાં त्वा-તને च-અને यजमानम्-યજ્ઞવિદ્યા જાણનાર પુરુષને सादयन्तु-સ્થાપિત કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો વાયુની સાથે વિદ્યમાન સૂર્યને અને તેની વિદ્યાનું જ્ઞાન કરાવનાર વિદ્વાનનો આશ્રય કરીને તે વિદ્યાનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્વાન્ બનીને અન્યોને અધ્યયન કરાવે. (૧૧)

सम्राडसि प्रतीची दिगादित्यास्ते देवाऽअधिपतयो वरुणो हेतीनां प्रतिधर्त्ता सप्तदशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याᳯश्रयतु मरुत्वतीयमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु वैरूपᳬसाम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया वरिम्णा प्रथन्तु विधर्त्ता चायमधिपतिश्च ते त्वा सर्वे संविदाना नाकस्य पृष्ठे स्वर्गे लोके यजमानं च सादयन्तु॥ १२॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જે તું प्रतीची-પશ્ચિમ दिक्-દિશાની સમાન सम्राट्-સમ્યક્ પ્રકાશમાન असि-છે, તે ते-તારો પતિ आदित्याः-વિદ્યુત્‌થી યુક્ત પ્રાણવાયુ देवाः-દિવ્ય સુખદાતા अधिपतयः-સ્વામીજનો સમાન अयम्-આ सप्तदशः-સત્તરમાં च-અને स्तोमः-સ્તુતિ યોગ્ય वरुणः-જલ સમુદાય સમાન हेतीनाम्-વિદ્યુત્‌ને प्रतिधर्त्ता-ધારણ કરનાર अधिपतिः-સ્વામી त्वा-તારી पृथिव्याम्-ભૂમિ પર श्रयतु-સેવા કરે, अव्यथायै-સ્વરૂપથી અચલ તારા માટે मरुत्वतीयम्-અનેક વ્યાખ્યાતા મનુષ્યોમાં વિદ્યમાન उक्थम्-કથન યોગ્ય વેદવચન તથા प्रतिष्ठित्यै-પ્રતિષ્ઠા માટે वैरूपम्-વિવિધ રૂપોની વ્યાખ્યાથી યુક્ત साम-સામવેદને स्तभ्नातु-ગ્રહણ કરે.

અને જે दिवः-પ્રકાશના मात्रया-ભાગથી वरिम्णा-અધિકતાથી યુક્ત अन्तरिक्षे-આકાશમાં प्रथमजाः-વિસ્તાર કારણથી ઉત્પન્ન થયેલ ऋषयः-ગતિયુક્ત વાયુ देवेषु-દાનના હેતુ અવયવોમાં વિદ્યમાન છે, તેમ त्वा-તને વિદ્વાનો प्रथन्तु-પ્રસિદ્ધ ઉપદેશ કરે.

જેમ विधर्त्ता-વિવિધ રત્નોને ધારણ કરનાર च-એ પણ अधिपतिः-અધ્યક્ષ સ્વામી રાજા-પ્રજાઓને સુખમાં રાખે છે, તેમ ते-તારા મધ્યમાં सर्वे-સર્વ संविदानाः-સમ્યક્ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થયેલ त्वा-તને च-અને यजमानम्-વિદ્વાનોના સેવક પુરુષને नाकस्य-દુઃખરહિત દેશના पृष्ठे-એક ભાગમાં स्वर्गे-સુખકારક लोके-દર્શનીય સ્થાનમાં सादयन्तु-સ્થાપિત કરે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો પશ્ચિમ દિશાનું તથા તે દિશામાં રહેલા પદાર્થોનું અન્યોને જ્ઞાન કરાવે છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ પોતાના સંતાનોને વિદ્યાથી અલંકૃત કરે. (૧૨)

स्वराडस्युदीची दिङ् मरुतस्ते देवाऽअधिपतयः सोमो हेतीनां प्रतिधर्त्तै-कविᳬशस्त्वा स्तोमः पृथिव्याᳯ श्रयतु निष्केवल्यमुक्थमव्यथायै स्तभ्नातु। वैराजᳬसाम प्रतिष्ठित्याऽअन्तरिक्षऽऋषयस्त्वा प्रथमजा देवेषु दिवो मात्रया

वरि॒म्णा प्रथ॑न्तु विध॒र्त्ता चा॒यमधि॑पतिश्च॒ ते त्वा॒ सर्वे॑ संविदा॒ना नाक॑स्य पृ॒ष्ठे स्व॒र्गे लो॒के यज॑मानं च सादयन्तु॥ १३॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ स्वराट्-સ્વયં પ્રકાશમાન उदीची-ઉત્તર दिक्-દિશા असि-છે, તેવો ते-તારો પતિ હોય.

જે દિશાના मरुतः-વાયુ देवाः-દિવ્યરૂપ अधिपतयः-અધિષ્ઠાતા છે, તેની સમાન एकविंशः-એકવીસમા स्तोमः-સ્તુતિના સાધક सोमः-ચન્દ્રમા તથા हेतीनाम्-વજ્ર સમાન વિદ્યમાન કિરણોને प्रतिधर्त्ता-ધારણ કરનાર પુરુષ त्वा-તારી पृथिव्याम्-ભૂમિ પર श्रयतु-સેવા કરે. अव्यथायै-ઈન્દ્રિયોના ભયના અભાવ માટે निष्केवल्यम्-જેમાં માત્ર એક સ્વરૂપનું વર્ણન હોય તે उक्थम्-ઉપદેશ યોગ્ય વેદભાગ તથા प्रतिष्ठित्यै-પ્રતિષ્ઠા માટે वैराजम्-વિરાટ રૂપનો પ્રતિપાદક साम-સામવેદનો ભાગ स्तभ्नातु-ગ્રહણ કર.

च-અને જેમ તારા મધ્યમાં अन्तरिक्षे-અવકાશમાં રહેલ देवेषु-ઈન્દ્રિયોમાં प्रथमजाः-મુખ્ય પ્રસિદ્ધ दिवः-જ્ઞાનના मात्रया-ભાગોથી वरिम्णा-અધિકતાથી યુક્ત વિદ્યમાન ऋषयः-બળવાન પ્રાણ છે, તેમ अयम्-એ પ્રાણોના विधर्त्ता-વિવિધ શીતને ધારણકર્તા च-અને अधिपतिः-અધિષ્ઠાતા છે, ते-તે सर्वे-સર્વ આ વિષયમાં संविदानाः-સમ્યક્ બુદ્ધિમાન વિદ્વાન્ त्वा-તને प्रथन्तु-પ્રસિદ્ધ કરે, અને नाकस्य-ઉત્તમ સુખરૂપ લોકના पृष्ठे-ઉપર स्वर्गे-સુખદાયક लोके-લોકમાં त्वा-તને च-અને यजमानम्-યજમાન પુરુષને सादयन्तु-સ્થિત કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો સોમ અને પ્રાણોને આધાર રહિત જાણીને, તેનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરીને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને અધ્યાપિકાઓ શિષ્યો અને શિષ્યાઓને, વિદ્યા-ગ્રહણ કરવા માટે નિયુક્ત કરીને આનંદિત કરે. (૧૩)

अधि॑पत्न्यसि बृह॒ती दिग्विश्वे॑ ते दे॒वाऽअधि॑पतयो॒ बृह॒स्पति॑र्हे॒ती॒नां प्र॑तिध॒र्त्ता त्रि॑णवत्रयस्त्रि॒ꣳशौ त्वा॒ स्तोमौ॑ पृथि॒व्याꣳ श्र॑यतां वैश्वदेवाग्निमारु॒तेऽउ॒क्थेऽअव्य॑थायै स्तभ्नीताꣳ शाक्वररैव॒ते साम॑नी॒ प्रति॑ष्ठित्याऽअ॒न्तरि॑क्षऽऋष॑यस्त्वा प्रथम॒जा दे॒वेषु॑ दि॒वो मात्र॑या वरि॒म्णा प्रथ॑न्तु विध॒र्त्ता चा॒यमधि॑पतिश्च॒ ते त्वा॒ सर्वे॑ संविदा॒ना नाक॑स्य पृ॒ष्ठे स्व॒र्गे लो॒के यज॑मानं च सादयन्तु॥ १४॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું बृहती-મહાન अधिपत्नी-સર્વ દિશાઓની ઉપર વિદ્યમાન दिक्-દિશાની સમાન असि-છે તે ते-તારો પતિ विश्वे-સર્વ देवाः-પ્રકાશક સૂર્યાદિ પદાર્થ अधिपतयः-અધિષ્ઠાતા છે, તેની સમાન જે बृहस्पतिः-વિશ્વના રક્ષક हेतीनाम्-વૃદ્ધોને प्रतिधर्ता-પ્રતીતિની સાથે ધારણ કરનાર સૂર્ય સમાન તારો પતિ त्वा-તને च-અને त्रिणवत्रयस्त्रिंशौ-૩ × ૯ = ૨૭ + ૩૩ = ૬૦ સાઠ स्तोमौ-સ્તુતિના સાધન पृथिव्याम्-પૃથિવી-ભૂમિ પર अव्यथायै-પીડા રહિતતા માટે वैश्वदेवाग्निमारुते-સર્વ વિદ્વાન

અને અગ્નિ મારુતની વ્યાખ્યા કરનાર उक्थे-ઉપદેશ યોગ્ય વેદના બે ભાગોનો श्रयताम्-આશ્રય કરે च-અને જેમ प्रतिष्ठित्यै-પ્રતિષ્ઠા માટે शाक्वररैवते-શકવરી અને રેવતી છંદથી કહેલ અર્થોથી सामनी-સામવેદના બે ભાગોની स्तभ्नीताम्-સંગતિ કરો.

જેમ તે अन्तरिक्षे-અવકાશમાં प्रथमजाः-આદિમાં ઉત્પન્ન ऋषयः-ધનંજય આદિ સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મ વાયુરૂપ પ્રાણ देवेषु-દિવ્યગુણયુક્ત પદાર્થોમાં दिवः-પ્રકાશની मात्रया-ભાગ અને वरिम्णा-અધિકતાથી त्वा-તને પ્રસિદ્ધ કરે છે, તેનો મનુષ્યો प्रथन्तु-ઉપદેશ-પ્રખ્યાત કરે.

જેમ अयम्-એ अधिपतिः-સ્વામી विधर्त्ता-વિવિધ રીતે સર્વ ધારણ કરનાર સૂર્ય છે, જેમ संविदानाः-સમ્યક્ સત્ય પ્રતિજ્ઞાયુક્ત વિદ્વાન્ त्वा-તને नाकस्य-पृष्ठे-સુખદાયક દેશના ઉપર स्वर्गे-સુખરૂપ लोके-સ્થાનમાં સ્થાપિત કરે છે, ते-તે सर्वे-સર્વ यजमानम्-તારા પુરુષ-પતિ च-અને તને सादयन्तु-સ્થિત કરે, તેમ તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ વર્તન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ દિશાઓની મધ્યમાં રહેલ દિશા સર્વથી મોટી છે, તેમ સર્વ ગુણોથી શરીર અને આત્માનું બળ અધિક-મહાન છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧૪)

अयं पुरो हरिकेशः सूर्यरश्मिस्तस्य रथगृत्सश्च रथौजाश्च सेनानीग्रामण्यौ। पुञ्जिकस्थला च क्रतुस्थला चाप्सरसौ। दङ्क्ष्णवः पशवो हेतिः पौरुषेयो वधः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥ १५॥

પદાર્થ : જે अयम्-એ पुरः-પૂર્વ સમયમાં વિદ્યમાન हरिकेशः-હરિત વર્ણના કેશ સમાન હરણશીલ અને ક્લેશકારી તાપથી યુક્ત सूर्यरश्मिः-સૂર્યના કિરણો છે, तस्य-તેના रथगुत्सः-બુદ્ધિમાન સારથી च-અને रथौजाः-રથચાલક વાહન च-તે બન્ને તથા सेनानीग्रामण्यौ-સેનાપતિ તથા ગામના અધ્યક્ષ સમાન અન્ય પ્રકારના કિરણો પણ હોય છે, તે કિરણોની पुञ्जिकस्थला-સામાન્ય પ્રધાન દિશા च-અને कृतुस्थला-પ્રજ્ઞા અને કર્મને બતાવનારી ઉપદિશા च-એ બન્ને अप्सरसौ-પ્રાણોમાં ગમન કરનારી અપ્સરા કહેવાય છે.

જે दङ्क्ष्णवः-માંસ અને ઘાસ ખાનારા વાઘ આદિ पशवः-હાનિકાક પશુઓ છે તેની ઉપર हेतिः-વિદ્યુત્ પડે.

જે पौस्त्रेयः-પુરુષોના સમૂહને वधः-મારનાર અને प्रहेतिः-ઉત્તમ વજ્ર સમાન નાશ કરનાર છે तेभ्यः-તેના માટે नमः-વજ્રનો પ્રહાર अस्तु-થાય.

જે રાજા આદિ સભ્ય રાજપુરુષો છે ते-તેઓ તે પશુઓથી नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે ते-તેઓ नः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે.

ते-તે રક્ષક અમે यम्-જે હિંસકથી द्विष्मः-વિરોધ કરીએ च-અને यः-જે હિંસક नः-અમારો द्वेष्टि-વિરોધ કરે तम्-તેને અમે एषाम्-તે વ્યાઘ્રાદિ પશુઓના जम्भे-મુખમાં दध्मः-સ્થાપિત કરીએ છીએ.

(૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના કિરણો હરિત-લીલા રંગના છે, તેની સાથે લાલ, પીળા આદિ કિરણો પણ રહે છે, તેમ સેનાની અને ગ્રામીણ પુરુષો વર્તાવ કરીને રક્ષક બને.

જે રાજા આદિ જન સિંહ આદિ હિંસક પશુઓને રોકીને ગાય આદિ પશુઓની રક્ષા કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સુશિક્ષાથી અમને-સર્વ મનુષ્યોને અધર્માચરણથી રોકીને ધર્મયુક્ત કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરીને વિરોધીઓનું નિવારણ કરે. (૧૫)

अयं दक्षिणा विश्वकर्मा तस्य रथस्वनश्च रथेचित्रश्च सेनानीग्रामण्यौ। मेनका च सहजन्या चाप्सरसौ यातुधाना हेती रक्षांꣳसि प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अयम्-એ विश्वकर्मा-સર્વ ચેષ્ટારૂપ કર્મોનું કારણ વાયુ दक्षिणा-દક્ષિણ દિશાથી વહે છે, तस्य-તે વાયુ रथस्वनः-રથ સમાન શબ્દયુક્ત च-અને रथेचित्रः-રમણીય રથમાં ચિહ્નયુક્ત આશ્ચર્ય કાર્યો કરનાર च-એ બન્ને सेनानीग्रामण्यौ-સેનાપતિ અને ગ્રામાધ્યક્ષની સમાન વિદ્યમાન मेनका-જેનાથી મનન કરવામાં આવે તે च-અને सहजन्या-એક સાથે ઉત્પન્ન થયેલી च-એ બન્ને अप्सरसौ-અન્તરિક્ષમાં રહેનારી કિરણો વગેરે અપ્સરા છે.

જે यातुधाना-પ્રજાને પીડા આપનાર છે, તેના ઉપર हेतिः-વજ્ર જે रक्षांसि-દુષ્ટ કર્મ કરનાર છે તેના ઉપર प्रहेतिः-ઉત્તમ વજ્ર સમાન અસ્ત્ર પડે, तेभ्यः-તે પ્રજાપીડક આદિ માટે नमः-વજ્રનો પ્રહાર अस्तु-થાય એમ કરીને જે ન્યાયાધીશ શિક્ષક છે ते-તે नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે, ते-તે नः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે.

ते-તે અમે यम्-જે દુષ્ટથી द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ च-અને यः-જે દુષ્ટ नः-અમારો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે तम्-તેને एषाम्-તે વાયુઓના जम्भे-વ્યાઘ્રની સમાન મુખમાં दध्मः-ધારણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ સ્થૂલ, સૂક્ષ્મ અને મધ્યસ્થ વાયુથી ઉપયોગ કરવો જાણે છે, તે શત્રુઓનું નિવારણ કરીને સર્વને આનંદિત કરે છે. (૧૬)

अयं पश्चाद् विश्वव्यचास्तस्य रथप्रोतश्चासमरथश्च सेनानीग्रामण्यौ। प्रम्लोचन्ती चानुम्लोचन्ती चाप्सरसौ। व्याघ्रा हेतिः सर्पाः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अयम्-એ पश्चात्-પાછળ વિદ્યમાન विश्वव्यचाः-વિશ્વમાં વ્યાપ્ત વિદ્યુત્ રૂપી અગ્નિ છે, तस्य-તેના सेनानीग्रामण्यौ-સેનાપતિ અને ગામપતિ સમાન रथप्रोतः-રમણીય તેજ

સમૂહથી વ્યાપ્ત च-અને असमरथः-જેના સમાન બીજો રથ ન હોય તે અદ્વિતીય રથ તે च-એ બન્ને प्रम्लोचन्ती-સારી રીતે સર્વ ઔષધિ આદિ પદાર્થોને શુષ્ક કરાવનાર च-તથા अनुम्लोचन्ती-પશ્ચાત્ જ્ઞાનનું કારણ પ્રકાશ च-એ બન્ને अप्सरसौ-ક્રિયાકારક આકાશસ્થ કિરણો છે.

જેમ हेतिः-સાધારણ વજ્ર સમાન प्रहेतिः-ઉત્તમ વજ્ર સમાન व्याघ्राः-સિંહો તથા सर्पाः-સર્પોની સમાન પ્રાણીઓના દુઃખદાયી જીવ છે तेभ्यः-તેના માટે नमः-વજ્ર પ્રહાર अस्तु-થાય.

જે પૂર્વોક્ત તેનાથી રક્ષા કરનાર છે ते-તે नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે, ते-તે नः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે.

ते-તે અમે यम्-જેનો द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ, च-અને यः-જે દુષ્ટ नः-અમારો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે, જેને અમે एषाम्-તે સિંહાદિના जम्भे-મુખમાં दध्मः-સ્થાપિત કરીએ છીએ, तम्-તેને તે રક્ષક લોકો પણ સિંહાદિના મુખમાં સ્થાપિત કરે. (૧૭)

ભાવાર્થ : આ વર્ષાનું શેષ વર્ણન છે, આ ઋતુમાં મનુષ્યોએ યોગ્ય આહાર-વિહાર કરવો જોઈએ. (૧૭)

अयमुत्तरात् संयद्वसुस्तस्य ताक्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च सेनानीग्रामण्यौ। विश्वाची च घृताची चाप्सरसावापो हेतिर्वातः प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥ १८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अयम्-આ उत्तरात्-ઉત્તર દિશાથી संयद्वसुः-યજ્ઞની સંગતિ કરનાર સમાન શરદ્ઋતુ છે, तस्य-તેના सेनानीग्रामण्यौ-સેનાપતિ અને ગ્રામ અધ્યક્ષ સમાન ताक्ष्यः-તીક્ષ્ણ તેજને પ્રાપ્ત કરાવનાર આસો च-અને अरिष्टनेमिः-દુઃખોને દૂર કરનાર કારતક च-એ બન્ને विश्वाची-સર્વ જગતમાં વ્યાપક च-અને घृताची-ઘી અને જલને પ્રાપ્ત કરાવનારી દીપ્તિરૂપ च-એ બન્ને अप्सरसौ-પ્રાણોની ગતિ છે.

જેમાં आपः-જલ हेतिः-વૃદ્ધિની સમાન વર્તાવ કરનાર, वातः-પ્રિયવચન प्रहेतिः-અત્યંત વર્ધકની સમાન આનંદદાયક છે, એ વાયુનું જે લોકો યુક્તિથી સેવન કરે છે तेभ्यः-તેના માટે नमः-નમસ્કાર अस्तु-છે. ते-તેઓ नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે, ते-તેઓ नः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે.

ते-તે રક્ષક અમે यम्-જેનો द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ च-અને यः-જે नः-અમારો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે तम्-તેને एषाम्-એ જલ અને વાયુના जम्भे-દુઃખદાયી ગુણરૂપ મુખમાં दध्मः-સ્થાપિત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : આ શરદઋતુની શેષ વ્યાખ્યા છે. આ ઋતુમાં પણ મનુષ્યોએ યુક્તિપૂર્વક કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત રહેવું જોઈએ. (૧૮)

अयमुपर्यर्वाग्वसुतस्य सेनजिच्च सुषेणश्च सेनानीग्रामण्यौ। उर्वशी च

पूर्वचित्तिश्चाप्सरसावावस्फूर्जन् हेतिर्विद्युत्प्रहेतिस्तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अयम्-આ उपरि-ઉપર વિદ્યમાન अर्वाग्वसुः-વર્ષા પછી ઘન-વાદળનો હેતુ હેમન્ત ઋતુ છે, तस्य-તેના सेनजित्-સેનાને જીતનાર च-અને सुषेणः-સુંદર સેનાપતિ च-એ બન્ને सेनानीग्रामण्यौ-સેનાપતિ અને ગ્રામ અધ્યક્ષની સમાન વિદ્યમાન માગસર અને પોષ મહિના उर्वशी-અધિક ખાવા માટે આન્તર દીપ્તિ च-અને पूर्वचित्तिः-આદિ જ્ઞાન માટે च-એ બન્ને अप्सरसौ-પ્રાણોમાં વિદ્યમાન ગતિઓ છે, अवस्फूर्जन्-ભયંકર ઘોષ કરનાર हेतिः-વજ્રની સમાન विद्युत्-વિદ્યુત્‌ને ચલાવનાર અને प्रहेतिः-ઉત્તમ વજ્રની સમાન રક્ષક પ્રાણી છે, तेभ्यः-તેના માટે नमः-અન્નાદિ પદાર્થો अस्तु-પ્રાપ્ત થાય ते-તેઓ नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે ते-તેઓ नः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે.

ते-તે અમે यम्-જે દુષ્ટોનો द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ च-અને यः-જે नः-અમારો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે तम्-તેને અમે एषाम्-એ હિંસક પ્રાણીઓના जम्भे-મુખમાં दध्मः-સ્થાપિત કરીએ, તેમ તમે પણ સ્થાપિત કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : આ પણ હેમન્ત ઋતુની શેષ વ્યાખ્યા છે, આ ઋતનું મનુષ્યો યુક્તિપૂર્વક સેવન કરીને બળવાન બને. (૧૯)

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम्।
अपाꣳ रेताꣳसि जिन्वति॥ २०॥

પદાર્થ : જેમ હેમન્ત ઋતુમાં अयम्-એ પ્રસિદ્ધ अग्निः-અગ્નિ दिवः-પ્રકાશ અને पृथिव्याः-ભૂમિની મધ્યમાં मूर्द्धा-શિર સમાન સૂર્યરૂપથી વિદ્યમાન ककुत्पतिः-દિશાઓના રક્ષક બનીને अपाम्-પ્રાણોના रेतांसि-પરાક્રમને जिन्वति-પૂર્ણરૂપથી તૃપ્ત કરે છે [બળની વૃદ્ધિ કરે છે], તેમ મનુષ્યોએ બળવાન બનવું જોઈએ. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યુક્તિપૂર્વક જઠરાગ્નિ પ્રદીપ્ત કરી-વૃદ્ધિ કરીને, સંયમપૂર્વક આહાર-વિહાર કરીને નિરંતર બળની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૦)

अयमग्निः सहस्त्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः।
मूर्धा कवी रयीणाम्॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો अयम्-આ अग्निः-હેમન્ત ઋતુમાં વિદ્યમાન सहस्त्रिणः-ઉત્તમ અસંખ્ય પદાર્થોથી યુક્ત તથા शतिनः-પ્રશસ્ત ગુણોથી અનેક વિદ્યમાન પુરુષના, वाजस्य-અન્ન તથા रयीणाम्-ધનોના पतिः-રક્ષક मूर्द्धा-ઉત્તમ અંગ સમાન कविः-સમર્થ છે, તેમ તમે પણ બનો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યા અને યુક્તિથી સેવન કરેલ અગ્નિ પુષ્કળ ધન-ધાન્ય પ્રદાન કરે છે, તેમ સેવન

કરેલ પુરુષાર્થ મનુષ્યોને ઐશ્વર્યવાન બનાવે છે. (૨૧)

त्वाम॑ग्ने॒ पुष्क॑रा॒दध्यथ॑र्वा॒ निर॑मन्थत। मू॒र्ध्नो विश्व॑स्य वा॒घतः॑॥ २२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! જેમ अथर्वा-રક્ષક वाघतः-ઉત્તમ શિક્ષિત વાણીથી અવિદ્યાનો નાશ કરનાર બુદ્ધિમાન વિદ્વાન્ પુરુષ पुष्करात्-અન્તરિક્ષના अधि-મધ્યમાં તથા मूर्ध्नः-શિર સમાન વિદ્યમાન विश्वस्य-સંપૂર્ણ જગતના મધ્ય અગ્નિને निरमन्थत-નિરંતર મંથન કરીને ગ્રહણ કરે છે, તેમ त्वाम्-તમને પણ બોધ કરું છું-સમજાવું છું. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોના અનુકરણ દ્વારા આકાશ અને પૃથિવીથી વિદ્યુત્‌નું ગ્રહણ કરીને આશ્ચર્યયુક્ત કર્મોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૨૨)

भुवो॑ य॒ज्ञस्य॒ रज॑सश्च ने॒ता यत्रा॑ नि॒युद्भिः॒ सच॑से शि॒वाभिः॑।
दि॒वि मू॒र्धानं॑ दधिषे स्व॒र्षां जि॒ह्वाम॑ग्ने चकृषे हव्य॒वाह॑म्॥ २३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! જેમ આ પ્રત્યક્ષ અગ્નિ नियुद्भिः-સંયોગ-વિભાગ કરનારી ક્રિયા તથા शिवाभिः-મંગલકારી દીપ્તિઓની સાથે વિદ્યમાન भुवः-પ્રકટ થયેલ यज्ञस्य-કાર્યસાધક સંગત વ્યવહાર च-અને रजसः-લોકસમૂહને नेता-આકર્ષણ કરીને સંયુક્ત કરાવે છે, यत्र-જે दिवि-પ્રકાશમાન પોતાના સ્વરૂપમાં मूर्धानम्-ઉત્તમ અંગ-શિર સમાન વિદ્યમાન સૂર્યને ધારણ કરે છે, हव्यवाहम्-આદાન-પ્રદાન કરવા યોગ્ય રસોને પ્રાપ્ત કરાવનારી स्वर्षाम्-સુખદાયક जिह्वाम्-વાણીને चकृषे-પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ તું શુભ ગુણોની સાથે सचसे-યુક્ત કરે છે અને વિદ્યાઓને दधिषे-ધારણ કરે છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ ઈશ્વર દ્વારા નિયુક્ત કરેલ સર્વ જગતને સુખકારી બને છે, તેમ વિદ્યાના ગ્રાહક અધ્યાપકો સર્વ મનુષ્યોને સુખકારી બને છે, તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૨૩)

अबो॑ध्य॒ग्निः स॒मिधा॒ जना॑नां॒ प्रति॑ धे॒नुमि॑वाय॒तीमु॒षास॑म्।
य॒ह्वाऽइ॑व॒ प्र व॒यामु॒ज्जिहा॑नाः॒ प्र भा॒नवः॑ सिस्र॒ते नाक॒मच्छ॑॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ समिधा-સમિધા વગેરે પ્રજ્વલિત કરવાના સાધનોથી આ अग्निः-અગ્નિ अबोधि-પ્રકાશિત-પ્રજ્વલિત થાય છે, आयतीम्-પ્રાપ્ત થનારી उषासम्-પ્રભાત સમયના प्रति-સમીપ जनानाम्-મનુષ્યોની धेनुमिव-દૂધ આપનારી ગાય સમાન છે.

જે અગ્નિથી यह्वा इव-મહાન ધાર્મિક જનોની સમાન प्र-ઉત્તમ-ઉત્કૃષ્ટ वयाम्-વ્યાપક સુખની નીતિને उज्जिहानाः-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરતાં प्र-ઉત્તમ भानवः-કિરણ नाकम्-સુખને अच्छ-સારી રીતે सिस्रते-પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેને તમે પણ સુખ પ્રાપ્તિ માટે સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેમ દૂધ આપનારી સદ્યપ્રસૂતા-નવી વિવાયેલી ગાયની ચાકરી કરવાથી દૂધ આદિથી પ્રાણીઓને સુખી કરે છે; જેમ આપ્ત વિદ્વાન વિદ્યાદાન દ્વારા અવિદ્યાનું નિવારણ કરીને મનુષ્યોની ઉન્નતિ

કરે છે, તેમજ એ અગ્નિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૪)

अवोचाम कवये मेध्याय वचो वन्दारु वृषभाय वृष्णे।
गविष्ठिरो नमसा स्तोममग्नौ दिवीव रुक्ममुरुव्यञ्चमश्रेत्॥ २५॥

પદાર્થ : અમે જેમ गविष्ठिरः-કિરણોમાં રહેનારી વિદ્યુત્ दिवीव-સૂર્યના પ્રકાશની સમાન उरुव्यंचम्-વિશેષ રીતે અનેક પદાર્થોમાં ગમનશીલ रुक्मम्-સૂર્યનો अश्रेत्-આશ્રય છે, તેમ मेध्याय-સર્વ શુભ લક્ષણોથી યુક્ત, પવિત્ર वृषभाय-બળવાન वृष्णे-વર્ષાકારક कवये-બુદ્ધિમાન માટે वन्दारु-પ્રશંસાયોગ્ય वचः-વચનનો તથા अग्नौ-જઠરાગ્નિમાં नमसा-અન્નાદિથી स्तोमम्-પ્રશસ્ત કાર્યોનો अवोचाम-ઉપદેશ કરે. (૨૫)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સુશીલ અને પવિત્ર બુદ્ધિવાળા વિદ્યાર્થીઓ માટે પરમ પ્રયત્નથી વિદ્યા પ્રદાન કરવી જોઈએ; જેથી તે વિદ્યા ભણીને, સૂર્યના પ્રકાશમાં ઘટ-ઘડો પટ-વસ્ત્ર આદિને જોવા સમાન સર્વ પદાર્થોને સારી રીતે જાણી શકે. (૨૫)

अयमिह प्रथमो धायि धातृभिर्होता यजिष्ठोऽअध्वरेष्वीड्यः।
यमप्नवानो भृगवो विरुरुचुर्वनेषु चित्रं विभ्वं विशेविशे॥ २६॥

પદાર્થ : જે इह-આ જગતમાં अध्वरेषु-રક્ષાયોગ્ય વ્યવહારોમાં ईड्यः-અન્વેષણને યોગ્ય, यजिष्ठः-અત્યંત યજ્ઞના સાધક होता-ઘી આદિના ગ્રહણકર્તા प्रथमः-સર્વત્ર વિસ્તૃત अयम्-એ પ્રત્યક્ષ અગ્નિ धातृभिः-ધારણ કરનારા પુરુષોએ धायि-ધારણ કરેલ છે.

यम्-જેને वनेषु-કિરણોમાં चित्रम्-આશ્ચર્યરૂપથી विभ्वम्-વ્યાપક અગ્નિને विशेविशे-સમસ્ત પ્રજા માટે अप्नवानः-રૂપવાન भृगवः-પૂર્ણજ્ઞાન विरुरुचुः-વિશેષ કરીને પ્રકાશિત કરે છે, તે અગ્નિનો સર્વ મનુષ્યો સ્વીકાર કરે. (૨૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ અગ્નિવિદ્યાને ધારણ કરીને અન્યોને પ્રદાન કરવી જોઈએ. (૨૬)

जनस्य गोपाऽअजनिष्ट जागृविरग्निः सुदक्षः सुविताय नव्यसे।
घृतप्रतीको बृहता दिविस्पृशा द्युमद्विभाति भरतेभ्यः शुचिः॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે जनस्य-ઉત્પન્ન સંસારના गोपाः-રક્ષક, जागृविः-જાગરુક સ્વભાવવાળા, सुदक्षः-ઉત્તમ બળયુક્ત, घृतप्रतीकः-ઘી થી વધનાર, शुचिः-પવિત્ર, अग्निः-વિદ્યુત્ છે; તે नव्यसे-અત્યંત નવીન सुविताय-ઉત્પન્ન કરવા યોગ્ય ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે अजनिष्ट-પ્રકટ થયો છે, જે बृहता-મહાન दिविस्पृशा-પ્રકાશમાં સ્પર્શ કરવાથી भरतेभ्यः-સૂર્યોથી द्युमत्-પ્રકાશમાન થઈને विभाति-શોભિત થાય છે; તેને તમે જાણો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિના વિશેષ કારણ, સૃષ્ટિના સૂર્યોનું કારણ વિદ્યુત્‌નું તેજ છે, તેને જાણીને

ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૨૭)

त्वामग्नेऽअङ्गिरसो गुहा हितमन्वविन्दञ्छिश्रियाणं वनेवने।
स जायसे मथ्यमानः सहो महत् त्वामाहुः सहसस्पुत्रमङ्गिरः॥ २८॥

પદાર્થ : હે अङ्गिरः-પ્રાણસમાન પ્રિય अग्ने-વિદ્વાન્ ! જેમ सः-તે मथ्यमानः-મંથન કરેલો અગ્નિ પ્રસિદ્ધ-પ્રકટ થાય છે, તેમ તું વિદ્યાથી जायसे-પ્રકટ થાય છે.

જેમ महत्-મહાન सहः-બળયુક્ત सहसः-બળવાન વાયુથી पुत्रम्-ઉત્પન્ન થયેલ પુત્ર સમાન वनेवने-પ્રત્યેક કિરણમાં વા પ્રત્યેક પદાર્થમાં शिश्रियाणम्-આશ્રિત गुहा-બુદ્ધિમાં हितम्-સ્થિત હિતકારી त्वाम्-તે અગ્નિને आहुः-કહે છે; अङ्गिरसः-વિદ્વાનો अन्वविन्दन्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેનો બોધ त्वाम्-તને કરાવું છું.-સમજાવું છું. (૨૮)

ભાવાર્થ : અગ્નિ બે પ્રકારનો છે. એક માનસ-અંદરનો અને બીજો બહારનો. તેમાં અંદરના અગ્નિને ઉચિત આહાર-વિહાર દ્વારા અને બહારના અગ્નિને મંથન આદિ દ્વારા વિદ્વાનો સેવન કરે. તેમ અન્ય મનુષ્યો પણ સેવન કરે. (૨૮)

सखायः सं वः सम्यञ्चमिषꣳ स्तोमं चाग्नये।
वर्षिष्ठाय क्षितीनामूर्जो नप्त्रे सहस्वते॥ २९॥

પદાર્થ : હે सखायः-મિત્રો क्षितीनाम्-મનનશીલ મનુષ્ય ! वः-તમારા ऊर्जः-બળના नप्त्रे-પૌત્ર સમાન વિદ્યમાન, सहस्वते-અત્યંત બળયુક્ત, वर्षिष्ठाय-અત્યંતવૃદ્ધ अग्नये-અગ્નિ માટે; જે सम्यञ्चम्-સુંદર સત્કાર માટે इषम्-અન્નને च-અને स्तोमम्-સ્તુતિઓનો समाहुः-સારી રીતે ઉપદેશ કરે છે; તેમ તમે પણ તેનું અનુષ્ઠાન કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : શિલ્પી-કારીગર લોકો સર્વના મિત્ર બનીને વિદ્વાનોના કથનાનુસાર પદાર્થવિદ્યાનું અનુષ્ઠાન કરે.

જે વિદ્યુત્ કારણરૂપ બળથી ઉત્પન્ન થાય છે. જે પુત્ર સમાન છે, જે સૂર્ય આદિથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે પૌત્ર સમાન છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૯)

सꣳसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्यऽआ।
इडस्पदे समिध्यसे स नो वसून्याभर॥ ३०॥

પદાર્થ : હે वृषन्-બળવાન अग्ने-પ્રકાશમાન अर्यः-વૈશ્ય ! જે તું संसम + आ + युवसे-અતિ ઉત્તમતાથી સંબંધ કરે છે, इडः-પ્રશંસા યોગ્ય પુરુષના पदे-પદ પર समिध्यसे-સુશોભિત બને છે, सः-તે તું इत्-જ અગ્નિના યોગથી नः-અમારા માટે विश्वानि-સર્વ वसूनि-ધનોને आभर-શ્રેષ્ઠતાથી ધારણ કર. (૩૦)

ભાવાર્થ : રાજાઓ દ્વારા સમ્યક્ રક્ષિત વૈશ્યજન અગ્નિ આદિની વિદ્યાઓથી પોતાના લોકો માટે

અને રાજકીય જનો માટે સમસ્ત ધન સંગ્રહિત કરે. (૩૦)

त्वां चित्रश्रवस्तम हवन्ते विक्षु जन्तवः।
शोचिष्केशं पुरुप्रियाग्ने हव्याय वोढवे॥ ३१॥

પદાર્થ : હે पुरुप्रिय-અનેકને પ્રસન્ન કરનાર વા બહુજન પ્રિય चित्रश्रवस्तम-આશ્ચર્ય રૂપ અન્નાદિ પદાર્થોથી યુક્ત अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! विक्षु-પ્રજાઓમાં हव्याय-સ્વીકારને યોગ્ય અન્નાદિ પદાર્થોની वोढवे-પ્રાપ્તિ માટે જે शोचिष्केशम्-સુકવનારા સૂર્યના કિરણો સમાન તેજસ્વી त्वाम्-આપનો जन्तवः-મનુષ્યો हवन्ते-સ્વીકાર કરે છે, તેનો અમે પણ સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિનું પ્રાણીઓ સેવન કરે છે, તેને ભાર-વહન આદિ કાર્યોમાં પણ મનુષ્યો સિદ્ધ કરે. (૩૧)

एना वोऽअग्निं नमसोर्जो नपातमाहुवे।
प्रियं चेतिष्ठमरतिꣳ स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम्॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું वः-તમારા માટે एना-તે પૂર્વોક્ત नमसा-ગ્રહણ યોગ્ય અન્નથી नपातम्-દૃઢ સ્વભાવ, प्रियम्-પ્રીતિકારક, चेतिष्ठम्-અત્યંત ચેતનતા આપનાર, अरतिम्-ચેતનતા રહિત, स्वध्वरम्-ઉત્તમ રક્ષણીય વ્યવહારથી યુક્ત, अमृतम्-કારણરૂપથી નિત્ય, विश्वस्य-સંપૂર્ણ જગતના दूतम्-સર્વત્ર ગતિ કરનાર अग्निम्-વિદ્યુત્‌ને અને ऊर्जः-પરાક્રમોને आहुवे-સ્વીકાર કરું છું, તેમ તમે મારા માટે ગ્રહણ કરો-સ્વીકાર કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો અમે તમારા માટે જે અગ્નિ આદિની વિદ્યાને પ્રકટ કરીએ, તેનો તમે સ્વીકાર કરો. (૩૧)

विश्वस्य दूतममृतं विश्वस्य दूतममृतम्।
स योजतेऽअरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत् स्वाहुतः॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું विश्वस्य-સર્વ ભૂગોળને दूतम्-તપાવનાર સૂર્યરૂપ अमृतम्-કારણરૂપથી અવિનાશી સ્વરૂપ, विश्वस्य-સંપૂર્ણ પદાર્થોને दूतम्-તાપથી બાળનાર, अमृतम्-જલમાં પણ કારણરૂપ અગ્નિનો સ્વીકાર કરું છું, તેમ विश्वभोजसा-જગતના રક્ષક अस्रा-રૂપવાન સર્વ પદાર્થોની સાથે વિદ્યમાન છે, सः-તે योजते-યુક્ત કરે છે-જોડે છે. જે स्वाहुतः-ઉત્તમ રીતિથી ગ્રહણ કરતાં दुद्रवत्-શરીર આદિમાં ગતિ કરે છે, सः-તેને તમારે જાણવો જોઈએ. (૩૩)

ભાવાર્થ : અહીં विश्वस्य दूतममृतम् *આ પદોની બે વખત આવૃત્તિ થવાથી બે પ્રકારની સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મરૂપ યુક્ત અગ્નિનું ગ્રહણ થાય છે, તે સર્વ કારણરૂપ નિત્ય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૩)*

स दुद्रवत् स्वाहुतः स दुद्रवत् स्वाहुतः।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवꣳ राधो जनानाम्॥ ३४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! सः-તે અગ્નિ स्वाहुतः-સારી રીતે બોલાવેલા મિત્રની સમાન दुद्रवत्-ગતિ કરે છે. सः-તે અગ્નિ स्वाहुतः-સારી રીતે નિમંત્રણ કરેલ વિદ્વાન સમાન दुद्रवत्-ગતિ કરે છે. सुब्रह्मा-શ્રેષ્ઠ વેદોના જ્ઞાતા, यज्ञः-સંગ કરવા યોગ્ય, सुशमी-ઉત્તમ શાન્તિશીલ પુરુષની સમાન જે वसूनाम्-પૃથિવી આદિ વસુઓ તથા जनानाम्-મનુષ્યોના देवम्-કામના યોગ્ય राधः-ધનરૂપ છે, તે અગ્નિનો તમે સારી રીતે ઉપયોગ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે વેગવાન્, અન્યોને વેગ પ્રદાન કરનાર, શાન્તિકારક અને પૃથિવી આદિનો પ્રકાશક અગ્નિ છે, તેને વિશેષ રૂપથી કેમ ન જાણવો જોઈએ ? (૩૪)

अग्ने वाजस्य गोमतऽईशानः सहसो यहो।
अस्मे धेहि जातवेदो महि श्रवः॥ ३५॥

પદાર્થ : હે सहसः-બળવાન પુરુષના यहो-સંતાન ! जातवेदः-વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરેલ, अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન આપ અગ્નિ સમાન गोमतः-પ્રશસ્ત ગાય અને પૃથિવીથી યુક્ત वाजस्य-અન્નના ईशानः-સ્વામી અને સમર્થક બનીને अस्मे-અમારા માટે महि-મહાન श्रवः-ધનને धेहि-ધારણ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : ઉત્તમ રીતિથી ઉપયુક્ત કરેલ અગ્નિ પુષ્કળ-પર્યાપ્ત ધન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૫)

सऽइधानो वसुष्कविरग्निरीडेन्यो गिरा। रेवदस्मभ्यं पुर्वणीक दीदिहि॥ ३६॥

પદાર્થ : હે पुर्वणीक-વિશાળ સેનાવાળા રાજપુરુષ વિદ્વાન્ ! गिरा-વાણીથી ईडेन्यः-અન્વેષણને યોગ્ય, वसुः-નિવાસના હેતુ, कविः-સમર્થ, इधानः-પ્રદીપ્ત सः-તે પૂર્વોક્ત अग्निः-અગ્નિની સમાન अस्मभ्यम्-અમારા માટે रेवत्-પ્રશંસિત ધનયુક્ત પદાર્થોને दीदिहि-પ્રકાશિત કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ અગ્નિના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોના પ્રકટીકરણથી મનુષ્યો માટે ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૬)

क्षपो राजन्नुत त्मनाग्ने वस्तोरुतोषसः। स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति॥ ३७॥

પદાર્થ : હે तिग्मजम्भ-તીવ્રતાથી અવયવોને ચલાવનાર राजन्-પ્રકાશમાન अग्ने-વિદ્વાન્ ! सः-તે પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત આપ જેમ તીક્ષ્ણ તેજયુક્ત અગ્નિ क्षपः-રાત્રિ, उत-અને वस्तोः-દિવસના उत-જ उषसः-પ્રાતઃ અને સાયંકાલના પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરે છે. તેમ त्मना-તીક્ષ્ણ સ્વભાવયુક્ત આત્માથી रक्षसः-દુષ્ટજનોને રાત્રિની સમાન प्रतिदह-નિશ્ચય રીતે ભસ્મ કરો. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ પ્રભાત, દિવસ અને રાત્રિનો નિમિત્ત અગ્નિ માનેલ છે, તેમ રાજા ન્યાયનો પ્રકાશ અને અન્યાયની નિવૃત્તિનો હેતુ છે, તેમ જાણો. (૩૭)

भद्रो नोऽअग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः।
भद्राऽउत प्रशस्तयः॥ ३८॥

પદાર્થ : હે सुभग-સુંદર ઐશ્વર્યવાન્ વિદ્વાન્ ! જેમ आहुतः-ધર્મની સમાન સેવન કરેલ મિત્રરૂપ अग्निः-અગ્નિ भद्रः-સેવન કરવા યોગ્ય હોય, भद्रा-કલ્યાણકારી रातिः-દાન भद्रः-કલ્યાણકારી હોય अध्वरः-રક્ષણીય વ્યવહાર उत-અને भद्राः-કલ્યાણ કરનારી प्रशस्तयः-પ્રશંસનીય હોય, તેમ આપ नः-અમારા માટે બનો. (૩૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ જાણવું જોઈએ કે જેમ વિદ્યા દ્વારા શ્રેષ્ઠ રીતિથી સેવન કરેલ જગતના પદાર્થો સુખદાયી બને છે, તેમ આપ્ત વિદ્વાન્ છે એમ જાણો. (૩૮)

भद्राऽउत प्रशस्तयो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये। येना समत्सु सासहः॥ ३९॥

પદાર્થ : હે सुभग-શોભન સંપત્તિવાન પુરુષ ! આપ येन-જેનાથી અમારા वृत्रतूर्ये-યુદ્ધમાં भद्रम्-કલ્યાણકારી मनः-વિચારશક્તિયુક્ત ચિત્ત હોય, उत-અને भद्राः-કલ્યાણકારી प्रशस्तयः-પ્રશંસાને યોગ્ય પ્રજા હોય, અને જેનાથી समत्सु-સંગ્રામોમાં सासहः-અત્યંત સહનશીલ વીર પુરુષ હોય, તેવા કર્મ कृणुष्व-કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ રાજાએ તે કર્મો કરવા જોઈએ, કે જેથી પ્રજા અને સેના શ્રેષ્ઠ બને. (૩૯)

येना समत्सु सासहोऽव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धताम्।
वनेमा तेऽअभिष्टिभिः॥ ४०॥

પદાર્થ : હે सुभग-સુંદર લક્ષ્મીયુક્ત પુરુષ ! આપ येन-જેના પ્રતાપથી અમારા समत्सु-યુદ્ધમાં सासहः-અત્યંત સહનશીલ છો, તેને તથા भूरि-અનેક પ્રકારથી शर्धताम्-બળ-સેનાને વધારનાર અમારા स्थिरा-સ્થિર સેનાના સાધનોની अव + तनुहि-સારી રીતે વૃદ્ધિ કરો. ते-આપની अभिष्टिभिः-ઈચ્છાઓ અનુસાર વિદ્યમાન અમે તે સેનાનાં સાધનોનું वनेम-સેવન કરીએ.-ઉપયોગ કરીએ. (૪૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ અતિ બળવાન વીરોના ઉત્સાહની નિત્ય વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ, જેથી ઉત્સાહિત બનીને તેઓ રાજા અને પ્રજાના હિતકારક કાર્યો કરે. (૪૦)

अग्निं तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनवः।
अस्तमर्वन्तऽआशवोऽस्तं नित्यासो वाजिनऽइषꣳ स्तोतृभ्यऽआ भर॥ ४१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यः-જે वसुः-સર્વત્ર નિવાસ કરનાર અગ્નિ છે, यम्-જે अग्निम्-વાણીની સમાન અગ્નિને धेनवः-ગાયો अस्तम्-ઘરે यन्ति-જાય છે, જેમ नित्यासः-કારણરૂપથી વિનાશ રહિત वाजिनः-વેગવાન आशवः-શીઘ્રગામી अर्वन्तः-ઘોડાઓ अस्तम्-ઘરને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ હું तम्-તે પૂર્વોક્ત અગ્નિને मन्ये-માનું છું અને स्तोतृभ्यः-સ્તુતિકારક વિદ્વાનો માટે इषम्-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થોને ધારણ કરું છું, તેમજ તું અગ્નિને अस्तम्-આશ્રય માન અને અન્ન આદિ પદાર્થોને आभर-ધારણ કર. (૪૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓને અધ્યાપક આ રીતે ઉપદેશ કરે –

જેમ હું આચરણ કરું છું, તેમ તમે પણ કરો. જેમ ગાય આદિ પશુઓ દિવસમાં આજુ-બાજુ જંગલમાં ફરીને સાંજે પોતાના ઘેર આવીને પ્રસન્ન થાય છે, તેમજ વિદ્યાગૃહ-પાઠશાલાને પ્રાપ્ત થઈને તમે પણ પ્રસન્ન રહો. (૪૧)

सोऽअग्निर्यो वसुर्गृणे सं यमायन्ति धेनवः।

समर्वन्तो रघुद्रुवः सꣳसुजातासः सूरयऽइषꣳ स्तोतृभ्यऽआ भर॥ ४२॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી વિદ્વાન્ ! જેમ હું यः-જે वसुः-નિવાસ માટે अग्निः-છે, તેની गृणे-સારી રીતે સ્તુતિ કરું છું, यम्-જેને धेनवः-વાણી समायन्ति-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, જેને रघुद्रुवः-ધીરજથી ચાલનારા अर्वन्तः-પ્રશસ્ત જ્ઞાની सुजातासः-શ્રેષ્ઠ રીતે વિદ્યાઓમાં પ્રસિદ્ધ सूरयः-વિદ્વાનો स्तोतृभ्यः-સ્તુતિ કરનારા વિદ્યાર્થીઓ માટે इषम्-જ્ઞાનને सम्-સારી રીતે ધારણ કરે છે, જેમ सः-તે અધ્યાપક-વિદ્વાન્ ઈશ્વરાદિ પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન કરે છે, તેમ તું પણ તે પૂર્વોક્તને सम् + आभर-ધારણ કર. (૪૨)

ભાવાર્થ : જેમ ગાય વાછરડાઓને તૃપ્ત કરે છે, તેમ અધ્યાપકજન વિદ્યાર્થીઓને આનંદિત કરે.

જેમ ઘોડાઓ-સવારીને શીઘ્ર દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે, તેમ [અધ્યાપકો વિદ્યાર્થીઓને] સમસ્ત વિદ્યાઓના પારગામી બનાવે. (૪૨)

उभे सुश्चन्द्र सर्पिषो दर्वी श्रीणीषऽआसनि।

उतो नऽउत्पुपूर्या उक्थेषु शवसस्पतऽइषꣳ स्तोतृभ्यऽआ भर॥ ४३॥

પદાર્થો : હે सुश्चन्द्र-ઉત્તમ આનંદદાયક અધ્યાપક ! આપ सर्पिषः-ઘીને दर्वी-લેવા અને છોડવા માટેના સાધન રૂપ બે કડછીથી श्रीणीषे-પકાવવા સમાન आसनि-મુખમાં उभे-અધ્યયન-અધ્યાયન રૂપ બે ક્રિયાઓને आभर-ધારણ કર.

હે शवसः-બળના पते-રક્ષક અધ્યાપક તું उक्थेषुः-ઉપદેશ કરવા અને શ્રવણ કરવા યોગ્ય વેદ વિભાગોમાં नः-અમારા માટે उतो-અને स्तोतृभ्यः-વિદ્વાનો માટે इषम्-અન્નાદિ પદાર્થોને उत्पुपूर्याः-ઉત્તમતાથી પૂર્ણ કર. (૪૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઋત્વિક્જનો ઘૃતને સારી રીતે શુદ્ધ કરીને, કડછી-ચમચાથી અગ્નિમાં હોમ કરીને વાયુ અને વર્ષા-જલને રોગનાશક બનાવીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ અધ્યાપકજનો વિદ્યાર્થીઓના મનોને

સુશિક્ષાથી શુદ્ધ કરીને, તેમાં વિદ્યાનો હોમ-દાન કરીને તેમના આત્માઓને પવિત્ર કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે. (૪૩)

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रꣳ हृदिस्पृशम्। ऋध्यामा तऽओहैः ॥ ४४ ॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અધ્યાપક ! અમે ते-આપનાથી ओहैः-વિદ્યાનું સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર स्तोमैः-વિદ્યાની સ્તુતિરૂપ વેદના ભાગોથી अद्य-આજ अश्वम्-ઘોડાની न-સમાન; भद्रम्-કલ્યાણકારક क्रतुम्-બુદ્ધિની न-સમાન तम्-તે हृदिस्पृशम्-આત્માનો સંબંધ રાખનાર વિદ્યાબોધને પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર ऋध्याम-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૪)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીજન-જેમ સુશિક્ષિત ઘોડા દ્વારા લોકો પોતાના ઈચ્છિત સ્થાન પર શીઘ્ર પહોંચી જાય છે, જેમ વિદ્વાન્ સર્વ શાસ્ત્રોના જ્ઞાનથી યુક્ત કલ્યાણકારી બુદ્ધિ દ્વારા ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તે અધ્યાપકો દ્વારા વિદ્યાને પાર કરીને, ઉત્તમ પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને સ્વયં ઉન્નતિ પામે તથા અન્યોની વેદના અધ્યાપન તથા ઉપદેશ દ્વારા ઉન્નતિ કરાવે. (૪૪)

अधा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः। रथीर्ऋतस्य बृहतो बभूथ॥ ४५ ॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! જેમ તું भद्रस्य-આનંદકારક दक्षस्य-શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત साधोः-સન્માર્ગ પર ચાલનાર ऋतस्य-સત્યને પ્રાપ્ત પુરુષની बृहतः-મહાન વિષય વા જ્ઞાનરૂપ क्रतोः-બુદ્ધિના સંગથી रथीः-પ્રશંસનીય રમણ સાધન યાનોથી યુક્ત बभूथ-બને, તેમ अध-મંગલાચરણપૂર્વક हि-નિશ્ચય કરીને અમે પણરથી બનીએ. (૪૫)

ભાવાર્થ : જેમ શાસ્ત્ર અને યોગ દ્વારા ઉત્પન્ન બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને વિદ્વાન ઉન્નતિ પામે છે, તેમ અધ્યેતા-વિદ્યાર્થી પણ ઉન્નતિ કરે. (૪૫)

एभिर्नोऽअर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्वर्ण ज्योतिः।
अग्ने विश्वेभिः सुमनाऽअनीकैः॥ ४६ ॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્યાપ્રકાશથી યુક્ત પુરુષ ! આપ नः-અમારા માટે विश्वेभिः-સર્વ अनीकैः-સેનાઓ સહિત રાજા સમાન सुमनाः-મનથી સુખકારી भव-બનો. एभिः-એ પૂર્વોક્ત अर्कैः-પૂજા યોગ્ય વિદ્વાનો સહિત नः-અમારા માટે ज्योतिः-જ્ઞાનના પ્રકાશક अर्वाङ्-નિકૃષ્ટોને ઉત્કૃષ્ટ બનાવવાના જાણકાર स्वः-સુખની न-સમાન બનો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જેમ રાજા સુશિક્ષિત બળ આદિ સેનાઓથી શત્રુઓને જીતીને સુખી થાય છે, તેમજ પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિ આદિ ગુણોથી અવિદ્યા આદિ ક્લેશોને જીતીને મનુષ્ય સુખી થાય છે. (૪૬)

अग्निꣳहोतारं मन्ये दास्वन्तं वसुꣳ सूनुꣳ सहसो जातवेदसं विप्रं न जातवेदसम्। यऽऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा। घृतस्य विभ्राष्टिमनु वष्टि

शो॒चिषा॒ऽऽजुह्वा॑नस्य स॒र्पिषः॑ ॥ ४७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે ऊर्ध्वया-ઊર્ધ્વગતિની સાથે स्वध्वरः-શુભકર્મ કરવાથી અહિંસનીય છે, देवाच्या-વિદ્વાનોના સત્કાર માટે कृपा-સમર્થ ક્રિયાથી देवः-દિવ્યગુણો યુક્ત છે, शोचिषा-દીપ્તિના કારણે आजुह्वानस्य-સારી રીતે હવન કરેલ सर्पिषः-ઘૃત અને घृतस्य-જલના સાનિધ્યથી विभ्राष्टिम्-વિવિધ પ્રકારની જ્યોતિઓને अनुवष्टि-પ્રકાશિત કરે છે.

તે होतारम्-સુખદાતા, जातवेदसम्-સર્વ ઉત્પન્ન પદાર્થોમાં વિદ્યમાન, सहसः-બળવાન પુરુષના सूनुम्-પુત્રની સમાન, वसुम्-ધનદાતા, वास्वन्तम्-દાનશીલ, जातवेदसम्-બુદ્ધિમાનોમાં પ્રસિદ્ધ-પ્રજ્ઞાવાન, अग्निम्-તેજસ્વી અગ્નિ न-સમાન विप्रम्-આપ્ત જ્ઞાનીનો હું मन्ये-સત્કાર કરું છું, તેમ તમે પણ સત્કાર કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જેમ સારી રીતે સેવા કરેલ વિદ્વાન્ વિદ્યા, ધર્મ અને સુશિક્ષાથી સર્વને આર્ય [શ્રેષ્ઠ] બનાવે છે, તેમ યુક્તિપૂર્વક સેવન કરેલ અગ્નિ પોતાના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી સર્વની ઉન્નતિ કરે છે. (૪૭)

अग्ने॒ त्वं नो॒ अन्त॑मऽउ॒त त्रा॒ता शि॒वो भ॑वा वरू॒थ्यः॑। वसु॑र॒ग्निर्वसु॑श्रवा॒ऽअच्छा॑ नक्षि द्यु॒मत्त॑मꣳ र॒यिन्दाः॑। तं त्वा॑ शोचिष्ठ दीदिवः सु॒म्नाय॑ नू॒नमी॑महे॒ सखि॑भ्यः ॥ ४८ ॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! त्वम्-આપ જેમ આ वसुः-ધનદાતા, वसुश्रवाः-અન્ન અને ધનના હેતુ अग्निः-અગ્નિ रयिम्-ધનને दाः-પ્રદાન કરે છે, તેમ नः-અમારી अन्तमः-અત્યંત સમીપ त्राता-રક્ષક, वरूथ्यः-શ્રેષ્ઠ उत-અને शिवः-મંગલકારી भव-બનો.

હે शोचिष्ठ-અતિ તેજસ્વી दीदिवः-અતિ પ્રકાશમાન વા કામના યોગ્ય વિદ્વાન । જેમ અમે त्वा-તને सखिभ्यः-મિત્રોના सुम्नाय-સુખ માટે नूनम्-નિશ્ચયરૂપથી ईमहे-પ્રાર્થના કરીએ છીએ, તેમ तम्-તારાથી સર્વ મનુષ્ય પ્રાર્થના કરે.

જેમ હું द्युमत्तमम्-પ્રશંસિત પ્રકાશોથી યુક્ત તને अच्छ-ઉત્તમ રીતે नक्षि-પ્રાપ્ત થાઉં છું, તેમ તું અમને પ્રાપ્ત કર. (૪૮)

ભાવાર્થ : જે મિત્ર પોતાના મિત્રને ચાહે છે. અને તેની ઉન્નતિ કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ પુરુષ સર્વનો મિત્ર બનીને સર્વને સુખી કરે. (૪૮)

येन॒ऽऋष॑य॒स्तप॑सा स॒त्रमा॒यन्निन्धा॑ना॒ऽअ॒ग्निꣳ स्व॑रा॒भर॑न्तः।
तस्मि॑न्न॒हं निद॑धे॒ नाके॒ऽअ॒ग्निं यमा॒हुर्मन॑व स्ती॒र्णब॑र्हिषम् ॥ ४९ ॥

પદાર્થ : येन-જે तपसा-ધર્માનુષ્ઠાનરૂપ કર્મથી इन्धानाः-પ્રકાશમાન स्वः-સુખને आभरन्तः-સારી રીતે ધારણ કરતાં ऋषयः-વેદના અર્થ જાણનાર ઋષિ सत्रम्-સત્ય વિજ્ઞાનથી યુક્ત अग्निम्-વિદ્યુત્ આદિ

અગ્નિને आयन्-પ્રાપ્ત કરે છે, तस्मिन्-તે કર્મથી नाके-દુઃખ રહિત સુખની પ્રાપ્તિ માટે मनवः-વિચારશીલ વિદ્વાન્ यम्-જે स्तीर्णबर्हिषम्-આકાશને આચ્છાદન કરનાર अग्निम्-અગ્નિને आहुः-ઉપદેશ કરે છે, તેને अहम्-હું निदधे-ધારણ કરું છું. (૪૯)

ભાવાર્થ : જેમ વેદોના પારંગત વિદ્વાનો સત્ય આચરણ કરીને, વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને સમર્થ બને છે. એ રીતે [અન્ય] મનુષ્યોએ પણ સમૃદ્ધિવાન્ બનવું જોઈએ. (૪૯)

तं पत्नीभिरनु गच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुत वा हिरण्यैः।
नाकं गृभ्णानाः सुकृतस्य लोके तृतीये पृष्ठेऽअधि रोचने दिवः॥ ५०॥

પદાર્થ : હે देवाः-વિદ્વાનો ! જેમ તમે तम्-તે પૂર્વોક્ત અગ્નિને गृभ्णानाः-ગ્રહણ કરીને दिवः-પ્રકાશયુક્ત सुकृतस्य-ઉત્તમ રીતિથી આચરણ કરેલ વેદોક્ત કર્મ अधि-માં વા रोचने-રુચિકારક तृतीये-વિજ્ઞાનથી ઉત્પન્ન पृष्ठे-જાણવાને ઈષ્ટ लोके-વિચારવા વા જોવા યોગ્ય સ્થાનમાં વિદ્યમાન पत्नीभिः-પોત-પોતાની સ્ત્રીઓ पुत्रैः-વૃદ્ધાવસ્થામાં ઉત્પન્ન દુઃખથી રક્ષા કરનાર પુત્રો भ्रातृभिः-બંધુઓ उत-અન્ય वा-સંબંધીઓ તથા हिरण्यैः-સુવર્ણ આદિ ધનોથી नाकम्-આનંદને પ્રાપ્ત કરો છો, તેમ તે સર્વથી યુક્ત અમે પણ अनु,गच्छेम-પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન્ પોતાની સ્ત્રી, પુત્ર, બંધુ, પુત્રી, માતા, પિતા, સેવક-નોકર અને પડોશી જનોને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા ધાર્મિક અને પુરુષાર્થી બનાવીને સંતોષ પામે છે, તેમ જ સર્વ મનુષ્યો તેનું અનુકરણ કરે. (૫૦)

आ वाचो मध्यमरुहद् भुरण्युरयमग्निः सत्पतिश्चेकितानः।
पृष्ठे पृथिव्या निहितो दविद्युतदधस्पदं कृणुतां ये पृतन्यवः॥ ५१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! चेकितानः-વિજ્ઞાનયુક્ત सत्पतिः-શ્રેષ્ઠોના રક્ષક આપ वाचः-વાણીના मध्यम्-મધ્યથી ઉપદેશ પ્રાપ્ત કરીને જેમ अयम्-એ भुरण्युः-પુષ્ટિકર્તા अग्निः-વિદ્વાન્ पृथिव्याः-ભૂમિના पृष्ठे-ઉપર निहितः-નિરંતર સ્થિર કરેલ दविद्युतत्-ઉપદેશથી સર્વને પ્રકાશિત કરે છે અને ધર્મ પર आ + अरुहत्-આરૂઢ થાય છે, તેની સાથે ये-જે લોકો प्रतन्यवः-યુદ્ધ માટે સેનાની ઈચ્છા કરે છે, તેને अधस्पदम्-પોતાના અધિકારથી ચ્યુત-પદચ્યુત कृणुताम्-કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ રાજા જેમ ઈશ્વર બ્રહ્માંડના મધ્યમાં સૂર્યને રાખીને સર્વને સુખથી ઉપકૃત કરે છે, તેમ જ રાજ્યના મધ્યમાં વિદ્યા અને બલને ધારણ કરીને, શત્રુઓને જીતીને, પ્રજાજનોનો ઉપકાર કરે. (૫૧)

अयमग्निर्वीरतमो वयोधाः सहस्रियो द्योततामप्रयुच्छन्।
विभ्राजमानः सरिरस्य मध्यऽउप प्र याहि दिव्यानि धाम॥ ५२॥

પદાર્થ : જે अयम्-એ वीरतमः-પોતાના બળથી શત્રુના બળને અત્યંત વ્યાપ્ત કરનાર, वयोधाः-સર્વના જીવનને ધારણકર્તા, सहस्त्रियः-અસંખ્ય યોદ્ધાઓની સમાન, सरिरस्य-આકાશની मध्ये-વચ્ચે विभ्राजमानः-વિશેષ કરીને વિદ્યા અને ન્યાયથી દેદિપ્યમાન, अप्रयुच्छन्-પ્રમાદરહિત બનીને अग्निः-અગ્નિસમાન સેનાપતિ આપ द्योतताम्-સર્વત્ર પ્રકાશિત બનો અને दिव्यानि-સારા धाम-જન્મ, કર્મ અને સ્થાનોને उप + प्र + याहि-પ્રાપ્ત કરો. (૫૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધાર્મિકજનો સાથે રહીને, પ્રમાદનો ત્યાગ કરીને, જિતેન્દ્રિયપૂર્વક જીવન-આયુની વૃદ્ધિ કરીને, વિદ્યા અને ધર્માચરણથી પવિત્ર બનીને પરોપકારી બનવું જોઈએ. (૫૨)

सम्प्रच्यवध्वमुप सम्प्रयाताग्ने पथो देवयानान् कृणुध्वम्।
पुनः कृण्वाना पितरा युवानान्वाताᳬंसीत् त्वयि तन्तुमेतम्॥ ५३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્યાઓને उप + संप्रयात-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત કરો, देवयानान्-ધાર્મિકોના पथः-માર્ગો પર संप्रच्यवध्वम्-ઉત્તમ રીતે ચાલો, અને ધર્મનું कृणुध्वम्-આચરણ કરો.

હે अग्ने-વિદ્વાન્ પિતામહ ! त्वयि-તમે પિતામહ-દાદા વિદ્યમાન રહેતાં पितरा-રક્ષા કરનાર માતા-પિતા તમારા પુત્ર આદિ બ્રહ્મચર્યનું અનુષ્ઠાન कृण्वाना-કરતાં युवाना-પૂર્ણ યુવાવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈને સ્વયંવર વિવાહ કરીને पुनः-પશ્ચાત્ एतम्-ગર્ભાધાનાદિ રાતથી યથોક્ત तन्तुम्-સંતાનને अन्वातांसीत्-ઉત્પન્ન કરે.

ભાવાર્થ : કુમાર ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યના સેવનથી પૂર્ણ વિદ્યાનું અધ્યયન કરીને સ્વયં ધાર્મિક બનીને; પૂર્ણ યુવાવસ્થા પ્રાપ્ત થતાં, કન્યાઓની પુરુષ અને પુરુષોની કન્યાઓ પરીક્ષા કરીને, અત્યંત પ્રેમથી આકૃષ્ટ હૃદયયુક્ત બનીને, સ્વેચ્છાથી વિવાહ કરીને; ધર્મપૂર્વક સંતાનોને ઉત્પન્ન કરીને તથા સેવા દ્વારા માતા-પિતાને સંતુષ્ટ કરીને; આપ્ત વિદ્વાનોના માર્ગનું સદા અનુસરણ કરે.

જેમ સરળ ધર્મમાર્ગોની સ્થાપના કરે, તેમ ભૂમિ, જલ અને અન્તરિક્ષના માર્ગોનું પણ નિર્માણ કરે. (૫૩)

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सᳬंसृजेथामयं च।
अस्मिन् सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥ ५४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-શ્રેષ્ઠ વિદ્યાથી પ્રકાશિત સ્ત્રી વા પુરુષ ! તું उद्बुध्यस्व-ઉત્કૃષ્ટ રીતિથી જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને, સર્વના પ્રત્યે प्रति + जागृहि-અવિદ્યારૂપ નિદ્રાનો ત્યાગ કરીને વિદ્યાથી ચેતન બન. त्वम्-તું સ્ત્રી च-અને अयम्-એ પુરુષ બન્ને अस्मिन्-આ વિદ્યમાન सधस्थे-એક સ્થાનમાં અને उत्तरस्मिन्-આગામી સમયમાં સદા इष्टापूर्त्ते-ઈષ્ટ અર્થાત્ સુખ, વિદ્વાનોનો સહકાર, ઈશ્વરની આરાધના, સત્સંગતિ અને સત્યવિદ્યા આદિનું દાન, પૂર્ત અર્થાત્ પૂર્ણબળ, બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યાથી અલંકૃત થવું, પૂર્ણ યુવાવસ્થા અને પૂર્ણ સાધન-ઉપસાધનો એ સર્વને संसृजेथाम्-ઉત્તમ રીતિથી સિદ્ધ કરો.

विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો, च-અને यजमानः-યજ્ઞ કરનાર પુરુષ તમે એક સ્થાનમાં अधि-सीदत-ઉન્નતિ પૂર્વક વિદ્યમાન રહો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ અને યજમાન સુખ અને પૂર્ણ સામગ્રીને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષ આ જગતમાં સારી રીતે આચરણ કરે.

જ્યારે વિવાહ માટે દૃઢ પ્રેમયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ બને, ત્યારે વિદ્વાનોને બોલાવીને, તેના સાનિધ્યમાં વેદોક્ત પ્રતિજ્ઞાઓ કરીને પરસ્પર પતિ અને પત્ની બને. (૫૪)

येन वहसि सहस्रं येनाग्ने सर्ववेदसम्।
तेनेमं यज्ञं नो नय स्वर्देवेषु गन्तवे॥ ५५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! તું देवेषु-વિદ્વાનોમાં स्वः-સુખને गन्तवे-પ્રાપ્ત કરવા માટે येन-જે પ્રતિજ્ઞા કરેલ કર્મથી सहस्रम्-ગૃહાશ્રમના અસંખ્ય વ્યવહારને वहसि-વહન કરે છે, येन-જે વિજ્ઞાનથી सर्ववेदसम्-સર્વ વેદો દ્વારા પ્રતિપાદિત કર્મને યથાવત્ પ્રાપ્ત કરે છે, तेन-તેથી તે કર્મથી इमम्-આ ગૃહાશ્રમરૂપી यज्ञम्-સંગને યોગ્ય યજ્ઞને-ગૃહાશ્રમને नः-અમને नय-પ્રાપ્ત કરાવો. (૫૫)

ભાવાર્થ : વિવાહ સમયે પ્રતિજ્ઞાઓમાં [વર-વધુથી] એ પ્રતિજ્ઞાઓ પણ કરાવવી જોઈએ; હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને જેમ પોતાના હિત માટે કાર્ય કરો છો, તેમ માતા, પિતા, આચાર્ય અને અતિથિ-જનોના સુખ માટે નિરંતર કાર્ય કરતા રહો. (૫૫)

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातोऽअरोचथाः।
तं जानन्नग्नऽआ रोहाथा नो वर्धया रयिम्॥ ५६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! अयम्-એ ते-તારું ऋत्वियः-ઋતુ અનુસાર योनिः-ઘર છે, यतः-જે વિદ્યાના અધ્યયન-અધ્યાપનથી जातः-પ્રસિદ્ધ થઈને તું अरोचथाः-પ્રકાશિત બન, तम्-તે ઘરને जानन्-જાણતાં વા જાણતી બનીને आरोह-ધર્મ પર આરૂઢ-ઉન્નતિ કર अथ-ત્યારબાદ नः-અમારી रयिम्-સંપત્તિની वर्धय-વૃદ્ધિ કર. (૫૬)

ભાવાર્થ : વિવાહ સમયે સ્ત્રી-પુરુષોએ બીજી પ્રતિજ્ઞા પણ કરવી જોઈએ; જે બ્રહ્મચર્ય અને જે વિદ્યાથી તમે બન્ને સ્ત્રી-પુરુષ કૃત-કૃત્ય બન્યા છો, તેનો સદા પ્રચાર કરો.

પુરુષાર્થપૂર્વક ધન આદિની વૃદ્ધિ કરીને તેને સન્માર્ગમાં વ્યય કરો. (૫૬)

तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतूऽअग्नेरन्तःश्लेषोऽसि कल्पेतां द्यावापृथिवी कल्पन्तामापऽओषधयः कल्पन्तामग्नयः पृथङ् मम ज्यैष्ठ्याय सव्रताः। येऽअग्नयः समनसोऽन्तरा द्यावापृथिवीऽइमे शैशिरावृतूऽअभिकल्पमानाऽइन्द्रमिव

देवाऽअभिसंविशन्तु तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम्॥ ५७॥

પદાર્થ : હે ઈશ્વર मम-મારી ज्यैष्ठ्याय-શ્રેષ્ઠતા માટે तपः-તાપ વર્ધક મહામહિનો च-અને तपस्यः-તાપયુક્ત ફાગણ મહિનો च-એ બન્ને शिशिरौ-શિશિર ઋતુમાં પ્રખ્યાત ऋतू-પોતાના લક્ષણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર સુખદાયી ઋતુ છે.

આપ જેની अग्नेः-અગ્નિના પણ अन्तःश्लेषः-મધ્યમાં પ્રવિષ્ટ असि-છે, તે બન્નેથી द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિ कल्पेताम्-સમર્થ બને, आपः-જલ ओषधयः-ઔષધિઓ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને, सव्रताः-સમાન નિયમયુક્ત વિદ્યમાન अग्नयः-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિ पृथक्-પૃથક્ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને.

ये-જે समनसः-સમાન રૂપથી મન નિમિત્ત अग्नयः-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિઓ છે इमे-આ द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિના अन्तरा-મધ્યમાં शैशिरौ-શિશિર ઋતુના સાધક ऋतू-મહા અને ફાગણ મહિનાને अभिकल्पमानाः-સમર્થ બનાવે છે, તે અગ્નિઓમાં इन्द्रमिव-ઐશ્વર્યની સમાન देवाः-વિદ્વાનો अभिसंविशन्तु-જ્ઞાનપૂર્વક પ્રવિષ્ટ કરે.

હે સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને तया-તે देवतया-પૂજાને યોગ્ય, સર્વત્ર વ્યાપ્ત, જગદીશ્વર દેવતાની સાથે अङ्गिरस्वत्-પ્રાણની સમાન વિદ્યમાન બનીને આકાશ અને ભૂમિની સમાન ध्रुवे-દૃઢ सीदतम्-સ્થિર રહો. (૫૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પ્રત્યેક ઋતુમાં ઈશ્વરથી જ સુખ માગવું જોઈએ.

ઈશ્વર વિદ્યુતની અંદર પ્રવિષ્ટ હોવાના કારણે સર્વ પદાર્થો પોત-પોતાના નિયમથી સમર્થ બને છે.

વિદ્વાનો સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિઓના ગુણ-દોષોને જાણે.

સ્ત્રી-પુરુષ ગૃહાશ્રમમાં સ્થિર બુદ્ધિ થઈને શિશિર ઋતુનાં સુખનો ઉપયોગ કરે. (૫૭)

परमेष्ठी त्वा सादयतु दिवस्पृष्ठे ज्योतिष्मतीम्। विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ। सूर्यस्तेऽधिपतिस्तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद॥ ५८॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! परमेष्ठी-મહાન આકાશમાં વ્યાપક થઈને વિદ્યમાન પરમેશ્વર ज्योतिष्मतीम्-પ્રશસ્ત જ્ઞાનયુકત त्वा-તને दिवः-પ્રકાશના पृष्ठे-ઉત્તમ ભાગમાં विश्वस्मै-સર્વ प्राणाय-પ્રાણ अपानाय-અપાન, व्यानाय-વ્યાન આદિની યથાર્થ ક્રિયા માટે सादयतु-સ્થાપિત કરે.

તું સર્વ સ્ત્રીઓ માટે विश्वम्-સમસ્ત ज्योतिः-જ્ઞાનનો પ્રકાશ यच्छ-સર્વ સ્ત્રીઓને પ્રદાન કર. જેથી ते-તારા सूर्यः-સૂર્ય સમાન તેજસ્વી अधिपतिः-સ્વામી છે, तया-તે देवतया-શ્રેષ્ઠ ગુણોયુક્ત પતિની સાથે વર્તમાન રહીને अङ्गिरस्वत्-સૂર્યની સમાન ध्रुवा-દૃઢતાપૂર્વક सीद-સ્થિર રહે. (૫૮)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વરે જે શરદ ઋતુની રચના કરી છે, તેની ઉપાસનાપૂર્વક તે શરદ ઋતુનું યુક્તિથી

સેવન કરીને સ્ત્રી-પુરુષ સુખની સદાવૃદ્ધિ કરે. (૫૮)

लोकं पृण छिद्रं पृणाथो सीद ध्रुवा त्वम्।
इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिरस्मिन् योनावसीषदन्॥ ५९॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! त्वम्-તું लोकम्-લોક તથા પરલોકને पृण-સુખયુક્ત કર, छिद्रम्-તારી ન્યૂનતાને पृण-પૂર્ણ કર, ध्रुवा-નિશ્ચલ બનીને सीद-ઘરમાં બેસ અર્થાત્ સ્થિર રહે. अथो-તદનંતર इन्द्राग्नी-ઉત્તમ ધનવાન તથા જ્ઞાનવાન અને बृहस्पतिः-અધ્યાપક अस्मिन्-એ योनौ-ગૃહાશ્રમમાં त्वा-તને असीषदन्-સ્થાપિત કરે. (૫૯)

ताऽअस्य सूददोहसः सोमꣳ श्रीणन्ति पृश्नयः।
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वारोचने दिवः॥ ६०॥

પદાર્થ : જે વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત देवानाम्-વિદ્વાનોના जन्मन्-જન્મ વિષયમાં पृश्नयः-પૂછનારી, सूददोहसः-રસોયા અને કાર્ય કરનારા પુરુષોથી યુક્ત, त्रिषु-વેદરીતિથી જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના એ ત્રણેમાં તથા दिवः-સર્વના અન્તઃપ્રકાશક પરમાત્માના रोचने-પ્રકાશમાં વિદ્યમાન विशः-પ્રજા છે, ताः-તે अस्य-આ સભાધ્યક્ષ રાજાની सोमम्-સોમલતા આદિ ઔષધિઓના રસથી યુક્ત ભોજનના પદાર્થોને आ-સર્વત્રથી श्रीणन्ति-પકાવે છે. (૬૦)

ભાવાર્થ : પ્રજાપાલક-રાજા સર્વ પ્રજાને વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરવામાં નિયુક્ત કરે તથા પ્રજા તે કાર્યમાં સ્વયં નિયુક્ત થાય.

કારણ કે તે વિના જ્ઞાન, કર્મ, ઉપાસના અને ઈશ્વરનું યથાર્થ જ્ઞાન કદીપણ થઈ શકતું નથી. (૬૦)

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः।
रथीतमꣳ रथीनां वाजानाꣳ सत्पतिं पतिम्॥ ६१॥

પદાર્થ : विश्वाः-સર્વ गिरः-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણી समुद्रव्यचसम्-આકાશ સમાન વ્યાપ્તિયુક્ત, रथीनाम्-શૂરવીરોમાં रथीतमम्-અત્યંત શૂરવીર, वाजानाम्-વિજ્ઞાની જનોના सत्पतिम्-સત્ય વ્યવહારો અને વિદ્વાનોના રક્ષક તથા પ્રજાઓના पतिम्-સ્વામી इन्द्रम्-પરમ સંપત્તિયુક્ત સભાપતિ રાજાને अवीवृधन्-અભિવૃદ્ધિ કરે. (૬૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ અને પ્રજાજન રાજધર્મથી યુક્ત, ઈશ્વરની સમાન વર્તમાન ન્યાયાધીશ સભાપતિ-રાજાને નિરંતર પ્રોત્સાહિત કરે. એ જ રીતે સભાપતિ-રાજા પણ તેઓને [પ્રોત્સાહિત] કરે. (૬૧)

प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्व्यस्थात्।

आर्दस्य वातोऽअनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति॥ ६२॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! આપ यवसे-ભૂસું આદિ માટે अश्वः-ઘોડાની न-સમાન પ્રજાને प्रोथत्-સમર્થ કરો. यदा-જ્યારે महः-મહાન્ संवरणात्-આચ્છાદનથી अविष्यन्-રક્ષા આદિ કરતાં व्यस्थात्-સ્થિત બનો. आत्-પુનઃ अस्य-એ ते-આપની व्रजनम्-ગતિ તથા कृष्णम्-આકર્ષણ કરનાર शोचिः-પ્રકાશ अस्ति-છે. अध-તદનન્તર स्म-જ આપના वातः-ગતિશીલ સેવક अनुवाति-અનુગમન કરે છે, આપની પાછળ ચાલે છે. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેમ પાલન કરવાથી ઘોડાઓ પુષ્ટ થઈને કાર્ય કરવામાં સમર્થ બને છે, તેમ ન્યાયપૂર્વક પાલન કરવાથી પ્રજા સંતુષ્ટ બનીને રાજ્યની વૃદ્ધિ કરે છે. (૬૨)

आयोष्ट्वा सदने सादयाम्यवतश्छायायाᳬं समुद्रस्य हृदये।
रश्मीवतीं भास्वतीमा या द्यां भास्या पृथिवीमोर्वन्तरिक्षम्॥ ६३॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! या-જે તું द्याम्-પ્રકાશ, पृथिवीम्-ભૂમિ અને अन्तरिक्षम्-આકાશની उरु-અત્યંત आभासि-પ્રકાશિત કરે છે, તે रश्मीवतीम्-શુદ્ધ વિદ્યાના પ્રકાશથી યુક્ત, भास्वतीम्-શોભાપાત્ર त्वा-તને आयोः-ન્યાયના અનુગામી, દીર્ઘ જીવી પુરુષના सदने-સ્થાન-ઘરમાં તથા अवतः-રક્ષા આદિ કરનારની छायायाम्-આશ્રયમાં आ + सादयामि-શ્રેષ્ઠ રીતે સ્થાપિત કરું છું समुद्रस्य-અન્તરિક્ષના हृदये-મધ્યમાં આ-શુદ્ધ રીતે હું સ્થિત કરું છું. (૬૩)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! ઉત્તમ રીતિથી પાલન કરનાર પતિના ઘરમાં અને તેની છાયા-આશ્રયમાં-સમુદ્ર સમાન ચંચળતા રહિત, તને (પ્રિયાને) હું સ્થાપિત કરું છું.

તું ગૃહાશ્રમના ધર્મને પ્રકાશિત કરીને પતિ આદિને સુખી કર અને તને એ લોકો સુખી કરે. (૬૩)

परमेष्ठी त्वा सादयतु दिवस्पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीं दिवं यच्छ दिवं दृᳬंह दिवं मा हिᳬंसीः। विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय। सूर्यस्त्वाभिपातु मह्या स्वस्त्या छर्दिषा शन्तमेन तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम्॥ ६४॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! परमेष्ठी-પરમાત્મા विश्वस्मै-સમસ્ત प्राणाय-જીવન સુખ, अपानाय-દુઃખ નિવૃત્તિ, व्यानाय-વિવિધ વિદ્યાઓની પ્રાપ્તિ, उदानाय-ઉત્તમ બલ, प्रतिष्ठायै-સર્વત્ર સત્કાર અને चरित्राय-શ્રેષ્ઠ કર્મોના અનુષ્ઠાન માટે दिवः-કામના કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમના વ્યવહારના पृष्ठे-આધાર પર प्रथस्वतीम्-અત્યંત પ્રસિદ્ધ અને પ્રશંસાવાળી, व्यचस्वतीम्-ઉત્તમ વિદ્યાથી યુક્ત જે त्वा-તને सादयतु-સ્થાપિત કરે,

તે તું दिवम्-ન્યાયના પ્રકાશને यच्छ-પ્રદાન કર, दिवम्-વિદ્યારૂપ સૂર્યને दृंह-દૃઢ કર, दिवम्-ધર્મના પ્રકાશને मा हिंसीः-નષ્ટ ન કર.

सूर्यः-ચરાચર જગતના સ્વામી ઈશ્વર मह्या-મહાન શ્રેષ્ઠ स्वस्त्या-સત્કાર, शन्तमेन-અત્યંત સુખ અને छर्दिषा-સત્યાસત્યના પ્રકાશથી त्वा-તારી अभिपातु-સર્વત્રથી રક્ષા કરે.

તે તારા પતિ અને તું બન્ને तया-તે देवतया-પરમેશ્વર દેવતાની સાથે अङ्गिरस्वत्-પ્રાણ સમાન ध्रुवे-નિશ્ચલ सीदतम्-સ્થિર રહો. (૬૪)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર આજ્ઞા કરે છે, કે જેમ શિશિર ઋતુ સુખદાયક છે, તેમ સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર સંતુષ્ટ રહીને, સર્વ ઉત્તમ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરીને, દુષ્ટ કર્મોનો પરિત્યાગ કરીને, પરમેશ્વરની ઉપાસનાથી સદા આનંદ પ્રાપ્ત કરે. (૬૪)

स॒हस्र॑स्य प्र॒मासि॑ स॒हस्र॑स्य प्रति॒मासि॑ स॒हस्र॑स्यो॒न्मासि॑ साह॒स्रो॒ऽसि स॒हऽस्रा॑य त्वा॥ ६५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! જે કારણે તું सहस्रस्य-અસંખ્ય પદાર્થોથી યુક્ત જગતના प्रमा-પ્રમાણ યથાર્થ જ્ઞાન સમાન असि-છે, सहस्रस्य-અસંખ્ય વિશેષ પદાર્થોના प्रतिमा-તોલ કરવાના સાધનની સમાન असि-છે, सहस्रस्य-અસંખ્ય સ્થૂલ પદાર્થોને उन्मा-તોલવાની તુલા સમાન असि-છે, साहस्रः-અસંખ્ય પદાર્થ અને વિદ્યાઓથી યુક્ત असि-છે, તેથી सहस्राय-અસંખ્ય પ્રયોજનોની સિદ્ધિ માટે त्वा-તને પરમાત્મા સત્ય વ્યવહારમાં સ્થિર કરે. (૬૫)

ભાવાર્થ : ત્રણ સાધનોથી મનુષ્યોના વ્યવહાર સિદ્ધ થાય છે, એક 'પ્રમા' જે યથાર્થ વિજ્ઞાન છે. બીજું 'પ્રતિમા' જે માપ કરવામાં તથા પદાર્થોના વજન કરવામાં-તોલવામાં બાંટ-કાટલાં આદિ સાધન છે. ત્રીજું 'ઉન્મા' ત્રાજવા આદિ છે. (૬૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઋતુવિદ્યાનું પ્રતિપાદન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति पञ्चदशोऽध्यायः ॥



॥ अथ षोडशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः॥ १॥

પદાર્થ : હે रुद्र-દુષ્ટ શત્રુઓને રડાવનાર રાજન્ ! ते-તારા પર मन्यवे-ક્રોધાયમાન વીર પુરુષ માટે नमः-વજ્ર अस्तु-મળો. उतो-અને इषवे-શત્રુઓને મારનાર ते-તારા માટે नमः-અન્ન अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. उत-અને ते-તારી बाहुभ्याम्-ભુજાઓથી नमः-શત્રુઓને વજ્ર-પીડા મળો. (૧)

ભાવાર્થ : જે રાજ્ય કરવા ઈચ્છે તે બાહુબલ, યુદ્ધ વિદ્યા અને શસ્ત્રો-અસ્ત્રોની વ્યવસ્થા કરે. (૧)

या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी।

तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि॥ २॥

પદાર્થ : હે गिरिशन्त-મેઘ વા સત્ય ઉપદેશથી સુખદાતા, रुद्र-દુષ્ટોને માટે ભયકારક અને શ્રેષ્ઠોને માટે સુખકારક શિક્ષક વિદ્વાન્ ! या-જે ते-આપની अघोरा-ઘોર ઉપદ્રવ રહિત, अपापकाशिनी-સત્ય ધર્મોને પ્રકાશિત કરનારી, शिवा-કલ્યાણકારી तनूः-દેહ વા વિસ્તૃત ઉપદેશરૂપ નીતિ છે, तया-તે शन्तमया-અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરાવનારી तन्वा-દેહ વા વિસ્તૃત ઉપદેશની નીતિથી नः-અમને આપ अभि, चाकशीहि-સર્વથી શીઘ્ર શિક્ષણ આપો. (૨)

ભાવાર્થ : શિક્ષકજન શિષ્યોને ધાર્મિક નીતિની શિક્ષા આપીને તેને પાપરહિત અને કલ્યાણમય આચરણયુક્ત બનાવે. (૨)

यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे।

शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिंसीः पुरुषं जगत्॥ ३॥

પદાર્થ : હે गिरिशन्त-મેઘ દ્વારા સુખ આપનાર સેનાપતિ ! જે કારણે તું अस्तवे-ફેંકવા માટે याम्-જે इषुम्-બાણ हस्ते-હાથમાં बिभर्षि-ધારણ કરે છે, ताम्-તેને शिवाम्-મંગલકારી कुरु-કર.

હે गिरित्र-વિદ્યાના ઉપદેશકો વા મેઘોના રક્ષક રાજપુરુષ ! તું पुरुषम्-પુરુષાર્થ યુક્ત મનુષ્યાદિ जगत्-સંસારને मा हिंसीः-માર નહિ. (૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ યુદ્ધ વિદ્યા જાણીને, શસ્ત્રોને ધારણ કરીને મનુષ્યાદિ શ્રેષ્ઠ પ્રાણીઓની હિંસા ન કરવી જોઈએ, પરન્તુ મંગલ આચરણથી રક્ષા કરવી જોઈએ. (૩)

शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि।

यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मं सुमनाऽअसत्॥ ४॥

પદાર્થ : હે गिरिश-પર્વત વા મેઘોમાં શયન કરનાર રોગનાશક रुद्र-વૈદ્યરાજ ! તું सुमनाः-પ્રસન્નચિત્ત થઈને यथा-જેમ नः-અમારા सर्वम्-સર્વ जगत्-મનુષ્યાદિ જંગમ અને સ્થાવર રાજ્ય अयक्ष्मम्-ક્ષય આદિ રાજરોગોથી રહિત असत्-બને, તેમ इत्-જ शिवेन-કલ્યાણકારી वचसा-વચનથી त्वा-તને અમે अच्छ-वदामसि-સારા કહીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે વૈદ્યકશાસ્ત્રને ભણીને પર્વત આદિ પર રહેલ ઔષધિઓ તથા જલની પરીક્ષા કરીને, નિષ્કપટ ભાવથી રોગોનું નિવારણ કરી પ્રિય વાણીથી આચરણ કરે છે, તે વૈદ્યનો સર્વ સત્કાર કરે. (૪)

अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक्।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परा सुव॥ ५॥

પદાર્થ : હે रुद्र-રોગનાશક વૈદ્ય ! જે प्रथमः-મુખ્ય, दैव्यः-વિદ્વાનોમાં પ્રસિદ્ધ, अधिवक्ता-સર્વથી ઉત્તમ કક્ષાથી વૈદ્યકશાસ્ત્રને ભણાવનાર તથા भिषक्-નિદાન આદિને જાણીને રોગને નિવૃત્ત કરનાર આપ सर्वान्-સર્વ अहीन्-સર્પની સમાન પ્રાણઘાતક રોગોને च-નિશ્ચયથી जम्भयन्-ઔષધિઓથી નિવારણ કરીને अध्यवोचत्-અધિક ઉપદેશ કરો.

તે આપ જે सर्वाः-સર્વ अधराचीः-નીચી ગતિને પહોંચાડનારી यातुधान्यः-રોગકારક ઔષધિઓ વા વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓ છે, તેને परा-દૂર सुव-કરો. (૫)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ સભાસદ સર્વના અધિષ્ઠાતા, મુખ્ય, ધાર્મિક અને સર્વ પરીક્ષાઓને પ્રાપ્ત વૈદ્યને રાજ્યમાં તથા સેનાઓમાં નિયુક્ત કરીને બળ અને સુખના નાશક રોગોનું, વ્યભિચારી પુરુષોનું તથા વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓનું નિવારણ કરે. (૫)

असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउत बभ्रुः सुमङ्गलः।
ये चैनꣳ रुद्राऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोऽवैषाꣳ हेडऽईमहे॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે असौ-તે ताम्रः-તાંબા સમાન દૃઢ અંગયુક્ત, हेडः-શત્રુઓનો અનાદર કરનાર, अरुणः-સુંદર ગૌરવર્ણ, बभ्रुः-કિંચિત્ પીળા વા ભૂખરા વર્ણયુક્ત उत-અને सुमङ्गलः-સુંદર કલ્યાણકારી રાજા છે, च-અને ये-જે सहस्रशः-અસંખ્ય रुद्राः-દુષ્ટ કર્મ કરનારાઓને રડાવનાર अभितः-સર્વત્રથી दिक्षु-પૂર્વ આદિ દિશાઓમાં एनम्-એ રાજાના श्रिताः-આશ્રયથી વાસ કરે છે, एषाम्-એ વીરોનો આશ્રય કરીને અમે अव + ईमहे-વિરુદ્ધ આચરણની ઈચ્છા ન કરીએ. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અગ્નિ સમાન દુષ્ટોના દાહક, ચન્દ્રમા સમાન શ્રેષ્ઠોમાં પ્રીતિકારક, ન્યાયકારી અને શુભ લક્ષણોયુક્ત રાજા તથા તેના તેવા જ કર્મચારીઓ રાજ્યમાં સર્વત્ર નિવાસ કરો, વિચરણ કરો અથવા સમીપમાં રહો.

તેનો સત્કાર કરીને તેના દ્વારા દુષ્ટોનું અપમાન તમે કરાવો. (૬)

अ॒सौ यो॑ऽव॒सर्प॑ति॒ नील॑ग्रीवो॒ विलो॑हितः।
उ॒तैनं॑ गो॒पाऽअ॑दृश्र॒न्नदृ॑श्रन्नुदहा॒र्य्यः॒ स दृ॒ष्टो मृ॑डयाति नः॥ ७॥

પદાર્થ : यः-જે असौ-તે नीलग्रीवः-નીલમણિઓની માળા ધારણ કરેલ, विलोहितः-વિવિધ પ્રકારના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યુક્ત શ્રેષ્ઠ रुद्रः-શત્રુઓના હિંસક સેનાપતિ अवसर्पति-દુષ્ટોથી વિરુદ્ધ ચાલે છે, एनम्-એને गोपाः-રક્ષક સેવક अदृश्रन्-જુએ છે उत-અને उदहार्य्यः-પાણી લાવનારી [પનિયારી] સ્ત્રીઓ જુએ.

सः-તે સેનાપતિ दृष्टः-દેખભાળ કરતાં नः-અમે ધાર્મિકોને मृडयाति-સુખી કરે. (૭)

ભાવાર્થ : જે દુષ્ટોના વિરોધી, શ્રેષ્ઠોના પ્રિય અને દર્શનીય સેનાપતિ સર્વ સેનાઓને પ્રસન્ન રાખે, તે શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૭)

नमो॑ऽस्तु॒ नील॑ग्रीवाय सहस्रा॒क्षाय॑ मी॒ढुषे॑।
अथो॒ ये ऽअ॑स्य॒ सत्वा॑नो॒ऽहं तेभ्यो॑ऽकरं॒ नमः॑॥ ८॥

પદાર્થ : नीलग्रीवाय-જેનો કંઠ અને સ્વર શુદ્ધ હોય, તે सहस्राक्षाय-હજારો સેવકોના કાર્યો પર દૃષ્ટિ રાખનાર, मीढुषे-પરાક્રમયુક્ત સેનાપતિ માટે મારું આપેલું नमः-અન્ન अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

अथो-એ પછી ये-જે अस्य-એ સેનાપતિના અધિકારમાં सत्वानः-સત્વગુણ તથા બળથી યુક્ત પુરુષ છે, तेभ्यः-તેને માટે પણ अहम्-હું नमः-અન્નાદિ પદાર્થોને अकरम्-સિદ્ધ કરું. (૮)

ભાવાર્થ : સભાપતિ આદિ દ્વારા જેમ સેનાપતિનો અન્નાદિથી સત્કાર કરવામાં આવે, તેમ સૈનિક કર્મચારીઓનો પણ સત્કાર કરવો જોઈએ. (૮)

प्रमु॑ञ्च॒ धन्व॑न॒स्त्वमु॒भयो॒रार्त्न्यो॒र्ज्याम्।
याश्च॑ ते॒ हस्त॒ऽइष॑वः॒ परा॒ ता भ॑गवो वप॥ ९॥

પદાર્થ : હે भगवः-ઐશ્વર્યયુક્ત સેનાપતિ ! ते-તારા हस्ते-હાથમાં याः-જે इषवः-બાણ છે ताः-તેને धन्वनः-ધનુષ્યના उभयोः-બન્ને आर्त्न्योः-પૂર્વઅપર છેડે ज्याम्-પ્રત્યંચામાં [દોરીમાં] જોડીને શત્રુઓ પર त्वम्-તું प्र, मुञ्च-બળપૂર્વક છોડ.

याश्च-અને તારા પર શત્રુઓએ જે બાણ છોડેલાં છે ताः-તેને परा + वप-દૂર કર. (૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિએ ધનુષ્ય દ્વારા ફેંકેલા બાણોથી શત્રુઓને જીતવા જોઈએ. અને શત્રુઓ દ્વારા ફેંકવામાં આવેલા બાણોનું નિવારણ કરવું જોઈએ. (૯)

विज्यं॒ धनुः॑ कप॒र्दिनो॒ विश॑ल्यो॒ बाण॑वाँ२ऽउ॒त।
अने॑शन्नस्य॒ या ऽइष॑व ऽआ॒भुर॑स्य निषङ्गधिः॥ १०॥

પદાર્થ : હે ધનુર્વેદને જાણનારા પુરુષો ! अस्य-આ कपर्दिनः-પ્રશંસિત જટાજૂટવાળા સેનાપતિના धनुः-ધનુષ્ય विज्यम्-પ્રત્યંચા-દોરી રહિત मा भूत्-ન બને તથા એ विशल्यः-બાણના ફણાથી રહિત તથા એ आभुः-આયુધોથી રહિત मृषा-ન બને.

उत-અને अस्य-શસ્ત્ર-અસ્ત્રને ધારણ કરનાર સેનાપતિના निषङ्गधिः-બાણાદિ શસ્ત્રાસ્ત્ર ભંડાર मृषा-ખાલી मा भूत्-ન થાય તથા એ बाणवान्-અનેક બાણોથી યુક્ત હોય.

याः-જો अस्य-એ સેનાપતિના इषवः-બાણો अनेशन्-નષ્ટ પામે તો ताः-જે તમે તેને અન્ય નવા બાણ આપો. (૧૦)

ભાવાર્થ : યુદ્ધ કરવાની ઈચ્છા કરનાર મનુષ્યે દૃઢ ધનુષ્ય તથા પ્રત્યંચા-દોરી આદિ તથા પુષ્કળ બાણો રાખવા જોઈએ.

યુદ્ધ કરતાં વીરોને જોઈને સેનાપતિ આદિ દ્વારા તેને ફરી બાણ આદિ સાધનો આપવા જોઈએ. (૧૦)

या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः।

तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परि भुज॥ ११॥

પદાર્થ : હે मीढुष्टम-અત્યંત વીર્યનું સેવન કરનાર સેનાપતિ ! या-જે ते-તારી સેના છે અને જે ते-તારા हस्ते-હાથમાં धनुः-ધનુષ્ય તથા हेतिः-વજ્ર बभूव-છે, तया-તે अयक्ष्मया-પરાજય આદિની પીડાનું નિવારણ કરનારી સેનાથી તથા તે ધનુષ્ય આદિથી अस्मान्-અમે પ્રજા અને સેનાના પુરુષોનું त्वम्-તું विश्वतः-સર્વત્રથી परि-સારી રીતે भुज-પાલન કર. (૧૧)

ભાવાર્થ : વિદ્યાવૃદ્ધ અને વયોવૃદ્ધ ઉપદેશક વિદ્વાનોએ સેનાપતિ આદિને એ રીતે ઉપદેશ કરવો જોઈએ-

આપે યથાશક્તિ સર્વ શ્રેષ્ઠજનોની સર્વથા રક્ષા અને દુષ્ટજનોની તાડના કરવી જોઈએ. (૧૧)

परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः।

अथो यऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्निधेहि तम्॥ १२॥

પદાર્થ : હે સેનાપતિ ! જે ते-આપના धन्वनः-ધનુષ્યની हेतिः-ગતિ છે તેથી अस्मान्-અમને विश्वतः-સર્વત્રથી आरे-દૂરમાં આપ परिवृणक्तु-છોડો.

अथो-અને यः-જે तव-આપના इषुधिः-બાણનો ભાથો છે तम्-તેને अस्मत्-અમારા आरे-સમીપથી निधेहि-નિરંતર ધારણ કરો.

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોને યુદ્ધનો અને શસ્ત્રાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરીને શસ્ત્ર આદિ સામગ્રી સદા પોતાની પાસે રાખવી જોઈએ.

તે સામગ્રી દ્વારા એક-બીજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. અને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૨)

अ॒व॒तत्य॒ धनु॒ष्ट्वꣳसह॑स्राक्ष॒ शते॑षुधे।
नि॒शीर्य॑ श॒ल्याना॒ं मुखा॑ शि॒वो नः॑ सु॒मना॑ भव॥ १३॥

પદાર્થ : હે सहस्राक्ष-અસંખ્ય યુદ્ધ કાર્યોપર દૃષ્ટિ રાખનાર शतेषुधे-અસંખ્ય શસ્ત્ર-અસ્ત્રોના પ્રકાશયુક્ત સેનાધ્યક્ષ ! त्वम्-તું धनुः-ધનુષ્ય અને शल्यानाम्-શસ્ત્રોના मुखा-અગ્રભાગનો अवतत्य-વિસ્તાર કરીને, તેનાથી શત્રુઓને निशीर्य-સર્વથા મારીને नः-અમારા માટે सुमनाः-પ્રસન્ન ચિત્ત शिवः-મંગલકારી भव-બનો. (૧૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ સામ, દામ, દંડ, ભેદ આદિ રાજનીતિના અંગોની ક્રિયાઓને સર્વ રીતે જાણીને, સંપૂર્ણ શસ્ત્રાસ્ત્રોનું નિર્માણ કરીને, તેને તીક્ષ્ણ કરીને, શત્રુઓ પ્રત્યે દુષ્ટમન અને દુઃખદાયી બને અને પ્રજાઓ પ્રત્યે સૌમ્ય સ્વભાવ અને સુખદાયક બને. (૧૩)

नम॑स्त॒ऽआयु॑धा॒याना॑तताय धृ॒ष्णवे॑।
उ॒भाभ्या॑मु॒त ते॒ नमो॑ बा॒हुभ्या॒ं तव॒ धन्व॑ने॥ १४॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! आयुधाय-યુદ્ધ કરનાર, अनातताय-પોતાના આશયને ગુપ્ત સંકોચમાં રાખનાર, धृष्णवे-પ્રગલ્ભતાને પ્રાપ્ત થનાર ते-આપના માટે नमः-અન્ન પ્રાપ્ત થાય, उत-અને ते-ભોજન કરનાર આપને માટે नमः-અન્ન પ્રદાન કરું છું. तव-આપના उभाभ्याम्-બન્ને बाहुभ्याम्-બળ અને પરાક્રમથી धन्वने-યોદ્ધા પુરુષ માટે नमः-અન્નને નિયત કરું. (૧૪)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ અધિકારીઓએ, અધ્યક્ષો તથા યોદ્ધાઓ બન્નેને માટે શસ્ત્રાસ્ત્ર આપીને, તેને શત્રુઓ સાથે નિઃશંક બનીને યુદ્ધ કરાવવું જોઈએ. (૧૪)

मा नो॑ म॒हान्त॑मु॒त मा नो॑ऽअर्भ॒कं मा न॒ऽउक्ष॑न्तमु॒त मा न॑ऽउक्षि॒तम्।
मा नो॑ वधीः पि॒तरं॒ मोत मा॒तरं॒ मा नः॑ प्रि॒यास्त॒न्वो॒ रुद्र रीरिषः॥ १५॥

પદાર્થ : હે रुद्र-યુદ્ધ સેનામાં અધિકારી વિદ્વાન્ ! આપ नः-અમારા महान्तम्-ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત પૂજ્ય પુરુષને मा वधीः-માર નહિ, उत-અને नः-અમારા अर्भकम्-નાના બાળકને मा वधीः-માર નહિ, नः-અમારા उक्षन्तम्-ગર્ભાધાન કરનાર યુવાનને मा वधीः-માર નહિ, उत-અને नः-અમારા उक्षितम्-ગર્ભને मा वधीः માર નહિ, नः-અમારા पितरम्-પાલક પિતાને मा वधीः-માર નહિ, उत-અને नः-અમારી मातरम्-માનને યોગ્ય માતાને પણ मा वधीः-માર નહિ, नः-અમારી प्रियाः-સ્ત્રી આદિના પ્રીતિ ઉત્પાદક तन्वः-શરીરને मा रीरिषः-માર નહિ. (૧૫)

ભાવાર્થ : યોદ્ધાઓએ યુદ્ધના સમયમાં કદીપણ વૃદ્ધ, બાળક, યુદ્ધ ન કરનાર યુવાન, ગર્ભસ્થ સંતાન, યોદ્ધાઓના માતા તથા પિતા, સર્વની સ્ત્રીઓ, દર્શકો અને દૂતોને મારવા ન જોઈએ. પરન્તુ શત્રુઓના સંબંધીઓને સદા પોતાના વશમાં રાખવા જોઈએ. (૧૫)

मा न॑स्तो॒के तन॑ये॒ मा न॒ऽआयु॑षि॒ मा नो॒ गोषु॒ मा नो॒ऽअश्वे॑षु रीरिषः।
मा नो॑ वी॒रान् रु॑द्र भा॒मिनो॑ वधीर्ह॒विष्म॑न्तः सद॒मित् त्वा॑ हवामहे॥ १६॥

પદાર્થ : હે रुद्र-સેનાપતિ ! તું नः-અમારા तोके-નવજાત શિશુને मा रीरिषः-માર નહિ, नः-અમારા तनये-પાંચ વર્ષથી અધિક આયુના બાળકને मा रीरिषः-માર નહિ, नः-અમારી आयुषि-આયુનો मा रीरिषः-હિંસક ન બન, नः-અમારા गोषु-ગાય, બકરી, ઘેટાં આદિની मा रीरिषः-હિંસા ન કર, नः-અમારા अश्वेषु-ઘોડા, હાથી અને ઊંટ આદિને मा रीरिषः-મારીશ નહિ, नः-અમારા भामिनः-ક્રોધને પ્રાપ્ત થયેલ वीरान्-શૂરવીરોને मा वधीः-માર નહિ.

એથી हविष्मन्तः-અનેક વસ્તુઓનું આદાન-પ્રદાન કરનાર અમે सदम्-ન્યાયાધ્યક્ષ त्वा-તને इत्-જ हवामहे-સ્વીકારીએ છીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ કોઈ પ્રજાજનના અથવા પોતાના બાળક, કુમાર, ગાય, ઘોડા આદિ પશુઓની તથા વીરોની હત્યા ન કરવી જોઈએ.

બાલ્યાવસ્થામાં વિવાહ કરીને વ્યભિચારથી આયુ ક્ષીણ ન કરવી જોઈએ.

ગાય આદિ પશુઓ દૂધ દેવાના કારણે સર્વના ઉપકારક છે, માટે તેની સદા વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

नमो॒ हिर॑ण्यबाहवे सेना॒न्ये॒ दि॒शां च॒ पत॑ये॒ नमो॒ नमो॑ वृ॒क्षेभ्यो॒ हरि॑केशेभ्यः प॒शू॒नां पत॑ये॒ नमो॒ नमः॑ श॒ष्पिञ्ज॑राय॒ त्विषी॑मते प॒थी॒नां पत॑ये॒ नमो॒ नमो॒ हरि॑केशायोपवी॒तिने॑ पु॒ष्टानां॒ पत॑ये॒ नमः॑॥ १७॥

પદાર્થ : હે रुद्र-શત્રુતાડક સેનાધીશ ! हिरण्यबाहवे-જ્યોતિ સમાન તીવ્ર તેજયુક્ત ભુજાઓ યુક્ત, सेनान्ये-સેનાને શિક્ષા આપનાર તારા માટે नमः-વજ્ર પ્રાપ્ત થાય. च-અને दिशाम्-સર્વ દિશાઓના રાજ્ય પ્રદેશોના पतये-રક્ષક તારા માટે नमः-અન્નાદિ પદાર્થ પ્રાપ્ત થાય.

हरिकेशेभ्यः-હરણશીલ સૂર્ય કિરણોથી યુક્ત वृक्षेभ्यः-આંબાદિ વૃક્ષોને કાપવા માટે नमः-વજ્રાદિ શસ્ત્રોને ગ્રહણ કર.

पशूनाम्-ગાય આદિ પશુઓના पतये-રક્ષક તારા માટે नमः-સત્કાર મળે.

शष्पिञ्जराय-વિષયાદિ બંધનોથી રહિત त्विषीमते-અનેક ન્યાયના પ્રકાશોથી યુક્ત તારા માટે नमः-નમસ્કાર અને અન્ન મળે.

पथीनाम्-માર્ગમાં ચાલનારાના पतये-રક્ષક તારા માટે नमः-આદર પ્રાપ્ત થાય.

हरिकेशाय-હરિત કેશવાળા उपवीतिने-સુંદર યજ્ઞોપવિતથી યુક્ત તારા માટે नमः-અન્નાદિ પદાર્થ પ્રાપ્ત થાય.

पुष्टानाम्-નીરોગીઓની पतये-રક્ષા કરનાર માટે नमः-નમસ્કાર પ્રાપ્ત થાય. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શ્રેષ્ઠોને સત્કારથી, ભૂખ્યાને અન્નદાન, ચક્રવર્તી રાજ્યના શાસનથી, પશુઓના પાલનથી, યાત્રાળુઓની ચોર અને ડાકૂઓથી રક્ષા, યજ્ઞોપવિતના ધારણથી અને પુષ્ટિ-નીરોગતાથી સદા

આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૧૭)

नमो बभ्लुशाय व्याधिनेऽन्नानां पतये नमो नमो भवस्य हेत्यै जगतां पतये नमो नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्राणां पतये नमो नमः सूतायाहन्त्यै वनानां पतये नमः॥ १८॥

પદાર્થ : રાજપુરુષ આદિ મનુષ્યોએ बभ्लुशाय-રાજ્યને ધારણ કરનારમાં સ્થિત व्याधिने-રોગીને नमः-અન્ન આપવું જોઈએ, अन्नानाम्-ઘઉં આદિ અન્નના पतये-રક્ષકનો नमः-સત્કાર કરવો, भवस्य-સંસારની हेत्यै-વૃદ્ધિ માટે नमः-અન્ન આપવું, जगताम्-મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓના पतये-સ્વામીનો नमः-સત્કાર કરવો, रुद्राय-શત્રુઓને રડાવનાર અને आततायिने-સારી રીતે વિસ્તૃત શત્રુસેનાને પ્રાપ્ત થનારને नमः-અન્ન આપવું, क्षेत्राणाम्-ધાન્યાદિ ખેતરોના पतये-રક્ષકને नमः-અન્ન આપવું, सूताय-ક્ષત્રિયથી બ્રાહ્મણની કન્યામાં ઉત્પન્ન વીર વા પ્રેરક પુરુષ માટે તથા अहन्त्यै-કોઈને ન મારનારી રાજપત્ની માટે नमः-અન્ન આપવું અને वनानाम्-વનોની पतये-રક્ષા કરનાર પુરુષને नमः-અન્નાદિ પદાર્થો આપવા જોઈએ. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે અન્નાદિથી સર્વ પ્રાણીઓનો સત્કાર કરે છે, તે જગતમાં પ્રશંસિત બને છે. (૧૮)

नमो रोहिताय स्थपतये वृक्षाणां पतये नमो नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनां पतये नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणां पतये नमो नमऽउच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनां पतये नमः॥ १९॥

પદાર્થ : રાજપુરુષ અને પ્રજાજનો रोहिताय-સુખોની વૃદ્ધિ કરનાર અને स्थपतये-સ્થાનો-ઘરોના રક્ષક સેનાપતિને नमः-અન્ન આપે, वृक्षाणाम्-આંબા આદિ વૃક્ષોના पतये-સ્વામીને नमः-અન્ન આપે, भुवन्तये-આચારવાન તથા वारिवस्कृताय-સેવા કરનાર નોકરને नमः-અન્ન આપે, ओषधीनाम्-સોમલતાદિ ઔષધિઓના पतये-રક્ષક વૈદ્યને नमः-અન્ન આપે, मन्त्रिणे-વિચાર-કર્તા રાજપુરુષને તથા वाणिजाय-વૈશ્યના વ્યવહારમાં કુશળ પુરુષનો नमः-સત્કાર કરે, कक्षाणाम्-ઘરોમાં રહેનારાના पतये-રક્ષકોને नमः-અન્ન આપે, उच्चैर्घोषाय-ઊંચા સ્વરથી બોલનાર તથા आक्रन्दयते-દુષ્ટોને રડાવનાર ન્યાયાધીશનો नमः-સત્કાર કરે અને पत्तीनाम्-સેનાના અંગોના पतये-રક્ષક સેનાધ્યક્ષનો नमः-સત્કાર કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વન આદિના રક્ષકોને અન્ન આદિ આપીને વૃક્ષ તથા ઔષધિ આદિની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૧૯)

नमः कृत्स्नायतया धावते सत्वनां पतये नमो नमः सहमानाय निव्याधिनऽआव्याधिनीनां पतये नमो नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानां पतये नमो नमो

निचेरवे परिचरायारण्यानां पतये नमः॥ २०॥

પદાર્થ : સર્વ મનુષ્યો कृत्स्नायतया-સંપૂર્ણ લાભની પ્રાપ્તિ માટે धावते-અહીં-તહીં આવવા-જનારાઓને नमः-અન્ન આપે, सत्वनाम्-પ્રાપ્ત પદાર્થોના पतये-રક્ષકનો नमः- સત્કાર કરે, सहमानाय-બળવાન અને निव्याधिने-શત્રુઓનું નિરંતર તાડન કરનારને नमः-અન્ન આપે, आव्याधिनीनाम्-સર્વ તરફથી શત્રુસેનાને મારનાર આપણી સેનાના पतये-રક્ષક સેનાપતિનો नमः-આદર કરે, निषंगिणे-ઉત્તમ બાણ, તલવાર, બંદૂક, તોપ, બરછી આદિ શસ્ત્રવાળાને नमः-અન્ન આપે, निचेरवे-નિરંતર પુરુષાર્થથી વિચરનારનો, परिचराय-ધર્મ, વિદ્યા, માતા-પિતા, સ્વામી અને મિત્રાદિની સેવા કરનારનો, ककुभाय-પ્રસન્નમૂર્તિ પુરુષનો नमः-સત્કાર કરે, स्तेनानाम्-અન્યાયથી પરધનનું હરણ કરનાર પ્રાણીઓના पतये-દંડ આદિથી શોષણ કરનાર હોય તેને नमः-વજ્રથી મારે, अरण्यानाम्-વનના पतये-રક્ષકને नमः-અન્નાદિ પ્રદાન કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ પુરુષાર્થીજનોના ઉત્સાહ માટે તેનો સત્કાર, પ્રાણીઓ પર દયા, સુશિક્ષિત સેનાની રક્ષા, ચોર આદિની તાડના, સેવકોની પાલના તથા વનોને કાપવાથી રોકવા વગેરે કાર્યો કરીને રાજ્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૦)

नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां पतये नमो नमो निषङ्गिणऽइषुधिमते तस्कराणां पतये नमो नमः सृकायिभ्यो जिघांꣳसद्भ्यो मुष्णतां पतये नमो नमोऽसिमद्भ्यो नक्तं चरद्भ्यो विकृन्तानां पतये नमः॥ २१॥

પદાર્થ : રાજપુરુષ वञ्चते-છળ-કપટથી બીજાના પદાર્થોનું હરણ કરનાર, परिवञ्चते-સર્વ રીતે કપટ વર્તન કરનારને नमः-વજ્રનો પ્રહાર કરે, स्तायूनाम्-ચોરીથી જીવનારા पतये-સ્વામીને नमः-વજ્રથી મારે, निषङ्गिणे-રાજ્ય રક્ષા માટે નિરંતર તત્પર इषुधिमते-પ્રશસ્ત બાણોને ધારણ કરનારને नमः-અન્ન આપે, तस्कराणाम्-ચોરી કરનારનો पतये-તે કાર્યમાં પ્રવૃત્ત કરનારને नमः-વજ્ર મારે, सृकायिभ्यः-વજ્રથી સજ્જનોને પીડિત કરવાની અને जिघांसद्भ्यः-મારવાની ઈચ્છા કરનારને नमः-વજ્રથી મારે, मुष्णताम्-ચોરી કરનારને पतये-દંડ પ્રહારથી પૃથિવી પર ગબડાવી પાડનારનો नमः-સત્કાર કરે, असिमद्भ्यः-પ્રશસ્ત તલવારો સાથે नक्तम्-રાતે चरद्भ्यः-ફરતા લૂંટારાઓને नमः-શસ્ત્રોથી મારે અને विकृन्तानाम्-વિવિધ ઉપાયોથી ચોરી લૂંટ-ફાટ કરનાર ગઠિયાને पतये-મારીને પાડી દેનારનો नमः-સત્કાર કરે. (૨૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ છલ-કપટથી છેતરનારાઓ તથા દિવસ અને રાતે અનર્થ કરનારાઓનો નિગ્રહ કરીને ધર્માત્માઓનું નિરંતર પાલન કરવું જોઈએ. (૨૧)

नमऽउष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानां पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च वो नमो नमऽआतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो नमऽआयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च वो नमः॥ २२॥

પદાર્થ : અમે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન उष्णीषिणे-પ્રશસ્ત પાઘડી ધારણ કરનાર ગામના નેતાનો અને गिरिचराय-પર્વતોમાં વિચરનાર વનવાસીનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ, कुलुञ्चानाम्-ખરાબ આશયથી બીજાના પદાર્થોને લૂંટનારને पतये-મારનારનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ, इषुमद्भ्यः-અનેક બાણવાળાને नमः-અન્ન આપીએ છીએ, च-તથા वः-તમે धन्वायिभ्यः-ધનુષ્યોને પ્રાપ્ત કરનારને नमः-અન્ન આપીએ છીએ; आतन्वानेभ्यः-સર્વ સુખ ફેલાવનારનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ; च-અને वः-તમે प्रतिदधानेभ्यः-શત્રુઓ સામે શસ્ત્ર ધારણ કરનારા वः-તમારો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ; आयच्छद्भ्यः-દુષ્ટોને ખરાબ કામોથી રોકનારાને नमः-અન્ન આપીએ છીએ, च-અને वः-તમે अस्यद्भ्यः-દુષ્ટો પર શસ્ત્ર છોડનારનો वः-તમારા માટે नमः-સત્કાર કરીએ છીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ :રાજા અને પ્રજાજનોએ પ્રધાન પુરુષ આદિનો વસ્ત્ર અને અન્નાદિના દાનથી સત્કાર કરવો જોઈએ. (૨૨)

नमो॑ विसृ॒जद्भ्यो॑ विद्ध्य॑द्भ्यश्च वो॒ नमो॒ नमः॑ स्व॒पद्भ्यो॑ जाग्र॑द्भ्यश्च वो॒ नमो॒ नमः॒ शया॑नेभ्य॒ऽआसी॑नेभ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॒स्तिष्ठ॑द्भ्यो॒ धाव॑द्भ्यश्च वो॒ नमः॑ ॥ २३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સર્વને એમ કહો કે-विसृजद्भ्यः-શત્રુઓ પર શસ્ત્રો છોડનારને नमः-અન્ન આદિ પદાર્થો આપીશું, च-અને विद्ध्यद्भ्यः-શસ્ત્રોથી શત્રુઓને મારનાર वः-તમને नमः-અન્ન આપીશું, स्वपद्भ्यः-સૂતેલા પર नमः-વજ્ર પ્રહાર કરીશું, च-અને जाग्रद्भ्यः-જાગનારા वः-તમને नमः-અન્ન આપીશું, शयानेभ्यः-નિદ્રા પ્રાપ્તને नमः-અન્ન આપીશું, च-અને आसीनेभ्यः-આસન પર બેઠેલા वः-તમને नमः-અન્ન આપીશું तिष्ठद्भ्यः-ઊભેલાને नमः-અન્ન આપીશું, च-અને धावद्भ्यः-શીઘ્રગામીજનો वः-તમને नमः-અન્ન આપીશું. (૨૩)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થ લોકોએ ઉદારતાપૂર્વક અન્ન આદિના દાનથી સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરવા જોઈએ. (૨૩)

नमः॑ स॒भाभ्यः॑ स॒भाप॑तिभ्यश्च वो॒ नमो॒ नमोऽश्वे॒भ्योऽश्व॑पतिभ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॑ऽआव्या॒धिनी॑भ्यो वि॒विध्य॑न्तीभ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॒ऽउग॑णाभ्यस्तृꣳ ह॒तीभ्य॑श्च वो॒ नमः॑ ॥ २४ ॥

પદાર્થ : મનુષ્યો સર્વેને એમ કહે-અમે सभाभ्यः-ન્યાય આદિ પ્રકાશથી યુક્ત સ્ત્રીઓનો नमः-સત્કાર કરે; च-અને सभापतिभ्यः-સભાઓના રક્ષક वः-તમે રાજાઓનો नमः-સત્કાર કરે; अश्वेभ्यः-ઘોડાઓને नमः-અન્ન આપે; च-અને अश्वपतिभ्यः-ઘોડાઓના રક્ષકને वः-તમે नमः-અન્ન આપે; आव्याधिनीभ्यः-શત્રુસેનાને મારનારી આપણી સેનાને नमः-અન્ન આપે; च-અને विविध्यन्तीभ्यः-શત્રુઓના વીરોને મારતી

वः-તમે સ્ત્રીઓનો नमः-સત્કાર કરે; उगणाभ्यः-વિવિધ તર્કોવાળી સ્ત્રીઓને नमः-અન્ન આપે; च-અને तृंहतीभ्यः-યુદ્ધમાં મારતી वः-તમો સ્ત્રીઓને नमः-અન્ન આપે તથા યથાયોગ્ય સત્કાર કરીએ. (૨૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સભા અને સભાપતિ દ્વારા જ રાજ્યની વ્યવસ્થા કરવી જોઈએ. કદીપણ એક માત્ર રાજાને આધીન ન રહેવું જોઈએ, કારણકે એક રાજા દ્વારા અનેક જનોની સિદ્ધિ અને અસિદ્ધિના નિવારણનું કાર્ય થઈ શકતું નથી. (૨૪)

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥ २५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે गणेभ्यः-સેવકોને नमः-અન્ન આપીએ છીએ, च-અને वः-તમે गणपतिभ्यः-સેવકોના રક્ષકોને नमः-અન્ન આપો છો; व्रातेभ्यः-મનુષ્યોનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ; च-અને वः-તમે व्रातपतिभ्यः-મનુષ્યોના રક્ષકોનો नमः-સત્કાર કરો છો; गृत्सेभ्यः-પદાર્થોના ગુણોની સ્તુતિ કરનારા વિદ્વાનોનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ; च-અને वः-તમે गृत्सपतिभ्यः-બુદ્ધિમાનોના રક્ષકોનો नमः-સત્કાર કરો છો; च-અને वः-તમે विरूपेभ्यः-વિવિધ રૂપવાળાનો नमः-સત્કાર કરો છો; च-અને विश्वरूपेभ्यः-સર્વ રૂપે મુક્ત वः-તમે લોકોનો नमः-સત્કાર કરે તેમ તમે પણ અન્ન પ્રદાન કરો અને સત્કાર કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સમસ્ત પ્રાણીઓનો ઉપકાર, વિદ્વાનોનો સંગ, સંપૂર્ણ ઐશ્વર્ય અને વિદ્યાઓને ધારણ કરીને સંતુષ્ટ રહેવું જોઈએ. (૨૫)

नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्यो ऽ अरथेभ्यश्च वो नमो नमः क्षत्तृभ्यः संग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्यो ऽ अर्भकेभ्यश्च वो नमः ॥ २६ ॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષ અને પ્રજાજનો ! જેમ અમે सेनाभ्यः-શત્રુઓને બાંધનારી સેનાઓનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ, च-અને वः-તમે सेनानिभ्यः-સેનાના નાયક પ્રધાન પુરુષને नमः-અન્ન આપો છો, रथिभ्यः-ઉત્તમ રથવાળાનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ, च-અને वः-તમે अरथेभ्यः-રથરહિત પગથી ચાલનારાનો नमः-સત્કાર કરો છો; क्षत्तृभ्यः-ક્ષત્રિયની સ્ત્રીમાં શૂદ્રથી ઉત્પન્ન વર્ણસંકરજનોને नमः-અન્નાદિ પદાર્થો આપીએ છીએ, च-અને वः-તમે संग्रहीतृभ्यः-યુદ્ધ માટે સામગ્રી સંગ્રહ કરનારનો नमः-સત્કાર કરો છો, महद्भ्यः-વિદ્યા અને વયોવૃદ્ધ પૂજ્ય જનોને नमः-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થ આપીએ છીએ, च-અને वः-તમે अर्भकेभ्यः-કનિષ્ઠ, ક્ષુદ્રાશય શિક્ષાને યોગ્ય વિદ્યાર્થીઓનો नमः-નિરંતર સત્કાર કરો છો; તેમ તમે પણ પૂજ્ય જનોનો સત્કાર કરો અને અન્ન આદિ પ્રદાન કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ સર્વ કર્મચારીઓનો સત્કાર કરીને, તેને સુશિક્ષિત કરીને, અન્નાદિથી વૃદ્ધિ કરીને ધર્મપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરવું જોઈએ. (૨૬)

नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्म्मारेभ्यश्च वो

नमो॒ नमो॑ निषा॒देभ्य॑: पु॒ञ्जिष्ठे॑भ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॑: श्व॒निभ्यो॑ मृग॒युभ्य॑श्च वो॒ नम॑:॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે રાજા આદિજનો वः-તમે तक्षभ्यः-તક્ષક સુથારને नमः-અન્ન આપીએ છીએ; च-અને वः-તમે रथकारेभ्यः-અનેક રથ-વિમાનાદિ બનાવનારાઓને नमः-પગારાદિ આપીને સત્કાર કરો છો; कुलालेभ्यः-ઉત્તમ માટીના પાત્ર બનાવનારાઓને नमः-અન્ન આદિ પદાર્થો આપીએ છીએ; च-અને वः-તમે कर्मारेभ्यः-તલવાર, બંદૂક અને તોપ આદિ નિર્માતાઓનો नमः-સત્કાર કરો છો; निषादेभ्यः-વન, પર્વતાદિમાં રહેનારાઓને नमः-અન્નાદિ આપીએ છીએ; च-અને वः-તમે पुञ्जिष्ठेभ्यः-વર્ણો વા ભાષાઓમાં પ્રવીણજનોનો नमः-સત્કાર કરો છો; श्वनिभ्यः-કૂતરાઓને કેળવનારાઓને नमः-અન્ન આદિ આપીએ છીએ; च-અને वः-તમે मृगयुभ्यः-પોતાના મૃગોની કામના કરનારાઓનો नमः-સત્કાર કરો છો; તેમ તમે પણ અન્ન આપો અને સત્કાર કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે લોકો પદાર્થ વિદ્યા દ્વારા સંપૂર્ણ શિલ્પકાર્યોને સિદ્ધ કરે તેને પારિતોષિક આપીને વિદ્વાનો સત્કૃત કરે.

જે લોકો કૂતરાં આદિ પશુઓને ભોજન આદિના દાનથી પાળીને તથા તેને કેળવીને તેનો ઉપયોગ કરે, તેને રાજપુરુષ સુખ પહોંચાડે. (૨૭)

नम॒: श्वभ्य॒: श्वप॑तिभ्यश्च वो॒ नमो॒ नमो॑ भ॒वाय॑ च रु॒द्राय॑ च॒ नम॑: श॒र्वाय॑ च पशु॒पत॑ये च॒ नमो॒ नील॑ग्रीवाय च शिति॒कण्ठा॑य च॥ २८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે પરીક્ષકો श्वभ्यः-કૂતરાઓને नमः-અન્ન આપીએ છીએ, च-અને वः-તમે श्वपतिभ्यः-કૂતરાઓને પાળનારાઓને नमः-અન્ન આપો છો, અને તેનો સત્કાર કરો છો च-તથા भवाय-શુભગુણોમાં પ્રશંસિત પુરુષનો नमः-સત્કાર કરીએ છીએ, च-અને रुद्राय-દુષ્ટોને રડાવનાર વીરનો સત્કાર કરીએ છીએ, च-તથા शर्वाय-દુષ્ટોને મારનારને नमः-અન્ન આપીએ છીએ, च-અને पशुपतये-ગાય આદિ પશુઓના પાલકને नमः-અન્ન આપીએ છીએ, च-અને नीलग्रीवाय-સુંદર વર્ણયુક્ત કંઠથી યુક્ત च-અને शितिकण्ठाय-તીક્ષ્ણ અને કાળા કંઠ વાળાને नमः-અન્ન આપીએ છીએ અને સત્કાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ અન્ન આપો અને સત્કાર કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કૂતરાં વગેરે પશુઓને અન્ન આદિના દાનથી વધારીને તેનો ઉપયોગ કરી લેવો જોઈએ અને પશુપાલક આદિનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૨૮)

नम॑: कप॒र्दिने॑ च॒ व्यु॑प्तकेशाय च॒ नम॑: सहस्रा॒क्षाय॑ च श॒तध॑न्वने च॒ नमो॑ गिरिश॒याय॑ च शिपिवि॒ष्टाय॑ च॒ नमो॑ मी॒ढुष्ट॑माय॒ चेषु॑मते च॥ २९॥

પદાર્થ : ગૃહસ્થ લોકો कपर्दिने-જટાધારી બ્રહ્મચારીને, च-અને व्युप्तकेशाय-મુંડન કરેલ સંન્યાસીને, च-અને સંન્યાસના ઈચ્છુકને नमः-અન્ન આપે, च-અને सहस्राक्षाय-અસંખ્ય શાસ્ત્ર-વિષય આદિમાં

દૃષ્ટિ રાખનાર વિદ્વાન્ બ્રાહ્મણનો, च-અને शतधन्वने-ધનુર્વિદ્યા આદિ અસંખ્ય શસ્ત્ર વિદ્યાના શિક્ષક ક્ષત્રિયનો, नमः-સત્કાર કરે; च-અને गिरिशयाय-પર્વતોના આશ્રયમાં શયન કરનાર વાનપ્રસ્થનો, च-અને शिपिविष्टाय-પશુઓના પાલક વૈશ્યનો च-અને शूद्राय-શૂદ્રનો नमः-સત્કાર કરે; च-અને मीढुष्टमाय-વૃક્ષ, બગીચા, ખેતર આદિને સારી રીતે સિંચનાર ખેડૂતોનો च-અને માળી આદિનો, इषुमते-પ્રશંસિત બાણોવાળા વીરોનો, च-અને સેવક-વર્ગનો नमः-અન્નાદિ પ્રદાન કરીને તથા સત્કાર કરે. (૨૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોએ બ્રહ્મચારી આદિજનોનો સત્કાર કરીને તેને વિદ્યાદાન કરે અને કરાવે, તથા સંન્યાસી આદિજનોની પૂજા કરીને વિશિષ્ટ વિજ્ઞાનને ગ્રહણ કરે. (૨૯)

नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च सवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च॥ ३०॥

પદાર્થ : જે ગૃહસ્થો ह्रस्वाय-બાળકને च-અને वामनाय-પ્રશંસિત જ્ઞાનીને च-તથા મધ્યમ વિદ્વાનને नमः-અન્ન આપે છે; च-અને बृहते-મહાન પુરુષ च-અને वर्षीयसे-અત્યંત વિદ્યાવૃદ્ધનો नमः-સત્કાર કરે છે; च-અને वृद्धाय-વયોવૃદ્ધ च-અને सवृधे-પોતાના સાથીઓ સાથે વધનારા च-અને સર્વના મિત્રનો नमः-સત્કાર કરે છે; च-અને अग्र्याय-સત્કર્મોમાં અગ્રસર प्रथमाय-પ્રખ્યાત પુરુષનો नमः-સત્કાર કરે છે; તે સુખી રહે છે. (૩૦)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થોએ અન્ન આદિથી અને બાળકો આદિનો સત્કાર કરીને સદ્વ્યવહારની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૦)

नमऽआशवे चाजिराय च नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च नमऽऊर्म्याय चावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च॥ ३१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે आशवे-વાયુની સમાન માર્ગમાં શીઘ્રગામીને, च-અને अजिराय-ઘોડે સવારને ફેંકનાર ઘોડાને च-તથા હાથી આદિ नमः-અન્ન આદિ આપો; शीघ्र्याय-શીઘ્રગમનમાં શ્રેષ્ઠ च-તથા शीभ्याय-શીઘ્રતા કરનારાઓમાં પ્રસિદ્ધ च-તથા મધ્યસ્થ જનને नमः-અન્ન આપો च-અને ऊर्म्याय-જલતરંગોમાં વાયુ સમાન વિદ્યમાન च-અને अवस्वन्याय-અર્વાચીન શબ્દોમાં વિદ્યમાનને च-તથા દૂરથી સાંભળનારાઓને नमः-અન્ન આપો; नादेयाय-નદીમાં રહેનાર च-અને द्वीप्याय-ટાપુઓમાં રહેનાર च-અને તેના સંબંધીઓને नमः-અન્ન આપતાં રહો તો આપને સંપૂર્ણ આનંદ મળશે. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે ક્રિયાકૌશલથી રચિત વિમાનાદિ યાનો તથા ઘોડા આદિથી શીઘ્ર ગતિ કરનાર છે, તે ક્યા-ક્યા દ્વીપ વા દેશમાં ન જઈને રાજ્યને માટે શું-શું ધન પ્રાપ્ત ન કરી શકે ? પરન્તુ સર્વત્ર જઈને સર્વસ્વ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૧)

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय

चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ज्येष्ठाय-અતિવૃદ્ધ च-અને कनिष्ठाय-અત્યંત બાળકનો नमः-સત્કાર કરો વા અન્ન આપો, पूर्वजाय-મોટાભાઈ વા બ્રાહ્મણ च-અને अपरजाय-નાનાભાઈ वा-અન્ત્યજનોને च-પણ नमः-સત્કાર કરો વા અન્ન આપો; मध्यमाय-મધ્યમાં ઉત્પન્ન ભાઈ, વા ક્ષત્રિય અને વૈશ્ય च-તથા अपगल्भाय-સરળ સ્વભાવવાળાનો नमः-સત્કાર કરો; जघन्याय-નીચ કર્મ કરનાર શૂદ્ર વા મલેચ્છ च-તથા बुध्न्याय-અન્તરિક્ષમાં વિદ્યમાન મેઘની સમાન દાતા પુરુષનો नमः-અન્નાદિથી સત્કાર કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : પરસ્પર મળવાના સમયે 'નમસ્તે' એ વાક્યનું ઉચ્ચારણ કરીને નાનાઓ દ્વારા મોટાનો, મોટાઓ દ્વારા નાનાનો, નિમ્ન કોટિના લોકો દ્વારા ઉત્તમોનો અને ઉત્તમો દ્વારા નિમ્નોનો, ક્ષત્રિય આદિ દ્વારા બ્રાહ્મણોનો અને બ્રાહ્મણો દ્વારા ક્ષત્રિયો આદિનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ.

આ વેદોક્ત પ્રમાણના શિષ્ટાચારથી સર્વત્ર સર્વને એ વાક્યનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરીને પરસ્પરના સત્કારથી પ્રસન્ન રહેવું જોઈએ. (૩૨)

नमः सोभ्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नमऽउर्वर्याय च खल्याय च॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! सोभ्याय-ઐશ્વર્યયુક્તોમાં પ્રસિદ્ધ च-અને प्रतिसर्याय-ધર્માત્માઓમાં ઉત્પન્ન થયેલ च-તથા ધનવાન ધર્માત્માઓને नमः-અન્ન આપીને याम्याय-ન્યાયકારીઓમાં ઉત્તમ च-અને क्षेम्याय-રક્ષા કરનારાઓમાં ચતુર च-અને ન્યાયાધીશાદિનો नमः-સત્કાર કરીને, श्लोक्याय-વેદવાણીમાં શ્રેષ્ઠ च-અને अवसान्याय-કાર્ય સમાપ્તિ વ્યવહારમાં કુશળ च-અને આરંભ કરવામાં ઉત્તમ પુરુષનો नमः-સત્કાર કરીને, उर्वर्याय-મહાપુરુષોના સ્વામી च-અને खल्याय-ઉત્તમ અન્નાદિ પદાર્થોનો સંચય કરવામાં કુશળ च-અને વ્યય કરવામાં વિચક્ષણ પુરુષનો नमः-સત્કાર કરીને તે સર્વને આપ આનંદિત કરો. (૩૩)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં આવેલ અનેક च-*શબ્દોથી અન્ય પણ ઉપયોગી અર્થોનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. શ્રેષ્ઠજનોનો સત્કાર કરવો જોઈએ.*

પ્રજાજનોએ ન્યાયાધીશ આદિનો તથા ન્યાયાધીશ આદિએ પ્રજાજનોનો [સત્કાર કરવો જોઈએ] પતિ આદિ પત્ની આદિને પ્રસન્ન રાખે અને પત્ની આદિ પતિને પ્રસન્ન રાખે. (૩૩)

नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च नमऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च॥ ३४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वन्याय-વનમાં રહેનાર च-અને कक्ष्याय-વનની સમીપ ઝૂંપડીઓમાં च-તથા ગુફાઓ આદિમાં રહેનારને नमः-અન્ન આપે છે; श्रवाय-સાંભળવા અને સંભળાવવા માટે च-અને प्रतिश्रवाय-પ્રતિજ્ઞા કરનાર च-તથા પ્રતિજ્ઞા પૂર્ણ કરનારનો नमः-સત્કાર કરે છે; आशुषेणाय-શીઘ્રગામીની સેનાવાળા च-તથા आशुरथाय-શીઘ્રગામી રથવાળાના સ્વામી च-સારથિ આદિને नमः-

અન્ન આપે છે; शूराय-શત્રુઓને મારનારા च-અને अवभेदिने-શત્રુઓને છિન્ન-ભિન્ન કરનાર च-તથા દૂતાદિનો नमः-સત્કાર કરે છે તેનો સર્વત્ર વિજય થાય છે. (૩૪)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ વન તથા કક્ષાઓમાં રહેનાર વિદ્યાર્થીઓ તથા અધ્યાપકોને, બળવાન સેનાને, શીઘ્રગામી યાનોમાં જનાર વીરોને તથા દૂતોને અન્ન-ધન આદિથી તથા સત્કારથી પ્રોત્સાહિત કરી સદા વિજયી બનવું જોઈએ. (૩૪)

नमो॑ बि॒ल्मिने॑ च कव॒चिने॑ च॒ नमो॑ व॒र्मिणे॑ च वरू॒थिने॑ च॒ नमः॑ श्रु॒ताय॑ च श्रुतसे॒नाय॑ च॒ नमो॑ दुन्दु॒भ्या॒य चाहन॒न्या॒य च॥ ३५॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષ અને પ્રજાજનોના અધ્યક્ષ ! આપ बिल्मिने-પ્રશંસિત ધારણ અને પોષણ કરનાર च-અને कवचिने-શરીરના રક્ષક કવચને ધારણ કરનાર च-તથા તેના સહકારીઓનો नमः-સત્કાર કરો; च-અને वर्मिणे-શરીર રક્ષાના અનેક સાધનોથી યુક્ત च-અને वरुथिने-પ્રશંસિત ઘરવાળા च-અને ઘર આદિના રક્ષકોને नमः-અન્નાદિ પ્રદાન કરો; श्रुताय-શુભગુણોમાં પ્રસિદ્ધ च श्रुतसेनाय-પ્રસિદ્ધ સેનાવાળા च-તથા સેનાઓનો नमः-સત્કાર કરો , च-અને दुन्दुभ्याय-ઢોલ વગેરે વાજા વગાડનાર કુશળ ઢોલી-વાદક च-તથા आहनन्याय-વીરોનો યુદ્ધમાં ઉત્સાહ વધારવા વાજીંત્ર વગાડવામાં કુશળ પુરુષનો नमः-સત્કાર કરો; જેથી તમારો પરાજય કદી પણ ન થાય. (૩૫)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોએ યોદ્ધાઓ માટે સર્વત્રથી રક્ષા, સર્વત્રથી સુખદાયક ઘર, ભોજન અને પાનના ઉત્તમ પદાર્થો, શ્રેષ્ઠજનોનો સંગ અને અતિ શ્રેષ્ઠ વાજીંત્ર આપીને પોતાના અભીષ્ટ કાર્યને સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૩૫)

नमो॑ धृ॒ष्णवे॑ च प्रमृ॒शाय॑ च॒ नमो॑ निष॒ङ्गिणे॑ चेषुधि॒मते॑ च॒ नम॑स्ती॒क्ष्णेष॑वे चायु॒धिने॑ च॒ नमः॑ स्वायु॒धाय॑ च सु॒धन्व॑ने च॥ ३६॥

પદાર્થ : જે રાજા અને પ્રજાજનોના અધ્યક્ષ धृष्णवे-દૃઢ च-અને प्रमृशाय-શ્રેષ્ઠ વિચારશીલ च-અને કોમળ સ્વભાવવાળા પુરુષને नमः-અન્નાદિ પ્રદાન કરે છે; च-અને निषङ्गिणे-અનેક શસ્ત્રો વાળા च-અને इषुधिमते-પ્રશંસિત શસ્ત્ર અસ્ત્ર અને મ્યાનવાળાનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; च-અને तीक्ष्णेषवे-તીક્ષ્ણ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી યુક્ત च-અને आयुधिने-તોપ આદિથી ચોતરફ યુદ્ધ કરનાર અધ્યક્ષ પુરુષનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; स्वायुधाय-સુંદર આયુધોવાળા च-અને सुधन्वने-સુંદર ધનુષ્યવાળા च-અને તેના રક્ષકોને नमः-અન્ન પ્રદાન કરે છે. તેઓ સદા વિજયી બને છે. (૩૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કોઈપણ કર્મ સારી રીતે વિચાર કરીને તથા દૃઢ ઉત્સાહથી કરવા જોઈએ. શરીર તથા આત્માના બળ વિના શસ્ત્ર પ્રહાર તથા શત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરી શકાતો નથી, તેથી નિરંતર સેનાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૬)

नमः॒ स्रुत्या॑य च॒ पथ्या॑य च॒ नमः॒ काट्या॑य च॒ नीप्या॑य च॒ नमः॒ कुल्या॑य

च सरस्याय च नमो नादेयाय च वैशन्ताय च॥ ३७॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ स्रुत्याय-ઝરણાં, નાળા વગેરેમાં રહેનારા च-અને पथ्याय-માર્ગ ચાલનારા च-અને માર્ગ આદિના ભોમિયાને नमः-અન્ન આપીને, काट्याय-કૂવા વગેરેના સ્થાનમાં રહેનાર च-અને नीप्याय-વિશાળ જલાશય પર રહેનાર च-તથા તેના સહાયકોનો नमः-સત્કાર કરીને; कुल्याय-નહેરોનો પ્રબંધ કરનારા च-અને सरस्याय-તળાવના કાર્યમાં પ્રસિદ્ધ ગણાય તેનો नमः-સત્કાર કરીને; च-અને नादेयाय-નદી કિનારે રહેનારા च-તથા वैशन्ताय-નાના જલાશયો પર રહેનારાઓને च-તથા વાવ આદિ પર રહેનારાઓને नमः-અન્નાદિ આપીને દયા પ્રકાશિત કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સ્રોતો, માર્ગો, કૂવાઓ, જલપ્રાયઃ દેશો અને નાના-મોટા તળાવોનાં જળને વહાવીને તથા તેને ઉચિત સ્થાનમાં બાંધીને (બાંધ બાંધીને) ખેતર વગેરેમાં પુષ્કળ અન્ન, ફળ, ફૂલ, વૃક્ષ, વેલ અને ઝાડીઓ વગેરેની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૩૭)

नमः कूप्याय चावट्याय च नमो वीध्र्याय चातप्याय च नमो मेघ्याय च विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च॥ ३८॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ कूप्याय-કૂવા પર च-અને अवट्याय-ખાડામાં च-અને જંગલોમાં રહેનારાઓને नमः-અન્ન આદિ આપીને, च-અને विध्राय-વિવિધ પ્રકાશોમાં રહેનારા च-તથા आतप्याय-તડકામાં રહેનારા વા च-ખેતી વગેરેનો પ્રબંધ કરનારાઓને नमः-અન્ન આપીએ; मेघ्याय-મેઘમાં રહેનારા च-તથા विद्युत्याय-વીજળીથી કામ લેનારાઓ च-તથા અગ્નિ વિદ્યાને જાણનારાઓને नमः-અન્નાદિ આપીએ; च-અને वर्ष्याय-વર્ષામાં રહેનારાઓ च-તથા अवर्ष्याय-વર્ષા રહિત દેશમાં રહેનારાઓનો नमः-સત્કાર કરીને આનંદિત બનીએ. (૩૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય કૂવા આદિથી કાર્ય સિદ્ધિ માટે નોકરોનો સત્કાર કરે, તો અનેક ઉત્તમ કાર્ય થઈ શકે છે. (૩૮)

नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च नमः सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च॥ ३९॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય वात्याय-વાયુ વિદ્યામાં કુશલ च-અને रेष्म्याय-હિંસકોમાં પ્રસિદ્ધને च-પણ અન્નાદિ આપે છે; च-તથા वास्तव्याय-પોતાના નિવાસ સ્થાન પર રહેનારા च-અને वास्तुपाय-નિવાસ સ્થાનના રક્ષકનો नमः-સત્કાર કરે છે; च-તથા सोमाय-ધનાઢ્ય च-અને रुद्राय-દુષ્ટોને રડાવનારને नमः-અન્નાદિ આપે છે; च-તથા ताम्राय-અધર્મમાં ગ્લાનિ કરનાર च-અને अरुणाय-ધર્મને પ્રાપ્ત કરાવનારનો नमः-સત્કાર કરે છે, તેઓ લક્ષ્મીથી સંપન્ન બને છે. (૩૯)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્યો વાયુ આદિના ગુણોને જાણીને તેનો વ્યવહારોમાં પ્રયોગ કરે છે, ત્યારે અનેક સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૯)

नमः शङ्गवे च पशुपतये च नम उग्राय च भीमाय च नमोऽग्रेवधाय च दूरेवधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय॥ ४०॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય शङ्गवे-સુખને પ્રાપ્ત કરનાર च-અને पशुपतये-ગાય આદિ પશુઓની રક્ષા કરનારને च-તથા ગાય આદિને પણ नमः-અન્નાદિ આપે છે; उग्राय-તેજસ્વી च-અને भीमाय-ભયંકર પુરુષનો नमः-સત્કાર કરે છે; अग्रेवधाय-શત્રુઓને પ્રથમ બંધન વા વધ કરનારને च-અને दूरेवधाय-દૂર પરના શત્રુઓને બંધન વા વધ કરનારને नमः-અન્નાદિ આપે છે; हन्त्रे-દુષ્ટોને મારનાર च-અને हनीयसे-દુષ્ટોને મારનાર તથા જડમૂલથી નાશ કરનારને नमः-અન્નાદિ આપે છે; वृक्षेभ्यः-શત્રુઓને કાપનાર વા વૃક્ષોને તથા हरिकेशेभ्यः-ભૂરાવાળ વાળાને વા વૃક્ષોનો नमः-સત્કાર કરે છે, અથવા જળ આદિ આપે છે; અને ताराय-દુઃખથી પાર કરનાર પુરુષને नमः-અન્નાદિ આપે છે, તે સુખી રહે છે. (૪૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ગાય આદિ પશુઓનું પાલન કરવું જોઈએ અને ભયંકર આદિ મનુષ્યોનું શમન કરીને સંતોષ માનવો જોઈએ. (૪૦)

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥ ४१॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય शम्भवाय-સુખદાયક પરમેશ્વર च-અને मयोभवाय-સુખ પ્રાપ્તિ માટે વિદ્વાનનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; शङ्कराय-કલ્યાણ કરનાર च-અને मयस्कराय-સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પહોંચાડનારનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; शिवाय-મંગલકારી च-અને शिवतराय-અત્યંત મંગલ સ્વરૂપ પુરુષનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; તે કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રેમ-ભક્તિપૂર્વક સર્વમંગલ પ્રદાન કરનાર પરમેશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ. અને સેનાધ્યક્ષનો સત્કાર કરે જેથી પોતાના અભીષ્ટ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. (૪૧)

नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्याय च॥ ४२॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય पार्याय-દુઃખોથી દૂર રહેનાર च-અને अवार्याय-દુઃખોના અવર ભાગમાં રહેનારનો नमः-સત્કાર કરે છે; च-તથા प्रतरणाय-નૌકા આદિ દ્વારા તે કિનારાથી આ કિનારે પ્રાપ્ત કરનાર વા કરાવનાર च-અને उत्तरणाय-આ કાંઠેથી તે કાંઠે પ્રાપ્ત કરનાર વા કરાવનારનો नमः-સત્કાર કરે છે; च-અને तीर्थ्याय-વેદ વિદ્યાના અધ્યાપકો તથા સત્યભાષણાદિમાં શ્રેષ્ઠ च-અને कूल्याय-સમુદ્ર તથા નદી કિનારે રહેનારને नमः-અન્ન આપે છે; शष्प्याय-ઘાસ આદિ કાર્યોમાં પ્રવીણ च-અને फेन्याय-ફીણ-પરપોટાદિ વ્યવહારમાં પ્રવીણ પુરુષોને च-પણ नमः-અન્નાદિ આપે છે; તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યાનોમાં તથા નાવ આદિમાં સુશિક્ષિત હોડીવાળા આદિમાં રાખીને તથા સમુદ્ર

આદિની આરપાર જાવ-આવ કરીને દેશ-દેશાન્તર અને દ્વીપ-દ્વીપાન્તરના વ્યવહારોથી ધન નિષ્પન્ન કરીને પોતાના અભીષ્ટની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪૨)

नमः सिकृत्याय च प्रवाह्याय च नमः किꣳशिलाय च क्षयणाय च नमः कपर्दिने च पुलस्तये च नम इरिण्याय च प्रपथ्याय च॥ ४३॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય सिकत्याय-રેતીમાંથી સુવર્ણાદિ કાઢવામાં ચતુર च-અને प्रवाह्याय-બળદ આદિને હાંકવામાં પ્રવીણને च-પણ नमः-અન્ન આપે છે; किंशिलाय-નિંદિત વૃત્તિવાળા અનાથ च-અને क्षयणाय-નિવાસ સ્થાનમાં રહેનારને च-પણ नमः-અન્ન આપે છે; कपर्दिने-જટાધારી च-અને पुलस्तये-મહાકાય પ્રાણીઓને ફેંકનારને च-પણ नमः-અન્ન આપે છે; इरिण्याय-ઉપર-ખારી જમીનમાંથી અતિ ઉપકાર લેનાર च-અને प्रपथ्याय-ઉત્તમ ધર્મના માર્ગોમાં પ્રવીણ પુરુષનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; તેઓ સર્વના પ્રિય બને છે. (૪૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ભૂગર્ભ વિદ્યાથી રેતી વગેરેમાં રહેલ સુવર્ણ આદિ ધાતુઓને કાઢીને તથા મહાન ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરીને અનાથોનું પાલન કરવું જોઈએ. (૪૩)

नमो व्रज्याय च गोष्ठ्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो हृदय्याय च निवेष्प्याय च नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च॥ ४४॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય व्रज्याय-ક્રિયાઓમાં પ્રસિદ્ધ च-અને गोष्ठ्याय-ગૌશાળાના કાર્યોમાં કુશળને च-પણ नमः-અન્નાદિ આપે છે; तल्प्याय-તલ્પ-શય્યા આદિના નિર્માણમાં પ્રવીણ च-અને गेह्याय-ઘરમાં રહેનારને च-પણ नमः-અન્ન આપે છે; हृदय्याय-શ્રેષ્ઠ હૃદયવાળા च-અને निवेष्याय-વિષયોમાં નિરંતર વ્યાપ્ત હોવામાં પ્રવીણનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; काट्याय-ઢાંકેલા ગુપ્ત પદાર્થોને પ્રકટ કરનાર च-અને गह्वरेष्ठाय-અતિ ગહન ગિરિ કંદરાઓમાં રહેનાર અતિ શ્રેષ્ઠ પુરુષને च-પણ नमः-અન્નાદિ આપે છે તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો મેઘ દ્વારા વર્ષાથી ઉત્પન્ન ઘાસ આદિની રક્ષા કરીને ગાય આદિ પશુઓની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ પુષ્કળ ભોગ પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

नमः शुष्क्याय च हरित्याय च नमः पाꣳसव्याय च रजस्याय च नमो लोप्याय चोलप्याय च नम ऽ ऊर्व्याय च सूर्व्याय च॥ ४५॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય शुष्क्याय-સૂકા-નીરસ પદાર્થોમાં રહેનાર च-અને हरित्याय-લીલા-સરસ પદાર્થોમાં પ્રસિદ્ધને च-પણ नमः-જલ આદિ આપે છે; पांसव्याय-ધૂળમાં રહેનાર च-અને रजस्याय-લોક-લોકાન્તરોમાં રહેનારનું च-પણ नमः-માન કરે છે; लोप्याय-છેદન કરવામાં પ્રવીણ च-અને उलप्याय-ફેંકવામાં કુશળ

પુરુષનું च-પણ नमः-માન કરે છે; ऊर्व्याय-દુષ્ટોને મારવામાં પ્રસિદ્ધ च-અને सूर्व्याय-દુષ્ટોની તાડના કરનારનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; તેઓના સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. (૪૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શોષણ-સૂકાવવા અને હરિતભીના બનાવનાર વાયુઓની વિદ્યા જાણીને પોતાના કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪૫)

नमः पर्णाय च पर्णशदाय च नमऽउद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च नमऽ-आखिदते च प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवानाꣳ हृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नम ऽआनिर्हतेभ्यः ॥ ४६ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય पर्णाय-પ્રત્યુપકારના રક્ષકને च-અને पर्णशदाय-પાંદડાનાં કાતરનારને च-પણ नमः-અન્ન આપે છે; उदगुरमाणाय-શ્રેષ્ઠ રીતે ઉદ્યમ કરનાર च-અને अभिघ्नते-સન્મુખ બનીને દુષ્ટોને મારનારને च-પણ नमः-અન્ન આપે છે; आखिदते-દીન અને નિર્ધન च-અને प्रखिदते-અત્યંત દરિદ્રનો च-પણ नमः-સત્કાર કરે છે; इषुकृद्भ्यः-બાણોને બનાવનારને नमः-અન્નાદિ આપે છે; च-અને वः-તમે धनुष्कृद्भ्यः-ધનુષ્યોના નિર્માતાનું नमः-માન કરો છો; देवानाम्-વિદ્વાનોના हृदयेभ्यः-પોતાના આત્મ સમાન પ્રિયવર્તાવ કરનાર वः-તમે किरिकेभ्यः-બાણ આદિ ફેંકનારને नमः-અન્નાદિ આપો છો; विचिन्वत्केभ्यः-શુભ ગુણો અને પદાર્થોનો સંચય કરનારનો नमः-સત્કાર કરો છો; विक्षिणत्केभ्यः-શત્રુઓનો નાશ કરનારનો नमः-સત્કાર કરો છો ; અને आनिर्हतेभ्यः-સર્વત્રથી તિરસ્કૃતનો नमः-સત્કાર કરો છો; તેઓ સર્વત્રથી ધનવાન બને છે. (૪૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ ઔષધિઓથી અન્ન આદિનો સંગ્રહ કરીને અનાથ મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને આપીને, તેઓને આનંદિત કરવા જોઈએ. (૪૬)

द्रापेऽअन्धसस्पते दरिद्र नीललोहित।
आसां प्रजानामेषां पशूनां मा भेर्मा रोङ् मो च नः किं चनाममत्॥ ४७॥

પદાર્થ : હે द्रापे-નિંદિત ગતિથી રક્ષક, अन्धसः-અન્નાદિના पते-સ્વામી, दरिद्र-દરિદ્રતાને પ્રાપ્ત, नीललोहित-નીલવર્ણયુક્ત પદાર્થોનું સેવન કરનાર રાજા વા પ્રજાજન ! તું आसाम्-આ પ્રત્યક્ષ प्रजानाम्-મનુષ્યાદિ च-અને एषाम्-એ पशूनाम्-ગાય વગેરે પશુઓના રક્ષક બનીને એનાથી मा-भेः-ભય પ્રાપ્ત ન કર, नः-અમને તથા અન્ય किम्-કોઈને चन-પણ मो आममत्-રોગી ન કર. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે ધનવાન છે, તે દરિદ્રોનું પાલન કરે. જે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન છે, તેઓ પ્રજાના પશુઓની કદી પણ હિંસા ન કરે, જેથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ થાય. (૪૭)

इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्र भरामहे मतीः।

यथा॒ शमस॑द् द्वि॒पदे॒ चतु॑ष्पदे॒ विश्वं॑ पु॒ष्टं ग्रामे॑ऽअ॒स्मिन्न॑ना॑तु॒रम्॥ ४८॥

પદાર્થ : હે શત્રુરોધક વીરપુરુષ ! यथा-જેમ अस्मिन्-આ ग्रामे-બ્રહ્માંડ સમૂહમાં अनातुरम्-દુઃખરહિત पुष्टम्-રોગરહિત હોવાથી બળવાન विश्वम्-સર્વ જગત્ शम्-સુખી असत्-રહે, તેમ અમે द्विपदे-મનુષ્યાદિ, चतुष्पदे-ગાય આદિ, तवसे-બલિષ્ઠ कपर्दिने-બ્રહ્મચર્યને સેવન કરેલ क्षयद्वीराय-દુષ્ટનાશક વીરોથી યુક્ત रुद्राय-પાપીને રડાવનાર સેનાપતિ માટે इमाः-એ मतीः-બુદ્ધિમાનોનું प्रभरामहे-ઉત્તમ ધારણ અને પોષણ કરે છે, તેમ તું પણ તેને ધારણ કર. (૪૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જેમ પ્રજામાં સ્ત્રી-પુરુષ બુદ્ધિમાન હોય, તેમ અનુષ્ઠાન કરીને- મનુષ્ય અને પશુઆદિથી યુક્ત રાજ્યને રોગરહિત, પુષ્ટિમાન્ અને સદા સુખી કરે. (૪૮)

या ते॑ रुद्र शि॒वा त॒नूः शि॒वा वि॒श्वाहा॑ भेष॒जी।
शि॒वा रु॒तस्य॑ भेष॒जी तया॑ नो मृड जी॒वसे॑॥ ४९॥

પદાર્થ : હે रुद्र-રાજવૈદ્ય ! તું या-જે ते-તારી शिवा-કલ્યાણકારી तनूः-કાયા વા વિશાળ નીતિ છે, शिवा-જોવામાં પ્રિય भेषजी-ઔષધો સમાન રોગનાશક અને रुतस्य-રોગીને शिवा-સુખદાયક भेषजी-પીડા હરનારી છે, तया-તેના દ્વારા जीवसे-જીવવા માટે विश्वाहा-સર્વ દિવસ नः-અમને मृड-સુખી કર. (૪૯)

ભાવાર્થ : રાજવૈદ્ય આદિ વિદ્વાન્ ધર્મ નીતિથી, ઔષધિઓ આપીને, હસ્તક્રિયા-કૌશલથી શસ્ત્રો દ્વારા છેદન અને ભેદન કરીને રોગોથી નિવૃત્ત કરીને સર્વ સેના તથા પ્રજાને પ્રસન્ન કરે. (૪૯)

परि॑ नो रु॒द्रस्य॑ हे॒तिर्वृ॑णक्तु॒ परि॑ त्वे॒षस्य॑ दुर्म॒तिर॑घा॒योः।
अव॑ स्थि॒रा म॒घव॑द्भ्यस्तनुष्व॒ मीढ्व॑स्तो॒काय॒ तन॑याय मृड॥ ५०॥

પદાર્થ : હે मीढवः-સુખની વર્ષા કરનાર રાજપુરુષ ! આપ જે रुद्रस्य-સભાપતિ રાજાનું हेतिः-વજ્ર છે તેથી त्वेषस्य-ક્રોધાદિથી પ્રજ્વલિત अघायोः-પાપના ઈચ્છુક દુષ્ટાચારીથી नः-અમને परि,वृणक्तु-સર્વ રીતે પૃથક્ રાખ. જે दुर्मतिः-દુષ્ટ બુદ્ધિ છે, તેનાથી પણ અમને परिवृणक्तु-સર્વ તરફથી બચાવો અને मघवद्भ्यः-પ્રશંસિત ધનવાનોથી પ્રાપ્ત स्थिरा-સ્થિર બુદ્ધિ છે, તેને तोकाय-સદ્યોજાત બાળક અને तनयाय-કુમાર માટે परि + तनुष्व-સર્વત્રથી વિસ્તૃત કર, અને એ બુદ્ધિથી સર્વને નિરંતર अव, मृड-સુખી-આનંદિત કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોની એ ધાર્મિક શક્તિ છે, જેથી પ્રજાની રક્ષા અને દુષ્ટોનો નાશ થાય; એ માટે ઉત્તમ વૈદ્યજન સર્વના સ્વાસ્થ્ય, સ્વતંત્રતા અને સુખની ઉન્નતિ કરે, જેથી સર્વ સુખ મળે. (૫૦)

मीढु॑ष्टम॒ शिव॑तम शि॒वो नः॑ सु॒मना॑ भव। प॒र॒मे वृ॒क्षऽआयु॑धं नि॒धाय॒ कृत्तिं॒ वसा॑न॒ऽआ च॑र॒ पिना॑क॒म्बिभ्र॒दा ग॑हि॥ ५१॥

પદાર્થ : હે मीढुष्टम-અત્યંત પરાક્રમયુક્ત शिवतम-અતિ કલ્યાણકારી સભા અથવા સેનાના પતિ ! આપ नः-અમારા માટે सुमनाः-પ્રસન્નચિત્તથી शिवः-સુખકારી भव-બનો.

आयुधम्-તલવાર, બંદૂક અને તોપ આદિ શસ્ત્રોને निधाय-ધારણ કરીને, कृत्तिम्-મૃગચર્મના અંગરખાને वसानः-શરીર પર પહેરીને पिनाकम्-શરીરનું રક્ષણ કરનાર ધનુષ્ય અથવા બખ્તર આદિને बिभ्रत्-ધારણ કરતાં અમારી રક્ષા માટે आगहि-આવો; परमे-પ્રબળ वृक्षे-કાપવા યોગ્ય શત્રુ સેનામાં आ + चर-સર્વત્ર વિચરણ કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિ આદિ પોતાની પ્રજા પ્રત્યે મંગલકારી-શુભ વ્યવહારવાળા તથા દુષ્ટો માટે અગ્નિ સમાન દાહક હોય.

જેથી સર્વ ધર્મમાર્ગનો ત્યાગ કરી અધર્મ માર્ગ પર કદી પણ આચરણ ન કરે. (૫૧)

विकिरिद्र विलोहित नमस्तेऽअस्तु भगवः।

यास्ते सहस्रꣳ हेतयोऽन्यमस्मन्नि वपन्तु ताः॥ ५२॥

પદાર્થ : હે विकिरिद्र-વિશેષ રૂપથી સુવરની સમાન સોનાના વા વિશિષ્ટ સુવરની નિંદા કરનાર, विलोहित-વિવિધ પદાર્થોને પ્રાપ્ત, भगवः-ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ રાજન્ ! ते-આપનો नमः-સત્કાર अस्तु-થાય જેથી ते-(આપના) याः-જે सहस्रम्-અસંખ્ય પ્રકારની हेतयः-ઉન્નતિ વા વજ્રાદિ શસ્ત્ર છે ताः-તે अस्मत्-અમારાથી अन्यम्-બીજા શત્રુનું निवपन्तु-નિરંતર છેદન કરે. (૫૨)

ભાવાર્થ : પ્રજાજન રાજપુરુષો પ્રત્યે એમ કહે-જે આપ લોકોની ઉન્નતિઓ અને શસ્ત્રાસ્ત્ર છે, તે અમને સુખમાં સ્થાપિત કરે, અને અન્યોને અર્થાત્ અમારા શત્રુઓનું નિવારણ કરે. (૫૨)

सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः।

तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि॥ ५३॥

પદાર્થ : હે भगवः-ભાગ્યવાન્ સેનાપતિ ! જે तव-આપની बाह्वोः-ભુજાઓમાં सहस्राणि-અસંખ્ય हेतयः-પ્રબલ વજ્રની ગતિ છે, तासाम्-તેના ईशानः-સ્વામી બનીને આપ सहस्रशः-હજારો શત્રુઓના मुखा-મુખોને पराचीना-પાછા ફેરવીને દૂર कृधि-કરો. (૫૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો-પોતાના બાહુબળથી રાજ્ય પ્રાપ્ત કરીને તથા અસંખ્ય શૂરવીરોની સેના બનાવીને સર્વ શત્રુઓને પાછા મોઢે કાઢી મૂકે. (૫૩)

असंख्याता सहस्राणि ये रुद्राऽअधि भूम्याम्।

तेषाꣳ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ५४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ये-જે असंख्याता-અસંખ્ય सहस्राणि-હજારો रुद्राः-સજીવ-નિર્જીવ

પ્રાણ આદિ વાયુ भूम्याम्-પૃથિવી अधि-પર છે, तेषाम्-તેના સંબંધથી सहस्त्रयोजने-અસંખ્ય ચાર ગાઉના યોજનાવાળા દેશમાં धन्वानि-ધનુષ્યોનો अवतन्मसि-વિસ્તાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : પ્રત્યેક મનુષ્ય શરીરમાં વિભક્ત અસંખ્ય ભૂમિ સંબંધી જીવ અને વાયુઓને જાણે, તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરે તથા તેનો પણ ઉપકાર કરે. (૫૪)

अस्मिन् महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवाऽअधि।

तेषाᳬसहस्त्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ५५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે જે अस्मिन्-આ महति-વ્યાપકતા આદિ મહાન ગુણોથી યુક્ત अर्णवे-બહુ જળવાળા સમુદ્રની સમાન અગાધ अन्तरिक्षे-સર્વની વચ્ચે અવિનાશી આકાશમાં भवाः-વિદ્યમાન अधि-જીવ અને વાયુ છે, तेषाम्-તેનો પ્રયોગ કરીને सहस्त्रयोजने-અસંખ્ય અને ચાર ગાઉના યોજનોવાળા દેશમાં धन्वानि-ધનુષ્ય વા અન્નાદિ ધાન્યોને अध्यवतन्मसि-અધિકતાથી વિસ્તાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યએ જેમ ભૂમિના જીવ અને વાયુઓથી કાર્યોમાં ઉપયોગ ગ્રહણ કરે છે, તેમ આકાશમાં રહેલા જીવો અને વાયુઓથી પણ ઉપયોગ ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૫૫)

नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवꣳ रुद्राऽउपश्रिताः।

तेषाᳬसहस्त्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ५६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે જે नीलग्रीवाः-કંઠમાં નીલવર્ણયુક્ત, शितिकण्ठाः-તીક્ષ્ણ વા શ્વેત કંઠયુક્ત, दिवम्-વિદ્યુત્‌ની સમાન સૂર્ય પર उपश्रिताः-આશ્રિત रुद्राः-જીવ વા વાયુ છે, तेषाम्-તેના ઉપયોગથી सहस्त्रयोजने-અસંખ્ય યોજનોવાળા દેશમાં धन्वानि-શસ્ત્રાદિને अव + तन्मसि-વિસ્તૃત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો અગ્નિસ્થ વાયુ વા જીવોને જાણીને ઉપયોગ કરીને આગ્નેય શસ્ત્ર આદિ સિદ્ધ કરે. (૫૬)

नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वाऽअधः क्षमाचराः।

तेषाᳬसहस्त्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ५७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે नीलग्रीवाः-નીલવર્ણગ્રીવાયુક્ત, शितिकण्ठाः-તથા શ્વેત કંઠયુક્ત, शर्वाः-હિંસક જીવ, अधः-અધોગામી, क्षमाचराः-પૃથિવી પર વિચરણ કરનાર જીવ છે, तेषाम्-તેને सहस्त्रयोजने-હજાર યોજન દેશમાં દૂર કરવા માટે धन्वानि-ધનુષ્યોને અમે अवतन्मसि-વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૫૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે વાયુ ભૂમિથી આકાશમાં અને આકાશથી ભૂમિમાં આવે અને જાય છે, તેમાં જે તેજ-અગ્નિ અને ભૂમિ આદિ તત્વોના અવયવો રહે છે, તેને જાણીને, ઉપયોગ કરીને કાર્યો

સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૫૭)

ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः।
तेषांᳬ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ५८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ये-જે वृक्षेषु-આંબાદિ વૃક્ષોમાં शष्पिञ्जराः-હિંસક પિંજર વર્ણવાળા नीलग्रीवाः-નીલ વર્ણની ગ્રીવાવાળા અને ગળી જનારા विलोहिताः-અનેક કાળા વર્ણોવાળા સર્પ વગેરે હિંસક જીવ છે तेषाम्-તેના सहस्रयोजने-અસંખ્ય યોજન દૂર દેશમાં કાઢી મૂકવા માટે धन्वानि-ધનુષ્યોને अवतन्मसि-વિસ્તૃત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વૃક્ષ આદિ પર વૃદ્ધિ પૂર્વક જીવનારા સર્પ આદિ છે, તેનું પણ યથાશક્તિ નિવારણ કરવું જોઈએ. (૫૮)

ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः।
तेषांᳬ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ५९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ये-જે भूतानाम्-પ્રાણી અને અપ્રાણીઓ अधिपतयः-રક્ષક विशिखासः-શિખારહિત સંન્યાસી અને कपर्दिनः-જટાધારી બ્રહ્મચારી છે, तेषाम्-તેના હિતને માટે सहस्रयोजने-હજાર યોજનના દેશમાં અમો સર્વથા ભ્રમણ કરીએ છીએ. તથા धन्वानि-અવિદ્યાદિ દોષોના નિવારણ માટે વિદ્યાદિ શસ્ત્રોનો अवतन्मसि-વિસ્તાર કરીએ છીએ; તેમ હે રાજપુરુષો ! તમે પણ સદા ભ્રમણ કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સૂત્રાત્મા અને ધનંજય આદિ [વાયુઓ] ની સમાન સંન્યાસી અને બ્રહ્મચારી સર્વના શરીરો અને આત્માઓની પુષ્ટિકર્તા છે, તેના [દ્વારા કરવામાં આવેલ] અધ્યાપન અને ઉપદેશથી બુદ્ધિ અને શરીરની પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૫૯)

ये पथां पथिरक्षय ऐलबृदाऽआयुर्युधः। तेषांᳬ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ६०॥

પદાર્થ : અમે ये-જે पथाम्-માર્ગોમાં पथिरक्षयः-વટેમાર્ગુઓની રક્ષા કરવા સમાન, ऐलबृदाः-પૃથિવીના પદાર્થોના વર્ધક, आयुर्युधः-પૂર્ણાયુની સાથે યુદ્ધ કરનાર ભૃત્ય-નોકર છે, तेषाम्-તેના सहस्रयोजने-અસંખ્ય યોજન દેશમાં धन्वानि-ધનુષ્યોને अवतन्मसि-વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જેમ રાજાજનો દિવસ-રાત પ્રજાજનોની યથાવત્ રક્ષા કરે છે, તેમ પૃથિવી અને જીવન આદિની વાયુ રક્ષા કરે છે, એમ જાણો. (૬૦)

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः।
तेषांᳬ सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ६१॥

પદાર્થ : અમે ये-જે सृकाहस्ताः-હાથમાં વજ્રને ધારણ કરનાર, निषंगिणः-પ્રશંસિત બાણ અને ભાથાયુક્ત જનોની સમાન तीर्थानि-દુઃખોથી તારનાર વેદ, આચાર્ય, સત્યભાષણ અને બ્રહ્મચર્યાદિ ઉત્તમ નિયમોમાં અથવા સમુદ્ર આદિથી તારનાર નાવ આદિ તીર્થોનો प्रचरन्ति-પ્રચાર કરીએ છીએ, तेषाम्-તેનો सहस्त्रयोजने-હજાર યોજનોના દેશમાં धन्वानि-શસ્ત્રોને अवतन्मसि-વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોનાં તીર્થ બે પ્રકારના છે. તેમાં પ્રથમ બ્રહ્મચર્ય, આચાર્યની સેવા, વેદનું ભણવું-ભણાવવું, સત્સંગ, ઈશ્વરોપાસના અને સત્યભાષણ આદિ છે, જે દુઃખ રૂપી સાગરથી મનુષ્યને પાર કરે છે.

બીજું-જેનાથી લોકો સમુદ્ર આદિ જલાશયોથી પાર કરી શકે તે (નાવ આદિ) છે. (૬૧)

येऽन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान्।
तेषाᳪं सहस्त्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ६२॥

પદાર્થ : અમે ये-જે अन्नेषु-ખાદ્ય પદાર્થોમાં રહેલા पात्रेषु-પાત્રોમાં पिबतः-પાન કરનાર जनान्-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને विविध्यन्ति-બાણ સમાન ઘાયલ કરે છે, तेषाम्-તેના પ્રતિકાર માટે सहस्त्रयोजने-અસંખ્ય યોજન દેશમાં धन्वानि-ધનુષ્યોને अव, तन्मसि-વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૨)

ભાવાર્થ : જે અન્નાહાર અને જલ આદિનું પાન કરનારને વિષ આદિથી હનન કરે છે, તેનાથી સર્વે દૂર રહે. (૬૨)

यऽएतावन्तश्च भूयाᳪंसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे।
तेषाᳪं सहस्त्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥ ६३॥

પદાર્થ : અમે ये-જે एतावन्तः-અહીં વ્યાખ્યાત છે તે च-અને रुद्राः-પ્રાણ વા જીવ भूयांसः-તેથી પણ અધિક च-સર્વ પ્રાણ તથા જીવ दिशः-પૂર્વાદિ દિશાઓમાં वितस्थिरे-વિવિધ રીતે રહેલા છે, तेषाम्-તેના सहस्त्रयोजने-હજાર યોજનના દેશમાં धन्वानि-આકાશના અવયવોના अव, तन्मसि-વિરુદ્ધ વિસ્તૃત કરીએ છીએ. (૬૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વ દિશાઓમાં રહેલા જીવો વા વાયુઓનો યથાવત્ ઉપયોગ કરે છે, તેના સર્વ કાર્યો સિદ્ધ થાય છે. (૬૩)

नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥ ६४॥

પદાર્થ : ये-જે સર્વહિતકારી दिवि-સૂર્ય પ્રકાશાદિ સમાન વિદ્યા અને વિનયમાં વિદ્યમાન છે, येषाम्-જેના वर्षम्-વર્ષાની સમાન इषवः-બાણ છે तेभ्यः-તે रुद्रेभ्यः-પ્રાણોની સમાન વર્તમાન પુરુષોને માટે

અમે કરેલ नमः-સત્કાર अस्तु-થાય.

જે दश-દશ પ્રકાર प्राचीः-પૂર્વ, दश-દશ પ્રકાર दक्षिणाः-દક્ષિણ, दश-દશ પ્રકાર प्रतीचीः-પશ્ચિમ, दश-દશ પ્રકાર उदीचीः-ઉત્તર અને दश-દશ પ્રકાર ऊर्ध्वाः-ઉપરની દિશાઓમાં પ્રાપ્ત થાય છે तेभ्यः-તે સર્વનું रुद्रेभ्यः-હિત કરનારા રાજપુરુષોને માટે અમારા नमः-અન્નાદિ પદાર્થ अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

જે એવા પુરુષો છે ते-તેઓ नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે, ते-તેઓ नः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે ते-તેથી અમારો यम्-જેથી द्विष्मः-દ્વેષ-અપ્રીતિ કરે છે च-અને यः-જે नः-અમને द्वेष्टि-દુઃખ આપે છે तम्-તેને एषाम्-એ વાયુઓની जम्भे-બિલાડાના મોઢામાં ઉંદરની સમાન પીડામાં दध्मः-નાખીએ છીએ. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે વાયુઓથી વર્ષા થાય છે, તેમ જે સર્વત્ર અધિષ્ઠાતા છે, તે વીર પૂર્વ આદિ દિશાઓમાં અમારા રક્ષક છે.

અમે જેને વિરોધી જાણીએ, તેને સર્વત્રથી ઘેરીને વાયુ સમાન બાંધી દઈએ. (૬૪)

नमो॑ऽस्तु रु॒द्रेभ्यो॒ ये॒ऽन्तरि॑क्षे॒ येषां॒ वात॒ऽइष॑वः। तेभ्यो॒ दश॒ प्राची॒र्दश॑ दक्षिणा दश॑ प्रतीची॒र्दशोदी॑ची॒र्दशो॒र्ध्वाः। तेभ्यो॒ नमो॑ऽअस्तु ते नो॑ऽवन्तु॒ ते नो॑ मृडयन्तु॒ ते यं द्वि॒ष्मो यश्च॑ नो॒ द्वेष्टि॒ तमे॑षां॒ जम्भे॑ दध्मः॥ ६५॥

પદાર્થ : ये-જે વિમાનાદિ યાનોમાં બેસીને अन्तरिक्षे-આકાશમાં વિચરણ કરે છે, येषाम्-જેના वातः-વાયુની સમાન इषवः-બાણ છે, तेभ्यः-તે रुद्रेभ्यः-પ્રાણાદિ સમાન વિદ્યમાન પુરુષોને અમારો नमः-સત્કાર अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

જે दश-દશ प्राचीः-પૂર્વ, दश-દશ दक्षिणाः-દક્ષિણ, दश-દશ प्रतीचीः-પશ્ચિમ, दश-દશ उदीचीः-ઉત્તર અને दश-દશ ऊर्ध्वाः-ઉપરની દિશાઓમાં વ્યાપ્ત છે तेभ्यः-તે સર્વ હિતૈષીઓને नमः-અન્નાદિ પદાર્થો अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

જે એવા પુરુષો છે ते-તેઓ नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે, ते-તેઓ नमः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે, ते-તેઓ वयम् च-અને અમે यम्-જેનાથી द्विष्मः-દ્વેષ-અપ્રીતિ કરીએ च-અને यः-જે नः-અમને द्वेष्टि-દુઃખ આપે तम्-તેને एषाम्-એ વાયુઓના जम्भे-બિલાડાના મુખમાં ઉંદરની સમાન પીડામાં दध्मः-નાખીએ છીએ. (૬૫).

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય આકાશમાં રહેલ [વિમાનોમાં વિચરણ કરનાર] શુદ્ધ શિલ્પીઓની સેવા કરે છે, તેને એ શિલ્પી સર્વત્રથી સમર્થ બનાવીને શિલ્પ વિદ્યાઓ શીખવે. (૬૫)

नमो॑ऽस्तु रु॒द्रेभ्यो॒ ये पृ॑थि॒व्यां येषा॒मन्न॒मिष॑वः। तेभ्यो॒ दश॒ प्राची॒र्दश॑ दक्षिणा दश॑ प्रतीची॒र्दशोदी॑ची॒र्दशो॒र्ध्वाः। तेभ्यो॒ नमो॑ऽअस्तु ते नो॑ऽवन्तु॒ ते नो॑ मृडयन्तु॒ ते यं द्वि॒ष्मो यश्च॑ नो॒ द्वेष्टि॒ तमे॑षां॒ जम्भे॑ दध्मः॥ ६६॥

પદાર્થ : ये-જે ભૂમિ-વિમાન આદિમાં બેસીને पृथिव्याम्-વિસ્તૃત ભૂમિમાં વિચરણ કરે છે, येषाम्-

જેના अन्नम्-તંદુલ-ચોખાદિ ભક્ષ્ય પદાર્થ સમાન इषवः-બાણરૂપ છે, तेभ्यः-તે स्द्रेभ्यः-પ્રાણ આદિ સમાન વિદ્યમાન પુરુષોને માટે અમે કરેલ नमः-સત્કાર अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. જે दश-દશ प्राचीः-પૂર્વ, दश-દશ दक्षिणाः-દક્ષિણ, दश-દશ प्रतीचीः-પશ્ચિમ, दश-દશ उदीचीः-ઉત્તર અને दश-દશ ऊर्ध्वाः-ઉપરની દિશાઓમાં વ્યાપ્ત છે तेभ्यः-તે સર્વ હિતૈષીઓને नमः-અન્નાદિ પદાર્થો अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

જે એવા પુરુષો છે, ते-તેઓ नः-અમારી સર્વત્રથી अवन्तु-રક્ષા કરે, ते-તેઓ नः-અમને मृडयन्तु-સુખી કરે, ते-તેઓ वयं च-જેને અને અમે यम्-જેને द्विष्मः-અપ્રસન્ન કરીએ च-અને यः-જે नः-અમને द्वेष्टि-દુઃખ આપે तम्-તેને एषाम्-એ વાયુઓના जम्भे-બિલાડાના મુખમાં ઊંદરની સમાન પીડામાં दध्मः-નાખીએ છીએ. (૬૬)

ભાવાર્થ : જે પૃથિવી પર અન્નના અભિલાષી છે, તેઓનું પોષણ કરીને તેઓની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૬૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં વાયુ, જીવ, ઈશ્વર અને વીરપુરુષોના ગુણ અને કર્મોના વર્ણનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે. તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति षोडषोऽध्यायः ॥



॥ अथ सप्तदशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

अश्म॒न्नूर्जं॒ पर्व॑ते शिश्रिया॒णाम॒द्भ्यऽओष॑धीभ्यो॒ वन॒स्पति॑भ्यो॒ऽअधि॒ सम्भृ॑तं॒ पयः॑। तां न॒ऽइष॒मूर्जं॑ धत्त मरुतः सꣳररा॒णाऽअश्मँ॑स्ते॒ क्षुन् मयि॑ त॒ऽऊर्ग्यं द्वि॒ष्मस्तं ते॒ शुगृ॑च्छतु॥ १॥

પદાર્થ : હે संरराणाः-ઉત્તમ દાનશીલ मरुतः-વાયુ સમાન ક્રિયાકુશળ મનુષ્યો ! તમે पर्वते-પર્વતાકાર अश्मन्-મેઘના शिश्रियाणाम्-અવયવોમાં સ્થિત વિદ્યુત્‌ને તથા ऊर्जम्-પરાક્રમ અને અન્નને नः-અમારા માટે अधिधत्त-અધિકતાથી ધારણ કરો. અને अद्भ्यः-જલાશયો, ओषधिभ्यः-જલ આદિ ઔષધિઓ અને वनस्पतिभ्यः-પીપળ આદિ વનસ્પતિઓથી सम्भृतम्-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરેલ पयः-રસયુક્ત જલ, इषम्-અન્ન, ऊर्जम्-પરાક્રમ અને ताम्-તે પૂર્વોક્ત વિદ્યુત્‌ને धत्त-ધારણ કરો.

હે મનુષ્ય જે ते-તારા अश्मन्-મેઘ મંડલમાં ऊर्क्-રસ વા પરાક્રમ છે, તે मयि-મારામાં તથા જે ते-તારી क्षुत्-ભૂખ છે, તે मयि-મારામાં પણ હોય, અર્થાત્ સમાન સુખ-દુઃખ માનીને આપણે પરસ્પર સહાયક બનીએ અને यम्-જે દુષ્ટનો वयम्-અમે द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ तम्-તેને ते-તારો शुक्-શોક ऋच्छतु-પ્રાપ્ત થાય. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય તળાવો અને ઔષધિ આદિથી રસને ગ્રહણ કરીને, તેને મેઘસમૂહ-વાદળામાં રાખીને ફરી વરસાવે છે, તેથી અન્ન આદિ ઉત્પન્ન થાય છે.

તે અન્નના ભોજનથી જે ભૂખની નિવૃત્તિ, તેથી બલની વૃદ્ધિ, તેથી દુષ્ટોનું નિવારણ, તેથી સજ્જનોના શોકનો નાશ થાય છે, તેમજ મનુષ્યોએ પરસ્પર સમાન સુખ-દુઃખવાળા મિત્ર બનીને, એક-બીજાના દુઃખનો વિનાશ કરીને, સુખની નિરંતર વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧)

इमा मेऽअग्नऽइष्टका धेनवः सन्त्वेका च दश च दश च शतं च शतं च सहस्रं च सहस्रं चायुतं चायुतं च नियुतं च नियुतं च प्रयुतं चार्बुदं च न्यर्बुदं च समुद्रश्च मध्यं चान्तश्च परार्द्धश्चैता मेऽअग्नऽइष्टका धेनवः सन्त्वमुत्रामुष्मिँल्लोके॥ २॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! જેમ मे-મારી इमाः-આ इष्टकाः-ઈષ્ટ સુખને સિદ્ધ કરનારી યજ્ઞની સામગ્રી धेनवः-દૂધ આપનારી ગાયોની સમાન सन्तु-બને, તેમ આપને માટે પણ બને.

જે एका-એક, च-દશગુણા दश-દશ, च-અને दश-દશ च-દશગુણા शतम्-સો, च-અને शतम्-સો च-દશગુણા सहस्रम्-હજાર, च-અને सहस्रम्-હજાર च-દશગુણા अयुतम्-દશહજાર, च-અને अयुतम्-દશ હજાર च-દશગુણા नियुतम्-લાખ, च-અને नियुतम्-લાખ च-દશગુણા प्रयुतम्-દશ લાખ च-તેના દશ ગુણા કરોડ અને તેના દશ ગુણા अर्बुदम्-દશ કરોડ, च-તેના દશગુણા न्युर्बुदम्-અર્વ, च-તેના દશગુણા ખર્વ, તેના દશગુણા નિખર્વ, તેના દશગુણા મહાપદ્મ, તેના દશગુણા શંકુ, તેના દશગુણા समुद्रः-સમુદ્ર, च-તેના દશગુણા मध्यम्-મધ્ય, च-તેના દશગુણા अन्तः-અન્ત અને च-તેના દશગુણા परार्द्धश्च-પરાર્ધ, एताः-એ मे-મારી अग्ने-હે વિદ્વાન્ ! इष्टकाः-વેદીની ઈંટો धेनवः-ગાયોની સમાન अमुष्मिन्-પરોક્ષ लोके-જોવા યોગ્ય-પરલોક अमुत्र-પર-જન્મમાં सन्तु-સુખદાયક બને, તેવો પ્રયત્ન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ સારી રીતે સેવા કરેલી ગાયો દૂધ આદિના દાનથી સર્વને સંતુષ્ટ કરે છે, તેમજ વેદીમાં ચણેલી ઈંટો વરસાદની નિમિત્ત બનીને વરસાદ આદિ દ્વારા સર્વને આનંદિત કરે છે.

મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ, કે એક-૧ સંખ્યાને દશગુણા કરતાં દશ-૧૦ સંખ્યા પ્રાપ્ત થાય છે. દશને દશ ગુણા કરતાં એકસો, એકસોને દશગુણા કરતાં હજાર, હજારને દશગુણા કરતાં અયુત, અયુતને દશગુણા કરતાં નિયુત, નિયુતને દશગુણા કરતાં પ્રયુત પ્રયુતને દશ ગુણા કરતાં કરોડ, કરોડને દશગુણા કરતાં દશ કરોડ, દશ કરોડને દશગુણા કરતાં ખર્વ, ખર્વને દશગુણા કરતાં નિખર્વ, નિખર્વને દશગુણા કરતાં મહાપદ્મ, મહાપદ્મને દશગુણા કરતાં શંકુ, શંકુને દશગુણા કરતાં સમુદ્ર, સમુદ્રને દશગુણા કરતાં અન્ત, અન્તને દશગુણા કરતાં પરાર્દ્ધ સંખ્યા થાય છે. આ સંખ્યાઓ કહેવામાં આવી છે.

મંત્રમાં પઠિત અનેક च*-પદોથી અન્ય પણ ગણિત અંક સંખ્યા, બીજ સંખ્યા અને રેખા સંખ્યા આદિ વિદ્યાઓને યથાયોગ્ય રૂપમાં જાણવી જોઈએ.*

જેમ આ લોકમાં સંખ્યાઓ છે, તેમ અન્ય લોકોમાં પણ છે.

જેમ [શિલ્પ વિષયમાં] એ સંખ્યામાં ગણવામાં આવેલી ઈંટો શ્રેષ્ઠ શિલ્પીજનો દ્વારા ચણીને ઘરનો આકાર-રૂપ બનીને શીત, ઉષ્ણ, વર્ષા અને વાયુ આદિથી મનુષ્યોની રક્ષા કરીને તેઓને આનંદિત કરે છે, તેમજ યજ્ઞમાં આપવામાં આવેલી આહુતિઓ જલ, વાયુ તથા ઔષધિઓની સાથે મળીને સર્વ પ્રાણીઓને આનંદિત કરે છે. (૨)

ऋतव स्थऽऋतावृधऽऋतुष्ठा स्थऽऋतावृधः।
घृतश्च्युतो मधुश्च्युतो विराजो नाम कामदुघाऽअक्षीयमाणाः॥ ३॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જે તમે ऋतवः-વસંત આદિ ઋતુઓ સમાન स्थ-છો, જે ऋतावृधः-જલથી નદીઓ સમાન સત્યથી ઉન્નતિ પ્રાપ્ત કરનારી, ऋतुष्ठाः-વસંત આદિ ઋતુઓમાં સ્વસ્થ રહેનારી અને ऋतावृधः-સત્યની વૃદ્ધિ કરનારી स्थ-છો, જે તમે घृतश्च्युतः-ઘૃત પ્રદાન કરનારી, मधुश्च्युतः-મધુર રસના કારણે પ્રાપ્ત થયેલી, अक्षीयमाणाः-રક્ષા કરવા યોગ્ય, विराजः-વિવિધ ગુણોથી પ્રકાશમાન, कामदुधाः-કામનાઓનું પૂરણ કરનારી नाम-પ્રસિદ્ધ દુધાળી ગાયો સમાન છો, તે તમે અમને સુખ પ્રદાન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઋતુઓ અને ગાયો પોતાના સમય અનુસાર સર્વ પ્રાણીઓને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેમ જ શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ સમયાનુસાર પોતાના પતિ આદિ સર્વને તૃપ્ત કરીને આનંદિત કરે. (૩)

समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परि व्ययामसि। पावकोऽअस्मभ्यꣳ शिवो भव॥ ४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિસમાન તેજસ્વી સભાપતિ ! જેમ અમે समुद्रस्य-આકાશની મધ્યમાં अवकया-રક્ષાત્મક ક્રિયાથી યુક્ત त्वा-આપને परि, व्ययामसि-સર્વ બાજુથી પ્રાપ્ત થઈએ છીએ, તેમ पावकः-પવિત્ર કર્તા આપ अस्मभ्यम्-અમારા માટે शिवः-મંગલકારી भव-બનો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય સમુદ્રના જન્તુઓની રક્ષા કરીને તેને સુખી કરે છે, તેમ ધાર્મિક, સભાપતિ રક્ષક રાજા પોતાની પ્રજાઓની સારી રીતે રક્ષા કરીને, તેને નિરંતર સુખી રાખે. (૪)

हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परि व्ययामसि। पावकोऽअस्मभ्यꣳ शिवो भव॥ ५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી સભાપતિ ! અમે हिमस्य-શીતને जरायुणा-જીર્ણ કરનારા વસ્ત્રો અને અગ્નિથી त्वा-આપને परि, व्ययामसि-સર્વત્રથી આચ્છાદિત કરીએ છીએ, તેમ पावकः-પવિત્ર સ્વરૂપ આપ अस्मभ्यम्-અમારા માટે शिवः-મંગલમય भव-બનો. (૫)

ભાવાર્થ : હે સભાપતિ ! જેમ અગ્નિ અથવા વસ્ત્ર શીતથી પીડિત પ્રાણીઓને શીતથી યુક્ત કરીને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ તારા આશ્રયને પ્રાપ્ત અમે લોકો દુઃખથી મુક્ત બનીને સુખોનું સેવન કરનાર બનીએ. (૫)

उप ज्मन्नुप वेतसेऽवतर नदीष्वा। अग्नेपित्तमपामसि मण्डूकि ताभिरागहि

सेमं नो॑ य॒ज्ञं पा॑व॒कव॑र्णं॒ शिवं॑ कृधि॥ ६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિસમાન તેજસ્વિની વિદુષી, मण्डूकि-સુભૂષિત વિદુષી સ્ત્રી ! તું ज्मन्-પૃથિવી પર नदीषु-નદીઓ તથા वेतसे-પદાર્થોના વિસ્તારમાં अवतर-ઉતર.

જેમ અગ્નિ अपाम्-પ્રાણો વા જલોના पित्तम्-તેજ રૂપ असि-છે, તેમ તું ताभिः-તે જલો વા પ્રાણોની સહિત उप + आ + गहि-અમારી સમીપ આવ.

सा-તું नः-અમારા इमम्-આ पावकवर्णम्-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન यज्ञम्-ગૃહાશ્રમરૂપ યજ્ઞને शिवम्-કલ્યાણકારી उप + आ + कृधि-બનાવ. (૬)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ ગૃહાશ્રમમાં પ્રયત્નથી સર્વ કાર્યોને સારી રીતે સિદ્ધ કરીને, શુદ્ધ આચરણથી કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરે. (૬)

अ॒पामि॒दं न्यय॑नं समु॒द्रस्य॑ नि॒वेश॑नम्।
अ॒न्याँस्ते॑ऽअ॒स्मत्त॑पन्तु हे॒तयः॑ पाव॒कोऽअ॒स्मभ्यं॑ शि॒वो भ॑व॥ ७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે इदम्-આ આકાશ अपाम्-જલો વા પ્રાણોના न्ययनम्-નિશ્ચિત સ્થાન છે, તે આકાશસ્થ समुद्रस्य-સમુદ્રના निवेशनम्-ઘરની સમાન ગૃહાશ્રમને પ્રાપ્ત કરીને, पावकः-પવિત્ર કર્મ કરનાર બનીને આપ अस्मभ्यम्-અમારા માટે शिवः-મંગલકારી भव-બને. ते-આપના हेतयः-વજ્ર વા ઉન્નતિ अस्मत्-અમારાથી अन्यान्-અન્ય દુષ્ટોને तपन्तु-દુઃખ આપે. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો, જેમ જલોનો આધાર સમુદ્ર છે, સમુદ્રનો આધાર ભૂમિ છે અને ભૂમિનો આધાર અન્તરિક્ષ છે, તેમ ગૃહસ્થના પદાર્થોનો આધાર ગૃહ છે. તેનું નિર્માણ કરીને, મંગલ આચરણ કરીને, શ્રેષ્ઠોનું પાલન અને દુષ્ટોનું તાડન કરે. (૭)

अग्ने॑ पावक रो॒चिषा॑ म॒न्द्रया॑ देव जि॒ह्वया॑। आ दे॒वान्व॑क्षि॒ यक्षि॑ च॥ ८॥

પદાર્થ : હે पावक-મનુષ્યોના હૃદયોને શુદ્ધ કરનાર देव-સુંદર अग्ने-વિદ્યાના પ્રકાશક અને ઉપદેશક વિદ્વાન્ ! આપ मन्द्रया-આનંદની સાધક जिह्वया-સત્યપ્રિય વાણીથી, रोचिषा-વિદ્યા પ્રકાશથી देवान्-વિદ્વાન્ વા દિવ્યગુણોનો आवक्षि-ઉપદેશ કરે છે च-અને यक्षि-સંગ કરે છે. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય પોતાના પ્રકાશથી સર્વ જગતને પ્રકાશિત કરે છે, તેમજ આપ્ત ઉપદેશક વિદ્વાન્ સર્વ જનોને તૃપ્ત કરે. (૮)

स नः॑ पावक दीदि॒वोऽग्ने॑ दे॒वाँ२ऽइ॒हाव॑ह। उप॑ य॒ज्ञं ह॒विश्च॑ नः॥ ९॥

પદાર્થ : હે पावक-પવિત્ર, दीदिवः-તેજસ્વિન્ વા શત્રુદાહક अग्ने-સત્યાસત્યના વિભાજક વિદ્વાન્ ! सः-પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત આપ જેમ એ અગ્નિ नः-અમારા માટે ઉત્તમ ગુણવાળા हविः-હવન કરેલા સુગંધિત દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ इह-આ સંસારમાં यज्ञम्-ગૃહાશ્રમ च-અને देवान्-વિદ્વાનોને नः-અમારા

માટે उप + आवह-સારી રીતે સમીપ પ્રાપ્ત કરાવો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય રૂપમાં એ અગ્નિ સર્વને માટે રસને ઉપર લઈ જઈને તથા વરસાવીને દિવ્ય સુખ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમજ વિદ્વાન્ વિદ્યા-રસને ઉન્નત કરીને સર્વ સુખોને ઉત્પન્ન કરે. (૯)

पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन् रुरुचऽउषसो न भानुना।
तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रणऽआ यो घृणे न ततृषाणोऽअजरः॥ १०॥

પદાર્થ : य-જે पावकया-પવિત્ર કરનારી, चितयन्त्या-ચેતના કરનારી कृपा-શક્તિમાન સેનાપતિ જેમ भानुना-દીપ્તિથી उषसः-પ્રભાત સમયમાં શોભે છે, न-તેમ क्षामन्-રાજ્ય ભૂમિમાં रुरुचे-શોભે છે.

અથવા यः-જે यामन्-માર્ગ વા પ્રહરમાં જેમ एतशस्य-ઘોડાના બળને नु-શીઘ્ર तूर्वन्-મારે છે, न- તેમ घृणे-પ્રદીપ્ત रणे-યુદ્ધમાં ततृषाणः-તૃષાતુર વ્યક્તિ न-સમાન अजरः-અજર, અજેય યુવાન, નિર્ભય आ + रुरुचे-સારી રીતે બનીને, તે રાજ્ય કરવા યોગ્ય બને છે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ચંદ્રમા પોતાની દીપ્તિથી શોભિત બને છે; તેમ ઉત્તમ સ્ત્રીની સાથે શ્રેષ્ઠ પતિ અને સેનાની સાથે સેનાપતિ સુશોભિત બને છે. (૧૦)

नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे।
अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यं शिवो भव॥ ११॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! हरसे-દુઃખ હરનાર ते-તને અમારો नमः-સત્કાર अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

शोचिषे-પવિત્ર, अर्चिषे-પૂજ્ય-સત્કાર યોગ્ય ते-તને અમારા नमः-નમસ્કાર अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

જે ते-તારી हेतयः-વજ્રાદિ શસ્ત્રોથી યુક્ત સેનાઓ છે, તે अस्मत्-અમારાથી ભિન્ન अन्यान्-અન્ય શત્રુઓને तपन्तु-દુઃખી સંતાપયુક્ત કરે.

पावकः-શુદ્ધ કરનાર આપ अस्मभ्यम्-અમારા માટે शिवः-ન્યાયકારી भव-બનો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પવિત્ર લોકોને ન્યાયાધીશ બનાવીને, દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને, સત્ય ન્યાય પ્રકાશિત કરવો જોઈએ. (૧૧)

नृषदे वेडप्सुषदे वेड् बर्हिषदे वेड् वनसदे वेट् स्वर्विदे वेट्॥ १२॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ આપ नृषदे-નાયકોમાં બેસનારા પુરુષોને માટે वेट्-ન્યાયાસને બેસનાર ન્યાયાધીશ भव-બનીને अप्सुषदे-નૌકા આદિમાં બેસનાર માટે वेट्-ન્યાયાધીશ भव-બનીને बर्हिषदे-પ્રજાની ઉન્નતિના વ્યવહારમાં થવા માટે वेट्-અધિષ્ઠાતા ન્યાયાધીશ બનનારા वनसदे-વનવાસીઓ માટે वेट्-ન્યાયમાં પ્રકાશ કરનારા અને स्वर्विदे-સુખના જ્ઞાતા માટે वेट्-ઉત્સાહમાં પ્રવેશ કરનારા બનો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે દેશમાં ન્યાયધીશ, નાવમાં યાત્રા કરનાર, પ્રજાના વર્ધક, વનવાસીઓ, નેતા અને

સુખ પ્રદાન કરનાર વિદ્વાનો હોય છે, ત્યાં સર્વ સુખોની વૃદ્ધિ થાય છે. (૧૨)

ये दे॒वा दे॒वानां॑ य॒ज्ञिया॑ य॒ज्ञिया॑नाᳬं संवत्स॒रीण॒मुप॑ भा॒गमास॑ते।
अ॒हुता॒दो॑ ह॒विषो॑ य॒ज्ञेऽअ॒स्मिन्त्स्व॒यं पि॑बन्तु॒ मधु॑नो घृ॒तस्य॑॥ १३॥

પદાર્થ : ये-જે देवानाम्-વિદ્વાનોમાં अहुतादः-હવન કર્યા વિના ભોજન કરનાર देवाः-વિદ્વાન્-સંન્યાસી છે, અથવા यज्ञियानाम्-યજ્ઞ કરનારા કુશળ પુરુષોમાં यज्ञियाः-યોગાભ્યાસાદિ યજ્ઞના યોગ્ય વિદ્વાન્ છે, તે संवत्सरीणम्-વર્ષભર પુષ્ટિ માટે भागम्-સેવન કરવા યોગ્ય શ્રેષ્ઠ પરમાત્માની उपासते-ઉપાસના કરે છે, તે अस्मिन्-આ यज्ञे-સંગરૂપ યજ્ઞમાં मधुनः-મધ, घृतस्य-ઘી અથવા જલ તથા हविषः-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોના भागम्-ભાગોને स्वयम्-જાતે [આપ] पिबन्तु-સેવન કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે અગ્નિત્યાગી અર્થાત્ આહવનીય, ગાર્હપત્ય અને દક્ષિણાગ્નિથી સંબંધિત બાહ્ય કર્મોનો ત્યાગ કરીને, અંદરની અગ્નિથી સંપન્ન સંન્યાસીજનો છે, તેઓ હવન ન કરવા છતાં ભોજન કરીને સર્વત્ર ભ્રમણ કરીને, સર્વ લોકોને વેદાર્થનો બોધ કરાવે. (૧૩)

ये दे॒वा दे॒वेष्वधि॑ दे॒व॒त्वमाय॒न्ये ब्रह्म॑णः पु॒रऽए॒तारो॑ऽअ॒स्य।
येभ्यो॒ नऽऋ॒ते पव॑ते॒ धाम॒ किञ्च॒न न ते दि॒वो न पृ॑थि॒व्याऽअधि॒ स्नुषु॑॥ १४॥

પદાર્થ : ये-જે देवाः-પૂર્ણ વિદ્વાન્ देवेषु, अधि-વિદ્વાનોમાં સર્વથી શ્રેષ્ઠ ઉત્તમ કક્ષામાં વિરાજમાન થઈને देवत्वम्-પોતાના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને आयन्-પ્રાપ્ત કરે છે, અને ये-જે अस्य-આ ब्रह्मणः-પરમેશ્વરને पुरएतारः-પ્રથમ પ્રાપ્ત કરનાર છે, येभ्यः-જેના ऋते-વિના किम् + चन-કોઈપણ धाम-સુખનું સ્થાન न + पवते-પવિત્ર થતું નથી, ते-તે વિદ્વાન્ न-ન दिवः-સૂર્યલોકમાં न-ન पृथिव्याः-પૃથિવીના अधिस्नुषु-કોઈ પ્રદેશમાં आयन्-પ્રાપ્ત થાય છે. [અર્થાત્ નિવાસ કરતા નથી સર્વત્ર વિચરણ કરે છે.] (૧૪)

ભાવાર્થ : જે આ સંસારમાં સર્વશ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્, યોગીરાજ, યથાર્થરૂપમાં પરમેશ્વરને જાણે છે, તેઓ સમસ્ત લોકોને પવિત્ર કરનાર હોવા છતાં જીવનમુક્ત અવસ્થામાં પરોપકાર કરતાં અને વિદેહ શરીર રહિત મુક્તિદશામાં સૂર્યલોકમાં તથા પૃથિવી પર સ્થાયી-નિયત રૂપમાં રહેતા નથી, પરન્તુ બ્રહ્મ-ઈશ્વરમાં સ્થિત રહીને અવ્યાહત-અબાધ ગતિથી વિચરણ કરે છે. (૧૪)

प्रा॒ण॒दाऽअ॑पान॒दा व्या॑न॒दा व॑र्चो॒दा व॑रिवो॒दाः।
अ॒न्याँस्ते॑ऽअ॒स्मत्त॑पन्तु हे॒तयः॑ पाव॒कोऽअ॒स्मभ्य॑ᳪं शि॒वो भ॑व॥ १५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ રાજન્ ! ते-આપની या-જે ઉન્નતિ વા શસ્ત્રાદિ अस्मभ्यम्-અમારા માટે प्राणदाः-જીવન તથા બળ આપનારી, अपानदाः-દુઃખોને દૂર કરવાના સાધન આપનારી, व्यानदाः-વ્યાપ્તિ અને વિજ્ઞાન આપનારી, वर्चोदाः-સકલ વિદ્યાધ્યયન આપનારી અને वरिवोदाः-સત્ય, ધર્મ અને વિદ્વાનોની સેવાને વ્યાપ્ત કરનારી हेतयः-વજ્રાદિ સમાન શસ્ત્રોની વૃદ્ધિ થઈને अस्मत्-અમારાથી अन्यान्-ભિન્ન-

અન્ય દુષ્ટ શત્રુઓને तपन्तु-તપાવે-દુઃખી કરે, અને તેની સાથે पावकः-શુદ્ધિનો પ્રચાર કરતાં આપ अस्मभ्यम्-અમારા માટે शिवः-મંગલકારી भव-બનો.

ભાવાર્થ : તે જ રાજા છે, જે ન્યાયનો વર્ધક હોય, તે જ વિદ્વાન્ છે, જે વિદ્યા દ્વારા ન્યાયનું જ્ઞાન કરાવનાર હોય. જે પ્રજાઓને પીડિત કરે, તે રાજા નથી, જે અન્યોને વિદ્વાન્ ન બનાવે, તે વિદ્વાન્ નથી. તે પ્રજા નથી, જે નીતિમાન રાજાની સેવા ન કરે. (૧૫)

अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यासद्विश्वं न्युत्रिणम्। अग्निर्नो वनते रयिम्॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ अग्निः-અગ્નિ तिग्मेन-તીવ્ર शोचिषा-પ્રકાશથી अत्रिणम्-ભોગવવા-ભોજન યોગ્ય પદાર્થોને विश्वम्-સર્વને यासत्-પ્રાપ્ત થાય છે, અને જેમ-अग्निः-વિદ્યુત્ नः-અમારા માટે रयिम्-ધનનો नि, वनते નિરંતર વિભાગ કરનાર છે, તેમ આપ અમારા માટે બનો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ પોતાના તેજથી સૂકા અથવા લીલા ઘાસ આદિને બાળી નાખે છે, તેમ વિદ્વાનોએ અમારા સર્વ દોષો બાળીને અમને ગુણો પ્રાપ્ત કરાવવા જોઈએ.

જેમ વિદ્યુત્ સર્વ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેમ અમને સંપૂર્ણ વિદ્યાનું સેવન કરાવીને અવિદ્યાથી પૃથક્ કરવા જોઈએ. (૧૬)

यऽइमा विश्वा भुवनानि जुह्वदृषिर्होता न्यसीदत्पिता नः।
सऽआशिषा द्रविणमिच्छमानः प्रथमच्छदवराँ२ऽआविवेश॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે ऋषिः-જ્ઞાન સ્વરૂપ, होता-સર્વ પદાર્થોના આપનાર તથા ગ્રહણ કરનાર नः-અમારા पिता-રક્ષક પરમેશ્વર इमा-આ विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોકોમાં વ્યાપ્ત થઈને न्यसीदत्-નિરંતર સ્થિર-વિદ્યમાન છે અને જે સર્વ લોકોના जुह्वत्-ધારણકર્તા છે. सः-તે आशिषा-આશીર્વાદથી અમારા માટે द्रविणम्-ધનને इच्छमानः-પ્રદાન કરતાં અને प्रथमच्छद्-વિસ્તૃત પદાર્થોને આચ્છાદિત કરતાં अवरान्-પૂર્ણ આકાશ આદિમાં आविवेश-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત છે; એમ તમે જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ જે સમસ્ત સંસારના રચયિતા, ધારણકર્તા, પાલનકર્તા, પ્રલયકર્તા અને સર્વ જીવોને સર્વ પદાર્થોને પ્રદાનકર્તા પરમેશ્વર પોતાની વ્યાપ્તિથી આકાશ આદિમાં પ્રવિષ્ટ છે, તેની નિરંતર ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૭)

किँ स्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत् स्वित्कथासीत्।
यतो भूमिं जनयन्विश्वकर्मा वि द्यामौर्णोन्महिना विश्वचक्षाः॥ १८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આ જગતના अधिष्ठानम्-આધાર किं, स्वित्-કયા આશ્ચર્યરૂપ आसीत-છે ? તથા आरम्भणम्-આ કાર્ય જગતની રચનાનું આરંભ કારણ कतमत्-અનેક ઉપાદાનોમાં કયું કારણ છે ? कथा स्वित्-કેવી રીતે તર્ક સંગત आसीत्-છે ? કે यतः-જેથી विश्वकर्मा-સર્વ સત્કર્મોવાળા પરમેશ્વર, विश्वचक्षाः-સર્વ જગતના દૃષ્ટા જગદીશ્વર भूमिम्-પૃથિવી અને द्याम्-સૂર્યાદિ લોકોને जनयन्-ઉત્પન્ન

કરીને महिना-પોતાની મહિમાથી वि + और्णोत्-વિવિધ રીતે આચ્છાદિત કરે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ સંસાર કોનામાં વસે છે ? તેનું આરંભ-કારણ કયું છે ? શા માટે ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નોના ઉત્તર એ છે-

જે જગદીશ્વર કાર્યરૂપ જગત્ ઉત્પન્ન કરીને, પોતાની વ્યાપ્તિથી સર્વને આચ્છાદિત કરીને, સર્વજ્ઞ હોવાથી विश्वचक्षाः-સર્વને જુએ છે. તે [આ સંસારના] આશ્રયસ્થાન અને આરંભ કારણ-ઉત્પન્ન કરનાર છે.

તે સર્વ શક્તિમાન તથા રચના આદિ સામર્થ્યથી યુક્ત છે, [તેનાથી] જીવોને પાપ-પુણ્યોના ફળ આપવા માટે તથા ભોગ કરાવવા માટે સર્વ જગત્ રચેલ છે, એમ તમારે જાણવું જોઈએ. (૧૮)

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्।
सं बाहुभ्यां धमति संपतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देवऽएकः॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જ विश्वतष्चक्षुः-સર્વ જગતને જોનાર, उत-અને विश्वतोमुखः-સર્વત્રથી ઉપદેશ કરનાર, विश्वतोबाहुः-સર્વ રીતે અનંત બળ અને પરાક્રમયુક્ત, उत-અને विश्वतस्पात्-સર્વત્ર વ્યાપ્ત, एकः-અદ્વિતીય અન્યની સહાય રહિત, देवः-સ્વ પ્રકાશસ્વરૂપ पतत्रैः-ક્રિયાશીલ પરમાણુ આદિથી द्यावाभूमी-સૂર્ય અને પૃથિવી લોકને संजनयन्-કાર્યરૂપ પ્રકટ કરતાં बाहुभ्याम्-અનંત બળ અને પરાક્રમથી સર્વ જગતને संधमति-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત થઈ રહેલ છે, તે પરમેશ્વરને આપણા સર્વના રક્ષક અને ઉપાસ્ય દેવ માનો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે સૂક્ષ્મથી સૂક્ષ્મ, મહાનથી મહાન, નિરાકાર, અનંત સામર્થ્યયુક્ત અને સર્વવ્યાપક દેવ-અદ્વિતીય પરમાત્મા છે, તે જ અતિ સૂક્ષ્મ કારણ-પ્રકૃતિથી સ્થૂલ કાર્ય જગતની રચના અને પ્રલય કરવામાં સમર્થ છે.

જે તે [પરમાત્મા] ની ઉપાસના છોડીને અન્યની ઉપાસના કરે છે, તેથી બીજો કોણ સંસારમાં અભાગી હોઈ શકે ? (૧૯)

किँ स्विद्वनं कऽउ स वृक्षऽआस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद्यदध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन्॥ २०॥

પદાર્થ : પ્રશ્ન : હે मनीषिणः-મનોનિગ્રહ કરનાર યોગીજનો ! તમે मनसा-વિજ્ઞાન દ્વારા વિદ્વાનોથી किं, स्वित्-શું वनम्-સેવવા યોગ્ય કારણરૂપ વન છે, कः-કોણ उ-વિતર્કની સાથે सः-તે वृक्षः-નાશ પામનાર અનિત્ય કાર્યરૂપ સંસાર आस-છે, એમ पृच्छत-પૂછે કે यतः-જેનાથી द्यावापृथिवी-વિશાળ સૂર્ય અને ભૂમિ આદિ લોકોને कः-કોણે निष्टतक्षुः-ભિન્ન-ભિન્ન બતાવેલ છે.

ઉત્તર : यत्-જે भुवनानि-પ્રાણીઓના રહેવાના લોક-લોકાન્તર સ્થાનોને धारयन्-વાયુ, વિદ્યુત્ અને સૂર્યાદિથી ધારણ કરતાં अध्यतिष्ठत्-તેના અધિષ્ઠાતા છે, तत् इत्-તે જ उ-પ્રસિદ્ધ બ્રહ્મને એ સર્વના કર્તા જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ત્રણ પાદોથી પ્રશ્ન અને અન્તિમ એક પાદમાં ઉત્તર આપવામાં આવેલ છે. મંત્રમાં વૃક્ષ શબ્દથી કાર્ય અને વન શબ્દથી કારણનો ઉપદેશ કરવામાં આવેલ છે.

જેમ સર્વ પદાર્થોને પૃથિવી, પૃથિવીને સૂર્ય, સૂર્યને વિદ્યુત્ અને વિદ્યુત્‌ને વાયુ ધારણ કરે છે, તેમ જ તે સર્વને જગદીશ્વર ધારણ કરે છે. (૨૦)

या ते धामानि परमाणि याऽवमा या मध्यमा विश्वकर्मन्नुतेमा।
शिक्षा सखिभ्यो हविषि स्वधावः स्वयं यजस्व तन्वं वृधानः॥ २१॥

પદાર્થ : હે स्वधावः-વિપુલ અન્નથી યુક્ત, विश्वकर्मन्-સમગ્ર ઉત્તમ કર્મ કરનાર જગદીશ્વર ! ते-આપની સૃષ્ટિમાં या-જે परमाणि-ઉત્તમ, या-જે अवमा-નિકૃષ્ટ, या-જે मध्यमा-મધ્યમ કક્ષાના धामानि-સર્વ પદાર્થોના આધારભૂત જન્મ, સ્થાન તથા નામ છે, इमा-એ સર્વને हविषि-આદાન-પ્રદાન વ્યવહારમાં स्वयं-આપ यजस्व-સંયુક્ત કરો.

उत-અને અમારા तन्वम्-શરીરની वृधानः-ઉન્નતિ-વૃદ્ધિ કરતાં सखिभ्यः-આપના આજ્ઞાપાલક અમે મિત્રો માટે शिक्ष-શુભ ગુણોનો ઉપદેશ કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ આ સંસારમાં ઈશ્વરે નિમ્ન, મધ્યમ અને ઉત્તમ પદાર્થો તથા સ્થાનો બનાવ્યા છે, તેમજ સભાપતિ, રાજા આદિએ પણ ત્રણ પ્રકારના સ્થાન બનાવીને, [ત્રણ પ્રકારના] પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને; બ્રહ્મચર્યથી શરીર બળની વૃદ્ધિ કરીને તથા મિત્રોને સુશિક્ષિત કરીને ઐશ્વર્ય સંપન્ન બનવું જોઈએ. (૨૧)

विश्वकर्मन् हविषा वावृधानः स्वयं यजस्व पृथिवीमुत द्याम्।
मुह्यन्त्वन्येऽअभितः सपत्नाऽइहास्माकं मघवा सूरिरस्तु॥ २२॥

પદાર્થ : હે विश्वकर्मन्-સંપૂર્ણ ઉત્તમ કર્મ કરનાર સેનાપતિ ! हविषा-ઉત્તમ ગુણોના ગ્રહણથી वावृधानः-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરતાં જેમ કે ઈશ્વર पृथिवीम्-ભૂમિ उत-અને द्याम्-સૂર્યાદિ લોકને સંયુક્ત કરે છે, તેમ આપ स्वयम्-સ્વયં સર્વથી यजस्व-સંગ કરો.

इह-આ જગતમાં मघवा-પ્રશંસિત ધનવાન્ પુરુષ सूरिः-વિદ્વાન્ अस्तु-બને, જેથી अस्माकम्-અમારા अन्ये-તથા सपत्नाः-શત્રુજન अभितः-બધી રીતે मुह्यन्तु-મોહ પામે. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય, ઈશ્વરે જે પ્રયોજન માટે જે વસ્તુ રચેલ છે, તેને તેવી જ જાણીને ઉપકાર ગ્રહણ કરે છે; તેના દરિદ્રતા, આલસ્ય આદિ દોષોનો નાશ થાય છે, તેથી તેના શત્રુઓ સમાપ્ત થઈ જાય છે અને તે સ્વયં વિદ્વાન્ બની જાય છે. (૨૨)

वाचस्पतिं विश्वकर्माणमूतये मनोजुवं वाजेऽअद्या हुवेम।
स नो विश्वानि हवनानि जोषद्विश्वशम्भूरवसे साधुकर्मा॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે ऊतये-રક્ષાદિ માટે જે वाचस्पतिम्-વેદ વાણીના રક્ષક मनोजुवम्-મન

સમાન વેગવાન विश्वकर्माणम्-સર્વ કર્મોમાં કુશળ મહાત્મા પુરુષને वाजे-સંગ્રામ આદિ કર્મમાં हुवेम-બોલાવીએ-સ્વીકાર કરીએ.

सः-તે विश्वशम्भूः-સર્વને માટે સુખ ઉત્પન્ન કરનાર, साधुकर्मा-ધર્મયુક્ત કર્મોનું સેવન કરનાર વિદ્વાન્ नः-અમારી अवसे-રક્ષાદિ માટે अद्य-આ જ विश्वानि-સર્વ हवनानि-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય કર્મોનું जोषत्-સેવન કરે. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ; જેણે બ્રહ્મચર્ય સેવન કરીને સમસ્ત વિદ્યાઓનું અધ્યયન કરેલ છે, જે ધાર્મિક તથા આલસ્ય રહિત બનીને, પક્ષપાત ત્યાગીને ઉત્તમ કર્મો કરે છે; જે શરીર અને આત્માના બળથી પૂર્ણ છે, તેને પ્રજાની રક્ષા કાર્યમાં, સર્વના અધિપતિ રાજા બનાવવા જોઈએ. (૨૩)

विश्वकर्मन् हविषा वर्द्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम्।
तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरयमुग्रो विहव्यो यथासत्॥ २४॥

પદાર્થ : હે विश्वकर्मन्-સર્વ શુભ કર્મોનું સેવન કરનાર, સર્વ સભાપતિ રાજા ! આપ हविषा-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય वर्द्धनेन-વૃદ્ધિથી જે अवध्यम्-મારવાને અયોગ્ય, त्रातारम्-રક્ષક, इन्द्रम्-રાજકાર્યમાં સંમતિ આપનાર પરમ ઐશ્વર્યવાન પુરુષને મંત્રી अकृणोः-બનાવે છે, तस्मै-તેને पूर्वीः-પૂર્વ ન્યાયાધીશોથી પ્રાપ્ત કરેલ विशः-પ્રજાઓનો समनमन्त-સારી રીતે સત્કાર કરો.

यथा-જેમ अयम्-એ મંત્રી उग्रः-મારવામાં પ્રચંડ विहव्यः-વિવિધ પ્રકારના સાધનોથી સ્વીકાર કરવા યોગ્ય असत्-બને, તેમ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : સર્વ સભાઓના અધિષ્ઠાતા-સહિત સભાસદો તેને રાજ્યાધિકાર આપે, જે પક્ષપાતી ન હોય. જે પિતા સમાન પ્રજાનું પાલન ન કરે, તેને પ્રજા પોતાનો રાજા માને નહિ.

જે પુત્ર સમાન ન્યાયપૂર્વક પ્રજાનું પાલન કરે, પ્રજા તેને અનુકૂળ સદા રહે. (૨૪)

चक्षुषः पिता मनसा हि धीरो घृतमेनेऽअजनन्नम्नमाने।
यदेदन्ताऽअददृहन्त पूर्वऽआदिद् द्यावापृथिवी अप्रथेताम्॥ २५॥

પદાર્થ : હે પ્રજાજનો ! આપ જે चक्षुषः-ન્યાયના દર્શક ઉપદેશકના पिता-રક્ષક मनसा-યોગાભ્યાસથી શાન્ત અન્તઃકરણના કારણે हि-જ धीरः-ધૈર્યવાન છે, તો घृतम्-ઘૃતાદિ પદાર્થોને अजनत्-ઉત્પન્ન કરે, તેને અધિકાર આપીને एने-એ રાજદલ અને પ્રજાદલ नम्नमाने-નમીને पूर्वे-પ્રથમથી વિદ્યમાન, द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને પૃથિવી સમાન મળીને જેમ अप्रथेताम्-પ્રખ્યાત બને. જ્યારે इत्-પણ यदा-જ્યારે अन्ताः-અન્તિમ અવયવોની સમાન अददृहन्त-પ્રજાજન વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે, ત્યારે आत्-તેના પશ્ચાત્ इत्-જ સ્થિર રાજ્ય યુક્ત બને છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય રાજા અને પ્રજાના વ્યવહારમાં એક સંમતિવાળા બનીને સદા પ્રયત્ન કરે, ત્યારે સૂર્ય અને પૃથિવીની સમાન સ્થિર સુખ પ્રાપ્ત કરી શકે. (૨૫)

विश्वकर्म्मा विमनाऽआद्विहाया धाता विधाता परमोत सन्दृक्।
तेषामिष्टानि समिषा मदन्ति यत्रा सप्तऋषीन् परऽएकमाहुः॥ २६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! विश्वकर्मा-સર્વ જગતના બનાવનાર, જે विमनाः-વિવિધ વિજ્ઞાન યુક્ત, विहायाः-વિવિધ પદાર્થોમાં વ્યાપક, धाता-સર્વના ધારણ વા પોષણ કરનાર, विधाता-નિર્માતા, सन्दृक्-સમ્યક્ દ્રષ્ટા અને परः-સર્વોત્તમ છે, તથા જેને एकम्-અદ્વિતીય आहुः-કહે છે, आत्-અને यत्र-જેમાં सप्तऋषीन्-પાંચ પ્રાણ, સૂત્રાત્મા અને ધનંજય એ સાતને પ્રાપ્ત કરીને इषा-સ્વેચ્છાપૂર્વક જીવ संमदन्ति-સારી રીતે આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે, उत-અને જે तेषाम्-તે જીવોના परमा-શ્રેષ્ઠ इष्टानि-સુખ-સાધક કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તે પરમેશ્વરની તમે ઉપાસના કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાના ઈષ્ટ કર્મોની સિદ્ધિ માટે વિશ્વકર્મા-સમસ્ત સંસારના રચયિતા, ધાતા-ધારણકર્તા, પાલક, સંહારક અને અદ્વિતીય પરમેશ્વરની જ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૬)

यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यो देवानां नामधाऽएकऽएव तꣳ सम्प्रश्नं भुवना यन्त्यन्या॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે नः-અમારા पिता-પાલક, जनिता-સર્વ પદાર્થોના ઉત્પન્ન કર્તા, यः-જે विधाता-કર્માનુસાર ફળ આપનાર જગતના નિર્માતા છે, તે विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોકો અને धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામને वेद-જાણે છે, यः-જે देवानाम्-વિદ્વાનો વા પૃથિવી આદિ પદાર્થોના नामधाः-પોતાની વિદ્યાથી નામોને ધારણ કરનાર एकः-એક-અદ્વિતીય ઈશ્વર एव-જ છે.

જેને अन्या-અન્ય भुवना-લોકોના પદાર્થો यन्ति-પ્રાપ્ત છે, सम्प्रश्नम्-ઉત્તમ રીતિથી પૂછવા-જાણવા યોગ્ય तम्-તેને તમે જાણો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે સર્વ જગતના પિતા સમાન પાલક, સર્વજ્ઞ અને અદ્વિતીય પરમેશ્વર છે; તેના અને તેની સૃષ્ટિના વિજ્ઞાનથી જ સર્વ મનુષ્યો પરસ્પર પ્રશ્ન-ઉત્તર કરે. (૨૭)

तऽआयजन्त द्रविणꣳ समस्माऽऋषयः पूर्वे जरितारो न भूना।
असूर्त्ते सूर्त्ते रजसि निषत्ते ये भूतानि समकृण्वन्निमानि॥ २८॥

પદાર્થ : ये-જે पूर्वे-પૂર્ણ વિદ્યાથી સર્વના પોષક, जरितारः-સ્તુતિ કરવાવાળાની न-સમાન ऋषयः-વેદાર્થના જ્ઞાતા भूना-અધિકતાથી असूर्त्ते-અપ્રાપ્ત-પરોક્ષ, सूर्त्ते-પ્રાપ્ત-પ્રત્યક્ષ, निषत्ते-સ્થિત વા સ્થાપિત કરેલ रजसि-લોકમાં इमानि-એ भूतानि-પ્રાણીઓને સાક્ષાત્ समकृण्वन्-ઉત્તમ રીતે શિક્ષિત કરે, ते-તેઓ अस्मै-એ ઈશ્વરની આજ્ઞા પાલન માટે द्रविणम्-ધનને सम् + आ + यजन्त-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો આ સંસારમાં ઈશ્વરની આજ્ઞાના પાલન માટે સૃષ્ટિના અનુક્રમથી તત્ત્વને

જાણે છે, તેમ અન્ય લોકો પણ આચરણ કરે. જેમ ધાર્મિક લોકો ધર્માચરણથી ધન ઉપાર્જન કરે છે, તેમ સર્વ લોકો ધન ઉપાર્જન કરે. (૨૮)

प॒रो दि॒वा प॒रऽए॒ना पृ॑थि॒व्या प॒रो दे॒वेभि॒रसु॑रै॒र्यदस्ति॑।
कᳪ स्वि॒द्गर्भं॑ प्रथ॒मं द॑ध्र॒आपो॒ यत्र॑ दे॒वाः स॒मप॑श्यन्त॒ पूर्वे॑॥ २९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે एना-એ दिवा-સૂર્ય આદિ લોકોથી परः-અત્યુત્તમ पृथिव्या-પૃથિવી આદિ લોકોથી परः-પરે-ઉત્તમ, देवेभिः-વિદ્વાન્ વા દિવ્ય પ્રકાશિત પ્રજાઓથી असुरैः-અવિદ્વાન વા અન્તક-મૃત્યુરૂપ પ્રજાથી परः-ઉત્તમ अस्ति-છે; यत्र-જેમાં आपः-પ્રાણ कंस्वित्-કોઈ प्रथमम्-વિસ્તૃત गर्भम्-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થને दध्रे-ધારણ કરે છે; यत्-જેને पूर्वे-પૂર્ણ વિદ્યાનું અધ્યયન કરનાર देवाः-વિદ્વાનો समपश्यन्त-સારી રીતે જ્ઞાનચક્ષુથી જુએ છે, તે બ્રહ્મ છે તેમ તમે જાણો. (૨૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વથી સૂક્ષ્મ, મહાન, સર્વના ધારણકર્તા વિદ્વાનોના ચિંતનના વિષય, અનાદિ ચેતન અને પર-અતિ શ્રેષ્ઠ છે, તે પરમાત્માની જ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૯)

तमिद् गर्भं॑ प्रथ॒मं द॑ध्र॒ऽआपो॒ यत्र॑ दे॒वाः स॒मग॑च्छन्त॒ विश्वे॑।
अ॒जस्य॒ नाभा॒वध्येक॒मर्पि॑तं॒ यस्मि॒न्विश्वा॑नि॒ भुव॑नानि त॒स्थुः॥ ३०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्र-જે બ્રહ્મમાં आपः-કારણરૂપ પ્રાણ વા જીવ प्रथमम्-વિસ્તૃત અને અનાદિ गर्भम्-સર્વ લોકોની ઉત્પત્તિસ્થાન પ્રકૃતિરૂપ ગર્ભને दध्रे-ધારણ કરે છે; यस्मिन्-જેમાં विश्वे-સર્વ देवाः-દિવ્ય આત્મા અને અન્તઃકરણયુક્ત યોગીજન समगच्छन्त-પ્રાપ્ત થાય છે,

જે अजस्य-અનુત્પન્ન, અનાદિ જીવ અને અવ્યક્ત પ્રકૃતિના नाभौ-મધ્યમાં अधि-અધિષ્ઠાતા રૂપથી સર્વથી ઉપર વિરાજમાન, एकम्-સ્વયં સિદ્ધ, अर्पितम्-સ્થિત છે; यस्मिन्-જેમાં विश्वानि-સમસ્ત भुवनानि-આધારભૂત સર્વ લોક तस्थुः-સ્થિત છે तम्-તેને इत्-જ તમે પરમાત્મા જાણો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે સંસારના આધાર, યોગીઓ દ્વારા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય અન્તર્યામી, સ્વયં પોતાના આધાર અને સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્મા છે, તે જ સર્વ મનુષ્યો દ્વારા સેવન-ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૦)

न तं वि॑दाथ॒ य ऽ इ॒मा ज॒जाना॒न्यद्यु॒ष्माक॒मन्त॑रं बभूव।
नी॒हा॒रेण॒ प्रावृ॑ता॒ जल्प्या॑ चासु॒तृप॑ऽउक्थ॒शास॑श्चरन्ति॥ ३१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ બ્રહ્મને ન જાણનારા લોકો नीहारेण-ધૂમાડા આકારના ઝાકળ સમાન અજ્ઞાનરૂપ અંધકારથી प्रावृताः-ઢંકાયેલા, जल्प्या-અલ્પ સત્ય અને અસત્યના વાદ વિવાદમાં વિદ્યમાન, असुतृपः-પ્રાણ પોષક च-અને उक्थशासः-યોગાભ્યાસને છોડીને ઉક્ત વચનોની પ્રશંસા કરનાર અર્થાત્ શબ્દ અર્થના ખંડનમાં રત રહીને चरन्ति-વિચરે છે-વ્યવહાર કરે છે, તેમ તમે तम्-તે બ્રહ્મને न-विदाथ-જાણતા નથી. यः-જે इमा-એ પ્રજાઓને जजान-ઉત્પન્ન કરે છે.

यत्-જે બ્રહ્મ युष्माकम्-તમે અધર્મી-અજ્ઞાનીઓના સાનિધ્યથી अन्यत्-અર્થાત્ કાર્ય-કારણ રૂપ જગત્ અને જીવોથી ભિન્ન છે, अन्तरम्-મધ્યમાં સ્થિત હોવા છતાં દૂરસ્થ बभूव-છે, તે અતિ સૂક્ષ્મ આત્માના પણ આત્મા બ્રહ્મને न + विदाथ-જાણતા નથી. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતોના આચરણ, વિદ્યા, યોગાભ્યાસ, ધર્માનુષ્ઠાન, સત્સંગ અને પુરુષાર્થથી રહિત છે, તેઓ અજ્ઞાનરૂપી અંધકારથી ઢંકાયેલા હોવાના કારણે બ્રહ્મને જાણી શકતા નથી.

જે જીવ બ્રહ્મ આદિથી ભિન્ન, અન્તર્યામી, સર્વના નિયંતા અને સર્વત્ર વ્યાપક છે, તેને જાણવામાં પવિત્ર આત્મા લોકો જ સમર્થ બને છે, અન્ય નહિ. (૩૧)

विश्वकर्मा ह्यजनिष्ट देवऽआदिद् गन्धर्वोऽअभवद् द्वितीयः।
तृतीयः पिता जनितौषधीनामपां गर्भं व्यदधात्पुरुत्रा॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ જગતમાં विश्वकर्मा-સર્વ શુભ કર્મોયુક્ત છે, તે देवः-દિવ્યસ્વરૂપ વાયુ પ્રથમ इत्-જ अभवत्-છે.

आत्-ત્યારબાદ गन्धर्वः-જે પૃથિવીને ધારણ કરે છે, તે સૂર્ય વા સૂત્રાત્મા વાયુ अजनिष्ट-ઉત્પન્ન થયા.

ओषधीनाम्-યવ આદિ ઔષધિઓ अपाम्-જલ વા પ્રાણોના पिता-પાલક हि-જ द्वितीयः-બીજા અર્થાત્ ધનંજય છે, જે પ્રાણોના गर्भम्-ધારણશક્તિને व्यदधात्-ધારણ કરી રહેલ છે.

તે पुरुत्रा-અનેકોના રક્ષક, जनिता-જલોને ધારણ કરનાર વાદળાં, तृतीयः-ત્રીજા પ્રાણ આદિ સ્વરૂપ છે; તેમ તમે જાણો. (૩૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ, આ સંસારમાં સમસ્ત કર્મોનું સેવન કરનાર જીવ પ્રથમ.

પૃથિવી આદિને ધારણ કરનાર વિદ્યુત્, અગ્નિ, સૂર્ય તથા વાયુ દ્વિતીય-

તથા પર્જન્ય-વાદળાં આદિ તૃતીય [પદાર્થ] છે. તેમાં જીવ અજન્મા છે, અન્ય સર્વ ઉત્પન્ન થયેલા [પદાર્થો] છે. તે પણ કારણરૂપ નિત્ય છે, એમ સમજવું જોઈએ. (૩૨)

आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् ।
संक्रन्दनोऽनिमिषऽएकवीरः शतꣳ सेनाऽअजयत्साकमिन्द्रः॥ ३३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! તમે જે चर्षणीनाम्-સર્વ મનુષ્યો વા તેથી સંબંધિત સેનાઓને आशुः-શીઘ્રકારી અને शिशानः-પદાર્થોને સૂક્ષ્મ બનાવનાર, वृषभः-સાંઢની न-સમાન भीमः-ભયંકર, घनाघनः-અત્યંત શત્રુઓના ઘાતક, क्षोभणः-તેને કંપાવનાર, संक्रन्दनः-શત્રુઓને સમ્યક્ રડાવનાર अनिमिषः-રાત-દિવસ પ્રયત્ન કરનાર, एकवीरः-એકલો વીર इन्द्रः-શત્રુઓના વિદારક સેનાપતિ અમારી साकम्-સાથે शतम्-અસંખ્ય सेनाः-શત્રુઓને બાંધનારી સેનાઓને अजयत्-જીતે છે, તેને સેનાપતિ બનાવો. (૩૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે ધનુર્વેદના જ્ઞાતા, ઋગ્વેદાદિના વેત્તા, નિર્ભય, સમસ્ત વિદ્યાઓના જાણકાર,

બળવાન, ધાર્મિક, સ્વરાજ્યના અનુરાગી, જિતેન્દ્રિય, શત્રુઓના વિજેતા, પોતાની સેના શિક્ષિત અને યુદ્ધ કરાવવામાં નિપુણ વીર હોય, તેને જ સેનાપતિના અધિકાર પર સ્થાપિત કરવો જોઈએ. (૩૩)

संक्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना।
तदिन्द्रेण जयत तत्सहध्वं युधो नर इषुहस्तेन वृष्णा॥ ३४॥

પદાર્થ : હે युधः-યુદ્ધ કરનાર नरः-મનુષ્યો ! તમે अनिमिषेण-નિરંતર પ્રયત્ન કરનાર दुश्च्यवनेन-શત્રુઓને કષ્ટદાયક, धृष्णुना-દઢ ઉત્સાહી, युत्कारेण-વિવિધ પ્રકારની રચનાઓથી યોદ્ધાઓને મિશ્રિત અથવા અમિશ્રિત કરનાર, वृष्णा-બળવાન, इषुहस्तेन-બન્ને હાથોમાં શસ્ત્રોને ધારણ કરનાર, संक्रन्दनेन-દુષ્ટોને અત્યંત રડાવનાર, जिष्णुना-જયશીલ-શત્રુ વિજેતા, तत्-તે પૂર્વોક્ત इन्द्रेण-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર સેનાપતિની સાથે વિદ્યમાન રહીને શત્રુઓને जयत-જીતો અને तत्-તે શત્રુ સેનાના વેગ વા યુદ્ધથી ઉત્પન્ન દુઃખને सहध्वम्-સહન કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો તમે યુદ્ધ વિદ્યામાં નિપુણ, સમસ્ત શુભ લક્ષણોથી યુક્ત, બળ અને પરાક્રમથી સંપન્ન મનુષ્યને સેનાપતિ બનાવીને તથા તેની સાથે અધાર્મિક શત્રુઓને જીતીને નિષ્કંટક ચક્રવર્તી રાજ્ય ભોગવો. (૩૪)

सऽइषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी सꣳस्रष्टा स युधऽइन्द्रो गणेन।
सꣳसृष्टजित् सोमपा बाहुशर्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता॥ ३५॥

પદાર્થ : सः-તે સેનાપતિ इषुहस्तैः-શસ્ત્ર હાથમાં રાખનાર, સુશિક્ષિત, બળવાન, निषङ्गिभिः-જેના નિષંગ અર્થાત્ ભુશુંડી = બંદૂક, શતઘ્ની = તોપ આદિ અનેક આગ્નેય અસ્ત્રોવાળા ભૃત્યો-સેવકોની સાથે વિદ્યમાન, सः-તે संस्रष्टा-શ્રેષ્ઠ મનુષ્યો વા શસ્ત્ર-અસ્ત્રોનો સંસર્ગ કરનારા, वशी-પોતાની ઇન્દ્રિયો અને અન્તઃકરણને વશમાં રાખનારા, संसृष्टजित्-પ્રાપ્ત શત્રુઓને જીતનાર सोमपाः-સોમ-બલિષ્ટ ઔષધિઓના રસનું પાન કરનાર, बाहुशर्द्धी-ભુજાઓમાં બળવાન, उग्रधन्वा-તીક્ષ્ણ ધનુષ્યવાન, सः-તે युधः-યુદ્ધ કરનાર, अस्ता-શસ્ત્ર-અસ્ત્રોને ચલાવનાર, इन्द्रः-શત્રુઓને મારનાર સેનાપતિ गणेन-સુશિક્ષિત નોકરો વા સેનાના વીરોને તથા प्रतिहिताभिः-પ્રત્યક્ષ ધારણ કરેલી સેનાઓની સાથે વિદ્યમાન રહી શત્રુઓને જીતે. (૩૫)

ભાવાર્થ : સર્વના અધિપતિ રાજા અને સર્વ સેનાઓના અધ્યક્ષ સુશિક્ષિત વીર સૈનિકોની સેનાથી યુક્ત થઈને દુર્જય શત્રુઓને પણ જેવી રીતે જીતી શકે, તેવો સર્વે એ [પ્રયાસ] કરવો જોઈએ. (૩૫)

बृहस्पते परि दीया रथेन रक्षोहामित्राँ२ऽअपबाधमानः।
प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेद्ध्यविता रथानाम्॥ ३६॥

પદાર્થ : હે बृहस्पते-ધાર્મિક વૃદ્ધો વા સેનાઓના રક્ષકો ! रक्षोहा-દુષ્ટોને મારનાર, अमित्रान्-શત્રુઓને

अपबाधमानः-દૂર કરનાર, प्रमृणः-ઉત્તમ રીતે મારનાર તથા सेनाः-તેની સેનાઓને प्रभञ्जन्-તોડનાર તું रथेन-રથસમૂહથી युधा-યુદ્ધમાં શત્રુઓને परि, दीया-સર્વત્રથી કાપીને તું जयन्-ઉત્કર્ષ-જય પ્રાપ્ત કરીને अस्माकम्-અમારા रथानाम्-રથોની अविता-રક્ષા કરનાર एधि-બન. (૩૬)

ભાવાર્થ : રાજાએ સેનાપતિ અને પોતાની સેનાની વૃદ્ધિ કરીને, શત્રુ સેનાનો નાશ કરતાં ધાર્મિક પ્રજાજનોની નિરંતર ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૩૬)

बलविज्ञायः स्थविरः प्रवीरः सहस्वान् वाजी सहमानऽउग्रः।
अभिवीरोऽअभिसत्वा सहोजा जैत्रमिन्द्र रथमातिष्ठ गोवित्॥ ३७॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-યુદ્ધની ઉત્તમ સામગ્રીથી યુક્ત સેનાપતિ ! बलविज्ञायः-બલયુક્ત સેનાનું નિર્માણ કરનાર, स्थविरः-વૃદ્ધ-રાજધર્મના વ્યવહારનો જ્ઞાતા, प्रवीरः-ઉત્તમવીર, सहस्वान्-અત્યંત બળવાન, वाजी-શ્રેષ્ઠ શાસ્ત્ર જ્ઞાનયુક્ત सहमानः-સુખ-દુખાદિને સહન કરનાર, उग्रः -દુષ્ટોને મારવામાં તીવ્ર તેજયુક્ત, अभिवीरः-અભીષ્ટ વીરોથી યુક્ત, अभिसत्वा-સર્વત્રથી યુદ્ધ વિદ્યામાં કુશળ, રક્ષક વા વીર, सहोजाः-બલથી પ્રસિદ્ધ, गोवित्-વાણી, ગાય વા પૃથિવીને પ્રાપ્ત કરનાર બનીને તું યુદ્ધ માટે जैत्रम्-વિજેતાઓથી ઘેરાયેલ रथम्-પૃથિવી, આકાશ અને સમુદ્રોના યાનોમાં आ, तिष्ठ-આવીને સ્થિત થા અથવા તેમાં બેસ. (૩૭)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ તથા સૈનિક વીર જ્યારે શત્રુઓ સાથે યુદ્ધ કરવા ઈચ્છે, ત્યારે પરસ્પર સર્વત્રથી રક્ષા કરીને તથા રક્ષાના સાધનોનો સંગ્રહ કરીને, બુદ્ધિપૂર્વક ઉત્સાહથી યુક્ત બનીને, પુરુષાર્થી બનીને શત્રુઓને જીતવા માટે તત્પર રહે. (૩૭)

गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा।
इमꣳ सजाताऽअनु वीरयध्वमिन्द्रꣳ सखायोऽअनु सꣳरभध्वम्॥ ३८॥

પદાર્થ : હે सजाताः-એક દેશ-સ્થાનમાં ઉત્પન્ન सखायः-પરસ્પરના સહાયક મિત્રો ! તમે ओजसा-પોતાના શરીર વા બુદ્ધિબળથી વા સેનાઓથી गोत्रभिदम्-શત્રુઓના ગોત્રો અર્થાત્ સમુદાયોને છિન્ન-ભિન્ન અને જડને કાપનાર, गोविदम्-ગૌ-શત્રુઓની ભૂમિને પ્રાપ્ત કરનાર, वज्रबाहुम्-પોતાના હાથમાં શસ્ત્રો રાખનાર, प्रमृणन्तम्-શ્રેષ્ઠતાથી શત્રુઓને મારનાર, अज्म-શત્રુઓને પટકનાર-દૂર કરનાર, સંગ્રામમાં जयन्तम्-જીતનાર અને इमम्-इन्द्रम्-એ શત્રુદલના વિદારક સેનાપતિને अनु + वीरयध्वम्-અનુકૂળ વીરતા બતાવો અને अनु + संरभध्वम्-અનુકૂળ બનીને સમ્યક્ યુદ્ધનો આરંભ કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : સેનાપતિજન અને કર્મચારીગણ-સૈનિકો પરસ્પર મિત્ર બનીને, એક-બીજાનું અનુમોદન કરીને, યુદ્ધનો આરંભ તથા વિજય કરીને, શત્રુઓના રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને તથા ન્યાયપૂર્વક પ્રજાઓનું પાલન કરીને નિરંતર સુખી રહે. (૩૮)

अभि गोत्राणि सहसा गाहमानोऽदयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः।
दुश्च्यवनः पृतनाषाडयुध्योऽस्माकꣳ सेना अवतु प्र युत्सु॥ ३९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે युत्सु-અનેક પદાર્થોને મિશ્રિત-અમિશ્રિત કરીને યુદ્ધોમાં सहसा-બળથી गोत्राणि-શત્રુઓના કુળોને प्र + गाहमानः-સારી રીતે વિલોકન કરનાર, अदयः-નિર્દય, शतमन्युः-સો પ્રકારના ક્રોધયુક્ત, दुश्च्यवनः-શત્રુઓ દ્વારા દુઃખોથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય, पृतनाषाट्-શત્રુની સેનાને સહનાર, अयुध्यः-જેનાથી શત્રુ યુદ્ધ ન કરી શકે તે वीरः-શત્રુઓને વિદીર્ણ કરનાર વીર अस्माकम्-અમારી सेनाः-સેનાઓની अभि + अवतु-સર્વત્રથી રક્ષા કરે; તે इन्द्रः-સેનાપતિ બને, એવી તમે આજ્ઞા આપો. (૩૯)

ભાવાર્થ : ધાર્મિકો પર કરુણા કરનાર, દુષ્ટો પર કઠોરતા કરનાર-નિર્દયી, સર્વના રક્ષક જે મનુષ્ય હોય, તે જ સેનાપતિ પદ પર અધિકૃત કરવા યોગ્ય છે. (૩૯)

इन्द्रऽआसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुरऽएतु सोमः।
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम्॥ ४०॥

પદાર્થ : યુદ્ધમાં अभिभञ्जतीनाम्-શત્રુસેનાને સર્વત્રથી મારનારી, जयन्तीनाम्-શત્રુઓને જીતવાના ઉત્સાહને પ્રાપ્ત કરતી, आसाम्-એ देवसेनानाम्-વિદ્વાનોની સેનાના नेता-નાયક इन्द्रः-ઉત્તમ ઐશ્વર્યયુક્ત સેનાપતિ શિક્ષક પશ્ચિમમાં, यज्ञः-સંગતિ કરનાર पुरः-પૂર્વમાં, बृहस्पतिः-સર્વ અધિકારીઓના અધિપતિ दक्षिणा-દક્ષિણ દિશામાં અને सोमः-સેનાનો પ્રેરણા અર્થાત્ ઉત્સાહવર્ધક ઉત્તરમાં एतु-જાય તથા मरुतः-વાયુની સમાન વેગવાન બલિષ્ઠ શૂરવીર अग्रम्-આગળ यन्तु-જાય. (૪૦)

ભાવાર્થ : જ્યારે રાજપુરુષો શત્રુઓ સાથે યુદ્ધ કરવા ઈચ્છે, ત્યારે સર્વ દિશાઓમાં અધ્યક્ષો અને શૂરવીરોને આગળ તથા ડરનારને અંદરની બાજુ રાખીને ભોજન, વસ્ત્ર-કવચ, વાહન, અસ્ત્ર તથા શસ્ત્રોના ભંડાર સહિત યુદ્ધ કરે.

ત્યાં વિદ્વાનોની સેનાઓને આધીન મૂર્ખોની સેનાઓને રાખવી જોઈએ. તે સેનાઓને વિદ્વાનજનો વ્યાખ્યાન દ્વારા ઉત્સાહિત કરે અને અધ્યક્ષગણ પદ્મવ્યૂહ આદિની રચના કરીને યુદ્ધ કરાવે. (૪૦)

इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञऽआदित्यानां मरुताꣳ शर्द्धऽउग्रम्।
महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात्॥ ४१॥

પદાર્થ : वृष्णः-વીર્યવાન્, इन्द्रस्य-સેનાપતિ, वरुणस्य-સર્વોત્તમ, राज्ञः-ન્યાય અને વિનય આદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન સર્વના અધિપતિ રાજાના भुवनच्यवानाम्-ઉત્તમ ગૃહોને પ્રાપ્ત કરનાર, महामनसाम्-મહાન વિચાર-વિજ્ઞાન યુક્ત, जयताम्-શત્રુઓને જીતવામાં સમર્થ, आदित्यानाम्-૪૮ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પાલન કરનાર, मरुताम्-પૂર્ણ વિદ્યા અને બળથી યુક્ત देवानाम्-વિદ્વાનોના, उग्रम्-શત્રુઓને અસહ્ય,

शर्द्धः-બળ સૈન્ય અને घोषः-શૂરતા તથા ઉત્સાહને ઉત્પન્ન કરનાર અનેક વાજીંત્રોનો શબ્દઘોષ યુદ્ધ આરંભ કરવા પહેલાં उदस्थात्-કરે. (૪૧)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિએ શિક્ષા સમયે તથા યુદ્ધ સમયે, મનોહર તથા નિર્ભયતા આદિ ભાવોની ઉત્પાદક ધ્વનિઓ ઉત્પન્ન કરનાર વાજીંત્રોથી વીરોને હર્ષિત કરવા જોઈએ.

જે દીર્ઘકાલીન બ્રહ્મચર્ય અને અધિક વિદ્યાથી શરીર તથા આત્માના બલથી યુક્ત છે, તેને યુદ્ધ કરનારી સેનાઓમાં અધિકારી બનાવવા જોઈએ. (૪૧)

उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत्सत्वनां मामकानां मनांꣳसि।
उद्वृत्रहन् वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घोषाः॥ ४२॥

પદાર્થ : સેનાનાજનો પોતાના સેનાપતિને કહે-वृत्रहन्-મેઘનાશક સૂર્ય સમાન શત્રુઓના નાશક, मघवन्-ઉત્તમ ધનયુક્ત સેનાપતિ ! આપ मामकानाम्-અમારી सत्वनाम्-સેનાના વીર પુરુષોના आयुधानि-જેથી સારી રીતે યુદ્ધ કરે છે તે શસ્ત્રોને उद्धर्षय-ઉત્કૃષ્ટ બનાવો.

અમારી સેનાના વીરોને मनांसि-મનોને उत्-ઉત્તમ હર્ષયુક્ત કરો તથા मामकानाम्-અમારા वाजिनाम्-ઘોડાઓની वाजिनानि-શીઘ્રગતિની उत-વૃદ્ધિ કરો; અને

આપની કૃપાથી मामकानाम्-અમારો जयताम्-વિજય કરાવનારા रथानाम्-રથોના घोषाः-શબ્દ उद्यन्तु-ઉઠે. (૪૨)

ભાવાર્થ : સેનાપતિઓ અને શિક્ષકોએ યોદ્ધાઓનાં મનને સદા હર્ષિત કરવા જોઈએ. તથા સેનાના અંગોની સારી રીતે ઉન્નતિ કરીને શત્રુઓને જીતવા જોઈએ. (૪૨)

अस्माकमिन्द्रः समृतेषु ध्वजेष्वस्माकं याऽइषवस्ता जयन्तु।
अस्माकं वीरा उत्तरेऽभवन्त्वस्माँ२ऽउ देवा अवता हवेषु॥ ४३॥

પદાર્થ : હે देवाः-વિજયના ઈચ્છુક વિદ્વાનો ! તમે अस्माकम्-અમારા समृतेषु-સમ્યક્ સત્ય અને ન્યાયના પ્રકાશક ચિહ્ન જેમાં હોય તે ध्वजेषु-પોતાના વીરજનોને નિશ્ચય માટે રથ આદિ વાહનોની ઉપર એક-બીજાથી જુદા પડે તે માટે ચડાવવામાં આવેલા ધ્વજ વગેરેની ચિહ્નોની નીચે અર્થાત્ તેની છાયામાં વિદ્યમાન જે इन्द्रः-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર સેનાપતિ છે, તથા अस्माकम्-અમારી याः-જે इषवः-સેના છે તે ઈન્દ્ર-સેનાપતિ અને ताः-સેના हवेषु-જેમા ઈર્ષાથી શત્રુઓને બોલાવે તે સંગ્રામોમાં जयन्तु-જીતે.

अस्माकम्-અમારા वीराः-વીરો उत्तरे-વિજય પછી પ્રસન્નતાપૂર્વક જીવિત भवन्तु-રહે.

अस्मान्-અમારી उ-સર્વ સ્થાનોમાં અને યુદ્ધ સમયમાં अवत-રક્ષા કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : સૈનિકો અને સેનાપતિ આદિએ પોતાના રથ આદિ પર અલગ-અલગ ચિહ્નો રાખવા જોઈએ એ રથ તેનો છે તેમ સર્વ જાણી શકે.

જેમ વીરો અને ઘોડાઓનો અધિક વિનાશ ન થાય, તેમ અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. કારણકે, પરસ્પરના

પરાક્રમના નાશથી સ્થાયી વિજય થતો નથી, એમ માનવું જોઈએ. (૪૩)

अमीषां चित्तं प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि।
अभि प्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम्॥ ४४॥

પદાર્થ : હે अप्वे-શત્રુઓના પ્રાણોને દૂર કરનારી શૂરવીર ક્ષત્રિયાણી ! अमीषाम्-તે સેનાઓના चित्तम्-ચિત્તને प्रतिलोभयन्ती-પ્રત્યક્ષ મોહિત કરનારી જે પોતાની સેના છે, તેના अङ्गानि-અંગોને તું गृहाण-ગ્રહણ કર, અધર્મથી परेहि-દૂર રહે, પોતાની સેનાને अभि, प्रेहि-પોતાનો અભિપ્રાય બતાવ, અને શત્રુઓને निर्दह-નિરંતર ભસ્મ કર.

જેથી એ अमित्राः-શત્રુઓ हृत्सु-પોતાના હૃદયમાં शोकैः-વિવિધ શોકના કારણે अन्धेन-પ્રકાશથી આચ્છાદિત બનીને तमसा-રાત્રિના અંધકારથી सचन्ताम्-સંયુક્ત રહે. (૪૪)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ દ્વારા જેમ અતિ પ્રશંસિત, હષ્ટ-પુષ્ટ અને અંગો તથા ઉપાંગો સહિત પોતાની પુરુષસેના બનાવવામાં આવે, તેમ સ્ત્રી સેના પણ [બનાવવી જોઈએ].

જેમાં વ્યભિચાર દોષથી રહિત સ્ત્રીઓ રહે તે સેના દ્વારા શત્રુઓને વશમાં રાખવા જોઈએ. (૪૪)

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसꣳशिते।
गच्छामित्रान् प्र पद्यस्व मामीषां कञ्चनोच्छिषः॥ ४५॥

પદાર્થ : शरव्ये-બાણ વિદ્યામાં કુશલ ब्रह्मशंसिते-વેદવેત્તા વિદ્વાન્ પાસેથી પ્રશંસા અને શિક્ષા પ્રાપ્ત સેનાધિપતિની સ્ત્રી ! તું अवसृष्टाः-પ્રેરણા પામીને परा, पत-દૂર જા, अमित्रान्-શત્રુઓને गच्छ-પ્રાપ્ત કર, અને તેને મારીને વિજય प्र पद्यस्व-પ્રાપ્ત કર.

अमीषाम्-તે દૂર દેશમાં સ્થિત શત્રુઓને માર્યા વિના कं, चन-કોઈને मा + उच्छिषः-છોડ નહિ. (૪૫)

ભાવાર્થ : સભાપતિ આદિ જનો જેમ યુદ્ધ વિદ્યાથી પુરુષોને શિક્ષિત કરે, તેમ સ્ત્રીઓને પણ શિક્ષિત કરે. જેમ વીર પુરુષો યુદ્ધ કરે, તેમ સ્ત્રીઓ પણ યુદ્ધ કરે.

જે શત્રુ યુદ્ધમાં માર્યા જાય તેમાંથી બચેલા શત્રુઓને નિરંતર કારાગૃહ-જેલમાં રાખે. (૪૫)

प्रेता जयता नरऽइन्द्रो वः शर्म यच्छतु।
उग्रा वः सन्तु बाहवोऽनाधृष्या यथासथ॥ ४६॥

પદાર્થ : હે नरः-અનેક પ્રકારના વ્યવહારોને પ્રાપ્ત કરનાર મનુષ્યો ! તમે यथा-જેમ શત્રુઓને इत-પ્રાપ્ત કરીને તેને जयत-જીતો, इन्द्रः-શત્રુઓના વિદારક સેનાપતિ वः-તમારા માટે शर्म-ઘર प्र + यच्छतु-આપે वः-તમારી बाहवः-ભુજાઓ उग्राः-દૃઢ सन्तु-બને, તમે अनाधृष्याः-શત્રુઓથી ડરો નહિ તેવા असथ-બનો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે શત્રુઓને જીતનાર વીર હોય, તેનો સેનાપતિ ધન, અન્ન, ઘર અને વસ્ત્રાદિથી નિરંતર

સત્કાર કરે.

જેમ સેનાના જન બળવાન હોય, તેવો વ્યવહાર આચરણ કરે. (૪૬)

असौ या सेना मरुतः परेषामभ्यैति नऽओजसा स्पर्द्धमाना।

तां गूहत तमसापव्रतेन यथामीऽअन्योऽअन्यन्न जानन्॥ ४७॥

પદાર્થ : હે मरुतः-પ્રત્યેક ઋતુઓમાં યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનો ! તમે या-જે असौ-બે परेषाम्-શત્રુઓની स्पर्द्धमाना-ઈર્ષા કરનારી सेना-સેના ओजसा-બલથી नः-અમારી अभि + आ + एति-સન્મુખ સર્વથી પ્રાપ્ત થાય છે ताम्-તે अपव्रतेन-છેદન રૂપ કઠોર કર્મથી અને तमसा-તોપ આદિ શસ્ત્રોથી ઉઠેલા ધૂમાડા અથવા મેઘ અને પર્વતાકાર અસ્ત્ર આદિથી થતા ધૂમાડાથી તેને गूहत-ઢાંકી દો.

अमी-એ શત્રુસેનાના લોકો यथा-જેમ अन्यः + अन्यम्-પરસ્પર न-जानन्-જાણી ન શકે એવું પરાક્રમ કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે યુદ્ધ માટે શત્રુ સેનાઓ આવી જતાં [રાજા] યુદ્ધ કરે, ત્યારે સેનાપતિ આદિએ સર્વત્રથી શસ્ત્ર-અસ્ત્રોના પ્રહારોથી ઉઠેલા ધૂમાડાથી અને ધૂળથી તે [શત્રુ સેનાઓ]ને એવી રીતે ઢાંકી દેવી જોઈએ, જેથી પરસ્પર એક-બીજાને જાણી-ઓળખી પણ શકે નહિ. (૪૭)

यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखाऽइव।

तन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु॥ ४८॥

પદાર્થ : यत्र-જે સંગ્રામમાં विशिखाः इव-ચોટલીવાળા અથવા ચોટલી રહિત कुमाराः-બાળકો સમાન बाणाः-બાણ આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોનો સમૂહ संपतन्ति-એક સાથે પડે છે तत्-ત્યાં बृहस्पतिः-મોટી સભા વા સેનાના પાલક इन्द्रः-સેનાપતિ शर्म-આશ્રય વા સુખ यच्छतु-આપે, અને अदितिः-નિત્ય સભાસદોથી શોભાયમાન સભા विश्वाहा-સર્વ દિવસ नः-અમને शर्म-સુખદાયક ઘર यच्छतु-આપે. (૪૮)

ભાવાર્થ : જેમ બાળક આમ-તેમ દોડે છે, તેમ યુદ્ધ સમયે યોદ્ધાઓ પણ ચેષ્ટા કરે.

જે યુદ્ધમાં ઘાયલ, નિર્બળ, થાકેલા, વ્યાકુળ, કપાયેલા અંગોવાળા અને મૂર્છિત હોય, તેને યુદ્ધ ભૂમિમાંથી તત્કાળ ઉપાડીને સુખાલયમાં લઈ જઈને, ઔષધ આદિથી સ્વસ્થ બનાવે અને જે મૃત્યુ પામે તેની વિધિવત્ અન્ત્યેષ્ટિ કરે.

રાજા તેના માતા, પિતા, સ્ત્રી અને બાળકો આદિની સદા રક્ષા કરે. (૪૮)

मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम्।

उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु॥ ४९॥

પદાર્થ : હે યોદ્ધા શૂરવીર ! હું ते-તારા मर्माणि-મર્મ સ્થાન અર્થાત્ જેના તાડનથી શીઘ્ર મૃત્યુ થાય છે તે અંગને वर्मणा-દેહની રક્ષા કરનાર કવચ-બખ્તર छादयामि-ઢાંકું છું.

એ सोमः-સૌમ્યાદિ ગુણોથી યુક્ત राजा-વિદ્યા, ન્યાય અને વિનય આદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન રાજા अमृतेन-સર્વરોગ નિવારક અમૃતરૂપ ઔષધિથી त्वा-તને अनु + वस्ताम्-પાછળથી ઢાંકે.

वरुणः-સર્વ શ્રેષ્ઠ ગુણયુક્ત રાજા ते-તારા उरोः-અનેક ગુણો અને ઐશ્વર્યથી પણ वरीयः-અત્યંત ઐશ્વર્યને कृणोतु-ઉત્પન્ન કરે.

जयन्तम्-દુષ્ટોને પરાજિત કરતા त्वा-તને देवाः-વિદ્વાનો अनु + मदन्तु-અનુમોદિત કરે અર્થાત્ ઉત્સાહિત કરે. (૪૯)

ભાવાર્થ : સેનાપતિ આદિ સર્વ યોદ્ધાઓનાં શરીર આદિની સર્વત્રથી રક્ષા કરે તથા તેને સદા પ્રોત્સાહિત અને અનુમોદિત કરે, જેથી નિશ્ચય કરીને સર્વથી વિજય પ્રાપ્ત કરે. (૪૯)

उदे॑नमुत्त॒रां न॒याग्ने॑ घृ॒तेना॑हुत।
रा॒यस्पोषे॑ण॒ सꣳ सृ॑ज प्र॒जया॑ च ब॒हुं कृ॑धि॥ ५०॥

પદાર્થ : હે घृतेन + आहुत-ઘી થી તૃપ્ત થયેલ अग्ने-પ્રકાશયુક્ત સેનાપતિ ! તું एनम्-એ વિજેતા વીરને उत्तराम्-જેનાથી સારી રીતે વિજય પ્રાપ્ત કરેલી સેનાને उत् + नय-ઉન્નત કર, रायः + पोषेण-રાજલક્ષ્મીની પુષ્ટિથી सम् + सृज-સારી રીતે યુક્ત કર, च-અને प्रजया-અનેક સંતાનોથી बहुम्-અધિક કર્મને પ્રાપ્ત कृधि-કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે સેનાના અધિકારી અથવા સૈનિક ધર્મપૂર્વક યુદ્ધથી દુષ્ટોને જીતે, તેનો સભાપતિ તથા સેનાપતિજનો ધન આદિથી અનેક પ્રકારથી સત્કાર કરે. (૫૦)

इन्द्रे॒मं प्र॑त॒रां न॑य सजा॒ताना॑मसद्व॒शी।
समे॑नं॒ वर्च॑सा सृज दे॒वानां॑ भाग॒दाऽअ॑सत्॥ ५१॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સુખોને ધારણ કરનાર સેનાપતિ ! તું सजातानाम्-સમાન આયુવાળા देवानाम्-વિદ્વાન્ યોદ્ધાઓની મધ્યમાં इमम्-વિજેતા વીરજનને प्रतराम्-શત્રુ સેનાને પાર કરનારી નીતિને नय-પ્રાપ્ત કર, જેથી એ वशी-જિતેન્દ્રિય असत्-બને.

एनम्-એને वर्चसा-વિદ્યાના પ્રકાશથી संसृज-સંયુક્ત કર, જેથી એ भागदाः-અલગ-અલગ યથાયોગ્ય ભાગોનો દાતા असत्-બને. (૫૧)

ભાવાર્થ : યુદ્ધમાં સૈનિક-ગણ શત્રુઓથી જે પદાર્થો પ્રાપ્ત કરે, તે સર્વ સભાપતિ રાજા સ્વયં ન લઈ લે. પરન્તુ તેમાંથી યથોચિત રૂપમાં સોળમો ભાગ યોદ્ધાઓના તેઓના સત્કાર રૂપમાં આપે. જેટલા પદાર્થો કર્મચારી-સૈનિકો પ્રાપ્ત કરે તેનો સોળમો ભાગ રાજાને આપે.

જો સભાપતિ આદિ સર્વ લોકો જિતેન્દ્રિય હોય તો તેનો કદી પણ પરાજય થાય નહિ.

જો સભાપતિ પોતાનું હિત કરવા ઈચ્છે, તો યોદ્ધાઓના ભાગનો સ્વયં સ્વીકાર ન કરે. (૫૧)

यस्य॑ कु॒र्मो गृ॒हे ह॒विस्तम॑ग्ने वर्द्धया॒ त्वम्।

तस्मै॑ दे॒वाऽअधि॑ ब्रुवन्न॒यं च॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॑ः॥ ५२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ પુરોહિત ! અમે यस्य-જે રાજાના गृहे-ઘરમાં हविः-હોમ कुर्मः-કરીએ, तम्-તેને त्वम्-તું वर्द्धय-ઉત્સાહિત કર.

देवाः-દિવ્ય ગુણોયુક્ત ઋત્વિજ લોકો तस्मै-તેને अधि, ब्रुवन्-અધિક ઉપદેશ કરે.

च-અને अयम्-એ ब्रह्मणः-વેદોનું पतिः-પાલન કરનાર યજમાન પણ તેને શિક્ષણ આપે. (૫૨)

ભાવાર્થ : પુરોહિતનું એ કાર્ય છે, જેથી યજમાનની ઉન્નતિ થાય.

જે જેનું જેવું અને જેટલું કામ કરે, તેને તેવું અને તેટલું માસિક વેતન આપવું જોઈએ.

સર્વ વિદ્વાનો અને રાજાઓ સર્વને સત્યનો ઉપદેશ કરે. (૫૨)

उदु॑ त्वा॒ विश्वे॑ दे॒वाऽअग्ने॒ भर॑न्तु॒ चित्ति॑भिः।
स नो॑ भव शि॒वस्त्वꣳ सु॒प्रती॑को वि॒भाव॑सुः॥ ५३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ સભાપતિ ! જેમ त्वा-તને विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો चित्तिभिः-ઉત્તમ જ્ઞાનથી उद्भरन्तु-ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક ધારણ અને ઉદ્ધાર કરે અર્થાત્ પોતાની શિક્ષાથી તારું અજ્ઞાન દૂર કરે, सः, उ-તે વિચારપૂર્વક त्वम्-તું नः-અમારા માટે शिवः-મંગલકારી, सुप्रतीकः-સુપ્રસિદ્ધિકારક જ્ઞાનથી યુક્ત, विभावसुः-વિવિધ દીપ્તિ વા વિદ્યા પ્રકાશોમાં રહેનાર भव-બન. (૫૩)

ભાવાર્થ : જે જેને વિદ્યા પ્રદાન કરે, તે તેનો સેવક બની રહે. (૫૩)

पञ्च॒ दिशो॒ दैवी॑र्य॒ज्ञम॑वन्तु दे॒वीरपाम॑तिं दु॒र्म॒तिं बाध॑मानाः।
रा॒यस्पोषे॑ य॒ज्ञप॑तिमा॒भज॑न्ती रा॒यस्पो॑षे॒ऽअधि॑ य॒ज्ञोऽअ॑स्थात्॥ ५४॥

પદાર્થ : अप + अमतिम्-અત્યંત અજ્ઞાન અને दुर्मतिम्-દુષ્ટ બુદ્ધિને बाधमाना-અલગ કરતી दैवीः-વિદ્વાનોની એ देवीः-દિવ્યગુણયુક્ત પંડિતા બ્રહ્મચારિણી સ્ત્રી-વિદુષી, पंच + दिशः-પૂર્વ આદિ ચાર અને એક મધ્યસ્થ પાંચ દિશાઓની સમાન પૃથક્-પૃથક્ કાર્યોમાં ઉન્નત रायः + पोषे-ધનની પુષ્ટિ કરવામાં यज्ञपतिम्-ઘરકામ વા રાજ્યપાલન કરનાર પોતાના સ્વામીને आभजन्तीः-સર્વ સેવા કરતી यज्ञम्-સંગ વા સત્કાર કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમની अवन्तु-કામના કરે.

જેથી એ यज्ञः-ગૃહાશ્રમ रायः-ધનની पोषे-પુષ્ટિમાં अधि + अस्थात्-અધિકતાથી સ્થિત રહે. (૫૪)

ભાવાર્થ : જે ગૃહાશ્રમમાં ધાર્મિક, વિદ્વાન્ અને પ્રશંસિત સ્ત્રીઓ હોય છે, ત્યાં દુર્વ્યસન ઉત્પન્ન થતાં નથી.

જો સર્વ દિશાઓમાં પ્રશંસનીય પ્રજાઓ હોય, તો રાજાની પાસે બીજાથી અધિક ઐશ્વર્ય હોય. (૫૪)

समि॑द्धेऽअ॒ग्नावधि॑ मामहा॒नऽउ॒क्थप॑त्र॒ऽईड्यो॑ गृभी॒तः।
त॒प्तं घ॒र्मं प॑रि॒गृह्या॑यजन्तो॒र्जा यद्य॒ज्ञमय॑जन्त दे॒वाः॥ ५५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ देवाः-વિદ્વાનો समिद्धे-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત अग्नौ-અગ્નિમાં यत्-જે यज्ञम्-અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ अयजन्त-કરે છે, તેમ જે अधि-मामहानः-અત્યંત મહાન અને પૂજનીય, उक्थपत्रः-ઉપદેશને યોગ્ય વેદ-સ્તોત્રોથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવનાર, ईड्यः-જે સ્તુતિ અને સત્કારને યોગ્ય, गृभीतः-વા જેને સજ્જનોએ ગ્રહણ કરેલ છે તે तप्तम्-તાપથી યુક્ત धर्मम्-અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞને ऊर्जा-બળથી परिगृह्य-ગ્રહણ કરીને अयजन्त-યજ્ઞ કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ સંસારના ઉપકાર માટે વિદ્વાનો અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ કરે છે, તેમ એનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૫૫)

दैव्याय धर्त्रे जोष्ट्रे देवश्रीः श्रीमनाः शतपयाः।
परिगृह्य देवा यज्ञमायन् देवा देवेभ्योऽअध्वर्यन्तोऽअस्थुः॥ ५६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अध्वर्यन्तः-પોતાની યજ્ઞની ઈચ્છા કરનાર देवाः-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ देवेभ्यः-વિદ્વાનોની પ્રસન્નતા માટે ગૃહાશ્રમ વા અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞમાં अस्थुः-સ્થિર બને-બેસે.

જેમ दैव्याय-દિવ્યગુણોમાં પ્રસિદ્ધ, धर्त्रे-ધારણશીલ, जोष्ट्रे-પ્રીતિ કરનાર હોતા માટે देवश्रीः-વિદ્વાનોમાં શ્રી-લક્ષ્મીવાન્, श्रीमनाः-શ્રી-લક્ષ્મીમાં મનવાળા, शतपयाः-સેંકડો દૂધ આદિ વસ્તુઓવાળા યજમાન છે, તેમ देवाः-વિદ્યાના દાતા તમે વિદ્યાને परिगृह्य-ગ્રહણ કરીને यज्ञम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમ વા અગ્નિહોત્ર આદિને आयन्-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ લક્ષ્મીની પ્રાપ્તિ માટે નિરંતર પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. જેમ વિદ્વાનો ધન પ્રાપ્તિ માટે પ્રયત્ન કરે, તેમ અન્યોએ પણ પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૫૬)

वीतꣳ हविः शमितꣳ शमिता यजध्यै तुरीयो यज्ञो यत्र हव्यमेति।
ततो वाकाऽआशिषो नो जुषन्ताम्॥ ५७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ शमिता-શાન્તિ આદિ ગુણોથી યુક્ત ગૃહાશ્રમી यजध्यै-યજ્ઞ કરવા માટે वीतम्-ગમનશીલ, शमितम्-દુર્ગુણોની શાન્તિ કરનાર, हविः-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને અગ્નિમાં હોમે છે, જે तुरीयः-ચોથા यज्ञः-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય યજ્ઞ છે તથા यत्र-જ્યાં हव्यम्-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થો एति-પ્રાપ્ત થાય છે-પહોંચે છે, ततः-તેથી वाकाः-વેદની વાણીઓ અને आशिषः-ઈચ્છા સિદ્ધિઓ नः-અમારી जुषन्ताम्-સેવા કરે-અમને પ્રાપ્ત થાય, એવી ઈચ્છા કરો. (૫૭)

ભાવાર્થ : અગ્નિહોત્ર આદિમાં ચાર પદાર્થ છે-(૧) પુષ્કળ માત્રામાં પુષ્ટિકારક, સુગંધિત, મધુર ગુણયુક્ત, રોગનાશક હવિ, (૨) તેની શુદ્ધિ, (૩) યજ્ઞકર્તા-યજમાન, અને (૪) વેદી તથા અગ્નિ આદિ.

યથોક્ત હોમ કરેલા પદાર્થો આકાશમાં જઈને, પછી ત્યાંથી પરત થઈને અભીષ્ટને સિદ્ધ કરનારા બને છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૫૭)

सूर्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात्सविता ज्योतिरुदयाँ२ऽअजस्रम्।
तस्य पूषा प्रसवे याति विद्वान्त्सम्पश्यन्विश्वा भुवनानि गोपाः॥ ५८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે पुरस्तात्-પ્રથમથી सविता-સૂર્યલોક ज्योतिः-પ્રકાશ પ્રદાન કરે છે, જેમાં हरिकेशः-હરિત વર્ણના सूर्यरश्मिः-સૂર્યના કિરણો વિદ્યમાન છે, જે प्रसवे-ઉત્પન્ન થયેલ જગતમાં अजस्त्रम्-નિરંતર पूषा-પુષ્ટિકર્તા છે, જેને विद्वान्-વિદ્યાયુક્ત પુરુષ संपश्यन्-સમ્યક્ જોતા તેની વિદ્યાને याति-પ્રાપ્ત કરે છે, तस्य-તેથી તેના સાનિધ્યથી गोपाः-સંસારની રક્ષા કરનાર પૃથિવી આદિ લોક અને તારાગણ પણ विश्वा-સમસ્ત भुवनानि-લોક-લોકાન્તરોને उत् + अयान्-પ્રકાશિત કરે છે, તે સૂર્યમંડલ અત્યંત પ્રકાશમય છે, એમ તમે જાણો. (૫૮)

ભાવાર્થ : જે આ સૂર્યલોકમાં છે, તેના પ્રકાશમાં શ્વેત અને હરિત આદિ રંગના અનેક કિરણો છે, જે સર્વ લોકોની રક્ષા કરે છે. તેથી સર્વની સર્વ રીતે રક્ષા થાય છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૫૮)

विमानऽएष दिवो मध्यऽआस्तऽआपप्रिवान्रोदसीऽअन्तरिक्षम्।
स विश्वाचीरभिचष्टे घृताचीरन्तरा पूर्वमपरं च केतुम्॥ ५९॥

પદાર્થ : વિદ્વાન્ પુરુષ-જે एषः-એ સૂર્ય મંડળ दिवः-પ્રકાશના मध्ये-મધ્યમાં विमानः-વિમાન અર્થાત્ આકાશ આદિ માર્ગોમાં ચાલનારની સમાન સ્થિત, रोदसी-પ્રકાશ અને ભૂમિને તથા अन्तरिक्षम्-અવકાશને आपप्रिवान्-પોતાના તેજથી વ્યાપ્ત आस्ते-કરી રહેલ છે, सः-તે विश्वाचीः-સંસારને પ્રાપ્ત કરનાર અર્થાત્ પોતાના ઉદયથી પ્રકાશિત કરનાર વા घृताचीः-જલને પ્રાપ્ત કરાવનારી તે પોતાની द्युति-જ્યોતિઓનો વિસ્તાર કરે છે, पूर्वम्-આગલા દિવસે अपरम्-પાછળ રાત્રિ च-અને अन्तरा-તેના મધ્યમાં केतुम्-સર્વ લોકોના પ્રકાશક તેજને अभिचष्टे-પ્રકાશિત કરે છે, તેને જાણો. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યલોક બ્રહ્માંડના મધ્યમાં રહીને પોતાના પ્રકાશથી સર્વને વ્યાપ્ત કરી લે છે, તે સર્વનો આકર્ષણકર્તા છે, એમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૫૯)

उक्षा समुद्रोऽअरुणः सुपर्णः पूर्वस्य योनिं पितुराविवेश।
मध्ये दिवो निहितः पृश्निरश्मा वि चक्रमे रजसस्पात्यन्तौ॥ ६०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરે दिवः-પ્રકાશમય દ્યુલોકના मध्ये-મધ્યમાં निहितः-સ્થાપિત કરેલ, उक्षा-વૃષ્ટિજલ સિંચનારા, समुद्रः-જેનાથી સારી રીતે જલ પડે, अरुणः-થોડા લાલ રંગ વાળા, सुपर्णः-ઉત્તમ પાલનના હેતુ, पृश्निः-તે વિચિત્ર રંગવાળા સૂર્ય રૂપ તેજ અને अश्मा-મેઘ रजसः-લોકોને अन्तौ-બંધનમાં वि, चक्रमते-અનેક રીતે ગતિ આપે છે તથા पाति-રક્ષા કરે છે, તથા पूर्वस्य-જે પૂર્ણ पितुः-સૂર્યમંડળના તેજ ને ઉત્પન્ન કરનાર વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિના योनिम्-કારણમાં आ, विवेश-પ્રવેશ કરે છે, તે સૂર્ય અને મેઘનો સમ્યક્ ઉપયોગ કરવા યોગ્ય છે. (૬૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરને અનેક ધન્યવાદ આપવા જોઈએ, કારણ કે જે ઈશ્વરે પોતાની જાણ માટે જગતના પાલનના નિમિત્ત સૂર્ય આદિ દૃષ્ટાન્તરૂપ બતાવેલ છે, તે સર્વશક્તિમાન કેમ ન હોઈ શકે ? (૬૦)

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः।
रथीतमꣳ रथीनां वाजानाꣳ सत्पतिं पतिम्॥ ६१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે समुद्रव्यचसम्-અન્તરિક્ષની વ્યાપ્તિની સમાન વ્યાપ્તિવાળા, रथीनाम्-પ્રશંસાયુક્ત સુખથી યુક્ત પદાર્થોમાં रथीतमम्-અત્યંત પ્રશંસિત સુખદાયક પદાર્થોથી યુક્ત, वाजानाम्-જ્ઞાની આદિ ગુણીજનોના पतिम्-સ્વામી सत्पतिम्-અવિનાશી અથવા અવિનાશી કારણ અને જીવોના પાલક इन्द्रम्-પરમાત્માને विश्वाः-સમસ્ત गिरः-વાણીની अविवृधन्-વૃદ્ધિ અર્થાત્ વિસ્તારથી સ્તુતિ કરે છે, તે પરમાત્માની નિરંતર ઉપાસના કરો. (૬૧)

ભાવાર્થ : જેની સર્વ વેદો પ્રશંસા કરે છે, જેની યોગીજન ઉપાસના કરે છે, જેને પ્રાપ્ત કરીને મુક્ત લોકો-મોક્ષાત્માઓ આનંદનો ઉપભોગ કરે છે, તે જ ઈશ્વર સર્વ લોકો માટે ઉપાસનીય ઈષ્ટ દેવ માનવા યોગ્ય છે. (૬૧)

देवहूर्यज्ञऽआ च वक्षत्सुम्नहूर्यज्ञऽआ च वक्षत्।
यक्षदग्निर्देवो देवाँ२ऽआ च वक्षत्॥ ६२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે देवहूः-વિદ્વાનોને આહ્‌વાન કરનાર यज्ञः-પૂજનીય ઈશ્વર અમને સત્યનો आ-वक्षत्-ઉપદેશ કરે, च-અને અસત્યથી અમને બચાવે.

જે सुम्नहूः-સુખોને પ્રાપ્ત કરાવનાર यज्ञः-પૂજનીય ઈશ્વર અમને સુખ आ, वक्षत्-પ્રાપ્ત કરાવે, च-અને દુઃખોનો વિનાશ કરે.

જે अग्निः-આપ પ્રકાશમાન देवः-સકલ સુખદાતા ઈશ્વર અમને देवान्-ઉત્તમ ગુણો વા ભોગોને यक्षत्-પ્રદાન કરે, च-અને आ-वक्षत्-પ્રાપ્ત કરાવે; તેનું આપ નિરંતર સેવન કરો. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેની આપ્ત વિદ્વાનો દ્વારા ઉપાસના કરવામાં આવે છે અને જે સુખ સ્વરૂપ તથા મંગલપ્રદાતા પરમેશ્વર છે, તેની મનુષ્યો સમાધિ યોગ દ્વારા ઉપાસના કરે. (૬૨)

वाजस्य मा प्रसवऽउद्ग्राभेणोदग्रभीत्।
अधा सपत्नानिन्द्रो मे निग्राभेणाधराँ२ऽअकः॥ ६३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ इन्द्रः-પાલક वाजस्य-વિજ્ઞાનના प्रसवः-ઉત્પાદક ઈશ્વર मा-અને उद्ग्राभेण-ગ્રહણ કરવાના ઉત્તમ સાધનથી उदग्रभीत्-ગ્રહણ કરે છે, તેમ જે अध-એની પશ્ચાત્ તેનું પાલન કરનાર અને વિજ્ઞાનદાતા પુરુષ मे-મારા सपत्नान्-શત્રુઓને निग्राभेण-પરાજયથી अधरान्-નીચે પાડ્યા अकः-કરે, તેને તમે સેનાપતિ બનાવો. (૬૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઈશ્વર છે, તેમ જો મનુષ્ય; પાલન માટે ધાર્મિક મનુષ્યોનું ગ્રહણ કરે છે અને તાડના માટે દુષ્ટોનો નિગ્રહ-વશમાં કરે છે, તે જ રાજ્ય કરી શકે છે. (૬૩)

उद्ग्राभं च निग्राभं च ब्रह्म देवाऽअवीवृधन्।

अधा सपत्नानिन्द्राग्नी मे विषूचीनान्व्यस्यताम्॥ ६४॥

પદાર્થ : देवाः-વિદ્વાનો उद्ग्राभम्-અત્યંત ઉત્સાહથી ધાર્મિકોનું ગ્રહણ च-અને निग्राभं च-દુષ્ટોનો નિગ્રહ કરીને ब्रह्म-ધનની अवीवृधन्-વૃદ્ધિ કરે.

अध-પશ્ચાત્ इन्द्राग्नी-વિદ્યુત્ અને અગ્નિ સમાન બે સેનાપતિ मे-મારા विषूचीनान्-વિરુદ્ધ આચરણ કરનાર सपत्नान्-શત્રુઓને व्यस्यताम्-સારી રીતે ઊંચકીને પછાડે-દૂર ફેંકી દે. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સજ્જનોનો સત્કાર અને દુષ્ટોનો વિનાશ કરીને તથા વેદ વિદ્યા અને ધનની વૃદ્ધિ કરીને રાજ્યને નિષ્કંટક બનાવે છે, તે જ પ્રશંસિત બને છે.

જે રાજા રાષ્ટ્રવાસી સજ્જનોનો સત્કાર કરીને તથા દુષ્ટોનો બહિષ્કાર કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેના જ સભાપતિ અને સેનાપતિ શત્રુઓનો નાશ કરી શકે છે. (૬૪)

क्रमध्वमग्निना नाकमुख्यꣳ हस्तेषु बिभ्रतः।

दिवस्पृष्ठꣳ स्वर्गत्वा मिश्रा देवेभिराध्वम्॥ ६५॥

પદાર્થ : હે વીરો ! अग्निना-વિદ્યુત્થી नाकम्-અત્યંત સુખકારક उख्यम्-પાત્રમાં પકાવેલ દાળ, ભાત, શાક અને કઢી આદિ ભોજનને हस्तेषु-હાથોમાં बिभ्रतः-ધારણ કરતાં क्रमध्वम्-પરાક્રમ કરો.

देवेभिः-વિદ્વાનોથી मिश्राः-મળીને दिवः-ન્યાય અને વિનય આદિ ગુણોના પ્રકાશથી ઉત્પન્ન દિવ્ય पृष्ठम्-જાણવા યોગ્ય स्वः-સુખને गत्वा-પ્રાપ્ત કરીને आध्वम्-સ્થિત બનો-બેસો. (૬૫)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ વિદ્વાનોની સાથે સમ્યક્ પ્રયોગ દ્વારા આગ્નેયાસ્ત્ર આદિથી શત્રુઓ પર આક્રમણ કરે અને સ્થિર સુખ પ્રાપ્ત કરીને ફરી-ફરી પ્રયત્નશીલ બને. (૬૫)

प्राचीमनु प्रदिशं प्रेहि विद्वानग्नेरग्ने पुरोऽअग्निर्भवेह।

विश्वाऽआशा दीद्यानो वि भाह्यूर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे॥ ६६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-શત્રુઓને બાળનાર સભાપતિ ! તું प्राचीम्-પૂર્વ प्रदिशम्-દિશાની તરફ अनु + प्र + इहि-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત થા.

તું इह-એ રાજ્યકર્મમાં अग्नेः-આગ્નેયાસ્ત્ર આદિના યોગથી पुरोअग्निः-અગ્રગામી અગ્નિની સમાન विद्वान्-કાર્યને જાણનાર વિદ્વાન્ भव-બન.

विश्वाः-સમસ્ત आशाः-દિશાઓને दीद्यानः-નિરંતર પ્રકાશિત કરનાર સૂર્ય સમાન नः-અમને द्विपदे-

મનુષ્યાદિ અને चतुष्पदे-ગાય આદિ પશુઓ માટે ऊर्जम्-અન્નાદિ પદાર્થોને धेहि-ધારણ કર તથા વિદ્યા, વિનય અને પરાક્રમથી અભયનો वि, भाहि-પ્રકાશ કર. (૬૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યાઓનો અભ્યાસ કરીને તથા યુદ્ધ વિદ્યાને જાણીને સર્વ દિશાઓમાં પ્રશંસિત બને છે, તે મનુષ્યોના ભક્ષ્ય પદાર્થો અને પશુઓના ભોજ્ય પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરીને તથા રક્ષા કરીને આનંદિત રહે. (૬૬)

पृथिव्याऽअहमुदन्तरिक्षमारुहमन्तरिक्षाद्दिवमारुहम्।
दिवो नाकस्य पृष्ठात् स्वर्ज्योतिरगामहम्॥ ६७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ યોગના અંગોના અનુષ્ઠાન અને સંયમસિદ્ધ અર્થાત્ ધારણા, ધ્યાન અને સમાધિથી પરિપૂર્ણ अहम्-હું पृथिव्याः-પૃથિવીની મધ્યમાં अन्तरिक्षम्-આકાશમાં उद् + आ + अरुहम्-આરોહણ કરું, अन्तरिक्षात्-આકાશથી दिवम्-પ્રકાશમાન સૂર્યલોકમાં आ + अरुहम्-આરોહણ કરું છું; વા नाकस्य-સુખ કરાવનાર दिवः-પ્રકાશમાન તે સૂર્યલોકના पृष्ठात्-સમીપથી स्वः-અત્યંત સુખ અને ज्योतिः-જ્ઞાનના પ્રકાશને अहम्-હું अगाम्-પ્રાપ્ત કરું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૬૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય પોતાના આત્માની સાથે પરમાત્માને યુક્ત કરે છે-જોડે છે, ત્યારે અણિમા આદિ સિદ્ધિઓ ઉત્પન્ન-પ્રકટ થાય છે, ત્યારે તે અવ્યાહતગતિ-કોઈ રોક-ટોક વિના અભીષ્ટ-ઈચ્છિત સ્થાનોમાં જઈ શકે છે; અન્યથા નહીં. (૬૭)

स्वर्यन्तो नापेक्षन्तऽआ द्याᳪ रोहन्ति रोदसी।
यज्ञं ये विश्वतोधारᳪ सुविद्वाᳪसो वितेनिरे॥ ६८॥

પદાર્થ : ये-જે सुविद्वांसः-ઉત્તમ પંડિત યોગીજન यन्तः-યોગાભ્યાસના પૂર્ણ નિયમોનું પાલન કરનારની न-સમાન स्वः-અત્યંત સુખની अप + ईच्छन्ते-અપેક્ષા કરે છે, વા रोदसी-આકાશ-દ્યુલોક અને પૃથિવી લોક પર आ + रोहन्ति-આરોહણ કરે છે-ચડી જાય છે અર્થાત્ લોકાન્તરોમાં ઈચ્છાપૂર્વક ગતિ કરે છે, વા द्याम्-પ્રકાશમય યોગવિદ્યાને તથા विश्वतोधारम्-સર્વત્ર સુશિક્ષાયુક્ત વાણી છે જેમાં यज्ञम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય તે યજ્ઞાદિ કર્મનો वितेनिरे-વિસ્તાર કરે છે, તેઓ અવિનાશી સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬૮)

ભાવાર્થ : જેમ સારથિ ઘોડાઓને સુશિક્ષિત કરીને તેને ઈચ્છિત માર્ગમાં ચલાવીને સુખપૂર્વક ઈચ્છિત સ્થાન પર શીઘ્ર પહોંચી જાય છે, તેમજ ઉત્તમ વિદ્વાન્ યોગીજન જિતેન્દ્રિય બનીને સંયમ દ્વારા પોતાના ઈષ્ટ પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને આનંદનો વિસ્તાર કરે છે. (૬૮)

अग्ने प्रेहि प्रथमो देवयतां चक्षुर्देवानामुत मर्त्यानाम्।
इयक्षमाणा भृगुभिः सजोषाः स्वर्यन्तु यजमानाः स्वस्ति॥ ६९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ देवयताम्-તું કામના કરવા યોગ્ય વિદ્વાનોની મધ્યમાં प्रथमः-પ્રથમ प्रेहि-પ્રાપ્ત થા, જેથી देवानाम्-વિદ્વાનો उत-અને मर्त्यानाम्-અવિદ્વાનોનો તું चक्षुः-વ્યવહાર જોનાર-નેત્ર છે.

જેથી इयक्षमाणाः-યજ્ઞ કરવાના ઇચ્છુક, सजोषाः-સમાન રૂપથી પ્રીતિયુક્ત यजमानाः-સર્વને સુખ આપનાર भृगुभिः-પરિપૂર્ણ વિજ્ઞાનવાળા વિદ્વાનોની સાથે स्वस्ति-સામાન્ય સુખ અને स्वः-અત્યંત સુખને यन्तु-પ્રાપ્ત કરે; તેમ તું પણ પ્રાપ્ત કર. (૬૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો તમે વિદ્વાન્ અને અવિદ્વાનોની સાથે પ્રીતિપૂર્વક ઉપદેશથી સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૬૯)

नक्तोषासा समनसा विरूपे धापयेते शिशुमेकꣳ समीची।
द्यावाक्षामा रुक्मोऽअन्तर्विभाति देवाऽअग्निं धारयन् द्रविणोदाः॥ ७०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ समनसा-એક સમાન યુક્ત, समीची-એકતા ચાહનારી, विरूपे-જુદા-જુદા સ્વરૂપવાળી ધાત્રી અને માતા બન્ને एकम्-એક शिशुम्-બાળકને नक्तोषासा-રાત્રિ અને ઉષાના જગતનું, धापयेते-દૂધપાન કરાવે છે, અર્થાત્ અત્યંત આનંદ આપે છે.

અથવા જેમ रुक्मः-પ્રકાશમાન અગ્નિ द्यावाक्षामा + अन्तः-બ્રહ્માંડ- દ્યુલોક અને પૃથિવીની મધ્યમાં वि, भाति-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશ કરે છે, તે अग्निम्-અગ્નિને द्रविणोदाः-દ્રવ્ય આપનાર देवाः-શાસ્ત્ર ભણેલ-વિદ્વાનો धारयन्-ધારણ કરે છે, તેવો વર્તાવ કરો. (૭૦)

ભાવાર્થ : સંસારમાં જેમ રાત્રિ અને ઉષા વિપરીત રૂપોથી વિદ્યમાન છે, જેમ વિદ્યુત્ સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપ્ત છે, અથવા જેમ દ્યુલોક અને પૃથિવીલોક અત્યંત સહનશીલ છે; તેમજ વિવેકશીલ મનુષ્યોએ શુભગુણોમાં વ્યાપક બનીને પુત્રની સમાન સર્વ જગતનું પાલન કરવું જોઈએ. (૭૦)

अग्ने सहस्राक्ष शतमूर्द्धञ्छतं ते प्राणाः सहस्रं व्यानाः।
त्वꣳसाहस्रस्य रायऽईशिषे तस्मै ते विधेम वाजाय स्वाहा॥ ७१॥

પદાર્થ : હે सहस्राक्ष-હજારો અસંખ્ય વ્યવહારોમાં વિશેષ વિજ્ઞાનવાળા, शतमूर्द्धन्-સેંકડો અસંખ્ય પ્રાણીઓમાં મસ્તકવાળા, अग्ने-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમય યોગીરાજ ! જે ते-આપના शतम्-સેંકડો-અસંખ્ય प्राणाः-જીવના સાધન, सहस्रम् व्यानाः-સર્વ ક્રિયાઓના નિમિત્ત શરીરસ્થ વાયુ તથા જે त्वम्-આપ साहस्रस्य-હજારો જીવ તથા પદાર્થોના આધાર જે જગત્ તેના रायः-ધનના ईशिषे-સ્વામી છે; तस्मै-તે वाजाय-વિશેષ જ્ઞાન-વિજ્ઞાનવાન્ ते-આપને માટે અમે स्वाहा-સત્ય વાણીથી विधेम-સત્કારપૂર્વક વ્યવહાર કરીએ. (૭૧)

ભાવાર્થ : જે યોગી તપ આદિ સાધનોથી યોગબળને પ્રાપ્ત કરીને અસંખ્ય પ્રાણીઓના શરીરમાં પ્રવિષ્ટ થઈને અનેક નેત્રો આદિ અંગોથી દર્શન આદિ કાર્ય કરી શકે છે.

અનેક પદાર્થો અને ધનોના સ્વામી બને છે, તેની આપણે અવશ્ય સેવા કરવી જોઈએ. (૭૧)

सुपर्णोऽसि गरुत्मान् पृष्ठे पृथिव्याः सीद।
भासान्तरिक्षमापृण ज्योतिषा दिवमुत्तभान तेजसा दिशऽउद्दृꣳह॥ ७२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ યોગી ! આપ भासा-પ્રકાશથી सुपर्णः-ઉત્તમ શુભ લક્ષણોથી યુક્ત, गरुत्मान्-મહાન મન અને આત્માના બળયુક્ત असि-છો.

જેમ અતિ પ્રકાશમાન સૂર્ય આકાશની મધ્યમાં વિદ્યમાન છે, તેમ पृथिव्याः-પૃથિવીની पृष्ठे-ઉપર सीद-વિરાજમાન છો,-સ્થિર છો.

વાયુની સમાન પ્રજાને आ, पृण-સર્વત્રથી સુખ આપો.

જેમ સૂર્ય ज्योतिषा-પોતાના પ્રકાશથી-ન્યાયના પ્રકાશથી दिवम्-પ્રકાશમય अन्तरिक्षम्-અન્તરિક્ષની સમાન રાજ્યનું उत, स्तभान्-ઉત્થાન કરો.

જેમ અગ્નિ પોતાના तेजसा-અતિ તીક્ષ્ણ તેજથી दिशः-દિશાઓની સમાન પ્રજાઓની उद् + दृंह-ઉન્નતિ કરો. (૭૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય રાગ-દ્વેષથી રહિત અને પરોપકારી બનીને ઈશ્વરની સમાન પ્રાણીઓ સાથે વર્તાવ કરે છે, ત્યારે સિદ્ધિઓ પ્રાપ્ત થાય છે. (૭૨)

आजुह्वानः सुप्रतीकः पुरस्तादग्ने स्वं योनिमासीद साधुया।
अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥ ७३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-યોગાભ્યાસથી આત્માયુક્ત યોગી ! पुरस्तात्-પ્રથમથી आजुह्वानः-સત્કારપૂર્વક નિમંત્રિત, सुप्रतीकः-શુભગુણોને પ્રાપ્ત, यजमानः-યોગની શિક્ષા આપનાર આચાર્ય ! આપ साधुया-શ્રેષ્ઠ કર્મોથી अस्मिन्-આ सधस्थे-લોકમાં-એક સાથેના સ્થાનમાં स्वम्-પોતાના योनिम्-પરમાત્મા રૂપ ઘરમાં आ + सीद-સર્વત્રથી સ્થિર રહો.

च-અને હે विश्वे-સર્વ देवाः-દિવ્ય આત્માવાળા યોગીજનો ! આપ साधुया-શ્રેષ્ઠ કર્મોથી उत्तरस्मिन्-ઉત્તર સમયે એક સાથ सधस्थे-સત્ય સિદ્ધાન્ત પર अधि + सीदत-ઊંચ સ્થિતિમાં રહો. (૭૩)

ભાવાર્થ : જે ઉત્તમ કર્મો કરીને યોગાભ્યાસ કરેલ વિદ્વાનોનો સંગ અને પ્રીતિપૂર્વક સંવાદ કરે છે, તેઓ સર્વના આધાર ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધ બની જાય છે. (૭૩)

ताꣳ सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्।
यामस्य कण्वो अदुहत्प्रपीनाꣳ सहस्रधारां पयसा महीं गाम्॥ ७४॥

પદાર્થ : જેમ कण्वः-મેધાવી પુરુષ अस्य-આ वरेण्यस्य-વરણ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય, सवितुः-યોગના ઐશ્વર્યને પ્રદાન કરનાર ઈશ્વરની याम्-જે चित्राम्-અદ્ભૂત, આશ્ચર્યરૂપ, विश्वजन्याम्-સમસ્ત

જગતને ઉત્પન્ન કરનારી प्रपीनाम्-અત્યંત ઉન્નતિથી વૃદ્ધિ પામેલ सहस्त्रधाराम्-હજારો-અસંખ્ય પદાર્થોને ધારણ કરનારી सुमतिम्-તથા તથ્યાતથ્યને વિષયોનો પ્રકાશ કરનારી ઉત્તમ બુદ્ધિ તથા पयसा-અન્નાદિ પદાર્થોથી; महीम्-મહાન્ गाम्-વેદવાણીને अदुहत्-પરિપૂર્ણ કરે છે અર્થાત્ ક્રમથી જાણીને પોતાના જ્ઞાન વિષયક કરે છે, તેમ ताम्-તેને अहम्-હું आवृणे-શ્રેષ્ઠતાથી સ્વીકાર કરું છું. (૭૪).

ભાવાર્થ : જેમ બુદ્ધિમાન મનુષ્ય જગદીશ્વરની વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને ઉન્નત બને છે, તેમજ તેને પ્રાપ્ત કરીને અન્યોએ પણ વિદ્યા અને યોગની વૃદ્ધિ માટે [તત્પર] બનવું જોઈએ. (૭૪)

विधेम ते परमे जन्मन्नग्ने विधेम स्तोमैरवरे सधस्थे।

यस्माद्योनेरुदारिथा यजे तं प्र त्वे हवीᳬंषि जुहुरे समिद्धे॥ ७५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-યોગીજન ! ते-તારા परमे-યોગ સંસ્કારોથી સર્વોત્કૃષ્ટ ઉત્પન્ન પૂર્વ जन्मन्-જન્મમાં અથવા त्वे-તારા વર્તમાન જન્મમાં अवरे-નવીન सधस्थे-લોકમાં વર્તમાન અમે स्तोमैः-સ્તુતિઓ દ્વારા विधेम-સત્કારપૂર્વક તારી સેવા કરીએ.

यस्मात्-જે योनेः-સ્થાનથી उदारिथ-ઉત્તમ સાધનો સહિત તું પ્રાપ્ત થાય છે, तम्-તે સ્થાનને હું प्रायजे-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું.

જેમ હવન કરનારા જનો समिद्धे-પ્રદીપ્ત અગ્નિમાં हवींषि-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોનો जुहुरे-હોમ કરે છે, તેમ યોગ-અગ્નિમાં અમે દુઃખોના હોમનું विधेम-વિધાન કરીએ. (૭૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં યોગના સંસ્કારોથી સંપન્ન જે જીવનો પવિત્ર અને સન્માનીય જન્મ થાય છે, તે સંસ્કારોની પ્રબળતાથી યોગનો જિજ્ઞાસુ બને છે.

જે લોકો તે [યોગી]ની સેવા કરે છે તેઓ પણ યોગના જિજ્ઞાસુ બને છે. તેઓ સર્વે જેમ અગ્નિ લાકડાને બાળી નાખે છે, તેમ સમસ્ત અશુદ્ધિઓને યોગ દ્વારા બાળી નાખે છે. (૭૫)

प्रेद्धोऽअग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्त्रया सूर्म्या यविष्ठ।

त्वाᳬं शश्वन्तऽउपयन्ति वाजाः॥ ७६॥

પદાર્થ : હે यविष्ठ-અત્યંત યુવક ! अग्ने-અગ્નિસમાન દુઃખોનો વિનાશ કરનાર યોગીજન ! આપ पुरः-પહેલાં प्रेद्धः-પ્રદીપ્ત બનીને अजस्त्रया-નાશરહિત નિરંતર सूर्म्या-ઐશ્વર્યના પ્રવાહથી नः-અમને दीदिहि-ચાહો. शश्वन्तः-નિરંતર વિદ્યમાન वाजाः-વિજ્ઞાનવાન લોકો त्वाम्-આપને उप, यन्ति-પ્રાપ્ત થાય. (૭૬)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય શુદ્ધ-પવિત્ર આત્મા બનીને અન્યોનો ઉપકાર કરે છે, ત્યારે તેઓ પણ સર્વત્ર ઉપકારને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૬)

अग्ने तमद्याश्वन्न स्तोमैः क्रतुन्न भद्रᳬं हृदिस्पृशम्।

ऋध्यामा तऽओहैः ॥ ७७ ॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્યુત્ સમાન પરાક્રમી વિદ્વાન્ ! જે अश्वम्-ઘોડાઓની न-સમાન, વા क्रतुम्-બુદ્ધિની न-સમાન, भद्रम्-કલ્યાણકારી અને हृदिस्पृशम्-હૃદયમાં સ્પર્શ કરનાર છે, तम्-તે પૂર્વ મંત્રમાં કથિત તને स्तोमैः-સ્તુતિઓથી अद्य-આજ પ્રાપ્ત કરીને ते-આપના ओहैः-પાલન આદિ ગુણોથી ऋध्याम-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે. (૭૭)

ભાવાર્થ : જેમ શરીરમાં વિદ્યમાન વિદ્યુત્ આદિ દ્વારા વૃદ્ધિ, વેગ અને પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિ સંબંધી સુખની વૃદ્ધિ થાય છે, તેમ વિદ્વાનોની શિક્ષા અને રક્ષા આદિ દ્વારા મનુષ્ય આદિ વૃદ્ધિ-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૭)

चित्तिं जुहोमि मनसा घृतेन यथा देवाऽइहागमन्वीतिहोत्राऽऋतावृधः ।
पत्ये विश्वस्य भूमनो जुहोमि विश्वकर्मणे विश्वाहादाभ्यꣳ हविः ॥ ७८ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यथा-જેમ હું मनसा-વિજ્ઞાન વા घृतेन-ઘી થી चित्तिम्-જે ક્રિયાથી સંચય કરે છે અર્થાત્ કાષ્ઠોમાં ચયન કરેલી અગ્નિને जुहोमि-ગ્રહણ કરું છું.

यथा-જેમ इह-આ જગતમાં वीतिहोत्राः-જેનો યજ્ઞ સર્વથી પ્રકાશમાન છે, તેઓ ऋतावृधः-સત્યવૃદ્ધિ પામનાર, देवाः-કામના કરવા યોગ્ય વિદ્વાનો भूमनः-અનેક રૂપવાળા विश्वस्य-સમસ્ત સંસારના विश्वकर्मणे-સર્વ ક્રિયમાણ કર્મને કરનાર पत्ये-પાલક પરમેશ્વરને માટે अदाभ्यम्-નાશ ન કરવા અને हविः-હોમ કરવા યોગ્ય, શુદ્ધ, સુખકારી પદાર્થોનો विश्वाहा-હંમેશા હોમ કરવા માટે आगमन्-આવે છે; અને-હું हविः-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોનું जुहोमि-દાન કરું છું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૭૮)

ભાવાર્થ : જેમ કાષ્ઠોમાં ચયન કરેલો અગ્નિ ઘૃતથી વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ વિજ્ઞાનથી હું વધુ-ઉન્નત બનું. જેમ ઈશ્વરના ઉપાસક જનો અને વિદ્વાનો સંસારના કલ્યાણ માટે પ્રયત્ન કરે છે, તેમ હું પણ પ્રયત્ન કરું. (૭૮)

सप्त तेऽअग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्तऽऋषयः सप्त धाम प्रियाणि ।
सप्त होत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥ ७९ ॥

પદાર્થ : હે अग्ने-તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! જેમ अग्नेः-અગ્નિના सप्त-ગાયત્રી છન્દ समिधः-પ્રદીપ્ત છે વા सप्त जिह्वाः-સાત કાલી, કરાલી જ્વાલારૂપ જીભ છે, વા सप्त, ऋषयः-પ્રાણ, અપાન, સમાન, ઉદાન, વ્યાન, દેવદત્ત અને ધનંજય સાત ઋષિઓ છે, વા सप्त, धाम प्रियाणि-સપ્ત પ્રિય-ધામ અર્થાત્ જન્મ, સ્થાન, નામ, ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ છે, વા सप्त, होत्राः-સાત ઋત્વિક-ઋતુ ઋતુમાં યજ્ઞ કરનારા છે; તેમ ते-તારા બને.

જેમ વિદ્વાન્ તે અગ્નિને सप्तधा-સાત પ્રકારથી यजन्ति-પ્રાપ્ત થાય છે-સંગ કરે છે, તેમ त्वा-તને પ્રાપ્ત થાય.

જેમ અગ્નિ घृतेन-ઘૃતથી અને स्वाहा-ઉત્તમવાણીથી सप्त, योनीः-સાત સંચયોને સુખ આપે છે,

તેમ તું आ, पृणस्व-સુખી થા.

ભાવાર્થ : જેમ કાષ્ઠ-બળતણથી અગ્નિ વધે છે, તેમ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોથી સર્વ મનુષ્યો વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય.

જેમ વિદ્વાનો અગ્નિમાં ઘૃત આદિ પદાર્થોનો હોમ કરીને જગતનો ઉપકાર કરે છે, તેમ અમે પણ કરીએ. (૭૯)

शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्माँश्च।
शुक्रश्चऽऋतपाश्चात्यंहाः ॥ ८० ॥

હે મનુષ્યો ! જેમ शुक्रज्योतिः-શુદ્ધ જ્યોતિવાળા, च-અને चित्रज्योतिः-અદ્‌ભૂત જ્યોતિવાળા, च-અને सत्यज्योतिः-અવિનાશી ज्योति-પ્રકાશવાળા, च-અને ज्योतिष्मान्-અનેક પ્રકાશવાળા, च-અને शुक्रः-શીઘ્રકારી વા શુદ્ધ સ્વરૂપ, च-અને अत्यंहाः-દુષ્ટ અર્થાત્ પાપકર્મથી દૂર, च-અને ऋतपाः-સત્યની રક્ષા કરનાર ઈશ્વર છે, તેમ તમે પણ બનો. (૮૦)

ભાવાર્થ : જેમ આ સંસારમાં વિદ્યુત્, સૂર્ય આદિ પ્રકાશક અને શુદ્ધિ કરનાર પદાર્થોને રચીને ઈશ્વરે જગતને શુદ્ધ કરેલ છે, તેમ પવિત્રતા, સત્ય, વિદ્યા, ઉપદેશ અને ક્રિયાઓ-આચરણો દ્વારા વિદ્વાનો મનુષ્યોને શુદ્ધ કરે.

આ મંત્રમાં અનેક 'च-' કારોના પાઠનો એ અભિપ્રાય છે, કે સર્વ મનુષ્યો પર પ્રીતિ આદિ પણ રાખવી જોઈએ. (૮૦)

ईदृङ् चान्यादृङ् च सदृङ् च प्रतिसदृङ् च।
मितश्च सम्मितश्च सभराः ॥ ८१ ॥

પદાર્થ : જે પુરુષ ईदृङ्-એના સમાન च-પણ अन्यादृङ्-અન્યની સમાન च-પણ सदृङ्-સમાન જોનાર, च-પણ प्रतिसदृङ्-તેના-તેના પ્રત્યે સમાન જોનાર, च-પણ मितः-માનને પ્રાપ્ત થયેલ, च-પણ सम्मितः-સારી રીતે પરિમાણ કરેલ-પરિમિત च-અને જે सभराः-સમાન ધારણ કરનાર વિદ્યમાન છે, તે વ્યવહારિક કાર્ય સિદ્ધિ કરી શકે છે. (૮૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરની સમાન ઉત્તમ છે, તેનું અનુકરણ કરીને સત્ય ધારણ કરી અસત્યનો ત્યાગ કરે તે યોગ્ય છે. (૮૧)

ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च। धर्त्ता च विधर्त्ता च विधारयः ॥ ८२ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ऋतः-સત્ય જ્ઞાન યુક્ત च-પણ सत्यः-શ્રેષ્ઠોમાં શ્રેષ્ઠ च-પણ ध्रुवः-દઢ નિશ્ચયયુક્ત. च-પણ धरुणः-સર્વના આધાર च-પણ धर्त्ता-ધારણ કરનાર च-પણ विधर्त्ता-ધારકોના ધારક च-પણ અને विधारयः-વિશેષ કરીને સર્વ વ્યવહારોને ધારણ કરનાર છે; તેની સર્વ ઉપાસના કરે. (૮૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્યા, ઉત્સાહ, સત્સંગ અને પુરુષાર્થથી સત્ય અને વિજ્ઞાનને ધારણ કરીને

સુશીલતાને ધારણ કરે છે, તે જ સ્વયં સુખી બની શકે છે તથા અન્યોને પણ સુખી કરી શકે છે. (૮૨)

ऋतजिच्च सत्यजिच्च सेनजिच्च सुषेणश्च।
अन्तिमित्रश्च दूरेऽअमित्रश्च गणः॥ ८३॥

પદાર્થ : જે ऋतजित्-વિજ્ઞાનને ઉન્નત કરનાર च-અને सत्यजित्-કારણ અને ધર્મને ઉન્નત કરનાર च-અને सेनजित्-સેનાને જીતનાર च-અને सुषेणः-સુંદર સેનાવાળા च-અને अन्तिमित्रः-સહાયકોને સમીપ રાખનાર च-અને दूरे अमित्रः-શત્રુઓથી દૂર રહેનાર च-અને અન્ય પણ એ રીતે હોય, તે गणः-પ્રશંસનીય હોય છે. (૮૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા અને સત્ય આદિ કર્મોને ઉન્નત કરે છે તથા મિત્રોની સેવા અને શત્રુઓનો દ્વેષ કરે છે, તે જ લોકમાં પ્રશંસનીય છે. (૮૩)

ईदृक्षासऽएतादृक्षासऽऊ षु णः सदृक्षासः प्रतिसदृक्षासऽएतन।
मितासश्च सम्मितासो नोऽअद्य सभरसो मरुतो यज्ञेऽअस्मिन्॥ ८४॥

પદાર્થ : હે मरुतः-ઋત્વિક-ઋતુ ઋતુમાં યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાનો ! જે ईदृक्षासः-એ લક્ષણોથી યુક્ત एतादृक्षासः-એ પૂર્વોક્તની સમાન, सदृक्षासः-પક્ષપાત રહિત સમાન દષ્ટિવાળા, आप्रतिसदृक्षासः-આપ્ત-શાસ્ત્રજ્ઞ, સત્યવાદી અને ધર્માત્માઓની સમાન, તે આપ नः-અમને सु + आ इतन-ઉત્તમ રીતિથી સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાવ છો, उ-વિચારપૂર્વક मितासः-પરિમિત વિજ્ઞાનવાળા, सम्मितासः-ત્રાજવા સમાન સત્યના વિવેચક च-અને अस्मिन्-આ यज्ञे-યજ્ઞમાં सभरसः-પોતાની સમાન પ્રાણીઓની પુષ્ટિ-પાલન કરનાર બનો, अद्य-આજ नः-અમારી રક્ષા કરો અને અમે પણ આપનો સદા સત્કાર કરીએ. (૮૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે ધાર્મિક વિદ્વાન્જન ક્યાંય પણ મળે, અને જેની સમીપ આવે, જેને ભણાવે અને સુશિક્ષા આપે, ત્યારે સર્વેએ તેનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૮૪)

स्वतवाँश्च प्रघासी च सान्तपनश्च गृहमेधी च।
क्रीडी च शाकी चोज्जेषी॥ ८५॥

પદાર્થ : જે स्वतवान्-પોતાનાની વૃદ્ધિ કરનાર, च-અને प्रघासी-જેના બહુજ ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થો વિદ્યમાન છે એવા च-અને सान्तपनः-શત્રુઓને સારી રીતે તપાવનાર च-અને गृहमेधी-ઘરમાં ઉત્તમ સંગવાળા, च-અને क्रीडी-ખેલાડી સ્વભાવવાળા, च-અને शाकी-સર્વદા સમર્થ સ્વભાવવાળા च-પણ હોય, તે उज्जेषी-મનથી અત્યંત જીતનાર હોય છે. (૮૫)

ભાવાર્થ : જે અધિક બળ, અન્ન અને સામર્થ્યયુક્ત ગૃહસ્થ છે, તે સર્વત્ર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૫)

इन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन्यथेन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽ-

भ॑वन्। एवमि॒मं यज॑मानं॒ दैवी॑श्च॒ विशो॒ मानु॒षीश्चानु॑वर्त्मानो भवन्तु॥ ८६॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! આપ એવો વર્તાવ કરો यथा-જેમ दैवीः-વિદ્વાન્ જનોના એ विशः-પ્રજાજન मरुतः-ઋતુ-ઋતુમાં યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાન્-ઋત્વિક इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ધાર્મિક રાજાની अनुवर्त्मानः-અનુકૂળ માર્ગ ચાલનાર अभवन्-બને.

यथा-જેમ मरुतः-પ્રાણોની સમાન પ્રિય दैवीः-વિદ્વાનોની विशः-પ્રજાજનો इन्द्रम्-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વરને अनुवर्त्मानः-અનુકૂળ આચરણ કરનાર अभवन्-બને.

एवम्-આ રીતે दैवीः-વિદ્વાનો च-અને मानुषीः-મૂર્ખ च-એ બન્ને विशः-પ્રજાજન इमम्-એ यजमानम्-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી સુખદાતા સજ્જનને अनुवर्त्मानः-અનુકૂળ આચરણ भवन्तु-કરે. (૮૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રજાજનો રાજા આદિ રાજપુરુષોને અનુકૂળ બનીને વર્તાવ કરે, તેમ રાજા આદિ સર્વ-પ્રજાજનોને અનુકૂળ વર્તાવ કરે.

જેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક સર્વના સુખ માટે પ્રયત્ન કરે, તેમ સર્વજન તેના સુખ માટે પ્રયત્ન કરે. (૮૬)

इ॒मᳬं स्तन॒मूर्ज॑स्वन्तं धया॒पां प्रपी॑नमग्ने सरि॒रस्य॒ मध्ये॑।
उत्सं॑ जुषस्व॒ मधु॑मन्तमर्वन्त्समु॒द्रिय॒ꣳ सद॑न॒मावि॑शस्व॥ ८७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન વિદ્યમાન પુરુષ ! તું प्रपीनम्-સારી રીતે દૂધ ભરેલ स्तनम्-સ્તનની સમાન इमम्-આ ऊर्जस्वन्तम्-પ્રશંસિત બળકારક अपाम्-જલના રસોનું धय-પાન કર. सरिरस्य-અનેકોની मध्ये-મધ્યમાં मधुमन्तम्-પ્રશસ્ત મધુરતા આદિ ગુણયુક્ત उत्सम्-જેથી પદાર્થો ભીના થાય છે તે કૂવાનું जुषस्व-સેવન કર.

હે अर्वन्-ઘોડાની સમાન વર્તાવ રાખનાર જન ! તું समुद्रियम्-સમુદ્રમાં વિદ્યમાન सदनम्-ઘર-નાવ આદિમાં आविशस्व-સારી રીતે પ્રવેશ કર. (૮૭)

ભાવાર્થ : જેમ બાળકો અને વાછરડાઓ સ્તનોથી દૂધ પાન કરીને વૃદ્ધિ પામે છે અથવા જેમ ઘોડા શીઘ્ર દોડે છે, તેમ મનુષ્ય યુક્ત આહાર-વિહાર કરીને વૃદ્ધિ પામીને વેગથી ગતિ કરે.

જેમ જલથી પરિપૂર્ણ સમુદ્રમાં નાવમાં બેસીને જતાં લોકો સુખપૂર્વક સામે પાર અને આ પાર પહોંચે છે, તેમ જ મનુષ્ય ઉત્તમ સાધનોના વ્યવહાર દ્વારા આ પાર-પેલી પાર પ્રાપ્ત કરે. (૮૭)

घृ॒तं मि॑मिक्षे घृ॒तम॑स्य॒ योनि॑र्घृ॒ते श्रि॒तो घृ॒तम्व॑स्य॒ धाम॑।
अ॒नु॒ष्व॒धमाव॑ह मा॒दय॑स्व॒ स्वाहा॑कृतं वृषभ वक्षि ह॒व्यम्॥ ८८॥

પદાર્થ : હે સમુદ્રની યાત્રા કરનાર મનુષ્ય ! તું घृतम्-જલને मिमिक्षे-સિંચવાની ઇચ્છા કર, उ-

વા अस्य-એ અગ્નિનું घृतम्-ઘી योनिः-ઘર છે જે घृते-ઘી માં श्रितः-આશ્રિત છે, વા घृतम्-જલ अस्य-તે અગ્નિનું धाम-ધામ-સ્થાન છે, તે અગ્નિને તું अनुष्वधम्-અન્નની અનુકૂળતાને आ + वह-પ્રાપ્ત કર.

હે वृषभ-વર્ષાવનાર જન ! તું જે કારણે स्वाहाकृतम्-વેદવાણીથી સિદ્ધ કરેલ हव्यम्-લેવા યોગ્ય પદાર્થોને वक्षि-કામના કરે છે વા પ્રાપ્ત કરે છે, એ માટે અમને मादयस्व-આનંદિત કર. (૮૮)

ભાવાર્થ : જેટલો અગ્નિ જલમાં છે, તેટલો સમુદ્રમાં બતાવવામાં આવે છે. જેમ ઘૃતથી અગ્નિની વૃદ્ધિ-પ્રદીપ્ત થાય છે, તેમ જલથી સર્વ પદાર્થોની વૃદ્ધિ થાય છે. અન્ન અનુકૂળ અને ઘૃત આનંદકારક છે માટે સર્વ તેની કામના કરે. (૮૮)

समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ२ऽउदारदुपा॒ꣳशुना सममृतत्वमानट्।
घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः॥ ८९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે समुद्रात्-અન્તરિક્ષથી अंशुना-કિરણસમૂહ દ્વારા मधुमान्-મધુરગુણથી યુક્ત ऊर्मिः-જલતરંગ उदारत्-ઉપર પહોંચે છે; તે सम् + अमृतत्वम्-ઉત્તમ અમૃતરૂપ સ્વાદની उपानट्-સમીપમાં વ્યાપ્ત કરે છે અર્થાત્ અતિ સ્વાદને પ્રાપ્ત કરે છે, यत्-જે घृतस्य-જલનું गुह्यम्-ગુપ્ત नाम-નામ अस्ति-છે; જે देवानाम्-વિદ્વાનોની जिह्वा-વાણી अमृतस्य-મોક્ષનો नाभिः-સ્તંભ અર્થાત્ પ્રબંધ કરનારી છે, તે સર્વનું સેવન કરો. (૮૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ મળેલા જલ અને ભૂમિનો વિભાગ કરીને [જલને] મેઘમંડળ સુધી પહોંચાડીને મધુર જલનું નિર્માણ કરે છે.

જે કારણરૂપ જલોના નામ ગુપ્ત છે અને મોક્ષ પણ ગૂઢ-ગુપ્ત છે, એ સર્વે ઉપદેશ દ્વારા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય છે; એમ જાણો. (૮૯)

वयं नाम प्र ब्रवामा घृतस्यास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः।
उप ब्रह्मा शृणवच्छस्यमानं चतुःशृङ्गोऽवमीद् गौरऽएतत्॥ ९०॥

પદાર્થ : જેને चतुःश्रृंगः-ચારે વેદ શિંગ સમાન ઉત્તમ છે, તે. गौरः-વેદવાણીમાં રમણ કરનાર વા વેદવાણીના આપનાર, ब्रह्मा-ચારે વેદોના વેત્તા-બ્રહ્મા अवमीत्-ઉપદેશ કરે, વા उपशृण्वत्-સંભળાવે, તે घृतस्य-ઘૃત વા જલનું शस्यमानम्-પ્રશંસિત ગુપ્ત नाम-નામ છે.

एतत्-એ નામનો वयम्-અમે અન્યોને प्र, ब्रवाम-ઉપદેશ કરીએ, अस्मिन्-એ यज्ञे-ગૃહાશ્રમ વ્યવહારમાં नमोभिः-અન્નાદિ પદાર્થોની સાથે धारयाम्-ધારણ કરીએ. (૯૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ માનવ શરીરને પ્રાપ્ત કરીને સર્વ પદાર્થોના નામો અને અર્થો અધ્યાપકો દ્વારા શ્રવણ કરીને અન્યોને ઉપદેશ કરવો જોઈએ અને આ સૃષ્ટિના પદાર્થોથી સર્વ કાર્યોને સિદ્ધ કરવા

જોઈએ. (૯૦)

चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽअस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ२ऽआविवेश॥ ९१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે अस्य-શબ્દના त्रयः-પ્રાતઃસવન, મધ્યસવન અને સાયંસવન એ ત્રણ पादाः-પ્રાપ્તિના સાધન છે, चत्वारि शृंङ्गाः-શ્રૃંગોની સમાન ચાર વેદો છે, द्वेशीर्षे-અસ્તકાલ અને ઉદયકાલ બે શિર છે, વા જે अस्य-એ યજ્ઞના सप्त हस्तासः-સાત ગાયત્રી આદિ છંદ હાથ સમાન છે, વા જે त्रिधा-મંત્ર, બ્રાહ્મણ અને કલ્પ ત્રણ પ્રકારથી बद्धः-બંધાયેલ महः-મહાન देवः-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય वृषभः-સર્વત્રથી સુખની વર્ષા કરનાર યજ્ઞ रोरवीति-પ્રાતઃ, મધ્ય અને સાયમ્ સવન ક્રમશઃ શબ્દ કરે છે અને मर्त्यान्-મનુષ્યોમાં आ + विवेश-ઉત્તમ રીતે પ્રવેશ કરે છે, તેનું અનુષ્ઠાન કરીને સુખી બનો.

દ્વિતીય પક્ષ : હે મનુષ્યો ! તમે જે अस्य-એ શબ્દથી त्रयः-ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણ કાલ पादाः-પ્રાપ્તિના સાધન છે, चत्वारि श्रृङ्गा-શિંગોની સમાન ચાર-નામ, આખ્યાત, ઉપસર્ગ અને નિયાત છે, द्वे शीर्षे-બે શિર નિત્ય અને કાર્ય શબ્દના સ્વરૂપ છે, જે अस्य-એ શબ્દની सप्त-સાત વિભક્તિઓ हस्तासः-હાથ સમાન છે, જે त्रिधा-ત્રણ પ્રકારથી હૃદય, કંઠ અને શિરમાં बद्धः-બંધાયેલા महः-મહાન देवः-શુદ્ધ-અશુદ્ધના પ્રકાશક वृषभः-સુખોની વર્ષા કરનાર શબ્દશાસ્ત્ર रोरवीति-ઋક્, યજુઃ, સામ અને અથર્વવેદથી શબ્દ કરે છે, मर्त्यान्-મનુષ્યોમાં आविवेश-પ્રવેશ કરે છે; તેનો અભ્યાસ કરીને સુખી વિદ્વાન્ બનો. (૯૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય યજ્ઞવિદ્યા અને શબ્દ વિદ્યાને જાણે છે, તે મહાશય વિદ્વાન્ બને છે. (૯૧)

त्रिधा हितं पणिभिर्गुह्यमानं गवि देवासो घृतमन्वविन्दन्।
इन्द्रऽएकꣳ सूर्य एकञ्जजान वेनादेकꣳस्वधया निष्टतक्षुः॥ ९२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ देवासः-વિદ્વાન્જન पणिभिः-વ્યવહારના જ્ઞાતા, સ્તુતિકર્તાઓ દ્વારા त्रिधा-ત્રણ પ્રકારથી हितम्-સ્થિત, गवि-વાણીમાં गुह्यमानम्-છુપાયેલા घृतम्-પ્રકાશિત જ્ઞાનને अनु + अविन्दन्-શોધવા પછી પ્રાપ્ત કરે છે, इन्द्रः-વિદ્યુત્ एकम्-એક વિજ્ઞાનને, सूर्यः-સૂર્ય एकम्-એક વિજ્ઞાનને जजान-પ્રકટ કરે છે. તથા वेनात्-અતિ સુંદર મનોહર બુદ્ધિમાનથી તથા स्वधया-સ્વયં ધારણ કરેલી ક્રિયાથી एकम्-એક વિજ્ઞાનને निः-નિરંતર ततक्षुः-અતિ તીક્ષ્ણ-સૂક્ષ્મ કરે છે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૯૨)

ભાવાર્થ : ત્રણ પ્રકારના સ્થૂલ, સૂક્ષ્મ અને કારણનું જ્ઞાન કરાવનાર, વિદ્યુત્ તથા સૂર્યપ્રકાશની સમાન પ્રકાશિત તે વિજ્ઞાનને આપ્તજનોથી જે મનુષ્ય પ્રાપ્ત કરે છે, તે પોતાના જ્ઞાનને વ્યાપક બનાવે છે. (૯૨)

एताऽअर्षन्ति हृद्यात्समुद्राच्छतव्रजा रिपुणा नावचक्षे।
घृतस्य धाराऽअभिचाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्यऽआसाम्॥ ९३॥

પદાર્થ : જે रिपुणा-શત્રુ અને ચોર દ્વારા न + अवचक्षे-ન કાપવા યોગ્ય-અખંડ્ય शतव्रजाः-સેંકડો માર્ગોવાળી एताः-એ વાણીઓ हृद्यात्, समुद्रात्-હૃદયાકાશમાં अर्षन्ति-નીકળે છે, आसाम्-એ વેદ અને ધર્મયુક્ત વાણીઓ ના मध्ये-મધ્ય જે અગ્નિમાં घृतस्य-ઘીની धाराः-ધારાઓ સમાન મનુષ્યોમાં પડીને પ્રકાશિત થાય છે, તે વાણીઓની हिरण्ययः-તેજસ્વી वेतसः-અતિસુંદર હું अभि, चाकशीमि-સર્વત્રથી ઉપદેશ-શિક્ષા કરું છું. (૯૩)

ભાવાર્થ : જે પવિત્ર, વિજ્ઞાનયુક્ત, અનેક માર્ગોવાળી, શત્રુઓ દ્વારા અકાટ્ય વાણીઓ, જેમ ઘૃતનો પ્રવાહ અગ્નિને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ શ્રોતાઓને પ્રસન્ન કરે છે, તે વાણીઓને જેમ ઉપદેશક વિદ્વાન્ જન પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યો પ્રાપ્ત કરે. (૯૩)

सम्यक् स्रवन्ति सरितो न धेनाऽअन्तर्हृदा मनसा पूयमानाः।
एतेऽअर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगाऽइव क्षिपणोरीषमाणाः॥ ९४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अन्तः हृदा-શરીરની મધ્યમાં मनसा-શુદ્ધ અન્તઃકરણથી पूयमानाः-પવિત્ર થયેલી धेनाः-વાણી सरितः-નદીઓના न-સમાન सम्यक्-ઉત્તમ રીતિથી स्रवन्ति-પ્રવૃત્ત થાય છે, તેને જે एते-એ વાણી દ્વારા घृतस्य-પ્રકાશિત આન્તરિક જ્ઞાનના ऊर्मयः-તરંગો क्षिपणोः-હિંસક જનના ભયથી ईषमाणाः-પલાયન કરનાર मृगा इव-હરણોની સમાન अर्षन्ति-ઉઠે છે તથા સર્વને પ્રાપ્ત થાય છે; તેને તમે જાણો. (૯૪)

ભાવાર્થ : જેમ નદીઓ સમુદ્રમાં જાય છે, તેમ અન્તરિક્ષમાં રહેલ શબ્દસમુદ્રથી વાણીઓ વિચરણ કરે છે.

જેમ સમુદ્રના તરંગો ઉછળે છે અને જેમ શિકારીના ભયથી હરણ ભાગે છે, તેમ સર્વ પ્રાણીઓના શરીરમાં સ્થિત વિજ્ઞાનથી પવિત્ર થતી વાણીઓ તીવ્રતાથી વિચરણ કરે છે.

જે લોકો શાસ્ત્રોના અભ્યાસ અને સત્યભાષણ આદિથી વાણીઓને પવિત્ર કરે છે, તેઓ શુદ્ધ બને છે. (૯૪)

सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः।
घृतस्य धाराऽअरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः॥ ९५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! प्राध्वने-ઉત્તમ જળના માર્ગમાં सिन्धोरिव-નદીઓની સમાન शूघनासः-શીઘ્રગામી, वातप्रमियः-વાયુના દ્વારા જાણવા યોગ્ય તરંગો ઉઠે અને न-જેમ काष्ठाः-સંગ્રામના પ્રદેશોનું भिन्दन्-

વિદીર્ણ કરતાં ऊर्मिभिः-શત્રુઓના મારવાના શ્રમથી નીકળેલા પરસેવા રૂપ જલથી પૃથિવીને पिन्वमानः-સીંચતા अस्त्रः-ચાલક वाजी-વેગવાન ઘોડા न-સમાન જે यह्वाः-મહાન્ ગંભીર घृतस्य-વિજ્ઞાનની धाराः-વાણી पतयन्ति-ઉપદેશકના મુખથી નીકળીને શ્રોતાઓ પર પડે છે; તેને તમે જાણો. (૯૫)

ભાવાર્થ : જે કાર્યની સિદ્ધિ માટે નદી સમાન શીઘ્રગામી, ઘોડા સમાન વેગવાન અને સર્વ દિશાઓમાં પ્રસિદ્ધ યશવાળા લોકો પરોપકાર માટે ઉપદેશના કારણે મહાન્ દુઃખોને સહન કરે છે, તેઓ અને તેના શ્રોતાઓ સંસારના સ્વામી બને છે, અન્ય નહિ. (૯૫)

अभिप्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासोऽअग्निम्।
घृतस्य धाराः समिधो नसन्त ता जुषाणो हर्यति जातवेदाः॥ ९६॥

પદાર્થ : स्मयमानासः-અલ્પ હસીને પ્રસન્નતા ઉત્પન્ન કરનારી, कल्याण्यः-કલ્યાણમયી આચરણવાળી, समनेव योषा-એક ચિત્તવાળી સ્ત્રીઓ જેમ પતિઓને પ્રાપ્ત થાય, તેમ જે समिधः-શબ્દ, અર્થ અને સંબંધોથી સમ્યક્ પ્રકાશિત, घृतस्य-શુદ્ધ જ્ઞાનની धाराः-વાણી अग्निम्-તેજસ્વી વિદ્વાનોની પાસે अभि + प्रवन्त-સર્વત્રથી જાય છે અને नसन्त-પ્રાપ્ત થાય છે ताः-તે વાણીઓનું जुषाणः-સેવન કરતાં जातवेदाः-જ્ઞાની વિદ્વાન્ हर्यति-કાન્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રસન્ન ચિત્તવાળી, હર્ષને પ્રાપ્ત, સૌભાગ્યવતી સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ વિદ્યા અને વિજ્ઞાનના આભૂષણોથી વિભૂષિત વાણીઓ વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત થાય છે. (૯૬)

कन्याऽइव वहतुमेतवा उऽअञ्ज्यञ्जानाऽअभि चाकशीमि।
यत्र सोमः सूयते यत्र यज्ञो घृतस्य धाराऽअभि तत्पवन्ते॥ ९७॥

પદાર્થ : अञ्जि-સુંદર રૂપનું अञ्जानाः-દર્શન કરાવતી, वहतुम्-પ્રાપ્ત થનાર પતિને एतवै-પ્રાપ્ત કરવા માટે कन्या इव-જેમ કન્યા શોભે છે, તેમ यत्र-જ્યાં सोमः-ઐશ્વર્યનો સમૂહ सूयते-ઉત્પન્ન થાય છે, उ-અને यत्र-જ્યાં यज्ञः-યજ્ઞ થાય છે, तत्-ત્યાં જે घृतस्य-જ્ઞાનની धाराः-વાણી अभि, पवन्ते-સર્વત્રથી પવિત્ર થાય છે, તેને હું अभिचाकशीमि-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું છું. (૯૭)

ભાવાર્થ : જેમ કન્યાઓ સ્વયંવર વિધિથી પોતાના ઈચ્છિત પતિઓનો સ્વીકાર કરીને શોભિત થાય છે, તેમ ઐશ્વર્યની ઉત્પત્તિના અવસર પર અને યજ્ઞની સમૃદ્ધિમાં વિદ્વાનોની વાણીઓ પવિત્ર બનીને શોભિત બને છે. (૯૭)

अभ्यर्षत सुष्टुतिं गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त।
इमं यज्ञं नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते॥ ९८॥

પદાર્થ : હે વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે ઉત્તમ આચારથી सुष्टुतिमम्-સુંદર પ્રશંસાને, आजिम्-સુકર્મોને

જણાવનાર સંગ્રામને અને गव्यम्-વાણીમાં વિદ્યમાન બોધને અથવા ગાયમાં વિદ્યમાન દૂધ આદિને अभ्यर्षत-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો.

देवता-વિદ્વાન્‌જન अस्मासु-અમારામાં भद्रा-અતિ આનંદદાતા द्रविणानि-ધનોને धत्त-સ્થાપિત કરે. नः-અમને इमम्-એ यज्ञम्-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમ વ્યવહારને नयत-પ્રાપ્ત કરાવો.

જે घृतस्य-પ્રકાશિત વિજ્ઞાનથી સંબંધિત धाराः-સુશિક્ષિત વાણીઓ વિદ્વાનોને मधुमत्-અત્યંત મધુમતી બનીને पवन्ते-પ્રાપ્ત થાય છે; તે વાણીઓ અમને પણ પ્રાપ્ત કરાવો. (૯૮)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષોએ મિત્ર બનીને સંસારમાં પ્રસિદ્ધ બનવું જોઈએ.

જેમ પોતાના માટે, તેમ અન્યોને માટે પણ કલ્યાણકારી પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

પરમ પુરુષાર્થથી ગૃહાશ્રમની શોભાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ અને વેદવિદ્યાનો નિરંતર પ્રચાર કરવો જોઈએ. (૯૮)

धाम॑न्ते॒ विश्वं॒ भुव॑न॒मधि॑ श्रि॒तम॒न्तः स॑मु॒द्रे हृ॒द्य॒न्तरायु॑षि।
अ॒पामनी॑के समि॒थे य॒ऽआभृ॑त॒स्तम॑श्याम॒ मधु॑मन्तं त॒ऽऊ॒र्मिम्॥ ९९॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે ते-આપના धामन्-સૃષ્ટિ-જેમાં સમસ્ત પદાર્થોને આપ ધારણ કરો છો, अन्तः, समुद्रे-તે આકાશ સમાન સર્વના મધ્યમાં વ્યાપ્ત સ્વરૂપમાં विश्वम्-સર્વ भुवनम्-સંસાર પ્રાણિયોના ઉત્પત્તિ સ્થાન अधि, श्रितम्-આશ્રિત બનીને વિદ્યમાન છે, તેને અમે अश्याम-પ્રાપ્ત કરીએ.

હે સભાપતિ ! ते-તારા अपाम्-પ્રાણોની अन्तः-મધ્યમાં, हृदि-હૃદયમાં તથા आयुषि-જીવનના હેતુ अपाम्-પ્રાણધારીઓની अनीके-સેનામાં તથા समिथे-સંગ્રામમાં यः-જે સંભાર-સામગ્રી आभृतः-સર્વત્ર વિદ્યમાન છે तम्-તેને તથા मधुमन्तम्-પ્રશંસાયુક્ત મધુર ગુણોથી સભર ऊर्मिम्-બોધને-જ્ઞાનને अश्याम्-અમે પ્રાપ્ત કરીએ. (૯૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં પ્રયત્નપૂર્વક મિત્રોની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ.

સંપૂર્ણ સામગ્રીઓ-સાધન ઉપસાધન ધારણ કરીને યુક્ત આહાર-વિહાર દ્વારા શરીરના આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરીને પોતાનો તથા અન્ય મનુષ્યોનો ઉપકાર કરવો જોઈએ. (૯૯)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં સૂર્ય, મેઘ, ગૃહાશ્રમ, ગણિત વિદ્યા તથા ઈશ્વર આદિ પદાર્થ વિદ્યાના વર્ણનથી આ અધ્યાયની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે; એમ સમજવું જોઈએ.

॥ इति सप्तदशोऽध्यायः ॥



॥ अथाष्टादशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

वाजश्च मे प्रसवश्च मे प्रयतिश्च मे प्रसितिश्च मे धीतिश्च मे क्रतुश्च मे स्वरश्च मे श्लोकश्च मे श्रवश्च मे श्रुतिश्च मे ज्योतिश्च मे स्वश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ १॥

પદાર્થ : मे-મારું वाजः-અન્ન च-વિશેષ જ્ઞાનથી, मे-મારાં प्रसवः-ઐશ્વર્ય च-અને તેના સાધનો, मे-મારા प्रयतिः-જે વ્યવહારથી ઉત્તમ પ્રયત્ન બને છે. च-અને તેના સાધન, मे-મારો प्रसितिः-પ્રબંધ च-અને રક્ષા, मे-મારી धीतिः-ધારણા च-અને ધ્યાન, मे-મારી कृतुः-શ્રેષ્ઠબુદ્ધિ च-અને ઉત્સાહ, मे-મારી स्वरः-સ્વતંત્રતા च-અને ઉત્તમ તેજ, मे-મારી श्लोकः-પદ રચના કરનારી પ્રશંસિત શિક્ષિત વાણી च-અને વક્તૃતા, मे-મારી श्रवः-સાંભળવી च-અને સંભળાવવી, मे-મારી श्रुतिः-જેનાથી સમસ્ત વિદ્યા સાંભળવામાં આવે છે તે વેદવિદ્યા च-અને તેને અનુકૂળ સ્મૃતિ અર્થાત્ ધર્મશાસ્ત્ર, मे-મારી ज्योतिः-વિદ્યાનો પ્રકાશ થવો च-અને અન્યોના માટે વિદ્યાનો પ્રકાશ કરવો, मे-મારું स्वः-સુખ च-અને અન્યોનું સુખ यज्ञेन-સેવન કરવા યોગ્ય-પૂજનીય પરમેશ્વર વા જગતના ઉપકારક વ્યવહાર દ્વારા कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમોએ અન્ન આદિથી સર્વના સુખ માટે યજ્ઞની ઉપાસના કરવી જોઈએ અને જગતના ઉપકારક વ્યવહારની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ, જેથી સર્વ મનુષ્યો આદિની ઉન્નતિ થાય. (૧)

प्राणश्च मेऽपानश्च मे व्यानश्च मेऽसुश्च मे चित्तं च म ऽआधीतं च मे वाक् च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २॥

પદાર્થ : मे-મારા प्राणः-હૃદયમાં રહેલ જીવનમૂલ વાયુ च-અને કંઠદેશમાં રહેનાર વાયુ मे-મારો अपानः-નાભિથી નીચે જનાર-અધોગામી च-અને સમાન નાભિમાં સ્થિત વાયુ, मे-મારો व्यानः-શરીરની સર્વ સંધિઓમાં વ્યાપ્ત વાયુ, च-અને ધનંજય જે શરીરના રક્ત આદિની વૃદ્ધિ કરે છે તે વાયુ, मे-મારો असुः-નાગ આદિ પ્રાણનો ભેદ વાયુ च-તથા અન્ય વાયુ, मे-મારી चित्तम्-સ્મૃતિ च-અને બુદ્ધિ, मे-મારું आधीतम्-સારી રીતે મેળવેલ નિશ્ચિત જ્ઞાન च-અને રક્ષા કરેલો વિષય, मे-મારી वाक्-વાણી च-અને તેને સાંભળવી, मे-મારી मनः-સંકલ્પ-વિકલ્પ રૂપ અન્તઃકરણની વૃત્તિ च-અને અહંકાર વૃત્તિ, मे-મારા चक्षुः-જેનાથી હું દેખું છું તે નેત્રો च-અને પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ, मे-મારા श्रोत्रम्-જેના દ્વારા હું સાંભળું છું તે કાન च-અને આગમ-પ્રત્યેક વિષય પર વેદોનું પ્રમાણ, मे-મારી दक्षः-ચતુરતા च-અને સામયિક પ્રતિભા-તત્કાળ ભાન થવું તથા मे-મારા बलम्-બળ च-અને પરાક્રમ એ સર્વ यज्ञेन-ધર્મના અનુષ્ઠાનથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો સાધનો સહિત પોતાના પ્રાણ આદિને ધર્મનું આચરણ કરવામાં સંયુક્ત કરે. (૨)

ओजश्च मे सहश्च म ऽ आत्मा च मे तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मेऽङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे परूंषि च मे शरीराणि च मऽआयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ३॥

પદાર્થ : मे-મારા ओजः-શરીરમાં રહેલ તેજ च-અને મારી સેના, मे-મારા सहः-શરીરનું બળ च-તથા મનનું બળ, मे-મારું आत्मा-સ્વરૂપ च-અને મારું સામર્થ્ય, मे-મારું तनूः-શરીર च-અને સંબંધીજનો, मे-મારું शर्म-ઘર च-અને ઘરનાં પદાર્થો, मे-મારી वर्म-રક્ષા જેનાથી થાય તે કવચ च-અને શસ્ત્ર-અસ્ત્ર, मे-મારા अङ्गानि-શિર આદિ અંગો च-અને આંગળીઓ આદિ પ્રત્યંગો, मे-મારા अस्थीनि-હાડકાં च-અને શરીરની અંદરના અંગ-પ્રત્યંગો અર્થાત્ હૃદય, માંસ, નાડીઓ આદિ, मे-મારા परूंषि-મર્મસ્થાન च-અને જીવનનાં કારણ, मे-મારા शरीराणि-સંબંધીઓનાં શરીરો च-અને સૂક્ષ્મ અવયવો, मे-મારું आयुः-જીવન च-અને જીવનનાં સાધનો અર્થાત્ જેના દ્વારા જીવું છું, मे-મારી जरा-વૃદ્ધાવસ્થા च-અને યુવાવસ્થા એ સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-સત્કારને યોગ્ય પરમેશ્વરથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૩)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ બળવાન સેના આદિને, ધાર્મિક જનોની રક્ષા અને દુષ્ટોની તાડના દંડ આપવામાં પ્રવૃત્ત કરવી જોઈએ. (૩)

ज्यैष्ठ्यं च म ऽ आधिपत्यं च मे मन्युश्च मे भामश्च मेऽमश्च मेऽम्भश्च मे जेमा च मे महिमा च मे वरिमा च मे प्रथिमा च मे वर्षिमा च मे द्राघिमा च मे वृद्धं च मे वृद्धिश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ४॥

પદાર્થ : मे-મારી ज्यैष्ठ्यम्-પ્રશંસા च-અને ઉત્તમ પદાર્થ, मे-મારું સ્વામીપણું च-અને आधिपत्यम्-અધિપતિ-સ્વકીય દ્રવ્ય, मे-મારું मन्युः-અભિમાન च-અને શાન્તિ, मे-મારો भामः-ક્રોધ च-અને સુશીલતા, मे-મારા अमः-ન્યાયથી મેળવેલા ઘર આદિ પદાર્થો च-અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થો, मे-મારું अम्भः-જળ च-અને દૂધ, દહીં, ઘી આદિ પદાર્થો, मे-મારી जेमा-જીત થવી च-અને વિજય, मे-મારો महिमा-મહિમા च-અને પ્રતિષ્ઠા, मे-મારી वरिमा-શ્રેષ્ઠતા च-અને શ્રેષ્ઠ આચરણ मे-મારી प्रथिमा-વિશાળતા च-અને વિસ્તૃત પદાર્થો, मे-મારું वर्षिमा-ઘડપણ च-અને બાળપણ, मे-મારી द्राधिमा-દીર્ઘતા च-અને હ્રસ્વતા, मे-મારા वृद्धम्-પ્રભુતાને પ્રાપ્ત અનેક પ્રકારનાં ધન આદિ પદાર્થો च-અને અલ્પધન આદિ પદાર્થો તથા मे-મારી वृद्धिः-વૃદ્ધિનું કારણ સત્ક્રિયા च-અને તેથી ઉત્પન્ન થયેલા સુખદાયક સમસ્ત પદાર્થો यज्ञेन-ધર્મની રક્ષા અર્થાત્ પાલન કરવાથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૪)

ભાવાર્થ : હે મિત્રજનો ! તમે યજ્ઞની સિદ્ધિ માટે અને સમસ્ત જગતનાં હિત માટે પ્રશંસિત-શ્રેષ્ઠ

પદાર્થોને સંયુક્ત કરો. (૪)

सत्यं च मे श्रद्धा च मे जगच्च मे धनं च मे विश्वं च मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातं च मे जनिष्यमाणं च मे सूक्तं च मे सुकृतं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ५ ॥

પદાર્થ : मे-મારો सत्यम्-યથાર્થ વિષય च-અને સર્વનું ભલું કરવું, मे-મારી श्रद्धा-અર્થાત્ જેથી સત્યને ધારણ કરીએ છીએ च-અને તે શ્રદ્ધાથી સિદ્ધિ આપનારા પદાર્થો, मे-મારા जगत्-ચેતન સંતાન આદિ વર્ગ च-અને તે જગતમાં રહેલાં સર્વ પદાર્થો, मे-મારું धनम्-સુવર્ણ આદિ ધન च-અને ધાન્ય અર્થાત્ અનાજ આદિ, मे-મારું विश्वम्-સર્વસ્વ च-અને સર્વ પર ઉપકાર [સર્વ ઉપકરણો], मे-મારી महः-મહત્વથી યુક્ત પ્રશંસા કરવા યોગ્ય પદાર્થો च-અને સત્કાર, मे-મારી क्रीडा-વિહાર च-અને તેના સાધનો, मे-મારો मोदः-હર્ષ च-અને પરમ આનંદ, मे-મારા जातम्-જેટલા ઉત્પન્ન થયેલાં च-અને જેટલા ઉત્પન્ન થઈ રહ્યા છે, मे-મારા जानिष्यमाणम्-જેટલાં ઉત્પન્ન થનારા च-અને જેટલાં તે સંબંધી પદાર્થ સમૂહ, मे-મારા सूक्तम्-ઉત્તમ વચનો च-અને ઉત્તમ વિચારો, मे-મારા सुकृतम्-પુણ્યરૂપ ઉત્તમ રીતિથી કરેલા કર્મ च-અને તેના સાધનો એ ઉક્ત સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-સત્ય અને ધર્મની ઉન્નતિ કરનાર ઉપદેશથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યાનું અધ્યયન, અધ્યાપન, શ્રવણ અને ઉપદેશ કરે છે તથા કરાવે છે, તેઓ નિત્ય ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

ऋतं च मेऽमृतं च मेऽयक्ष्मं च मेऽनामयच्च मे जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वं च मेऽनमित्रं च मेऽभयं च मे सुखं च मे शयनं च मे सूषाश्च मे सुदिनं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ६ ॥

પદાર્થ : मे-મારું ऋतम्-યથાર્થ વિજ્ઞાન च-અને તેની સિદ્ધિ કરનાર પદાર્થ, मे-મારું अमृतम्-આત્મ સ્વરૂપ, [મુક્તિ સુખ] અને યજ્ઞથી બચેલું અન્ન च-અને પીવા યોગ્ય રસ, मे-મારું अयक्ष्मम्-યક્ષ્મા-ક્ષય આદિ રોગોથી રહિત શરીર આદિ च-અને રોગ વિનાશક કર્મ, मे-મારી अनामयत्-રોગ આદિ રહિત આયુ च-અને તેની સિદ્ધિ કરનારી ઔષધિઓ, मे-મારો जीवातुः-જેનાથી જીવું છું અને જિવાડું છું, તે મારો વ્યવહાર च-અને પથ્ય ભોજન, मे-મારી दीर्घायुत्वम्-દીર્ઘ આયુ च-અને બ્રહ્મચર્ય તથા જિતેન્દ્રિયતા આદિ કર્મ, मे-મારા अनमित्रम्-અવિદ્યમાન શત્રુ અર્થાત્ મિત્ર च-અને પક્ષપાત રહિત કર્મ, मे-મારી अभयम्-નિર્ભયતા, च-અને વીરતા, मे-મારો सुखम्-અતિ ઉત્તમ આનંદ તથા પ્રસન્નતા च-અને તેને સિદ્ધ કરનાર કર્મ, मे-મારું शयनम्-સૂવું च-અને તેની સિદ્ધિ કરનારા પદાર્થો, मे-મારો सूषाः-સુમધુર પ્રાતઃકાલ-ઉષા च-અને તે સંબંધી કર્મ તથા मे-મારો सुदिनम्-સુંદર દિવસ च-અને તેને ઉપયોગી

કર્મ એ સર્વ यज्ञेन-સત્ય ભાષણ આદિ વ્યવહારોથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સત્ય ભાષણ આદિ કર્મ કરે છે, તેઓ સર્વદા સુખી રહે છે. (૬)

यन्ता च मे धर्त्ता च मे क्षेमश्च मे धृतिश्च मे विश्वं च मे महश्च मे संविच्च मे ज्ञात्रं च मे सूश्च मे प्रसूश्च मे सीरं च मे लयश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ७॥

પદાર્થ : मे-મારો यन्ता-નિયમ કરનાર च-અને નિયમિત પદાર્થ, मे-મને धर्त्ता-ધારણ કરનાર च-અને ધારણ કરેલ પદાર્થ, मे-મારી क्षेमः-રક્ષા च-અને રક્ષા કરનાર, मे-મારી धृतिः-ધારણા च-અને સહનશીલતા, मे-મારા સંબંધનું विश्वम्-જગત च-અને તેને અનુકૂળ મર્યાદા, मे-મારા महः-મહાન કર્મ च-અને મહાન વ્યવહાર, मे-મારી संवित्-પ્રતિજ્ઞા च-અને વિષયનું જ્ઞાન, मे-મારું ज्ञात्रम्-જ્ઞાનનું સાધન च-અને જાણવા યોગ્ય અર્થાત્ જ્ઞેય પદાર્થ, मे-મારી सूः-પ્રેરણા કરનારી ચિત્તની વૃત્તિ च-અને પ્રેરણાથી ઉત્પન્ન કર્મ, मे-મારી प्रसूः-જે ઉત્પત્તિ કરાવનારી વૃત્તિ च-અને ઉત્પત્તિનો વિષય, मे-મારા सीरम्-ખેતીના સાધક હળ આદિ च-અને ખેડૂત તથા मे-મારો लयः-લય અર્થાત્ જેમાંથી એકતા પ્રાપ્ત થાય તે વિષય च-અને જે મારી એકતા સાધે તે વિદ્યાદિ ગુણ તે ઉક્ત સર્વ यज्ञेन-ઉત્તમ નિયમોનાં આચરણ રૂપ યજ્ઞથી कल्पन्ताम्-સિદ્ધ થાય. (૭)

ભાવાર્થ : જે શમ, દમ આદિ ગુણોથી યુક્ત બનીને શ્રેષ્ઠ નિયમોનું પાલન કરે છે, તે પોતાના ઈચ્છિત કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે. (૭)

शं च मे मयश्च मे प्रियं च मेऽनुकामश्च मे कामश्च मे सौमनसश्च मे भगश्च मे द्रविणं च मे भद्रं च मे श्रेयश्च मे वसीयश्च मे यशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ ८॥

પદાર્થ : मे-મારું शम्-સર્વ સુખ च-અને સુખની સર્વ સામગ્રી, मे-મારો मयः-પ્રત્યક્ષ આનંદ च-અને તેના સાધનો, मे-મારા प्रियम्-પ્રીતિ કરનાર च-અને તેના સાધનો, मे-મારી अनुकामः-ધર્મને અનુકૂળ કામના च-અને તેના સાધનો, मे-મારો कामः-કામ અર્થાત્ જેનાથી વા જેમાં કામના કરાય च-અને તેના સાધનો, मे-મારું सौमनसः-ઉત્તમ મન च-અને તેના સાધનો, मे-મારો भगः-ઐશ્વર્યનો સમૂહ च-અને તેના સાધનો, मे-મારું द्रविणम्-બળ च-અને તેના સાધનો, मे-મને भद्रम्-અતિ આનંદ આપનાર સુખ च-અને સુખનાં સાધનો, मे-મારું श्रेयः-મુક્તિ સુખ च-અને તેના સાધનો, मे-મારા वसीयः-અત્યંત વસનારા च-અને તેની સામગ્રી मे-મારી यशः-કીર્તિ च-અને તેના સાધનો यज्ञेन-સુખની સિદ્ધિ કરાવનાર ઈશ્વર દ્વારા कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે કર્મથી સુખની વૃદ્ધિ થાય, તે કર્મનું નિરંતર સેવન કરવું જોઈએ. (૮)

ऊर्क् च मे सूनृता च मे पयश्च मे रसश्च मे घृतं च मे मधु च मे सग्धिश्च

मे॒ सपी॑तिश्च मे कृ॒षिश्च॑ मे॒ वृष्टि॑श्च मे॒ जैत्रं॑ च म॒ऽऔद्भि॑द्यं च मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ ९॥

પદાર્થ : मे-મારું ऊर्क्-ઉત્તમ રીતિથી સંસ્કાર કરેલ અથવા બનાવેલ અન્ન-ભોજન च-અને સુગંધી આદિ પદાર્થોથી યુક્ત વ્યંજન-મસાલાવાળા પદાર્થો, मे-મારી सूनृता-પ્રિયવાણી च-અને સત્યવચન, मे-મારું पयः-દૂધ च-અને ઉત્તમ રીતે પકાવેલ ઔષધિ, मे-મારા रसः-સર્વ પદાર્થોનો સાર च-અને મહા ઔષધિઓથી તૈયાર કરેલો રસ, मे-મારું घृतम्-ઘી च-અને તેના સંસ્કારોથી તૈયાર કરેલા પકવાન, मे-મારાં मधु-મધ च-અને ખાંડ, ગોળ આદિ मे-મારું सग्धिः-સમાન ભોજન च-અને ઉત્તમ ભોગ સાધન, मे-મારું सपीतिः-સમાન પાન च-અને ચૂસવા યોગ્ય પદાર્થ, मे-મારી कृषिः-ભૂમિની ખેતી च-અને ઘઉં આદિ અન્ન, मे-મારી वृष्टिः-વરસાદ च-અને હવન આહુતિઓથી વાયુ આદિની શુદ્ધિ કરવી, मे-મારો जैत्रम्-જીતવાનો સ્વભાવ च-અને સુશિક્ષિત સેના આદિ તથા मे-મારા औद्भिद्यम्-પૃથિવીને ફાડીને નીકળનારા વૃક્ષ અને વનસ્પતિનુ ઉત્પન્ન થવું च-અને ફૂલ, ફળ આદિ એ સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-સમસ્ત રસ અને પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરનાર કર્મથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ રસયુક્ત પદાર્થોનો સંગ્રહ કરીને, તેને યથા સમય હવન આદિ ઉત્તમ વ્યવહારોમાં પ્રયુક્ત કરવા જોઈએ. (૯)

र॒यिश्च॑ मे॒ राय॑श्च मे पु॒ष्टं च॑ मे॒ पुष्टि॑श्च मे वि॒भु च॑ मे प्र॒भु च॑ मे पू॒र्णं च॑ मे पू॒र्णत॑रं च मे॒ कुय॑वं च॒ मेऽक्षि॑तं च॒ मेऽन्नं॑ च॒ मेऽक्षु॑च्च मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ १०॥

પદાર્થ : मे-મારી रयिः-વિદ્યાની કાંતિ च-અને પુરુષાર્થ, मे-મારા रायः-પ્રશંસિત ધન च-અને પકવાન આદિ, मे-મારા पुष्टम्-પુષ્ટ પદાર્થ च-અને આરોગ્ય, मे-મારી पुष्टिः च-અને પથ્ય ભોજન, मे-મારું विभु-સર્વ વિષયોમાં વ્યાપ્ત મન આદિ च-અને પરમાત્માનું ધ્યાન, मे-મારો प्रभु-સમર્થ વ્યવહાર च-અને સર્વ સામર્થ્ય, मे-મારું पूर्णम्-કાર્યનું પૂર્ણ કરવું च-અને તેના સાધનો, मे-મારા पूर्णतरम्-આભૂષણ, ગાય, ભેંસ, ઘોડા, બકરી તથા અન્નાદિ પદાર્થો च-અને સર્વનો ઉપકાર કરવો, मे-મારા कुयवम्-નિંદિત જવથી પૃથક્ અન્ન च-અને ધાન્ય ચોખા આદિ અન્ન, मे-મારાં अक्षितम्-અક્ષય પદાર્થ च-અને તૃપ્તિ, मे-મારું अन्नम्-ભોજન યોગ્ય અન્ન च-અને વ્યંજન-મસાલા આદિ તથા मे-મારી अक्षुत्-ક્ષુધાની તૃપ્તિ च-અને તરસની તૃપ્તિ એ સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-પ્રશંસિત ધન આદિના આપનાર ઈશ્વરથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પરમ પુરુષાર્થ દ્વારા, ઈશ્વરની ભક્તિ તથા પ્રાર્થના દ્વારા વિદ્યા આદિ ધન પ્રાપ્ત કરીને સર્વનો ઉપકાર સિદ્ધ કરવો જોઈએ. (૧૦)

वि॒त्तं च॑ मे॒ वेद्यं॑ च मे भू॒तं च॑ मे भवि॒ष्यच्च॑ मे सु॒गं च॑ मे सु॒पथ्यं॑ च म॒ऽऋ॒द्धं॒ऽच॑ मे॒ऽऋद्धि॑श्च मे क्लृ॒प्तं च॑ मे॒ क्लृप्ति॑श्च मे म॒तिश्च॑ मे॒ सुम॒तिश्च॑

मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ ११॥

પદાર્થ : मे-મારો वित्तम्-વિચાર કરેલો વિષય च-અને વિચાર, मे-મારો वेद्यम्-વિચારવા યોગ્ય વિષય च-અને વિચાર કરનાર, मे-મારો भूतम्-વ્યતીત થયેલો વિષય च-અને વર્તમાન, मे-મારો भविष्यत्-થનાર च-અને સર્વ સમયનો ઉત્તમ વ્યવહાર, मे-મારો सुगम्-સુગમ માર્ગ च-અને ઉચિત્ કર્મ, मे-મારો सुपथ्यम्-સુગમ યુક્ત આહાર અને વિહાર च-અને સર્વ કાર્યોમાં પ્રથમ કારણ, मे-મારો ऋद्धम्-સમૃદ્ધ પદાર્થ च-અને સિદ્ધિઓ, मे-મારી ऋद्धिः-યોગથી પ્રાપ્ત સમૃદ્ધિ च-અને તુષ્ટિ અર્થાત્ સંતોષ, मे-મારા क्लृप्तम्-સામર્થ્યને પ્રાપ્ત થયેલ કામ च-અને કલ્પના, मे-મારી क्लृप्तिः-સામર્થ્યની કલ્પના च-અને તર્ક, मे-મારા मतिः-વિચારો અર્થાત્ મનન च-અને પદાર્થોનું વિવેચન કરવું, मे-મારી सुमतिः-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ च-અને ઉત્તમ નિષ્ઠા એ સર્વ यज्ञेन-શમ, દમ આદિ નિયમોથી યુક્ત યોગાભ્યાસ દ્વારા कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે શમ, દમ આદિથી યુક્ત અને સંયમને પ્રાપ્ત કરીને યોગાભ્યાસ કરે છે, તે ઋદ્ધિ અને સિદ્ધિથી યુક્ત બનેલ છે, તેઓ અન્યોને પણ રિદ્ધિ અને સિદ્ધિ રૂપ સમૃદ્ધિ યુક્ત કરી શકે છે. (૧૧)

व्री॒हय॑श्च मे॒ यवा॑श्च मे॒ माषा॑श्च मे॒ तिला॑श्च मे मु॒द्गाश्च॑ मे॒ खल्वा॑श्च मे प्रि॒यङ्ग॑वश्च॒ मेऽण॑वश्च मे श्या॒माका॑श्च मे नी॒वारा॑श्च मे गो॒धूमा॑श्च मे म॒सूरा॑श्च मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ १२॥

પદાર્થ : मे-મારા व्रीहयः-ચોખા च-સાઠીનું ધાન્ય मे-મારા यवाः-જવ च-અને તુવેર मे-મારા माषाः-અડદ च-અને વટાણાં, मे-મારા तिलाः-તલ च-અને નારિયેળ, मे-મારા मुद्गाः-મગ च-અને તેને સંસ્કાર-બનાવવા, मे-મારા खल्वाः-ચણા च-અને તેને બનાવવા मे-મારા प्रियङ्गु-ડાંગર च-અને તેને બનાવવા, मे-મારા अणवः-ઝીણા ચોખા च-અને તેનો પાક, मे-મારો श्यामाकाः-સામો च-અને તેનો સંસ્કાર-બનાવવા, मे-મારા नीवाराः-વાવ્યા અને ખેડ્યા વિના ઊગેલા ચોખા च-અને તેના સંસ્કાર, मे-મારા गोधूमाः-ઘઉં च-અને તેના સંસ્કાર, मे-મારા मसूराः-મસૂર च-અને તેના સંબંધી અન્ય અન્ન એ સર્વ यज्ञेन-સર્વ અન્ન પ્રદાતા પરમાત્માથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ચોખા આદિથી સુસંકૃત ભાત આદિ તૈયાર કરીને તેનો અગ્નિમાં હોમ કરવો જોઈએ, સ્વયં ખાવા જોઈએ તથા અન્યોને ખવડાવવા જોઈએ. (૧૨)

अश्मा॑ च मे॒ मृत्ति॑का च मे गि॒रय॑श्च मे॒ पर्व॑ताश्च मे॒ सिक॑ताश्च मे॒ वन॒स्पत॑यश्च मे॒ हिर॑ण्यं च॒ मेऽय॑श्च मे श्या॒मं च॑ मे लो॒हञ्च॑ मे॒ सीसं॑ च मे॒ त्रपु॑ च मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ १३॥

પદાર્થ : मे-મારા अश्मा-પથ્થર च-અને હીરા આદિ રત્નો, मे-મારી मृत्तिका-સારી માટી च-

અને સાધારણ માટી, मे-મારા गिरयः-મેઘ, વાદળાં च-અને અન્ન આદિ, मे-મારા पर्वताः-નાના-મોટાં પર્વતો च-અને પર્વતોમાં થનારા પદાર્થો [અથવા સર્વ ધન], मे-મારી सिक्ताः-મોટી રેતી च-અને ઝીણી રેતી, मे-મારા वनस्पतयः-વડ આદિ વૃક્ષ च-અને આંબા આદિ વૃક્ષ, मे-મારું हिरण्यम्-સર્વ પ્રકારનું ધન च-અને ચાંદી આદિ, मे-મારું अयः-લોખંડ च-અને શસ્ત્ર, मे-મારા श्यामम्-નીલમણિ च-અને શુક્તિ [અને ચંદ્રકાન્તમણિ] मे-મારું लोहम्-સોનું च-અને કાંતિસાર આદિ, मे-મારું सीसम्-સીસું च-અને લાખ, मे-મારું त्रपु-જસત च-અને પીત્તળ આદિ એ સર્વ यज्ञेन-સંગતિ કરવા યોગ્ય યજ્ઞથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૧૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પૃથિવી પર રહેલાં પદાર્થોની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, તેનાથી રત્નો અને ધાતુઓને પ્રાપ્ત કરીને, તેનો સર્વના હિત માટે ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૧૩)

अ॒ग्निश्च॑ म॒ऽआप॑श्च मे वी॒रुध॑श्च म॒ऽओष॑धयश्च मे कृष्टप॒च्याश्च॑ मेऽकृष्टप॒च्याश्च॑ मे ग्रा॒म्याश्च॑ मे प॒शव॑ऽआर॒ण्याश्च॑ मे वि॒त्तञ्च॑ मे॒ वित्ति॑श्च मे भू॒तञ्च॑ मे॒ भूति॑श्च मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ १४॥

પદાર્થ : मे-મારો अग्निः-અગ્નિ च-અને વીજળી આદિ, मे-મારું आपः-જળ च-અને જળમાં થનાર રત્ન મોતી આદિ, मे-મારી वीरुधः-લતા, ગુલ્મ-ઝાડી આદિ, च-અને તૃણ-શાક આદિ, मे-મારી ओषधयः-સોમલતા આદિ ઔષધિ च-અને ફલ, પુષ્પ આદિ मे-મારું कृष्टपच्याः-ખેતરમાં પાકતું અન્ન च-અને ઉત્તમ અન્ન, मे-મારું अकृष्टपच्याः-જંગલમાં પાકેલ અન્ન च-અને પર્વત આદિમાં પાકેલ અન્ન, मे-મારા ग्राम्याः-ગામમાં વિદ્યમાન ગાય આદિ च-અને નગરમાં વિદ્યમાન તથા मे-મારા आरण्याः-વનમાં વિદ્યમાન હરણ આદિ च-અને સિંહ આદિ पशवः-પશુઓ, मे-મારું वित्तम्-પ્રાપ્ત પદાર્થો च-અને સર્વ ધન, मे-મારી वित्तिः-પ્રાપ્તિ च-અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થો, मे-મારું भूतम्-રૂપ च-અને અનેક પ્રકારના પદાર્થો તથા मे-મારા भूतिः-ઐશ્વર્ય च-અને તેના સાધનો એ સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-સંગતિને યોગ્ય યજ્ઞથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. [સિદ્ધ થાય]. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ-પાક આદિ વિદ્યાની સંગતિ કરીને શિલ્પયજ્ઞને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૪)

वसु॑ च मे वस॒तिश्च॑ मे॒ कर्म॑ च मे॒ शक्ति॑श्च॒ मेऽर्थ॑श्च म॒ऽएम॑श्च मऽइ॒त्या च॑ मे॒ गति॑श्च मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ १५॥

પદાર્થ : मे-મારી वसु-વસ્તુ च-અને પ્રિય વસ્તુ વા પ્રિય કામ, मे-મારી वसतिः-પાડોશની વસ્તી च-અને સેવકો, मे-મારું कर्म-ઈચ્છિત કામ च-અને કર્તા, मे-મારું शक्तिः-સામર્થ્ય च-અને પ્રેમ, मे-

મારો अर्थः-સકલ પદાર્થોનો સંચય च-અને સંચયકર્તા, मे-મારો एमः-સુપ્રયત્ન च-અને બુદ્ધિ, मे-મારી इत्या-સર્વ વ્યવહારો જાણવાની રીતિ, च-અને યુક્તિ તથા मे-મારી गतिः-ગતિ च-ઉછળવા આદિ ક્રિયા એ સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-પુરુષાર્થના અનુષ્ઠાનથી कल्पन्ताम्-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો પોતાના સામર્થ્ય આદિ સર્વ કાંઈ અન્ય સર્વના હિત માટે પ્રયુક્ત કરે છે. તે પ્રશંસાને પામે છે. (૧૫)

अग्निश्च मऽइन्द्रश्च मे सोमश्च मऽइन्द्रश्च मे सविता च मऽइन्द्रश्च मे सरस्वती च मऽइन्द्रश्च मे पूषा च मऽइन्द्रश्च मे बृहस्पतिश्च मऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ १६॥

પદાર્થ : मे-મારો अग्निः-પ્રસિદ્ધ સૂર્યરૂપ અગ્નિ च-અને પૃથિવી પરનો ભૌતિક અગ્નિ, मे-મારો इन्द्रः-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ च-અને વાયુ, मे-મારા सोमः-શાન્ત કે સૌમ્ય ગુણયુક્ત મનુષ્ય વા પદાર્થ च-અને વર્ષા, મેઘજળ. मे-મારા इन्द्रः-અન્યાયને દૂર કરનાર સભાપતિ च-અને સભાસદ, मे-મારું सविता-ઐશ્વર્યયુક્ત કામ च-અને તેના સાધનો, मे-મારો इन्द्रः-સમસ્ત અવિદ્યાનો નાશ કરનાર અધ્યાપક च-અને વિદ્યાર્થી, मे-મારી सरस्वती-પ્રશસ્ત બોધ-જ્ઞાન વા શિક્ષાયુક્ત વાણી च-અને સત્ય વક્તા, मे-મારો इन्द्रः-વિદ્યાર્થીની જડતાનો વિનાશ કરનાર ઉપદેશક च-અને શ્રોતાઓ, मे-મારી पूषा-પુષ્ટિ કરનાર च-અને યોગ્ય આહાર-ભોજન, વિહાર-નિદ્રા આદિ, मे-મારો इन्द्रः-જે પુષ્ટિકારક વિદ્યામાં રમણ કરનાર પુરુષ च-અને વૈદ્ય, मे-મારો बृहस्पतिः-મોટા વ્યવહારોનો રક્ષક પુરુષ च-અને રાજા તથા मे-મારો इन्द्रः-સમસ્ત ઐશ્વર્યનો વર્ધક પુરુષ च-અને સેનાપતિ એ સર્વ यज्ञेन-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરવાથી कल्पन्ताम्-સિદ્ધ/સમર્થ બને. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો-તમોએ ઉત્તમ વિચારપૂર્વક પોતાના સમસ્ત પદાર્થો શ્રેષ્ઠોના પાલનમાં અને દુષ્ટોના શિક્ષણમાં નિરંતર પ્રયુક્ત કરવા જોઈએ. (૧૬)

मित्रश्च मऽइन्द्रश्च च मे वरुणश्च मऽइन्द्रश्च मे धाता च मऽइन्द्रश्च मे त्वष्टा च मऽइन्द्रश्च मे मरुतश्च मऽइन्द्रश्च मे विश्वे च मे देवाऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ १७॥

પદાર્થ : मे-મારા मित्रः-પ્રાણ અર્થાત્ હૃદયમાં રહેનાર વાયુ च-અને નાભિસ્થ સમાન વાયુ, मे-મારો इन्द्रः-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ च-અને તેજ, मे-મારો वरुणः-ઉદાન અર્થાત્ કંઠસ્થ વાયુ च-અને સર્વ શરીરમાં ગતિ કરનાર વ્યાનવાયુ, मे-મારો इन्द्रः-સૂર્ય च-અને ધારણ-આકર્ષણ, मे-મારો धाता-ધારણ કરનાર च-અને ધૈર્ય, मे-મારો इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનાર च-અને ન્યાયયુક્ત પુરુષાર્થ, मे-મારો त्वष्टा-પદાર્થોને છિન્ન-ભિન્ન કરનાર અગ્નિ च-અને શિલ્પ અર્થાત્ કારીગરી, मे-મારો इन्द्रः-

શત્રુઓને વિદીર્ણ કરનાર રાજા च-અને કારીગરી, मे-મારો मरुत:-બ્રહ્માંડમાં રહેલ વાયુ च-અને શરીરની ધાતુઓ, मे-મારી इन्द्र:-સર્વત્ર વ્યાપક વિદ્યુત્ च-અને તેનો પ્રયોગ, मे-મારા विश्वे-સમસ્ત પદાર્થો च-અને સર્વસ્વ, देवा:-ઉત્તમ ગુણયુક્ત પૃથિવી આદિ मे-મારા માટે इन्द्र:-પરમ ઐશ્વર્યના દાતા च-અને તેનો ઉપયોગ એ સર્વ यज्ञेन-વાયુની વિદ્યાના વિધાનથી कल्पन्ताम्-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણવિદ્યા અને વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણીને અને તે બન્નેની સર્વત્ર વ્યાપકતા સમજીને દીર્ઘ જીવનનું નિર્માણ કરવું જોઈએ. (૧૭)

पृथिवी च मऽइन्द्रश्च मेऽन्तरिक्षं च मऽइन्द्रश्च मे द्यौश्च मऽइन्द्रश्च मे समाश्च मऽइन्द्रश्च मे नक्षत्राणि च मऽइन्द्रश्च मे दिशश्च मऽइन्द्रश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ १८॥

પદાર્થ : मे-મારી पृथिवी-વિસ્તારયુક્ત ભૂમિ च-અને તેમાં સ્થિત પદાર્થો, मे-મારી इन्द्र:-વિદ્યુત્ રૂપ ક્રિયા च-અને બળદાયક વ્યાયામ આદિ ક્રિયા, मे-મારું अन्तरिक्षम्-વિનાશરહિત આકાશ च-અને તેમાં સ્થિત પદાર્થો, मे-મારા इन्द्र:-સમસ્ત ઐશ્વર્યનો આધાર च-અને તેનો પ્રયોગ, मे-મારી द्यौ:-પ્રકાશમાં કામ કરનારી વિદ્યા च-અને તેના સાધક પદાર્થો, मे-મારા इन्द्र:-સર્વ પદાર્થોને છિન્ન-ભિન્ન કરનાર સૂર્ય આદિ च-અને છેદક પદાર્થો, मे-મારા समा:-વર્ષ च-અને ક્ષણ, પલ, વિપલ, ઘટી, મુહૂર્ત, દિવસ વગેરે, मे-મારા इन्द्र:-કાલ-સમય જ્ઞાનનો નિમિત્ત સૂર્ય च-અને ગણિત વિદ્યા, मे-મારા नक्षत्राणि-નક્ષત્રો અર્થાત્ જે કારણ રૂપે સ્થિર રહે છે, પરન્તુ નાશ પામતાં નથી તે લોક च-અને તેની સાથે સંબંધ રાખનારા પ્રાણી આદિ, मे-મારી इन्द्र:-લોક-લોકાન્તરોમાં સ્થિત વિદ્યુત્ च-અને વિદ્યુત્‌ના સંયોગથી તેમાં રહેનારા પદાર્થો, मे-મારી दिश:-પૂર્વ આદિ દિશાઓ च-અને તેમાં રહેલી વસ્તુઓ તથા मे-મારી इन्द्र:-દિશાઓનું જ્ઞાન કરાવનાર च-અને ધ્રુવનો તારો એ સર્વ પદાર્થ यज्ञेन-પૃથિવી અને કાલ વિશેષ જ્ઞાન આપનાર કામથી कल्पन्ताम्-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યાં સુધી પૃથિવી આદિ પદાર્થો અને તેમાં રહેલા વિદ્યુત્‌ને જાણતા નથી, ત્યાં સુધી ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૮)

अꣳशुश्च मे रश्मिश्च मेऽदाभ्यश्च मेऽधिपतिश्च मऽउपाꣳशुश्च मेऽन्तर्यामश्च मऽऐन्द्रवायवश्च मे मैत्रावरुणश्च मऽआश्विनश्च मे प्रतिप्रस्थानश्च मे शुक्रश्च मे मन्थी च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ १९॥

પદાર્થ : मे-મારો अंशु:-વ્યાપક સૂર્ય च-અને તેનો પ્રતાપ, मे-મારો रश्मि:-ભોજનનો વ્યવહાર-સાધન च-અને વિવિધ ભોજન, मे-મારો अदाभ्य:-વિનાશ રહિત च-અને રક્ષક, मे-મારા अधिपति:-સ્વામી च-અને તેનું સ્થાન, मे-મારા उपांशु:-મનનો જપ च-અને એકાન્તનો વિચાર, मे-મારો अन्तर्याम:-મધ્યમાં ગતિ કરનાર વાયુ च-અને બળ, मे-મારા ऐन्द्रवायव:-વિદ્યુત્ અને વાયુ સંબંધી અગ્નિ च-

અને જળ, मे-મારા मैत्रावरुणः-પ્રાણ અને ઉદાન સાથે ચાલનાર વાયુ च-અને વ્યાનવાયુ, मे-મારું आश्विनः-સૂર્ય અને ચંદ્રમા વચ્ચે રહેનાર તેજ च-અને પ્રભાવ, मे-મારો प्रतिप्रस्थानः-પ્રસ્થાન = ગમન પ્રતિ વિદ્યમાન અર્થાત્ ગતિશીલ વાયુ च-અને ભ્રમણ, मे-મારું शुक्रः-શુદ્ધ સ્વરૂપ च-અને વીર્યજનક-બળકારી પદાર્થો, मे-મારા मन्थी-મંથનશીલ સ્વભાવવાળા च-અને દૂધ વા કાષ્ઠ આદિ એ સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-અગ્નિના ઉપયોગથી कल्पन्ताम्-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૧૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સૂર્ય-પ્રકાશ આદિથી પણ ઉપકાર ગ્રહણ કરે, તો તેઓ વિદ્વાન બનીને ક્રિયા-કૌશલને કેમ પ્રાપ્ત ન કરી શકે ? (૧૯)

आग्रयणश्च मे वैश्वदेवश्च मे ध्रुवश्च मे वैश्वानरश्च मऽऐन्द्राग्नश्च मे महावैश्वदेवश्च मे मरुत्वतीयाश्च मे निष्कैवल्यश्च मे सावित्रश्च मे सारस्वतश्च मे पात्नीवतश्च मे हारियोजनश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २०॥

પદાર્થ : मे-મારો आग्रयणः-માગસર આદિ મહિનામાં નિષ્પન્ન યજ્ઞ વિશેષ च-અને તેની સામગ્રી, मे-મારો वैश्वदेवः-સમસ્ત વિદ્વાનોથી સંબંધ કરનાર વિચાર च-અને તેનું ફળ, मे-મારો ध्रुवः-નિશ્ચલ વ્યવહાર च-અને તેના સાધનો, मे-મારો वैश्वानरः-સર્વ મનુષ્યનો સત્કાર च-અને સત્કાર કરનાર, मे-મારા ऐन्द्राग्नः-વાયુ અને વિદ્યુત્થી સિદ્ધ કામ च-અને તેના સાધનો, मे-મારો महावैश्वदेवः-સમસ્ત મહાન વિદ્વાનોનો વ્યવહાર च-અને તેના સાધનો, मे-મારો मरुत्वतीयाः-વાયુ સંબંધી વ્યવહાર च-અને તેનું ફળ, मे-મારા निष्केवल्याः-નિરંતર કેવલ સુખ થાય તેવા કાર્ય च-અને તેના સાધનો, मे-મારા सावित्रः-સૂર્યનો એ પ્રભાવ च-અને તેનો ઉપકાર, मे-મારો सारस्वतः-વાણી સંબંધી વ્યવહાર च-અને તેનું ફળ मे-મારા पात्नीवतः-પ્રશંસિત યજ્ઞ સંગિની પત્ની વાળાનો વ્યવહાર च-અને તેના સાધનો, मे-મારા हारियोजनः-ઘોડાઓને રથ આદિમાં જોડનારનો અનુક્રમ च-અને તેની સામગ્રી यज्ञेन-પદાર્થોની સંગતિ કરવાથી कल्पन्ताम्-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સમયોપયોગી ક્રિયાનો તથા વિદ્વાનોની સંગતિનો આશ્રય કરીને વિવાહિત સ્ત્રીના વ્રત-પત્નીવ્રતવાળા હોય, તેઓ પદાર્થ વિદ્યાને કેમ ન જાણી શકે ? (૨૦)

स्रुचश्च मे चमसाश्च मे वायव्यानि च मे द्रोणकलशश्च मे ग्रावाणश्च मेऽधिषवणे च मे पूतभृच्च मऽआधवनीयश्च मे वेदिश्च मे बर्हिश्च मेऽवभृथश्च मे स्वगाकारश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २१॥

પદાર્થ : मे-મારા स्रुचः-સ્રુવા આદિ च-અને તેની શુદ્ધિ, मे-મારું चमसाः-યજ્ઞ વા પાક બનાવવાનું પાત્ર च-અને તેના પદાર્થો, मे-મારા वायव्यानि-વાયુઓમાં સુખદ च-અને વાયુઓની શુદ્ધિ કરનાર પદાર્થ, मे-મારો द्रोणकलशः-યજ્ઞની ક્રિયાનો કળશ च-અને પરિમાણ વિશેષ, मे-મારા ग्रावाणः-

શિલાફલક = પથ્થર આદિ च-અને ખાંડણિયો તથા સાંબેલું, मे-મારી अधिषवणे-સોમવલ્લી આદિ ઔષધિઓનાં સાધક પદાર્થો च-અને કુંટવું, પીસવું, मे-મારી पूतभृत्-પૂત = શુદ્ધને ધારણ કરનાર શુદ્ધિ-કર सूप-આદિ च-અને સાવરણી આદિ, मे-મારા आधवनीयः-સારી રીતે ધોવાના પાત્રો च-અને નલિકા આદિ યંત્ર અર્થાત્ તારાગણ જોવાનું યંત્ર, मे-મારી वेदिः-હોમ કરવાની વેદી च-અને ચતુષ્કાદિ-ચાર સ્તંભ યુક્ત યજ્ઞશાલા, मे-મારી बर्हिः-સમીપમાં વૃદ્ધિ કરનાર વા કુશ સમૂહ च-અને યજ્ઞ સમયનાં યોગ્ય પદાર્થો, मे-મારી अवभृथः-યજ્ઞ સમાપ્તિ સમયનું સ્નાન च-અને ચંદનાદિનું અનુલેપન કરવું તથા मे-મારા स्वगाकारः-જેથી મારા પદાર્થો પ્રાપ્ત થાય છે, તે કર્મને જે કરે તે च-અને પદાર્થોની પવિત્રતા એ સર્વ यज्ञेन-હોમ કરવાની ક્રિયાથી कल्पन्ताम्-સમર્થ/સિદ્ધ બને. (૨૧)

ભાવાર્થ : તે મનુષ્યો જ યજ્ઞ કરવાને સમર્થ બને છે, જે સાધન-ઉપસાધન સામગ્રીથી અલંકૃત હોય. (૨૧)

अग्निश्च मे घर्मश्च मेऽर्कश्च मे सूर्यश्च मे प्राणश्च मेऽश्वमेधश्च मे पृथिवी च मेऽदितिश्च मे दितिश्च मे द्यौश्च मेऽङ्गुलयः शक्वरयो दिशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २२॥

પદાર્થ : मे-મારો अग्निः-અગ્નિ च-અને તેના પ્રયોગ, मे-મારો धर्मः-તાપ च-અને શાન્તિ, मे-મારી अर्कः-સત્કાર કરવા યોગ્ય વિશેષ સામગ્રી च-અને તેને શુદ્ધ કરવાનો વ્યવહાર, मे-મારો सूर्यः-સૂર્ય च-અને જીવિકાનો હેતુ, मे-મારા प्राणः-જીવનનો હેતુ વાયુ च-અને બહારનો વાયુ, मे-મારો अश्वमेधः-રાજ્યદેશ च-અને રાજનીતિ, मे-મારી पृथिवी-ભૂમિ च-અને તેમાં રહેલા સર્વ પદાર્થો, मे-મારી अदितिः-અખંડ નીતિ च-અને જિતેન્દ્રિયતા, मे-મારી दितिः-ખંડિત સામગ્રી च-અને અનિત્ય જીવન વા શરીર આદિ, मे-મારો द्यौः-ધર્મનો પ્રકાશ च-અને દિવસ-રાત, मे-મારી अङ्गुलयः-આંગળીઓ, शक्वरयः-શક્તિઓ, दिशः-દિશાઓ च-અને ઉપદિશાઓ એ સર્વ यज्ञेन-સંગતિ કરવા યોગ્ય પરમાત્માથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને/સિદ્ધ થાય. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો પ્રાણીઓના સુખ માટે યજ્ઞ કરે છે, તેઓ મહાશય છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૨)

व्रतं च मऽऋतवश्च मे तपश्च मे संवत्सरश्च मेऽहोरात्रेऽऊर्वष्ठीवे बृहद्रथन्तरे च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २३॥

પદાર્થ : मे-મારું व्रतम्-સત્યાચરણ અને નિયમ પાલન च-સત્ય ભાષણ અને સત્ય ઉપદેશ, मे-મારી ऋतवः-વસંત આદિ ઋતુઓ च-અને ઉત્તરાયન/દક્ષિણાયન, मे-મારો तपः-પ્રાણાયામ તથા ધર્મનું આચરણ च-અને શીત, ઉષ્ણ આદિ દ્વન્દ્વોનું સહન, मे-મારું संवत्सरः-વર્ષ च-અને કલ્પ, મહાકલ્પ આદિ, मे-મારા अहोरात्रे-દિવસ અને રાત, ऊर्वष्ठीवे-જંઘા અને ગળું , बृहद्रथन्तरे-મહાન પદાર્થ અને અત્યંત સુંદર રથ च-અને ઘોડા તથા બળદો આદિ यज्ञेन-ધર્મજ્ઞાન આદિના આચરણ તથા કાલચક્રના ભ્રમણના અનુષ્ઠાનથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને/સિદ્ધ થાય. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો નિયત સમય પર કાર્ય અને નિરંતર ધર્માચરણ કરે છે, તે લોકો અભીષ્ટ સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૩)

एका॑ च मे ति॒स्रश्च॑ मे ति॒स्रश्च॑ मे॒ पञ्च॑ च मे॒ पञ्च॑ च मे स॒प्त च॑ मे स॒प्त च॑ मे॒ नव॑ च मे॒ नव॑ च म॒ऽएका॑दश च म॒ऽएका॑दश च मे॒ त्रयो॑दश च मे॒ त्रयो॑दश च मे॒ पञ्च॑दश च मे॒ पञ्च॑दश च मे स॒प्तद॑श च मे स॒प्तद॑श च मे॒ नव॑दश च मे॒ नव॑दश च म॒ऽ एक॑विꣳशतिश्च म॒ऽएक॑विꣳशतिश्च मे॒ त्रयो॑विꣳशतिश्च मे॒ त्रयो॑विꣳशतिश्च मे॒ पञ्च॑विꣳशतिश्च मे॒ पञ्च॑विꣳशतिश्च मे स॒प्तवि॑ꣳशतिश्च सप्तवि॑ꣳशतिश्च मे॒ नव॑विꣳशतिश्च मे॒ नव॑विꣳशतिश्च म॒ऽएक॑त्रिꣳशच्च म॒ऽएक॑त्रिꣳशच्च मे॒ त्रय॑स्त्रिꣳशच्च मे य॒ज्ञेन॑ कल्पन्ताम्॥ २४॥

પદાર્થ : यज्ञेन-સંગતિકરણ અર્થાત્ યોગ કરવાથી मे-મારી एका-એક સંખ્યા च-અને બે, मे-મારી तिस्रः-ત્રણ સંખ્યા च-અને બે मे-મારી पञ्च-પાંચ च-અને मे-મારી पञ्च-પાંચ च-અને બે मे-મારી सप्त-સાત, च-અને मे-મારી सप्त-સાત च-અને બે मे-મારી નવ, च-અને मे-મારી નવ च-અને બે मे-મારી एकादश-અગિયાર, च-અને मे-મારી एकादश-અગિયાર च-અને બે मे-મારી त्रयोदश-તેર, च-અને मे-મારી त्रयोदश-તેર च-અને બે मे-મારી પંદર, च-અને मे-મારી પંદર च-અને બે मे-મારી सप्तदश-સત્તર, च-અને मे-મારી सप्तदश-સત્તર च-અને બે नवदश-ઓગણીશ, च-અને मे-મારી नवदश-ઓગણીશ च-અને બે मे-મારી एकविंशतिः-એકવીસ, च-અને मे-મારી एकविंशतिः- એકવીસ च-અને બે मे-મારી त्रयोविंशतिः-તેવીસ, च-અને मे-મારી त्रयोविंशतिः-તેવીસ च-અને બે मे-મારી पञ्चविंशतिः-પચીસ, च-અને मे-મારી पञ्चविंशतिः-પચીસ च-અને બે मे-મારી सप्तविंशतिः-સત્તાવીસ, च-અને मे-મારી सप्तविंशतिः-સત્તાવીસ च-અને બે मे-મારી नवविंशतिः-ઓગણત્રીસ, च-અને मे-મારી नवविंशतिः-ઓગણત્રીસ च-અને બે मे-મારી एकत्रिंशत्-એકત્રીસ, च-અને બે मे-મારી एकत्रिंशत्-એકત્રીસ च-અને બે मे-મારી त्रयस्त्रिंशत्-તેંત્રીસ च-અને આગળ પણ એ રીતે સંખ્યાઓને कल्पन्ताम्-સિદ્ધ કરવી. આ યોગ પક્ષમાં મંત્રનો પ્રથમ અર્થ છે.

દ્વિતીય પક્ષ : यज्ञेन-યોગથી વિપરીત દાન રૂપ વિયોગ માર્ગથી વિપરીત સંગ્રહિત च-અને સંખ્યા બે ના વિયોગ અર્થાત્ અન્તરથી मे-મારી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને તેમ मे-મારી त्रयस्त्रिंशत्-તેંત્રીસ સંખ્યા च-બે ના આપવા અર્થાત્ વિયોગથી मे-મારી एकत्रिंशम्-એકત્રીસ, च-ફરી मे-મારી एकत्रिंशत्-એકત્રીસ च-અને બેના વિયોગથી मे-મારી नवविंशतिः-ઓગણત્રીસ, च-અને मे-મારી नवविंशतिः-ઓગણત્રીસ च-અને બે ના વિયોગથી मे-મારી सप्तविंशतिः-સતાવીસ સંખ્યા સમર્થ બને છે, આમ સર્વ સંખ્યાઓમાં જાણવું જોઈએ. આ વિયોગ પક્ષમાં મંત્રનો બીજો અર્થ છે.

તૃતીયપક્ષ : मे-મારી एका-એક સંખ્યા च-અને मे-મારી तिस्रः-ત્રણ સંખ્યા, च-પરસ્પર ગુણી, मे-મારી तिस्रः-ત્રણ સંખ્યા च-અને मे-મારી पञ्च-પાંચ સંખ્યા च-પરસ્પર ગુણતાં, मे-મારી पञ्च-

પાંચ સંખ્યા च-અને मे-મારી सप्त-સાત સંખ્યા च-પરસ્પર ગુણતાં, मे-મારી सप्त-સાત સંખ્યા च-અને मे-મારી नव-નવ સંખ્યા च-પરસ્પર ગુણતાં, मे-મારી, नव-નવ સંખ્યા च-અને मे-મારી एकादश-અગિયાર સંખ્યા च-પરસ્પર ગુણતાં, આ રીતે અન્ય સંખ્યા यज्ञेन-તેના વારંવાર યોગ = ગુણવાથી कल्पन्ताम्-સમર્થ બને/સિદ્ધ બને છે. આ ગુણન પક્ષમાં મંત્રનો ત્રીજો અર્થ છે. [અર્થાત્ ૩ × ૩, ૫ × ૫, ૭ × ૭, ૯ × ૯] (૨૪)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં यज्ञेन- *પદથી યોગ = જોડવું અને વિયોગ =બાદ કરવું અર્થ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે, કારણકે '* यज- *' ધાતુનો જે સંગતિકરણ અર્થ છે, તેનાથી કોઈ સંખ્યાને કોઈ સંખ્યાથી યોગ =જોડવી છે.*

यज- *ધાતુનો બીજો અર્થ દાન કરવું=વ્યય કરવો છે. અર્થાત્ કાઢી નાખવું. એ બન્નેમાં અન્તર છે.*

આ રીતે ગુણવા, ભાગવા, વર્ગ, વર્ગમૂલ આદિ ઘન, ઘનમૂલ, ભાગજાતિ અને પુભાગજાતિ આદિ જે ગણિતના ભેદ છે તે યોગ = જોડવા અને વિયોગ = ઘટાડવાથી ઉત્પન્ન થાય છે.

કારણકે કોઈ સંખ્યાને કોઈ સંખ્યાથી એકવાર જોડીએ-મેળવીએ તો યોગ કહેવાય છે. જેમ કે - ૨ + ૪ = ६ અર્થાત્ બે માં ચાર જોડતાં છ થાય છે, આ રીતે અનેકવાર જો સંખ્યામાં સંખ્યા જોડાય = ઉમેરાય તેને ગુણા કહે છે જેમકે ૨ × ૪ = ૮ અર્થાત્ બેની સંખ્યા ચાર વાર અલગ અલગ જોડાય અથવા બે ને ચારથી ગુણા કરતાં આઠ થાય છે. એજ રીતે ચારને ચાર વાર જોડતા અથવા ગુણા કરતાં ચારનો વર્ગ સોળ બને છે. આ રીતે અન્તરથી ભાગ, વર્ગમૂલ અને ઘનમૂલ આદિ ક્રિયાઓ બને છે.

અર્થાત્-જે કોઈ સંખ્યામાં કોઈ સંખ્યા જોડે અથવા કોઈ રીતે ઘટાડે તો એ યોગ જમા અથવા વિયોગ =ઘટાડવાથી બુદ્ધિમાનોની યથામતિ કલ્પનાર વ્યક્ત અને અવ્યક્તતર [અંકગણિત અને બીજગણિત] સમસ્ત ગણિત ક્રિયાઓ સિદ્ધ થાય છે.

એ કારણે આ મંત્રમાં બે સંખ્યાના યોગથી ઉત્તરોત્તર સંખ્યા અથવા બે સંખ્યાના વિયોગ-ઘટાડવાથી પૂર્વ પૂર્વની વિષમ સંખ્યા બતાવી છે. એ જ રીતે ગુણા કરવાનો પણ કોઈ એક પ્રકાર બતાવેલ છે. એમ જાણવું જોઈએ. (૨૪)

चतस्रश्च मेऽष्टौ च मेऽष्टौ च मे द्वादश च मे द्वादश च मे षोडश च मे षोडश च मे विꣳशतिश्च मे विꣳशतिश्च मे चतुर्विꣳशतिश्च मे चतुर्विꣳशतिश्च मेऽष्टाविꣳशतिश्च मेऽष्टाविꣳशतिश्च मे द्वात्रिꣳशच्च मे द्वात्रिꣳशच्च मे षट्त्रिꣳशच्च मे षट्त्रिꣳशच्च मे चत्वारिꣳशच्च मे चत्वारिꣳशच्च मे चतुश्चत्वारिꣳशच्च मे चतुश्चत्वारिꣳशच्च मेऽष्टाचत्वारिꣳशच्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २५॥

પદાર્થ : यज्ञेन-સંગતિકરણ=યોગ કરવાથી मे-મારી चतस्रः-ચાર સંખ્યા च-અને ચાર સંખ્યા मे-મારી अष्टौ-આઠ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી अष्टौ-આઠ સંખ્યા च-અને ચાર मे-મારી द्वादश-બાર સંખ્યા,

च-અને ચાર मे-મારી द्वादश-બાર च-અને ચાર मे-મારી षोडश-સોળ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી षोडश-સોળ च-અને ચાર मे-મારી विंशतिः-વીસ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી विंशतिः-વીસ च-અને ચાર मे-મારી चतुर्विंशतिः-ચોવીસ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી चतुर्विंशतिः-ચોવીસ च-અને ચાર मे-મારી अष्टाविंशतिः-અઠ્ઠાવીસ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી अष्टाविंशतिः-અઠ્ઠાવીસ च-અને ચાર मे-મારી द्वात्रिंशत्-બત્રીસ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી द्वात्रिंशत्-બત્રીસ च-અને ચાર मे-મારી षट्त्रिंशत्-છત્રીસ સંખ્યા, च-અને मे-મારી षट्त्रिंशत्-છત્રીસ च-અને ચાર मे-મારી चत्वारिंशत-ચાલીશ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી चत्वारिंशत्-ચાલીસ च-અને ચાર मे-મારી चतुश्चत्वारिंशत्-ચુમાળીશ સંખ્યા, च-અને मे-મારી चतुश्चत्वारिंशत्-ચુમાળીશ च-અને ચાર मे-મારી अष्टाचत्वारिंशत्-અડતાલીશ સંખ્યા બને છે. च-પદથી આગળ પણ પૂર્વોક્ત વિધિથી સંખ્યાઓ कल्पन्ताम्-સિદ્ધ કરવી. આ યોગપક્ષમાં પ્રથમ અર્થ છે.

દ્વિતીય પક્ષ : यज्ञेन-યોગથી વિપરીત દાન રૂપ વિયોગના માર્ગથી વિપરીત અને સંગૃહીત च-અન્ય અન્ય સંખ્યાઓ ચારના વિયોગથી જેમ કે मे-મારી कल्पन्ताम्-સિદ્ધ થાય/સમર્થ બને, તેમ मे-મારી अष्टाचत्वारिंशत्-અડતાલીસ च-અને ચારના દાન = વિયોગથી मे-મારી चतुश्चत्वारिंशत्-ચુમાળીશ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી चतुश्चत्वारिंशत्-ચુમાળીશ च-ચારના વિયોગથી मे-મારી चत्वारिंशत्-ચાલીશ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી चत्वारिंशत्-ચાલીશ च-ચારના વિયોગથી मे-મારી षट्त्रिंशत्-છત્રીસ સંખ્યા, च-ફરી मे-મારી षट्त्रिंशत-છત્રીસ च-ચારના વિયોગથી मे-મારી द्वात्रिंशत्-બત્રીસ સંખ્યા બને છે. આ રીતે સર્વ સંખ્યાઓને જાણવી જોઈએ. આ વિયોગ પક્ષમાં મંત્રનો બીજો અર્થ છે.

તૃતીયપક્ષ : मे-મારી चतस्त्रः-ચાર સંખ્યા च-અને मे-મારી अष्टौ-આઠ સંખ્યા, च-પરસ્પર ગુણી मे-મારી अष्टौ-આઠ च-અને मे-મારી द्वादश-બાર સંખ્યા च-પરસ્પર ગુણી, मे-મારી द्वादश-બાર च-અને मे-મારી षोडश-સોળ સંખ્યા च-પરસ્પર ગુણી, मे-મારી षोडश-સોળ च-અને मे-મારી विंशतिः-વીસ સંખ્યા च-પરસ્પર ગુણી, આ રીતે સંખ્યા આગળ પણ यज्ञेन-ઉક્ત વારંવાર ગુણાથી कल्पन्ताम्-સિદ્ધ થાય છે/સમર્થ બને છે. આ ગુણન પક્ષમાં મંત્રનો ત્રીજો અર્થ છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : પૂર્વોક્ત (૨૪) મંત્રમાં એક સંખ્યાને લઈને બે ના યોગ અને વિયોગથી વિષમ સંખ્યા પ્રતિપાદન કરેલ છે. તેથી પૂર્વ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત ક્રમથી એક, બે અને ત્રણ સંખ્યાઓ છોડીને પ્રસ્તુત મંત્રમાં ચારના યોગ = જોડવા અને વિયોગ = ઘટાડવા ચારની સંખ્યાથી લઈને સમ સંખ્યાઓ પ્રતિપાદિત કરેલ છે.

આ બન્ને મંત્રોથી વિષમ સંખ્યાઓ અને સમ સંખ્યાઓના ભેદોને જાણીને બુદ્ધિ અનુસાર કલ્પનાથી સમસ્ત ગણિત વિદ્યાઓ જાણી લેવી જોઈએ. (૨૫)

त्र्यविश्च मे त्र्यवी च मे दित्यवाट् च मे दित्यौही च मे पञ्चाविश्च मे पञ्चावी च मे त्रिवत्सश्च मे त्रिवत्सा च मे तुर्यवाट् च मे तुर्यौही च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २६ ॥

પદાર્થ : मे-મારા त्र्यविः-ત્રણ પ્રકારના ઘેટાવાળા च-અને તેથી ભિન્ન સામગ્રી, मे-મારી त्र्यवी-

ત્રણ પ્રકારની ઘેટીવાળી સ્ત્રી च-અને તેનું ઘી આદિ, मे-મારો दित्यवाट्-ખંડિત ક્રિયાઓમાં આવેલાં વિઘ્નોને પૃથક્ કરનાર, च-અને તેના સંબંધી, मे-મારી दित्यौही-તે ક્રિયાઓને પ્રાપ્ત કરાવનારી ગાય આદિ च-અને તેની રક્ષા, मे-મારા पञ्चाविः-પાંચ પ્રકારના ઘેટાવાળા च-અને તેના ઘી આદિ, मे-મારી पञ्चावी-પાંચ પ્રકાર ઘેટાવાળી સ્ત્રી च-અને તેના ઉદ્યોગ આદિ, मे-મારા त्रिवत्सः-ત્રણ વાછરડાવાળા च-અને તેના વાછરડા આદિ, मे-મારી त्रिवत्सा-ત્રણ વાછરડાવાળી ગાય च-અને તેના ઘી આદિ, मे-મારો तुर्यवाट्-ત્રણવર્ષ પૂરા કરીને ચોથા વર્ષને પ્રાપ્ત બળદ આદિ च-અને તેનો ઉપયોગ કરવો, मे-મારી तुर्यौही-ચોથા વર્ષને પ્રાપ્ત ગાય च-અને તેની કેળવણી આ સર્વ પદાર્થો यज्ञेन-પશુઓના પાલનનાં વિધાનથી कल्पन्ताम्-સિદ્ધ થાય/સમર્થ બને. (૨૬)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ગાય, બકરી અને ઘેટાનું ગ્રહણ ઉપલક્ષણ માટે છે. જે મનુષ્યો પશુઓનું પાલન-વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ રસોથી આઢ્ય સંપન્ન રહે છે. (૨૬)

पृष्ठवाट् च मे पष्ठौही च मऽउक्षा च मे वशा च मऽऋषभश्च मे वेहच्च मेऽनड्वाँश्च मे धेनुश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्॥ २७॥

પદાર્થ : मे-મારા पष्ठवाट्-પીઠથી ભાર વહન કરનારા હાથી, ઊંટ આદિ च-અને તેના સંબંધી પદાર્થો मे-મારી पष्ठौही-પીઠથી ભાર વહન કરનારી ઘોડી, સાંઢણી આદિ च-અને તેને ઊંચકેલા પદાર્થો, मे-મારા उक्षा-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ વૃષભ = સાંઢ च-અને વીર્યને ધારણ કરનારી ગાય આદિ, मे-મારી वशा-વંધ્યા ગાય च-અને વીર્યહીન સાંઢ, मे-મારા ऋषभः-સમર્થ બળદ च-અને બળવાન ગાય, मे-મારી वेहत्-વીર્યપાત વાળા સાંઢ અથવા ગર્ભપાતવાળી ગાય च-અને સામર્થ્યહીન ગાય, मे-મારા अनड्वान्-હળ અને ગાડી આદિ વહનમાં સમર્થ બળદ च-અને ગાડીવાન આદિ, मे-મારી धेनुः-નવી દૂધ આપનારી ગાય च-અને તેને દોહનાર એ સર્વ यज्ञेन-પશુ કેળવણી રૂપ યજ્ઞ કર્મમાં कल्पन्ताम्-સમર્થ બને/સિદ્ધ થાય. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે પશુઓને સુશિક્ષિત કરીને-કેળવીને કાર્યોમાં લગાવે છે, તે પોતાના પ્રયોજનને સિદ્ધ કરીને સુખી બને છે. (૨૭)

वाजाय स्वाहा प्रसवाय स्वाहापिजाय स्वाहा क्रतवे स्वाहा वसवे स्वाहाऽहर्पतये स्वाहाह्ने मुग्धाय स्वाहा मुग्धाय वैनꣳशिनाय स्वाहा विनꣳशिन ऽआन्त्यायनाय स्वाहान्त्याय भौवनाय स्वाहा भुवनस्य पतये स्वाहाधिपतये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा। इयं ते राण्मित्राय यन्तासि यमन ऽ ऊर्जे त्वा वृष्ट्यै त्वा प्रजानां त्वाधि-पत्याय॥ २८॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાનમાં वाजाय-સંગ્રામને માટે स्वाहा-સત્યાચરણ, प्रसवाय-ઐશ્વર્ય વા સંતાનની ઉત્પત્તિ માટે स्वाहा-પુરુષાર્થ અને બલયુક્ત સત્યવાણી, अपिजाय-ગ્રહણ કરવા માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, क्रतवे-વિજ્ઞાન માટે स्वाहा-યોગાભ્યાસાદિનું અનુષ્ઠાન, वसवे-નિવાસ માટે स्वाहा-ધન પ્રાપ્ત કરાવનાર

આચરણ, अहर्पतये-દિવસોના પાલન કરનાર માટે स्वाहा-કાલ-વિજ્ઞાન આપનારી ક્રિયા, अह्ने-પ્રતિદિન વા मुग्धाय-મૂઢજનને માટે स्वाहा-વૈરાગ્યયુક્ત આચરણ, मुग्धाय-મોહને પ્રાપ્ત वैनंशिने-વિનાશીના બોધ માટે स्वाहा-સત્ય હિતોપદેશ કરનારી વાણી, वैनंशिने-વિનાશી સ્વભાવને માટે વા आन्त्यायनाय-અન્તમાં ઘર જેનું હોય તેને માટે स्वाहा-સત્યવાણી, आन्त्याय-નીચવર્ણમાં ઉત્પન્ન થયેલા [અન્તમાં વિદ્યમાન] भौवनाय-ભુવનોવાળા માટે स्वाहा-ઉત્તમ ઉપદેશ, भुवनस्य-જે સંસારમાં સર્વ પ્રાણી માત્ર હોય છે તેના पतये-સ્વામીને માટે स्वाहा-ઉત્તમ વાણી, अधिपतये-પાલકોના અધિષ્ઠાતાને માટે स्वाहा-રાજ્ય વ્યવહારના સૂચક આચરણ, प्रजापतये-પ્રજાના પાલક-રક્ષક માટે स्वाहा-રાજધર્મની પ્રકાશક નીતિનો સ્વીકાર કરે છે તથા જે ते-આપની इयम्-એ જે राट्-વિશેષ પ્રકાશમાન નીતિનો સ્વીકાર કરે છે અને જે यमनः-સદ્‌ગુણોના ગ્રહણકર્તા આપ मित्राय-મિત્રને માટે यन्ता-ઉચિત સત્કાર કરનાર असि-છે તે त्वा-આપને ऊर्जे-પરાક્રમ માટે त्वा-આપને, वृष्टयै-વર્ષા માટે અને त्वा-આપને प्रजानाम्-પાલનને યોગ્ય પ્રજાઓના आधिपत्याय-અધિપતિ થવા અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધર્મયુક્ત વાણી અને ક્રિયા-આચરણથી પ્રવૃત્ત થાય છે, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ જિતેન્દ્રિય છે, તેઓ રાજ્યની રક્ષા કરી શકે છે. (૨૮)

आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां ँ चक्षुर्यज्ञेन कल्पताँ श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पतां मनो यज्ञेन कल्पतामात्मा यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताँ स्वर्यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्। स्तोमश्च यजुश्च ऽ ऋक् च साम च बृहच्च रथन्तरञ्च। स्वर्देवाऽ-अगन्मामृता ऽ अभूम प्रजापतेः प्रजा ऽ अभूम वेट् स्वाहा॥ २९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! ते-તારી પ્રજાના સ્વામી થવા માટે आयुः-જેનાથી જીવન મળે છે તે આયુર્દા यज्ञेन-પરમેશ્વર અને શ્રેષ્ઠ મહાત્મા-વિદ્વાનોના સત્કારથી कल्पताम्-સમર્થ બને, प्राणः-જીવનનો હેતુ પ્રાણવાયુ यज्ञेन-સંગ કરવાથી कल्पताम्-સમર્થ બને, चक्षुः-નેત્ર, यज्ञेन-પરમેશ્વર વા વિદ્વાનના સત્કારથી कल्पताम्-સમર્થ બને, श्रोत्रम्-કાન यज्ञेन-ઈશ્વર વા વિદ્વાનના સત્કારથી कल्पताम्-સમર્થ બને, वाक्-વાણી यज्ञेन-ઈશ્વર વા વિદ્વાનના સત્કારથી कल्पताम्-સમર્થ બને.

मनः-સંકલ્પ-વિકલ્પ કરનાર મન-અન્તઃકરણ यज्ञेन-સંગતિથી कल्पताम्-સમર્થ બને, आत्मा-શરીર, ઈન્દ્રિય તથા પ્રાણ આદિ વાયુને કરનાર આત્મા यज्ञेन-સંગતિથી कल्पताम्-સમર્થ બને.

ब्रह्मा-ચારે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન यज्ञेन-સંગતિથી कल्पताम्-સમર્થ બને, ज्योतिः-ન્યાયનો પ્રકાશ यज्ञेन-સંગતિથી कल्पताम्-સમર્થ બને, स्वः-સુખ यज्ञेन-સંગતિથી कल्पताम्-સમર્થ બને, पृष्ठम्-જાણવાની ઈચ્છા यज्ञेन-પઠનરૂપ યજ્ઞથી कल्पताम्-સમર્થ બને, यज्ञः-સંગ કરવા યોગ્ય ધર્મ यज्ञेन-સત્ય વ્યવહારથી कल्पताम्-સમર્થ બને, स्तोमः-જેનાથી સ્તુતિ થાય છે તે અથર્વવેદ च-અને यजुः-જેનાથી જીવસત્કાર

આદિ કરે છે તે યજુર્વેદ च-અને ऋक्-સ્તુતિનો સાધક ઋગ્વેદ च-અને साम-સામવેદ च-અને बृहद्-અત્યંત મહાન વસ્તુ, च-અને સામવેદનો रथन्तरम्-રથન્તર નામક સ્તોત્ર च-પણ ઈશ્વર વા વિદ્વાનના यज्ञेन-સત્કારથી कल्पताम्-સમર્થ બને.

હે देवाः-વિદ્વાનો ! જેમ અમે લોકો अमृताः-જન્મ મરણના દુઃખથી રહિત બનીને स्वः-મોક્ષ સુખને अगन्म-પ્રાપ્ત કરીએ, प्रजापतेः-સમસ્ત સંસારના સ્વામી જગદીશ્વરની प्रजाः-પાલન કરવા યોગ્ય પ્રજા अभूम-બનીએ તથા वेट्-ઉત્તમ ક્રિયા અને स्वाहा-સત્યવાણીથી યુક્ત अभूम-બનીએ, તેમ તમે પણ બનો. (૨૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ધાર્મિક વિદ્વાનોનાં અનુકરણથી યજ્ઞને માટે સર્વસ્વ સમર્પિત કરીને પરમેશ્વરને ન્યાયાધીશ અને રાજા માનીને નિરંતર ન્યાય પરાયણ બનીને સુખી રહે. (૨૯)

वाजस्य नु प्रसवे मातरं महीमदितिं नाम वचसा करामहे। यस्यामिदं विश्वं भुवनमाविवेश तस्यां नो देवः सविता धर्म साविषत्॥ ३०॥

પદાર્થ : वाजस्य-વિવિધ ઉત્તમ અન્નની प्रसवे-ઉત્પત્તિમાં नु-જ વિદ્યમાન અમે मातरम्-માન્ય કરેલા હેતુ अदितिम्-કારણ રૂપે નિત્ય महीम्-ભૂમિને नाम-પ્રસિદ્ધિપૂર્વક वचसा-વાણી દ્વારા करामहे-યુક્ત અર્થાત્ સ્વીકાર કરીએ.

यस्याम्-જે પૃથિવીમાં इदम्-એ પ્રત્યક્ષ विश्वम्-સમસ્ત भुवनम्-સ્થૂલ જગત आविवेश-વ્યાપ્ત છે, तस्याम्-તે પૃથિવીમાં सविता-સમસ્ત ઐશ્વર્યયુક્ત देवः-શુદ્ધ સ્વરૂપ ઈશ્વર नः-અમારી धर्म-ઉત્તમ કર્મોની ધારણાને साविषत्-ઉત્પન્ન કરે. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે જગદીશ્વરે સર્વના આધારરૂપ જે ભૂમિ બનાવી છે, તે સર્વને ધારણ કરે છે, તે જ પરમેશ્વર સર્વ મનુષ્યો દ્વારા ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૩૦)

विश्वे ऽ अद्य मरुतो विश्व ऽ ऊती विश्वे भवन्त्वग्नयः समिद्धाः।
विश्वे नो देवा ऽ अवसागमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजो ऽ अस्मे॥ ३१॥

પદાર્થ : આ પૃથિવીમાં अद्य-આજ विश्वे-સર્વ मरुतः-વાયુ, विश्वे-સર્વ પ્રાણી અને પદાર્થ, विश्वे-સર્વ समिद्धाः-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત अग्नयः-અગ્નિની સમાન વિદ્વાન नः-અમારી ऊती-રક્ષા આદિથી યુક્ત भवन्तु-પ્રસિદ્ધ બનો.

विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાન લોકો अवसा-પાલન આદિના નિમિત્ત आ + गमन्तु-આવે અર્થાત્ આવીને અમારી રક્ષા કરે, જેથી अस्मे-અમારા માટે विश्वम्-સમસ્ત द्रविणम्-ધન અને वाजः-અન્ન अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આળસ છોડીને, વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, પૃથિવી પર પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ

સમગ્ર ઉત્તમ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૧)

वाजो॑ नः स॒प्त प्र॒दिश॒श्चत॑स्रो वा परा॒वतः॑।
वाजो॑ नो॒ विश्वै॑र्दे॒वैर्धन॑साताविहा॒व॑तु॥ ३२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ विश्वैः-સર્વ देवैः-વિદ્વાનોની સાથે वाजः-અન્નાદિ इह-આ લોકમાં धनसातौ-ધનનો વિભાગ કરવામાં नः-અમને अवतु-પ્રાપ્ત થાય. वा-અથવા नः-અમારા वाजः-શાસ્ત્ર જ્ઞાન અને વેગ सप्त-સાત प्रदिशः-જેનો સારી રીતે ઉપદેશ કરવામાં આવે, તે લોક-લોકાન્તરો વા परावतः-દૂર-દૂર જે चतस्त्रः-પૂર્વ આદિ ચાર દિશાનું अवतु-પાલન અર્થાત્ ઉક્ત સર્વ પદાર્થોની રક્ષા કરે વા તેને પ્રાપ્ત કરે, તેમ તમે પણ તેની નિરંતર રક્ષા કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પુષ્કળ અન્નથી પોતાના લોકોનું પાલન [કરવું જોઈએ] અને આ પૃથિવી પર સર્વ દિશાઓમાં સત્કીર્તિ-સુયશ ફેલાય, તે માટે સજ્જનોનો આદર કરવો જોઈએ [અર્થાત્ સત્પુરુષોનો સત્કાર કરવો જોઈએ.] (૩૨)

वाजो॑ नो ऽ अ॒द्य प्र सु॑वाति॒ दानं॒ वाजो॑ दे॒वाँ२ ऽ ऋ॒तुभिः॑ कल्पयाति।
वाजो॒ हि मा॒ सर्व॑वीरं ज॒जान॒ विश्वा॒ ऽ आशा॒ वाज॑पतिर्जयेयम्॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अद्य-આજ જે वाजः-અન્ન नः-અમારા માટે दानम्-દાન કરવા प्रसुवाति-પ્રેરિત કરે, જે वाजः-વેગરૂપ ગુણ ऋतुभिः-વસંત આદિ ઋતુઓ દ્વારા देवान्-વિદ્વાનો વા દિવ્ય ગુણોને कल्पयाति-પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ બનાવે, અથવા જે हि-જ वाजः-અન્ન सर्ववीरम्-સર્વ વીરોના હેતુ मा-મને जजान-પ્રસિદ્ધ કરે, એ સર્વથી હું वाजपतिः-અન્નાદિનો અધિષ્ઠાતા બનીને विश्वाः-સમસ્ત आशाः-દિશાઓને जयेयम्-જીતું અને ઉત્કૃષ્ટ બનાવું, તેમ તમે પણ જીતો. (૩૩)

ભાવાર્થ : આ પૃથિવી પર જેટલા પદાર્થો છે, તે સર્વમાં અન્ન જ શ્રેષ્ઠ છે, જેથી અન્નવાન-અન્નપતિ સર્વત્ર વિજયને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૩)

वाजः॑ पु॒रस्ता॑दु॒त म॑ध्य॒तो नो॒ वाजो॑ दे॒वान् ह॒विषा॑ वर्द्धयाति।
वाजो॒ हि मा॒ सर्व॑वीरं च॒कार॒ सर्वा॒ ऽ आशा॒ वाज॑पतिर्भवेयम्॥ ३४॥

પદાર્થ : જે वाजः-અન્ન हविषा-આપવા લેવા અને ખાવાથી पुरस्तात्-પ્રથમથી उत-તથા मध्यतः-મધ્યથી नः-અમારી वर्द्धयाति-વૃદ્ધિ કરે છે તથા જે वाजः-અન્ન देवान्-દિવ્યગુણોની वर्द्धयाति-વૃદ્ધિ કરે છે, જે हि-જ वाजः-અન્ન मा-મને सर्ववीरम्-જેથી સમસ્ત વીર પુરુષો બને છે એવો चकार-બનાવે છે, તેથી હું वाजपतिः-અન્ન આદિ પદાર્થોની રક્ષા કરનાર भवेयम्-બનું અને सर्वाः-સર્વ दिशः-દિશાઓને જીતું. (૩૪)

ભાવાર્થ : અન્ન જ સર્વ પ્રાણીઓની વૃદ્ધિ કરે છે. અન્નથી જ પ્રાણીઓ સર્વ દિશાઓમાં ભ્રમણ

કરે છે.

અન્ન વિના કાંઈપણ કરી શકાતું નથી. (૩૪)

सं मा॑ सृजामि॒ पय॑सा पृथि॒व्याः सं मा॑ सृजाम्य॒द्भिरोष॑धीभिः।
सो॒ऽहं वाज॑ꣳ सनेयमग्ने॥ ३५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-રસવિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! જે હું पृथिव्याः-પૃથિવીના पयसा-રસની સાથે मा-સ્વયંને संसृजामि-સંયુક્ત કરું છું, અથવા अद्भिः-ઉત્તમ શુદ્ધ જલ અને ओषधीभिः-સોમલતા આદિ ઔષધિઓની સાથે मा-સ્વયંને संसृजामि-સંયુક્ત કરું છું, सः-તે अहम्-હું वाजम्-અન્નનું सनेयम्-સેવન કરું, તેમ તું પણ કર. (૩૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ હું વૈદ્યક શાસ્ત્રની રીતિથી અન્ન, પાન આદિ કરીને સુખી રહું છું, તેમ તમે પણ પ્રયત્ન કરો. (૩૫)

पयः॑ पृथि॒व्यां पय॒ ऽ ओष॑धीषु॒ पयो॑ दि॒व्य॒न्तरि॑क्षे॒ पयो॑ धाः।
पय॑स्वतीः प्र॒दिश॑ः सन्तु॒ मह्य॑म्॥ ३६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તું पृथिव्याम्-પૃથિવી પર જે पयः-જલ વા દૂધ આદિના રસ ओषधीषु-ઔષધિઓમાં જે पयः-રસ दिवि-શુદ્ધ, નિર્મળ પ્રકાશ વા अन्तरिक्षे-સૂર્ય અને પૃથિવીના મધ્યવર્તી આકાશમાં જે पयः-રસને धाः-ધારણ કરે છે, તે સર્વ पयः-જલ વા દૂધના રસને હું પણ ધારણ કરું.

જે प्रदिशः-ઉત્તમ દિશાઓ વિદિશાઓ पयस्वतीः-અત્યંત રસયુક્ત તારા માટે सन्तु-થાય, તે मह्यम्-મારા માટે પણ થાય.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો જલ આદિ પદાર્થોથી સંયુક્ત પૃથિવી આદિથી ઉત્તમ અન્નોનો તથા રસોનો સંગ્રહ કરીને ખાય અને પીએ છે, તેઓ નીરોગી રહીને, સર્વ દિશાઓમાં કાર્ય સિદ્ધ કરી શકે છે અથવા આવી જઈ શકે છે અને દીર્ઘાયુ બને છે. (૩૬)

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्।
सर॑स्वत्यै वा॒चो य॒न्तुर्य॒न्त्रेणा॒ग्नेः साम्रा॑ज्येना॒भिषि॑ञ्चामि॥ ३७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ રાજન્ ! જેમ હું त्वा-આપને सवितुः-સકલ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર, देवस्य-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ ઈશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલ જગતમાં अश्विनोः-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાના પ્રતાપ અને શીતલતાની સમાન बाहुभ्याम्-ભુજાઓથી पूष्णः-પુષ્ટિ કરનાર પ્રાણના ધારણ-આકર્ષણની સમાન हस्ताभ्याम्-હાથોથી सरस्वत्यै-વિજ્ઞાનયુક્ત वाचः-વાણી यन्तुः-નિયંતાના अग्ने-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિની यन्त्रेण-કલા-કૌશલથી ઉત્પાદિત યંત્રથી, साम्राज्येन-સર્વ ભૂમિના રાજમાન સમ્રાટની સાર્વભૌમતાથી अभिषिञ्चामि-અભિષેક

કરું છું અર્થાત્ અધિકાર આપું છું, તેમ આપ પણ સુખથી મારો અભિષેક કરો-સીંચો. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા બનીને સૂર્ય આદિના ગુણ અને કર્મ સમાન સ્વભાવવાળા પુરુષને રાજા માનવો જોઈએ. (૩૭)

ऋताषाडृतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम।
स न ऽ इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा॥ ३८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ऋताषाट्-સત્ય વ્યવહાર કરનાર, ऋतधामा-યથાર્થ ધામ અને સ્થાનવાળો, गन्धर्वः-પૃથિવીને ધારણ કરનાર, अग्निः-અગ્નિની સમાન છે, તે तस्य-તેની ओषधयः-ઔષધિ अप्सरसः-જલમાં ગતિ કરનારી, मुदः-આનંદ પ્રદાન કરનારી नाम-નામવાળી-ખ્યાતિ રૂપ છે.

सः-તે नः-અમારા इदम्-એ ब्रह्म-બ્રહ્મને જાણનારા કુળ અને क्षत्रम्-રાજ્ય વા ક્ષત્રિય કુળની पातु-રક્ષા કરે. तस्मै-તે આપને માટે स्वाहा-સત્યવાણી, वाट्-જેનાથી વ્યવહારોને યથાયોગ્ય વર્તનમાં લાવે છે અને ताभ्यः-તે ઔષધિઓના માટે स्वाहा-સત્ય ક્રિયા-આચરણ કરે. (૩૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય અગ્નિની સમાન શત્રુઓનાં દાહક તથા ઔષધિઓની સમાન આનંદદાયક હોય તે જ સમસ્ત રાજ્યની રક્ષા કરી શકે છે. (૩૮)

सꣳहितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरस ऽ आयुवो नाम।
स न ऽ इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा॥ ३९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જે संहितः-સર્વ મૂર્તિમાન-ભૌતિક દ્રવ્યો વા સત્પુરુષની સાથે મળેલા सूर्यः-સૂર્ય गन्धर्वः-પૃથિવીને ધારણ કરનાર છે, तस्य-તેના मरीचयः-કિરણો अप्सरसः-જે અન્તરિક્ષમાં જાય છે, તે आयुवः-સર્વત્રથી સંયોગ અને વિયોગ કરાવનાર नाम-પ્રસિદ્ધ છે અર્થાત્ જલ આદિ પદાર્થોનો સંયોગ કરે છે અને છોડે છે-સંયોજક અને વિયોજક છે, ताभ्यः-તે અન્તરિક્ષમાં જનારાં-આવનારાં કિરણો માટે विश्वसामा-જેની પાસે સામવેદ વિદ્યમાન છે તે આપ स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી કાર્ય સિદ્ધિ કરો, જેથી તે યથાયોગ્ય કામમાં આવે.

જે આપ तस्मै-તે સૂર્યને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા-આચરણને સારી રીતે યુક્ત કરો છો, सः-તે આપ नः-અમારા इदम्-એ ब्रह्म-વિદ્વાનો અને क्षत्रम्-શૂરવીરોના કુળ તથા वाट्-કામો નિર્વાહ કરવા पातु-રક્ષા કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સૂર્યના કિરણોનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરીને વિદ્યા અને શૂરવીરતાની વૃદ્ધિ કરીને પોતાના પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૩૯)

सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वस्तस्य नक्षत्राण्यप्सरसो भेकुरयो नाम।

स नं ऽ इदं ब्रह्मं क्षुत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा॥ ४०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सूर्यरश्मिः-સૂર્યનાં કિરણોવાળા सुषुम्णः-ઉત્તમ સુખના હેતુ, गन्धर्वः-ગૌ = સૂર્યના કિરણોને ધારણ કરનાર चन्द्रमाः-સર્વને આનંદયુક્ત કરનાર ચંદ્રલોક છે, तस्य-તેના જે नक्षत्राणि-અશ્વિની આદિ નક્ષત્રો અને अप्सरसः-આકાશમાં વિદ્યમાન કિરણો भेकुरयः-પ્રકાશ કરનાર તરીકે नाम-પ્રસિદ્ધ છે, તે ચન્દ્રની અપ્સરા છે.

सः-તે જેમ नः-અમારી इदम्-એ ब्रह्म-ભણાવનાર બ્રાહ્મણ-અધ્યાપક કુળની અને क्षत्रम्-દુષ્ટોનો નાશ કરનાર ક્ષત્રિય કુળની पातु-રક્ષા કરે. तस्मै-તે રીતે ચંદ્રલોક માટે वाट्-કાર્યનિર્વાહ પૂર્વક स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા કરું અને ताभ्यः-તે કિરણો માટે स्वाहा-તમારે ઉત્તમ ક્રિયા [પ્રયોગ]કરવો જોઈએ.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ચન્દ્રમા આદિથી પણ તેની વિદ્યા દ્વારા સુખ સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૪૦)

इषिरो विश्वव्यंचा वातों गन्धर्वस्तस्यापों ऽ अप्सरस ऽ ऊर्जो नामं।
स नं ऽ इदं ब्रह्मं क्षुत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा॥ ४१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે इषिरः-જે ઈચ્છા = કામના કરવા યોગ્ય, विश्वव्यचाः-વા સમસ્ત સંસારમાં વ્યાપ્ત, गन्धर्वः-ગૌ = પૃથિવી અને કિરણોને ધારણ કરનાર वातः-સર્વ સ્થાનમાં ગતિશીલ વાયુ છે, तस्य-તેના જે आपः-જલ અને પ્રાણ, અપાન, ઉદાન, સમાન, વ્યાન આદિ પ્રકાર છે, તે अप्सरसः-અન્તરિક્ષ અને જલમાં ગતિ કરનાર તથા ऊर्जः-બળ અને પરાક્રમ આપનાર नाम-પ્રસિદ્ધ છે.

જેમ सः-તે नः-અમારા માટે इदम्-એ ब्रह्म-સત્ય ઉપદેશથી સર્વની ઉન્નતિ કરનાર બ્રાહ્મણ કુળ તથા क्षत्रम्-વિદ્યાવર્ધક રાજકુળની पातु-રક્ષા કરે. તેમ તમે પણ આચરણ કરો. तस्मै-અને તે વાયુ માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી वाट्-પ્રાપ્તિ તથા ताभ्यः-તે જલ આદિ માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા વા વાણીને યુક્ત કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : શરીરમાં જેટલી ચેષ્ટા, બળ અને પરાક્રમ ઉત્પન્ન થાય છે, તે સર્વ વાયુથી જ ઉત્પન્ન થાય છે. વાયુ જ પ્રાણ રૂપ, ગન્ધર્વ અર્થાત્ સર્વને ધારણ કરનાર છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૪૧)

भुज्युः सुपर्णो युज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणा ऽ अप्सरसं स्तावा नामं।
स नं ऽ इदं ब्रह्मं क्षुत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा॥ ४२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે भुज्युः-સુખોના ભોગના નિમિત્ત, सुपर्णः-ઉત્તમ પાલનનો હેતુ, गन्धर्वः-વાણીને ધારણ કરનાર, यज्ञः-સંગતિ કરવા યોગ્ય યજ્ઞ કર્મ આદિ છે, तस्य-તેની दक्षिणाः-સુપાત્ર શ્રેષ્ઠ ધર્માત્મા વિદ્વાનોને દક્ષિણા અપાય છે, તે अप्सरसः-પ્રાણોમાં પ્રાપ્ત થનારી स्तावाः-પ્રશંસાને યોગ્ય नाम-પ્રસિદ્ધ છે.

सः-તે જેમ नः-અમારા માટે इदम्-એ ब्रह्म-વિદ્વાન બ્રાહ્મણ તથા क्षत्रम्-ચક્રવર્તી રાજાની पातु-રક્ષા કરે, તેમ તમે પણ અનુષ્ઠાન-આચરણ કરો. तस्मै-તેને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાની પ્રાપ્તિ તથા वाट-સુખ પ્રાપ્તિના નિમિત્ત ताभ्यः-ઉક્ત દક્ષિણાઓ માટે स्वाहा-ઉત્તમ રીતિથી સત્ય આચરણનો પ્રયોગ-વ્યવહાર કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ પ્રતિદિન કરે છે, તેઓ સમસ્ત સંસારના સુખોની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૪૨)

प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वस्तस्य ऽ ऋक्सामान्यप्सरसऽएष्टयो नाम।
स न ऽ इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा॥ ४३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે विश्वकर्मा-સમસ્ત કર્મોના હેતુ, प्रजापतिः-પ્રજાનું પાલન કરનાર સ્વામી મનુષ્ય છે, तस्य-તેના गन्धर्वः-વાણી આદિને ધારણ કરનાર, मनः-જ્ઞાનનું સાધન અન્તઃકરણ, ऋक्सामानि-ઋગ્વેદ અને સામવેદના મંત્રો, अप्सरसः-હૃદયાકાશમાં વ્યાપ્ત પ્રાણ આદિ પદાર્થોની ગતિ કરનાર, एष्टयः-જે સર્વત્રથી વિદ્વાનોનો સત્કાર, સત્સંગ અને વિદ્યાદાન કરનાર नाम-પ્રસિદ્ધ છે.

જેમ सः-તે नः-અમારા માટે इदम्-એ ब्रह्म-વેદ અને क्षत्रम्-ધનુર્વેદની पातु-રક્ષા કરે, તેમ तस्मै-તેને માટે स्वाहा-સત્યવાણી वाट्-ધર્મપ્રાપ્તિપૂર્વક ताभ्यः-તે ઉક્ત પદાર્થો માટે स्वाहा-સત્ય આચરણથી ઉપકાર કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પુરુષાર્થી, વિચારશીલ અને વેદવિદ્યાના જાણનારા હોય છે, તેઓ જ સંસારના ભૂષણ રૂપ છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૪૩)

स नो भुवनस्य पते प्रजापते यस्य त ऽ उपरि गृहा यस्य वेह।
अस्मै ब्रह्मणेऽस्मै क्षत्राय महि शर्म यच्छ स्वाहा॥ ४४॥

પદાર્થ : હે भुवनस्य-ઘરના पते-સ્વામી प्रजापते-પ્રજાના રક્ષક પુરુષ ! इह-આ સંસારમાં यस्य-જે ते-તારા उपरि-ઉત્કૃષ્ટ વ્યવહારમાં गृहाः-પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર ગૃહસ્થ મનુષ્ય આદિ वा-અથવા यस्य-જેની સર્વ ક્રિયા ઉત્તમ છે, सः-તે તું नः-અમારા अस्मै-એ ब्रह्मणे-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા તથા अस्मै-એ क्षत्राय-રાજધર્મમાં નિરંતર રહેનાર ક્ષત્રિય માટે स्वाहा-સત્ય આચરણથી महि-મહાન शर्म-ઘર અને સુખને यच्छ-પ્રદાન કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનો અને ક્ષત્રિયોનાં કુળની ઉન્નતિ કરે છે, તેઓ મહાન સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

समुद्रोऽसि नभस्वानार्द्रदानुः शम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहा मारुतोऽसि
मरुतां गणः शम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहा अवस्यूरसि दुवस्वाञ्छम्भूर्मयोभूरभि

मा॑ वाहि॒ स्वाहा॑॥ ४५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું नभस्वान्-જેની સમીપ બહુ જલ आर्द्रदानुः-અને શીતલ-આર્દ્રતા આદિ ગુણોના દાતા. समुद्रः-જેમાં ઉલટા-સુલટું જલ પડે છે તે સમુદ્ર સમાન असि-છે, તે स्वाहा-સત્ય આચરણથી शम्भूः-ઉત્તમ સુખ અને मयोभूः-સામાન્ય સુખના ઉત્પાદક બનીને मा-મને अभिवाहि-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

જે તું मारुतः-વાયુના જ્ઞાતા, मरुताम्-વિદ્વાનોના गणः-સમૂહની સમાન असि-છે, તે स्वाहा-સત્ય આચરણથી शम्भूः-વિશેષ પર જન્મનું સુખ અને मयोभूः-આ જન્મમાં સામાન્ય સુખને ઉત્પન્ન કરનાર બનીને मा-મને अभिवाहि-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

જે તું दुवस्वान्-પ્રશંસિત સત્કારથી યુક્ત अवस्यूः-પોતાની રક્ષાના ઈચ્છુક પુરુષની સમાન असि-છે, તે स्वाहा-શ્રેષ્ઠ આચરણથી शम्भूः-વિશેષ સુખ અને मयोभूः-સામાન્ય પોતાના સુખને ઉત્પન્ન કરનાર બનીને मा-મને अभिवाहि-સર્વથી પ્રાપ્ત થાય. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સમુદ્રની સમાન ગંભીર, રત્નોથી સંપન્ન, ઋજુ = સરળ, વાયુ સમાન બળવાન, વિદ્વાન્ સમાન પરોપકારી અને પોતાના આત્મા સમાન સર્વના રક્ષક છે;

તેઓ જ સર્વનું કલ્યાણ અને સુખ કરી શકે છે. (૪૫)

यास्ते॑ ऽ अग्ने॒ सूर्ये॒ रुचो॒ दिव॑मात॒न्वन्ति॑ र॒श्मिभिः॑।
ताभि॑र्नो॑ ऽ अ॒द्य सर्वा॑भी रु॒चे जना॑य नस्कृधि॥ ४६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! याः-જે सूर्ये-સૂર્ય વા પ્રાણમાં रुचः-દીપ્તિ વા પ્રીતિ છે અને જે रश्मिभिः-પોતાના કિરણોથી दिवम्-પ્રકાશને आतन्वन्ति-સર્વત્ર ફેલાવે છે, तामिः-તે सर्वाभिः-સર્વ ते-પોતાની દીપ્તિ અને પ્રીતિથી अद्य-આજે नः-અમને સંયુક્ત કરો અને रुचे-પ્રીતિ કરનારા जनाय-મનુષ્યને માટે नः-અમને कृधि-નિયત કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર સૂર્ય આદિ પ્રકાશકોના પણ પ્રકાશક છે, તેમ अनूचान-*ચારે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન વિદ્વાનોને પણ વિદ્યા પ્રદાન કરનાર છે.*

જેમ ઈશ્વર આ સંસારમાં સર્વની સત્યમાં રુચિ અને અસત્યમાં અરુચિ ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ પણ આચરણ કરે. (૪૬)

या वो॑ देवाः॒ सूर्ये॒ रुचो॒ गोष्वश्वे॑षु॒ या रुच॑ः।
इन्द्रा॑ग्नी॒ ताभिः॒ सर्वा॑भी॒ रुचं॑ नो धत्त बृहस्पते॥ ४७॥

પદાર્થ : बृहस्पते-મોટા પદાર્થોના પાલક ઈશ્વર અને देवाः-વિદ્વાન મનુષ્યો ! याः-જે वः-તમારી सूर्ये-ચરાચરમાં વ્યાપ્ત પરમેશ્વરમાં અર્થાત્ ઈશ્વરની પોતાનામાં અને તમે વિદ્વાનોની ઈશ્વરમાં रुचः-

રુચિ અર્થાત્ પ્રીતિ છે, વા याः-જે એ गोषु-કિરણ, ઇન્દ્રિયો અથવા દૂધ આપનારી ગાયોમાં તથા अश्वेषु-અગ્નિ અને ઘોડાઓ આદિમાં रुचः-પ્રીતિ છે, અથવા જે એમાં इन्द्राग्नी-પ્રસિદ્ધ વિદ્યુત્ અને અગ્નિ વિદ્યમાન છે, તે પણ ताभिः-તે सर्वाभिः-સર્વ પ્રીતિઓથી नः-અમારામાં रुचम्-પ્રીતિનું धत्त-સ્થાપન કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર ગાય આદિના પાલનમાં અને પદાર્થ વિદ્યામાં સર્વ મનુષ્યોને પ્રેરિત કરે છે, તેમ જ વિદ્વાનો પણ આચરણ કરે. (૪૭)

रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचꣳ राजसु नस्कृधि।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम्॥ ४८॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! આપ नः-અમારા ब्राह्मणेषु-બ્રહ્મવેત્તા બ્રાહ્મણો-વિદ્વાનોમાં रुचा-પ્રેમથી रुचम्-પ્રીતિનું धेहि-સ્થાપન કરો, नः-અમારા राजसु-ક્ષત્રિય રાજપુત્રોમાં रुचा-પ્રીતિનું પ્રીતિથી रुचम्-પ્રીતિનું कृधि-સ્થાપન કરો विश्येषु-પ્રજાજનોમાં વિદ્યમાન વૈશ્યોમાં તથા शूद्रेषु-શૂદ્રોમાં रुचा-પ્રેમથી रुचम्-પ્રીતિનું સ્થાપન કરો, અને मयि-મારામાં પણ પ્રેમથી रुचम्-પ્રીતિને धेहि-સ્થાપિત કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર પક્ષપાત રહિત બ્રાહ્મણ આદિ વર્ણો પ્રત્યે સમાન પ્રેમ કરે છે, તેમ જ વિદ્વાન પણ સમાન રૂપથી પ્રેમ કરે.

જેઓ ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી વિરુદ્ધ છે, તેઓ નીચ અને તિરસ્કારને યોગ્ય છે. (૪૮)

तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳस मा न ऽ आयुः प्रमोषीः॥ ४९॥

પદાર્થ : હે उरुशंस-અનેકની પ્રશંસા કરનારા वरुण-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ ! ब्रह्मणा-વેદ દ્વારા वन्दमानः-સ્તુતિ કરતાં यज्ञमानः-યજ્ઞ કરનાર अहेडमानः-સત્કારાયેલા પુરુષ हविर्भिः-હોમ કરવા યોગ્ય સારા બનાવેલા પદાર્થોથી જે आशास्ते-આશા કરે છે तत्-તેને હું यामिः-પ્રાપ્ત કરું.

જે ઉત્તમ आयुः-સો વર્ષની આયુને त्वा-તારો આશ્રય કરીને પ્રાપ્ત કરું, तत्-તેને તું પણ પ્રાપ્ત કર, તું इह-આ સંસારમાં ઉક્ત આયુને बोधि-જાણ અને તું नः-અમારી તે આયુની मा + प्र + मोषीः-ચોરી નહિ કર. (૪૯)

ભાવાર્થ : આપ્ત વિદ્વાન જનો જેની ઈચ્છા કરે, તેની મનુષ્યો પણ કામના કરે. કોઈ પણ મનુષ્યે કોઈ વિદ્વાનનો અનાદર ન કરવો જોઈએ.

સ્ત્રી અને પુરુષ-અબ્રહ્મચર્ય, અયુક્ત આહાર-વિહાર, વ્યભિચાર અને અત્યંત વિષયાશક્તિ આદિથી આયુનો કદીપણ હ્રાસ ન કરે. (૪૯)

स्वर्ण घर्मः स्वाहा स्वर्णार्कः स्वाहा। स्वर्ण शुक्रः स्वाहा। स्वर्ण ज्योतिः

स्वाहा। स्वर्ण सूर्यः स्वाहा॥ ५०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ स्वाहा-સત્ય ક્રિયા =આચરણથી स्वः-સુખની न-સમાન अर्कः-અગ્નિ હોય, स्वाहा-સત્ય ક્રિયાથી स्वः-સુખની न-સમાન शुक्रः-વાયુ હોય, स्वाहा-સત્યક્રિયાથી स्वः-સુખની न-સમાન ज्योतिः-વિદ્યુત્‌ની ચમક હોય, स्वाहा-સત્યક્રિયાથી स्वः-સુખની न-સમાન સૂર્ય હોય, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૫૦)

ભાવાર્થ : યજ્ઞ કરનારા મનુષ્યો સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોના હોમથી સર્વ વાયુ આદિ પદાર્થોને શુદ્ધ કરી શકે છે, જેથી નીરોગતા-રોગરહિતથી સર્વની દીર્ઘ આયુ થાય. (૫૦)

अग्निं युनज्मि शवसा घृतेन दिव्यꣳ सुपर्णं वयसा बृहन्तम्।
तेन वयं गमेम ब्रध्नस्य विष्टपꣳस्वो रुहाणा ऽ अधि नाकमुत्तमम्॥ ५१॥

પદાર્થ : હું वयसा-આયુની बृहन्तम्-મહાન, दिव्यम्-શુભગુણોમાં પ્રસિદ્ધ થનાર, सुपर्णम्-ઉત્તમ પાલન અને પૂર્તિ કરનાર, अग्निम्-અગ્નિને शवसा-બળદાયક घृतेन-ઘી આદિ સુગંધિત પદાર્થોથી युनज्मि-યુક્ત કરું છું.

तेन-તેથી स्वः-સુખથી रुहाणाः-આરૂઢ થયેલા वयम्-અમે अध्नस्य-મહાન विष्टपम्-જેથી સામાન્ય અને ભાવથી પ્રવિષ્ટ થયેલા જીવોનું પાલન થાય છે, તે વ્યવહારને અને उत्तमम्-શ્રેષ્ઠ नाकम्-દુઃખરહિત એવું સુખ રૂપ સ્થાન =મોક્ષને अधिगमेम-પ્રાપ્ત કરીએ. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિમાં સંસ્કૃત-વિશુદ્ધ, સુગંધિત આદિથી યુક્ત દ્રવ્યોને નાખીને, વાયુ આદિની શુદ્ધિ દ્વારા સર્વને સુખી કરે છે, તેઓ અતિ ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૧)

इमौ तै पक्षावजरौ पतत्रिणौ याभ्याꣳ रक्षाꣳस्यपहꣳस्यग्ने।
ताभ्यां पतेम सुकृतामु लोकं यत्र ऽ ऋषयो जग्मुः प्रथमजाः पुराणाः॥ ५२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! ते-આપના જે इमौ-એ पतत्रिणौ-ઉચ્ચશ્રેણીને પ્રાપ્ત થયેલા अजरौ-અવિનાશી पक्षौ-કાર્ય-કારણરૂપ સમીપના પદાર્થ છે, याभ्याम्-જેનાથી આપ रक्षांसि-દુષ્ટ પ્રાણીઓ વા દોષોને अपहंसि-દૂર કરો છો, ताभ्याम्-તેથી उ-વિચારપૂર્વક તે सुकृताम्-શુભ કર્મો કરનાર સજ્જનોના लोकम्-જોવા યોગ્ય આનંદને અમે पतेम-પ્રાપ્ત કરીએ.

यत्र-જે આનંદમાં प्रथमजाः-સર્વ વ્યાપ્ત પરમેશ્વરમાં પ્રસિદ્ધ વા અતિ વિસ્તૃત વેદમાં પ્રસિદ્ધ અર્થાત્ તેને જાણવાથી કીર્તિ પ્રાપ્ત કરેલ पुराणाः-પ્રથમ અધ્યયન સમયમાં નવીન ऋषयः-વેદાર્થ વેત્તા ઋષિઓ जग्मुः-પહોંચ્યા છે. (૫૨)

ભાવાર્થ : જેમ આપ્ત વિદ્વાનજનો દોષોનો નાશ કરીને, ધર્મ આદિ ઉત્તમ ગુણોને ગ્રહણ કરીને તથા ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરીને આનંદયુક્ત બને છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ તેને પ્રાપ્ત કરીને સુખી બનવું

જોઈએ. (૫૨)

इन्दुर्दक्षः श्येन ऽ ऋतावा हिरण्यपक्षः शकुनो भुरण्युः।
महान्त्सधस्थे ध्रुव ऽ आ निषत्तो नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः॥ ५३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન સભાપતિ ! જે આપ इन्दुः-ચન્દ્રમાની સમાન શીતલ-આર્દ્ર સ્વભાવ યુક્ત, दक्षः-બળ અને ચતુરતાયુક્ત, श्येनः-બાજ પક્ષી સમાન પરાક્રમી, ऋतावा-સત્યથી સંબંધ રાખનાર, हिरण्यपक्षः-સુવર્ણનો સ્વીકાર કરનાર, शकुनः-શક્તિમાન, भुरण्युः-સર્વના પાલક, महान्-મહાન છો, सधस्थे-સભા સ્થાનમાં आनिषत्तः-નિરંતર વિરાજમાન ध्रुवः-નિશ્ચલ બનીને मा-મને हिंसीः-મારો मा-નહિ, ते-આપને માટે અમારો नमः-સત્કાર-નમસ્કાર अस्तु-મળે. (૫૩)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં વિદ્વાનજનો સ્થિર બનીને સર્વ વિદ્યાર્થીઓને સુશિક્ષિત કરે, જેથી તેઓ હિંસક બને નહીં. (૫૩)

दिवो मूर्द्धासि पृथिव्या नाभिरूर्गपामोषधीनाम्।
विश्वायुः शर्म सप्रथा नमस्पथे॥ ५४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ दिवः-પ્રકાશ અર્થાત્ પ્રતાપના मुर्द्धा-શિર સમાન છો, पृथिव्याः-પૃથિવીની नाभिः-નાભિ-બંધન સમાન છો, अपाम्-જલો તથા ओषधीनाम्-ઔષધિઓનાં ऊर्कः-રસ સમાન છો, विश्वायुः-પૂર્ણ આયુ-સો વર્ષ જીવનાર અને सप्रथाः-કીર્તિયુક્ત असि-છો, તે આપ पथे-સન્માર્ગના માટે नमः-અન્ન, शर्म-શરણ અને સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાયવાન, ક્ષમાવાન, ઔષધોનું સેવન કરનારા, યુક્ત આહાર-વિહારવાળા અને જિતેન્દ્રિય હોય છે, તેઓ સો વર્ષની આયુ પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૪)

विश्वस्य मूर्द्धन्नधि तिष्ठसि श्रितः समुद्रे ते हृदयमप्स्वायुरपो दत्तोदधिं भिन्त। दिवस्पर्जन्यादन्तरिक्षात्पृथिव्यास्ततो नो वृष्ट्याव॥ ५५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ विश्वस्य-સમસ્ત સંસારના मूर्द्धन्-શિર પર श्रितः-વિરાજમાન બનીને સૂર્ય સમાન अधि + तिष्ठसि-અધિકાર પ્રાપ્ત છો, જે ते-આપના समुद्रे-અન્તરિક્ષ સમાન વ્યાપક પરમેશ્વરમાં हृदयम्-મન अप्सु-પ્રાણોમાં आयुः-જીવન છો, તે આપ अपः-પ્રાણોને दत्त-આપો છો, उदधिम्-સમુદ્રનું भिनत्सि-ભેદન કરો છો.

જેથી સૂર્ય दिवः-પ્રકાશથી अन्तरिक्षात्-આકાશથી पर्जन्यात्-વર્ષાના યોગથી સર્વ ચરાચર પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે ततः-તેથી અર્થાત્ સૂર્યની સમાન नः-અમારી अव-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન સુખોની વર્ષા કરનાર અને ઉત્તમ આચરણવાળા હોય છે, તેઓ સર્વને સુખી કરી શકે છે. (૫૫)

इ॒ष्टो य॒ज्ञो भृग॑भिराशी॒र्दा वसु॑भिः। तस्य॑ नऽइ॒ष्टस्य॑ प्री॒तस्य॒ द्रवि॑णे॒हाग॑मेः॥ ५६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે भृगुभिः-પરિપૂર્ણ વિજ્ઞાનયુક્ત તથા वसुभिः-પ્રથમ કોટિના વિદ્વાનો દ્વારા आशीर्दाः-ઇચ્છા સિદ્ધિને આપનાર यज्ञः-યજ્ઞ इष्टः-કાર્યો છે, तस्य-તે इष्टस्य-કરેલ प्रीतस्य-મનોહર યજ્ઞના સાનિધ્યથી इह-આ સંસારમાં આપ नः-અમારા द्रविण-ધનને आ + गमेः-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની સમાન શ્રેષ્ઠ પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં પુષ્કળ શ્રી = ધનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૬)

इ॒ष्टोऽअ॒ग्निराहु॑तः पिपर्त्तु नऽइ॒ष्टꣳह॒विः। स्व॒गेदं दे॒वेभ्यो॒ नमः॑॥ ५७॥

પદાર્થ : हविः-સંસ્કાર કરેલ પદાર્થો દ્વારા आहुतः-સારી રીતે તૃપ્ત વા હવન કરેલ इष्टः-સત્કાર કરેલા વા આહુતિઓથી વૃદ્ધિ પામેલ अग्निः-એ સભા આદિના અધ્યક્ષ વિદ્વાન્ વા અગ્નિ नः-અમારા इष्टम्-સુખ વા સુખના સાધનોને पिपर्त्तु-પૂર્ણ કરે વા અમારી રક્ષા-પાલન કરે इदम्-એ स्वगा-પોતાના જનોને પ્રાપ્ત થનાર नमः-અન્ન વા સત્કાર देवेभ्यः-વિદ્વાનનાં માટે अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. (૫૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો દ્વારા અગ્નિમાં જે સંસ્કૃત-ઉત્તમ પ્રકારથી તૈયાર કરેલ દ્રવ્ય હોમવામાં આવે છે, તે આ લોકમાં અધિક અન્ન ઉત્પન્ન કરનાર બને છે. તેથી તે અન્ન દ્વારા વિદ્વાનોનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૫૭)

यदाकू॑तात्स॒मसु॑स्रोद्धृदो वा॒ मन॑सो वा॒ सम्भृ॑तं॒ चक्षु॑षो वा।
तद॑नु॒ प्रेत॑ सु॒कृता॑मु लो॒कं यत्र॒ऽऋष॑यो ज॒ग्मुः प्र॑थम॒जाः पु॑रा॒णाः॥ ५८॥

પદાર્થ : હે સત્ય અને અસત્યના જિજ્ઞાસુ જનો ! તમે यत्-જે आकूतात्-ઉત્સાહથી, हृदः-હૃદયથી, वा-અથવા પ્રાણથી, मनसः-મનથી, वा-અથવા બુદ્ધિ આદિથી, चक्षुषः-નેત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી वा-અથવા શ્રોત આદિ ઇન્દ્રિયોથી सम्भृतम्-સારી રીતે ધારણ કરેલ છે અર્થાત્ નિશ્ચય પૂર્વક ઠીક જોયેલું, સાંભળેલું તથા અનુમાન કરેલું છે, तत्-તે समसुस्रोत्-ઉત્તમ રીતિથી પ્રાપ્ત કરો.

તેથી અમારા प्रथमजाः-અમારી અપેક્ષા પ્રથમ ઉત્પન્ન થયેલાં पुराणाः-અમારાથી પ્રાચીન ऋषयः-વેદ વિદ્યાના વેત્તા પરમ યોગી ઋષિજન यत्र-જ્યાં जग्मुः-પહોંચ્યા છે, તે सुकृताम्-સુકૃતિ મોક્ષ ઇચ્છુક સજ્જનોને उ-જ लोकम्-પ્રત્યક્ષ સુખ સમૂહ વા મોક્ષપદને अनुप्रेत-સુખપૂર્વક પ્રાપ્ત કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય જાણવા ઇચ્છે, ત્યારે (૧) ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ, (૨) સૃષ્ટિક્રમ, (૩) પ્રત્યક્ષ આદિ પ્રમાણો, (૪) આપ્તજનોનું આચરણ અને (૫) આત્મા તથા મનને અનુકૂળ હોય, તે તે સત્ય અને [તેથી વિપરીત] અન્ય જે હોય તે અસત્ય છે, તેવો નિશ્ચય કરે.

જેઓ આ રીતે ધર્મની પરીક્ષા કરીને આચરણ કરે છે, તેઓ અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૮)

एतꣳ सधस्थ परि ते ददामि यमावहाच्छेवधिं जातवेदाः।
अन्वागन्ता यज्ञपतिर्वोऽअत्र तꣳ स्म जानीत परमे व्योमन्॥ ५९॥

પદાર્થ : હે ઈશ્વરના જ્ઞાનના જિજ્ઞાસુ જનો ! અને હે सधस्थ-સમાન સ્થાનમાં રહેનારા સજ્જનો ! जातवेदाः-જે જ્ઞાન પ્રાપ્ત છે, તે વેદાર્થનાં જ્ઞાતા, यज्ञपतिः-યજ્ઞનું પાલન કરનારા સમાન વિદ્યમાન પુરુષ यम्-જે शेवधिम्-સુખનિધિ પરમેશ્વરને आवहात्-શ્રેષ્ઠ રીતે પ્રાપ્ત કરે, एतम्-એને अत्र-અહીં परमे-વિશાળ व्योमन्-આકાશમાં વ્યાપ્ત પરમાત્માને હું ते-તારા માટે જેમ परि + ददामि-સર્વ રીતે પ્રદાન કરું છું, ઉપદેશ કરું છું તથા अन्वागन्ता-ધર્મનો અનુગામી હું वः-તમારા બધાને માટે જે પરમેશ્વરનો स्म-ઉપદેશ કરું છું, तम-તેને તમે जानीत-જાણો. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોને અનુકૂળ આચરણ કરે છે, તેઓ સર્વ વ્યાપક, અન્તર્યામી ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૯)

एतं जानाथ परमे व्योमन्देवाः सधस्था विद रूपमस्य।
यदागच्छात्पथिभिर्देवयानैरिष्टापूर्त्ते कृणवाथाविरस्मै॥ ६०॥

પદાર્થ : હે सधस्थाः-સાથે બેઠેલાં देवाः-વિદ્વાનો તમે परमे-વિશાળ व्योमन-આકાશમાં વ્યાપ્ત एतम्-એ પરમાત્માને जानाथ-જાણો. अस्य-એના रूपम्-સત્ય, ચૈતન્યમાત્ર, આનંદમય સ્વરૂપને विद-જાણો.

यत्-જે સચ્ચિદાનંદ-લક્ષણ પરમેશ્વરને देवयानैः-ધાર્મિક વિદ્વાનોના पथिभिः-માર્ગોથી પુરુષ आगच्छात्-પ્રાપ્ત થાય છે, अस्मै-એ પરમાત્મા માટે इष्टापूर्ते-વેદોક્ત યજ્ઞાદિ કર્મ અને તેના સાધક સ્માર્ત કર્મને आविः-પ્રકાશિત-પ્રસિદ્ધ कृणवाथ-કર્યા કરો. (૬૦)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો વિદ્વાનોનો સંગ, યોગાભ્યાસ અને ધર્માચરણથી પરમેશ્વરને અવશ્ય જાણે, અન્યથા તેઓ યજ્ઞ આદિ ઈષ્ટ તથા સર્વજનોપયોગી નિર્માણ આદિ 'पूर्त' ને સિદ્ધ કરી શકતા નથી અને મોક્ષને પણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૬૦)

उद् बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥ ६१॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિની સમાન વિદ્યમાન ઋત્વિક પુરુષ ! त्वम्-તું उद + बुध्यस्व-ઉઠ, પ્રબોધને પ્રાપ્ત કર, प्रति + जागृहि-યજમાનને અવિદ્યા રૂપ નિદ્રાથી છોડાવીને વિદ્યામાં જાગરુક કર, તું च-અને अयम्-એ બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ કરનાર યજમાન બન્ને इष्टापूर्ते-યજ્ઞ સિદ્ધિ કર્મ અને તેની સામગ્રીને संसृजेथाम्-ઉત્પન્ન કરો.

હે विश्वे-સમગ્ર देवाः-વિદ્વાનો च-અને यजमानः-વિદ્યા આપનારા તથા યજ્ઞ કરનારા યજમાનો !

તમે સર્વ अस्मिन्-એ सधस्थे-એક સ્થાન સભા ભવનમાં उत्तरस्मिन्-ઉત્તમ આસન પર अधि + सीदत-બેસો.(૬૧)

ભાવાર્થ : જે ચૈતન્યવાળા બુદ્ધિમાન વિદ્યાર્થી હોય, તેને અધ્યાપકોએ ઉત્તમ રીતિથી ભણાવવા જોઈએ.

જે વિદ્યા પ્રાપ્તિના ઈચ્છુક હોય, જે અધ્યાપક પદને યોગ્ય આચરણયુક્ત [પ્રધાન અધ્યાપક] હોય અને જે તેને આધીન અધ્યાપકો હોય, તેઓ પરસ્પર પ્રેમથી નિરંતર વિદ્યાની ઉન્નતિ કરે.

જેઓ તેથી ભિન્ન અન્ય પ્રશંસનીય વિદ્વાન્ હોય, તેઓ તેની નિરંતર પરીક્ષા કરતા રહે, જેથી એ વિદ્યાની વૃદ્ધિમાં નિરંતર પ્રયત્નશીલ રહે.

ઋત્વિક્ અને યજમાન આદિ પણ તેવા જ હોય. (૬૧)

येन॒ वह॑सि स॒हस्त्रं॒ येना॑ग्ने सर्ववे॒दसम्।
तेने॒मं य॒ज्ञं नो॑ नय॒ स्व॒र्दे॒वेषु॒ गन्त॑वे॥ ६२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી ! તું येन-જે ભણવાથી सहस्त्रम्-હજારો-અસંખ્ય પ્રકારના અતુલ બોધને તથા सर्ववेदसम्-સર્વ વેદોને જણાવનાર વિદ્વાનને वहसि-પ્રાપ્ત કરે છે અને येन-જે ભણાવવાથી બીજાને પ્રાપ્ત થાય છે तेन-તેથી इमम्-એ यज्ञम्-અધ્યયન-અધ્યાપન રૂપ યજ્ઞને नः-અમને देवेषु-દિવ્યગુણો વા વિદ્વાનોમાં स्वः-સુખને गन्तवे-પ્રાપ્ત કરવા માટે नय-પ્રાપ્ત કર અથવા પ્રાપ્ત કરાવ. (૬૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો ધર્મના આચરણથી તથા કપટરહિત બનીને વિદ્યા આપે તથા ગ્રહણ કરે છે, તેઓ સુખના ભાગી બને છે. (૬૨)

प्र॒स्त॒रेण॑ परि॒धिना॑ स्त्रु॒चा वेद्या॑ च ब॒र्हिषा॑।
ऋ॒चेमं य॒ज्ञं नो॑ नय॒ स्व॒र्दे॒वेषु॒ गन्त॑वे॥ ६३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ वेद्या-જેમાં હોમ કરવામાં આવે છે. તે વેદીથી, स्त्रुचा-હોમનાં સાધનોથી, बर्हिषा-ઉત્તમ ક્રિયાથી, प्रस्तरेण-આસનથી, परिधिना-જે સર્વત્રથી ધારણ કરવામાં આવે તે યજુર્વેદથી च-તથા ऋचा-સ્તુતિ વા ઋગ્વેદ આદિથી इमम्-એ પદાર્થમય અર્થાત્ જેમાં શ્રેષ્ઠ ભોજનને યોગ્ય પદાર્થો હોમવામાં આવે છે તે यज्ञम्-અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞને देवेषु-દિવ્ય પદાર્થો વા વિદ્વાનોમાં गन्तवे-પ્રાપ્ત થવા માટે स्वः-સાંસારિક સુખ नः-અમને नय-પ્રાપ્ત કરાવો. (૬૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો ધર્મથી પ્રાપ્ત પદાર્થો તથા વેદની રીતિથી સાંગોપાંગ યજ્ઞને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સર્વ પ્રાણીઓનાં ઉપકારી બને છે. (૬૩)

यद्द॒त्तं यत्प॑रा॒दानं॒ यत्पू॒र्त्तं याश्च॒ दक्षि॑णाः।
तद॒ग्निर्वै॑श्वकर्म॒णः स्व॒र्दे॒वेषु॑ नो दधत्॥ ६४॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થ વિદ્વાન્ ! આપે यत्-જે दत्तम्-ઉત્તમ ધર્માત્માઓને પદાર્થોનું સમર્પણ, વા यत्-જે परादानम्-અન્યોથી ગ્રહણ, यत्-જે पूर्त्तम्-પૂર્ણ સામગ્રી याश्च-અને જે કર્મ અનુસાર दक्षिणाः-દક્ષિણા

=દાન આપવામાં આવે છે, तत्-તે સર્વને તથા स्वः-ઈન્દ્રિયોના સુખોને, वैश्वकर्मणः-જેના સમગ્ર કર્મ વિદ્યમાન છે, તે अग्निः-અગ્નિ સમાન ગૃહસ્થ વિદ્વાન્ આપ देवेषु-દિવ્ય ધર્મ સંબંધી વ્યવહારોમાં नः-અમને दधत्-સ્થાપિત કરો. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે પુરુષ અને સ્ત્રી ગૃહાશ્રમ કરવાની ઈચ્છા કરે, તેઓ વિવાહથી પૂર્વે પ્રગલ્ભતા અર્થાત્ પોતાનામાં પ્રૌઢતા-બળ અને પરાક્રમ આદિ સામગ્રી સિદ્ધ કરીને, યુવાવસ્થામાં સ્વયંવર વિધિથી અનુકૂળ વિવાહ કરીને, ધર્મપૂર્વક દાન, આદાન = લેવું, માન, સન્માન આદિ વ્યવહારો કરે. (૬૪)

यत्र॒ धारा॒ऽअन॑पेता॒ मधो॑र्घृ॒तस्य॑ च॒ याः।
तद॒ग्निर्वै॑श्व॒कर्म॒णः॒ स्व॑र्दे॒वेषु॑ नो दधत्॥ ६५॥

પદાર્થ : यत्र-જે યજ્ઞમાં मधोः-મધુરાદિ ગુણયુક્ત સુગંધિત દ્રવ્યોની च-અને घृतस्य-ઘૃતની याः-જે अनपेताः-પૃથક્-પૃથક્ धाराः-ધારા-પ્રવાહને વિદ્વાન્ લોકો કરે છે, तत्-તે ધારાઓથી वैश्वकर्मणः-સર્વ કર્મોના નિમિત્ત अग्निः-અગ્નિ नः-અમારા માટે देवेषु-દિવ્ય વ્યવહારોમાં स्वः-સુખને दधत्-ધારણ કરે છે. (૬૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વેદી આદિ બનાવીને, સુગંધિત અને મિષ્ટાદિથી યુક્ત ખૂબજ ઘી નો અગ્નિમાં હોમ કરે છે, તેઓ સર્વ રોગોનું નિવારણ કરીને, અતુલ સુખને ઉત્પન્ન કરે છે. (૬૫)

अ॒ग्निर॑स्मि॒ जन्म॑ना जा॒तवे॑दा घृ॒तं मे॒ चक्षु॑र॒मृतं॑ मऽआ॒सन्।
अ॒र्कस्त्रि॒धातू॒ रज॑सो वि॒मानोऽज॑स्रो घ॒र्मो ह॒विर॑स्मि॒ नाम॑॥ ६६॥

પદાર્થ : હું जन्मना-જન્મથી जातवेदाः-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન अग्निः-અગ્નિની સમાન अस्मि-છું.

જેમ અગ્નિના घृतम्-ઘૃત આદિ चक्षुः-પ્રકાશક છે, તેમ मे-મારા માટે બનો.

જેમ અગ્નિમાં, સુસંસ્કૃત-શુદ્ધ हविः-હોમ યોગ્ય દ્રવ્યો હોમાતાં अमृतम्-સર્વ રોગનાશક આનંદપ્રદ બને છે અર્થાત્ અમૃતરૂપ ભોજ્ય પદાર્થ બની જાય છે, તેમ मे-મારા आसन्-મુખમાં अस्तु-પ્રાપ્ત થાય.

જેમ त्रिधातुः-સત્વ, રજ અને તમો ગુણ તત્વ જેમાં છે, તે रजसः-લોક-લોકાન્તરોને विमानः-વિમાન-યાનની સમાન ધારણ કરીને, अजस्रः-નિરંતર ગમનશીલ, धर्मः-પ્રકાશની સમાન યજ્ઞ કે જેથી સુગંધનું ગ્રહણ થાય છે, अर्कः-જે સત્કાર-પૂજાના સાધન તરીકે नाम-પ્રસિદ્ધ છે, તે સંશોધિત हविः-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થ છે, તેમ હું अस्मि-છું. (૬૬)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ હોમવામાં આવેલ હવિને વાયુમાં ફેલાવીને, દુર્ગંધને દૂર કરીને, સુગંધને પ્રકટ કરીને તથા રોગોનો મૂળ સહિત નાશ કરીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ મનુષ્યોએ પણ કરવું જોઈએ. (૬૬)

ऋचो नामास्मि यजूꣳषि नामास्मि सामानि नामास्मि। येऽअग्नयः पाञ्चजन्याऽअस्यां पृथिव्यामधि। तेषामसि त्वमुत्तमः प्र नो जीवातवे सुव॥ ६७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે હું ऋचः-ઋચાઓ [ઋગ્વેદ]ના नाम-નામથી પ્રસિદ્ધકર્તા છું, यजूंषि-યજુર્વેદના नाम-નામથી પ્રખ્યાતિકર્તા अस्मि-છું, सामानि-સામવેદના મંત્રગાનના नाम-નામથી પ્રકાશકર્તા अस्मि-છું, એથી તે વેદવિદ્યાનું મારાથી ગ્રહણ કર.

ये-જે अस्याम्-આ पृथिव्याम्-પૃથિવીમાં पाञ्चजन्याः-મનુષ્યોને હિતકારી अग्नयः-અગ્નિ अधि-સર્વોપરિ છે, तेषाम्-તેમાં त्वम्-તું उत्तमः-અતિ શ્રેષ્ઠ असि-છે, તે તું नः-અમારા जीवातवे-જીવન માટે સત્કર્મોમાં प्र + सुव-પ્રેરિત કર. (૬૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઋગ્વેદ ભણે છે તે ઋગ્વેદી, જે યજુર્વેદ ભણે છે તે યજુર્વેદી, જે સામવેદ ભણે છે તે સામવેદી અને જે અથર્વવેદ ભણે છે તે અથર્વવેદી નામથી પ્રસિદ્ધ થાય છે.

જે બે વેદોને ભણે છે તે દ્વિવેદી, જે ત્રણ વેદોને ભણે છે તે ત્રિવેદી અને જે ચારે વેદોને ભણે છે તે ચતુર્વેદી કહેવાય છે.

જે કોઈપણ વેદને ભણતો નથી તે કોઈપણ સંજ્ઞા = ઉપાધિને પ્રાપ્ત કરતો નથી.

જે વેદજ્ઞાતા છે, તે અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞો દ્વારા સર્વનું હિત કરે જેથી ઉત્તમ યશવાન બને અને સર્વ પ્રાણીઓ દીર્ઘાયુ બને. (૬૭)

वार्त्रहत्याय शवसे पृतनाषाह्याय च। इन्द्र त्वावर्तयामसि॥ ६८॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત સેનાપતિ ! જેમ અમે वार्त्रहत्याय-વિરુદ્ધ ભાવથી વર્તમાન શત્રુને મારવામાં કુશળ, शवसे-શ્રેષ્ઠ બળ, पृतनाषाह्याय-જેનાથી શત્રુ સેનાનું બળ સહન કરવામાં આવે તેથી च-અને અન્ય યોગ્ય સાધનોથી યુક્ત त्वा-તને आवर्त्तयामसि-ચારે બાજુથી યથાયોગ્ય પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ તું યથાયોગ્ય પ્રવૃત થા. (૬૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ પુરુષ-મેઘ નાશક સૂર્ય સમાન શત્રુઓને હણવા માટે શૂરવીર સેનાનો સત્કાર કરે છે, તે સદા વિજયી બને છે. (૬૮)

सहदानुम्पुरुहूत क्षियन्तमहस्तमिन्द्र सम्पिणक् कुणारुम्।
अभि वृत्रं वर्द्धमानं पियारुमपादमिन्द्र तवसा जघन्थ॥ ६९॥

પદાર્થ : હે पुरुहूत-અનેક વિદ્વાનોના સત્કારને પ્રાપ્ત इन्द्र-શત્રુનાશક સેનાપતિ ! જેમ સૂર્ય सहदानुम्-સાથ આપનાર, क्षियन्तम्-આકાશમાં નિવાસ કરનાર, कुणारुम्-શબ્દ કરનાર, अहस्तम्-હાથ રહિત पियारुम्-પાન કરનાર, अपादम्-પાદેન્દ્રિય રહિત अभिवर्द्धमानम्-સર્વત્ર ગતિ કરનાર, वृत्रम्-મેઘને-વાદળાંઓને सम्पिणक्-સારી રીતે છિન્ન-ભિન્ન કરે છે, તેમ હે इन्द्र-સભાપતિ ! આપ શત્રુઓને तवसा-

બળથી जघन्थ-મારો. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સૂર્ય સમાન પ્રતાપી હોય છે, તે અજાતશત્રુ-શત્રુરહિત બને છે. (૬૯)

वि न॑ऽइन्द्र मृधो॑ जहि नी॒चा य॑च्छ पृतन्य॒तः।

योऽअ॒स्माँ२ऽअ॑भि॒दास॒त्यध॑रं गमया॒ तमः॑॥ ७०॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ બળયુક્ત સેનાપતિ ! તું मृधः-સંગ્રામોને वि + जहि-વિશેષ કરીને જીત, पृतन्यतः-સેનાયુક્ત नः-અમારા શત્રુઓને नीचा-નીચ ગતિને यच्छ-પ્રાપ્ત કરાવ, यः-જે अस्मान्-અમારો अभिदासति-નાશ કરવાની ઈચ્છા કરે છે, તેને अधरम्-અધોગતિ રૂપ तमः-અંધકારને गमय-પ્રાપ્ત કર.

ભાવાર્થ : સેનાપતિએ સંગ્રામ જીતવો જોઈએ, નીચકર્મ કરનારને પકડવા જોઈએ અને રાજા તથા પ્રજાનો વિરોધ કરનારને કઠોર દંડ આપવો જોઈએ. (૭૦)

मृ॒गो न भी॒मः कु॑च॒रो गि॑रि॒ष्ठाः प॑रा॒वत॒ऽआज॑गन्था॒ पर॑स्याः।

सृ॒कꣳस॒ꣳशाय॑ प॒विमि॑न्द्र ति॒ग्मं वि शत्रू॑न्ताढि॒ वि मृधो॑ नुदस्व॥ ७१॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સેનાપતિ ! તું कुचरः-કુટિલ ગતિ ચાલનારા, गिरिष्ठाः-પર્વતોમાં રહેનારા, भीमः-ભયંકર मृगः-સિંહની न-સમાન परावतः-દૂર દેશનાં શત્રુઓને आजगन्थ-ચારે બાજુથી ઘેરી, परस्याः-શત્રુની સેનાપર तिग्मम्-અતિ તીવ્ર पविम्-દુષ્ટોને દંડથી પવિત્ર કરનારા सृकम्-વજ્ર સમાન શસ્ત્રને संशाय-સમ્યક્ તીવ્ર કરીને शत्रुन्-શત્રુઓને विताढि-ફટકારીને અને मृधः-સંગ્રામોને જીતીને वि + नुदस्व-જીતીને શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં પ્રેરિત કર. (૭૧)

ભાવાર્થ : જે સેનાના પુરુષ = સૈનિક સિંહ સમાન પરાક્રમ કરીને તીક્ષ્ણ શસ્ત્રોથી શત્રુસેનાના અંગોને કાપીને સંગ્રામોને જીતે છે, તે અનુપમ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે, અન્ય નીચ હૃદયવાળા ભીરુ લોકો વિજય સુખને કદીપણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૭૧)

वैश्वा॒न॒रो न॑ऽऊ॒तय॒ऽआ प्रया॑तु परा॒वतः॑।

अ॒ग्निर्नः॑ सुष्टु॒तीरुप॑॥ ७२॥

પદાર્થ : હે સેનાપતિ તથા સભાપતિ ! જેમ वैश्वानरः-સંપૂર્ણ નરોમાં વિરાજમાન अग्निः-સૂર્યરૂપ અગ્નિ परावतः-દૂર દેશસ્થ સર્વ પદાર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ આપ ऊतये-રક્ષા આદિ માટે नः-અમારી સમીપ आ + प्र + यातु-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાઓ.

જેમ अग्निः-વિદ્યુત્ સર્વમાં વ્યાપક થઈને સમીપસ્થ રહે છે, તેમ તું नः-અમારી सुष्टुतीः-ઉત્તમ

સ્તુતિઓને उपश्रृणु-સારી રીતે સાંભળ. (૭૨)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન દૂર રહીને પણ ન્યાયથી સર્વ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે. અને જેમ દૂર રહેલા સદ્‌ગુણોથી સંપન્ન પુરુષ પ્રશંસિત બને છે, તેમ રાજપુરુષે પણ બનવું જોઈએ. (૭૨)

पृष्टो दिवि पृष्टोऽअग्निः पृथिव्यां पृष्टो विश्वाऽओषधीराविवेश।
वैश्वानरः सहसा पृष्टोऽअग्निः स नो दिवा स रिषस्पातु नक्तम्॥ ७३॥

પદાર્થ : મનુષ્યોથી જે दिवि-પ્રકાશસ્વરૂપ સૂર્યમાં पृष्टः-જાણવા યોગ્ય अग्निः-અગ્નિ, पृथिव्याम्-પૃથિવીમાં पृष्टः-જાણવા યોગ્ય અગ્નિ, જલ અને વાયુમાં पृष्टः-જાણવા યોગ્ય अग्निः-વિદ્યુત્, सहसा-બળાદિ ગુણોથી યુક્ત, वैश्वानरः-વિશ્વમાં પ્રકાશમાન पृष्टः-જાણવા યોગ્ય अग्निः-વિદ્યુત્ विश्वाः-સમગ્ર ओषधीः-ઔષધિઓમાં આ + विवेश-પ્રવિષ્ટ પામે છે.

सः-તે અગ્નિ दिवा-દિવસ અને सः-તે અગ્નિ नक्तम्-રાત્રિમાં જેમ રક્ષા કરે છે, તેમ સેનાના પતિ આપ नः-અમારી रिषः-હિંસક પુરુષથી નિરંતર पातु-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આકાશમાં સ્થિત સૂર્યને, પૃથિવીમાં રહેલ અગ્નિને અને સર્વ પદાર્થોમાં વ્યાપક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિને વિદ્વાનો દ્વારા નિશ્ચિત જાણીને કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેઓ શત્રુઓથી નિર્ભય રહે છે. (૭૩)

अश्याम तं काममग्ने तवोतीऽअश्याम रयिꣳरयिवः सुवीरम्।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तोऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते॥ ७४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-યુદ્ધ વિદ્યા વિશારદ સેનાપતિ ! અમે तव-તારી ऊती-રક્ષા આદિ ક્રિયાથી तम्-તે कामम्-કામનાને अश्याम-પ્રાપ્ત કરીએ.

હે रयिवः-પ્રશસ્ત ધનયુક્ત ! सुवीरम्-ઉત્તમ વીરોની પ્રાપ્તિના નિમિત્ત रयिम्-રાજ્ય લક્ષ્મીને अश्याम-પ્રાપ્ત કરીએ.

वाजयन्तः-સંગ્રામ કરતા કરાવતા અમે वाजम्-સંગ્રામના વિજયને સારી રીતે अभ्यश्याम-પ્રાપ્ત કરીએ.

હે अजर-વૃદ્ધત્વથી રહિત સેનાપતિ ! અમે ते-તારા પ્રતાપથી अजरम्-અક્ષય द्युम्नम्-ધન અને કીર્તિને अश्याम-પ્રાપ્ત કરીએ. (૭૪)

ભાવાર્થ : પ્રજાના મનુષ્યોએ રાજપુરુષોની રક્ષાથી અને રાજપુરુષ પ્રજાજનોની રક્ષાથી પરસ્પર સર્વ કામનાઓને પ્રાપ્ત કરે. (૭૪)

वयं तेऽअद्य ररिमा हि काममुत्तानहस्ता नमसोपसद्य।
यजिष्ठेन मनसा यक्षि देवानस्त्रेधता मन्मना विप्रोऽअग्ने॥ ७५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! उत्तानहस्ताः-ઉત્કૃષ્ટતાથી અભય આપનાર હાથવાળા वयम्-અમે ते-આપના नमसा-સત્કારથી उपसद्य-સમીપ પ્રાપ્ત થઈને अद्य-આજે कामम्-કામનાને हि-નિશ્ચયથી ररिम-પ્રદાન કરીએ છીએ.

જેમ विप्रः-બુદ્ધિમાન अस्त्रेधता-આવાગમન અર્થાત્ ચંચળતા રહિત-સ્થિર, मन्मना-બળ અને यजिष्ठेन-અત્યંત સંયમયુક્ત मनसा-ચિત્તથી देवान्-વિદ્વાનો અને શુભગુણોને यजति-પ્રાપ્ત કરે છે અને જેમ તું यक्षि-શુભ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તેમ અમે પણ પ્રવૃત્ત બનીએ. (૭૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પુરુષાર્થ દ્વારા કામના-ઈચ્છા પૂર્ણ કરનારા હોય, તેઓ વિદ્વાનોના સંગથી તેને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૭૫)

धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः।
सचेतसो विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे॥ ७६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! देवः-વિદ્વાન્ धामच्छद्-જન્મસ્થાન નામનો વિસ્તાર કરનાર, अग्निः-પાવક, इन्द्रः-વિદ્યુત્‌ની સમાન મંત્રી અને રાજા, ब्रह्मा-ચારે વેદોને જાણનારા, बृहस्पतिः-વેદવાણીનું પઠન-પાઠનથી પાલન કરનારા, सचेतसः-વિજ્ઞાનયુક્ત, विश्वे, देवाः-સર્વ વિદ્વાનો नः-અમારા शुभे-કલ્યાણને માટે यज्ञम्-વિજ્ઞાન યોગરૂપ ક્રિયાને प्र, अवन्तु-સારી રીતે કામના કરે. (૭૬)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્વાનો સર્વ મનુષ્યાદિ પ્રાણીઓના કલ્યાણ-સુખ માટે નિરંતર ઉપદેશ કરે. (૭૬)

त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः।
रक्षा तोकमुत त्मना॥ ७७॥

પદાર્થ : હે यविष्ठ-અત્યંત યુવક રાજન્ ! त्वम्-તું दाशुषः-વિદ્યાદાતા नॄन्-મનુષ્યોની पाहि-રક્ષા કર; તેની गिरः-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીઓને श्रृणुधि-સાંભળ.

જે વીર પુરુષ યુદ્ધમાં મૃત્યુ પામે તેના तोकम्-નાના બાળકોની उत-તથા સ્ત્રી આદિની પણ त्मना-આત્મીયતાથી रक्ष-રક્ષા કર. (૭૭)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિએ બે કામ અવશ્ય કરવા જોઈએ. એક વિદ્વાનોનું પાલન અને તેના ઉપદેશોનું શ્રવણ કરવું.

બીજુ યુદ્ધમાં માર્યા ગયેલાઓનાં સંતાનો અને સ્ત્રી આદિનું પાલન કરે. આ રીતે આચરણ કરનાર

લોકોને સદા વિજય, લક્ષ્મી અને સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. તેમ વિદ્વાનોએ ધ્યાનમાં રાખવું જોઈએ. (૭૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ગણિત-વિદ્યા, રાજા-પ્રજા, પઠન-પાઠન કરાવનારનાં કર્મ આદિનાં વર્ણનથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થોની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થોની સાથે સંગતિ છે; એમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति अष्टादशोऽध्यायः ॥



॥ अथैकोनविंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

स्वाद्वीं त्वा स्वादुना तीव्रां तीव्रेणामृताममृतेन। मधुमतीं मधुमता सृजामि सꣳसोमेन। सोमोऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरस्वत्यै पच्यस्वेन्द्राय सुत्राम्णे पच्यस्व॥ १॥

પદાર્થ : હે વૈદ્યરાજ ! જે તું सोमः-સોમ સમાન ઐશ્વર્યથી યુક્ત असि-છે. તે त्वा-તને ઔષધિઓની વિદ્યામાં सम्-सृजामि-સારી રીતે ઉત્તમ શિક્ષાવાન બનાવું છું.

જેમ હું જે स्वादुना-મધુર આદિ રસોની સાથે स्वाद्वीम्-ઉત્તમ સ્વાદથી યુક્ત तीव्रेण-શીઘ્રકારી તીક્ષ્ણ સ્વભાવયુક્ત तीव्राम्-તીક્ષ્ણ સ્વભાવવાળી, अमृतेन-સર્વ રોગોના નાશક ગુણથી યુક્ત, अमृताम्-નાશરહિત, मधुमता-સ્વાદિષ્ટ ગુણયુક્ત, सोमेन-સોમલતા આદિ ઔષધિઓ સહિત मधुमतीम्-પ્રશસ્ત મધુર ગુણ યુક્ત ઔષધિને સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું; તેમ તું એને अश्विभ्याम्-વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષોના માટે पच्यस्व-પકાવીને, सरस्वत्यै-વિદ્યા અને સુશિક્ષિત વાણી યુક્ત સ્ત્રીને માટે पच्यस्व-પકાવ, सुत्राम्णे-સર્વની દુઃખોથી રક્ષા કરનાર, इन्द्राय-ઐશ્વર્યથી યુક્ત પુરુષ માટે पच्यस्व-પકાવ. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વૈદ્યકશાસ્ત્રની રીતિથી અનેક મધુર આદિ પ્રશસ્ત સ્વાદોથી યુક્ત અનેક ઔષધોનું નિર્માણ કરીને, તેના સેવનથી સ્વાસ્થ્ય બનાવીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિ માટે નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૧)

परीतो षिञ्चता सुतꣳसोमो य ऽ उत्तमꣳ हविः।
दधन्वान् यो नर्योऽअप्स्वन्तरा सुषाव सोममद्रिभिः॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે उत्तमम्-ઉત્તમ हविः-ખાવાને યોગ્ય પદાર્થને सोमः-શુભ કર્મોમાં પ્રેરણા કરનાર વિદ્વાન્ इतः-પ્રાપ્ત થાય, यः-જે नर्यः-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ दधन्वान्-ધારણ કરતા अप्सु-જલોની अन्तः-મધ્યમાં आसुषाव-સિદ્ધ કરે, તે अद्रिभिः-મેઘોમાં सुतम्-ઉત્પન્ન થયેલ सोमम्-ઔષધિગણને તમે परि + सिञ्चत-સર્વ બાજુથી સીંચીને વૃદ્ધિ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ ઔષધિઓને જલમાં રાખીને, તેનું મંથન કરીને, આસવ કાઢીને, એ [આસવ]થી યથોચિત રૂપથી જઠરાગ્નિને પ્રદીપ્ત કરીને, બળ અને આરોગ્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨)

वायोः पूतः पवित्रेण प्रत्यङ् सोमोऽअतिद्रुतः। इन्द्रस्य युज्यः सखा॥
वायोः पूतः पवित्रेण प्राङ् सोमोऽअतिद्रुतः। इन्द्रस्य युज्यः सखा॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सोमः-સોમલતાદિ ઔષધિગણ प्राङ्-જે પ્રકૃષ્ટતાથી अतिद्रुतः-શીઘ્રગામી, वायोः-વાયુથી पवित्रेण-શુદ્ધ કરનાર કર્મથી पूतः-શુદ્ધ-પવિત્ર, इन्द्रस्य-ઇન્દ્રિયોના અધિષ્ઠાતા જીવના युज्यः-યોગ્ય सखा-મિત્રની સમાન રહે છે.

જે सोमः-સિદ્ધ કરેલી ઔષધિઓનો રસ प्रत्यङ्-પ્રત્યક્ષ શરીરોથી યુક્ત થઈને, अतिद्रुतः-અત્યંત

શીઘ્રગામી, वायोः-વાયુથી पवित्रेण-પવિત્રતા કરીને पूतः-શુદ્ધ, इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજાના युज्यः-અતિ યોગ્ય सखा-મિત્રની સમાન છે, તેનું તમે નિરંતર સેવન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જે ઔષધિઓ શુદ્ધ સ્થાનમાં, જલમાં અને વાયુમાં ઉત્પન્ન થાય છે, જે જૂના અને નવા રોગોને શીઘ્ર દૂર કરે છે, તેનું મનુષ્યોએ મિત્રની સમાન સેવન કરવું જોઈએ. (૩)

पुनाति ते परिस्रुतꣳ सोमꣳ सूर्य्यस्य दुहिता। वारेण शश्वता तना॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે तना-વિસ્તૃત પ્રકાશથી सूर्यस्य-સૂર્યની दुहिता-પુત્રીની સમાન ઉષા शस्वता-અનાદિરૂપ वारेण-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ગુણથી ते-તારા परिस्रुतम्-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત सोमम्-ઔષધિઓના રસને पुनाति-પવિત્ર કરે છે, તે ઉષાકાલમાં તું ઔષધિના રસનું સેવન કર. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યોદયથી પૂર્વ શૌચ-શુદ્ધિ કરીને અનુકૂળતા અનુસાર ઔષધિનું સેવન કરે છે, તેઓ નીરોગ રહીને સુખી થાય છે. (૪)

ब्रह्म क्षत्रं पवते तेजऽइन्द्रियꣳसुरया सोमः सुतऽआसुतो मदाय।

शुक्रेण देव देवताः पिपृग्धि रसेनान्नं यजमानाय धेहि॥ ५॥

પદાર્થ : હે देव-સુખદાતા વિદ્વાન્ ! જે शुक्रेण-શીઘ્ર શુદ્ધિ કરનાર વ્યવહારથી मदाय-આનંદ માટે सुरया-ઉત્પન્ન થતી ક્રિયાથી सुतः-સંપાદિત કરેલ, आसुतः-સારી રીતે રોગનિવારણ માટે સેવન કરેલી सोमः-ઔષધિઓનો રસ, तेजः-પ્રગલ્ભતા, इन्द्रियम्-મન આદિ ઇન્દ્રિયને, ब्रह्म-વિદ્વાનોના કુળને તથા क्षत्रम्-ન્યાયકારી ક્ષત્રિયકુળને पवते-પવિત્ર કરે છે, તે रसेन-રસથી યુક્ત अन्नम्-ભોજનને यजमानाय-ધર્માત્મા યજમાનને માટે धेहि-ધારણ કર, देवताः-વિદ્વાનોને पिपृग्धि-તૃપ્ત કર અર્થાત્ પ્રસન્ન કર. (૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં કોઈ મનુષ્યે નીરસ અન્નનું સેવન ન કરવું જોઈએ, પરન્તુ સદા વિદ્યા, વીરતા, બળ અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરનાર મહા ઔષધિઓનાં સારભાગોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૫)

कुविदङ्ग यवमन्तो यवं चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नमउक्तिं यजन्ति। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्णऽएष ते योनिस्तेजसे त्वा वीर्याय त्वा बलाय त्वा॥ ६॥

પદાર્થ : હે अङ्ग-મિત્ર ! ये-જે बर्हिषः-અન્ન આદિની પ્રાપ્તિ કરાવનારા यवमन्तः-જવ આદિ ધાન્યવાળા ખેડૂતો नमउक्तिम्-અન્નાદિની ઉચિત વૃદ્ધિને માટે ઉપદેશ यजन्ति-આપે છે, एषाम्-તેના પદાર્થો અને ખેડૂતોના इहेह-આ સંસારમાં અને વ્યવહારમાં તું भोजनानि-પાલન વા ભોજન-પાન આદિ कुणुहि-કર.

यथा-જેમ એ ખેડૂતો यवम्-જવને चित्-પણ वियूय-કણસલાથી જુદા કરવા अनुपूर्वम्-અનુકૂળતાથી પ્રથમ दान्ति-કાપે છે, તેમ તું એના વિભાગથી-ધનથી कुवित्-શ્રેષ્ઠ બળ પ્રાપ્ત કર.

જે ते-તારી ઉન્નતિનું एषः-એ योनिः-કારણ છે, તે त्वा-તને अश्विभ्याम्-પ્રકાશ-દ્યુલોક અને પૃથિવીની વિદ્યા માટે त्वा-તને सरस्वत्यै-ખેતી કાર્યની પ્રચારક ઉત્તમ વાણી માટે, त्वा-તને इन्द्राय-શત્રુઓનાં વિદારણ માટે તથા सुत्राम्णे-શ્રેષ્ઠ રક્ષક માટે, त्वा-તને तेजसे-પ્રગલ્ભતા માટે, त्वा-તને वीर्याय-પરાક્રમ માટે, त्वा-તને बलाय-બળ માટે જે પ્રસન્ન કરે છે, અથવા જે ખેડૂત આદિથી તું उपयामगृहीतः-શ્રેષ્ઠ વ્યવહારોથી સ્વીકાર પામેલ असि-છે, તેની સાથે તું વિહાર કર. (૬)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ ખેતી આદિ કાર્ય કરનારા, રાજ્યમાં કર આપનારા, પરિશ્રમી લોકોની પ્રેમપૂર્વક રક્ષા કરે છે અને સત્ય ઉપદેશ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સૌભાગ્યશાળી બને છે. (૬)

नाना हि वां देवहितꣳ सदस्कृतं मा सꣳसृक्षाथां परमे व्योमन्। सुरा त्वमसि शुष्मिणी सोमऽएष मा मा हिꣳसीः स्वां योनिमाविशन्ती॥ ७॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષો અને પ્રજાજનો ! नाना-અનેક પ્રકારથી सदः-સ્થાન कृतम्-બનાવેલ देवहितम्-જે વિદ્વાનોને પ્રિય છે, તે वाम्-તમને બન્નેને પ્રાપ્ત થાય.

જે हि-નિશ્ચયથી स्वाम्-પોતાના योनिम्-કારણમાં आविशन्ती-સારી રીતે પ્રવેશ કરતી शुष्मिणी-બહુ જ બળ આપનારી सुरा-સોમવલ્લી આદિ લતા છે, त्वम्-તે परमे-ઉત્કૃષ્ટ व्योमन्-બુદ્ધિરૂપ અવકાશમાં વિદ્યમાન असि-છે, તેને તમે બન્ને પ્રાપ્ત કરો. માદક દ્રવ્યોનો संसृक्षाथाम्-સંસર્ગ मा-કરો નહિ.

હે વિદ્વાન્ પુરુષ ! જે एषः-એ सोमः-સોમ આદિ મહા ઔષધિઓના ગણ છે, તેને તથા मा-મને તું हिंसीः-નષ્ટ मा-કર નહિ. (૭)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષો અને પ્રજાજનો બુદ્ધિ, બળ, આરોગ્ય અને આયુને વધારનારી ઔષધિ રસોનું નિરંતર સેવન કરે છે. તથા માદક દ્રવ્યોનો ત્યાગ કરે છે, તેઓ આ લોક અને પરલોકમાં ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરનારા બને છે. (૭)

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेजः सारस्वतं वीर्यमैन्द्रं बलम्।
एष ते योनिर्मोदाय त्वानन्दाय त्वा महसे त्वा॥ ८॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષ અને પ્રજાજન ! જે તું उपयामगृहीतः-ધર્મયુક્ત યમ સંબંધી નિયમોથી યુક્ત असि-છે, જે ते-તારું एषः-એ योनिः-ઘર છે, તે તારા જે आश्विनम्-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાના રૂપની સમાન तेजः-તીક્ષ્ણ અને મૃદુ પ્રકાશ, सारस्वतम्-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીની સમાન वीर्यम्-પરાક્રમ, ऐन्द्रम्-વિદ્યુતની સમાન बलम्-બળ છે, તે त्वा-તને मोदाय-હર્ષને માટે त्वा-તને आनन्दाय-પરમ સુખને માટે અને त्वा-તને महसे-મહાન પરાક્રમને માટે સર્વ મનુષ્યો સ્વીકાર કરે. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સમાન તેજસ્વી, વિદ્યામાં પરાક્રમી અને વિદ્યુત્‌ની સમાન બળવાન બનીને સ્વયં આનંદમગ્ન રહે છે તથા અન્યોને આનંદ પ્રદાન કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં પરમાનંદનો ભોગ કરનારા બને છે. (૮)

तेजो॑ऽसि तेजो॒ मयि॑ धेहि वी॒र्य॑मसि वी॒र्यं॑ मयि॑ धेहि॒ बल॑मसि बलं॒ मयि॑ धेह्यो॒जो॒ऽस्योजो॒ मयि॑ धेहि म॒न्युर॑सि म॒न्युं मयि॑ धेहि॒ सहो॑ऽसि सहो॒ मयि॑ धेहि॥ ९॥

પદાર્થ : હે સમગ્ર શુભ ગુણોને ઉત્પન્ન કરનાર રાજન્ ! જે તારામાં तेजः-તેજ असि-છે તે-तेजः-તેજને मयि-મારામાં धेहि-ધારણ કર.

જે તારામાં वीर्यम्-પરાક્રમ असि-છે, તે वीर्यम्-પરાક્રમને मयि-મારામાં धेहि-ધારણ કર.

જે તારામાં बलम्-બળ असि-છે, તે बलम्-બળને मयि-મારામાં धेहि-ધારણ કર.

જે તારામાં ओजः-પ્રાણનું સામર્થ્ય असि-છે, તે ओजः-સામર્થ્યને मयि-મારામાં धेहि-ધારણ કર.

જે તારામાં मन्युः-દુષ્ટો પર ક્રોધ असि-છે, તે मन्युम्-ક્રોધને मयि-મારામાં धेहि-ધારણ કર.

જે તારામાં सहः-સહનશીલતા असि-છે, તે सहः-સહનશીલતા मयि-મારામાં પણ धेहि-ધારણ કર.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યો માટે ઈશ્વરની એ આજ્ઞા છે કે, જે શુભ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવોને વિદ્વાનો ધારણ કરે, તેને [તેઓ] અન્યોમાં પણ ધારણ કરાવે.

જેમ દુષ્ટ આચરણ કરનારા પર ક્રોધ કરે, તેમ ધર્માત્માઓ પ્રત્યે નિરંતર પ્રેમ કરે. (૯)

या व्या॒घ्रं विषू॑चिको॒भौ वृकं॑ च॒ रक्ष॑ति।
श्ये॒नं प॑त॒त्रिण॑ꣳ सि॒ꣳहꣳ सेमं पा॒त्वꣳह॑सः॥ १०॥

પદાર્થ : या-જે विषूचिका-વિવિધ અર્થોને સૂચિત કરનારી રાજાની રાણી व्याघ्रम्-જે છલાંગ મારીને મારે છે, તે વાઘ અને वृकम्-બકરા આદિને મારનાર વરુ उभौ-એ બન્નેને, पतत्रिणम्-શીઘ્ર ગતિ કરનાર પક્ષીને, श्येनम्-શીઘ્ર ગતિ કરીને અન્ય પશુઓને મારનાર બાજ પક્ષીને च-તથા सिंहम्-હાથી આદિને પણ મારનાર દુષ્ટ પશુ-સિંહને મારીને પ્રજાની रक्षति-રક્ષા કરનારી છે, सा-તે રાણી इमम्-એ રાજાની अंहसः-અપરાધથી पातु-રક્ષા કરે. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે શૂરવીર રાજા સ્વયં વાઘ આદિને મારીને, ન્યાયપૂર્વક પ્રજાની રક્ષા કરીને તથા પોતાની સ્ત્રીને પ્રસન્ન કરવામાં સમર્થ હોય છે, તેમ રાણી પણ બને.

જેમ ઉત્તમ પ્રિય આચરણથી રાણી પોતાના પતિને પ્રમાદથી છોડાવીને તેને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ રાજા પણ તેણીને પ્રસન્ન રાખે. (૧૦)

यदा॑पि॒पेष॑ मा॒तर॑ं पु॒त्रः प्रमु॑दितो॒ धय॑न्। ए॒तत्तद॑ग्नेऽअनृ॒णो भ॑वा॒म्यह॑तौ पि॒तरौ॒ मया॑। स॒म्पृच॑ स्थ॒ सं मा॑ भ॒द्रेण॑ पृङ्क्त वि॒पृच॑ स्थ॒ वि मा॑ पा॒प्मना॑ पृङ्क्त॥ ११॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! यत्-જે प्रमुदितः-અત્યંત આનંદયુક્ત पुत्रः-પુત્ર દૂધ धयन्-દૂધ પીતાં मातरम्-માતાને आपिपेष-સર્વત્રથી પીડિત કરે છે, તે પુત્રથી હું अनृणः-ઋણરહિત भवामि-બનું છું. જેથી મારા पितरौ-માતા અને પિતા બન્ને अहतौ-હનન રહિત બનીને मया-મારાથી भद्रेण-કલ્યાણની

સાથે વ્યવહારપૂર્વક વર્તન કરનાર બને.

હે મનુષ્યો ! તમે संपृचः-સત્ય સંબંધી અર્થાત્ ધર્મથી સંયુક્ત स्थ-રહો, मा-મને કલ્યાણની સાથે सम्पृङ्क्त-સંયુક્ત કરો. पाप्मना-પાપથી विपृचः-પૃથક્ રહેનાર स्थ-બનો. એથી मा-મને પણ પાપથી विपृङ्क्त-પૃથક્ કરો અને तदेतत्-પરજન્મ અને વર્તમાન જન્મમાં સુખને પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ માતા-પિતા પુત્રનું પાલન કરે છે, તેમ પુત્રે માતા-પિતાની સેવા કરવી જોઈએ. સર્વેએ એ વાત પર ધ્યાન રાખવું જોઈએ કે, અમે માતા-પિતાની સેવા કરીને પિતૃઋણથી મુક્ત બનીએ.

જેમ વિદ્વાન ધાર્મિક માતા-પિતા પોતાના સંતાનોને પાપાચરણથી પૃથક્ કરીને ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ સંતાનોએ પણ માતા-પિતા પ્રત્યે એ રીતે વ્યવહાર કરવો જોઈએ. (૧૧)

देवा यज्ञमतन्वत भेषजं भिषजाश्विना।

वाचा सरस्वती भिषगिन्द्रायेन्द्रियाणि दधतः॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ इन्द्रियाणि-ઉત્તમ રીતે વિષય ગ્રહણ કરનારી નેત્ર આદિ ઈન્દ્રિયો અથવા ધનોને दधतः-ધારણ કરનાર भिषक्-ચિકિત્સા આદિ વૈદ્યકશાસ્ત્રના અંગોના જ્ઞાતા વૈદ્ય, सरस्वती-આયુર્વેદનું પ્રશસ્ત જ્ઞાનથી યુક્ત વિદુષી સ્ત્રી અને भिषजा-આયુર્વેદને જાણનાર अश्विना-ઔષધ વિદ્યામાં વ્યાપ્તબુદ્ધિ બે ઉત્તમ વિદ્વાન્ વૈદ્ય એ ત્રણે અને देवाः-ઉત્તમ જ્ઞાનીજન वाचा-વાણીથી इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્ય માટે भेषजम्-રોગવિનાશક ઔષધરૂપ यज्ञम्-સુખદાયક યજ્ઞને अतन्वत-વિસ્તૃત કરે, તેમ તમે પણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્યો પથ્ય, ઔષધિ અને બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરીને શરીરનું સ્વાસ્થ્ય, બળ અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરતાં નથી, ત્યાં સુધી તેઓ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૨)

दीक्षायै रूपꣳ शष्पाणि प्रायणीयस्य तोक्मानि।

क्रयस्य रूपꣳ सोमस्य लाजाः सोमाꣳशवो मधु॥ १३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે प्रायणीयस्य-ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરાવનાર વ્યવહારમાં વિદ્યમાન પુરુષના दीक्षायै-યજ્ઞના સાધનો અને નિયમોના પાલન માટે रूपम्-સુંદર રૂપ છે, तोक्मानि-સંતાન છે, क्रयस्य-દ્રવ્યોને વેચવાનું रूपम्-રૂપ છે, शष्पाणि-શુદ્ધ કરીને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ધાન્ય છે, सोमस्य-ઔષધિઓના રસથી યુક્ત लाजाः-ફૂલેલા ચોખાના મમરા છે, सोमांशवः-સોમના અંશ અને मधु-મધ છે, તેને તમે વિસ્તૃત કરો અર્થાત્ વૃદ્ધિ કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞને યોગ્ય સંતાન તથા પદાર્થોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

आतिथ्यरूपं मासरं महावीरस्य नग्नहुः।

रू॒पमु॑प॒सदा॑मे॒तत्तिस्त्रो रात्री॑ः सु॒रासु॑ता॥ १४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે मासरम्-જેથી અતિથિજનો મહિનાઓ સુધી રમણ કરે છે, તેવા आतिथ्यरूपम्-અતિથિઓનું હોવું વા તેના સત્કારરૂપ વ્યવહાર વા महावीरस्य-મહાન વીર પુરુષના नग्नहुः-નગ્ન અકિંચનને વસ્ત્રો આદિ આપીને रूपम्-સુરૂપ બનાવવા, उपसदाम्-ગૃહસ્થ આદિની સમીપ ભોજન આદિ માટે રહેનારા અતિથિઓને तिस्त्रः-ત્રણ रात्रिः-રાત્રિ નિવાસ કરાવવો. एतत्-એ રૂપ વા सुरा-સોમરસ आसुता-સર્વ રીતે સિદ્ધ કરેલી ક્રિયા છે, તે સર્વને તમે ગ્રહણ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધાર્મિક વિદ્વાન્ અતિથિઓનો સત્કાર, સંગ અને ઉપદેશોનું શ્રવણ, વીરોનું સન્માન, દરિદ્રોને વસ્ત્ર આદિનું દાન, પોતાના સેવકોને ઉત્તમ નિવાસનું દાન તથા સોમરસની નિરંતર સિદ્ધિ કરે છે. તેઓ "યશસ્વી" બને છે. (૧૪)

सोम॑स्य रू॒पं क्री॒तस्य॑ परि॒स्रुत्परि॑षिच्यते।

अ॒श्विभ्यां॑ दु॒ग्धं भे॑ष॒जमिन्द्रा॑यै॒न्द्रꣳसर॑स्वत्या॥ १५॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ सरस्वत्या-પ્રશસ્ત વિદ્યા અને વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિદુષી પત્ની દ્વારા क्रीतस्य-ગ્રહણ કરેલા सोमस्य-સોમલતા આદિ ઔષધિગણનું परिस्त्रुत्-સર્વત્રથી સ્રવિત થનાર રસ रूपम्-ઉત્તમ સ્વરૂપ, अश्विभ्याम्-વૈદ્યક વિદ્યામાં પૂર્ણ બે વિદ્વાનો માટે दुग्धम्-દોહવામાં આવેલા भेषजम्-ઔષધરૂપ દૂધ તથા इन्द्राय-ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક માટે ऐन्द्रम्-વિદ્યુત્ સંબંધી વિજ્ઞાન परि + षिच्यते-સર્વત્રથી સિદ્ધ કરવામાં આવે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : સર્વ કન્યાઓ-કુમારીઓએ બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક વ્યાકરણ, વિદ્યા, ધર્મશાસ્ત્ર અને આયુર્વેદ ભણીને સ્વયંવર વિવાહ કરીને, ઉત્તમ ઔષધ તથા ઔષધ સમાન ગુણકારી અન્ન તથા વ્યંજનોને પકાવીને, તેને ઉત્તમ રસોથી સંયુક્ત કરીને, પતિ વગેરેને ભોજન કરાવીને તથા સ્વયં ભોજન કરીને બળ તથા આરોગ્યની નિરંતર ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૧૫)

आ॒स॒न्दी रू॒पꣳ रा॑जास॒न्द्यै वेद्यै॑ कु॒म्भी सु॑रा॒धानी॑।

अन्त॑रऽउत्तरवे॒द्या रू॒पं का॑रोत॒रो भिषक्॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે યજ્ઞના માટે आसन्दी-સર્વ તરફથી સેવન કરવા યોગ્ય ચોકી, रूपम्-ઉત્તમ ક્રિયા, राजासन्द्यै-રાજા જેના પર બેસે છે તે वेद्यै-સુખદ વેદીના માટે कुम्भी-ધાન્ય આદિ પદાર્થો રાખવાની કોઠી, सुराधानी-સોમરસ રાખવાની સુરાહી, अन्तरः-પ્રાણ હેતુ અન્નાદિ પદાર્થો, उत्तरवेद्याः-ઉત્તરની વેદીના रूपम्-રૂપને कारोतरः-કર્મચારી અને भिषक्-વૈદ્ય એ સર્વનો સંગ્રહ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જે-જે કાર્ય કરવાની ઈચ્છા કરે, તેના સર્વ સાધનોનો સંચય કરે. (૧૬)

वेद्या वेदिः समाप्यते बर्हिषा बर्हिरिन्द्रियम्।
यूपेन यूप आप्यते प्रणीतोऽअग्निरग्निना॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્વાન્ वेद्या-યજ્ઞની સામગ્રીથી वेदिः-યજ્ઞભૂમિને, बर्हिषा-મહાન પુરુષાર્થથી बर्हिः-વૃદ્ધિ પામેલ इन्द्रियम्-ધનને समाप्यते-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે, यूपेन-મિશ્રિત અથવા પૃથક્-પૃથક્ વ્યવહારથી यूपः-મિશ્રિત રૂપ વ્યવહારના યત્નના ઉદયને, अग्निना-વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિથી प्रणीतः-અત્યંત સંમિલિત अग्निः-અગ્નિને आप्यते-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ સાધનોથી સાધનો મિશ્રિત કરીને સમગ્ર સુખને પ્રાપ્ત કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સાધકતમ સાધનોથી સાધ્ય કાર્યને સિદ્ધ કરવા ઈચ્છે છે, તેઓ જ સાધ્યને સિદ્ધ કરી શકે છે. (૧૭)

हविर्धानं यदश्विनाग्नीध्रं यत्सरस्वती।
इन्द्रायैन्द्रꣳसदस्कृतं पत्नीशालं गार्हपत्यः॥ १८॥

પદાર્થ : હે ગૃહસ્થ સ્ત્રી-પુરુષો ! જેમ વિદ્વાન્ अश्विना-સ્ત્રી અને પુરુષોને यत्-જે हविर्धानम्-લેવા અને દેવા યોગ્ય શુદ્ધ પદાર્થોના પાત્રોને રચેલ છે, અને यत्-જે सरस्वती-વિદુષી સ્ત્રીને आग्नीध्रम-ઋત્વિજ્‌ને શરણ કરતી તથા વિદ્વાનોને इन्द्राय-ઐશ્વર્ય અને સુખ પ્રદાન કરનાર પતિના માટે ऐन्द्रम्-ઐશ્વર્ય-સંપન્ન सदः-જેમાં રહે છે તે સભા અને पत्नीशालम्-પત્ની શાલા-ઘરને વિદ્વાનોએ कृतम्-તૈયાર કરેલ છે, તે સર્વ गार्हपत्यः-ગૃહસ્થ સંયોગી-સંબંધી ધર્મ છે, તેમ તે સર્વ કર્તવ્યને તમે પણ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ ઋત્વિક્‌જનો સામગ્રીનો સંચય કરીને યજ્ઞને સુશોભિત કરે છે, તેમ પ્રેમથી યુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ ઘરના કાર્યોને નિત્ય સિદ્ધ કર્યા કરે. (૧૮)

प्रैषेभिः प्रैषानाप्नोत्याप्रीभिराप्रीर्यज्ञस्य।
प्रयाजेभिरनुयाजान्वषट्कारेभिराहुतीः॥ १९॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ प्रैषेभिः-આજ્ઞા આપવા જેવા કર્મોથી प्रैषान्-આજ્ઞા આપવા યોગ્ય સેવકોને, आप्रीभिः-સર્વ તરફથી તૃપ્ત-પ્રસન્ન કરનારી ક્રિયાઓથી आप्रीः-સર્વથા પ્રીતિને ઉત્પન્ન કરનારી સેવિકાઓને प्रयाजेभिः-ઉત્તમ યજ્ઞ સાધનોથી अनुयाजान्-અનુકૂળ યજ્ઞ પદાર્થોને અને यज्ञस्य-યજ્ઞની वषट्कारेभिः-ક્રિયાઓથી आहुतिः-અગ્નિમાં આપવા યોગ્ય આહુતિઓને आप्नोति-પ્રાપ્ત કરે છે, તે સુખી રહે છે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ સુશિક્ષિત સેવક અને સેવિકાઓવાળા, સાધનો અને ઉપસાધનોથી યુક્ત બનીને શ્રેષ્ઠ કાર્યો કરે છે, તે સર્વને સુખી કરી શકે છે. (૧૯)

पशुभिः पशूनाप्नोति पुरोडाशैर्हवीꣳष्या।

छन्दो॑भिः सामिधे॒नीर्या॒ज्याभि॑र्वषट्का॒रान्॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સદ્ગૃહસ્થ पशुभिः-ગાય આદિ પશુઓથી पशून्-ગાય આદિ પશુઓને, पुरोडाशैः-પચન ક્રિયાઓથી સંસ્કૃત-શુદ્ધ કરેલા ઉત્તમ પદાર્થોથી हवींषि-હવન કરવા યોગ્ય ઉત્તમ પદાર્થોને, छन्दोभिः-ગાયત્રી આદિ છંદોની વિદ્યાથી सामिधेनीः-અગ્નિ પ્રદીપક ઉત્તમ સમિધાઓને, याज्याभिः-યજ્ઞની ક્રિયાઓથી वषट्कारान्-ધર્મયુક્ત આચરણ કરનારાઓને आ + आप्नोति-સર્વથા પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેને તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે આ સંસારમાં અનેક પશુઓવાળા, હોમ કરીને ભોજન કરનારાઓ, વેદવિત્ અને શ્રેષ્ઠ આચરણવાળા મનુષ્યો હોય છે તેઓ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૦)

धा॒नाः क॑र॒म्भः सक्त॑वः परीवा॒पः पयो॒ दधि॑।

सोम॑स्य रू॒पꣳ ह॒विष॑ऽआ॒मिक्षा॒ वाजि॑नं॒ मधु॑॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે हविषः-હોમ કરવા યોગ્ય सोमस्य-યંત્ર દ્વારા ખેંચવા યોગ્ય ઔષધિરૂપ રસના रूपम्-રૂપને धानाः-શેકેલા યવ આદિ અન્ન, करम्भः-મંથનનું સાધન, सक्तवः-સાથવો, परीवापः-જેમાં સર્વત્ર બીજ વાવવામાં આવે છે તે ક્ષેત્ર, पयः-દૂધ, दधि-દહીં, आमिक्षा-દહીંદૂધ અને મધુરથી બનેલ પદાર્થ વિશેષ, वाजिनम्-પ્રશસ્ત અન્નોના સંબંધી સાર વસ્તુ અને मधु-મધ એ પદાર્થોના ગુણોને જાણો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે પદાર્થ પુષ્ટિકારક, સુગંધિત, મધુર અને રોગનાશક છે, તે હવન કરવા યોગ્ય 'हविः' કહેવાય છે. (૨૧)

धा॒नाना॑ꣳ रू॒पं कुव॑लं परीवा॒पस्य॑ गो॒धूमाः॑।

सक्तू॒नाꣳ रू॒पं बद॑रमुप॒वाकाः॑ कर॒म्भस्य॑॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે धानानाम्-શેકેલા જવ આદિ અન્નોનું कुवलम्-બોર સમાન કોમળ રૂપ છે, परीवापस्य-ચૂર્ણ-લોટ આદિનું गोधूमाः-ઘઉં रूपम्-રૂપ છે, सक्तूनाम्-સાથવાનું बदरम्-બોર ના રંગ સમાન रूपम्-રૂપ છે, करम्भस्य-દહીં મેળવેલ સાથવાનું उपवाकाः-સમીપ પ્રાપ્ત જવ रूपम्-રૂપ છે, તેમ જાણો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે લોકો અન્નોનું સુંદર રૂપ બનાવીને ભોજન કરે છે અને કરાવે છે, તેઓ આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૨)

पय॑सो रू॒पं यद्यवा॑ द॒ध्नो रू॒पं क॒र्कन्धू॑नि।

सोम॑स्य रू॒पं वाजि॑नꣳ सौ॒म्यस्य॑ रू॒पमा॒मिक्षा॑॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે यत्-જે यवाः-જવ છે તેની સમાન, पयसः-પાણી અથવા દૂધના रूपम्-રૂપને कर्कन्धूनि-પાકેલાં મોટાં બોર સમાન, दध्नः-દહીંના रूपम्-રૂપને वाजिनम्-બહુ અન્નના સારની સમાન, सोमस्य-સોમ ઔષધિનાં रूपम्-રૂપને आमिक्षा-દૂધ અને દહીંનાં સંયોગથી બનેલ અથવા મધુર અને અમ્લ આદિના સંયોગથી બનેલ પદાર્થની સમાન, सौम्यस्य-સોમ આદિ ઔષધિઓનો સાર હોવાથી रूपम्-સ્વરૂપને સિદ્ધ કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જે - જે અન્નનું સુંદર રૂપ જે રીતે બને, તે તેના રૂપને તે રીતે સદા સિદ્ધ કરે. (૨૩)

आ श्रावयेति स्तोत्रियाः प्रत्याश्रावोऽअनुरूपः।

यजेति धाय्यारूपं प्रगाथा येयजामहाः॥ २४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! તું વિદ્યાર્થીઓને आ + श्रावय-સમસ્ત વિદ્યાનો ઉપદેશ કર.

જે स्तोत्रियाः-સ્તુતિ કરવા યોગ્યને प्रत्याश्रावः-સાંભળવા-સંભળાવવા યોગ્ય વિદ્યા વિષય अनुरूपः-અનુકૂળ જેમ યજ્ઞ છે, તેમ येयजामहाः-જે અધિક યજ્ઞ કરે છે, इति-એ રીતે અર્થાત્ તેની સમાન प्रगाथाः-ઉત્તમ રીતે ગાન કરે, તેની यजेति-સંગત કર. આ રીતે धाय्यारूपम्-ધારણ કરવા યોગ્ય રૂપને યથાવત જાણ. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેઓ પરસ્પર પ્રેમપૂર્વક વિદ્યાના વિષયો સાંભળે અને સંભળાવે છે, તેઓ વિદ્વાન્ બની જાય છે. (૨૪)

अर्द्धऽऋचैरुक्थानाᳬं रूपं पदैराप्नोति निविदः।

प्रणवैः शस्त्राणाᳬं रूपं पयसा सोमऽआप्यते॥ २५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! अर्द्ध ऋचैः-અર્ધ ઋચાઓ અર્થાત્ મંત્ર ભાગો દ્વારા उक्थानाम्-કથન કરવા યોગ્ય વૈદિક સ્તોત્રોના रूपम्-સ્વરૂપને, पदैः-પદોથી सुबन्त-વિભક્તિ પદો તથા तिङ्न्त-ક્રિયાપદોથી અને प्रणवैः-ઓમકારોથી शस्त्राणाम्-શસ્ત્રોના रूपम्-સ્વરૂપને, તથા निविदः-નિશ્ચયથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરનાર જિજ્ઞાસુઓને आप्नोति-પ્રાપ્ત કરે છે, અને જે વિદ્વાન્ દ્વારા पयसा-જલની સાથે सोमः-સોમ ઔષધિનો રસ आप्यते-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, તે વિદ્વાન વેદના જ્ઞાતા-જાણનાર કહેવાય છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનની પાસે ભણીને વેદોના પદ, વાક્ય, મંત્રવિભાગ, શબ્દ, અર્થ અને સંબંધને યથાર્થ જાણી લે છે, તેઓ સંસારમાં અધ્યાપક બને છે. (૨૫)

अश्विभ्यां प्रातःसवनमिन्द्रेणैन्द्रं माध्यन्दिनम्।

वैश्वदेवᳬं सरस्वत्या तृतीयमाप्तᳬं सवनम्॥ २६॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યોએ अश्विभ्याम्-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા દ્વારા પ્રથમ प्रातः सवनम्-પ્રાતઃકાલ યજ્ઞકર્મની પ્રેરણાને इन्द्रेण-વિદ્યુત્‌ના દ્વારા ऐन्द्रम्-ઐશ્વર્યકારક, દ્વિતીય माध्यन्दिनम्-મધ્યાહ્નના सवनम्-આરોગ્યકારી

હોમ આદિ કર્મને, सरस्वत्या-સત્યવાણી દ્વારા वैश्वदेवम्-સંપૂર્ણ વિદ્વાનોના સત્કાર રૂપ तृतीयम्-ત્રીજા સવન અર્થાત્ સાયંકાલની ક્રિયાને યથાવત્ आप्तम्-પ્રાપ્ત કરેલ છે, તેઓ જગતના ઉપકારક છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જેઓ ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણેય કાલોમાં સર્વ મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓનું હિત કરે છે, તેઓ જગતમાં સત્પુરુષ બને છે. (૨૬)

वा॒य॒व्यै॒र्वा॑य॒व्या॒न्या॒प्नोति॒ सते॑न द्रोणकल॒शम्।
कु॒म्भीभ्या॑मम्भृ॒णौ सु॒ते स्था॒लीभिः॑ स्था॒लीरा॑प्नोति॥ २७॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ वायव्यैः-વાયુમાં વિદ્યમાન વા વાયુ દેવતા વાળા દિવ્ય ગુણોત્પાદક છે, તે પદાર્થોથી वायव्यानि-વાયુમાં વિદ્યમાન વા વાયુ દેવતા ગુણો અને કર્મોને, सतेन-વિભાગ યુક્ત કર્મથી द्रोणकलशम्-દ્રોણ પરિમાણ [માપ] અથવા કલશને आप्नोति-પ્રાપ્ત થાય છે.

कुम्भीभ्याम्-ધાન્ય અને જલના પાત્રોથી अम्भृणौ-જલને ધારણ કરનારા બે પાત્રો તથા सुते-તૈયાર કરેલા બે પ્રકારના રસોને स्थालीभिः-પદાર્થોને રાખવા અને પકાવવાની स्थालीः-થાળીઓને आप्नोति-પ્રાપ્ત થાય છે, તેઓ ધનાઢ્ય બને છે. (૨૭)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય વાયુના કાર્યોને ન જાણીને, તેના જ્ઞાન વિના પરિમાણ-માપ વિદ્યાને, એના વિના પાક વિદ્યાને અને તેના વિના અન્નના સંસ્કારની ક્રિયાને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૨૭)

यजु॑र्भिराप्यन्ते॒ ग्रहा॒ ग्रहैः॒ स्तोमा॑श्च॒ विष्टु॑तीः।
छन्दो॑भिरुक्थाश॒स्त्राणि॒ साम्ना॑वभृ॒थऽआ॑प्यते॥ २८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને જે यजुर्भिः-યજુર્વેદોક્ત વિદ્યાના અવયવોથી ग्रहाः-સર્વ ક્રિયાકાંડના ગ્રહણ કરનારા વ્યવહાર, ग्रहैः-ગ્રહોથી स्तोमाः-પદાર્થોના ગુણોની પ્રશંસા च-અને विष्टुतीः-વિવિધ સ્તુતિઓ; छन्दोभिः-ગાયત્રી આદિ છન્દ વા વિદ્વાન્ અને ગુણોની સ્તુતિ કરનારાઓથી उक्थाशस्त्राणि-કથન કરવા યોગ્ય વેદના સ્તોત્ર અને શસ્ત્ર आप्यन्ते-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે; તથા साम्ना-સામવેદથી अवभृथः-શોધન आप्यते-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, તેનો ઉપયોગ યથાવત્ કરવો જોઈએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય વેદાભ્યાસ વિના સર્વ સાંગોપાંગ વેદ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. (૨૮)

इडा॑भिर्भ॒क्षाना॑प्नोति सू॒क्तवा॒केना॒शिषः॑।
शं॒युना॑ पत्नीसंया॒जान्त्स॑मिष्टय॒जुषा॑ सं॒स्थाम्॥ २९॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ ! इडाभिः-પૃથિવીથી भक्षान्-ભક્ષણ કરવા યોગ્ય અન્નાદિ પદાર્થોને सुक्तवाकेन-જે ઉત્તમ વચનથી आशिषः-ઈચ્છાઓ-સિદ્ધિઓને शंयुना-સુખમય વ્યવહારથી पत्नीसंयाजान्-જે પત્નીની સાથે મળે છે તેને समिष्टयजुषा-ઉત્તમ ઈષ્ટ સિદ્ધિ કરનાર યજુર્વેદના કર્મથી संस्थाम्-સારી રીતે રહેવાના સ્થાનને आप्नोति-પ્રાપ્ત કરે છે. તે સુખી કેમ ન બને ? (૨૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થજનો વેદ વિજ્ઞાનથી જ પૃથિવીનાં રાજ્યને ભોગવવાની ઈચ્છા, તેની સિદ્ધિને તથા સંસ્થિતિને પ્રાપ્ત કરે. (૨૯)

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥ ३०॥

પદાર્થ : જે બાળક, કન્યા વા મનુષ્ય व्रतेन-બ્રહ્મચર્ય આદિ નિયમો दीक्षाम्-બ્રહ્મચર્ય આદિ સત્કર્મોના આરંભ રૂપ દીક્ષાને आप्नोति-પ્રાપ્ત કરે છે, दीक्षया-તે દીક્ષાથી दक्षिणाम्-પ્રતિષ્ઠા અને ધનને आप्नोति-પ્રાપ્ત કરે છે, दक्षिणा-તે પ્રતિષ્ઠા અને ધનથી श्रद्धाम्-સત્યના ધારણમાં પ્રીતિરૂપ શ્રદ્ધાને आप्नोति-પ્રાપ્ત કરે છે. વા તે श्रद्धया-શ્રદ્ધાથી જેને सत्यम्-નિત્ય પદાર્થ વા વ્યવહારોમાં ઉત્તમ પરમેશ્વર વા ધર્મની आप्यते-પ્રાપ્તિ કરી છે, તે સુખી થાય છે. (૩૦)

ભાવાર્થ : કોઈપણ મનુષ્ય વિદ્યા, સુશિક્ષા અને શ્રદ્ધા વિના સત્ય વ્યવહારોને પ્રાપ્ત તથા અસત્ય વ્યવહારોનો ત્યાગ કરી શકતો નથી. (૩૦)

एतावद्रूपं यज्ञस्य यद्देवैर्ब्रह्मणा कृतम्।
तदेतत्सर्वमाप्नोति यज्ञे सौत्रामणी सुते॥ ३१॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યે यत्-જે देवैः-વિદ્વાનો દ્વારા ब्रह्मणा-પરમેશ્વર વા ચારે વેદોથી यज्ञस्य-યજ્ઞકર્મનાં एतावत्-એટલા रूपम्-સ્વરૂપને कृतम्-સિદ્ધ કરેલ છે વા પ્રકાશિત કરેલ છે, तत्-તે एतत्-એ सर्वम्-સર્વને सौत्रामणी-જેમાં જનોઈ આદિ ગ્રંથિયુક્ત સૂત્ર ધારણ કરવામાં આવે છે, તે सुते-સિદ્ધ કરેલ यज्ञे-યજ્ઞમાં आप्नोति-પ્રાપ્ત કરે છે, તે દ્વિજ થવાનો આરંભ કરે છે. (૩૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ મનુષ્યોએ જેટલું યજ્ઞનું અનુષ્ઠાનનું અનુસંધાન કરી શકાય, તેટલું કરીને યજ્ઞના મહાન ઉત્તમ ફળને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૩૧)

सुरावन्तं बर्हिषदꣳ सुवीरं यज्ञꣳ हिन्वन्ति महिषा नमोभिः।
दधानाः सोमं दिवि देवतासु मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે महिषाः-મહાન્ પૂજનીય, स्वर्काः-ઉત્તમ અન્ન આદિ પદાર્થોવાળા, यजमानाः-યજ્ઞ કરનારા વિદ્વાનો नमोभिः-અન્નાદિથી सुरावन्तम्-ઉત્તમ સોમરસયુક્ત, बर्हिषदम्-પ્રશસ્ત આકાશમાં સ્થિત થનાર, सुवीरम्-ઉત્તમ શરીર તથા આત્માના બળથી યુક્ત વીરોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા यज्ञम्-યજ્ઞની हिन्वन्ति-વૃદ્ધિ કરે છે; તેઓ दिवि-શુદ્ધ વ્યવહારોમાં देवतासु-વિદ્વાનોમાં सोमम्-ઐશ્વર્ય અને इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પુરુષને दधानाः-ધારણ કરતાં અમે मदेम-આનંદિત બનીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અન્ન આદિ ઐશ્વર્યનો સંચય કરીને, તેથી વિદ્વાનોને સંતુષ્ટ કરીને, ઉત્તમ વિદ્યા અને સુશિક્ષાઓનો સંગ્રહ કરીને સર્વના હિતૈષી હોય છે, તેઓ આ ગૃહાશ્રમમાં પુત્ર અને સ્ત્રીના આનંદને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૨)

यस्ते रसः सम्भृतऽओषधीषु सोमस्य शुष्मः सुरया सुतस्य।
तेन जिन्व यजमानं मदेन सरस्वतीमश्विनाविन्द्रमग्निम्॥ ३३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यः-જે ते-આપના ओषधीषु-સોમલતા આદિ ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન सुतस्य-સિદ્ધ કરેલ सोमस्य-અંશુમાન આદિ ચોવીસ પ્રકારના સોમના सुरया-ઉત્તમ દાનશીલ સ્ત્રીના દ્વારા सम्भृतः-સારી રીતે રાખેલા शुष्मः-બળકારી रसः-આનંદદાયક રસ છે; तेन-તે मदेन-આનંદદાયક રસથી यजमानम्-સુખદાતા યજમાનને, सरस्वतीम्-પ્રશસ્ત વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીને, अश्विनौ-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકને, इन्द्रम्-ઐશ્વર્યયુક્ત સભાપતિ અને સેનાપતિને તથા अग्निम्-અગ્નિની સમાન શત્રુઓને બાળનારા યોદ્ધાઓને जिन्व-પ્રસન્ન કરો. [અર્થાત્ તૃપ્ત કરો.] (૩૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ મનુષ્યો મહા ઔષધિઓના સારનું સ્વયં સેવન કરીને તથા અન્યોને સેવન કરાવીને નિરંતર આનંદની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ ધન્યવાદને યોગ્ય છે. (૩૩)

यमश्विना नमुचेरासुरादधि सरस्वत्यसुनोदिन्द्रियाय।
इमं तꣳ शुक्रं मधुमन्तमिन्दुꣳ सोमꣳ राजानमिह भक्षयामि॥ ३४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! इह-આ સંસારમાં इन्द्रियाय-ધન અને ઈન્દ્રિયના બળ માટે यम्-જે नमुचेः-જળને મુક્ત ન કરનાર आसुरात्-તે મેઘ વ્યવહારથી अधि-અધિક शुक्रम्-શીઘ્ર બલકારી मधुमन्तम्-ઉત્તમ, મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત इन्दुम्-પરમ ઐશ્વર્ય કરનાર राजानम्-પ્રકાશમાન सोमम्-પુરુષાર્થમાં પ્રેરક સોમ ઔષધિને सरस्वती-વિદુષી સ્ત્રી असुनोत्-સિદ્ધ કરે છે, अश्विना-સભાપતિ અને સેનાપતિ પણ સિદ્ધ કરે છે, तम् + इमम्-તે એને હું भक्षयामि-ભક્ષણ કરું અને ભક્ષણ કરાવું છું. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સાર, અન્ન અને રસનુ ભોજન કરનાર હોય છે, તેઓ બળવાન ઈન્દ્રિઓ યુક્ત બનીને સદા આનંદ ભોગવે છે. (૩૪)

यदत्र रिप्तꣳ रसिनः सुतस्य यदिन्द्रोऽअपिबच्छचीभिः।
अहं तदस्य मनसा शिवेन सोमꣳ राजानमिह भक्षयामि॥ ३५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अहम्-હું इह-આ સંસારમાં अस्य-એ सुतस्य-તૈયાર કરેલ रसिनः-ઉત્તમ રસયુક્ત પદાર્થનો यत्-જે ભાગ अत्र-આ સંસારમાં જ रिप्तम्-પ્રાપ્ત છે, વા इन्द्रः-સૂર્ય शचीभिः-આકર્ષણ આદિ ક્રિયાઓથી यत्-જે अपिबत्-પાન કરે છે, तत्-તેને તથા राजानम्-પ્રકાશમાન सोमम्-ઔષધિઓના રસને शिवेन-કલ્યાણકારક मनसा-મનથી भक्षयामि-ભક્ષણ તથા પાન કરું છું, તેમ તમે પણ ભક્ષણ અને પાન કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સૂર્ય પોતાના કિરણોથી જલનું આકર્ષણ-ખેંચીને તથા વરસાવીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમજ તમે અનુકૂળ ક્રિયાઓથી રસોનું સેવન કરીને, બળની વૃદ્ધિ કરીને, કીર્તિની વર્ષાથી સર્વને આનંદિત કરો. (૩૫)

पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः। अक्षन् पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम्॥ ३६॥

પદાર્થ : અમે પુત્ર, શિષ્ય આદિ મનુષ્ય स्वधायिभ्यः-જલ અને અન્નને પ્રાપ્ત કરાવનારા पितृभ्यः-જ્ઞાની જનોને स्वधा-અન્ન પ્રદાન અને नमः-સત્કાર કરીએ છીએ; स्वधायिभ्यः-વિપુલ અન્નના ઈચ્છુક पितामहेभ्यः-પિતાના પિતા અર્થાત્ દાદાઓને स्वधा-સુંદર અન્ન આપતાં તથા नमः-સત્કાર કરીએ છીએ, स्वधायिभ्यः-ઉત્તમ અન્નના ઈચ્છુક प्रपितामहेभ्यः-પિતામહના પિતાઓને અર્થાત્ પરદાદાને स्वधा-અન્ન પ્રદાન તથા नमः-સત્કાર કરીએ છીએ.

હે पितरः-પિતા આદિ જ્ઞાનીજનો ! આપ અમે સારી રીતે બનાવેલ અન્ન આદિનું अक्षन्-ભોજન કરો.

હે पितरः-અધ્યાપકજનો ! આપ આનંદિત બનીને અમને अमीमदन्त-અત્યંત આનંદયુક્ત કરો.

હે पितरः-ઉપદેશકજનો ! આપ તૃપ્ત બનીને અમને अतीतृपन्त-તૃપ્ત કરો.

હે पितरः-વિદ્વાનો ! આપ શુદ્ધ બનીને અમને शुन्धध्वम्-શુદ્ધ કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : હે પુત્રો, શિષ્યો તથા પુત્રવધૂ આદિ આત્મીયજનો ! તમે ઉત્તમ અન્ન આદિ પદાર્થો દ્વારા પિતા આદિ વૃદ્ધોની નિરંતર સેવા કરો. પિતૃજનો પણ તમોને આનંદિત કરે.

જેમ માતા-પિતા આદિ બાળપણમાં તમારી સેવા કરે છે, તેમ તમે વૃદ્ધાવસ્થામાં તેઓની યથોચિત સેવા કરો. (૩૬)

पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा। पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै॥ ३७॥

પદાર્થ : सोम्यासः-ઐશ્વર્યથી યુક્ત અથવા ચન્દ્રમા સમાન શાન્ત, पितरः-જ્ઞાન પ્રદાન કરનાર પાલન કરનાર પિતર લોકો पवित्रेण-શુદ્ધ આચરણથી યુક્ત शतायुषा-સો વર્ષની આયુથી मा-મને पुनन्तु-પવિત્ર કરે.

અતિ બુદ્ધિમાન, ચંદ્રમા સમાન, આનંદકર્તા पितामहाः-પિતાના પિતા-દાદા તે અણીશુદ્ધ સો વર્ષયુક્ત આયુથી मा-મને पुनन्तु-પવિત્ર કરે.

ઐશ્વર્યદાતા, ચન્દ્રમા સમાન શીતલ સ્વભાવવાળા प्रपितामहाः-પરદાદા શુદ્ધ સો વર્ષ સુધી જીવનથી मा-મને पुनन्तु-પવિત્ર કરે. વિદ્યાદિ ઐશ્વર્યયુક્ત વા શાન્ત સ્વભાવ पितामहाः-દાદા पवित्रेण-અત્યંત શુદ્ધ આનંદયુક્ત शतायुषा-સો વર્ષ પર્યન્ત આયુથી મને पुनन्तु-પવિત્ર આચરણયુક્ત કરે.

સુંદર ઐશ્વર્યદાતા વા શાન્તિયુક્ત प्रपितामहाः-પરદાદા પવિત્ર ધર્માચરણયુક્ત સો વર્ષ સુધી મને पुनन्तु-પવિત્ર કરે, જેથી હું विश्वम्-સંપૂર્ણ आयुः-જીવનને व्यश्नवै-પ્રાપ્ત કરું. (૩૭)

ભાવાર્થ : પિતા, દાદા, પરદાદા આદિએ પોતાની પુત્રીઓ અને પુત્રોને બ્રહ્મચર્ય, સુશિક્ષા અને ધર્મના ઉપદેશથી સંપન્ન કરીને વિદ્યાવાન તથા સુશીલ બનાવવા જોઈએ.

સંતાનોએ પણ સેવા અને અનુકૂળ આચરણ દ્વારા પિતા આદિ સર્વની નિત્ય સેવા કરવી જોઈએ. આ રીતે સર્વએ પરસ્પર ઉપકાર દ્વારા ગૃહસ્થાશ્રમમાં આનંદપૂર્વક રહેવું જોઈએ. (૩૭)

अग्न॒ऽआयू॑ꣳषि पवस॒ऽआ सु॒वोर्ज॒मिषं॑ च नः।

आ॒रे बा॑धस्व दु॒च्छुना॑म्॥ ३८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન પિતા, દાદા અને પરદાદા ! જે આપ नः-અમારી आयूंषि-આયુને આપનાર-અન્ન આદિને पवसे-પવિત્ર કરો, તે આપ ऊर्जम्-પરાક્રમ च-અને इषम्-ઈચ્છા-સિદ્ધિને आ + सुव-સર્વત્રથી સિદ્ધ કરો.

તેમજ आरे-દૂર અથવા નજીક વસનારા दुच्छुनाम्-દુષ્ટ કૂતરાં સમાન વર્તાવ કરનારા મનુષ્યોના સંગથી बाधस्व-મુક્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : પિતા આદિજનો, સંતાનોમાં દીર્ઘ આયુ, પરાક્રમ અને શુભ ઈચ્છાને ધારણ કરાવીને પોતાનાં સંતાનોને દુષ્ટોના સંગથી છોડાવીને શ્રેષ્ઠોના સંગમાં પ્રવૃત્ત કરીને ધાર્મિક તથા દીર્ઘાયુ બનાવે, જેથી તેઓ વૃદ્ધાવસ્થામાં પણ કદી અપ્રિય આચરણ કરે નહિ. (૩૮)

पु॒नन्तु॑ मा देवज॒नाः पु॒नन्तु॒ मन॑सा॒ धियः॑।

पु॒नन्तु॒ विश्वा॑ भू॒तानि॒ जात॑वेदः पु॒नी॒हि मा॑॥ ३९॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-ઉત્પન્ન થયેલા મનુષ્યોમાં જ્ઞાની વિદ્વાન્ ! જેમ देवजनाः-વિદ્વાનો मनसा-વિજ્ઞાન અને પ્રેમથી मा-મને पुनन्तु-પવિત્ર કરે, અમારી धियः-બુદ્ધિઓને पुनन्तु-પવિત્ર કરે, विश्वा-સંપૂર્ણ भूतानि-પ્રાણી માત્ર મને पुनन्तु-પવિત્ર કરે, તેમ આપ मा-મને पुनीहि-પવિત્ર કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ પુરુષો અને વિદુષી સ્ત્રીઓનું એ મુખ્ય કર્તવ્ય છે કે, પુત્રો અને પુત્રીઓને નિરંતર બ્રહ્મચર્ય તથા સુશિક્ષા દ્વારા સુશીલ, વિદ્વાન્ અને વિદુષી બનાવે, (૩૯)

प॒वित्रे॑ण पुनीहि मा शु॒क्रेण॑ देव॒ दीद्य॑त्। अग्ने॒ क्रत्वा॒ क्रतूँ॒२ऽरनु॑॥ ४०॥

પદાર્થ : હે दीद्यत्-પ્રકાશમાન देव-વિદ્યાના આપનાર अग्ने-વિદ્વાન્ ! આપ पवित्रेण-શુદ્ધ शुक्रेण-વીર્ય-પરાક્રમથી સ્વયં પવિત્ર બનીને मा-મને આનાથી अनु + पुनीहि-પછી પવિત્ર કર, પોતાની क्रत्वा-બુદ્ધિ વા કર્મથી પોતાની પ્રજ્ઞા અને કર્મને પવિત્ર કરીને અમારી क्रतून-બુદ્ધિઓ તથા કર્મોને પવિત્ર કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : પિતા, અધ્યાપક અને ઉપદેશક સ્વયં ધાર્મિક વિદ્વાન્ બનીને પોતાના સંતાનોને પણ એવા

જ યોગ્ય ધાર્મિક અને વિદ્વાન્ બનાવે. (૪૦)

यत्ते॑ प॒वित्र॑म॒र्चिष्यग्ने॒ वित॑तमन्त॒रा। ब्रह्म॒ तेन॑ पुनातु मा॥ ४१॥

પદાર્થ : હે अग्ने-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ જગદીશ્વર ! ते-તમારા अर्चिषि-સત્કાર કરવા યોગ્ય तेजः-સ્વરૂપમાં अन्तरा-સર્વથી ભિન્ન यत्-જે विततम्-વિસ્તૃત સર્વમાં વ્યાપ્ત पवित्रम्-શુદ્ધ સ્વરૂપ ब्रह्म-ઉત્તમ વેદ વિદ્યા છે, तेन-તેના દ્વારા मा-મને આપ पुनातु-પવિત્ર કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે દેવોના દેવ, પવિત્રોમાં પવિત્ર, વ્યાપ્તોમાં વ્યાપ્ત અન્તર્યામી ઈશ્વર છે, અને તેની વિદ્યા વેદ છે, તેને અનુકૂળ આચરણ કરીને નિરંતર પવિત્ર રહો. (૪૧)

पव॑मानः॒ सोऽअ॒द्य नः॑ प॒वित्रे॑ण॒ विच॑र्षणिः। यः पोता॒ स पु॑नातु मा॥ ४२॥

પદાર્થ : यः-જે જગદીશ્વર नः-અમારી મધ્યમાં पवित्रेण-શુદ્ધ આચરણથી पवमानः-પવિત્ર विचर्षणिः-વિવિધ વિદ્યાઓના દાતા છે, सः-તે अद्य-આજે અમને પવિત્ર કરનાર અને અમારા ઉપદેશક છે, सः-તે पोता-પવિત્ર સ્વરૂપ પરમાત્મા मा-મને पुनातु-પવિત્ર કરે. (૪૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરની સમાન ધાર્મિક બનીને પોતાના સંતાનોને ધર્માત્મા બનાવે. એવા [સંતાનો] વિના તેઓ અન્યોને પણ પવિત્ર કરી શકતા નથી. (૪૨)

उ॒भाभ्यां॑ देव सवितः प॒वित्रे॑ण स॒वेन॑ च। मां पु॑नीहि वि॒श्वतः॑॥ ४३॥

પદાર્થ : હે देव-સુખોના દાતા सवितः-સત્કર્મોના પ્રેરક જગદીશ્વર ! આપ पवित्रेण-પવિત્ર આચરણથી અને सवेन-સમગ્ર ઐશ્વર્ય તથા उभाभ्याम्-વિદ્યા અને પુરુષાર્થથી विश्वतः-સર્વત્રથી माम्-મને पुनीहि-પવિત્ર કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વર સર્વને શુદ્ધિ અને ધર્મ ગ્રહણ કરાવે છે, તેનો આશ્રય કરીને તમે અધર્માચરણથી સદા ડરો. (૪૩)

वै॒श्व॒दे॒वी पु॑न॒ती दे॒व्यागा॒द्यस्या॑मि॒मा ब॒ह्व्य॒स्त॒न्वो॒ वी॒तपृ॑ष्ठाः।
तया॒ मद॑न्तः सध॒मादे॑षु व॒यꣳ स्या॑म॒ पत॑यो र॒यी॒णाम्॥ ४४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वैश्वदेवी-સર્વ વિદુષી સ્ત્રીઓમાં ઉત્તમ, पुनती-સર્વની પવિત્રતા કરનારી, देवी-સકલ વિદ્યા અને ધર્મના આચરણથી પ્રકાશમાન વિદ્યાઓને ભણાવનારી બ્રહ્મચારિણી કન્યા અમને आ + अगात्-પ્રાપ્ત થાય.

જેના હોવાથી इमाः-એ बह्व्यः-અનેક तन्वः-વિસ્તૃત વિદ્યા યુક્ત वीतपृष्ठाः-વિવિધ પ્રશ્નોને જાણનારી હોય, तया-તેના દ્વારા સુશિક્ષિત ભાર્યાઓને [પત્નીઓને] પ્રાપ્ત કરીને वयम्-અમે सधमादेषु-સમાન સ્થાનોમાં मदन्तः-આનંદયુક્ત બનીને रयीणाम्-ધન આદિ ઐશ્વર્યના पतयः-સ્વામી स्याम-બનીએ.

ભાવાર્થ : જેમ રાજા સર્વ કન્યાઓને ભણાવવા માટે પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રીઓની નિયુક્તિ કરીને સર્વ બાળાઓને પૂર્ણ વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત કરે, તેમ બાળકોને પણ કરે.

જ્યારે તે યુવાનીથી પૂર્ણ બને, ત્યારે સ્વયંવર વિવાહ કરાવે. આ રીતે રાજ્યની નિરંતર વૃદ્ધિ કરે. (૪૪)

ये स॒मा॒नाः सम॑नसः पि॒तरो॑ यम॒राज्ये॑।

तेषा॑ लो॒कः स्व॒धा नमो॑ य॒ज्ञो दे॒वेषु॑ कल्पताम्॥ ४५॥

પદાર્થ : ये-જે समानाः-એક સમાન समनसः-સમાન વિજ્ઞાનયુક્ત पितरः-પ્રજાનાં પાલક / રક્ષક જનો यमराज्ये-યથાવત્ ન્યાયકારી સભાધીશ રાજાના રાજ્યમાં છે, तेषाम्-તેની लोकः-સભા વા દર્શન, स्वधा-અન્ન, नमः-સત્કાર અને यज्ञः-સંગ કરવા યોગ્ય ન્યાય देवेषु-વિદ્વાનોમાં कल्पताम्-સમર્થ બને. (૪૫)

ભાવાર્થ : જ્યાં વિશાળ દૃષ્ટિવાળા, અન્ન આદિ ઐશ્વર્યથી સંપન્ન, સજ્જનોથી સત્કાર પામેલા અને એક માત્ર ધર્મમાં જ નિષ્ઠા રાખનારા વિદ્વાનોની સભા સાચો ન્યાય કરે છે, ત્યાં સર્વ મનુષ્યો ઐશ્વર્ય અને સુખમાં નિવાસ કરે છે. (૪૫)

ये स॒मा॒नाः सम॑नसो जी॒वा जी॒वेषु॑ माम॒काः।

तेषा॒ᳬ श्रीर्मयि॑ कल्पताम॒स्मिँल्लो॒के श॒तᳬ समाः॑॥ ४६॥

પદાર્થ : ये-જે अस्मिन्-આ लोके-લોકમાં जीवेषु-જીવોમાં समानाः-સમાન ગુણ, કર્મ સ્વભાવવાળા, समनसः-સમાન ધર્મમાં મન રાખનારા, मामकाः-મારા जीवाः-જિવિત પિતા આદિ છે, तेषाम्-તેની श्रीः-લક્ષ્મી मयि-મારી સમીપ शतम्-સો समाः-વર્ષ સુધી कल्पताम्-સમર્થ બને. (૪૬)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી માતા-પિતા આદિ જીવે, ત્યાં સુધી સંતાનો તેની સેવા કરે.

સંતાન જ્યાં સુધી માતા-પિતા આદિની સેવા કરવામાં તત્પર રહે, ત્યાં સુધી તે સત્કારને યોગ્ય છે.

માતા-પિતા આદિના જે ધનાદિ પદાર્થો છે, તે સર્વ સંતાનોની અને જે સંતાનોના પદાર્થો છે તે માતા-પિતા આદિના રહે. (૪૬)

द्वे सृ॒तीऽअ॑शृणवं पि॒तॄणाम॒हं दे॒वाना॑मु॒त मर्त्या॑नाम्।

ताभ्या॑मि॒दं विश्व॒मेज॒त्समे॑ति॒ यद॑न्त॒रा पि॒तरं॑ मा॒तरं॑ च॥ ४७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! अहम्-હું જે पितृणाम्-પિતા આદિ मर्त्यानाम्-મનુષ્યોની च-અને देवानाम्-વિદ્વાનોની द्वे-બે ગતિઓ सृती-જેમાં જન્મ મરણને પ્રાપ્ત થાય છે અર્થાત્ આવાગમન થાય છે એવા માર્ગોને अश्रृणवम्-સાંભળું છું, ताभ्याम्-તે બે ગતિઓથી इदम्-આ विश्वम्-સર્વ જગત્ एजत्-ચલાયમાન બનીને समेति-ગતિ કરી રહેલ છે. उत-અને यत्-જે पितरम्-પિતા અને मातरम्-માતાથી अन्तरा-પૃથક્

થઈને બીજા શરીરથી અન્ય માતા અને પિતાને પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તમે જાણો. (૪૭)

ભાવાર્થ : જીવોની બે પ્રકારની ગતિ છે. એક માતા-પિતાથી જન્મ પ્રાપ્ત કરીને સંસારનાં વિષય સુખોનો ભોગ કરવો.

બીજી-વિદ્વાનોના સંગ આદિથી મુક્તિ સુખને ભોગવવું.

આ બન્ને ગતિઓની સાથે જ સર્વ પ્રાણીઓ વિચરણ કરે છે. (૪૭)

इदं हविः प्रजननं मेऽअस्तु दशवीरꣳ सर्वगणꣳ स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि। अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतोऽअस्मासु धत्त॥ ४८॥

પદાર્થ : अग्निः-અગ્નિની સમાન પ્રકાશમાન પતિ मे-મારા માટે बहुलाम्-બહુ જ સુખ આપનારી प्रजाम्-પુત્ર-પૌત્ર આદિ પ્રજાને करोतु-ઉત્પન્ન કરે.

मे-મારો જે इदम्-આ प्रजननम्-ઉત્પત્તિ કરવાનો હેતુ, हविः-લેણ-દેણ યોગ્ય दशवीरम्-દશ સંતાનોને ઉત્પન્ન કરનારા, सर्वगणम्-સર્વ સમુદાયોથી સહિત आत्मसनि-જેનાથી આત્માનું સેવન, प्रजासनि-પ્રજાનું સેવન, पशुसनि-પશુઓનું સેવન, लोकसनि-લોકોનું ઉત્તમ રીતે સેવન અને अभयसनि-નિર્ભયતાથી દાનરૂપ કર્મ થાય છે, તે સંતાનને ઉત્પન્ન કરે, તે स्वस्तये-સુખના માટે अस्तु-થાય.

હે માતા-પિતા આદિ લોકો ! આપ अस्मासु-અમારામાં પ્રજા, अन्नम्-અન્ન, पयः-દૂધ અને रेतः-વીર્યને धत्त-ધારણ કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સર્વ વિદ્યાઓ અને શિક્ષાઓને ગ્રહણ કરીને, પરસ્પર પ્રેમથી સ્વયંવર વિવાહ કરીને, ઋતુગામી બનીને, વિધિપૂર્વક સંતાન ઉત્પન્ન કરે છે, તેઓના તે સંતાનો શુભ ગુણોથી સંપન્ન બનીને પિતૃજનોને નિરંતર સુખી કરે છે. (૪૮)

उदीरतामवरऽउत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः।
असुं यऽईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु॥ ४९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ये-જે अवृकाः-ચોરી આદિ દોષોથી રહિત, ऋतज्ञाः-સત્યને જાણનારા, पितरः-પિતા આદિ પાલક, हवेषु-સંગ્રામ આદિ વ્યવહારોમાં असुम्-પ્રાણને उदीयुः-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત કરે છે, ते-તેઓ नः-અમારી उत् + अवन्तु-ઉત્કૃષ્ટતાથી રક્ષા કરે.

ये-જે सोम्यासः-શાન્તિ આદિ ગુણોથી સંપન્ન अवरे-પ્રથમ અવસ્થા યુક્ત-નવીન, परासः-ઉત્કૃષ્ટ અવસ્થાવાળા, मध्यमाः-મધ્યમ વિદ્વાન્ पितरः-પિતા આદિ જનો છે, તેઓ અમને સંગ્રામ આદિ વ્યવહારોમાં उदीरताम्-સારી રીતે પ્રેરિત કરે. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે જીવિત સાધારણ, મધ્યમ અને ઉત્તમ [કોટિના], ચોરી આદિ દોષોથી રહિત, સર્વ જાણવા યોગ્યને જાણેલા અને સર્વ સત્યાસત્ય-યથાર્થ ભાવને પ્રાપ્ત કરેલ વિદ્વાન્ છે, તેઓ વિદ્યાભ્યાસ અને ઉપદેશ દ્વારા સત્યધર્મને ગ્રહણ કરાવવા તથા બાળલગ્નનો નિષેધ કરીને, સર્વ પ્રજાઓનું પાલન કરે. (૪૯)

अङ्गि॑रसो नः पि॒तरो॒ नव॑ग्वा॒ अथ॑र्वाणो॒ भृग॑वः सो॒म्यासः॑।
तेषां॑ व॒यꣳ सु॑म॒तौ य॒ज्ञिया॑ना॒मपि॑ भ॒द्रे सौ॑मन॒से स्या॑म॥ ५०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે नः-અમારી अङ्गिरसः-સર્વ વિદ્યાઓ સિદ્ધાન્તોને જાણનારા, नवग्वाः-નવીન વિજ્ઞાનનો ઉપદેશ કરનારા, अथर्वाणः-અહિંસક, भृगवः-પરિપક્વ વિજ્ઞાનયુક્ત, सोम्यासः-ઐશ્વર્ય સંપન્ન, पितरः-પિતા આદિ પાલક જ્ઞાની જનો છે, तेषाम्-તે यज्ञियानाम्-ઉત્તમ વ્યવહાર કરનારાઓની सुमतौ-સુમતિમાં અને भद्रे-કલ્યાણકારક सौमनसे-ઉત્તમ મન વિજ્ઞાનમાં वयम्-પ્રવૃત્ત स्याम्-બનીએ, તેમ તમે अपि-પણ બનો. (૫૦)

ભાવાર્થ : સંતાનોએ પિતા આદિના જે-જે ધર્મયુક્ત કર્મ હોય, તે-તેનું સેવન કરવું જોઈએ અને જે-જે ધર્મ વિરુદ્ધ હોય તેનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. પિતા આદિ વડીલોએ પણ તેમ વ્યવહાર કરવો જોઈએ. (૫૦)

ये न॒ः पूर्वे॑ पि॒तर॑ः सो॒म्यासो॑ऽनूहि॒रे सो॑मपी॒थं वसि॑ष्ठाः।
तेभि॑र्य॒मः स॑ꣳररा॒णो ह॒वीꣳष्यु॒शन्नु॒शद्भिः॑ प्रतिका॒मम॑त्तु॥ ५१॥

પદાર્થ : ये-જે नः-અમારા सोम्यासः-સૌમ્ય ગુણોવાળા वसिष्ठाः-અત્યંત ધનવાન, पूर्वे-પૂર્વજ पितरः-પાલક જ્ઞાની પિતા આદિ सोमपीथम्-સોમપાનને अनूहिरे-પ્રાપ્ત કરે છે અને કરાવે છે; तेभिः-તેઓ उशद्भिः-અમારા પાલનની કામના કરનારા પિતૃજનોની સાથે हर्वीषि-લેવા-દેવા યોગ્ય પદાર્થોની उशन्-કામના કરનારા, संरराणः-સમ્યક્ સુખોના દાતા, यमः-ન્યાયકારી, સંયમી સંતાન प्रतिकामम्-પ્રત્યેક કામનાનો अत्तु-ભોગ કરે. (૫૧)

ભાવાર્થ : પિતા પુત્રોની સાથે અને પુત્ર પિતાની સાથે સર્વ સુખ-દુઃખોનો ભોગ કરે, પ્રતિ ક્ષણ સુખને વધારે અને દુઃખોનો હ્રાસ કરે. (૫૧)

त्वꣳसो॑म॒ प्र चि॑कितो मनी॒षा त्वꣳ रजि॑ष्ठ॒मनु॒ नेषि॒ पन्था॑म्।
तव॒ प्रणी॑ती पि॒तरो॑ नइन्दो दे॒वेषु॒ रत्न॑मभजन्त॒ धीरा॑ः॥ ५२॥

પદાર્થ : હે सोम-વિવિધ ઐશ્વર્યથી યુક્ત प्रचिकित्ः-વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત પિતા ! त्वम्-તું मनीषा-ઉત્તમ બુદ્ધિથી જે रजिष्ठम्-અત્યંત કોમળ અને સુખદાયક पन्थाम्-માર્ગને नेषि-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને त्वम्-તું મને પણ अनु-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત કર.

હે इन्दो-આનંદકારક ચન્દ્રમા સમાન પિતા ! જે तव-તારી प्रणीति-ઉત્તમ નીતિથી धीराः-ધીર અર્થાત્ યોગીરાજ पितरः-પિતા આદિ જ્ઞાની લોકો देवेषु-વિદ્વાનોમાં नः-અમારા માટે रत्नम्-ઉત્તમ ધનનું अभजन्त-સેવન કરે છે, તે અમને નિત્ય સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૫૨)

ભાવાર્થ : જે સંતાનો પિતાના સેવક બનીને વિદ્યા અને વિનયથી ધર્મનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેઓ પોતાના જન્મને સફળ કરે છે. (૫૨)

त्वया हि नः पितरः सोम पूर्वे कर्माणि चक्रुः पवमान धीराः।
वन्वन्नवातः परिधीꣳ रऽपोर्णु वीरेभिरश्वैर्मघवा भवा नः॥ ५३॥

પદાર્થ : હે पवमान-પવિત્ર સ્વરૂપ, પવિત્ર કર્મ કરનારા અને પવિત્ર કરનારા सोम-ઐશ્વર્યયુક્ત સંતાન ! त्वया-તારી સાથે नः-અમારા पूर्वे-પૂર્વજ धीराः-બુદ્ધિમાન पितरः-પિતા આદિ જ્ઞાનીજન જે ધર્મયુક્ત कर्माणि-કર્મોને चक्रुः-કરતાં હતાં हि-તેનું સેવન અમે પણ કરીએ.

अवातः-હિંસાથી રહિત वन्वन्-ધર્મનું સેવન કરતાં સંતાન તું वीरेभिः-વીરો અને अश्वैः-ઘોડા આદિની સાથે नः-અમારા શત્રુઓની परिधीन्-સર્વ બાજુથી પકડવા યોગ્ય શત્રુઓને अपोर्णु-આચ્છાદન કર અને અમારી મધ્યમાં मधवा-ધનવાન भव-બન. (૫૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાના ધાર્મિક પિતા આદિનું અનુકરણ કરીને, શત્રુઓનું નિવારણ કરીને, પોતાની સેનાના અંગોની પ્રશંસાયુક્ત બનીને સુખી થવું જોઈએ. (૫૩)

त्वꣳ सोम पितृभिः संविदानोऽनु द्यावापृथिवीऽआ ततन्थ।
तस्मै तऽइन्दो हविषा विधेम वयꣳ स्याम पतयो रयीणाम्॥ ५४॥

પદાર્થ : હે सोम-ચંન્દ્રમા સમાન આનંદકારક ઉત્તમ સંતાન ! पितृभिः-જ્ઞાનયુક્ત પિતરજનોની સાથે संविदानः-પ્રતિજ્ઞા કરતાં જે त्वम्-તું अनु, द्यावा-पृथिवी-સૂર્ય અને પૃથિવીના મધ્યમાં ધર્માનુકૂળ આચરણથી સુખનો आ, ततन्थ-વિસ્તાર કર.

હે इन्दो-ચન્દ્રમા સમાન પ્રિયદર્શન ! तस्मै-તે ते-તારા માટે वयम्-અમે हविषा-લેવા-દેવા યોગ્ય વ્યવહારથી સુખનું विधेम-વિધાન કરીએ જેથી અમે रयीणाम्-ધનોના पतयः-પાલન કરનારા સ્વામી स्याम-બનીએ. (૫૪)

ભાવાર્થ : હે સંતાનો ! તમે જેમ ચન્દ્રલોક પૃથિવીની ચારે તરફ ભ્રમણ કરતાં સૂર્યની પરિક્રમા કરે છે, તેમજ પિતા અને અધ્યાપક આદિનું અનુચરણ કરો. (૫૪)

बर्हिषदः पितर ऊत्यर्वागिमा वो हव्या चकृमा जुषध्वम्।
तऽआगतावसा शन्तमेनाथा नः शंयोररपो दधात॥ ५५॥

પદાર્થ : હે बर्हिषदः-ઉત્તમ સભામાં વિરાજમાન, पितरः-ન્યાયથી પાલન કરનાર પિતર લોકો ! અમે अर्वाक्-પશ્ચાત્ જે वः-તમારા માટે ऊती-રક્ષણ આદિ ક્રિયાથી इमा-એ हव्या-ભોજન યોગ્ય

પદાર્થોનો चकृम-સંસ્કાર કરીએ છીએ, તેનું તમે जुषध्वम्-સેવન કરો, शन्तमेन-અત્યંત કલ્યાણકારક अवसा-રક્ષણ આદિ કર્મની સાથે आ-गत-આવો.

अथ-એ પછી नः-અમારા માટે शम्-સુખ અને अरपः-સત્યાચરણને दधात-ધારણ કરો તથા દુઃખને योः-અમારાથી દૂર કરો. (૫૫)

ભાવાર્થ : જે પિતૃ-જનોની સેવા સંતાનો કરે તેઓ પોતાના સંતાનોને સુશિક્ષાથી સુશીલતાને ધારણ કરે. (૫૫)

आहं पितॄन्त्सुविदत्राँ२ऽअवित्सि नपातं च विक्रमणं च विष्णोः।
बर्हिषदो ये स्वधया सुतस्य भजन्त पित्वस्तऽइहागमिष्ठाः॥ ५६॥

પદાર્થ : ये-જે बर्हिषदः-ઉત્તમ આસન પર વિરાજમાન પિતર લોકો इह-આ વર્તમાન કાલમાં स्वधया-અન્ન આદિથી તૃપ્ત सुतस्य-શુદ્ધ કરેલ पित्वः-સુગંધિત પાનનું च-પણ आ-भजन्त-સેવન કરે છે ते-તેઓ आगमिष्ठाः-અમારી પાસે આવે.

જે આ સંસારમાં विष्णोः-વ્યાપક પરમાત્માના नपातम्-નાશરહિત विक्रमणम्-વિવિધ સૃષ્ટિક્રમને च-પણ જાણે છે, તે सुविदत्रान्-ઉત્તમ સુખાદિનું દાન આપનારા पितॄन्-પિતરોને अहम्-હું अवित्सि-જાણું છું. (૫૬)

ભાવાર્થ : જે પિતર લોકો વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષા કરે છે અને કરાવે છે, તેઓની પુત્ર અને કન્યાઓ સમ્યક્ સેવા કરે. (૫૬)

उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु।
तऽआगमन्तु तऽइह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्॥ ५७॥

પદાર્થ : જે सोम्यासः-ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય पितरः-પિતરો बर्हिष्येषु-ઉત્તમોમાં શ્રેષ્ઠ, प्रियेषु-પ્રીતિકારક निधिषु-રત્નાદિથી પૂર્ણ કોશોને માટે उपहूताः-બોલાવેલા છે, ते-તેઓ इह-એ અમારી સમીપના સ્થાનમાં आ-गमन्तु-આવે, ते-તેઓ અમારા વચનો-વાતોને श्रुवन्तु-સાંભળે, ते-તેઓ अस्मान्-અમને अधि-ब्रुवन्तु-અધિક ઉપદેશથી બોધયુક્ત કરે, ते-તેઓ અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે. (૫૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાર્થી અધ્યાપકોને સમીપ બોલાવીને, તેઓનો સત્કાર કરીને તેઓ દ્વારા વિદ્યા ગ્રહણ કરવા ઈચ્છે, તેને તેઓ પ્રેમથી ભણાવે.

તેમજ તેમને વિષયાસક્તિ આદિ દુષ્ટ કર્મોથી સર્વ રીતે દૂર રાખે. (૫૭)

आ यन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः।
अस्मिन् यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्॥ ५८॥

પદાર્થ : જે सोम्यासः-ચન્દ્રમાની સમાન શાન્ત, શમ-દમ આદિ ગુણોથી યુક્ત, अग्निष्वात्ताः-અગ્નિ આદિ પદાર્થવિદ્યામાં નિપુણ, नः-અમારા पितरः-અન્ન અને વિદ્યાના દાનથી રક્ષક, જનક =પિતા,

અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે ते-તેઓ देवयानैः-આપ્ત-વિદ્વાન્ લોકો જે માર્ગોથી જાય છે તે पथिभिः-ધર્મયુક્ત માર્ગોથી आ + यन्तु-આવે.

अस्मिन्-એ यज्ञे-અધ્યાપન અને ઉપદેશ રૂપ યજ્ઞ-વ્યવહારમાં વિદ્યમાન રહીને स्वधया-અન્ન આદિથી मदन्तः-આનંદિત બનીને अस्मान्-અમને अधि + ब्रुवन्तु-અધિષ્ઠાતા બનીને ઉપદેશ કરે અને ભણાવે, અમારી अवन्तु-સદા રક્ષા કરે. (૫૮)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓએ વિદ્યાવૃદ્ધ અને વયોવૃદ્ધ પિતર લોકોથી વિદ્યા અને રક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને આપ્તજનો [સત્યવાદી, નિષ્કપટી અને પરોપકારી] ના માર્ગથી ચાલીને સર્વની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૫૮)

अग्निष्वात्ताः पितर ऽ एह गच्छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः।
अत्ता हवींꣳषि प्रयतानि बर्हिष्यथा रयिꣳ सर्ववीरं दधातन॥ ५९॥

પદાર્થ : सुप्रणीतयः-અત્યુત્તમ ન્યાયમાર્ગથી યુક્ત, अग्निष्वात्ताः-અગ્નિ આદિ વિદ્યાના જ્ઞાતા पितरः-પાલક पितरः-આપ इह-આ સમયે વિદ્યા પ્રચાર માટે आ-गच्छत-આવો.

सदः सदः-પ્રત્યેક ઘરમાં सदत-બેસો, प्रयतानि-પ્રયત્નથી સિદ્ધ કરેલ हवींषि-ભોજનને યોગ્ય અન્ન આદિ પદાર્થોનો अत्त-ભોગ કરો.

अथ-ત્યાર પછી बर्हिषि-વિદ્યા પ્રચારરૂપ વ્યવહારમાં સ્થિત બનીને અમારા માટે सर्ववीरम्-સર્વ વીર પુરુષોને કરાવનારા रयिम्-ધનને दधातन-ધારણ કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો ઉપદેશ માટે પ્રત્યેક ઘરમાં આવાગમન કરીને સત્યધર્મનો પ્રચાર કરે છે, તેઓ ગૃહસ્થો દ્વારા શ્રદ્ધાપૂર્વક આપેલા અન્ન-પાન આદિનું સેવન કરે.

સર્વને શરીર અને આત્માના બળને યોગ્ય અને પુરુષાર્થી બનાવીને ધનવાન બનાવે. (૫૯)

येऽअग्निष्वात्ता येऽअनग्निष्वात्ता मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते।
तेभ्यः स्वराडसुनीतिमेतां यथावशं तन्वं कल्पयाति॥ ६०॥

પદાર્થ : ये-જે अग्निष्वात्ताः-ઉત્તમ રીતિથી અગ્નિવિદ્યાના જ્ઞાતા, ये-જે अनग्निष्वात्ताः-અગ્નિ વિદ્યાથી ભિન્ન અન્ય પદાર્થ વિદ્યાઓના જ્ઞાતા વા જ્ઞાની પિતરો दिवः-વા વિજ્ઞાન આદિ પ્રકારના मध्ये-મધ્યમાં स्वधया-પોતાના પદાર્થોની ધારણ ક્રિયાથી मादयन्ते-આનંદિત થાય છે, तेभ्यः-તે પિતરો માટે स्वराट्-સ્વયં પ્રકાશ સ્વરૂપ પરમાત્મા एताम्-એ असुनीतिम्-પ્રાણોને પ્રાપ્ત કરનારા तन्वम्-શરીરને यथावशम्-કામના અનુસાર कल्पयाति-સમર્થ બનાવે. (૬૦)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! જે અગ્નિ આદિ પદાર્થ વિદ્યાને જાણીને તેનો પ્રસાર કરે છે અને જે જ્ઞાની વિદ્વાનો પોતાના જ પદાર્થોથી સંતુષ્ટ રહે છે, તેઓનાં શરીરોને આપ દીર્ઘાયુ બનાવો, એ [વિષય આપથી] પ્રાર્થના યોગ્ય છે. (૬૦)

अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे नाराशꣳसे सोमपीथं यऽआशुः।

ते नो विप्रासः सुहवा भवन्तु वयꣳ स्याम पतयो रयीणाम्॥ ६१॥

પદાર્થ : ये-જે सोमपीथम्-સોમ આદિ ઉત્તમ ઔષધિ રસનું आशुः-સેવન કરે છે, જે ऋतुमतः-પ્રશંસિત વસંત આદિ ઋતુઓમાં ઉત્તમ કર્મ કરનારા, अग्निष्वात्तान्-ઉત્તમ રીતે અગ્નિ વિદ્યાના જ્ઞાતા, પિતા આદિ જ્ઞાનીઓને અમે नाराशंसे-મનુષ્યોમાં પ્રશંસારૂપ સત્કાર પૂર્ણ વ્યવહારથી हवामहे-બોલાવીએ છીએ, ते-તેઓ विप्रासः-મેધાવી લોકો नः-અમારા માટે सुहवाः-ઉત્તમ પદાર્થોના દાતા भवन्तु-બને અને वयम्-તેઓની કૃપાથી रयीणाम्-ધનોના पतयः-સ્વામી स्याम-બનીએ. (૬૧)

ભાવાર્થ : સંતાનોએ પદાર્થ વિદ્યાના જ્ઞાતા, દેશકાલના જાણકાર, પ્રશસ્ત ઔષધિઓના રસનું સેવન કરનારા, વિદ્યાવૃદ્ધ અને વયોવૃદ્ધ પિતા આદિને સત્કાર માટે બોલાવીને, તેઓના સહયોગથી ધન આદિ ઐશ્વર્યથી સંપન્ન બને. (૬૧)

आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येमं यज्ञमभिगृणीत विश्वे।
मा हिꣳसिष्ट पितरः केन चिन्नो यद्व आगः पुरुषता कराम॥ ६२॥

પદાર્થ : હે विश्वे-સર્વ पितरः-પિતૃલોકો ! તમે केनचित्-કોઈ કારણે नः-અમારી જે पुरुषता-પુરુષતા છે. તેનો मा हिंसिष्ट-નાશ ન કરો, જેથી અમે સુખને कराम-પ્રાપ્ત કરીએ.

यत्-જે वः-તમારા आगः-અપરાધને અમે છોડાવીએ.

તમે इमम्-આ यज्ञम्-સત્કાર ક્રિયારૂપ વ્યવહારને अभि-गृणीत्-અમારી સમક્ષ પ્રશંસિત કરો.

અમે जानु-ગોઠણને आच्य-નીચે રાખીને दक्षिणतः-તમારી જમણી બાજુમાં निषद्य-બેસીને તમારો નિરંતર સત્કાર કરીએ. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેના પિતૃજનો જ્યારે તેઓની સમીપ આવે અથવા તેઓ સ્વયં તેઓની સમીપ જાય, ત્યારે તેઓ સંતાન ભૂમિ પર ગોઠણ ટેકવીને, પ્રણામ કરીને તેઓને પ્રસન્ન કરે,

પિતૃજનો આશીર્વાદ, વિદ્યા તથા સુશિક્ષામય ઉપદેશના દાનથી પોતાના સંતાનોને પ્રસન્ન કરીને તેઓની સદા રક્ષા કરે. (૬૨)

आसीनासोऽअरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय।
पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्रयच्छत तऽइहोर्जं दधात॥ ६३॥

પદાર્થ : હે पितरः-પિતૃઓ ! તમે इह-આ ગૃહાશ્રમમાં अरुणीनाम्-ગૌરવર્ણયુક્ત સ્ત્રીઓની उपस्थे-સમીપમાં आसीनासः-બેઠેલાં पुत्रेभ्यः-પુત્રોને તથા दाशुषे-દાતા मर्त्याय-મનુષ્ય માટે रयिम्-ધનને धत्त-ધારણ કરો, तस्य-તે वस्वः-ધનના ભાગોને प्र-यच्छत-પ્રદાન કરો, જેથી ते-તેઓ સ્ત્રી આદિ સર્વે ऊर्जम्-પરાક્રમને दधात-ધારણ કરે. (૬૩)

ભાવાર્થ : તે જ વૃદ્ધ પિતર છે, જે સ્વપત્નીના વ્રતધારી, સ્વપત્નીનો સત્કાર કરનારા બનીને, પોતાના

સંતાનોનો દાયભાગ તથા સત્પાત્રોને સદા દાન આપે છે. તેઓ સંતાનોના માટે માનનીય છે. (૬૩)

यमग्ने कव्यवाहन त्वं चिन्मन्यसे रयिम्।
तन्नो गीर्भिः श्रवाय्यं देवत्रा पनया युजम्॥ ६४॥

પદાર્થ : હે कव्यवाहन-બુદ્ધિમાનોની સમીપ ઉત્તમ પદાર્થ પ્રાપ્ત કરાવનાર अग्ने-અગ્નિની સમાન પ્રકાશયુક્ત વિદ્વાન્ ! त्वम्-આપ गीर्भिः-મૃદુ વાણીઓથી श्रवाय्यम्-સંભળાવા યોગ્ય, देवत्रा-વિદ્વાનોમાં युजम्-યુક્ત કરવા યોગ્ય यम्-જે रयिम्-ઐશ્વર્યને मन्यसे-જાણે છે, तम्-તેને चित्-પણ नः-અમારા માટે पनय-પ્રદાન કરો. (૬૪)

ભાવાર્થ : પિતરોએ પુત્રો તથા સત્પાત્રોના માટે પ્રશંસનીય ધનનો સંચય કરવો જોઈએ, તેથી તેઓને વિદ્વાન્ બનાવીને, સત્યધર્મના ઉપદેશકો બનાવીને, વિદ્યા અને ધર્મનો પ્રચાર કરાવવો જોઈએ. (૬૪)

योऽअग्निः कव्यवाहनः पितॄन्यक्षदृतावृधः।
प्रेदु हव्यानि वोचति देवेभ्यश्च पितृभ्य आ॥ ६५॥

પદાર્થ : यः-જે कव्यवाहनः-વિદ્વાનોના શ્રેષ્ઠ કર્મોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, अग्निः-અગ્નિની સમાન વિદ્યાઓમાં પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ ऋतावृधः-વેદ વિદ્યાથી વૃદ્ધ पितॄन्-પિતરોનો यक्षत्-સત્કાર કરે છે, તે इत् उ-વિચારપૂર્વક देवेभ्यः-વિદ્વાનો च-તથા पितृभ्यः-જનક આદિ પિતરોને માટે हव्यानि-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાનોનો प्रावोचति-સારી રીતે સર્વ પ્રકારે ઉપદેશ કરે છે. (૬૫)

ભાવાર્થ : જે બ્રહ્મચર્યથી પૂર્ણ વિદ્યાવાન હોય છે, તેઓ વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન્ અને પિતરોમાં પિતર માનવામાં આવે છે. (૬૫)

त्वमग्नऽईडितः कव्यवाहनावाड्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वी।
प्रादाः पितृभ्यः स्वधया तेऽअक्षन्नद्धि त्वं देव प्रयता हवींषि॥ ६६॥

પદાર્થ : હે कव्यवाहन-કવિઓનાં પ્રશસ્ત કર્મોને પ્રાપ્ત કરનાર अग्ने-અગ્નિની સમાન પવિત્ર વિદ્વાન્ પુત્ર ! ईडितः-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત त्वम्-તું सुरभीणि-સુગંધ આદિ યુક્ત हव्यानि-ખાવા યોગ્ય પદાર્થો कृत्वी-બનાવીને अवाट्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેને पितृभ्यः-પિતરોને માટે प्रादाः-પ્રદાન કર, ते-તે પિતરો स्वधया-અન્ન આદિ એ પદાર્થોનો अक्षन्-ભોગ કરે.

હે देव-વિદ્વાન્ દાતા ! त्वम्-તું प्रयता-પ્રયત્નથી પ્રાપ્ત हवींषि-ખાવાં યોગ્ય પદાર્થોનું-અન્નોનું अद्धि-ભોજન કર. (૬૬)

ભાવાર્થ : પુત્ર આદિ ઉત્તમ રીતિથી સંસ્કૃત, સુગંધ આદિથી યુક્ત, અન્ન અને પાનોથી પિતૃજનોને ભોજન કરાવીને સ્વયં ઉક્ત પદાર્થોનું ભોજન કરે, એ જ પુત્રોની યોગ્યતા છે.

જે ઉત્તમ રીતિથી સંસ્કૃત અન્ન-પાનનું સેવન કરે છે, તેઓ નીરોગ અને શતાયુ બને છે. (૬૬)

ये चेह पितरो ये च नेह याँश्च विद्म याँ२ऽउ च न प्रविद्म।
त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञꣳ सुकृतं जुषस्व॥ ६७॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-નવીન તીક્ષ્ણ બુદ્ધિવાળા વિદ્વાન્ ! ये-જે इह-અહીં च-જ पितरः-પિતા આદિ જ્ઞાનીજનો છે, च-અને ये-જે इह-અહીં न-નથી च-અને અમે यान्-જેને विद्म-જાણીએ છીએ च-અને यान्-જેને न-प्रविद्म-જાણતા નથી, તે यति-જેટલાને त्वम्-આપ वेत्थ-જાણો છો उ-અને ते-તેઓ આપને પણ જાણે છે, તેનું સેવારૂપ सुकृतम्-પુણ્યજનક यज्ञम्-સત્કાર રૂપ વ્યવહારને स्वधाभिः-અન્નાદિથી जुषस्व-સેવન કરો. (૬૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પ્રત્યક્ષ અથવા અપ્રત્યક્ષ વિદ્વાન્, અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે, તે સર્વેને બોલાવીને અન્નાદિથી સદા સત્કાર કરો. જેથી આપ-સ્વયં પણ સર્વત્ર સત્કારને પ્રાપ્ત કરો. (૬૭)

इदं पितृभ्यो नमोऽअस्त्वद्य ये पूर्वासो यऽउपरास ईयुः।
ये पार्थिवे रजस्या निषत्ता ये वा नूनꣳ सुवृजनासु विक्षु॥ ६८॥

પદાર્થ : ये-જે પિતરો पूर्वासः-અમારાથી વિદ્યા વા વયમાં વૃદ્ધ છે, ये-જે उपरासः-વાનપૃસ્થ વા સંન્યાસ આશ્રમને પ્રાપ્ત, ગૃહાશ્રમના વિષય ભોગોથી ઉદાસીન ચિત્ત પિતરજનો ईयुः-પ્રાપ્ત થાય ;

ये-જે पार्थिवे-પૃથિવી પર પ્રસિદ્ધ रजसि-લોકમાં-સ્થાનમાં आ-निषत्ताः-નિવાસ કરનારા છે, वा-અથવા ये-જે नूनम्-નિશ્ચિત રૂપથી सुवृजनासु-ઉત્તમ ગતિવાળી विक्षुः-પ્રજાઓમાં પ્રયત્ન કરે છે; તે पितृभ्यः-પિતરોને માટે अद्य-આ જ इदम्-આ नमः-સુગંધિત અન્ન अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. (૬૮)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જે પ્રજાને શુદ્ધ કરનાર, મારાથી શ્રેષ્ઠ, વિરક્ત આશ્રમ [વાનપ્રસ્થ, સંન્યાસ] ને પ્રાપ્ત પિતા આદિ છે, તેની પુત્ર આદિ મનુષ્યોએ સદા સેવા કરવી જોઈએ, અન્યથા કેટલીય હાનિ થાય છે. (૬૮)

अधा यथा नः पितरः परासः प्रत्नासोऽअग्नऽऋतमाशुषाणाः।
शुचीदयन्दीधितिमुक्थशासः क्षामा भिन्दन्तोऽअरुणीरप व्रन्॥ ६९॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! यथा-જેમ नः-અમારા परासः-ઉત્તમ, प्रत्नासः-પ્રાચીન, उक्थशासः-ઉત્તમ શિક્ષા કરનારા, शुचि-પવિત્ર ऋतम्-સત્યને आशुषाणाः-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરનાર पितरः-પિતા આદિ જ્ઞાનીજન दीधितम्-વિદ્યા-પ્રકાશ, अस्रणीः-સુશીલતાથી પ્રકાશમય સ્ત્રીઓ અને क्षामा-નિવાસ ભૂમિને अयन्-પ્રાપ્ત કરે છે.

अध-તદનન્તર અવિદ્યાનું भिन्दन्तः-વિદારણ કરતાં इत्-જ અંધકારરૂપ આવરણોને अप-व्रन्-દૂર

કરે છે, તેની તું એ પ્રકારે સેવા કર. (૬૯)

ભાવાર્થ : જેઓ જનક-પિતા આદિ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવીને અવિદ્યાનું નિવારણ કરે છે, તેઓ આ સંસારમાં સર્વ લોકો દ્વારા સત્કાર કરવા યોગ્ય બને છે. (૬૯)

उशन्तस्त्वा नि धीमह्युशन्तः समिधीमहि।
उशन्नुशतऽआ वह पितॄन्हविषेऽअत्तवे॥ ७० ॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! વા પુત્ર ! તારી उशन्तः-કામના કરતાં અમે त्वा-તને नि-धीमहि-વિદ્યાનિધિ રૂપ બનાવીએ.

उशन्तः-કામના કરતાં અમે તને समिधीमहि-ઉત્તમ વિદ્યાથી પ્રકાશિત કરીએ.

उशन्-કામના કરતાં તું हविषे-ભોજન કરવા યોગ્ય પદાર્થને अत्तवे-ખાવા માટે उशतः-કામના કરનારા અમે पितृन्-પિતરોને आ-वह-સારી રીતે પ્રાપ્ત કર. (૭૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન્ લોક; બુદ્ધિમાન, જિતેન્દ્રિય કૃતજ્ઞ-ઉપકાર માનનારા, પરિશ્રમી અને વિચારશીલ વિદ્યાર્થીઓની નિત્ય કામના કરે.

તેમજ વિદ્યાર્થી પણ એવા અધ્યાપક વિદ્વાનોની સેવા કરીને વિદ્વાન્ બને. (૭૦)

अपां फेनेन नमुचेः शिरऽइन्द्रोदवर्तयः। विश्वा यदजयः स्पृधः॥ ७१ ॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સૂર્ય સમાન તેજસ્વી સેનાપતિ ! જેમ સૂર્ય अपाम्-જલોની फेनेन-વૃદ્ધિથી नमुचेः-પોતાના જલ-સ્વરૂપને ન છોડનાર વાદળોનાં शिरः-ઘનાકાર ઉપરના ભાગને વિખેરી નાખે છે, તેમ તું પોતાની સેનાઓને उदवर्त्तयः-ઉન્નત કર, यत्-જે विश्वाः-સર્વ स्पृधः-સ્પર્ધા કરનારી શત્રુઓની સેના છે, તેને अजयः-જીત. (૭૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય દ્વારા [તેના પ્રકાશથી] ઢંકાયેલ વાદળાંઓ ઉમડે છે, તેમજ તે શત્રુ પણ વારંવાર ઊઠે છે. તે જ્યાં સુધી પોતાના બળને અલ્પ તથા અન્યોના બળને અધિક જુએ છે, ત્યાં સુધી શાન્ત રહે છે. (૭૧)

सोमो राजामृतꣳ सुत ऋजीषेणाजहान्मृत्युम्।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥ ७२ ॥

પદાર્થ : જે ऋतेन-સત્ય બ્રહ્મના સંગથી अन्धसः-સુસંસ્કૃત અન્નાદિના સંબંધી सत्यम्-વિદ્યમાન દ્રવ્યોમાં ઉત્તમ પદાર્થ, विपानम्-વિવિધ પાન કરવામાં સાધન, शुक्रम्-શીઘ્ર કાર્ય કરાવનાર इन्द्रियम्-ધન, इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્ય વાળા જીવના इनद्रियम्-શ્રોત આદિ ઈન્દ્રિય, इदम्-જલ, पयः-દૂધ, अमृतम्-અમૃતરૂપ બ્રહ્મ વા ઔષધિનો સાર અને मधु-મધનું ગ્રહણ કરે છે; તે अमृतम्-અમૃતરૂપ આનંદને પ્રાપ્ત

થઈને सुतः-સંસ્કાર યુક્ત सोमः-ઐશ્વર્યવાન પ્રેરક राजा-ન્યાય વિદ્યાથી પ્રકાશમાન રાજા ऋजीषेण-સરળ ભાવથી मृत्युम्-મૃત્યુ દુઃખને अजहात्-છોડી દે છે. (૭૨)

ભાવાર્થ : જેઓ સુશીલ બનીને વિદ્વાનોના સંગથી સર્વ શુભ લક્ષણોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ મૃત્યુ-દુઃખને છોડીને મોક્ષ-સુખને ગ્રહણ કરે છે. (૭૨)

अद्भ्यः क्षीरं व्यपिबत् क्रुङ्ङाङ्गिरसो धिया।

ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदंपयोऽमृतं मधु॥ ७३॥

પદાર્થ : જે आङ्गिरसः-અંગિરા વિદ્વાનથી બનેલા વિદ્વાન્ धिया-કર્મના દ્વારા अद्भ्यः-જલોથી क्षीरम्-દૂધને क्रुङ्-ક્રૌંચ પક્ષીની સમાન થોડું-થોડું व्यपिबत्-પાન કરે છે, सः-તે ऋतेन-યથાર્થ યોગાભ્યાસથી इन्द्रस्य-ઐશ્વર્યયુક્ત જીવના अंधसः-અન્નાદિના યોગથી इदम्-એ પ્રત્યક્ષ सत्यम्-સત્ય પદાર્થોમાં અવિનાશી विपानम्-વિવિધ શબ્દ, અર્થ, સંબંધયુક્ત शुक्रम्-પવિત્ર इन्द्रियम्-દિવ્ય વાણીને, पयः-ઉત્તમ રસ, अमृतम्-રોગનાશક ઔષધિ, मधु-મધુરતા અને इन्द्रियम्-દિવ્ય શ્રોતને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૩)

ભાવાર્થ : જેઓ સત્ય આચરણ આદિ કર્મોથી વૈદ્યકશાસ્ત્રની વિધિથી યુક્ત આહાર-વિહાર કરે છે, તેઓ સત્ય બોધ અને સત્ય વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૩)

सोममद्भ्यो व्यपिबच्छन्दसा हꣳसः शुचिषत्।

ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥ ७४॥

પદાર્થ : જે शुचिषत्-પવિત્ર વિદ્વાનોમાં બેસનાર, हंसः-દુઃખનાશક વિવેકીજન छन्दसा-સ્વચ્છંદતાથી अद्भ्यः-ઉત્તમ સંસ્કારયુક્ત જલોથી सोमम्-સોમલતા આદિ મહૌષધિઓના સાર રસને व्यपिबत्-વિવિધ પ્રકારથી પાન કરે છે, તે ऋतेन-સત્યવેદ વિજ્ઞાનથી अन्धसः-સુગંધિત અન્નના દોષ નિવારક, शुक्रम्-શુદ્ધિ કરનાર, विपानम्-વિવિધ રક્ષાથી યુક્ત ગુણ, सत्यम्-પરમેશ્વર આદિ સત્ય પદાર્થોમાં ઉત્તમ, इन्द्रियम्-પ્રજ્ઞાનરૂપ, इन्द्रस्य-યોગવિદ્યાથી ઉત્પન્ન પરમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનાર, इदम्-એ પ્રત્યક્ષ પ્રતીતિના આશ્રય पयः-ઉત્તમ જ્ઞાન રસવાળા, अमृतम्-મોક્ષ, मधु-મધુ વિદ્યા અને इन्द्रियम्-જીવથી સેવન કરવા યોગ્ય શુભકર્મને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, તે જ અખિલ આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો ઉચિત આહાર-વિહાર કરનારા બનીને વેદોને ભણીને, યોગાભ્યાસ કરીને, અવિદ્યા આદિ ક્લેશને હટાવીને, યોગની સિદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરીને, તેના અભિમાનનો ત્યાગ કરીને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ બ્રહ્માનંદને ભોગવે છે. (૭૪)

अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत् क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः।

ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं

मधु॥ ७५ ॥

પદાર્થ : જે ब्रह्मणा-ચારે વેદોના જ્ઞાતા બ્રહ્મા સાથે प्रजापतिः-પ્રજાના રક્ષક સભાપતિ રાજા, परिस्रुतः-સર્વત્રથી પાકેલા अन्नात्-જવ આદિ અન્નથી નીકળેલા पयः-દૂધ સમાન પદાર્થ, सोमम्-ઐશ્વર્યયુક્ત रसम्-સારરૂપ રસ અને क्षत्रम्-ક્ષત્રિય કુળને व्यपिबत्-ગ્રહણ કરે છે; તે ऋतेन-વિદ્યા તથા વિનયથી યુક્ત ન્યાયથી अन्धसः-અંધકાર રૂપ અન્યાયના નિવારક પુરુષ, शुक्रम्-પરાક્રમી, विपानम्-વિવિધ રક્ષણના હેતુ, सत्यम्-સત્ય વ્યવહારોમાં શ્રેષ્ઠ, इन्द्रियम्-ઈન્દ્રનામક પરમાત્મા પ્રદત્ત પદાર્થ, इन्द्रस्य-સમગ્ર ઐશ્વર્યના પ્રદાતા રાજ્યની પ્રાપ્તિ કરાવનારા, इदम्-એ પ્રત્યક્ષ पयः-પીવા યોગ્ય દૂધ, अमृतम्-અમૃત સમાન સુખદાયક રસ અને मधु-મધુરાદિ ગુણોથી યુક્ત इन्द्रियम्-રાજા આદિથી સેવિત ન્યાયાચરણને પ્રાપ્ત કરે છે, તે સદા સુખી બને છે. (૭૫)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોની અનુમતિથી રાજ્યની વૃદ્ધિ ઈચ્છે છે, તેઓ અન્યાયની નિવૃત્તિ કરવા અને રાજ્યની વૃદ્ધિમાં સમર્થ બને છે. (૭૫)

रेतो मूत्रं विजहाति योनिं प्रविशदिन्द्रियम्। गर्भो जरायुणावृत ऽ उल्वं जहाति जन्मना। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥ ७६ ॥

પદાર્થ : इन्द्रियम्-પુરુષનું લિંગ ઈન્દ્રિય योनिम्-સ્ત્રીની યોનિમાં प्रविशत्-પ્રવિષ્ટ થઈને रेतः-વીર્યને वि-जहाति-વિશેષ કરીને છોડે છે, તેથી અન્યત્ર मूत्रम्-પ્રસ્રાવને છોડે છે.

તે વીર્ય जरायुणा-જરાયુથી आवृतः-આચ્છાદિત गर्भः-ગર્ભ ઉત્પન્ન થાય છે. जन्मना-જન્મ થતાં उल्वम्-આવરણને जहाति-છોડી દે છે.

તે ऋतेन-બહારના વાયુની સાથે अन्धसः-આવરણને દૂર કરનારા પદાર્થો, विपानम्-વિવિધ પ્રકારના પાન, शुक्रम्-પવિત્રતા, सत्यम्-વર્તમાનમાં શ્રેષ્ઠ પદાર્થ इन्द्रस्य-જીવના સંબંધી इन्द्रियम्-ધનને તથા इदम्-એ पयः-રસ સમાન, अमृतम्-નાશ રહિત मधु-પ્રત્યક્ષ આદિ જ્ઞાનના સાધન इन्द्रियम्-ચક્ષુ આદિ ઈન્દ્રિયોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૬)

ભાવાર્થ : પ્રાણી જે કાંઈ આહાર કરે છે, તે પરંપરા ક્રમથી વીર્ય બનીને [બીજા આત્માના] શરીરનું કારણ બને છે. પુરુષની ઉપસ્થ-ઈન્દ્રિય સ્ત્રી-સંગથી વીર્યનો ત્યાગ કરે છે. અન્ય કાલમાં તે મૂત્રનો ત્યાગ કરે છે. આથી પ્રતીત થાય છે કે, શરીરમાં મૂત્રના સ્થાન [મૂત્રાશય]થી વીર્ય અન્ય સ્થાન પર રહે છે.

તે વીર્ય કારણ કે સર્વ અંગોથી ઉત્પન્ન થાય છે, એથી જ સર્વ અંગોની આકૃતિવાળું હોય છે. એટલા માટે શરીરથી વીર્ય ઉત્પન્ન થાય છે, તેની આકૃતિયુક્ત જ સંતાન ઉત્પન્ન થાય છે. (૭૬)

दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्सत्यानृते प्रजापतिः। अश्रद्धामनृतेऽदधाच्छ्रद्धाꣳसत्ये प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं

मधु॥ ७७॥

પદાર્થ : જે प्रजापतिः-પ્રજાના પાલક/રક્ષક ઈશ્વર ऋतेन-પોતાના સત્ય વિજ્ઞાનથી सत्यानृते-સત્ય અને અસત્યનું જે रूपे-નિરૂપણ કરેલ છે તેને दृष्टवा-જ્ઞાન દૃષ્ટિથી જોઈને व्याकरोत्-વિવિધ પ્રકારથી ઉપદેશ કરે છે; જે अनृते-મિથ્યા ભાષણ આદિમાં अश्रद्धाम्-અપ્રીતિને अदधात्-ધારણ કરે છે અને सत्ये-સત્પુરુષોમાં વિદ્યમાન સત્યમાં श्रद्धाम्-પ્રીતિને ધારણ કરે છે.

જે अन्धसः-અધર્માચરણના નિવર્તક, शुक्रम्-શુદ્ધિ કરનારા, विपानम्-વિવિધ રક્ષાના સાધન, सत्यम्-સત્યસ્વરૂપ, इन्द्रियम्-ચિત્તને તથા જે इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ધર્મના પ્રાપક, इदम्-એ पयः-અમૃતરૂપ સુખદાતા, अमृतम्-મૃત્યુ, રોગ નિવારક, મોક્ષ मधु-મન્તવ્ય અને इन्द्रियम्-વિજ્ઞાનના સાધનને ધારણ કરે છે; તે प्रजापतिः-પરમેશ્વર સર્વની ઉપાસના કરવા યોગ્ય દેવ છે. (૭૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરના ઉપદેશેલા ધર્મનું આચરણ કરે છે, અધર્મનું સેવન કરતા નથી, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. જો ઈશ્વર ધર્મ અને અધર્મનું જ્ઞાન ન કરાવે, તો તેના સ્વરૂપનું જ્ઞાન કોઈને પણ થાય નહીં.

જેઓ આત્માને અનુકૂળ આચરણ કરે છે અને પ્રતિકૂળનો ત્યાગ કરે છે, તેઓ જ ધર્મ અને અધર્મના જ્ઞાનમાં યુક્ત થાય છે, અન્ય નહીં. (૭૭)

वेदेन रूपे व्यपिबत्सुतासुतौ प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥ ७८॥

પદાર્થ : જે प्रजापतिः-પ્રજાના પાલક જીવ ऋतेन-સત્ય વિજ્ઞાનથી યુક્ત, वेदेन-ઈશ્વર પ્રકાશિત ચારેય વેદો દ્વારા सुतासुतौ-ધર્મ પ્રેરિત અને અધર્મ અપ્રેરિત रूपे-સ્વરૂપને व्यपिबत्-ગ્રહણ કરે છે, તે इन्द्रस्य-ઐશ્વર્યયુક્ત જીવના अन्धसः-અન્ન આદિના विपानम्-વિવિધ પ્રકારના પાનના નિમિત્ત, शुक्रम्-પરાક્રમ પ્રદાતા વીર્ય, सत्यम्-સત્યધર્માચરણમાં શ્રેષ્ઠ કર્મ, इन्द्रियम्-ધન, इदम्-જલ આદિ, पयः-દૂધ આદિ, अमृतम्-મૃત્યુધર્મરહિત વિજ્ઞાન, मधु-મધુરાદિ ગુણયુક્ત પદાર્થ અને इन्द्रियम्-ઈશ્વર દ્વારા પ્રદત્ત જ્ઞાનને પ્રાપ્ત થાય છે. (૭૮)

ભાવાર્થ : વેદોના જ્ઞાતા જ ધર્મ-અધર્મને જાણવા તથા ધર્મના આચરણ અને અધર્મના ત્યાગથી સુખી થાય છે. (૭૮)

दृष्ट्वा परिस्रुतो रसꣳ शुक्रेण शुक्रं व्यपिबत् पयः सोमं प्रजापतिः।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥ ७९॥

પદાર્થ : જે परिस्रुतः-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત प्रजापतिः-પ્રજાના સ્વામી રાજા આદિ ऋतेन-યથાર્થ વ્યવહારથી सत्यम्-ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન રસને दृष्ट्वा-વિચારપૂર્વક જોઈને शुक्रेण-શુદ્ધ ભાવથી शुक्रम्-શીઘ્ર સુખકારી પદાર્થ, पयः-પાનને યોગ્ય सोमम्-મહૌષધિના રસનું તથા रसम्-વિદ્યાના આનંદરૂપ રસનું

व्यपिबत्-પાન કરે છે વા ગ્રહણ કરે છે, ते-તે अन्धसः-શુદ્ધ અન્નાદિના પ્રાપક, विपानम्-વિશેષ પાનથી યુક્ત, शुक्रम्-બલકારી-વીર્યવાન્, इन्द्रियम्-વિદ્વાન્‌થી સેવિત ઇન્દ્રિયને તથા इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પુરુષના इदम्-આ पयः-ઉત્તમ રસયુક્ત अमृतम्-મૃત્યુકારક રોગના નિવારક मधुः-મધુરાદિ ગુણયુક્ત અને इन्द्रियम्-ઈશ્વર રચિત ધનને-જગતને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વૈદ્યકશાસ્ત્રની રીતિથી ઉત્તમ ઔષધિઓના રસોનું નિર્માણ કરીને યથાસમય, યથાયોગ્ય પાન કરે છે, તે રોગોથી દૂર રહીને શરીર તથા આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરી શકે છે. (૭૯)

सीसे॑न तन्त्रं॒ मन॑सा मनी॒षिण॑ ऊर्णासू॒त्रेण॑ क॒वयो॑ वयन्ति।
अ॒श्विना॑ य॒ज्ञꣳ स॑वि॒ता सर॑स्व॒तीन्द्र॑स्य रू॒पं वरु॑णो भिष॒ज्यन्॥ ८०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ कवयः-વિદ્વાન્, मनीषिणः-બુદ્ધિમાન, सीसेन-સીસાની ધાતુના પાત્ર સમાન મૃદુ, ऊर्णासूत्रेण-ઊનના દોરાના ધાબળા સમાન પ્રયોજન સાધક, मनसा-અન્તઃકરણથી तन्त्रम्-કુટુંબના ધારણની સમાન યન્ત્રકલાઓનું वयन्ति-નિર્માણ કરે છે.

જેમ सविता-અનેક વિદ્યા-વ્યવહારોમાં પ્રેરણા કરનાર વિદ્વાન્ सरस्वती-ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી અને अश्विना-વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશક બે પુરુષ यज्ञम्-સંગતિ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર કરે છે.

જેમ भिषज्यन्-ચિકિત્સાના ઈચ્છુક वरुणः-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યના रूपम्-સ્વરૂપને ધારણ કરે છે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૮૦)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અનેક ધાતુઓ અને સાધન-વિશેષો દ્વારા વસ્ત્ર આદિ બનાવીને કુટુંબનું પાલન કરે છે.

તેમજ યજ્ઞ કરીને તથા ઔષધિ આપીને રોગનું નિવારણ કરે છે તથા શિલ્પ ક્રિયાઓથી પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ કરવું જોઈએ. (૮૦)

तद॑स्य रू॒पम॒मृत॒ꣳ शची॑भिस्ति॒स्रो द॑धुर्दे॒वताः॒ स॑ꣳररा॒णाः।
लोमा॑नि॒ शष्पै॑र्बहु॒धा न तोक्म॑भिस्त्वग॑स्य मा॒ꣳसम॑भव॒न्न ला॒जाः॥ ८१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! संरराणाः-ઉત્તમ દાતા तिस्रः-અધ્યાપક, વિદ્યાર્થી અને પરીક્ષક-ત્રણ देवताः-વિદ્વાન્, शचीभिः-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને કર્મોના દ્વારા बहुधा-અનેક પ્રકારથી જે યજ્ઞને शष्पैः-દીર્ઘ લોમો-રૂંવાડાઓની સાથે लोमानि-રૂંવાડાઓને दधुः-ધારણ કરે છે, तत्-જે अस्य-યજ્ઞના अमृतम्-નાશરહિત रूपम्-સ્વરૂપને તમે જાણો.

જે યજ્ઞ तोक्मभिः-બાળકોથી અનુષ્ઠાન न-કરવા યોગ્ય નથી. अस्य-એના મધ્યમાં त्वक्-ત્વચા, मांसम्-માંસ અને लाजाः-શેકેલું સૂકું અને હોમ કરવા યોગ્ય नअभवत्-હોતું નથી, તેમ પણ તમે જાણો. (૮૧)

ભાવાર્થ : જે લાંબા સમય સુધી જટાધારી બનીને અથવા બ્રહ્મચારી રહીને પૂર્ણ વિદ્યાવાળા, જિતેન્દ્રિય

અને શ્રેષ્ઠ મનુષ્ય છે, તે જ 'यज-' ધાતુનો અર્થ જાણી શકે છે, બાળક અને અવિદ્વાન નહીં.

તે જ હોમ નામક યજ્ઞ છે કે, જેમાં માંસ, ક્ષાર, ખાટા અને કડવા વગેરે ગુણોથી રહિત પરંતુ સુગંધિત, પુષ્ટિ, મધુર અને રોગનાશક આદિ ગુણોથી યુક્ત હવિ આપવામાં આવે છે, અને સુગંધી આદિ ગુણોથી યુક્ત પદાર્થો જ હોમને યોગ્ય છે. (૮૧)

तद॒श्विना॑ भि॒षजा॑ रु॒द्रव॑र्तनी॒ सर॑स्वती वय॒ति पेशो॒ऽअन्त॑रम्।
अस्थि॑ म॒ज्जानं॒ मास॑रैः कारोत॒रेण॒ दध॑तो॒ गवां॑ त्व॒चि॥ ८२॥

પદાર્થ : જેને सरस्वती-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન યુક્ત પત્ની वयति-વિસ્તૃત કરે છે-तत्-તે पेशः-સુંદર સ્વરૂપ, अस्थि-હાડકાં, मज्जानम्-મજ્જા, अन्तरम्-શરીરના મધ્યભાગમાં સ્થિત અન્ય અવયવોને मासरैः-પરિપક્વ ઔષધિઓના સારથી कारोतरेण-કૂવાથી સર્વ કામોને, તેમ गवाम्-પૃથિવી આદિની त्वचि-ત્વચા રૂપ ઉપરના ભાગમાં रुद्रवर्तनी-પ્રાણના માર્ગ સમાન માર્ગથી યુક્ત भिषजा-વૈદ્યક શાસ્ત્રનાં જ્ઞાતા अश्विना-વિદ્યાઓમાં પૂર્ણ બે પુરુષ दधतः-ધારણ કરે. (૮૨)

ભાવાર્થ : જેમ વૈદ્યકશાસ્ત્રનાં જાણનારા પતિઓ શરીરનું આરોગ્ય આદિ કરીને સ્ત્રીઓને નિરંતર સુખી રાખે, તેમજ વિદુષી સ્ત્રીઓ પોતાના પતિઓને રોગ-રહિત કરે. (૮૨)

सर॑स्वती॒ मन॑सा पेश॒लं वसु॒ नास॑त्याभ्यां वयति दर्श॒तं वपुः॑।
रसं॑ परि॒स्रुता॒ न रोहि॑तं न॒ग्नहु॒र्धीर॒स्तस॑रं॒ न वेम॑॥ ८३॥

પદાર્થ : सरस्वती-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી मनसा-વિજ્ઞાનથી वेम-નવજાતની न-સમાન જે पेशलम्-ઉત્તમ અંગોથી યુક્ત दर्शतम्-દર્શનીય, वपुः-શરીર જલને તથા तसरम्-દુઃખનાશક, रोहितम्-ઉન્નત, परिस्रुता-સર્વ તરફથી પ્રાપ્ત रसम्-આનંદદાયક રસની न-સમાન वसु-દ્રવ્યને वयति-બનાવે છે, જે नासत्याभ्याम्-અસત્ય વ્યવહારથી રહિત માતા-પિતા બન્નેને नग्नहुः-શુદ્ધને ગ્રહણ કરનાર धीरः-ધ્યાનવાન તારો પતિ છે, તે બન્નેને અમે પ્રાપ્ત કરીએ. (૮૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાન્ અધ્યાપક અને ઉપદેશક સાર-સાર વસ્તુને ગ્રહણ કરે છે, તેમ જ સર્વ સ્ત્રી-પુરુષો ગ્રહણ કરે. (૮૩)

पय॑सा शु॒क्रम॒मृतं॑ ज॒नित्र॒ꣳ सुर॑या॒ मूत्रा॑ज्जनयन्त॒ रेतः॑।
अपाम॑तिं दु॒र्मतिं॒ बाध॑माना॒ ऊव॑ध्यं॒ वात॒ꣳ स॒ब्वं॒ तदा॒रात्॥ ८४॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાનો अमतिम्-નષ્ટ બુદ્ધિ दुर्मतिम्-વા દુષ્ટબુદ્ધિને अप बाधमानाः-હઠાવતાં જે ऊवध्यम्-જેનાથી આંગળા વગેરે કપાઈ જાય અર્થાત્ અધિક નાશ કરવાનું સાધન वातम्-પ્રાપ્ત सब्वम्-સર્વ પદાર્થોથી સંબંધ રાખનાર, पयसा-જલ વા દૂધથી તથા सुरया-સોમલતા આદિ ઔષધિના રસથી ઉત્પન્ન થયેલ, मूत्रात्-મૂત્રાધાર ઇન્દ્રિયથી जनित्रम्-સંતાનોત્પત્તિનું નિમિત્ત अमृतम्-અલ્પ વયમાં મૃત્યુ, રોગ નિવારક,

शुक्रम्-શુદ્ધ रेतः-વીર્ય છે, तत्-તેના आरात्-સમીપથી जनयन्त-ઉત્પન્ન કરે છે, તે પ્રજાવાન થાય છે. (૮૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો દુર્ગુણો અને દુષ્ટોનો સંગ ત્યાગ કરીને, વ્યભિચારથી દૂર રહીને અને વીર્યની વૃદ્ધિ કરીને સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે છે, તેઓ પોતાના કુળને પ્રશંસિત કરે છે. (૮૪)

इन्द्रः सुत्रामा हृदयेन सत्यं पुरोडाशेन सविता जजान।
यकृत् क्लोमानं वरुणो भिषज्यन् मतस्ने वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्॥ ८५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ सुत्रामा-રોગથી શરીરની ઉત્તમ રીતે રક્ષા કરનાર, सविता-પ્રેરક, इन्द्रः-રોગનાશક वरुणः-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ भिषज्यन्-ચિકિત્સા કરીને हृदयेन-પોતાના આત્માથી सत्यम्-યથાર્થ ભાવને जजान-પ્રસિદ્ધ કરે છે અને पुरोडाशेन-સુગંધિત અન્નથી તથા वायव्यैः-પ્રાણોમાં શ્રેષ્ઠ-માર્ગોથી यकृत्-હૃદયથી જમણી બાજુ રહેલ માંસપિંડને क्लोमानम्-કંઠનાડી मतस्ने-હૃદયની બન્ને તરફની અસ્થિઓ અને पित्तम्-પિત્તનો न + मिनाति-નાશ નથી કરતા, તેમ એ સર્વનો તમે નાશ ન કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : શ્રેષ્ઠ વૈદ્યજનો સ્વયં નીરોગ બનીને અન્યોના શરીરના રોગોને જાણીને તેને સદા નીરોગ કરે. (૮૫)

आन्त्राणि स्थालीर्मधु पिन्वमाना गुदाः पात्राणि सुदुघा न धेनुः।
श्येनस्य पत्रं न प्लीहा शचीभिरासन्दी नाभिरुदरं न माता॥ ८६॥

પદાર્થ : યુક્તિવાન પુરુષને યોગ્ય છે કે, शचीभिः-શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને કર્મોથી स्थालीः-અન્ન પકાવવાના પાત્રોને અગ્નિ પર રાખીને ઔષધિઓનો પાક બનાવીને मधु-તેમાં મધ નાખી, ભોજન કરીને, आन्त्राणि-ઉદરસ્થ અન્ન પાકની આધારભૂત નાડીઓને, पिन्दमानाः-સેવન અને પ્રીતિના હેતુ गुदाः-ગુદેન્દ્રિયને, पात्राणि-ભોજનના પાત્રોને सुदुघा-સુખથી દૂધ આપનારી धेनुः-ગાયની न-સમાન, प्लीहा-રક્તશોધક માંસપિંડને श्येनस्य બાજ પક્ષીની पत्रम्-પાંખની न-સમાન, माता-માતાની न-સમાન आसन्दी-સર્વત્રથી રસ પ્રાપ્ત કરાવનારી नाभिः-નાભિ નાડી उदरम्-ઉદરને પુષ્ટ કરે છે. (૮૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ, સુગંધિત અન્નો અને રસોથી શરીરને નીરોગ રાખીને પુરુષાર્થ કરે છે, તેઓ ઈચ્છિત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૬)

कुम्भो वनिष्ठुर्जनिता शचीभिर्यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भोऽअन्तः।
प्लाशिर्व्यक्तः शतधार उत्सो दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः॥ ८७॥

પદાર્થ : જે कुम्भः-કળશની સમાન વીર્ય આદિ ધાતુઓથી પૂર્ણ वनिष्ठुः-સમાનભાગ કરનાર जनिता-સંતાનોનાં ઉત્પાદક, प्लाशिः-ઉત્તમ ભોજન કરનાર, व्यक्तः-વિવિધ પુષ્ટિઓથી પ્રસિદ્ધ, शचीभिः-ઉત્તમ કર્મો કરીને शतधारः-સેંકડો વાણીઓથી યુક્ત, उत्सः-આર્દ્ર કરનાર કૂવા સમાન, दुहे-પૂર્તિ કરનાર

વ્યવહારમાં સ્થિત नः સમાન પુરુષ છે-અને જે कुम्भी-કુંભીની સમાન સ્ત્રી છે-તે બન્ને पितृभ्यः-પિતરોને स्वधाम्-અન્ન પ્રદાન કરે, यस्मिन्-જે अग्रे-નવીન योन्याम्-ગર્ભાશયની अन्तः-અંદર गर्भः-ગર્ભ ધારણ કરવામાં આવે છે, તેની નિરંતર રક્ષા કરે. (૮૭)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ વીર્યવાન તથા પુરુષાર્થી બનીને, અન્ન આદિથી વિદ્વાનોને સંતુષ્ટ કરીને, ધર્મપૂર્વક સંતાનોની ઉત્પત્તિ કરે. (૮૭)

मुखꣳ सदस्य शिर इत् सतेन जिह्वा पवित्रमश्विनासन्त्सरस्वती।
चप्यं न पायुर्भिषगस्य बालो वस्तिर्न शेपो हरसा तरस्वी॥ ८८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ जिह्वा-રસગ્રહણ કરનારી, सरस्वती-વાણીની સમાન સ્ત્રી, अस्य-એ પતિના सतेन-સુંદર અવયવોથી વિભક્ત શિરની સાથે शिरः-શિરને રાખે, आसन्-મુખની સમીપ पवित्रम्-શુદ્ધ मुखम्-મુખને રાખે, આ રીતે अश्विना-ગૃહાશ્રમના વ્યવહારમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષ બન્ને इत्-રહે/વર્તે.

જે अस्य-એ રોગથી पायुः-રક્ષક, भिषक्-વૈદ્ય, बालः-બાળકની न-સમાન वस्तिः-વાસ કરવાના હેતુ પુરુષ शेपः-ઉપસ્થ ઇન્દ્રિયને हरसा-બળથી तरस्वी-કરનાર હોય છે, તે चप्यम्-શાન્તિ કરવાના न-સમાન सत्-વર્તમાનમાં સંતાનોત્પત્તિના હેતુ બને, તે સર્વને યથાવત્ કરે. (૮૮)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ ગર્ભાધાનના સમયે પરસ્પર અંગોને પોતાના અંગોને આચ્છાદિત કરીને મુખથી મુખ, નેત્રોથી નેત્ર, મનથી મન અને શરીર સાથે શરીરનું અનુસંધાન કરી ગર્ભાધાન કરે જેથી કુરૂપ અથવા વક્રાંગ સંતાન ઉત્પન્ન થાય નહિ. (૮૮)

अश्विभ्यां चक्षुरमृतं ग्रहाभ्यां छागेन तेजो हविषा शृतेन।
पक्ष्माणि गोधूमैः कुवलैरुतानि पेशो न शुक्रमसितं वसाते॥ ८९॥

પદાર્થ : જેમ गृहाभ्याम्-ગ્રહણ કરનારા अश्विभ्याम्-બહુભોજી સ્ત્રી-પુરુષોની સાથે કોઈ વિદુષી સ્ત્રી અને વિદ્વાન્ પુરુષ उतानि-વણેલાં વિસ્તૃત વસ્ત્રો पक्ष्माणि-ગ્રહણ કરેલા અન્ય રેશમી અને દુપટ્ટા આદિને वसाते-ઓઢે, પહેરે અર્થાત્ ધારણ કરે છે, અથવા જેમ આપ પણ छागेन-બકરી આદિના દૂધની સાથે शृतेन-પકાવેલ हविषा-હવિની સાથે तेजः-પ્રકાશયુક્ત, अमृतम्-અમૃતરૂપ चक्षुः-નેત્રને कुवलैः-સારા શબ્દોવાળા તથા गोधूमैः-ઘઉંની સાથે शुक्रम्-શુદ્ધ असितम्-કાળા पेशः-રૂપને न-સમાન સ્વીકાર કરે, તેમ અન્ય ગૃહસ્થો પણ કરે. (૮૯)

ભાવાર્થ : જેમ ક્રિયા કરેલ સ્ત્રી-પુરુષ પ્રિય દર્શનવાળા, પ્રિય ભોજન કરવાવાળા અને પૂર્ણ સામગ્રીને સંગ્રહણ કરનારા હોય છે, તેમ અન્ય ગૃહસ્થો પણ બને. (૮૯)

अविर्न मेषो नसि वीर्याय प्राणस्य पन्था अमृतो ग्रहाभ्याम्।
सरस्वत्युपवाकैर्व्यानं नस्यानि बर्हिर्बदरैर्जजान॥ ९०॥

પદાર્થ : જેમ ग्रहाभ्याम्-ગ્રહણ કરનારાની સાથે सरस्वती-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી-बदरैः-બોરની સમાન उपवाकैः-સમીપતા ઉત્પન્ન કરનારા કર્મોથી, जजान-સંતાનોત્પત્તિ કરે છે, તેમ-જે वीर्याय-વીર્યને માટે नसि-નાકમાં प्राणस्य-પ્રાણનું अमृतः-નિત્ય पन्थाः-માર્ગ, વા मेषः-અન્યથી સ્પર્ધા કરનારી, अविः-જે રક્ષા કરે છે, તેની नः-સમાન, व्यानम्-સર્વ શરીરમાં વ્યાપ્ત વાયુ नस्यानि-નાકની હિતકારક ધાતુ અને बर्हिः-વૃદ્ધિ કરનારનો ઉપયોગ કરવામાં આવે છે. (૯૦)

ભાવાર્થ : જેમ ધાર્મિક ન્યાયાધીશ પ્રજાનું રક્ષણ કરે છે, તેમ પ્રાણાયામ આદિથી સિદ્ધ કરેલા પ્રાણ યોગીનું સર્વ દુઃખોથી રક્ષણ કરે છે.

જેમ વિદુષી માતા વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી પોતાના સંતાનોને પ્રગતિશીલ બનાવે છે, તેમ વિધિવત્ અનુષ્ઠાન કરનાર યોગ-કર્મ યોગીઓની પ્રગતિ કરાવે છે. (૯૦)

इन्द्रस्य रूपमृषभो बलाय कर्णाभ्याꣳ श्रोत्रममृतं ग्रहाभ्याम्।
यवा न बर्हिर्भ्रुवि केसराणि कर्कन्धु जज्ञे मधु सारघं मुखात्॥ ९१॥

પદાર્થ : જેમ ग्रहाभ्याम्-ગ્રહણ કરનારા હાથોની સાથે ऋषभः-જ્ઞાની પુરુષ बलाय-યોગ-સામર્થ્ય માટે यवाः-યવોની न-સમાન कर्णाभ्याम्-કાનોથી श्रोत्रम्-શબ્દ વિષય, अमृतम्-અમૃતરૂપ જલ, कर्कन्धु-કર્મને ધારણ કરનારી ઇન્દ્રિયો, सारघम्-સમાન રૂપથી સ્વાદથી યુક્ત પદાર્થ, मधु-મધ बर्हिः-વૃદ્ધિકારક વ્યવહાર, भ्रुवि-નેત્ર અને લલાટની મધ્યમાં केसराणि-વિજ્ઞાન અર્થાત્ સુષુમ્ણામાં પ્રાણવાયુનો નિરોધ કરીને ઈશ્વર વિષયક વિશેષ જ્ઞાનને मुखात्-મુખથી પ્રકટ કરે છે, તેમ એ સર્વ इन्द्रस्य-પરમૈશ્વર્યનું रूपम्-સ્વરૂપ जज्ञे-પ્રકટ થાય છે. (૯૧)

ભાવાર્થ : જેમ નિવૃત્તિ માર્ગમાં પરમ યોગી યોગબળથી સર્વ સિદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જ ગૃહસ્થે પણ પ્રવૃત્તિ માર્ગમાં સર્વ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૯૧)

आत्मन्नुपस्थे न वृकस्य लोम मुखे श्मश्रूणि व्याघ्रलोम।
केशा न शीर्षन्यशसे श्रियै शिखा सिꣳहस्य लोम त्विषिरिन्द्रियाणि॥ ९२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના आत्मन्-આત્મામાં उपस्थे-સમીપ થવામાં वृकस्य-વરુના लोम-વાળની न-સમાન वा व्याघ्रलोम-વાઘના વાળની न-સમાન मुखे-મુખ પર श्मश्रूणि-દાઢી અને મૂછ, शीर्षन्-શિરમાં केशाः-બાલની न-સમાન शिखा-લાંબી ચોટલી, सिंहस्य-સિંહના लोम-રૂંવાડા-લોમ સમાન त्विषिः-ચમકદાર इन्द्रियाणि-શ્રોત્રાદિ શુદ્ધ ઇન્દ્રિયો છે, તે यशसे-યશ અને श्रियै-લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરવામાં સમર્થ બને છે. (૯૨)

ભાવાર્થ : જે પરમાત્માની ઉપાસના કરે છે, તે કીર્તિમાન બને છે.

જે યોગનો અભ્યાસ કરે છે, તે વરુ, વાઘ અને સિંહ સમાન એકાન્ત સ્થાનનું સેવન કરીને પરાક્રમી બને છે. જે પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરે છે, તે ક્ષત્રિય પૂર્ણ ઉપમા યોગ્ય બને છે. (૯૨)

अङ्गान्यात्मन् भिषजा तदश्विनात्मानमङ्गैः समधात् सरस्वती।
इन्द्रस्य रूपꣳशतमानमायुश्चन्द्रेण ज्योतिरमृतं दधानाः॥ ९३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! भिषजा-શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય સમાન નીરોગ, अश्विना-સિદ્ધ અને સાધક બે વિદ્વાન્ જેમ-सरस्वती-યોગિની સ્ત્રી आत्मन्-પોતાના આત્મામાં સ્થિર બનીને अङ्गानि-યોગના અંગોનું અનુષ્ઠાન કરીને आत्मानम्-પોતાના આત્માનું समधात्-સમાધાન કરે છે, તે રીતે अङ्गैः-યોગના અંગોના દ્વારા જે इन्द्रस्य-ઐશ્વર્યનું रूपम्-રૂપ છે तत्-તેને ધારણ કરે.

જેમ યોગને दधानाः-ધારણ કરતાં યોગીજનો शतमानम्-સો વર્ષથી અધિક आयुः-જીવનને ધારણ કરે છે, તેમ चन्द्रेण-આનંદથી अमृतम्-અવિનાશી ज्योतिः-પ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્માને ધારણ કરે. (૯૩)

ભાવાર્થ : જેમ રોગી લોકો શ્રેષ્ઠ વૈદ્યને પ્રાપ્ત કરીને ઔષધ અને પથ્યનું સેવન કરીને નીરોગ અને આનંદિત બને છે.

તે રીતે યોગના જિજ્ઞાસુ યોગી લોકો એ યોગને પ્રાપ્ત કરીને, યોગના અંગોનું અનુષ્ઠાન કરીને, ક્લેશોથી રહિત બનીને, નિરંતર સુખી બને છે. (૯૩)

सरस्वती योन्यां गर्भमन्तरश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्त्ति।
अपाꣳ रसेन वरुणो न साम्नेन्द्रꣳ श्रियै जनयन्नप्सु राजा॥ ९४॥

પદાર્થ : હે યોગી ! જેમ सरस्वती-વિદુષી पत्नी-સ્ત્રી પોતાના પતિથી योन्याम्-યોનિની अन्तः-અંદર सुकृतम्-પુણ્યરૂપ गर्भम्-ગર્ભને बिभर्त्ति-ધારણ કરે છે.

અથવા જેમ वरुणः-ઉત્તમ राजा-રાજા अश्विभ्याम्-અધ્યાપક અને ઉપદેશકના દ્વારા अपाम्-જલોના रसेन-રસથી अप्सु-પ્રાણોમાં साम्ना-સંધિની न-સમાન સુખથી इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને श्रियै-લક્ષ્મી માટે जनयन्-પ્રકટ કરતાં વિરાજમાન થાય છે, તેમ તું બન. (૯૪)

ભાવાર્થ : જેમ ધર્મપત્ની પતિની આજ્ઞા સાંભળવા તત્પર રહે છે અને તેની સારી રીતે સેવા કરે છે.

જેમ રાજા સામ આદિ દ્વારા રાજ્યના ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ વિદ્વાન્ મનુષ્ય યોગના ઉપદેશકની યોગ્ય સેવા કરીને યોગના અંગોના અનુષ્ઠાનથી યોગ સિદ્ધિની ઉન્નતિ કરે. (૯૪)

तेजः पशूनाꣳ हविरिन्द्रियावत् परिस्रुता पयसा सारघं मधु।
अश्विभ्यां दुग्धं भिषजा सरस्वत्या सुतासुताभ्याममृतः सोमऽइन्दुः॥ ९५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सुतासुताभ्याम्-સિદ્ધ અને અસિદ્ધ भिषजा-વૈદક વિદ્યાના જ્ઞાતા, अश्विभ्याम्-વિદ્યામાં વ્યાપક બે વિદ્વાનો पशूनाम्-ગાય આદિ પશુઓના સંબંધથી परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થનાર पयसा-દૂધથી तेजः-પ્રકાશરૂપ इन्द्रियावत्-ઇન્દ્રિયોને પ્રશસ્ત કરનાર सारघम्-ઉત્તમ સ્વાદયુક્ત मधु-મધુર हविः-ખાવા-પીવા યોગ્ય दुग्धम्-દૂધ આદિ પદાર્થો તથા सरस्वत्या-વિદુષી સ્ત્રીથી अमृतः-મૃત્યુધર્મથી રહિત

નિત્ય રહેનાર सोमः-ઐશ્વર્ય અને इन्दुः-ઉત્તમ સ્નેહ યુક્ત પદાર્થ ઉત્પન્ન કરવામાં આવે છે, તે બન્ને યોગ સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯૫)

ભાવાર્થ : જેમ ગોપાલક ગાય આદિ પશુઓની સારી રીતે રક્ષા કરીને દૂધ આદિથી સંતુષ્ટ રહે છે, તેમ મન આદિ ઈન્દ્રિયોને દુષ્ટાચારથી પૃથક્ રાખીને યોગીઓએ આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૯૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં સોમ આદિ પદાર્થોના ગુણ-વર્ણન કરવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે એમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति एकोनविंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ विंशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

क्ष॒त्रस्य॒ योनि॑रसि क्ष॒त्रस्य॒ नाभि॑रसि। मा त्वा॑ हिꣳसी॒न्मा मा॑ हिꣳसीः॥ १॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! જેનાથી તું क्षत्रस्य-રાજ્યનું योनिः-કારણ असि-છે, क्षत्रस्य-રાજકુલની नाभिः-નાભિની સમાન જીવન હેતુ असि-છે, એથી त्वा-તને કોઈ પણ मा-हिंसीत्-મારે નહિ, તું मा-મને मा-हिंसीः-માર નહિ. (૧)

ભાવાર્થ : સ્વામી અને સેવકજનો પરસ્પર એવી પ્રતિજ્ઞા કરે કે, રાજપુરુષો પ્રજાજનોની અને પ્રજાજનો રાજપુરુષોની સદા રક્ષા કરે, જેથી સર્વળ સુખની ઉન્નતિ થાય. (૧)

नि ष॑साद धृ॒तव्र॑तो॒ वरु॑णः प॒स्त्या॒स्वा। साम्रा॑ज्याय सु॒क्रतु॑ः। मृ॒त्योः पा॑हि वि॒द्योत्पा॑हि॥ २॥

પદાર્થ : હે સભાપતિ ! આપ सुक्रतुः-ઉત્તમ બુદ્ધિ અને કર્મવાળા, धृतव्रतः-સત્યને ધારણ કરનાર, वरुणः-ઉત્તમ સ્વભાવયુક્ત બનીને साम्राज्याय-ભૂગોળ પર ચક્રવર્તી રાજ્ય કરવા માટે पस्त्यासु-ન્યાયાલયોમાં आ-नि-षसाद-સર્વત્ર નિત્ય બેસો તથા અમારા વીરોનું मृत्योः-મૃત્યુથી पाहि-રક્ષણ કરો; विद्योत्-પ્રકાશમાન અસ્ત્રાદિથી पाहि-રક્ષા કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે ધર્મયુક્ત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા ન્યાયાધીશ સભાપતિ હોય છે, તે ચક્રવર્તી રાજ્ય તથા પ્રજાની રક્ષા કરી શકે છે; અન્ય નહિ. (૨)

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। अ॒श्विनो॒र्भैष॑ज्येन॒ तेज॑से ब्रह्मवर्च॒साया॒भि षि॑ञ्चामि॒ सर॑स्वत्यै॒ भैष॑ज्येन वी॒र्या॒या॒न्नाद्या॑या॒भिषि॑ञ्चा॒मीन्द्र॑स्येन्द्रि॒येण॒ बला॑य श्रि॒यै यश॑से॒ऽभिषि॑ञ्चामि॥ ३॥

પદાર્થ : હે શુભ લક્ષણોથી યુક્ત પુરુષ ! सवितुः-સકલ ઐશ્વર્યના અધિષ્ઠાતા देवस्य-સર્વત્ર પ્રકાશમાન ઈશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા જગતમાં अश्विनोः-સંપૂર્ણ વિદ્યામાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકોનાં बाहुभ्याम्-બળ અને પરાક્રમથી, पूष्णः-પૂર્ણ બળવાન વાયુ સમાન વિદ્યમાન પુરુષના हस्ताभ्याम्-ઉત્સાહ અને પુરુષાર્થથી, अश्विनोः વૈદ્યક વિદ્યાને પ્રાપ્ત અધ્યાપન અને ઔષધિ કરનારાઓના भैषज्येन-વૈદ્યકથી, तेजसे-પ્રગલ્ભતા માટે ब्रह्मवर्चसे-વેદોના અધ્યયન માટે त्वा-તને હું રાજપુરુષ અને પ્રજાજનમાં अभि-षिञ्चामि-સર્વત્રથી અભિષેક પૂર્વક સભાપતિ સ્વીકાર કરું છું.

भैषज्येन-ઔષધિઓથી सरस्वत्यै-સુશિક્ષિત વાણી, वीर्याय-પરાક્રમ અને अन्नाद्याय-અન્ન આદિની પ્રાપ્તિ માટે अभि-षिञ्चामि-અભિષેક કરું છું.

इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યવાન પુરુષનાં इन्द्रियेण-ધનથી बलाय-પુષ્ટિ, श्रियै-સુશોભિત રાજલક્ષ્મી અને यशसे-પુણ્ય કીર્તિને માટે अभि-षिञ्चामि-સર્વથા સભાપતિ સ્વીકાર કરું છું. (૩)

ભાવાર્થ : લોકોએ-આ જગતમાં ધર્મયુક્ત કર્મોનો પ્રકાશ કરવા માટે શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા પુરુષોને રાજ્ય પાલન માટે અધિકારી બનાવવા જોઈએ. (૩)

कोऽसि कतमोऽसि कस्मै त्वा काय त्वा।
सुश्लोक सुमङ्गल सत्यराजन्॥ ४॥

પદાર્થ : હે सुश्लोक-શુભ કીર્તિ અને સત્ય વાણીવાળા, सुमङ्गल-પ્રશસ્ત મંગલ આચરણવાળા, सत्यराजन्-સત્ય ન્યાયના પ્રકાશક સભાપતિ ! જે તું कः-સુખસ્વરૂપ असि-છે, कतमः-અત્યંત સુખકારી असि-છે, એથી कस्मै-સુખસ્વરૂપ પરમેશ્વરના માટે त्वा-તને, काय-બ્રહ્મ દેવતાવાળા વેદમંત્ર માટે त्वा-તને હું अभिषिञ्चामि-અભિષેકયુક્ત કરું છું. અર્થાત્ સભાપતિ સ્વીકાર કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : જે સર્વ મનુષ્યોમાં અત્યંત પ્રશંસનીય હોય, તે સભાપતિ બની શકે છે. (૪)

शिरो मे श्रीर्यशो मुखं त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि।
राजा मे प्राणोऽअमृतꣳसम्राट् चक्षुर्विराट् श्रोत्रम्॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! રાજ્યમાં અભિષેકને પ્રાપ્ત થયેલ मे-મારી સભાપતિની श्रीः-શોભા અને ધન, शिरः-શિરસ્થાની यशः-સત્કીર્તિ, मुखम्-મુખ સ્થાની त्विषिः-ન્યાયના પ્રકાશની સમાન केशाः-કેશ च-અને श्मश्रूणि-દાઢી, મૂછ राजा-પ્રકાશમાન છે.

मे-મારા प्राणः-પ્રાણ આદિ વાયુ अमृतम्-મરણધર્મથી રહિત-ચેતન બ્રહ્મ सम्राट्-સમ્યક્ પ્રકાશમાન चक्षुः-નેત્ર विराट्-વિવિધ શાસ્ત્રોના શ્રવણથી યુક્ત श्रोत्रम्-શ્રવણેન્દ્રિય છે; એમ તમે જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : જે રાજ્યમાં અભિષિક્ત સભાપતિ-રાજા હોય, તેણે પોતાના શિર આદિ અવયવોને શુભ કર્મોમાં પ્રેરિત રાખવા જોઈએ. (૫)

जिह्वा मे भद्रं वाङ् महो मनो मन्युः स्वराड् भामः।
मोदाः प्रमोदाऽअङ्गुलीरङ्गानि मित्रं मे सहः॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! मे-મારી जिह्वा-જીભ भद्रम्-કલ્યાણકારી અન્ન આદિનો ભોગ કરનારી वाक्-વાણી महः-મહાન પૂજનીય વેદશાસ્ત્રના બોધથી યુક્ત, मनः-વિચાર કરનાર અન્તઃકરણ, मन्युः-દુષ્ટાચારી પર ક્રોધ કરનાર, स्वराट्-સ્વયં પ્રકાશમાન બુદ્ધિ, भामः-જ્ઞાન-પ્રકાશવાળી, मोदाः-હર્ષ, ઉત્સાહ, प्रमोदाः-ઉત્તમ આનંદ, अङ्गुलीः-આંગળીઓ, अङ्गानि-અન્ય સર્વ અંગો, मित्रम्-મિત્ર च-અને सहः-સહન શક્તિ मे-મારી સહાયક બને.

ભાવાર્થ : જે રાજા લોકો બ્રહ્મચર્ય, જિતેન્દ્રિયતા અને ધર્માચરણ દ્વારા પથ્ય આહારવાળા, સત્યવાદી, દુષ્ટો પર ક્રોધ પ્રકટ કરનારા, સ્વયં આનંદિત રહેનારા, અન્યોને આનંદિત કરનારા, પુરુષાર્થી, સર્વથી મિત્રતા રાખનારા અને બળવાન બને, તેઓ સર્વદા સુખી રહી શકે છે. (૬)

बाहू मे बलमिन्द्रियꣳहस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो मम॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! मे-મારું बलम्-બળ, इन्द्रियम्-ધન, बाहू-ભુજાઓ, कर्म-કર્મ, वीर्यम्-પરાક્રમ, हस्तौ-હાથ मम्-મારું आत्मा-સ્વયંભૂ: સ્વરૂપ અને उरः-હૃદય क्षत्रम्-ક્ષતિ-અતિ દુઃખથી રક્ષા કરનારું अस्तु-બને. (૭)

ભાવાર્થ : રાજાએ આત્મા, અન્તઃકરણ અને બાહુબળને ઉત્પન્ન કરીને સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૭)

पृष्ठीर्मे राष्ट्रमुदरमꣳसौ ग्रीवाश्च श्रोणी।
ऊरूऽअरत्नी जानुनी विशो मेऽङ्गानि सर्वतः॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! मे-મારું राष्ट्रम्-રાજ્ય पृष्ठीः-પીઠ, उदरम्-પેટ, अंसौ-ખભા, ग्रीवाः-કંઠપ્રદેશ, श्रोणी-કટિપ્રદેશ ऊरू-જાંઘ, अरत्नी-ભુજાઓનો મધ્યપ્રદેશ, जानुनी-ગોઠણ તથા सर्वतः-સર્વત્રથી અન્ય अङ्गानि-અંગો मे-મારા विशः-પ્રજાજનો છે. (૮)

ભાવાર્થ : જે પોતાના અંગોની સમાન પ્રજાને જાણે છે,તે રાજાની સદા ઉન્નતિ થાય છે. (૮)

नाभिर्मे चित्तं विज्ञानं पायुर्मेऽपचितिर्भसत्। आनन्दनन्दावाण्डौ मे भगः सौभाग्यं पसः। जङ्घाभ्यां पद्भ्यां धर्मोऽस्मि विशि राजा प्रतिष्ठितः॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! मे-મારી चित्तम्-સ્મરણ કરનારી વૃત્તિ, नाभिः-શરીરનો મધ્યપ્રદેશ નાભિ, विज्ञानम्-સમ્યક્ જ્ઞાન વા વિવિધ જ્ઞાન, पायुः-મૂલેન્દ્રિય, मे-મારી अपचितिः-પ્રજાજનક भसद्-યોનિ, आण्डौ-અંડાકાર વૃષણ, आनंदनन्दौ-સંભોગજન્ય સુખથી આનંદકારક, मे-મારું भगः-ઐશ્વર્ય, पसः-લિંગ અને सौभाग्यम्-પુત્ર-પૌત્રાદિ યુક્ત હોય; એ રીતે जङ्घाभ्याम्-જાંઘ અને पद्भ्याम्-પગોની સાથે विशि-પ્રજામાં प्रतिष्ठितः-સન્માનિત, धर्मः-પક્ષપાતરહિત ન્યાયધર્મની સમાન, राजा-રાજા अस्मि-છું, જેથી તમે મારા અનુકૂળ બનો. (૯)

ભાવાર્થ : જે પુરુષ સર્વ અંગોથી શુભ કર્મ કરે છે, તે ધર્માત્મા બનીને પ્રજામાં પ્રતિષ્ઠિત-સન્માનિત રાજા બને છે. (૯)

प्रति क्षत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे प्रत्यश्वेषु प्रति तिष्ठामि गोषु। प्रत्यङ्गेषु प्रति तिष्ठाम्यात्मन् प्रति प्राणेषु प्रति तिष्ठामि पुष्टे प्रति द्यावापृथिव्योः प्रति तिष्ठामि यज्ञे॥ १०॥

પદાર્થ : પ્રજાજનોમાં પ્રતિષ્ઠિત હું રાજા ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી क्षत्रे-ક્ષતિથી રક્ષા કરનાર ક્ષત્રિય કુળમાં

प्रति-પ્રતિષ્ઠા પામી राष्ट्रे-રાજ્યમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, अश्वेषु-ઘોડા આદિ વાહનોમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, गोषु-ગાય અને પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, अङ्गेषु-રાજ્યના અંગોમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, आत्मन्-આત્મામાં પ્રતિષ્ઠા પામું છું, प्राणेषु-પ્રાણોમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, पुष्टे-પુષ્ટિમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, द्यावापृथिव्योः-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાની સમાન ન્યાય-પ્રકાશ અને પૃથિવીમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું, यज्ञे-વિદ્વાનોની સેવા, સંગ અને વિદ્યા-દાન આદિ કર્મમાં प्रति + तिष्ठामि-પ્રતિષ્ઠા પામું છું. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે રાજા પ્રિય અને અપ્રિય [નો વિચાર] છોડીને ન્યાયધર્મથી પ્રજાઓ પર પ્રશાસન કરીને, સર્વ રાજ્ય કાર્યોમાં ગુપ્તચરો દ્વારા દૃષ્ટિ રાખીને [ચાર આંખોવાળો બનીને], મધ્યસ્થ વૃત્તિથી સર્વ પ્રજાઓનું પાલન કરીને, નિરંતર વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિ કરે છે, તે સર્વનો પૂજ્ય બની શકે છે. (૧૦)

त्र॒या दे॒वाऽए॑का॑दश त्रय॒स्त्रि॒ꣳशाः सु॒राध॑सः।
बृह॒स्पति॑पुरोहिता दे॒वस्य॑ सवि॒तुः स॒वे। दे॒वा दे॒वैर॑वन्तु मा॥ ११॥

પદાર્થ : જે त्रयाः-વસુ, રુદ્ર, આદિત્ય ત્રણ પ્રકારના देवाः-દિવ્યગુણવાળા बृहस्पति पुरोहिताः-બૃહસ્પતિ = સૂર્ય જેમાં પ્રમુખ છે, सुराधसः-જેથી ઉત્તમ કાર્યોની સિદ્ધિ થાય છે, एकादश-દશ પ્રાણ અને અગિયારમો જીવાત્મા, त्रयस्त्रिंशाः-તેત્રીસ દિવ્યગુણવાળા પદાર્થો-દેવો सवितुः-સકલ જગતના ઉત્પાદક देवस्य-પ્રકાશમાન ઈશ્વરના सवे-પરમેશ્વર્યથી યુક્ત ઉત્પન્ન થયેલા જગતમાં છે, તે देवैः-પૃથિવી આદિ તેત્રીસ પદાર્થો સહિત मा-મારી देवाः-વિદ્વાનો રક્ષા અને अवन्तु-ઉન્નતિ કરે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો પૃથિવી, જલ, અગ્નિ, વાયુ, આકાશ, દ્યુલોક, ચન્દ્રમા તથા નક્ષત્ર એ આઠ, પ્રાણ આદિ દશ વાયુ, અગિયારમો જીવાત્મા, બાર મહિનાઓ, વિદ્યુત્ અને યજ્ઞ એ તેત્રીસ પૃથિવી આદિ પદાર્થોના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવના ઉપદેશથી સર્વ મનુષ્યોને ઉન્નત કરે છે,તેઓ સર્વના ઉપકારક હોય છે. (૧૧)

प्र॒थ॒मा द्वि॒तीयै॑र्द्वि॒तीया॑स्तृ॒तीयै॑स्तृ॒तीयाः॑ स॒त्येन॑ स॒त्यं य॒ज्ञेन॑ य॒ज्ञो यजु॑र्भि॒र्यजू॑ꣳषि॒ सामा॑भिः सामा॑न्यृ॒ग्भिर्ऋ॒चः पुरो॒ऽनुवा॒क्या॒भिः पुरो॒ऽनुवा॒क्या या॒ज्या॒भिर्या॒ज्या वषट्का॒रैर्व॑षट्का॒रा ऽ-आहु॑तिभिराहु॑तयो मे॒ कामा॒न्त्सम॑र्धयन्तु॒ भूः स्वाहा॑॥ १२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ प्रथमाः-પ્રથમ પૃથિવી આદિ આઠ વસુ, द्वितीयैः-બીજા અગિયાર પ્રાણ આદિ રુદ્રોથી, द्वितीयाः-બીજા રુદ્ર तृतीयैः-ત્રીજા બાર મહિનાઓથી, तृतीयाः-ત્રીજા બાર મહિનાઓ सत्येन-કારણ = પ્રકૃતિથી, सत्यम्-કારણ = પ્રકૃતિ यज्ञेन-શિલ્પ ક્રિયાથી, यज्ञः-શિલ્પ ક્રિયા यजुर्भिः-યજુર્મંત્રોની ક્રિયાથી યુક્ત, यजूंषि-યજુર્વેદોક્ત ક્રિયા सामभिः-સામવેદોક્ત વિદ્યાથી, सामानि-સામવેદસ્થ ક્રિયા આદિ ऋग्भिः-ઋગ્વેદસ્થ વિદ્યા ક્રિયાઓથી, ऋचः-ઋગ્વેદનો વ્યવહાર पुरोऽनुवाक्याभिः-અથર્વવેદોક્ત પ્રકરણોથી, पुरोऽनुवाक्याः-અથર્વવેદનો વ્યવહાર याज्याभिः-યજ્ઞ સંબંધી ક્રિયાઓથી, याज्याः-યજ્ઞક્રિયાઓ

वषट्कारैः-ઉત્તમ કર્મોથી, वषट्काराः-ઉત્તમ કર્મ आहुतिभिः-આહુતિઓથી, आहुतयः-આહુતિઓ स्वाहा-સત્ય આચરણથી એ સર્વ भूः-ભૂમિમાં मे-મારી कामान्-ઈચ્છાઓને समर्धयन्तु-શ્રેષ્ઠ રીતે સિદ્ધ કરે, તેમ આપ મને ઉપદેશ આપો. (૧૨)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશકો પ્રથમ વેદોને ભણાવીને, પૃથિવી અને પદાર્થોની વિદ્યાને બતાવીને, કારણ-કાર્ય સંબંધથી તેના ગુણોનો સાક્ષાત્ કરાવીને, હસ્તક્રિયાથી સર્વ મનુષ્યોને નિપુણ બનાવે. (૧૨)

लोमा॑नि॒ प्रय॑ति॒र्मम॒ त्वङ्ग॒ म॒ऽआन॑ति॒राग॑तिः।
मा॒ꣳसं म॒ऽउप॑नति॒र्वस्व॒स्थि म॒ज्जा म॒ऽआन॑तिः॥ १३॥

પદાર્થ : હે અધાપકો અને ઉપદેશકો ! જેમ मम्-મારા लोमानि-રૂંવાડાં, प्रयतिः-મારો પ્રયત્ન, मे-મારી त्वक्-ત્વચા, आनतिः-મારી નમ્રતા, मांसम्-મારું માંસ, आगतिः-આગમન, मे-મારા वसु-ધન, उपनतिः-ઉપનમન જેથી નમ્ર થાય છે, मे-મારા अस्थि-અસ્થિ, मज्जा-મજ્જા અને आनतिः-સારી રીતે સત્કાર પામે તેમ તમે પ્રયત્ન કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોએ એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે, જેથી સુશિક્ષાથી યુક્ત સર્વ પુરુષો અને સર્વ કન્યાઓ સુંદર અંગો અને સ્વભાવથી યુક્ત, દૃઢ બળથી યુક્ત ધાર્મિક અને વિદ્યાથી સંપન્ન બને. (૧૩)

यद्दे॑वा देव॒हेड॑नं॒ देवा॑सश्चकृ॒मा व॒यम्।
अ॒ग्निर्मा॒ तस्मा॒देन॑सो॒ विश्वा॑न्मु॒ञ्च॒त्वꣳह॑सः॥ १४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यत्-જે वयम्-અમે देवाः-અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાન્ તથા અન્ય देवासः-વિદ્વાનો પરસ્પર देवहेडनम्-વિદ્વાનોનો અનાદર चकृम-કરે, तस्मात्-તે विश्वात्-સમસ્ત एनसः-અપરાધ અને अंहसः-દુષ્ટ વ્યસનથી अग्निः-અગ્નિની સમાન સર્વ વિદ્યાઓમાં પ્રકાશમાન આપ मा-મને मुञ्चतु-પૃથક્ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જો ક્યારેક અચાનક ભ્રમથી કોઈ પણ વિદ્વાનનો કોઈ અનાદર કરે, તો તેને તે જ સમયે ક્ષમા કરાવે.

જેમ અગ્નિ સર્વમાં પ્રવિષ્ટ રહીને સર્વને પોતાના સ્વરૂપમાં સ્થિત કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ સત્ય ઉપદેશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને અસત્ય આચરણથી પૃથક્ કરીને, સત્ય આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરીને સર્વને ધાર્મિક બનાવવા જોઈએ. (૧૪)

यदि॒ दिवा॒ यदि॒ नक्त॒मेना॑ꣳसि चकृ॒मा व॒यम्।
वा॒युर्मा॒ तस्मा॒देन॑सो॒ विश्वा॑न्मु॒ञ्च॒त्वꣳह॑सः॥ १५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यदि-જે दिवा-દિવસે यदि-જે नक्तम्-રાતે एनांसि-અપરાધ वयम्-અમે

चकृम-કરીએ तस्मात्-તે विश्वस्मात्-સમગ્ર एनसः-પાપ અને अंहसः-દુષ્ટ વ્યસનથી मा-મને वायुः-વાયુની સમાન વર્તાવવાળા આપ્ત વિદ્વાન मुञ्चतु-પૃથક્ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે દિવસ અને રાત્રિમાં અજ્ઞાનથી પાપ કરે, તે પાપથી સર્વ શિષ્યોને શિક્ષકો પૃથક્ કરે. (૧૫)

यदि जाग्रद्यदि स्वप्न॒ऽएनांꣳसि चकृमा वयम्।
सूर्यो॑ मा तस्मादेनसो विश्वान्मञ्चत्वꣳहसः॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यदि-જે जाग्रत्-જાગૃત અવસ્થા અને यदि-જે स्वप्ने-નિદ્રામાં एनांसि-અપરાધો वयम्-અમે चकृम-કરીએ, तस्मात्-તે विश्वात्-સમગ્ર एनसः-પાપ અને अंहसः-પ્રમાદથી सूर्यः-સૂર્યની સમાન વર્તાવવાળા આપ मा-મને मुञ्चतु-પૃથક્ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે કોઈ લોકો દુષ્ટ ચેષ્ટા કરે, વિદ્વાન્ મનુષ્ય તેનાથી તે સર્વને શીઘ્ર દૂર કરે. (૧૬)

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यदर्ये
यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधिधर्मणि तस्यावयजनमसि॥ १७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! वयम्-અમે यत्-જે ग्रामे-ગામમાં, यत्-જે अरण्ये-વનમાં, यत्-જે सभायाम्-સભામાં, यत्-જે इन्द्रिये-મનમાં, यत्-જે शूद्रे-શૂદ્રમાં, यत्-જે अर्ये-સ્વામી વા વૈશ્યમાં, यत्-જે एकस्य-એક વ્યક્તિનાં, अधि-અધિકૃત धर्मणि-ધર્મમાં यत्-જે एनः-અપરાધ-પાપ चकृम-કરીએ છીએ અથવા કરવાના છીએ, तस्य-તે સર્વથી આપ अवयजनम्-દૂર કરવાના સાધન છો, તેથી મહાશય असि-છો. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ક્યાંય ક્યારેક પણ પાપનું આચરણ ન કરવું જોઈએ. જો ક્યારેક થઈ જાય તો પણ કુટુંબની, વિદ્વાનોની સામે અને રાજસભામાં સત્ય બોલવું જોઈએ.

જે અધ્યાપક અને ઉપદેશક સ્વયં ધાર્મિક બનીને અન્યોને ધાર્મિક બનાવે છે, તેનાથી વધીને સુભૂષિત કરનાર અન્ય કોણ [હોઈ શકે છે] ? (૧૭)

यदापो॑ऽअघ्न्या॒ऽइति॒ वरु॒णेति॒ शपा॑महे॒ ततो॑ वरुण नो मुञ्च। अव॑भृथ निचुम्पुण निचे॒रुर॑सि निचुम्पु॒णः। अव॑ दे॒वैर्दे॒वकृ॑तमेनो॒ऽयक्ष्यव॒ मर्त्यै॒र्मर्त्य॑कृतं पुरु॒राव्णो॑ देव रि॒षस्पा॑हि॥ १८॥

પદાર્થ : હે वरुणः-ઉત્તમ પ્રાપ્તિ કરાવનાર, देव-દિવ્ય બોધના દાતા, તું याः-જે आपः-પ્રાણ अघ्न्याः-ગાય હત્યા માટે અયોગ્ય છે इति-એ રીતે, वरुणः-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ છે इति-એમ અમે शपामहे-શપથપૂર્વક કહીએ છીએ, ततः-અવિદ્યા આદિ ક્લેશ તથા અધર્માચરણથી नः-અમને मुञ्च-દૂર કરો.

હે अवभृथ-બ્રહ્મચર્ય અને વિદ્યાવ્રત સ્નાતક निचुम्पुण-મંદગામી ! તું निचेरुः-નિશ્ચિત આનંદદાતા,

निचुम्पुणः-નિશ્ચિત આનંદયુક્ત असि-છે, એથી पुरुराव्णः-અત્યંત દુઃખદાયક रिषः-હિંસાથી पाहि-રક્ષા કર.

જે देवकृतम्-વિદ્વાનોએ કરેલ एनः-પાપ છે, તેને देवैः-વિદ્વાનોથી अवायक्षि-નાશ કરે છે, જે मर्त्यकृतम्-મનુષ્યોએ કરેલ અપરાધ एनः-પાપ છે,તેને मर्त्यैः-અવિદ્વાન મનુષ્યોની સાથે अवायक्षि-નાશ કરે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોએ શિષ્યોને એવા સત્યવાદી બનાવવા જોઈએ કે તેને કદી શપથ ન લેવા પડે.

મનુષ્યો દ્વારા જે જે શ્રેષ્ઠ કર્મોનું આચરણ કરવામાં આવેલ હોય, તેનું સર્વેએ આચરણ કરવું જોઈએ. અને જે જે પાપકર્મ હોય, તેનું કદીપણ આચરણ કરવું નહિ. (૧૮)

समुद्रे ते हृदयमप्स्वन्तः सं त्वा विशन्त्वोषधीरुतापः। सुमित्रिया नऽआपऽ-ओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः॥ १९॥

પદાર્થ : હે શિષ્ય ! ते-તારું हृदयम्-હૃદય समुद्रे-આકાશમાં, अप्सु-પ્રાણોની अन्तः-મધ્યમાં હોય, त्वा-તારામાં ओषधीः-ઔષધિઓ संविशन्तु-પ્રવેશ કરે, उत-અને आपः-પ્રાણ વા જલ संविशन्तु-ઉત્તમ રીતે પ્રવેશ કરે, જેથી नः-અમારા માટે आपः-જલ અને ओषधयः-ઔષધિઓ सुमित्रियाः-શ્રેષ્ઠ મિત્રની સમાન સુખદાયક सन्तु-બને, यः-જે अस्मान्-અમારો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે. यं-च-તથા જેનો वयम्-અમે द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ तस्मै-તેના માટે એ સર્વ दुर्मित्रियाः-શત્રુની સમાન सन्तु-બને. (૧૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકોએ એમ કરવાની ઈચ્છા કરવી જોઈએ કે, જેથી શિક્ષા યોગ્ય મનુષ્ય-શિષ્ય અવકાશ પ્રાપ્ત કરીને, પ્રાણ અને ઔષધિઓની વિદ્યાનો જ્ઞાતા શીઘ્ર બને.

ઔષધિઓ, જલ અને પ્રાણનું ઉત્તમ રીતે સેવન કરેલ મિત્રની સમાન વિદ્વાનોનું પાલન કરે. અવિદ્વાનોને શત્રુ સમાન પીડિત કરે. તેનું સેવન અને તેનો ન્યાય અવશ્ય કરવો જોઈએ. (૧૯)

द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव।
पूतं पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः॥ २०॥

પદાર્થ : હે आपः-પ્રાણ વા જલની સમાન વિદ્વાનો ! આપ द्रुपदादिव-मुमुचानः-વૃક્ષના ફળ, રસ, પુષ્પ અને પત્ર આદિ સમાન પૃથક્ થઈને, વા જેમ स्विन्नः-સ્વેદયુક્ત મનુષ્ય स्नातः-સ્નાન કરીને मलादिव-મળથી મુક્ત થાય છે, વા पवित्रेणेव-પવિત્ર કરનારા પદાર્થોથી पूतम्-શુદ્ધ आज्यम्-ઘૃત થાય છે, તેમ मा-મને एनसः-અપરાધ-પાપથી પૃથક્ કરી शुन्धन्तु-શુદ્ધ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો સર્વને એ રીતે સુશિક્ષિત કરે કે, જેથી તેઓ પવિત્ર આત્મા, નીરોગ શરીરવાળા તથા ધર્મયુક્ત કર્મ કરનારા બને. (૨૦)

उद्व॒यं तम॑स॒स्परि॒ स्वः॒ पश्य॑न्त॒ऽउत्त॑रम्।
दे॒वं दे॑व॒त्रा सूर्य॒मग॑न्म॒ ज्योति॑रुत्त॒मम्॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वयम्-અમે तमसः-અંધકારથી દૂર ज्योतिः-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ सूर्यम्-સૂર્ય વા ચરાચરના આત્મા પરમેશ્વરને परि-સર્વત્રથી पश्यन्तः-જોતાં; देवत्रा-દિવ્યગુણોવાળા દેવોમાં देवम्-ઉત્તમ સુખદાતા, स्वः-સુખ સ્વરૂપ उत्तरम्-સર્વથી સૂક્ષ્મ, उत्तमम्-ઉત્કૃષ્ટ ज्योतिः-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ પરમેશ્વરને उदगन्म-પ્રાપ્ત કરીએ, તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન સ્વપ્રકાશમાન, સર્વ આત્માઓના પ્રકાશક, મહાદેવ, જગદીશ્વર છે, તેની સર્વ મનુષ્યોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૨૧)

अ॒पोऽअ॒द्यान्व॑चारिष॒ꣳरसे॑न॒ सम॑सृक्ष्महि।
पय॑स्वानग्न॒ऽआग॑मं॒ तं मा॒ सꣳसृ॒ज॒ वर्च॑सा प्र॒जया॑ च॒ धने॑न च॥ २२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન વિદ્વાન્ ! જે प्रयस्वान्-પ્રશંસિત જલની વિદ્યાથી યુક્ત હું તને आगमम्-પ્રાપ્ત કરું, अद्य-આજ रसेन-મધુર આદિ રસોથી યુક્ત अपः-જલોનું अन्वचारिषम्-અનુકૂળતાથી પાન કરું, तम्-તે मा-મને वर्चसा-સાંગોપાંગ વેદાધ્યયન, प्रजया-ઉત્તમ સંતાન च-અને धनेन-ધનથી संसृज-સારી રીતે સંયુક્ત કરે, જેથી એ લોકો તથા હું અર્થાત્ અમે સર્વે સુખના માટે समसृक्ष्महि-સંયુક્ત બનીએ.-સુખી બનીએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : જો વિદ્વાનો અધ્યયન અને ઉપદેશ દ્વારા અન્યોને વિદ્વાન બનાવે છે, તો તેઓ પણ પ્રતિદિન અધિક વિદ્યાવાન બનતા જાય છે. (૨૨)

एधो॑ऽस्येधिषी॒महि॑ स॒मिद॑सि॒ तेजो॑ऽसि॒ तेजो॒ मयि॑ धेहि। स॒माव॑वर्ति पृथि॒वी सम॒ुषाः सम॒ु सूर्यः॑। सम॒ु विश्व॑मि॒दं जग॑त्। वै॒श्वा॒न॒रज्यो॑तिर्भूयासं वि॒भून्कामा॒न्व्य॒श्नवै॒ भूः स्वाहा॑॥ २३॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ एधः-વૃદ્ધિ કારક असि-છો, समित्-જેમ અગ્નિનું પ્રકાશક ઈંધન-બળતણ છે, તેમ મનુષ્યોના આત્માઓના પ્રકાશક असि-છો, तेजः-તીવ્ર બુદ્ધિવાળા असि-છો, તેથી तेजः-જ્ઞાનના પ્રકાશને मयि-મારામાં धेहि-સ્થાપિત કરો.

જે આપ સર્વત્ર समाववर्त्ति-સમ્યક્ વ્યાપ્ત છો, આપે पृथिवी-ભૂમિ અને उषाः-પ્રભાત सम्-સારી રીતે ઉત્પન્ન કર્યા છે, सूर्यः-સૂર્ય सम्-સારી રીતે ઉત્પન્ન કરેલ છે, इदम्-આ विश्वम्-સર્વ જગત્ सम्-ઉત્પન્ન કરેલ છે, उ-તે वैश्वानरज्योतिः-વિશ્વના નાયક પ્રકાશ સ્વરૂપ બ્રહ્મને પ્રાપ્ત કરીને અમે एधिषीमहि-નિત્ય ઉન્નતિ કરીએ.

જેમ હું स्वाहा-સત્યવાણી અને કર્મથી भूः-સત્તાત્મક પ્રકૃતિ, विभून्-આકાશ આદિ વ્યાપક પદાર્થો તથા कामान्-કામનાઓ व्यश्नवै-પ્રાપ્ત કરું અને સુખી भूयासम्-રહું; उ-તેમ તમે પણ સિદ્ધ કામ અને સુખી રહો. (૨૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શુદ્ધ, સર્વત્ર વ્યાપક, સર્વના પ્રકાશકર્તા, જગતની રચના, પાલન-ધારણ અને પ્રલયકર્તા પરમેશ્વરની ઉપાસના કરીને જેમ તમે આનંદિત બનો છો, તેમ અમે તેને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત બનીએ. એમ આકાશ, કાલ તથા દિશાઓને વિભુ-વ્યાપક જાણીએ. (૨૩)

अभ्यादधामि समिधमग्ने व्रतपते त्वयि।

व्रतं च श्रद्धां चोपैमीन्धे त्वा दीक्षितोऽअहम्॥ २४॥

પદાર્થ : હે व्रतपते-સત્ય ભાષણ આદિ કર્મોના પાલક अग्ने-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ જગદીશ્વર ! त्वयि-તારામાં સ્થિર થઈને अहम्-હું समिधम्-અગ્નિમાં સમિધાની સમાન ધ્યાનને अभ्यादधामि-ધારણ કરું છું. જેથી व्रतम्-સત્ય ભાષણ આદિ વ્યવહાર च-અને श्रद्धाम्-સત્યને ધારણ કરનારા નિયમોને च-પણ उपैमि-પ્રાપ્ત કરું છું दीक्षितः-બ્રહ્મચર્ય આદિ દીક્ષાને પ્રાપ્ત કરીને, વિદ્યાવાન્ બનીને त्वा-તને इन्धे-પ્રકાશિત કરું છું. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરની આજ્ઞા અનુસાર સત્ય ભાષણ આદિ વ્રતોને ધારણ કરે છે, તેઓ અતુલ શ્રદ્ધાને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિ કરી શકે છે. (૨૫)

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह।

तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना॥ २५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું यत्र-જે પરમાત્મામાં ब्रह्म-બ્રાહ્મણકુળ અર્થાત્ વિદ્વાનોનું કુળ च-અને क्षत्रम्-ક્ષત્રિય કુળ અર્થાત્ વિદ્યા, શૌર્ય આદિ ગુણયુક્ત એ બન્ને કુળ सह-મળીને सम्यञ्चौ-સારી રીતે પ્રેમપૂર્વક च-તથા વૈશ્ય આદિ કુળ चरतः-મળીને વ્યવહાર કરે છે.

यत्र-જે બ્રહ્મમાં देवाः-દિવ્ય ગુણયુક્ત પૃથિવી આદિ અથવા વિદ્વાનો अग्निना-વિદ્યુત્‌ની सह-સાથે વિદ્યમાન છે; तम्-તે लोकम्-દર્શનીય पुण्यम्-સુખ સ્વરૂપ, નિષ્પાપ પરમાત્માને प्रज्ञेषम्-જાણું, તેમ તમે પણ તેને જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે એક, ચેતન માત્ર, સર્વના અધિકારી, પાપરહિત, જ્ઞાનના દ્વારા સાક્ષાત્ કરવા યોગ્ય, સર્વત્ર પૂર્ણતયા વ્યાપ્ત છે અને સર્વ પદાર્થોની સાથે સંયુક્ત છે, તે જ સર્વના દ્વારા ઉપાસનીય છે. (૨૫)

यत्रेन्द्रश्च वायुश्च सम्यञ्चौ चरतः सह।

तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र सेदिर्न विद्यते॥ २६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું यत्र-જે ઈશ્વરમાં इन्द्रः-સર્વત્ર વ્યાપ્ત વિદ્યુત્ च-અને वायुः-ધનંજય આદિ વાયુ सह-સાથે सम्यञ्चौ-સારી રીતે મળીને चरतः-વિચરણ કરે છે; यत्र-જે બ્રહ્મમાં सेदिः-નાશ વા ઉત્પતિ न-विद्यते-વિદ્યમાન નથી; तम्-તે पुण्यम्-પુણ્યથી ઉત્પન્ન જ્ઞાન દ્વારા જાણવા યોગ્ય लोकम्-સર્વના દ્રષ્ટા ઈશ્વરને प्रज्ञेषम्-જાણું; તેમ તમે પણ તેને જાણો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જો કોઈ વિદ્વાન્ વાયુ, વિદ્યુત્ અને આકાશ આદિનું પરિમાણ-સીમા જાણવા ઈચ્છે, તો તે તેનો અન્ત જાણી શકતો નથી, તો જે બ્રહ્મમાં એ વ્યાપ્ય છે, તે બ્રહ્મનો અન્ત જાણવા કોણ સમર્થ બની શકે છે ? (૨૬)

अ॒ꣳशुना॑ ते अ॒ꣳशुः पृ॑च्यतां॒ परु॑षा॒ परुः।
ग॒न्धस्ते॒ सोम॑मवतु॒ मदा॑य॒ रसो॒ऽअच्यु॑तः॥ २७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ते-તારા अंशुना-ભાગની સાથે अंशुः-ભાગ, परुषा-મર્મની સાથે परुः-મર્મ पृच्यताम्-સંબંધ છે.

ते-તારા अच्युतः-નાશરહિત गन्धः-ગંધ અને रसः-પદાર્થનો સાર मदाय-આનંદ માટે सोमम्-ઐશ્વર્યની अवतु-રક્ષા કરે. (૨૭)

ભાવાર્થ : જ્યારે ધ્યાનમાં નિમગ્ન મનુષ્યની મનસહિત ઈન્દ્રિયો અને પ્રાણ બ્રહ્મમાં સ્થિર બની જાય છે, ત્યારે તે નિત્ય આનંદમાં રહે છે. (૨૭)

सिञ्चन्ति॒ परि॑षिञ्च॒न्त्युत्सि॑ञ्चन्ति पु॒नन्ति॑ च।
सु॒रायै॑ ब॒भ्र्वै मदे॑ कि॒न्त्वो व॑दति कि॒न्त्वः॥ २८॥

પદાર્થ : જે बभ्रूवै-બળના ધારક सुरायै-સોમ અને मदे-આનંદના માટે મહૌષધિઓના રસને सिञ्चन्ति-જઠરાગ્નિમાં સિંચન-સેવન કરે છે, परि + सिञ्चन्ति-સર્વ તરફથી પાન કરે છે, उत्सिञ्चन्ति-ઉત્કૃષ્ટતાથી ગ્રહણ કરે છે. च-અને पुनन्ति-પવિત્ર કરે છે, તેઓ શરીર અને આત્માના બળને પ્રાપ્ત કરે છે.

જે किन्त्वः-તે શું છે ? किन्त्वः-તે શું છે ? એમ वदति-કહે છે, તે કાંઈ પણ પ્રાપ્ત કરતો નથી.

ભાવાર્થ : જેઓ અન્નાદિને પવિત્ર કરીને અર્થાત્ સુસંસ્કૃત કરીને, ઉત્તમ રસોથી સિંચન કરીને, યુક્ત આહારપૂર્વક સેવન કરે છે, તેઓ અત્યંત સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ મૂર્ખતાવશ એમ કરતા નથી, તેઓ બળ અને બુદ્ધિથી હીન રહી સદા દુઃખ ભોગવે છે. (૨૮)

धा॒नाव॑न्तं कर॒म्भिण॑मपूपव॑न्तमु॒क्थिन॑म्। इन्द्र॑ प्रा॒तर्जु॑षस्व नः॥ २९॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સુખના ઈચ્છુક, વિદ્યા અને ઐશ્વર્યથી યુક્ત મનુષ્ય ! તું नः-અમારા धानावन्तम्-સુગંધિત ધાન્ય-અન્નોથી યુક્ત, करम्भिणम्-શ્રેષ્ઠ ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ, अपूपवन्तम्-ઉત્તમ રીતિથી એકત્ર

કરેલ માલપુવા આદિથી યુક્ત, उक्थिनम्-ઉત્તમ વચનથી ઉત્પન્ન બોધથી સિદ્ધ કરેલાં ભોજ્ય પદાર્થોથી યુક્ત ભોજ્ય અન્ન, રસ આદિને प्रातः-પ્રાતઃકાલ जुषस्व-સેવન કર. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાના અધ્યાપનથી તથા ઉપદેશોથી સર્વને અલંકૃત કરનારા, સંસારના ઉદ્ધારક વિદ્વાનો-સુગંધિત રસ આદિથી યુક્ત અન્ન-પાન આદિનું યથા સમય સેવન કરે છે. તેઓ તથા જે તેને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી વાણીનું ગ્રહણ કરાવે છે, તેઓ ધન્યવાદને યોગ્ય બને છે. (૨૯)

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम्।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि॥ ३०॥

પદાર્થ : હે मरुतः-વિદ્વાનો ! ऋतावृधः-સત્યની વૃદ્ધિ કરનારા આપ લોકો येन-જેનાથી देवाय-દિવ્ય ગુણવાળા इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત ઈશ્વરને માટે देवम्-દિવ્ય સુખના દાતા, जागृवि-જાગરુક અથવા અતિ પ્રસિદ્ધ, ज्योतिः-તેજ-પરાક્રમને अजनयन्-ઉત્પન્ન કરો; તે वृत्रहन्तमम्-અતિશય રીતે મેઘનું હનન કરનાર સૂર્ય સમાન बृहद्-મહાન સામગાનનું तस्य-ઉક્ત ઈશ્વરને માટે गायत-ગાન કરો, તેની પ્રશંસા-સ્તુતિ કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વદા યુક્ત આહાર-વિહારથી શરીર અને આત્માના રોગોનું નિવારણ કરીને, પુરુષાર્થની વૃદ્ધિ કરીને, પરમેશ્વરનું પ્રતિપાદન કરનાર ગાન કરવું જોઈએ. (૩૦)

अध्वर्योऽअद्रिभिः सुतꣳसोमं पवित्रऽआनय। पुनीहीन्द्राय पातवे॥ ३१॥

પદાર્થ : હે अध्वर्यो-યજ્ઞને યુક્ત કરનાર મનુષ્ય ! તું इन्द्राय-પરમેશ્વર્યવાન્ મનુષ્યને पातवे-પીવા માટે अद्रिभिः-મેઘ વાદળાંઓથી सुतम्-ઉત્પન્ન થયેલ सोमम्-સોમવલ્લી આદિ ઔષધિઓના સાર રૂપ રસને पवित्रे-શુદ્ધ વ્યવહારમાં आनय-લાવ, તેનાથી તું पुनीहि-સર્વને પવિત્ર કર. (૩૧)

ભાવાર્થ : વૈદ્ય રાજાએ શુદ્ધ દેશમાં ઉત્પન્ન ઔષધિઓના સારભૂત રસનું નિર્માણ કરીને, તેના દાનથી સર્વ મનુષ્યોના રોગોની નિરંતર નિવૃત્તિ કરવી જોઈએ. (૩૧)

यो भूतानामधिपतिर्यस्मिँल्लोकाऽअधिश्रिताः।
यऽईशे महतो महाँस्तेन गृह्णामि त्वामहं मयि गृह्णामि त्वामहम्॥ ३२॥

પદાર્થ : હે સર્વના હિતના ઈચ્છુક પરમેશ્વર ! यः-જે આપ भूतानाम्-પૃથિવી આદિ તત્વો અને તેનાથી ઉત્પન્ન કાર્યરૂપ લોકોના अधिपतिः-અધિષ્ઠાતા છો; महतः-આકાશ આદિ મહાન પદાર્થોથી પણ महान्-મહાન છો; यः-જે ईशे-સર્વના ઈશ્વર છે; यस्मिन्-જેમાં સર્વ लोकाः-લોકો अधिश्रिताः-આશ્રિત છે; तेन-તેથી त्वाम्-તને अहम्-હું गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું; मयि-મારા હૃદયમાં त्वा-તને अहम्-હું गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે ઉપાસક મનુષ્ય અનન્ત પરમેશ્વરમાં નિષ્ઠાવાન બનીને ઈશ્વરથી ભિન્ન કોઈ અન્ય

વસ્તુને ઉપાસના યોગ્ય સમજતો નથી, તેને જ સંસારમાં વિદ્વાન્ માનવો જોઈએ. (૩૨)

उ॒प॒या॒मगृ॑हीतोऽस्य॒श्विभ्यां॑ त्वा॒ सर॑स्वत्यै॒ त्वेन्द्रा॑य त्वा सु॒त्राम्ण॑ऽ
ए॒ष ते॒ योनि॑र॒श्विभ्यां॑ त्वा॒ सर॑स्वत्यै॒ त्वेन्द्रा॑य त्वा सु॒त्राम्णे॑॥ ३३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું अश्विभ्याम्-પૂર્ણ વિદ્યાવાળા અધ્યાપક અને ઉપદેશકથી उपयाम् गृहीतः-ઉત્તમ નિયમોથી ગ્રહણ કરેલ असि-છે, જે ते-તારો एषः-એ अश्विभ्याम्-અધ્યાપક અને ઉપદેશકની સાથે योनिः-વિદ્યા-સંબંધ છે, તે त्वा-તને सरस्वत्यै-સુશિક્ષિત વાણી માટે, त्वा-તને इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યના માટે તથા त्वा-તને सुत्राम्णे-ઉત્તમ રક્ષક બનવા માટે ગ્રહણ કરું છું.

सरस्वत्यै-પ્રશસ્ત ગુણવાળી વિદુષી સ્ત્રી માટે त्वा-તને, इन्द्राय-પરમ ઉત્તમ વ્યવહાર માટે त्वा-તને सुत्राम्णे-ઉત્તમ રક્ષા માટે त्वा-તને ગ્રહણ કરું છું. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો દ્વારા શિક્ષિત, સ્વયં શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિમાન, જિતેન્દ્રિય, વિવિધ વિદ્યાઓનાં જ્ઞાતા અને વિદ્વાનોને પ્રિય હોય, તે જ વિદ્યા અને ધર્મના પ્રચાર માટે અધિષ્ઠાતા બનવા યોગ્ય છે. (૩૩)

प्रा॒ण॒पा मे॑ऽअपान॒पाश्च॑क्षु॒ष्पाः श्रो॑त्र॒पाश्च॑ मे।
वा॒चो मे वि॒श्वभे॑षजो॒ मन॑सोऽसि वि॒लाय॑कः॥ ३४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેથી તું मे-મારા प्राणपाः-પ્રાણના રક્ષક, अपानपाः-અપાનના રક્ષક, मे-મારા चक्षुष्पाः-નેત્રોના રક્ષક, श्रोत्रपाः-શ્રોતોના રક્ષક च-અને मे-મારી वाचः-વાણીના विश्वभेषजः-સર્વની ઔષધિ રૂપ, मनसः-વિજ્ઞાનનું સાધક મનનો विलायकः-વિવિધ પ્રકારથી સંબંધ કરનાર असि-છે, એથી તું અમારા પિતાની સમાન સત્કારને યોગ્ય છે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ બાળપણથી લઈને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા જિતેન્દ્રિયતા, વિદ્યા તથા સત્પુરુષોના સંગથી પ્રેમ તથા ધર્માત્મા અને પરોપકારિતા ગ્રહણ કરાવે છે. તેને માતા સમાન અને મિત્ર સમાન જાણવા જોઈએ. (૩૪)

अश्विन॑कृतस्य ते॒ सर॑स्वतिकृत॒स्येन्द्रे॑ण सु॒त्राम्णा॑ कृ॒तस्य॑।
उप॑हूत॒ऽउप॑हूत॒स्य भक्षयामि॥ ३५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! उपहूतः-સત્કારપૂર્વક બોલાવેલ હું ते-તારા अश्विनकृतस्य-જે સદ્ગુણોથી વ્યાપ્ત વિદ્વાનો માટે, सरस्वतिकृतस्य-વિદુષી સ્ત્રી માટે, सुत्राम्णा-ઉત્તમ રક્ષક इन्द्रेण-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યથી યુક્ત રાજાથી कृतस्य-બનાવેલા उपहूतस्य-સમીપમાં લાવેલ અન્ન આદિનું भक्षयामि-ભક્ષણ કરું છું. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનો અને ઐશ્વર્યયુક્ત લોકો દ્વારા કરેલાં કર્મોનું આચરણ કરવું જોઈએ, ઉત્તમ રીતિથી શિક્ષિત રસોયા દ્વારા બનાવેલ ભોજન કરવું જોઈએ અને સત્કાર કરનારનો સત્કાર કરવો જોઈએ. (૩૫)

समि॑द्धऽइन्द्र॑ऽउ॒षसा॒मनी॑के पु॒रो॒रुचा॑ पूर्व॒कृद्वा॑वृधा॒नः।
त्रि॒भिर्दे॒वैस्त्रि॒ꣳश॒ता॒ वज्र॑बाहु॒र्जघा॑न वृ॒त्रं वि दुरो॑ ववार॥ ३६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! पूर्वकृत्-પૂર્વ દિશાના બનાવનાર वावृधानः-વૃદ્ધિ પામતાં, वज्रबाहुः-હાથમાં વજ્ર ધારણ કરેલ उषसाम्-પ્રભાતવેળાની अनीके-સેનામાં જેમ पुरोरुचा-પ્રથમ પ્રકટેલી તેજ રેખાથી समिद्धः-પ્રકાશિત થયેલો इन्द्रः-સૂર્ય त्रिभिः-ત્રણ અધિક त्रिंशता-ત્રીસ देवैः-પૃથિવી આદિ દિવ્ય પદાર્થોની સાથે રહેલા वृत्रम्-મેઘને जघान्-મારે છે, दुरः-દ્વારોને विववार-પ્રકાશિત કરે છે-ખોલે છે; તેમ અતિ બળવાન યોદ્ધાઓની સાથે શત્રુઓને મારીને વિદ્યા અને ધર્મના દ્વારોને પ્રકાશિત કર. (૩૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન લોક સૂર્યની સમાન વિદ્યા અને ધર્મના પ્રકાશક બને, તેઓ અન્ય વિદ્વાનોની શાન્તિ અને પ્રીતિપૂર્વક સત્ય-અસત્યના વિવેક માટે સંવાદ કરીને તથા ઉત્તમ નિશ્ચય કરીને સર્વ લોકોને સંશય રહિત કરે. (૩૬)

न॒रा॒शꣳस॒ः प्रति॒ शूरो॒ मिमा॑न॒स्तनू॒नपा॒त्प्रति॑ य॒ज्ञस्य॒ धाम॑।
गोभि॑र्व॒पावा॒न्मधु॑ना सम॒ञ्जन्हिर॑ण्यैश्च॒न्द्री य॑जति॒ प्रचे॑ताः॥ ३७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! नराशंसः-મનુષ્યોથી પ્રશંસા કરવા યોગ્ય, यज्ञस्य-સત્ય વ્યવહારના धाम-સ્થાનના प्रति + मिमानः-અનેક ઉત્તમ પદાર્થોના નિર્માતા, शूरः-સર્વત્રથી નિર્ભય, तनूनपात्-શરીરનો પાત-નાશ ન કરનાર, गोभिः-ગાય અને બળદોથી वपावान्-ખેતર વાવવામાં આવે છે તે પ્રશંસિત ઉત્તમ ક્રિયા યુક્ત, मधुना-મધુર આદિ રસથી समञ्जन्-ખેતીને ઉત્પન્ન કરતાં, हिरण्यैः-સુવર્ણ આદિ પદાર્થોથી चन्द्री-બહુ જ સુવર્ણવાન્, प्रचेताः-ઉત્તમ બુદ્ધિયુક્ત વિદ્વાન્ प्रति + यजति-પ્રતિદિન યજ્ઞ કરે છે-કરાવે છે, તેનો અમે આશ્રય-સંગ કરીએ. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ કોઈ નિન્દિત, ડરપોક, પોતાના શરીરનાં નાશક, પુરુષાર્થહીન, આળસુ, મૂઢ અને દરિદ્ર મનુષ્યનો સંગ કદી ન કરવો. (૩૭)

ईडि॒तो दे॒वैर्हरि॑वाँ२ ऽ अभि॒ष्टिरा॒जुह्वा॑नो ह॒विषा॒ शर्द्ध॑मानः।
पु॒र॒न्द॒रो गो॑त्र॒भिद्वज्र॑बाहु॒राया॑तु य॒ज्ञमुप॑ नो जु॒षा॒णः॥ ३८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ જેમ हरिवान्-ઉત્તમ ઘોડાવાળા, वज्रबाहुः-હાથમાં વજ્ર રાખનાર, पुरन्दरः-શત્રુઓના નગરોનું વિદારણ કરનાર સેનાપતિ गोत्रभित्-મેઘનું ભેદન કરનાર સૂર્ય જેમ રસ-સેવન કરે છે તેની સમાન પોતાની સેનાનું સેવન કરે છે, તેમ देवैः-વિદ્વાનોથી ईडितः-પ્રશંસિત, अभिष्टिः-સર્વત્ર યજ્ઞ કરનાર, आजुह्वानः-વિદ્વાનોથી સત્કાર પૂર્વક નિમંત્રિત, हविषा-સદ્‌વિદ્યાના આદાન-પ્રદાનથી शर्द्धमानः-સહનશીલ, जुषाणः-પ્રસન્ન થઈને આપ नः-અમારા यज्ञम्-યજ્ઞમાં उप + आ + यातु-ઉત્તમ રીતે

આવો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ સેનાપતિ સેનાને અને સૂર્ય મેઘની વૃદ્ધિ કરીને સંસારની રક્ષા કરે છે, તેમ ધાર્મિક અધ્યાપકોએ અધ્યયન કરનારા વિદ્યાર્થીઓની સાથે અધ્યયન અને અધ્યાપન કરીને વિદ્યા દ્વારા સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૩૮)

जुषाणो बर्हिर्हरिवान्नऽइन्द्रः प्राचीनꣳसीदत्प्रदिशा पृथिव्याः।
उरुप्रथाः प्रथमानꣳस्योनमादित्यैरक्तं वसुभिः सजोषाः॥ ३९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ बर्हिः-અન્તરિક્ષનું जुषाणः-સેવન કરનાર हरिवान्-હરણશીલ અનેક કિરણોવાળા, उरुप्रथाः-બહુજ વિસ્તાર યુક્ત, आदित्यैः-મહિનાઓ, वसुभिः-પૃથિવી આદિ આઠ વસ્તુઓની सजोषाः-સાથે વિદ્યમાન इन्द्रः-જલોને ધારણ કરનાર સૂર્ય पृथिव्याः-પૃથિવીની प्रदिशा-ઉપદિશાની સાથે प्रथमानम्-વિસ્તૃત, अक्तम्-પ્રસિદ્ધ, प्राचीनम्-પ્રાચીન તથા स्योनम्-સુખકારક સ્થાનમાં सीदत्-સ્થિર થાય છે; તેમ તું અમારી મધ્યમાં રહે. (૩૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દિવસ અને રાત પ્રયત્નપૂર્વક સૂર્યની સમાન અવિદ્યા રૂપી અંધકારનું નિવારણ કરીને સંસારમાં મહાન સુખ ઉત્પન્ન કરવું જોઈએ.

જેમ પૃથિવીથી સૂર્ય મોટો છે, તેમ અવિદ્વાનોની મધ્યમાં વિદ્વાન મહાન્ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૯)

इन्द्रं दुरः कवष्यो धावमाना वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः।
द्वारो देवीरभितो वि श्रयन्ताꣳसुवीरा वीरं प्रथमाना महोभिः॥ ४०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ कवष्यः-બોલવામાં ચતુર वृषाणम्-અતિ વીર્યવાન્, इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યવાન્, वीरम्-વીર પુરુષના પ્રતિ धावमानाः-દોડતી जनयः-સંતાનોને જન્મ આપનારી સ્ત્રીઓ दुरः-દ્વાર-ઘરને यन्तु-પ્રાત થાય છે.

જેમ प्रथमानाः-પ્રખ્યાત, सुवीराः-અતિ ઉત્તમ વીર પુરુષ महोभिः-સુપૂજિત ગુણોથી द्वारः-દ્વારની સમાન વિદ્યમાન देवीः-વિદ્યા આદિ ગુણોથી પ્રકાશમાન, जनयः-સંતાન ઉત્પન્ન કરનાર सुपत्नीः-ઉત્તમ સ્ત્રીઓને अभितः-સર્વત્રથી वि + श्रयन्ताम्-વિશેષ કરીને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે કુળ અને દેશમાં લોકો પરસ્પરની પ્રીતિથી સ્વયંવર વિવાહ કરે છે, ત્યાં મનુષ્ય સદા આનંદમાં રહે છે. (૪૦)

उषासानक्ता बृहती बृहन्तं पयस्वती सुदुघे शूरमिन्द्रम्।
तन्तुं ततं पेशसा संवयन्ती देवानां देवं यजतः सुरुक्मे॥ ४१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ पेशसा-રૂપથી संवयन्ती-પ્રાપ્ત કરનારા, पयस्वती-રાતના અંધકારથી

યુક્ત, सुदुघे-સારી રીતે પૂરણ કરનાર, बृहती-વૃદ્ધિ પામતાં, सुरुक्मे-સારા પ્રકાશવાળા उषासानक्ता-રાત અને દિવસ ततम्-વિસ્તૃત, देवानाम्-પૃથિવી આદિ લોકોના देवम्-પ્રકાશક, बृहन्तम्-મહાન इन्द्रम्-સૂર્યમંડળનો यजतः-સંગ કરે છે, તેમ तन्तुम्-વિસ્તાર કરનાર शूरम्-શૂરવીર પુરુષનો તમે સંગ કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ લોક સર્વથી મહાન સૂર્ય લોકનો આશ્રય કરે છે, તેમ સર્વ લોકોએ અત્યંત શ્રેષ્ઠ પુરુષનો આશ્રય કરવો જોઈએ. (૪૧)

दैव्या मिमाना मनुषः पुरुत्रा होताराविन्द्रं प्रथमा सुवाचा।
मूर्द्धन्यज्ञस्य मधुना दधाना प्राचीनं ज्योतिर्हविषा वृधातः॥ ४२॥

પદાર્થ : જે दैव्या-દિવ્ય પદાર્થો અને વિદ્વાનોમાં વિદ્યમાન, मिमाना-નિર્માણકર્તા, होतारौ-દાતા सुवाचा-સુશિક્ષિત વાણીથી યુક્ત વિદ્વાન્, यज्ञस्य-સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારથી मूर्द्धन्-ઉપર प्रथमा-પ્રથમ વિદ્યમાન, पुरुत्राः-અનેક मनुषः-મનુષ્યોને दधाना-ધારણ કરનાર मधुना-મધુર हविषा-હોમ યોગ્ય પદાર્થોથી प्राचीनम्-પ્રાચીન ज्योतिः-પ્રકાશ અને इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યની वृधातः-વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ સર્વ મનુષ્યોથી સત્કાર કરવા યોગ્ય છે. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો અધ્યાપન અને ઉપદેશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને ઉન્નત કરે છે, તે સર્વ મનુષ્યોને સુભૂષિત કરનારા છે. (૪૨)

तिस्रो देवीर्हविषा वर्द्धमानाऽइन्द्रं जुषाणा जनयो न पत्नीः।
अच्छिन्नं तन्तुं पयसा सरस्वतीडा देवी भारती विश्वतूर्त्तिः॥ ४३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે विश्वतूर्त्तिः-વિશ્વમાં શીઘ્રતા ઉત્પન્ન કરનારી, देवीः-પ્રકાશમાન, सरस्वती-ઉત્તમ વિજ્ઞાનયુક્ત સરસ્વતી, इडा-શુભગુણોના કારણે સ્તુતિ કરવા યોગ્ય તથા भारती-ધારણ અને પોષણ કરનારી એ तिस्त्रः-ત્રણ देव्यः-પ્રકાશમાન શક્તિઓ पयसा-શબ્દ, અર્થ અને સંબંધ રૂપ રસથી हविषा-આદાન-પ્રદાનનો વ્યવહાર વા પ્રાણથી वर्द्धमानाः-વૃદ્ધિવાન जनयः-સંતાન ઉત્પન્ન કરનારી पत्नीः-સ્ત્રીઓની न-સમાન, अच्छिन्नम्-છેદન-ભેદન રહિત, तन्तुम्-વિસ્તીર્ણ, इन्द्रम्-વિદ્યુત્‌નું जुषाणाः-સેવન કરી રહી છે; તેનું તમે પણ સેવન કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનોથી સંયુક્ત વાણી, નાડી અને ધારણશક્તિરૂપ ત્રણ પ્રકારની શક્તિઓ સર્વમાં અભિવ્યાપ્ત અને સદા ઉત્પન્ન થતી વ્યવહારની હેતુ છે, તેને મનુષ્યોએ વ્યવહારમાં યથોચિત સંયોગ કરવો જોઈએ. (૪૩)

त्वष्टा दधच्छुष्ममिन्द्राय वृष्णेऽपाकोऽचिष्टुर्यशसे पुरूणि।
वृषा यजन्वृषणं भूरिरेता मूर्द्धन्यज्ञस्य समनक्तु देवान्॥ ४४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ त्वष्टा-વિદ્યુત્‌ની સમાન વિદ્યમાન વિદ્વાન્ वृषा-સેચનકર્તા इन्द्राय-પરમ

ઐશ્વર્ય वृष्णे-બીજાની શક્તિને રોકનાર માટે शुष्मम्-બળને, अपाकः-અપ્રશંસનીય, अचिष्टुः-પ્રાપ્ત થનાર यशसे-કીર્તિ માટે पुरूणि-અનેક પદાર્થોને दधत्-ધારણ કરતાં, भूरिरेताः-અત્યંત પરાક્રમી वृषणम्-મેઘની यजन्-સંગત કરતાં, यज्ञस्य-સંગતિથી ઉત્પન્ન થયેલ જગતના मूर्द्धन्-મૂર્દ્ધન્ય देवान्-વિદ્વાનોની समनक्तु-કામના કરે છે; તેમ તું પણ કામના કર. (૪૪)

ભાવાર્થ : જ્યાં સુધી મનુષ્ય શુદ્ધ અન્તઃકરણવાળો ન બની જાય, ત્યાં સુધી તે વિદ્વાનોનો સંગ, સત્યશાસ્ત્રોનો તથા પ્રાણાયામનો અભ્યાસ કરતો રહે. જેથી તે શીઘ્ર શુદ્ધ અન્તઃકરણવાળો બની શકે. (૪૪)

वनस्पतिरवसृष्टो न पाशैस्त्मन्या समञ्जञ्छमिता न देवः।
इन्द्रस्य हव्यैर्जठरं पृणानः स्वदाति यज्ञं मधुना घृतेन॥ ४५॥

પદાર્થ : જે पाशैः-દૃઢ બંધનોથી वनस्य-વનનો પાલક, अवसृष्टः-આજ્ઞા આપેલા પુરુષની न-સમાન, त्मन्या-આત્માથી समञ्जन्-સંયુક્ત देवः-દિવ્ય સુખોના દાતા शमिता-યજ્ઞની न-સમાન; इन्द्रस्य-ઐશ્વર્યના जठरम् देवः-દિવ્ય સુખોના દાતા ઉદર સમાન કોશને पृणानः-પૂર્ણ કરતાં, हव्यैः-ખાવા યોગ્ય मधुना-મધ અને घृतेन-ઘી આદિ પદાર્થોથી यज्ञम्-અનુષ્ઠાન કરવા યોગ્ય યજ્ઞ કરતાં स्वदाति-ઉત્તમ પદાર્થોનું આસ્વાદન કરે છે, તે રોગરહિત રહે છે. (૪૫)

ભાવાર્થ : જેમ વનસ્પતિ વધીને ફળ આપે છે, જેમ બંધનોથી બંધાયેલો ચોર પાપથી છૂટી જાય છે.

અથવા જેમ યજ્ઞ સર્વ જગતની રક્ષા કરે છે, તેમ યજ્ઞનું સેવન કરનાર અને યુક્ત આહાર-વિહાર કરનાર મનુષ્ય ઉપકારકર્તા બને છે. (૪૫)

स्तोकानामिन्दुं प्रति शूरऽइन्द्रो वृषायमाणो वृषभस्तुराषाट्।
घृतप्रुषा मनसा मोदमानाः स्वाहा देवाऽअमृता मादयन्ताम्॥ ४६॥

પદાર્થ : જેમ वृषायमाणः-બળવાન બનીને, वृषभः-ઉત્તમ, तुराषाट्-હિંસક શત્રુઓનું મર્ષણ કરનાર, शूरः-શૂરવીર, इन्द्रः- ઐશ્વર્યવાન્ स्तोकानाम्-અલ્પ લોકોમાં इन्दुम्-કોમળ સ્વભાવવાળા મનુષ્યના प्रत्याऽऽनन्दति-પ્રતિ આનંદિત બને છે, તેમ घृतप्रुषा-પ્રકાશનું સેવન કરનાર मनसा-વિજ્ઞાનથી અને स्वाहा-સત્યક્રિયાથી मोदमानाः-આનંદિત બનીને अमृताः-આત્મસ્વરૂપથી, મૃત્યુ ધર્મ રહિત देवाः-વિદ્વાનો मादयन्ताम्-સ્વયં તૃપ્ત બનીને અમને આનંદિત કરે. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અલ્પગુણવાળા મનુષ્યને જોઈને આર્દ્રચિત્ત દયાવાન બને છે, તેઓ સર્વત્ર સર્વને સુખી કરે છે. (૪૬)

आयात्विन्द्रोऽवसऽउप नऽइह स्तुतः सधमादस्तु शूरः।
वावृधानस्तविषीर्यस्य पूर्वीर्द्यौर्न क्षत्रमभिभूति पुष्यात्॥ ४७॥

પદાર્થ : જે इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યને ધારણ કરનાર इह-આ વર્તમાન સમયમાં स्तुतः-પ્રશંસિત, शूरः-

નિર્ભય વીર પુરુષ पूर्वीः-પૂર્વ વિદ્વાનો દ્વારા સુશિક્ષાથી ઉત્તમ કરેલી तविषीः-સેનાઓની वावृधानः-અત્યંત વૃદ્ધિ કરનાર, यस्य-જેના अभिभूति-શત્રુઓનો તિરસ્કાર કરનારાં क्षत्रम्-રાજ્ય द्यौः-સૂર્યના પ્રકાશની न-સમાન છે, જે नः-અમને पुष्यात्-પુષ્ટ કરે, તે અમારી अवसे-રક્ષા આદિ માટે उप + आ + यातु-સમીપ આવે અને सधमात्-સમાન સ્થાનવાળા अस्तु-બને. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાય અને વિદ્યા બન્નેના પ્રકાશક, સત્કૃત અને હૃષ્ટ-પુષ્ટ સેનાયુક્ત, પ્રજાના પોષક અને દુષ્ટોનો નાશ કરનાર હોય, તેઓ રાજ્ય અધિકારી બનવાને યોગ્ય છે. (૪૭)

आ नऽइन्द्रो दूरादा नऽआसादभिष्टिकृदवसे यासदुग्रः।
ओजिष्ठेभिर्नृपतिर्वज्रबाहुः सङ्गे समत्सु तुर्वणिः पृतन्यून्॥ ४८॥

પદાર્થ : જે अभिष्टिकृत्-સર્વત્રથી ઇચ્છિત સુખ ઉત્પન્ન કરનાર, वज्रबाहुः-વજ્રસમાન દૃઢ ભુજાઓવાળા, नृपतिः-નરોના પાલક, ओजिष्ठेभिः-બલિષ્ઠ યોદ્ધાઓના કારણે उग्रः-દુષ્ટોપર ક્રોધ કરનાર, तुर्वणिः-શત્રુઓને શીઘ્ર મારનાર इन्द्रः-શત્રુ વિદારક સેનાપતિ नः-અમારી अवसे-રક્ષા માટે समत्सु-અનેક સંગ્રામોમાં सङ्गे-સાથ दूरात-દૂર દેશથી અને आसात्-સમીપ દેશથી आ + यासत्-આવે અને नः-અમારી पृतन्यून्-સેના તથા સંગ્રામના ઇચ્છુકની आ-સદા રક્ષા અને માન કરે, તેનું અમે પણ માન કરીએ. (૪૮)

ભાવાર્થ : તે પુરુષો જ રાજ્ય કરી શકે છે કે, જેઓ દૂર દેશ સ્થિત તથા સમીપદેશ સ્થિત સર્વ પ્રજાઓની નિરીક્ષણ અને દૂત વ્યવસ્થા દ્વારા રક્ષા કરે છે અને શૂરવીરોનો સદા સત્કાર કરે છે. (૪૮)

आ न इन्द्रो हरिभिर्यात्वच्छार्वाचीनोऽवसे राधसे च।
तिष्ठाति वज्री मघवा विरप्शीमं यज्ञमनु नो वाजसातौ॥ ४९॥

પદાર્થ : જે मघवा-પરમ પ્રશંસિત ધનથી યુક્ત, विरप्शी-મહાન બળવાન, अर्वाचीनः-વિદ્યા આદિ બળથી સન્મુખ જનાર, वज्री-પ્રશસ્ત શસ્ત્ર વિદ્યામાં શિક્ષિત इन्द्रः-ઐશ્વર્યના દાતા સેનાપતિ છે-તે हरिभिः-સુશિક્ષિત ઘોડાઓથી नः-અમારી अवसे-રક્ષા આદિ માટે च-અને राधसे-ધનને માટે वाजसातौ-સંગ્રામમાં अनु, तिष्ठाति-અનુકૂળ સ્થિર રહે, તે नः-અમારા इमम्-આ यज्ञम्-સત્ય ન્યાય પાલન કરવા રૂપ રાજ્ય વ્યવહારને अच्छ + आ + यातु-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત થાય. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે યુદ્ધ વિદ્યામાં નિપુણ, મહા બળવાન, પ્રજાના ધનની વૃદ્ધિ કરનાર, સુશિક્ષિત ઘોડાઓ અને હાથીઓવાળા અને મંગલકારી લોકો છે, તે જ રાજપુરુષ [રાજકર્મચારી] બને. (૪૯)

त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳहवेहवे सुहवꣳशूरमिन्द्रम्।
ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳस्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः॥ ५०॥

પદાર્થ : હે સભાધ્યક્ષ ! રાજન્ ! જે हवे हवे-પ્રત્યેક સંગ્રામમાં त्रातारम्-રક્ષક, इन्द्रम्-દુષ્ટોના નાશક,

अवितारम्-પ્રીતિ કરનાર-તૃપ્ત કરનાર, इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યના દાતા, सुहवम्-સારી રીતે આહ્વાન કરનાર, शूरम्-શત્રુઓના નાશક, इन्द्रम्-રાજ્યના ધારક, शुक्रम्-શીઘ્રકારી, पुरुहूतम्-અનેકોથી સત્કાર પામેલા, इन्द्रम्-શત્રુ સેનાના વિદારક તને ह्वयामि-સત્કાર પૂર્વક બોલાવું છું, તે मघवा-બહુ ધનયુક્ત इन्द्रः-ઉત્તમ સેનાના ધારક તું नः-અમારા માટે स्वस्ति-સુખને धातु-ધારણ કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય તેનો સદા સત્કાર કરે, જે વિદ્યા, ન્યાય તથા ધર્મનો સેવક હોય અને જે સુશીલ અને જિતેન્દ્રિય રહીને સર્વનાં સુખની વૃદ્ધિ માટે પ્રયત્ન કરે. (૫૦)

इन्द्रः सुत्रामा स्ववाँ२ ऽ अवोभिः सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः।
बाधतां द्वेषोऽअभयं कृणोतु सुवीर्यस्य पतयः स्याम॥ ५१॥

પદાર્થ : જે सुत्रामा-સારી રીતે રક્ષા કરનાર, स्ववान्-પોતાના અનેક ઉત્તમ માણસોવાળા, विश्ववेदाः-સમસ્ત ધનવાન, सुमृडीकः-અત્યંત સુખકારી અને इन्द्रः-ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર રાજા, अवोभिः-ન્યાયપૂર્વક રક્ષા આદિથી પ્રજાની રક્ષા કરે; તે द्वेषः-શત્રુઓને बाधताम्-હટાવે, अभयम्-સર્વને નિર્ભય कृणोतु-કરે, અને સ્વયં પણ તેમ નિર્ભય भवतु-બને; જેથી અમે सुवीर्यस्य-ઉત્તમ પરાક્રમના पतयः-પાલક स्याम-બનીએ. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ વિદ્યા અને વિનયથી યુક્ત બનીને પ્રજાના રક્ષક ન હોય, તો સુખની વૃદ્ધિ પણ થાય નહિ. (૫૧)

तस्य वयꣳ सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम।
स सुत्रामा स्ववाँ२ ऽ इन्द्रोऽअस्मेऽआराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोतु॥ ५२॥

પદાર્થ : જે सुत्रामा-સારી રીતે રક્ષા કરનાર, स्ववान्-પ્રશસ્ત પોતાના કુળ અને ધનવાળા, इन्द्रः-પિતા સમાન વિદ્યમાન સભાપતિ રાજા अस्मे-અમારા द्वेषः-શત્રુઓને आरात्-દૂર વા સમીપ દેશથી चिद्-પણ सनुतः-સદા युयोतु-દૂર કરે.

तस्य-તે પૂર્વોક્ત यज्ञियस्य-યજ્ઞનું અનુષ્ઠાન કરનાર રાજાની सुमतौ-સુંદર મનમાં અને भद्रे-કલ્યાણ કરનાર सौमनसे-સુંદર મનમાં ઉત્પન્ન થયેલા વ્યવહારમાં अपि-પણ અમે રાજાને અનુકૂળ વર્તનારા स्याम-બનીએ અને सः-તે અમારા રાજા અને वयम्-અમે તેની પ્રજા અર્થાત્ તેના રાજ્યમાં રહીએ. (૫૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ તેની સંમતિથી રહેવું જોઈએ, જે પક્ષપાત રહિત, ધાર્મિક અને ન્યાયથી પ્રજાનું પાલન કરે. (૫૨)

आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः।
मा त्वा केचिन्नि यमन्विं न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ२॥ऽइहि॥ ५३॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યના વર્ધક સેનાપતિ ! તું मन्द्रैः-પ્રશંસિત मयूररोमभिः-મોરના રોમ

સમાન કોમળ રોમવાળા हरिभिः-ઘોડાઓથી तान्-તે શત્રુઓને જીતવા માટે याहि-પ્રસ્થાન કર.

ત્યાં त्वा-તને पाशिनः-જાળ રાખનાર શિકારી विं, न-પક્ષીને બાંધે તે न-સમાન केचित्-કોઈપણ नियमन्-બાંધે मा-નહિ, તું अतिधन्वेव-મહાન ધનુર્ધારીની સમાન इहि-સારી રીતે ગમન કર. (૫૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે વીરો શત્રુઓ પર વિજય માટે જાય, ત્યારે સર્વત્રથી પોતાની શક્તિની સમીક્ષા કરીને, પર્યાપ્ત સામગ્રીથી યુક્ત બનીને, શત્રુઓ સાથે યુદ્ધ કરીને, પોતાનો વિજય કરે અને જેમ શત્રુ તેને વશમાં ન કરી શકે, તેમ કાર્ય કરે. (૫૩)

एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासोऽअभ्यर्चन्त्यर्कैः।
स न स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ५४॥

પદાર્થ : હે वसिष्ठासः-અત્યંત વાસ કરનારા પ્રજાજનો ! જે वृषणम्-બળવાન, वज्रबाहुम्-શસ્ત્રધારી, इन्द्रम्-શત્રુનાશકનાં अर्कैः-પ્રશંસિત કર્મોથી વિદ્વાનો अभ्यर्चन्ति-યથાવત્ સત્કાર કરે છે, एव-એનો यूयम्-તમે इत्-પણ સત્કાર કરો.

सः-તે स्तुतः-સ્તુતિને પ્રાપ્ત થઈને नः-અમને તથા गोमत्-ઉત્તમ ગાય આદિ પશુઓથી યુક્ત वीरवत्-શૂરવીરોથી યુક્ત રાજ્યને धातु-ધારણ કરે.

यूयम्-તમે લોકો स्वस्तिभिः-સુખોથી અર્થાત્ કલ્યાણકારક કર્મોથી नः-અમારી सदा-સર્વ કાલમાં पात-રક્ષા કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ રાજપુરુષો પ્રજાની રક્ષા કરે, તેમ પ્રજાજનો પણ રાજપુરુષોની રક્ષા કરે. (૫૪)

समिद्धोऽअग्निरश्विना तप्तो घर्मो विराट् सुतः।
दुहे धेनुः सरस्वती सोमꣳशुक्रमिहेन्द्रियम्॥ ५५॥

પદાર્થ : જેમ इह-આ સંસારમાં धेनुः-દૂધ આપનારી ગાયની સમાન सरस्वती-શાસ્ત્ર વિજ્ઞાનથી યુક્ત વાણી शुक्रम्-શુદ્ધ सोमम्-ઐશ્વર્ય અને इन्द्रियम्-ધનને પરિપૂર્ણ કરે છે, તેમ તેને હું दुहे-પરિપૂર્ણ કરું.

હે अश्विनौ-શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્ત સ્ત્રી-પુરુષો ! तप्तः-તાપથી યુક્ત, विराट्-વિવિધ પ્રકારથી પ્રકાશમાન, सुतः-પ્રેરણાને પ્રાપ્ત समिद्धः-પ્રદીપ્ત घर्मः-યજ્ઞની સમાન સંગતિથી યુક્ત, अग्निः-અગ્નિ જેમ વિશ્વની રક્ષા કરે છે, તેમ હું એ સર્વ જગતની રક્ષા કરું. (૫૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં સમાન ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા સ્ત્રી-પુરુષો સૂર્ય સમાન સત્કીર્તિથી પ્રકાશમાન અને પુરુષાર્થી બનીને, ધર્મયુક્ત ઐશ્વર્યને સદા સંચિત કરે. (૫૫)

तनूपा भिषजा सुतेऽश्विनोभा सरस्वती।
मध्वा रजाꣳसीन्द्रियमिन्द्राय पथिभिर्वहान्॥ ५६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જેમ भिषजा-વૈદ્યક વિદ્યાના જ્ઞાતા, तनूपा-શરીરના રક્ષક, उभा-બન્ને, अश्विना-શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવમાં વ્યાપ્ત, વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ અને सरस्वती-અનેક વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, मध्वा-મધુર ગુણથી યુક્ત, सुते-ઉત્પન્ન થયેલ જગતમાં સ્થિર થઈને पथिभिः-ધર્મ-માર્ગોથી इन्द्राय-રાજાને માટે रजांसि-લોકો અને इन्द्रियम्-ધનને ધારણ કરે, તેમ તેને આપ वहान्-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : જો સ્ત્રી-પુરુષ વૈદ્યક વિદ્યાને જાણે નહિ, તો રોગોથી નિવૃત્તિ તથા આરોગ્યની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી અને ધર્મ વ્યવહારમાં નિરંતર ચાલવાને સમર્થ બની શકતાં નથી. (૫૬)

इन्द्रा॒येन्दु॒ꣳसर॑स्वती॒ नरा॒शꣳसे॑न न॒ग्नहु॑म्।
अधा॑ताम॒श्विना॒ मधु॒ भे॑ष॒जं भि॒षजा॑ सु॒ते॥ ५७॥

પદાર્થ : अश्विना-વૈદ્યક વિદ્યામાં વ્યાપક, भिषजा-બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો इन्द्राय-દુઃખનાશન માટે सुते-ઉત્પન્ન થયેલાં આ જગતમાં मधु-જ્ઞાન વર્ધક मधुर-કોમળતા આદિ ગુણોથી યુક્ત भेषजम्-ઔષધને अधाताम्-ધારણ કરે.

नराशंसेन-મનુષ્યોથી સ્તુતિ કરેલ વચનોથી सरस्वती-પ્રશસ્ત વિદ્યાયુક્ત વાણી नग्नहुम्-આનંદને આપનાર इन्दुम्-પરમ ઐશ્વર્યને आदधातु-ધારણ કરે. (૫૭)

ભાવાર્થ : વૈદ્ય બે પ્રકારના હોય છે-એક જ્વર આદિ શરીરના રોગોનું હરણ કરનાર ચિકિત્સક છે; બીજા જે મનના અવિદ્યા આદિ ક્લેશ રોગોના વિનાશક અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે.

જ્યાં એ [વૈદ્યો] રહે છે, ત્યાં રોગોના વિનાશથી પ્રાણીઓ આધિ અને વ્યાધિથી મુક્ત થઈને સુખી બને છે. (૫૭)

आ॒जुह्वा॑ना॒ सर॑स्व॒तीन्द्रा॑येन्द्रि॒याणि॑ वी॒र्य॒म्।
इडा॑भिर॒श्विना॒विष॒ꣳसमू॒र्जꣳस॒ꣳर॒यिं द॑धुः॥ ५८॥

પદાર્થ : आजुह्वाना-સર્વત્રથી પ્રશંસિત, सरस्वती-ઉત્તમ જ્ઞાનવતી સ્ત્રી इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત પતિ માટે इन्द्रियाणि-શ્રોત આદિ ઈન્દ્રિયો વા ઐશ્વર્ય ઉત્પાદક સુવર્ણ આદિ પદાર્થો તથા वीर्यम्-શરીરમાં બળ પેદા કરનાર ઘૃત આદિ પદાર્થોને ધારણ કરે.

अश्विनौ-વૈદ્યક વિદ્યાનાં કાર્યોમાં સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સમાન પ્રકાશમાન બે વૈદ્યો इडाभिः-અતિ ઉત્તમ ઔષધિઓથી इषम्-અન્ન આદિ પદાર્થો, समूर्जम्-ઉત્તમ પરાક્રમ અને रयिम्-ઉત્તમ ધર્મ દ્વારા પેદા કરેલ ધનને संदध्युः-ધારણ કરે. (૫૮)

ભાવાર્થ : તે જ ઉત્તમ વિદ્યાવાન છે, જે મનુષ્યોના રોગોનો નાશ કરીને શરીર અને આત્માનાં બળની વૃદ્ધિ કરે છે.

તે જ પતિવ્રતા સ્ત્રી છે, જે પતિનાં સુખ માટે ધન અને ઘૃત આદિ વસ્તુઓને સુરક્ષિત રાખે છે. (૫૮)

अश्विना नमुचेः सुतꣳसोमꣳशुक्रं परिस्रुता।
सरस्वती तमाभरद् बर्हिषेन्द्राय पातवे॥ ५९॥

પદાર્થ : જે परिस्रुता-સર્વ તરફથી અવ્યાહત ગતિયુક્ત अश्विना-શુભ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવમાં વ્યાપક, सरस्वती-પ્રશંસિત સ્ત્રી તથા પુરુષ बर्हिषा-સુખવર્ધક કર્મથી इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યના સુખના માટે અને नमुचेः-ન મટનાર અસાધ્ય રોગના નિવારણ માટે शुक्रम्-વીર્ય વર્ધક, सुतम्-ઉત્તમ રીતે સિદ્ધ કરેલ सोमम्-સોમ આદિ ઔષધિઓના સમૂહની पातवे-રક્ષા માટે तम्-તે રસને आभरत्-સર્વત્રથી ધારણ કરે છે; તે જ સદા સુખી રહે છે. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે અંગ અને ઉપાંગો સહિત વેદોને ભણીને, હસ્ત-ક્રિયાને જાણે છે, તે અસાધ્ય રોગો નિવારણ કરી શકે છે. (૫૯)

कवष्यो न व्यचस्वतीरश्विभ्यां न दुरो दिशः।
इन्द्रो न रोदसीऽउभे दुहे कामान्त्सरस्वती॥ ६०॥

પદાર્થ : सरस्वती-અતિ શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનવતી હું इन्द्रः-વિદ્યુત્ अश्विभ्याम्-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા દ્વારા व्यचस्वतीः-વ્યાપ્તિવાળી कवष्यः-અત્યંત પ્રશંસિત दिशः-દિશાઓની न-સમાન; दुरः-દ્વારોની न-સમાન उभे-બન્ને रोदसी-પ્રકાશ અને પૃથિવીની न-સમાન, कामान्-ઈચ્છાઓને दुहे-પૂર્ણ કરું છું. (૬૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઈન્દ્ર = પરમેશ્વર સૂર્ય અને ચન્દ્રમા દ્વારા દિશાઓ અને દ્વારોના અંધકારનો નાશ કરે છે. અથવા જેમ ભૂમિ અને પ્રકાશને ધારણ કરે છે. તેમ વિદુષી સ્ત્રી પુરુષાર્થથી ઈચ્છાઓને પૂર્ણ કરે. (૬૦)

उषासानक्तमश्विना दिवेन्द्रꣳसायमिन्द्रियैः।
संजानाने सुपेशसा समञ्जाते सरस्वत्या॥ ६१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ सुपेशसा-સુંદર રૂપવાળા अश्विना-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સમાન બે વિદ્વાનો सरस्वत्या-પ્રશસ્ત સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીથી उषासा-પ્રભાત नक्तम्-રાત્રિ सायम्-સંધ્યાકાલ અને दिवा-દિવસે इन्द्रियैः-જીવના લક્ષણો ઈન્દ્રિયોથી इन्द्रम्-વિદ્યુત્‌ને संजानाने-સારી રીતે પ્રકટ કરતાં समञ्जाते-પ્રસિદ્ધ કરે છે; તેમ તમે પણ પ્રસિદ્ધ કરો.

ભાવાર્થ : જેમ ઉષા રાત્રિને અને સાયંકાલ દિવસને નિવૃત્ત કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ અવિદ્યા અને કુશિક્ષાનું નિવારણ કરીને સર્વને વિદ્યા તથા સુશિક્ષાથી યુક્ત કરવા જોઈએ. (૬૧)

पातं नोऽश्विना दिवा पाहि नक्तꣳसरस्वति।
दैव्या होतारा भिषजा पातमिन्द्रꣳसचासुते॥ ६२॥

પદાર્થ : હે दैव्या-દિવ્યગુણોથી સંપન્ન अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો ! તમે બન્ને-दिवा-દિવસે नक्तम्-રાત્રિએ नः-અમારી पातम्-રક્ષા કરો.

હે सरस्वती-અનેક વિદ્યાથી યુક્ત માતા ! તું नः-અમારી पाहि-રક્ષા કર.

હે होतारा-સર્વના સુખદાતા सचा-મળીને કાર્ય કરનારા भिषजा-બે વૈદ્યો તમે-सुते-ઉત્પન્ન થયેલા આ જગતમાં इन्द्रम्-ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનારી સોમલતાના રસની पातम्-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય રોગ નિવારક ઔષધ જાણે છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો તથા માતા-પિતા અવિદ્યા નિવારક ઉપાયોને જાણે. (૬૨)

तिस्रस्त्रेधा सरस्वत्यश्विना भारतीडा।
तीव्रं परिस्रुता सोममिन्द्राय सुषुवुर्मदम्॥ ६३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ सरस्वती-સુશિક્ષિત વાણી, भारती-ધારણ કરનારી માતા, इडा-સ્તુતિને યોગ્ય ઉપદેશિકા तिस्रः-એ ત્રણેય; અને अश्विनौ-બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો इन्द्राय-ઐશ્વર્યના માટે परिस्रुता-સર્વત્રથી સ્રવનારા યંત્રથી तीव्रम्-તીવ્રગુણ અને સ્વભાવવાળા, मदम्-હર્ષકારક सोमम्-ઔષધિઓનો રસ વા પ્રેરણા નામક વ્યવહારને त्रेधा-ત્રણ પ્રકારથી सुषुवुः-ઉત્પન્ન કરે, તેમ તમે પણ સારી રીતે ઉત્પન્ન કરો. (૬૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, સોમ આદિ ઔષધિઓનો રસ નિર્માણ કરીને, તેનું પાન કરીને તથા સ્વાસ્થ્ય બનાવીને વાણી, બુદ્ધિ અને વક્તૃત્વ-શક્તિની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૬૩)

अश्विना भेषजं मधु भेषजं नः सरस्वती।
इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियꣳरूपꣳरूपमधुः सुते॥ ६४॥

પદાર્થ : नः-અમારા માટે अश्विना-વિદ્યાના શિક્ષક-અધ્યાપક અને ઉપદેશક, सरस्वती-વિદુષી શિક્ષિત માતા અને त्वष्टा-બુદ્ધિને સૂક્ષ્મ કરનાર વિદ્વાનો सुते-ઉત્પન્ન થયેલા इन्द्रे-પરમ ઐશ્વર્યમાં भेषजम्-સામાન્ય અને मधु-भेषजम्-મધુરાદિ ગુણયુક્ત ઔષધને यशः-કીર્તિ, श्रियम्-લક્ષ્મી અને रूपंरूपम्-પ્રત્યેક રૂપને अधुः-ધારણ કરે. (૬૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે મનુષ્ય ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે એ ઉત્તમ ઔષધિઓ, યશ અને સુશોભાને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૬૪)

ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः शशमानः परिस्रुता।
कीलालमश्विभ्यां मधु दुहे धेनुः सरस्वती॥ ६५॥

પદાર્થ : જેમ धेनुः-દૂધ આપનારી ગાયની સમાન सरस्वती-પ્રશસ્ત શિક્ષાથી યુક્ત વાણી परिस्रुता-સર્વત્રથી ઝરાવનારી જલાદિ પદાર્થોની સાથે ऋतुथा-ઋતુ અનુસાર शशमानः-વૃદ્ધિ પામતા इन्द्रः-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર वनस्पतिः-વડ આદિ વૃક્ષ मधु-મધુર આદિ રસ તથા कीलालम्-અન્નને अश्विभ्याम्-

વૈદ્યો દ્વારા કામનાઓને પૂર્ણ કરે છે, તેમ હું दुहे-કામનાઓને પૂર્ણ કરું. (૬૫)

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્યજન શુદ્ધ વનસ્પતિઓથી સારને ગ્રહણ કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે, તેમ સર્વેએ પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૬૫)

गोभिर्न सोमंमश्विना मासरेण परिस्रुता।
समधातꣳसरस्वत्या स्वाहेन्द्रे सुतं मधु॥ ६६॥

પદાર્થ : હે अश्विना-સુશિક્ષિત વૈદ્યો ! તમે બન્ને परिस्रुता-સર્વત્રથી મધુર આદિ રસોથી યુક્ત मासरेण-પરિમિત માંડથી, सरस्वत्या-સુશિક્ષા અને જ્ઞાનથી યુક્ત વાણીથી स्वाहा-સત્ય ક્રિયાઓથી इन्द्रे-પરમ ઐશ્વર્ય હોવાથી गोभिः-ગાયોથી દોહેલા દૂધ આદિની न-સમાન सुतम्-તૈયાર કરેલ मधु-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત सोमम्-ઔષધિઓના રસને તમે समधातम्-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરો. (૬૬)

ભાવાર્થ : વૈદ્યરાજોએ, શ્રેષ્ઠ હસ્તક્રિયાથી સમસ્ત ઔષધિઓના રસનો સંગ્રહ કરવો જોઈએ. (૬૬)

अश्विना हविरिन्द्रियं नमुचेर्धिया सरस्वती।
आ शुक्रमासुराद्वसु मघमिन्द्राय जभ्रिरे॥ ६७॥

પદાર્થ : अश्विना-ઉત્તમ વૈદ્ય અને सरस्वती-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી धिया-બુદ્ધિથી नमुचेः-નાશરહિત કારણથી ઉત્પન્ન થયેલ કાર્યથી અર્થાત્ પ્રકૃતિથી ઉત્પન્ન કાર્યથી हविः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય इन्द्रियम्-મન આદિને, आसुरात्-મેઘથી शुक्रम्-પરાક્રમ અને मघम्-પૂજ્ય वसु-ધનને इन्द्राय-ઐશ્વર્યને માટે आ + जभ्रिरे-ધારણ કરે. (૬૭)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષોએ ઐશ્વર્યથી સુખની પ્રાપ્તિ માટે ઔષધોનું સેવન કરવું જોઈએ. (૬૭)

यमश्विना सरस्वती हविषेन्द्रमवर्द्धयन्।
स बिभेद बलं मघं नमुचावासुरे सचा॥ ६८॥

પદાર્થ : सचा-સંયુક્ત अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા सरस्वती-વિદુષી સ્ત્રી नमुचौ-અવિનાશી કારણથી ઉત્પન્ન, आसुरे-મેઘમાં વિદ્યમાન જલમાં हविषा-સુગંધિત હોમ સામગ્રીથી, यम्-જે इन्द्रम्-ઐશ્વર્યની अवर्द्धयन्-વૃદ્ધિ કરે, सः-તે मघम्-પરમ પૂજ્ય बलम्-બળનું बिभेद-ભેદન કરે. (૬૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ઔષધિઓના રસને યજ્ઞ આદિ ક્રિયાજન્ય ગુણોથી ઉત્તમ બનાવે, તો તે રસ રોગનાશક બને છે. (૬૮)

तमिन्द्रं पशवः सचाश्विनोभा सरस्वती।
दधानाऽअभ्यनूषत हविषा यज्ञऽइन्द्रियैः॥ ६९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે सचा-વિદ્યાથી સંયુક્ત अश्विना-વૈદ્યક વિદ્યામાં નિપુણ અધ્યાપક અને

ઉપદેશક उभा-બન્ને इन्द्रियैः-ધનોથી જે इन्द्रम्-બળ આદિ ગુણોને ધારણ કરનાર સોમને ધારણ કરે, तम्-તેને सरस्वती-સત્ય વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિદુષી ધારણ કરે અને જેને पशवः-ગાય આદિ પશુઓ ધારણ કરે, તે સોમને हविषा-ઉત્તમ સામગ્રીથી दधानाः-ધારણ કરતાં यज्ञे-યજ્ઞમાં अभ्यनूषत-સર્વત્રથી પ્રશંસા કરો. (૬૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ધર્માચરણ પૂર્વક ધનથી ધનની વૃદ્ધિ કરે છે, તે પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬૯)

यऽइन्द्रऽइन्द्रियं दधुः सविता वरुणो भर्गः।
स सुत्रामा हविष्पतिर्यजमानाय सश्चत॥ ७०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यः-જે લોકો इन्द्रे-ઐશ્વર્યમાં इन्द्रियम्-ધનને दधुः-ધારણ કરે છે, તે સુખી થાય છે, એથી જે भगः-સેવા કરવા યોગ્ય, वरुणः-શ્રેષ્ઠ, सविता-ઐશ્વર્યના ઇચ્છુક, सुत्रामा-સારી રીતે રક્ષક, हविष्पतिः-હોમના પાલક પુરોહિત, यजमानाय-યજમાનના માટે ધનની सश्चत-સેવા કરે છે, सः-તે પ્રતિષ્ઠાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭૦)

ભાવાર્થ : જેમ પુરોહિત યજમાનનાં ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ યજમાન પણ પુરોહિતનાં ધનની વૃદ્ધિ કરે. (૭૦)

सविता वरुणो दधद्यजमानाय दाशुषे।
आदत्त नमुचेर्वसु सुत्रामा बलमिन्द्रियम्॥ ७१॥

પદાર્થ : वरुणः-ઉત્તમ, सविता-પ્રેરક, सुत्रामा-શ્રેષ્ઠ રક્ષકજન, दाशुषे-દાતા, यजमानाय-યજમાનના માટે वसु-દ્રવ્યને दधत्-ધારણ કરતાં नमुचेः-ધર્મને ન છોડનાર ધાર્મિક મનુષ્યના बलम्-બળ અને इन्द्रियम्-સુશિક્ષિત મનને आ + अदत्त-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરે. (૭૧)

ભાવાર્થ : જે દાતા પુરુષની સારી રીતે સેવા કરીને, તેનાથી પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને, સર્વના બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તે બળવાન બને છે. (૭૧)

वरुणः क्षत्रमिन्द्रियं भगेन सविता श्रियम्।
सुत्रामा यशसा बलं दधाना यज्ञमाशत॥ ७२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वरुणः-ઉત્તમ પુરુષ, सविता-ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક, सुत्रामा-સારી રીતે રક્ષા કરનાર તથા અતિ પુરુષાર્થી સભાપતિ भगेन-ઐશ્વર્યની સાથે રહેલાં क्षत्रम्-રાજ્ય, इन्द्रियम्-મન આદિ श्रियम्-રાજ્ય લક્ષ્મી અને यज्ञम्-યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यशसा-કીર્તિથી बलम्-બળને दधानाः-ધારણ કરતાં તમે आशत-રાજ્ય આદિને પ્રાપ્ત કરો. (૭૨)

ભાવાર્થ : ઐશ્વર્ય વિના રાજ્ય, રાજ્ય વિના રાજ્યલક્ષ્મી, લક્ષ્મી વિના ઉપભોગ પ્રાપ્ત થતો નથી. તેથી નિત્ય પુરુષાર્થ કરવો જોઈએ. (૭૨)

अश्विना गोभिरिन्द्रियमश्वेभिर्वीर्यं बलम्।
हविषेन्द्रꣳसरस्वती यजमानमवर्द्धयन्॥ ७३॥

પદાર્થ : अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા सरस्वती-સુશિક્ષિત વિદુષી સ્ત્રી गोभिः-સુશિક્ષિત વાણી વા પૃથિવી અને ગાયોથી, अश्वेभिः-સુશિક્ષિત ઘોડાઓથી અને हविषा-સ્વીકૃત પુરુષાર્થથી इन्द्रियम्-ધન, वीर्यम्-પરાક્રમ, बलम्-બળ, इन्द्रम्-ઐશ્વર્યથી યુક્ત यजमानम्-સત્યાચરણરૂપ યજ્ઞ કરનાર अवर्द्धयन्-ઉન્નતિ પામે. (૭૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો જેની સમીપ રહે તેને યોગ્ય છે કે, તેઓ તેને શુભ ગુણ, કર્મોથી અને ઐશ્વર્ય આદિથી ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરાવે. (૭૩)

ता नासत्या सुपेशसा हिरण्यवर्त्तनी नरा।
सरस्वती हविष्मतीन्द्र कर्मसु नोऽवत॥ ७४॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-ઐશ્વર્યથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! ता-તે બન્ને नास्त्या-અસત્ય આચરણથી રહિત, सुपेशसा-સુંદર રૂપ યુક્ત, हिरण्यवर्त्तनी-સુવર્ણનો વર્તાવ કરનારી, नरा-સર્વ ગુણોના નેતા અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા हविष्मती-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પ્રશસ્ત પદાર્થોવાળી सरस्वती-વિજ્ઞાનવતી વિદુષી સ્ત્રી અને આપ कर्मसु-શુભ કર્મોમાં नः-અમારી अवत-રક્ષા કરો. (૭૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અધ્યાપન અને ઉપદેશોથી સર્વ મનુષ્યોને દુષ્ટ કર્મોથી નિવૃત્ત કરીને તથા શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં પ્રવૃત્ત કરીને રક્ષા કરે છે, તેમ તે સર્વ વિદ્વાનોની રક્ષા કરવી જોઈએ. (૭૪)

ता भिषजा सुकर्मणा सा सुदुघा सरस्वती।
स वृत्रहा शतक्रतुरिन्द्राय दधुरिन्द्रियम्॥ ७५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ तौ-તે બન્ને भिषजा-શરીર અને આત્માના રોગોનું નિવારણ કરનારા વૈદ્ય તથા અધ્યાપક-ઉપદેશક લોકો सुकर्मणा-ઉત્તમ ધર્મયુક્ત આચરણથી सुदुघा-કામનાઓને સારી રીતે પૂરણ કરનારી सरस्वती-પૂર્ણ વિદ્યાથી યુક્ત વિદુષી-સ્ત્રી અને सः-તે वृत्रहा-મેઘનો નાશ કરનાર સૂર્યની સમાન शतक्रतुः-અત્યંત બુદ્ધિમાન વિદ્વાન એ સર્વ इन्द्राय-ઐશ્વર્યને માટે इन्द्रियम्-ધનને दधुः-ધારણ કરે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૭૫)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં જેમ વિદ્વાન લોકો શ્રેષ્ઠ-આચરણ-શીલ મનુષ્યની સમાન વિદ્યા અને ધનની સમ્યક્ વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યો કરે. (૭૫)

युवꣳसुराममश्विना नमुचावासुरे सचा।
विपिपानाः सरस्वतीन्द्रं कर्मस्वावत॥ ७६॥

પદાર્થ : હે अश्विना-પાલન આદિ કર્મ કરનારા અધ્યાપક અને ઉપદેશક ! सचा-સંયુક્ત युवम्-તમે બન્ને તથા હે सरस्वति-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત પ્રજા ! તું જેમ नमुचौ-પ્રવાહથી નિત્ય સ્વરૂપ आसुरे-મેઘમાં અને कर्मसु-કર્મોમાં વિદ્યમાન सुरामम्-અતિ સુંદર इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યનું आवत्-પાલન/રક્ષા કરો; તેમ विपिपानाः-વિવિધ રક્ષા કરનારા અન્ય પુરુષો પણ આચરણ કરે. (૭૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પુરુષાર્થથી મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, ધનને સુરક્ષિત કરીને આનંદ ભોગવે છે, તેઓ નિરંતર ઉન્નતિ કરે છે. (૭૬)

पुत्रमिव पितरावश्विनोभेन्द्रावथुः काव्यैर्दꣳसनाभिः ।
यत्सुरामं व्यपिबः शचीभिः सरस्वती त्वा मघवन्नभिष्णक् ॥ ७७ ॥

પદાર્થ : હે मघवन्-ઉત્તમ ધન, इन्द्र-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! તું शचीभिः-બુદ્ધિથી यत्-જે सुरामम्-અતિ રમણીય મહૌષધિના રસનું व्यपिबः-પાન કરે છે, તેથી सरस्वती-સુશિક્ષિત વિદુષી સ્ત્રી त्वा-તારી अभिष्णक्-સેવા કરે.

उभा-બન્ને अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક काव्यैः-કવિઓએ કરેલા दंसनाभिः-કર્મોથી જેમ पितरौ-માતા-પિતા पुत्रमिव-પુત્રનું પાલન કરે છે, તેમ તારી आवथुः-રક્ષા કરે. (૭૭)

ભાવાર્થ : જેમ માતા-પિતા પોતાના સંતાનોની રક્ષા કરીને તેની નિત્ય ઉન્નતિ કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશકોએ શિષ્યોની સુરક્ષા કરીને તેઓની વિદ્યા દ્વારા ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૭૭)

यस्मिन्नश्वास ऽऋषभास ऽउक्षणो वशा मेषा ऽअवसृष्टास ऽआहुताः ।
कीलालपे सोमपृष्ठाय वेधसे हृदा मतिं जनय चारुमग्नये ॥ ७८ ॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! अश्वासः-ઘોડાઓ, ऋषभासः-ઉત્તમ બળદો, उक्षणः-વીર્યનું સિંચન કરનાર સાંઢ. वशाः-વંધ્યા ગાયો, मेषाः-ઘેટાં, એ अवसृष्टासः-સુશિક્ષિત અને आहुताः-સર્વત્રથી ગ્રહણ કરેલ यस्मिन्-જે વ્યવહારમાં કામ કરનાર હોય તેમાં તું हृदाः-અન્તઃકરણથી सोमपृष्ठाय-સોમ વિદ્યાને પૂછનારા, कीलालपे-ઉત્તમ અન્નના રસનું પાન કરનાર वेधसे-બુદ્ધિમાન अग्नये-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશમાન મનુષ્યનાં માટે चारुम्-અતિ શ્રેષ્ઠ मतिम्-બુદ્ધિને जनय-પ્રકટ કર. (૭૮)

ભાવાર્થ : પશુઓ પણ સુશિક્ષા-કેળવવાથી ઉત્તમ કાર્ય કરે છે, તો પછી શું વિદ્યા અને શિક્ષાથી યુક્ત મનુષ્ય ઉત્તમ કાર્યોને સિદ્ધ ન કરી શકે ? (૭૮)

अहाव्यग्ने हविरास्ये ते स्रुचीव घृतं चम्वीव सोमः ।
वाजसनिꣳरयिमस्मे सुवीरं प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम् ॥ ७९ ॥

પદાર્થ : હે अग्ने-ઉત્તમ વિદ્યાવાન પુરુષ ! જે તે सोमः-ઐશ્વર્યયુક્ત हविः-હોમ યોગ્ય પદાર્થો ते-તારા आस्ये-મુખમાં ઘૃતમ્, स्रुचीव-જેમ ઘૃત સ્રુવાના મુખમાં અને चम्वीव-યજ્ઞપાત્રમાં હોમ યોગ્ય

વસ્તુની સમાન अहावि-ગ્રહણ કરે છે, તે તું अस्मे-અમારામાં प्रशस्तम्-અતિ ઉત્તમ, सुवीरम्-શ્રેષ્ઠ વીરોને ઉપયોગી, वाजसनिम्-અન્ન વિજ્ઞાન આદિના ગુણોના વિભાગ, यशसम्-કીર્તિ કરનારી बृहन्तम्-મહાન रयिम्-રાજ્યલક્ષ્મી ને धेहि-ધારણ-સ્થાપિત કર. (૭૯)

ભાવાર્થ : ગૃહસ્થ લોકોએ તેનો જ ભોજન આદિથી સત્કાર કરવો જોઈએ કે, જે અધ્યાપન, ઉપદેશ અને શ્રેષ્ઠ કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરીને જગતમાં બળ, વીર્ય, કીર્તિ, ધન અને વિજ્ઞાનની ઉન્નતિ કરે. (૭૯)

अ॒श्विना॒ तेज॑सा॒ चक्षुः॑ प्रा॒णेन॒ सर॑स्वती वी॒र्य॒म्।
वा॒चेन्द्रो॒ बले॒नेन्द्रा॑य दधुरिन्द्रि॒यम्॥ ८०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ सरस्वती-વિદ્યાવતી સ્ત્રી, अश्विना-અધ્યાપક, ઉપદેશક અને इन्द्रः-સભાપતિ એ સર્વે इन्द्राय-જીવને માટે प्राणेन-પ્રાણથી वीर्यम्-પરાક્રમને, तेजसा-પ્રકાશથી चक्षुः-નેત્રને, वाचा-વાણીથી અને बलेन-બળથી इन्द्रियम्-ઈન્દ્રિયોને दधुः-ધારણ કરે છે, તેમ આપ ધારણ કરો. (૮૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જેમ-જેમ વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ-તેમ વિજ્ઞાનમાં રુચિ રાખવાવાળા બને છે. (૮૦)

गोम॑दू॒ षु णा॑स॒त्याश्वा॑वद्यातमश्विना। व॒र्त्ती रु॑द्रा नृ॒पाय्य॑म्॥ ८१॥

પદાર્થ : હે नासत्या-સત્ય વ્યવહારથી યુક્ત रुद्रा-દુષ્ટોને રડાવનાર अश्विना-વિદ્યાવૃદ્ધ અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ તમે બન્ને गोमत्-ગાયોનાં वर्तिः-માર્ગ उ-અને अश्वावत्-પ્રશસ્ત ઘોડાઓનાં नृपाय्यम्-નર પરિણામને सुयातम्-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો છો, તેમ અમે પણ પ્રાપ્ત કરીએ. (૮૧)

ભાવાર્થ : ગાય, ઘોડા, અને હાથી આદિ પાળેલા પશુઓથી મનુષ્ય પોતાનું અને અન્યોનું પાલન કરે. (૮૧)

न यत्परो॒ नान्त॑रऽआद॒धर्ष॑द् वृषण्वसू। दु॒:शꣳसो॒ मर्त्यो॑ रि॒पुः॥ ८२॥

પદાર્થ : હે वृषण्वसू-શ્રેષ્ઠોને વાસ કરાવનાર સભાપતિ અને સેનાપતિ ! તમે બન્ને यत्-જેથી दुःशंसः-દુઃખથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય परः-અન્ય मर्त्यः-મનુષ્ય रिपुः-શત્રુ न-ન હોય અને न-ન अन्तरः-મધ્યસ્થ હોય, જે અમને आदधर्षत्-સર્વત્રથી ધર્ષિત કરે, તેને પ્રયત્નથી વશમાં કરો. (૮૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ જે અતિ બળવાન અને અત્યંત દુષ્ટ શત્રુ હોય તેને પ્રયત્નથી જીતવા જોઈએ અને પોતાના વશમાં કરવા જોઈએ. (૮૨)

ता न॒ऽआ वो॑ढमश्विना र॒यिं पि॒शङ्ग॑सन्दृशम्। धिष्ण्या॑ वरिवो॒विद॑म्॥ ८३॥

પદાર્થ : હે अश्विना-સભાપતિ અને સેનાપતિ ! धिष्ण्या-બુદ્ધિથી तौ-તે તમે બન્ને नः-અમને वरिवोविदम्-સેવા પ્રાપ્તિના હેતુ पिशङ्गसंदृशम्-જે સુવર્ણ સમાન જોવામાં આવે છે તે रयिम्-ધનને आवोढम्-સર્વ બાજુથી પ્રાપ્ત કરો. (૮૩)

ભાવાર્થ : સભાપતિ અને સેનાપતિએ રાજ્ય સુખને માટે ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ, જેથી સત્ય

ધર્મનાં આચરણની વૃદ્ધિ થાય. (૮૩)

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टु धियावसुः॥ ८४॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ वाजेभिः-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોથી वाजिनीवती-પ્રશસ્ત વિદ્યાથી યુક્ત, पावका-પવિત્ર કરનારી धियावसुः-બુદ્ધિ સાથે જેથી ધન હોય તે सरस्वती-ઉત્તમ સંસ્કાર યુક્ત વાણી नः-અમારા यज्ञम्-યજ્ઞને वष्टु-સુશોભિત કરે છે, તેમ તમે બન્ને અમને શિક્ષા કરો. (૮૪)

ભાવાર્થ : માણસ—ધાર્મિક અધ્યાપક અને ઉપદેશકોથી વિદ્યા અને સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરીને નિત્ય વિજ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરે. (૮૪)

चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्। यज्ञं दधे सरस्वती॥ ८५॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ सूनृतानाम्-સુશિક્ષિત વાણીઓનો चोदयित्री-ઉપદેશ કરનારી, [અર્થાત્ પ્રેરણા કરનારી], सुमतीनाम्-શુભ બુદ્ધિઓને चेतन्ती-સારી રીતે બતાવનારી सरस्वती-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત હું વિદુષી यज्ञम्-યજ્ઞને दधे-ધારણ કરું છું, તેમ તેનું તમે પણ અનુષ્ઠાન કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રીઓની વચ્ચે વિદુષી સ્ત્રી હોય, તે સર્વ સ્ત્રીઓને સદા ઉત્તમ શિક્ષા આપે, જેથી સ્ત્રીઓમાં વિદ્યાની વૃદ્ધિ થાય. (૮૫)

महोऽअर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना। धियो विश्वा विराजति॥ ८६॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ सरस्वती-વાણી केतुना-ઉત્તમ જ્ઞાનથી महः-મહાન अर्णः-અન્તરિક્ષમાં શબ્દરૂપ સમુદ્રને प्रचेतयति-ઉત્તમ રીતે પ્રકટ કરે છે, विश्वाः-સર્વ धियः-બુદ્ધિઓને विराजति-પ્રકાશિત કરે છે, તેમ વિદ્યાઓમાં તમે પ્રવૃત્ત રહો. (૮૬)

ભાવાર્થ : કન્યાઓએ બ્રહ્મચર્યથી પૂર્ણ વિદ્યા અને સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરીને બુદ્ધિઓની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૮૬)

इन्द्रायाहि चित्रभानो सुताऽइमे त्वायवः। अण्वीभिस्तना पूतासः॥ ८७॥

પદાર્થ : હે चित्रभानो-વિચિત્ર વિદ્યા પ્રકાશવાળા इन्द्र-સભાપતિ ! આપ જે इमे-એ अण्वीभिः-આંગળીઓથી सुताः-તૈયાર કરેલા, तना-વિસ્તૃત ગુણથી पूतासः-પવિત્ર, त्वायवः-તને મળનારા પદાર્થો છે; તેને आयाहि-પ્રાપ્ત કર; તેનું સેવન કર. (૮૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શ્રેષ્ઠ ક્રિયાથી પદાર્થોને શુદ્ધ કરીને ભોજન કરવું જોઈએ. (૮૭)

इन्द्रायाहि धियेषितो विप्रजूतः सुतावतः। उप ब्रह्माणि वाघतः॥ ८८॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યથી સંપન્ન ! इषितः-પ્રેરણાથી યુક્ત, विप्रजूतः-બુદ્ધિમાનોથી શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને વેગયુક્ત, वाघतः-સુશિક્ષિત વાણીથી જાણનાર તું धिया-સમ્યક્ બુદ્ધિથી सुतावतः-સિદ્ધ કરેલાં ब्रह्माणि-અન્ન અને ધનોને उप-आ-याहि-સર્વ પ્રકારથી સમીપ ગ્રહણ કર. (૮૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્ય જિજ્ઞાસુ લોકોનો સંગ કરીને-મળીને તેમાં વિદ્યાના કોષ-નિધિને સ્થાપિત

કરે. (૮૮)

इन्द्रायाहि तूतुजानऽउप ब्रह्माणि हरिवः। सुते दधिष्व नश्चनः॥ ८९॥

પદાર્થ : હે हरिवः-પ્રશસ્ત ઘોડાઓવાળા इन्द्र-વિદ્યા અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર વિદ્વાન્ ! આપ उपायाहि-અમારા નજીક આવો, तूतुजानः-શીઘ્ર કાર્યકારી બનીને नः-અમારા માટે सुते-ઉત્પન્ન થયેલાં વ્યવહારમાં ब्रह्माणि-ધર્મયુક્ત કર્મથી પ્રાપ્ત ધનને અને चनः-ભોગ્ય અન્નને दधिष्व-ધારણ કર. (૮૯)

ભાવાર્થ : વિદ્યા અને ધર્મની વૃદ્ધિને માટે કોઈએ પણ આળસ ન કરવી જોઈએ. (૮૯)

अश्विना पिबतां मधु सरस्वत्या सजोषसा।
इन्द्रः सुत्रामा वृत्रहा जुषन्ताꣳसोम्यं मधु॥ ९०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ सजोषसा-સમાન સેવન કરનારા अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક सरस्वत्या-અતિ શુદ્ધ વાણીથી मधु-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત વિજ્ઞાનનું पिबताम्-પાન કરે.

જેમ इन्द्रः-ઐશ્વર્યવાન सुत्रामा-શ્રેષ્ઠ રક્ષક રાજા અને वृत्रहा-મેઘનાશક સૂર્ય સમાન વર્તાવવાળા વિદ્વાન્ सोम्यम्-સોમલતા આદિ ઔષધિગણમાં ઉત્પન્ન मधु-મધુરાદિ ગુણયુક્ત અન્નનું जुषन्ताम्-સેવન કરે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૯૦)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશકોએ પોતાના આત્મા સમાન સર્વની વિદ્યા અને સુખની વૃદ્ધિની ઈચ્છા કરે, જેથી સર્વ સુખી બને. (૯૦)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં-રાજા અને પ્રજાનો ધર્મ (૧-૪). અંગ અને અંગી (૫-૧૧), ગૃહાશ્રમનો વ્યવહાર (૨૨), બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય (૨૫), સત્યવ્રત (૨૪), દેવ-ગુણ (૧૧, ૧૨), પ્રજારક્ષક (૫૦-૫૨), અભય (૫૧), પરસ્પર સંમતિ (૫૨) સ્ત્રીના ગુણ (૮૫), ધન આદિની વૃદ્ધિ (૮૯) ના વર્ણનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति विंशोऽध्यायः ॥



॥ अथैकविंशतितमोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युरा चके॥ १॥

પદાર્થ : હે वरुण-ઉત્તમ વિદ્વાન્ ! જે अवस्युः-પોતાની રક્ષાનો ઈચ્છુક હું इमम्-એ त्वाम्-તને आ, चके-ચાહું છું, તે તું मे-મારી हवम्-સ્તુતિને श्रुधि-સાંભળ, च-અને अद्य-આજે મને मृडय-સુખી કર. (૧)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્યાઓની ઈચ્છા કરનારાઓએ ચારેય વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન્‌ની કામના કરવી જોઈએ. તે વિદ્યાર્થીઓના સ્વાધ્યાયને સાંભળીને, સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, સર્વને આનંદિત કરે. (૧)

तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः।

अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳस मा न ऽ आयुः प्र मोषीः॥ २॥

પદાર્થ : હે वरुण-અતિ ઉત્તમ વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેમ यजमानः-યજમાન हविर्भिः-આપવા યોગ્ય પદાર્થોથી तद्-તને आ + शास्ते-ચાહે છે, તેમ ब्रह्मणा-વેદવિજ્ઞાનથી वन्दमानः-સ્તુતિ કરતાં હું तत्-ઉક્ત ગુણોથી યુક્ત त्वा-તને यामि-પ્રાપ્ત કરું છું.

હે उरुशंस-અનેક લોકોથી પ્રશંસિત વિદ્વાન્ ! મારાથી अहेडमानः-સંસ્કારને પામી તું इह-આ સંસારમાં नः-અમારા आयुः-જીવન વા વિજ્ઞાનને मा, प्रमोषीः-ચોરીશ નહિ, અને શાસ્ત્રનો बोधि-બોધ આપ્યા કર. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય જેના દ્વારા વિદ્યા પ્રાપ્ત કરે, તે તેને પ્રથમ પ્રણામ કરે.

જે જેનો અધ્યાપક હોય, તે તેને વિદ્યા આપવામાં કપટ ન કરે. કોઈએ કદી પણ આચાર્યનું અપમાન ન કરવું જોઈએ. (૨)

त्वं नो ऽ अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो ऽ अव यासिसीष्ठाः।

यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्॥ ३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશમાન, यजिष्ठः-અત્યંત યજ્ઞ કરનાર, वह्नितमः-અત્યંત સુખને પ્રાપ્ત કરનાર, शोशुचानः-શુદ્ધ કરનાર विद्वान्-વિદ્વાન્ ! त्वम्-તું वरुणस्य-શ્રેષ્ઠ देवस्य-વિદ્વાનોનો हेडः-અનાદર अव-यासिसीष्ठाः-કર નહિ.

હે તેજસ્વી ! તું જે नः-અમારો અનાદર થાય તેનો સ્વીકાર ન કર.

હે શિક્ષક ! તું अस्मत्-અમને विश्वा-સર્વ द्वेषांसि-દ્વેષ આદિથી યુક્ત કર્મોથી प्रमुमुग्धि-મુક્ત

કર. (૩)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ મનુષ્ય વિદ્વાનોનો અનાદર (અપમાન) ન કરે, કોઈ પણ વિદ્વાન્ વિદ્યાર્થીઓનો તિરસ્કાર ન કરે.

સર્વે મળીને, ઈર્ષા, ક્રોધ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને સર્વના મિત્ર બને. (૩)

स त्वं नौ ऽ अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो ऽ अस्याउषसो व्युष्टौ।
अव यक्ष्व नो वरुणः रराणो वीहि मृडीकः सुहवो न ऽ एधि॥ ४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિની સમાન વિદ્વાન્ ! જેમ अस्याः-આ उषसः-પ્રભાતવેળામાં व्युष्टौ-વિવિધ પ્રકાશમાં અગ્નિ नेदिष्ठः-અત્યંત સમીપ અને રક્ષણ કરનાર છે, તેમ सः-તે त्वम्-તું ऊती-પ્રેમથી नः-અમારી अवम्-રક્ષા કરનાર भव-બન.

नः-અમને वरुणम्-ઉત્તમ ગુણ, ઉત્તમ વિદ્વાન્ અથવા ઉત્તમ ગુણીજનનો अव, यक्ष्व-સંગ કરાવ, रराणः-રમણ કરતાં તું मृडीकम्-સુખદાયક વિદ્યાદિ પદાર્થો वीहि-પ્રદાન કર. नः-અમને सुहवः-શુભ દાન આપનાર एधि-બન. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાતઃકાલમાં સૂર્ય સમીપ સ્થિત થઈને, સર્વ ઉપસ્થિત મૂર્ત પદાર્થોને વ્યાપ્ત કરે છે, તેમ શિષ્યોની સમીપ અધ્યાપક રહીને તેઓને પોતાની વિદ્યાથી વ્યાપ્ત કરે. (૪)

महीमू षु मातरः सुव्रतानामृतस्य पत्नीमवसे हुवेम।
तुविक्षत्रामजरन्तीमुरूचीᳬं सुशर्माणमदितिः सुप्रणीतिम्॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે मातरम्-માતાની સમાન, सुव्रतानाम्-ઉત્તમ સત્યાચરણરૂપ વ્રતોમાં ऋतस्य-સત્યને પ્રાપ્ત થયેલ મનુષ્યની पत्नीम्-પત્નીની સમાન, तुविक्षत्राम्-અતિ ધનવાળી, अजरन्तीम्-વૃદ્ધત્વથી રહિત, उरूचीम्-અનેક પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનારી, सुशर्माणम्-સુંદર ઘરોવાળી, सुप्रणीतिम्-ઉત્તમ નીતિઓથી યુક્ત, उ-ઉત્તમ, अदितिम्-અખંડિત महीम्-પૃથિવીની अवसे-રક્ષા માટે सुहुवेम-ગ્રહણ કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ ગ્રહણ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ માતા સંતાનોનું અને પતિવ્રતા સ્ત્રી પતિનું પાલન કરે છે, તેમ આ પૃથિવી સર્વનું રક્ષણ-પાલન કરે છે. (૫)

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसः सुशर्माणमदितिःसुप्रणीतिम्।
दैवीं नावᳬं स्वरित्रामनागसमस्त्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥ ६॥

પદાર્થ : હે શિલ્પીજનો ! જેમ અમે स्वस्तये-સુખને માટે सुत्रामाणम्-ઉત્તમ રક્ષણ આદિના સાધનોથી યુક્ત, पृथिवीम्-વિસ્તૃત, द्याम्-શુભ પ્રકાશવાળી, अनेहसम्-હિંસાથી રહિત, सुशर्माणम्-સુશોભિત ઘરોવાળી, अदितिम्-અખંડિત, सुप्रणीतिम्-અનેક રાજા અને પ્રજાજનોની અખંડિત નીતિથી યુક્ત, स्वरित्राम्-ઉત્તમ

હલેસાંવાળી, अनागसम्-દોષરહિત, अस्त्रवन्तीम्-છિદ્રરહિત, दैवीम्-વિદ્વાન પુરુષોની नावम्-પ્રેરણા કરનારી નૌકામાં, आ, स्हेम-બેસીએ છીએ, તેમ તમે પણ બેસો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય, જે નૌકામાં અનેક ઘર, અનેક સાધન, અનેક રક્ષણ, અનેક પ્રકારનો પ્રકાશ અને અનેક વિદ્વાનો હોય, તે છિદ્રરહિત વિશાળ નૌકામાં બેસીને, સમુદ્ર આદિ જલાશયોમાં આરપાર તથા અન્ય દેશો અને દ્વીપોમાં આવાગમન કરીને, ભૂગોળના દેશો અને દ્વીપોને જાણીને, શ્રીમાન્ બને. (૬)

सुनावमा रुहेयमस्त्रवन्तीमनागसम्। शतारित्राꣳ स्वस्तये॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું स्वस्तये-સુખને માટે अस्त्रवन्तीम्-છિદ્રાદિ દોષોથી અથવા अनागसम्-રચનાદિ દોષોથી રહિત, शतारित्राम्-અનેક લંગરોવાળી सुनावम्-ઉત્તમ નૌકામાં आरुहेयम्-હું બેસું છું, તેમ તમે પણ બેસો. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો વિશાળ નૌકાઓની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને, તેમાં બેસીને સમુદ્ર આદિ જલાશયોની આરપાર જાય.

જેમાં અનેક અરિત્ર = હલેસાં વગેરે હોય, તે નૌકા અત્યંત ઉત્તમ હોય છે. (૭)

आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्। मध्वा रजाꣳसि सुक्रतू॥ ८॥

પદાર્થ : હે मित्रावरुणा-પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન વર્તનાર सुक्रतू-શુભ બુદ્ધિ વા ઉત્તમ કર્મયુક્ત બે શિલ્પીજનો ! તમે घृतैः-જલોથી नः-અમારા गव्यूतिम्-બે કોશનું उक्षतम्-સિંચન કરો અને आ-मध्वा-સર્વત્રથી મધુર જલથી रजांसि-લોકો ઉર્ધ્વમાર્ગોનું उक्षतम्-સિંચન કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જો શિલ્પી લોકો યાનોને જલ આદિમાં ચલાવે, તો તેઓ ઉપર અને નીચેના માર્ગોમાં ગતિ કરી શકે છે. (૮)

प्र बाहवा सिसृतं जीवसे न ऽ आ नो गव्यूतिमुक्षतं घृतेन।
आ मा जने श्रवयतं युवाना श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा॥ ९॥

પદાર્થ : मित्रावरुणा-મિત્ર અને વરુણ ઉત્તમ જન बाहवा-બંને ભુજાઓ સમાન युवाना-સંયુક્ત અને અલગ કરનાર તમે नः અમારા जीवसे-જીવનને માટે मा-મને प्रसिसृतम् - પ્રાપ્ત થાઓ. घृतेन-જલથી नः-અમારા गव्यूतिम्-બે કોશ સુધી आ, उक्षतम्-સર્વત્રથી સિંચન કરો, અનેક પ્રકારની કીર્તિ आश्रवयतम्-સારી રીતે સંભળાવો, मे-મારા जने-મનુષ્યગણમાં इमा-આ हवा-સંવાદોને श्रुतम्-સાંભળો. (૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશક પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન સર્વના જીવનના આધાર બને. વિદ્યા અને ઉપદેશ દ્વારા સર્વના આત્માઓને, જલથી વૃક્ષોની સમાન સિંચન કરે. (૯)

शन्नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः।

जम्भयन्तोऽहिं वृकꣳ रक्षाꣳसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः॥ १०॥

પદાર્થ : હે स्वर्काः-ઉત્તમ અન્ન વા વજ્રવાળા, मितद्रवः-પરિમિત ગતિવાળા, देवताता-વિદ્વાનોની સમાન વર્તન કરનારા वाजिनः-અતિ ઉત્તમ વિજ્ઞાનથી યુક્ત, हवेषु-આદાન-પ્રદાનમાં ચતુર આપ अहिम्-જેમ સૂર્ય મેઘનું હનન કરે છે, તેમ वृकम्-ચોર અને रक्षांसि-દુષ્ટ જીવોનો जम्भयन्तः-વિનાશ કરતાં नः-અમારા માટે सनेमि-સદા-સનાતન शम्-સુખકારક भवन्तु-બનો અને अस्मत्-અમારા अमीवाः-રોગોને युयवन्-દૂર કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અંધકારને દૂર કરીને સર્વને સુખી કરે છે, તેમ વિદ્વાનો પ્રાણીઓનાં શરીર અને આત્માના સર્વ રોગો દૂર કરીને આનંદિત કરે. (૧૦)

वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः।
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः॥ ११॥

પદાર્થ : હે अमृता-આત્મા સ્વરૂપથી અવિનાશી, ऋतज्ञाः-સત્યને જાણનારા, वाजिनः-વિજ્ઞાનથી યુક્ત विप्राः-બુદ્ધિમાન જનો ! તમે वाजेवाजे-પ્રત્યેક યુદ્ધમાં અને धनेषु-ધનોમાં नः-અમારી अवत-રક્ષા કરો.

अस्य-એ मध्वः-મધુર રસનું पिबत-પાન કરો, તેથી मादयध्वम्-વિશેષ આનંદને પ્રાપ્ત કરો, તેથી तृप्ताः-તૃપ્ત થઈને देवयानैः-વિદ્વાનોના જવા યોગ્ય पथिभिः-માર્ગોથી यात-ગમન કરો.

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો વિદ્યાદાન અને ઉપદેશથી સર્વને સુખી કરે છે, તેમ રાજપુરુષ રક્ષા અને અભયદાનથી સર્વને સુખી કરે. તથા ધર્મયુક્ત માર્ગોમાં ચાલીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે. (૨૧)

समिद्धो ऽ अग्निः समिधा सुसमिद्धो वरेण्यः।
गायत्री छन्द ऽ इन्द्रियं त्र्यविर्गौर्वयो दधुः॥ १२॥

પદાર્થ : જેમ समिद्धः-સારી રીતે પ્રદીપ્ત अग्निः-અગ્નિ, समिधा-ઉત્તમ પ્રકાશથી सुसमिद्धः-અત્યંત પ્રકાશમાન સૂર્ય, वरेण्यः-અંગીકાર કરવા યોગ્ય જન અને गायत्री, छन्दः-ગાયત્રી છંદ इन्द्रियम्-મનને પ્રાપ્ત થાય છે; જેમ त्र्यविः શરીર, ઈન્દ્રિય અને આત્મા એ ત્રણેયની રક્ષા કરનાર गौः-સ્તુતિ-પ્રશંસા કરનાર જન वयः-જીવનને ધારણ કરે છે, તેમ વિદ્વાન લોકો दधुः-ધારણ કરે. (૧૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનો વિદ્યાથી સર્વના આત્માઓને પ્રકાશિત કરીને તથા સર્વને જિતેન્દ્રિય બનાવીને દીર્ઘાયુ કરે. (૧૨)

तनूनपाच्छुचिव्रतस्तनूपाश्च सरस्वती।

उष्णिहा छन्दं ऽ इन्द्रियं दित्यवाड् गौर्वयो दधुः॥ १३॥

પદાર્થ : જેમ शुचिव्रतः-પવિત્ર ધર્માચરણ કરનાર, तनूनपात्-શરીરનું પતન ન કરનાર, तनूपाः-શરીરની રક્ષા કરનાર, च-અને सरस्वती-વાણી उष्णिहा छंदः-ઉષ્ણિક્ છંદ इन्द्रियम्-જીવના ચિહ્નરૂપ ઈન્દ્રિયોને ધારણ કરે છે; વા જેમ दित्यवाट्-ખંડનીય પદાર્થને માટે હિત પ્રાપ્ત કરાવનાર, गौः-સ્તુતિ કરનાર જન वयः-ઈચ્છા-કામનાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ તે સર્વને વિદ્વાનો दधुः-ધારણ કરે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો પવિત્ર આચરણયુક્ત છે, જેની વાણી વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત છે, તેઓ પૂર્ણ જીવન ધારણ કરવાને યોગ્ય છે. (૧૩)

इडाभिरग्निरीड्यः सोमो देवो ऽ अमर्त्यः।

अनुष्टुप् छन्दं ऽ इन्द्रियं पञ्चाविर्गौर्वयो दधुः॥ १४॥

પદાર્થ : જેમ अग्निः-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશમાન, अमर्त्यः-પોતાના આત્મ સ્વરૂપથી નાશરહિત, सोमः-ઐશ્વર્યવાન, ईड्यः-સ્તુતિ અથવા અન્વેષણ કરવા યોગ્ય, देवः-દિવ્ય ગુણયુક્ત, पञ्चाविः-પાંચથી રક્ષા કરવા યોગ્ય, गौः-વિદ્યાથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય વિદ્વાન इडाभिः-પ્રશંસાઓથી अनुष्टुप छन्दः-અનુષ્ટુપ છંદ इन्द्रियम्-જ્ઞાન આદિ વ્યવહાર કરનાર મન અને वयः તૃપ્તિને ધારણ કરે છે, તેમ એ છંદ આદિને સર્વ दधुः-ધારણ કરે. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો ધર્મપૂર્વક વિદ્યા અને ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા અને ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવી શકે છે. (૧૪)

सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्त्स्तीर्णबर्हिरमर्त्यः।

बृहती छन्दं ऽ इन्द्रियं त्रिवत्सो गौर्वयो दधुः॥ १५॥

પદાર્થ : જેમ पूषण्वान्-પુષ્ટિકારક ગુણોથી યુક્ત, स्तीर्णबर्हिः-આકાશમાં વ્યાપ્ત, अमर्त्यः-પોતાના સ્વરૂપથી નાશરહિત, सुबर्हिः-આકાશને શુદ્ધ કરનાર अग्निः-અગ્નિની સમાન વિદ્વાનજન અને बृहती, छन्दः-બૃહતી છંદ इन्द्रियम्-જીવના ચિહ્નરૂપ મન આદિ ઈન્દ્રિયોને ધારણ કરે છે; અને त्रिवत्सः-દેહ, ઈન્દ્રિય અને મન એ ત્રણેય જેના વાછરડાં સમાન અનુગામી છે તે गौः-ગાયની સમાન વિદ્વાન્ वयः-તૃપ્તિને પ્રાપ્ત કરે, તેમ તેને સર્વ दधुः-ધારણ કરે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ અન્તરિક્ષમાં વિચરણ કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સૂક્ષ્મ નિરાકાર પદાર્થ વિદ્યામાં વિચરણ કરે છે.

જેમ ગાયની પાછળ વાછરડું ચાલે છે, તેમ અવિદ્વાન લોકો વિદ્વાનોની પાછળ ચાલે અને ઈન્દ્રિયોને વશમાં કરે. (૧૫)

दुरो देवीर्दिशो महीर्ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः।

पङ्क्तिश्छन्द इहेन्द्रियं तुर्य्यवाड् गौर्वयो दधुः॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ इह-અહીં देवीः-પ્રકાશમાન महीः-મહાન दुरः-દ્વાર, दिशः-દિશાઓ, ब्रह्मा-અન્તરિક્ષસ્થ પવન देवः-પ્રકાશમાન बृहस्पतिः-મહાનનો પાલક સૂર્ય, पंक्तिश्छन्दः-પંક્તિ છંદ, इन्द्रियम्-ધન, तुर्यवाट्-ચતુર્થ અવસ્થાને પ્રાપ્ત સંન્યાસી તથા गौः-દૂધારી ગાય वयः-જીવનને ધારણ કરે છે, તેમ તમે પણ જીવનને दधुः-ધારણ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : કોઈ પણ પ્રાણી આકાશમાં સ્થિત વાયુ આદિ વિના જીવિત રહી શકતો નથી. (૧૬)

उषे यह्वी सुपेशसा विश्वे देवा ऽ अमर्त्याः।
त्रिष्टुप् छन्द ऽ इहेन्द्रियं पष्ठवाड् गौर्वयो दधुः॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ इह-આ સંસારમાં सुपेशसा-સ્વરૂપવાન અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા यह्वी-મહાન उषे-અંધકારનો નાશ કરનારી પ્રભાતવેળા સમાન બે સ્ત્રીઓ, अमर्त्याः-તત્ત્વ સ્વરૂપથી નિત્ય विश्वे-સર્વ देवाः-પ્રકાશમાન પૃથિવી આદિ લોક, त्रिष्टुप छन्दः-ત્રિષ્ટુપ છંદ અને पष्ठवाड्-પીઠથી વહન કરનાર गौः-બળદ वयः-ઉત્પત્તિ અને इन्द्रियम्-ધનને ધારણ કરે છે, તેમ दधुः-તમે પણ આચરણ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ પદાર્થો પરોપકારી છે, તેમ આ લોકમાં મનુષ્યોએ પણ પરોપકારી બનવું જોઈએ. (૧૭)

दैव्या होतारा भिषजेन्द्रेण सयुजा युजा।
जगती छन्द ऽ इन्द्रियमनड्वान् गौर्वयो दधुः॥ १८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ इन्द्रेण-ઐશ્વર્યથી सयुजा-ઔષધિ આદિને સમાનરૂપથી યુક્ત કરનાર, युजा-સાવધાન ચિત્તવાળા, दैव्या-વિદ્વાનોમાં નિપુણ, होतारा-વિદ્યાદિના દાતા, भिषजा-બે ઉત્તમ વૈદ્ય, अनड्वान्-બળદ, गौः-ગાય અને जगती छन्दः-જગતી છન્દ, वयः-સુંદર इन्द्रियम्-ધનને दधुः-ધારણ કરે છે, તેમ તમે પણ ધારણ કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જેમ વૈદ્યો પોતાના તથા અન્યોના રોગોનું નિવારણ કરીને, સ્વયં તથા અન્ય લોકોને ઐશ્વર્યવાન બનાવે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૮)

तिस्त्र ऽ इडा सरस्वती भारती मरुतो विशः।
विराट् छन्द ऽ इहेन्द्रियं धेनुर्गौर्न वयो दधुः॥ १९॥

પદાર્થ : જેમ इह-આ જગતમાં इडा-પૃથિવી, सरस्वती-વાણી અને भारती-ધારણાવતી બુદ્ધિ, तिस्त्रः-એ ત્રણેય; मरुतः-વાયુ, विशः-મનુષ્ય આદિ પ્રજા, विराट्-વિવિધ પ્રકારથી પ્રકાશમાન छन्दः-બળ इन्द्रियम्-

ધન, धेनुः-દૂધારી ગાય અને गौः-બળદની न-સમાન वयः-પ્રાપ્તવ્ય વસ્તુને दधुः-ધારણ કરે છે; તેમ સર્વ મનુષ્યો તેને ધારણ કરીને વર્તાવ કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો સુશિક્ષિત વાણી, વિદ્યા, પ્રાણ અને પશુઓથી ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અન્ય લોકોએ પણ પ્રાપ્ત કરવા કરાવવા જોઈએ. (૧૯)

त्वष्टा तुरीपो ऽ अद्भुत ऽ इन्द्राग्नी पुष्टिवर्धना।
द्विपदा छन्द ऽ इन्द्रियमुक्षा गौर्न वयो दधुः॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अद्भुतः-અદ્‌ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળો, પ્રસિદ્ધ અગ્નિ तुरीपः-શીઘ્ર પહોંચનાર વિદ્યુત્, त्वष्टा-સૂક્ષ્મ કરનાર જઠરાગ્નિ, पुष्टिवर्धना-પુષ્ટિવર્ધક इन्द्राग्नि-પવન અને વડવાનલ-અગ્નિ, द्विपदा, छन्दः-બે પાદવાળા છંદ, इन्द्रियम्-શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિયો, उक्षा-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ गौः-સાંઢની સમાન वयः-જીવનને दधुः-ધારણ કરે છે; તેને જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રસિદ્ધ અગ્નિ, વિદ્યુત્, જઠરાગ્નિ, વડવાનલ એ ચાર તથા પ્રાણ, ઈન્દ્રિયો અને ગાય આદિ પશુઓ સર્વ જગતની પુષ્ટિ કરે છે; તેમ મનુષ્યોએ બ્રહ્મચર્ય આદિથી પોતાનાં તથા અન્યોનાં બળની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૨૦)

शमिता नो वनस्पतिः सविता प्रसुवन् भगम्।
ककुप् छन्द ऽ इहेन्द्रियं वशा वेहद्वयो दधुः॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે शमिता-શાન્તિદાતા, वनस्पतिः-ઔષધિઓનો રાજા અને વૃક્ષોનો પાલક सविता-સૂર્ય भगम्-ધનને प्रसुवन्-ઉત્પન્ન કરે છે; ककुप्, छन्दः-કકુપ છંદ, इन्द्रियम्-જીવના ચિહ્નરૂપ ઈન્દ્રિયો, वशा-અપ્રસુતા અને वेहत्-ગર્ભપતિની इह-આ સંસારમાં नः-અમારા वयः-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થને दधुः-ધારણ કરે છે; તેને તમે જાણીને ઉપકાર કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સર્વ રોગોની નાશક ઔષધિઓ અને ધારણ કરવા યોગ્ય વસ્ત્રોનું સેવન કરે છે, તે ચિરંજીવી બને છે. (૨૧)

स्वाहा यज्ञं वरुणः सुक्षत्रो भेषजं करत्।
अतिच्छन्दा ऽ इन्द्रियं बृहदृषभो गौर्वयो दधुः॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ वरुणः-શ્રેષ્ઠ सुक्षत्रः-ઉત્તમ ધનવાન મનુષ્ય स्वाहा-સત્ય ક્રિયાથી यज्ञम्-સંગમમય भेषजम्-ઔષધને करत्-બનાવે છે; જે अतिच्छन्दाः-અતિછંદ તથા ऋषभः-ઉત્તમ गौः-બળદ बृहत्-મહાન इन्द्रियम्-ઐશ્વર્ય અને वयः-કામના કરવા યોગ્ય પોતાના વ્યવહારને ધારણ કરે છે, તેમ સર્વ दधुः-ધારણ કરે, તેને જાણો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુપથ્ય અને ઔષધ સેવનથી રોગોનું નિવારણ કરે છે, પુરુષાર્થથી ધન અને આયુને ધારણ કરે છે, તેઓ અતુલ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૨)

वसन्तेन ऽ ऋतुना देवा वसवस्त्रिवृता स्तुताः।
रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वसवः-પૃથિવી આદિ આઠ વસુઓ વા પ્રથમ કોટિના વિદ્વાન્ देवाः-દિવ્યગુણોથી યુક્ત स्तुताः-સ્તુતિને પ્રાપ્ત, त्रिवृता-ત્રણે કાળમાં વિદ્યમાન, वसन्तेन-જેમાં મનુષ્ય સુખથી રહે છે તે વસંત, ऋतुना-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ઋતુની સાથે, વર્તમાન રહીને रथन्तरेण-રથથી પાર કરવા યોગ્ય तेजसा-તીક્ષ્ણ સ્વરૂપથી इन्द्रे-સૂર્યના પ્રકાશમાં वयः-આયુવર્ધક हविः-દાન કરવા યોગ્ય વસ્તુને दधुः-ધારણ કરે છે, તેને સ્વરૂપથી જાણીને તેનો સંગ કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો રહેવા માટે દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત પૃથિવી આદિ લોક અથવા વિદ્વાનોનો વસંત ઋતુમાં સંગ કરે છે, તેઓ વસંત ઋતુનાં સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૩)

ग्रीष्मेण ऋतुना देवा रुद्राः पञ्चदशे स्तुताः।
बृहता यशसा बलं हविरिन्द्रे वयो दधुः॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે स्तुताः-પ્રશસ્ત रुद्राः-દશ પ્રાણ અગિયારમો જીવાત્મા વા મધ્યમ કોટિના देवाः-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાનો पञ्चदशे-પંદરમાં વ્યવહારમાં ग्रीष्मेण-સર્વ રસોને આકર્ષીને ऋतुना-ઉષ્ણતા આપનારી ગ્રીષ્મ ઋતુ વા बृहता મહાન यशसा-કીર્તિથી इन्द्रे-જીવાત્મામાં हविः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય बलम्-બળ અને वयः-જીવનને दधुः-ધારણ કરે છે; તેને તમે જાણો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે ચુંમાળીસ વર્ષો સુધી બ્રહ્મચર્ય-પાલન કરીને વિદ્વાન્ બનીને અન્યોના શરીર અને આત્માનાં બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તે ભાગ્યશાળી હોય છે.(૨૪)

वर्षाभिर्ऋतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुताः।
वैरूपेण विशौजसा हविरिन्द्रे वयो दधुः॥ २५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वर्षाभिः-જેમાં વાદળાં વર્ષા કરે છે તે વર્ષા ऋतुना-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય ઋતુ, वैरूपेण-વિવિધ રૂપોવાળા ओजसा-બળ તથા विशा-પ્રજાની સાથે રહેનારા आदित्याः-બાર મહિનાઓ વા ઉત્તમ કોટિના વિદ્વાન્ सप्तदशे-સત્તરમા स्तोमे-સ્તુતિના વ્યવહારમાં स्तुताः-પ્રશંસિત બનીને इन्द्रे-જીવાત્મામાં हविः-આપવા યોગ્ય वयः-કાળના જ્ઞાનને दधुः-ધારણ કરે છે, તેને તમે જાણીને ઉપકાર ગ્રહણ કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોના સંગ દ્વારા કાળની સૂક્ષ્મ અને સ્થૂલ ગતિને જાણીને એક ક્ષણ પણ

વ્યર્થ ગુમાવતાં નથી, તેઓ અનેક ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

शारदेन ऽ ऋतुना देवा ऽ एकविꣳश ऽ ऋभवं स्तुताः।
वैराजेन श्रिया श्रियꣳ हविरिन्द्रे वयो दधुः॥ २६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે एकविंशे-એકવીસમાં વ્યવહારમાં स्तुताः-સ્તુતિને પ્રાપ્ત ऋभवः-બુદ્ધિમાન देवाः-વિદ્વાન્ - દેવગુણયુક્ત शारदेन-શરદ ऋतुना-ઋતુ, વા वैराजेन-વિરાટ છંદમાં વિદ્યમાન અર્થની સાથે, श्रिया-શોભા અને લક્ષ્મીની સાથે વિદ્યમાન રહીને इन्द्रे-જીવાત્મામાં श्रियम्-લક્ષ્મી અને हविः-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય वयः-ઇચ્છિત સુખને दधुः-ધારણ કરે છે; તેની તમે સેવા કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : સુપથ્ય સેવન કરનારા જે મનુષ્યો શરદઋતુમાં રોગરહિત રહે છે, તેઓ શ્રી-લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૬)

हेमन्तेन ऽ ऋतुना देवास्त्रिणवे मरुतः स्तुताः।
बलेन शक्वरीः सहो हविरिन्द्रे वयो दधुः॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે त्रिणवे-સત્તાવીસમા વ્યવહારમાં हेमन्तेन-જેમાં દેહ વધે છે તે ऋतुना-પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય હેમન્ત ઋતુની સાથે વિદ્યમાન स्तुताः-પ્રશંસાને યોગ્ય देवाः-દિવ્યગુણયુક્ત मरुतः-મનુષ્ય છે, તે बलेन-મેઘથી शक्वरीः-શક્તિ માટે ગાય, सहः-બળ, हविः આદાન પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થો અને वयः-ઇષ્ટ સુખને इन्द्रे-જીવાત્મામાં दधुः-ધારણ કરે છે; તમે એની સેવા કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વ રસોનો પરિપાક કરનાર હેમન્ત ઋતુમાં યથાયોગ્ય વ્યવહાર કરે છે, તે બળવાન બને છે. (૨૭)

शैशिरेण ऽ ऋतुना देवास्त्रयस्त्रिꣳशेऽमृता स्तुताः।
सत्येन रेवतीः क्षत्रꣳ हविरिन्द्रे वयो दधुः॥ २८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अमृताः-પોતાના સ્વરૂપથી નિત્ય स्तुताः-પ્રશંસિત, शैशिरेण-શિશિર ऋतुना-ઋતુની સાથે, देवाः-દિવ્ય ગુણ - કર્મ - સ્વભાવયુક્ત, सत्येन-સત્યની સાથે त्रयस्त्रिंशे-તેત્રીસ વસુ આદિ સમુદાયમાં વિદ્યમાન વિદ્વાનો છે, તેઓ रेवतीः-શત્રુ સેનાનું ઉલ્લંઘન કરનારી ધનવાન પ્રજાને इन्द्रे-જીવમાં हविः-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થ, क्षत्रम्-ધન વા રાજ્ય અને वयः-ઇષ્ટ સુખને दधुः-ધારણ કરે છે; તેનાથી પૃથિવી આદિની વિદ્યાઓને ગ્રહણ કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પૂર્વોક્ત - આઠ વસુઓ, અગિયાર રુદ્ર, બાર આદિત્ય, વિદ્યુત્ અને યજ્ઞ એ તેત્રીસ દિવ્ય પદાર્થોને જાણે છે, તેઓ અક્ષય સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૮)

होता यक्षत्समिधाग्निमिडस्पदेऽश्विनेन्द्रꣳ सरस्वतीमजो धूम्रो न गोधूमैः

कुवलैर्भेषजं मधु शष्पैर्न तेज ऽ इन्द्रियं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ २९॥

પદાર્થ : હે યાજ્ઞિક ! જેમ होता-દાતા, इडस्पदे-પૃથિવી અને અન્નના સ્થાનમાં समिधा-બળતણ આદિ સાધનોથી अग्निम्-અગ્નિને, अश्विनौ-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા इन्द्रम्-ઐશ્વર્ય વા જીવને; તથા सरस्वतीम्-સુશિક્ષિત વાણીને; धूम्रः-ધૂમ્રવર્ણવાળા अजः-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બકરાંની न-સમાન કોઈ જીવ गोधूमैः-ઘઉં અને कुवलैः-બળનાશક બોરફળની भेषजम्-ઔષધને यक्षत्-ભેળવે છે; તેમ शष्पैः-હિંસાઓની न-સમાન સાધનોથી જે तेजः-પ્રગલ્ભતા, मधु-મધુર જલ, इन्द्रियम्-ધન, पयः-દૂધ વા અન્નને परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે તે सोमः-ઔષધિગણ घृतम्-ઘૃત मधु-મધને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે, તેની સાથે તું आज्यस्य-ઘૃતનો यज-હોમ કર. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં સાધન અને ઉપસાધનોથી પૃથિવી આદિની વિદ્યાને જાણે છે, તેઓ સર્વ શ્રેષ્ઠ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૯)

होता यक्षत्तनूनपात्सरस्वतीमविर्मेषो न भेषजं पथा मधुमता भरन्नश्विनेन्द्राय वीर्यं बदरैरुपवाकाभिर्भेषजं तोक्मभिः पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३०॥

પદાર્થ : હે होतः-હવન કરનાર પુરુષ ! જેમ - तनूनपात्-શરીરથી નિર્બળની રક્ષા કરનાર, होता-ગ્રહણ કરનાર જન सरस्वतीम्-અનેક જ્ઞાનવાળી વાણીને, अविः-ઘેટાં અને मेषः-બકરાંની न-સમાન मधुमता-અધિક જલયુક્ત पथा-માર્ગથી भेषजम्-ઔષધને भरन्-ગ્રહણ કરતાં, इन्द्राय-ઐશ્વર્યને માટે अश्विना-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા અને वीर्यम्-પરાક્રમને, बदरैः-બોરફળથી તથા उपवाकाभिः-ઉપદેશાત્મક ક્રિયાઓથી भेषजम्-ઔષધનો यक्षत्-સંગ કરે છે, તેમ જો तोक्मभिः-સંતાનોની સાથે पयः-જલ, परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે सोमः-ઔષધિઓનો સમૂહ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે, તેની સાથે તું आज्यस्य-ઘીનો यज-હવન કર. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે સંગ કરનારા મનુષ્યો વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીને પ્રાપ્ત કરીને, પથ્ય આહાર-વિહારથી વીર્યની વૃદ્ધિ કરીને, પદાર્થ વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ જગતમાં અલંકૃત બને છે. (૩૦)

होता यक्षन्नराशꣳसं न नग्नहुं पतिꣳ सुरया भेषजं मेषः सरस्वती भिषग्रथो न चन्द्र्यश्विनोर्वपा इन्द्रस्य वीर्यं बदरैरुपवाकाभिर्भेषजं तोक्मभिः पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३१॥

પદાર્થ : હે होतः-હવન કરનાર મનુષ્ય ! જેમ होता-દાતા नराशंसम्-મનુષ્યોથી સ્તુતિ કરવા યોગ્ય

મનુષ્યની न-સમાન नग्नहुम्-દુષ્ટ પુરુષોને જેલમાં નાખનાર पतिम्-સ્વામીનો, सुरया-જલની સાથે વિદ્યમાન भेषजम्-ઔષધને इन्द्रस्य-દુષ્ટોનું વિદારણ કરનાર પુરુષ वीर्यम्-શૂરવીરમાં ઉત્તમ બળનો यक्षत्-સંગ કરે છે, તે मेषः-ઉપદેશક, सरस्वती-વિદ્યા સંબંધી વાણી, भिषक्-વૈદ્ય, रथः-રથની न-સમાન चन्द्री-અનેક પ્રકારના સુવર્ણવાળા બનીને, अश्विनोः-આકાશ અને પૃથિવીની वपाः-ક્રિયાઓ, વા बदरैः-બોરની સમાન उपवाकाभिः-સમીપ પ્રાપ્ત વાણીઓથી भेषजम्-ચિકિત્સકનો यक्षत्-સંગ કરે છે; તથા જેને तोक्मभिः-સંતાનોની સાથે पयः-દૂધ તથા परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે सोमः-ઔષધિગણ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય છે, તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘી નો यज-હવન કર. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય નિર્લજ્જોને દંડ આપે છે, પ્રશંસનીયોની પ્રશંસા કરે છે, જલની સાથે ઔષધનું સેવન કરે છે, તેઓ બળ અને આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યવાન બને છે. (૩૧)

होता यक्षदिडेडित ऽ आजुह्वानः सरस्वतीमिन्द्रं बलेन वर्धयन्नृषभेण गवेन्द्रियमश्विनेन्द्राय भेषजं यवैः कर्कन्धुभिर्मधु लाजैर्न मासरं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३२॥

પદાર્થ : હે होतः-હવન કર્તા મનુષ્ય ! જે इडा-પ્રશંસિત વાણીથી ईडितः-પ્રશંસિત आजुह्वानः-સત્કારપૂર્વક નિમંત્રિત होता-પ્રશંસા યોગ્ય મનુષ્ય છે, તે बलेन-બળથી सरस्वतीम्-વાણી અને इन्द्रम्-ઐશ્વર્યને ऋषभेण-ચાલવા યોગ્ય ઉત્તમ गवा-બળદથી इन्द्रियम्-ધન તથા अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશકનો यवैः જવ આદિ અન્નોથી, इन्द्राय-ઐશ્વર્યને માટે भेषजम्-ઔષધની वर्द्धयन्-વૃદ્ધિ કરતાં, कर्कन्धुभिः-બોરની ક્રિયાને ધારણ કરનારાઓથી મધુ-મીઠા लाजैः-ફૂલેલાં અન્નોની न-સમાન मासरम्-ભાતનો यक्षत्-સંગત કરે, તેમ જે परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલા રસની સાથે सोमः-ઔષધિગણ पयः-રસ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘી નો यज-હોમ કર. (૩૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય બ્રહ્મચર્યથી શરીર અને આત્માનાં બળને, વિદ્વાનોની સેવાથી વિદ્યાને તથા પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને, પથ્ય તથા ઔષધનાં સેવનથી રોગોનો નાશ કરીને, આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરે. (૩૨)

होता यक्षद् बर्हिरूर्णम्रदा भिषङ् नासत्या भिषजाश्विनाश्वा शिशुमती भिषग्धेनुः सरस्वती भिषग्दुह ऽ इन्द्राय भेषजं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३३॥

પદાર્થ : હે होतः-હવન કરનાર મનુષ્ય ! જેમ होता-દાતા, ऊर्णम्रदाः-સુખને ઢાંકનારનું મર્દન કરનાર મનુષ્ય, भिषक्-વૈદ્ય અને शिशुमती-પ્રશંસિત બાળકો વાળી अश्वा-શીઘ્ર ચાલનારી ઘોડી दुहे-સુખને

પરિપૂર્ણ કરવા માટે बर्हिः-અન્તરિક્ષનો यक्षत्-સંગ કરે છે; જેમ नासत्या-સત્ય વ્યવહાર કરનારાઓ अश्विना-વૈદ્યક વિદ્યામાં વ્યાપક भिषजा-બે ઉત્તમ વૈદ્ય भिषक्-રોગ નિવારક સામાન્ય વૈદ્ય धेनुः-દુધારી ગાય सरस्वती-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી તથા भिषक्-રોગ નિવારક સામાન્ય વૈદ્ય પદાર્થોનો સંયોગ કરે છે; જેમ भिषक्-વૈદ્ય, इन्द्राय-જીવને માટે यक्षत्-પ્રદાન કરે છે, તેમ જેને परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે सोमः-ઔષધિગણ पयः-રસ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેમ તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘીનો यज-હવન કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો વિદ્યા અને સંગતિ દ્વારા સર્વ પદાર્થોથી ઉપકાર ગ્રહણ કરે, તો તેઓ વાયુ અને અગ્નિની સમાન સમસ્ત વિદ્યાઓ અને સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૩)

होता॑ यक्ष॒द्दुरो॒ दिशः॑ कव॒ष्यो॒ न व्यच॑स्वतीर॒श्विभ्यां॒ न दुरो॒ दिश॒ ऽ इन्द्रो॒ न रोद॑सी॒ दुघे॑ दुहे धे॒नुः सर॑स्वत्य॒श्विनेन्द्रा॑य भे॒षजꣳ॑शु॒क्रं न ज्योति॑रिन्द्रि॒यं पय॒ः सोम॑ः परि॒स्रुता॑ घृ॒तं मधु॒ व्यन्त्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ३४॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-લેનાર મનુષ્ય कवष्यः-છિદ્રોવાળી વસ્તુઓને दुरः-દ્વારોની न-સમાન व्यचस्वतीः-વ્યાપક दिशः-દિશાઓને अश्विभ्याम्-ઇન્દ્ર અને અગ્નિની न-સમાન दुरः-દ્વારો दिशः-દિશાઓને इन्द्रः-વિદ્યુત્‌ની न-સમાન दुघे-પૂર્ણ रोदसी-આકાશ અને પૃથિવીને धेनुः-ગાયની સમાન, सरस्वती-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, इन्द्राय-જીવને માટે अश्विना-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાને शुक्रम्-બળકારી જલની न-સમાન, भेषजम्-ઔષધ, ज्योतिः-પ્રકાશક इन्द्रियम्-મન આદિને दुहे-પરિપૂર્ણતા માટે यक्षत्-સંગત કરે છે; તેમ જે परिस्रुता સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે पयः-દૂધ, सोमः-ઔષધિગણ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય; તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘી નો यज-હવન કર. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વ દિશાઓમાં દ્વારવાળા, સર્વ ઋતુઓમાં સુખકારક ઘર બનાવે છે, તેઓ પૂર્ણ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે.(૩૪)

होता॑ यक्षत्सु॒पेश॑सो॒षे नक्तं॒ दिवा॒श्विना॒ सम॑ञ्जाते॒ सर॑स्वत्या॒ त्विषि॒मिन्द्रे॒ न भे॒षजꣳ॑श्ये॒नो न रज॑सा हृ॒दा श्रि॒या न मास॑रं॒ पय॒ः सोम॑ः परि॒स्रुता॑ घृ॒तं मधु॒ व्यन्त्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ३५॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ सुपेशसा-સુંદર સ્વરૂપવતી उषे-કામને દગ્ધ કરનારી સ્ત્રીઓ છે તથા नक्तम्-રાત્રિ અને दिवा-દિવસે अश्विना-વ્યાપ્ત થનાર સૂર્ય અને ચન્દ્રમા सरस्वत्या-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીથી इन्द्रे-પરમ ઐશ્વર્યવાન પ્રાણીમાં त्विषिम्-પ્રકાશ તથા भेषजम्-જલને समञ्जाते-સારી રીતે પ્રકાશિત કરે છે, તેની न-સમાન અને रजसा-લોકોની સાથે રહેલા श्येनः-વિશેષ જ્ઞાનદાતા વિદ્વાનની

न-સમાન, होता-જ્ઞાન લેનાર મનુષ્ય श्रिया-લક્ષ્મી વા શોભાની न-સમાન हृदा-મનથી मासरम्-ભાત વા સુસંસ્કૃત ભોજનના પદાર્થોનો यक्षत्-યજ્ઞ કરે છે, તેમ જે परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે पयः-સર્વ ઔષધિઓનો રસ, सोमः-સર્વ ઔષધિગણ, घृतम्-જલ मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य ઘી નો यज-હોમ કર.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દિવસ, રાત, સૂર્ય અને ચન્દ્રમા સર્વને પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ રૂપ અને યૌવનથી સંપન્ન પત્નીઓ પોતાના પતિઓની સેવા કરે છે.

અથવા જેમ પાક ક્રિયાનો જ્ઞાતા પાક ક્રિયાનો ઉપદેશ કરે છે, તેમ તમે સર્વને પ્રકાશિત કરો અને સર્વની સેવા કરો તથા ભોજનના પદાર્થો ઉત્તમ રીતે બનાવો. (૩૫)

होता॑ यक्ष॒द्दैव्या॑ होता॑रा भिषजा॒श्विनेन्द्रं॒ न जागृ॑वि॒ दिवा॒ नक्तं॒ न भे॑ष॒जैः शूष॑ꣳ सर॑स्वती भिषक् सीसे॑न दुह ऽ इन्द्रि॒यं पय॒ः सोम॑ः परि॒स्रुता॑ घृतं मधु॒ व्यन्त्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ३६॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-લેવાવાળા दैव्या-દિવ્ય ગુણવાળાઓમાં પ્રાપ્ત, होतारा-ગ્રહણ કરનાર, भिषजा-વૈદ્યની સમાન રોગનું હરણ કરનાર अश्विना-અગ્નિ અને વાયુ તથા इन्द्रम्-વિદ્યુત્‌ની न-સમાન यक्षत्-યજ્ઞ કરે છે, दिवा-દિવસ नक्तम्-રાત્રિમાં जागृवि-જાગૃત અર્થાત્ કાર્ય કરવામાં પ્રમાદ રહિત सरस्वती-વૈદ્યકશાસ્ત્ર જાણનારી અને પ્રશસ્ત જ્ઞાનવાળી સ્ત્રી भिषक्-વૈદ્ય भेषजैः-જલોથી તથા सीसेन-ધનુષ્ય વિશેષથી शूषम्-બળની न-સમાન इन्द्रियम्-ધનને दुहे-પરિપૂર્ણ કરે છે, તેમ જે परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત રસની સાથે पयः-દૂધ, सोमः-ઔષધિગણ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘીનો यज-હવન કર. (૩૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય સ્ત્રીઓ કાર્યોને સિદ્ધ કરવા માટે દિવસ અને રાત પ્રયત્ન કરે છે, અથવા જેમ વૈદ્યો રોગોનું નિવારણ કરીને શરીરનાં બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તેવો વર્તાવ કરીને સર્વ આનંદિત રહે. (૩૬)

होता॑ यक्ष॒त्तिस्रो दे॒वीर्न भे॑ष॒जं त्रय॑स्त्रि॒धात॑वो॒ऽपसो॑ रू॒पमिन्द्रे॑ हिर॒ण्यय॑म॒श्विनेडा॒ न भार॑ती वा॒चा सर॑स्वती॒ मह॒ इन्द्रा॑य दुह ऽ इन्द्रि॒यं पय॒ः सोम॑ः परि॒स्रुता॑ घृतं मधु॒ व्यन्त्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ३७॥

પદાર્થ : હે होतः-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ ! જેમ होता-વિદ્યા લેનાર तिस्रः-ત્રણ देवीः-દેદીપ્યમાન્ નીતિઓની न-સમાન भेषजम्-ઔષધને यक्षत्-ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત કરે છે; જેમ अपसः-કર્મ કરનાર त्रिधातवः, त्रयः-સર્વ વિષયોને ધારણ કરનારા સત્ત્વ, રજ અને તમ ત્રણેય ગુણોથી યુક્ત એ ત્રણ અર્થાત્

तत्-તે, अस्मत्-અમે, युष्मत्-તમે એ ત્રણ પદોથી વાચ્ય જીવ हिरण्यम्-જ્યોતિર્મય रूपम्-નેત્રના વિષય રૂપને इन्द्रे-વિદ્યુત્‌માં यजेरन्-પ્રાપ્ત/સંગત કરે છે;

अश्विना-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા તથા इडा-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય भारती-ધારણાવાળી બુદ્ધિની न-સમાન सरस्वती-પરમ વિદુષી वाचा-વિદ્યા અને સુશિક્ષા યુક્ત વાણીથી इन्द्राय- ઐશ્વર્યવાનને માટે महः-મહાન इन्द्रियम्-ધનની दुहे-પરિપૂર્ણતા કરે છે; તેમ જે परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલ રસની સાથે पयः-દૂધ, सोमः-ઔષધિગણ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘીનો यज-હવન કર. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અસ્થિ, મજ્જા અને વીર્ય શરીરમાં કાર્યનાં સાધન છે; જેમ સૂર્ય આદિ તથા વાણી સર્વના જ્ઞાપક છે, તેમ બનીને તમે સૃષ્ટિવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને શ્રી-લક્ષ્મીવાન્ બનો. (૩૭)

होता यक्षत्सुरेतसमृषभं नर्यापसं त्वष्टारमिन्द्रमश्विना भिषजं न सरस्वतीमोजो न जूतिरिन्द्रियं वृको न रभसो भिषग् यशः सुरया भेषजꣳश्रिया न मासरं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वा-ज्यस्य होतर्यज॥ ३८॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ सुरेतसम्-ઉત્તમ પરાક્રમી ऋषभम्-બળદ, नर्यापसम्-મનુષ્યોમાં સારા કર્મ કરનાર त्वष्टारम्-દુઃખોને કાપનારા इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યવાન્ મનુષ્યને अश्विना-વાયુ અને વિદ્યુત્ भिषजम्-શ્રેષ્ઠ વૈદ્યની न-સમાન सरस्वतीम्-અતિ વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીને ओजः-બળની न-સમાન यक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે.

भिषक्-વૈદ્ય, वृकः-વજ્રની न-સમાન जूतिः-વેગ इन्द्रियम्-મન, रभसः-વેગ, यशः-ધન વા અન્ન सुरया-જલની સાથે भेषजम्-ઔષધ, श्रिया-ધનની न-સમાન ક્રિયાથી मासरम्-સારી રીતે પક્વ અન્નને यक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત પુરુષાર્થથી पयः-પીવા યોગ્ય રસ, सोमः-ઐશ્વર્ય, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે વર્તમાન તું आज्यस्य-ઘી નો यज-હવન કર. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો બ્રહ્મચર્ય, ધર્માચરણ, વિદ્યા અને સત્સંગ આદિથી સમસ્ત સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યો પુરુષાર્થથી લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે. (૩૮)

होता यक्षद्वनस्पतिꣳ शमितारꣳ शतक्रतुं भीमं न मन्युꣳ राजानं व्याघ्रं नमसाश्विना भामꣳ सरस्वती भिषगिन्द्राय दुहऽइन्द्रियं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३९॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ भिषक्-વૈદ્ય होता-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ इन्द्राय-ધનને માટે वनस्पतिम्-કિરણોના પાલકની સમાન, शमितारम्-શાન્તિદાયક, शतक्रतुम्-અનંત બુદ્ધિ અને અનેક કર્મ કરનાર भीमम्-ભયંકર મનુષ્યની न-સમાન, मन्युम्-ક્રોધ તથા नमसा-વજ્રથી व्याघ्रम्-સિંહની

न-સમાન राजानम्-દેદીપ્યમાન રાજાને यक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે.

અથવા सरस्वती-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી, अश्विना-સભાપતિ તથા સેનાપતિ भामम्-ક્રોધને दुहे-પરિપૂર્ણ કરે, તેમ परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલ પુરુષાર્થની સાથે इन्द्रियम्-ધન, पयः-રસ, सोमः-ચન્દ્ર, घृतम्-ઘી અને मधु-મધુર વસ્તુ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘીનો यज-હવન કર. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યાથી અગ્નિને, શાન્તિથી વિદ્વાનને, પુરુષાર્થથી બુદ્ધિને અને ન્યાયથી રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ લૌકિક અને પારમાર્થિક સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૯)

होता यक्षदग्निꣳ स्वाहाज्यस्य स्तोकानाꣳ स्वाहा मेदसां पृथक् स्वाहा छागमश्विभ्याꣳ स्वाहा मेषꣳ सरस्वत्यै स्वाहऽऋषभमिन्द्राय सिꣳहाय सहसऽइन्द्रियꣳ स्वाहाग्निं न भेषजꣳ स्वाहा सोममिन्द्रियꣳ स्वाहेन्द्रꣳ सुत्रामाणꣳ सवितारं वरुणं भिषजां पतिꣳ स्वाहा वनस्पतिं प्रियं पाथो न भेषजꣳ स्वाहा देवा ऽ आज्यपा जुषाणो ऽ अग्निर्भेषजं पयः सोमः परिस्रुता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ४०॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ आज्यस्य-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ઘી, स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી स्तोकानाम्-સ્વલ્પ मेदसाम्-સ્નિગ્ધ પદાર્થોની स्वाहा-સારી રીતે રક્ષણ ક્રિયાથી, अग्निम्-અગ્નિને पृथक्-વિભિન્ન स्वाहा-ઉત્તમ રીતિથી, अश्विभ्याम्-રાજ્યના સ્વામી અને પશુપાલનના દ્વારા छागम्-દુઃખનો નાશ કરનાર દ્રવ્યને सरस्वत्यै-વિજ્ઞાનથી યુક્ત વાણીને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી, मेषम्-સેવન કરનાર મેઘને इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યને માટે स्वाहा-પરમ ઉત્તમ ક્રિયાથી, ऋषभम्-શ્રેષ્ઠ પુરુષાર્થને सहसे-બળને માટે તથા सिंहाय-શત્રુઓના હનનકર્તા માટે स्वाहा-પરમ ઉત્તમ ક્રિયાથી, इन्द्रियम्-ધનને स्वाहा-ઉત્તમ વાણીથી, अग्निम्-અગ્નિની न-સમાન भेषजम्-ઔષધ, सोमम्, સોમલતા આદિ ઔષધિગણ તથા इन्द्रियम्-મન આદિ ઈન્દ્રિયોને स्वाहा-ઉત્તમ શાન્તિ આદિ ક્રિયા અને વિદ્યાથી, सूत्रामाणम्-ઉત્તમ રક્ષક इन्द्रम्-સેનાપતિને, भिषजाम्-વૈદ્યોના पतिम्-પાલક, सवितारम्-ઐશ્વર્યના કર્તા वरुणम्-શ્રેષ્ઠ પુરુષને स्वाहा-નિદાન આદિ વિદ્યાથી, वनस्पतिम्-વનોના પાલકને स्वाहा-ઉત્તમ વિદ્યાથી, प्रियम्-પ્રીતિ કરવા યોગ્ય पाथः-પાલક અન્નની न-સમાન भेषजम्-ઉત્તમ ઔષધને यक्षत्-સંગત કરે છે.

અથવા જેમ आज्यपाः-વિજ્ઞાનના રક્ષક/પાલક देवाः-વિદ્વાનો તથા भेषजम्-ચિકિત્સાને યોગ્ય રોગોની जुषाणः-સેવા કરનાર अग्निः-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રદીપ્ત વિદ્વાન્ यक्षत्-યજ્ઞ કરે છે/સંગત કરે છે; તેમ જે परिस्रुता-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયેલ રસની સાથે पयः-દૂધ, सोमः-ઔષધિઓનો સમૂહ, घृतम्-ઘી અને मधु-મધ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય; તેની સાથે રહીને તું आज्यस्य-ઘી નો यज-હવન કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા, ક્રિયાકુશળતા તથા પ્રયત્નથી અગ્નિ આદિને જાણીને, ગાય આદિ પશુઓનું પાલન કરીને સર્વનો ઉપકાર કરે છે, તેઓ વૈદ્યોની સમાન પ્રજાનાં દુઃખોનો વિધ્વંસ કરનારા હોય છે. (૪૦)

होता॑ यक्ष॒द॒श्विनौ॒ छाग॑स्य व॒पाया॒ मेद॑सो जु॒षता॑ᳪं ह॒विर्हो॑त॒र्यज॑। होता॑ यक्ष॒त्सर॑स्वतीं मे॒षस्य॑ व॒पाया॒ मेद॑सो जु॒ताषᳪं ह॒विर्हो॑त॒र्यज॑। होता॑ यक्ष॒दिन्द्र॑मृ॒ष॒भस्य॑ व॒पाया॒ मेद॑सो जु॒षता॑ᳪं ह॒विर्हो॑त॒र्यज॑॥ ४१॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! होता-તું જેમ होता-વિદ્યાનું દાન કરનાર વિદ્વાન્ यक्षत्-અનેક પ્રકારના વ્યવહારની સંગતિ કરે છે તથા अश्विनौ-પશુપાલક અને ખેડૂત छागस्य-બકરાં, ગાય, ભેંસ આદિ પશુ સંબંધી वपायाः-બીજ વાવવા વા તંતુઓથી વસ્ત્રાદિ બનાવવાની ક્રિયા તથા मेदसः-સ્નિગ્ધ પદાર્થની हविः-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય વ્યવહારનું जुषेताम्-સેવન કરે છે, તેમ यज-વ્યવહારોની સંગતિ કર.

હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! તું જેમ होता-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ मेषस्य-ઘેટાંથી वपायाः-બીજની વૃદ્ધિ કરનારી ક્રિયા અને मेदसः-સ્નેહયુક્ત પદાર્થ हविः-સુગંધિત અન્ન આદિની હવિ તથા सरस्वतीम्-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીનું जुषताम्-સેવન કરે છે, यक्षत्-તે પદાર્થોની યથાયોગ્ય यज-સંગતિ કર-હોમ કર.

હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! તું જેમ होता-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ ऋषभस्य-બળદને वपायाः-વધારવાની રીતિ તથા मेदसः-સ્નિગ્ધ પદાર્થની हविः-આપવા યોગ્ય હવિ અને इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારનું जुषताम्-સેવન કર, વા यक्षत्-ઉક્ત પદાર્થોની યથાયોગ્ય સંગતિ કરે તેમ यज-યથાયોગ્ય પદાર્થોની સંગતિ કર/હોમ કર. (૪૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પશુઓની સંખ્યા અને બળની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ સ્વયં પણ બળવાન બને છે. જેઓ પશુઓથી ઉત્પન્ન દૂધ, દૂધથી ઉત્પન્ન ઘી અને સ્નિગ્ધ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેઓ મૃદુ-કોમળ પ્રકૃતિના હોય છે.

જેઓ ખેતી કરવા આદિ કાર્યોના માટે એ બળદોને યુક્ત કરે છે. તેઓ ધન-ધાન્યથી યુક્ત બને છે. (૪૧)

होता॑ यक्ष॒द॒श्विनौ॒ सर॑स्वती॒मिन्द्र॑ᳪं सु॒त्रामा॑णमि॒मे सोमा॑: सु॒रामा॑ण॒श्छागै॒र्न मे॒षैर्ऋ॑ष॒भैः सु॒ताः शष्पै॒र्न तोक्म॑भिर्ला॒जैर्मह॑स्वन्तो॒ मदा॒ मास॑रेण॒ परि॑ष्कृताः शु॒क्राः पय॑स्वन्तो॒ऽमृता॒: प्रस्थि॑ता वो मधु॒श्चुत॒स्तान॒श्विना॒ सर॑स्व॒तीन्द्र॑: सु॒त्रामा॑ वृ॒त्रहा जु॒षन्ता॑ᳪं सो॒म्यं मधु॒ पिब॑न्तु॒ मद॑न्तु॒ व्यन्तु॒ होत॒र्यज॑॥ ४२॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ अश्विनौ-અધ્યાપક અને ઉપદેશક, सरस्वतीम्-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી, सुत्रामाणम्-પ્રજાના ઉત્તમ રક્ષક इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજાનો यक्षत्-સંગ કરે છે, અને એ જે सुरामाणः-ઉત્તમ દાતા, सोमाः-ઐશ્વર્યવાન સભાસદ્ सुताः-અભિષેક ક્રિયાથી

બનેલ છે; તે छागैः-વિનાશ કરનાર પદાર્થ વા બકરાં આદિ પશુઓની न-સમાન, मेषैः-જોવા યોગ્ય પદાર્થ વા ઘેટાં ऋषभैः-શ્રેષ્ઠ પદાર્થ વા બળદો અને शष्पैः-હિંસક પશુઓની સમાન, तोक्मभिः-સંતાનો અને लाजैः-શેકેલાં અન્નોથી महस्वन्तः-પૂજા સત્કારવાળા ; मदाः-આનંદ, मासरेण-ભાતથી परिष्कृताः શોભાયમાન, शुक्राः-શુદ્ધ पयस्वन्तः-પ્રશસ્ત જળ અને દૂધ આદિથી યુક્ત अमृताः-અમૃતાત્મક એક રસવાળા, मधुश्चुतः-મધુર ગુણ ટપકતાં, प्रस्थिताः-પ્રસ્થાન કરનાર, वः-તમારા માટે પદાર્થ બનાવેલ છે तान्-તેની यक्षत्-સંગત કરે છે; જેમ अश्विनौ-ઉત્તમ રીતિથી સત્કૃત બે પુરુષ, सरस्वती-પ્રશસ્ત વિદ્યાયુક્ત સ્ત્રી, सुत्रामा-ઉત્તમ રક્ષક અને वृत्रहा-મેઘને છિન્ન-ભિન્ન કરનાર સૂર્યની સમાન इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન સજ્જન सौम्यम्-શીત ગુણથી યુક્ત मधु-મધુર રસનું जुषन्ताम्-સેવન કરે છે, पिबन्तु-પાન કરે છે, मदन्तु-આનંદ પ્રાપ્ત કરે છે અને સમસ્ત વિદ્યાઓને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તું यज-સર્વ પદાર્થોની યથાયોગ્ય સંગતિ કર. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૃષ્ટિના પદાર્થોની વિદ્યા, સત્યવાણી અને ઉત્તમ રક્ષક રાજાને પ્રાપ્ત કરીને, પશુઓનાં દૂધ વગેરેથી પુષ્ટ થાય છે, તેઓ [તથા જે]ઉત્તમ રસયુક્ત તથા સુગંધિત અન્ન આદિ તથા સુપરીક્ષિત ભોગોને યુક્તિપૂર્વક ભોગવીને, રસોનું પાન કરીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ માટે પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ સુખી રહે છે. (૪૨)

होता यक्षदश्विनौ छागस्य हविष ऽ आत्तामद्य मध्यतो मेद ऽ उद्भृतं पुरा द्वेषोभ्यः पुरा पौरुषेय्या गृभो घस्तां नूनं घासे ऽ अज्राणां यवसप्रथमानाᳬ सुमत्क्षराणाᳬ शतरुद्रियाणामग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानां पार्श्वतः श्रोणितः शितामत ऽ उत्सादतोऽङ्गादङ्गादवत्तानां करत ऽ एवाश्विना जुषेताᳬ हविर्होतर्यज ॥ ४३ ॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ - होता-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ अश्विनौ-અધ્યાપક અને ઉપદેશકનો यक्षत्-સંગ કરે છે; અને તે બન્ને अद्य-આજે छागस्य-બકરી આદિ પશુઓની मध्यतः-મધ્યથી हविषः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય मेदः-દૂધ, ઘી આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થોને उद्भृतम्-ઉત્તમ રીતે ધારણ કરીને आत्ताम्-સેવન કરે.

અથવા જેમ द्वेषोभ्यः-દુષ્ટોથી पुरा-પ્રથમ गृभः-પડાવવા જેવું पौरुषेय्याः-પુરુષના સમૂહમાં ઉત્તમ સ્ત્રીની पुरा—પહેલાં नूनम्—નિશ્ચય કરીને घस्ताम्—ખાવું.

અથવા જેમ यवसप्रथमानाम्-જે અન્નને પ્રથમ માનનાર, घासे अज्राणाम्-ભોજનમાં પ્રથમ પહોંચનાર, सुमत्क्षराणाम्-ઉત્તમ આનંદનું કંપન-ચાલન કરનાર, शतरुद्रियाणाम्-દુષ્ટોને રડાવનાર સેંકડો દેવતાવાળા, पीवोपवसनानाम्-સ્થૂલ વસ્ત્રોને ધારણ કરનાર, अग्निष्वात्तानाम्-અગ્નિ વિદ્યાને ઉત્તમ રીતે ગ્રહણ કરનાર તે સર્વ પ્રાણીઓના पार्श्वतः-પાર્શ્વભાગ, श्रोणितः-કટિ પ્રદેશ शितामतः-તીક્ષ્ણ અને અપરિપક્વ સ્થાનથી उत्सादतः-ઉખાડતા અંગ અને अङ्गादङ्गात्-પ્રત્યેક અંગથી વ્યવહાર વા अवत्तानाम्-નમ્ર અને ઉત્કૃષ્ટ અંગોની एव-જ अश्विना-બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો करतः-ચિકિત્સા કરે, हविः-ઉત્તમ ભોજન યોગ્ય પદાર્થોનું जुषेताम्-સેવન કરે, તેમ તું यज-યજ્ઞ કર અર્થાત્ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો બકરી આદિ પશુઓની રક્ષા કરીને, તેના દૂધ આદિને સુગંધિત કરીને, તેનું સેવન કરીને, દ્વેષપૂર્ણ દોષોથી યુક્ત પુરુષોને દૂર કરીને, શ્રેષ્ઠ વૈદ્યોનો સંગ કરીને, ઉત્તમ ભોજન કરે છે તથા ઉત્તમ વસ્ત્ર ધારણ કરે છે, તેઓ પ્રત્યેક અંગોથી રોગોને દૂર કરીને સુખી રહે છે. (૪૩)

होता यक्षत् सरस्वतीं मेषस्य हविष ऽ आवयदद्य मध्यतो मेद ऽ उद्धृतं पुरा द्वेषोभ्यः पुरा पौरुषेय्या गृभो घसन्नूनं घासे ऽ अज्राणां यवसप्रथमानाꣳ सुमत्क्षराणाꣳ शतरुद्रियाणामग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानां पार्श्वतः श्रोणितः शितामत ऽ -उत्सादतोऽङ्गादङ्गादवत्तानां करदेवꣳ सरस्वती जुषताꣳ हविर्होतर्यज॥ ४४॥

પદાર્થ : હે होतः-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર મનુષ્ય ! જેમ होता-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન્ - अद्य-આજે मेषस्य-ઉપદેશ પ્રાપ્ત કરેલ મનુષ્યના शितामतः-તીક્ષ્ણ સ્વભાવથી हविषः-આપવા યોગ્ય પદાર્થના मध्यतः-મધ્યમાં પ્રસિદ્ધ વ્યવહારથી જે मेदः-સ્નિગ્ધ પદાર્થને उद्भृतम्-ગ્રહણ કરેલ છે તેને તથા सरस्वतीम्-વાણીને, आवयत्-પ્રાપ્ત કરે છે અને यक्षत्-સત્કાર કરે છે. તેમજ द्वेषोभ्यः-શત્રુઓથી पुरा-પ્રથમ गृभः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય पौरुषेय्याः-પુરુષ સંબંધી સ્ત્રીથી पुरा-પ્રથમ नूनम्-નિશ્ચયથી घसत्-ભોજન કરે છે.

અથવા घासे अज्राणाम्-જે ભોજનમાં સુંદર यवसप्रथमानाम्-મિશ્રિત-અમિશ્રિત આદિ सुमत्क्षराणाम्-શ્રેષ્ઠ આનંદની વર્ષા કરનાર, पीवोपवसनानाम्-જાડાં વસ્ત્રો પહેરનાર, अग्निष्वात्तानाम्-અગ્નિ વિદ્યાને ઉત્તમ રીતે ગ્રહણ કરનાર, शतरुद्रियाणाम्-અનેક વિદ્વાનોનો અભિપ્રાય રાખનારાની पार्श्वतः-સમીપ, श्रोणितः-કટિભાગથી उत्सादतः-શરીરને ઉખેડીને अङ्गादङ्गात्-પ્રત્યેક અંગથી अवत्तानाम्-ગ્રહણ કરેલ વ્યવહારોની વૈદ્યકવિદ્યાને करत्-ગ્રહણ કરે છે, एवम्-એ રીતે એ सरस्वती-વિદુષી સ્ત્રી તેનું जुषताम् સેવન કરે છે; તેમ તું પણ हविः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ વા વ્યવહારની यज-સંગતિ કર. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સજ્જનોનો સંગ કરીને દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને, યુક્ત આહાર-વિહારથી આરોગ્યને પ્રાપ્ત કરીને ધર્મનું સેવન કરે છે, તેઓ કૃતકૃત્ય બની જાય છે. (૪૪)

होता यक्षदिन्द्रमृषभस्य हविष ऽ आवयदद्य मध्यतो मेद ऽ उद्धृतं पुरा द्वेषोभ्यः पुरा पौरुषेय्या गृभो घसन्नूनं घासे ऽ अज्राणां यवसप्रथमानाꣳ सुमत्क्षराणाꣳ शतरुद्रियाणामग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानां पार्श्वतः श्रोणितः शितामत ऽ -उत्सादतोऽङ्गादङ्गादवत्तानां करदेवमिन्द्रो जुषताꣳ हविर्होतर्यज॥ ४५॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-વિદ્યા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ घासे अज्राणाम्-ભોજનમાં પ્રથમ પ્રાપ્ત થનાર, यवसप्रथमानाम्-જવ આદિ અન્ન વા મિશ્રિત-અમિશ્રિત પદાર્થોનો વિસ્તાર કરનાર,

सुमत्क्षराणाम्-સારી રીતે પ્રમાદનો નાશ કરનાર, अग्निष्वात्तानाम्-જઠરાગ્નિથી સારી રીતે ગ્રહણ કરનાર, पीवोपवसनानाम्-જાડાં વસ્ત્રો પહેરનાર- ઓઢનાર, शतरुद्रियाणाम्-સેંકડો દુષ્ટોને રડાવનાર, अवत्तानाम्-ઉદાર ચિત્ત વિદ્વાનોનાં पार्श्वतः-સમીપનાં અંગોથી, श्रोणितः-ક્રમશઃ शितामतः-તીક્ષ્ણતા યુક્ત છિન્ન-ભિન્ન થયેલા રોગોના તે અંગનો उत्सादतः-ત્યાગથી અને अङ्गादङ्गात्-પ્રત્યેક અંગથી हविः-રોગનાશક વસ્તુ અને इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને कुर्यात्-સિદ્ધ કરે છે; इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા जुषताम्-સેવન કરે છે; તેમ તે રાજા જેમ अद्य-આજે ऋषभस्य-ઉત્તમ हविषः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થની मध्यतः-મધ્યમાં વિદ્યમાન मेदः-સ્નિગ્ધ પદાર્થને उद्भृतम्-ઉત્કૃષ્ટતાથી પોષિત કરીને आ + अवयत्-વ્યાપ્ત થાય - સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય, द्वेषोभ्यः-વિરોધીઓમાં पुरा-પ્રથમ गृभः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય पौरुषेय्याः-પુરુષ સંબંધી વિદ્યાના સંબંધથી पुरा-પહેલાં नूनम्-નિશ્ચયથી यक्षत्-સત્કાર કરે છે, વા एवम्-એ રીતે घसत्-ભોજન કરે છે; તેમ તું यज-યજ્ઞ કર - સર્વ વ્યવહારની સંગતિ કર. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોના સંગથી દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને, શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર કરીને, ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોનું સ્વયં ગ્રહણ કરે છે તથા અન્યોને ગ્રહણ કરાવીને સર્વને ઉન્નત કરે છે, તેઓ પૂજ્ય-સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૫)

होता यक्षद्वनस्पतिमभि हि पिष्टतमया रभिष्ठया रशनयाधित। यत्राश्विनोश्छागस्य हविषः प्रिया धामानि यत्र सरस्वत्या मेषस्य हविषः प्रिया धामानि यत्रेन्द्रस्य ऽ ऋषभस्य हविषः प्रिया धामानि यत्राग्नेः प्रिया धामानि यत्र सोमस्य प्रिया धामानि यत्रेन्द्रस्य सुत्राम्णः प्रिया धामानि यत्र सवितुः प्रिया धामानि यत्र वरुणस्य प्रिया धामानि यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथाᳬंसि यत्र देवानामाज्यपानां प्रिया धामानि यत्राग्नेर्होतुः प्रिया धामानि तत्रैतान् प्रस्तुत्येवोपस्तुत्येवोपावस्त्रक्षद्रभीयसऽइव कृत्वी करदेवं देवो वनस्पतिर्जुषताᳬं हविर्होतर्यज॥ ४६ ॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ - पिष्टतमया-ખૂબ પીસેલ અર્થાત્ સૂક્ષ્મ, रभिष्ठया-અતિ શીઘ્રતાથી વૃદ્ધિ પામનારી વા ઉત્તમ રીતિથી બનેલ વસ્તુ रशनया-રશ્મિની સાથે यत्र-જ્યાં अश्विनोः-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાના સંબંધથી પાલિત, छागस्य-ઘાસને છેદનાર વા બકરાં આદિ પશુઓ તથા हविषः-આપવા યોગ્ય પદાર્થ સંબંધી प्रिया-મનોહર, धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; વા यत्र-જ્યાં सरस्वत्याः નદી, मेषस्य-ઘેટાં તથા हविषः ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ સંબંધી प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે ; यत्र-જ્યાં इन्द्रस्य-ઐશ્વર્યથી યુક્ત મનુષ્ય, ऋषभस्य-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય તથા हविषः-આપવા યોગ્ય પદાર્થોના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; यत्र-જ્યાં अग्नेः-પ્રસિદ્ધ અને વિદ્યુત્‌રૂપી અગ્નિના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; यत्र-જ્યાં सोमस्य-ઔષધિઓના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે.

यत्र-જ્યાં सुत्राम्णः-ઉત્તમ રક્ષક इन्द्रस्य-ઐશ્વર્ય યુક્ત ઉત્તમ પુરુષનાં प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; यत्र-જ્યાં सवितुः-પ્રેરક વાયુના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; यत्र-જ્યાં वरुणस्य-શ્રેષ્ઠ પદાર્થના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; यत्र- જ્યાં वनस्पतेः-વડ આદિ વૃક્ષોના प्रिया-ઉત્તમ पाथांसि-અન્ન અને તેને પીવાના જળ છે' यत्र-જ્યાં आज्यपानाम्-ગતિથી પાલન કરનારી અર્થાત્ પોતાની કક્ષામાં ઘૂમનારી જીવોનું પાલન કરનારી देवानाम्-પૃથિવી આદિ દિવ્ય લોકોના प्रिया-ઉત્તમ धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે.

यत्र-જ્યાં होतुः-શ્રેષ્ઠ સુખદાયક અને अग्नेः-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન થનાર અગ્નિના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામ છે; तत्र-ત્યાં एतान्-એ પદાર્થોની प्रस्तुत्येव-પ્રકરણથી પ્રશંસા અને उपस्तुत्येव-સમીપતાથી સ્તુતિ કરીને उपावस्त्रक्षत्-તેને ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યથાયોગ્ય કામોમાં ઉપાર્જન કરે અથવા ઉક્ત પદાર્થોનો સંચય કરે છે; रभीयस इव-અનેક પ્રકારથી અત્યંત આરંભની સમાન कृत्वी-કરીને કાર્યોમાં ઉપયોગ કરી શકે એ રીતે करत्-તેનો વ્યવહાર કરે.

જેમ वनस्पतिः-સૂર્ય આદિ લોકોની કિરણોનું પાલન કરનાર, देवः-દિવ્ય ગુણયુક્ત અગ્નિ हविः-સુગંધિત અન્ન આદિ હવિ પદાર્થોનું जुषताम्-સેવન કરે છે, हि-નિશ્ચયથી वनस्पतिम्-વડ આદિ વૃક્ષોને अभियक्षत्-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરે છે અર્થાત્ વિદ્યુત્ રૂપથી પ્રાપ્ત થાય છે અને अधित-તેને ધારણ કરે છે; તેમ તું यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૬)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ઈશ્વરના રચેલા પદાર્થોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવને જાણીને, તેનો કાર્ય સિદ્ધિ માટે પ્રયોગ કરે, તો પોતાના ઈચ્છિત સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૪૬)

होता॑ यक्षद॒ग्निꣳ स्वि॑ष्ट॒कृत॒मया॑ड॒ग्निर॒श्विनो॒श्छाग॑स्य ह॒विषः॒ प्रि॒या धामा॒न्यया॒ट् सर॑स्वत्या मे॒षस्य॑ ह॒विषः॒ प्रि॒या धामा॒न्यया॒डिन्द्र॑स्य ऽ ऋ॒ष॒भस्य॑ ह॒विषः॒ प्रि॒या धामा॒न्यया॑ड॒ग्नेः प्रि॒या धामा॒न्यया॒ट् सोम॑स्य प्रि॒या धामा॒न्यया॒डिन्द्र॑स्य सु॒त्राम्णः॒ प्रि॒या धामा॒न्यया॑ट् स॒वि॒तुः प्रि॒या धामा॒न्यया॒ड् वरु॑णस्य प्रि॒या धामा॒न्यया॒ड् व॒न॒स्पतेः॒ प्रि॒या पाथा॒ꣳस्यया॒ड् दे॒वाना॑माज्य॒पानां॒ प्रि॒या धामा॑नि यक्ष॒द॒ग्नेर्होतुः॒ प्रि॒या धामा॑नि यक्ष॒त् स्वं म॑हि॒मान॒माय॑जता॒मेज्या॒ ऽ इषः॑ कृणोतु॒ सो ऽ अ॑ध्व॒रा जा॒तवे॑दा जु॒षता॒ꣳ ह॒विर्होत॒र्यज॑॥ ४७॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ - स्विष्टकृतम्-ઉત્તમ ઈચ્છિત પદાર્થથી પ્રાપ્ત કરેલ अग्निम्-અગ્નિનો यक्षत्-સંગ કરે છે અર્થાત્ પ્રાપ્ત કરે છે; વા જેમ अग्निः-અગ્નિ अश्विनोः-વાયુ તથા વિદ્યુત્, छागस्य-છેદક વા બકરાં આદિ પશુઓ, हविषः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામને अयाट्-પ્રાપ્ત થાય છે; सरस्वत्याः-વાણી

मेषस्य-સિંચવા વા અન્યને જીતવાના ઈચ્છુક પ્રાણી, हविषः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થનાં प्रिया-પ્રિય મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની अयाट्-પ્રશંસા કરે છે;

અથવા इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ऋषभस्य-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવવાળા રાજા અને प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની अयाट्-પ્રશંસા કરે છે; વા अग्नेः-વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિનાં प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની अयाट्-પ્રશંસા કરે છે; વા सोमस्य-ઐશ્વર્યના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની अयाट्-પ્રશંસા કરે છે વા सुत्राम्णः-ઉત્તમ રક્ષક इन्द्रस्य-સેનાપતિના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની अयाट्-પ્રશંસા કરે છે.

सवितुः-સમસ્ત ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનાર ઉત્તમ પદાર્થજ્ઞાનનાં प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની अयाट्-પ્રશંસા કરે છે; વા वरुणस्य-સર્વ શ્રેષ્ઠ પુરુષ અને જલના प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની अयाट्-પ્રશંસા કરે છે; વા वनस्पतेः-વડ આદિ વૃક્ષોને प्रिया-તૃપ્ત કરાવનાર पाथांसि-ફલોને अयाट्-પ્રાપ્ત થાય છે; વા आज्यपानाम्-જ્ઞાતવ્ય રક્ષકો વા રસોનું પાન કરનાર देवानाम्-વિદ્વાનોનાં प्रिया-પ્રિય મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની यक्षत्-પ્રશંસા કરે છે, વા होतुः-જલ આદિ ગ્રહણ કરનાર તથા अग्नेः-પ્રકાશક સૂર્યનાં प्रिया-મનોહર धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામની यक्षत्-પ્રશંસા કરે છે; स्वम्-પોતાનાં महिमानम्-મહત્વને आ + यजताम्-ગ્રહણ કરે છે; વા જેમ जातवेदाः-ઉત્તમ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત વિદ્વાન્ જે एज्याः-સારી રીતે સંગ કરવા યોગ્ય ઉત્તમ ક્રિયાઓ અને इषः-ઈચ્છાઓને कृणोतु-સિદ્ધ કરે છે; सः-તે अध्वराः-હિંસા રહિત યજ્ઞો અને हविः-સંગ કરવા યોગ્ય પદાર્થનું जुषताम्-સેવન કરે છે; તેમ તું यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતાની ઈચ્છાને સિદ્ધ કરનારા અગ્નિ આદિ સૃષ્ટિના પદાર્થોને સારી રીતે જાણીને પ્રિય સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ પોતાની મહિમાનો વિસ્તાર કરે છે. (૪૭)

देवं बर्हिः सरस्वती सुदेवमिन्द्रे ऽ अश्विना।
तेजो न चक्षुरक्ष्योर्बर्हिषा दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ४८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ सरस्वती-પ્રશંસિત વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી इन्द्रे-પરમ ઐશ્વર્યને માટે देवम्-દિવ્યગુણ યુક્ત सुदेवम्-સુંદર વિદ્વાન્ પતિની बर्हिः-અન્તરિક્ષ, अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશકના તથા चक्षुः-નેત્રરૂપ तेजः-તેજની न-સમાન यज-પ્રશંસા વા સંગતિ કરે છે; જેમ વિદ્વાન્ લોકો वसुधेयस्य-ધનને ધારણ કરનારાઓને वसुवने-ધનની પ્રાપ્તિ કરાવવા માટે अक्ष्योः-આંખોનાં बर्हिषा-અન્તરિક્ષ - અવકાશથી અર્થાત્ દષ્ટિથી જોઈને इन्द्रियम्-ધનને दधुः-ધારણ કરે છે અને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ એને તું ધારણ અને પ્રાપ્ત કર. (૪૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો વિદુષી બ્રહ્મચારિણી કુમારી પોતાના માટે પ્રિય પતિને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત થાય છે, તેમ વિદ્યા અને સૃષ્ટિના પદાર્થોનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને તમે પણ આનંદિત રહો. (૪૮)

देवीर्द्वारो ऽ अश्विना भिषजेन्द्रे सरस्वती।
प्राणं न वीर्य्यं नसि द्वारो दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ४९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ अश्विना-વાયુ અને સૂર્ય सरस्वती-વિજ્ઞાનવાળી સ્ત્રી, भिषजा-બે વૈદ્ય इन्द्रे-ઐશ્વર્યને માટે देवीः દેદીપ્યમાન द्वारः-પ્રવેશ અને બહાર નીકળવા માટે બનેલા દ્વારોને પ્રાપ્ત કરતા પ્રાણીઓનાં नसि-નસકોરાંમાં प्राणम्-અન્તઃ શ્વસનની न-સમાન वीर्यम्-વીર્યને તથા द्वारः-દ્વારો-શરીરનાં પ્રસિદ્ધ નવ છિદ્રોને दधुः-ધારણ કરે છે, વા वसुवने-ધનનું સેવન કરવા માટે वसुधेयस्य-ધનકોશના इन्द्रियम्-ધનને વિદ્વાન્ લોકો व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તું यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૪૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય અને ચન્દ્રનો પ્રકાશ દ્વારોથી ઘરમાં દાખલ થઈને અંદર પ્રકાશ કરે છે, તેમ વિદ્વાનોનો ઉપદેશ કાનોમાં દાખલ થઈને હૃદયમાં પ્રકાશ કરે છે. (૪૯)

देवी ऽ उषासावश्विना सुत्रामेन्द्रे सरस्वती।
बलं न वाचमास्य ऽ उषाभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ५०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ देवी-દેદીપ્યમાન उषासौ-સાંજ અને સવારની સંધિવેળા, सुत्रामा-બે ઉત્તમ રક્ષક, सरस्वती-વિજ્ઞાનની હેતુ સ્ત્રી अश्विना-સૂર્ય અને ચન્દ્રમા वसुवने-ધનનું સેવન કરનારા માટે वसुधेयस्य-ધનકોશના इन्द्रे-પરમ ઐશ્વર્યમાં વિદ્યમાન बलम्-બળની न-સમાન आस्ये-મુખમાં वाचम्-વાણીને તથા उषाभ्याम्-સાંજ અને સવારની વેળાએ इन्द्रियम्-ધનને दधुः-ધારણ કરે છે અને સર્વને व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ તું यज-સર્વને વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે પુરુષાર્થી મનુષ્યો સૂર્ય, ચન્દ્ર, પ્રાતઃકાલ અને સાંયકાલની-સંધ્યાની સમાન પ્રયત્ન કરે છે; સંધિ સમયમાં શયન અને આળસનો ત્યાગ કરીને ધ્યાન કરે છે; તેઓ પર્યાપ્ત શ્રી-ધનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૦)

देवी जोष्ट्री सरस्वत्यश्विनेन्द्रमवर्धयन्। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशो जोष्ट्रीभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ५१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ देवी-પ્રકાશ આપનારી जोष्ट्री-સેવન કરવા યોગ્ય सरस्वती-વિજ્ઞાનની નિમિત્ત સ્ત્રી, अश्विना-વાયુ અને વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ इन्द्रम्-સૂર્યની अवर्धयन्-વૃદ્ધિ અર્થાત્ ઉન્નતિ કરે છે, અથવા મનુષ્ય जोष्ट्रीभ्याम्-સંસારની સેવા કરતી પ્રાતઃ-સાયં બન્ને વેળાએ कर्णयोः કાનોમાં यशः-કીર્તિ વચનો श्रोत्रम्-સાંભળવાનું સાધન શ્રોત્રેન્દ્રિયની न-સમાન दधुः-ધારણ કરે છે; वसुधेयस्य-ધનકોશના वसुवने-ધનનું સેવન કરનારા માટે इन्द्रियम्-ધનને व्यन्तु-વિશેષતાથી પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તું यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યનાં કારણોને જાણે છે, તેઓ યશસ્વી બનીને ધનવાન, કાન્તિમાન અને

શોભાયમાન બને છે. (૫૧)

देवी ऽ ऊर्जाहुती दुघे सुदुघेन्द्रे सरस्वत्यश्विना भिषजावतः। शुक्रं न ज्योति स्तनयोराहुती धत्त ऽ इन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ५२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે જેમ देवी-મનોહર दुघे-સુખને પૂર્ણ કરનારી પ્રાતઃ અને સાયં વેળાઓ, इन्द्रे-પરમ ઐશ્વર્યના માટે ऊर्जाहुति-અન્નની આહુતિ, सरस्वती-વિશેષજ્ઞાન કરાવનારી સ્ત્રી, सुदुघा-સુખથી પૂર્ણ કરનારા भिषजा-બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય વા अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક शुक्रम्-શુદ્ધ જળની न-સમાન ज्योतिः-પ્રકાશની अवतः-રક્ષા કરે છે; તેમ स्तनयोः-શરીરમાં સ્તનોની જે आहुती-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ક્રિયા છે તેને धत्त-ધારણ કરો; वसुधेयस्य-ધનના આધાર સંસારના મધ્યમાં वसुवने-ધનનું સેવન કરનારા માટે इन्द्रियम्-ધનને धत्त-ધારણ કરો; જેથી તે ઉક્ત પદાર્થોને સાધારણ સર્વ મનુષ્યો व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે. હે ગુણગ્રાહીજન ! તેમ તું સર્વ વ્યવહારોની यज-સંગતિ કર. (૫૨)

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય પોતાના અને બીજાઓનાં શરીરોની રક્ષા કરીને વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ ધનની રક્ષા કરીને વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૫૨)

देवा देवानां भिषजा होताराविन्द्रमश्विना। वषट्कारैः सरस्वती त्विषिं न हृदये मतिः होतृभ्यां दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ५३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ જેમ देवानाम्-સુખ આપનાર વિદ્વાનોની મધ્યમાં, होतारौ-શરીર સુખ આપનારા, देवा-વૈદ્ય-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન, भिषजा-વૈદ્યજનો, अश्विना-વિદ્યામાં વ્યાપક બે વિદ્વાનો वषट्कारैः-શ્રેષ્ઠ કામોથી इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને ધારણ કરે છે.

सरस्वती-પ્રશસ્ત વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત વાણીવાળી સ્ત્રી त्विषिम्-પ્રકાશની न-સમાન हृदये-અન્તઃકરણમાં मतिम्-બુદ્ધિને ધારણ કરે છે; તેમ होतृभ्याम्-બે દાતા પુરુષોની સાથે ઉક્ત સદ્વૈદ્ય અને વાણીયુક્ત સ્ત્રીને वसुधेयस्य-કોશના वसुवने-ધનનો વિભાગ કરનાર માટે इन्द्रियम्-શુદ્ધ મનને दधुः-ધારણ કરતી અને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે, હે મનુષ્ય ! તેમ તું પણ यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન બે શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો ઉત્તમ ક્રિયાઓથી સર્વને નીરોગ કરીને શ્રીમાન્—કાન્તિમાન કે ધનવાન બનાવે છે; અથવા જેમ વિદ્વાનોની વાણી વિદ્યાર્થીઓનાં અન્તઃકરણમાં બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ અન્યોએ વિદ્યા અને ધનનો સંચય કરવો જોઈએ. (૫૩)

देवीस्तिस्त्रस्तिस्त्रो देवीरश्विनेडा सरस्वती। शूषं न मध्ये नाभ्यामिन्द्राय दधुरिन्द्रियं वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ५४॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થિની ! જેમ तिस्त्रः-માતા, અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા એ ત્રણ देवीः-નિરંતર

વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન દેવીઓ, वसुधेयस्य-જેમાં ધનને ધારણ કરવા યોગ્ય આ સંસારમાં मध्ये-મધ્યમાં वसुवने-ઉત્તમ ધનના ઇચ્છુક इन्द्राय-જીવને માટે तिस्रः-ઉત્તમ, મધ્યમ, નિકૃષ્ટ ત્રણ देवीः-વિદ્યાથી પ્રકાશિત કન્યાઓને दधुः-ધારણ કરે છે.

અથવા अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક, इडा-સ્તુતિ કરનારી અને सरस्वती-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી नाभ्याम्-નાભિમાં વિદ્યમાન् शुषम्-બળ વા સુખની न-સમાન इन्द्रियम्-અન્તઃકરણ - મનને दधुः-ધારણ કરે છે; જેમ એ સર્વ ઉક્ત પદાર્થોને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તું સર્વ વ્યવહારોની यज-સંગતિ કર. (૫૪)

ભાવાર્થ : જેમ માતા, અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા એ ત્રણ વિદુષીઓ કન્યાઓને વિદુષી બનાવીને તેને સુખી કરે છે; તેમ પિતા, અધ્યાપક અને ઉપદેશક કુમાર અર્થાત્ વિદ્યાર્થીઓને વિદ્વાન્ બનાવીને તેને સુસભ્ય બનાવે. (૫૪)

देवऽइन्द्रो नराशꣳसस्त्रिवरूथः सरस्वत्याश्विभ्यामीयते रथः। रेतो न रूपममृतं जनित्रमिन्द्राय त्वष्टा दधदिन्द्रियाणि वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ५५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ त्रिवरूथः-ભૂમિ, પાતાળ અને અન્તરિક્ષ ત્રણેય સ્થાનોમાં ઘરોવાળા, इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન્ देवः-વિદ્વાન્ सरस्वत्या-સુશિક્ષિત વાણીથી नराशंसः-સુશિક્ષા આપનાર નરોને अश्विभ्याम्-અગ્નિ અને વાયુ જેમ रथः-રમણીય રથયાનને ईयते-સન્માર્ગ પર લઈ જાય છે.

જેમ जनित्रम्-પિતા અથવા ઉત્તમ સુખ ઉત્પન્ન કરનાર अमृतम्-જળ, रेतः-વીર્યની न-સમાન रूपम्-આકારને તથા वसुधेयस्य-સંસારની મધ્યમાં वसुवने-ધનનું સેવન કરનારા इन्द्राय-જીવને માટે इन्द्रियाणि-કર્ણ-નેત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોને त्वष्टा-દુઃખોનો વિનાશ કરવાવાળા ઈશ્વર दधत्-ધારણ કરે છે; જેમ તે ઉક્ત પદાર્થોને એ સર્વ व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે, તેમ તું यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો તમે ધર્મયુક્ત વ્યવહારથી શ્રી-લક્ષ્મીનો સંચય કરી લો, તો જળ અને અગ્નિ દ્વારા સંચાલિત રથની સમાન તમે શીઘ્ર સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરી શકો છો. (૫૫)

देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णो ऽ अश्विभ्याꣳ सरस्वत्या सुपिप्पल ऽ इन्द्राय पच्यते मधु। ओजो न जूतिर्ऋषभो न भामं वनस्पतिर्नो दधदिन्द्रियाणि वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ५६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ अश्विभ्याम्-જળ અને વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિથી देवैः પ્રકાશક ગુણોની સાથે देवः-પ્રકાશમાન हिरण्यवर्णः-તેજ સ્વરૂપ वनस्पतिः-કિરણોનો રક્ષક સૂર્ય છે, તે सरस्वत्या-ગતિમાન નીતિથી सुपिप्पलः-સુંદર ફળોવાળા પીપળો આદિ વૃક્ષો इन्द्राय-પ્રાણીઓ માટે मधु-મધુર ફળો જેમ पच्यते-પાકે તેમ પકાવે અને પ્રાપ્ત થાય છે.

जूतिः-વેગને ओजः-જલની न-સમાન, भामम्-ક્રોધને ऋषभः-બળવાન પ્રાણીની न-સમાન, वनस्पतिः વડ આદિ વૃક્ષો वसुधेयस्य-પદાર્થોના આધાર સંસાર नः-અમે મનુષ્યો માટે તથા वसुवने-ધનના ઇચ્છુક માટે इन्द्रियाणि-ધનોને दधत्-ધારણ કરે છે; જેમ એ સર્વ પદાર્થોને એ સર્વ व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે, તેમ તું यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સૂર્ય વર્ષાથી અને નદી પોતાના જળથી વૃક્ષોનું સંરક્ષણ કરીને મધુર ફળોને ઉત્પન્ન કરે છે; તેમ સર્વના માટે સર્વ પદાર્થો ઉત્પન્ન કરો.

જેમ ધાર્મિક રાજા દુષ્ટ પર ક્રોધ કરે છે, તેમ દુષ્ટો પ્રત્યે અપ્રીતિ કરીને શ્રેષ્ઠોના પ્રત્યે પ્રેમ ધારણ કરે. (૫૬)

दे॒वं ब॒र्हिर्वारि॑तीनामध्व॒रे स्ती॒र्णम॒श्विभ्या॒मूर्णम्र॑दाः॒ सर॑स्वत्या स्यो॒नमि॑न्द्र ते॒ सदः॑। ई॒शायै म॒न्युꣳराजा॑नं ब॒र्हिषा॑ दधुरिन्द्रि॒यं व॑सु॒वने॑ वसु॒धेय॑स्य व्यन्तु॒ यज॑॥ ५७॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-ઇન્દ્રિયોના સ્વામી જીવ ! જે ते-તારી सरस्वत्या-ઉત્તમ વાણીની સાથે स्योनम्-સુખદાયક અને सदः-જેમાં બેઠા છીએ તે નૌકા આદિ યાન છે; જેમ उर्णम्रदाः-આચ્છાદિત પદાર્થોથી શિલ્પના દ્રવ્યોનું મર્દન કરનાર વિદ્વાન્ - अश्विभ्याम्-વાયુ અને વિદ્યુત્‌થી अध्वरे-હિંસારહિત શિલ્પયજ્ઞમાં वारितीनाम्-જલમાં ગતિ કરનાર પદાર્થોને स्तीर्णम्-આચ્છાદિત કરનાર, देवम्-દિવ્ય, बर्हिः-અન્તરિક્ષને, इशायै-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિને માટે मन्युम्-મનનશીલ राजानम्-પ્રકાશમાન રાજાની સમાન; बर्हिषा-અન્તરિક્ષથી वसुधेयस्य-પૃથિવી આદિના આધાર જગતમાં वसुवने-પૃથિવી આદિના લોકોની સેવા કરનારા જીવને માટે इन्द्रियम्-ધનને दधुः-ધારણ કરે છે અને તેને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તું સર્વ પદાર્થોની यज-સંગતિ કર. (૫૭)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો આકાશની સમાન ચંચળતા રહિત, આનંદદાતા, એકમાત્ર, પ્રસન્ન સ્વભાવવાળા, આજ્ઞાનું અવશ્ય પાલન કરનારા અને પુરુષાર્થી હોય, તો આ સંસારમાં તેઓ લક્ષ્મીવાન કેમ ન બને ? (૫૭)

दे॒वो ऽ अ॒ग्निः स्वि॑ष्ट॒कृद्दे॒वान्य॑क्षद्यथाय॒थꣳ होता॑रा॒विन्द्र॑म॒श्विना॑ वा॒चा वा॒चꣳ सर॑स्वतीम॒ग्निꣳसोम॑ꣳ स्विष्ट॒कृत् स्विष्ट॒ ऽ इन्द्रः॑ सु॒त्रामा॑ सवि॒ता वरु॑णो भिष॒गिष्टो दे॒वो व॒न॒स्पतिः॑ स्वि॒ष्टा दे॒वा ऽ आ॑ज्य॒पाः स्वि॑ष्टो ऽ अ॒ग्निर॒ग्निना॒ होता॑ हो॒त्रे स्वि॑ष्ट॒कृद्यशो॒ न दध॑दिन्द्रि॒यमूर्ज॒मप॑चिति॒ꣳ स्व॒धां व॑सु॒वने॑ वसु॒धेय॑स्य व्यन्तु॒ यज॑॥ ५८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ वसुधेयस्य-સંસારના वसुवने-ઐશ્વર્યના સેવક પુરુષને માટે स्विष्टकृत्-

ઉત્તમ ઇચ્છિત સુખકારી, देवः-દિવ્ય-સુંદર, अग्निः-અગ્નિ देवान्-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા પૃથિવી આદિ ભૂતોને यथायथम्-યથાયોગ્ય यक्षत्-પ્રાપ્ત થાય છે - સંગત કરે છે.

જેમ होतरौ-પદાર્થોને ગ્રહણ કરનારા अश्विना-વાયુ અને વિદ્યુત્રૂપ અગ્નિ इन्द्रम्-સૂર્યને; वाचा-વાણીથી सरस्वतीम्-વિજ્ઞાન યુક્ત वाचम्-વાણીને તથા अग्निम्-અગ્નિ અને सोमम्-ચંદ્રને यथायथम्-યથાયોગ્ય ચલાવે છે.

જેમ स्विष्टकृत्-ઉત્તમ સુખકારી, स्विष्टः-અત્યંત ઇષ્ટ-પ્રિય, सुत्रामा-ઉત્તમ પાલક इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત રાજા, सविता-સૂર્ય, वरुणः-જળનો સમુદાય, भिषक्-રોગ વિનાશક વૈદ્ય, इष्टः સંગ કરવા યોગ્ય देवः-દિવ્ય સ્વભાવવાળા वनस्पतिः-પીપળ આદિ વૃક્ષ, स्विष्टाः-ઉત્તમ અભીષ્ટનાં નિમિત્ત आज्यपाः-પેય રસનું પાન કરનાર देवाः-દિવ્યસ્વરૂપ વિદ્વાન્ अग्निना-વિદ્યુત્થી स्विष्टः-ઉત્તમ અભીષ્ટના હેતુ होता-દાતા મનુષ્ય, स्विष्टकृत्-ઉત્તમ અભીષ્ટકારી अग्निः-અગ્નિ होत्रे-દાતા મનુષ્યને માટે यशः-કીર્તિકર ધનની न-સમાન इन्द्रियम्-જીવના ચિહ્ન કાન આદિ ઇન્દ્રિયો તથા ऊर्जम्-બળ, अपचितिम्-સત્કાર અને स्वधाम्-અન્નને यथायथम्-યથાયોગ્ય दधत्-પ્રત્યેકને ધારણ કરે છે; જેમ તેને એ ઉક્ત પદાર્થોને એ સર્વ व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેમ તું यथायथम्-યથાયોગ્ય यज-સર્વ વ્યવહારોની સંગતિ કર. (૫૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરકૃત અને આ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત યજ્ઞ આદિ પદાર્થોને વિદ્યાથી ઉપયોગના માટે ધારણ કરે છે, તેઓ ઉત્તમ અભીષ્ટ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૮)

अग्निमद्य होतारमवृणीतायं यजमानः पचन् पक्तीः पचन् पुरोडाशान् बध्नन्नश्विभ्यां छागꣳ सरस्वत्यै मेषमिन्द्रायऽऋषभꣳसुन्वन्नश्विभ्याᳬ सरस्वत्याऽइन्द्राय सुत्राम्णे सुरासोमान्॥ ५९ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ अयम्-એ पक्तीः પાકોને पचन्-પકાવતાં અર્થાત્ સિદ્ધ કરતાં, पुरोडाशान्-યજ્ઞ આદિ કર્મમાં પાક વિશેષોને पचन्-પકાવતાં यजमानः-યજ્ઞ કરનાર होतारम्-સુખોના દાતા अग्निम्-અગ્નિનો अवृणीत-સ્વીકાર કરે છે.

જેમ अश्विभ्याम्-પ્રાણ અને અપાનના માટે छागम्-બકરાંથી, सरस्वत्यै વિજ્ઞાન યુક્ત વાણીને માટે मेषम्-ઘેટાંથી इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યને માટે ऋषभम्-બળદને बध्नन्-બાંધે છે; अश्विभ्याम्-પ્રાણ અને અપાનને માટે, सरस्वत्यै-વિજ્ઞાનયુક્ત વાણીને માટે सुत्राम्णे-ઉત્તમ રક્ષક इन्द्राय-રાજાને માટે, सुरासोमान्-ઉત્તમ રસયુક્ત પદાર્થોનો सुन्वन्-સાર કાઢે છે; તેમ તમે अद्य-આજે = હમણાં કરો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સંગતિ કરનારા વૈદ્યો અપાન [ને બળવાન બનાવવા] માટે બકરીનું દૂધ, વાણીની વૃદ્ધિ માટે ઘેટીનું દૂધ, ઐશ્વર્ય માટે ગાયનું દૂધ અને રોગ નિવારણ માટે ઔષધિઓનો રસ તૈયાર કરીને [તથા તેનું સેવન કરીને] સુસંસ્કૃત સારી રીતે બનાવેલા અન્નનું સેવન કરીને, બળવાન બનીને, દુષ્ટ શત્રુઓને બાંધી દે છે, તેઓ પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૯)

सूपस्थाऽअद्य देवो वनस्पतिरभवदश्विभ्यां छागेन सरस्वत्यै मेषेणेन्द्रायऽ ऋषभेणाक्षँस्तान् मेदस्तः प्रतिपचतागृभीषतावीवृधन्त पुरोडाशैरपुरश्विना सरस्वतीन्द्रः सुत्रामा सुरासोमान्॥ ६०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ अद्य-આજે सूपस्थाः-સારી રીતે સમીપ રહેલા મનુષ્ય - देवः-દિવ્યગુણોથી યુક્ત वनस्पतिः-વડ આદિ વૃક્ષોની સમાન જે-જે સાધનથી અને अश्विभ्याम्-પ્રાણ અને અપાનને માટે छागेन-દુઃખનાશક બકરાં આદિ પશુઓથી सरस्वत्यै-વાણીને માટે मेषेण-ઘેટાંથી इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યને માટે ऋषभेण-બળદથી अक्षन्-પદાર્થોનો ઉપભોગ કરે છે; तान्-તે मेदस्तः-સુંદર સ્નિગ્ધ પશુઓના प्रतिपचता-પકાવવા યોગ્ય પદાર્થોને अगृभीषत-ગ્રહણ કરે છે; पुरोडाशैः-પ્રથમ ઉત્પન્ન સંસ્કાર કરેલા અન્ન વિશેષોથી अवीवृधन्त-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે; अश्विना-પ્રાણ અને અપાન, सरस्वती-પ્રશસ્ત વાણી, सुत्रामा-ઉત્તમ રક્ષક इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા सुरासोमान्-અર્ક કાઢેલા ઔષધિરસોનું अपुः-પાન કરે છે; તેમ આપ अभवत्-બનો. (૬૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો બકરી આદિના દૂધ વગેરેથી પ્રાણ અને અપાનની રક્ષા માટે સ્નિગ્ધ પક્વ પદાર્થોનું સેવન કરીને, ઉત્તમ રસોનું પાન કરીને વૃદ્ધિ પામે છે તેઓ ઉત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬૦)

त्वामद्यऽऋषऽआर्षेयऽऋषीणां नपादवृणीतायं यजमानो बहुभ्यऽ आ सङ्गतेभ्यऽ एष मे देवेषु वसु वार्यायक्ष्यतऽइति ता या देवा देव दानान्यदुस्तान्यस्माऽआ च शास्स्वा च गुरस्वेषितश्च होतरसि भद्रवाच्याय प्रेषितो मानुषः सूक्तावाकाय सूक्ता ब्रूहि॥ ६१॥

પદાર્થ : હે ऋषे-મંત્રોના અર્થના જ્ઞાતા વા आर्षेय-મંત્રાર્થ જાણનારા-ઋષિઓમાં શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ ! ऋषीणाम्-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા ઋષિઓની नपात्-સંતાન यजमानः-યજમાન, अयम्-એ अद्य-આજે बहुभ्यः-અનેક सङ्गतेभ्यः-સંગત લોકોમાંથી त्वा-તને आ + अवृणीत-સ્વીકાર કરે, एषः-એ देवेषु-વિદ્વાનોમાં मे-મારા वसु-ધન च-અને वारि-જલનો अवृणीत-સ્વીકાર કરે.

હે देवः-વિદ્વાન ! જે आयक्ष्यते-સર્વત્રથી સંગત કરતાં च-અને देवाः-વિદ્વાન્ જન या-જે दानानि-આપવા યોગ્ય પદાર્થોને अदुः-આપે છે; तानि-તે પદાર્થોને अस्मै-એ યજમાનને आशास्स्व-સારી રીતે શીખવો; અને प्रेषितः-પ્રેરિત થઈને તું आगुरस्व-સારી રીતે પુરુષાર્થ કર.

હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! તું इषितः-સર્વનો પ્રિય मानुषः-મનુષ્ય છે; તે भद्रवाच्याय-ભદ્ર - સારું કહેવા યોગ્ય અને सूक्तवाकाय-જેના વચનોમાં ઉત્તમ કથન અને ઉત્તમ વ્યાખ્યાન છે, તે ભદ્ર પુરુષને માટે सूक्ता-ઉત્તમ વચન ब्रूहि-બોલ; इति-એ રીતે ता-તે ઉત્તમ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરનાર असि-બને છે. (૬૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય અનેક વિદ્વાનોની પાસેથી વિદ્વાનનું વરણ-સ્વીકાર કરીને, વેદ આદિ વિદ્યાઓનું અધ્યયન કરીને, મહર્ષિ બને છે, તેઓ અન્યોને ભણાવવામાં સમર્થ બની શકે છે.

જે દાની અને પુરુષાર્થી હોય, તેઓ વિદ્યા ગ્રહણ કરીને, અવિદ્વાનો પર દયા કરીને, વિદ્યા ગ્રહણ કરાવવા માટે રોષપૂર્વક તાડના કરીને તેને સુસભ્ય બનાવે છે, તેઓ આ સંસારમાં સત્કારને યોગ્ય બને છે. (૬૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં વરુણ (૧-૪), અગ્નિ (૯-૧૨), વિદ્વાન્ (૧૧-૧૩), રાજાપ્રજા - (૨૫), શિલ્પ (૮), વાણી (૩૨), ઘર (૩ ૪), અશ્વી (૨૯, ૩૦, ૩૧, ૩૩-૪૦), ઋતુ (૨૩-૨૮), હોતા (૨૯-૪૭) આદિના પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति एकविंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ द्वाविंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

तेजो॑ऽसि शु॒क्रम॒मृत॑मायु॒ष्पा ऽ आयु॑र्मे पाहि।

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्यां॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्या॒माद॑दे॥ १॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! હું देवस्य-સર્વના પ્રકાશક सवितुः-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક સર્જનહાર જગદીશ્વરે प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલ પ્રાણી આદિના સંસારમાં अश्विनोः-વાયુ અને વિદ્યુત્‌ના અને ધારણ આકર્ષણના ગુણ સમાન बाहुभ्याम्-ભુજાઓથી તથા पूष्णः-પુષ્ટિકર્તા સૂર્યનાં કિરણોની સમાન हस्ताभ्याम्-હાથોથી त्वा-તને आ-ददे ગ્રહણ કરું છું.

જે તું अमृतम्-સ્વસ્વરૂપથી વિનાશરહિત, शुक्रम्-વીર્યવાન્, तेजः-પ્રકાશમાન, आयुष्पाः-આયુની રક્ષા કરનાર असि-છે, તે તું પોતાની આયુ દીર્ઘ કરીને मे-મારી आयुः-આયુ-જીવનની पाहि-રક્ષા કર. (૧)

ભાવાર્થ : જેમ શરીરમાં રહેલી વિદ્યુત્ શરીરની રક્ષા કરે છે, જેમ બાહ્ય સૂર્ય અને વાયુ જીવનના હેતુ છે, તેમ ઈશ્વર રચિત આ જગતમાં આપ્ત વિદ્વાન્ હોય છે. એમ સર્વેએ જાણવું જોઈએ. (૧)

इ॒माम॑गृभ्णन् रश॒नामृ॒तस्य॒ पूर्व॑ ऽ आयु॑षि वि॒दथे॑षु क॒व्या।

सा नो॑ ऽ अ॒स्मिन्त्सु॒त ऽ आब॑भूवऽऋ॒तस्य॒ साम॑न्त्स॒रमा॒रप॑न्ती॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ऋतस्य-સત્ય - કારણથી सरम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય आरपन्ती-વ્યક્તરૂપમાં શબ્દને બોલતી आबभूव-ઉત્તમ રીતે વિખ્યાત છે; જે इमाम्-એ अमृतस्य-સત્ય કારણની रशनाम्-વ્યાપક દોરીની સમાન આયુને विदथेषु-યજ્ઞ આદિમાં पूर्वे-પહેલી आयुषि-પ્રાણ ધારણ કરનારી આયુમાં कव्या-કવિ મેધાવી લોકો अगृभ्णन्-ગ્રહણ કરે છે; सा-તે બુદ્ધિ अस्मिन्-આ सुते-ઉત્પન્ન જગતમાં नः-અમારા सामन्-અન્તિમ કાર્યમાં आबभूव-વિદ્યમાન રહે છે. અર્થાત્ કાર્યની સમાપ્તિ સુધી રહે છે. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ લગામ-દોરીથી બાંધેલ પ્રાણી જ્યાં-ત્યાં ભાગી શકતું નથી, તેમ યુક્તિપૂર્વક ધારણ કરેલી આયુ અકાલમાં ભાગી શકતી નથી. (૨)

अ॒भिधा ऽ अ॑सि भुव॑नमसि य॒न्तासि॑ ध॒र्त्ता।

स त्वम॒ग्निं वै॑श्वान॒रꣳ सप्र॑थसं गच्छ॒ स्वाहा॑कृतः॥ ३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે તું भुवनम्-જળની સમાન શીતળ असि-છે, अभिधाः-ઉપદેશ કરનાર असि-છે, यन्ता-નિયમ કરનાર असि-છે, सः-તે स्वाहाकृतः-સત્યક્રિયાથી યુક્ત धर्त्ता-સર્વ વ્યવહારોને

ધારણ કરનાર त्वम्-તું सप्रथसम्-વિખ્યાતની સાથે વર્તમાન वैश्वानरम्-સમસ્ત પદાર્થોમાં નાયક अग्निम्-અગ્નિને गच्छ-જાણ. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ પ્રાણી અને અપ્રાણીઓનાં જીવનનાં મૂળ જળ અને અગ્નિ છે, તેમ વિદ્વાનને સર્વ લોકો જાણે. (૩)

स्वगा त्वा देवेभ्यः प्रजापतये ब्रह्मन्नश्वं भन्त्स्यामि देवेभ्यः प्रजापतये तेन राध्यासम्। तं बधान देवेभ्यः प्रजापतये तेन राध्नुहि॥ ४॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मन्-વિદ્યાથી વૃદ્ધ વિદ્વાન્ ! હું त्वा-તને स्वगा-સ્વયં ગતિવાળો બનાવું છું, देवेभ्यः-વિદ્વાનો તથા प्रजापतये-સંતાનોની રક્ષા કરનાર ગૃહસ્થને માટે अश्वम्-મહાન સર્વવ્યાપી ઉત્તમ ગુણને भन्त्स्यामि-બાંધીશ - સુરક્ષિત કરીશ, तेन-તેથી देवेभ्यः-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત વિદ્વાનોને માટે અને प्रजापतये-સંતાનોનાં પાલક ગૃહસ્થને માટે राध्यासम्-સારી રીતે સિદ્ધ - તૈયાર બનું, तम्-તેને તું बधान-બાંધ, तेन-તેથી देवेभ्यः-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા વિદ્વાનોને માટે તથા प्रजापतये-પ્રજાના પાલક ગૃહસ્થને માટે राध्नुहि-સારી રીતે તૈયાર બને. (૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્યા, સુશિક્ષા, બ્રહ્મચર્ય અને સત્સંગથી શરીર અને આત્માનાં મહાન બળની વૃદ્ધિ કરીને, દિવ્યગુણોને ગ્રહણ કરીને તથા વિદ્વાનોને સુખ આપીને પોતાની તથા અન્યોની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૪)

प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीन्द्राग्निभ्यां त्वा जुष्टं प्रोक्षामि वायवे त्वा जुष्टं प्रोक्षामि विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यो जुष्टं प्रोक्षामि। यो ऽ अर्वन्तं जिघांꣳसति तमभ्यमीति वरुणः। परो मर्त्तः परः श्वा॥ ५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यः-જે परः-ઉત્તમ वरुणः-શ્રેષ્ઠ मर्त्तः-મનુષ્ય अर्वन्तम्-શીઘ્રગામી ઘોડાને जिघांसति-ફટકારવા વા દોડાવવા ઈચ્છે છે तम्-તેને अभि, अमीति-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે; જે परः-અન્ય મનુષ્ય श्वा-કૂતરાં સમાન વિદ્યમાન અર્થાત્ દુષ્કર્મી છે તેને જે રોકે છે, તે प्रजापतये-પ્રજાના પાલક બનવા માટે जुष्टम्-પ્રીતિપૂર્વક त्वा-તને प्रोक्षामि-સારી રીતે સિંચુ છું.

इन्द्राग्निभ्याम्-જીવ અને અગ્નિના માટે जुष्टम्-પ્રીતિપૂર્વક त्वा-તને प्रोक्षामि-સારી રીતે સિંચુ છું; वायवे-વાયુના માટે त्वा-તને जुष्टम्-પ્રીતિપૂર્વક त्वा-તને प्रोक्षामि-સારી રીતે સિંચુ છું; विश्वेभ्यः-સમસ્ત देवेभ्यः-વિદ્વાનોના માટે जुष्टम्-પ્રીતિપૂર્વક त्वा-તને प्रोक्षामि-સારી રીતે સિંચુ છું; सर्वेभ्यः-સમસ્ત देवेभ्यः-દિવ્ય પૃથિવી આદિ પદાર્થોને માટે जुष्टम्-પ્રીતિપૂર્વક त्वा-તને प्रोक्षामि-સારી રીતે સિંચુ છું અર્થાત્ અભિષિક્ત કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય ઉત્તમ પશુઓને મારવાની ઈચ્છા કરે તેનું સિંહ સમાન હનન કરવું જોઈએ

અને જે એ પશુઓની રક્ષા કરવા ઈચ્છે તેને સર્વની રક્ષા કરવા માટે અધિકારી બનાવવા જોઈએ. (૫)

अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहापां मोदाय स्वाहा सवित्रे स्वाहा वायवे स्वाहा विष्णवे स्वाहेन्द्राय स्वाहा बृहस्पतये स्वाहा मित्राय स्वाहा वरुणाय स्वाहा ॥ ६ ॥

પદાર્થ : જો મનુષ્ય अग्नये-અગ્નિને માટે स्वाहा-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, सोमाय-ઔષધિઓના શોધન માટે स्वाहा-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, अपाम्-જલોના मोदाय-આનંદને માટે स्वाहा-સુખદાયક ક્રિયા, सवित्रे-સૂર્યના માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, वायवे વાયુના માટે स्वाहा-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, विष्णवे-વ્યાપક વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિને માટે स्वाहा-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, इन्द्राय-જીવને માટે स्वाहा-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા, बृहस्पतये-મોટાના પાલક બૃહસ્પતિને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, मित्राय-મિત્રને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, वरुणाय-શ્રેષ્ઠ પુરુષને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા કરે તો શું શું સુખ પ્રાપ્ત ન થઈ શકે ? (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અગ્નિમાં સંસ્કારયુક્ત ઘી વગેરે હવિનો હોમ કરવામાં આવે છે, તે ઔષધિ, જલ, સૂર્યકિરણ, વાયુ અને વિદ્યુત્‌ને સારી રીતે શુદ્ધ કરીને, ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ, પ્રાણ, અપાન તથા પ્રજાઓની રક્ષા અને શ્રેષ્ઠોના સત્કારની નિમિત્ત બને છે.

કોઈપણ પદાર્થ સ્વરૂપથી નાશ પામતો નથી, પરંતુ અન્ય અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરીને સર્વત્ર પરિણામયુક્ત રહે છે.

એટલા માટે સુગંધ, માધુર્ય, પુષ્ટિકારક અને રોગનાશક આદિ ગુણોથી યુક્ત દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, ઔષધિ આદિની શુદ્ધિ દ્વારા સંસારનું સ્વાસ્થ્ય સિદ્ધ કરવું જોઈએ - નીરોગ બનાવવું જોઈએ. (૬)

हिङ्काराय स्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा क्रन्दते स्वाहा ऽ वक्रन्दाय स्वाहा प्रोथते स्वाहा प्रप्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा वल्गते स्वाहासीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृताय स्वाहा सꣳहानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहाऽ यनाय स्वाहा प्रायणा स्वाहा ॥ ७ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય हिंकाराय-'હિં' શબ્દ કરનાર માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, हिंकृताय-'હિં' શબ્દ બોલ્યો તેને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, क्रन्दते-બોલાવનાર તથા રડનાર માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, अवक्रन्दाय-નીચા સ્વરથી બોલનાર માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, प्रोथते-સર્વ કાર્યોમાં પરિપૂર્ણ માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, प्रप्रोथाय-અત્યંત પરિપૂર્ણને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, गन्धाय-સુગંધને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, घ्राताय-

સૂંઘવામાં આવેલને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, निविष्टाय-નિરંતર પ્રવેશ કરીને બેસે છે તેને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, उपविष्टाय-બેસનાર માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, संदिताय-ખંડિત થનાર માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, वल्गते-જનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, आसीनाय-બેઠેલાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, शयनाय-સૂતેલાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા स्वपते-નિદ્રાધીનને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, जाग्रते-જાગતાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, कूजते-અસ્પષ્ટ શબ્દ ઉચ્ચારણ કરનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, प्रबुद्धाय-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાનીને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, विजृम्भमाणाय-બગાસું ખાનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, विचृताय-વિશેષ રચના કરનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, संहानाय-સંઘાત - સમૂહને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, उपस्थिताय-સમીપસ્થને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, अयनाय-સર્વત્રથી વિજ્ઞાનને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, प्रायणाय-પ્રકૃષ્ટ વિજ્ઞાનને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા કરે છે, તે મનુષ્યોના દુઃખો નાશ પામે છે અને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞમાં જે હોમ કરે છે, તે સર્વ પ્રાણીઓ માટે સુખદાયક બને છે. (૭)

यते स्वाहा धावते स्वाहोद्द्रावाय स्वाहोद्द्रुताय स्वाहा शूकाराय स्वाहा शूकृताय स्वाहा निषण्णाय स्वाहोत्थिताय स्वाहा जवाय स्वाहा बलाय स्वाहा विवर्त्तमानाय स्वाहा विवृत्ताय स्वाहा विधून्वानाय स्वाहा विधूताय स्वाहा शुश्रूषमाणाय स्वाहा शृण्वते स्वाहेक्षमाणाय स्वाहेक्षिताय स्वाहा वीक्षिताय स्वाहा निमेषाय स्वाहा यदत्ति तस्मै स्वाहा यत् पिबति तस्मै स्वाहा यन्मूत्रं करोति तस्मै स्वाहा कुर्वते स्वाहा कृताय स्वाहा॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે यते-શ્રેષ્ઠ પ્રયત્ન કરનારને માટે स्वाहा-સત્કાર - ઉત્તમ ક્રિયા, धावते-દોડનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, उद्द्रावाय-ઉપર ચઢેલા ભીના પદાર્થ માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, उद्द्रुताय-ઉત્કર્ષને પ્રાપ્તને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, शूकाराय-શીઘ્રકારીને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, निषण्णाय-નિશ્ચયથી બેઠેલાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, उत्थिताय-ઉઠેલાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, जवाय-વેગને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, बलाय-બળને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, विवर्त्तमानाय-વિશેષતાથી વર્તમાનને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, विवृत्ताय-વિવિધતાથી વર્તમાનને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, विधून्वानाय-વિવિધ કંપનવાળાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, विधूताय-વિવિધ કંપને પ્રાપ્તને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, शुश्रुषमाणाय-સાંભળવા ઇચ્છુકને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, शृण्वते-સાંભળનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, ईक्षमाणाय-દર્શકને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, ईक्षिताय-અન્ય દ્વારા દુષ્ટને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, वीक्षिताय-વિશેષતાથી દર્શનને પ્રાપ્તને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, निमेषाय-નિમેષ - આંખ બંધ કરવાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, यत्-જે अत्ति-ખાય છે तस्मै-તેને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, यत्-જે पिबति-

પીવે છે तस्मै-તેને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, यत्-જે मूत्रम्-મૂત્ર करोति-કરે છે तस्मै-તેને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, कुर्वते-કાર્ય કરનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા તથા कृताय-કરેલા કાર્યને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા કરે છે; તેઓ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે પ્રયત્ન અને દોડવા આદિ ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરનાર તથા સુગંધિ આદિના હોમ આદિ કર્મો કરે છે, તે સર્વ ઈચ્છિત પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૮)

तत्स॑वि॒तुर्वरे॑ण्यं॒ भर्गो॑ दे॒वस्य॑ धीमहि। धियो॒ यो नः॑ प्रचो॒दया॑त्॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! सवितुः-સકલ જગતના ઉત્પાદક, देवस्य-સ્વ પ્રકાશ સ્વરૂપ, સર્વ કામના કરવા યોગ્ય, સર્વ સુખોના દાતા પરમાત્માનું જે वरेण्यम्-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય અતિ ઉત્તમ भर्गः-સર્વ દોષોનું દહન કરનાર તેજોમય શુદ્ધ સ્વરૂપ છે, તેને અમે धीमहि-ધારણ કરીએ છીએ, तत्-તેને તમે ધારણ કરો.

यः-જે પરમાત્મા नः-અમારાં સર્વની धियः-બુદ્ધિઓને प्रयोदयात्-ધર્માચરણમાં પ્રેરિત કરે છે, તે અન્તર્યામી પરમાત્માની સર્વએ ઉપાસના કરવી યોગ્ય છે.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ, નિત્ય, શુદ્ધ-બુદ્ધ-મુક્ત સ્વભાવયુક્ત અને સર્વના અન્તર્યામી પરમેશ્વરને છોડીને, તેના સ્થાનમાં અન્ય કોઈ પદાર્થની ઉપાસના અને સ્થાપના કદી પણ કરવી નહિ. કયા પ્રયોજનને માટે ?

જેથી તે અમારા દ્વારા ઉપાસના કરેલા, અમારી બુદ્ધિઓને અધર્માચરણથી હટાવીને ધર્માચરણમાં પ્રેરિત કરે, જેથી શુદ્ધ બનેલાં અમે લોકો તે પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને સાંસારિક અને પારમાર્થિક - આધ્યાત્મિક સુખનો ઉપભોગ કરીએ એ પ્રયોજન માટે. (૯)

हिर॑ण्यपाणिमू॒तये॑ सवि॒तार॒मुप॑ ह्वये। स चेत्ता॑ दे॒वता॑ प॒दम्॥ १०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! હું જે ऊतये-રક્ષા આદિ માટે हिरण्यपाणिम्-જેની સ્તુતિ કરવામાં हिरण्य-સૂર્ય આદિ તેજોમય પદાર્થ છે, જે पदम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય सवितारम्-સમસ્ત ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ કરાવનાર જગદીશ્વરને उपह्वये-ધ્યાન યોગથી બોલાવું છું. सः-તે चेत्ता-સમ્યક્ જ્ઞાનસ્વરૂપ હોવાથી સત્ય અને અસત્યનાં જ્ઞાપક देवता-ઉપાસના કરવા યોગ્ય ઈષ્ટ દેવ છે એ તેમ જાણો. (૧૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અહીંથી લઈને પૂર્વોક્ત [તત્સવિતુ..] મંત્રનું વિવરણ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

ચેતન સ્વરૂપ પરમાત્માની ઉપાસનાનો ત્યાગ કરીને અન્ય કોઈપણ જડ પદાર્થની ઉપાસના કદી પણ ન કરવી જોઈએ. ઉપાસના કરેલ તે જડ પદાર્થ હાનિ અથવા લાભ કરનાર તથા રક્ષા કરનાર હોતો નથી.

એટલા માટે સર્વ ચેતન જીવાત્માઓ ચેતન જગદીશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ. અન્ય જડતા આદિ ગુણોથી યુક્ત પદાર્થની નહિ. (૧૦)

देवस्य चेततो महीम्प्र सवितुर्हवामहे। सुमतिः सत्यराधसम्॥ ११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે सवितुः-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક, चेततः-ચેતન સ્વરૂપ, देवस्य-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય ઈશ્વરની ઉપાસના કરીને महीम्-મહાન્ सत्यराधसम्-સત્યને સિદ્ધ કરનારી सुमतिम्-ઉત્તમ બુદ્ધિને प्रहवामहे-ગ્રહણ કરીએ છીએ, તેમ તે પરમેશ્વરની ઉપાસના કરીને તે બુદ્ધિને તમે પ્રાપ્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ચેતનસ્વરૂપ ઈશ્વરે સમસ્ત સંસારને ઉત્પન્ન કરેલ છે, તેની આરાધના-ભક્તિથી સત્ય વિદ્યાથી યુક્ત બુદ્ધિને તમે પ્રાપ્ત કરી શકો છો, અન્ય જડ પદાર્થની ભક્તિથી નહિ. (૧૧)

सुष्टुतिः सुमतीवृधो रातिः सवितुरीमहे। प्र देवाय मतीविदे॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે सुमतीवृधः ઉત્તમ મતિની વૃદ્ધિ કરનાર, सवितुः-સર્વના ઉત્પાદક ઈશ્વરની सुष्टुतिम्-શ્રેષ્ઠ સ્તુતિ કરીને તેથી मतीविदे-જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરનારા અને देवाय-વિદ્યાદિ ગુણોની કામના કરનારા મનુષ્યોને માટે रातिम्-દાન प्रेमहे-સારી રીતે માગીએ છીએ, તેમ તે દાનને તમે પણ પરમાત્માથી માગો.

ભાવાર્થ : જ્યારે-જ્યારે પરમેશ્વરની પ્રાર્થના કરો, ત્યારે - ત્યારે પોતાના માટે અથવા અન્યોને માટે સર્વ શાસ્ત્રોના વિજ્ઞાનથી યુક્ત બુદ્ધિની જ યાચના કરવી જોઈએ, જેની પ્રાપ્તિથી જીવ સર્વ સુખનાં સાધનોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૨)

रातिः सत्पतिं महे सवितारमुप ह्वये। आसवं देववीतये॥ १३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું महे-મહાન देववीतये-દિવ્યગુણ અને વિદ્વાનોની પ્રાપ્તિ માટે रातिम्-દાતા, आसवम्-સર્વત્રથી ઐશ્વર્યયુક્ત सत्पतिम्-સત્ય વા જીવો વા પદાર્થોના પાલક सवितारम्-સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક ઈશ્વરની उपह्वये-ધ્યાન યોગથી સ્તુતિ કરું છું. તેમ તમે પણ તેની પ્રશંસા કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય ધર્મ, અર્થ, કામની સિદ્ધિ ઈચ્છે, તો પરમાત્માની ઉપાસના કરીને, તે ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે. (૧૩)

देवस्य सवितुर्मतिमासवं विश्वदेव्यम्। धिया भगं मनामहे॥ १४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે सवितुः-સકલ ઐશ્વર્યના દાતા, देवस्य-સકલ સુખદાયક પરમાત્માની સમીપથી मतिम्-બુદ્ધિ અને आसवम्-સકલ ઐશ્વર્યના હેતુને પ્રાપ્ત કરીને, તે धिया-બુદ્ધિથી विश्वदेव्यम्-સર્વ વિદ્વાનો માટે હિતકારી भगम्-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને मनामहे-માગીએ છીએ. તેમ તમે પણ માગો. (૧૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ, પરમેશ્વરની ઉપાસનાથી બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને, એથી પૂર્ણ ઐશ્વર્યને સિદ્ધ કરીને સર્વ પ્રાણીઓનું હિત સિદ્ધ કરવું જોઈએ. (૧૪)

अ॒ग्निꣳ स्तोमे॑न बोधय समिधा॒नो ऽ अम॑र्त्यम्। ह॒व्या दे॒वेषु॑ नो दधत्॥ १५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! समिधानः-પ્રદીપ્ત થયેલ अग्निम्-અગ્નિ देवेषु-દિવ્યગુણોથી યુક્ત વાયુ આદિમાં हव्या-આદાન-પ્રદાન યોગ્ય પદાર્થોને नः-અમારા માટે दधत्-ધારણ કરે છે; તે अमर्त्यम्-કારણરૂપથી મરણ ધર્મથી રહિત अग्निम्-અગ્નિને स्तोमेन-ઈંધન અર્થાત્ બળતણ સમૂહથી बोधय-પ્રદીપ્ત કર. (૧૫)

ભાવાર્થ : જો અગ્નિમાં સમિધાઓ નાખીને સુગંધી આદિ દ્રવ્યોનો હોમ કરવામાં આવે, તો એ અગ્નિ તેને વાયુ આદિમાં ફેલાવીને સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. (૧૫)

स ह॑व्य॒वाडम॑र्त्य ऽ उ॒शिग्दू॒तश्चनो॑हितः। अ॒ग्निर्धि॒या समृ॑ण्वति॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अमर्त्यः-મૃત્યુ-ધર્મરહિત हव्यवाट्-હોમ દ્રવ્યોને દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર, उशिक्-પ્રકાશમાન, दूतः-દૂતની સમાન વર્તનાર, चनोहितः-અન્નોને પ્રાપ્ત કરાવનાર अग्निः-અગ્નિ છે, सः-તે धिया-કર્મ અર્થાત્ તેના ઉપયોગી શિલ્પ આદિ કામથી समृण्वति-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ કાર્ય માટે મોકલવામાં આવેલ દૂત કાર્યસાધક હોય છે, તેમ સારી રીતે પ્રયુક્ત કરેલ અગ્નિ સુખનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરનારો બને છે. (૧૬)

अ॒ग्निं दू॒तं पु॒रो द॑धे हव्य॒वाह॒मुप॑ ब्रुवे। दे॒वाँ२ऽआ सा॑दयादि॒ह॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે इह-આ સંસારમાં देवान्-દિવ્ય ભોગોને आ-सादयात्-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે છે, તે हव्यवाहम्-ભોજન યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર दूतम्-દૂતની સમાન કાર્યસાધક अग्निम्-અગ્નિને पुरः-પ્રથમ दधे-ધારણ કરું છું; અને તમારા માટે તેનો उपब्रुवे-ઉપદેશ કરું છું કે, તમે પણ એમ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ દિવ્ય સુખોનો દાતા છે, તેમ વાયુ પણ છે, તેમ તમે જાણો. (૧૭)

अजी॑जनो॒ हि प॑वमा॒न सूर्यं॑ वि॒धारे॒ शक्म॑ना॒ पयः॑।
गोजी॑रया॒ रꣳह॑माणः॒ पुर॑न्ध्या॥ १८॥

પદાર્થ : હે पवमान-પવિત્ર કરનાર તથા અગ્નિની સમાન પવિત્ર મનુષ્ય ! તું જે અગ્નિ पुरन्ध्या-પુર-નગરને ધારણ કરનારી વિદ્યુત્‌થી रंहमाणः-જઈને सूर्यम्-સૂર્યમંડળને अजीजनः-ઉત્પન્ન કરે છે, તે અગ્નિને અને शक्मना-કર્મ વા गोजीरया-ગાય આદિ પશુઓની જીવન ક્રિયાથી पयः-જળને હું विधारे-વિશેષ રૂપથી ધારણ કરું हि-જ છું.

ભાવાર્થ : જો વિદ્યુત્ સૂર્યનું કારણ ન હોય, તો સૂર્યની ઉત્પત્તિ કેમ થાય ? જો સૂર્ય ન હોય, તો ભૂગોળનું ધારણ અને વર્ષાથી ગાય આદિ પશુઓના જીવન કેવી રીતે સંભવી શકે ? (૧૮)

वि॒भूर्मा॒त्रा प्र॒भूः पि॒त्राश्वो॑ऽसि हयो॒ऽस्यत्यो॑ऽसि मयो॒ऽस्यर्वा॑सि सप्ति॑रसि वा॒ज्य॒सि वृषा॑सि नृमणा॑ ऽ असि। ययु॒र्नामा॑सि शिशु॒र्नामा॑स्यादि॒त्याना॒ं पत्वा॒न्विहि॒

देवा॑ ऽ आशापाला ऽ ए॒तं दे॒वेभ्यो॒ऽश्वं॒ मेधा॑य॒ प्रोक्षि॑तꣳ रक्षते॒ह रन्ति॑रि॒ह र॑मतामि॒ह धृति॑रि॒ह स्वधृ॑ति॒ः स्वाहा॑॥ १९॥

પદાર્થ : હે आशापालाः-દિશાઓના પાલક देवाः-વિદ્વાનો ! તમે જે मात्रा-માતા સમાન વિદ્યમાન પૃથિવીથી विभूः-વ્યાપક, पित्रा-પિતારૂપ વાયુથી प्रभूः-સમર્થ अश्वः-માર્ગોનો વ્યાપ્ત કરનાર અગ્નિ असि-છે, हयः-ઘોડાઓની સમાન શીઘ્રગામી असि-છે, अत्यः-નિરંતર ગમનશીલ असि-છે, मयः-સુખકારી असि-છે, अर्वा-સર્વને કરનાર असि-છે, सप्तिः-મૂર્ત દ્રવ્યોથી સંબંધિત असि-છે, वाजी-વેગવાન असि-છે, वृषा-વર્ષા કરનાર असि-છે, नृमणाः સર્વ પ્રકારના વ્યવહારો પ્રાપ્ત કરાવનાર પદાર્થોમાં મનની સમાન શીઘ્રગામી असि-છે, ययुः-પ્રાપ્તિ વા ગતિ કરનાર તથા नाम-અભ્યાસને યોગ્ય असि-છે, शिशुः-વ્યવહારને યોગ્ય વિષયને સૂક્ષ્મ કરતી नाम-ઉત્તમ વાણી असि-છે, आदित्यानाम्-મહિનાઓને पत्वा-પાડનાર બનીને अन्विहि-પ્રાપ્ત થઈ રહેલ છે. एतम्-એ अश्वम्-વ્યાપક અગ્નિને स्वाहा-સત્ય ક્રિયાથી देवेभ्यः-દિવ્ય ભોગોને માટે તથા मेधाय-સંગમ, બુદ્ધિની પ્રાપ્તિ વા દુષ્ટોને મારવા માટે प्रोक्षितम्-જળથી સિક્ત કરીને रक्षत-રાખો; જેથી रन्तिः-રમણ, ઉત્તમ સુખમાં इह-અહીં रमताम्-રમણ કરે, इह-અહીં धृतिः-ધૈર્ય અને इह-અહીં स्वधृतिः-પોતાના પદાર્થોનું ધારણ થાય. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પૃથિવી આદિમાં વ્યાપક, સર્વ વેગવાનોમાં અત્યંત વેગવાન અગ્નિના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવને જાણે છે, તેઓ આ સંસારમાં સુખપૂર્વક વિહાર કરે છે. (૧૯)

काय॒ स्वाहा॒ कस्मै॒ स्वाहा॑ कत॒मस्मै॒ स्वाहा॒ स्वाहा॒धिमाधी॑ताय॒ स्वाहा॒ मन॑ः प्र॒जाप॑तये॒ स्वाहा॑ चित्तं विज्ञा॑ता॒यादि॑त्यै॒ स्वाहादि॑त्यै म॒ह्यै स्वाहादि॑त्यै सुमृ॒डीका॑यै॒ स्वाहा॒ सर॑स्वत्यै॒ स्वाहा॒ सर॑स्वत्यै पाव॒काये॒ स्वाहा॒ सर॑स्वत्यै बृ॒हत्यै॒ स्वाहा॑ पू॒ष्णे स्वाहा॑ पू॒ष्णे प्र॑प॒थ्या॒य॒ स्वाहा॑ पू॒ष्णे न॒रान्धि॑षाय॒ स्वाहा॒ त्वष्ट्रे॒ स्वाहा॒ त्वष्ट्रे॑ तु॒रीपा॑य॒ स्वाहा॒ त्वष्ट्रे॑ पु॒रु॒रूपा॑य॒ स्वाहा॒ विष्ण॑वे॒ स्वाहा॒ विष्ण॑वे निभूय॒पाय॒ स्वाहा॒ विष्ण॑वे शिपिवि॒ष्टाय॒ स्वाहा॑॥ २०॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યો - काय-સુખોના સાધક વિદ્વાનને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, कस्मै-સુખ સ્વરૂપને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, कतमस्मै-અનેકોની મધ્યમાં વર્તમાન મનુષ્યને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, आधिम्-સર્વત્રથી ધારણ કરનાર વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કરીને स्वाहा-સત્યક્રિયા, आधीताय-સર્વત્રથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, प्रजापतये-પ્રજાપાલકને માટે मनः-મનની स्वाहा-સત્યક્રિયા, विज्ञाताय-વિજ્ઞાનને માટે चित्तम्-સ્મૃતિ સાધક અર્થાત્ ચૈતન્ય મન-ચિત્ત અને अदित्यै-પૃથિવીને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, मह्यै-મહાન अदित्यै-વિનાશરહિત વાણીને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, सुमृडीकायै-ઉત્તમ સુખકારક अदित्यै-જનની માતાને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, सरस्वत्यै-નદીને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, पावकायै-પવિત્રકારક

सरस्वत्यै-વિદ્યાયુક્ત વાણીને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, बृहत्यै-મહાન सरस्वत्यै-વિદ્વાનોની વાણીને માટે તથા पूष्णे-પુષ્ટિકર્તા વાયુના માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, प्रपथ्याय-અત્યંત પથ્ય પાલન કરવા માટે તથા पूष्णे-પુષ્ટિને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, नरन्धिषाय-નરોને ઉપદેશ કરનાર पूष्णे-પોષક વિદ્વાનને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, त्वष्ट्रे-વિદ્યાના પ્રકાશને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, तुरीपाय-નૌકાઓના પાલક અને त्वष्ट्रे-વિદ્યાના પ્રકાશકને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, पुरूरूपाय-અનેકરૂપ અને त्वष्ट्रे-પ્રકાશક સૂર્યને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, विष्णवे-વ્યાપક અગ્નિને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, निभूयपाय-નિરંતર સ્વયં રક્ષિત બનીને અન્યોનું પાલન કરનાર विष्णवे-વ્યાપક અગ્નિને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, शिपिविष्टाय-આક્રોશ કરનારા ચેતન પ્રાણીઓમાં વ્યાપ્તિમાં પ્રવિષ્ટ विष्णवे-વ્યાપક ઈશ્વરને માટે स्वाहा-યજ્ઞરૂપ સત્યક્રિયા કરે છે તેઓ સુખી કેમ ન બને ? (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્વાનોના સુખ, અધ્યયન, અન્તઃકરણ, વિજ્ઞાન, વાણી અને વાયુ આદિની શુદ્ધિ માટે યજ્ઞ કર્મ કરે છે, તેઓ સુખી બને છે. (૨૦)

विश्वो॑ दे॒वस्य॑ ने॒तुर्मर्त्तो॑ वुरीत स॒ख्यम्।
विश्वो॑ रा॒यऽइ॑षुध्यति द्यु॒म्नं वृ॑णीत पु॒ष्यसे॒ स्वाहा॑॥ २१॥

પદાર્થ : જેમ विश्वः-સર્વ मर्त्तः-મનુષ્ય नेतुः-નાયક અર્થાત્ સર્વ વ્યવહારોની પ્રાપ્તિ કરાવનારા देवस्य-વિદ્વાનની सख्यम्-મિત્રતાનો वुरीत-સ્વીકાર કરે છે; અથવા જેમ विश्वः-સર્વ मर्त्यः-મનુષ્યો राये-ધનને માટે इषुध्यति-યાચના કરે છે અથવા બાણોને પોતાના ધનુષ્ય પર ધારણ કરે છે; તેમ स्वाहा-સત્ય-ક્રિયાથી पुष्यसे-પુષ્ટિને માટે द्युम्नम्-ધન વા યશનો वृणीत-સ્વીકાર કરે.

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્વાનો સાથે મિત્રતા કરીને, વિદ્યા અને યશને ગ્રહણ કરીને, શ્રીમાન અને કાન્તિમાન બનીને સુપથ્ય આચરણથી પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૨૧)

आ ब्रह्म॑न् ब्राह्म॒णो ब्र॑ह्मवर्च॒सी जा॑यता॒मा रा॒ष्ट्रे रा॑ज॒न्यः॒ शूर॑ऽइष॒व्यो॒ऽतिव्या॒धी म॑हार॒थो जा॑यतां॒ दोग्ध्री॑ धे॒नुर्वोढा॑न॒ड्वाना॒शुः सप्तिः॒ पुर॑न्धि॒र्योषा॑ जि॒ष्णू र॑थे॒ष्ठाः स॒भेयो॒ युवास्य यज॑मानस्य वी॒रो जा॑यतां निका॒मे नि॑कामे नः प॒र्जन्यो॑ वर्षतु॒ फल॑वत्यो न॒ ऽ ओष॑धयः पच्यन्तां योगक्षे॒मो नः॑ कल्पताम्॥ २२॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मन्-વિદ્યા આદિના કારણે સર્વથી મહાન પરમેશ્વર ! જેમ અમારા राष्ट्रे-રાજ્યમાં ब्रह्मवर्चसी-વેદ વિદ્યાથી પ્રકાશિત ब्राह्मणः-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા વિદ્વાન - બ્રાહ્મણ आजायताम्-ઉત્પન્ન થાય; इषव्यः-બાણ ચલાવવામાં ઉત્તમ ગુણવાન, अतिव्याधी-શત્રુઓનું અત્યંત તાડન કરનાર, महारथः-મહાન રથ વા વીરો વાળા, शूरः-નિર્ભય, राजन्यः-રાજપુત્ર - ક્ષત્રિય आ जायताम्-ઉત્પન્ન થાય.

दोग्ध्री-દૂધારી વા કામના પૂર્ણ કરનારી धेनुः-વાણી અથવા ગાય वोढा-ભાર વહન કરવામાં સમર્થ अनड्वान्-મહાન બળવાન બળદ, आशुः-શીઘ્રગામી सप्तिः-ઘોડા, पुरन्धिः-અનેક વ્યવહારોને ધારણ

કરનારી योषा-સ્ત્રી, रथेष्ठाः-રથ પર બેસનાર जिष्णुः-વિજેતા सभेयः-સભામાં ઉત્તમ સભ્ય युवा-યૌવનને પ્રાપ્ત યુવક પુરુષ आजायताम्-ઉત્પન્ન થાય.

अस्य, यजमानस्य-એ વિદ્વાનોનો સત્કાર અને સુખોનો સંગ કરનાર વા સુખદાયક રાજાના રાજ્યમાં वीरः-વિજ્ઞાનવાન, શત્રુઓને હરાવનાર વીર પુરુષ जायताम्-ઉત્પન્ન થાય,

नः-અમારા માટે निकामे निकामे-નિશ્ચિત રૂપથી પ્રત્યેક કામનામાં पर्जन्यः-વાદળ वर्षतु-વરસે, ओषधयः-ઔષધિઓ फलवत्यः-ઉત્તમ ફળવાળી नः-અમારા માટે पच्यन्ताम्-પાકે; नः-અમારા માટે योग-અપ્રાપ્ત વસ્તુની પ્રાપ્તિ, क्षेमः-પ્રાપ્તની રક્ષા कल्पताम्-સમર્થ બને એવું વિધાન કરો અર્થાત્ તેવા વ્યવહારને પ્રકટ કરાવો. (૨૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ ઈશ્વરની પ્રાર્થના સાથે એવું કર્મ કરવું જોઈએ કે, જેથી પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત અને શૂરવીર મનુષ્ય તથા સ્ત્રીઓ, સુખદાયક પશુ, સભ્ય મનુષ્ય, ઈચ્છાનુસાર વરસાદ, મધુર ફળોથી યુક્ત અન્ન તથા ઔષધિઓ થાય, તથા કામના પૂર્ણ થાય. (૨૨)

प्राणाय स्वाहापानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा॥ २३॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય प्राणाय-અંદરથી બહાર નીકળનાર પ્રાણ-વાયુને માટે स्वाहा-યોગયુક્ત ક્રિયા, अपानाय-બહારથી અંદર જનાર અપાનને માટે स्वाहा-યોગયુક્ત ક્રિયા, व्यानाय-વિવિધ અંગોમાં વ્યાપક વ્યાનને માટે स्वाहा-વૈદ્યક વિદ્યાથી યુક્ત વાણી, चक्षुषे-જોવાના નેત્રને માટે स्वाहा-પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી યુક્તવાણી, श्रोत्राय-સાંભળવાના કર્ણને માટે स्वाहा-આપ્ત ઉપદેશથી યુક્ત વાણી, वाचे-બોલવાની વાણીને માટે स्वाहा-સત્ય ભાષણયુક્ત વાણી તથા मनसे-વિચારનું નિમિત્ત અને સંકલ્પ વિકલ્પ આત્મક મનને માટે स्वाहा-વિચારયુક્ત વાણીનો પ્રયોગ કરે છે અર્થાત્ સારી રીતે ઉચ્ચારણ કરે છે; તેઓ વિદ્વાન બને છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલ જળ, ઔષધિ, વાયુ, અન્ન, પત્ર, પુષ્પ, ફળ, રસ અને કંદ આદિનું ભોજન કરે છે, તેઓ નીરોગ બનીને બુદ્ધિમાન, બળવાન, આરોગ્યવાન અને આયુષ્યમાન બને છે. (૨૩)

प्राच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा दक्षिणायै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहोर्ध्वायै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहार्वाच्यै दिशे स्वाहा॥ २४॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ प्राच्यै-જે પ્રથમ સૂર્યના સંયોગથી પ્રાપ્ત થનારી પૂર્વ दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-જ્યોતિઃશાસ્ત્રની વિદ્યાયુક્ત વાણી, अर्वाच्यै- જે નીચેથી સૂર્યમંડળને પ્રાપ્ત અર્થાત્ જ્યારે विषुवमान-રેખાથી ઉત્તરનો સૂર્ય નીચે ઉતરે છે તે નીચેની दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-પૂર્વોક્ત - જ્યોતિઃશાસ્ત્ર વિદ્યાયુક્ત

વાણી, दक्षिणायै-જે પૂર્વાભિમુખ પુરુષની જમણી બાજુ વિદ્યમાન દક્ષિણ दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-પૂર્વોક્ત વાણી अर्वाच्यै-નીચે વિદ્યમાન અર્થાત્ નીચેની दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી, प्रतीच्यै-જે સૂર્યમંડળની સામે અર્થાત્ ફરતી વેળાએ પ્રાપ્ત અને પૂર્વાભિમુખ પુરુષની પીઠ પાછળ પશ્ચિમ दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી, अर्वाच्यै-નીચેની दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી, उदीच्यै-પૂર્વાભિમુખ પુરુષની ડાબી બાજુની दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી, अर्वाच्यै-પૃથિવી ગોળામાં જે ઉત્તર દિશાની નીચે દિશા છે તે दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી, ऊर्ध्वायै-ઉપરની दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી, अर्वाच्यै-વિરુદ્ધ પ્રાપ્ત થનારી અર્થાત્ કદી પૂર્વ, કદી ઉત્તર, કદી દક્ષિણ, કદી પશ્ચિમ માનવામાં આવે છે તે दिशे-ઉપદિશાઓને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી, अर्वाच्यै-સર્વથી નીચેની दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણી અને अर्वाच्यै-પૃથિવી ગોળામાં જે પ્રત્યેક ખૂણે દિશાઓની નીચેની ઉપ-દિશાઓ છે તે दिशे-ઉપદિશાઓ માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણીનો ઉપદેશ કરે છે, તે સર્વત્રથી કુશળતાયુક્ત અર્થાત્ આનંદિત રહે છે. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ચાર મુખ્ય દિશાઓ છે, તેમ ચાર ઉપદિશાઓ પણ છે. એ જ રીતે ઉપરની અને નીચેની દિશાઓ છે. તે બધી મળીને દશ દિશાઓ થાય છે તેમ સમજવું જોઈએ.

એ દિશાઓ અનિશ્ચિત અને વ્યાપક સ્વરૂપવાળી છે. જ્યાં મનુષ્ય સ્વયં સ્થિત હોય, તે સ્થાનથી આરંભ કરીને સર્વ દિશાઓની કલ્પના કરવામાં આવે છે, તેમ તમે જાણો. (૨૪)

अ॒द्भ्यः स्वाहा॒ वा॒र्भ्यः स्वाहो॑द॒काय॒ स्वाहा॒ तिष्ठ॑न्तीभ्य॒ः स्वाहा॒ स्रव॑न्तीभ्य॒ः स्वाहा॒ स्यन्द॑मानाभ्य॒ः स्वाहा॒ कू॒प्या॒भ्य॒ः स्वाहा॒ सू॒द्या॒भ्य॒ः स्वाहा॒ धार्या॑भ्य॒ः स्वाहा॑र्ण॒वाय॒ स्वाहा॑ समु॒द्राय॒ स्वाहा॑ स॒रि॒राय॒ स्वाहा॑॥ २५॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય યજ્ઞોમાં સુગંધ આદિ દ્રવ્યોનો હવન કરવા માટે अद्भ्यः-સામાન્ય જલોને માટે स्वाहा-તેને શુદ્ધ કરવાની ક્રિયા, वार्भ्यः-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય અતિ ઉત્તમ જલોને માટે स्वाहा-શુદ્ધ કરવાની ક્રિયા, उदकाय -આર્દ્ર કરનાર વા સૂર્યના કિરણોથી ઉપર જતા જલોને માટે स्वाहा-શુદ્ધ કરનારી ક્રિયા, तिष्ठन्तीभ्यः-સ્થિર જલોને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા, स्रवन्तीभ्यः-શીઘ્ર વહેતાં જલોને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા, स्यन्दमानाभ्यः- મંદ ગતિએ વહેતાં જલોને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા, कूप्याभ्यः-કૂવાના જલોને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા, सूद्याभ्यः-સારી રીતે ભીંજાવે અર્થાત્ વર્ષાથી ભીંજાવે તે જલોને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા, धार्याभ्यः-ધારણ કરવા યોગ્ય જલોને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા, अर्णवाय-જેમાં પુષ્કળ જળ છે તે આકાશ - સાગરને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા,समुद्राय-જેમાં સર્વ નદીઓ, ઝરણાંઓ, સરોવર વગેરેનું જળ મળે છે તે પૃથિવી स्थ-સમુદ્રને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા અને सरिराय्-કામના કરવા યોગ્ય અતિ સુંદર જલોને માટે स्वाहा-ઉક્ત વાણીનો ઉપદેશ કરે છે, અર્થાત્ તેની રક્ષા કરનારી ક્રિયાનું વિધાન કરેલ છે, તે સર્વને સુખદાયક બને છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિમાં સુગંધી આદિ દ્રવ્યોનો હોમ કરે છે, તેઓ જળ આદિની શુદ્ધિ કરનારા પુણ્ય આત્માઓ હોય છે.

જળની શુદ્ધિથી જ સર્વની શુદ્ધિ થાય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૨૫)

वाता॑य॒ स्वाहा॑ धू॒माय॒ स्वाहा॒भ्राय॒ स्वाहा॑ मे॒घाय॒ स्वाहा॑ वि॒द्योत॑मानाय॒ स्वाहा॑ स्त॒नय॑ते॒ स्वाहा॑व॒स्फूर्ज॑ते॒ स्वाहा॒ वर्ष॑ते॒ स्वाहा॑व॒वर्ष॑ते॒ स्वाहो॒ग्रं वर्ष॑ते॒ स्वाहा॑ शी॒घ्रं वर्ष॑ते॒ स्वाहो॑द्गृह्ण॒ते स्वाहोद्गृ॑हीताय॒ स्वाहा॑ प्रुष्ण॒ते स्वाहा॑ शीकाय॒ते स्वाहा॒ प्रुष्वा॑भ्यः॒ स्वाहा॑ ह्रा॒दुनी॑भ्यः॒ स्वाहा॑ नीहा॒राय॒ स्वाहा॑॥ २६॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય वाताय-વહેતા વાયુને માટે स्वाहा-શુદ્ધિકારક યજ્ઞ ક્રિયા, धूमाय-ધુમાડાને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, अभ्राय-મેઘનાં કારણને માટે स्वाहा-યજ્ઞ ક્રિયા, मेघाय-મેઘને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, विद्योतमानाय-વિદ્યુત્‌ના પ્રવર્તક મેઘને વાદળને માટે स्वाहा-યજ્ઞ ક્રિયા, स्तनयते-ઉત્તમ શબ્દ કરતી વિદ્યુત્‌ને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, अवस्फूर्जते-એકબીજાના ઘર્ષણથી વજ્ર સમાન નીચે પડતી વિદ્યુત્‌ને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, वर्षते-વરસતા વાદળ માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, अववर्षते-નીચે ઉપર મળેલા વાદળાંથી નીચેવાળા વરસનાર વાદળાને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, उग्रम्-અતિ તીવ્ર वर्षते-વરસનાર વાદળ માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, शीघ्रम्-પવનવેગી वर्षते-ઝાપટાં વરસાવતા વાદળ માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, उद्गृह्णते-ઉપર જળને ધારણ કરનાર વાદળને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, उद्गृहीताय-ઉપર જળને ગ્રહણ કરનાર વાદળને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, प्रुष्णते-પુષ્ટિને પૂરણ કરનાર વાદળને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, शीकायते-સિંચન કરનાર - રહી-રહીને વરસનાર વાદળને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, प्रुष्वाभ्यः-પૂર્ણ ઘનઘોર વરસનાર વાદળને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, ह्रादुनीभ्यः-અવ્યક્ત ગડગડાટ ગાજતાં વાદળોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા અને नीहाराय-ઝાકળને માટે स्वाहा-તેની શુદ્ધિ કરનારી યજ્ઞક્રિયાનો પ્રયોગ કરે છે, તેઓ પ્રાણોની સમાન પ્રિય બને છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યથાવિધિ અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ કરે છે, તેઓ વાયુ આદિની શુદ્ધિ કરનાર બનીને સર્વનું હિત કરનાર બને છે. (૨૬)

अ॒ग्नये॒ स्वाहा॒ सोमा॑य॒ स्वाहेन्द्रा॑य॒ स्वाहा॑ पृथि॒व्यै स्वाहा॒न्तरि॑क्षाय॒ स्वाहा॑ दि॒वे स्वाहा॑ दि॒ग्भ्यः स्वाहाऽऽ शा॑भ्यः॒ स्वाहो॒र्व्यै दि॒शे स्वाहा॒र्वाच्यै दि॒शे स्वाहा॑॥ २७॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ अग्नये-જઠરાગ્નિને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, सोमाय-ઉત્તમ રસને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, इन्द्राय-જીવ, વિદ્યુત્ વા પરમ ઐશ્વર્યને માટે स्वाहा-ઉક્ત ક્રિયા, पृथिव्यै-પૃથિવીને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, अन्तरिक्षाय-આકાશને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, दिवे-પ્રકાશને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, दिग्भ्यः-પૂર્વાદિ દિશાઓને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા आशाभ्यः-વ્યાપક અર્થાત્ ઈશાન આદિ ઉપદિશાઓને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, उर्व्यै-અનેક રૂપ દર્શાવનારી અર્થાત્ વર્ષા, ગરમી, ઠંડી સમય અનુરૂપ વિભિન્ન પ્રતીતિ કરાવનાર दिशे-દિશાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા અને अर्वाच्यै-નીચેની દિશાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાનું વિધાન અવશ્ય કરવું જોઈએ. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ દ્વારા ઔષધિ આદિ પદાર્થો સુગંધ આદિ ચાર દ્રવ્યોને ફેલાવે છે,

તેઓ સંસારનું હિત કરનારા હોય છે. (૨૭)

नक्षत्रेभ्यः स्वाहा नक्षत्रियेभ्यः स्वाहाहोरात्रेभ्यः स्वाहार्द्धमासेभ्यः स्वाहा मासेभ्यः स्वाहऽऋतुभ्यः स्वाहार्त्तवेभ्यः स्वाहा संवत्सराय स्वाहा द्यावापृथिवीभ्याᳪं स्वाहा चन्द्राय स्वाहा सूर्याय स्वाहा रश्मिभ्यः स्वाहा वसुभ्यः स्वाहा रुद्रेभ्यः स्वाहादित्येभ्यः स्वाहा मरुद्भ्यः स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा मूलेभ्यः स्वाहा शाखाभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्यः स्वाहा पुष्पेभ्यः स्वाहा फलेभ्यः स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा ॥ २८ ॥

પદાર્થ : મનુષ્ય नक्षत्रेभ्यः-ક્ષીણ ન થનાર નક્ષત્રોને માટે स्वाहा-ઉત્તમ યજ્ઞ ક્રિયા, नक्षत्रियेभ्यः-નક્ષત્ર સમૂહને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, अहोरात्रेभ्यः દિવસ અને રાત્રિને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, अर्द्धमासेभ्यः અર્ધમાસ - સુદ-વદ પક્ષોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, मासेभ्यः-મહિનાઓને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, ऋतुभ्यः-વસંત આદિ છ ઋતુઓને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, आर्त्तवेभ्यः-ઋતુઓમાં ઉત્પન્ન તેના પદાર્થોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, संवत्सराय-વર્ષને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, द्यावापृथिवीभ्याम्-પ્રકાશ અને ભૂમિને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, चन्द्राय-ચન્દ્રલોકને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, सूर्याय-સૂર્ય લોકને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, रश्मिभ्यः-સૂર્યાદિના કિરણોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, वसुभ्यः પૃથિવી આદિ લોકોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા रुद्रेभ्यः-દશ પ્રાણોને માટે અથવા પ્રાણધારી જીવોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, आदित्येभ्यः-અવિનાશી કાલના અવયવોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, मरुद्भ्यः-વાયુઓને માટે स्वाहा-તેને અનુકૂળ ક્રિયા, विश्वेभ्यः-સમસ્ત देवेभ्यः-દિવ્યગુણોને માટે स्वाहा-સુંદર ક્રિયા, मूलेभ्यः-મૂળોને માટે स्वाहा-તે અનુસાર ક્રિયા, शाखाभ्यः-શાખાઓને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, वनस्पतिभ्यः-વનસ્પતિઓને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, पुष्पेभ्यः-ફૂલોને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, फलेभ्यः-ફળોને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા અને ओषधिभ्यः-ઔષધિઓને માટે स्वाहा-નિત્ય ઉત્તમ ક્રિયા અવશ્ય કરવી જોઈએ. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પ્રતિદિન સુગંધિત આદિ દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, તેને વાયુ અને કિરણો દ્વારા વનસ્પતિ, ઔષધિ, મૂળ, શાખા, પુષ્પ અને ફળ આદિમાં પ્રવિષ્ટ કરાવીને સર્વ પદાર્થોની શુદ્ધિ કરીને સ્વાસ્થ્યને પ્રાપ્ત કરે. (૨૮)

पृथिव्यै स्वाहान्तरिक्षाय स्वाहा दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा नक्षत्रेभ्यः स्वाहाद्भ्यः स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्यः स्वाहा परिप्लवेभ्यः स्वाहा चराचरेभ्यः स्वाहा सरीसृपेभ्यः स्वाहा ॥ २९ ॥

પદાર્થ : જો મનુષ્ય पृथिव्यै-વિસ્તૃત ધરતીને માટે स्वाहा-ઉત્તમ યજ્ઞક્રિયા, अन्तरिक्षाय-આકાશને

માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, दिवे-વિદ્યુત્‌ની શુદ્ધિ માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા सूर्याय-સૂર્યમંડળની ઉત્તમતાને માટે स्वाहा-તદનુરૂપ યજ્ઞક્રિયા, चन्द्राय-ચંદ્રમંડળને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, नक्षत्रेभ्यः-અશ્વિની આદિ નક્ષત્રોની ઉત્તમતાને માટે स्वाहा-ઉત્તમ યજ્ઞક્રિયા, अद्भ्यः-જલોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, ओषधीभ्यः-વડ આદિ વૃક્ષોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, वनस्पतिभ्यः-વનસ્પતિઓને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા परिप्लवेभ्यः-ગતિશીલ તારાઓને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, चराचरभ्यः-સ્થાવર જંગમ પદાર્થોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, सरीसृपेभ्यः-સર્પ આદિને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયાને સારી રીતે કરે તો, તેઓ સર્વને શુદ્ધ કરવામાં સમર્થ બને છે. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુગંધ આદિ દ્રવ્યોને પૃથિવી આદિમાં અગ્નિ દ્વારા ફેલાવીને, તેને વાયુ અને જળ દ્વારા ઔષધિઓમાં પ્રવિષ્ટ કરીને, સર્વને શુદ્ધ કરીને સર્વના આરોગ્યનું નિર્માણ કરે છે, તેઓ આયુની વૃદ્ધિ કરનારા હોય છે. (૨૯)

असवे स्वाहा वसवे स्वाहा विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहा गणश्रिये स्वाहा गणपतये स्वाहाभिभुवे स्वाहाधिपतये स्वाहा शूषाय स्वाहा सꣳसर्पाय स्वाहा चन्द्राय स्वाहा ज्योतिषे स्वाहा मलिम्लुचाय स्वाहा दिवा पतये स्वाहा॥ ३०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે असवे-પ્રાણોને માટે स्वाहा-ઉત્તમ યજ્ઞક્રિયા, वसवे-આ શરીરમાં વસનાર જીવને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, विभुवे-વ્યાપક વાયુને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, विवस्वते-સૂર્યને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, गणश्रिये-સમૂહોની શોભા રૂપ વિદ્યુત્‌ને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, गणपतये-પદાર્થોના સમૂહોના પાલક વાયુને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, अभिभुवे-સન્મુખ રહેનાર અગ્નિને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, अधिपतये-સર્વના સ્વામી રાજાને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, शूषाय-બળ અને તીક્ષ્ણતાને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, संसर्पाय-સરકીને ચાલનાર જીવને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, चन्द्राय-સુવર્ણને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, ज्योतिषे-જ્યોતિઃ અર્થાત્ સૂર્ય, ચંદ્ર અને તારાગણોના પ્રકાશને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, मलिम्लुचाय-ચોરને માટે स्वाहा-તેનો પ્રબંધ કરવાની ક્રિયા તથા दिवा, पतये-દિવસના પાલક સૂર્યને માટે स्वाहा-ઉત્તમ યજ્ઞ ક્રિયાને સારી રીતે યુક્ત કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણ આદિની શુદ્ધિ માટે અગ્નિમાં, પુષ્ટિકારક આદિ દ્રવ્યોનો હોમ કરવો જોઈએ. (૩૦)

मधवे स्वाहा माधवाय स्वाहा शुक्राय स्वाहा शुचये स्वाहा नभसे स्वाहा नभस्याय स्वाहेषाय स्वाहोर्जाय स्वाहा सहसे स्वाहा सहस्याय स्वाहा तपसे स्वाहा तपस्याय स्वाहांꣳहसस्पतये स्वाहा॥ ३१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ मधवे-મધુર આદિ ગુણોના ઉત્પાદક ચૈત્ર માસને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, माधवाय-મધુરપણાંમાં ઉત્તમ વૈશાખને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, शुक्राय-જલ આદિને પવનના વેગથી

નિર્મળ કરનાર જેઠને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, शुचये-વર્ષાથી ભૂમિ આદિને પવિત્ર કરનાર અષાઢને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, नभसे-શ્રેષ્ઠ ઘટાટોપ વાદળાંનો ગડગડાટ સંભળાવનાર શ્રાવણને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, नभस्याय-આકાશમાં વર્ષાથી પ્રસિદ્ધ ભાદરવા માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, इषाय-અન્નના ઉત્પાદક આસોને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, ऊर्जाय-બળ અને અન્નના ઉત્પાદક વા બળયુક્ત અન્ન અર્થાત્ ક્યારામાં પાકેલા બાજરા આદિ અન્નને પકાવીને પુષ્ટ કરનાર કારતકને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, सहसे-બળદાયક માગસરને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, सहस्याय-બળમાં શ્રેષ્ઠ પોષને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, तपसे-ઋતુ પરિવર્તનથી ધીરે-ધીરે ઠંડીની નિવૃત્તિ અને જીવોના શરીરમાં ગરમીની પ્રવૃત્તિ કરાવનાર મહા માસને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા, तपस्याय-જીવોના શરીરમાં ગરમીની પ્રવૃત્તિ કરાવનાર ઉત્તમ ફાગણ મહિનાને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયા અને अंहसस्पतये-મહિનાઓમાં શ્લિષ્ટ મળેલ, પાલક અધિક માસને માટે स्वाहा-યજ્ઞક્રિયાનું અનુષ્ઠાન કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રતિદિન અગ્નિહોત્ર આદિ યજ્ઞ અને યુક્ત આહાર-વિહાર કરે છે, તેઓ નીરોગી રહીને દીર્ઘાયુ પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૧)

वाजा॑य॒ स्वाहा॑ प्रस॒वाय॒ स्वाहा॑पि॒जाय॒ स्वाहा॒ क्रत॑वे॒ स्वाहा॒ स्व॒: स्वाहा॑ मू॒र्ध्ने स्वाहा॑ व्यश्नु॒विने॒ स्वाहान्त्या॑य॒ स्वाहान्त्या॑य भौव॒नाय॒ स्वाहा॒ भुव॑नस्य॒ पत॑ये॒ स्वाहाधि॑पतये॒ स्वाहा॑ प्र॒जाप॑तये॒ स्वाहा॑॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે वाजाय-અન્નને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, प्रसवाय-પદાર્થોની ઉત્પત્તિ કરનારને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, अपिजाय-ઘરને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા क्रतवे-બુદ્ધિ વા કર્મને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, स्वः-અત્યંત સુખને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, मूर्ध्ने-શિરની શુદ્ધિને માટે स्वाहा-ઉત્તમક્રિયા, व्यश्नुविने-વ્યાપ્ત વીર્યને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, आन्त्याय-વ્યવહારોના અન્તમાં થનાર વ્યવહાર [અથવા અન્તમાં વિદ્યમાન ઈશ્વર]ને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, आन्त्याय-અન્તમાં વિદ્યમાન, भौवनाय-લોકરૂપમાં વિદ્યમાન પ્રકૃતિને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા, भुवनस्य-સંસારના पतये-પાલક સ્વામી-ઈશ્વરને માટે स्वाहा-ઉત્તમક્રિયા, अधिपतये-સર્વના અધિષ્ઠાતા ઈશ્વરને માટે અર્થાત્ સર્વના શિક્ષા પ્રદાતાને માટે स्वाहा-ઉત્તમક્રિયા, प्रजापतये-સર્વ પ્રજાના પાલક પુરુષને માટે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાનો સારી રીતે સદા પ્રયોગ કરે. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અન્ન, સંતાન, ઘર, બુદ્ધિ અને મસ્તક આદિના શોધનથી સુખની વૃદ્ધિ માટે સત્ય ક્રિયા કરે છે, તેઓ પરમાત્માની ઉપાસના કરીને પ્રજાના અધિપતિ બને છે. (૩૨)

आयु॑र्य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ स्वाहा॑ प्रा॒णो य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ स्वाहा॑ऽपा॒नो य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ स्वाहा॑ व्या॒नो य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ स्वाहो॑दा॒नो य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ स्वाहा॑ समा॒नो य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ स्वाहा॒ चक्षु॑र्य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ स्वाहा॒ श्रोत्रं॑ य॒ज्ञेन॑ कल्पता॒ᳬ

स्वाहा वाग्यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा मनो यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहाऽऽत्मा यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा ब्रह्मा यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा स्वर्यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा पृष्ठं यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा यज्ञो यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा ॥ ३३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે એવી કામના કરો કે, અમારી आयुः-આયુ स्वाहा-શ્રેષ્ઠ ક્રિયા-યજ્ઞ અને यज्ञेन-પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોનો સત્કાર, સંગ, કર્મ અને વિદ્યા આદિના દાનની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત્ હોય, प्राणः-જીવનનો મૂલ પ્રાણવાયુ स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયા અને यज्ञेन-યોગાભ્યાસ આદિની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, अपानः-દુઃખને દૂર કરનાર અપાન વાયુ स्वाहा-ઉત્તમક્રિયાથી यज्ञेन-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, व्यानः-સર્વ સંધિઓમાં વ્યાપ્ત અર્થાત્ શરીરની ચેષ્ટાનો નિમિત્ત વ્યાન વાયુ स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, उदानः-બળ આપનાર ઉદાનવાયુ स्वाहा-ઉત્તમક્રિયાથી यज्ञेन-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, समानः-રસને સમાન કરનાર સમાનવાયુ स्वाहा-ઉત્તમક્રિયાથી यज्ञेन-યજ્ઞની = શ્રેષ્ઠ કામની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય.

चक्षुः-નેત્ર स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन સત્કર્મની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, श्रोत्रम्-જ્ઞાનેન્દ્રિયના ઉપલક્ષણ કર્ણ स्वाहा-ઉત્તમક્રિયાથી यज्ञेन-સત્કર્મની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, वाक्-વાણી આદિ કર્મેન્દ્રિયો स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन-શ્રેષ્ઠ કામની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, मनः-અન્તઃકરણ स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन-સત્કર્મની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય.

आत्मा-જીવ स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन-સત્કર્મની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય. ब्रह्मा-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन-યજ્ઞ આદિ સત્કર્મની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય.

ज्योतिः-જ્ઞાનનો પ્રકાશ स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन-યજ્ઞની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય.

पृष्ठम्-પ્રશ્ન-જિજ્ઞાસા તથા જે શેષ રહેલ છે તે स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી यज्ञेन-યજ્ઞની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય.

यज्ञः-વ્યાપક પરમેશ્વર स्वाहा-ઉત્તમક્રિયાથી यज्ञेन-પોતાની સાથે कल्पताम्-સમર્પિત હોય, એવી કામના છે. (૩૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જીવન પર્યન્ત શરીર, પ્રાણ, અન્તઃકરણ, ઈન્દ્રિયો અને સર્વોત્તમ સામગ્રી યજ્ઞને માટે સમર્પિત કરવી જોઈએ, જેથી તેઓ પાપરહિત અને કૃતકૃત્ય બનીને પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને લોક અને પરલોકમાં સુખ પ્રાપ્ત કરી શકે. (૩૩)

एकस्मै स्वाहा द्वाभ्याꣳ स्वाहा शताय स्वाहैकशताय स्वाहा व्युष्ट्यै स्वाहा स्वर्गाय स्वाहा ॥ ३४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે एकस्मै-એક અદ્વિતીય પરમાત્માને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, द्वाभ्याम्-બે અર્થાત્ કાર્ય અને કારણને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, शताय-અસંખ્ય પદાર્થોને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, एकशताय-એકસો એક પદાર્થો વા વ્યવહારોને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, व्युष्ट्यै-પ્રકાશિત થયેલા પદાર્થોની દાહ ક્રિયાને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા અને स्वर्गाय-સુખ પ્રાપ્ત કરવા પુરુષાર્થને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયાનો પ્રયોગ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ભક્તિ વિશેષથી અદ્વિતીય ઈશ્વરને તથા પ્રેમ અને પુરુષાર્થથી અસંખ્ય જીવોને પ્રસન્ન કરવા જોઈએ, જેથી સાંસારિક અને મોક્ષ સંબંધી સુખ પ્રાપ્ત થઈ શકે. (૩૪)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર] : આ અધ્યાયમાં વરુણ (૬), અગ્નિ (૧૬), વિદ્વાન્ (૨૧) રાજા-પ્રજા (૨૨), શિલ્પ (૧૯), વાણી (૨૦), ઘર (૩૨), અશ્વી (૧), ઋતુ (૩૧), હોતા (૩૩) આદિ ગુણોનાં વર્ણનથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति द्वाविंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ त्रयोविंशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે भूतस्य-ઉત્પન્ન કાર્યરૂપ જગતના अग्रे-પૂર્વ हिरण्यगर्भः-સૂર્ય, ચન્દ્ર, તારા આદિ જ્યોતિઓને ગર્ભમાં ધારણ કરનાર છે, તે સૂર્ય આદિ કારણરૂપ પદાર્થોમાં ગર્ભ સમાન વ્યાપક સ્તુતિ કરવા યોગ્ય समवर्त्तत-સારી રીતે વિદ્યમાન અને આ જગતના एकः-એક-અદ્વિતીય ઈશ્વર जातः-પ્રસિદ્ધ पतिः-સ્વામી आसीत्-છે.

सः-તે इमाम्-આ पृथिवीम्-વિસ્તીર્ણ ભૂમિ उत-અને द्याम्-સૂર્ય આદિ સૃષ્ટિને રચીને તેને दाधार-ત્રણેય કાળમાં ધારણ કરે છે; તે कस्मै-સુખસ્વરૂપ देवाय-સર્વ સુખોના દાતા પરમાત્માને માટે જેમ અમે हविषा-આત્મા આદિ સર્વ સ્વદાનથી તેની विधेम-સેવા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જ્યારે સૃષ્ટિ પ્રલયને પ્રાપ્ત થઈને પ્રકૃતિ રૂપ બની જાય છે [પ્રકૃતિમાં સ્થિત બને છે] તથા ફરી ઉત્પન્ન [કાર્યરૂપ] બને છે, તેના પહેલાં જે એક પરમાત્મા જાગતા રહે છે, તે સમયે સર્વ જીવ મૂર્છિતની સમાન હોય છે. તે કલ્પ [મિત કાલ] કાલના અન્તમાં પ્રકાશરહિત પૃથિવી આદિ અને પ્રકાશયુક્ત સૂર્ય આદિ સૃષ્ટિને રચીને તથા ધારણ કરીને, સર્વને કર્માનુસાર જન્મ આપીને, સર્વના નિર્વાહ માટે સર્વ પદાર્થોની રચના કરે છે, તે જ સર્વના ઉપાસ્ય દેવ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૧)

उपयामगृहीतोऽसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिः सूर्यस्ते महिमा। यस्तेऽहन्त्संवत्सरे महिमा सम्बभूव यस्ते वायावन्तरिक्षे महिमा सम्बभूव यस्ते दिवि सूर्ये महिमा सम्बभूव तस्मै ते महिम्ने प्रजापतये स्वाहा देवेभ्यः॥ २॥

પદાર્થ : હે ભગવન્ ! જગદીશ્વર ! જે આપ उपयामगृहीतः-યમ જે યોગાભ્યાસ સંબંધી કર્મો દ્વારા હૃદયાકાશમાં સાક્ષાત્ કરેલા असि-છો, તે जुष्टम्-પ્રીતિ વા સેવાપૂર્વક त्वा-આપને प्रजापतये-પ્રજાના પાલક રાજાની રક્ષા માટે હું गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું.

જે ते-આપની एषः-એ योनिः-જગતનું કારણ = પ્રકૃતિ છે, જે ते-આપનું सूर्यः-સૂર્યમંડળ महिमा-મહિમા રૂપ છે, જે ते-આપના अहन्-દિવસ અને संवत्सरे-વર્ષમાં નિયમ બંધન દ્વારા महिमा-મહિમાવંત सम्बभूव-સંભવિત છે, यः-જે ते-આપનો वायौ-વાયુ અને अन्तरिक्षे-અન્તરિક્ષમાં महिमा-મહિમા सम्बभूव-પ્રસિદ્ધ છે, यः-જે ते-આપનો दिवि-વિદ્યુત્ વા સૂર્યપ્રકાશ અને सूर्ये-સૂર્યમાં महिमा-મહિમા सम्बभूव-પ્રત્યક્ષ છે, तस्मै-તે महिम्ने મહિમા તથા प्रजापतये-પ્રજાપાલક તે આપને માટે અને देवेभ्यः-વિદ્વાનોને માટે स्वाहा-ઉત્તમ વિદ્યાયુક્ત બુદ્ધિને સર્વેએ ગ્રહણ કરવી જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરના મહિમાને આ સમસ્ત સંસાર પ્રકાશિત કરે છે, તેની ઉપાસનાને છોડીને કોઈ અન્યની અથવા તેના સ્થાને કોઈ અન્યની ઉપાસના ન કરવી જોઈએ.

જો કોઈ કહે કે, પરમેશ્વરની સત્તા-હોવામાં શું પ્રમાણ છે ? તો તેને એ ઉત્તર આપવો જોઈએ કે, આ જે સંસાર છે, તે સર્વ પરમેશ્વરને પ્રમાણિત કરી રહેલ છે. (૨)

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽइद्राजा जगतो बभूव।
यऽईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે यः-જે एक-એક इत-જ महित्वा-પોતાના મહિમાથી निमिषतः-નેત્ર આદિથી ચેષ્ટા કરનાર प्राणतः-પ્રાણીરૂપ, द्विपदः-બે પગા મનુષ્ય આદિ चतुष्पदः-ચોપગા ગાય આદિ अस्य-આ जगतः-સંસારના राजा-અધિષ્ઠાતા बभूव-છે.

જે अस्य-આ સંસારના ईशे-સર્વોપરી સ્વામી છે; તે कस्मै-આનંદસ્વરૂપ देवाय-કામના કરવા યોગ્ય ઈશ્વરની हविषा-ભક્તિ વિશેષથી विधेम-સેવા કરીએ છીએ, તેમ વિશેષ ભક્તિ આપ પણ કરો. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એક જ સમસ્ત સંસારના મહારાજાધિરાજ, સંપૂર્ણ જગતના રચયિતા, સકળ ઐશ્વર્યથી યુક્ત, મહાત્મા અને ન્યાયાધીશ છે, તેની ઉપાસનાથી ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષરૂપ ફળોને પ્રાપ્ત કરીને આપ સર્વ લોકો સંતુષ્ટ રહો. (૩)

उपयामगृहीतोऽसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिश्चन्द्रमास्ते महिमा। यस्ते रात्रौ संवत्सरे महिमा सम्बभूव यस्ते पृथिव्यामग्नौ महिमा सम्बभूव यस्ते नक्षत्रेषु चन्द्रमसि महिमा सम्बभूव तस्मै ते महिम्ने प्रजापतये देवेभ्यः स्वाहा॥ ४॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ उपयामगृहीतः-સત્કર્મરૂપ અર્થાત્ યોગાભ્યાસ આદિ ઉત્તમ કામથી સ્વીકૃત असि-છો, તે त्वा, जुष्टम्-આપને સેવાપૂર્વક प्रजापतये-પ્રજાપાલક રાજાની રક્ષા માટે હું गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું.

જે ते-આપના સંસારમાં एषः-આ योनिः જળ છે, જે ते-આપના સંસારમાં चन्द्रमाः-ચંદ્રલોક રૂપ महिमा-મહિમા છે, જે ते-આપનો यः-જે रात्रौ-રાત્રિ અને संवत्सरे-વર્ષમાં महिमा-મહિમા सम्बभूव-છે, હતો અને થશે; જે ते-આપની સૃષ્ટિમાં पृथिव्याम्-અન્તરિક્ષ અને ભૂમિમાં તથા अग्नौ-વિદ્યુત્‌માં महिमा-મહિમા सम्बभूव-છે, હતો અને થશે; જે ते-આપની સૃષ્ટિમાં यः-જે नक्षत्रेषु-કારણરૂપથી નાશરહિત લોક-લોકાન્તરોમાં તથા चन्द्रमसि-ચંદ્રલોકમાં महिमा-મહિમા सम्बभूव-છે, હતો અને થશે; તે ते-આપનો तस्मै-તે महिम्ने-મહિમા, प्रजापतये-પ્રજાપાલક રાજા અને देवेभ्यः-વિદ્વાનોને માટે स्वाहा-સત્ય આચરણયુક્ત યજ્ઞ-ક્રિયાનું અમે અનુષ્ઠાન કરીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જેના મહિમારૂપ સામર્થ્યથી સર્વ જગત્ વિરાજમાન છે, જેનો અનંત મહિમા છે, જેની સિદ્ધિમાં રચના-વિશેષ સર્વ જગત્ દૃષ્ટાન્તરૂપ છે, તે જ ઈશ્વરની સર્વ મનુષ્યોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૪)

युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि॥ ५॥

પદાર્થ : જે પુરુષો परि-સર્વત્રથી तस्थुषः-સ્થાવર પદાર્થોમાં चरन्तम्-વિદ્યુત્‌ની સમાન વિદ્યમાન અને પ્રાપ્ત, अरुषम्-જેમાં ઘાત થતા પ્રાણીઓનું શીઘ્ર મૃત્યુ થાય છે તે મર્મસ્થાનોની રક્ષા કરવા સ્થિત ब्रध्नम्-મહાન સર્વોપરિ વિરાજમાન પરમાત્માને પોતાના આત્માની સાથે युञ्जन्ति-યુક્ત કરે છે, તેઓ दिवि-સૂર્યમાં રહેલ रोचनाः-કિરણો અને પ્રકાશની સમાન रोचन्ते-પરમાત્મામાં પ્રકાશમાન બને છે. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પ્રત્યેક બ્રહ્માંડમાં સૂર્ય પ્રકાશિત થાય છે, તેમ સમસ્ત સંસારમાં પરમાત્મા પ્રકાશિત થાય છે.

જો યોગાભ્યાસથી અન્તર્યામી પરમાત્માને પોતાના આત્મામાં યુક્ત કરે છે, તેઓ સર્વત્રથી પ્રકાશિત થાય છે. (૫)

युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ શિક્ષકજનો काम्या-કામના કરવા યોગ્ય, हरी-હરણશીલ विपक्षसा-વિવિધ પ્રકારોથી સારી રીતે ગ્રહણ કરેલ शोणा-લાલ રંગથી યુક્ત धृष्णू-અતિ પુષ્ટ नृवाहसा-નરોના વાહક બે ઘોડાને रथे-યાનમાં - રથમાં युञ्जन्ति-જોડે છે; તેમ યોગીજનો अस्य-એ પરમેશ્વર વા જીવના મધ્યમાં ઇન્દ્રિયો, મન અને પ્રાણોને યુક્ત કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ મનુષ્ય સુશિક્ષિત ઘોડાઓથી યુક્ત યાન દ્વારા બીજા સ્થાનમાં શીઘ્ર ગતિ કરે છે, તેમજ વિદ્યા, સત્સંગ અને યોગાભ્યાસથી પરમાત્માને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

यद्वातोऽअपोऽअगनीगन्प्रियामिन्द्रस्य तन्वम्।
एतꣳस्तोतरनेन पथा पुनरश्वमावर्त्तयासि नः॥ ७॥

પદાર્થ : હે स्तोतः-સ્તુતિ કરનાર વિદ્વાન્ ! જેમ શિલ્પી લોકો इन्द्रस्य-વિદ્યુત્‌ના प्रियाम्-અતિ સુંદર तन्वम्-વિસ્તૃત શરીરને वातः-વાયુની સમાન પ્રાપ્ત કરીને यत्-જે કલાયંત્રથી યુક્ત ઘોડાઓ તથા अपः-જલોને अगनीगन्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ एतम्-એ अश्वम्-શીઘ્રગામી કલાયંત્રરૂપ ઘોડાઓને अनेन-ઉક્ત વિદ્યુત્‌રૂપ पथा-માર્ગથી આપ પ્રાપ્ત કરીને पुनः-ફરી नः-અમને आ-वर्त्तयासि-સારી રીતે ભ્રમણ કરાવે છે, તે આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે તમને સન્માર્ગથી લઈ જાય છે, તેના સંગથી તમે વાયુ અને વિદ્યુત્

આદિની વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરો. (૭)

वसवस्त्वाञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसा रुद्रास्त्वाञ्जन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसादित्यास्त्वाञ्जन्तु जागतेन छन्दसा। भूर्भुवः स्वर्लाजी३ञ्छाची३न्यव्ये गव्यऽएतदन्नमत्त देवाऽएतदन्नमद्धि प्रजापते॥ ८॥

પદાર્થ : હે प्रजापते-પ્રજાના રક્ષક રાજન્ ! वसवः-પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાન્ गायत्रेण-ગાયત્રી छन्दसा-છંદથી પ્રતિપાદિત અર્થના દ્વારા त्वाम्-આપની अञ्जन्तु-કામના કરે; रुद्राः-મધ્યમ કક્ષાના વિદ્વાન્ त्रैष्टुभेन-ત્રિષ્ટુપ छन्दसा-છંદથી પ્રકાશિત અર્થ દ્વારા त्वा-આપની अञ्जन्तु-કામના કરે; आदित्याः-ઉત્તમ કક્ષાના વિદ્વાન્ जागतेन-જગતી छन्दसा-છંદથી પ્રકાશિત સ્વચ્છંદ અર્થ દ્વારા त्वा-આપની अञ्जन्तु-કામના કરે; તે આપ एतत्-એ अन्नम्-અન્નને अद्धि-આરોગો.

હે देवाः-વિદ્વાનો ! તમે यव्ये-જવનાં ખેતરમાં ઉત્પન્ન અન્ન અને गव्ये-ગાયનાં દૂધ, દહીં આદિ ઉત્તમ પદાર્થોમાં મિશ્ર કરીને एतम्-એ अन्नम्-અન્નને अत्त-આરોગો.

लाजीन्-પોત-પોતાની કક્ષામાં ઘૂમનારા शाचीन्-પ્રકટ भूः-આ પ્રત્યક્ષ-ભૂલોક, भुवः-અન્તરિક્ષસ્થ લોક અને स्वः-પ્રકાશમાં સ્થિર સૂર્યાદિ લોકોને પ્રાપ્ત થાઓ. (૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો સાંગોપાંગ-અંગો-ઉપાંગો સહિત ચારેય વેદો મનુષ્યોને ભણાવે છે, તેઓ ધન્યવાદને યોગ્ય બને છે. (૮)

कः स्विदेकाकी चरति कऽउ स्विज्जायते पुनः।
किꣳस्विद्धिमस्य भेषजं किम्वावपनं महत्॥ ९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! અમે તમને પૂછીએ છીએ કે, कः स्वित्-કોણ એકલો વિચરે છે ? उ-અને कः स्वित्-કોણ पुनः-વારંવાર जायते-પ્રકટ - ઉત્પન્ન થાય છે ? हिमस्य-શીતનું भेजषम्-ઔષધ किम्-स्वित्-કયું ? અને महत्-મહાન - વિસ્તૃત आवपनम्-બીજ વાવવાનું સ્થાન किम्-કયું ?

ભાવાર્થ : આ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં કહેલ છે તેમ જાણવું જોઈએ. મનુષ્યોએ આમ પ્રશ્નો કરવા જોઈએ. (૯)

सूर्यऽएकाकी चरति चन्द्रमा जायते पुनः।
अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिरावपनं महत्॥ १०॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ મનુષ્યો ! सूर्यः-સૂર્ય एकाकी-કોઈની સહાય વિના પોતાની કક્ષામાં એકલો चरति-વિચરે છે, पुनः-ફરી એ સૂર્યના પ્રકાશથી चन्द्रमाः-ચંદ્રલોક પ્રકાશિત जायते-થાય છે, अग्निः-

અગ્નિ हिमस्य-શીતનું भेषजम्-ઔષધ છે, भूमिः-ભૂમિ महत्-મહાન आवपनम्-બીજ વાવવાનું ક્ષેત્ર-સ્થાન છે, તેમ તમે જાણો. (૧૦)

ભાવાર્થ : આ સંસારમાં સૂર્ય પોતાનાં આકર્ષણથી પોતાની કક્ષામાં રહે છે, તેના પ્રકાશ દ્વારા ચન્દ્રમા આદિ લોકો પ્રકાશિત થાય છે. અગ્નિની સમાન શીત નિવારક વસ્તુ અને પૃથિવી-ભૂમિની સમાન મહાન ક્ષેત્ર અન્ય કોઈ નથી, તેમ મનુષ્યોએ જાણવું જોઈએ. (૧૦)

का स्विदासीत्पूर्वचित्तिः किꣳस्विदासीद् बृहद्वयः।
का स्विदासीत्पिलिप्पिला का स्विदासीत्पिशङ्गिला॥ ११॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! અમે તમને પૂછીએ છીએ કે, का, स्वित्-કોણ पूर्वचित्तिः-પ્રથમ સ્મૃતિનો વિષય आसीत्-છે ? किम्, स्वित्-કોણ बृहत्-મહાન वयः-ઉડનાર પક્ષી आसीत्-છે ? का, स्वित्-કોણ पिलिप्पिला-વર્ષાથી ભીની, ચીકણી અને શોભાયમાન્ વસ્તુ आसीत्-તથા स्वीत्-કોણ पिशङ्गिला-પ્રકાશને ગળી જનાર વસ્તુ आसीत् છે ?

ભાવાર્થ : આ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં છે. જો કોઈ વિદ્વાનોને પ્રશ્નો ન કરે તો વિદ્વાન બની શકતા નથી. (૧૧)

द्यौरासीत्पूर्वचित्तिरश्वऽआसीद् बृहद्वयः।
अविरासीत्पिलिप्पिला रात्रिरासीत्पिशङ्गिला॥ १२॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ જનો ! पूर्वचित्तिः-પ્રથમ સ્મૃતિનો વિષય द्यौः-દિવ્ય ગુણ પ્રદાન કરનારી વર્ષા आसीत्-છે; बृहत्-મહાન वयः-ગતિ કરનાર -ઉડનાર अश्वः-અને માર્ગોને વ્યાપ્ત કરનાર પક્ષીની સમાન અગ્નિ आसीत्-છે; पिलिप्पिला-વર્ષાથી ભીની, ચીકણી અને શોભાયમાન अविः-અન્નાદિથી રક્ષા આદિ ઉત્તમ ગુણ પ્રકટ કરનારી પૃથિવી आसीत्-છે અને पिशङ्गिला-પ્રકાશને ગળી જનાર અર્થાત્ અંધકાર કરનારી रात्रिः-રાત્રિ आसीत्-છે; એમ તમે જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : હવન અને સૂર્ય આદિની અગ્નિના તાપથી સર્વગુણોથી સંપન્ન, અન્ન આદિ દ્વારા સંસારની સ્થિતિની નિમિત્તભૂતા વર્ષા હોય છે, તેથી ભૂમિ સર્વ રત્નોથી સંપન્ન બને છે, સૂર્ય રૂપી અગ્નિના કારણે જ પ્રાણીઓને સૂવા માટે રાત્રિ હોય છે. (૧૨)

वायुष्ट्वा पचतैरवत्वसितग्रीवश्छागैर्न्यग्रोधश्चमसैः शल्मलिर्वृद्ध्या। एष स्य राथ्यो वृषा षड्भिश्चतुर्भिरेदगन्ब्रह्माकृष्णश्च नोऽवतु नमोऽग्नये॥ १३॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! पचतैः-પરિપાક રૂપ પરિણામોથી वायुः-સ્થૂલ કાર્ય રૂપ વાયુ; छागैः-કાપવાની ક્રિયાઓથી असितग्रीवः-કાળી ચોટલીવાળો અગ્નિ, चमसैः-વાદળોથી न्यग्रोधः-વડ વૃક્ષ वृद्ध्या-વૃદ્ધિની

સાથે शल्मलिः-શીમળાનું વૃક્ષ त्वा-તારું अवतु-પાલન - રક્ષણ કરે.

જે एषः-એ राथ्यः-માર્ગોમાં ચાલવામાં કુશળ वृषा-સુખોની વર્ષા કરનાર स्यः-તે चतुर्भिः-ચાર षड्भिः-છ પગોથી इत्-જ त्वा-તને आ + अगन्-પ્રાપ્ત થાય.

જે अकृष्णः-અવિદ્યારૂપ અંધકારથી રહિત ब्रह्मा-ચારે વેદોના ઉત્તમ વિદ્વાન છે તે नः-અમને સર્વ ગુણોમાં अवतु-પ્રવિષ્ટ કરે, તે अग्नये-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન ચારે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાનને માટે नमः-અન્ન આપવું જોઈએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! વાયુ પ્રાણના દ્વારા, અગ્નિ પાચનના દ્વારા, સૂર્ય વર્ષાના દ્વારા, વૃક્ષ ફળ આદિના દ્વારા, ઘોડા આદિ ગતિ દ્વારા અને વિદ્વાન લોકો શિક્ષણથી તમારી રક્ષા કરે છે, તેને તમે જાણો અને વિદ્વાનોનો સત્કાર કરો. (૧૩)

सꣳशि॑तो र॒श्मिना॒ रथ॒: सꣳशि॑तो र॒श्मिना॒ हय॑:।
सꣳशि॑तो अ॒प्स्व॒सु॒जा ब्र॒ह्मा सोम॑पुरोगवः॥ १४॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યોથી रश्मिना-કિરણ સમૂહથી रथः-આનંદનું સાધન યાન-રથને संशितः-સારી રીતે સૂક્ષ્મ કારીગરી બનાવેલી रश्मिना-લગામની દોરી આદિથી हयः-ઘોડા संशितः-સારી રીતે ચાલે છે, अप्सु-પ્રાણોમાં अप्सुजाः-જે પ્રાણવાયુરૂપ સંચાર કરનાર પવન વા વરાળ सोम पुरोगवः-ઔષધિગણનો બોધ અને ઐશ્વર્યનો યોગ જેથી પ્રથમ પ્રાપ્ત થનાર છે તે ब्रह्मा-મહાન યોગી વિદ્વાનને संशितः-અતિ પ્રશંસિત કરવામાં આવે તો કયું સુખ ન મળે ? (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પદાર્થ વિજ્ઞાનથી વિદ્વાન્ બને છે, તેઓ અન્યોને વિદ્વાન બનાવીને પ્રશંસા પ્રાપ્ત કરે. (૧૪)

स्व॒यं वा॑जिस्त॒न्वं᳖ कल्पयस्व स्व॒यं य॑जस्व स्व॒यं जु॑षस्व।
म॒हिमा॒ ते॒ऽन्येन॒ न स॒न्नशे॑॥ १५॥

પદાર્થ : હે वाजिन्-જિજ્ઞાસુ ! તું स्वयम्-તારા પોતાનાં तन्वम्-શરીરને कल्पयस्व-સમર્થ બનાવ, स्वयम्-સ્વયં ઉત્તમ વિદ્વાનોનો यजस्व-સંગ કર અને स्वयम्-સ્વયં તેની जुषस्व-સેવા કર, જેથી ते-તારી महिमा-મહિમા અને પ્રતાપ अन्येन-બીજાની સાથે न-सन्नशे-નષ્ટ ન થાય. (૧૫)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ સ્વયં પ્રકાશરૂપ, સંગત અને સેવા કરનાર છે, તેમ જિજ્ઞાસુ સ્વયં પુરુષાર્થ યુક્ત હોય છે, તેનો મહિમા કદી નાશ થતો નથી. (૧૫)

न वाऽउ॑ऽए॒तन्म्रि॑यसे॒ न रि॑ष्यसि दे॒वाँ२ ऽइदे॑षि प॒थिभि॑: सु॒गेभि॑:।
यत्रास॑ते सु॒कृतो॒ यत्र॒ ते य॒युस्तत्र॑ त्वा दे॒वः स॑वि॒ता द॑धातु॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! यत्र-જ્યાં ते-તે યોગી વિદ્વાન્ सुकृतः-ધર્માત્મા आसते-બેસે છે અને સુખને ययुः-પ્રાપ્ત કરે છે.

यत्र-જ્યાં सुगेभिः-સુગમ पथिभिः-માર્ગોથી તું देवान्-દિવ્ય શ્રેષ્ઠ ગુણો વા વિદ્વાનોને एषि-પ્રાપ્ત કરે છે.

यत्र-જ્યાં एतत्, उ-પૂર્વોક્ત સર્વ છે અને જ્યાં સ્થિત થઈને તું न-म्रियसे-મરતો નથી અને न, वै, रिष्यसि-અન્યોનો નાશ કરતો નથી, तत्र-ત્યાં इत्-જ त्वा-તને सविता-સકળ જગતના ઉત્પાદક देवः-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ પરમેશ્વર दधातु-ધારણ અર્થાત્ સ્થાપન કરે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો પોતાના સ્વરૂપને જાણી લે, તો તેઓ અવિનાશીપણાને જાણી શકે. જો તેઓ ધર્મયુક્ત માર્ગથી ચાલે, તો ધર્માત્માઓના - પુણ્યકર્મ - કર્તાઓના આનંદને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. જો પરમાત્માની સેવા-ઉપાસના કરે, તો સત્ય માર્ગમાં જીવોને સ્થાપિત કરી શકે. (૧૬)

अग्निः पशुरासीत्तेनायजन्त सऽएतं लोकमजयद्यस्मिन्नग्निः स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैताऽअपः। वायुः पशुरासीत्तेनायजन्त सऽएतं लोकमजयद्यस्मिन्वायुः स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैताऽअपः। सूर्यः पशुरासीत्तेनायजन्त सऽएतं लोकमजयद्यस्मिन्त्सूर्यः स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैताऽअपः॥ १७॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! यस्मिन्-જે લોકમાં सः-તે अग्निः-અગ્નિ पशुः-જોવા યોગ્ય आसीत्-છે, तेन-તેનાથી યજમાન अयजन्त-યજ્ઞ કરે છે, તે રીતે તું યજ્ઞ કર. જેમ सः-તે વિદ્વાન एतम्-એ लोकम्-દર્શનીય લોકોને अजयत्-જીતે છે, તેમ તું એને જીત. જો तम्-તેને जेष्यसि-જીતશે તો તે अग्निः-અગ્નિ ते-તારા लोकः-દર્શન યોગ્ય भविष्यति-થશે. એથી તું एताः-એ યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલા अपः-જળનું पिब-પાન કર.

यस्मिन्-જે લોકમાં सः-તે वायुः-વાયુ पशुः-જોવા યોગ્ય आसीत्-છે, तेन-તેથી યજમાન अयजन्त-યજ્ઞ કરે છે, तेन-તેનાથી તું યજ્ઞ કર. જેમ सः-તે વિદ્વાન્ एतम्-એ વાયુમંડળમાં રહેવાને लोकम्-દર્શનીય લોકને अजयत्-જીતે છે, તેમ તું જીત. જો तम्-તેને जेष्यसि-જીતશે તો તે वायुः-વાયુ ते-તારા लोकः-દર્શનીય भविष्यति-બની જશે, એથી તું एताः-એ अपः-યજ્ઞથી શુદ્ધ કરેલા પ્રાણરૂપી વાયુનું पिब-પાન કર.

यस्मिन्-જે લોકમાં सः-તે सूर्यः-સૂર્યમંડળ पशुः-જોવા યોગ્ય आसीत्-છે तेन-તેથી યજમાન अयजन्त-યજ્ઞ કરે છે, જેમ सः-તે વિદ્વાન્ एतम्-એ સૂર્યમંડળમાં અધિષ્ઠિત लोकम्-લોકને अजयत्-જીતે છે, તેમ તું જીત. જો તું तम्-તેને जेष्यसि-જીતીશ તો सः-તે सूर्यः-સૂર્યમંડળ ते તારા लोकः-દર્શનીય भविष्यति-બની જશે, એથી તું एताः-યજ્ઞથી શુદ્ધિ કરેલા अपः-સંસારમાં વ્યાપ્ત સૂર્યપ્રકાશોનું पिब-

પાન કર. અર્થાત્ ગ્રહણ કર. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! સર્વ યજ્ઞોમાં અગ્નિ આદિને જ સર્વ લોકોએ પશુ નામથી જાણવા જોઈએ. યજ્ઞમાં પ્રાણીઓની હિંસા ન કરવી જોઈએ. તેમજ યજ્ઞમાં તે પ્રાણીઓ હોમવા યોગ્ય નથી. જે આ રીતે જાણીને સુગંધિત આદિ પદાર્થોને સારી રીતે શુદ્ધ કરીને અગ્નિમાં હોમે છે, [ત્યારે તે પદાર્થો] વાયુ અને સૂર્યને પ્રાપ્ત થઈને, વર્ષા દ્વારા ત્યાંથી પાછા ફરીને, ઔષધિ, પ્રાણ, શરીર અને બુદ્ધિને ક્રમથી પ્રાપ્ત થઈને સર્વ પ્રાણીઓને પ્રસન્ન કરે છે. આ યજ્ઞ કર્મને કરનારા લોકો પુણ્યના મહત્ત્વથી -કારણે પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને મહિમાવાળા અર્થાત્ પૂજ્ય કે સત્કાર યોગ્ય બની જાય છે. (૧૭)

प्राणाय स्वाहापानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा। अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥ १८॥

પદાર્થ : હે अम्बे-માતા ! अम्बिके-દાદી ! अम्बालिके-પરદાદી ! कश्चन-કોઈ अश्वकः-ઘોડાની સમાન શીઘ્રગામી મનુષ્ય જે काम्पीलवासिनीम्-સુખને પ્રાપ્ત કરનારા મનુષ્યને વસાવનારી सुभद्रिकाम्-અત્યંત કલ્યાણકારી લક્ષ્મીને ગ્રહણ કરીને ससस्ति-સૂએ છે; આળસુ બની જાય છે. તે मा-મને न नयति-વશમાં રાખતી નથી. તેથી હું प्राणाय-પ્રાણનાં પોષણને માટે स्वाहा-સત્યવાણી, अपानाय-દુઃખ દૂર કરવા માટે स्वाहा-સુશિક્ષિત વાણી, व्यानाय-સર્વ શરીરમાં વ્યાપ્ત થનાર પોતાના આત્માને માટે स्वाहा-સત્ય વાણી યુક્ત-ભાષણ કરું છું. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ માતા, દાદી અને પરદાદી પોતાના સંતાનોને ઉત્તમ શિક્ષા પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ તમારે પણ પોતાના સંતાનોને શિક્ષિત કરવા જોઈએ.

ધનનો એ સ્વભાવ છે કે, જ્યાં તે સંચય પામે છે - એકત્ર થાય છે, ત્યાં તે લોકોને નિદ્રાળુ, આળસુ અને નકામા-કર્મહીન બનાવી દે છે, તેથી ધન પ્રાપ્ત કરીને પણ પુરુષાર્થ જ કરવો જોઈએ. (૧૮)

गणानां त्वा गणपतिꣳहवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥ १९॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! અમે गणानाम्-ગણોની મધ્ય गणपतिम्-ગણોના પાલક त्वा-આપનો हवामहे-સ્વીકાર કરીએ છીએ. प्रियाणाम्-અતિ સુંદર પ્રિયજનોની મધ્ય प्रियपतिम्-અતિ સુંદર પ્રિયપતિ અર્થાત્ પાલક त्वा-આપની हवामहे-પ્રશંસા કરીએ છીએ, निधीनाम्-વિદ્યા આદિ પદાર્થોની પુષ્ટિ કરનારાઓની મધ્ય निधिपतिम्-વિદ્યા આદિ પદાર્થોના રક્ષક त्वा-આપનો हवामहे-સ્વીકાર કરીએ છીએ.

હે वसो-સર્વ ભૂતોમાં વાસ-સ્થાન પરમાત્મન્ ! આપ मम-મારા ન્યાયાધીશ બનો જે गर्भधम्-ગર્ભની સમાન સંસારને ધારણ કરનારી પ્રકૃતિને ધારણ કરનાર त्वम्-આપ आ, अजासि-જન્મ આદિ દોષ રહિત સારી રીતે પ્રાપ્ત થાવ છો, તે गर्भधम्-પ્રકૃતિના ધારણકર્તા આપને अहम्-હું आ, अजानि-

સારી રીતે જાણું. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વ જગતના રક્ષક, ઈષ્ટ પદાર્થોના વિધાન કર્તા, ઐશ્વર્યોના પ્રદાતા, પ્રકૃતિના સ્વામી અને સર્વ બીજોને પ્રકટ કરનાર છે, તે જગદીશ્વરની સર્વ લોકો ઉપાસના કરે. (૧૯)

ताऽउभौ चतुरः पदः सम्प्रसारयाव स्वर्गे लोके
प्रोर्णुवाथां वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु॥ २०॥

પદાર્થ : ताऽउभौ-હે રાજા અને પ્રજાજનો ! તમે उभौ-બન્ને तौ-રાજા અને પ્રજા - જેમ स्वर्गे-સુખમય लोके-જોવા યોગ્ય વ્યવહાર વા પદાર્થમાં चतुरः-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ એ ચારેય पदः-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થો છે તેને प्रोर्णुवाथाम्-પ્રાપ્ત કરો, તેમ એનો અમે અધ્યાપક અને ઉપદેશક બન્ને सम्प्रसारयाव-વિસ્તાર કરીએ.

જેમ रेतोधाः-આલિંગન અર્થાત્ બીજાને મળીને ધારણ કરનાર, वृषा-દુષ્ટોના સામર્થ્યના બંધક અર્થાત્ તેની શક્તિને રોકનાર, वाजी-વિજ્ઞાનવાન રાજા, પ્રજામાં रेतः-પોતાના પરાક્રમને સ્થાપિત કરે તેમ પ્રજા પણ રાજામાં પરાક્રમને दधातु-સ્થાપિત કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જો રાજા અને પ્રજા પિતા અને પુત્ર સમાન વર્તાવ કરે, તો ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ રૂપ ફળોની સિદ્ધિને યથાવત્ પ્રાપ્ત થાય.

જેમ રાજા પ્રજાઓનાં સુખ તથા બળની વૃદ્ધિ કરે, તેમ પ્રજાઓ પણ રાજાનાં સુખ અને બળની વૃદ્ધિ કરે. (૨૦)

उत्सक्थ्याऽअव गुदं धेहि समञ्जिं चारया वृषन्।
य स्त्रीणां जीवभोजनः॥ २१॥

પદાર્થ : હે वृषन्-શક્તિમાન રાજન્ यः-જે स्त्रीणाम्-સ્ત્રીઓના जीवभोजनः-પ્રાણોનું ભક્ષણ કરનાર અર્થાત્ વ્યભિચારી પુરુષ વા વ્યભિચારિણી સ્ત્રી હોય, તે પુરુષ અને સ્ત્રીને પકડીને-બાંધીને उत्सक्थ्याः-ઉપર પગ અને નીચે માથું રાખી ફટકારીને, પોતાની પ્રજામાં गुदम्-વિષય ક્રીડાને अव, धेहि-સમાપ્ત કર અર્થાત્ ઉત્તમ સુખને ધારણ કર અને अञ्जिम्-પ્રસિદ્ધ ન્યાયનો सम + चारय-સંચાર કર. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જે વિષયસેવનમાં ખેલનાર પુરુષ વા સ્ત્રીઓ વ્યભિચારને વધારે છે, તે પુરુષો અને સ્ત્રીઓને તીવ્ર દંડ આપીને શાસન કર. (૨૧)

यकासकौ शकुन्तिकाहलगिति वञ्चति।
आहन्ति गभे पसो निगल्गलीति धारका॥ २२॥

પદાર્થ : જે गभे-પ્રજામાં રાજા पसः-રાજ્યની રક્ષા કરતો નથી, તે धारका-સુખને ધારણ કરનારી પ્રજા निगल्गलीति-નિરંતર સુખથી અત્યંત ક્ષીણ થતી જાય છે; કારણ કે यका-જે असकौ-તે પ્રજા

शकुन्तिका-નાની ચકલીની સમાન નિર્બળ બની જાય છે. તેથી તે પ્રજાનો आहलक्-સર્વથી ખેતી કરેલી અર્થાત્ હળ ખેડેલી જમીન પર કર લેનાર રાજા इति-એવી રીતે वञ्चतीति-ઠગે છે. અર્થાત્ રાજા એ રીતે કર-ધન લે કે જેથી પ્રજાને સુખ પ્રાપ્ત થાય. (૨૨)

ભાવાર્થ : જો રાજા ન્યાયપૂર્વક પ્રજાની રક્ષા ન કરે અને પ્રજા પાસેથી કર લે, તો પ્રજા ક્રમશઃ ક્ષીણ બનતી જાય છે અને રાજા પણ નાશ પામે છે.

જો રાજા વિદ્યા અને વિનયથી પ્રજાનું સારી રીતે રક્ષણ કરે, તો રાજા અને પ્રજાની સર્વત્ર ઉન્નતિ થાય છે. (૨૨)

यकोऽसकौ शकुन्तकऽआहलगिति वञ्चति।
विवक्षतऽइव ते मुखमध्वर्यो मा नस्त्वमभिभाषथाः॥ २३॥

પદાર્થ : હે अध्वर्यो-યજ્ઞની સમાન શ્રેષ્ઠ આચરણ કરનાર રાજન્ ! त्वम्-તું नः-અમારી સામે मा, अभिभाषथाः-અસત્ય ન બોલ, विवक्षतः-મિથ્યા ભાષણ કરનારની સમાન ते-તારું मुखम्-મુખ मा-ન ચાલે. જો એ રીતે यकः-જો असकौ-તે રાજા કરશે शकुन्तकः-નિર્બળ પક્ષીની સમાન તે રાજા आहलक्-સર્વત્રથી હળ ચલાવેલ ખેતરની इति-સમાન न वञ्चति-પ્રજાથી વંચિત બનતો નથી. (૨૩)

ભાવાર્થ : રાજા કદી અસત્ય પ્રતિજ્ઞા અને કઠોર વચન બોલનાર ન હોવો જોઈએ તથા કોઈને ઠગે નહિ. જો રાજા અન્યાય કરે, તો સ્વયં પણ પ્રજા દ્વારા વંચિત બની અને ઠગાશે. (૨૩)

माता च ते पिता च तेऽग्रं वृक्षस्य रोहतः।
प्रतिलामीति ते पिता गभे मुष्टिमतꣳसयत्॥ २४॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જો ते-આપની माता-પૃથિવીની સમાન સહનશીલ માન કરનારી માતા, च-અને ते-આપના पिता-સૂર્ય સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત પાલક પિતા च-પણ वृक्षस्य-છેદન કરવા યોગ્ય સંસાર રૂપ વૃક્ષ રાજ્યની अग्रम्-મુખ્ય શ્રી શોભા વા લક્ષ્મી પર रोहतः-આરૂઢ થાય છે - પ્રાપ્ત કરે છે.

ते-આપના पिता-પિતા गभे-પ્રજામાં मुष्टिम्-મુટ્ઠીથી ધનને ગ્રહણ કરનાર રાજ્યને, ધન લઈને अतंसयत्-પ્રકાશિત કરે-અલંકૃત કરે તો હું इति-એ રીતે પ્રજાજન પણ प्र, तिलामि-સારી રીતે પ્રેમ કરું. (૨૪)

ભાવાર્થ : જો [રાજા અને રાણીરૂપ] માતા-પિતા પૃથિવી અને સૂર્ય સમાન ધૈર્ય અને વિદ્યાથી પ્રકાશિત થઈને, ન્યાયથી રાજ્યનું પાલન કરીને, ઉત્તમ લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને, પ્રજાને સુભૂષિત કરીને તથા પોતાના પુત્રને રાજનીતિથી સંપન્ન બનાવે, તે બન્ને રાજ્ય કરી શકે છે. (૨૪)

माता च ते पिता च तेऽग्रं वृक्षस्य क्रीडतः।
विवक्षतऽइव ते मुखं ब्रह्मन्मा त्वं वदो बहु॥ २५॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मन्-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા બ્રહ્મન્ ! જે ते-આપની माता-પૃથિવી સમાન માતા च-

અને જે ते-આપના पिता-સૂર્ય સમાન પિતા च-પણ वृक्षस्य-સંસાર રૂપ રાજ્યના મધ્યમાં अग्रे-વિદ્યા અને રાજ્યની શોભામાં क्रीडतः-વિહાર કરે છે; ते-આપના विवक्षत इव-બહુ બોલવાને ઇચ્છુક પુરુષનાં મુખની સમાન मुखम्-મુખ છે, તેથી त्वम्-તું बहु-मा वदः-બહુ બોલ નહીં.

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા સુશીલ, ધર્માત્મા, શ્રીમાન અને કુલીન હોય છે, તેના દ્વારા શિક્ષિત પુત્ર મિતભાષી-ઓછું બોલનાર બનીને યશ પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रापय गिरौ भारꣳ हरन्निव।
अथास्यै मध्यमेधताꣳ शीते वाते पुनन्निव॥ २६॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! તું गिरौ-પર્વત પર भारम्-ભારને हरन्-પહોંચાડનાર પુરુષની इव-સમાન एनाम्-એ રાજ લક્ષ્મીયુક્ત ઉત્તમ કક્ષાવાળી પ્રજાને ऊर्ध्वाम्-ઉન્નતિના उच्छ्रापय-શિખર પર પહોંચાડ અર્થાત્ ઉન્નતિ કર.

अथ-અને अस्यै-એ પ્રજાના मध्यम्-મધ્ય ભાગમાં લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને शीते-શીતળ वाते-પવનમાં पुनन्निव-ખેતી કરનારાઓની ક્રિયાથી જેમ અન્ન આદિ શુદ્ધ થાય વા પવનના યોગથી જળ સ્વચ્છ બને, તેમ આપ एधताम्-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જેમ કોઈ ભાર વહન કરનાર શિર પર અથવા પીઠ પર ભારને ઉપાડીને પર્વત પર ચઢીને તેના પર ભારને રાખી દે, તેમ રાજા લક્ષ્મીને ઉન્નત કરે.

અથવા જેમ ખેડૂત ભૂસા આદિથી અન્નને જુદું પાડીને તથા તેનું ભોજન કરીને વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ સત્ય ન્યાયથી સત્ય અને અસત્યને જુદા પાડીને ન્યાયકારી રાજા નિત્ય ઉન્નતિને પામે છે. (૨૬)

ऊर्ध्वमेनमुच्छ्रयताद् गिरौ भारꣳ हरन्निव।
अथास्य मध्यमेजतु शीते वाते पुनन्निव॥ २७॥

પદાર્થ : હે પ્રજાસ્થ વિદ્વાન્ ! આપ गिरौ-પર્વત પર भारम्-ભારને हरन्निव પહોંચાડનાર સમાન एनम्-એ રાજાને ऊर्ध्वम्-સર્વ વ્યવહારોમાં અગ્રગામી બનાવીને उच्छ्रयतात्-ઉન્નતિ યુક્ત કરો, अथ-એ પછી જેમ अस्य-એ રાજ્યના मध्यम्-મધ્યભાગ લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને शीते-શીતળ वाते-પવનમાં पुनन्निव-શુદ્ધ થતાં અન્ન આદિની સમાન एजतु-ઉત્તમ કર્મોમાં પ્રયત્ન કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય વાદળોમાં જળ ભારને લઈ જઈને, વર્ષા કરીને, સર્વને ઉન્નત કરે છે; તેમ પ્રજા રાજપુરુષોને ઉન્નત કરે અને અધર્માચરણથી ડરે. (૨૭)

यदस्याऽअꣳहुभेद्याः कृधु स्थूलमुपातसत्।
मुष्काविदस्या एजतो गोशफे शकुलाविव॥ २८॥

પદાર્થ : यत्-જે રાજા અને રાજપુરુષ अस्याः-આ अंहुभेद्याः-પાપ વા અપરાધનો વિનાશ કરનારી પ્રજાના कृधु-અલ્પ અને स्थूलम्-મહાન ઉત્તમ કર્મની उपातसत्-પ્રશંસા કરે છે; તે બન્ને अस्याः-એને

एजतः-કર્મ કરાવે છે; અને તે આપ गोशफे-ગાયની ખરીથી ભૂમિમાં થયેલ ખાબોચિયામાં शकुलाविव-પ્રસન્ન બે નાની માછલીઓની સમાન અને मुष्कौ-ઉંદરોની સમાન પ્રજા પાસેથી મેળવેલ કરની ચોરી કરતા કંપે છે.

ભાવાર્થ : જેમ પ્રીતિયુક્ત બે માછલીઓ નાનાં જળાશયમાં પણ નિવાસ કરે છે તેમ રાજા અને રાજપુરુષ થોડો કર મળે તો પણ ન્યાયપૂર્વક પ્રીતિથી વર્તન કરે. જો દુઃખછેદક પ્રજાના થોડા અને મહાન ઉત્તમ કર્મની પ્રશંસા કરે તો તેઓ પ્રજાને ઉપરક્ત કરીને પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિવાન બનાવે. (૨૮)

यद्देवासो ललामगुं प्रविष्टीमिनमाविषुः।
सक्थ्ना देदिश्यते नारी सत्यस्याक्षिभुवो यथा॥ २९॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! यथा-જેમ सत्यस्य સત્ય अक्षिभुवः-નેત્રની સામે પ્રકટ થયેલ પ્રત્યક્ષ વ્યવહારની મધ્યમાં વર્તમાન देवासः-વિદ્વાન્ લોકો सक्थ्ना-જાંઘ અથવા પોતાના શરીરનાં અંગથી नारी-સ્ત્રીની સમાન यत्-જે विष्टीमिनम्-વિશેષ ભીના કોમળ પદાર્થોવાળા ललामगुम्-ઈચ્છિત ફળને પ્રાપ્ત કરાવનાર ન્યાયને प्राविषुः-પ્રાપ્ત કરે છે; વા જેમ આપ્ત વિદ્વાન્ સત્યનો જ देदिश्यते-નિરંતર ઉપદેશ કરે, તેમ આપ આચરણ કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જેમ શરીરનાં અંગોથી સ્ત્રી અને પુરુષને ઓળખી શકાય છે; તેમ પ્રત્યક્ષ આદિ પ્રમાણોથી સત્ય જાણી શકાય છે. તે સત્યથી જેમ વિદ્વાન્ લોકો પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય દયા અને કરુણાના ભાવને - કોમળ સ્વભાવને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ અન્ય રાજા અને પ્રજાના સ્ત્રી-પુરુષો વિદ્યાથી વિનયને પ્રાપ્ત કરીને સુખની કામના કરે. (૨૯)

यद्धरिणो यवमत्ति न पुष्टं पशु मन्यते।
शूद्रा यदर्यजारा न पोषाय धनायति॥ ३०॥

પદાર્થ : यत्-જે રાજા हरिणः-હરણ જેમ यवम्-ખેતરમાં ઊગેલા જવ આદિને अत्ति-ખાય છે; તેમ पुष्टम् पशु-પ્રજાને न, मन्यते-માનતો નથી અર્થાત્ પ્રજાને પુષ્ટ કરતો નથી, તે यत्-જે अर्य्यजारा-સ્વામી વા વૈશ્યકુળને અવસ્થાથી વૃદ્ધ કરનારી દાસી शूद्रा-શૂદ્રની સ્ત્રીની સમાન पोषाय-પુષ્ટિને માટે न-धनायति-કદી ધનવાન થતો નથી. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે રાજા પશુની સમાન વ્યભિચારમાં રાચીને પ્રજાની પુષ્ટિ કરતો નથી, તે ધનાઢ્ય શૂદ્રા વ્યભિચારિણી દાસીની સમાન શીઘ્ર રોગી બનીને તથા પુષ્ટિનો નાશ કરીને, ધનહીનતાના કારણે દરિદ્ર બનીને મરી જીય છે, એટલા માટે રાજા કદીપણ ઈર્ષા અને વ્યભિચાર કરે નહીં. (૩૦)

यद्धरिणो यवमत्ति न पुष्टं बहु मन्यते।
शूद्रो यदर्यायै जारो न पोषमनु मन्यते॥ ३१॥

પદાર્થ : यत्-જે शूद्रः-મૂર્ખકુળમાં ઉત્પન્ન મનુષ્ય अर्य्यायै-સ્વામી વા વૈશ્યની સ્ત્રીનો जारः-જાર અર્થાત્ વ્યભિચારથી આયુનો નાશ કરનાર છે, તે જેમ पोषम्-પુષ્ટિને न + अनु + मन्यते-માનતો નથી; વા यत्-જે રાજા हरिणः-પશુ અર્થાત્ હરણની સમાન यवम्-ઊગેલા જવ આદિને अत्ति-ખાય છે, તેમ पुष्टम्-ધન, સંતાન, સ્ત્રી, સુખ, ઐશ્વર્ય આદિથી પુષ્ટ પોતાની પ્રજાને बहु-અધિક न + मन्यते-માનતો નથી, તે સર્વત્રથી ક્ષીણ, નષ્ટ અને ભ્રષ્ટ બને છે. (૩૧)

ભાવાર્થ : જો રાજા અને રાજપુરુષ પરસ્ત્રીગમન અને વેશ્યાગમન કરવા માટે પશુઓની સમાન આચરણ કરે છે, તેને સર્વ વિદ્વાનો શૂદ્રની સમાન માને છે.

જેમ શૂદ્ર શ્રેષ્ઠકુળમાં વ્યભિચારી બનીને સર્વને વર્ણશંકર બનાવી દે છે, તેમ બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય અને વૈશ્ય વગેરે શૂદ્રકુળમાં વ્યભિચાર કરીને તથા વર્ણસંકરતાનું કારણ બનીને નાશ પામે છે. (૩૧)

दधिक्राव्णोऽअकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभि नो मुखा करत्प्र णऽआयूंꣳषि तारिषत्॥ ३२॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ હું दधिक्राव्णः-ધારણ અને પોષણ કરનારાઓને, वाजिनः-અત્યંત વેગવાન, जिष्णोः-જયશીલ, अश्वस्य-શીઘ્રગામી ઘોડાની इव-સમાન વીર્ય-પરાક્રમની રક્ષા अकारिषम्-કરું છું; તેમ આપ नः-અમારા सुरभि-પ્રશસ્ત સુગંધીથી યુક્ત मुखा-મુખોની સમાન વીર્ય-પરાક્રમની રક્ષા प्रकरत्-કરો; नः-અમારી आयूंषि-આયુઓને तारिषत्-તેની અવધિથી પાર કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ ઘોડાના શિક્ષક-અશ્વપાલ ઘોડાઓને વીર્ય રક્ષાના નિયમથી બળવાન તથા યુદ્ધમાં વિજય કરાવનાર બનાવે છે; તેમજ અધ્યાપક અને ઉપદેશક બાળકો અને કન્યાઓને પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યનાં સેવનથી વિદ્વાન્ અને વિદુષી બનાવીને, શરીર અને આત્માનાં બળને માટે, પ્રવૃત્ત કરીને દીર્ઘાયુ અને યુદ્ધ-નિપુણ બનાવે. (૩૨)

गायत्री त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पङ्क्त्या सह।
बृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा॥ ३३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે વિદ્વાન્ पङ्क्त्या-વિસ્તૃત ક્રિયારૂપ પંક્તિ છંદની सह-સાથે गायत्री ગાયકની રક્ષા કરનારી ગાયત્રી, त्रिष्टुप्-આધ્યાત્મિક, આધિભૌતિક અને આધિદૈવિક એ ત્રણેય સુખોને સ્થિર રોકનારી ત્રિષ્ટુપ, जगती-જગતની સમાન વિસ્તીર્ણ જગતી, अनुष्टुप्-દુઃખોને રોકનારી અનુષ્ટુપ્, उष्णिहा-ઉષાઓથી સ્નેહ કરનારી ઉષ્ણિક્ની સાથે बृहती-મહાન અર્થવાળી બૃહતી અને ककुप्-લાલિત્યથી યુક્ત ઋચાથી सूचीभिः-સોયથી જેમ વસ્ત્ર સીવવામાં આવે છે, તેમ त्वा-તને शम्यन्तु-શાન્તિયુક્ત કરે વા સર્વ વિદ્યાઓનો બોધ કરાવે તેનું સેવન કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ જન ગાયત્રી આદિ છંદોના અર્થ બતાવીને મનુષ્યોને વિદ્વાન્ બનાવે છે; તથા સોય દ્વારા ફાટેલા વસ્ત્રોની સમાન ભિન્ન મતોને અન્વય = સમાન ગુણોના આધાર પર જોડે છે અર્થાત્

એકમતમાં સ્થાપિત કરે છે, તે સંસારનું કલ્યાણ કરનારા હોય છે. (૩૩)

द्विपदा याश्चतुष्पदास्त्रिपदा याश्च षट्पदाः।
विच्छन्दा याश्च सच्छन्दाः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा॥ ३४॥

પદાર્થ : જે વિદ્વાન્ सूचीभिः-સંધિઓને જોડનારી ક્રિયાઓથી याः-જે द्विपदाः-બે પદો-ચરણોવાળી, याः-જે चतुष्पदाः-ચાર પદોવાળી, याः-જે त्रिपदाः-ત્રણ પદોવાળી याः , च-અને જે षट्पदाः છ પદોવાળી याः-જે विच्छन्दाः-વિવિધ છંદોવાળી याः, च-અને જે सच्छन्दाः-સમાન છંદોવાળી ઋચાઓને त्वा-તને ગ્રહણ કરાવીને शम्यन्तु-શાન્તિ અને સુખને પ્રાપ્ત કરાવે, તેનું નિત્ય સેવન કર. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ મનુષ્યોને બ્રહ્મચર્યના નિયમ દ્વારા વીર્યને પ્રાપ્ત કરાવીને, તેને નીરોગ, જિતેન્દ્રિય અને વિષયાસક્તિથી રહિત કરીને ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં ચલાવે છે, તેઓ સર્વના પૂજ્ય બને છે. (૩૪)

महानाम्न्यो रेवत्यो विश्वा आशाः प्रभूवरीः।
मैघीर्विद्युतो वाचः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा॥ ३५॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! सूचीभिः-સંધાન કરનારી ક્રિયાઓ-આચરણોથી याः-જે महानाम्न्यः-મહાન નામ-કીર્તિવાળી, रेवत्यः-અનેક પ્રકારના ધનથી યુક્ત, प्रभूवरीः-પ્રભુતાથી યુક્ત, विश्वाः-સમસ્ત आशाः-દિશાઓની સમાન मैघी-મેઘ સંબંધી विद्युतः-વિદ્યુતોની સમાન वाचः-વાણીઓ त्वा-તને शम्यन्तु-શાન્તિ યુક્ત કરે, તેને તું ગ્રહણ કર. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેની વાણીઓ દિશાઓની સમાન સમસ્ત વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અને વાદળાંઓ સ્થિત વિદ્યુત્‌ની સમાન સંપૂર્ણ અર્થોને પ્રકાશિત કરનારી છે, તે લોકો શાન્તિપૂર્વક જિતેન્દ્રિયત્વને પ્રાપ્ત કરીને મહા યશસ્વી બને છે. (૩૫)

नार्यस्ते पत्न्यो लोम विचिन्वन्तु मनीषया।
देवानां पत्न्यो दिशः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा॥ ३६॥

પદાર્થ : હે વિદુષી અધ્યાપિકા ! જે કુમારીઓ मनीषया-તીક્ષ્ણ બુદ્ધિથી ते-તારી लोम-અનુકૂળ વચન વા આજ્ઞાને विचिन्वन्तु-સંચિત કરે છે, તે देवानाम्-વિદ્વાનોની - પંડિતોની नार्य्यः-પત્નીઓ બનીને सूचीभिः-જોડવાની ક્રિયાઓ અર્થાત્ આચરણોથી दिशः-દિશાઓની સમાન શુદ્ધ વિદુષીઓ બને છે, તે त्वा-તને शम्यन्तु-શાન્તિ અને જ્ઞાન આપે.

ભાવાર્થ : જે કન્યાઓ પ્રથમ આયુમાં સોળથી ચોવીસ વર્ષ સુધી બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક [અનેક] વિદ્યાઓ અને સુશિક્ષાઓને પ્રાપ્ત કરીને પોતાની સમાન વિદ્વાનોની પત્નીઓ બને છે, તે દિશાઓની સમાન સુપ્રકાશિત કીર્તિવાળી બને છે. (૩૬)

रजता हरिणीः सीसा युजो युज्यन्ते कर्मभिः।
अश्वस्य वाजिनस्त्वचि सिमाः शम्यन्तु शम्यन्तीः॥ ३७॥

પદાર્થ : જેમ સ્વયંવરથી વિવાહ કરેલી સ્ત્રીઓ वाजिनः-પ્રશસ્ત બળયુક્ત, अश्वस्य-ઉત્તમ ગુણોમાં વ્યાપ્ત પતિની त्वचि-ત્વચામાં સંયુક્ત બને છે, [અર્થાત્ युज्यन्ते-પતિને વસ્ત્ર ઓઢાડવામાં આદિ સેવામાં સંયુક્ત બને છે.] તેમ कर्मभिः-ધર્મયુક્ત આચરણો - ક્રિયાઓથી रजताः-અનુરક્ત અર્થાત્ પ્રીતિથી પ્રાપ્ત થયેલી हरिणीः-મનનું પ્રશસ્ત હરણ કરનારી, सीसाः-પ્રેમથી બાંધનારી, युजः-સ્થિર ચિત્તથી કામ કરનારી शम्यन्तीः-શાન્તિને પ્રાપ્ત કરનારી વા કરાવનારી सिमाः-પ્રેમથી બંધાયેલી સ્ત્રી પોતાના હૃદયથી પ્રિય પતિઓને પ્રાપ્ત કરીને शम्यन्तु-આનંદ પ્રાપ્ત કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સ્ત્રી અને પુરુષ સુશિક્ષિત બનીને, સ્વયંવર કરીને, સ્વેચ્છાથી પરસ્પર પ્રેમયુક્ત બનીને, વિવાહ કરે છે, તે કલ્યાણમય સૌંદર્ય, ગુણ, સ્વભાવથી યુક્ત સંતાનોને જન્મ આપીને સદા આનંદિત રહે છે. (૩૭)

कुविदङ्ग यवमन्तो यवञ्चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय।
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नमऽउक्तिं यजन्ति॥ ३८॥

પદાર્થ : હે अङ्ग-મિત્ર कुवित्-અનેક વિજ્ઞાનથી યુક્ત તું इहेह-એ વિદ્યા વ્યવહારમાં एषाम्-એ અધ્યાપક મનુષ્યોનાં यथा-જેમ यवमन्तः-બહુ જ જવ આદિ અન્નયુક્ત ખેડૂત यवम्-જવ વગેરે ધાન્યોને ભૂસા આદિથી वियूय-જુદા કરવા चित्-અને अनुपूर्वम्-ક્રમથી दान्ति-કાપણી કરે છે; ये-જે અધ્યાપકો बर्हिषः-જલ અને नमउक्तिम्-ભોજનના વચનનો यजन्ति-સ્વીકાર કરે છે, તેનો भोजनानि-ભોજન આદિથી कृणुहि-સત્કાર કર. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે અધ્યાપકો અને વિદ્યાર્થીઓ ! તમે જેમ ખેડૂતો એક બીજાના ખેતરોમાં પર્યાય-વારાફરતી કાપે છે - લણણી કરે છે, ભૂસા આદિથી અન્નને જુદુ પાડીને, અન્યોને ખવડાવીને સ્વયં ખાય છે, તેમજ એ વિદ્યા-વ્યવહારમાં કપટ રહિત બનીને વિદ્યાર્થીઓ અધ્યાપકોની સેવા કરે અને અધ્યાપકો વિદ્યાર્થીઓની વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરીને પરસ્પર ભોજન આદિથી સત્કાર કરીને સર્વ આનંદિત રહે. (૩૮)

कस्त्वाछ्यति कस्त्वा विशास्ति कस्ते गात्राणि शम्यति।
कऽउ ते शमिता कविः॥ ३९॥

પદાર્થ : હે અધ્યેતા વિદ્યાર્થી त्वा-તને (૧) कः-કોણ आछ्यति-કાપે છે ? (૨) कः-કોણ त्वा-તને वि + शास्ति-વિશેષ ઉપદેશ આપે છે ? (૩) कः-કોણ ते-તારા गात्राणि-અંગોને शम्यति-શાન્ત કરે છે ? (૪) कः-કોણ उ-વિચારપૂર્વક ते-તારા शमिता-અધ્યયન યજ્ઞના કર્તા कविः-સમસ્ત શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા અધ્યાપક છે ? (૩૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકો વિદ્યાર્થીઓને પરીક્ષામાં આ રીતે પ્રશ્ન પૂછે - તમારા અધ્યયનને કોણ હાનિ પહોંચાડે છે ? કોણ તમને ભણવા માટે કહે છે ? કોણ તમને અંગોની શુદ્ધિ અને ઉત્તમ વ્યવહાર સમજાવે છે ? અધ્યાપક કોણ છે ? તમે શું ભણ્યા છો ? શું ભણવાનું છે ? વગેરે પ્રશ્નો પૂછીને, સારી રીતે પરીક્ષા લઈને, ઉત્તમ વિદ્યાર્થીઓને ઉત્સાહિત કરીને તથા નિમ્ન સ્તરના વિદ્યાર્થીઓને ધિક્કાર-ફટકાર આપીને વિદ્યાની ઉન્નતિ કરે. (૩૯)

ऋ॒तव॑स्तऽऋतु॒था पर्वं॑ शमि॒तारो॑ विशा॑सतु।
सं॒व॒त्स॒रस्य॑ तेज॑सा श॒मीभिः॑ शम्यन्तु त्वा॥ ४०॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! જેમ ते-તારું ऋतवः-વસંત આદિ ઋતુઓ ऋतुथा-ઋતુ અનુસાર पर्व-પાલન કરે છે, તેમ शमितारः-અધ્યયન-અધ્યાપન નામક યજ્ઞમાં શમ-દમ આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનાર અધ્યાપકજનો વિદ્યાર્થીને विशासतु-વિશેષ ઉપદેશ કરે, संवत्सरस्य-વર્ષનાં तेजसा-જળથી शमीभिः-શાન્તિદાયક કર્મોથી त्वा-તને शम्यन्तु-શાન્તિ પ્રદાન કરે છે, તું તેની સદા સેવા કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઋતુઓ વારાફરતી પોતાના લક્ષણોને પ્રકટ કરે છે, તેમજ સ્ત્રી-પુરુષ ક્રમશઃ બ્રહ્મચર્ય, ગૃહસ્થ, વાનપ્રસ્થ અને સંન્યાસ આશ્રમોને ધારણ કરીને, બ્રાહ્મણ અને બ્રાહ્મણ-સ્ત્રીઓ ભણાવે, ક્ષત્રિય પ્રજાની રક્ષા કરે, વૈશ્ય ખેતીની વૃદ્ધિ કરે અને શૂદ્ર તેઓની સેવા કરે. (૪૦)

अ॒र्द्ध॒मा॒साः परू॑ᳬषि ते॒ मासा॒ऽआ च्छ्य॑न्तु॒ शम्य॑न्तः।
अ॒हो॒रा॒त्राणि॑ म॒रुतो॒ विलि॑ष्टᳬ सूदयन्तु॒ ते॥ ४१॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! જેમ अहोरात्राणि-દિવસ-રાત, अर्द्धमासाः-શુક્લપક્ષ અને કૃષ્ણપક્ષ તથા मासाः-ચૈત્ર આદિ મહિનાઓ આયુને કાપે છે - ઘટાડે છે, તેમ ते-તારા परूंषि-કઠોર વચનોને शम्यन्तः-શાન્ત કરનાર मरुतः-ઉત્તમ મનુષ્ય દુષ્ટ કર્મોનો आ + च्छ्यन्तु સર્વત્રથી વિનાશ કરે, તથા ते-તારા विलिष्टम्-લેશ માત્ર દુર્વ્યસનને પણ सूदयन्तु-દૂર કરે. (૪૧)

ભાવાર્થ : જો માતા, પિતા, અધ્યાપક, ઉપદેશક અને અતિથિ લોકો બાળકોના દુર્ગુણોને દૂર ન કરે, તો તે કદી પણ શ્રેષ્ઠ બની શકતા નથી. (૪૧)

दैव्या॑ऽअध्व॒र्यव॒स्त्वाच्छ्य॑न्तु॒ वि च॑ शासतु।
गात्रा॑णि पर्व॒शस्ते॒ सिमाः॑ कृण्वन्तु॒ शम्य॑न्तीः॥ ४२॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી અને વિદ્યાર્થિની ! दैव्याः-વિદ્વાનોમાં કુશળ अध्वर्यवः-પોતાની રક્ષારૂપ યજ્ઞના ઈચ્છુક અધ્યાપક - ઉપદેશક લોકો - त्वा-તને वि + शासतु-વિશેષ ઉપદેશ કરે; च-અને ते-તારા દોષોનો आ + च्छ्यन्तु-સર્વત્રથી વિનાશ કરે, पर्वशः-પ્રત્યેક સંધિ અને गात्राणि-અંગોની પરીક્ષા કરે; તથા सिमाः-પ્રેમથી બંધાયેલી शम्यन्तीः-દુષ્ટ સ્વભાવને દૂર કરતી માતા આદિ સતી સ્ત્રીઓ પણ એ રીતે શિક્ષા कृण्वन्तु-

કરે. (૪૨)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક, ઉપદેશક અને અતિથિજન જ્યારે બાળકોને શિક્ષિત કરે, ત્યારે તેના દુર્ગુણોનો વિનાશ કરીને તેને વિદ્યા પ્રદાન કરે.

એ જ રીતે અધ્યાપિકા, ઉપદેશિકા વિદુષી સ્ત્રીઓ પણ કન્યાઓ પ્રત્યે આચરણ કરે.

વૈદ્યકશાસ્ત્રની રીતિથી શરીરના અવયવોની યોગ્ય પરીક્ષા કરીને ઔષધ પણ પ્રદાન કરે. (૪૨)

द्यौस्ते पृथिव्यन्तरिक्षं वायुश्छिद्रं पृणातु ते।
सूर्यस्ते नक्षत्रैः सह लोकं कृणोतु साधुया॥ ४३॥

પદાર્થ : હે શિષ્યા વા અધ્યાપિકા ! જેમ द्यौः-પ્રકાશરૂપ વિદ્યુત્, पृथिवी-ભૂમિ, अन्तरिक्षम्-આકાશ, वायुः-પવન, सूर्यः-સૂર્યલોક અને नक्षत्रैः-તારા ગણોની सह-સાથે ચન્દ્રલોક ते-તારી छिद्रम्-પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયોને पृणातु-સુખ આપે; ते-તારા વ્યવહારને સિદ્ધ કરે; ते-તારા साधुया-ઉત્તમ સત્ય लोकम्-દર્શનીય વિદ્યાપ્રકાશને कृणोतु-સિદ્ધ કરે. (૪૩)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ સુખપ્રદ અને સૂર્ય આદિ પ્રકાશક પદાર્થ છે, તેમ જ અધ્યાપક અને ઉપદેશક તથા અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા પણ સર્વને સન્માર્ગમાં સ્થિત કરીને વિદ્યાપ્રકાશને ઉત્પન્ન કરે. (૪૩)

शं ते परेभ्यो गात्रेभ्यः शमस्त्ववरेभ्यः।
शमस्थभ्यो मज्जभ्यः शम्वस्तु तन्वै तव॥ ४४॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાના ઇચ્છુક ! જેમ પૃથિવી આદિ તત્ત્વ तव-તારા तन्वै-શરીરને માટે शम् સુખદાયક अस्तु-થાય, परेभ्यः-અત્યંત ઉત્તમ गात्रेभ्यः-શરીરના અંગને માટે शम्-સુખદાયક થાય, उ-અને अवरेभ्यः-મધ્યસ્થ અને નિકૃષ્ટ અંગોને માટે शम्-સુખદાયક अस्तु-થાય, अस्थभ्यः-હાડકાં અને मज्जभ्यः-મજ્જાને માટે शम्-સુખદાયક अस्तु-થાય, તેમ પોતાના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવ દ્વારા અધ્યાપક લોકો ते-તારા માટે સુખકારી થાય. (૪૪)

ભાવાર્થ : માતા, પિતા, અધ્યાપક, ઉપદેશક જનોએ એ રીતે ભણાવવા જોઈએ અને ઉપદેશ આપવો જોઈએ કે, જેથી સંતાનોનાં અંગ અને ધાતુ દૃઢ બને, જેથી તેઓ કલ્યાણ કરી શકે. (૪૪)

कः स्विदेकाकी चरति कऽउ स्विज्जायते पुनः।
किꣳ स्विद्धिमस्य भेषजं किम्वावपनं महत्॥ ४५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આ સંસારમાં (૧) कः स्वित्-કોણ एकाकी-એકલો चरति-ભ્રમણ કરે છે અને પ્રાપ્ત થાય છે ? (૨) कः उ-स्वित्-અને કોણ पुनः-ફરી जायते-ઉત્પન્ન થાય છે ? (૩) किं स्वित्-કયું हिमस्य-ઠંડીનું भेषजम्-ઔષધ છે ? (૪) किम, उ-અને કોણ महत्-મહાન आवपनम्-

સર્વાધાર છે ? અર્થાત્ સારી રીતે બીજ વાવવાનો આધાર છે ? તે સર્વ આપ બતાવો. (૪૫)

ભાવાર્થ : કોણ એકલો ભ્રમણ કરે છે ? કોણ ઠંડી નિવારક છે ? કોણ વારંવાર ઉત્પન્ન થાય છે ? મહાન ઉત્પત્તિ સ્થાન કયું છે ? આ પ્રશ્નોનું સમાધાન આગળના મંત્રમાં છે, તેમ સમજવું. (૪૫)

सूर्यऽएकाकी चरति चन्द्रमा जाएते पुनः।
अग्निर्हिमस्य भेषजं भूमिरावपनं महत्॥ ४६॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) सूर्यः-સૂર્યલોક एकाकी-એકલો चरति-પોતાની પરિધિમાં ભ્રમણ કરે છે. (૨) चन्द्रमाः-આનંદ આપનાર ચંદ્રમા पुनः-ફરી-ફરી जायते-પ્રકાશિત થાય છે. (૩) अग्निः અગ્નિ हिमस्य-શીતનું भेषजम्-ઔષધ છે. (૪) महत्-મહાન - વિસ્તૃત आवपनम्-બીજ વાવવાનું ક્ષેત્ર भूमिः-પૃથિવી છે, તેમ સમજો. (૪૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! સૂર્ય પોતાની પરિધિમાં ભ્રમણ કરે છે, કોઈ લોકના ચારે બાજુ ફરતો નથી. ચન્દ્રલોક આદિ તેનાથી-સૂર્યના પ્રકાશથી પ્રકાશિત છે. અગ્નિ જ શીત નિવારક છે અને સર્વ બીજ વાવવાનું મહાન ક્ષેત્ર ભૂમિ જ છે. એમ તમે જાણો. (૪૬)

किँस्वित्सूर्यसमं ज्योतिः किँसमुद्रसमँसरः।
किँस्वित्पृथिव्यै वर्षीयः कस्य मात्रा न विद्यते॥ ४७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! (૧) किं स्वित्-કોણ सूर्यसमम्-સૂર્યની સમાન ज्योतिः-પ્રકાશ સ્વરૂપ છે ? (૨) किम्-કોણ समुद्रसमम्-સમુદ્રસમાન सरः-તળાવ છે ? (૩) किं-स्वित्-કોણ पृथिव्यैः-પૃથિવીથી वर्षीयः-મોટો અધિક છે ? (૪) कस्य-કોનું मात्रा-પરિમાણ न, विद्यते-વિદ્યમાન નથી ? તે બતાવો. (૪૭)

ભાવાર્થ : સૂર્યસમાન તેજસ્વી, સમુદ્રની સમાન તળાવ અને ભૂમિથી અધિક કોણ છે ? અને કોનું પરિમાણ અર્થાત્ માપ નથી ? આ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણવા જોઈએ. (૪૭)

ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमँसरः।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते॥ ४८॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! તું (१) सूर्यसमम्-સૂર્યની સમાન ज्योतिः-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ ब्रह्म-સર્વથી મહાન અનંત બ્રહ્મ, (२) समुद्रसमम्-સમુદ્રની સમાન सरः-તળાવ - સરોવર (૩) द्यौः-અન્તરિક્ષ, पृथिव्यै-પૃથિવીથી वर्षीयान्-મોટો इन्द्रः-સૂર્ય, (૪) गोः-વાણીનું तु-તો मात्रा-માપ કે પરિમાણ न-विद्यते-વિદ્યમાન નથી, તેમ જાણ. (૪૮)

ભાવાર્થ : બ્રહ્મની સમાન સ્વયં પ્રકાશસ્વરૂપ અન્ય કોઈ જ્યોતિ નથી. સૂર્ય-પ્રકાશથી યુક્ત મેઘ-વાદળની સમાન કોઈ જલાશય-તળાવ નથી. સૂર્યની સમાન કોઈ લોકોનો સ્વામી નથી અને વાણીની

સમાન વ્યવહાર સાધક કોઈ વસ્તુ નથી, એવો સર્વ લોકો નિશ્ચય કરે. (૪૮)

पृच्छामि त्वा चितये देवसख यदि त्वमत्र मनसा जगन्थ।
येषु विष्णुस्त्रिषु पदेष्वेष्टस्तेषु विश्वं भुवनमाविवेश॥ ४९ ॥

પદાર્થ : હે देवसख-વિદ્વાનોના મિત્ર ! यदि-જો त्वम्-તું अत्र-અહીં मनसा-અન્તઃકરણથી जगन्थ-જાણતો હો તો त्वा-તને चितये-ચેતનના વિષયમાં पृच्छामि-પૂછું છું. જે विष्णुः-વ્યાપક ઈશ્વર येषु-જે त्रिषु-ત્રણ पदेषु-નામ, સ્થાન અને જન્મ નામક ધામોમાં-સ્થાનોમાં एष्टः-પૂજ્ય છે, तेषु-તેમાં વ્યાપ્ત થઈને विश्वम्-સર્વ भुवनम्-પૃથિવી આદિ લોકોમાં आविवेश-વ્યાપક થઈ રહેલ છે, તે પરમાત્માના વિષયમાં પૂછું છું. (૪૯)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે ચેતન, સર્વવ્યાપક અને પૂજાને યોગ્ય પરમેશ્વર છે, તેનો મને ઉપદેશ કર. (૪૯)

अपि तेषु त्रिषु पदेष्वस्मि येषु विश्वं भुवनमा विवेश।
सद्यः पर्येमि पृथिवीमुत द्यामेकेनाङ्गेन दिवोऽअस्य पृष्ठम्॥ ५० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગતનો રચનાર હું ઈશ્વર - येषु-જે त्रिषु-ત્રણ पदेषु-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય નામ, સ્થાન અને જન્મ નામક ધામોમાં विश्वम्-સમસ્ત भुवनम्-જગત્ आविवेश-પ્રવિષ્ટ થઈ રહેલ છું, तेषु-તે નામ, સ્થાન, જન્મ નામક ધામોમાં अपि-પણ હું વ્યાપ્ત अस्मि-છું.

अस्य-આ दिवः-પ્રકાશમાન સૂર્ય આદિ લોકોનો पृष्ठम्-આધાર पृथिवीम्-ભૂમિ વા અન્તરિક્ષ उत-અને द्याम्-સર્વના પ્રકાશક દ્યુલોકને एकेन-એક अङ्गेन-કમનીય-અતિ મનોહર પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય વ્યવહાર વા અંગ-દેશથી सद्यः-તત્કાળ परि+एमि-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત છું, તે તમે સર્વ મારી ઉપાસના કરો. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ કે સર્વ જીવોને ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે "હું કાર્ય-કારણયુક્ત સંસારમાં વ્યાપ્ત છું. મારા વિના એક પરમાણુ અવ્યાપ્ત [હોય એવું] નથી, [એક પરમાણુ પણ મારી વ્યાપ્તિથી રહિત નથી] તે હું, જ્યાં જગત્ નથી, ત્યાં પણ હું પોતાના અનંત સ્વરૂપથી પરિપૂર્ણ છું. જે અતિ વિસ્તીર્ણ આ જગતને આપ જોઈ રહ્યા છો, તે એ મારી સામે એક અણુ માત્ર પણ નથી." તેમ વિદ્વાનો સર્વને સમજાવે. (૫૦)

केष्वन्तः पुरुषऽआ विवेश कान्यन्तः पुरुषेऽअर्पितानि।
एतद् ब्रह्मन्नुप वल्हामसि त्वा किंस्विन्नः प्रति वोचास्यत्र॥ ५१ ॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मन्-વેદજ્ઞ - બ્રહ્મના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! केषु-કોના अन्तः-મધ્યમાં पुरुषः-સર્વત્ર પૂર્ણ પરમેશ્વર अन्तः-અંદર आ + विवेश-પ્રવિષ્ટ થઈ રહેલ છે ? कानि-કોણ पुरुषे-પૂર્ણ પરમેશ્વરના अन्त-મધ્ય-અંદર अर्पितानि-સ્થાપિત છે ? જેથી જ્ઞાનથી અમે उप, वल्हामसि-પ્રધાન પુરુષ બનીએ. एतत्-એ त्वा-આપને પૂછીએ છીએ તે किं स्वित्-શું છે ? अत्र-એ વિષયમાં नः, प्रति-અમને वोचासि-

બતાવો. (૫૧)

ભાવાર્થ : ચારેય વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન્-બ્રહ્માને અન્ય લોકોએ એ રીતે પૂછવું જોઈએ કે, હે વેદોના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ ! પૂર્ણ પરમેશ્વર કોનામાં પ્રવિષ્ટ છે ? કોણ પદાર્થ તેની [વ્યાપ્તિની] અન્તર્ગત છે, એ વાત આપને પૂછીએ છીએ, તે યથાર્થ રૂપમાં બતાવો, જેથી અમે પ્રધાન-મુખ્ય પુરુષ બનીએ. (૫૧)

पञ्चस्वन्तः पुरुषऽआविवेश तान्यन्तः पुरुषेऽअर्पितानि।
एतत्त्वात्र प्रतिमन्वानोऽअस्मि न मायया भवस्युत्तरो मत्॥ ५२॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! पञ्चसु-પાંચ ભૂતો વા તેની તન્માત્રાઓની अन्तः-મધ્ય-અંદરમાં पुरुषः-પૂર્ણ પરમાત્મા आ+विवेश-પોતાની વ્યાપ્તિથી સારી રીતે પ્રવિષ્ટ થઈ રહેલ છે; तानि-તે પંચભૂત વા તન્માત્રા पुरुषे-પૂર્ણ પરમાત્મા પુરુષની अन्तः-મધ્યમાં अर्पितानि-સ્થાપિત છે; एतत्-એ अत्र-આ જગતમાં [વિષયમાં] त्वा-આપને प्रतिमन्वानाः-પ્રત્યક્ષ જ્ઞાતા એવો હું - સમાધાન કર્તા अस्मि-છું.

જો मायया-પ્રજ્ઞા - ઉત્તમ બુદ્ધિથી યુક્ત તું भवसि-છો, તો मत-મારાથી उत्तरः-ઉત્તમ સમાધાન કરનાર કોઈ न-નથી, એમ તું જાણ. (૫૨)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વર ઉપદેશ કરે છે કે, હે મનુષ્યો ! મારાથી વધીને બીજો કોઈ નથી. હું જ સર્વનો આધાર છું અને સર્વને વ્યાપ્ત કરીને ધારણ કરું છું. મારા વ્યાપ્ત હોવાના કારણે સર્વ પદાર્થો પોત-પોતાના નિયમમાં રહેલ છે.

હે સર્વોત્તમ યોગી વિદ્વાનો ! આપ લોકો મારા એ વિજ્ઞાનને [સર્વ મનુષ્યોને] બતાવો. (૫૨)

का स्विदासीत्पूर्वचित्तिः किꣳस्विदासीद् बृहद्वयः।
का स्विदासीत्पिलिप्पिला का स्विदासीत् पिशङ्गिला॥ ५३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આ જગતમાં (૧) का स्वित्-કોણ पूर्वचित्रिः-અનાદિ સમયમાં સંચિત થનારી आसीत्-છે ? (૨) किं,-स्वित्-કઈ बृहत्-મહાન वयः-પ્રજનન - ઉત્પન્ન રૂપ વસ્તુ आसीत्-છે ? (૩) का, स्वित्-કઈ વસ્તુ पिलिप्पिला-ભીની કે ચીકણી आसीत्-છે ? (૪) का, स्वित्-કોણ पिशङ्गिला-અવયવોને અંદર કરનારી-ગળી જનારી વસ્તુ आसीत्-છે ? એ આપને પૂછું છું. (૫૩)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં ચાર પ્રશ્નો છે તેનો ઉત્તર આગલા મંત્રમાં દ્રષ્ટવ્ય છે. (૫૩)

द्यौरासीत्पूर्वचित्रिरश्वऽआसीद् बृहद्वयः।
अविरासीत्पिलिप्पिला रात्रिरासीत्पिशङ्गिला॥ ५४॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) द्यौः-વિદ્યુત્ पूर्वचितिः-પ્રથમ સંચિત વસ્તુ आसीत्-છે, (૨) अश्वः-મહત્તત્ત્વ बृहत्-મહાન वयः-પ્રજનન આત્મક - ઉત્પત્તિ સ્વરૂપ आसीत्-છે, (૩) अविः-રક્ષક પ્રકૃતિ पिलिप्पिला-આર્દ્ર કે ચીકણી વસ્તુ आसीत्-છે, (૪) रात्रिः-રાત્રિની સમાન પ્રલય पिशङ्गिला-સર્વ અવયવોને

ગળી જનારી आसीत्-છે, એમ તું જાણ. (૫૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અતિ સૂક્ષ્મ વિદ્યુત્ છે, તે પ્રથમ પરિણામ છે. મહત્ નામક દ્વિતીય પરિણામ છે. પ્રકૃતિ મૂલ કારણ રૂપ પરિણામ છે અને પ્રલય સર્વ સ્થૂલ સર્વ પદાર્થોનો વિનાશક છે, તેમ તમે જાણો. (૫૪)

काऽईंमरे पिशङ्गिला काऽईं कुरुपिशङ्गिला।
कऽईंमास्कन्दमर्षति कऽईं पन्थां विसर्पति॥ ५५॥

પદાર્થ : अरे-હે વિદુષી સ્ત્રી ! (૧) का ईम्-કોણ વારંવાર पिशङ्गिला-રૂપનું આવરણ કરનારી છે ? (૨) का, ईम्-કોણ વારંવાર कुरुपिशङ्गिला-યવ આદિ અન્નના અવયવોને ગળી જનારી છે ? (૩) कः, ईम्-કોણ વારંવાર आस्कन्दम्-જુદી જુદી ગતિથી શીઘ્ર अर्षति-પહોંચે છે ? (૪) कः, કોણ ईम्-જળના पन्थाम्-માર્ગમાં वि+सर्पति-વિશેષ ગતિ કરે છે ? આ પ્રશ્નોનું સમાધાન કર. (૫૫)

ભાવાર્થ : કોણ રૂપનું આવરણ કરે છે ? કોણ ખેતી આદિને નષ્ટ કરે છે ? કોણ શીઘ્ર દોડે છે ? કોણ માર્ગમાં ચાલે છે ? આ ચાર પ્રશ્નો છે, તેનો ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણો. (૫૫)

अजारे पिशङ्गिला श्वावित्कुरुपिशङ्गिला।
शशऽआस्कन्दमर्षत्यहिः पन्थां वि सर्पति॥ ५६॥

પદાર્થ : अरे- હે મનુષ્યો ! (૧) अजा-જન્મરહિત પ્રકૃતિ पिशङ्गिला-વિશ્વના રૂપનું પ્રલય સમયે આવરણ કરનારી છે. (૨) श्वावित्-कुरुपिशङ्गिला-સાહુડી-પશુની સમાન ખેતી આદિના અવયવોનો નાશ કરનારી છે. (૩) शशः-સસલા સમાન વેગયુક્ત વાયુ आस्कन्दम्-સર્વત્ર ઉછળીને अर्षति-પહોંચે છે. (૪) अहिः-વાદળ पन्थाम्-માર્ગમાં वि + सर्पति-વિવિધ ગતિ કરે છે એમ તમે જાણો. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અજન્મા પ્રકૃતિ છે, તે સર્વ કાર્યરૂપ જગતનો પ્રલય કરનારી, કાર્યકારણરૂપ, પોતાના કાર્યને [જગતને] પોતાની અંદર લીન કરનારી છે; જે સાહુડી ખેતીનો નાશ કરે છે, જે વાયુ સસલાની સમાન ચાલતો સર્વને સૂકવી નાખે છે; જે વાદળ સાપની સમાન ગતિ કરે છે, તે સર્વને તમે જાણો. (૫૬)

कत्यस्य विष्ठाः कत्यक्षराणि कति होमासः कतिधा समिद्धः।
यज्ञस्य त्वा विदथा पृच्छमत्र कति होतारऽऋतुशो यजन्ति॥ ५७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! (૧) अस्य-આ यज्ञस्य-સંયોગથી ઉત્પન્ન થયેલ સંસારરૂપ યજ્ઞના कति-કેટલાં विष्ठाः-વિશેષ સ્થિતિમાં આધાર છે ? (૨) कति-કેટલાં अक्षराणि-જલ આદિ નિર્માણનાં સાધન છે ? (૩) कति-કેટલાં होमासः-આદાન-પ્રદાન અર્થાત્ વ્યાપાર છે ? (૪) कतिधा-કેટલા પ્રકારના समिद्धः-સમિધાની સમાન જ્ઞાન આદિના પ્રકાશક છે ? (૫) कति-કેટલાં होतारः-આદાન-

પ્રદાન આદિ વ્યવહાર કરનાર ऋतुशः-વસંતાદિ પ્રત્યેક ઋતુમાં यजन्ति-સંગ કરે છે ? આ રીતે अत्र-આ વિષયમાં विदथा-વિજ્ઞાનોને त्वा-આપને હું पृच्छम्-પૂછું છું. (૫૭)

ભાવાર્થ : આ જગત્ ક્યાં સ્થિત છે ? એના નિર્માણ સાધન કેટલાં છે ? કેટલી વ્યાપાર યોગ્ય વસ્તુ છે ? કેટલા જ્ઞાન આદિના પ્રકાશક છે ? અને કેટલાં વ્યવહારકર્તા છે ? આ પાંચ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણવા જોઈએ. (૫૭)

षडस्य विष्ठाः शतमक्षराण्यशीतिर्होमाः समिधो ह तिस्त्रः।
यज्ञस्य ते विदथा प्र ब्रवीमि सप्त होतार ऋतुशो यजन्ति॥ ५८॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુઓ ! (૧) अस्य-આ यज्ञस्य-સંગત જગતની षट्-છ ઋતુઓ विष्ठाः-વિશેષ સ્થિતિનો આધાર છે; (૨) शतम्-અસંખ્ય अक्षराणि-જળ આદિ ઉત્પત્તિનાં સાધન છે; (૩) अशितिः-અસંખ્ય होमाः લેવા-દેવાનો વ્યવહાર છે; (૪) तिस्त्रः-આધ્યાત્મિક, આધિદૈવિક અને આધિભૌતિક એ ત્રણ વિદ્યાઓ ह-પ્રસિદ્ધ समिधः-જ્ઞાન આદિની પ્રકાશક છે; (૫) सप्त-પાંચ પ્રાણ, મન અને આત્મા એ સાત होतारः-લેણ-દેણના વ્યવહારનો કર્તા ऋतुशः-પ્રત્યેક વસંત આદિ ઋતુમાં यजन्ति-સંગ કરે છે; તે યજ્ઞ = જગતનું विदथा-વિજ્ઞાન ते-તારા માટે હું प्र + ब्रवीमि-કહું છું. (૫૮)

ભાવાર્થ : હે જિજ્ઞાસુજનો ! જે યજ્ઞમાં છ ઋતુઓ સ્થિતિની સાધક છે, અસંખ્ય જળ વસ્તુઓ વ્યવહારની સાધક છે, બહુ જ વ્યવહારને યોગ્ય પદાર્થ છે, સર્વ પ્રાણી અને અપ્રાણી હોતા આદિ રૂપમાં સંગ કરે છે અને જ્યાં જ્ઞાન આદિની પ્રકાશિકા ત્રણ પ્રકારની વિદ્યાઓ છે, તે યજ્ઞને તમે સર્વ જાણો. (૫૮)

कोऽअस्य वेद भुवनस्य नाभिं को द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षम्।
कः सूर्यस्य वेद बृहतो जनित्रं को वेद चन्द्रमसं यतोजाः॥ ५९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! (૧) अस्य-આ भुवनस्य-સર્વના આધારભૂત સંસારના नाभिम्-મધ્યમ અંગ વા બંધન સ્થાનને कः-કોણ वेद-જાણે છે ? (૨) कः-કોણ द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને પૃથિવી તથા अन्तरिक्षम्-આકાશને वेद-જાણે છે ? (३) कः-કોણ बृहतः-મહાન सूर्यस्य-સૂર્યમંડળના जनित्रम्-ઉપાદાન વા નિમિત્ત કારણને वेद-જાણે છે ? (૪) અને यतोजाः-જેનાથી ઉત્પન્ન થનાર તે ચંદ્રમાના ઉત્પાદકને चन्द्रमसम्-ચંદ્રલોકને कः-કોણ वेद-જાણે છે ? તેનું સમાધાન કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : આ જગતના ધારણકર્તા બંધનને, ભૂમિ, સૂર્ય તથા અન્તરિક્ષને, મહાન સૂર્યના કારણને તથા જેથી ચંદ્રમા ઉત્પન્ન થયેલ છે, તેને કોણ જાણે છે ? આ ચાર પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં છે તેમ જાણવું જોઈએ. (૫૯)

वेदाहमस्य भुवनस्य नाभिं वेद द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षम्।
वेद सूर्यस्य बृहतो जनित्रमथो वेद चन्द्रमसं यतोजाः॥ ६०॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) अस्य-આ भुवनस्य-સંસારની नाभिम्-બંધનનાં સ્થાન કારણરૂપ મધ્યભાગ પરબ્રહ્મને अहम्-હું वेद-જાણું છું; (૨) द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને અપ્રકાશરૂપ લોક સમૂહો તથા अन्तरिक्षम्-આકાશને પણ वेद-હું જાણું છું; (૩) बृहतः-મહાન सूर्यस्य-સૂર્યલોકના जनित्रम्-ઉપાદાન તેજસ્ કારણ અને નિમિત્ત કારણ બ્રહ્મને वेद-હું જાણું છું. (૪) अथो-તદનન્તર यतोजाः-જે પરમાત્માથી ઉત્પન્ન થયેલ તે चन्द्रमसम्-ચંદ્રને वेद-હું જાણું છું. (૬૦)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન ઉત્તર આપે કે, હે જિજ્ઞાસુ ! આ જગતના બંધન અને સ્થિતિના કારણ, ત્રણેય લોકોનું કારણ, સૂર્ય અને ચંદ્રમાના ઉપાદાન કારણ અને નિમિત્ત કારણ એ સર્વને હું જાણું છું.

બ્રહ્મ-ઈશ્વર એ જ સર્વના નિમિત્ત કારણ છે અને પ્રકૃતિ ઉપાદાન કારણ છે, એમ જાણો. (૬૦)

पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्याः पृच्छामि यत्र भुवनस्य नाभिः।
पृच्छामि त्वा वृष्णोऽअश्वस्य रेतः पृच्छामि वाचः परमं व्योम॥ ६१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! (૧) હું त्वा-આપને पृथिव्याः પૃથિવીની, अन्तम्, परम्-પરભાગ સીમા કે અવધિને पृच्छामि-પૂછું છું. (૨) यत्र-જ્યાં भुवनस्य-સંસારની नाभिः-નાભિ અર્થાત્ મધ્ય-આકર્ષણથી બંધન કરે છે તેને पृच्छामि-પૂછું છું. (૩) જે वृष्णः-સેચન કરનાર अश्वस्य-બળવાન પુરુષનું रेतः-પરાક્રમ [વીર્ય]છે તેને पृच्छामि-પૂછું છું. (૪) वाचः-ત્રણ વેદ રૂપ વાણીના परमम्-ઉત્તમ व्योम-આકાશ રૂપ સ્થાનને त्वा-આપને पृच्छामि-પૂછું છું. આપ તેના ઉત્તર આપો. (૬૧)

ભાવાર્થ : પૃથિવીની સીમા, લોકનું આકર્ષણથી બંધન, બળવાન પુરુષનું પરાક્રમ અને વાણીમાં પારંગત કોણ છે ? એ પ્રશ્નોના ઉત્તર આગળના મંત્રમાં જાણો. (૬૧)

इयं वेदिः परोऽअन्तः पृथिव्याऽअयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।
अयꣳ सोमो वृष्णोऽअश्वस्य रेतो ब्रह्मायं वाचः परमं व्योम॥ ६२॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! (૧) इयम्-આ वेदिः-મધ્યરેખા पृथिव्याः-ભૂમિના परः-પરભાગની अन्तः-સીમા છે; (૨) अयम्-એ પ્રત્યક્ષ ગુણોવાળા यज्ञः-સર્વના પૂજ્ય જગદીશ્વર भुवनस्य-સંસારની नाभिः-નિયત સ્થિતિના બંધક છે; (૩) अयम्-એ सोमः-ઔષધિઓમાં શ્રેષ્ઠ અંશુમાન નામક સોમ वृष्णः-પરાક્રમ કરનાર अश्वस्य-બળવાન પુરુષનું रेतः-પરાક્રમ-વીર્ય છે અને (૪) अयम्-એ ब्रह्मा-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા वाचः-ત્રણ વેદરૂપ વાણીના परमम्-ઉત્તમ व्योम-સ્થાન છે; તું એને જાણ. (૬૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો આ ભૂગોળની મધ્યરેખા ખેંચવામાં આવે, તો તે ઉપરથી ભૂમિના અન્ત-સીમાને પ્રાપ્ત કરતી [તેની] વ્યાસ સંજ્ઞાને પ્રાપ્ત કરે છે. એ જ ભૂમિનો અન્ત-સીમા છે. સર્વનું મધ્ય આકર્ષણ-નાભિ જગદીશ્વર છે. સર્વ પ્રાણીઓના પરાક્રમની વૃદ્ધિ કરનારી સર્વોત્તમ ઔષધિ સોમ છે અને વેદોના પારંગત વિદ્વાન્-બ્રહ્મા વાણીના પારંગત છે, તેમ તમે જાણો. (૬૨)

सुभूः स्वयम्भूः प्रथमोऽन्तर्महत्यर्णवे।
दधे ह गर्भमृत्वियं यतो जातः प्रजापतिः॥ ६३॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! यतः-જે જગદીશ્વરથી प्रजापतिः-પ્રજાનો રક્ષક-પાલક સૂર્ય जातः-ઉત્પન્ન થયેલ છે; જે सुभूः-સુંદર વિદ્યમાન, स्वयम्भूः-સ્વયં પ્રસિદ્ધ અને ઉત્પત્તિ તથા નાશ રહિત, प्रथमः-સર્વથી પ્રથમ જગદીશ્વર महति-મહાન વિસ્તૃત अर्णवे-જળ આદિ પદાર્થોથી સંબંધિત સંસારના अन्तः-મધ્યમાં ऋत्वियम्-ઋતુ અનુકૂળ પ્રાપ્ત गर्भम्-બીજને दधे-ધારણ કરે છે; તેની ह-જ સર્વ લોકોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૬૩)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય સૂર્ય આદિના પરમ કારણ મૂલ ઉપાદાન કારણ પ્રકૃતિને તથા તેમાં બીજ ધારણ કરાવનાર પરમાત્માને જાણી લે, તો તેઓ આ સંસારમાં વિસ્તૃત સુખવાળા બને. (૬૩)

होता यक्षत्प्रजापतिꣳ सोमस्य महिम्नः। जुषतां पिबतु सोमꣳ होतर्यज॥ ६४॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા પુરુષ ! જેમ होता-શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ सोमस्य-સકળ ઐશ્વર્યથી યુક્ત પરમાત્માના महिम्नः-મહિમાથી प्रजापतिम्-વિશ્વના પાલક ઈશ્વરની यक्षत्-પૂજા કરે છે; વા जुषताम्-સેવાથી પ્રસન્ન કરે છે અને सोमम्-સર્વ ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું पिबतु-પાન કરે છે; તેમ તું यज-તેની પૂજા કર અને રસનું પાન કર. (૬૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન્ જન આ જગતમાં રચના આદિ વિશેષ કારણોથી પરમાત્માની મહિમાને જાણીને તેની ઉપાસના કરે છે, તેમ તમે પણ એની ઉપાસના કરો. (૬૪)

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयꣳ स्याम पतयो रयीणाम्॥ ६५॥

પદાર્થ : હે प्रजापते-સર્વ પ્રજાના રક્ષક-સ્વામી પરમાત્મન્ ! કોઈ त्वत्-આપનાથી अन्यः-ભિન્ન ता-તેના एतानि-એ પૃથિવી આદિ ભૂતો તથા विश्वा-સર્વ रूपाणि-રૂપ યુક્ત વસ્તુઓ न + परि + बभूव-બળવાન નથી.

यत्कामाः-જે-જે પદાર્થની કામના કરનારા वयम्-અમે આપની जुहुमः-પ્રશંસા કરીએ तत्-તે-તે કામના યોગ્ય વસ્તુ नः-અમને अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. ते-આપની કૃપાથી અમે रयीणाम्-વિદ્યા, સુવર્ણ આદિ ધનોના पतयः-રક્ષક—સ્વામી स्याम-બનીએ. (૬૫)

ભાવાર્થ : જો પરમેશ્વરથી ઉત્તમ, મહાન, ઐશ્વર્યયુક્ત, સર્વ શક્તિમાન પદાર્થ કોઈ નથી, અને ન તો તેની સમાન-તુલ્ય પણ કોઈ છે.

જે વિશ્વના આત્મા-સર્વાત્મા, સર્વનિર્માતા, સમસ્ત ઐશ્વર્ય પ્રદાતા ઈશ્વર છે, તેની જ વિશેષ ભક્તિથી

અને પુરુષાર્થથી સાંસારિક ઐશ્વર્ય અને યોગાભ્યાસથી પારમાર્થિક સામર્થ્ય અમે પ્રાપ્ત કરી શકીએ છીએ. (૬૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમાત્માનો મહિમા (૧-૩), સૃષ્ટિના ગુણોનું વર્ણન (૪), યોગની પ્રશંસા (૫-૬), પ્રશ્ન અને ઉત્તર (૯-૧૨), સૃષ્ટિના પદાર્થોની પ્રશંસા (૧૪), રાજા અને પ્રજાના ગુણોનું વર્ણન (૨૦-૨૩), શાસ્ત્ર આદિનો ઉપદેશ (૨૫-૨૯), પઠન-પાઠન (૩૨, ૩૩), સ્ત્રી-પુરુષના ગુણોનું વર્ણન (૩૬, ૩૭), પુનઃ પ્રશ્ન અને ઉત્તર (૪૫ - ૬૨), પરમેશ્વરના ગુણોનું વર્ણન (૬૪, ૬૫), યજ્ઞની વ્યાખ્યા (૫૭, ૫૮), રેખા ગણિત (૬૨) વગેરેનો ઉપદેશ કરેલ છે. એથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति त्रयोविंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ चतुर्विंशोऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥

अश्व॑स्तूप॒रो गो॑मृ॒गस्ते प्रा॑जाप॒त्याः कृ॒ष्णग्री॑वऽआग्ने॒यो र॒राटे॑ पु॒रस्ता॑त्सारस्व॒ती मे॒ष्यु᳖धस्ता॒द्धन्वो॑राश्वि॒नाव॒धोरा॑मौ बा॒ह्वोः सौ॑मापौ॒ष्णः श्या॒मो नाभ्या॑ᳬं सौर्यया॒मौ श्वे॒तश्च॑ कृ॒ष्णश्च॑ पा॒र्श्वयो॑स्त्वा॒ष्ट्रौ लो॑म॒शस॑क्थौ स॒क्थ्योर्वा॑य॒व्यः श्वे॒तः पुच्छ॒ऽइन्द्रा॑य स्वप॒स्या॒य वे॒हद्वै॑ष्ण॒वो वा॑म॒नः॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે अश्वः-શીઘ્રગામી ઘોડા, तूपरः-હિંસક પશુ, गोमृगः-ગાય સમાન નીલગાય, ते-તેઓ प्राजापत्याः-પ્રજાપાલક સૂર્ય દેવતાવાળા અર્થાત્ સૂર્યમંડળના ગુણોથી યુક્ત પશુઓ, कृष्णग्रीवः-કાળી ડોકવાળા પશુઓ, आग्नेयः અગ્નિ દેવતાવાળા પશુઓ, पुरस्तात्-આદિમાં - પ્રથમથી रराटे-લલાટના નિમિત્ત मेषी-શબ્દ કરનારી ઘેટી અને सारस्वती-સરસ્વતી દેવતાવાળી પશુ સ્ત્રી, अधस्तात्-નીચેથી हन्वोः-ડાબી અને જમણી હડપચી बाह्वोः-ભુજાઓથી अधोरामौ-નીચે રમણ કરનાર आश्विनौ-અશ્વિદેવતા વાળા બે પશુઓ, सौमापौष्णः-સોમ અને પૂષા દેવતાવાળા श्यामः-કાળા રંગનાં પશુઓ, नाभ्याम्-નાભિની નિમિત્ત पार्श्वयोः-ડાબી અને જમણી બાજુનાં નિમિત્ત श्वेतश्च-સફેદ અને कृष्णश्च-કાળા રંગના सौर्ययामौ સૂર્ય અને યમથી સંબંધિત પશુઓ, सक्थ्योः-જાંઘને નિમિત્ત लोमशसक्थौ-રૂંવાડા યુક્ત જાંઘવાળા त्वाष्टौ-ત્વષ્ટા દેવતાવાળા પશુઓ, पुच्छे-પૂંછના નિમિત્ત श्वेतः - સફેદ રંગવાળા वायव्यः-વાયુ દેવતાવાળા પશુ, वेहत्-અસમયમાં સાંઢના સંગથી ગર્ભપાત કરનારી ગાય, वैष्णवः વિષ્ણુ દેવતાવાળા પશુઓ અને वामनः-વાંકા અંગોવાળા પશુઓ છે, તે સર્વને स्वपस्याय-સુંદર કે ઉત્તમ કર્મોવાળા इन्द्राय-ઐશ્વર્ય યુક્ત પુરુષને માટે સંયુક્ત કરો. અર્થાત્ તે પ્રત્યેક અંગના આનંદ માટે ઉક્ત ગુણવાળા પશુઓને નિયત કરો. (૧)..

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઘોડા વગેરે પશુઓથી કાર્ય સિદ્ધ કરીને, ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ કરીને ધર્મયુક્ત કાર્ય કરે છે, તેઓ સૌભાગ્યશાળી હોય છે.

અહીં દેવતા શબ્દથી તે-તે ગુણથી યુક્ત પશુઓ સમજવા જોઈએ. (૧)

रोहि॑तो धू॒म्ररो॑हितः क॒र्कन्धु॑रोहित॒स्ते सौ॒म्या ब॒भ्रुर॑रु॒णब॑भ्रुः शु॒कब॑भ्रु॒स्ते वा॑रु॒णाः शि॑ति॒रन्ध्रो॒ऽन्यत॑ःशितिरन्ध्रः सम॒न्तशि॑तिरन्ध्र॒स्ते सा॑वि॒त्राः शि॑तिबा॒हु-र॒न्यतःशितिबाहुः सम॒न्तशि॑तिबाहु॒स्ते बा॑र्हस्प॒त्याः पृष॑ती क्षु॒द्रपृ॑षती स्थू॒लपृ॑षती

ता मैत्रावरुण्यः ॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે रोहितः-સામાન્ય લાલ રંગવાળા, धूम्ररोहितः-ધૂમાડા સમાન લાલ રંગવાળા અને कर्कन्धुरोहितः-પાકા બોર સમાન લાલ રંગવાળા પશુઓ છે. ते-તેઓ सौम्याः-સોમ-ચંદ્ર દેવતાવાળા; જે बभ्रुः-નોળીયા સમાન ભૂખરા રંગવાળા, अरुणबभ्रुः-લાલ રંગથી યુક્ત ભૂખરા રંગવાળા शुकबभ्रुः-તોતા સમાન ભૂખરા રંગવાળા પશુઓ છે, ते- તેઓ वारुणाः-દેવતાવાળા અર્થાત્ શ્રેષ્ઠ; જે शितिरन्ध्रः-છિદ્રોમાં સફેદ રંગવાળા, अन्यतःशितिरन्ध्रः-એક બાજુ ઉક્ત છિદ્રોની સમાન સફેદ ચિહ્નવાળા, समन्तशितिरन्ध्रः સર્વત્ર ઉક્ત છિદ્રોની સમાન સફેદ ચિહ્નવાળા પશુઓ છે, ते-તેઓ સર્વ सावित्राः-સૂર્ય દેવતાવાળા; જે शितिबाहुः ભુજાઓમાં સફેદ ચિહ્નવાળા, अन्यतः शितिबाहुः-એક બાજુ ભુજામાં સફેદ ચિહ્નવાળા અને समन्तशितिबाहुः-સર્વત્ર ભુજાઓમાં સફેદ ચિહ્નવાળા પશુઓ છે ते-તેઓ बार्हस्पत्याः-બૃહસ્પતિ દેવતાવાળા હોય છે; અને જે पृषती-અંગોમાં છાંટ-ટપકાં વાળી, क्षुद्रपृषती-નાના ટપકાંવાળી અને स्थूलपृषती-મોટાં ટપકાંવાળી ગાયો છે, ता-તે સર્વ मैत्रावरुण्यः-મિત્ર =પ્રાણ અને વરુણ-ઉદાન દેવતાવાળી હોય છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૨)

ભાવાર્થ : જે પશુઓ ચન્દ્રમા આદિના ગુણોથી યુક્ત છે, તેનાથી તે-તે કાર્યો મનુષ્યોએ સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૨)

शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः ॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે शुद्धवालः-શુદ્ધવાળવાળા, सर्वशुद्धवालः-સર્વ શુદ્ધવાળવાળા, मणिवालः-મણિ સમાન સ્વચ્છ કોમળ અને ચળકતા વાળવાળા પશુઓ છે, ते તેઓ आश्विनाः-સૂર્ય અને ચંદ્રના દેવતાવાળા અર્થાત્ સૂર્ય-ચન્દ્ર સમાન દિવ્ય ગુણવાળા; જે श्येतः-સફેદ રંગવાળા, श्येताक्षः-સફેદ આંખોવાળા અને अरुणः-લાલ રંગવાળા છે; ते-તેઓ पशुपतये-પશુઓના પાલક-રક્ષક रुद्राय-દુષ્ટોને રડાવનાર તે રુદ્રને માટે છે; જે कर्णाः-વિશેષ કાર્ય કરનાર છે, ते-તેઓ यामाः-વાયુ દેવતાવાળા, જે अवलिप्ताः દઢ અંગ અને સ્થૂલ શરીરવાળા છે, તેઓ रौद्राः-પ્રાણ આદિ દેવતાવાળા; જે नभोरूपाः-જે આકાશની સમાન નીલ રૂપવાળા છે, તેઓ पार्जन्याः-મેઘ-વાદળ દેવતાવાળા છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૩)

ભાવાર્થ : જે જે પશુઓના દેવતા છે, તે તે ગુણવાળા છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૩)

पृश्निस्तिरश्चीनपृश्निरूर्ध्वपृश्निस्ते मारुताः फल्गूर्लोहितोर्णी पलक्षी ताः सारस्वत्यः प्लीहाकर्णः शुण्ठाकर्णोऽध्यालोहकर्णस्ते त्वाष्ट्राः कृष्णग्रीवः शितिकक्षोऽञ्जिसक्थस्तऽऐन्द्राग्नाः कृष्णाञ्जिरल्पाञ्जिर्महाञ्जिस्तऽउषस्याः ॥ ४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે पृश्निः-સ્પર્શવાળા, तिरश्चीनपृश्निः-નિકૃષ્ટ સ્પર્શવાળા, ऊर्ध्वपृश्निः-ઉત્કૃષ્ટ સ્પર્શવાળા પશુઓ છે, ते-તેઓ मारुताः-વાયુ દેવતાવાળા; જે फल्गूः-ફળોને પ્રાપ્ત કરનારી,

लोहितोर्णी-લાલ રંગવાળી અને पलक्षी-ચંચળ આંખોવાળી ગાયો છે ताः-તે સર્વ सारस्वत्यः-સરસ્વતી દેવતાવાળી; જે प्लीहाकर्णः-બરોળ સમાન કાનોવાળા शुण्ठाकर्णः-સૂકા કાનોવાળા અને अध्यालोहकर्णः-ઉત્તમ સુવર્ણ સમાન કાનોવાળા પશુઓ છે, ते-તેઓ त्वाष्ट्राः-ત્વષ્ટા દેવતાવાળા; જે कृष्णग्रीवः-કાળી ડોકવાળા, शितिकक्षः-સફેદ પાર્શ્વવાળા અને अञ्जिसक्थः-પ્રસિદ્ધ જાંઘવાળા સ્થૂલ હોવાથી જુદી તરી આવે તેવા પશુઓ છે, ते-તેઓ ऐन्द्राग्नाः-ઈન્દ્ર = વાયુ અને અગ્નિ = વિદ્યુત્ દેવતાવાળા; જે कृष्णाञ्जिः-સાધારણ ગતિવાળા, अल्पाञ्जिः-ધીમી ગતિવાળા અને महाञ्जिः-તે જ ગતિવાળા પશુઓ છે, ते-તેઓ उषस्याः-ઉષા દેવતાવાળા હોય છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે પશુઓ અને પક્ષીઓ વાયુના ગુણોવાળા, જે નદીના ગુણોવાળા, જે સૂર્યના ગુણોવાળા, જે વાયુ તથા વિદ્યુત્‌ના ગુણોવાળા અને ઉષાના ગુણોવાળા છે, તેઓ દ્વારા તેને અનુકૂળ કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

शिल्पा वैश्वदेव्यो रोहिण्यस्त्र्यवयो वाचेऽविज्ञाताऽअदित्यै सरूपा धात्रे वत्सतर्यो देवानां पत्नीभ्यः ॥ ५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમને शिल्पाः જે સુંદર રૂપવાન અને શિલ્પ કાર્ય સિદ્ધ કરનારી वैश्वदेव्यः-વિશ્વદેવ દેવતાવાળી વિદ્યાઓ वाचे-વાણીને માટે; रोहिण्यः-પર્વત આદિ પર ચડવાવાળા त्र्यवयः-ત્રણ પ્રકારનાં ઘેટાં आदित्यैः-પૃથિવીને માટે, अविज्ञाताः-વિશેષરૂપથી અજ્ઞાત પશુઓ धात्रे-ધારક વાયુના માટે सरूपाः-સમાન રૂપવાળા પશુઓ देवानाम्-દિવ્યગુણોવાળા વિદ્વાનોની पत्नीभ्यः-પત્નીઓ માટે અને वत्सतर्यः-અલ્પ આયુવાળી ગાયો; વત્સતરી = વાછરડી છે; તેને જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : જો સર્વ વિદ્વાનો શિલ્પ વિદ્યા દ્વારા અનેક યાન આદિની રચના કરે અને પશુઓનું પાલન કરીને તેનો ઉપયોગ કરે, તો તેઓ ધન સંપન્ન-શ્રીમાન બની શકે છે. (૫)

कृष्णग्रीवा आग्नेयाः शितिभ्रवो वसूनाᳯं रोहिता रुद्राणाᳯं श्वेताऽअवरोकिण आदित्यानां नभोरूपाः पार्जन्याः ॥ ६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે कृष्णग्रीवाः-ડોકથી ખેંચવા વાળા પશુઓ છે, તેઓ आग्नेयाः-અગ્નિ દેવતાવાળા છે; જે शितिभ्रवः-સફેદ ભમરવાળા છે, તેઓ वसुनाम्-પૃથિવીની વસુ-ધારણક્રિયાવાળા છે; જે रोहिताः-લાલ રંગવાળા છે, તેઓ रुद्राणाम्-પ્રાણ આદિ અગિયાર રુદ્રના અર્થાત્ વાયુઓની પ્રરોહણ = ઊંચા ચડવાની ક્રિયાવાળા છે; જે श्वेताः-સફેદ રંગવાળા अवरोकिणः-અવરોધક છે, તેઓ आदित्यानाम्-સૂર્ય સંબંધી મહિનાઓની અવરોધક ક્રિયાવાળા છે; જે नभोरूपाः-જળની સમાન રૂપવાળા છે, તેને पार्जन्याः મેઘ દેવતાવાળા અર્થાત્ મેઘ સમાન ગુણવાળા જાણવા જોઈએ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અગ્નિની આકર્ષણ ક્રિયા, પૃથિવી આદિની ધારણ ક્રિયા, વાયુઓની પ્રરોહણક્રિયા, આદિત્ય-મહિનાઓની અવરોધક ક્રિયા અને મેઘોની જલવર્ષક ક્રિયાને જાણીને તેના કાર્યોનો ઉપયોગ

કરવો જોઈએ. (૬)

उ॒न्न॒त ऋ॑ष॒भो वा॑म॒नस्तऽऐ॑न्द्रावैष्ण॒वा उ॑न्न॒तः शि॑तिबा॒हुः शि॑ति- पृष्ठस्तऽऐ॑न्द्राबार्हस्प॒त्याः शु॒करू॑पा वाजि॒नाः क॒ल्माषा॑ आग्निमारु॒ताः श्या॒माः पौ॒ष्णाः॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે उन्नतः ઊંચા, ऋषभः-શ્રેષ્ઠ અને वामनः-વાંકાં અંગોવાળા પશુઓ છે, ते-તેઓ ऐन्द्रावैष्णवाः-વિદ્યુત્ અને વાયુ દેવતાવાળા છે; જે उन्नतः-ઊંચા शितिबाहुः-પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનારી ભુજાઓની સમાન બળવાળા અને शितिपृष्ठः-સૂક્ષ્મ પીઠવાળા પશુઓ છે, ते-તેઓ ऐन्द्राबार्हस्पत्याः-વાયુ અને સૂર્ય દેવતાવાળા છે; જે शुकरूपाः-તોતાની સમાન રૂપવાળા, वाजिनाः-વેગવાન कल्माषाः-સફેદ અને કાળા રંગવાળા પશુઓ છે, ते-તેઓ आग्निमारुताः-અગ્નિ અને વાયુદેવતાવાળા છે; જે श्यामाः-કાળા રંગવાળા છે, તેઓ पौष्णाः-પુષ્ટિના કારણે મેઘ-વાદળ દેવતાવાળા છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પશુઓની ઉન્નતિ અને પુષ્ટિ કરે છે, તેઓ અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૭)

ए॒ता ऐ॑न्द्रा॒ग्ना द्वि॑रू॒पा अ॑ग्नीषो॒मीया॑ वाम॒ना अ॑न॒ड्वाह॑ आग्नावैष्ण॒वा व॒शा मै॑त्रावरु॒ण्यो॒ऽन्यत॑ऽएन्यो मै॒त्र्यः॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે જે एताः-એ પૂર્વોક્ત द्विरूपाः બે રૂપોવાળા છે, તેઓ ऐन्द्राग्नाः-વાયુ અને વિદ્યુત્ના સંગી છે; જે वामनाः-વાંકાં અંગોવાળા अनड्वाहः-બળદો છે, તેઓ अग्निषोमीयाः-અગ્નિ અને સોમ દેવતાવાળા તથા आग्नावैष्णवाः-અગ્નિ અને વાયુ દેવતાવાળા છે; જે वशाः-વંધ્યા ગાયો છે, તે સર્વ मैत्रावरुण्यः-પ્રાણ અને ઉદાન દેવતાવાળી છે; જે अन्यतएन्यः-અન્યત્ર પ્રાપ્ત થનારા છે, તેઓ मैत्र्यः-મિત્રનું પ્રિય વ્યવહાર-આચરણ કરે છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વાયુ અને અગ્નિ આદિના ગુણવાળા પશુઓનું પાલન કરે છે, તેઓ સર્વના ઉપકારક બને છે. (૮)

कृ॒ष्णग्रीवा॑ आग्ने॒या ब॒भ्रवः॑ सौ॒म्याः श्वे॒ता वा॑य॒व्या॒ अवि॑ज्ञाता॒ आदि॑त्यै॒ सरू॑पा धा॒त्रे व॑त्सत॒र्यो॑ दे॒वानां॒ पत्नी॑भ्यः॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે कृष्णग्रीवाः-કાળી ડોકવાળા પશુઓ છે, તેઓ आग्नेयाः-અગ્નિ દેવતાવાળા છે; જે बभ्रवः-નોળીયાના રંગ સમાન રંગવાળા છે, તેઓ सौम्याः-સોમ દેવતાવાળા છે; જે श्वेताः-સફેદ વર્ણના છે, તેઓ वायव्याः-વાયુ દેવતાવાળા છે; જે अविज्ञाताः-અવિદિત-ચિહ્નથી ણી ન શકાય તેવા છે, તેઓ अदित्यै-અખંડિત પ્રજજન ક્રિયાને માટે છે; જે सरूपाः-સમાન રૂપવાળા છે,

તેઓ धात्रे-ધારણ કરનાર વાયુને માટે છે અને જે वत्सतर्यः-નાની વયની વાછરડીઓ છે, તે સર્વ देवानाम्-સૂર્ય આદિની पत्नीभ्यः-પાલક ક્રિયાઓને માટે છે; એમ જાણવું જોઈએ. (૯)

ભાવાર્થ : જે પશુઓ ખેંચનારા અને ગળનારા છે, તેઓ અગ્નિની સમાન છે; જે ધારક છે, તેઓ ઔષધિની સમાન છે; જે આવરણ-ઢાંકનાર છે, તેઓ વાયુની સમાન છે; જે અવિજ્ઞાત છે, તેઓ પ્રજનન ક્રિયાને માટે છે; જે ધારક ગુણવાળા છે, તેઓ ધારણ ક્રિયાઓ માટે છે અને જે સૂર્યનાં કિરણોની સમાન પદાર્થ છે, તેને વ્યવહાર સાધન માટે પ્રયોગ કરવા યોગ્ય છે. (૯)

कृष्णा भौमा धूम्रा आन्तरिक्षा बृहन्तो दिव्याः शबला वैद्युताः सिध्मास्तारकाः ॥ १० ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે कृष्णाः-જે કાળા રંગવાળા અથવા ખેતર ખેડવાના હેતુ છે, ते-તેઓ भौमाः ભૂમિ દેવતાવાળા છે; જે धूम्राः-ધૂમાડિયા રંગના પશુઓ છે, તેઓ आन्तरिक्षाः-અંતરિક્ષ દેવતાવાળા છે; જે दिव्याः-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવ વાળા बृहन्तः-મોટા शबलाः-થોડા સફેદ રંગના છે, તેઓ वैद्युताः-વિદ્યુત્ દેવતાવાળા છે અને જે सिध्माः-મંગલકારી છે, તેઓ तारकाः-દુઃખથી પાર કરનારા છે, તેમ જાણો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિલેખન-ખેડવા આદિ કાર્ય કરનાર પશુ આદિ પદાર્થોને ભૂમિ આદિમાં સંયુક્ત કરે, તો તેઓ મંગલને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

धूम्रान् वसन्तायालभते श्वेतान् ग्रीष्माय कृष्णान् वर्षाभ्योऽरुणाञ्छरदे पृषतो हेमन्ताय पिशङ्गाञ्छिशिराय ॥ ११ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય वसन्ताय-વસંત ઋતુમાં સુખને માટે धूम्रान्-ધૂમાડાના રંગના પદાર્થો અને પશુઓને; ग्रीष्माय-ગ્રીષ્મ ઋતુમાં આનંદને માટે श्वेतान्-સફેદ રંગના; वर्षाभ्यः-વર્ષાઋતુમાં કાર્ય સિદ્ધિને માટે कृष्णान्-કાળા રંગના અથવા ખેતીની સિદ્ધિ કરાવનાર ; शरदे-શરદ ઋતુમાં સુખને માટે अरुणान्-થોડા લાલ રંગના; हेमन्ताय-હેમન્ત ઋતુમાં કાર્ય સિદ્ધિને માટે पृषतः-જાડા-મોટા; शिशिराय-શિશિર ઋતુમાં વ્યવહાર સિદ્ધિ માટે पिशङ्गान्-લાલ-પીળા રંગના પદાર્થો અને પશુઓને आ+लभते-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે; તે સદા સુખી રહે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ઋતુમાં જે પદાર્થ સંચય કરવા યોગ્ય અને સેવન કરવા યોગ્ય છે, તેનો સંચય કરીને તથા સેવન કરીને, નીરોગ બનીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષના સાધનોનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ. (૧૧)

त्र्यवयो गायत्र्यै पञ्चावयस्त्रिष्टुभे दित्यवाहो जगत्यै त्रिवत्साऽअनुष्टुभे तुर्यवाह उष्णिहे ॥ १२ ॥

પદાર્થ : જે त्र्यवयः-ત્રણ ઘેટાંવાળા છે, તેઓ गायत्र्यै-ગાયકની રક્ષાને માટે; જે पञ्चावयः-પાંચ ઘેટાંવાળા છે, તેઓ त्रिष्टुभे-ત્રણ શારીરિક, વાચિક અને માનસિક ત્રણ સુખોને સ્થિર કરવા માટે; જે दित्यवाहः-ભૂમિ આદિને ખેડનારા બળદોને પ્રાપ્ત કરનારા છે, તેઓ जगत्यै-જગતની રક્ષાને માટે; त्रिवत्साः-ત્રણ વાછરડાંવાળા અથવા નામ, સ્થાન અને જન્મ ત્રણેયમાં નિવાસ કરનારા છે, તેઓ अनुष्टुभे-અનુકૂળતા પૂર્વક સુખોને સ્થિર કરવા માટે; અને तुर्यवाहः-જે તુર્ય અવસ્થા અર્થાત્ પોતાના પશુઓમાં ચોથાને પ્રાપ્ત કરનારા છે, તેઓ उष्णिहे-ઉત્તમ સ્નેહને માટે પ્રયત્ન કરે તો સુખી રહે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો ગાયત્રી આદિ છંદોને ભણીને અર્થો દ્વારા સુખોની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ પશુપાલક લોકો ઘી આદિ પદાર્થોની વૃદ્ધિ કરે. (૧૨)

पृष्ठवाहो विराजऽउक्षाणो बृहत्याऽऋषभाः ककुभेऽनड्वाहः पङ्क्त्यै धेनवोऽतिच्छन्दसे ॥ १३ ॥

પદાર્થ : જે મનુષ્યો विराजे-વિરાટ્ છંદના અર્થને માટે पष्ठवाहः-પીઠથી ભાર વહન કરનારા; बृहत्यै-બૃહતી છંદના અર્થને उक्षाणः-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ સાંઢ, ककुभे-કકુપ્ ઉષ્ણિક્ છંદના અર્થને માટે ऋषभाः-અતિ બળવાન બળદ, पङ्क्त्यै-પંક્તિ છંદના અર્થને માટે अनड्वाहः-ગાડાને ખેંચવામાં સમર્થ બળદો, अति छन्दसे-અતિ જગતી છંદના અર્થને માટે धेनवः-દુધાળી ગાયોનો સ્વીકાર કરે છે, તેઓ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો વિરાટ્ આદિ છંદોથી અનેક વિદ્યા કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ ગૃહસ્થોએ ઊંટ આદિ પશુઓથી સમસ્ત કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૩)

कृष्णग्रीवा आग्नेया बभ्रवः सौम्याऽउपध्वस्ताः सावित्रा वत्सतर्यः सारस्वत्यः श्यामाः पौष्णाः पृश्नयो मारुता बहुरूपा वैश्वदेवा वशा द्यावापृथिवीयाः ॥ १४ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે कृष्णग्रीवाः-કાળી ડોકવાળા પશુઓ છે, તેઓ आग्नेयाः-અગ્નિ દેવતાવાળા; જે बभ्रवः-સર્વના ધારક અને પોષક પશુઓ છે, તેઓ सौम्याः-સોમ દેવતાવાળા; જે उपध्वस्ताः-નીચે પડનારા પશુઓ છે, તેઓ सावित्राः-સવિતા =સૂર્ય દેવતાવાળા છે; જે वत्सतर्यः-નાના વાછરડાંવાળી ગાયો છે, તે સર્વ सारस्वत्यः-વાણી દેવતાવાળી છે; જે श्यामाः-કાળા રંગના છે, તેઓ पौष्णाः-પુષ્ટિકારક મેઘ દેવતાવાળા છે; જે पृश्नयः-પૂછવા યોગ્ય =અજ્ઞાત છે, તેઓ मारुताः-મનુષ્ય દેવતાવાળા છે; જે बहुरूपाः-અનેક રૂપવાળા છે, તેઓ वैश्वदेवाः-વિશ્વદેવ દેવતાવાળા છે; જે वशाः-નિરંતર પ્રકાશમાન છે, તેઓ द्यावापृथिवीयाः-આકાશ અને પૃથિવી દેવતાવાળા જાણવા જોઈએ. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ શિલ્પી લોકો અગ્નિ આદિ પદાર્થોથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરે છે, તેમ ખેડૂતો પશુઓથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરે. (૧૪)

उक्ताः सञ्चराऽएता ऐन्द्राग्नाः कृष्णा वारुणाः पृश्नयो मारुताः

कायास्तूपराः ॥ १५ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે एताः-એ उक्ताः-કહેલા संचराः-સારી રીતે ચરવા વાળા પશુઓને ऐन्द्राग्नाः-ઈન્દ્ર અને અગ્નિ દેવતાવાળા; જે कृष्णाः-હળને ખેંચનારા છે, તેઓ वास्णाः-વરુણ દેવતાવાળા; જે पृश्नयः-ચિત્ર-વિચિત્ર ચિહ્નવાળા છે, તેઓ मास्ताः-મનુષ્ય દેવતાવાળા અને જે तूपराः-હિંસક છે, તેઓ कायाः-પ્રજાપતિ દેવતાવાળા છે; તેમ જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે વિવિધ દેશોમાં વિચરનારા પ્રાણીઓ છે, તેનાથી મનુષ્યોએ યથાયોગ્ય ઉપકાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ. (૧૫)

अग्नयेऽनीकवते प्रथमजानालभते मरुद्भ्यः सान्तपनेभ्यः सवात्यान् मरुद्भ्यो गृहमेधिभ्यो बष्किहान् मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः सꣳसृष्टान् मरुद्भ्यः स्वतवद्भ्यो-ऽनुसृष्टान्॥ १६ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન્ अनीकवते-પ્રશંસિત સેનાવાળા अग्नये-અગ્નિની સમાન તેજસ્વી સેનાપતિને માટે प्रथमजान्-પ્રથમ વિસ્તારયુક્ત કારણથી ઉત્પન્ન વીરોને; सान्तपनेभ्यः-ઉત્તમ તપ અર્થાત્ બ્રહ્મચર્ય આદિનું આચરણ કરનારા मरुद्भ्यः-પ્રાણની સમાન પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરનારા મનુષ્યોને માટે सवात्यान्-અનુકૂળ વાયુમાં રહેનારા પશુઓને; गृहमेधिभ्यः-ઘરમાં જેની ધીર બુદ્ધિ છે તે मरुद्भ्यः-મનુષ્યોને માટે बष्किहान्-ચિર કાલના ઉત્પન્ન પશુઓને; क्रीडिभ्यः-પ્રશંસિત વિહાર આનંદ કરનારા मरुद्भ्यः-મનુષ્યોને માટે संसृष्टान्-ઉત્તમ ગુણયુક્ત પશુઓને; स्वतवद्भ्यः-સ્વતઃ નિવાસવાળા मरुद्भ्यः-મનુષ્યોને માટે अनुसृष्टान्-સાથ રહેનારા પશુઓને आलभते-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા વિદ્યાર્થીઓ અને પશુઓને પાળવામાં આવે છે, તેમ અન્ય મનુષ્યોએ પણ તેને પાળવા જોઈએ. (૧૬)

उक्ताः सञ्चराऽएता ऐन्द्राग्नाः प्राशृङ्गा माहेन्द्रा बहुरूपा वैश्वकर्मणाः ॥ १७ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે જે एताः-એ ऐन्द्राग्नाः વાયુ અને વિદ્યુત્ દેવતાવાળા, प्राशृङ्गाः-ઉત્તમ શિંગડાવાળા, माहेन्द्राः-મહેન્દ્ર દેવતાવાળા, बहुरूपाः-અનેક રંગોવાળા, वैश्वकर्मणाः-વિશ્વકર્મા દેવતાવાળા પશુઓ અને संचराः-તેના પાલનનો માર્ગ उक्ताः-બતાવેલ છે; તે માર્ગો પર ચાલો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો દ્વારા પશુ આદિના પાલનના જે પ્રકારો કહેલ છે, તેમજ વેદોમાં બતાવેલ છે. (૧૭)

धूम्रा बभ्रुनीकाशाः पितॄणाꣳ सोमवतां बभ्रवो धूम्रनीकाशाः पितॄणां बर्हिषदां

कृष्णा ब॒भ्रुनी॑काशाः पितृ॒णाम॑ग्निष्वा॒त्तानां॑ कृ॒ष्णाः पृष॑न्तस्त्रैयम्ब॒काः॥ १८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે सोमवताम्-સોમ-શાન્તિ ગુણથી યુક્ત पितृणाम्-માતા અને પિતાને માટે बभ्रुनीकाशाः-નોળીયાની સમાન धूम्राः-ધૂમાડાના રંગવાળા પશુઓ, बर्हिषदाम्-સભાસદ पितृणाम्-પાલન કરનારા વિદ્વાનોને માટે कृष्णाः-કાળા, धूम्रनीकाशाः ધૂમાડિયા સમાન बभ्रवः-પુષ્ટિ કરનારા પશુઓ; अग्निष्वात्तानाम्-અગ્નિ વિદ્યાના જ્ઞાતા पितृणाम्-પાલક વિદ્વાનોને માટે बभ्रुनीकाशाः-પાલકની સમાન, कृष्णाः-કાળા રંગવાળા, पृषन्तः-સ્થૂલ અંગોવાળા त्रैयम्बकाः-ત્રણ સ્થાનોમાં વિશેષ ચિહ્નવાળા પશુઓ વા પદાર્થ છે; તેમ જાણો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા અને વિદ્યા જન્મના દાતા પિતર-વિદ્વાનો છે, તેઓનો ઘી આદિ પદાર્થો તથા ગાય આદિ પશુઓનાં દાનથી યથાયોગ્ય સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧૮)

उ॒क्ताः स॑ञ्च॒राऽए॒ताः शु॑नासी॒रीयाः॑ श्वे॒ता वा॑य॒व्याः श्वे॒ताः सौ॒र्याः॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે एताः-એ शुनासीरीयाः સુનાશીર દેવતાવાળા, ખેતીના સાધક, संचराः-સંચરણ કરનારા, वायव्याः-વાયુની સમાન દિવ્ય ગુણો વાળા, श्वेताः-સફેદ રંગવાળા सौर्याः-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન અને श्वेताः-સફેદ રંગવાળા પશુઓ उक्ताः-કહેલ છે; તેઓને પોતાના કાર્યોમાં સારી રીતે પ્રયુક્ત કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે પશુઓના જે દેવતાઓ બતાવેલ છે, તે પશુઓ તેઓના ગુણોના ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે. (૧૯)

व॒सन्ता॑य क॒पिञ्ज॑ला॒नाल॑भते ग्री॒ष्माय॑ कल॒विङ्का॑न्व॒र्षाभ्य॑स्ति॒त्तिरी॑ञ्छ॒रदे॒ वर्त्ति॑का हे॒म॒न्ता॒य॒ कक॑रा॒ञ्छिशि॑रा॒य॒ विक॑करान्॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! પક્ષીઓના જ્ઞાતા મનુષ્ય वसन्ताय-વસંત ઋતુને માટે कपिञ्जलान्-ચાતક, તેતર પક્ષી વિશેષોને; ग्रीष्माय-ગ્રીષ્મ ઋતુને માટે कलविङ्कान्-ચકલાઓને, वर्षाभ्यः-વર્ષાઋતુને માટે तित्तिरिन्-તેતરો ને, शरदे-શરદ ઋતુને માટે वर्त्तिकाः-બતક અને લાવા પક્ષી વિશેષોને, हेमन्ताय-હેમન્ત ઋતુને માટે ककरान्-કકર નામક પક્ષી વિશેષોને, शिशिराय-શિશિર ઋતુને માટે विककरान्-વિક્કર નામક પક્ષી વિશેષોને आ+लभते-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તમે જાણો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે-જે ઋતુમાં જે જે પક્ષી પ્રસન્ન કે હર્ષયુક્ત હોય છે, તે-તે ગુણોવાળા જાણવા જોઈએ. (૨૦)

स॒मु॒द्राय॑ शिशु॒मारा॒नाल॑भते प॒र्जन्या॑य म॒ण्डूका॑न॒द्भ्यो मत्स्या॑न्मि॒त्राय॑ कुली॒पया॑न्वरु॑णाय ना॒क्रान्॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ જળના જીવ-જંતુઓનાં પાલનને જાણનાર समुद्राय-મહાજલાશય - સમુદ્રને માટે शिशुमारान्-પોતાના બચ્ચાઓને મારનારા જલચરોને, पर्जन्याय-મેઘ-વાદળને માટે मण्डूकान्-

દેડકાંઓને; अद्भ्यः-જલોને માટે मत्स्यान्-માછલીઓને, मित्राय-મિત્રની સમાન સુખદાયક સૂર્યને માટે कुलीपयान्-કુલીપય નામક જલજ જંતુઓને, वरुणाय-જળને માટે नाक्रान्-મગરોને आ+लभते-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ જલચર જંતુઓના ગુણોના જ્ઞાતા તેની વૃદ્ધિ કરી શકે છે અથવા પકડી શકે છે, તેમ અન્ય લોકો પણ કરે. (૨૧)

सोमा॑य ह॒ꣳसाना ल॑भते वा॒यवे॑ ब॒लाका॑ऽइन्द्रा॒ग्निभ्यां॒ क्रुञ्चा॑न्मि॒त्राय॑ म॒द्गून्-वरु॑णाय चक्रवा॒कान्॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પક્ષીઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ सोमाय-ચન્દ્રમા વા ઔષધિઓમાં ઉત્તમ સોમને માટે हंसान्-હંસોને, वायवे-વાયુને માટે बलाकाः-બગલીઓને, इन्द्राग्निभ्याम्-વાયુ અને વિદ્યુત્‌ને માટે क्रुञ्चान्-સારસોને मित्राय-વાયુને [મિત્રોને] માટે मद्गून्-જલ કાગડાઓને, वरुणाय-જળને માટે चक्रवाकान्-ચકવાઓ પક્ષી आ+लभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે ઉત્તમ પક્ષીઓ છે, તેઓને પ્રયત્નપૂર્વક પાળીને વધારવા જોઈએ. (૨૨)

अ॒ग्नये॑ कु॒टरू॒नाल॑भते॒ व॒नस्पति॑भ्य॒ऽउलू॑कान॒ग्नीषोमा॑भ्यां॒ चाषा॑न॒श्विभ्यां॑ म॒यूरा॑न्मि॒त्रावरु॑णाभ्यां क॒पोता॑न्॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પક્ષીઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ अग्नये-અગ્નિને માટે कुटरून्-મરઘાંઓને, वनस्पतिभ्यः-વનસ્પતિ અર્થાત્ ફૂલ વિના ફળ આપનાર વૃક્ષોને માટે उलूकान्-ઘુવડોને, अग्नीषोमाभ्याम्-અગ્નિ અને સોમને માટે चाषान्-નીલકંઠોને, अश्विभ्याम्-સૂર્ય અને ચન્દ્રમાને માટે मयूरान्-મોરોને, मित्रावरुणाभ्याम्-મિત્ર અને વરુણને માટે कपोतान्-કબૂતરોને, आ+लभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેઓને તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે કૂકડા આદિ પક્ષીઓનાં ગુણોને જાણે છે, તેઓ સદા તેની વૃદ્ધિ કરે છે. (૨૩)

सोमा॑य ल॒बानाल॑भते॒ त्वष्ट्रे॑ कौली॒कान् गोषा॒दीर्दे॒वानां॒ पत्नी॑भ्यः कु॒लीका॑ देवजा॒मिभ्यो॒ऽग्नये॑ गृहप॑तये पारु॒ष्णान्॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પક્ષીઓનાં કામનો જ્ઞાતા પુરુષ - सोमाय-ઐશ્વર્યને માટે लबान्-લાવા-બટેરોને, त्वष्ट्रे-પ્રકાશક સૂર્યને માટે कौलीकान्-કૌલીક નામક પક્ષીઓને, देवानाम्-વિદ્વાનોની पत्नीभ्यः-પત્નીઓને માટે गोषादीः-ગાયને મારનાર પક્ષીણીઓને, देवजामिभ्यः-વિદ્વાનોની બેનોને માટે कुलिकाः-કુલિકા નામક પક્ષીણીઓને, अग्नये-અગ્નિની સમાન गृहपतये-ગૃહપતિને માટે पारुष्णान्-પારુષણ નામક પક્ષીઓને आ+लभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પક્ષીઓનાં સ્વાભાવિક કર્મોને જાણીને તેનું અનુકરણ કરે છે, તેઓ બહુશ્રુત લોકોની સમાન હોય છે. (૨૪)

अह्ने पा॒राव॒ता॒नाल॑भते॒ रात्र्यै॑ सीचा॒पूर॑होरा॒त्रयोः॑ स॒न्धिभ्यो॑ ज॒तूर्मासे॑भ्यो दात्यौ॒हान्त्सं॑वत्स॒राय॑ मह॒तः सु॑प॒र्णान्॥ २५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ કાળનો જ્ઞાતા પુરુષ अह्ने-દિવસને માટે पारावतान्-કલરવ કરતાં કબૂતરોને, रात्र्यै-રાત્રિને માટે सीचापूः-સીચાપૂ નામક પક્ષીઓને, अहोरात्रयोः-દિવસ-રાત્રિની सन्धिभ्यः-સંધિઓ અર્થાત્ સવાર-સાંજને માટે जतूः-જતૂ નામક પક્ષીઓને, मासेभ्यः-મહિનાઓને માટે दात्यौहान्-કાળા કાગડાઓને તથા संवत्सराय-વર્ષને માટે महतः-મહાન सुपर्णान्-સુંદર પાંખોવાળા ગરુડ પક્ષીઓને आलभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ તેઓને પ્રાપ્ત કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતપોતાના સમયને અનુકૂળ ક્રીડા કરનારા પક્ષીઓના સ્વભાવને જાણીને પોતાનો સ્વભાવ તેવો બનાવે છે, તેઓ અનેક વિષયોના જ્ઞાતા બની શકે છે. (૨૫)

भूम्या॑ आ॒खूनाल॑भते॒ऽन्तरि॑क्षाय पा॒ङ्क्तान् दि॒वे कशा॑न् दि॒ग्भ्यो न॑कु॒लान् बभ्रु॑कानवान्तरदि॒शाभ्यः॑॥ २६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ભૂમિનાં જન્તુઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ - भूम्यै-ભૂમિને માટે आखून्-ઉંદરોને, अन्तरिक्षाय-આકાશને માટે पाङ्क्तान्-પંક્તિ રૂપમાં ચાલનાર પક્ષીઓને, दिवे-પ્રકાશને માટે कशान्-કશ નામક પક્ષીઓને, दिग्भ्यः-પૂર્વ આદિ દિશાઓને માટે नकुलान्-નોળિયાઓને, अवान्तरदिशाभ्यः-ઉપદિશાઓને માટે बभ्रुकान्-ભૂરા રંગના નોળિયાઓને, आलभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ભૂમિ આદિની સમાન ઉંદર આદિના ગુણોને જાણીને ઉપકાર કરે છે, તેઓ અનેક વિજ્ઞાનવાન બની શકે છે. (૨૬)

वसु॑भ्य॒ऽऋश्या॒नाल॑भते रु॒द्रेभ्यो॒ रुरू॑नादि॒त्येभ्यो॒ न्यङ्कू॒न् विश्वे॑भ्यो दे॒वेभ्यः॑ पृष॒तान्त्सा॒ध्येभ्यः॑ कुलु॒ङ्गान्॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ પશુઓના ગુણોનો જ્ઞાતા પુરુષ - वसुभ्यः-અગ્નિ આદિ વસુઓને માટે ऋश्यान्-ઋષ્ય જાતિના હરણોને, रुद्रेभ्यः-પ્રાણ આદિ રુદ્રોને માટે रूरून्-રોજ નામક મૃગ વિશેષોને, आदित्येभ्यः-બાર મહિનાઓને માટે न्यङ्कून्-ન્યંકુ નામક પશુઓને विश्वेभ्यः-સમસ્ત देवेभ्यः-દિવ્ય પદાર્થો વા વિદ્વાનોને માટે पृषतान्-પૃષત્ જાતિના મૃગોને,साध्येभ्यः-સાધ્ય લોકોને માટે कुलुङ्गान्-કુલુંગ નામક પશુ વિશેષને आलभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો હરણ આદિ પશુઓના વેગમય ગુણોને જાણીને તેનાથી ઉપકાર ગ્રહણ કરે, તો તેઓ અત્યંત સુખને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૨૭)

ईशा॑नाय॒ त्वा पर॑स्वत॒आ ल॑भते मि॒त्राय॑ गौ॒रान् वरु॑णाय महि॒षान् बृह॒स्पत॑ये गव॒याँस्त्वष्ट्र॒ उष्ट्रा॑न्॥ २८॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! જે મનુષ્ય - ईशानाय-સમર્થ જનને માટે त्वा-આપ અને परस्वतः-પરસ્વાન નામક મૃગ વિશેષોને, मित्राय-મિત્રને માટે गौरान्-ગૌર વર્ણના પશુઓને, वरुणाय-અતિ શ્રેષ્ઠને માટે महिषान्-ભેંસોને, बृहस्पतये-બૃહસ્પતિ અર્થાત્ મહાત્માઓના રક્ષકને માટે गवयान्-નીલગાયોને તથા त्वष्ट्रे-ત્વષ્ટા અર્થાત્ પદાર્થ વિદ્યાથી પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનારા માટે उष्ट्रान्-ઊંટોને आलभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તે ધન-ધાન્યથી યુક્ત બને છે. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે પશુઓથી યથાવત્ ઉપકાર ગ્રહણ કરે છે, તેઓ સમર્થ બને છે. (૨૮)

प्रजापतये पुरुषान् हस्तिन आलभते वाचे प्लुषीँश्चक्षुषे मशकाञ्छ्रोत्राय भृङ्गाः॥ २९॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય प्रजापतये-પ્રજાપાલ રાજાને માટે पुरुषान्-પુરુષ =પુલિંગ हस्तिनः-હાથીઓને, वाचे-વાણીને માટે प्लुषीन्-પ્લુષી નામક જંતુઓને, चक्षुषे-નેત્રને માટે मशकान्-મચ્છરોને, श्रोत्राय-કાનને માટે भृङ्गाः-ભમરાઓને आलभते-પ્રાપ્ત કરે છે, તે બળવાન અને દૃઢ ઇન્દ્રિયોવાળો બને છે. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રજાની રક્ષાને માટે ચતુરંગિણી સેના તથા જિતેન્દ્રિયતાને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ શ્રીમાન અર્થાત્ ધનવાન અને કાંતિમાન બને છે. (૨૯)

प्रजापतये च वायवे च गोमृगो वरुणायारण्यो मेषो यमाय कृष्णो मनुष्यराजाय मर्कटः शार्दूलाय रोहिदृषभाय गवयी क्षिप्रश्येनाय वर्त्तिका नीलङ्गोः कृमिः समुद्राय शिशुमारो हिमवते हस्ती॥ ३०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે - प्रजापतये-પ્રજાપતિ च-અને તેના સંબંધીઓને માટે તથા वायवे-વાયુ च-અને તેના સંબંધી પદાર્થોને માટે गोमृगः-નીલગાય, वरुणाय-શ્રેષ્ઠ પુરુષને માટે आरण्यः-જંગલી मेषः-ઘેટાં, यमाय-ન્યાયાધીશને માટે कृष्णः-કાળું હરણ, मनुष्यराजाय-રાજાને માટે मर्कटः-વાનર, शार्दूलाय-મોટા સિંહ અર્થાત્ કેસરીને માટે रोहित्-લાલ હરણ, ऋषभाय-શ્રેષ્ઠ અને સભ્ય પુરુષને માટે गवयी-નીલગાય, क्षिप्रश्येनाय-શીઘ્રગામી અને श्येन-બાજ પક્ષીની સમાન પુરુષને માટે वर्त्तिका-બતક नीलङ्गोः-નીલ રંગના પ્રાણી-નાના કીટને માટે कृमिः-નાનું જંતુ, समुद्राय-સમુદ્રને માટે शिशुमारः-બચ્ચાઓને મારનાર શિશુમાર-જલજંતુ અને हिमवते-જેના અનેક હિમખંડ વિદ્યમાન છે, તે પર્વતને માટે हस्ती-હાથીનો પ્રયોગ કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો-મનુષ્યોથી સંબંધ રાખનારા ઉત્તમ પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે, તેઓ સાંગોપાંગ બળવાન બને છે. (૩૦)

मयुः प्राजापत्य उलो हलिक्ष्णो वृषदंशस्ते धात्रे दिशां कङ्को धुङ्क्षाग्नेयी कलविङ्को लोहिताहिः पुष्करसादस्ते त्वाष्ट्रा वाचे क्रुञ्चः॥ ३१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે प्राजात्यः-પ્રજાપતિ દેવતાવાળા मयुः-કિન્નર નિંદિત મનુષ્ય, उलः-નાનું

જંતુ हलिक्ष्णः-સિંહ વિશેષ અને वृषदंशः-બિલાડો છે ते-તેઓ धात्रे-ધારક વાયુને માટે कङ्कः-કઠોર પીઠવાળા બગલા दिशाम्-દિશાઓને માટે, धुङ्क्षा-ધુંક્ષા નામક પક્ષીણી आग्नेयी-અગ્નિ દેવતાવાળી, कलविङ्कः-ચકલો, लोहिताहि-લાલ સર્પ અને पुष्करसादः-તળાવમાં રહેનાર પ્રાણી છે, ते-તે સર્વ त्वाष्ट्राः સૂર્ય દેવતાવાળા છે અને वाचे-વાણીને માટે क्रुञ्चः-સારસ પક્ષી છે, તેને જાણવા જોઈએ. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેઓ શિયાળ અને સર્પને વશમાં કરી લે છે, તેઓ ધુરંધર છે. (૩૧)

सोमाय कुलुङ्ग आरण्योऽजो नकुलः शका ते पौष्णाः क्रोष्टा मायोरिन्द्रस्य गौरमृगः पिद्वो न्यङ्कुः कक्कटस्तेऽनुमत्यै प्रतिश्रुत्कायै चक्रवाकः॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો તમે - सोमाय-સોમના માટે कुलुङ्गः-કુલુંગ નામક પશુ વિશેષ, आरण्यः-જંગલી अजः-બકરો, नकुलः-નોળિયો અને शका-શક્તિમાન પશુ છે, ते-તેઓ पौष्णाः-પુષ્ટિકારકના સંબંધી છે; मायोः-વિશેષ પ્રકારનું શિયાળ क्रोष्टा સામાન્ય શિયાળ છે; इन्द्रस्य-ઐશ્વર્ય પુરુષના સંબંધી गौरमृगः-ગોરા રંગનું હરણ છે; જે पिद्वः-'પિદ્વ' નામક મૃગ વિશેષ, न्यङ्कुः -ન્યંકુ નામક મૃગ વિશેષ અને कक्कटः-કક્કટ નામક મૃગ વિશેષ છે, ते-તેઓ अनुमत्यै-અનુમતિને માટે અને प्रतिश्रुत्कायै-પ્રતિધ્વનિને માટે चक्रवाकः-ચાતક પક્ષી વિશેષનો પ્રયોગ કરો તો અનેક કાર્ય કરી શકો છો. (૩૨)

ભાવાર્થ : જે જંગલી પશુ આદિથી ઉપકાર લેવા જાણે, તે સફળ કાર્યોવાળા બને છે. (૩૨)

सौरी बलाका शार्गः सृजयः शयाण्डकस्ते मैत्राः सरस्वत्यै शारिः पुरुषवाक् श्वाविद्भौमी शार्दूलो वृकः पृदाकुस्ते मन्यवे सरस्वते शुकः पुरुषवाक्॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે सौरी-સૂર્ય દેવતા વાળી बलाका-બગલી, જે शार्गः-ચાતક, सृजयः-સૃજ્ય નામક પક્ષી વિશેષ અને शयाण्डकः-શયાંડક નામક પક્ષી વિશેષ છે, ते-તેઓ मैत्राः-પ્રાણ દેવતાવાળા છે; शारिः-મેના, पुरुषवाक्-તોતા सरस्वत्यै-નદીને માટે છે; श्वावित्-સાહુડી भौमी-ભૂમિ દેવતાવાળી છે; शार्दूलः-કેસરી સિંહ वृकः-વરુ અને पृदाकुः-સર્પ છે, ते-તેઓ मन्यवे-ક્રોધને માટે છે; शुकः-શુદ્ધિ કરનાર पुरुषवाक्-મનુષ્ય સમાન વાણીવાળા તોતા सरस्वते-સમુદ્રને માટે છે, તેમ જાણો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે બગલાં આદિ પશુ-પક્ષી છે, તેમાંથી કોઈ પાળવા યોગ્ય અને કોઈ તાડન યોગ્ય છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૩)

सुपर्णः पार्जन्य आतिर्वाहसो दर्विदा ते वायवे बृहस्पतये वाचस्पतये पैङ्गराजोऽलज आन्तरिक्षः प्लवो मद्गुर्मत्स्यस्ते नदीपतये द्यावापृथिवीयः कूर्मः॥ ३४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે सुपर्णः-સુંદર પાંખોવાળા પક્ષીઓ છે, તે पार्जन्यः-વાદળ સમાન ગુણોવાળા છે; જે आतिः-આતિ નામક પક્ષી, वाहसः-અજગર, સર્પ અને दर्विदा-લક્કડખોદ પક્ષી વિશેષ છે, ते-તેઓ वायवे-વાયુને માટે છે; पैङ्गराजः-પૈંગરાજ નામક પક્ષી बृहस्पतये-મોટા પદાર્થો તથા वाचस्पतये-વાણીના પાલકને માટે अलजः-અલજ નામક પક્ષી आन्तरिक्षः-અન્તરિક્ષ દેવતાવાળા છે;

प्लवः-જલ બતક मद्गुः-જલ કાગડો અને मत्स्यः-માછલી છે, તે સર્વ नदीपतये-સમુદ્રને માટે છે અને જે कूर्मः-કાચબો છે, તે द्यावापृथिवीयः-પ્રકાશ અને ભૂમિ દેવતાવાળા છે, તેમ જાણો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મેઘ-વાદળાં આદિના સમાન ગુણવાળા પશુ અને પક્ષીઓ વિશેષ છે, તેને ઉપયોગ-કાર્ય માટે પ્રયુક્ત કરવા જોઈએ. (૩૪)

पुरुषमृगश्चन्द्रमसो गोधा कालका दार्वाघाटस्ते वनस्पतीनां कृकवाकुः सावित्रो हꣳसो वातस्य नाक्रो मकरः कुलीपयस्तेऽकूपारस्य ह्रियै शल्यकः॥ ३५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે पुरुषमृगः-પુરુષોને શુદ્ધ કરનાર પશુ વિશેષ છે, તે चन्द्रमसः-ચન્દ્રમાનાં ગુણોવાળા છે; જે गोधा-ચંદન ઘો, कालका-કાલકા નામક પક્ષી અને दार्वाघाटः-લક્કડખોદ છે, ते-તેઓ वनस्पतीनाम्-વનસ્પતિઓના ગુણોવાળા છે; कृकवाकुः-કૂકડાં सावित्रः-સૂર્ય દેવતાવાળા છે; જે हंसः-वातस्य-વાયુના ગુણોવાળા છે; જે नाक्रः-મગરનાં બચ્ચાં, मकरः-મગર મચ્છ અને कुलीपयः-કુલીપય નામક જલ જંતુઓ છે, ते-તેઓ अकूपारस्य-સમુદ્રના ગુણોવાળા છે; જે शल्यकः-કાંટોની પાંખોવાળી સાહુડી છે, તે ह्रियै-લજ્જાને માટે છે, તેમ જાણો. (૩૫)

ભાવાર્થ : જે ચન્દ્રમા આદિના ગુણવાળા પશુ વિશેષ અને પક્ષી વિશેષ છે, તેને મનુષ્યોએ જાણવા જોઈએ. (૩૫)

एण्यह्नो मण्डूको मूषिका तित्तिरिस्ते सर्पाणां लोपाश आश्विनः कृष्णो रात्र्या ऋक्षो जतूः सुषिलीका त इतरजनानां जहका वैष्णवी॥ ३६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે एणी-હરિણી છે, તે अह्नः-દિવસના ગુણોવાળી છે; જે मण्डूकः-દેડકો, मूषिका-ઉંદરડી અને तित्तिरिः-તેતર છે, ते-તેઓ सर्पाणाम्-સર્પના ગુણોવાળા છે; लोपाशः-વનચર પશુ વિશેષ છે, તે आश्विनः-અશ્વિન દેવતાવાળું છે; જે कृष्णः-કાળા રંગનું પશુ છે, તે रात्र्यै-રાત્રિના ગુણોવાળું છે; જે ऋक्षः-રીંછ, जतूः-જતૂ નામક પક્ષી અને सुषिलीका-સુષિલીકા પક્ષી છે, ते-તેઓ इतरजनानाम्-અન્ય મનુષ્યોના ગુણોવાળા છે તથા जहका-અંગોનો સંકોચ કરનારી પક્ષિણી છે, તે वैष्णवी-વિષ્ણુ દેવતાવાળી છે; એમ જાણો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે દિવસ આદિના ગુણવાળા પશુ-પક્ષીઓ વિશેષ છે, તેઓને તે-તે ગુણોથી જાણવા યોગ્ય છે. (૩૬)

अन्यवापोऽर्द्धमासानामृश्यो मयूरः सुपर्णास्ते गन्धर्वाणामपामुद्रो मासान् कश्यपो रोहित्कुण्डृणाची गोलत्तिका तेऽप्सरसां मृत्यवेऽसितः॥ ३७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે-જે अन्यवापः-કોયલ પક્ષી છે, તે अर्द्धमासानाम्-અર્ધમાસ-પાક્ષિક ગુણોવાળા છે; જે ऋश्यः-ઋષ્ય નામક મૃગ, मयूरः-મોર અને सुपर्णाः-સુંદર પાંખોવાળા ગરુડ પક્ષીઓ છે, ते-તેઓ गन्धर्वाणाम्-ગાયકોના ગુણોવાળા છે; अपाम्-ગુણોનાં અર્થ જે उद्रः-જળચર કરચલો છે, તે मासान्-

મહિનાઓના ગુણોવાળો છે; જે कश्यपः-કાચબો, रोहित्-મૃગ વિશેષ, कुण्डृणाची-કુંડુણાચી નામક વનચરી અને गोलत्तिका-ગોલત્તિકા નામક વનચરી વિશેષ છે, ते-તેઓ अप्सरसाम्-કિરણ આદિના ગુણોવાળા છે તથા જે असितः-કાળા રંગનું પશુ વિશેષ છે, તે मृत्यवे-મૃત્યુને માટે છે; તેમ જાણો. (૩૭)

ભાવાર્થ : જે કાલ આદિ ગુણવાળા પશુ-પક્ષી છે તેઓ ઉપકારવાળા છે, તેમ તમે જાણો. (૩૭)

वर्षाहूर्ऋतूनामाखुः कशो मान्थालस्ते पितॄणां बलायाजगरो वसूनां कपिञ्जलः कपोत उलूकः शशस्ते निर्ऋत्यै वरुणायारण्यो मेषः॥ ३८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - वर्षाहूः-વર્ષાને બોલવનારી દેડકી છે, તે ऋतुनाम्-વસંત આદિના ગુણોવાળી છે; आखुः-ઉંદર, कशः-શાસનમાં રાખવા યોગ્ય ઘોડા આદિ તથા मान्थालः-માન્થાલ નામક જન્તુ વિશેષ છે, ते-તેઓ पितृणाम्-પાલકના ગુણોવાળા છે; बलाय-બળને માટે अजगरः-અજગર - મોટો સર્પ, वसूनाम्-અગ્નિ આદિ વસુઓના ગુણોને માટે कपिञ्जलः-ચાતક, कपोतः-કબૂતર, उलूकः-ઘૂવડ અને शशः-સસલા છે; ते-તેઓ निर्ऋत्यै-વિનાશને માટે છે તથા જે आरण्यः-જંગલી मेषः-ઘેટાં છે, તે वरुणाय-વરુણને માટે છે; તેમ જાણો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જે ઋતુ આદિના ગુણોથી યુક્ત પશુ-પક્ષીઓ છે, તેને તે-તે ગુણોવાળા જાણવા જોઈએ. (૩૮)

श्वित्र आदित्यानामुष्ट्रो घृणीवान् वार्ध्रीनसस्ते मत्याऽअरण्याय सृमरो रुरू रौद्रः क्वयिः कुटरुर्दात्यौहस्ते वाजिनां कामाय पिकः॥ ३९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - જે श्वित्रः-રંગ-બેરંગી પશુ વિશેષ છે, તે आदित्यानाम्-કાલ-અવયવોના ગુણવાળું છે; જે उष्ट्रः-ઊંટ घृणीवान्-તેજસ્વી પશુ વિશેષ અને वार्ध्रीनसः-ગળે આંચળ ધરાવતો મોટો બોકડો છે, ते-તેઓ मत्यै-બુદ્ધિને માટે છે; જે सृमरः-નીલગાય છે, તે अरण्याय-વનને માટે છે; જે रुरू-મૃગ વિશેષ છે, તે रौद्रः-રુદ્ર દેવતાવાળું છે; જે क्वयिः-કવયિ નામક પક્ષી વિશેષ, कुटरु-કૂકડો અને दात्यौहः-કાગડો છે, ते-તેઓ वाजिनाम्-ઘોડાઓના ગુણોવાળા છે; જે पिकः-કોયલ છે, તે कामाय-કામને માટે છે; એમ જાણો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે સૂર્ય આદિના ગુણોવાળા પશુ-પક્ષીઓ છે, તેઓ તે તે સ્વભાવ વાળા છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૩૯)

खड्गो वैश्वदेवः श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभस्तरक्षुस्ते रक्षसामिन्द्राय सूकरः सिꣳहो मारुतः कृकलासः पिप्पका शकुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषां देवानां पृषतः॥ ४०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - खड्गः-ઊંચા અને તીણાં સીંગડાવાળો ગેંડો છે, તે वैश्वदेवः-સર્વ વિદ્વાનોના ગુણોવાળો છે; જે कृष्णः-કાળા રંગનો श्वा-કૂતરો, कर्णः-લાંબા કાનવાળો गर्दभः-ગધેડો અને तरक्षुः-વાઘ છે, ते-તેઓ रक्षसाम्-રાક્ષસ - દુષ્ટ હિંસક ગુણોવાળા છે; જે सुकरः-ઉત્તમ શુદ્ધિ કરનાર

બળવાન સુવર-ડુક્કર છે, તે इन्द्राय-શત્રુ વિદારક રાજાને માટે છે; જે सिंहः-હિંસક વાઘ અથવા સિંહ છે, તે मारुतः-મરુત દેવતાવાળો છે; જે कृकलासः-કરચલો, पिप्पका-પિપ્પકા નામક પક્ષિણી અને शकुनिः-પક્ષી માત્ર છે, ते-તેઓ शरव्यायै-શર-શિક્ષામાં કુશળ સ્ત્રીને માટે છે તથા જે पृषतः-છાંટ-ટપકાંદાર મૃગ વિશેષ છે, તે विश्वेषाम्-સર્વ देवानाम्-વિદ્વાનોનાં ગુણોવાળા છે; તેમ જાણો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે સમસ્ત પશુ-પક્ષીઓ સર્વ ગુણોવાળા છે, તેઓને જાણીને વ્યવહારની સિદ્ધિને માટે સર્વ મનુષ્યો તેને નિયુક્ત કરે એ ઉપદેશ છે. (૪૦)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પશુ પક્ષી, મૃગ, સર્પ, જલજંતુઓ અને કૃમિ આદિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति चतुर्विंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ पञ्चविंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

शादं दद्भिरवकां दन्तमूलैर्मृदं बस्वैस्ते गान्दंष्ट्राभ्याᳬं सरस्वत्या ऽ अग्रजिह्वं जिह्वाया उत्सादमवक्रन्देन तालु वाजᳬं हनुभ्यामप आस्येन वृषणमाण्डाभ्यामादित्याँ श्मश्रुभिः पन्थानं भ्रूभ्यां द्यावापृथिवी वर्त्तोभ्यां विद्युतं कनीनकाभ्याᳬं शुक्राय स्वाहा कृष्णाय स्वाहा पार्याणि पक्ष्माण्यवार्या इक्षवोऽवार्याणि पक्ष्माणि पार्या इक्षवः॥ १॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ વિદ્યાર્થી ! ते-તારા दद्भिः-દાંતોથી शादम्-લક્ષ્ય પદાર્થોનું છેદક મુખ, दन्तमूलैः-દાંતોનાં મૂળ અને बस्वैः-દાંતોના પાછળના ભાગોથી अवकाम्-રક્ષક मृदम्-માટી, दंष्टाभ्याम्-દાઢ અને सरस्वत्यै-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનવાળી વાણીથી गाम्-વાણી, जिह्वायाः-જીભથી अग्रजिह्वम्-જીભનો અગ્રભાગ, अवक्रन्देन-વિકળતા રહિત વ્યવહારથી उत्सादम्-વર્ણોનું ઊર્ધ્વ સ્થાન तालु, हनुभ्याम्-જડબાના બે ભાગોથી वाजम्-અન્ન, आस्येन-ભક્ષ્ય પદાર્થોને ભીના કરનાર મુખથી अपः-જળ, आण्डाभ्याम्-વીર્યના આધાર રૂપ અંડકોષોથી वृषणम्-વીર્યની વર્ષા કરનાર અંગ, श्मश्रुभिः-દાઢી અને મૂછના વાળથી आदित्यान्-મુખ્ય વિદ્વાનો भ्रूभ्याम्-નેત્ર ગોલકનો ઉપરનો ભાગ અર્થાત્ ભમરથી पन्थानम्-માર્ગ, वर्तोभ्याम्-જવા-આવવાથી द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને ભૂમિ, कनीनका भ्याम्-તેજોમય કૃષ્ણ ગોલકનાં તારક-દષ્ટિથી विद्युतम्-વિદ્યુત્‌નો હું બોધ કરું છું.

તું शुक्राय-વીર્યને માટે स्वाहा-બ્રહ્મચર્યનું આચરણ, कृष्णाय-વિદ્યાનાં આકર્ષણને માટે स्वाहा-સુંદરશીલતા યુક્ત આચરણ-ક્રિયા, पार्याणि-પૂર્ણ કરવા યોગ વચન, पक्ष्माणि-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય કર્મ વા નેત્રોનાં ઉપરનાં પોષણ-વાળ, अवार्याः નદી આદિના નીચેના ભાગમાં થનાર इक्षवः-શેરડી, अवार्याणि-નીચેનાં पक्ष्माणि-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય કર્મ વા પાંપણ તથા पार्याः-પાલન કરવા યોગ્ય इक्षवः-શેરડી છે, તેને ગ્રહણ કર. (૧)

ભાવાર્થ : અધ્યાપકોએ પોતાના શિષ્યોના અંગોના ઉપદેશથી પુષ્ટ બનાવીને, આહાર-વિહાર આદિ સારી રીતે બોધ કરાવીને, સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરાવીને, અખંડિત બ્રહ્મચર્યનું સેવન કરાવીને તથા ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવીને સુખી બનાવવા જોઈએ. (૧)

वातं प्राणेनापानेन नासिकेऽउपयाममधरेणौष्ठेन सदुत्तरेण प्रकाशेनान्तरमनूकाशेन बाह्यं निवेष्यं मूर्ध्ना स्तनयित्नुं निर्बाधेनाशनिं मस्तिष्केण विद्युतं कनीनकाभ्यां कर्णाभ्याᳬं श्रोत्रᳬं श्रोत्राभ्यां कर्णौ तेदनीमधरकण्ठेनापः

शुष्ककण्ठेन चित्तं मन्याभिरदितिः शीर्ष्णा निर्ऋतिं निर्जर्जल्पेन शीर्ष्णा संक्रोशैः प्राणान् रेष्माणꣳ स्तुपेन॥ २॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ મારા ઉપદેશના ગ્રહણથી તું प्राणेन-પ્રાણ અને अपानेन-અપાનથી वातम्-વાયુ, नासिके-નાકના બે છિદ્રો તથા उपयामम्-સ્વીકૃત નિયમને; अधरेण-મુખની નીચે ओष्ठेन-હોઠથી અને उत्तरेण-ઉપરના प्रकाशेन-પ્રકાશરૂપ હોઠથી सदन्तरम्-મધ્યમાં રહેલ મુખ આદિ સ્થાનને, अनुकाशेन-અનુકૂળ પ્રકાશથી बाह्यम्-બહારનાં અંગને मूर्ध्ना-શિરથી निवेष्यम्-નિશ્ચયથી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય જ્ઞાનને; निर्बाधेन-નિરંતર તાડનાના કારણે स्तनयित्नुम्-શબ્દ કરનારી अशनिम्-વ્યાપક વિદ્યુત્‌ને, मस्तिष्केण-શિરમાં સ્થિત મજ્જાના તંતુ સમૂહથી विद्युतम्-અતિ પ્રકાશમાન વિદ્યુત્‌ને; कनीनकाभ्याम्-પ્રદીપ્ત અને કમનીય कर्णाभ्याम्-શબ્દોને સંભળાવનાર વાયુથી कर्णौ-કાનોને; श्रोताभ्याम्-સાંભળવાનાં સાધન કાનોનાં ગોલકોથી श्रोत्रम्-શ્રવણેન્દ્રિય તથા तेदनीम्-શ્રવણ ક્રિયાને, अधरकण्ठेन-કંઠના નીચેના ભાગથી अपः-જલોને, शुष्ककण्ठेन-શુષ્ક કંઠથી चितम्-વિજ્ઞાનની સાધક અન્તઃકરણની વૃત્તિને, मन्याभिः-વિજ્ઞાનની ક્રિયાઓથી अदितिम्-અવિનાશક શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને, शीर्ष्णा-શિરથી निर्ऋतिम्-ભૂમિને, निर्जर्जल्पेन-નિરંતર જર્જરી ભૂત शीर्ष्णा-શિરથી અને संक्रोशैः-ઉત્તમ આહ્વાનોથી प्राणान्-પ્રાણોને પ્રાપ્ત કર. स्तुपेन-હિંસાથી रेष्माणम्-હિંસક અવિદ્યા આદિ રોગોનો हिन्धि-વિનાશ કર. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પ્રથમ વયમાં શરીર આદિ સાધનોથી શરીર અને આત્માનાં બળને સારી રીતે પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. અવિદ્યા, કુશિક્ષા તથા દુષ્ટાચરણ આદિ રોગોનો સર્વથા નાશ કરવો જોઈએ. (૨)

मशकान्केशैरिन्द्रꣳ स्वपसा वहेन बृहस्पतिꣳ शकुनिसादेन कूर्म्मांञ्छफैरा-क्रमणꣳ स्थूराभ्यामृक्षलाभिः कपिञ्जलाञ्जवं जङ्घाभ्यामध्वानं बाहुभ्यां जाम्बीलेना-रण्यमग्निमतिरुग्भ्यां पूषणं दोर्भ्यामश्विनावꣳसाभ्याꣳ रुद्रꣳ रोराभ्याम्॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે केशैः-શિરના વાળથી इन्द्रम्-ઐશ્વર્યને, शकुनिसादेन-પક્ષીઓને પ્રાપ્ત કરવાના સાધનથી कूर्मान्-કાચબાને તથા मशकान्-મચ્છરોને स्वपसा-ઉત્તમ કર્મ અને वहेन-દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર વાહનથી बृहस्पतिम्-મહાન વાણીના સ્વામી વિદ્વાનને, स्थूराभ्याम्-સ્થૂલ ऋक्षलाभिः ગતિ અને ગ્રહણ કરવા આદિ ક્રિયાઓથી कपिञ्जलान्-કપિંજલ નામક પક્ષીઓને जङ्घाभ्याम्-જાંઘોથી अध्वानम्-માર્ગ અને जवम्-વેગને; अंसाभ्याम्-ખંભા, बाहुभ्याम्-ભુજાઓ તથા शफैः-ખરીથી आक्रमणम्-આક્રમણને-ગતિને; जाम्बीलेन-ચકોતરો - મોટા લીંબુ આદિ ફળથી अरण्यम्-વનને, अग्निम्-અગ્નિને अतिरुभ्याम्-અત્યંત રુચિ, પ્રીતિ અને ઇચ્છાથી पूषणम्-પુષ્ટિને, दोर्भ्याम्-હાથોથી अश्विनौ-પ્રજા અને રાજાને પ્રાપ્ત કરો અને रोराभ्याम्-કહેવા અને સાંભળવાથી रुद्रम्-રડાવનાર વિઘ્નને દૂર કરો. (૩)

ભાવાર્થ :મનુષ્યોએ અનેક ઉપાયો દ્વારા ઉત્તમ ગુણોની પ્રાપ્તિ તથા વિઘ્નોનું નિવારણ કરવું જોઈએ. (૩)

अग्नेः पक्षतिर्वायोर्निपक्षतिरिन्द्रस्य तृतीया सोमस्य चतुर्थ्यदित्यै पञ्चमीन्द्राण्यै षष्ठी मरुताᳬं सप्तमी बृहस्पतेरष्टम्यर्यम्णो नवमी धातुर्दशमीन्द्रस्यैकादशी वरुणस्य द्वादशी यमस्य त्रयोदशी॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે अग्नेः-અગ્નિની पक्षतिः-સર્વત્રથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહાર =ક્રિયા કરવાનું મૂળ, वायोः-વાયુની निपक्षतिः-નિશ્ચિત વિષયનું મૂળ, इन्द्रस्य-સૂર્યની तृतीया-ત્રણને પૂરી કરવાની ક્રિયા, सोमस्य-ચંદ્રમાની चतुर्थी-ચોથી, अदित्यै-અન્તરિક્ષની पञ्चमी-પાંચમી, इन्द्राण्यै-વિદ્યુત્‌ની સ્ત્રીની સમાન દીપ્તિની षष्ठी-છટ્ઠી, मरुताम्-પવનની सप्तमी-સાતમી, बृहस्पतेः-મોટાનું પાલન કરનાર મહત્તત્વની अष्टमी-આઠમી, अर्यम्णः-સ્વામી જનોનો સત્કાર કરનારની नवमी-નવમી, धातुः-ધારણ કરનારની दशमी-દશમી, इन्द्रस्य-ઐશ્વર્યવાનની एकादशी-અગિયારમી, वरुणस्य-શ્રેષ્ઠ પુરુષની द्वादशी-બારમી અને यमस्य-ન્યાયાધીશની त्रयोदशी-તેરમી ક્રિયાઓને કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારે ક્રિયા, વિજ્ઞાન અને સાધનોથી અગ્નિ આદિના ગુણોને જાણીને સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

इन्द्राग्न्योः पक्षतिः सरस्वत्यै निपक्षतिर्मित्रस्य तृतीयाऽपां चतुर्थी निर्ऋत्यै पञ्चम्यग्नीषोमयोः षष्ठी सर्पाणाᳬं सप्तमी विष्णोरष्टमी पूष्णो नवमी त्वष्टुर्दशमीन्द्रस्यैकादशी वरुणस्य द्वादशी यम्यै त्रयोदशी द्यावापृथिव्योर्दक्षिणं पार्श्वं विश्वेषां देवानामुत्तरम्॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે इन्द्राग्न्योः-વાયુ અને અગ્નિની पक्षतिः-સર્વત્રથી ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહારની મૂળ પહેલી, सरस्वत्यै-વાણીને માટે निपक्षतिः-નિશ્ચિત પક્ષનું મૂળ બીજી, मित्रस्य-મિત્રની तृतीया-ત્રીજી, अपाम्-જલોની चतुर्थी-ચોથી, निर्ऋत्यै-ભૂમિની पञ्चमी-પાંચમી, अग्नीषोमयोः-ઉષ્ણ અને શીતકારક અગ્નિ અને જલની षष्ठी-છટ્ઠી, सर्पाणाम्-સર્પોની सप्तमी-સાતમી, विष्णोः-વ્યાપક ઈશ્વરની अष्टमी-આઠમી, पूष्णः-પોષકની नवमी-નવમી, त्वष्टुः-પ્રદીપ્ત સૂર્યની दशमी-દશમી, इन्द्रस्य-જીવની एकादशी-અગિયારમી, वरुणस्य-શ્રેષ્ઠજનની द्वादशी-બારમી અને यम्यै-ન્યાયકર્તા સ્ત્રીની त्रयोदशी-તેરમી ક્રિયા છે, તે સર્વને તથા द्यावापृथिव्योः-પ્રકાશ અને ભૂમિના दक्षिणम्-જમણા पार्श्वम्-ભાગને અને विश्वेषाम्-સર્વ देवानाम्-વિદ્વાનોના उत्तरम्-ઉત્તર ભાગને જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એ મંત્રોક્ત-વાયુ, અગ્નિ આદિના વિજ્ઞાનને માટે અનેક પ્રકારની ક્રિયાઓ કરીને કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૫)

मरुताᳬं स्कन्धा विश्वेषां देवानां प्रथमा कीकसा रुद्राणां द्वितीयादित्यानां

तृतीया वायोः पुच्छमग्नीषोमयोर्भासदौ क्रुञ्चौ श्रोणिभ्यामिन्द्राबृहस्पती ऊरुभ्यां मित्रावरुणावल्गाभ्यामाक्रमणꣳ स्थूराभ्यां बलं कुष्ठाभ्याम्॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે मस्ताम्-મનુષ્યોના स्कन्धाः-ખંભા विश्वेषाम्-સર્વ देवानाम्-વિદ્વાનોની प्रथमा-પહેલી ક્રિયા कीकसा-અત્યંત શાસન, रुद्राणाम्-રડાવનાર વિદ્વાનોની द्वितीया-બીજી તાડન ક્રિયા, आदित्यानाम्-અખંડિત ન્યાય કરનારા વિદ્વાનોની तृतीया-ત્રીજી ન્યાય ક્રિયા, वायोः-વાયુ સંબંધી पुच्छम्-પશુનું પૂછડું अग्निषोमयोः-અગ્નિ-સૂર્ય અને જલ-ચન્દ્ર સંબંધી भासदौ-પ્રકાશ આપનાર क्रुञ्चौ-બે સારસ પક્ષી, श्रोणिभ्याम्-કટિ પ્રદેશોને માટે इन्द्राबृहस्पती-વાયુ અને સૂર્ય, ऊरुभ्याम्-સાથળને માટે मित्रावरुणौ-પ્રાણ અને ઉદાન, अल्गाभ्याम्-અત્યંત ગતિ કરનારી ઉરુ સંધિઓને માટે आक्रमणम्-ગતિ વિશેષ, स्थूराभ्याम्-સ્થૂલ कुष्ठाभ्याम् નિતંબના કૂપકોને માટે बलम्-બળને સિદ્ધ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ બાહુબળ, પોતાનાં શરીરની પુષ્ટિ, દુષ્ટોનું તાડન્ અને ન્યાયના પ્રકાશ આદિના કર્મો સદા કરવા જોઈએ. (૬)

पूषणं वनिष्ठुनान्धाहीन्त्स्थूलगुदया सर्पान् गुदाभिर्विह्रुत आन्त्रैरपो वस्तिना वृषणमाण्डाभ्यां वाजिनꣳ शेपेन प्रजाꣳ रेतसा चाषान् पित्तेन प्रदरान् पायुना कूश्माञ्छकपिण्डैः॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો તમે - वनिष्ठुना-માગવાથી पूषणम्-પુષ્ટિ કરનારને, स्थूलगुदया-સ્થૂલગુદાથી યુક્ત अन्धाहीन्-આંધળા સર્પોને, गुदाभिः-ગુદાસહિત विह्रुतः-વિશેષ કુટિલ सर्पान्-સર્પોને, आन्त्रैः-આન્ત્રોથી अपः-જલોને, वस्तिना-મૂત્રાશયથી वृषणम्-અંડકોષને, आण्डाभ्याम्-અંડોથી वाजिनम्-ઘોડાના शेपेन-લિંગ અને रेतसा-વીર્યથી प्रजाम्-સંતાનને, पित्तेन-પિત્તથી चाषान्-ભોજનોને प्रदरान्-ઉદરનાં અવયવોની पायुना-ગુદેન્દ્રિયથી, शकपिण्डैः-શક્તિઓથી कूश्मान्-શાસનને ગ્રહણ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે-જે અંગ અથવા પદાર્થથી જે-જે કાર્ય સિદ્ધ થાય, તે-તે અંગ અથવા પદાર્થથી તે-તે કાર્યો સિદ્ધ કરો. (૭)

इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै पाजस्यं दिशां जत्रवोऽदित्यै भसज्जीमूतान् हृदयौपशेनान्तरिक्षं पुरीतता नभ उदर्येण चक्रवाकौ मतस्नाभ्यां दिवं वृक्काभ्यां गिरीन् प्लाशिभिरुपलान् प्लीह्ना वल्मीकान् क्लोमभिर्ग्लौभिर्गुल्मान् हिराभिः स्रवन्तीर्ह्रदान् कुक्षिभ्याꣳ समुद्रमुदरेण वैश्वानरं भस्मना॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ઉત્તમ પ્રયત્નથી इन्द्रस्य-વિદ્યુત્નું क्रोडः-કૂબવું, अदित्यै-પૃથિવીને માટે पाजस्यम्-અન્નોની શ્રેષ્ઠતા, दिशाम्-દિશાઓની जत्रवः-સંધિઓ અને अदित्यै-પ્રકાશની भसत्-દીપ્તિને

જાણો.

जीमूतान्-મેઘોને हृदयौपशेन-હૃદયમાં શયન કરનાર જીવથી; पुरीतता-હૃદયમાં રહેલી નાડીથી अन्तरिक्षम्-હૃદયાકાશને उदर्येण-ઉદરમાં થતા વ્યવહારથી नभः-જલને, चक्रवाकौ-પક્ષી સમાન જે પદાર્થને માટે मतस्नाभ्याम्-ગળાના બન્ને ભાગોથી; दिवम्-પ્રકાશને वृक्काभ्याम्-જે ક્રિયાઓથી અવગુણોનો ત્યાગ થાય છે, તેથી गिरीन्-પર્વતોને प्लाशिभिः-ઉત્તમ ભોજન આદિ ક્રિયાઓથી,. उपलान्-અન્ય પ્રકારના મેઘોને प्लीह्ना-હૃદયસ્થ પ્લીહા (બરોળ) નામક અવયવથી वल्मीकान् -માર્ગોને क्लोमभिः-ભીનાશ કરવા અને ग्लौभिः-હર્ષના ક્ષયથી, गुल्मान्-ઉદરમાં દક્ષિણ ભાગમાં સ્થિત ગુલ્મ નામક અંગની हिराभिः-વૃદ્ધિથી, स्रवन्तीः-નદીઓ અને ह्रदान्-નાના તળાવોને कुक्षिभ्याम्-કાંખોથી, समुद्रम्-સમુદ્રને उदरेण-ઉદરથી; भस्मना-બળેલ પદાર્થના શેષભાગ રાખથી, वैश्वानरम्-સર્વના પ્રકાશક અગ્નિને તમે જાણો. (૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો અનેક વિદ્યા સંબંધી બોધોને પ્રાપ્ત કરીને તથા ઉચિત આહાર-વિહારથી સર્વ અંગોની પુષ્ટિ કરીને રોગોનું નિવારણ કરે, તો તેઓ ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૮)

विधृतिं नाभ्या घृतꣳ रसेनापो यूष्णा मरीचीर्विप्रुड्भिर्नीहारमूष्मणा शीनं वसया प्रुष्वाऽअश्रुभिर्ह्रादुनीर्दूषीकाभिरस्ना रक्षाꣳसि चित्राण्यङ्गैर्नक्षत्राणि रूपेण पृथिवीं त्वचा जुम्बकाय स्वाहा॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - नाभ्या-શરીરના મધ્યભાગ નાભિથી विधृतिम्-વિશેષ કરીને ધારણાને घृतम्-ઘૃતને, रसेन-રસથી अपः-જલોને, यूष्णा-કવાથ રૂપ રસથી, मरीचीः-કિરણોને; विप्रुड्भिः-વિશેષ પૂર્ણ બિન્દુઓથી नीहारम्-સવારના સમયે ચંદ્રસમાન ઝાકળને, उष्मणा-ગરમીથી शीनम्-જામેલા ઘી ને, वसया-નિવાસના હેતુ જીવનથી प्रुष्वाः-પોષક અને સિંચન ક્રિયાઓને, अश्रुभिः-આંસુઓથી ह्रादुनीः-શબ્દોની અસ્પષ્ટ ઉચ્ચારણ ક્રિયાઓને, दूषिकाभिः-વિકારોથી चित्राणि-ચિત્ર-વિચિત્ર અર્થાત્ અદ્‌ભુત रक्षांसि-પાલન કરવા યોગ્ય अस्ना-રક્ત આદિ પદાર્થોને, अङ्गैः-અંગો અને रूपेण-રૂપથી नक्षत्राणि-નક્ષત્રોને, त्वचा-માંસ અને રક્ત આદિનું આચ્છાદન કરનાર ત્વચા ઈન્દ્રિયથી पृथिवीम्-ભૂમિને જાણીને जुम्बकाय-અતિ વેગવાન દુર્વ્યસનોનાં નિવારણને માટે स्वाहा-સત્યવાણીનો પ્રયોગ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ધારણા આદિ કર્મો દ્વારા દુર્વ્યસનો અને રોગોનું નિવારણ કરીને સત્ય ભાષણ આદિ ધર્મનાં લક્ષણોને વિચાર પૂર્વક સર્વત્ર પ્રવૃત્ત કરવા જોઈએ. (૯)

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ १०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે જે हिरण्यगर्भः-સૂર્ય આદિ તેજોમય પદાર્થ જેના ગર્ભમાં છે તે પરમાત્મા जातः-પ્રકટ અને भूतस्य-ઉત્પન્ન થયેલા જગતના एकः-એક અન્ય સહાય વિના अग्रे-ભૂમિ

આદિ સૃષ્ટિથી પૂર્વ પણ पतिः-પાલક आसीत्-છે, અને સર્વના પ્રકાશક अवर्त्तत-વિદ્યમાન હતા.

सः-તે पृथिवीम्-પોતાની આકર્ષણ શક્તિથી ભૂમિને उत-અને द्याम्-પ્રકાશને सम् दाधार-સારી રીતે ધારણ કરી રહેલ છે. જેણે इमाम्-આ સૃષ્ટિને રચેલ છે, તે कस्मै-સુખકારક देवाय-પ્રકાશમાન પરમાત્માને માટે हविषा-હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોથી विधेम-પરિચર્યા અર્થાત્ સેવા કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ સેવા કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરે સૂર્ય આદિ સંપૂર્ણ જગતને બનાવેલ છે અને પોતાના સામર્થ્યથી ધારણ કરેલ છે, તેની ઉપાસના કરો. (૧૦)

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।

य ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે यः-જે સૂર્ય प्राणतः-શ્વાસ લેનાર પ્રાણી અને निमिषतः-ચેષ્ટા કરનાર जगतः-સંસારની महित्वा-પોતાના મહિમાથી एकः-એક અન્યની સહાય વિના इत्-જ राजा-પ્રકાશ કરનાર बभूव-છે.

यः-જે अस्य-એ द्विपदः-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ અને चतुष्पदः-ચાર પગવાળા ગાય આદિ પશુરૂપ જગત્‌નો ईशे-પ્રકાશ કરે છે, તે कस्मै-સુખકારક देवाय-પ્રકાશક જગદીશ્વરને માટે हविषा-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થ વા વ્યવહારથી विधेम-સેવન કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ સેવન કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જો સૂર્ય ન હોય તો સ્થાવર-જડ અને જંગમ-ચેતન જગત્ પોતાનું કાર્ય કરી શકે નહિ. જે સર્વથી મહાન, સર્વનો પ્રકાશક અને ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિનો હેતુ છે, તેનું સર્વ મનુષ્યોએ યુક્તિથી સેવન કરવું જોઈએ. (૧૧)

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रꣳ सरया सहाहुः।

यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यस्य-જે સૂર્યના महित्वा-મહિમાથી इमे-એ हिमवन्तः-હિમાલય આદિ પર્વત આકર્ષિત છે; यस्य-જેના सरया-સ્નેહની सह-સાથે समुद्रम्-જેમાં જલ રહે છે તે અન્તરિક્ષને आहुः-કહે છે.

यस्य-જેની इमाः-દિશાઓ અને यस्य-જેની प्रदिशः-ઉપદિશાઓ बाहू-ભુજાઓ સમાન વિદ્યમાન आहुः કહે છે; तस्मै-તે कस्मै-સુખરૂપ देवाय-કામના કરવા યોગ્ય સૂર્યમંડળનું हविषा-હવન કરવા યોગ્ય પદાર્થોથી અમે विधेम-સેવન કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વથી મહાન, સર્વનો પ્રકાશકર્તા, બધાથી રસને ખેંચનારો છે તથા જેના પ્રતાપથી દિશાઓ અને ઉપદિશાઓનો વિભાગ થાય છે, તે સૂર્યલોકનું યુક્તિથી સેવન કરવું

યોગ્ય છે. (૧૨)

य आत्मदा बलदा यस्य विश्वऽउपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य च्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ १३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે आत्मदाः-આત્માનો દાતા તથા बलदाः-બળનો દાતા છે અને यस्य-જેની प्रशिषम्-ઉત્તમ શિક્ષાની विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો उपासते-ઉપાસના - સેવન કરે છે; यस्य-જેના સાનિધ્યથી સર્વ વ્યવહાર ઉત્પન્ન થાય છે; यस्य-જેની छाया-આશ્રય अमृतम्-અમૃત સ્વરૂપ છે; यस्य-જેની આજ્ઞાનો ભંગ કરવો એ मृत्युः-મૃત્યુ સમાન છે; તે कस्मै-સુખરૂપ देवाय-સ્તુતિને યોગ્ય પરમાત્માને માટે અમે हविषा-હોમ યોગ્ય પદાર્થોથી विधेम-સેવા કરીએ છીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વરનાં અનુશાસનમાં તથા તેના દ્વારા સ્થાપિત મર્યાદામાં સૂર્ય આદિ લોક નિયમથી ચાલે છે, જે સૂર્ય વિના વર્ષા અને આયુનો ક્ષય થતો નથી, તે સૂર્ય જેણે રચેલ છે, તે [પરમેશ્વર]ની જ ઉપાસના અમે મળીને કરીએ. (૧૩)

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः।
देवा नो यथा सदमिद्वृधेअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥ १४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ नः-અમે विश्वतः-સર્વત્રથી भद्राः-કલ્યાણકારી अदब्धासः-હિંસા રહિત अपरीतासः-અન્યોથી અવ્યાપ્ત અર્થાત્ સર્વ કાર્યોમાં શ્રેષ્ઠ, उद्भिदः-દુઃખોનું ભેદન કરનાર क्रतवः-યજ્ઞ વા બુદ્ધિ आ + यन्तु-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય.

यथा-જેમ नः-અમારી सदम्-સભામાં પ્રાપ્ત થયેલ अप्रायुवः-અનષ્ટ આયુવાળા - યુવક, देवाः-પૃથિવી આદિની સમાન વિદ્વાન્ इत्-જે दिवे दिवे-પ્રતિદિન वृधे-વૃદ્ધિને માટે रक्षितारः-રક્ષક असन्-બને; એવું આચરણ કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરનાં વિજ્ઞાનથી અને વિદ્વાનોના સંગથી પુષ્કળ બુદ્ધિઓને પ્રાપ્ત કરીને તથા સર્વ પ્રકારે ધર્મનું આચરણ કરીને સર્વના નિત્ય રક્ષક બનવું જોઈએ. (૧૪)

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाᳬं रातिरभि नो निवर्त्तताम्।
देवानाᳬं सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ १५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ देवानाम्-વિદ્વાનોની भद्रा-કલ્યાણકારી सुमतिः-ઉત્તમ બુદ્ધિ અમને પ્રાપ્ત થાય; ऋजूयताम्-સરળ વ્યવહાર કરનારા देवानाम्-દાતા વિદ્વાનોનું रातिः-વિદ્યા આદિ દાન नः-અમને अभि+निवर्त्तताम्-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય; वयम्-અમે देवानाम्-વિદ્વાનોની सख्यम्-મિત્રતાને उप+आसेदिम्-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીએ; देवाः-વિદ્વાનો नः-અમારા जीवसे-જીવનને માટે आयुः-આયુને प्रतिरन्तु-પૂર્ણ ભોગવે; તેમ તમારા પ્રત્યે વર્તાવ કરે. (૧૫)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ આપ્ત વિદ્વાનોથી પ્રજ્ઞા-બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીને, બ્રહ્મચર્યથી આયુની વૃદ્ધિ કરીને સદા ધાર્મિક જનોની સાથે મિત્રતા રાખવી જોઈએ. (૧૫)

तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम्।
अर्यमणं वरुणꣳ सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वयम्-અમે पूर्वया-પૂર્વજોથી સ્વીકૃત निविदा-વેદવાણીનાં કારણે दक्षम्-ચતુર, अर्यमणम्-પ્રજાના પાલક, अस्त्रिधम्-હિંસાને અયોગ્ય, भगम्-ઐશ્વર્યકારક, मित्रम्-સર્વના મિત્ર, अदितिम्-અખંડિત બુદ્ધિવાળા, वरुणम्-શ્રેષ્ઠ, सोमम्-ઐશ્વર્યવાન વિદ્વાન अश्विना-તથા અધ્યાપક અને ઉપદેશકની हूमहे સ્પર્ધા = કામના કરીએ છીએ; જેમ सुभगा-સુંદર ઐશ્વર્યવાળી सरस्वती-સર્વ વિદ્યાઓથી પૂર્ણ માતા-વેદવાણી नः-અમારા અને તમારા માટે मयः-સુખ करत्-આપે છે; તેમ तान्-પૂર્વોક્ત વિદ્વાનોને તમે પણ બોલાવો અને સુખ પ્રદાન કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે-જે વેદોક્ત કર્મો છે, તે-તે કરવા જોઈએ. જેમ ઉત્તમ વિદ્યાર્થી સ્પર્ધાથી વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ જ સર્વેએ વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

જેમ પૂર્ણ વિદ્યાથી યુક્ત માતા પોતાના સંતાનોને સુશિક્ષા દ્વારા વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત કરાવીને તેની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ સર્વેએ સર્વને સુખ આપીને સર્વની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः।
तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्॥ १७॥

પદાર્થ : હે अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક धिष्ण्या-ભૂમિની સમાન ધારણ કરનારા युवम्-તમે બન્ને અમે જે ભણ્યા છીએ તેને शृणुतम्-સાંભળો ! જેમ नः અમારા માટે वातः-વાયુ तत्-તે मयोभु-સુખકારી भेषजम्-ઔષધને वातु-પ્રાપ્ત કરાવે છે; तत्-તેને माता-માનનીયા માતા पृथिवी-વિસ્તારયુક્ત ભૂમિ અને तत्-તેને पिता-પાલક પિતા द्यौः-સૂર્ય वातु-પ્રાપ્ત કરાવે છે, तत्-તેને सोमसुतः-ઔષધિ ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક मयोभुवः-સુખકારક ग्रावाणः-મેઘ वान्तु-પ્રાપ્ત કરાવે; तत्-તે ઔષધ તમારા માટે પણ પ્રાપ્ત થાય. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેના પૃથિવીની સમાન માતા અને દ્યૌ-સૂર્યસમાન પિતા હોય, તે સર્વત્રથી કુશળ બનીને સર્વને નીરોગ અને ચતુર બનાવે. (૧૭)

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्मवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ १८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો वयम्-અમે अवसे-રક્ષા આદિને માટે जगतः-ચર અને तस्थुषः-અચર જગતના पतिम्-પાલક/રક્ષક, धियं जिन्वम्-બુદ્ધિને દીપ્ત કરાવનાર तम्-તે અખંડ इशानम्-સર્વને વશમાં રાખનાર,

સર્વના સ્વામી પરમેશ્વરની हूमहे-સ્તુતિ કરીએ છીએ; તે यथा-જેમ नः-અમારા वेदसाम्-ધનોની वृधे-વૃદ્ધિને માટે पूषा-પુષ્ટિકર્તા તથા रक्षिता-રક્ષક स्वस्तये-સુખ માટે पायुः-બધાનો રક્ષક અને अदब्धः-અહિંસક असत्-બને; તેમ તમે તેની સ્તુતિ કરો અને તે તમારા માટે પણ રક્ષા આદિ કરનાર બને. (૧૮)

ભાવાર્થ : સર્વ વિદ્વાનો સર્વ મનુષ્યોને આ રીતે ઉપદેશ આપે કે - "જે સર્વશક્તિમાન, નિરાકાર અને સર્વવ્યાપક પરમેશ્વરની અમે ઉપાસના કરીએ છીએ અને તેને જ સુખ તથા ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર જાણીએ છીએ, તેની ઉપાસના તમે પણ કરો અને તેને જ સર્વની ઉન્નતિ કરનાર જાણો." (૧૮)

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वृद्धश्रवाः-મહાન શ્રવણ વિજ્ઞાન इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન ઈશ્વર नः-અમારા માટે स्वस्ति-ઉત્તમ સુખ ધારણ કરે છે; જે विश्ववेदाः-સમસ્ત જગતમાં વેદરૂપ ધનવાળા, पूषा-સર્વત્રથી પુષ્ટિ કરનાર नः-અમારા માટે स्वस्ति-સુખને ધારણ કરે છે.

જે तार्क्ष्यः-ઘોડાની સમાન अरिष्टनेमिः-સુખોને કરાવતા नः-અમારા માટે स्वस्ति-ઉત્તમ સુખને ધારણ કરે છે; જે बृहस्पतिः-મહત્તત્ત્વ આદિના સ્વામી અને પાલક પરમેશ્વર नः-અમારા માટે स्वस्ति-ઉત્તમ સુખને दधातु-ધારણ કરે છે; તે તમારા માટે પણ સુખને ધારણ કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ પોતાનાં માટે સુખ ઈચ્છે, તેમ અન્યોને માટે પણ સુખની કામના કરે.

જેમ કોઈપણ મનુષ્ય પોતાના માટે દુઃખ નથી ઈચ્છતો, તેમ અન્યોને માટે પણ દુઃખની કામના કરે નહિ. (૧૯)

पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः।
अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह॥ २०॥

પદાર્થ : જે पृश्निमातरः-અન્તરિક્ષ જેની માતા છે, તે વાયુઓની સમાન, पृषदश्वाः-પરિપુષ્ટ ઘોડાઓ વાળા मरुतः-મનુષ્ય છે તથા विदथेषु-સંગ્રામોમાં शुभंयावानः શુભ-કલ્યાણને પ્રાપ્ત કરાવનારા, जग्मयः-સંગ કરનારા अग्निजिह्वाः-અગ્નિ સમાન સુપ્રકાશિત વાણીવાળા, सूरचक्षसः-ઐશ્વર્ય વા પ્રેરણામાં દૃષ્ટિ રાખનારા विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો मनवः-મનનશીલ મનુષ્યો अवसा-રક્ષા આદિની સાથે રહેલા છે; તેઓ इह-આ સંસારમાં વા આ સમયમાં नः-અમને आ+अगमन्-પ્રાપ્ત થાય. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોના સંગની સદા યાચના કરવી જોઈએ. જેમ આ સંસારમાં સર્વ વાયુ સર્વનાં જીવનનો હેતુ છે, તેમ અહીં ચેતન [મનુષ્યોમાં] વિદ્વાનો છે. (૨૦)

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।

स्थि॒रैरङ्गै॑स्तुष्टु॒वाᳬसं॑स्त॒नूभि॒र्व्य॒शेमहि दे॒वहि॑तं॒ यदायुः॑॥ २१॥

પદાર્થ : હે यजत्राः-સંગ કરવાવાળા देवाः-વિદ્વાનો ! આપના સંગથી અમે कर्णेभिः-કાનોથી भद्रम्-સત્ય લક્ષણયુક્ત વચનને श्रृणुयाम-સાંભળીએ; अक्षभिः-આંખોથી भद्रम्-કલ્યાણ पश्येम्-નિહાળીએ; स्थिरैः-દૃઢ अङ्गैः-અંગોથી तुष्टुवांसः-સ્તુતિ કરતા तनूभिः-શરીરોથી यत्-જે देवहितम्-વિદ્વાનોને હિતકારી आयुः-આયુ છે; તે वि+अशेमहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો વિદ્વાનોના સંગથી વિદ્વાન્ બનીને સત્ય સાંભળે, સત્ય દેખે અને ઈશ્વરની સ્તુતિ કરે, તો તેઓ દીર્ઘાયુ બને. મનુષ્યોએ અસત્ય શ્રવણ, ખરાબ દર્શન, ખોટી પ્રશંસા અને વ્યભિચાર કદી પણ ન કરવા જોઈએ. (૨૧)

श॒तमिन्नु श॒रदो॒ अन्ति॑ देवा॒ यत्रा॑ नश्च॒क्रा ज॒रसं॑ त॒नूना॑म्।

पु॒त्रासो॒ यत्र॑ पि॒तरो॒ भव॑न्ति॒ मा नो॑ म॒ध्या री॑रिष॒तायु॒र्गन्तोः॑॥ २२॥

પદાર્થ : હે देवाः-વિદ્વાનો ! આપના अन्ति-સમીપમાં રહેલ नः-અમારા यत्र-જે વ્યવહારમાં तनूनाम्-શરીરોની जरसम्-વૃદ્ધાવસ્થા शतम्-સો शरदः-વર્ષો સુધી રહે એ વ્યવહારને नु-શીઘ્ર चक्र-સિદ્ધ કરો.

यत्र-જેથી पुत्रासः-વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુઃખોથી રક્ષા કરનાર સંતાનો इत्-જ पितरः-પિતાની સમાન भवन्ति-હોય છે, તેને नः-અમારા गन्तोः-માર્ગ, आयुः-જીવન અને मध्या-પૂર્ણ આયુના ભોગની વચ્ચેથી मा; रीरिषत-નષ્ટ ન કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ દીર્ઘ અડતાળીસ વર્ષની આયુના બ્રહ્મચર્યનું સદા સેવન કરવું જોઈએ, જેથી સો વર્ષની આયુ વ્યતીત થાય ત્યારે શરીરોની વૃદ્ધાવસ્થા હોય. જેથી પિતાની વિદ્યમાનતામાં પુત્ર પણ પિતા બની જાય [અર્થાત્ પુત્રને ત્યાં પણ પુત્ર થઈ જાય].

જો બ્રહ્મચર્યની સાથે ઓછામાં ઓછા પચ્ચીસ વર્ષ વ્યતીત થઈ જાય ત્યારપછી પણ જે અતિ મૈથુનથી જો વીર્યનો ક્ષય કરે છે, તો તે રોગગ્રસ્ત અને બુદ્ધિહીન બનીને દીર્ઘાયુ કદીપણ બની શકતો નથી. (૨૨)

अदि॑ति॒र्द्यौरदि॑तिर॒न्तरि॑क्ष॒मदि॑तिर्मा॒ता स पि॒ता स पु॒त्रः।

विश्वे॑ दे॒वा अदि॑तिः॒ पञ्च॒ जना॒ अदि॑तिर्जा॒तमदि॑ति॒र्जनि॑त्वम्॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે द्यौः-કારણરૂપથી પ્રકાશ अदितिः-અખંડિત છે; अन्तरिक्षम्-અન્તરિક્ષ अदितिः-અવિનાશી છે; माता-સર્વ જગતને ઉત્પન્ન કરનારી પ્રકૃતિ सः-તે પરમેશ્વર पिता-નિત્ય પાલક અને सः-તે पुत्रः-ઈશ્વરના પુત્ર સમાન અવિનાશી જીવ अदितिः-વિનાશ રહિત છે; विश्वे-સર્વ देवाः-દિવ્ય ગુણવાળા પૃથિવી આદિ પદાર્થો अदितिः-કારણરૂપથી નાશરહિત છે; पञ्च-પાંચ जनाः-મનુષ્ય વા પ્રાણ अदितिः-પોતાના રૂપથી-કારણરૂપથી નિત્ય છે; जातम्-જે કાંઈ ઉત્પન્ન થયેલ કાર્ય રૂપ જગત અને जनित्वम् ઉત્પન્ન થનાર એ સર્વ अदितिः-કારણરૂપથી નિત્ય છે; એમ જાણો. (૨૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જે કાંઈ કાર્ય રૂપ જગત જોઈ રહ્યા છો, તેને અદૃષ્ટ-નેત્રોથી અદર્શનીય કારણવાળું જાણો. જગતના રચયિતા પરમાત્મા અને જીવને [અવિનાશી જાણો]. પૃથિવી આદિ તત્ત્વ, જે ઉત્પન્ન જગત છે અને જે ઉત્પન્ન થશે તથા જે પ્રકૃતિ છે, તે સર્વ [કારણ] સ્વરૂપથી નિત્ય છે. એ સર્વનો કદીપણ અભાવ થતો નથી તેમજ અભાવની સાથે ઉત્પત્તિ થતી નથી. એમ જાણો. (૨૩)

मा नो॑ मि॒त्रो वरु॑णो अर्य॒माऽऽयुरिन्द्र॑ ऋभु॒क्षा म॒रुत॒: परि॑ख्यन्।
यद्वा॒जिनो॑ दे॒वजा॑तस्य॒ सप्ते॑: प्रव॒क्ष्यामो॑ वि॒दथे॑ वी॒र्या॒णि॥ २४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ मित्रः-પ્રાણની સમાન મિત્ર, वरुणः-ઉદાનની સમાન શ્રેષ્ઠ, अर्यमा-ન્યાયાધીશની સમાન નિયંતા, इन्द्रः-રાજા તથા ऋभुक्षाः-મહાન मरुतः-મનુષ્ય नः-અમારી आयुः-આયુને मा; परिख्यन्-નષ્ટ ન કરે; જેથી અમે देवजातस्य-દિવ્યગુણોથી પ્રસિદ્ધ वाजिनः-વેગવાન सप्तेः-ઘોડાની સમાન ઉત્તમ વીર પુરુષના विदथे-યુદ્ધમાં यत्-જે वीर्याणि-બળોને प्रवक्ष्यामः-બતાવીએ; તેને मा, परिख्यन्-નષ્ટ ન કરે; તેવો તમે ઉપદેશ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ મનુષ્યો પોતાના જનોનાં બળને વધારવા ઈચ્છે છે, તેમ અન્યોનાં બળને વધારવાની ઈચ્છા કરે. (૨૪)

यन्नि॒र्णिजा॒ रेक्ण॑सा॒ प्रावृ॑तस्य रा॒तिं गृ॑भी॒तां मु॑ख॒तो नय॑न्ति।
सुप्रा॑ङ्॒जो मेम्य॑द्वि॒श्वरू॑प इन्द्रापू॒ष्णोः प्रि॒यमप्ये॑ति॒ पाथ॑:॥ २५॥

પદાર્થ : यत्-જે મનુષ્ય निर्णिजा-સુંદર રૂપ તથા रेक्णसा-ધનથી प्रावृतस्य-યુક્ત મનુષ્યની रातिम्-દાનને गृभीताम्-ગ્રહણ કરીને मुखतः-આગળ नयन्ति-પહોંચાડે છે; જે मेम्यत्-પ્રાપ્ત થનાર, सुप्राङ्-સારી રીતે પૂછનાર, विश्वरूपः-અનેક રૂપવાળા, अजः-જન્મ આદિથી રહિત છે, તે इन्द्रापूष्णोः-વિદ્યુત્ અને વાયુના प्रियम्-પ્રિય पाथः-અન્નને પણ अप्येति-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે, તે મનુષ્ય અને તે જીવ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધનને પ્રાપ્ત કરીને શુભ કર્મોમાં વ્યય કરે છે, તેઓ સર્વ કામનાઓને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૫)

ए॒ष छाग॑: पु॒रो अश्वे॑न वा॒जिना॑ पू॒ष्णो भा॒गो नी॑यते वि॒श्वदे॑व्यः।
अ॒भि॒प्रि॒यं यत्पु॑रो॒डाश॒मर्व॑ता॒ त्वष्टेदे॑नꣳ सौश्र॒वसाय॒ जिन्वति॥ २६॥

પદાર્થ : વિદ્વાનોથી જે एषः-એ पुरः-પ્રથમ विश्वदेव्यः-સર્વ વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ, पूष्णः-પોષક મનુષ્યના भागः-સેવવા યોગ્ય छागः-બકરાં [અર્થાત્ છેદક પ્રાણી]वाजिना-વેગવાન अश्वेन-ઘોડાઓની સાથે नीयते-પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે; यत्-જે अभिप्रियम्-અતિ પ્રિય पुरोडाशम्-પુરોડાશ નામક યજ્ઞ ભાગને अर्वता-ઉક્ત ઘોડાઓની સાથે त्वष्टा-પદાર્થોને સૂક્ષ્મ કરનાર મનુષ્ય एनम्-એ પૂર્વોક્ત

પુરોડાશને सौश्रवसाय-ઉત્તમ કીર્તિમાન બનવા માટે इत्-જ जिन्वति-પામીને પ્રસન્ન થાય છે; તે સદા પાલન કરવા યોગ્ય છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જો ઘોડા આદિની સાથે અન્ય બકરી આદિ પશુઓની વૃદ્ધિ કરવામાં આવે, તો તે મનુષ્યો સુખની વૃદ્ધિ કરી શકે છે. (૨૬)

यद्धविष्यमृतुशो देवयानं त्रिर्मानुषाः पर्यश्वं नयन्ति।
अत्रा पूष्णः प्रथमो भाग एति यज्ञं देवेभ्यः प्रतिवेदयन्नजः॥ २७॥

પદાર્થ : यत्-જે मानुषाः-મનુષ્યો ऋतुशः-ઋતુ અનુસાર हविष्यम्-હવિ માટે હિતકારી ઉત્તમ પદાર્થ તથા देवयानम्-દિવ્યગુણવાળા વિદ્વાનોને દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર अश्वम्-શીઘ્રગામી ઘોડાઓને त्रिः-ત્રણવાર परि, नयन्ति-સર્વત્ર લઈ જાય છે; જે अत्र-આ સંસારમાં पूष्णः-પુષ્ટિ સંબંધી प्रथमः-પ્રથમ भागः-સેવન કરવા યોગ્ય પદાર્થ देवेभ्यः-વિદ્વાનોને માટે यज्ञम्-યજ્ઞને-સત્કારને प्रतिवेदयन्-જણાવનાર अजः-બકરાં एति-પ્રાપ્ત થાય છે, તે સદા રક્ષા કરવા યોગ્ય છે. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઋતુ અનુસાર આહાર-વિહાર કરે છે, ઘોડાં, બકરાં આદિ પશુઓથી ઉચિત કાર્ય લે છે, તેઓ અત્યંત સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૭)

होताध्वर्युरावया अग्निमिन्धो ग्रावग्राभ उत शंस्ता सुविप्रः।
तेन यज्ञेन स्वरङ्कृतेन स्विष्टेन वक्षणा आऽपृणध्वम्॥ २८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ होता-શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર, आवयाः-યજ્ઞ અને દાન કરનાર, अग्निमिन्धः-અગ્નિને પ્રદીપ્ત કરનાર, ग्रावग्राभः-મેઘને ગ્રહણ કરનાર, शंस्ता-પ્રશંસા કરનાર उत्-અને सुविप्रः-ઉત્તમ મેધાવી વિદ્વાનો યુક્ત, अध्वर्युः-અહિંસા યજ્ઞનો ઈચ્છુક ઉત્તમ વિદ્વાન્ જે स्वरंकृतेन-સુંદર, સુશોભિત કરેલ =અલંકૃત स्विष्टेन-અતિ પ્રિય यज्ञेन-મળેલા યજ્ઞ આદિ ઉત્તમ કામથી वक्षणाः-નદીઓને અલંકૃત કરે છે અર્થાત્ યજ્ઞ દ્વારા પાણી વરસાવી તે વરસાવેલા જળથી નદીઓને વહાવે છે, તેમ तेन-તે કામથી आ, पृणध्वम्-સર્વત્રથી સુખી રહો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુગંધિત આદિ સારી રીતે સંસ્કૃત કરેલ હોમ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને અગ્નિમાં હોમીને વાયુ અને વર્ષા-જળને શુદ્ધ કરીને નદી આદિના જલોને શુદ્ધ કરે છે, તેઓ સદા સુખી રહે છે. (૨૮)

यूपव्रस्काऽउत ये यूपवाहाश्चषालं येऽअश्वयूपाय तक्षति।
ये चार्वते पचनꣳ सम्भरन्त्युतो तेषामभिगूर्त्तिर्नऽइन्वतु॥ २९॥

પદાર્થ : ये-જે यूपव्रस्काः-યૂપ = યજ્ઞ સ્તંભનું છેદન તથા બનાવનાર उत-અને ये-જે यूपवाहाः-

યજ્ઞ સ્તંભને પહોંચાડનાર अश्वयूपाय-ઘોડાને બાંધવા માટે चषालम्-સ્તંભના ખંડને तक्षति-છોલે છે; ये च-અને જે अर्वते-ઘોડાને માટે पचनम्-પાકના સાધનને सम्भरन्ति-સારી રીતે ધારણ વા પુષ્ટ કરે છે; उतो-અને જે ઉત્તમ પ્રયત્ન કરે છે; तेषाम्-તેઓનો अभिगूर्त्तिः-પુરુષાર્થ नः-અમને इन्वतु-વ્યાપ્ત અને પ્રાપ્ત થાય. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે શિલ્પી જનો ઘોડાને બાંધવા માટે ઉપયોગી લાકડા વિશેષથી બનનારી વસ્તુઓનું નિર્માણ કરે છે અને જે વૈદ્ય ઘોડા આદિના ઔષધો તથા સાજ-સામાનોનો સંગ્રહ કરે છે, તેઓ સદા પુરુષાર્થી બનીને અમને પ્રાપ્ત થાય. (૨૯)

उप॒ प्रागा॑त्सु॒मन्मे॑ऽधायि॒ मन्म॑ दे॒वाना॒माशा॒ऽउप॑ वी॒तपृ॑ष्ठः।
अन्वे॑नं॒ विप्रा॒ ऋष॑यो मदन्ति दे॒वानां॑ पु॒ष्टे च॑कृमा सु॒बन्धु॑म्॥ ३०॥

પદાર્થ : જો सुमत्-સ્વયં देवानाम्-વિદ્વાનોના वीतपृष्ठः-યજ્ઞને - ઉત્તમ વ્યવહારને अधायि-ધારણ કરે છે; જે એ વિદ્વાનો તથા मे-મારા मन्म-વિજ્ઞાનને તથા आशाः-દિશાઓ-દિશાન્તરોને उप, प्र, अगात्-પ્રાપ્ત કરે છે; एनम्-એ પ્રત્યક્ષ વ્યવહારને अनु-અનુકૂળ देवानाम्-વિદ્વાનોની મધ્યમાં पुष्टे-પુષ્ટ બળવાન જનની નિમિત્ત ऋषयः-મંત્રોના અર્થ જાણનાર विप्राः-ધીર બુદ્ધિ પુરુષ उप, मदन्ति-સમીપ રહીને આનંદને પ્રાપ્ત કરે છે; તેને અમે सुबन्धुम् ઉત્તમ બંધુ चकृम-બનાવીએ. (૩૦)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોથી વિજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને ઋષિ બને છે; તેઓ સર્વને વિજ્ઞાનનાં દાનથી પુષ્ટ કરે છે.

જેઓ પરસ્પર ઉન્નતિ કરીને કામનાઓને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સંસારનાં હિતૈષી બને છે. (૩૦)

यद्वा॒जिनो॒ दाम॑ स॒न्दान॒मर्व॑तो॒ या शी॑र्ष॒ण्या॒ रश॒ना रज्जु॑रस्य।
यद्वा॑ घास्य॒ प्रभृ॑तमा॒स्ये॒ तृण॒ꣳ सर्वा॒ ता ते॒ अपि॑ दे॒वेष्व॑स्तु॥ ३१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! वाजिनः-પ્રશસ્ત વેગવાળા अस्य-अर्वतः-બળવાન ઘોડાને यत्-જે दाम-ઉદર બંધન-તંગ, संदानम्-આગળ-પાછળ પગ આદિનું બંધન, या-જે शीर्षण्या-શિરની रशना-મુખમાં વ્યાપક रज्जुः-દોરી લગામ આદિ, यत्, वा-અથવા જે अस्य-એ ઘોડાનાં आस्ये-મુખમાં तृणम्-ઘાસ प्रभृतम्-રાખેલું છે ता-તે सर्वा-સર્વ ते-તારે આધીન હોય એ સર્વ घ-જ देवेषु-અન્ય વિદ્વાનોને अपि-પણ अस्तु-આધીન હોય. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઘોડાઓને ઉત્તમ શિક્ષા આપીને તેના સર્વ અંગોના બંધનોને સુંદર; શ્રેષ્ઠ આહાર-પાન અને ઉત્તમ ઔષધ કરે છે, તેઓ વિજય કાર્યો સિદ્ધ કરી શકે છે. (૩૧)

यदश्व॑स्य क्र॒विषो॒ मक्षि॒काश॒ यद्वा॒ स्वरौ॒ स्वधि॑तौ रि॒प्तमस्ति॑।
यद्धस्त॑योः शमि॒तुर्यन्न॒खेषु॒ सर्वा॒ ता ते॒ अपि॑ दे॒वेष्व॑स्तु॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्-જે मक्षिका-માખી क्रविषः-ચાલનારા अश्वस्य-શીઘ્રગામી ઘોડાના અંગોનું आश-ભોજન કરે છે અર્થાત્ મલ, રક્તાદિ ખાય છે, वा-અથવા यत्-જે स्वरौ-સ્વર स्वधितौ-વજ્રની સમાન છે; शमितुः-યજ્ઞકર્તાના हस्तयोः-હાથોમાં यत्-જે रिप्तम्-હવિ ચોંટેલી છે, અને જે यत्-नखेषु-નખોમાં ભરાયેલી अस्ति-છે, ताः-તે सर्वाः-સર્વ પદાર્થ ते-તમારે આધીન રહે તથા એ સર્વ વ્યવહાર देवेषु-વિદ્વાનોના અધિકારમાં अपि-પણ अस्तु-રહે. (૩૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો એવી અશ્વશાલામાં ઘોડાઓને બાંધે, જ્યાં તેના રક્ત આદિનું માખીઓ આદિ પાન ન કરે. જેમ યજ્ઞકર્તા મનુષ્ય હાથોમાં લાગેલ હવિને ધોવા વગેરેથી દૂર કરે છે, તેમજ ઘોડા આદિના શરીરમાં ચોટેલ ધૂળ આદિનું નિત્ય નિવારણ કરવું જોઈએ. (૩૨)

यदूवध्यमुदरस्यापवाति य आमस्य क्रविषो गन्धोऽअस्ति।
सुकृता तच्छमितारः कृण्वन्तूत मेधꣳ श्रृतपाकं पचन्तु॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! उदरस्य-ઉદરના કોષ્ઠથી यत्-જે ऊवध्यम्-મલીનમલ अपवाति-નીકળે છે; અને यः-જે आमस्य-ન પચેલ કાચા क्रविषः-ખાધેલા આહારની गन्धः-ગંધ अस्ति-છે तत्-તેને शमितारः-શમાવનાર सुकृता-સારી રીતે સુગંધિત कृण्वन्तु-કરે; उत-અને मेघम्-પવિત્ર श्रृतपाकम्-ઉત્તમપાક पचन्तु-બનાવે. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞ કરવા ઈચ્છે, તેઓ દુર્ગન્ધ યુક્ત દ્રવ્યોને છોડીને સુગંધ આદિથી યુક્ત, શુદ્ધ પાક બનાવીને અગ્નિમાં હોમ કરે. જે તેમ કરે છે, તેઓ જગત્‌ના હિતૈષી બને છે. (૩૩)

यत्ते गात्रादग्निना पच्यमानादभि शूलं निहतस्यावधावति।
मा तद्भूम्यामाश्रिषन्मा तृणेषु देवेभ्यस्तदुशद्भ्यो रातमस्तु॥ ३४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! निहतस्य-નિશ્ચયથી શ્રમ કરેલ અર્થાત્ થાકેલ ते-તારા अग्निना-અન્તઃકરણ રૂપ તેજથી पच्यमानात्-પકાવવામાં આવતા गात्रात्-અંગથી यत्-જે शूलम्-શીઘ્ર બોધ કરાવનાર વચન अभि;-अवधावति-સર્વત્રથી નીકળે છે; तत्-તે भूम्याम्-ભૂમિ પર मा, आ, श्रिषत्-આવતા નથી, तत्-તે तृणेषु-ઘાસ પર मा-આવતા નથી; પરન્તુ तत्-તે उशद्भ्यः-સત્પુરુષો અને देवेभ्यः-વિદ્વાનોને માટે रातम्-દાન अस्तु-હોય. (૩૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો તમારા જે અંગો જ્વર આદિથી પીડિત હોય, તેઓને વૈદ્યોના સહયોગથી નીરોગ બનાવવા જોઈએ; તેઓ જે ઔષધ આપે છે, તે રોગીઓને માટે હિતકારી હોય છે. (૩૪)

ये वाजिनं परिपश्यन्ति पक्वं य ईमाहुः सुरभिर्निर्हरेति।
ये चार्वतो माꣳसभिक्षामुपासत उतो तेषामभिगूर्त्तिर्न इन्वतु॥ ३५॥

પદાર્થ : ये-જે अर्वतः-ઘોડાનું मांसभिक्षाम्-માંસ માંગવાની उपासते-ઉપાસના-યાચના કરે છે; च-

અને ये-જે ईम्-પ્રાપ્ત થયેલ ઘોડાને મારવા યોગ્ય आहुः-કહે છે; તેને निः, हर-નિરંતર ફેંકો, સર્વથા કાઢી મૂકો.

ये-જે वाजिनम्-વેગવાન ઘોડાને पक्वम्-પરિપક્વ સ્વભાવની परिपश्यन्ति-પરીક્ષા કરે છે; उतो-અને तेषाम्-તેની સારી सुरभिः-સુગંધ અને अभिगूर्तिः-પુરુષાર્થ नः-અમને इन्वतु-પ્રાપ્ત થાય इति-એવી કામના છે. (૩૫)

ભાવાર્થ : જે લોકો ઘોડા આદિ શ્રેષ્ઠ પશુઓનું માંસ ખાવાની ઈચ્છા કરે તેને રાજા વગેરે શ્રેષ્ઠ પુરુષો રોકે, જેથી મનુષ્યના પુરુષાર્થની સિદ્ધિ થાય. (૩૫)

यन्नीक्षणं माँस्पचन्या उखाया या पात्राणि यूष्ण आसेचनानि।
ऊष्मण्याऽपिधाना चरूणामङ्काः सूनाः परि भूषन्त्यश्वम्॥ ३६॥

પદાર્થ : या-જે उष्मण्या-ઉષ્ણતામાં ઉપયોગી अपिधाना-ઢાંકણું, आसेचनानि-સર્વત્ર જલ આદિ સિંચનનાં पात्राणि-પાત્રો, यत्-જે मांस्पचन्याः-માંસ રાંધવાની उखायाः-તપેલીને नीक्षणम्-ઘૃણાથી જોવા, चरूणाम्-પાત્રોનાં अङ्‌काः-વિશેષ ચિહ્નો सूनाः-પ્રસિદ્ધ છે તથા यूष्णः-શુભ કર્મની વૃદ્ધિ કરનારા પુરુષના अश्वम्-ઘોડાને परिभूषन्ति-સર્વથી સુશોભિત કરે છે; તે સર્વ સ્વીકાર કરવા યોગ્ય છે. (૩૬)

ભાવાર્થ : જો કોઈ ઘોડા આદિ ઉપકારી પશુઓ અને ઉત્તમ પક્ષીઓનાં માંસનો આહાર કરે, તો તેને યથા અપરાધ દંડ આપવો જોઈએ. (૩૬)

मा त्वाग्निर्ध्वनयीद् धूमगन्धिर्मोखा भ्राजन्त्यभि विक्त जघ्रिः।
इष्टं वीतमभिगूर्त्तं वषट्कृतं तं देवासः प्रति गृभ्णन्त्यश्वम्॥ ३७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ देवासः-વિદ્વાન લોકો જે इष्टम्-પ્રિય वीतम्-પ્રાપ્ત, अभिगूर्तम्-સર્વત્રથી ઉદ્યમી, वषट्कृतम्-એવી ક્રિયાથી સિદ્ધ-સીધા કરેલ अश्वम्-વેગવાન ઘોડાને प्रतिगृभ्णन्ति-પ્રતીતિથી ગ્રહણ કરે છે, તેને તમે अभि-સર્વત્રથી विक्त-જાણો. त्वा-તે ઘોડાને धूमगन्धिः-ગંધથી યુક્ત ધૂમાડાવાળો अग्निः-અગ્નિ मा, ध्वनयीत्-શબ્દયુક્ત ન કરે. तम्-તેને जघ्रिः-ગંધવાળી भ्राजन्ती-ચમકતી उखा-તપેલી मा, ध्वनीयत्-શબ્દયુક્ત ન કરે. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન્ લોકો માંસાહારી લોકોનું નિવારણ કરીને ઘોડા આદિ પશુઓની વૃદ્ધિ અને રક્ષા કરે છે, તેમ તમે પણ કરો, તથા તેને અગ્નિ આદિના વિઘ્નોથી પૃથક્ રાખો. (૩૭)

निक्रमणं निषदनं विवर्त्तनं यच्च पड्वीशमर्वतः।
यच्च पपौ यच्च घासिं जघास सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु॥ ३८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે ते-તારા अर्वतः-ઘોડાનું निक्रमणम्-નિરંતર ગતિ કરવાનું સ્થાન, निषदनम्-

બેસવાનું સ્થાન, विवर्त्तनम्-વિશેષ વર્તાવનું સ્થાન છે, यच्च-તથા જે पड्वीशम्-પગમાં પ્રવિષ્ટ થનારી પછાડી છે, यत्, च-અને જે पपौ-પાણી પીવે છે, यत्-च-અને જે घासिम्-ઘાસ जघास-ખાય છે, ता-તે सर्वा-સર્વ કામ યુક્તિ પૂર્વક થાય અને એ સર્વ देवेषु-દિવ્ય ઉત્તમ ગુણવાળાઓમાં अपि-પણ अस्तु-થાય. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ લોકો ઘોડા આદિને ઉત્તમ શિક્ષણથી અને તેને ખાવા-પીવા યોગ્ય પદાર્થો આપવાથી સર્વ કાર્યો સિદ્ધ કરો. (૩૮)

यदश्वा॑य॒ वास॑ उपस्तृ॒णन्त्य॑धीवा॒सं या हिर॑ण्यान्यस्मै।
स॒न्दा॒नमर्व॑न्तं॒ पड्वी॑शं प्रि॒या दे॒वेष्वा या॑मयन्ति॥ ३९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ अस्मै-આ अश्वाय-ઘોડાને માટે यत्-જે वासः-વસ્ત્ર, अधिवासम्-જીન પલાણ, सन्दानम्-શિર બંધન - મુહેરા આદિ છે - તથા તેને या-જે हिरण्यानि-સુવર્ણના આભૂષણોથી उपस्तृणन्ति-શણગારવામાં આવે છે, જે पड्विशम्-પગથી પ્રવેશ કરતાં अर्वन्तम्-ગતિશીલ ઘોડાનું आ + यामयन्ति-સારી રીતે નિયમન કરે છે; તે સર્વ પદાર્થ અને કામ देवेषु-વિદ્વાનોમાં प्रिया-પ્રીતિકારક છે. (૩૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ઘોડા આદિ પશુઓની યથાવત્ રક્ષા કરીને તેનો ઉપકાર ગ્રહણ કરે, તો તે અનેક કાર્યોની સિદ્ધિમાં ઉપકારક બને છે. (૩૯)

यत्ते॑ सा॒दे मह॑सा॒ शूकृ॑तस्य॒ पार्ष्ण्या॑ वा॒ कश॑या वा तु॒तोद॑।
स्रु॒चेव॒ ता ह॒विषो॑ अध्व॒रेषु॒ सर्वा॒ ता ते॒ ब्रह्म॑णा सूदयामि॥ ४०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ते-આપના सादे-ઘરમાં महसा-મહત્તાથી वा-અથવા शूकृतस्य-શીઘ્ર કેળવેલા ઘોડાને कशया-ચાબુકથી यत्-જે કારણે पार्ष्ण्या-પાંસળી આદિ સ્થાન वा-અથવા કક્ષા-પાર્શ્વ ભાગોમાં ઉપયુક્ત વસ્તુથી સારી રીતે અથવા तुतोद-સાધારણ રીતે ફટકારવામાં આવે છે, ता-તે સર્વને अध्वरेषु-હિંસા રહિત યજ્ઞોમાં हविषः-હોમને યોગ્ય પદાર્થોને स्रुचेव-જેમ સ્રુવાથી હલાવવામાં આવે છે, તેમ બનાવે છે. ता-તે सर्वा-સર્વ વસ્તુઓ ते-તારા માટે ब्रह्मणा-ધનથી હું सूदयामि-પ્રાપ્ત કરું છું. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ યજ્ઞના સાધન સ્રુવા આદિથી હવિઓને અગ્નિમાં નાખવામાં આવે છે, તેમ જ ઘોડા આદિને સુશિક્ષાથી કેળવીને ચલાવવા જોઈએ. (૪૦)

चतु॑स्त्रिꣳशद्वाजिनो॑ दे॒वब॑न्धो॒र्वङ्क्री॒रश्व॑स्य॒स्वधि॑ति॒स्सम॑ति।
अच्छि॑द्रा॒ गात्रा॑ व॒युना॑ कृणोतु॒ परु॑ष्परुरनु॒घुष्या॒ वि श॑स्त॥ ४१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અશ્વપાલ देवबन्धोः વિદ્વાન્ જેના બંધુ સમાન છે, તે वाजिनः-વેગવાન

अश्वस्य-ઘોડાની चतुस्त्रिंशत-ચોત્રીસ-૩૪ वङ्क्रीः-વાંકી-ચૂકી ચાલોને सम्, एति-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે/જાણે છે; તથા अच्छिद्रा-દોષ અર્થાત્ છેદ-ભેદ રહિત गात्रा-અંગોને તથા वयुना-ઉત્તમ જ્ઞાનોને कृणोतु-સિદ્ધ કરે છે; તેમ તેના परुष्परु-પ્રત્યેક મર્મસ્થાનને अनुघुष्य-અનુકૂળ ઘોષિત કરીને स्वधितिः-વજ્રની સમાન વિદ્યમાન તમે वि, शस्त-વિશેષ રૂપથી કાર્યો કરો-છિન્ન-ભિન્ન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ નિપુણ અશ્વ શિક્ષક અર્થાત્ અશ્વપાલ ચોત્રીસ-૩૪ વિચિત્ર ગતિઓથી ઘોડાઓને ચલાવે છે અને વૈદ્ય નીરોગ કરે છે, તેમ જ અન્ય પશુઓની રક્ષાથી ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૪૧)

एकस्त्वष्टुरश्वस्या विशस्ता द्वा यन्तारा भवतस्तथऽऋतुः।
या ते गात्राणामृतुथा कृणोमि ताता पिण्डानां प्र जुहोम्यग्नौ॥ ४२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! एकः-એક ऋतुः-વસંત આદિ ઋતુ त्वष्टुः-સુશોભિત अश्वस्य-ઘોડાના विशस्ता-વિશેષ રૂપને જુદુ પાડનાર છે; જે द्वा-બે ઋતુઓ यन्तारा-ઘોડાનું નિયમન કરનારી भवतः-હોય છે; तथा-તેમ या-જે ते-તમારા गात्राणाम्-અંગો વા पिण्डानाम्-પિંડોને ऋतुथा-ઋતુ સંબંધી પદાર્થોને હું कृणोमि-બનાવું છું; ताता-તે-તે વસ્તુઓને अग्नौ-અગ્નિમાં प्र, जुहोमि-હોમું છું. (૪૨)

ભાવાર્થ : જેમ અશ્વપાલ પ્રત્યેક ઋતુમાં ઘોડાને સુશિક્ષિત કરે છે-કેળવે છે, તેમ ગુરુજન વિદ્યાર્થીઓને વિવિધ ઉત્તમ ચેષ્ટા કર્મ શીખવે છે.

જેમ અગ્નિમાં હવિઓના પિંડ હોમીને વાયુને શુદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્યા રૂપી અગ્નિમાં અવિદ્યારૂપી ભ્રમોને હોમીને આત્માઓને શુદ્ધ કરે છે. (૪૨)

मा त्वा तपत्प्रियऽआत्मापियन्तं मा स्वधितिस्तन्वऽआतिष्ठिपत्ते।
मा ते गृध्नुरविशस्तातिहाय छिद्रा गात्राण्यसिना मिथू कः॥ ४३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ते-આપના प्रियः-કામના કરવા યોગ્ય અથવા આનંદદાયક आत्मा-આત્મા અર્થાત્ પોતાનું સ્વરૂપ अपियन्तम्-નિશ્ચયથી પ્રાપ્ત થતાં त्वा-આપને अतिहाय-અત્યંત છોડીને मा, तपत्-કષ્ટ અર્થાત્ સંતાપ ન આપો.

स्वधितिः વજ્ર ते-આપના तन्वः-શરીરનાં મધ્યમાં मा, आतिष्ठिपत्-સ્થાપિત ન થાય.

ते-આપના छिद्रा-દોષયુક્ત કે છિન્ન-ભિન્ન गात्राणि-અંગોને अविशस्ता-ન કાપનાર गृध्नुः-લાલચુ મનુષ્ય मा, अतिष्ठिपत्-સ્થાપિત ન કરે તથા असिना-તલવારથી मिथू-कः-પરસ્પર ચેષ્ટા ન કરે. (૪૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોત-પોતાના આત્માને શોકમાં નિમગ્ન ન કરવો જોઈએ, કોઈના પર પણ વજ્રનો પાત ન કરવો જોઈએ તથા કોઈના ઉપકારને ભૂલવો ન જોઈએ. (૪૩)

न वाऽउऽएतन्म्रियसे न रिष्यसि देवाँ२ इदेषि पथिभिः सुगेभिः।

हरी॑ ते॒ युञ्जा॒ पृष॑तीऽअभूता॒मुपा॑स्थाद्वा॒जी धु॒रि रास॑भस्य॥ ४४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જો તું एतत्-એ પૂર્વોક્ત વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે છે, તો તું न, म्रियसे-મરતો નથી; न, वै, रिष्यसि-નિશ્ચયથી મારતો નથી; પરન્તુ सुगेभिः-સુગમ पथिभिः-માર્ગોથી देवान्-વિદ્વાનોને इत्-જ एषि-પ્રાપ્ત કરે છે. જો ते-તારા पृषती-સ્થૂળ શરીરયુક્ત युंजा-રથમાં જોડાનાર हरी-બે ઘોડા પહોંચાડનાર अभूताम्-છે; उ-તો वाजी-વેગવાન એક ઘોડો रासभस्य-ઘોડાની જાતથી સંબંધિત ખચ્ચર धुरि-રથ આદિના ધારણ કરવામાં उप, अस्थात्-ઉપસ્થિત થાય. (૪૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્યાપૂર્વક સંયુક્ત કરેલા વાયુ, જલ અને અગ્નિથી યુક્ત રથમાં બેસીને મનુષ્ય માર્ગોમાં સુખપૂર્વક જાય છે, તેમ જ [સર્વ લોકો] આત્મજ્ઞાન દ્વારા પોતાનાં - આત્માનાં નિત્ય સ્વરૂપને જાણીને મૃત્યુ અને હિંસાના ભયનો ત્યાગ કરીને દિવ્ય સુખોને પ્રાપ્ત કરે. (૪૪)

सु॒गव्यं॑ नो वा॒जी स्व॒श्व्यं॑ पुं॒सः पु॒त्राँ२ ऽउ॒त वि॑श्वा॒पुष॑ꣳर॒यिम्।
अ॒ना॒गा॒स्त्वं नो॒ऽअदि॑तिः कृणोतु क्ष॒त्रं नो॒ऽअश्वो॑ वनताꣳ ह॒विष्मा॑न्॥ ४५॥

પદાર્થ : જે नः-અમારા वाजी-ઘોડા सुगव्यम्-ઉત્તમ ગાયોને માટે હિતકારી તથા स्वश्व्यम्-ઉત્તમ ઘોડાઓમાં વિદ્યમાન કામોને કરે છે; જે વિદ્વાન્ पुंसः-પુંસ્તવથી યુક્ત અને પુરુષાર્થી पुत्रान्-પુત્રોને उत-અને विश्वापुषम्-સમસ્ત પુષ્ટિ કરનાર रयिम्-ધનને પ્રાપ્ત કરે છે, વા જેમ अदितिः-કારણરૂપથી અવિનાશી ભૂમિ नः-અમારા માટે अनागास्त्वम्-અપરાધ રહિત કરે છે; તેમ આપ कृणोतु-કરો, જેમ हविष्मान्-પ્રશસ્ત સુખદાયક अश्वः-વ્યાપ્તિશીલ ઘોડા नः-અમારા क्षत्रम्-રાજ્યની वनताम्-સેવા કરે છે; તેમ આપ પણ સેવા કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે જિતેન્દ્રિય પુરુષ બ્રહ્મચર્યથી વીર્યવાન ઘોડાની સમાન અમોઘવીર્ય હોય છે તથા પુરુષાર્થથી ધનને પ્રાપ્ત કરીને ન્યાયપૂર્વક રાજ્યને ઉન્નત કરે છે, તેઓ સુખી થાય છે. (૪૫)

इ॒मा नु कं॒ भुव॑ना सीषधा॒मेन्द्र॑श्च॒ विश्वे॑ च दे॒वाः।
आ॒दि॒त्यैरिन्द्रः॒ सग॑णो म॒रुद्भि॑र॒स्मभ्यं॑ भेष॒जा क॑रत्।
य॒ज्ञं च॑ न॒स्त॒न्वं॑ च प्र॒जां चा॑दि॒त्यैरिन्द्रः॑ स॒ह सी॑षधाति॥ ४६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન્ રાજા च-અને विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો च-પણ इमा-આ સમસ્ત भुवना-લોકોને ધારણ કરે છે; તેમ અમે कम्-સુખને नु-શીઘ્ર सीषधाम्-સિદ્ધ કરીએ.

જેમ सगणः-પોતાના સહચારી આદિ ગણો સહિત વિદ્યમાન इन्द्रः-સૂર્ય आदित्यैः-મહિનાઓ સહિત સર્વ લોકોને પ્રકાશિત કરે છે; જેમ मरुद्भिः-મનુષ્યો સહિત વૈદ્ય अस्मभ्यम्-અમારા માટે भेषजा-ઔષધિઓ करत्-બનાવે.

જેમ आदित्यैः-ઉત્તમ વિદ્વાનો सह-સહિત इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન સભાપતિ नः-અમારા यज्ञम्-વિદ્વાનોના સત્કાર આદિ ઉત્તમ કાર્ય રૂપ યજ્ઞને च-અને तन्वम्-શરીરને च-અને प्रजाम्-સંતાન આદિને च-પણ सीषधाति-સિદ્ધ કરે છે, તેમ અમે પણ તેને સિદ્ધ કરીએ. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્ય સમાન નિયમપૂર્વક પ્રવૃત્ત રહીને શરીરને નીરોગ અને આત્માને વિદ્વાન્ બનાવીને, પૂર્ણ બ્રહ્મચર્ય કરીને, સ્વયં વરણ કરેલી પ્રિય સ્ત્રીનો સ્વીકાર-વિવાહ કરીને, તેમાં સંતાન ઉત્પન્ન કરીને તથા તેને સુશિક્ષિત કરીને વિદુષી બનાવે છે તેઓ ધનના પતિ બને છે. (૪૬)

अग्ने त्वन्नो अन्तम उत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः।
वसुरग्निर्वसुश्रवा अच्छा नक्षि द्युमत्तमः रयिं दाः॥ ४७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વેદના જ્ઞાતા અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાન્ ! આપ अग्निः-અગ્નિની સમાન नः-અમારી अन्तमः-નજીક રહેનાર, त्राता-રક્ષક/પાલક, शिवः-કલ્યાણકારી उत-અને वरूथ्यः-ઘરોમાં શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર કરનાર, वसुश्रवाः-ધનને સાંભળનાર અને वसुः-વિદ્યાઓમાં વાસ કરનાર भव-બનો. જે द्युमत्तमम्-અત્યંત પ્રકાશમાન रयिम्-ધન અમારા માટે अच्छ-સારી રીતે दाः-આપે છે, અમને नक्षि-પ્રાપ્ત થાય છે, તે त्वम्-આપ અમારાથી સત્કાર પામવા યોગ્ય છો. (૪૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સર્વના ઉપકારક, વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનોનો સદા સત્કાર કરવો જોઈએ અને તેઓ સત્કારને પ્રાપ્ત કરીને સર્વને સત્ય ઉપદેશ આદિ ઉત્તમ ગુણ અને ધન આદિ સદા પ્રદાન કરે. જેથી પરસ્પર પ્રીતિપૂર્વક ઉપકારથી મહાન-સુખનો લાભ પ્રાપ્ત થાય. (૪૭)

तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः।
स नो बोधि श्रुधी हवमुरुष्या णो अघायतः समस्मात्॥ ४८॥

પદાર્થ : હે शोचिष्ठ-સદ્‌ગુણોથી પ્રકાશમાન दीदिवः-વિદ્યા આદિ ગુણોથી શોભાયુક્ત વિદ્વાન્ ! જે આપ नः-અમને बोधि-બોધ = જ્ઞાન પ્રદાન કરો છો, तम्-તે त्वा-આપને सुम्नाय-સુખ આપવા માટે તથા सखिभ्यः-મિત્રોને માટે પણ नूनम्-નિશ્ચિત રૂપથી અમે ईमहे-ઈચ્છીએ છીએ-પ્રાર્થના કરીએ છીએ, सः-તે આપ नः-અમારી हवम्-પ્રાર્થનાને श्रुधी-સાંભળો; समस्मात्-અધર્મ-પાપાચરણ કરવાના ગુણ, કર્મ સ્વભાવવાળા अघायतः-પાપાચરણ અર્થાત્ આત્માના અપરાધનું આચરણ કરનારા દુષ્ટાચારી ડાકુ અને લંપટથી અમારી उरुष्य-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓ અધ્યાપકોને આ રીતે કહે- આપ લોકો, જે અમે ભણ્યા છીએ, તેની પરીક્ષા કરો, અમને દુષ્ટ આચરણથી દૂર રાખો, જેથી અમે સર્વની સાથે મિત્રની સમાન વ્યવહાર કરીએ. (૪૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં સૃષ્ટિના પદાર્થોના ગુણોનું વર્ણન (૧-૯), પશુ આદિ પ્રાણીઓની શિક્ષા અને રક્ષા (૨૬, ૨૭), પોતાનાં અંગોની રક્ષા (૩૪), પરમેશ્વરથી પ્રાર્થના (૧૦-૧૩), યજ્ઞની પ્રશંસા (૧૪), પ્રજ્ઞા-સુમતિની પ્રાપ્તિ (૧૫), ધર્મની ઈચ્છા (૨૧), ઘોડાના ગુણોનું

કથન (૩૫ - ૪૦), ઘોડાઓને કેળવવા-શિક્ષણ (૪૧), આત્મજ્ઞાન (૪૩) અને ધન પ્રાપ્તિ (૪૬) નું વિધાન કરવામાં આવેલ છે, એથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति पञ्चविंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ षड्विंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

अग्निश्च पृथिवी च सन्नते ते मे सन्नमतामदो वायुश्चान्तरिक्षं च सन्नते ते मे सन्नमतामदऽआदित्यश्च द्यौश्च सन्नते ते मे सन्नमतामदऽआपश्च वरुणश्च सन्नते ते मे सं नमतामदः। सप्त सꣳसदो अष्टमी भूतसाधनी। सकामाँ२ ॥ऽअध्वनस्कुरु संज्ञानमस्तु मेऽमुना॥ १ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ-જે मे-મારા માટે अग्निः-અગ્નિ च-અને पृथिवी-ભૂમિ च-પણ सन्नते-અનુકૂળ છે; ते-તેઓ अदः-એ વર્તમાન સુખને सन्नमताम्-અનુકૂળ કરે. જે मे-મારા માટે वायुः-વાયુ च-અને अन्तरिक्षम्-આકાશ च-પણ सन्नते-અનુકૂળ છે; ते-તેઓ अदः-એ વર્તમાન સુખને सन्नमताम्-અનુકૂળ કરે. જે मे-મારા માટે आदित्यः-સૂર્ય च-અને द्यौः-તેનો પ્રકાશ च-પણ सन्नते-અનુકૂળ છે; ते-તેઓ अदः-એ વર્તમાન સુખને सन्नमताम्-અનુકૂળ કરે. જે मे-મારા માટે आपः-જળ च-અને वरुणः-જળના અવયવી च-પણ सन्नते-અનુકૂળ છે; ते-તેઓ अदः-એ વર્તમાન સુખને सन्नमताम्-અનુકૂળ કરે. જે मे-મારા માટે अष्टमी-આઠમી भूतसाधनी-પ્રાણીઓનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરનારી વા सप्त-સાત संसदः-સભાઓ તથા सकामान्-સમાન કામનાવાળા अध्वनः-માર્ગોને સિદ્ધ કરે; તેમ તમે कुरु-આચરણ કરો. अमुना-આ રીતે मे-મારા માટે संज्ञानम्-ઉત્તમ જ્ઞાન अस्तु-પ્રાપ્ત થાય, તેમ એ સર્વ તમારા માટે પણ પ્રાપ્ત થાય. (૧)

ભાવાર્થ : જો અગ્નિ આદિ પંચભૂતોને યથાવત જાણીને પ્રયોગ કરવામાં આવે, તો તેઓ આ વર્તમાન સુખને પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૧)

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याꣳशूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय। च प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु॥ २ ॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यथा-જેમ હું ઈશ્વર ब्रह्मराजन्याभ्याम्-બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય, अर्याय-વૈશ્ય, शूद्राय-ચતુર્થ વર્ણ-શૂદ્ર, च-અને स्वाय-પોતાનાં સ્ત્રી, સેવક આદિ च-અને अरणाय-ઉત્તમ લક્ષણવાળા, સમીપ પ્રાપ્ત અંત્યજને માટે च-પણ जनेभ्यः-એ ઉક્ત સર્વ મનુષ્યોને માટે इह-આ સંસારમાં इमाम्-એ પ્રકાશિત कल्याणीम्-કલ્યાણ કરનારી/સુખદાત્રી वाचम्-ચાર વેદ રૂપ વાણીનો आवदानि-ઉપદેશ કરું છું; તેમ

તમે પણ સારી રીતે ઉપદેશ કરો.

જેમ હું दातुः-દાન આપનારના સંસર્ગી देवानाम्-વિદ્વાનોની दक्षिणायै-દક્ષિણા અર્થાત્ દાન આદિને માટે प्रियः-પ્રિય भूयासम्-બનું છું; તથા मे-મારી अयम्-આ कामः-કામના समृध्यताम्-શ્રેષ્ઠતાથી વૃદ્ધિ પામે છે; मा-મને अदः-તે પરોક્ષ સુખ उप, नमतु-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ આપ લોકોને પણ પ્રાપ્ત થાય; તે પરોક્ષ સુખ અને કામના આપને પણ પ્રાપ્ત થાય. (૨)

ભાવાર્થ : પરમાત્મા સર્વ મનુષ્યોની પ્રત્યે ઉપદેશ આપે છે કે - ચારે વેદોની એ વાણીનો સર્વ મનુષ્યોનાં હિતને માટે મેં ઉપદેશ કરેલ છે, તેમાં કોઈનો અનધિકાર નથી. [સર્વ અધિકારી છે.] જેમ હું પક્ષપાત રહિત સર્વ મનુષ્યોમાં વર્તમાન રહીને પ્રિય બનું છું, તેમ તમે પણ બનો. તેમ કરવાથી તમારી સર્વ કામનાઓ સિદ્ધ થશે એમ નિશ્ચિત છે. (૨)

बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्। उपयामगृहीतोऽसि बृहस्पतये त्वैष ते योनिर्बृहस्पतये त्वा॥ ३॥

પદાર્થ : હે बृहस्पते-પ્રકૃતિ આદિ મહાન પદાર્થો તથા જીવોના પાલક ઈશ્વર ! જે આપ उपयामगृहीतः-યમ-નિયમ આદિ યોગ સાધનોથી ઓળખાયા असि-છો; તે त्वा-આપને बृहस्पतये-મહાન વેદવાણીના પાલન માટે एषः-આ ते-આપના योनिः-પ્રમાણ છે. તે बृहस्पतये-મહાન આપ્ત જનોના પાલક त्वा-આપનો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ.

હે ऋतप्रजात-શ્રેષ્ઠતાથી સત્યને ઉત્પન્ન કરનાર अर्यः-સ્વામી અને ઈશ્વર આપ जनेषु-મનુષ્યોમાં अर्हात्-યોગ્ય કામથી यत्-જે द्युमत्-પ્રશસ્ત પ્રકાશથી યુક્ત મન क्रतुमत्-પ્રશસ્ત બુદ્ધિ અને કર્મથી યુક્ત મન अति विभाति-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશ કરી રહેલ છે; यत्-જે शवसा-બળથી दीदयत्-પ્રકાશિત થતું વર્તમાન છે तत्-चित्रम्-વિચિત્ર વિજ્ઞાનમય મનને અને द्रविणम्-ધન અને યશને अस्मासु-અમારામાં धेहि-સ્થાપિત કરો. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેથી મહાન, દયાળુ, ન્યાયકારી અને સૂક્ષ્મ અન્ય કોઈ પદાર્થ નથી, જેઓએ વેદોના આવિર્ભાવ-પ્રકાશ દ્વારા સર્વ મનુષ્યોને સુશોભિત કરેલ છે. જેઓએ અદ્‌ભુત વિજ્ઞાન અને ધનનો વિસ્તાર કરેલ છે, જે યોગાભ્યાસ દ્વારા જાણવા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય છે, તે જ ઈશ્વર આપણા સર્વના સર્વાધિક ઉપાસનીય છે; એમ તમે જાણો. (૩)

इन्द्र गोमन्निहा याहि पिबा सोमꣳ शतक्रतो विद्यद्भिर्ग्रावभिः सुतम्। उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा गोमत एष ते योनिरिन्द्राय त्वा गोमते॥ ४॥

પદાર્થ : હે शतक्रतो-અસંખ્ય બુદ્ધિયુક્ત, गोमन्-પ્રશસ્ત વાણીયુક્ત, इन्द्र-વિદ્વાન્ પુરુષ ! આપ

इह-આ સંસારમાં आ+याहि-આવો, પ્રાપ્ત થાઓ; અને विद्यम्द्भिः-વિદ્યમાન ग्रावभिः-મેઘોથી सुतम्-ઉત્પન્ન सोमम्-રસનું पिब-પાન કરો.

જેથી આપ उपयामगृहीतः-યમ-નિયમોનાં અનુષ્ઠાનથી ઈન્દ્રિયોને જીતનાર - જિતેન્દ્રિય असि-છો, તેથી गोमते-પ્રશસ્ત પૃથિવીનાં રાજ્યથી યુક્ત પુરુષને માટે इन्द्राय-ઉત્તમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ માટે त्वा-આપને તથા જે ते-આપના एषः-આ योनिः-નિમિત્ત = ઉદ્દેશ્ય છે, તે गोमते-પ્રશસ્ત વેદવાણીવાળા તથા इन्द्राय-પ્રશસ્ત ઐશ્વર્યવાળા त्वा-આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વૈદ્યકશાસ્ત્રની વિદ્યાથી સિદ્ધ કરેલ, મેઘથી ઉત્પન્ન ઔષધોનું સેવન કરે છે અને યોગનો અભ્યાસ કરે છે, તેઓ સુખ અને ઐશ્વર્ય સંપન્ન બને છે. (૪)

इन्द्रायाहि वृत्रहन् पिबा सोमꣳ शतक्रतो। गोमद्भिर्ग्रावभिः सुतम्।
उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा गोमतऽएष ते योनिरिन्द्राय त्वा गोमते॥ ५॥

પદાર્થ : હે शतक्रतो-શત = અસંખ્ય બુદ્ધિ અને કર્મયુક્ત वृत्रहन्-મેઘનું હનન કરનાર સૂર્ય સમાન શત્રુઓનું હનન કરનાર इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્ય યુક્ત વિદ્વાન્ આપ गोमद्भिः-જેમાં ખૂબજ કિરણોથી વિદ્યમાન પદાર્થો ग्रावभिः-ગર્જનાયુક્ત વાદળોની સાથે आ+याहि-આવો; તથા મેઘોથી सुतम्-ઉત્પન્ન થયેલ सोमम्-ઐશ્વર્યકારક રસનું पिब-પાન કરો.

જે કારણે આપ गोमते-ખૂબ દૂધ આપતી ગાયોથી યુક્ત इन्द्राय-ઐશ્વર્યને માટે उपयामगृहीतः-ઉત્તમ નિયમોના અનુષ્ઠાનથી આત્માને વશમાં કરેલ असि-છો. તે त्वा-આપને તથા જે ते-આપના एषः-એ गोमते-પ્રશસ્ત ભૂમિના રાજ્યથી યુક્ત इन्द्राय-ઐશ્વર્યનાં ઈચ્છુક માટે योनिः-ઘર છે, તે त्वा-આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ મેઘનાશક સૂર્ય સમસ્ત સંસારના રસનું પાન કરીને [અને પછી] તેને વરસાવીને સંપૂર્ણ સંસારને તૃપ્ત કરે છે, તેમ જ તું પણ મહાઔષધિઓના રસનું પાન કરીને ઐશ્વર્યની ઉન્નતિ માટે પ્રયત્ન કર. (૫)

ऋतावानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम्। अजस्रं घर्ममीमहे।
उपयामगृहीतोऽसि वैश्वानराय त्वैष ते योनिर्वैश्वानराय त्वा॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ऋतावानम्-ઋત = જળને વિભક્ત કરનાર, वैश्वानरम्-સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન ऋतस्य-જળ અને ज्योतिषः-પ્રકાશના पतिम्-પાલક धर्मम्-પ્રતાપ =અગ્નિની अजस्रम्-નિરંતર ईमहे-કામના કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ તેની કામના કરો.

જે આપ वैश्वानराय-સંસારના નાયકને માટે उपयामगृहीतः-ઉત્તમ નિયમોના અનુષ્ઠાનથી મનને વશમાં કરેલ असि-છો; તે त्वा-આપને તથા જે ते-આપના एषः-એ योनिः-ઘર છે, તે त्वा-આપને वैश्वानराय-સમસ્ત સંસારના નાયકનો સંસારના હિત માટે સત્કાર કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે અગ્નિ, જળ આદિ મૂર્તિમાન પદાર્થોને પોતાના તેજથી છિન્ન-ભિન્ન કરે છે અને નિરંતર જળનું આકર્ષણ કરે છે, તેને જાણીને મનુષ્ય સર્વ ઋતુઓમાં સુખદાયી ઘરને સુશોભિત બનાવે. (૬)

वैश्वानरस्य सुमतौ स्याम राजा हि कं भुवनानामभिश्रीः। इतो जातो विश्वमिदं वि चष्टे वैश्वानरो यतते सूर्येण। उपयामगृहीतोऽसि वैश्वानराय त्वैष ते योनिर्वैश्वानराय त्वा॥ ७॥

પદાર્થ : જેમ અમે राजा-પ્રકાશમાન भुवनानाम्-લોકોની મધ્યમાં अभिश्रीः-સર્વથી સુશોભિત કરનાર સૂર્ય कम्-સુખને हि-નિશ્ચયથી સિદ્ધ કરે છે; इतः-એ કારણે जातः-પ્રસિદ્ધ થઈને इदम्-આ विश्वम्-વિશ્વને वि, चष्टे-પ્રકાશિત કરે છે.

જેમ सूर्येण-સૂર્યમંડળની સાથે वैश्वानरः-વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિ यतते-ચેષ્ટા કરે છે, તેમ અમે वैश्वानरस्य-સંસારના નાયક પરમેશ્વર વા ઉત્તમ સભાપતિની सुमतौ-અત્યુત્તમ દેશ-કાલને જાણનારી છળ-કપટ આદિ દોષ રહિત સુમતિમાં = બુદ્ધિમાં स्याम-સ્થિત રહીએ.

હે વિદ્વાન્ ! જેથી આપ उपयामगृहीतः-શ્રેષ્ઠ નિયમોથી સ્વીકૃત असि-છે; એથી वैश्वानराय-અગ્નિને માટે त्वा-આપને તથા જે ते-આપનું एषः-એ योनिः-ઘર છે, તે त्वा-આપને પણ वैश्वानराय-અગ્નિથી સાધ્ય કાર્યના સાધન માટે આપનો સત્કાર કરું છું. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના સંપર્કના કારણે ચંદ્રમા રાત્રિને સુશોભિત કરે છે, તેમ ઉત્તમ રાજા દ્વારા પ્રજા પ્રકાશિત થાય છે અને વિદ્વાન શિલ્પી અગ્નિ દ્વારા સર્વોપયોગી કાર્યો સિદ્ધ કરે છે. (૭)

वैश्वानरो न ऊतयऽआ प्र यातु परावतः। अग्निरुक्थेन वाहसा।
उपयामगृहीतोऽसि वैश्वानराय त्वैष ते योनिर्वैश्वानराय त्वा॥ ८॥

પદાર્થ : જેમ वैश्वानरः-નાયક જનોમાં પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ परावतः-દૂર દેશથી नः-અમારી ऊतये-રક્ષાને માટે आ + प्र + यातु-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ अग्निः-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી મનુષ્ય उक्थेन-પ્રશંસનીય वाहसा-વ્યવહારની સાથે પ્રાપ્ત થાય.

જે આપ वैश्वानराय-પ્રકાશમાન જિજ્ઞાસુને માટે उपयामगृहीतः-વિદ્યાના વિચારથી યુક્ત असि-છે, તે त्वा-આપને તથા જે ते-આપના एषः-આ वैश्वानराय-સમસ્ત નાયકોમાં ઉત્તમને માટે [અર્થાત્ પ્રકાશમાન જિજ્ઞાસુને માટે] योनिः-ઘર છે; તે त्वा-આપનો અમે સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય દૂર દેશથી પોતાના પ્રકાશ દ્વારા દૂર રહેલા પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ વિદ્વાનો પોતાના ઉત્તમ ઉપદેશ દ્વારા દૂર રહેલા જિજ્ઞાસુઓને પ્રકાશિત કરે છે. (૮)

अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महागयम्।
उपयामगृहीतोऽस्यग्नये त्वा वर्चसे एष ते योनिरग्नये त्वा वर्चसे॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! पाञ्चजन्यः-પાંચ જનો વા પ્રાણોની ક્રિયામાં ઉત્તમ पुरोहितः-પ્રથમથી હિતકારી, पवमानः-પવિત્ર, ऋषिः-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા, अग्निः-અગ્નિ સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન तम्-તે महागयम्-મહાન ગય = ઘર સંતાન વા ધનવાળા ઉક્ત વિદ્વાનની જેમ અમે ईमहे-કામના કરીએ છીએ; તેમ આપ वर्चसे-અધ્યાપક અને अग्नये-વિદ્વાનના માટે उपयामगृहीतः-ઉત્તમ નિયમોથી સ્વીકૃત असि-છો. તેથી त्वा-આપને તથા જે ते-આપનો एषः-એ योनिः-નિમિત્ત = ઉદ્દેશ્ય वर्चसे-વિદ્યા પ્રકાશ અને अग्नये-વિદ્વાનના માટે છે. તે त्वा-આપની અમે યાચના-કામના કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા વિદ્વાનોથી સદા વિદ્યા પ્રાપ્તિની યાચના કરવી જોઈએ, જેથી સર્વ મનુષ્યો મહત્ત્વને પ્રાપ્ત કરે. (૯)

महाँ२ऽइन्द्रो वज्रहस्तः षोडशी शर्म यच्छतु। हन्तु पाप्मानं योऽस्मान्द्वेष्टि।
उपयामगृहीतोऽसि महेन्द्राय त्वैष ते योनिर्महेन्द्राय त्वा॥ १०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! वज्रहस्तः-બન્ને હાથોમાં વજ્રધારી षोडशी-સોળ કળાથી યુક્ત, महान्-મહાન અને इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા शर्म-દુઃખ વિનાશક ઘર અર્થાત્ સ્થાન यच्छतु-પ્રદાન કરે.

यः-જે अस्मान्-અમારો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે તે पाप्मानम्-દુષ્ટ કર્મ કરનાર પાપીને हन्तु-મારે. જે આપ महेन्द्राय-મહાન ગુણોયુક્ત વિશિષ્ટ મનુષ્યને માટે उपयामगृहीतः-ઉત્તમ નિયમોથી સ્વીકૃત असि-છો; તે त्वा-આપને તથા જે ते-આપના एषः-એ महेन्द्राय-મહાન ગુણોયુક્ત મનુષ્યને માટે योनिः-નિમિત્ત = ઉદ્દેશ્ય છે, તે त्वा-આપનો પણ અમે સત્કાર કરીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે પ્રજાજનો ! જે તમને સુખ આપે, દુષ્ટોનો નાશ કરે અને મહાન ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે; તેનો તમોએ સદા સત્કાર કરવો જોઈએ. (૧૦)

तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनवऽइन्द्रं गीर्भिर्नवामहे॥ ११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે स्वसरेषु-પ્રતિદિન धेनवः-ગાયો જેમ वत्सम्-વાછરડાને ચાહે न-તેની સમાન જે दस्मम्-દુઃખવિનાશક, ऋतीषहम्-ગતિને સહન કરનારાઓ, वसोः-ધન અને अन्धसः-અન્નના मन्दानम्-આનંદને પ્રાપ્ત કરનાર इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યવાન રાજા-સભાપતિની वः-તમારે માટે गीर्भिः-વાણીઓથી अभि, नवामहे-સર્વત્રથી સ્તુતિ કરીએ છીએ; તેમ तम्-તે રાજાની આપ પણ સદા પ્રીતિ ભાવથી સ્તુતિ કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ ગાયો પોત-પોતાના વાછરડાઓનું પાલન કરે છે, તેમ પ્રજારક્ષક પુરુષ-રાજા પ્રજાની નિત્ય રક્ષા કરે અને પ્રજાનાં માટે ધન-ધાન્યથી સુખની વૃદ્ધિ કરે. (૧૧)

यद्वाहिष्ठं तदग्नये बृहदर्च विभावसो।

महिषीव त्वद्रयिस्त्वद्वाजा उदीरते॥ १२॥

પદાર્થ : હે विभावसो-પ્રકાશિત ધનવાળા વિદ્વાન્ ! अग्नये-અગ્નિને માટે यत्-જે बृहत्-મહાન અને वाहिष्ठम्-દ્રવ્યોને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે તેનો अर्च-સત્કાર કરો, तत्-તેનો અમે પણ સત્કાર કરીએ. महिषीव-રાણીની સમાન त्वत्-તમારાથી रयिः-ધનને તથા त्वत्-તમારી પાસેથી वाजाः-અન્ન આદિ પદાર્થ उत्, ईरते-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તે આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ રાણી સુખોને આપનારી તથા ખૂબજ ધન પ્રદાન કરનારી હોય છે, તેમ રાજાની પાસેથી પણ સર્વ લોકો ધન અને અન્ય શ્રેષ્ઠ વસ્તુઓને પ્રાપ્ત કરે. (૧૨)

एह्यूषु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्द्धास इन्दुभिः॥ १३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પ્રકાશિત બુદ્ધિવાળા વિદ્વાન્ ! હું इत्था-એ કારણે ते-આપના માટે इतराः-આપનાથી અજ્ઞાત गिरः-વાણીઓનો सु, ब्रवाणि-સારી રીતે ઉપદેશ કરું છું; જેથી આપ એ વાણીઓને आ, इहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો, उ-અને एभिः-એ इन्दुभिः-જળ આદિ પદાર્થોથી वर्द्धासे-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે શિક્ષાથી વિદ્યાર્થીઓ વિજ્ઞાન સાથે વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે, તે શિક્ષાનો વિદ્વાનો ઉપદેશ કરે. (૧૩)

ऋतवस्ते यज्ञं वितन्वन्तु मासा रक्षन्तु ते हविः।
संवत्सरस्ते यज्ञं दधातु नः प्रजां च परि पातु नः॥ १४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! ते-આપના यज्ञम्-સત્કાર આદિ વ્યવહારને ऋतवः-વસંત આદિ ઋતુઓ वि + तन्वन्तु-વિસ્તૃત કરે-ફેલાવે; ते-આપની हविः-હોમવા યોગ્ય વસ્તુની मासाः-કારતક આદિ મહિનાઓ रक्षन्तु-રક્ષા કરે; ते-આપના यज्ञम्-યજ્ઞને-સત્કાર આદિ વ્યવહારને नः-અમારા संवत्सरः-વર્ષ दधातु-ધારણ-પુષ્ટ કરે च-અને नः-અમારી प्रजाम्-પ્રજાની परि, पातु-સર્વત્રથી આપ રક્ષા કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સમસ્ત સામગ્રીઓ દ્વારા વિદ્યાપૂર્વક વ્યવહારની સદા વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ અને ન્યાયપૂર્વક પ્રજાઓનું પાલન કરવું જોઈએ. (૧૪)

उपह्वरे गिरीणाᳬं सङ्गमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत॥ १५॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય गिरीणाम्-પર્વતોની उपह्वरे-સમીપ च-અને नदीनाम्-નદીઓના सङ्गमे-સંગમ સ્થાન પર યોગાભ્યાસથી ઈશ્વરની અને વિચારથી વિદ્યાની ઉપાસના કરે છે; તે धिया-ઉત્તમ બુદ્ધિ વા કર્મથી યુક્ત विप्रः-મેધાવી - વિચારશીલ બુદ્ધિમાન अजायत-બની જાય છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો વિદ્યા અધ્યયન કરીને એકાન્તમાં વિચાર કરે છે, તેઓ યોગીઓની સમાન પ્રાજ્ઞ = વિદ્વાન બની જાય છે. (૧૫)

उ॒च्चा ते॑ जा॒तमन्ध॑सो दि॒वि सद्भूम्याद॑दे। उ॒ग्रꣳ शर्म॒ महि॒ श्रवः॑॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! હું ते-આપના જે उच्चा-ઊંચા अन्धसः-અન્નથી जातम्-પ્રસિદ્ધ થયેલ दिवि-પ્રકાશમાં सत्-વર્તમાન उग्रम्-ઉત્તમ महि-મહાન श्रवः-પ્રશંસનીય शर्म-ઘરને आ, ददे-સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું; તે भूमि-ભૂમિની સમાન દૃઢ અર્થાત્ સુખદાયક બને. (૧૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન મનુષ્યોએ સૂર્યનાં કિરણો, પુષ્કળ વાયુ અને અન્ન આદિ સામગ્રીથી ભરપૂર વિશાળ અને ઊંચા ઘરો બનાવીને, તેમાં નિવાસ કરીને સુખનો ઉપભોગ કરવો જોઈએ. (૧૬)

स न॒ इन्द्रा॑य॒ यज्य॑वे॒ वरु॑णाय म॒रुद्भ्यः॑। व॒रि॒वो॒वित्परि॑ स्रव॥ १७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! सः-તે ઉક્ત ગુણોથી યુક્ત આપ मरुद्भ्यः-મનુષ્યોને માટે नः-અમારા इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્ય यज्यवे-સંગત વ્યવહાર તથા वरुणाय-શ્રેષ્ઠ મનુષ્યને માટે वरिवोवित्-સેવાના જ્ઞાતા બનીને परि, स्रव-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થતા રહો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન જેટલા સામર્થ્યને પ્રાપ્ત કરે, તે એટલા સામર્થ્યથી સર્વના સુખની વૃદ્ધિ કરે. (૧૭)

ए॒ना विश्वा॑न्य॒र्य आ द्यु॒म्नानि॒ मानु॑षाणाम्। सिषा॑सन्तो वनामहे॥ १८॥

પદાર્થ : જે अर्यः-ઈશ્વર मानुषाणाम्-મનુષ્યોની एना-આ विश्वानि-સર્વ द्युम्नानि-શોભાયમાન કીર્તિનું શિક્ષણ આપે છે તેની सिषासन्तः-સેવા કરવાની ઈચ્છા કરતા અમે आ, वनामहे-સુખોની કામના કરીએ છીએ. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે ઈશ્વરે મનુષ્યોના સુખને માટે ધન, વેદ અને ખાવા-પીવાની વસ્તુઓ ઉત્પન્ન કરેલ છે, તેની જ સર્વ મનુષ્યોએ ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૧૮)

अनु॑ वी॒रैरनु॑ पुष्यास्म॒ गोभि॒रन्वश्वै॒रनु॒ सर्वे॑ण पु॒ष्टैः।
अनु॒ द्विप॒दानु॒ चतु॑ष्पदा व॒यं दे॒वा नो॑ य॒ज्ञमृ॑तु॒था न॑यन्तु॥ १९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ वयम्-અમે पुष्टैः-પુષ્ટ वीरैः-પ્રશસ્ત બલવાળા વીરપુરુષોની अनु, पुष्यास्म्-પુષ્ટિથી પુષ્ટ બનીએ; બળવાન गोभिः-ગાયોની પુષ્ટિથી अनु-પુષ્ટ બનીએ, બળવાન अश्वैः-ઘોડાઓની પુષ્ટિથી अनु-પુષ્ટ બનીએ सर्वेण-સર્વની પુષ્ટિથી अनु-પુષ્ટ બનીએ. द्विपदा-બે પગવાળા મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓની પુષ્ટિથી अनु-પશ્ચાત્ પુષ્ટ બનીએ, चतुष्पदा-ચાર પગવાળા ગાય આદિની પુષ્ટિથી अनु-પુષ્ટ બનીએ; તેમ देवाः-વિદ્વાનો नः-અમારા यज्ञम्-ધર્મયુક્ત વ્યવહારને ऋतुथा-ઋતુ અનુસાર नयन्तु-પ્રાપ્ત કરાવે. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વીર પુરુષો અને પશુઓને સમ્યક્ પુષ્ટિ કરીને ત્યારપછી પણ તેઓને પુષ્ટ કરતા રહેવું જોઈએ અને સદા ઋતુથી અનુકૂળ વ્યવહાર-આચરણ કરવું જોઈએ. (૧૯)

अग्ने पत्नीरिहा वह देवानामुशतीरुप। त्वष्टारꣳ सोमपीतये॥ २०॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અધ્યાપક વા અધ્યાપિકા ! તું इह-આ ગૃહાશ્રમમાં સમાન ગુણયુક્ત પતિઓ વા उशतीः-કામના કરનારી देवानाम्-વિદ્વાનોની पत्नीः-પત્નીઓને તથા सोमपीतये-ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું પાન કરવા માટે त्वष्टारम्-તેજસ્વી પુરુષને उप+आ+वह-સારી રીતે સમીપ પ્રાપ્ત કર, કરાવ. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કન્યાઓને સુશિક્ષિત કરીને, તેને વિદુષી બનાવીને, સ્વયં વરણ કરેલ પ્રિય પતિઓને પ્રાપ્ત કરાવીને સંતાનોને ઉત્પન્ન કરાવે, તો સંતાન અત્યંત પ્રશંસનીય થાય છે. (૨૦)

अभि यज्ञं गृणीहि नो ग्नावो नेष्टः पिब ऋतुना। त्वꣳ हि रत्नधा असि॥ २१॥

પદાર્થ : હે ग्नावः-પ્રશસ્ત વાણીવાળા नेष्टः-નેતા ! આપ ऋतुना-વસંત આદિ ઋતુઓની સાથે नः-અમારા यज्ञम्-ઉત્તમ વ્યવહારની अभि+गृणीहि-મુખ્ય રૂપથી સ્તુતિ કરો.

કારણકે त्वम्, हि-તમે रत्नधाः-પ્રસન્નતા માટે રમણીય વસ્તુઓને ધારણ કરનાર असि-છો; તેથી ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું સદા पिब-પાન કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુશિક્ષિત વાણીના સંગત વ્યવહારને જાણવા ઈચ્છે, તેઓ વિદ્વાન બને. (૨૧)

द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत प्र च तिष्ठत। नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ द्रविणोदाः-ધન વા યશને પ્રદાન કરનાર વૈદ્ય ऋतुभिः-વસંત આદિ ઋતુઓની સાથે नेष्ट्रात्-વિનયથી રસને पिपीषति-પીવા ઈચ્છે છે; તેમ તમે રસને इष्यत-પ્રાપ્ત કરો; जुहोत-ગ્રહણ વા હવન કરો. च-અને प्र,तिष्ठत-પ્રતિષ્ઠાને પ્રાપ્ત કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્યો પથ્ય અને ઉત્તમ વિદ્યાથી સ્વયં નીરોગ રહીને અન્યનાં રોગને દૂર કરીને પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૨૨)

तवायꣳ सोमस्त्वमेह्यर्वाङ् शश्वत्तमꣳ सुमना अस्य पाहि।
अस्मिन्यज्ञे बर्हिष्यानिषद्या दधिष्वेमं जठरऽइन्दुमिन्द्र॥ २३॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક વિદ્વાન ! જે तव-આપના अयम्-આ सोमः-ઐશ્વર્યનો યોગ છે; તેને त्वम्-આપ आ, इहि-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો. सुमनाः-ધર્મ કાર્યોમાં પ્રસન્નચિત્ત अर्वाङ्-સર્વની સન્મુખ થઈને अस्य-એ પોતાના આત્માના शस्वत्तमम्-અધિકતર અનાદિ ધર્મની पाहि-રક્ષા કરો. अस्मिन्-આ बर्हिषि-ઉત્તમ यज्ञे-પ્રાપ્ત થનાર વ્યવહારમાં निषद्य-નિરંતર સ્થિત બનીને जठरे-જઠરાગ્નિમાં इमम्-આ પ્રત્યક્ષ इन्दुम्-રોગનાશક ઔષધિઓના રસને आ, दधिष्व-ધારણ કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ સર્વની સન્મુખ આવીને તથા પ્રસન્ન મનવાળા થઈને, સનાતન-શાશ્વત ધર્મ અને વિજ્ઞાનનો ઉપદેશ કરવો જોઈએ, હિતકારી અન્ન આદિનુ સેવન-પથ્ય પાલન કરવું જોઈએ અને

સર્વદા પુરુષાર્થમાં પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ. (૨૩)

अमेव नः सुहवा आ हि गन्तन नि बर्हिषि सदतना रणिष्टन।
अथा मदस्व जुजुषाणो अन्धसस्त्वष्टर्देवेभिर्जनिभिः सुमद्गणः॥ २४॥

પદાર્થ : હે त्वष्टः-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદ્વાન્ ! जुजुषाणः-પ્રસન્નચિત્ત ગુરુ આદિની સેવા કરતાં सुमद्गणः-સુંદર પ્રસન્ન મંડળીવાળા આપ देवेभिः-ઉત્તમ ગુણવાળા जनिभिः-જન્મોની સાથે-સંતાનોની સાથે अन्धसः-અન્ન આદિ ઉત્તમ પદાર્થોની પ્રાપ્તિમાં मदस्व-આનંદ કરો, अथ-અને अमेव-ઉત્તમ ઘરની સમાન અન્યોને પણ આનંદિત કરો.

હે વિદ્વાનો ! सुहवाः-ઉત્તમ નિમંત્રણવાળા તમે ઉત્તમ ઘરની સમાન बर्हिषिः-ઉત્તમ વ્યવહારમાં नः-અમને आ, गन्तन-પ્રાપ્ત થાઓ; આ સ્થાનમાં हि-નિશ્ચિત બનીને नि, सदतन-નિરંતર બેસો અને रणिष्टन-શ્રેષ્ઠ ઉપદેશ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો સ્વયં ઉત્તમ વ્યવહારમાં સ્થિત બનીને અન્યોને તેમાં સ્થાપિત કરે છે, તેઓ આનંદિત રહે છે.

સ્ત્રી પુરુષ પ્રેમથી સંયુક્ત બનીને જે સંતાનોને ઉત્પન્ન કરે છે, તે સંતાનો દિવ્ય ગુણવાળા બને છે. (૨૪)

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया। इन्द्राय पातवे सुतः॥ २५॥

પદાર્થ : હે सोम-ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! આપ જે इन्द्राय-સંપત્તિની पातवे-રક્ષા કરવા માટે सुतः-તૈયાર કરેલા ઉત્તમ રસની स्वादिष्ठया-અત્યંત સ્વાદયુક્ત मदिष्ठया-અત્યંત આનંદ પ્રદાન કરનારી, धारया-ધારણ કરનારી ધારાથી पवस्व-પવિત્ર બનો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન મનુષ્યો સર્વ રોગનાશક, આનંદ પ્રદાન કરનાર ઔષધિરસનું પાન કરીને પોતાના શરીર અને આત્માને પવિત્ર કરે છે, તેઓ ધનાઢ્ય બને છે. (૨૫)

रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहते। द्रोणे सधस्थमासदत्॥ २६॥

પદાર્થ : જે रक्षोहा-દુષ્ટ પ્રાણીઓનું હનન કરનાર, विश्वचर्षणिः-સમસ્ત સંસારના પ્રકાશક વિદ્વાન अयोहते-અપ=સુવર્ણથી પ્રાપ્ત द्रोणे-દ્રોણ નામક અન્ન રાખવાના પાત્ર વિશેષમાં सधस्थम्-સમાન સ્થિતિવાળા योनिम्-ઘરમાં अभि, आ, असदत्-સારી રીતે સ્થિત થાય છે; તે સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે અવિદ્યાનો નાશ કરનારા, વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાનો, સર્વ ઋતુઓમાં સુખકારક, સુવર્ણ આદિથી યુક્ત ઘરોમાં રહીને વિચાર કરે છે, તેઓ સુખી બને છે. (૨૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પુરુષાર્થ ફળનું વર્ણન (૧), સર્વ મનુષ્યોને વેદ ભણવા અને સાંભળવાનો અધિકાર (૨), પરમેશ્વર, વિદ્વાન અને સત્યનું નિરૂપણ (૩, ૯, ૧૩), અગ્નિ આદિ પદાર્થોનું કથન (૬-૮), યજ્ઞનું વર્ણન (૧૪), સુંદર ઘરોનું નિર્માણ (૧૬) અને ઉત્તમ સ્થાનમાં સ્થિતિનો

ઉપદેશ કરવામાં આવેલ છે; તેથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति षड्विंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ सप्तविंशोऽध्यायः आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

समास्त्वाऽग्न ऋतवो वर्द्धयन्तु संवत्सराऽऋषयो यानि सत्या।
सं दिव्येन दीदिहि रोचनेन विश्वा आ भाहि प्रदिशश्चतस्रः॥ १॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! समाः-વર્ષ, ऋतवः-શરદ આદિ ઋતુઓ, संवत्सराः-પ્રભવ આદિ સંવત્સર, ऋषयः-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા વિદ્વાનો-ઋષિઓ અને यानि-જે सत्या-સત્ય ત્રણે કાળમાં અબાધ્ય કર્મ છે, તે त्वा-આપની वर्द्धयन्तु-વૃદ્ધિ કરે.

જેમ અગ્નિ दिव्येन-અતિ શુદ્ધ रोचनेन-પ્રકાશથી विश्वाः-સર્વ चतस्रः-ચાર प्रदिशः-ઉત્તમ ગુણયુક્ત દિશાઓને પ્રકાશિત કરે છે; તેમ વિદ્યાની सं, दीदिहि-સારી રીતે કામના કર તથા ન્યાયયુક્ત ધર્મને आ+भाहि-સર્વત્ર પ્રકાશિત કર. (૧)

ભાવાર્થ : આપ્ત વિદ્વાન સર્વદા સત્ય વિદ્યા અને કર્મોનો ઉપદેશ કરીને સર્વ પ્રાણીઓનાં આરોગ્ય, પુષ્ટિ, વિદ્યા અને સુશીલતાની વૃદ્ધિ કરે.

જેમ સૂર્ય પોતાના સન્મુખ પદાર્થોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ સુશિક્ષા દ્વારા સર્વને સદા આનંદિત કરવા જોઈએ. (૧)

सं चेध्यस्वाग्ने प्र च बोधयैनमुच्च तिष्ठ महते सौभगाय।
मा च रिषदुपसत्ता ते अग्ने ब्रह्माणस्ते यशसः सन्तु माऽन्ये॥ २॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન્ ! આપ सम्, इध्यस्व-વિદ્યાથી સારી રીતે પ્રકાશિત બનો; च-અને एनम्-એ જિજ્ઞાસુને प्रबोधय-શિક્ષિત કરો; च-અને महते-મહાન सौभगाय-ઉત્તમ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિને માટે उत्, तिष्ठ-ઊભા થાઓ - પ્રયત્ન કરો. उपसत्ता-શ્રેષ્ઠ જનોની સમીપ રહેનારા આપ ઉત્તમ ઐશ્વર્યની मा, रिषत्-હિંસા ન કરો. અર્થાત્ બગાડો નહિ.

હે अग्ने-અગ્નિ સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન્ ! ते-આપ ब्रह्माणः-ચારે વેદોના જ્ઞાતા હોય, अन्ये-અન્ય ભિન્ન બુદ્ધિવાળા च-પણ मा, सन्तु-ન બની જાય; च-અને ते-આપ પોતાની यशसः-કીર્તિ-યશની ઉન્નતિનો નાશ ન કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેઓ વિદ્વાનોથી ભિન્ન લોકોને ઉત્તમ અધિકારમાં નિયુક્ત કરતા નથી, સદા ઉન્નતિને માટે પ્રયત્ન કરે છે તથા અન્યાયથી કોઈની હિંસા-નાશ કરતા નથી, તેઓ કીર્તિ પ્રાપ્ત કરીને ઐશ્વર્યયુક્ત બને છે. (૨)

त्वाम॑ग्ने वृणते ब्राह्म॒णा इ॒मे शिवो अ॑ग्ने सं॒वर॑णे भवा नः।
स॒पत्न॒हा नो॑ अभिमाति॒जिच्च॒ स्वे गये॑ जागृह्यप्र॑युच्छन्॥ ३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વર્તમાન વિદ્વાન્ ! જે इमे-આ ब्राह्मणाः-બ્રહ્મજ્ઞાની त्वाम्-આપનું वृणते-વરણ-સ્વીકાર કરે છે, તેના પ્રતિ આપ संवरणे-સમ્યક્ વરણ-સ્વીકાર થતાં शिवः-મંગલકારી भव-બનો; તથા नः-અમારા सपत्नहा-શત્રુરૂપ દોષોના હનનકર્તા બનો.

હે अग्ने-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન વિદ્વાન્ ! अप्रयुच्छन्-પ્રમાદ ન કરતા च-અને अभिमातिजित्-અભિમાનને જીતનારા આપ स्वे-પોતાના गये-ઘરમાં जागृहि-જાગો અર્થાત્ ગૃહકાર્ય કરવામાં નિદ્રા, આળસ્ય આદિને છોડો અને नः-અમને શીઘ્ર જાગૃત કે ચેતન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો બ્રહ્મનો સ્વીકાર કરીને મંગલને પ્રાપ્ત કરે છે, દોષોનો નાશ કરે છે, તેમ જિજ્ઞાસુ બ્રહ્મજ્ઞાનીઓને પ્રાપ્ત કરીને, મંગલ આચરણવાળા બનીને, કુશીલતાનો નાશ કરીને તથા આળસ્યને છોડીને વિદ્યાની ઉન્નતિ કરે. (૩)

इ॒है॒वाग्ने॒ऽ अधि॑ धारया र॒यिं मा त्वा॒ नि क्र॑न्पूर्व॒चितो॑ निका॒रिणः॑।
क्षत्रम॑ग्ने सु॒यम॑मस्तु तुभ्य॑मुपस॒त्ता व॑र्द्धतां ते॒ऽअनि॑ष्टृतः॥ ४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્યુત્‌ની સમાન પ્રકાશમાન રાજન્ - વિદ્વાન્ ! આપ इह-આ સંસારમાં रयिम्-લક્ષ્મીને धारय-ધારણ કરો, पूर्वचितः-પૂર્વ પ્રાપ્તવિજ્ઞાન આદિથી શ્રેષ્ઠજન જે निकारिणः-નિરંતર શુભ કર્મ કરવાના સ્વભાવવાળા છે, તેઓ त्वा-આપને मा, नि, क्रन्-નીચા ન કરે-અર્થાત્ માન કરે.

હે अग्ने-વિનયથી શોભાયમાન રાજન્-સભાપતિ ! ते-આપના सुयमम्-નિયમિત અર્થાત્ સુંદર નિયમ જેનાથી ચાલે તે क्षत्रम्-ધન વા રાજ્ય अस्तु-થાય; જેથી उपसत्ता-સર્વોપરિ વિરાજમાન તથા अनिष्टृतः-હિંસા વા વિઘ્નરહિત બનીને एव-જ આપ अधि, वर्द्धताम्-સર્વત્રથી વૃદ્ધિ-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરો; તથા तुभ्यम्-આપના માટે રાજ્ય વા ધન સુખદાયક બને. (૪)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! આપ એવો વિનય ધારણ કરો કે, જેથી પૂર્વજ વૃદ્ધજન આપનું બહુમાન કરે. રાજ્યમાં ઉત્તમ નિયમોને પ્રવૃત્ત કરો, કે જેથી આપ અને આપનું રાજ્ય વિઘ્ન રહિત બનીને સર્વથી ઉન્નત બને અને પ્રજા આપને સર્વોપરિ માને. (૪)

क्षत्रेणा॑ग्ने॒ स्वायुः॒ सꣳर॑भस्व मि॒त्रेणा॑ग्ने मि॒त्रधे॑ये यतस्व।
स॒जा॒ताना॑ मध्यम॒स्था ए॑धि रा॒ज्ञाम॑ग्ने विह॒व्यो॒ दीदिही॒ह॥ ५॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! રાજન્ ! આપ इह-આ સંસારમાં વા રાજ્યાધિકારમાં क्षत्रेण-રાજ્ય વા ધનની સાથે स्वायुः-ઉત્તમ યુવાવસ્થાનો सम्, रभस्व-સારી રીતે પ્રારંભ કરો-પ્રાપ્ત કરો.

હે अग्ने-વિદ્યા અને વિનયથી સુશોભિત રાજન્ ! मित्रेण-ધાર્મિક વિદ્વાન મિત્રોની સાથે मित्रधेये-મિત્રોને ધારણ કરવા યોગ્ય વ્યવહારમાં यतस्व-પ્રયત્ન કરો.

હે अग्ने-ન્યાયના પ્રકાશક સભાપતિ - રાજન્ ! सजातानाम्-સમાન જન્મવાળા राज्ञाम्-ધર્માત્મા રાજાધિરાજાઓમાં मध्यमस्थाः-મધ્યસ્થ અર્થાત્ પક્ષપાત રહિત एधि-બનો, તથા विहव्यः-વિશેષ સ્તુતિને યોગ્ય બનીને दीदिहि-પ્રકાશિત બનો. (૫)

ભાવાર્થ : રાજા સદા બ્રહ્મચર્યથી દીર્ઘાયુ, સત્ય, ધર્મના પ્રિય મંત્રીઓની સાથે મંત્રણા કરનાર, અન્ય રાજાઓ સાથે શ્રેષ્ઠ સંધિ કરનાર, પક્ષપાત રહિત ન્યાયાધીશ તથા સર્વ ઉત્તમ લક્ષણોથી યુક્ત અને દુષ્ટ વ્યસનોથી રહિત બનીને ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને ધૈર્ય, શાન્તિ અને અપ્રમાદથી ધીરે-ધીરે સિદ્ધ કરે. (૫)

अति निहो अति स्रिधोऽत्यचित्तिमत्यरातिमग्ने।
विश्वा ह्यग्ने दुरिता सहस्वाथाऽस्मभ्यं सहवीरांरयिं दाः॥ ६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-તેજસ્વી સભાપતે ! આપ अति-અત્યંત निहः-અસત્યનો ત્યાગ કરનાર બનીને स्रिधः-દુષ્ટાચારિઓનો अति-સર્વથા सहस्व-નાશ કરો, अचित्तिम्-અત્યંત અજ્ઞાન, अति-અત્યંત अरातिम्-અદાન-દાનના નિષેધનો નાશ કરો.

હે अग्ने-દૃઢ વિદ્યાવાળા સભાપતે ! આપ हि-નિશ્ચયપૂર્વક विश्वा-સર્વ दुरिता-દુષ્ટ આચરણોનો अति-અત્યંત નાશ કરો; अथ-તદનન્તર अस्मभ्यम्-અમારા માટે सहवीराम्-વીરપુરુષોથી યુક્ત સેના તથા रयिम्-ધનને दाः-પ્રદાન કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે દુષ્ટ આચરણનો ત્યાગ કરનાર, કુત્સિત-નિંદનીય કાર્યોને રોકનાર, અજ્ઞાન અને અદાનને દૂર કરનાર, દુર્વ્યસનોથી પૃથક્, સુખ-દુઃખને સહન કરનાર, વીર સેનાનાં પ્રિય, ગુણ અનુસાર લોકોનો યોગ્ય સત્કાર કરતા ન્યાયપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરે છે, તે સદા સુખી રહે. (૬)

अनाधृष्यो जातवेदा अनिष्टृतो विराडग्ने क्षत्रभृद्दीदिहीह।
विश्वा आशाः प्रमुञ्चन्मानुषीर्भियः शिवेभिरद्य परि पाहि नो वृधे॥ ७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-રાજનીતિના સારી રીતે સંગ્રહ કરનાર રાજન્ ! જે આપ अद्य-આ સમયે इह-આ રાજ્ય વ્યવહારમાં मानुषीः-મનુષ્ય સંબંધી भियः-રોગ, દોષ આદિ ભયોનો નાશ કરો છો; शिवेभिः-કલ્યાણકારી સભ્યજનોની સાથે अनिष्टृतः-દુઃખથી પૃથક્ अनाधृष्यः-અન્યોથી ઘર્ષણને અયોગ્ય, जातवेदाः-વિદ્યાથી યુક્ત, विराट्-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશમાન क्षत्रभृत्-રાજ્યનું ધારણ-પોષણ કરો છો, તે આપ नः-અમારી दीदिहि-કામના કરો. विश्वाः-સર્વ आशाः-દિશાઓને प्रमुञ्चन्-સારી રીતે મુક્ત કરતાં આપ અમારી वृधे-વૃદ્ધિ માટે परि, पाहि-સર્વત્રથી રક્ષા કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે રાજા અને રાજપુરુષો પ્રજાને સંતોષ આપીને મંગલ આચરણ કરનાર, સર્વ વિદ્યા અને ન્યાયના પ્રેમી બનીને પ્રજાનું પાલન કરે છે, તે સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિમાન બને છે. (૭)

बृहस्पते सवितर्बोधयैनꣳ सꣳशितं चित्सन्तराꣳ सꣳशिशाधि।
वर्धयैनं महते सौभगाय विश्वऽएनमनु मदन्तु देवाः॥ ८॥

પદાર્થ : હે बृहस्पते-મહાન સજ્જનોના રક્ષક-પાલક, सवितः-પૂર્ણ વિદ્યાના ઉપદેશક તથા વિદ્યા-ઐશ્વર્યથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! આપ एनम्-આ રાજાને संशितम्-તીક્ષ્ણ બુદ્ધિ અને સ્વભાવવાળા બનાવીને बोधय-સચેતન કરો; અને सम, शिशाधि-સમ્યક્ શિક્ષણ આપો, चित्-અને सन्तराम्-પ્રજાને સર્વથા ઉત્તમ રીતિથી શિક્ષણ આપો, एनम्-આ રાજાની महते-મહાન सौभगाय-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય માટે वर्धय-વૃદ્ધિ કરો.

विश्वे-સર્વ देवाः-સુસભ્ય વિદ્વાન एनम्-આ રાજાને अनु, मदन्तु-અનુકૂળ પ્રસન્ન-આનંદિત કરે. (૮)

ભાવાર્થ : જે રાજસભાના ઉપદેશક હોય તે તે રાજા આદિને દુર્વ્યસનોથી પૃથક્ કરીને, સુશીલ બનાવીને મહાન-ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ માટે પ્રવૃત્ત કરે. (૮)

अमुत्रभूयादध यद्यमस्य बृहस्पते अभिशस्तेरमुञ्चः।
प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्माद्देवानामग्ने भिषजा शचीभिः॥ ९॥

પદાર્થ : હે बृहस्पते-મહાન રક્ષક-પાલક વિદ્વાન્ ! આપ अमुत्रभूयात्-પરજન્મમાં થનારા अभिशस्तेः-સર્વ પ્રકારના અપરાધોથી अमुञ्चः-મુક્ત કરો.

अध-તદન્તર यत्-જે यमस्य-ધર્માત્મા, નિયંતાજનની શિક્ષામાં રહે તેના मृत्युम्-મૃત્યુથી છોડાવો-મુક્ત કરો.

હે अग्ने-શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય ! આપ જેમ अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશક शचीभिः-કર્મ વા બુદ્ધિઓથી भिषजाः-રોગનાશક પદાર્થો-ઔષધોને प्रति, औहताम्-વિશેષ તર્કથી સિદ્ધ કરો છો; તેમ अस्मात्-એનાથી देवानाम्-વિદ્વાનોના આરોગ્યને સિદ્ધ કરો. (૯)

ભાવાર્થ : તે જ શ્રેષ્ઠ અધ્યાપક અને ઉપદેશક છે, જે આ જન્મ અને પરજન્મમાં સુખ માટે સર્વને સુશિક્ષિત કરે છે, જેમાં બ્રહ્મચર્ય આદિ કર્મોનું સેવન કરીને મનુષ્ય અલ્પ વયમાં મૃત્યુ અને આનંદની હાનિને પ્રાપ્ત કરે નહિ. (૯)

उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ १०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वयम्-અમે तमसः-અંધકારથી પૃથક્ રહેનારા ज्योतिः-પ્રકાશમાન સૂર્યમંડળને पश्यन्तः-જોતાં, स्वः-સુખનાં સાધક उत्तम-સર્વ લોકોને દુઃખથી પાર કરનાર देवत्रा-દિવ્ય પદાર્થો વા વિદ્વાનોમાં વિદ્યમાન उत्तमम्-અતિશ્રેષ્ઠ सूर्यम्-ચરાચરના આત્મા જગદીશ્વર देवम्-દેવને परि, उत्, अगन्म-સર્વત્રથી ઉત્તમ રીતે પ્રાપ્ત કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ તે ઈશ્વરને પ્રાપ્ત કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન અવિદ્યારૂપ અંધકારથી પૃથક્, સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ, મહાદેવ, સર્વથી ઉત્તમ અને સર્વાન્તર્યામી પરમાત્માની જ ઉપાસના કરે છે, તેઓ મુક્તિસુખને અવશ્ય નિર્વિઘ્ન પ્રીતિપૂર્વક પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

ऊर्ध्वा अस्य समिधो भवन्त्यूर्ध्वा शुक्रा शोचीᳬंष्यग्नेः।
द्युमत्तमा सुप्रतीकस्य सूनोः॥ ११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अस्य-આ सुप्रतीकस्य-ઉત્તમ પ્રતીતિ-પ્રસિદ્ધિકારક કર્મોથી યુક્ત, सूनोः-પ્રાણીઓને ગર્ભોથી મુક્ત કરાવનાર अग्नेः-અગ્નિની ऊर्ध्वाः-ઉત્તમ समिधः-સમ્યક્ પ્રકાશ કરનારી સમિધાઓ; ऊर्ध्वा-ઉપર જનારી द्युमत्तमा-અત્યંત પ્રશસ્ત પ્રકાશથી યુક્ત शुक्रा-શુદ્ધ शोचींषि-તેજ भवन्ति-થાય છે, તે અગ્નિને તમે જાણો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે એ ઉપર જનાર, સર્વ પદાર્થોનાં દર્શનનું કારણ અને સર્વના પાલનનો નિમિત્ત અગ્નિ છે, તેને જાણીને કાર્યોને સદા સિદ્ધ કરો. (૧૧)

तनूनपादसुरो विश्ववेदा देवो देवेषु देवः। पथो अनक्तु मध्वा घृतेन॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે देवेषु-ઉત્તમ ગુણવાળા પદાર્થોમાં देवः-દિવ્યગુણવાળા, असुरः-પ્રકાશરહિત વાયુ, विश्ववेदाः-સર્વને પ્રાપ્ત થનાર, तनूनपात्-શરીરોમાં પતિત ન થનાર, देवः-કામના કરવા યોગ્ય मध्वा-મધુર घृतेन-જળની સાથે पथः-શ્રોત્રાદિના માર્ગોને अनक्तु-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને તમે જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વર મહાદેવ, વિશ્વવ્યાપી, સર્વના સુખકારી છે, તેમ વાયુ પણ છે. કારણ કે તેના વિના કોઈ પણ ક્યાંય ગતિ કરી શકતા નથી. (૧૨)

मध्वा यज्ञं नक्षसे प्रीणानो नराशᳬंसोऽअग्ने।
सुकृद्देवः सविता विश्ववारः॥ १३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! જે नराशंसः-નરોની પ્રશંસા કરનાર, सुकृत्-ઉત્તમ કામ કરનાર, विश्ववारः-વિશ્વનું વરણ-સ્વીકાર કરનાર, प्रीणानः-કામના કરનાર, सविता-ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક देवः-શુદ્ધ વ્યવહાર કરનાર છે, તે मध्वा-મધુર વચનથી यज्ञम्-યજ્ઞરૂપ સંગત વ્યવહારને नक्षसे-પ્રાપ્ત કરે છે, તે આપને અમે પ્રસન્ન કરીએ છીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞમાં સુગંધ આદિ પદાર્થોના હોમથી વાયુ અને જલને શુદ્ધ કરીને સર્વને સુખી કરે છે, તેઓ સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

अच्छायमेति शवसा घृतेनेडानो वह्निर्नमसा।
अग्निᳬं स्रुचो अध्वरेषु प्रयत्सु॥ १४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अयम्-આ ईडानः-સ્તુતિને યોગ્ય, वह्निः-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાન

प्रयत्सु-પ્રયત્નથી સાધ્ય अध्वरेषु-હિંસા-વિઘ્નોથી રહિત યજ્ઞોમાં शवसा-બળ घृतेन-જળ અને नमसा-પૃથિવી આદિના અન્નની સાથે વિદ્યમાન अग्निम्-અગ્નિને તથા स्रुचः-હોમના સાધન સ્રુવા આદિને अच्छ-સારી રીતે एति-પ્રાપ્ત કરે છે, તેનો તમે સત્કાર કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અગ્નિ બળતણ અને જળથી યુક્ત વાહનોમાં પ્રયુક્ત થઈને બળથી શીઘ્ર દેશાન્તરમાં પહોંચાડે છે, તેને જાણીને ઉપકાર ગ્રહણ કરો. (૧૪)

स यक्षदस्य महिमानमग्नेः स ईं मन्द्रा सुप्रयसः।
वसुश्चेतिष्ठो वसुधातमश्च॥ १५॥

પદાર્થ : सः-તે પૂર્વોક્ત વિદ્વાન્ મનુષ્ય सुप्रयसः-ઉત્તમ પ્રસન્નતાકારક અન્ન આદિ પદાર્થોનો હેતુ अस्य-આ अग्नेः-અગ્નિનાં महिमानम्-મહત્ત્વને यक्षत्-સારી રીતે સમજે છે; सः-તે वसुः-અન્યોને વસાવનાર, चेतिष्ठः-અત્યંત સચેત च-અને वसुधातमः-અત્યંત ધનોને ધારણ કરનારા બનીને ईम्-જલ તથા मन्द्रा-આનંદદાયક હોમ વા યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય આ રીતે અગ્નિના મહત્ત્વને જાણે છે, તે અતિ ધનવાન બને છે. (૧૫)

द्वारो देवीरन्वस्य विश्वे व्रता ददन्ते अग्नेः।
उरुव्यचसो धाम्ना पत्यमानाः॥ १६॥

પદાર્થ : જે विश्वे-સર્વ पत्यमानाः-સ્વામીત્વ કરનાર વિદ્વાન છે, તે उरुव्यचसः-અનેકોમાં વ્યાપક अस्य-આ अग्नेः-અગ્નિના धाम्ना-સ્થાનથી देवीः-પ્રકાશિત द्वारः-દ્વારો તથા व्रता-સત્ય ભાષણાદિ વ્રતોનો अनु, ददन्ते-અનુકૂળતાપૂર્વક ઉપદેશ આપે છે, તેઓ ઉત્તમ ઐશ્વર્યવાન બને છે. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો-વિદ્વાનો અગ્નિની વિદ્યાનાં દ્વારોને જાણે છે, તેઓ સત્ય આચરણવાળા બનીને પ્રસન્ન રહે છે. (૧૬)

ते अस्य योषणे दिव्ये न योना उषासानक्ता। इमं यज्ञमवतामध्वरं नः॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ते-તેઓ उषासानक्ता-રાત અને દિવસ अस्य-એ પુરુષને योनौ-ઘરમાં दिव्ये-ઉત્તમ રૂપવાળી योषणे-બે સ્ત્રીઓની न-સમાન વિદ્યમાન नः-અમારા જે इमम्-એ अध्वरम्-હિંસા-વિનાશ રહિત यज्ञम्-યજ્ઞની अवताम्-રક્ષા કરે છે, તે અગ્નિને તમે જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ વિદુષી સ્ત્રી-પત્ની ગૃહકાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ અગ્નિથી ઉત્પન્ન રાત અને દિવસ સર્વ વ્યવહારને સિદ્ધ કરે છે. (૧૭)

दैव्या होतारा ऊर्ध्वमध्वरं नोऽग्नेर्जिह्वामभि गृणीतम्।
कृणुतं नः स्विष्टिम्॥ १८॥

પદાર્થ : જે दैव्या-વિદ્વાનોમાં પ્રસિદ્ધ બે વિદ્વાનો, होतारा-સુખદાતા જિજ્ઞાસુ અને અધ્યાપક नः-અમારી उर्ध्वम्-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત अध्वरम्-હિંસા રહિત વ્યવહારની अभि, गृणीतम्-સર્વત્રથી પ્રશંસા કરે છે, તે બન્ને नः-અમારી स्विष्टिम्-સુંદર અગ્નિનાં નિમિત્ત अग्नेः-અગ્નિની जिह्वाम्-જ્વાળાને कृणुतम्-સિદ્ધ કરે. (૧૮)

ભાવાર્થ : જો જિજ્ઞાસુ અને અધ્યાપક બન્ને અગ્નિની વિદ્યાને જાણે, તો વિશ્વની ઉન્નતિ કરી શકે છે. (૧૮)

तिस्रो देवीर्बर्हिरेदꣳ सदन्त्विडा सरस्वती भारती। मही गृणाना॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે मही-મહાન गृणाना-સ્તુતિ કરનારી इडा-સ્તુતિ કરવા યોગ્ય, सरस्वती-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત અને भारती-સર્વ શાસ્ત્રોને ધારણ કરનારી જે तिस्रः-ત્રણ देवी-કામનાને યોગ્ય વાણીઓ इदम्-આ बर्हिः-અન્તરિક્ષને आ, सदन्तु-સર્વત્ર પ્રાપ્ત થાય છે, તે ત્રણેય પ્રકારની વાણીઓને સમ્યક્ રીતે જાણો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વ્યવહારમાં કુશળ, સર્વ શાસ્ત્રોની વિદ્યાથી યુક્ત અને સત્ય આદિ વ્યવહારને ધારણ કરનારી વાણીને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સ્તુતિ યોગ્ય બનીને મહાન બને છે. (૧૯)

तन्नस्तुरीपमद्भुतं पुरुक्षु त्वष्टा सुवीर्यम्। रायस्पोषं विष्यतु नाभिमस्मे॥ २०॥

પદાર્થ : त्वष्टा-વિદ્યાથી પ્રકાશિત ઈશ્વર अस्मे-અમારા नाभिम्-મધ્યપ્રદેશના પ્રતિ तुरीपम्-શીઘ્ર પ્રાપ્ત થનાર અને શીઘ્રકારી, अद्भुतम्-આશ્ચર્યરૂપ ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવથી યુક્ત, पुरुक्षु-અનેકોમાં વ્યાપક, सुवीर्यम्-ઉત્તમ બળયુક્ત તથા तम्-તે પ્રસિદ્ધ रायः-ધનની पोषम्-પુષ્ટિને પ્રદાન કરે, તથા नः-અમને દુઃખથી वि,स्यतु-વિમુક્ત કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શીઘ્રકારી, આશ્ચર્યરૂપ, અનેકોમાં વ્યાપક ધન અને બળ છે, તેને તમે ઈશ્વરની પ્રાર્થનાથી પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત રહો. (૨૦)

वनस्पतेऽव सृजा रराणस्त्मना देवेषु। अग्निर्हव्यꣳ शमिता सूदयाति॥ २१॥

પદાર્થ : હે वनस्पते-વન = સેવન કરવા યોગ્ય શાસ્ત્રના રક્ષક જિજ્ઞાસુ પુરુષ ! જેમ शमिता-યજ્ઞ સંબંધી अग्निः-અગ્નિ हव्यम्-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હોમના દ્રવ્યોને सूदयाति-સૂક્ષ્મ કરીને વાયુમાં ફેલાવે છે, તેમ त्मना-પોતાના આત્માથી देवेषु-દિવ્યગુણોની સમાન વિદ્વાનોમાં रराणः-રમણ કરતાં ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હોમ પદાર્થોને अव, सृज-ઉત્તમ રીતે તૈયાર કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જેમ દિવ્ય અન્તરિક્ષ આદિમાં અગ્નિ પ્રકાશમાન-શોભાયમાન છે, તેમ વિદ્વાનોમાં સ્થિત જિજ્ઞાસુ પુરુષ પણ સારી રીતે પ્રકાશિત આત્માવાળા બની જાય છે. (૨૧)

अग्ने स्वाहा कृणुहि जातवेद इन्द्राय हव्यम्।
विश्वे देवा हविरिदं जुषन्ताम्॥ २२॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-વિદ્યામાં પ્રસિદ્ધ अग्ने-વિદ્વાન્ ! આપ इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યને માટે स्वाहा-સત્યવાણી અને हव्यम्-ગ્રહણ યોગ્ય હોમ દ્રવ્યોને कृणुहि-પ્રાપ્ત કર અને બનાવ.

विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાન इदम्-એ हविः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હવિનું जुषन्ताम्-સેવન કરે. (૨૨)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ માટે પ્રયત્ન કરે, તો સત્ય, પરમાત્મા અને વિદ્વાનોની સેવા કરે. (૨૨)

पीवो अन्ना रयिवृधः सुमेधाः श्वेतः सिषक्ति नियुतामभिश्रीः।
ते वायवे समनसो वितस्थुर्विश्वेन्नरः स्वपत्यानि चक्रुः॥ २३॥

પદાર્થ : જે समनसः-સમાન વિજ્ઞાનવાળા, रयिवृधः-ધનની વૃદ્ધિ કરનાર, सुमेधाः-ઉત્તમ બુદ્ધિમાન नरः-નાયક, पीवोअन्ना-પુષ્ટિકારક અન્નવાળા વિદ્વાન विश्वा-સર્વ स्वपत्यानि-શ્રેષ્ઠ સંતાનોને चक्रुः-ઉત્પન્ન કરે છે; ते-તેઓ इत्-જ वायवे-વાયુની વિદ્યા માટે वि, तस्थुः-વિશેષ રૂપથી સ્થિત થાય છે.

જ્યારે नियुताम्-નિશ્ચિત ગતિમાન મનુષ્યોને अभिश्रीः-સર્વત્રથી શોભાયુક્ત, श्वेतः-ગતિશીલ વા વર્ધક વાયુ સર્વને सिषक्ति-સિંચન-અભિષેક કરે છે, ત્યારે તે શ્રીમાન-શોભાયમાન બને છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સર્વનાં જીવનનું મૂળ છે, તેમ ઉત્તમ સંતાન સર્વનાં સુખોનાં નિમિત્ત હોય છે. (૨૩)

राये नु यं जज्ञतू रोदसीमे राये देवी धिषणा धाति देवम्।
अध वायुं नियुतः सश्चत स्वा उत श्वेतं वसुधितिं निरेके॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! इमे-આ रोदसी-આકાશ અને ભૂમિ राये-ધનને માટે यम्-જે વાયુને जज्ञतुः-ઉત્પન્ન કરે છે; देवी-ઉત્તમ ગુણોવાળી धिषणा-બુદ્ધિની સમાન વર્તાવ કરનારી સ્ત્રી જે देवम्-ઉત્તમ પતિને राये-ધનને માટે नु-શીઘ્ર धाति-ધારણ કરે છે; अध-તદનન્તર निरेके-નિઃશંક સ્થાનમાં स्वाः-પોતાના સંબંધી नियुतः-નિશ્ચયથી મેલ-મિલાપ કરનાર બનીને श्वेतम्-વૃદ્ધ પુરુષને उत-અને वसुधितिम्-પૃથિવી આદિ વસુઓને ધારણ કરનાર वायुम्-વાયુને सश्चत-પ્રાપ્ત કરે છે, તેને તમે જાણો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ બળ આદિ ગુણોથી યુક્ત, સર્વને ધારણ કરનાર વાયુને જાણીને ધન અને બુદ્ધિની વૃદ્ધિ કરો.

જો એકાન્તમાં સ્થિત બનીને એ પ્રાણના દ્વારા પોતાના આત્મા અને પરમાત્માને જાણવા ઇચ્છે, તો તે બન્નેનો-આત્મા અને પરમાત્માનો સાક્ષાત્કાર થાય છે. (૨૪)

आपो ह यद्बृहतीर्विश्वमायन् गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम्।
ततो देवानाᳬ समवर्त्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ २५॥

પદાર્થ : बृहतीः-મોટાં પરિમાણવાળી, जनयन्तीः-પૃથિવી આદિ જગતને પ્રકટ કરનારી यत्-જે

विश्वम्-સર્વમાં પ્રવિષ્ટ गर्भम्-મૂળરૂપ પ્રધાન-પ્રકૃતિને दधानाः-ધારણ કરતી आपः-વ્યાપક જલોની સૂક્ષ્મમાત્રા - તન્માત્રાઓ आयन्-પ્રાપ્ત થાય છે; ततः-તેનાથી अग्निम्-સૂર્ય આદિ નામક અગ્નિ તથા देवानाम्-ઉત્તમ પૃથિવી આદિમાંથી एकः-એક અસહાય असुः-પ્રાણ = વાયુ सम्, अवर्त्तत-સમ્યક્ પ્રવૃત્ત કરે છે, તે ह-જ कस्मै-સુખનાં નિમિત્ત देवाय-દિવ્યગુણયુક્ત ઈશ્વરને માટે અમે हविषा-ધારણપૂર્વક विधेम-સેવન કરીએ. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સ્થૂલ પાંચ તત્ત્વ જોવામાં આવે છે, તેને સૂક્ષ્મ, પ્રકૃતિનાં કાર્ય, પંચ તન્માત્રા નામક તત્ત્વથી ઉત્પન્ન થયેલા જાણો.

તેની મધ્યમાં એક સૂક્ષ્મ વાયુ છે, તે સર્વને ધારણ કરનાર છે, તેમ જાણો.

જો તમે તે વાયુ = પ્રાણના દ્વારા યોગાભ્યાસથી પરમાત્માને જાણવા ઈચ્છો, તો તેને સાક્ષાત્ જાણો. (૨૫)

यश्चिदापो॑ महि॒ना प॒र्यप॑श्य॒द्दक्षं॒ दधा॑ना ज॒नय॑न्तीर्य॒ज्ञम्।
यो दे॒वेष्वधि॑ दे॒व एक॒ आसी॒त्कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम॥ २६॥

પદાર્થ : यः-જે પરમેશ્વર महिना-પોતાની વ્યાપકતાના મહિમાથી दक्षम्-બળને दधानाः-ધારણ કરનારી, यज्ञम्-સંગત સંસારને जनयन्तीः-ઉત્પન્ન કરનારી आपः-વ્યાપ્તશીલ સૂક્ષ્મ જળની તન્માત્રા છે; તેને पर्यपश्यत्-સર્વત્રથી નિહાળે છે.

यः-જે પરમેશ્વર देवेषु-ઉત્તમ ગુણવાળા પ્રકૃતિ આદિ તથા જીવોમાં एकः-એક દ્વિતીય अधि, देवः-સર્વની ઉપર દિવ્યગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા आसीत्-છે; તે चित्-જ कस्मै-સુખસ્વરૂપ देवाय-સર્વ સુખોના દાતા ઈશ્વરની અમે हविषा-તેની આજ્ઞાપાલન તથા યોગાભ્યાસના ધારણથી विधेम-સેવા કરીએ. (૨૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો આપ સર્વના દ્રષ્ટા, ધર્તા, કર્તા અદ્વિતીય, અધિષ્ઠાતા પરમાત્માને જાણવા નિત્ય યોગાભ્યાસ કરો છો, તો આનંદને પ્રાપ્ત કરો છો. (૨૬)

प्र या॒भिर्यासि॑ दा॒श्वांस॒मच्छा॑ नि॒युद्भि॑र्वायवि॒ष्टये॑ दुरो॒णे।
नि नो॑ र॒यिꣳ सु॒भोज॑सं युवस्व॒ नि वी॒रं गव्य॒मश्व्यं॑ च॒ राधः॑॥ २७॥

પદાર્થ : હે वायो-વિદ્વાન્ ! વાયુની સમાન વર્તાવ કરનાર આપ प्रयाभिः-કામના કરવા યોગ્ય नियुद्भिः-નિયત ગુણોથી इष्टये-અભીષ્ટ સુખને માટે अच्छ-સારી રીતે यासि-પ્રાપ્ત થાય છે; दुरोणे-ઘરમાં नः-અમારા सुभोजसम्-ઉત્તમ ભોજનના હેતુ, दाश्वांसम्-સુખના દાતા, रयिम्-ધનને नि, युवस्व-સર્વથા પ્રાપ્ત કરો; वीरम्-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરાવનારા, गव्यम्-ગાયના હિતકારી च-તથા अश्व्यम्-ઘોડાને માટે હિતકારી राधः-ધનને नि-સર્વથા પ્રાપ્ત કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ જીવન આદિ સર્વ ઈષ્ટ કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્વાન આ સંસારમાં વર્તન કરે. (૨૭)

आ नो॑ नि॒युद्भिः॑ श॒तिनी॑भिरध्व॒रꣳ स॑ह॒स्रिणी॑भि॒रुप॑ याहि य॒ज्ञम्।
वायो॑ अ॒स्मिन्त्सव॑ने मादयस्व यू॒यं पा॑त स्व॒स्तिभिः॒ सदा॑ नः॥ २८॥

પદાર્થ : હે वायो-વાયુની સમાન બળવાન વિદ્વાન્ ! જેમ વાયુ नियुद्भिः-નિશ્ચિત મિશ્રિત-અમિશ્રિત ગમનાગમનરૂપ, शतिनीभिः-અનેક કર્મોવાળો सहस्रिणीभिः અસંખ્ય વેગોથી યુક્ત ગતિઓથી अस्मिन्-આ सवने-ઉત્પત્તિના આધાર જગતમાં नः-અમારા अध्वरम्-હિંસા રહિત यज्ञम्-સંગતિ યોગ્ય વ્યવહારને उप-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ આપ आयाहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો; અને मादयस्व-આનંદ કરો.

હે વિદ્વાનો ! युयम्-આપ આ વિદ્યાથી स्वस्तिभिः-સુખોથી सदा-સર્વ કાળમાં नः-અમારી पात-રક્ષા કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જેમ વાયુ વિવિધ ગતિઓથી સર્વને પુષ્ટ કરે છે, તેમ જ સુશિક્ષાથી સર્વની પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૨૮)

नि॒युत्वा॑न्वाय॒वा ग॑ह्ययꣳ शु॒क्रो अ॑यामि ते। गन्ता॑सि सु॒न्व॒तो गृ॒हम्॥ २९॥

પદાર્થ : હે वायो-વાયુની સમાન શીઘ્ર ગતિમાન नियुत्वान्-નિયન્તા ઈશ્વર ! આપ જેમ अयम्-આ शुक्रः-પવિત્રકર્તા, गन्ता-ગતિશીલ વાયુ सुन्वतः-સોમ-રસ કાઢનારના गृहम्-ઘર જાય છે; તેમ મને आ, गहि-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય.

કારણ કે આપ ઈશ્વર असि-છો, તેથી ते-આપના સ્વરૂપને હું अयामि-પ્રાપ્ત કરું છું. (૨૯)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ સર્વનો શોધક, સર્વત્ર ગતિશીલ અને સર્વનો પ્રિય છે, તેમ ઈશ્વર પણ છે. (૨૯)

वायो॑ शु॒क्रोऽअ॑यामि ते॒ मध्वो॒ऽअग्रं॒ दिवि॑ष्टिषु।
आ या॑हि॒ सोम॑पीतये स्पा॒र्हो दे॑व नि॒युत्व॑ता॥ ३०॥

પદાર્થ : હે वायो-જે વાયુની સમાન વર્તન કરનાર વિદ્વાન્ ! शुक्रः-આપ શુદ્ધિકારક છો, ते-આપના मध्वः-મધુર વચનથી अग्रम्-ઉત્તમ ભાગને दिविष्टिषु-દિવ્ય સંગતિઓમાં હું अयामि-પ્રાપ્ત કરું છું.

હે देव-દિવ્ય ગુણ સંપન્ન વિદ્વાન્ ! स्पार्हः-ઉત્તમ ગુણોની અભિલાષાથી યુક્તના પુત્ર આપ नियुत्वता-વાયુની સાથે सोमपीतये-ઉત્તમ ઔષધિઓના રસનું પાન કરવા માટે आ, याहि-સારી રીતે આવો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ વાયુ સર્વ પ્રકારના રસ, ગંધ આદિનું પાન કરીને સર્વને પુષ્ટ કરે છે, તેમ તું પણ સર્વને પુષ્ટ કર. (૩૦)

वा॒युर॑ग्रे॒गा य॑ज्ञ॒प्रीः सा॒कं ग॒न्मन॑सा य॒ज्ञम्। शिवो॑ नि॒युद्भिः॑ शि॒वाभिः॑॥ ३१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ वायुः-વાયુ नियुद्भिः-નિશ્ચિત शिवाभिः-મંગલકારી ક્રિયાઓથી यज्ञम्-યજ્ઞને गन्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ शिवः-મંગલસ્વરૂપ अग्रेगाः-અગ્રગામી અને यज्ञप्रीः-યજ્ઞને પૂર્ણ કરનાર બનીને આપ मनसा-મનની વૃત્તિની साकम्-સાથે યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ અનેક પદાર્થોની સાથે ગમનાગમન કરે છે, તેમ વિદ્વાનજનો ધર્મયુક્ત કર્મોને વિજ્ઞાનથી પ્રાપ્ત કરે. (૩૧)

वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरा गहि। नियुत्वान्त्सोमपीतये॥ ३२॥

પદાર્થ : હે वायो-વાયુની સમાન વર્તાવ કરનાર વિદ્વાન્ ! ये-જે ते-આપના सहस्रिणः-પ્રશસ્ત હજારો મનુષ્યોથી યુક્ત रथासः-રમણીય વાહન છે, तेभिः-તેનાથી नियुत्वान्-સમર્થ બનીને આપ सोमपीतये-સોમ ઔષધિના રસનું પાન કરવા માટે आ, गहि-આવો. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વાયુની અસંખ્ય રમણીય ગતિઓ છે, તેમ વિવિધ ગતિઓથી સમર્થ બનીને તમે ઐશ્વર્યનો ભોગ કરો. (૩૨)

एकया च दशभिश्च स्वभूते द्वाभ्यामिष्टये विꣳशती च।
तिसृभिश्च वहसे त्रिꣳशता च नियुद्भिर्वायविह ता वि मुञ्च॥ ३३॥

પદાર્થ : હે स्वभूते-પોતાના ઐશ્વર્યથી શોભાયમાન वायो-વાયુની સમાન વિદ્વાન્ ! જેમ પવન इह-આ જગતમાં इष्टये-વિદ્યાની સંગતિને માટે एकया-એક પ્રકારની ગતિથી, च-અને दशभिः-દશ પ્રકારની ગતિઓથી, च-અને द्वाभ्याम्-વિદ્યા અને પુરુષાર્થ બન્નેથી इष्टये-વિદ્યાની સંગતિને માટે विंशती-૨૦ × ૨ = ૪૦ - ચાળીસ, च-અને तिसृभिः-ત્રણ પ્રકારની ગતિઓથી च-અને त्रिंशता-ત્રીસ અર્થાત્ તેત્રીસ च-અને नियुद्भिः-નિશ્ચિત ગતિઓની સાથે યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ આપ वहसे-પ્રાપ્ત કરો અને આપ ता-તે સર્વને वि + मुञ्च-વિમુક્ત કરો અર્થાત્ તેને ઉપદેશ આપો. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ-ઈન્દ્રિય, પ્રાણ; અનેક ગતિઓ તથા પૃથિવી આદિ લોકોની સાથે સર્વના ઈષ્ટને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્વાન પણ સિદ્ધ કરે. (૩૩)

तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत। अवाꣳस्या वृणीमहे॥ ३४॥

પદાર્થ : હે ऋतस्पते-સત્યના રક્ષક, जामातः-જમાઈની સમાન વર્તાવ કરનાર, अद्भुत-આશ્ચર્યરૂપ કર્મ કરનાર वायो-અત્યંત બળવાન વિદ્વાન્ ! અમે त्वष्टुः-વિદ્યાથી પ્રદીપ્ત तव-આપના अवांसि-રક્ષા આદિ કર્મોનો आ, वृणीमहे-સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેનો તમે પણ સ્વીકાર કરો.

ભાવાર્થ : જેમ જમાઈ અદ્‌ભુત ગુણોવાળો, સત્ય ઈશ્વરનો સેવક તથા સ્વીકાર કરવા યોગ્ય હોય છે, તેમ વાયુ પણ વરણ-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય છે. (૩૪)

अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः।

ईशा॑नमस्य॒ जग॑तः स्व॒र्दृश॒मीशा॑नमिन्द्र त॒स्थुषः॑॥ ३५॥

પદાર્થ : હે शूर-નિર્ભય इन्द्र-સભાપતે ! अदुग्धा इव-દૂધ વગરની धेनवः-ગાયોની સમાન અમે अस्य-આ जगतः-જંગમ તથા तस्थुषः-સ્થાવર જગતના ईशानम्-નિયંતા स्वर्द्दशम्-સુખપૂર્વક જોવા લાયક ઈશ્વરની સમાન ईशानम्-સમર્થ त्वा-આપનો अभि, नोनुमः-સન્મુખથી સત્કાર કરીએ છીએ, પ્રશંસા કરીએ છીએ. (૩૫)

ભાવાર્થ : જો આપ પક્ષપાત રહિત ઈશ્વરની સમાન ન્યાયધીશ રહો, જો કદાચ અમે કર પણ ન આપીએ, છતાં પણ અમારી રક્ષા કરો, તો અમે સદા આપને અનુકૂળ બની રહીએ. (૩૫)

न त्वावाँ॑ २॥ऽ अ॒न्यो दि॒व्यो न पार्थि॑वो॒ न जा॒तो न ज॑निष्यते।

अ॒श्वा॒यन्तो॑ मघवन्निन्द्र वा॒जिनो॑ ग॒व्यन्त॑स्त्वा हवामहे॥ ३६॥

પદાર્થ : હે मघवन्-પરમ પૂજિત ઐશ્વર્યથી યુક્ત इन्द्र-સર્વ દુઃખોના વિનાશક પરમેશ્વર ! वाजिनः-વેગવાન, गव्यन्तः-ઉત્તમ વાણીથી ઉપદેશ કરનાર अश्वायन्तः-પોતાને શીઘ્રતાથી ચાહનાર અમે त्वा-આપની हवामहे-સ્તુતિ કરીએ છીએ.

કારણ કે કોઈ अन्यः-અન્ય પદાર્થ न, त्वावान्-આપની સમાન दिव्यः-શુદ્ધ નથી, न, पार्थिवः-પૃથિવીમાં પ્રસિદ્ધ નથી, न, जातः-ઉત્પન્ન થયેલ નથી न, जनिष्यते-થશે નહિ, તેથી આપ જ અમારા ઉપાસ્ય દેવ છો. (૩૬)

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરની સમાન કોઈ શુદ્ધ નથી, કોઈ ઉત્પન્ન થયેલ નથી અને કોઈ ઉત્પન્ન થશે નહિ અને વર્તમાન પણ નથી.

એટલા માટે સર્વ મનુષ્યોએ તે પરમેશ્વરને છોડીને અન્ય કોઈની પણ ઉપાસના તેના સ્થાનમાં ન કરવી જોઈએ.

આ કર્મને આ લોક અને પરલોકમાં આનંદદાયક માનવું જોઈએ. (૩૬)

त्वामिद्धि हवा॑महे सा॒तौ वाज॑स्य का॒रवः॑।

त्वां वृ॒त्रेष्वि॑न्द्र॒ सत्प॑तिं॒ नर॒स्त्वां काष्ठा॒स्वर्व॑तः॥ ३७॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સૂર્યની સમાન જગતના પાલક સેનાપતિ ! वाजस्य-વિદ્યા અને વિજ્ઞાનથી ઉત્પન્ન કાર્યના हि-જ कारवः-કરનારા नरः-નાયક અમે सातौ-રણમાં त्वाम्-આપને જેમ वृत्रेषु-મેઘોમાં સૂર્યની સમાન सत्पतिम्-સત્યના પ્રચારના રક્ષક त्वाम्-આપને, अर्वतः-શીઘ્રગામી ઘોડાની સમાન સેનામાં નિહાળીએ છીએ, काष्ठासु-દિશાઓમાં त्वाम्-આપને इत्-જ हवामहे-સેનાપતિ સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે સેનાપતિ અને સભાપતિ ! તમે બન્ને-સૂર્યની સમાન ન્યાય અને અભયના પ્રકાશક,

શિલ્પીઓને ગ્રહણ કરનારા તથા સત્યના પ્રચારક બનો. (૩૭)

स त्वं नश्चित्र वज्रहस्त धृष्णुया मह स्तवानोऽअद्रिवः।
गामश्वꣳ रथ्यमिन्द्र सं किर सत्रा वाजं न जिग्युषे॥ ३८॥

પદાર્થ : હે चित्र-આશ્ચર્યસ્વરૂપ वज्रहस्त-હાથમાં વજ્રધારી, अद्रिवः-પ્રશસ્ત પથ્થરથી નિર્મિત વસ્તુઓથી યુક્ત, इन्द्र-શત્રુનાશક વિદ્વાન્ ! धृष्णुया-દઢતાથી महः-મહાન स्तवानः-સ્તુતિવાળા सः-તે પૂર્વોક્ત त्वम्-આપ जिग्युषे-જયશીલ થવા માટે नः-અમારે માટે सत्रा-સત્ય वाजम्-વિજ્ઞાનની न-સમાન गाम्-બળદ તથા रथ्यम्-રથને યોગ્ય अश्वम्-ઘોડાઓને सं किर-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘ સંબંધી સૂર્ય વર્ષા દ્વારા સર્વથી સંબંધો રાખે છે, તેમ વિદ્વાન સત્ય વિજ્ઞાનથી સર્વ ઐશ્વર્યને પ્રકાશિત કરે છે. (૩૮)

कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता॥ ३९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! चित्रः-અદ્ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા सदावृधः-જે સદા વૃદ્ધિ પામનારા પુરુષના सखा-મિત્ર आ, भुवत्-બનો. कया-કોઈ ऊती-રક્ષણ આદિ ક્રિયાથી नः-અમારી રક્ષા કરો. कया-કોઈ शचिष्ठया-અત્યંત નિકટનો સંબંધ રાખનાર वृता-વર્તાવરૂપ ક્રિયાથી અમને નિયુક્ત કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે અદ્ભુત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા વિદ્વાન સર્વના મિત્ર બનીને, કુકર્મોની નિવૃત્તિ કરીને, અમને સુકર્મોમાં યુક્ત કરે છે, તે અમારા માટે સત્કારને યોગ્ય છે. (૩૯)

कस्त्वा सत्यो मदानां मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु॥ ४०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે कः-સુખદાયક, सत्यः-શ્રેષ્ઠોમાં ઉત્તમ, मंहिष्ठः-અત્યંત મહત્ત્વથી નિયુક્ત વિદ્વાન ! त्वा-આપને अन्धसः-અન્ન-ભોજનથી मदानाम्-આનંદોમાં मत्सत्-પ્રસન્ન કરે છે; आरुजे-અતિ રોગના માટે ઔષધોને જેમ એકત્ર કરે છે, चित्-તેમ दृढा-દઢ वसु-દ્રવ્યોને સંચય કરે છે, તે અમારા પૂજનીય-સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૦)

ભાવાર્થ : જે સત્યમાં પ્રીતિ રાખનાર, આનંદદાયક વિદ્વાન પરોપકારને માટે, રોગ નિવારણને માટે ઔષધની સમાન વસ્તુઓનો સંચય કરે છે, તે જ સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૦)

अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम्। शतं भवास्यूतये॥ ४१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે આપ नः-અમારા सखीनाम्-મિત્રો તથા जरितृणाम्-સ્તુતિ કરનારાઓના अवता-રક્ષક છો; ऊतये-પ્રીતિ આદિને માટે शतम्-સેંકડો પ્રકારથી सु,भवासि-ઉત્તમ સુખ પ્રદાન કરો છો, તે આપ अभि-સર્વત્રથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતાના મિત્રોના રક્ષક, અત્યંત સુખ પ્રદાન કરનાર તથા અનાથોની રક્ષામાં પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ અસંખ્ય ધન પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૧)

यज्ञायज्ञा वोऽअग्नयै गिरागिरा च दक्षसे।
प्रप्र वयममृतं जातवैदसं प्रियं मित्रं न शंꣳसिषम्॥ ४२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું अग्नये-અગ્નિને માટે च-અને गिरागिरा-પ્રત્યેક વાણીથી, दक्षसे-બળને માટે यज्ञायज्ञा-પ્રત્યેક યજ્ઞમાં वः-તમારી प्रप्र, शंसिषम्-અત્યંત પ્રશંસા કરું છું; वयम्-અમે जातवेदसम्-વિજ્ઞાનથી યુક્ત अमृतम्-આત્મરૂપથી અવિનાશી, प्रियम्-પ્રીતિયુક્ત मित्रम्-મિત્રની न-સમાન તમારી પ્રશંસા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સુશિક્ષિત વાણીથી યજ્ઞોનું અનુષ્ઠાન કરીને, બળની વૃદ્ધિ કરીને, મિત્રોની સમાન વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને તેનો સંગ કરે છે, તેઓ અત્યંત જ્ઞાની અને ધન્ય બને છે. (૪૨)

पाहि नो अग्न एकया पाह्युत द्वितीयया।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जा पते पाहि चतसृभिर्वसो॥ ४३॥

પદાર્થ : હે वसो-ઉત્તમ નિવાસ આપનાર अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ एकया-સુશિક્ષાથી नः-અમારી पाहि-રક્ષા કરો, द्वितीयया-અધ્યાપન ક્રિયાથી पाहि-રક્ષા કરો, तिसृभिः-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનની જ્ઞાપક गीर्भिः-વાણીઓથી पाहि-રક્ષા કરો.

હે ऊर्जाम्-બળોના पते-રક્ષક આપ અમારી चतसृभिः-ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની વિજ્ઞાપક ચાર પ્રકારની વાણીઓથી उत-પણ पाहि-રક્ષા કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : આપ્ત વિદ્વાન્ ઉપદેશ અને અધ્યાપન સિવાય અન્ય કોઈ સાધનને મનુષ્યના કલ્યાણકારક માનતા નથી. જેથી તેઓ દિવસ અને રાત અજ્ઞાનીઓ પર કૃપા કરી સદા ઉપદેશ કરે છે અને ભણાવે છે. (૪૩)

ऊर्जो नपातꣳ स हिनायमस्मयुर्दाशेम हव्यदातये।
भुवद्वाजेष्ववि॒ता भुवद्वृधऽउत त्राता तनूनाम्॥ ४४॥

પદાર્થ : હે વિદ્યાર્થી ! सः-તે આપ ऊजः-પરાક્રમને नपातम्-નષ્ટ ન કરનાર વિદ્યાબોધની हिन-વૃદ્ધિ કરો, જેથી अयम्-આ પ્રત્યક્ષ આપ अस्मयुः-અમારી કામનાવાળા બનીને वाजेषु-સંગ્રામોમાં अविता-રક્ષક भुवत्-બને.

उत-અને तनूनाम्-શરીરોની वृधे-વૃદ્ધિને માટે त्राता-રક્ષક-પાલક भुवत्-બને; એથી આપને हव्यदातये-આપવા યોગ્ય પદાર્થોનાં દાન માટે અમે दाशेम-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાર્થી પોતાના પરાક્રમ અને વીર્યનો નાશ ન કરે, શરીર અને આત્માના બળની વૃદ્ધિ કરનાર બનીને રક્ષક બને, આપ્ત વિદ્વાન તેને વિદ્યા પ્રદાન કરે.

જો આથી વિપરીત અજિતેન્દ્રિય, દુષ્ટાચારી અને નિંદક હોય, તે વિદ્યા ગ્રહણ કરવાનો અધિકારી બનતો નથી. તેમ જાણવું જોઈએ. (૪૪)

संवत्सरो॑ऽसि परिवत्सरो॑ऽसीदावत्सरो॑ऽसीद्वत्सरो॑सि वत्सरो॑ऽसि। उषस॑स्ते कल्पन्तामहोरात्रास्ते॑ कल्पन्तामर्द्धमासास्ते॑ कल्पन्तां मासा॑स्ते कल्पन्तामृतव॑स्ते कल्पन्ताꣳ संवत्सरस्ते॑ कल्पताम्। प्रेत्या॑ऽएत्यै सं चाञ्च॒ प्र च॑ सारय। सु॒प॒र्ण॒चिद॑सि तया॑ दे॒वत॑याऽङ्गिर॒स्वद् ध्रु॒वः सी॑द॥ ४५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા જિજ્ઞાસુ પુરુષ ! જેથી તું संवत्सरः-વર્ષની સમાન નિયમથી વર્તન કરનાર असि-છે, परिवत्सरः-ત્યાજ્ય વર્ષની સમાન દુષ્ટ આચરણનો ત્યાગ કરનાર असि-છે, इदावत्सरः-નિશ્ચિત વર્ષની સમાન असि-છે, इद्वत्सरः-નિશ્ચિત સંવત્સરની સમાન असि-છે, वत्सरः-વર્ષની સમાન असि-છે તેથી ते-તારા માટે કલ્યાણકારી उषसः-પ્રભાતવેળા कल्पन्ताम्-સમર્થ ઉત્તમ બને, ते-તારા માટે अहोरात्राः-દિવસ-રાત મંગલદાયક कल्पन्ताम्-સમર્થ બને, ते-તારા માટે अर्द्धमासाः-શુક્લ-કૃષ્ણપક્ષ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને, ते-તારા માટે मासाः-ચૈત્ર આદિ મહિનાઓ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને, ते-તારા માટે ऋतवः-વસંત આદિ ઋતુઓ कल्पन्ताम्-સમર્થ બને, ते-તારા માટે संवत्सरः-વર્ષ कल्पताम्-સમર્થ બને, च-અને તું प्रेत्यै-ઉત્કૃષ્ટ પ્રાપ્તિને માટે सम्, अंच-પ્રયત્ન કર. च-અને તું एत्यै-સર્વત્ર ગતિને માટે प्र, सारय-પોતાના પ્રભાવનો પ્રસાર કર. કારણ કે તું सुपर्णचित्-સુંદર રક્ષાના સાધનોનો સંચયકર્તા असि-છે, એથી तया-તે देवतया-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત સમયરૂપ દેવતાની સાથે अङ्गिरस्वत्-સૂત્રાત્મા-સૂક્ષ્મ પ્રાણવાયુની સમાન ध्रुवः-દૃઢ નિશ્ચલ सीद-સ્થિર રહે. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે આપ્ત મનુષ્ય વ્યર્થ સમય નષ્ટ કરતા નથી, ઉત્તમ નિયમોની સાથે કર્તવ્ય કર્મોને કરે છે અને ત્યાજ્ય કર્મોનો ત્યાગ કરે છે; તેઓના ઉત્તમ પ્રાતઃકાલ, દિવસ-રાત, પક્ષ-શુક્લ અને કૃષ્ણપક્ષ, મહિનાઓ અને ઋતુઓ સારી રીતે વ્યતીત થાય છે. એથી મનુષ્યની ઉન્નતિના માટે પ્રયત્ન કરીને, સુમાર્ગમાં ચાલીને, શુભ ગુણોનો અને સુખોનો પ્રસાર કરે. ઉત્તમ લક્ષણોવાળી વાણી અને પત્નીની સાથે ધર્મના ગ્રહણમાં અને અધર્મના ત્યાગમાં સદા દૃઢ ઉત્સાહી રહે. (૪૫)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં - સત્યની પ્રશંસાને જણાવવા (૧), સદ્ગુણોનો સ્વીકાર કરવો (૩), રાજ્ય વૃદ્ધિ (૪), અનિષ્ટનું નિવારણ (૬), જીવનની વૃદ્ધિ (૯), મિત્રનો વિશ્વાસ (૫), સર્વત્ર કીર્તિ ફેલાવવી (૯), ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ (૮), અલ્પ મૃત્યુનું નિવારણ (૯), શુદ્ધિ કરવી (૧૧), સુકર્મનું અનુષ્ઠાન (૧૩), યજ્ઞ કરવો (૧૪), અધિક ધનનું ધારણ કરવું (૧૫), સ્વામીત્વનું પ્રતિપાદન (૧૬), ઉત્તમવાણીનું ગ્રહણ (૧૯), સદ્ગુણોની ઈચ્છા (૨૦), અગ્નિની પ્રશંસા (૨૧), વિદ્યા અને ધનની વૃદ્ધિ કરવી (૨૪), કારણનું વર્ણન (૨૫), ધનનો ઉપયોગ (૨૭), પરસ્પરની રક્ષા (૨૮), વાયુના ગુણોનું વર્ણન (૨૯-૩૫), આધાર અને આધેયનું વર્ણન (૨૪), ઈશ્વરના ગુણોનું વર્ણન (૩૬), શૂરવીરનાં કૃત્યોનું વર્ણન (૩૭), પ્રસન્નતાને પ્રાપ્ત કરવી (૪૦), મિત્રોની રક્ષા (૪૧), વિદ્વાનોનો

આશ્રય (૪૨), પોતાના આત્માનું પાલન (૪૩), વીર્ય રક્ષા (૪૪) અને યુક્ત આહાર-વિહાર (૪૫)નો ઉપદેશ છે, તેથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति सप्तविंशोऽध्यायः ॥



॥ अथाष्टाविंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

होता यक्षत्समिधेन्द्रमिडस्पदे नाभा पृथिव्या अधि।
दिवो वर्ष्मन्त्समिध्यतऽओजिष्ठश्चर्षणीसहां वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ १॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! તું જેમ होता-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોના ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન समिधा-જ્ઞાનના પ્રકાશથી, इडः-વાણીથી पदे-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય વ્યવહારમાં, पृथिव्याः-ભૂમિના नाभा-મધ્યમાં વર્તમાન, दिवः-પ્રકાશની अधि-ઉપર वर्ष्मन्-વર્ષા કરનાર મેઘમંડળમાં સ્થિત इन्द्रम्-વિદ્યુત્ નામક અગ્નિમાં यक्षत्-સંગત/યજ્ઞ કરે છે, તેથી ओजिष्ठः-અત્યંત બળવાન બનીને चर्षणीसहाम्-મનુષ્યોના સમૂહોમાં સહન કરનાર યોદ્ધાઓમાં सम्, इध्यते-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે; आज्यस्य-ઘી આદિને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-યજ્ઞ કર, વિદ્વાનોનો સંગ કર. (૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વેદના મંત્રો દ્વારા સુગંધી આદિ દ્રવ્યોનો અગ્નિમાં હોમ કરીને, તેને મેઘમંડળમાં પહોંચાડીને, જળને શુદ્ધ કરીને, સર્વના બળની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧)

होता यक्षत्तनूनपातमूतिभिर्जेतारमपराजितम्। इन्द्रं देवꣳ स्वर्विदं पथिभि-र्मधुमत्तमैर्नराशꣳसेन तेजसा वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ २॥

પદાર્થ : હે होतः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પુરુષ - યજમાન ! આપ જેમ होता-સુખના દાતા વિદ્વાન ऊतिभिः-રક્ષા આદિ તથા मधुमत्तमैः-અત્યંત મધુર જળ આદિથી યુક્ત पथिभिः-ધર્મયુક્ત માર્ગોથી तनूनपातम्-શરીરોના રક્ષક, जेतारम्-જયશીલ, अपराजितम्-શત્રુઓથી પરાજય ન પામનાર, स्वर्विदम्-સુખને પ્રાપ્ત, देवम्-વિદ્યા અને વિનયથી સુશોભિત इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યકારક રાજાનો यक्षत्-સંગ કરે છે, नराशंसेन-મનુષ્યોથી પ્રશંસિત तेजसा-પ્રગલ્ભતાથી आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય વિષય-જ્ઞાનને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-સંગ કર.

ભાવાર્થ : જો રાજા સ્વયં ન્યાયના માર્ગો પર ચાલીને પ્રજાઓની રક્ષા કરે, તો તેઓ અપરાજિત બનીને શત્રુઓને જીતનાર બને છે. (૨)

होता यक्षदिडाभिरिन्द्रमीडितमाजुह्वानममर्त्यम्।
देवो देवैः सवीर्यो वज्रहस्तः पुरन्दरो वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३॥

પદાર્થ : હે होतः-ગ્રહીતા પુરુષ ! આપ જેમ होता-સુખના દાતા રાજપુરુષ इडाभिः-સુશિક્ષિત વાણીઓથી अमर्त्यम्-સાધારણ મનુષ્યોથી વિલક્ષણ, आजुह्वानम्-સ્પર્ધા કરનાર, ईडितम्-પ્રશંસિત, इन्द्रम्-

ઉત્તમ વિદ્યા અને ઐશ્વર્યયુક્ત રાજપુરુષનો यक्षत्-સંગ કરે છે.

જેમ એ वज्रहस्तः-હાથોમાં શસ્ત્ર-અસ્ત્રને ધારણ કરેલ, पुरन्दरः-શત્રુઓના નગરોના નાશક, सवीर्यः-બળવાન, देवः-વિદ્વાન રાજા देवैः-વિદ્વાનોની સાથે आज्यस्य-વિજ્ઞાનથી રક્ષા કરવા યોગ્ય રાજ્યના અવયવોને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-સંગ કરો.

ભાવાર્થ : જેમ રાજા અને રાજપુરુષો પ્રજાનું પિતા સમાન પાલન કરે છે, તેમ પ્રજા તેઓની પિતા સમાન સેવા કરે.

જેઓ આપ્ત વિદ્વાનોની અનુમતિથી સર્વ કાર્યો કરે છે, તેઓ ભ્રમને પ્રાપ્ત થતા નથી. (૩)

होता॑ यक्षद् ब॒र्हिषीन्द्रं॑ निषद्व॒रं वृ॑ष॒भं नर्या॑पसम्।

वसु॑भी रु॒द्रैरा॑दि॒त्यैः स॒युग्भि॑र्ब॒र्हिरास॑द॒द्वेत्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ४॥

પદાર્થ : હે होतः-ઉત્તમ દાનના દાતા પુરુષ ! જેમ होता-સુખના ઈચ્છુક પ્રજાજન सयुग्भिः-સંયુક્ત રહેનારા, वसुभिः-પ્રથમ કક્ષાના, रुद्रैः-મધ્યમ કક્ષાના તથા आदित्यैः-ઉત્તમ કક્ષાના વિદ્વાનોની સાથે बर्हिषि-ઉત્તમ વિદ્વાનોની સભામાં निषद्वरम्-જેની સમીપ શ્રેષ્ઠ મનુષ્ય બેસે છે, તે वृषभम्-સર્વોત્કૃષ્ટ, બળવાન, नर्यापसम्-સર્વ મનુષ્યોમાં ઉત્તમ કર્મ કરનારા इन्द्रम्-નીતિથી સુશોભિત રાજાનો यक्षत्-સંગ કરે છે, आज्यस्य-કરવા યોગ્ય ન્યાયની बर्हिः-ઉત્તમ સભામાં आअसदत्-બેસે છે; તથા સુખને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-યજ્ઞ કરો, પ્રાપ્ત થાઓ. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ પૃથિવી આદિ લોક, પ્રાણ આદિ વાયુ, કાલના અવયવ મહિનાઓ સર્વની સાથે વર્તમાન છે, તેમ જે રાજા અને પ્રજાજન પરસ્પર અનુકૂળ વર્તાવ કરીને સભા દ્વારા પ્રજાનું પાલન કરે છે. તેઓ શ્રેષ્ઠ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

होता॑ यक्ष॒दोजो॒ न वी॒र्यꣳ सहो॒ द्वार॒ इन्द्र॑मवर्द्धयन्। सु॒प्रा॒य॒णा अ॒स्मिन् य॒ज्ञे वि श्र॑यन्तामृता॒वृधो॒ द्वार॒ इन्द्रा॑य मी॒ढुषे॒ व्यन्त्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ५॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! જેમ જે सूप्रायणाः-સુંદર અવકાશયુક્ત द्वारः-દ્વાર ओजः-જળના વેગની न-સમાન वीर्यम्-બળ, सहः-સહનશીલતા અને इन्द्रम्-ઐશ્વર્યની अवर्द्धयन्-વૃદ્ધિ કરે છે. તે ऋतावृधः-સત્યની વૃદ્ધિ કરનાર, द्वारः-વિદ્યા અને વિનયરૂપ દ્વારોને मीढुषे-સ્નિગ્ધ=પ્રિય અને વીર્ય સેચનમાં સમર્થ इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજાને માટે अस्मिन्-આ यज्ञे-સંગતિને યોગ્ય સંસારમાં વિદ્વાન, લોકો वि, श्रयन्ताम्-વિશેષ સેવન કરે છે, आज्यस्य-વિજ્ઞાનને યોગ્ય રાજ્યના વિષયને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે; અને होता-સુખદાતા મનુષ્ય यक्षत्-તેનો સંગ કરે છે, તેમ यज-યજ્ઞ કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં વિદ્યા અને ધર્મનાં દ્વારોને ખોલીને, પદાર્થવિદ્યાનું સેવન કરીને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેઓ પુષ્કળ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫)

होता॑ यक्षदु॒षे इन्द्र॑स्य धे॒नू सु॒दुघे॑ मा॒तरा॑ म॒ही।

सवातरौ न तेजसा वत्समिन्द्रमवर्द्धतां वीतामाज्यस्य होतर्यज॥ ६॥

પદાર્થ : હે होतः-સુખદાતા પુરુષ ! આપ જેમ इन्द्रस्य-વિદ્યુત્‌ની सुदुघे-સુંદર કામનાઓની પૂરક मातरा-માતાની સમાન વિદ્યમાન मही-મહાન धेनू-બે દુધાળી ગાયોની न-સમાન सवातरौ-વાયુની સાથે વિદ્યમાન उषे-પ્રતાપથી યુક્ત બંને ઉષાવેળા, इन्द्रस्य-ભૌતિક અગ્નિ અને સૂર્યરૂપ અગ્નિના तेजसा-તેજથી इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યરૂપ वत्सम्-વાછરડાને वीताम्-પ્રાપ્ત કરે.

होता-સુખના દાતા પુરુષ आज्यस्य-હોમમાં પ્રક્ષેપને યોગ્ય પદાર્થનો यक्षत्-હોમ કરે અને अवर्द्धताम्-વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે, તેમ यज-યજ્ઞ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ વાયુથી પ્રેરિત ભૂમિ સંબંધી અગ્નિ અને વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિ સૂર્યલોકના તેજની વૃદ્ધિ કરે છે, જેમ દૂધાળી ગાયની સમાન બન્ને ઉષાકાળ સર્વ વ્યવહારોનો આરંભ અને નિવૃત્તિ કરનાર હોય છે. તેમ પ્રયત્ન કરો. (૬)

होता यक्षद्दैव्या होतारा भिषजा सखाया हविषेन्द्रं भिषज्यतः।
कवी देवौ प्रचेतसाविन्द्राय धत्त इन्द्रियं वीतामाज्यस्य होतर्यज॥ ७॥

પદાર્થ : હે होतः-યુક્ત આહાર-વિહાર કરનાર વૈદ્યજન ! જેમ होता-સુખના દાતા આપ-વૈદ્ય आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય નિદાન આદિ વિષયનો यक्षत्-સંગ કરે છે, दैव्या-વિદ્વાનોમાં શ્રેષ્ઠ, होतारा-રોગનિવૃત્તિ કરીને સુખ પ્રદાતા, सखाया-પરસ્પર મિત્ર, कवी-બુદ્ધિમાન, प्रचेतसौ-ઉત્તમ વિજ્ઞાનથી યુક્ત, देवौ-વૈદ્યક વિદ્યાથી પ્રકાશમાન भिषजा-બે ચિકિત્સકો हविषा-યથાયોગ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વ્યવહારથી इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યના ઈચ્છુક જીવની भिषज्यतः-ચિકિત્સા કરે છે, इन्द्राय-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને માટે इन्द्रियम्-ધનને धत्तः-ધારણ કરે છે અને આયુને वीताम्-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यज-આયુને પ્રાપ્ત કરો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ શ્રેષ્ઠ વૈદ્ય લોકો રોગીઓ પર અનુકંપા કરીને, ઔષધ આદિથી રોગોનું નિવારણ કરીને, ઐશ્વર્ય અને આયુની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ તમે લોકો સર્વ પ્રાણીઓની મિત્રતા કરીને સર્વનાં સુખ અને આયુની વૃદ્ધિ કરો. (૭)

होता यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजं त्रयस्त्रिधातवोऽपस इडा सरस्वती भारती मही:। इन्द्रपत्नीर्हविष्मतीर्व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ८॥

પદાર્થ : હે होतः-સુખના ઈચ્છુક જન ! જેમ होता-વિદ્યાના દાતા વા ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ आज्यस्य-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ભણવા-ભણાવવા રૂપ વ્યવહારનો यक्षत्-સંગ કરે છે; જેમ त्रिधातवः-અસ્થિ, મજ્જા અને વીર્ય એ ત્રણ ધાતુઓના વર્ધક, अपसः-કર્મ લોકો, त्रयः-ત્રણ - અધ્યાપક, ઉપદેશક અને વૈદ્ય, तिस्रः-ત્રણ देवीः-સકલ વિદ્યાની પ્રકાશક દેવીઓની न-સમાન भेषजम्-ઔષધને मही:-મોટી પૂજાને યોગ્ય, इडा-પ્રશંસાને યોગ્ય, सरस्वती-અતિ વિજ્ઞાનથી યુક્ત અને भारती-ઉત્તમ વિદ્યાની ધારક વા પોષક

વાણી हविष्मतीः-વિવિધ વિજ્ઞાનોથી યુક્ત इन्द्रपत्नीः-જીવાત્માની પત્ની-સ્ત્રી સમાન વર્તાવ કરનારી દેવીઓને व्यन्तु-પ્રાપ્ત થાય; તેમ यज-સંગ કરો.

ભાવાર્થ : જેમ પ્રશંસનીય, વિજ્ઞાનવતી અને ઉત્તમ મેધાવાળી સ્ત્રીઓ પોતાની સમાન પતિઓને પ્રાપ્ત કરીને પ્રસન્ન રહે છે, તેમ અધ્યાપક, ઉપદેશક અને વૈદ્ય લોકો સ્તુતિ, વિજ્ઞાન, યોગ ધારણથી યુક્ત વાણીઓને પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત રહે છે. (૮)

होता॑ यक्ष॒त्त्वष्टा॑र॒मिन्द्रं॑ दे॒वं भि॒षज॑ꣳ सु॒यजं॑ घृत॒श्रिय॑म्। पु॒रु॒रूप॑ꣳ सु॒रेत॑सं म॒घोन॒मिन्द्रा॑य॒ त्वष्टा॒ दध॑दिन्द्रि॒याणि॒ वेत्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ९॥

પદાર્થ : હે होतः-શુભ ગુણોના દાતા ! જેમ होता-પથ્ય આહાર-વિહાર કર્તા त्वष्टारम्-ધાતુઓની વિષમતાથી થયેલા દોષોનો નાશ કરનાર सुरेतसम्-સુંદર પરાક્રમયુક્ત, मघोनम्-પરમ પ્રશસ્ત ધનવાન, पुरूरूपम्-અનેક રૂપયુક્ત, घृतश्रियम्-જળથી શોભાયમાન, सुयजम्-સુંદર સંગ કરનાર, भिषजम्-વૈદ્ય देवम्-શુભ ગુણોથી દેદીપ્યમાન इन्द्रम्-ઐશ્વર્યવાન પુરુષનો यक्षत्-સંગ કરે છે, आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય વચનના इन्द्राय-પ્રેરક જીવને માટે इन्द्रियाणि-કર્ણ આદિ ઈન્દ્રિયો વા ધનને दधत्-ધારણ કરતાં त्वष्टा-વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાન वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તું પણ यज-સંગ કર. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે આપ્ત, રોગ નિવારક, શ્રેષ્ઠ ઔષધ આપનાર, ધન અને ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર વૈદ્યની સેવા કરીને, શરીર, આત્મા, અન્તઃકરણ અને ઈન્દ્રિયોનાં બળની વૃદ્ધિ કરીને, પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરો. (૯)

होता॑ यक्ष॒द्वन॒स्पति॑ꣳ शमि॒तार॑ꣳ श॒तक्र॑तुं॒ धियो॑ जो॒ष्टार॑मिन्द्रि॒यम्। मध्वा॑ सम॒ञ्जन् प॒थिभि॑ः सु॒गेभि॑ः स्वदा॑ति य॒ज्ञं मधु॑ना घृ॒तेन॒ वेत्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ १०॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-યજ્ઞ કર્તા પુરુષ वनस्पतिम्-વન =કિરણોના સ્વામી સૂર્યની સમાન शमितारम्-યજમાન शतक्रतुम्-અસંખ્ય બુદ્ધિયુક્ત धियः-બુદ્ધિ વા કર્મને जोष्टारम्-પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરનાર વિદ્વાનનો यक्षत्-સંગ કરે છે; मध्वा-મધુર વિજ્ઞાનથી सुगेभिः-સુખપૂર્વક ગમનનો આધાર पथिभिः-માર્ગોથી आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય સંસારના इन्द्रियम्-ધનને समञ्जन्-સમ્યક્ પ્રકટ કરતા स्वदाति-સ્વાદ લે છે; मधुना-મધુર घृतेन-ઘી, વા જળથી यज्ञम्-સંગતિ યોગ્ય વ્યવહારને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यज-તું પણ પ્રાપ્ત કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન વિદ્યા, બુદ્ધિ, ધર્મ અને ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનાર, ધર્મયુક્ત માર્ગોથી ચાલીને સુખોને ભોગવે છે, તેઓ અન્યોને પણ સુખ પ્રદાન કરાવનાર બને છે. (૧૦)

होता॑ यक्ष॒दिन्द्र॑ꣳ स्वाहाज्य॑स्य॒ स्वाहा॒ मेद॑सः॒ स्वाहा॑ स्तो॒काना॒ꣳ स्वाहा॒ स्वाहा॑कृतीना॒ꣳ स्वाहा॑ ह॒व्यसू॑क्तीनाम्। स्वाहा॑ दे॒वा आ॑ज्य॒पा जु॑षा॒णा इन्द्र॒ आज्य॑स्य॒ व्यन्तु॒ होत॒र्यज॑॥ ११॥

પદાર્થ : હે होतः-વિદ્યાદાતા મનુષ્ય ! જેમ इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યના દાતા, होता-વિદ્યોન્નતિને ગ્રહણ કરનાર મનુષ્ય आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય શાસ્ત્રની स्वाहा-સત્યવાણીથી, मेदसः-સ્નિગ્ધ પદાર્થની स्वाहा-સત્યક્રિયાથી, स्तोकानाम्-સંતાનોની स्वाहा-ઉત્તમ પ્રિય વાણીથી, स्वाहाकृतीनाम्-સત્ય વાણી તથા સત્યાચરણના અનુષ્ઠાનોની स्वाहा-હોમ ક્રિયાને, हव्यसूक्तीनाम्-અનેક ગ્રહણ કરવા યોગ્ય શાસ્ત્રોના સુંદર વચનોથી યુક્ત બુદ્ધિઓની स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી, इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને यक्षत्-પ્રાપ્ત થાય છે; અને જેમ स्वाहा-સત્ય વાણી તથા आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય શાસ્ત્રને जुषाणाः-પ્રસન્ન કરેલ आज्यपाः-ઘૃતનું પાન કરનારા વા રાજ્યની રક્ષા કરનારા देवाः-વિદ્વાન ઐશ્વર્યને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-યજ્ઞ કર. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે પુરુષો શરીર, આત્મા, સંતાન, સત્ય આચરણ અને વિદ્યાની વૃદ્ધિ કરવા ઈચ્છે છે, તેઓ સર્વત્રથી સુખયુક્ત બને છે. (૧૧)

देवं बर्हिरिन्द्रꣳ सुदेवं देवैर्वीरवत् स्तीर्णं वेद्यामवर्द्धयत्। वस्तोर्वृतं प्राक्तोर्भृतꣳ राया-बर्हिष्मतोऽत्यगाद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ १२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ बर्हिष्मतः-અન્તરિક્ષથી સંબંધિત વાયુ, જળ આદિનું अति, अगात्-ઉલ્લંઘન કરે છે, वसुधेयस्य-જેમાં ધનોનું ધારણ થાય છે તે જગતમાં वसुवने-ધનના સેવનમાં, वेद्याम्-હવનના કુંડમાં स्तीर्णम्-સમિધા અને ઘૃતાદિથી રક્ષા કરવા યોગ્ય, वस्तोः-દિવસમાં वृतम्-સ્વીકૃત, अक्तोः-રાત્રિમાં भृतम्-ધારણ કરેલ હોમ દ્રવ્ય આરોગ્યની प्रावर्द्धयत्-વૃદ્ધિ કરે છે, સુખ वेतु-પહોંચાડે છે, તેમ बर्हिः-અન્તરિક્ષની સમાન राया-ધનની સાથે देवम्-દિવ્યગુણવાળા देवैः-વિદ્વાનોની સાથે वीरवत्-વીરોની સમાન વર્તાવ કરનારા इन्द्रम्-ઉત્તમ ઐશ્વર્ય કરનારા सुदेवम्-સુંદર વિદ્વાનનો यज-સંગ કર. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ યજમાન વેદીમાં સમિધાઓમાં સુંદર રીતે ચયન કરેલ-રાખેલ અને ઘૃતનો હોમ કરીને, અગ્નિની વૃદ્ધિ કરીને, અન્તરિક્ષમાં રહેલ વાયુ અને જળ આદિને શુદ્ધ કરીને, રોગ નિવારણ કરીને, સર્વ પ્રાણીઓને પ્રસન્ન કરે છે, તેમ જ સજ્જન લોકો ધન આદિથી સર્વને સુખી કરે છે. (૧૨)

देवीर्द्वार इन्द्रꣳ सङ्घाते वीड्वीर्यामन्नवर्द्धयन्। आ वत्सेन तरुणेन कुमारेण च मीवतापार्वाणꣳ रेणुककाटं नुदन्तां वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ १३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ वीड्वीः-વિશેષ સ્તુતિને યોગ્ય, देवीः-પ્રકાશમાન द्वारः-દ્વાર रेणुककाटम्-ધૂળવાળા કૂવા અર્થાત્ આંધળા કૂવાને यामन्-માર્ગમાં છોડીને, तरुणेन-યુવાન मीवता-દુષ્ટોની હિંસા કરનારા, च-અને कुमारेण-બ્રહ્મચારી वत्सेन-વાછરડા સમાન વર્તમાનવાળા अर्वाणम्-ગતિશીલ ઘોડા જેમ इन्द्रम्-ઐશ્વર્યની आ, अवर्धयन्-વૃદ્ધિ કરે છે, वसुवने-ધનના સેવનરૂપ सङ्घाते-સંબંધમાં वसुधेयस्य-ધનધારક સંસારના વિઘ્નને अप, नुदन्ताम्-દૂર કરે છે, व्यन्तु-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેમ यज-યજ્ઞ કર. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ યાત્રી માર્ગમાં વિદ્યમાન કૂવાને દૂર કરીને, શુદ્ધ માર્ગ બનાવીને પ્રાણીઓને

સુખથી પહોંચાડે છે, તેમ બાલ્યાવસ્થામાં વિવાહ આદિ વિઘ્નોને દૂર કરીને, વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરાવીને, પોતાના સંતાનોને સુખના માર્ગ પર ચલાવે. (૧૩)

देवी उषासानक्तेन्द्रं यज्ञे प्रयत्यह्वेताम्।
दैवीर्विशः प्रायासिष्टाᳬं सुप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥ १४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ सुप्रीते-ઉત્તમ પ્રીતિ માટે सुधिते-ઉત્તમ હિતકારી, देवी-પ્રકાશમાન उषासानक्ता-રાત-દિવસ प्रयति-પ્રયત્નને માટે, यज्ञे-સંગતિને યોગ્ય યજ્ઞાદિ વ્યવહારમાં इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત યજમાનને अह्वेताम्-બોલાવે છે, वसुधेयस्य-કોષના वसुवने-ધનના વિભાગમાં दैवीः-ન્યાયકારી વિદ્વાનોની આ विशः-પ્રજાને प्र, अयासिष्टाम्-પ્રાપ્ત કરાવે છે, સર્વ જગતને वीताम्-વ્યાપ્ત કરે છે, તેમ यज-યજ્ઞ કર. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દિવસ-રાત નિયમથી પ્રવૃત્ત થઈને પ્રાણીઓને વ્યવહારમાં જોડે છે, તેમ તમે નિયમથી વર્તાવ કરીને, પ્રજાને આનંદિત કરીને સુખી કરો. (૧૪)

देवी जोष्ट्री वसुधिती देवमिन्द्रमवर्द्धताम्। अयाव्यन्याघा द्वेषाᳬंस्यान्या वक्षद्वसु वार्याणि यजमानाय शिक्षिते वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥ १५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ वसुधिती-દ્રવ્યોને ધારણ કરનારા, जोष्ट्री-સર્વ પદાર્થોનું સેવન કરવા યોગ્ય, देवी-પ્રકાશમાન દિવસ-રાત देवम्-પ્રકાશસ્વરૂપ इन्द्रम्-સૂર્યની अवर्द्धताम्-વૃદ્ધિ કરે છે, તે દિવસ-રાતની મધ્યમાં अन्या-એક अघा-અંધકારરૂપ રાત્રિ द्वेषांसि-દ્વેષયુક્ત જંતુઓને आ + अयावि-સારી રીતે પૃથક્ કરે છે અને अन्या-તે બન્નેમાંથી એક પ્રાતઃકાલ રૂપ ઉષા वसु-ધન તથા वार्याणि-જળ સંબંધી વ્યવહારને वक्षत्-પ્રાપ્ત કરાવે છે; यजमानाय-પુરુષાર્થી મનુષ્યને માટે वसुधेयस्य-આકાશની મધ્યમાં वसुवने-પૃથિવી આદિના સંવિભાગરૂપ જગતમાં शिक्षिते-શિક્ષણ માટે કરેલા દિવસ-રાત वीताम्-વ્યાપ્ત થાય; તેમ यज-યજ્ઞ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ રાત અને દિવસ વિભક્ત બનીને, મનુષ્ય આદિના સમસ્ત વ્યવહારની વૃદ્ધિ કરે છે. તેમાં રાત્રિ પ્રાણીઓને સુવડાવીને દ્વેષ આદિથી નિવૃત્ત કરે છે અને દિવસ એ દ્વેષ આદિને પ્રાપ્ત કરાવે છે અને સર્વ વ્યવહારોને પ્રકાશિત કરે છે; તેમ તમે લોકો યોગાભ્યાસથી રાગ આદિનો ત્યાગ કરીને, શાન્તિ આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને સુખોને પ્રાપ્ત કરો. (૧૫)

देवीऽऊर्जाहुती दुघे सुदुघे पयसेन्द्रमवर्द्धताम्। इषमूर्जमन्या वक्षत्सग्धिᳬं सपीतिमन्या नवेन पूर्वं दयमाने पुराणेन नवमधातामूर्जमूर्जाहुती ऊर्जयमाने वसु वार्याणि यजमानाय शिक्षिते वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ वसुधेयस्य-ઐશ્વર્યને ધારણ કરનાર ઈશ્વરનાં वसुवने-ધન-દાનના આધાર જગતમાં વિદ્વાનના દ્વારા वार्याणि-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય કર્મ वसु-ધનની शिक्षिते-વિદ્વાનોની શિક્ષામાં રાત-દિવસ यजमानाय-સંગતિને માટે પ્રવૃત્ત જીવને માટે વ્યવહારને वीताम्-વ્યાપ્ત કરે છે; તેમ ऊर्जाहुती-બળ તથા પ્રાણને ધારણ કરનારી આહુતિઓ देवी-દિવ્ય ગુણોને પ્રાપ્ત કરનાર દિવસ-રાત, पयसा-જળથી दुधे-સુખોને પૂર્ણ અને सुदुघे-ઉત્તમ કામનાઓની વર્ધક બનીને इन्द्रम्-ઐશ્વર્યની अवधेताम्-વૃદ્ધિ કરે છે; તેમાંથી अन्या-એક રાત્રિ इषम्-અન્ન અને ऊर्जम्-બળને वक्षत्-પ્રાપ્ત કરાવે છે; अन्या-બીજો દિવસ सपीतिम्-પાનની સહિત सग्धिम्-સમાન ભોજનને वक्षत्-પ્રાપ્ત કરાવે છે; दयमाने-આવાગમન ગુણવાળી આગળ-પાછળની બે રાત્રિ પ્રવૃત્ત થઈને नवेन-નવા પદાર્થ સાથે पूर्वम्-પ્રાચીન અને पुराणेन-પુરાણા સ્વરૂપ સાથે नवम्-નવીન સ્વરૂપને अधाताम्-ધારણ કરે છે; ऊर्जयमाने-બળની વૃદ્ધિ કરતા ऊर्जाहुती-બળ અને પ્રાણને ધારણ કરનારી બનીને उर्जम्-પ્રાણ = જીવનને ધારણ કરે છે; તેમ આપ यज-સંગ કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ રાત અને દિવસ વર્તમાન સ્વરૂપ દ્વારા પૂર્વાપરના સ્વરૂપને બતાવનાર તથા આહાર-વિહારને પ્રાપ્ત કરાવનાર છે, તેમ અગ્નિમાં હોમવામાં આવેલી આહુતિઓ સમસ્ત સુખો પૂર્ણ કરનારી છે.

જો મનુષ્યો સમયના અત્યલ્પ ભાગને પણ વ્યર્થ વિતાવે, વાયુ આદિ પદાર્થોને શુદ્ધ ન કરે, અદૃષ્ટ (ભવિષ્ય આદિ)ને અનુમાનથી ન જાણે, તો સુખને કદી પણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. (૧૬)

देवा दैव्या होतारा देवमिन्द्रमवर्द्धताम्। हताघशꣳसावाभार्ष्टां वसु वार्याणि यजमानाय शिक्षितौ वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥ १७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ दैव्या-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત, होतारा-જગતના ધર્તા, देवा-સુખ પ્રદાન કરનારા વાયુ અને અગ્નિ देवम्-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત इन्द्रम्-સૂર્યની अवर्द्धताम्-વૃદ્ધિ કરે છે; हताघशंसौ-ચોરોને મારનારા તે રોગોને आ, अभार्ष्टाम्-સારી રીતે નષ્ટ કરે છે; यजमानाय-કર્મ પ્રવૃત્ત થયેલ જીવને માટે शिक्षितौ-વિજ્ઞાપિત બનીને वसुधेयस्य-સર્વ ઐશ્વર્યના આધાર ઈશ્વરનાં वसुवने-ધન દાનના સ્થાન જગતમાં वसु-ધન અને वार्याणि-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય જલોને वीताम्-વ્યાપ્ત કરે છે, તેમ આપ यज-યજ્ઞ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય વાયુ અને વિદ્યુત્‌ને સૂર્યનાં નિમિત્ત માનીને, ધનોનો સંચય કરે તો स्तेन-*ચોરોના નાશક બને. (૧૭)*

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पतिमिन्द्रमवर्द्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवꣳ रुद्रैर्यज्ञꣳ सरस्वतीडा वसुमती गृहान्वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ १८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જે रुद्रैः-પ્રાણોના દ્વારા भारती-ધારણ કરનારી વાણી दिवम्-પ્રકાશને, सरस्वती-વિજ્ઞાનથી યુક્ત વાણી यज्ञम्-સંગતિને યોગ્ય વ્યવહારને, वसुमती-અનેક દ્રવ્યોવાળી इडा-પ્રશંસનીય

વાણી गृहान्-ઘરો વા ગૃહસ્થોને ધારણ કરતી देवीः तिस्रः-એ ત્રણ દિવ્ય વાણીઓ तिस्रः देवीः-ત્રણ દિવ્ય ક્રિયાઓને [અહીં પુનરુક્તિ આવશ્યકતા બતાવવા માટે છે.] તથા पतिम्-પાલક इन्द्रम्-સૂર્યની સમાન તેજસ્વી જીવની अवर्द्धयन्-વૃદ્ધિ કરે છે; वसुधेयस्य-સર્વ ધન કોષનાં वसुवने-ધન દાનમાં ઘરોને व्यन्तु-વ્યાપ્ત કરે છે; તેને આપ यज-પ્રાપ્ત કરો અને આપ તેની अस्पृक्षत्-સ્પૃહા=કામના કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જેમ જળ, અગ્નિ અને વાયુની ગતિઓ દિવ્ય ક્રિયાઓ તથા સૂર્યના પ્રકાશની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ જે મનુષ્યો સમસ્ત વિદ્યાઓને ધારણ કરનારી, સર્વ ક્રિયાઓનો હેતુ, સર્વ ગુણ-દોષોની જ્ઞાપક, ત્રણ પ્રકારની વાણીને જાણે છે, તેઓ એ સર્વ દ્રવ્યોના આધાર સંસારમાં શ્રી= લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૮)

देव इन्द्रोऽनराशꣳसस्त्रिवरूथस्त्रिबन्धुरो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। शतेन शितिपृष्ठानामाहितः सहस्त्रेण प्रवर्त्तते मित्रावरुणेदस्य होत्रमर्हतो बृहस्पति स्तोत्रमश्विनाऽध्वर्यवं वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ १९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ त्रिबन्धुरः-ઋષિ આદિ રૂપ ત્રણ બંધનોવાળા, त्रिवरूथः-ત્રણ સુખદાયક ઘરોના સ્વામી, नराशंसः-મનુષ્યોની સ્તુતિ કરનાર, इन्द्रः-ઐશ્વર્યના ઇચ્છુક देवः-જીવ शतेन-સેંકડો પ્રકારનાં કર્મોથી देवम्-પ્રકાશમાન इन्द्रम्-વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિની अवर्धयत्-વૃદ્ધિ કરે.

જે शितिपृष्ठानाम्-જેની પીઠ પર સવાર થવાથી શીઘ્રગમન થાય છે તે પશુઓની મધ્યમાં आहितः-વિદ્યમાન જીવ सहस्त्रेण-અસંખ્ય પુરુષાર્થથી प्रवर्त्तते-પ્રવૃત્ત થાય છે, मित्रावरुणा-પ્રાણ અને ઉદાન अस्य-એ જીવના इत्-જ होत्रम्-ભોજનની अर्हतः-યોગ્ય છે; वसुधेयस्य-સંસારના बृहस्पतिः-મહાન પદાર્થોના રક્ષક વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિ स्तोत्रम्-સ્તુતિના સાધન છે; अश्विना-સૂર્ય અને ચંદ્રમા अध्वर्यवम्-પોતાના યજ્ઞના ઇચ્છુકને તથા वसुवने-વસુ =ધનની યાચના કરનારાઓ માટે वेतु-પ્રાપ્ત થાય; તેમ यज-સંગ કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ત્રણે પ્રકારના સુખોને પ્રદાન કરનારા, ત્રણે કાલોના પ્રબંધથી યુક્ત ઘરોનું નિર્માણ કરીને, અસંખ્ય સુખ પ્રાપ્ત કરીને, ભોજન કરીને યાચકને માટે યથોચિત વસ્તુ આપે છે, તેઓ કીર્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૯)

देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णो मधुशाखः सुपिप्पलो देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। दिवमग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं पृथिवीमदृꣳहीद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ २०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ देवैः-દિવ્ય પ્રકાશમાન ગુણોની સાથે વિદ્યમાન, हिरण्यपर्णः-સુવર્ણ સમાન ચળકતા પાનવાળા, मधुशाखः-મીઠી ડાળીઓવાળા, सुपिप्पलः-સુંદર ફળોવાળા, देवः-દિવ્યગુણ પ્રદાન કરનાર वनस्पतिः-સૂર્યનાં કિરણોમાં જળ પહોંચાડી ઉષ્ણતાની શાંતિ દ્વારા કિરણોની રક્ષક વનસ્પતિ इन्द्रम्-દરિદ્રતાનાશક देवम्-દિવ્યગુણોવાળા લોકોની વા મેઘની अवर्धयत्-વૃદ્ધિ કરે છે.

अग्रेण-અગ્રગામી બનીને दिवम्-પ્રકાશની अस्पृक्षत्-સ્પૃહા કરે છે; अन्तरिक्षम्-આકાશ અને તેમાં સ્થિત લોકોને તથા पृथिवीम्-ભૂમિને आ + अदृंहीत्-સર્વત્રથી ધારણ કરે છે; वसुवने-ધન પ્રદાન કરનાર જીવને માટે वसुधेयस्य-સંસારનું સર્વ ધન वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यज-આપ યજ્ઞ કરો.

ભાવાર્થ : જેમ વનસ્પતિઓ મેઘોની વૃદ્ધિ કરે છે અને સૂર્ય લોકોને ધારણ કરે છે, તેમ વિદ્વાન લોકો વિદ્યાના યાચક વિદ્યાર્થીઓની વૃદ્ધિ કરે છે. (૨૦)

देवं बर्हिर्वारितीनां देवमिन्द्रमवर्द्धयत्।
स्वासस्थमिन्द्रेणासन्नमन्या बर्हीᳬंष्यभ्यभूद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ २१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ देवम्-દિવ્ય, वारितीनाम्-ગ્રહણને યોગ્ય પદાર્થોની મધ્યમાં વર્તમાન, स्वासस्थम्-સારી રીતે બેસવાનો આધાર, इन्द्रेण-પરમેશ્વરની સાથે आसन्नम्-સમીપસ્થ, इन्द्रम्-વિદ્યુત् बर्हिः-આકાશ देवम्-દિવ્ય ગુણોની अवर्धयत्-વૃદ્ધિ કરે છે; अन्या-અન્ય बर्हींषि-અન્તરિક્ષના અવયવો अभि+अभूत्-સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે; वसुधेयस्य-સર્વ દ્રવ્યોના આધાર જગતની મધ્યમાં वसुवने-પદાર્થવિદ્યાના યાચકને માટે वेतु-પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેમ આપ यज-પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! તમે જેમ સર્વત્ર વ્યાપ્ત આકાશ સર્વ પદાર્થોને બધી બાજુથી વ્યાપ્ત કરે છે અને સર્વની સમીપ છે, તેમ ઈશ્વરના સમીપવર્તી જીવને જાણીને, આ સંસારમાં સુપાત્ર યાચકને દાન આપો. (૨૧)

देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवमिन्द्रमवर्द्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्त्स्विष्टकृत् स्विष्टमद्य करोतु नो वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ २२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ स्विष्टकृत्-ઉત્તમ ઈષ્ટને સિદ્ધ કરનાર, देवः-દિવ્યગુણોથી યુક્ત अग्निः-અગ્નિ इन्द्रम्, देवम्-દિવ્યગુણોવાળા જીવની अवर्धयत्-ઉન્નતિ કરે છે; તથા જેમ स्विष्टम्-ઉત્તમ ઈષ્ટને कुर्वन्-સિદ્ધ કરતાં स्विष्टकृत्-ઉત્તમ ઈષ્ટકારી અગ્નિ स्विष्टम्-અત્યંત અભીષ્ટ સિદ્ધ કરે છે, તેમ अद्य-આજ नः-અમારા માટે સુખને करोतु-સિદ્ધ કરે, वेतु-ધનને પ્રાપ્ત કરાવે અને वसुधेयस्य-જગતનાં મધ્યમાં वसुवने-પદાર્થવિદ્યાના યાચકને માટે यज-તે વિદ્યાનું દાન કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જેમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવો દ્વારા જાણેલા, કર્મોમાં સારી રીતે પ્રયુક્ત થયેલ અગ્નિ અભીષ્ટ કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્વાનોએ વર્તવું જોઈએ. (૨૨)

अग्निमद्य होतारमवृणीतायं यजमानः पचन् पक्तीः पचन् पुरोडाशं बध्नन्निन्द्राय च्छागम्। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राय च्छागेन। अद्यत्तं मेदस्तः प्रति पचताग्रभीदवीवृधत्पुरोडाशेन त्वामद्य ऋषे ॥ २३॥

પદાર્થ : હે ऋषे-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા વિદ્વન્ ! જેમ अयम्-આ यजमानः-યજમાન अद्य-આજ इन्द्राय-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્તિને માટે पक्तीः-પાકોને पचन्-પકાવતા, पुरोडाशम्-હોમને માટે પાક-વિશેષને पचन्-પકાવતા, छागम्-રોગ છેદક શાકને बध्नन्-બાંધતા होतारम्-હોમ કરવામાં કુશળ अग्निम्-તેજસ્વી વિદ્વાનનો अवृणीत-વરણ-સ્વીકાર કરે છે.

જેમ वनस्पतिः-કિરણ સમૂહનો રક્ષક देवः-પ્રકાશયુક્ત સૂર્યમંડળ इन्द्राय-ઐશ્વર્યને માટે छागेन-છેદનથી अद्य-આ સમયે अभवत्-પ્રસિદ્ધ થાય, मेदस्तः-સ્નિગ્ધ હોવાથી तम्-તે હુત પદાર્થને अद्यत्-ખાય છે; पचता-પાક કર્તા વા સૂર્ય દ્વારા सुपस्थाः-શાક વગેરે સારી રીતે ઉપસ્થિત થાય છે, તેમ प्रति, अग्रभीत-સર્વને ગ્રહણ કરે છે, પકાવે છે. पुरोडाशेन-હોમ માટે પકાવેલ પદાર્થ વિશેષથી अवीवृधत्-અધિક વૃદ્ધિ અર્થાત્ ઉન્નતિ થાય છે; તેમ त्वाम्-આપની अद्य-આજ હું ઉન્નતિ કરું છું, તેમ તમે પણ આચરણ કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ રસોયાઓ શાક આદિને છોલીને, કાપીને, અન્ન અને શાક વગેરે પકાવે છે, જેમ સૂર્ય સર્વને પકાવે છે. જેમ સૂર્ય વર્ષા દ્વારા સર્વની વૃદ્ધિ/ઉન્નતિ કરે છે, તેમ સેવા આદિ દ્વારા મંત્રાર્થના દ્રષ્ટા વિદ્વાનોની સર્વેએ વૃદ્ધિ અર્થાત્ ઉન્નતિ કરવી જોઈએ.(૨૩)

होता यक्षत्समिधानं महद्यशः सुसमिद्धं वरेण्यमग्निमिन्द्रं वयोधसम्।
गायत्रीं छन्द इन्द्रियं त्र्यविं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ २४॥

પદાર્થ : હે होतः-વિદ્યાદિના ગ્રહણ કરનાર મનુષ્ય ! આપ જેમ होता-વિદ્યાદિના દાતા વિદ્વાન अग्निम्-અગ્નિની સમાન समिधानम्-વિદ્યાદિથી સમ્યક્ પ્રકાશમાન, सुसमिद्धम्-સુંદર શોભાયમાન - પ્રદીપ્ત, वरेण्यम्-વરણ કરવા યોગ્ય, महत्-મહાન यशः-કીર્તિને; वयोधसम्-કામના કરવા યોગ્ય આયુને ધારણ કરનારા, इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારા પદાર્થોને, गायत्रीम्-સત્ય અર્થોનો પ્રકાશ કરનારી ગાયત્રીને छन्दः-સ્વતંત્રતાને, इन्द्रियम्-ધન વા શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયોને त्र्यविम्-ત્રણ પ્રકારથી રક્ષા કરનારી गाम्-પૃથિવીને અને वयः-જીવનને दधत्-ધારણ કરતા यक्षत्-સંગ કરે છે; आज्यस्य-વિજ્ઞાનના રસને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ આપ પણ यज-યજ્ઞ - સમાગમ કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય શ્રેષ્ઠ વિદ્યા આદિ પદાર્થોનું દાન કરે છે, તેઓ અતુલ કીર્તિને પ્રાપ્ત કરીને સુખી થાય છે, [તથા અન્યોને સુખી કરે છે.] (૨૪)

होता यक्षत्तनूनपातमुद्भिदं यं गर्भमदितिर्दधे शुचिमिन्द्रं वयोधसम्।
उष्णिहं छन्द इन्द्रियं दित्यवाहं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ २५॥

પદાર્થ : હે होतः-જ્ઞાનયજ્ઞના કર્તા ! જેમ होता-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોનો ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન तनूनपातम्-શરીર આદિના રક્ષક उद्भिदम्-શરીરનું ભેદન કરીને નીકળનાર गर्भम्-ગર્ભની સમાન अदितिः-માતા

यम्-જેમ दधे-ધારણ કરે છે; તે वयोधसम्-આયુના વર્ધક शुचिम्-પવિત્ર इन्द्रम्-સૂર્યનો यक्षत्-સંગ કરે છે; आज्यस्य-વિજ્ઞાન, उष्णिहम्-ઉષ્ણિક છંદથી પ્રતિપાદિત અર્થ, छन्दः-બળકારક પદાર્થ, इन्द्रियम्-જીવના ચિહ્નરૂપ શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયો, दित्यवाहम्-દિત્ય = ખંડિત (ઇન્દ્રિયોને પ્રાપ્ત કરાવનાર (શરીર), गाम्-વાણી અને वयः-સુંદર પદાર્થોને दधत्-ધારણ કરતા वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે. તેમ તે સર્વનો આપ यज-સંગ કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જેમ માતા ગર્ભની અને ઉત્પન્ન થયેલ બાળકની રક્ષા કરે છે, તેમ શરીર અને ઇન્દ્રિયોની રક્ષા કરીને વિદ્યા અને આયુની વૃદ્ધિ કરો. (૨૫)

होता यक्षदीडेन्यमीडितं वृत्रहन्तममिडाभिरीड्यꣳ सहः सोममिन्द्रं वयोधसम्।
अनुष्टुभं छन्द इन्द्रियं पञ्चाविं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ २६॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! જેમ होता-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોનું ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન वृत्रहन्तमम्-વૃત્ર = મેઘ हन्ता-સૂર્ય સમાન અર્થાત્ મેઘનાશક સૂર્યની સમાન, इडाभिः-સુશિક્ષિત વાણીઓથી ईडेन्यम्-સ્તુતિને યોગ્ય, ईडितम्-પ્રશંસિત सहः-બળ, ईड्यम्-પ્રશંસાને યોગ્ય सोमम्-સોમ આદિ ઔષધિગણ, वयोधसम्-મનોહર પ્રાણોના ધારક इन्द्रम्-જીવાત્માને यक्षत्-સંગ કરે છે.

इन्द्रियम्-શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિય अनुष्टुभम्-સ્તુતિને યોગ્ય छन्दः-સ્વતંત્રતા, पञ्चाविम्-પાંચ પ્રાણોની રક્ષા કરનારી गाम्-પૃથિવી અને वयः-અભીષ્ટ વસ્તુ आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય જગતનાં મધ્યમાં दधत्-ધારણ કરતા वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ આપ એ સર્વનો यज-સંગ કરો - પ્રાપ્ત કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાયથી પ્રશસ્ત ગુણવાળા સૂર્યની સમાન પ્રશસ્ત બનીને, જાણવા યોગ્ય પદાર્થોને જાણીને, સ્તુતિ, બળ, જીવન, ધન, જિતેન્દ્રિયતા અને રાજ્યને ધારણ કરે છે, તેઓ પ્રશંસાને યોગ્ય બને છે. (૨૬)

होता यक्षत्सुबर्हिषं पूषण्वन्तममर्त्यꣳ सीदन्तं बर्हिषि प्रियेऽमृतेन्द्रं वयोधसम्
बृहतीं छन्द इन्द्रियं त्रिवत्सं गां वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ २७॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! તું જેમ તે होता-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોનું ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન अमृता-નાશધર્મથી રહિત बर्हिषि-આકાશની સમાન વ્યાપ્ત, प्रिये-કમનીય પરમેશ્વરનાં સ્વરૂપમાં सीदन्तम्-સ્થિત, अमर्त्यम्-શુદ્ધ સ્વરૂપથી મૃત્યુરહિત, पूषण्वन्तम्-ખૂબ જ પુષ્ટિથી યુક્ત, सुबर्हिषम्-સુંદર આકાશ વા જળવાળા, वयोधसम्-કમનીય પ્રાણોને ધારણ કરનાર इन्द्रम्-પોતાના જીવ સ્વરૂપને यक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે.

તે आज्यस्य-વિજ્ઞાનની बृहतीम्-બૃહતી छन्दः-છંદ इन्द्रियम्-શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયો વા ધન, त्रिवत्सम्-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન જેને પુત્ર સમાન છે તે વેદ સંબંધી गाम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય બોધ તથા वयः-મનોહર સુખને दधत्-ધારણ કરતા કલ્યાણને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ એને यज-સંગત-પ્રાપ્ત કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વેદપાઠી, બ્રહ્મનિષ્ઠ અને યોગીની સેવા કરે છે, તેઓ ઈષ્ટ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૭)

होता॑ यक्षद्व्यच॑स्वतीः सुप्राय॒णा ऋ॑ता॒वृधो॒ द्वारो॑ दे॒वीर्हि॑र॒ण्ययी॑र्ब्र॒ह्माण॒-मिन्द्रं॑ वयो॒धस॑म्। प॒ङ्क्तिं छन्द॑ इ॒हेन्द्रि॒यं तु॒र्य॒वाहं॒ गां वयो॒ दध॒द्व्यन्त्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ २८॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! તું જેમ इह-આ સંસારમાં होता-વિદ્વાન व्यचस्वतीः-ગમનના અવકાશથી યુક્ત, सुप्रायणाः-ઉત્તમ પ્રયાણ = ગમનવાળા, ऋतावृधः-ઋત = યથાયોગ્ય સત્યની વૃદ્ધિ કરનાર, हिरण्ययीः-સુવર્ણ આદિથી અનુલિપ્ત, देवीः-દિવ્યગુણવાળા द्वारः-દ્વારોને वयोधसम्-કામનાને યોગ્ય વિદ્યા તથા બોધને ધારણ કરનારા, ब्रह्माणम्-ચારેય વેદોના જ્ઞાતા બ્રહ્માને, इन्द्रम्-વિદ્યારૂપી ઐશ્વર્યવાળા વિદ્વાનને, पंक्तिम्-પંક્તિ छन्दः-છંદ, इन्द्रियम्-ધન, तुर्यवाहम्-તુર્ય = ચાર ગણા ભારને વહન કરનારા, गाम्-બળદને તથા वयः-ગતિને दधत्-ધારણ કરતા आज्यस्य-ઘૃત આદિ પદાર્થોને यक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે. તથા જેમ અન્ય મનુષ્ય व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તેને यज-પ્રાપ્ત કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અતિ ઉત્તમ, સુંદર દ્વારોવાળા, સુવર્ણ આદિથી યુક્ત ઘર બનાવીને, તેમાં નિવાસ અને વેદાભ્યાસ કરે છે, તેઓ નીરોગ રહે છે. (૨૮)

होता॑ यक्षत्सु॒पेश॑सा सु॒शि॒ल्पे बृ॒ह॒ती उ॒भे नक्तो॒षासा॒ न द॑र्श॒ते विश्व॒मिन्द्रं॑ वयो॒धस॑म् । त्रि॒ष्टुभं॒ छन्द॑ इ॒हेन्द्रि॒यं प॑ष्ठ॒वाहं॒ गां वयो॒ दध॑द्वी॒तामाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ २९॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! તું જેમ इह-આ સંસારમાં बृहती-મોટા उभे-બે सुशिल्पे-સુંદર શિલ્પયુક્ત, दर्शते-દર્શનીય नक्तोषासा-રાત અને દિવસની न-સમાન सुपेशसा-સુંદર સ્વરૂપવાન અધ્યાપક અને ઉપદેશક બે વિદ્વાન विश्वम्-સર્વ वयोधसम्-કામનાને ધારણ કરનારા इन्द्रम्-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને, त्रिष्टुभम्-ત્રિષ્ટુપ્ નામક છંદના અર્થને, छन्दः-બળ, वयः-અવસ્થા અર્થાત્ ગતિ इन्द्रियम्-ધન વા શ્રોત્રાદિ ઇન્દ્રિયો, पष्ठवाहम्-પીઠ પર ભાર વહન કરનારા गाम्-બળદની સમાન वीताम्-પ્રાપ્ત કરે છે, જેમ आज्यस्य-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય ઘૃતાદિ પદાર્થોને दधत्-ધારણ કરતા होता-વિદ્વાન તેને यक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-પ્રાપ્ત કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સકલ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારા શિલ્પ-કર્મોને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સુખી બને છે. (૨૯)

होता॑ यक्ष॒त्प्रचे॑तसा दे॒वाना॑मुत्त॒मं यशो॒ होता॑रा॒ दैव्या॑ क॒वी स॒युजेन्द्रं॑ वयो॒धस॑म्। जग॑तीं॒ छन्द॑ इन्द्रि॒यम॑न॒ड्वाहं॒ गां वयो॒ दध॑द्वी॒तामाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ३०॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! તું જેમ देवानाम्-વિદ્વાનોમાં प्रचेतसा-ઉત્કૃષ્ટ વિજ્ઞાનવાળા, सयुजा-સાથે સંબંધ રાખનારા, दैव्या-દિવ્ય કર્મોમાં શ્રેષ્ઠ, होतारा-વિદ્યા આદિના દાતા कवी-અધ્યાપક-અધ્યેતા અથવા સાંભળવા-સંભળાવનાર મેધાવી વિદ્વાન उत्तमम्-ઉત્તમ यशः-કીર્તિ, वयोधसम्-ઈષ્ટ સુખના ધારક इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્ય, जगतीम्, छन्दः-જગતી છંદ वयः-વિજ્ઞાન, इन्द्रियम्-ધન, अनड्वाहम्-ગાડી વહન કરનાર गाम्-બળદને वीताम्-પ્રાપ્ત કરે છે; જેમ आज्यस्य-જાણવા યોગ્ય પદાર્થોની મધ્યમાં એ ઉક્ત સર્વનું दधत्-ધારણ કરતા होता-ગ્રહણ કરતા વિદ્વાન્ यक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यज-પ્રાપ્ત કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય પુરુષાર્થ કરે, તો વિદ્યા, કીર્તિ અને ધનને પ્રાપ્ત કરીને માનનીય બને. (૩૦)

होता यक्षत्पेशस्वतीस्तिस्त्रो देवीर्हिरण्ययीर्भारतीर्बृहतीर्महीः पतिमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्द इहेन्द्रियं धेनुं गां न वयो दधद्व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३१ ॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! જેમ इह-આ સંસારમાં જે होता-વિદ્યાદિ શુભ ગુણોને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન तिस्त्रः-ત્રણ हिरण्ययीः-સુવર્ણ સમાન પ્રિય, पेशस्वतीः-સુંદર રૂપોવાળી, भारतीः-ધારણ કરનારી, बृहतीः-મોટી महीः-મહત્ત્વપૂર્ણ देवीः-દાનશીલ સ્ત્રીઓ, ત્રણ પ્રકારની વાણીઓ તથા वयोधसम्-ચિર આયુને ધારણ કરનારા पतिम्-રક્ષક इन्द्रम्-રાજાના विराजम्-વિવિધ પદાર્થોના પ્રકાશક વિરાટ્ નામક છંદ, छन्दः-બળકારી પદાર્થ, वयः-કામના યોગ્ય વસ્તુ અને इन्द्रियम्-જીવોથી સેવિત સુખનો यक्षत्-સંગ કરે છે; તે धेनुम्-દૂધાળી गाम्-ગાયોની न-સમાન व्यन्तु-એને પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેમ તે પદાર્થોને दधत्-ધારણ કરતા आज्यस्य-વિજ્ઞાનના ફળને यज-પ્રાપ્ત કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કર્મ, ઉપાસના વિજ્ઞાનની જ્ઞાપક વાણીને જાણે છે, તેઓ મહાન કીર્તિને પ્રાપ્ત કરે છે. જેમ ગાય વાછરડાને તૃપ્ત કરે છે, તેમ અહીં વિદ્વાનો અજ્ઞાન બાળકોને તૃપ્ત કરે છે. (૩૧)

होता यक्षत्सुरेतसं त्वष्टारं पुष्टिवर्द्धनꣳ रूपाणि बिभ्रतं पृथक् पुष्टिमिन्द्रं वयोधसम्। द्विपदं छन्द इन्द्रियमुक्षाणं गां न वयो दधद्वेत्वाज्यस्य होतर्यज॥ ३२ ॥

પદાર્થ : હે होतः-દાતા મનુષ્ય ! જેમ होता-વિદ્વાન सुरेतसम्-શ્રેષ્ઠ પરાક્રમયુક્ત, त्वष्टारम्-પ્રકાશમાન, पुष्टिवर्धनम्-પુષ્ટિવર્ધક, रूपाणि-રૂપોને पृथक्-પૃથક્ बिभ्रतम्-ધારણ કરનારા, वयोधसम्-ચિર આયુને ધારણ કરનારા पुष्टिम्-પુષ્ટિકારક इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને તથા द्विपदम्-બે પગવાળા મનુષ્યાદિ छन्दः-સ્વતંત્રતા इन्द्रियम्-ધન વા શ્રોત્રાદિ ઈન્દ્રિયો, उक्षाणम्-વીર્ય સેચનમાં સમર્થ गाम्-જુવાન આખલાની न-સમાન वयः-ગતિને दधत्-ધારણ કરતા आज्यस्य-વિજ્ઞાનનો यक्षत्-સંગ કરે છે; वेतु-તેને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यज-સંગ કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આખલો-સાંઢ ગાયોને ગર્ભીણી કરીને પશુઓની વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ ગૃહસ્થો સ્ત્રીઓ-પત્નીઓને ગર્ભવતી કરીને પ્રજાની વૃદ્ધિ કરે.

જો સંતાનોની કામના હોય તો [શરીરની] પુષ્ટિને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. જેમ સૂર્ય રૂપનો જ્ઞાપક

છે, તેમ વિદ્વાન્ વિદ્યા અને સુશિક્ષાને પ્રકાશિત કરે છે. (૩૨)

होता॑ यक्ष॒द्वन॒स्पति॑ꣳ शमि॒तार॑ꣳ श॒तक्र॑तु॒ꣳ हिर॑ण्यपर्णमु॒क्थिन॑ꣳ रश॒नां बिभ्र॑तं व॒शिं भग॒मिन्द्रं॑ वयो॒धस॑म्। क॒कु॒भं छन्द॑ इ॒हेन्द्रि॒यं व॒शां वे॒ह॒तं गां वयो॒ दध॒द्वेत्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ३३॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! જેમ इह-આ સંસારમાં आज्यस्य-ઘૃત આદિ ઉત્તમ પદાર્થોનો होता-હોમ કરનાર शमितारम्-શાન્તિકારક, हिरण्यपर्णम्-તેજરૂપ રક્ષક, वनस्पतिम्-કિરણોના પાલક સૂર્યની સમાન, शतक्रतुम्-અધિક બુદ્ધિમાન, उक्थिनम्-પ્રશસ્ત કહેવા યોગ્ય વચનોથી યુક્ત, रशनाम्-આંગળીને विभ्रतम्-ધારણ કરનાર, वशिम्-વશમાં કરનાર, भगम्-સેવનીય ઐશ્વર્યને તથા वयोधसम्-આયુને ધારણ કરનાર इन्द्रम्-જીવને, ककुभम्-અર્થના રોધક, छन्दः-પ્રસન્નતાકારક इन्द्रियम्-ધનને, वशाम्-વંધ્યા તથા वेहतम्-ગર્ભપાતિની गाम्-ગાયોને તથા वयः-અભીષ્ટ વસ્તુને दधत्-ધારણ કરતા यक्षत्-તેનો સંગ કરે છે; वेतु-તેને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-યજ્ઞ કર. (૩૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન વિદ્યા, ધર્મ અને સુશિક્ષાના પ્રકાશક, બુદ્ધિમાન, પોતાના અંગોને ધારણ કરતા વિદ્યારૂપ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરીને અન્યોને પ્રદાન કરે છે, તેઓ પ્રશંસાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૩)

होता॑ यक्ष॒त् स्वाहा॑कृतीर॒ग्निं गृ॒हप॑तिं पृथ॒ग्वरु॑णं भे॒ष॒जं क॒विं क्ष॒त्रमिन्द्रं॑-वयो॒धस॑म्। अति॑छन्दस॒ं छन्द॑ इन्द्रि॒यं बृ॒हदृ॑ष॒भं गां वयो॒ दध॒द्व्यन्त्वाज्य॑स्य॒ होत॒र्यज॑॥ ३४॥

પદાર્થ : હે होतः-યજમાન ! તું જેમ होता-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાન स्वाहाकृतीः-વાણી આદિથી સિદ્ધ કરેલ, अग्निम्-અગ્નિની સમાન વિદ્યમાન તેજસ્વી गृहपतिम्-ઘરના રક્ષક वरुणम्-શ્રેષ્ઠ पृथक्-પૃથક્ भेषजम्-ઔષધ, कविम्-મેધાવી-બુદ્ધિમાન, वयोधसम्-સુંદર જીવનને ધારણ કરનાર इन्द्रम्-રાજા, क्षत्रम्-રાજ્ય, अतिछन्दसम्-અતિ જગતી આદિ છંદોથી પ્રતિપાદિત અર્થ, छन्दः-ગાયત્રી આદિ છંદ बृहत्-મોટી इन्द्रियम्-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયો ऋषभम्-અતિ શ્રેષ્ઠ गाम्-બળદ અને वयः-જીવનને दधत्-ધારણ કરતા आज्यस्य-ઘૃતની આહુતિનો यक्षत्-હોમ કરે છે [અથવા વિજ્ઞાનની આહુતિનો સંગ કરે છે.] અને જેમ લોકો એ સર્વને व्यन्तु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यज-હોમ કરો. [સંગતિ કરો.] (૩૪)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો વેદસ્થ ગાયત્રી આદિ છંદો તથા અતિજગતી આદિ અતિ છંદોને ભણીને અર્થના જ્ઞાતા બને છે, તેઓ સમસ્ત વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૪)

दे॒वं ब॒र्हिर्व॑यो॒धसं॑ दे॒वमिन्द्र॑मवर्द्धयत्। गा॒य॒त्र्या छन्द॑सेन्द्रि॒यं चक्षु॒रिन्द्रे॒ वयो॒ दध॑द्वसु॒वने॑ वसु॒धेय॑स्य वे॒तु॒ यज॑॥ ३५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ देवम्-ઉત્તમ ગુણવાળા बर्हिः-અન્તરિક્ષ वयोधसम्-આયુ વર્ધક देवम्-ઉત્તમ સ્વરૂપયુક્ત इन्द्रम्-સૂર્યની अवर्धयत्-વૃદ્ધિ કરે છે અર્થાત્ ગતિનો અવકાશ આપે છે.

જેમ गायत्र्या-ગાયત્રી छन्दसा-છંદથી चक्षुः-નેત્ર, इन्द्रियम्-ઈન્દ્ર = જીવના ચિહ્નરૂપ ઈન્દ્રિયો અને वयः-જીવનને इन्द्रे-જીવમાં दधत्-ધારણ કરતા वसुधेयस्य-દ્રવ્યોના આધાર સંસારનાં वसुवने-ધનનો વિભાગ કરનાર મનુષ્યને માટે वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ यज-સંગતિ કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : જેમ આકાશમાં સૂર્યનો પ્રકાશ વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ વેદોનો અભ્યાસ કરવાથી प्रज्ञा = બુદ્ધિની વૃદ્ધિ થાય છે. જે આ સંસારમાં વેદ દ્વારા સર્વ સત્ય વિદ્યાઓને જાણે છે, તેઓ સર્વત્રથી ઉન્નતિ પામે છે. (૩૫)

दे॒वीर्द्वारो॑ वयो॒धस॒ꣳ शुचि॒मिन्द्र॑मवर्द्धयन्। उ॒ष्णिहा॒ छन्द॑सेन्द्रि॒यं प्रा॒णमिन्द्रे॒ वयो॒ दध॑द्वसु॒वने॑ वसु॒धेय॑स्य व्यन्तु॒ यज॑॥ ३६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ देवीः-પ્રકાશમાન, द्वारः-ગમન-આગમનના માટે બનેલ દ્વાર, वयोधसम्-જીવનના આધાર, शुचिम्-પવિત્ર, इन्द्रम्-શુદ્ધ વાયુને इन्द्रियम्-જીવથી સેવિત ઈન્દ્રિય તથા प्राणम्-પ્રાણને इन्द्रे-જીવમાં वसुधेयस्य-ધનના આધાર કોષને वसुवने-ધનના યાચકને માટે अवर्धयत्-વધારે છે; व्यन्तु-તેને પ્રાપ્ત કરાવે છે. તેમ उष्णिहा-छन्दसा-ઉષ્ણિક છંદથી એ પૂર્વોક્ત પદાર્થો તથા वयः-પ્રિય પદાર્થોને दधत्-ધારણ કરતા यज-પ્રાપ્ત કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જે ઘરના દ્વારના સામેના દ્વારથી વાયુ સંચાર કરે છે, તે ઘરમાં નિવાસ કરવાથી જીવન, પવિત્રતા, બળ અને આરોગ્યની વૃદ્ધિ થાય છે, એટલા માટે અનેક દ્વારોવાળું મોટું ઘર બનાવવું જોઈએ. (૩૬)

दे॒वी उ॒षासा॒नक्ता॑ दे॒वमिन्द्रं॑ वयो॒धसं॑ दे॒वी दे॒वम॑वर्द्धताम्। अ॒नु॒ष्टुभा॒ छन्द॑सेन्द्रि॒यं बल॒मिन्द्रे॒ वयो॒ दध॑द्वसु॒वने॑ वसु॒धेय॑स्य वीतां॒ यज॑॥ ३७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ उषासानक्ता-રાત અને દિવસની સમાન देवी-વિદ્યાદિ ગુણોમાં દેદીપ્યમાન અધ્યાપિકા અને અધ્યેત્રી સ્ત્રીઓ वयोधसम्-જીવનને ધારણ કરનાર देवम्-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત इन्द्रम्-જીવને; જેમ देवी-દિવ્ય પતિવ્રતા સ્ત્રી देवम्-દિવ્ય સ્ત્રીવ્રત પતિ-લંપટતા આદિથી રહિત પતિની ઉન્નતિ કરે તેમ अवर्धताम्-ઉન્નતિ-વૃદ્ધિ કરે.

જેમ वसुधेयस्य-ધનના આધાર કોષનો वसुवने-ધનના યાચકને માટે वीताम्-ઉત્પત્તિ કરે છે; તેમ वयः-પ્રાણોના ધારણને दधत्-પુષ્ટ કરતા अनुष्टुभा, छन्दसा-અનુષ્ટુપ છંદથી इन्द्रे-જીવાત્મામાં इन्द्रियम्-જીવથી સેવિત ઈન્દ્રિય અને बलम्-બળને यज-પ્રાપ્ત કરો. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! પ્રેમપૂર્વક સ્ત્રી-પુરુષ અને વ્યવસ્થાથી દિવસ-રાત વૃદ્ધિ પામે છે, તેમ પ્રીતિ અને ધર્મ-વ્યવસ્થાથી આપ લોકો વૃદ્ધિ પામો. (૩૭)

दे॒वी जोष्ट्री॒ वसु॑धिती दे॒वमिन्द्रं॑ वयो॒धसं॑ दे॒वी दे॒वम॑वर्द्धताम्। बृ॒ह॒त्या

छन्दसेन्द्रियꣳ श्रोत्रमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥ ३८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ देवी-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન, जोष्ट्री-પ્રીતિથી યુક્ત, वसुधिती-વિદ્યાને ધારણ કરનારી ભણવા-ભણાવવાવાળી બે સ્ત્રીઓ वयोधसम्-જીવન ધારક इन्द्रम्-અન્નદાતા देवम्-દિવ્યગુણયુક્ત સંતાનને, देवी-ધર્માત્મા સ્ત્રીની જેમ देवम्-ધર્માત્મા પતિને પ્રાપ્ત કરીને अवर्धताम्-ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે.

बृहत्या, छन्दसा-બૃહતી છંદથી इन्द्रे-જીવાત્મામાં श्रोत्रम्-શબ્દ સાંભળવા માટે શ્રોત્રનામક इन्द्रियम्-ઈન્દ્ર = ઈશ્વરે રચેલ ઈન્દ્રિયને वीताम्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ वसुधेयस्य-ધનના આધાર કોષનો वसुवने-ધનના યાચકને માટે वयः-ઉત્તમ મનોહર સુખને दधत्-ધારણ કરતા यज-પ્રાપ્ત કરો. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા સ્ત્રીઓ-પોતાનાં સંતાનો, અન્ય કન્યાઓ અને સ્ત્રીઓને વિદ્યા અને શિક્ષાથી ઉન્નત કરે છે; તેમ સ્ત્રી અને પુરુષ પરમ પ્રીતિથી વિદ્યા-વિચારના દ્વારા પોતાનાં સંતાનોને ઉન્નત કરે અને સ્વયં ઉન્નતિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૮)

देवी ऊर्जाहुती दुघे सुदुघे पयसेन्द्रं वयोधसं देवी देवमवर्द्धताम्। पङ्क्त्या छन्दसेन्द्रियꣳ शुक्रमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥ ३९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ दुघे-સુખથી પૂરણ કરનારી, सुदुघे-ઉત્તમ રીતે કામનાઓને પૂરણ કરનારી देवी-સુખદાત્રી उर्जाहुती-સુગંધિત અન્નની બે આહુતિઓ पयसा-જળની વર્ષાથી वयोधसम्-પ્રાણધારી इन्द्रम्-જીવને; देवी-પતિવ્રતા વિદુષી સ્ત્રી देवम्-વ્યભિચાર આદિ દોષથી રહિત - સ્ત્રીવ્રત પતિની ઉન્નતિ કરે છે, તેમ अवर्धताम्-ઉન્નતિ કરે.

पंक्त्या, छन्दसा-પંક્તિ છંદથી इन्द्रे-જીવાત્મામાં शुक्रम्-વીર્ય-પરાક્રમ અને इन्द्रियम्-ધનને वीताम्-પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેમ वसुधेयस्य-કોષના वसुवने-ધન-સેવકને માટે वयः-સુંદર ગ્રાહ્ય સુખને दधत्-ધારણ કરતાં यज-પ્રાપ્ત કરો - યજ્ઞ કરો. (૩૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિમાં આપેલી આહુતિ, મેઘમંડલમાં પહોંચીને ત્યાંથી ફરી આવીને શુદ્ધ જળ દ્વારા સર્વ જગતને પુષ્ટ કરે છે, તેમ વિદ્યાનાં ગ્રહણ અને દાનથી સર્વને પુષ્ટ કરો. (૩૯)

देवा दैव्या होतारा देवमिन्द्रं वयोधसं देवौ देवमवर्द्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दसेन्द्रियं त्विषिमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वीतां यज॥ ४०॥

પદાર્થ : હે होतारा-વિદ્યા આદિના દાતા અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ दैव्या-સુંદર વિદ્વાનોમાં કુશળ देवा-મનોહર વિદ્વાન वयोधसम्-આયુના ધારક, देवम्-કામના કરનાર, इन्द्रम्-જીવાત્માને; देवौ-શુભ ગુણોની કામના કરનારા માતા-પિતા તથા देवम्-સુંદર પુત્રની સમાન अवर्धताम्-ઉન્નતિ કરાવે છે, તેમ वसुधेयस्य-ધન કોષના वसुवने-ધન યાચકને માટે वीताम्-પ્રાપ્ત કરે છે.

હે વિદ્વન્ ! त्रिष्टुभा, छन्दसा-ત્રિષ્ટુભ છંદથી इन्द्रे-પોતાના આત્મામાં त्विषिम्-પ્રકાશથી યુક્ત

इन्द्रियम्-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિય તથા वयः-સુખને दधत्-ધારણ કરતા તું यज-યજ્ઞાદિ ઉત્તમ કર્મ કર. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્યાર્થી અને શિષ્યોને, માતા-પિતા પોતાના સંતાનોની ઉન્નતિ કરે છે, તેમ વિદ્વાન સ્ત્રી-પુરુષ વેદ વિદ્યા દ્વારા સર્વની ઉન્નતિ કરે. (૪૦)

देवीस्तिस्त्रस्तिस्त्रो देवीर्वयोधसं पतिमिन्द्रमवर्द्धयन्। जगत्या छन्दसेन्द्रियꣳ-शूषमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य व्यन्तु यज॥ ४१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ तिस्त्रः-ત્રણ देवीः-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદુષીઓ, तिस्त्रः-અધ્યાપિકા, ઉપદેશિકા અને પરીક્ષા લેનારી ત્રણ देवीः-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદુષીઓ वयोधसम्-જીવન ધારણ કરનાર, पतिम्-રક્ષક સ્વામી, इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યવાન સમ્રાટની अवर्द्धयन्-વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરે છે, व्यन्तु-તેને પ્રાપ્ત કરે છે.

તેમ जगत्या, छन्दसा-જગતી છંદથી इन्द्रे-પોતાના આત્મામાં शूषम्, वयः-શત્રુ સેનામાં વ્યાપક થનાર પોતાના બળ તથા इन्द्रियम्-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયને दधत्-ધારણ કરતા वसुधेयस्य-ધનકોષના वसुवने-ધનના યાચકને માટે यज-પ્રાપ્ત કરો - અગ્નિહોત્રાદિ યજ્ઞ કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ અધ્યાપક, ઉપદેશક અને પરીક્ષક સ્ત્રી-પુરુષ પ્રજામાં વિદ્યા અને સદુપદેશોનો પ્રચાર કરે છે, તેમ રાજા તેઓની યથાવત્ રક્ષા કરે, આ રીતે રાજા અને પ્રજાજનો પરસ્પર પ્રસન્ન બનીને સર્વત્રથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે. (૪૧)

देवो नराशꣳसो देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देवमवर्द्धयत्। विराजा छन्दसेन्द्रियꣳ रूपमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ ४२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ नराशंसः-મનુષ્યોમાં પ્રશંસા કરવા યોગ્ય, देवः-વિદ્વાન્, वयोधसम्-ચિરંજીવ देवम्-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત इन्द्रम्-રાજાને; જેમ देवः-વિદ્વાન્ देवम्-વિદ્વાનની સમાન अवर्धयत्-ઉન્નતિ કરે છે.

विराजा, छन्दसा-વિરાટ્ નામક છંદથી इन्द्रे-જીવાત્મામાં रूपम्-સુંદર રૂપ તથા इन्द्रियम्-શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયોને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ वसुधेयस्य-ધનકોષના वसुवने-ધનના યાચકને માટે वयः-અભીષ્ટ સુખને दधत्-ધારણ કરતા તું यज-પ્રાપ્ત કર. [સંગત વા દાન કર.] (૪૨)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ કદીપણ પરસ્પર ઈર્ષાથી એકબીજાની હાનિ ન કરવી જોઈએ, પરંતુ સદૈવ પ્રેમપૂર્વક ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૪૨)

देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देवमवर्द्धयत्।
द्विपदा छन्दसेन्द्रियं भगमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ ४३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ वनस्पतिः-વનના રક્ષક વડ આદિ વૃક્ષો देवः-દિવ્યગુણયુક્ત છે; તે वयोधसम्-ચિર આયુવાળા देवम्-ઉત્તમ ગુણયુક્ત इन्द्रम्-ઐશ્વર્યને જેમ देवः-દિવ્ય, સભ્ય देवम्-દિવ્ય સ્વભાવવાળા વિદ્વાનની સમાન अवर्द्धयत्-ઉન્નતિ કરે છે.

द्विपदा-બે પગવાળા छन्दसा-છંદથી इन्द्रे-જીવમાં भगम्-ઐશ્વર્ય તથા इन्द्रियम्-ધનને वेतु-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ वसुधेयस्य-ધનકોષના वसुवने-ધનના યાચકને માટે वयः-અભીષ્ટ સુખને दधत्-પ્રાપ્ત કરતા તું यज-પ્રાપ્ત કર - યજ્ઞ કર. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! તમે જેમ વનસ્પતિઓ નીચેથી-મૂળથી પુષ્કળ જળને ખેંચીને, વાયુ અને મેઘમંડળમાં ફેલાવીને સર્વ વૃક્ષોની રક્ષા કરે છે; જેમ રાજપુરુષ રાજપુરુષોની રક્ષા કરે છે, તેમ ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરો. (૪૩)

देवं बर्हिर्वारितीनां देवमिन्द्रं वयोधसं देवं देवमवर्द्धयत्।
ककुभा छन्दसेन्द्रियं यश इन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ ४४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ वारितीनाम्-અન્તરિક્ષમાં સ્થિત સમુદ્રનાં देवम्-દિવ્ય बर्हिः-જળ वयोधसम्-અધિક આયુ ધારણ કરનાર, देवम्-દિવ્ય इन्द्रम्-રાજાને અને देवम्-ઉત્તમ ગુણવાળા देवम्-પ્રકાશમાન પ્રત્યેક જીવની अवर्धयत्-ઉન્નતિ કરે છે.

ककुभा, छन्दसा-કકુપ નામ છંદથી इन्द्रे-રાજા यशः-કીર્તિ તથા इन्द्रियम्-ઈન્દ્ર = જીવનાં ચિહ્ન ઈન્દ્રિયને वेतु-પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ वसुधेयस्य-ધનકોષના वसुवने-ધનના યાચકને માટે वयः-અભીષ્ટ સુખને दधत्-ધારણ કરતા यज-પ્રાપ્ત કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ જળ સમુદ્રોનું પૂરણ કરીને, જંતુઓનું સંરક્ષણ કરીને, મોતી આદિ રત્નોને ઉત્પન્ન કરે છે. તેમ ધર્મ દ્વારા ધનકોષને પૂરણ કરીને, અન્ય દરિદ્રોનું સંરક્ષણ કરીને કીર્તિની વૃદ્ધિ કરો. (૪૪)

देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देवमवर्द्धयत्। अतिछन्दसा छन्दसेन्द्रियं क्षत्रमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज॥ ४५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ स्विष्टकृत्-ઉત્તમ ઈષ્ટને સિદ્ધ કરનાર, देवः-સર્વજ્ઞ, अग्निः-સ્વયં પ્રકાશમાન ઈશ્વર - वयोधसम्-આયુના ધારક, देवम्-ધાર્મિક इन्द्रम्-જીવને જેમ देवः-વિદ્વાન્ देवम्-વિદ્યાર્થીની સમાન अवर्धयत्-વૃદ્ધિ કરે છે.

अतिछन्दसा; छन्दसा-આહ્‌લાદકારક છંદથી इन्द्रे-વિદ્યા અને વિનયથી યુક્ત રાજાને માટે वसुधेयस्य-ધનકોષના वसुवने-ધનદાતાને માટે वयः-મનોહર વસ્તુ क्षत्रम्-રાજ્ય અને इन्द्रियम्-જીવથી સેવિત ઈન્દ્રિયને दधत्-ધારણ કરતા वेतु-તેને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ यज-પ્રાપ્ત કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ પરમેશ્વરે પોતાની દયા કરીને સર્વ પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરીને,

જીવોને સમર્પણ કરીને, જગતની વૃદ્ધિ-ઉન્નતિ કરી છે, તેમ તમે વિદ્યા, વિનય, સત્સંગ, પુરુષાર્થ અને ધર્મનાં અનુષ્ઠાનોથી રાજ્યની ઉન્નતિ કરો. (૪૫)

अ॒ग्निम॒द्य होता॑रमवृणीता॒यं यज॑मानः॒ पच॒न् पक्तीः॒ पच॑न् पु॒रो॒डाशं॑ ब॒ध्नन्निन्द्रा॑य वयो॒धसे॒ छाग॑म्। सू॒प॒स्था अ॒द्य दे॒वो व॒नस्पति॑रभव॒दिन्द्रा॑य वयो॒धसे॒ छागे॑न। अघ॒त्तं मे॑द॒स्तः प्रति॑पच॒ताऽग्र॑भी॒दवी॑वृधत्पु॒रो॒डाशे॑न त्वामद्यऋषे ४६ ॥

પદાર્થ : હે ऋषे-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેમ अयम्-આ यजमानः-યજ્ઞકર્તા યજમાન अद्य-આજ पक्तीः-જાત-જાતના પાકોને पचन्-પકાવતા पुरोडाशम्-યજ્ઞમાં હોમવાના પદાર્થને અર્થાત્ પુરોડાશ નામક પાકવિશેષને पचन्-પકાવતા अग्निम्-તેજસ્વી होतारम्-હોતા-વિદ્વાનને अद्य-આજ अवृणीत्-વરણ-સ્વીકાર કરે છે; તેમ वयोधसे-સર્વના જીવનની ઉન્નતિ કરનાર, इन्द्राय-ઉત્તમ ઐશ્વર્યને માટે छागम्-છેદક ગુણથી યુક્ત બકરી આદિ પશુને बध्नन्-બાંધતા वृणुहि-વરણ-સ્વીકાર કરો.

જેમ अद्य-આજ वनस्पतिः-વનોના રક્ષક देवः-વિદ્વાન્ वयोधसे-સર્વના જીવનની વૃદ્ધિ કરનાર इन्द्राय-શત્રુ વિનાશક રાજાને માટે छागेन-છેદક ગુણથી યુક્ત બકરી આદિ પશુને માટે ઉદ્યત अभवत्-થાય છે; તેમ सुपस्थाः-સારી રીતે સમીપ રહેનાર રસોઈયા કાર્યમાં ઉદ્યત રહે.

જેમ पचता-સારી રીતે પક્વ થયેલ पुरोडाशेन-પુરોડાશ નામક યજ્ઞ પાક વિશેષથી તથા मेदस्तः-સ્નિગ્ધ પદાર્થના કારણે त्वाम्-આપને યજમાન प्रति, अग्रभीत्-સ્વીકાર-ગ્રહણ કરે છે; અને अवीवृधत्-વધે તેમ હે યજમાન અને હોતા ! તમે બન્ને પણ पुरोडाशम्-પુરોડાશ નામક યજ્ઞપાકના શેષ ભાગને अघत्तम्-ખાઓ.

ભાવાર્થ : જેમ રસોયાઓ ઉત્તમ અન્નો અને વ્યંજનોને પકાવીને ભોજન કરાવે, તેમ તેનું સેવન કરનાર - ખાનાર વિદ્વાન્ તેનું માન કરે.

જેમ બકરી આદિ પશુ ઘાસ આદિને ખાઈને સમ્યક્ પચાવે છે, તેમ મનુષ્યોએ ખાધેલા ખોરાકને સારી રીતે પચાવવો જોઈએ. (૪૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં હોતાના ગુણોનું વર્ણન, વાણી (૩૧), અને અશ્વિનૌ = અધ્યાપક અને ઉપદેશક, માતા અને પિતા (૪૦), ગુણોનું પ્રતિપાદન, પુનઃ હોતાનું પ્રતિપાદન, યજ્ઞનું વર્ણન અને વિદ્વાનોની પ્રશંસાનું વર્ણન (૪૨-૪૬)માં કરવામાં આવેલ છે. તેથી આ અધ્યાયના અર્થની સાથે પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સંગતિ છે, એમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति अष्टाविंशोऽध्यायः ॥



॥ अथैकोनत्रिंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

समि॑द्धोऽअ॒ञ्जन् कृद॑रं मती॒नां घृ॒तम॑ग्ने॒ मधु॑म॒त् पिन्व॑मानः।
वा॒जी वह॑न्वा॒जिनं॑ जातवेदो दे॒वानां॑ वक्षि प्रि॒यमा स॒धस्थ॑म्॥ १॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-ઉત્પન્ન બુદ્ધિમાન, अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! જેમ समिद्धः-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત, अञ्जन्-પ્રકટ થતો अग्नि-અગ્નિ मतीनाम्-મનુષ્યોનાં कृदरम्-ઉદર તથા मधुमत्-અતિ મધુરગુણવાળા घृतम्-જળ વા ઘૃતનું पिन्वमानः-સેવન કરતાં; જેમ वाजी-વેગવાન મનુષ્ય वाजिनम्-શીઘ્રગામી ઘોડાને वहन्-ચલાવતાં देवानाम्-વિદ્વાનોની सधस्थम्-સભાને અર્થાત્ સાથેના સ્થાનને आ-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ प्रियम्-પ્રીતિ માટે સ્થાનને वक्षि-પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય જઠરાગ્નિને પ્રદીપ્ત રાખે તથા બહારના અગ્નિનો [કલા-કૌશલમાં] સમ્યક્ પ્રયોગ કરે, તો તે ઘોડાની સમાન વાહનોને દેશાન્તરમાં શીઘ્ર પહોંચાડી શકે છે. (૧)

घृ॒तेना॒ञ्जन्त्सं प॒थो दे॑व॒याना॑न् प्रजा॒नन्वा॒ज्यप्ये॑तु दे॒वान्।
अनु॑ त्वा सप्ते प्र॒दिशः॑ सचन्ताᳬस्व॒धाम॒स्मै यज॑मानाय धेहि॥ २॥

પદાર્થ : હે सप्ते-ઘોડાની સમાન વેગવાન વિદ્વાન્ ! જેમ वाजी, अपि-વેગવાન અગ્નિ પણ घृतेन-જળ અથવા ઘૃતથી अञ्जन्-સમ્યક્ પ્રકટ થતા देवयानान्-જેમાં વિદ્વાનો ચાલે છે તે पथः-માર્ગોને सम, एतु-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરે છે, તેને प्रजानन्-સારી રીતે જાણતાં આપ देवान्-વિદ્વાનોને एहि-પ્રાપ્ત કરો; જેથી त्वा-આપને अनु-અનુકૂળ प्रदिशः-સર્વ દિશાઓ सचन्ताम्-પ્રાપ્ત થાય. આપ अस्मै-આ यजमानाय-યજમાનના માટે स्वधाम्-અન્નને धेहि-ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ અને જળ આદિના પ્રયોગથી યુક્ત બાષ્પયાન્તે - વરાળથી ચાલતાં વાહનોથી શીઘ્ર માર્ગોમાં આવાગમન કરીને સમસ્ત દિશાઓમાં ભ્રમણ કરે છે, તેઓ ત્યાં પુષ્કળ અન્ન આદિ પદાર્થો પ્રાપ્ત કરીને, બુદ્ધિથી કાર્ય સિદ્ધ કરી શકે છે. (૨)

ईड्य॒श्चासि॒ वन्द्य॑श्च वाजिन्ना॒शुश्चा॒ऽसि॒ मेध्य॑श्च सप्ते।
अ॒ग्निष्ट्वा॑ दे॒वैर्वसु॑भिः स॒जोषाः॑ प्री॒तं वह्निं॑ वहतु जा॒तवे॑दाः॥ ३॥

પદાર્થ : હે वाजिन्-પ્રશસ્ત વેગવાન્ सप्ते-ઘોડાની સમાન પુરુષાર્થ, ઉત્સાહી શિલ્પી વિદ્વાન્ ! જે કારણે जातवेदाः-ઉત્પન્ન ધનવાળા सजोषाः-સમાન પ્રીતિયુક્ત થયેલા આપ, वसुभिः-પૃથિવી આદિ देवैः-દિવ્ય ગુણોવાળા પદાર્થોની સાથે प्रीतम्-પ્રશસ્ત वह्निम्-યજ્ઞમાં હોમેલા પદાર્થોને મેઘમંડળમાં પહોંચાડનાર અગ્નિને वहतु-પ્રાપ્ત કરો.

જે त्वा-આપને अग्निः-પ્રાપ્ત થાય છે; તેથી આપ ईड्यः-સ્તુતિને યોગ્ય च-પણ असि-છો; वन्द्यः-નમસ્કાર કરવા યોગ્ય च-પણ છો; च-અને आशुः-શીઘ્રગામી च-તથા मेध्यः-સંગમને યોગ્ય असि-છો. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પૃથિવી આદિથી બનેલા પદાર્થોથી વાહન આદિ બનાવીને, તેમાં વેગવાન, તથા ભાર વહન કરનાર અગ્નિનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરે છે, તેઓ પ્રશંસનીય અને માનનીય બને છે. (૩)

स्तीर्णं बर्हिः सुष्टरीमा जुषाणोरु पृथु प्रथमानं पृथिव्याम्।
देवेभिर्युक्तमदितिः सजोषाः स्योनं कृण्वाना सुविते दधातु॥ ४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! અમે पृथिव्याम्-ભૂમિ પર उरु-બહુ જ पृथु-વિસ્તૃત प्रथमानम्-પ્રખ્યાત, स्तीर्णम्-સર્વત્રથી અંગ-ઉપાંગોથી આચ્છાદિત વાહન તથા बर्हिः-અન્તરિક્ષ વા જળનું जुषाणा-સેવન કરતી, सजोषाः-સમાન રૂપોથી સેવિત, देवेभिः-દિવ્ય પદાર્થોથી युक्तम्-યુક્ત स्योनम्-સુખને कृण्वाना-સિદ્ધ કરનારી अदितिः-નાશરહિત વિદ્યુત્ सुविते-સર્વથી પ્રેરિત વાહનમાં સર્વને दधातु-ધારણ કરે છે; તેને सुष्टरीम-સારી રીતે વિસ્તાર-આચ્છાદિત કરે, તેમ આપ પણ પ્રયત્ન કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પૃથિવી આદિમાં વ્યાપ્ત, અખંડિત વિદ્યુત્ છે; તે મહાન કાર્યોને સિદ્ધ કરીને સુખને ઉત્પન્ન કરે છે, તેને કાર્યોમાં પ્રયુક્ત કરીને પ્રયોજનોની સિદ્ધિ કરો. (૪)

एता ऽ उ वः सुभगा विश्वरूपा वि पक्षोभिः श्रयमाणा उदातैः।
ऋष्वाः सतीः कवषाः शुम्भमाना द्वारो देवीः सुप्रायणा भवन्तु॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वः - તમારા માટે एताः-એ દીપ્તિ सुभगाः-ઉત્તમ ઐશ્વર્યદાયક, विश्वरूपाः-વિવિધરૂપ અને ગુણોવાળા, ऋष्वाः-મહાન कवषाः-શબ્દ કરનાર - પ્રતિધ્વનિ કરનાર, शुम्भमानाः-સુંદર સુશોભિત, सतीः-વિદ્યમાન રહેનાર देवीः-દેદીપ્યમાન द्वारः-ગૃહદ્વાર उत् + आतैः-ઉત્તમ રીતિથી નિરંતર ગમનશીલ पक्षोभिः-ડાબા-જમણા ભાગથી-પક્ષોથી श्रयमाणाः-સેવિત પક્ષીઓની પંક્તિઓની સમાન सुप्रायणाः-સુખપૂર્વક ગમનના સ્થાન वि, भवन्तु-વિશેષરૂપથી થાય, તેમ ગૃહદ્વારોને उ-વિચારપૂર્વક આપ પણ બનાવો. (૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ એવા ગૃહ દ્વારો બનાવવા જોઈએ કે તેમાં વાયુનો અવરોધ ન હોય. જેમ આકાશમાં રોકાયા-અવરોધ વિના પક્ષી ગમનાગમન કરે છે, તેમ દ્વારોમાં ગમન-આગમન થાય. (૫)

अन्तरा मित्रावरुणा चरन्ती मुखं यज्ञानामभि संविदाने।
उषासा वाᳬ सुहिरण्ये सुशिल्पे ऋतस्य योनाविह सादयामि॥ ६॥

પદાર્થ : હે શિલ્પ વિદ્યામાં પ્રચારક બે વિદ્વાનો ! જેમ હું अन्तरा-શરીરમાં-ભિન્ન-ભિન્ન, मित्रावरुणा-

પ્રાણ અને ઉદાનને चरन्ती-પ્રાપ્ત કરાવનારી, यज्ञानाम्-સંગતિને યોગ્ય પદાર્થોના मुखम्-મુખ્ય ભાગને अभि, संविदाने-સર્વત્રથી સમ્યક્ બતાવનારી, सुहिरण्ये-સુંદર તેજથી યુક્ત, सुशिल्पे-ઉત્તમ શિલ્પ ક્રિયાવાળી उषासा-પ્રાતઃ અને સાયંકાળની વેળાઓને ऋतस्यः-સત્યના योनौ-માટે इह-આ ઘરમાં सादयामि-સ્થાપિત કરું છું, તેમ वाम्-તમે બન્ને મારા માટે તેને સ્થાપિત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાતઃ અને સાયંકાળની વેળાઓ શુદ્ધ સ્થાનમાં સેવન કરેલી મનુષ્યોના પ્રાણ તથા ઉદાનની સમાન સુખકારક બને છે, તેમ શુદ્ધ દેશમાં બનાવેલ, ખૂબ જ વિસ્તૃત દ્વારવાળું ઘર સર્વ પ્રકારથી સુખદાયક બને છે. (૬)

प्रथमा वांॅ सरथिना सुवर्णा देवौ पश्यन्तौ भुवनानि विश्वा।
अपिप्रयं चोदना वां मिमाना होतारा ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता॥ ७॥

પદાર્થ : હે બે વિદ્યાર્થીઓ ! જે प्रथमा-પહેલાં सरथिना-રથવાળાની સાથે રહેલા, सुवर्णा-સુંદર ગોરા વર્ણવાળા બે વિદ્વાનો, विश्वा-સર્વ भुवनानि-નિવાસસ્થાનરૂપ ભુવનોને पश्यन्तौ-નિહાળતાં, वाम्-તમે બન્નેને चोदना-પ્રેરણારૂપ કર્મોને मिमाना-નિશ્ચય કરનારા, ज्योतिः-પ્રકાશને प्रदिशा-સારી રીતે જણાવનારા, दिशन्ता-નિર્દેશ કરનારા, होतारा-વિદ્યાના દાતા, देवौ-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન બે વિદ્વાનો આચરણ કરે છે, જેમ તેને હું अपिप्रयम्-તૃપ્ત અર્થાત્ પ્રસન્ન કરું છું, તેમ वाम्-તમે બન્ને તે વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાર્થીઓ નિષ્કપટતાથી વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તેઓ વિદ્યાના પ્રકાશને પ્રાપ્ત કરે છે. જો વિદ્વાનો કપટ અને આળસ રહિત બની તે સર્વને સત્યનો ઉપદેશ કરે, તો તેઓ સુખી કેમ ન બને ? (૭)

आदित्यैर्नो भारती वष्टु यज्ञꣳ सरस्वती सह रुद्रैर्नऽआवीत्।
इडोपहूता वसुभिः सजोषा यज्ञं नो देवीरमृतेषु धत्त॥ ८॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! આપ જે आदित्यैः-પૂર્ણ વિદ્યાવાળા વિદ્વાનોના ઉપદેશની, उपहूता-યથાવત્ કામના કરેલી, भारती-સર્વ વિદ્યાઓને ધારણ કરનારી તથા સર્વ રીતે પુષ્ટિ કરનારી વાણી नः-અમારા માટે यज्ञम्-સંગત, યોગ્ય બોધને સિદ્ધ કરે છે, તે વાણીની सह-સાથે नः-અમારી वष्टु-કામના કરો.

જે रुद्रैः-મધ્યમ કક્ષાના વિદ્વાનો દ્વારા ઉપદિષ્ટ सरस्वती-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી છે, તે नः-અમને आवीत्-પ્રાપ્ત કરાવો.

જે सजोषाः-સમાન વિદ્વાનોથી સેવિત इडा-સ્તુતિ કરવા યુક્ત વાણી वसुभिः-પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાનો દ્વારા ઉપદિષ્ટ છે, તે यज्ञम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય આનંદને સિદ્ધ કરે છે.

હે મનુષ્યો ! એ देवीः-દિવ્યરૂપ ત્રણ પ્રકારની વાણીઓ અમને अमृतेषु-નાશરહિત જીવ આદિ

પદાર્થોમાં સ્થાપિત કરે, તેને તમે પણ અમારા માટે धत्त-ધારણ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ઉત્તમ, મધ્યમ અને સામાન્ય વિદ્વાનો પાસેથી સાંભળેલી અથવા ભણેલી વિદ્યાવાણીનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. મુર્ખાઓ પાસેથી નહિ. તે વાણી મનુષ્યોનાં સુખની સદા સિદ્ધિ કરનારી હોય છે. (૮)

त्वष्टा वीरं देवकामं जजान त्वष्टुरर्वा जायतऽआशुरश्वः।
त्वष्टेदं विश्वं भुवनं जजान बहोः कर्त्तारमिह यक्षि होतः॥ ९॥

પદાર્થ : હે होतः-વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ ! તું જેમ त्वष्टा-વિદ્યાદિ ઉત્તમ ગુણોથી પ્રકાશમાન વિદ્વાન देवकामम्-વિદ્વાનોની કામના કરનારા वीरम्-વીર પુરુષને जजान-ઉત્પન્ન કરે છે; જેમ त्वष्टुः-પ્રકાશમાન શિક્ષાથી आशुः-તીવ્ર વેગવાળા अर्वा-શીઘ્રગામી अश्वः-ઘોડા जायते-બને છે.

જેમ त्वष्टा-પોતાના આત્મામાં પ્રકાશિત ઈશ્વર इदम्-આ विश्वम्-સર્વ भुवनम्-લોક સમૂહને जजान-ઉત્પન્ન કરે છે તે बहोः-અનેક પ્રકારના સંસારના कर्त्तारम्-કર્તા ઈશ્વરનો इह-આ સંસારમાં यक्षि-સંગ કરે છે, તેમ અમે પણ કરીએ. (૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યાની કામના કરનારા મનુષ્યોને વિદ્વાન બનાવે (તે અધ્યાપક) છે, જે શીઘ્ર શિક્ષિત ઘોડાની સમાન તીવ્ર વેગથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરી લે છે, (તે વિદ્યાર્થી હોય છે.) જેમ અનેક પ્રકારનાં જગતના રચયિતા પરમેશ્વર સર્વને વ્યવસ્થિત કરે છે, તેમ અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી હોય છે. (૯)

अश्वो घृतेन त्मन्या समक्तऽउप देवाँ२ऽऋतुशः पाथऽएतु।
वनस्पतिर्देवलोकं प्रजानन्नग्निना हव्या स्वदितानि वक्षत्॥ १०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! देवलोकम्-સર્વના માર્ગદર્શક વિદ્વાનોના માર્ગને प्रजानन्-સારી રીતે જાણતા હોવાથી, જેમ घृतेन-જળની સાથે સંયુક્ત કરેલ अश्वः-શીઘ્રગામી અગ્નિ त्मन्या-આત્મા=સ્વસ્વરૂપથી ऋतुशः-પ્રત્યેક ઋતુમાં देवान्-ઉત્તમ વ્યવહારોને समक्तः-સમ્યક્ પ્રકટ કરતાં पाथः-અન્નને उप, एतु-નજીકથી પ્રાપ્ત કરે છે; अग्निना-અગ્નિની સાથે वनस्पतिः-કિરણોનો રક્ષક સૂર્ય स्वदितानि-સ્વાદિષ્ટ, हव्या-ભોજનને યોગ્ય અન્નોને वक्षत्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ त्मन्या-આત્માથી વર્તાવ કરો.

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય ઋતુઓનો વિભાગ કરીને ઉત્તમ અને સેવન કરવા યોગ્ય વસ્તુઓને ઉત્પન્ન કરે છે, તેમ આપ લોકો ઉત્તમ અને નિમ્ન કોટિના વિદ્યાર્થીઓને વિદ્યા અને અવિદ્યાની પૃથક્-પૃથક્ પરીક્ષા કરાવીને, તેમને સુશિક્ષિત બનાવો અને અવિદ્યાનું નિવારણ કરાવો. (૧૦)

प्रजापतेस्तपसा वावृधानः सद्यो जातो दधिषे यज्ञमग्ने।
स्वाहाकृतेन हविषा पुरोगा याहि साध्या हविरदन्तु देवाः॥ ११॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ सद्यः-શીઘ્ર जातः-પ્રસિદ્ધ થઈને प्रजापतेः-

પ્રજાના પાલક ઈશ્વરના तपसा-પ્રતાપથી वावृधानः-ઉન્નતિ પામતા स्वाहाकृतेन-ઉત્તમ સંસ્કારરૂપ ક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ, हविषा-હોમમાં દાનને યોગ્ય પદાર્થથી यज्ञम्-યજ્ઞને दधिषे-ધારણ કરે છે.

જે पुरोगाः-અગ્રગણ્ય વા અગ્રગામી साध्या-સાધનોથી સંપન્ન देवाः-વિદ્વાનો हविः-ખાવા યોગ્ય અન્નનું अदन्तु-ભોજન કરે છે, તેને याहि-પ્રાપ્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન પ્રજાના પાલક તથા ધર્મથી પ્રાપ્ત પદાર્થોનો ભોગ કરનાર હોય છે, તેઓને સર્વોત્તમ માનવામાં આવે છે. (૧૧)

यदक्र॑न्दः प्रथ॒मं जाय॑मानऽउ॒द्यन्त्स॑मु॒द्रादु॒त वा॒ पुरी॑षात्।
श्ये॒नस्य॑ प॒क्षा ह॑रि॒णस्य॑ बा॒हूऽउ॑प॒स्तुत्यं॒ महि॑ जा॒तं ते॑ऽअर्वन्॥ १२॥

પદાર્થ : હે अर्वन्-ઘોડાની સમાન વેગવાન વિદ્વાન્ ! यत्-જ્યારે समुद्रात्-અન્તરિક્ષ उत; वा-અથવા पुरीषात्-રક્ષક પરમાત્માથી प्रथमम्-પ્રથમ जायमानः-ઉત્પન્ન થનાર વાયુની સમાન उद्यन्-ઉદયને પ્રાપ્ત થઈને अक्रन्दः-શબ્દ કરે છે; ત્યારે हरिणस्य-હરણશીલ વીરજન ते-આપની बाहू-ભુજાઓ જે श्येनस्य-બાજ પક્ષીની पक्षा-પાંખોની સમાન બળવાન છે. તે તથા महि-મહાન કર્મ जातम्-પ્રસિદ્ધ અર્થાત્ સમૂહ उपस्तुत्यम्-સમીપસ્થ સ્તુતિ વિષયને પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આકાશથી પ્રકટ વાયુ કર્મોને કરે છે, તેમ મનુષ્યના શુભ ગુણોનો તમે સ્વીકાર કરો.

જેમ પશુઓમાં ઘોડો વેગવાન છે, તેમ શત્રુઓને રોકવામાં વેગવાન બાજ પક્ષીની સમાન વીર-સેનાવાળા તથા કુશળ બનો. જો તમે એમ કરશો, તો તમારા સર્વ કાર્યો પ્રશંસિત બનશે. (૧૨)

य॒मेन॑ द॒त्तं त्रि॒तऽए॑नमायुन॒गिन्द्र॑ऽएणं प्रथ॒मोऽअध्य॑तिष्ठत्।
ग॒न्ध॒र्वोऽअ॑स्य रश॒नाम॑गृभ्णा॒त्सूरा॒दश्वं॑ वस॒वो निर॑तष्ट॥ १३॥

પદાર્થ : હે वसवः-વિદ્વાનો ! જે इन्द्रः-વિદ્યુત્ त्रितः-પૃથિવી, જળ અને આકાશ ત્રણેયથી यमेन-નિયન્તા વાયુથી दत्तम्-પ્રદત્ત અર્થાત્ ઉત્પન્ન કરેલ एनम्-એ અગ્નિને आयुनक्-યુક્ત કરે છે; एनम्-એ અગ્નિને પ્રાપ્ત કરીને प्रथमः-વિસ્તૃત અને પ્રખ્યાત વિદ્યુત્ अध्यतिष्ठत्-સર્વોપરિ સ્થિત રહે છે, गन्धर्वः-પૃથિવીને ધારણ કરતા अस्य-એ સૂર્યની रशनाम्-દોરી સમાન કિરણોની ગતિને अगृभ्णात्-ગ્રહણ કરે છે; એ सूरात्-સૂર્યરૂપથી अश्वम्-શીઘ્રગામી વાયુને निरतष्ट-સૂક્ષ્મ કરે છે, તે વિદ્યુત્‌નો તમે વિસ્તાર કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઈશ્વરે આ સંસારમાં જે પદાર્થની જેવી રચના કરી છે, તેને તમે વિદ્યાથી જાણો અને એ સૃષ્ટિવિદ્યાને ગ્રહણ કરીને સુખોને સિદ્ધ કરો. (૧૩)

असि॑ य॒मोऽअस्यादि॒त्योऽअ॑र्व॒न्नसि॑ त्रि॒तो गुह्ये॑न व्र॒तेन॑।
असि॒ सोमे॑न स॒मया॒ विपृ॑क्तऽआ॒हुस्ते॒ त्रीणि॑ दि॒वि बन्ध॑नानि॥ १४॥

પદાર્થ : હે अर्वन्-વેગવાન અગ્નિની સમાન વિદ્યમાન મનુષ્ય ! જેથી તું गुह्येन-ગુપ્ત व्रतेन-સ્વભાવ તથા त्रितः-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનથી યુક્ત यमः-નિયમન કર્તા, ન્યાયાધીશની સમાન असि-છે, आदित्यः-સૂર્યની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાનની સમાન असि-છે, વિદ્વાન સદશ असि-છે, सोमेन-ઐશ્વર્યની समया-સમીપ विपृक्तः-વિશેષરૂપથી સંબદ્ધ असि-છે, તે ते-તારા दिवि-પ્રકાશમાં त्रीणि-ત્રણ बन्धनानि-બંધનો અર્થાત્ ઋષિ, દેવ અને પિતૃઋણોના બંધનોને आहुः-કહે છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારે ન્યાયાધીશ, આદિત્ય = સૂર્ય અને સોમ = ચંદ્રમાની સમાન ગુણોવાળા બનવું જોઈએ.

જેમ આ સંસારમાં વાયુ અને સૂર્યનાં આકર્ષણોથી બંધન છે, તેમ જ પરસ્પરના શરીર, વાણી અને મનનાં આકર્ષણોથી પ્રેમ બંધનો કરવા જોઈએ. (૧૪)

त्रीणि त॑ऽआहुर्दि॒वि बन्ध॑नानि॒ त्रीण्य॒प्सु त्रीण्य॒न्तः स॑मु॒द्रे।
उ॒तेव॑ मे॒ वरु॑णश्छन्त्स्यर्व॒न्यत्रा॑ तऽआ॒हुः प॑र॒मं ज॒नित्र॑म्॥ १५॥

પદાર્થ : હે अर्वन्-વિજ્ઞાનથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! यत्र-જે જન્મમાં दिवि-વિદ્યાના પ્રકાશમાં ते-આપના त्रीणि-ત્રણ बंधनानि-બંધનો વિદ્વાન્ લોકો आहुः-બતાવે છે, यत्र-જન્મમાં अप्सु-પ્રાણોમાં त्रिणी-ત્રણ બંધનો, यत्र-જે જન્મમાં अन्तः-મધ્યમાં અને समुद्रे-અન્તરિક્ષમાં त्रीणि-ત્રણ बन्धनानि-બંધનો आहुः-બતાવે છે; અને ते-આપના परमम्-ઉત્તમ जनित्रम्-જન્મ आहुः-બતાવે છે, જેથી वरुणः-શ્રેષ્ઠ બનીને વિદ્વાનોનો छन्त्सि-સત્કાર કરો છો, उतेव-તેમજ તેઓ मे-મારા બને. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આત્મા, મન અને શરીરના બ્રહ્મચર્યની સાથે વિદ્યાઓમાં સ્થિર બનીને વિદ્યા અને સુશિક્ષાનો સંચય કરો. દ્વિતીય વિદ્યાજન્મને પ્રાપ્ત કરીને પૂજિત બનો, જેની-જેની સાથે જેટલો પોતાનો સંબંધ છે, તેને જાણો. (૧૫)

इ॒मा ते॑ वाजिन्नव॒मार्ज॑नानी॒मा श॒फाना॑ᳬ स॒नि॒तुर्नि॒धाना॑।
अत्रा॑ ते भ॒द्रा र॑श॒नाऽअ॑पश्यमृ॒तस्य॒ याऽअ॑भि॒रक्ष॑न्ति गो॒पाः॥ १६॥

પદાર્થ : હે वाजिन्-ઘોડાની સમાન વેગ આદિ ગુણોની સમાન સેનાધીશ ! જેમ હું ते-આપના इमा-એ પ્રત્યક્ષ ઘોડાનાં अवमार्जनानि-શુદ્ધિ કરનારા જળ આદિ, इमा-એ शफानाम्-ખરીની રક્ષા કરનાર લોખંડની નાળ આદિ, सनितुः-નિયંતાનાં निधाना-સ્થાનોને अपश्यम्-નિહાળું છું; अत्र-એ સેનામાં ते-આપના ઘોડાની જે भद्राः-સુંદર કલ્યાણકારી गोपाः-ઉપદ્રવથી રક્ષા કરનારી रशनाः-દોરી-લગામ ऋतस्य-યથાર્થમાં अभिरक्षन्ति-સર્વત્રથી રક્ષા કરે છે, તેને હું अपश्यम्-નિહાળું છું તેમ તમે પણ નિહાળો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે લોકો સ્નાનથી ઘોડા આદિ પશુઓની શુદ્ધિ, તેની ખરીની રક્ષા માટે લોઢાની નાળ

તથા અન્ય દોરી-લગામ આદિથી સંયુક્ત કરીને સુશિક્ષિત કરીને રક્ષા કરે છે, તે યુદ્ધ આદિ કાર્યોમાં સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૬)

आत्मानं ते मनसारादजानामवो दिवा पतयन्तं पतङ्गम्।
शिरोऽअपश्यं पथिभिः सुगेभिररेणुभिर्जेहमानं पतत्रि॥ १७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! હું જેમ मनसा-વિજ્ઞાનથી आरात्-સમીપ અને अवः-નીચે, दिवा-આકાશની સાથે पतङ्गम्-સૂર્યના પ્રતિ पतयन्तम्-ગતિ કરનાર ते-આપના [पतत्रि-પતનશીલ, शिरः-દૂરથી શિરની સમાન જોવામાં આવતા] आत्मानम्-આત્મસ્વરૂપને अजानाम्-જાણું છું; અને अरेणुभिः-ધૂળરહિત નિર્મળ सुगेभिः-સુખપૂર્વક पथिभिः-માર્ગોથી जेहमानम्-પ્રયત્નપૂર્વક ચાલનાર पतत्रि-પક્ષી સમાન ઉડનારા शिरः-દૂરથી શિરની સમાન ગોળ દેખાતા વિમાન આદિ યાનને अपश्यम्-નિહાળું છું, તેમ તમે પણ નિહાળો. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે સર્વથી વેગવાન, શીઘ્ર ગમનશીલ અને અગ્નિની સમાન આત્માને જુઓ. તમે સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરવામાં આવેલ અગ્નિ આદિ [પદાર્થોથી] યુક્ત વાહનોમાં બેસીને જળ, સ્થળ અને અન્તરિક્ષમાં પ્રયત્નપૂર્વક આવાગમન કરો. જેમ શિર સર્વથી ઉત્તમ અંગ છે, તેમ વિમાનને સર્વોત્તમ યાન માનવું જોઈએ. (૧૭)

अत्रा ते रूपमुत्तममपश्यं जिगीषमाणमिषऽआपदे गोः।
यदा ते मर्त्तोऽअनु भोगमानडादिद् ग्रसिष्ठऽओषधीरजीगः॥ १८॥

પદાર્થ : હે વીરપુરુષ ! ते-આપના जिगीषमाणम्-શત્રુઓને જીતનારા, उत्तमम्-ઉત્તમ रूपम्-રૂપને તથા गोः-પૃથિવીને पदे-પ્રાપ્ત કરવા માટે अत्र-આ વ્યવહારમાં इषः-અન્નોને आ, अपश्यम्-સારી રીતે જોઉં.

ते-આપના मर्त्तः મનુષ્ય यदा-જ્યારે भोगम्-ભોગને आनट्-પ્રાપ્ત કરે છે; ત્યારે आत्-ત્યાર પછી इत्-જ ग्रसिष्ठः-અત્યંત ખાનાર આપ ओषधीः-ઔષધિઓને अनु, अजीगः-અનુકૂળતાપૂર્વક ભોગવો છો. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઉત્તમ પશુ-ઘોડા આદિ સેનાનાં અંગ વિજય કરનાર હોય છે, તેમ શૂરવીર વિજયનાં કારણ બનીને ભૂમિ-રાજ્યમાં ભોગોને પ્રાપ્ત કરે. (૧૮)

अनु त्वा रथोऽअनु मर्योऽअर्वन्ननु गावोऽनु भगः कनीनाम्।
अनु व्रातासस्तव सख्यमीयुरनु देवा ममिरे वीर्यं ते॥ १९॥

પદાર્થ : હે अर्वन्-ઘોડાની સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ! ते-આપના कनीनाम्-શોભાયમાન મનુષ્યોની મધ્યમાં વર્તમાન देवाः-વિદ્વાનો તથા व्रातासः-મનુષ્યો अनु, वीर्यम्-અનુકૂળ બળ તથા પરાક્રમને अनु + ममिरे-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત કરે; तव-આપની सख्यम्-મિત્રતાને अनु, ईयुः-ત્યારપછી પ્રાપ્ત કરે.

त्वा-આપના अनु-અનુકૂળ रथः-વિમાન આદિ યાન, त्वा-આપના अनु-અનુકૂળ વા પાછળ मर्यः-મનુષ્ય, त्वा-આપને अनु-અનુકૂળ વા પાછળ गावः-ગાય અને त्वा-આપને अनु-અનુકૂળ भगः-ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત થાય. (૧૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સુશિક્ષિત બનીને અન્યોને સુશિક્ષિત કરે, તે [સુશિક્ષિતો] માંથી ઉત્તમોને સભાસદ બનાવીને, સભાસદોનાં મધ્યમાંથી અત્યુત્તમ સભાપતિ બનાવીને, રાજા, પ્રજા અને પ્રધાન પુરુષોની એક અનુમતિથી રાજ્ય-કાર્યોને સિદ્ધ કરે, તો તેઓ સર્વને અનુકૂળ બનીને સર્વ કાર્યોને સુસંપન્ન કરી શકે. (૧૯)

हिरण्यशृङ्गोऽ योऽस्य पादा मनोजवाऽअवरऽइन्द्रऽआसीत्।
देवाऽइदस्य हविरद्यमायन्योऽअर्वन्तं प्रथमोऽअध्यतिष्ठत्॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે अवरः-નવીન हिरण्यश्रृङ्गः-શિંગડા સમાન વિવિધ તેજવાળા, इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યના હેતુ વિદ્યુત્‌ની સમાન સભાપતિ आसीत्-હોય, જે प्रथमः-પ્રથમ સભાપતિ अर्वन्तम्-ઘોડાની સમાન પ્રાપ્ત થનાર અગ્નિ તથા अयः-સુવર્ણના अध्यतिष्ठत्-અધિષ્ઠાતા અર્થાત્ અગ્નિ પ્રયુક્ત યાન પર બેસીને ચલાવનાર હોય, अस्य-એના पादाः-પગો मनोजवाः-મનની સમાન વેગવાળા હોય અર્થાત્ પગના ચાલવાનું કામ વિમાનાદિથી લે. देवाः-વિદ્વાન સભાસદજનો अस्य-એ રાજાનાં हविरद्यम्-આપવા અને ભોજન કરવા યોગ્ય અન્નને इत्-જ आयन्-પ્રાપ્ત કરે છે, તેનો તમે આશ્રય કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિ આદિ પદાર્થોના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવને યથાવત્ જાણે છે, તેઓ અનેક અદ્‌ભુત કાર્યોને સિદ્ધ કરી શકે છે.

જેઓ પ્રીતિપૂર્વક રાજ્ય કાર્યોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ સત્કારને [પ્રાપ્ત કરે છે] અને જે તેને નષ્ટ કરે છે, તેઓ અવશ્ય દંડને પ્રાપ્ત થાય. (૨૦)

ईर्मान्तासः सिलिकमध्यमासः सꣳ शूरणासो दिव्यासोऽअत्याः।
हꣳसाऽइव श्रेणिशो यतन्ते यदाक्षिषुर्दिव्यमज्ममश्वाः॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्-જે અગ્નિ આદિ પદાર્થોની સમાન ईर्मान्तासः-ईर्म = પ્રેરિત સ્થિતિપ્રાન્ત=પીઠવાળા, सिलिकमध्यमासः-ગદા આદિથી સંલગ્ન મધ્ય દેશવાળા, शूरणासः-શીઘ્ર રણ=યુદ્ધમાં વિજય કરનારા, दिव्यासः-ઉત્તમ શિક્ષિત, अत्याः-નિરંતર ગતિમાન, अश्वाः-શીઘ્રગામી ઘોડાઓ છે, તેઓ श्रेणिशः-પંક્તિબદ્ધ हंसाः-હંસોની इव-સમાન यतन्ते-પ્રયત્ન કરે છે; दिव्यम्-શુદ્ધ अज्मम्-માર્ગને

सम्, आक्षिषुः-પ્રાપ્ત કરે છે; તેને તમે પ્રાપ્ત કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષોની પાસે સુશિક્ષિત, દિવ્ય ગતિવાળા, વિજયનાં કારણ, શીઘ્રગામી, પ્રેરણા અનુસાર ચાલનારા, હંસની સમાન ગતિવાળા ઘોડાઓ અગ્નિ આદિ પદાર્થોની સમાન કાર્યના સાધક હોય છે, તેઓ સર્વત્ર વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૧)

तव॒ शरी॑रं पतयि॒ष्ण्व॒र्व॒न्तव॑ चि॒त्तं वात॑ऽइव॒ ध्रजी॑मान्।
तव॒ शृङ्गा॑णि॒ विष्ठि॑ता पुरु॒त्रार॑ण्येषु॒ जर्भु॑राणा चरन्ति॥ २२॥

પદાર્થ : હે अर्वन्-ઘોડાની સમાન વેગવાન વીરપુરુષ ! જે तव-તારું पतयिष्णु-નાશવાન शरीरम्-શરીર છે; જે तव-તારા चितम्-અન્તઃકરણની વૃત્તિ वातऽइव-વાયુની સમાન ध्रजीमान्-વેગવાન છે. અર્થાત્ દૂરની વસ્તુને ઝડપથી જાણી લેનાર છે; तव-તારા पुरुत्रा-અનેક अरण्येषु-વનોમાં जर्भुराणा-શીઘ્ર ધારણ અને પોષણ કરનારા, विष्ठिता-વિશેષરૂપમાં સ્થિત, श्रृङ्गाणि-શ્રૃંગોની સમાન ઊંચા સેનાનાં અંગ चरन्ति-વિચરે છે; તે તું ધર્મનું આચરણ કર. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અનિત્ય શરીરોમાં રહીને નિત્ય કાર્ય સિદ્ધ કરે છે, તેઓ અનુપમ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે.

જેઓ વનમાં રહેલ પશુઓની સમાન કર્મચારી લોકો તથા સેનાઓ છે, તેઓ ઘોડાઓની સમાન શીઘ્રગામી બનીને શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૨૨)

उप॒ प्रागा॒च्छस॑नं वा॒ज्यर्वा॑ देव॒द्रीचा॒ मन॑सा॒ दीध्या॑नः।
अ॒जः पु॒रो नी॑यते॒ नाभि॑र॒स्यानु॑ प॒श्चात्क॒वयो॑ यन्ति रे॒भाः॥ २३॥

પદાર્થ : જે दीध्यानः-સુંદર પ્રકાશમાન થતા - ચમકતા, अजः-ફેંકનાર, वाजी-વેગવાન, अर्वा-ચાલાક ઘોડો છે; તે देवद्रीचा-વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત मनसा-મનથી-વિચારથી शसनम्-હિંસાના સ્થાન યુદ્ધને उप, प्र, अगात्-સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે; વિદ્વાનોથી अस्य-એના नाभिः-મધ્યભાગ-પીઠને पुरः-આગળ नीयते-લઈ જાય છે; पश्चात्-ત્યારપછી रेभाः-સર્વ વિદ્યાઓની સ્તુતિ કરનારા कवयः-મેધાવી-બુદ્ધિમાન લોકો अनु, यन्ति-અનુકૂળતાપૂર્વક પ્રાપ્ત થાય છે. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો ઉત્તમ વિચારથી ઘોડાઓને સુશિક્ષિત કરીને, અગ્નિ આદિ પદાર્થોને સિદ્ધ કરીને, ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ જગતનાં હિતકારી હોય છે. (૨૩)

उप॒ प्रागा॒त्पर॒मं यत्स॒धस्थ॒मर्वाँ॒२॥ऽअच्छा॑ पि॒तरं॑ मा॒तरं॑ च।
अ॒द्या दे॒वाञ्जुष्ट॑तमो॒ हि ग॒म्याऽअथाशा॑स्ते दा॒शुषे॒ वार्या॑णि॥ २४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! यत्-જે अर्वान्-જ્ઞાનીજન जुष्टतमः-અત્યંત સેવિત થઈને परमम्-ઉત્તમ सधस्थम्-

જન્મ पितरम्-જનક-પિતા, मातरम्-માતા च-અને देवान्-વિદ્વાનોની अद्य-અત્યારે आ, शास्ते-સર્વથી ઈચ્છા કરે છે; अथ-અને दाशुषे-વિદ્યાના દાતા વિદ્વાનને માટે वार्याणि-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય ભોજનને યોગ્ય વસ્તુઓને उप, प्र, अगात्-સમીપ પ્રાપ્ત કરે છે, तम्-તેને हि-નિશ્ચયથી આપ अच्छ-સારી રીતે गम्याः-પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાય અને વિનય દ્વારા પરોપકાર કરે છે, તેઓ ઉત્તમ-ઉત્તમ જન્મ, શ્રેષ્ઠ પદાર્થ, વિદ્વાન પિતા અને વિદુષી માતાને પ્રાપ્ત કરીને, વિદ્વાનોના ભક્ત બનીને મહાન સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. તેઓ રાજ્યનું અનુશાસન કરી શકે છે. (૨૪)

समिद्धोऽअद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान्यजसि जातवेदः।
आ च वह मित्रमहश्चिकित्वान्त्वं दूतः कविरसि प्रचेताः॥ २५॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-પ્રજ્ઞા શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરનારા, मित्रमहः-મિત્રનો સત્કાર કરનારા વિદ્વાન્ ! જે त्वम्-આપ अद्य-આ સમયે समिद्धः-સમ્યક્ પ્રકાશિત અગ્નિની સમાન, मनुषः-મનનશીલ देवः-વિદ્વાન બનીને यजसि-વિદ્વાનોનો સંગ કરે છે; च-અને चिकित्वान्-વિજ્ઞાનવાન, दूतः-દુષ્ટોને દુઃખદાયક; प्रचेताः-ઉત્તમ જ્ઞાન-ચેતનાવાળા कविः-સર્વ વિષયોમાં અવ્યાહત બુદ્ધિમાન असि- છો; તે આપ दुरोणे-ઘરમાં देवान्-વિદ્વાનો વા ઉત્તમ ગુણોને आ, वह-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૨૫)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિ દીપક આદિ રૂપમાં ઘરોને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ધાર્મિક વિદ્વાનો પોતાનાં કુળોને પ્રકાશિત કરે છે. જેઓ સર્વની સાથે મિત્ર સમાન વર્તન કરે છે, તેઓ જ ધાર્મિક છે. (૨૫)

तनूनपात्पथऽऋतस्य यानान्मध्वा समञ्जन्त्स्वदया सुजिह्व।
मन्मानि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्देवत्रा च कृणुह्यध्वरं नः॥ २६॥

પદાર્થ : હે सुजिह्व-સુંદર જિહ્વા વા વાણીવાળા, तनूनपात्-તનુ=વિસ્તૃત પદાર્થોને પતિત ન કરનારા ધાર્મિક વિદ્વાનજન ! આપ ऋतस्य-સત્ય અથવા જળના यानान्-યાનોને पथः-માર્ગોને અગ્નિની સમાન मध्वा-મધુરતા અર્થાત્ કોમળતાથી समञ्जन्-સમ્યક્ પ્રકટ કરતા स्वदय-આસ્વાદન કરો અર્થાત્ પ્રસન્ન કરો. धीभिः-બુદ્ધિ વા કર્મોના દ્વારા मन्मानि-યાનોને उत-તથા नः-અમારા अध्वरम्-નષ્ટ ન કરવા અને यज्ञम्-સંગત કરવા યોગ્ય વ્યવહારને ऋन्धन्-સમ્યક્ સિદ્ધ કરતા च-પણ देवत्रा-વિદ્વાનોમાં બેસીને સેવન कृणुहि-કરો. (૨૬)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક મનુષ્યોએ પથ્ય અને ઔષધોનાં સેવન દ્વારા સુપ્રકાશિત થવું જોઈએ. આપ્ત વિદ્વાનોમાં રહીને, બુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરીને અહિંસા રૂપી ધર્મનું સેવન કરવું જોઈએ. (૨૬)

नराशꣳसस्य महिमानमेषामुप स्तोषाम यजतस्य यज्ञैः।
ये सुक्रतवः शुचयो धियन्धाः स्वदन्ति देवाऽउभयानि हव्या॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ये-જે सुक्रतवः-સુંદર બુદ્ધિઓ અને કર્મોવાળા, शुचयः-પવિત્ર, धियन्धाः-શ્રેષ્ઠ પ્રજ્ઞા = ધારણાવતી બુદ્ધિ અને ઉત્તમ કર્મને ધારણ કરનારા देवाः-વિદ્વાનો उभयानि-શરીર અને આત્મા બન્ને સુખકારી हव्या-ભોજનને યોગ્ય પદાર્થોને स्वदन्ति-ભોગવે છે - ખાય છે;

एषाम्-એ વિદ્વાનોના यज्ञैः-સત્સંગ આદિ રૂપયજ્ઞો દ્વારા नराशंसस्य-મનુષ્યોથી પ્રશંસિત यजतस्य-સંગ કરવા યોગ્ય વ્યવહારના महिमानम्-મહત્ત્વની उप, स्तोषाम-પ્રશંસા કરે છે, તેમ તમે પણ કરો. (૨૭)

ભાવાર્થ : જેઓ સ્વયં શુદ્ધ, વિદ્વાન્ અને વેદ શાસ્ત્રના જ્ઞાતા નથી હોતા, તેઓ અન્યોને પણ વિદ્વાન અને પવિત્ર કરી શકતા નથી.

જેના જેવા ગુણ અને જેવા કર્મો હોય તે કર્મોની ધર્માત્મા લોકો યથાવત્ પ્રશંસા કરે. (૨૭)

आजुह्वानऽईड्यो वन्द्यश्चायाह्यग्ने वसुभिः सजोषाः।
त्वं देवानामसि यह्व होता सऽएनान्यक्षीषितो यजीयान्॥ २८॥

પદાર્થ : હે यह्व-મહાન ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત, अग्ने-અગ્નિ સમાન પવિત્ર વિદ્વાન્ ! જે त्वम्-આપ देवानाम्-વિદ્વાનોની મધ્યમાં होता-વિદ્યાના દાતા તથા यजीयान्-અત્યંત યષ્ટા = સંગ કરનાર असि-છો, इषितः-પ્રેરિત થઈને एनान्-એ વિદ્વાનોનો यक्षि-સંગ કરે છે; सः-તે આપ वसुभिः-નિવાસને માટે 'વસુ' નામક વિદ્વાનોની સાથે सजोषाः-સમાન રૂપથી પ્રીતિ સેવા કરનારા, आजुह्वानः-સર્વત્રથી કામના કરનારા ईड्यः-પ્રશંસાને યોગ્ય અને वन्द्यः-નમસ્કાર કરવા યોગ્ય વિદ્વાન છે; તેની સમીપ आ, याहि-આવો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે લોકો, પવિત્રાત્મા અને પ્રશંસિત વિદ્વાનોના સંગથી સ્વયં પવિત્રાત્મા બને, તો તેઓ ધર્માત્મા બનીને સર્વત્ર સન્માનને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૮)

प्राचीनं बर्हिः प्रदिशा पृथिव्या वस्तोरस्या वृज्यतेऽअग्रेऽअह्नाम्।
व्यु प्रथते वितरं वरीयो देवेभ्योऽअदितये स्योनम्॥ २९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! अस्याः-આ पृथिव्याः-ભૂમિની મધ્યમાં प्राचीनम्-સનાતન बर्हिः-અન્તરિક્ષની સમાન વ્યાપક બ્રહ્મ वस्तोः-દિવસના પ્રકાશથી वृज्यते-અલગ થાય अह्नाम्-દિવસના अग्रे-પ્રાતઃકાળના આરંભમાં देवेभ्यः-વિદ્વાનો उ-અને अदितये-અવિનાશી આત્માને માટે वितरम्-દુઃખોથી મુક્તિ અપાવનાર वरीयः-અતિ શ્રેષ્ઠ स्योनम्-સુખને वि, प्रथते-વિશેષ રીતે પ્રકટ કરનારને તમે લોકો प्रदिशा-વેદ શાસ્ત્રના નિર્દેશને જાણો અને પ્રાપ્ત કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનોને સુખ પ્રદાન કરે છે, તેઓ સર્વોત્તમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. જેમ આકાશ સર્વ દિશાઓ અને પૃથિવી વગેરેમાં વ્યાપ્ત છે, તેમ જગદીશ્વર સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે. જે લોકો તે પરમેશ્વરની પ્રાતઃકાલ ઉપાસના કરે છે, તે ધર્માત્મા બનીને વિસ્તૃત સુખને પામે છે. (૨૯)

व्यचस्वतीरुर्विया वि श्रयन्तां पतिभ्यो न जनयः शुम्भमानाः।
देवीर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वा देवेभ्यो भवत सुप्रायणाः॥ ३०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ उर्विया-અધિકતાથી व्यचस्वतीः-શુભ ગુણોમાં વ્યાપ્તિવાળી, बृहतीः-મહાન, विश्वमिन्वाः-સર્વ વ્યવહારોમાં વ્યાપક, सुप्रायणाः-અતિ ઉત્તમ ઘરોથી યુક્ત, देवीः-પ્રકાશથી દેદીપ્યમાન द्वारः-અવકાશરૂપ દિશાઓની न-સમાન पतिभ्यः-પાણિગ્રહણ-વિવાહ કરનારા, देवेभ्यः-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત પતિઓને માટે शुभ्भमानाः-સુશોભાથી યુક્ત जनयः-ભયા= પત્નીઓ પોત-પોતાના સર્વ પતિઓની वि, श्रयन्ताम्-સેવા કરે છે; તેમ તમે સર્વ વિદ્યાઓમાં વ્યાપક भवत-બનો.

ભાવાર્થ : જેમ વ્યાપક દિશાઓ અવકાશ પ્રદાન દ્વારા સર્વ મનુષ્યોના વ્યવહારની સાધિકા હોવાથી આનંદદાયિની છે, તેમજ પરસ્પર પ્રેમયુક્ત સ્ત્રી-પુરુષ દિવ્ય સુખોને પ્રાપ્ત કરીને અન્યોનાં હિતકારી બને. (૩૦)

आ सुष्वयन्ती यजतेऽउपाकेऽउषासानक्ता सदतां नि योनौ।
दिव्ये योषणे बृहती सुरुक्मेऽअधि श्रियं शुक्रपिशं दधाने॥ ३१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જો दिव्ये-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા, योषणे-બે સ્ત્રીઓની સમાન, सुरुक्मे-સુશોભિત, बृहती-મહાન, अधि-અધિક श्रियम्-શોભા વા લક્ષ્મીને તથા शुक्रपिशम्-શુક્ર = શ્વેત અર્થાત્ પ્રકાશ તથા पिश = કૃષ્ણ અર્થાત્ અંધકારરૂપોને दधाने-ધારણ કરતી, सुष्वयन्ती-શયન કરેલ, સમાન उपाके-નિકટવર્તિની, उषासानक्ता-રાત અને દિવસ योनौ-કાલરૂપ કારણમાં नि, आ, सदताम्-સર્વથા સર્વત્રથી જાય છે; તેનો આપ यजते-સંગ કરો તો અતુલ श्रियम्-શોભા વા લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરી શકો છો. (૩૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ કાલની સાથે વર્તમાન રાત અને દિવસ પરસ્પર સંબદ્ધ પરંતુ વિલક્ષણ સ્વભાવવાળા છે, તેમ રાજા અને પ્રજા પરસ્પર પ્રેમથી વર્તાવ કરે. (૩૧)

दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुषो यजध्यै।
प्रचोदयन्ता विदथेषु कारू प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે दैव्या-વિદ્વાનોમાં કુશળ, होतारा-દાતા, प्रथमा-વિખ્યાત, सुवाचा-પ્રશંસિત વાણીવાળા, मिमाना-નિર્માણ કરનારા, यज्ञम्-સંગતિરૂપ यजध्यै-યજ્ઞ કરવા માટે मनुषा-મનુષ્યોને विदथेषु-વિજ્ઞાનોમાં प्रचोदयन्ता-પ્રેરણા કરનારા प्रदिशा-વેદાદિ શાસ્ત્રોનાં પ્રમાણથી प्राचीनम्-પ્રાચીન ज्योतिः-શિલ્પવિદ્યાના પ્રકાશનો दिशन्ता-ઉપદેશ કરનારા कारू-બે શિલ્પીજનો હોય, તેની પાસેથી શિલ્પશાસ્ત્રનું અધ્યયન કરવું જોઈએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં कारू-શબ્દમાં જે દ્વિવચનનો પ્રયોગ થયો છે તે અધ્યાપક અને હસ્તક્રિયાના

શિક્ષકના અભિપ્રાયથી કરવામાં આવેલ છે.

જે શિલ્પી લોકો છે, તેઓ જેટલું જાણે છે, તેટલું સર્વ અન્ય લોકોને શીખવે, જેથી ઉત્તરોત્તર વિદ્યાસંતતિની વૃદ્ધિ થાય. (૩૨)

आ नो॑ य॒ज्ञं भार॑ती॒ तूय॑मे॒त्विडा॒ मनु॒ष्वदि॒ह चे॒तय॑न्ती।
ति॒स्रो दे॒वीर्ब॒र्हिरे॒दꣳ स्यो॒नꣳ सर॑स्वती॒ स्वप॑सः सदन्तु॥ ३३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે भारती-શિલ્પવિદ્યાને ધારણ કરનારી ક્રિયા, इडा-સુશિક્ષિત મધુર વાણી, सरस्वती-વિજ્ઞાનવાળી પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ इह-આ શિલ્પ વિદ્યાના ગ્રહણરૂપ વ્યવહારમાં नः-અમારા માટે तूयम्-વર્ધક यज्ञम्-શિલ્પવિદ્યાના પ્રકાશમય યજ્ઞને मनुष्वत्-મનુષ્યની સમાન चेतयन्ती-બતાવતી અમને आ, एतु-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે. એ પૂર્વોક્ત तिस्रः-ત્રણ देवीः-વિદ્યાથી પ્રકાશમાન વાણીઓ इदम्-એ बर्हिः-વધેલ स्योनम्-સુખકારી કામોને स्वपसः-સુંદર કર્મોવાળા અમને आ, सदन्तु-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવે. (૩૩)

ભાવાર્થ : આ શિલ્પ વ્યવહારમાં ઉત્તમ ઉપદેશ, ક્રિયાવિધિનું જ્ઞાન કરાવવું અને વિદ્યાનું ધારણ કરાવવું ઈષ્ટ છે, જો એ ત્રણ રીતિઓને મનુષ્યો ગ્રહણ કરી લે, તો મહાન સુખને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૩૩)

यऽइ॒मे द्यावा॑पृथि॒वी जनि॑त्री रू॒पैरपि॑ꣳश॒द्भुव॑नानि॒ विश्वा॑।
तम॒द्य हो॑तरिषि॒तो यजी॑यान्दे॒वं त्वष्टा॑रमि॒ह य॑क्षि वि॒द्वान्॥ ३४॥

પદાર્થ : હે होतः-શિલ્પવિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર વિદ્વાન્ ! यः-જે यजीयान्-અત્યંત સંગતિ કરનાર, इषितः-પ્રેરણાથી યુક્ત विद्वान्-સર્વત્રથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત વિદ્વાન્ - જેમ ઈશ્વર इह-આ રચના વ્યવહારમાં रूपैः-વિચિત્ર આહુતિઓથી इमे-આ जनित्री-અનેક કાર્યોની ઉત્પાદક द्यावापृथिवी-વિદ્યુત્ અને ભૂમિ તથા विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોકોને अपिंशत्-અવયવરૂપમાં રચે છે, તેમ तम्-તે त्वष्टारम्-વિયોગ = પ્રલય. સંયોગ = ઉત્પત્તિ કરનારા देवम्-ઈશ્વરનો अद्य-આજ તું यक्षि-સંગ કરે છે, તેથી સત્કારને યોગ્ય છે. (૩૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ આ સૃષ્ટિમાં પરમાત્માની વિશેષ રચનાઓનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને, તે રીતે શિલ્પવિદ્યાનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૩૪)

उ॒पाव॑सृज॒ त्मन्या॑ सम॒ञ्जन्दे॒वानां॒ पाथ॑ऽ ऋतु॒था ह॒वीꣳषि॑।
वन॒स्पति॑ः शमि॒ता दे॒वोऽअ॒ग्निः स्वद॑न्तु ह॒व्यं मधु॑ना घृ॒तेन॑॥ ३५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! देवानाम्-વિદ્વાનોને पाथः-ભોગ્ય અન્ન આદિને मधुना-મધુર આદિ રસ અને घृतेन-ઘૃત આદિથી समञ्जन्-સમ્યક્ મેળવીને त्मन्या-પોતાના આત્માથી हवींषि-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હવિઓનો ऋतुथा-ઋતુ અનુસાર उपावसृज-યથાવત્ હોમ કર, જેથી તારા આપેલા हव्यम्-ભોજન યોગ્ય

પદાર્થોને वनस्पतिः-કિરણોના સ્વામી સૂર્ય, शमिता-શાન્તિકર્તા देवः-ઉત્તમ ગુણોવાળા મેઘ અને अग्निः-અગ્નિ પણ स्वदन्तु-પ્રાપ્ત કરે અર્થાત્ હોમ કરેલ પદાર્થ તેને પહોંચે. (૩૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ શુદ્ધ દ્રવ્યોનો પ્રત્યેક ઋતુમાં હોમ કરવો જોઈએ, જેથી તે હોમ કરેલ દ્રવ્ય સૂક્ષ્મ બનીને ક્રમશઃ અગ્નિ, સૂર્ય અને મેઘોમાં પહોંચીને વર્ષા દ્વારા સર્વના ઉપકારી બને. (૩૫)

सद्यो जातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत्पुरोगाः।
अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्य वाचि स्वाहाकृतꣳ हविरदन्तु देवाः॥ ३६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सद्यः-શીઘ્ર जातः-પ્રકટ થયેલ अग्निः-વિદ્યાથી પ્રકાશિત વિદ્વાન होतुः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય ऋतस्य-સત્યનો प्रदिशि-નિર્દેશ કરનારી वाचि-વાણીમાં यज्ञम्-અનેક પ્રકારના વ્યવહારને वि, अमिमीत-વિશેષ નિર્માણ કરે છે, देवानाम्-વિદ્વાનોમાં पुरोगाः-અગ્રગામી अभवत्-બને છે; अस्य-એના स्वाहाकृतम्-સત્ય વ્યવહારથી નિષ્પાદિત કર્મ વા હોમ કરેલથી બચેલા हविः-ભોજન યોગ્ય અન્નાદિને देवाः-વિદ્વાનો अदन्तु-ભક્ષણ કરે છે; તેને સર્વોપરિ વિરાજમાન માનો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય સર્વ પ્રકાશકોમાં પ્રકાશક છે; તેમ જે વિદ્વાનોમાં વિદ્વાન્ સર્વનો ઉપકાર કરનાર મનુષ્ય છે, તે જ સર્વને આનંદનો ઉપભોગ કરાવનાર હોય છે. (૩૬)

केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्याऽअपेशसे। समुषद्भिरजायथाः॥ ३७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! જેમ मर्याः-મનુષ્ય अपेशसे-પેશ = સુવર્ણથી રહિત મનુષ્યને માટે पेशः-સુવર્ણ, अकेतवे-બુદ્ધિ રહિત મનુષ્યને માટે केतुम्-બુદ્ધિને कुर्वन्ति-સિદ્ધ કરે છે; તે उषद्भिः-હોમ કરનારા યજમાનોની સાથે બુદ્ધિ અને ધનને कृण्वन्-કરતાં આપ सम्, अजायथाः-સમ્યક્ પ્રસિદ્ધ થાઓ. (૩૭)

ભાવાર્થ : તેઓ જ આપ્ત પુરુષ છે, જે પોતાની સમાન અન્યોનું પણ સુખ ઈચ્છે છે, તેના સંગથી વિદ્યાની પ્રાપ્તિ, અવિદ્યાની હાનિ, શ્રી = લક્ષ્મીનો લાભ અને દરિદ્રતાનો નાશ થાય છે. (૩૭)

जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वꣳ स त्वा वर्मणो महिमा पिपर्त्तु॥ ३८॥

પદાર્થ : यत्-જે वर्मी-કવચવાળા યોદ્ધા अनाविद्धया-ક્ષત = ઘાથી રહિત तन्वा-શરીરથી समदाम्-મદ = હર્ષયુક્ત યુદ્ધોમાં વિદ્યમાન સૈનિકોની उपस्थे-સમીપ प्रतीकम्-પ્રતીતિકારક ચિહ્ન વિશેષને याति-પ્રાપ્ત કરે છે; सः-તે जीमूतस्येव-મેઘની નિકટ વિદ્યુત્‌ની સમાન भवति-હોય છે.

હે વિદ્વન્ ! જે त्वा-આપની वर्मणः-રક્ષાનું महिमा-મહત્ત્વ पिपर्त्तु-પાળે છે તેમ त्वम्-આપ શત્રુઓને जय-જીતો. (૩૮)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘની સેના સૂર્યના પ્રકાશને ઢાંકી દે છે, તેમ [યોદ્ધા મનુષ્ય] કવચ આદિથી શરીરને ઢાંકી લે.

જેમ સમીપ રહેલા સૂર્ય અને મેઘનું યુદ્ધ થાય છે, તેમ વીર રાજપુરુષોએ [યુદ્ધના વિષયમાં] જાણવું જોઈએ અને સર્વત્રથી રક્ષા કરવી જોઈએ. (૩૮)

धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम॥ ३९॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જેમ અમે धनुः-શસ્ત્ર-અસ્ત્ર शत्रोः-શત્રુની अपकामम्-કામનાઓને નષ્ટ कृणोति-કરે છે; તે धन्वना-ધનુષ્ય આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્ર વિશેષથી गाः-પૃથિવી અને धन्वना-ઉક્ત શસ્ત્રવિશેષથી आजिम्-સંગ્રામને जयेम्-જીતે છે; धन्वना-તોય આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી तीव्राः-તીવ્ર વેગવાળી શત્રુઓની समदः-હર્ષિત સેનાઓને जयेम-જીતે છે; धन्वना-ઉક્ત ધનુષ્ય આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી सर्वाः-સર્વ प्रदिशः-દિશા-ઉપદિશાઓને जयेम-જીતે છે; તેમ તમે પણ એ ધનુષ્ય આદિથી શત્રુઓને જીતો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો ધનુર્વેદનું વિજ્ઞાન અને તેની ક્રિયાઓમાં નિપુણ હોય, તો સર્વ સ્થાનોમાં તેનો વિજય પ્રકાશિત થાય છે.

જો વિદ્યા, વિનય અને વીરતા આદિ ગુણોથી પૃથિવીનું એક છત્ર રાજ્ય ઈચ્છો, તો કંઈ પણ અસંભવ નથી. (૩૯)

वक्ष्यन्तीवेदागनीगन्ति कर्णं प्रियꣳ सखायं परिषस्वजाना।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वञ्ज्या इयꣳ समने पारयन्ती॥ ४०॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે इयम्-આ वितता-વિસ્તારયુક્ત धन्वन्-ધનુષ્યમાં अधि-ઉપર લગાવેલી ज्या-પ્રત્યંચા = દોરી = પણછ वक्ष्यन्तीव-ઉપદેશ કરવાવાળી વિદુષી સ્ત્રી સમાન इत्-જ आगनीगन्ति-શીઘ્ર બોધને કરાવતી, कर्णम्-સ્તુતિયુક્ત, प्रियम्-કામના કરવા યોગ્ય, सखायम्-મિત્રની સમાન વર્તમાન પતિને परिषस्वजाना-સર્વત્રથી સંગ કરતી योषेव-સ્ત્રીની સમાન शिङ्क्ते-શબ્દ કરે છે; समने-સંગ્રામમાં, पारयन्ती-વિજયને પ્રાપ્ત કરાવનારી છે; તેના નિર્માણ, બંધન અને ચલાવવાને તમે જાણો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય ધનુષ્ય અને પ્રત્યંચા = દોરી = પણછ આદિ શસ્ત્ર-અસ્ત્રોની રચના, સંબંધ અને ચલાવવાની ક્રિયાને જાણી લે, તો એ ઉપદેશિકા માતાની સમાન સુખદાયિની પત્નીને અને વિજય સુખને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૪૦)

तेऽआचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे।
अप शत्रून्विध्यताꣳ संविदानेऽआर्त्नीऽइमे विष्फुरन्तीऽअमित्रान्॥ ४१॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે योषा-વિદુષી समनेव-સમ્યક્ પ્રાણની સમાન પ્રિય સ્ત્રી પતિને, मातेव-જનનીની સમાન पुत्रम्-સંતાનને बिभृताम्-ધારણ કરે છે; उपस्थे-સમીપમાં आचरन्ती-સારી રીતે પ્રાપ્ત થઈ शत्रून्-શત્રુઓને अप, विद्यताम्-દૂર કરે છે.

इमे-એ संविदाने-સમ્યક્ વિજ્ઞાનને નિમિત્ત आर्त्नी-પ્રાપ્ત થનારી अमित्रान्-શત્રુઓને विष्फुरन्ती-વિચલિત કરનારી છે; ते-તે બન્નેનો ધનુષ્યની પ્રત્યંચા અર્થાત્ પણછનો યથાવત્ સમ્યક્ પ્રયોગ કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જેમ હૃદયને પ્રિય, પત્ની પતિને અને વિદુષી માતા પુત્રને પુષ્ટ કરે છે, તેમ પ્રસિદ્ધ ક્રિયાવાળી ધનુષ્યની પ્રત્યંચા = દોરી અર્થાત્ પણછ શત્રુઓને પરાજિત કરીને વીરોને પ્રસન્ન કરે છે. (૪૧)

बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चा कृणोति समनावगत्य।
इषुधिः सङ्काः पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः॥ ४२॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે बह्वीनाम्-અનેક પણછ = દોરીઓના पिता-પિતાની સમાન રક્ષક अस्य-આ પિતાના बहुः-અનેક ગુણોવાળા पुत्रः-સંતાનની સમાન पृष्ठे-પીઠ પર निनद्धः-નિશ્ચલ બંધાયેલ इषुधिः-બાણોને ધારણ કરનારા ભાથાં प्रसूतः-ઉત્પન્ન થઈને, समना-સંગ્રામોને अवगत्य-પ્રાપ્ત કરીને चिश्चा-ચિં ચિં વગેરે વિવિધ શબ્દ कृणोति-કરે છે; च-જેથી વીર પુરુષ सर्वाः-સર્વ सङ्काः-સમવેત = એકત્ર વા વિકીર્ણ = ફેલાયેલી पृतनाः-સેનાઓને जयति-જીતે છે; તેની યથાવત્ રક્ષા કરો. (૪૨)

ભાવાર્થ : જેમ અનેક કન્યાઓ અને બહુ જ પુત્રોનો પિતા [પોતાના] સંતાનોના શબ્દના કારણે સંકીર્ણ-ઘેરાયેલો રહે છે; તેમ જ ધનુષ્યની પ્રત્યંચા = પણછ તથા ભાથો મળીને અનેક પ્રકારના શબ્દોને ઉત્પન્ન કરે છે.

જેમ ડાબા હાથમાં ધનુષ્ય, પીઠ પર ભાથો [હોય અને] જે જમણા હાથથી બાણ કાઢીને, તેને ધનુષ્યની પણછ = દોરી પર ચડાવીને તથા તેને છોડીને અભ્યાસ દ્વારા શીઘ્રતા પ્રાપ્ત કરી લે છે, તે જ વિજયી બને છે. (૪૨)

रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्रयत्र कामयते सुषारथिः।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः॥ ४३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! सुषारथिः-ઉત્તમ સારથિ અર્થાત્ ઘોડાઓ અથવા અગ્નિ આદિને નિયમમાં રાખનાર रथे-રમણ કરવા યોગ્ય ભૂમિ, જળ અને અન્તરિક્ષમાં ચાલનાર યાનમાં तिष्ठन्-બેસીને, यत्रयत्र-જે-જે સંગ્રામ વા દેશમાં कामयते-જવા ઈચ્છે છે; तत्र-तत्र-ત્યાં-ત્યાં वाजिनः-ઘોડાઓ વા અગ્નિ આદિને पुरः-આગળ नयति-હંકારે છે.

જેનું मनः-મન સુશિક્ષિત છે, रश्मयः-લગામ વા કિરણો હાથમાં છે, पश्चात्-પાછળથી ઘોડાઓ વા અગ્નિ આદિનો अनु, यच्छन्ति-અનુકૂળ નિગ્રહ કરે છે; તે अभिशूनाम्-સર્વ બાજુથી શીઘ્ર ગતિ કરનારની महिमानम्-મહત્ત્વની તમે पनायत-પ્રશંસા કરો. (૪૩)

ભાવાર્થ : જો રાજા અને રાજપુરુષો સામ્રાજ્ય અને નિશ્ચિત વિજયની કામના કરે, તો તેઓ સુશિક્ષિત મંત્રી, ઘોડાઓ આદિ, અન્ય વાહન સંબંધી પર્યાપ્ત સામગ્રી, અધ્યક્ષ, શસ્ત્રાસ્ત્ર અને શરીર તથા આત્માનાં બળનો અવશ્ય વિકાસ કરે. (૪૩)

तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूँ१ऽरनपव्ययन्तः॥ ४४॥

પદાર્થ : હે વીરો ! જે वृषपाणयः-રક્ષક, બળવાન બળદ આદિ ઉત્તમ પ્રાણી જેના પાણિ = હાથોની સમાન છે; તેઓ रथेभिः-રમણીય યાનોની सह-સાથે वाजयन्तः-વીર આદિ જનોને શીઘ્ર પહોંચાડનારા प्रपदैः-ઉત્તમ પગોના ગમનથી अमित्रान्-મિત્રતારહિત દુષ્ટોને अवक्रामन्तः-ધમકાવતા, अश्वाः-શીઘ્રગામી ઘોડાઓ तीव्रान्-તીક્ષ્ણ घोषान्-શબ્દો = હણહણાટ कृण्वते-કરે છે; अनपव्ययन्तः-વ્યર્થ ખર્ચ ન કરાવતાં યોદ્ધાઓ शत्रून्-શત્રુઓને क्षिणन्ति-ક્ષીણ = નષ્ટ કરે છે; તેનું તમે પ્રાણોની સમાન પાલન કરો. (૪૪)

ભાવાર્થ : જો રાજપુરુષો હાથી, ઘોડા, બળદ આદિ પશુઓ કર્મચારીઓ અને અધ્યક્ષોને સુશિક્ષિત કરીને તથા અનેક પ્રકારના યાનોનું નિર્માણ કરીને શત્રુઓને જીતવા ઈચ્છે છે, તો તેનો નિશ્ચિત વિજય થાય છે. (૪૪)

रथवाहनꣳ हविरस्य नाम यत्रायुधं निहितमस्य वर्म।
तत्रा रथमुप शग्मꣳ सदेम विश्वाहा वयꣳ सुमनस्यमानाः॥ ४५॥

પદાર્થ : હે વીરો ! अस्य-આ યોદ્ધાના यत्र-જે યાનમાં रथवाहनम्-રથ ચલાવવાનાં સાધનરૂપ हविः-હવિ અર્થાત્ ગ્રહણ કરવા યોગ્ય અગ્નિ, બળતણ, જળ, કાષ્ઠ અને ધાતુ આદિ સામગ્રી, आयुधम्-ભુશુંડી = બંદૂક, શતઘ્ની = તોપ, તલવાર, ધનુષ્ય, બાણ, શક્તિ અને પદ્મપાશ આદિ શસ્ત્ર તથા अस्य-એ યોદ્ધાનાં वर्म-કવચ અને नाम-પ્રસિદ્ધ વસ્તુઓ निहितम्-સ્થિત છે; तत्र-તે યાનમાં समुनस्यमानाः-સુંદર વિચાર કરતા वयम्-અમે शग्मम्-સુખદાયક તથા તે रथम्-રમણના સાધન રથને विश्वाहा-સર્વ દિવસ = હંમેશાં उप, सदेम-સમીપથી પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે યાનમાં અગ્નિ આદિ તથા ઘોડાઓ આદિ પ્રયુક્ત થાય છે, તેમાં યુદ્ધનાં સાધન-ઉપસાધનોને રાખીને, તેનું નિત્ય નિરીક્ષણ કરીને, તેમાં બેસીને તથા વિચારપૂર્વક શત્રુઓની સાથે યુદ્ધ કરીને તમે નિત્ય સુખ પ્રાપ્ત કરો. (૪૫)

स्वादुषꣳसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः।
चित्रसेनाऽइषुबलाऽअमृध्राः सतोवीराऽउरवो व्रातसाहाः॥ ४६॥

પદાર્થ : હે યુદ્ધ કરનારા વીર પુરુષો ! તમે स्वादुषंसदः-સ્વાદુ = ભોજન આદિ અન્નોનું સમ્યક્ સેવન કરનારા, वयोधाः-દીર્ઘજીવનને ધારણ કરનારા, कृच्छ्रेश्रितः-કષ્ટમાં વિદ્યમાન કષ્ટ સહન કરનારા, शक्तीवन्तः-સામર્થ્યયુક્ત, गभीराः-અગાધ આશયવાળા, चित्रसेनाः-અદ્ભુત સેનાવાળા, इषबलाः-ઈષુ = શસ્ત્રાસ્ત્રો સહિત बल = સેનાવાળા, अमृध्राः-અમૃદુ = દૃઢ શરીરવાળા उरवः-વિશાળ જાંઘ અને છાતીવાળા, व्रातसाहाः-વ્રાત= વીરોના સમૂહોને સહન કરનારા, सतोवीराः-વિદ્યમાન સેનાની મધ્યમાં

વીરો અને યુદ્ધની વિદ્યા તથા શિક્ષાથી યુક્ત पितरः-પાલન કરનારા પિતર-પ્રાપ્ત લોકો રાજપુરુષો છે, તેનો આશ્રય કરીને યુદ્ધ કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : તેઓને જ સદા વિજય, રાજ્યલક્ષ્મી, પ્રતિષ્ઠા, દીર્ઘાયુ, બળ અને વિદ્યાઓ પ્રાપ્ત થાય છે, જે પોતાના અધિષ્ઠાતા આપ્ત લોકોનાં શાસનમાં રહે છે. (૪૬)

ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः शिवे नो द्यावापृथिवीऽअनेहसा।
पूषा नः पातु दुरितादृतावृधो रक्षा माकिर्नोऽअघशꣳसऽईशत॥ ४७॥

પદાર્થ : જે મનુષ્ય ! જે सोम्यासः-ઉત્તમ આનંદકારક ગુણોથી યુક્ત, ऋतावृधः-ઋત = સત્યની વૃદ્ધિ કરનારા, पितरः-રક્ષક અર્થાત્ પાલક, ब्राह्मणासः-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા વિદ્વાન છે, તેઓ नः-અમારા માટે કલ્યાણકારી છે; अनेहसा-કારણરૂપથી અવિનાશી द्यावापृथिवी-આકાશ અને ભૂમિ शिवे-કલ્યાણકારી બને.

पूषा-પુષ્ટિ કરનારા પરમાત્મા नः-અમારી दुरितात्-દુષ્ટ અન્યાયાચરણથી पातु-રક્ષા કરે, જેથી नः-અમને મારવામાં अघशंसः-પાપના પ્રશંસક ચોર माकिः + ईशत-સમર્થ ન બને. ઉક્ત વિદ્વાનોની रक्ष-રક્ષા કરો તથા ચોરોનો નાશ કરો. (૪૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્વાનો તમોને ધર્મયુક્ત કર્મમાં પ્રવૃત્ત કરીને દુષ્ટ આચરણથી દૂર રાખે છે, દુષ્ટાચારીઓનાં બળને રોકે છે અને અમારી પુષ્ટિ કરે છે, તેઓ સત્કારને યોગ્ય-સન્માનનીય છે. (૪૭)

सुपर्णं वस्ते मृगोऽअस्या दन्तो गोभिः सन्नद्धा पतति प्रसूता।
यत्रा नरः सं च वि च द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यꣳसन्॥ ४८॥

પદાર્થ : હે વીરો ! यत्र-જે સેનામાં नरः-નાયક હોય, જે सुपर्णम्-સુંદર પર્ણ = પાલન તથા પૂરણને માટે રથ આદિને वस्ते-ધારણ કરે છે; यत्र-જેમાં गोभिः-દૂધાળી ગાયોની સાથે दन्तः-જનોથી દમન કરવા યોગ્ય मृगः-કસ્તૂરી મૃગની સમાન इषवः-બાણ વગેરે શસ્ત્ર-વિશેષ દોડે છે; જે सन्नद्धा-સમ્યક્ બાંધેલી प्रसूता-સેનાપતિથી પ્રેરિત થઈને શત્રુઓ પર पतति-પડે છે; च-અને અહીં-તહીં अस्याः-એ સેનાના વીર પુરુષ सम् + द्रवन्ति-સમ્યક્ ગતિ કરે છે; च-અને वि + द्रवन्ति-વિશેષ ગતિ કરે છે; तत्र-તે સેનામાં अस्मभ्यम्-અમારે માટે આપ शर्म-સુખ यंसन्-પ્રદાન કરો. (૪૮)

ભાવાર્થ : હે રાજપુરુષો ! તમોએ શત્રુ દ્વારા કદી પરાજય ન પામે તેવી હૃષ્ટ-પુષ્ટ સેના બનાવવી જોઈએ. તે [સેનામાં] સુપરીક્ષિત યોદ્ધાઓ અને અધ્યક્ષો રાખવા જોઈએ તથા તે શસ્ત્રાસ્ત્ર ચલાવવામાં નિપુણ લોકો દ્વારા વિજય પ્રાપ્ત કરવો જોઈએ. (૪૮)

ऋजीते परि वृङ्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनूः।

सोमो॒ऽअधि॑ ब्रवीतु॒ नोऽदि॑ति॒: शर्म॑ यच्छतु॥ ४९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ ऋज्रीते-સરળ વ્યવહારમાં नः-અમારા શરીરથી રોગોને परि, वृङ्धि-બધી બાજુથી દૂર કરો, જેથી नः-અમારા तनूः-શરીર अश्मा-પથ્થરની સમાન દૃઢ भवतु-બને.

જે सोमः-ઉત્તમ ઔષધિ છે; અને જે अदितिः-પૃથિવી છે, તે બન્નેનો આપ नः-અમારા માટે अधि, ब्रवीतु-અધિકારપૂર્વક ઉપદેશ કરો; नः-અમારે માટે शर्म-સુખ વા ઘર यच्छतु-પ્રદાન કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય બ્રહ્મચર્ય, ઔષધ, પથ્ય અને ઉત્તમ નિયમોનું પાલન કરીને શરીરની રક્ષા કરે, તો તેનાં શરીર દૃઢ બને છે.

જેમ શરીરોનું પૃથિવી આદિ ઘર છે, તેમ શરીર એ જીવનું ઘર છે. (૪૯)

आ ज॑ङ्घन्ति॒ सान्वे॑षां ज॒घनाँ॒२ऽउप॑ जिघ्नते।

अश्वा॑जनि॒ प्रचे॑त॒सोऽश्वा॒न्त्स॒मत्सु॑ चोदय॥ ५०॥

પદાર્થ : હે अश्वाजनि-ઘોડાઓને સુશિક્ષા આપતી વિદુષી રાણી ! જેમ વીરપુરુષ एषाम्-એ ઘોડા આદિ પશુઓના सानु-અવયવોને आ + जङ्घन्ति-સારી રીતે ફટકારે છે; जघनान्-યુવકોને उप + जिघ्नते-સમીપથી ચલાવે છે; તેમ તું समत्सु-સંગ્રામોમાં प्रचेतसः-શિક્ષાથી વિશેષ સુશિક્ષિત - ચેતન કરેલ अश्वान्-ઘોડાઓને चोदय-પ્રેરણા કર. (૫૦)

ભાવાર્થ : જેમ રાજા અને રાજપુરુષ યાન, ચાલન, અશ્વ સંચાલન આદિ યુદ્ધ વ્યવહારોને જાણે, તેમ તેઓની સ્ત્રીઓ પણ જાણે. (૫૦)

अहि॑रिव भो॒गैः पर्ये॑ति बा॒हुं ज्याया॑ हे॒तिं प॑रि॒बाध॑मानः।

ह॒स्त॒घ्नो विश्वा॑ व॒युना॑नि वि॒द्वान्पुमा॒न्पुमा॑ᳪसं॒ परि॑ पातु वि॒श्वत॑:॥ ५१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જે हस्तघ्नः-હાથોથી મારનારા विद्वान्-વિદ્વાન पुमान्-પુરુષાર્થી આપ ज्यायाः-પ્રત્યંચા = પણછથી हेतिम्-બાણ છોડીને बाहुम्-બાધક શત્રુને परिबाधमानः-સર્વત્રથી નિવારણ કરતા पुमांसम्-પુરુષાર્થી મનુષ્યની विश्वतः-સર્વત્રથી અર્થાત્ સાંસારિક વિઘ્નથી परि + पातु-સર્વથા રક્ષા કરો છો, તે अहिरिव-મેઘની સમાન ગર્જના કરતા આપ भोगैः-સુખ ભોગોથી विश्वा-સર્વ वयुनानि-વિજ્ઞાનોને परि + एति-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો છો. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન બાહુબળવાળા, શસ્ત્ર અસ્ત્રને ચલાવનાર, શત્રુઓનું નિવારણ કરતા, પુરુષાર્થ દ્વારા સર્વની રક્ષા કરતા, મેઘની સમાન સુખ ઉપભોગોની વૃદ્ધિ કરનાર હોય છે, તે સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાવવામાં સમર્થ બની શકે છે. (૫૧)

वन॑स्पते वी॒ड्व॑ङ्गो॒ हि भू॒याऽअ॒स्मत्स॑खा प्र॒तर॑णः सु॒वीर॑ः।

गोभिः सन्नद्धोऽअसि वीडयस्वास्थाता ते जयतु जेत्वानि॥ ५२॥

પદાર્થ : હે वनस्पते-કિરણોના રક્ષક સૂર્યની સમાન વન આદિના રક્ષક વિદ્વાન રાજન્ ! આપ अस्मत्सखा-અમારા રક્ષક મિત્ર प्रतरणः-શત્રુઓનાં બળનું ઉલ્લંઘન કરનાર, सुवीरः-સુંદર વીર પુરુષોથી યુક્ત वीड्वङ्गः-પ્રશંસિત અંગોવાળા हि-નિશ્ચયથી છો; भूयाः-જે કારણે આપ गोभिः-પૃથિવી આદિથી सन्नद्धः-તત્પર અને સંબદ્ધ असि-છો; તેથી અમને वीडयस्व-દૃઢ કરો. ते-આપના आस्थाता-યુદ્ધમાં સર્વત્ર સ્થિર રહેનાર વીર સેનાપતિ जेत्वानि-જીતવા યોગ્ય શત્રુ-સૈન્યને जयतु-જીતે. (૫૨)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યની સાથે કિરણોનો અને કિરણોની સાથે સૂર્યનો નિત્ય સંબંધ છે, તેમ રાજ, સેના તથા પ્રજાનો સંબંધ હોવો યોગ્ય છે.

જો સેનાપતિ આદિ જિતેન્દ્રિય અને શૂરવીર હોય તો સેના અને પ્રજા પણ તેવી જ હોય છે. (૫૨)

दिवः पृथिव्याः पर्योजऽउद्भृतं वनस्पतिभ्यः पर्य्याभृतꣳसहः।
अपामोज्मानं परि गोभिरावृतमिन्द्रस्य वज्रꣳ हविषा रथं यज॥ ५३॥

પદાર્થ : આપ दिवः-સૂર્યથી અને पृथिव्याः-પૃથિવીથી उद्धृतम्-ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક ધારણ કરેલ ओजः-પરાક્રમને परि + यज-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો; वनस्पतिभ्यः-વડ આદિ વનસ્પતિથી आभृतम्-સારી રીતે પુષ્ટ કરેલ सहः-બળને परि + यज्ञ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો; अपाम्-જલોથી ओज्मानम्-પરાક્રમવાળા રસને परि + यज्ञ-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો; इन्द्रस्य-સૂર્યનાં गोभिः-કિરણોથી आवृतम्-આચ્છાદિત वज्रम्-વજ્રની સમાન रथम्-યાનને हविषा-આદાનપૂર્વક यज-પ્રાપ્ત કરો. (૫૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પૃથિવી આદિ ભૂતો તથા તેનાથી ઉત્પન્ન સૃષ્ટિના સંબંધથી બળ અને પરાક્રમની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ અને તેના યોગથી વિમાન આદિ યાનોનું નિર્માણ કરવું જોઈએ. (૫૩)

इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिः।
सेमां नो हव्यदातिं जुषाणो देव रथ प्रति हव्या गृभाय॥ ५४॥

પદાર્થ : હે देव-ઉત્તમ વિદ્યાથી યુક્ત, रथ-રમણીય સ્વરૂપવાળા વીર ! જેમ इमाम्-આ हव्यदातिम्-આપવા યોગ્ય પદાર્થોના દાનને जुषाणः-સેવન કરનાર છે; सः-પૂર્વોક્ત આપ જે इन्द्रस्य-વિદ્યુત્‌નું वज्रः-પડવું, मरुताम्-મનુષ્યોની अनीकम्-સેના, मित्रस्य-મિત્રનો गर्भः-આન્તરિક અભિપ્રાય वरुणस्य-શ્રેષ્ઠ પુરુષનો नाभिः-આત્માનો મધ્યવર્તી વિચાર છે; તેને नः - અને અમને हव्या-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વસ્તુઓને प्रति + गृभाय-પ્રતિગ્રહ અર્થાત્ સ્વીકાર કરો. (૫૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યોને અતિ શ્રેષ્ઠ સેના, વિદ્યુત્ વિદ્યા, મિત્રભાવ, આપ્તવિચાર અને વિદ્યા આદિના દાનથી સ્વીકૃત કરે છે અને [જેની પાસે] એ અન્યોને આપવા પદાર્થો પણ છે, તેઓ સર્વત્રથી મંગલમય [પદાર્થો અને ભાવો] આવૃત રહે છે. (૫૪)

उप॑ श्वासय पृथि॒वीमु॒त द्यां पु॑रु॒त्रा तें मनुतां॒ विष्ठि॑तं॒ जग॑त्।
स दु॑न्दुभे स॒जूरिन्द्रे॑ण दे॒वैर्दू॒राद्दवी॑यो॒ऽअप॑ सेध॒ शत्रू॑न्॥ ५५॥

પદાર્થ : હે दुन्दुभे-નગારા સમાન ગર્જનાર વીર ! सः-તે આપ इन्द्रेण-ઐશ્વર્યથી યુક્ત देवैः-ઉત્તમ વિદ્વાનોના ગુણોની સાથે सजूः-સંયુક્ત બનીને दूरात्-દૂરથી પણ दवीयः-અતિ દૂર शत्रून्-શત્રુઓને अपसेध-પૃથક્ કરો. पुरुत्रा-વિવિધ पृथिवीम्-આકાશ उत-અને द्याम्-વિદ્યુત્‌ના પ્રકાશને उप, श्वासय-નિકટ જીવન ધારણ કરાવો, આપ તે અન્તરિક્ષ અને વિદ્યુત્‌થી विष्ठितम्-વ્યાપ્ત जगत्-સંસારને मनुताम्-જાણો; તે ते-આપનું રાજ્ય આનંદિત બને. (૫૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત્ વિદ્યાથી ઉત્પન્ન શસ્ત્રોથી શત્રુઓને દૂર ભગાવીને, ઐશ્વર્યના દ્વારા વિદ્વાનોને દૂરથી બોલાવીને તેનો સત્કાર કરે છે, અન્તરિક્ષ અને વિદ્યુત્‌થી વ્યાપ્ત સમસ્ત જગતને જાણીને, અનેક પ્રકારની વિદ્યાઓ અને ક્રિયાઓને સિદ્ધ કરે છે, તેઓ સંસારને આનંદિત કરનારા બની શકે છે. (૫૫)

आक्र॑न्दय॒ बल॒मोजो॑ न॒ऽआधा॒ नि ष्ट॑निहि दु॒रि॒ता बाध॑मानः।
अप॑ प्रोथ दुन्दुभे दु॒च्छुना॑ऽइ॒तऽइन्द्र॑स्य मु॒ष्टिर॑सि वी॒डय॑स्व॥ ५६॥

પદાર્થ : હે दुन्दुभे-નગારાની સમાન જેની સેના ગર્જતી હોય એવા સેનાપતિ ! दुरिता-દુષ્ટ વ્યસનોનું बाधमानः-નિવારણ કરતા આપ नः-અમને बलम्-બળ = સેનાને आ, क्रन्दय-સર્વત્રથી બોલાવીને અથવા શત્રુ સેનાને રડાવીને, ओजः-પરાક્રમને आ, धाः-સારી રીતે ધારણ કરો. સેનાનો निः + स्तनिहि-સર્વથા વિસ્તાર કરો.

જે दुच्छुनाः-દુષ્ટ શ્વાન = કૂતરાની સમાન મનુષ્ય છે; તેને अप, आक्रन्दय-સર્વ બાજુથી રડાવો. કારણ કે આપ मुष्टिः - મુઠ્ઠીની સમાન દૃઢ પ્રબંધકર્તા असि-છો; એટલા માટે इतः-એ સેના તથા इन्द्रस्य-વિદ્યુત્‌ના અવયવોને वीडयस्व-દૃઢ કરો અને સુખોને प्रोथ-પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર કરવો જોઈએ. તથા દુષ્ટોને રડાવવા જોઈએ. તથા સર્વનાં દુર્વ્યસનોને દૂર કરાવીને સુખની પ્રાપ્તિ કરાવવી જોઈએ. (૫૬)

आमूर॑ज प्र॒त्याव॑र्त्तये॒माः कै॑तु॒मद्दु॑न्दु॒भिर्वा॑वदीति।
सम॑श्वप॒र्णा॒श्चर॑न्ति नो॒ नरो॒ऽस्माक॑मिन्द्र र॒थिनो॑ जयन्तु॥ ५७॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજપુરુષ ! આપ अमूः-તે શત્રુસેનાઓને आ + अज-સારી રીતે દૂર કરો. इमाः-એ પોતાની केतुमत्-પ્રશસ્ત ધ્વજાવાળી સેનાઓને प्रति + आवर्त्तय-પાછી લાવો.

જેમ दुन्दुभिः-નગારા वावदीति-જોરથી વાગે છે; તેમ नः-અમારી अश्वपर्णाः-ઘોડાનું પાલન કરનારી સેનાઓ सम्, चरन्ति-સમ્યક્ વિચરે છે.

જે अस्माकम्-અમારા रथिनः-પ્રશંસિત રથોવાળા વીર नरः-નાયક શત્રુઓને जयन्तु-જીતે છે, તે સત્કારને પામે. (૫૭)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષો શત્રુઓની સેનાઓનું નિવારણ કરીને તથા પોતાની સેનાઓને યુદ્ધ કરાવવામાં સમર્થ હોય છે, તેઓ શત્રુઓને સર્વત્રથી જીતી શકે છે. (૫૭)

आ॒ग्ने॒यः कृ॒ष्णग्रीवः सारस्व॒ती मे॒षी ब॒भ्रुः सौ॒म्यः पौ॒ष्णः श्या॒मः शि॑तिपृ॒ष्ठो बा॑र्हस्प॒त्यः शि॒ल्पो वै॑श्वदे॒वऽऐ॒न्द्रोऽरु॒णो मा॑रु॒तः क॒ल्माषऽऐ॒न्द्रा॒ग्नः सं॑हि॒तोऽ॒ऽधोरा॑मः सावि॒त्रो वा॑रु॒णः कृ॒ष्णऽएक॑शितिपा॒त्पेत्वः॥ ५८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે आग्नेयः-અગ્નિ દેવતાવાળા પશુ છે અર્થાત્ અગ્નિના ઉત્તમ ગુણોથી યુક્ત છે, તે कृष्णग्रीवः-કાળી ડોકવાળા છે; જે सारस्वती-સરસ્વતી-વાણીના ગુણવાળી मेषी-ઘેટી છે; જે सौम्यः-ચંદ્રમાના ગુણવાળા પશુ છે, તે बभ्रुः-ધુમાડાના વર્ણવાળા છે; જે पौष्णः-પુષ્ટિ આદિ ગુણોવાળા પશુ છે, તે श्यामः-શ્યામ વર્ણવાળા છે; જે बार्हस्पत्यः-મહાન આકાશ આદિના પાલન આદિ ગુણયુક્ત છે, તે शितिपृष्ठः-કાળી પીઠવાળા છે; જે विश्वदेवः-સર્વ વિદ્વાનોના ગુણવાળા છે, તે शिल्पः-અનેક વર્ણવાળા છે; જે ऐन्द्रः-સૂર્યના ગુણવાળા છે, તે अरुणः-લાલ વર્ણવાળા છે; જે मारुतः-વાયુના ગુણવાળા છે, તે कल्माषः-સફેદ અને કાળા વર્ણવાળા છે; જે ऐन्द्राग्नः-સૂર્ય અને અગ્નિના ગુણવાળા છે, તે संहितः-દૃઢ અંગોવાળા છે; જે सावित्रः-સૂર્યના ગુણવાળા છે, તે अधोरामः-નીચે ક્રીડા કરનારા છે; જે एकशितिपात्-એક પગવાળા છે, તે पेत्वः-પતનશીલ છે અને જે कृष्णः-કાળા રંગવાળા છે, તે वारुणः-જળના શાન્ત આદિ ગુણવાળા પશુઓ છે, એ સર્વને જાણો. (૫૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જે દેવતાવાળા જે જે પશુઓ વિખ્યાત છે, તે તે ગુણવાળા બતાવેલ છે, તેમ જાણો. (૫૮)

अ॒ग्नयेऽनी॑कवते॒ रोहि॑ताञ्जिरन॒ड्वान॒धोरा॑मौ सावि॒त्रौ पौ॒ष्णौ र॑ज॒तना॑भी वैश्वदे॒वौ पि॒शङ्गौ॑ तू॒प॒रौ मा॑रु॒तः क॒ल्माषऽआग्ने॒यः कृ॒ष्णोऽ॒जः सार॑स्व॒ती मे॒षी वा॑रु॒णः पेत्वः॥ ५९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે अनीकवते-પ્રશસ્ત સેનાવાળા अग्नये-વિજ્ઞાન આદિ ગુણોના પ્રકાશક સેનાપતિને માટે रोहिताञ्जिः-રોહિત = લાલ अञ्जि = લક્ષણોવાળા अनड्वान्-બળદ, सावित्रौ-સૂર્યના ગુણવાળા, अधोरामौ-નીચેના શ્વેત વર્ણવાળા પશુ, पौष्णौ-પુષ્ટિ આદિ ગુણવાળા रजतनाभी-ચાંદીની સમાન શ્વેતનાભિયુક્ત પશુ, वैश्वदेवौ-સર્વ વિદ્વાનો સંબંધી तूपरौ-શિંગડારહિત पिशङ्गौ-પીળા રંગના બે પશુઓ, मारुतः-વાયુ દેવતાવાળા कल्माषः-સફેદ અને કાળા રંગવાળા પશુ, आग्नेयः-અગ્નિદેવતાવાળા कृष्णः-કાળા अजः-બકરાં; सारस्वती-વાણીના ગુણવાળી मेषी-ઘેટી અને वारुणः-જળના ગુણવાળા पेत्व-શીઘ્રગામી પશુ છે, તે સર્વેનો ગુણોને અનુકૂળ પ્રયોગ કરો. (૫૯)

ભાવાર્થ : આ મંત્રમાં પશુઓના જેટલા ગુણો કહેલ છે, તે સર્વ ગુણ એક અગ્નિમાં એકત્ર છે એમ જાણો. (૫૯)

अग्नये गायत्राय त्रिवृते राथन्तरायाष्टाकपालऽइन्द्राय त्रैष्टुभाय पञ्चदशाय बार्हतायैकादशकपालो विश्वेभ्यो देवेभ्यो जागतेभ्यः सप्तदशेभ्यो वैरूपेभ्यो द्वादशकपालो मित्रावरुणाभ्यामानुष्टुभाभ्यामेकविꣳशाभ्यां वैराजाभ्यां पयस्या बृहस्पतये पाङ्क्ताय त्रिणवाय शाक्वराय चरुः सवित्रऽऔष्णिहाय त्रयस्त्रिꣳशाय रैवताय द्वादशकपालः प्राजापत्यश्चरुरदित्यै विष्णुपत्न्यै चरुरग्नये वैश्वानराय द्वादशकपालोऽनुमत्याऽअष्टाकपालः॥ ६०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે त्रिवृते-સત્વ, રજ અને તમ ગુણોથી યુક્ત राथन्तराय-રથ = યાનોથી સમુદ્ર આદિ તરવાવાળા, गायत्राय-ગાયત્રી આદિ છંદોમાં બતાવેલ अग्नये-અગ્નિને માટે अष्टाकपालः-આઠ કપાલોમાં સંસ્કાર કરેલ પાક; पञ्चदशाय-પંદર પ્રકારના त्रैष्टुभाय-ત્રિષ્ટુપ છંદથી પ્રખ્યાત बार्हताय-મોટાની સાથે સંબંધ રાખનાર इन्द्राय-ઐશ્વર્યને માટે एकादशकपालः-અગિયાર કપાલોમાં સંસ્કાર કરેલ પાક; विश्वेभ्यः-સર્વ जागतेभ्यः-જગતી છંદમાં બતાવેલ सप्तदशेभ्यः-સત્તર वैरूपेभ्यः-વિવિધ રૂપવાળા देवेभ्यः-દિવ્ય ગુણયુક્ત મનુષ્યને માટે द्वादशकपालः-બાર કપાલોમાં સંસ્કાર કરેલ પાક; आनुष्टुभाभ्याम्-અનુષ્ટુપ છંદથી પ્રકાશિત થયેલ एकविंशाभ्याम्-એકવીસ वैराजाभ्याम्-વિરાટ્ છંદથી બતાવેલ मित्रावरुणाभ्याम्-પ્રાણ અને ઉદાનને માટે पयस्या-જળ ક્રિયામાં કુશળ વિદ્વાન, बृहस्पतये-મહાનના રક્ષક, पाङ्क्ताय-પંક્તિઓમાં શ્રેષ્ઠ त्रिणवाय-કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાન એ ત્રણેયથી ઉપાસના કરવા યોગ્ય शाक्वराय-શક્તિશાળી પુરુષને માટે चरुः-પાક વિશેષ औष्णिहाय-ઉષ્ણિક્ છંદમાં બતાવેલ त्रयस्त्रिंशाय-તેંત્રીસ रैवताय-ધન સંબંધી सवित्रे-ઐશ્વર્ય ઉત્પન્ન કરનાર પુરુષને માટે द्वादशकपालः-બાર કપાલોમાં સંસ્કૃત પાક प्राजापत्यः-પ્રજાપતિ દેવતાવાળા चरुः-ચરુ નામક સ્થાલી પાક अदित्यै-અખંડિત અન્તરિક્ષ રૂપવાળી विष्णुपत्न्यै-વિષ્ણુ = વ્યાપક ગુણથી પાલિત વિદ્યુત્‌ને માટે चरुः-પાક, वैश्वानराय-સર્વ મનુષ્યોમાં પ્રકાશમાન अग्नये-વિદ્યુત્‌રૂપી અગ્નિને માટે द्वादशकपालः-બાર કપાલોમાં પકાવેલ પાક અને अनुमत्यै-પાછળ માનનારા માટે अष्टाकपालः-આઠ કપાલોમાં સિદ્ધ કરેલ પાક બનાવવો જોઈએ. (૬૦)

ભાવાર્થ : જે લોકો અગ્નિ આદિના પ્રયોગ માટે આઠ આદિ પ્રકારોનાં યન્ત્રોને બનાવી શકે, તેઓએ રચેલ વ્યક્ત પદાર્થોથી અનેક કાર્યો સિદ્ધ કરી શકે છે. (૬૦)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં અગ્નિ (૧-૩), વિદ્વાન્ (૪), ઘર (૫), પ્રાણ-અપાન (૬), અધ્યાપક-ઉપદેશક (૭), વાણી (૮), અશ્વ (૯), અગ્નિ (૧૦), વિદ્વાનોથી પ્રશસ્ત પદાર્થો (૧૧), ગૃહદ્વાર (૩૦), રાત-દિવસ (૩૧), શિલ્પી (૩૨), શ્રી (૩૧), શસ્ત્ર-અસ્ત્ર (૩૯-૪૫), સેના (૪૬),

જ્ઞાની (૪૭), રક્ષા (૪૮), સૃષ્ટિના ઉપકાર ગ્રહણ (૫૩), વિઘ્નનિવારણ (૫૬), શત્રુસેનાનો પરાજય અને પોતાની સેનાનાં અંગોની રક્ષા (૫૭), પશુ ગુણ (૫૮-૫૯) અને યજ્ઞ(૬૦)નાં નિરૂપણથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ છે તેમ જાણો.

॥ इति एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ त्रिंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

देव॑ सवितः प्र सु॑व य॒ज्ञं प्र सु॑व य॒ज्ञप॑तिं॒ भगा॑य।

दि॒व्यो ग॑न्ध॒र्वः कै॑त॒पूः केत॑ नः पुनातु वा॒चस्पति॒र्वाचं॑ नः स्वदतु॥ १॥

પદાર્થ : હે देव-દિવ્ય સ્વરૂપ, सवितः-સકલ ઐશ્વર્યથી યુક્ત, જગતના ઉત્પાદક જગદીશ્વર ! જે આપ दिव्यः-શુદ્ધ સ્વરૂપમાં વિદ્યમાન गन्धर्वः-ગૌ = પૃથિવીને ધારણ કરનારા, केतपूः-કેત = વિજ્ઞાનને પવિત્ર કરનાર રાજા नः-અમારી केतम्-બુદ્ધિને पुनातु-પવિત્ર કરો.

જે वाचः-વાણીના पतिः-રક્ષક नः-અમારી वाचम्-વાણીને स्वदतु-વિદ્યાથી મધુર, સ્નિગ્ધ, મૃદુ અને પ્રિય બનાવો; તે यज्ञपतिम्-યજ્ઞ - રાજ્યના રક્ષક રાજાને भगाय-ઐશ્વર્યયુક્ત ધનને માટે प्र + सुव-ઉત્તમ રીતિથી ઉત્પન્ન કરો અને यज्ञम्-રાજધર્મરૂપ યજ્ઞને પણ प्र + सुव-ઉત્તમ રીતિથી ઉત્પન્ન કરો. (૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યા અને શિક્ષાની વૃદ્ધિ કરનાર, શુદ્ધ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત, રાજ્યના પાલન માટે યથાયોગ્ય ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરનાર, ધાર્મિકોનું પાલન કરનાર, પરમેશ્વરનો ઉપાસક અને સમસ્ત ગુણોથી સંપન્ન હોય, તે જ રાજા બનવા માટે યોગ્ય છે. (૧)

तत्स॑वि॒तुर्वरे॑ण्यं॒ भर्गो॑ दे॒वस्य॑ धीमहि। धियो॒ यो नः॑ प्रचो॒दया॑त्॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે नः-અમારી धियः-બુદ્ધિ વા કર્મોને प्रचोदयात्-પ્રેરિત કરે છે, તે सवितुः-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક, સમગ્ર ઐશ્વર્યના દાતા देवस्य-સુખ પ્રદાન કરનારા પરમેશ્વરના જે वरेण्यम्-ગ્રહણ-વરણ કરવા યોગ્ય અતિ ઉત્તમ भर्गः-દુઃખોને ભસ્મ કરનાર શુદ્ધ સ્વરૂપ છે; તેને જેમ અમે धीमहि-ધારણ કરીએ છીએ, તેમ तत्-તે ઈશ્વરના શુદ્ધ સ્વરૂપને તમે પણ ધારણ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વર જીવોને અશુભ આચરણથી નિવૃત્ત કરીને શુભ આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરે છે, તેમ રાજા પણ કરે.

જેમ પરમેશ્વર પ્રત્યે [પ્રજા] પિતાનો ભાવ રાખે છે, તેમ રાજા પ્રત્યે પણ રાખે. જેમ પરમેશ્વર જીવો પ્રત્યે પુત્ર ભાવથી વ્યવહાર કરે છે, તેમ રાજા પણ પ્રજા પ્રત્યે પુત્ર ભાવથી વ્યવહાર કરે.

જેમ પરમેશ્વર સર્વ દોષો, ક્લેશો અને અન્યાયોથી રહિત છે, તેમ જ રાજા પણ રહે. (૨)

विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रन्तन्न॒ऽआ सु॑व॥ ३॥

પદાર્થ : હે देव-દિવ્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવયુક્ત सवितः-ઉત્તમ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવમાં પ્રેરણા કરનારા પરમેશ્વર ! આપ અમારા विश्वानि-સર્વ दुरितानि-દુષ્ટ આચરણો વા દુઃખોને परा + सुव-દૂર કરો અને यत्-જે भद्रम्-ધર્માચરણ વા સુખ છે तत्-તેને नः-અમારા માટે आ + सुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જેમ ઉપાસના કરેલા પરમેશ્વર પોતાના ભક્તોને દુષ્ટ આચરણથી નિવૃત્ત કરીને શ્રેષ્ઠ આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરાવે છે, તેમ રાજા પણ પ્રજાને અધર્મથી નિવૃત્ત કરીને ધર્મમાં પ્રવૃત્ત કરે અને સ્વયં પણ તેમ જ કરે. (૩)

वि॒भ॒क्तार॑ꣳ हवामहे॒ वसो॑श्चि॒त्रस्य॒ राध॑सः। स॒वि॒तारं॑ नृ॒चक्ष॑सम्॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वसोः-સુખોના નિવાસ માટે, चित्रस्य-અદ્ભુત राधसः-ધનનો विभक्तारम्-વિભાગ કરનારા, सवितारम्-સર્વના ઉત્પાદક नृचक्षसम्-સર્વ મનુષ્યોના અન્તર્યામી સ્વરૂપથી સર્વ કાર્યોને જોનારા પરમાત્માની અમે हवामहे-પ્રશંસા કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ પ્રશંસા કરો. (૪)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ પરમેશ્વર સર્વ જીવોને તેઓના પોત-પોતાના કર્મોના અનુસાર ફળ આપે છે, તેમ આપ પણ પ્રદાન કરો.

જેમ જગદીશ્વર જેવા જેના કર્મ અને જેટલા પાપ તથા પુણ્ય છે તેટલું જ તેનું ફળ આપે છે, તેમ આપ પણ જેની જેટલી વસ્તુ અને જેવા કર્મ છે, તેટલી અને તેટલું જ ફળ તેને પ્રદાન કરો.

જેમ પરમેશ્વર પક્ષપાત રહિત સર્વ જીવો પ્રત્યે વર્તાવ કરે છે, તેમ આપ પણ કરો. (૪)

ब्रह्म॑णे ब्राह्म॒णं क्ष॒त्राय॑ राज॒न्यं॒ म॒रुद्भ्यो॒ वैश्यं॒ तप॑से शू॒द्रं तम॑से॒ तस्क॑रं ना॒रकाय॑ वीर॒हणं॑ पा॒प्मने॑ क्ली॒बमा॑क्र॒याया॑ऽअयो॒गूं कामा॑य पुँश्च॒लूमति॑क्रुष्टाय माग॒धम्॥ ५॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ આ જગતમાં ब्रह्मणे-વેદ, ઈશ્વર અને વિજ્ઞાનના પ્રચારને માટે ब्राह्मणं-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા બ્રાહ્મણને, क्षत्राय-રાજ્ય વા રક્ષાને માટે राजन्यम्-રાજપુત્ર = ક્ષત્રિયને मरुद्भ्यः-પશુ આદિ પ્રજાને માટે वैश्यम्-પ્રજામાં વર્તમાન વૈશ્યને, तपसे-સંતાપજન્ય સેવાને માટે शूद्रम्-પ્રીતિપૂર્વક સેવા કરનારા અને શુદ્ધિ કરનારા શૂદ્રને સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

तमसे-અંધકારમાં પ્રવૃત્ત तस्करम्-ચોરને, नारकाय-દુઃખરૂપ બંધન અર્થાત્ જેલને માટે वीरहणम्-વીરોને મારનારાને, पाप्मने-પાપાચરણમાં પ્રવૃત્ત, क्लीबम्-નપુંસકને, आक्रयायै-પ્રાણીઓના આક્રમણરૂપ હિંસાને માટે પ્રવૃત્ત अयोगूम-શસ્ત્ર-વિશેષની સાથે ગતિ કરનારાઓને कामाय-વિષય સેવન માટે પ્રવૃત્ત, पुंश्चलूम्-પુરુષોની સાથે ચલચિત્તવાળી વ્યભિચારિણી સ્ત્રીને, अतिक्रुष्टाय-અત્યંત નિદાન માટે પ્રવૃત્ત मागधम्-નીચ મનુષ્યને દૂર કરો. (૫)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ જગદીશ્વર પરોપકારને માટે જગતમાં પદાર્થોને ઉત્પન્ન કરે છે અને દોષોને દૂર કરે છે, તેમ તું આ રાજ્યમાં સજ્જનોની વૃદ્ધિ અને દુષ્ટોનો નિકાલ કર; દંડ આપ તથા તાડન કર. જેથી શુભ ગુણોની પ્રવૃત્તિ અને દુર્વ્યસનોની નિવૃત્તિ થાય. (૫)

नृ॒त्ताय॑ सू॒तं गी॒ताय॑ शैलू॒षं धर्मा॑य सभाच॒रं न॒रिष्ठा॑यै भीम॒लं न॒र्माय॑ रे॒भꣳ हसा॑य॒ कारि॑मान॒न्दाय॑ स्त्रीष॒खं प्र॒मदे॑ कुमारीपु॒त्रं मे॒धायै॑ रथका॒रं धैर्या॑य॒ तक्षा॑णम्॥ ६॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ नृत्ताय-નૃત્યને માટે सूतम्-ક્ષત્રિયથી બ્રાહ્મણીમાં ઉત્પન્ન સૂતને, गीताय-ગાવા માટે शैलूषम्-ગાયક નટને, धर्माय-ધર્મની રક્ષાને માટે सभाचरम्-સભામાં વિચરણ કરનાર સભાપતિને, नर्माय-કોમળતાને માટે रेभम्-સ્તુતિ કરનારને, आनन्दाय-આનંદ માણવા માટે स्त्रीषखम्-સ્ત્રીના મિત્ર પતિને, मेधायै-બુદ્ધિને માટે रथकारम्-વિમાન આદિના રચયિતા શિલ્પીને, धैर्याय-ધીરજને માટે तक्षाणम्-તક્ષક = સુથાર જે સૂક્ષ્મ કામ કરનારા છે તેને आ + सुव = સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

नरिष्ठायै-અત્યંત દુષ્ટ નર જે હિંસા માટે પ્રવૃત્ત, भीमलम्-ભયંકર વિષયોને ગ્રહણ કરનારાઓને, हसाय-હસવા માટે પ્રવૃત્ત થયેલા कारिम्-ઉપહાસ કરનારા તથા प्रमदे-પ્રમાદને માટે પ્રવૃત્ત कुमारीपुत्रम्-વિવાહ પૂર્વ વ્યભિચારથી ઉત્પન્ન કુમારીના પુત્રને परा + सुव-દૂર કરો. (૬)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ પરમેશ્વરના ઉપદેશથી અને રાજાની આજ્ઞાથી સર્વ શ્રેષ્ઠ ધાર્મિક જનોને ઉત્સાહિત કરવા જોઈએ. ઉપહાસ કરનાર [વ્યર્થ હસાવનાર] તથા ભય પેદા કરનારનું નિવારણ કરવું જોઈએ; અનેક સભાઓ બનાવીને બધી વ્યવસ્થા કરવી જોઈએ અને શિલ્પવિદ્યાની ઉન્નતિ કરવી જોઈએ. (૬)

तप॑से कौला॒लं मा॒यायै॑ क॒र्मार॑ꣳ रू॒पाय॑ मणिका॒रꣳ शु॒भे व॒पꣳ श॑र॒व्या॒याऽइषुका॒रꣳ हे॒त्यै धनुष्का॒रं कर्म॑णे ज्याका॒रं दि॒ष्टाय॑ रज्जुस॒र्जं मृ॒त्यवे॑ मृग॒युमन्त॑काय श्व॒निन॑म्॥ ७॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ तपसे-વાસણ પકવવા માટેની ભટ્ઠાની ગરમી ખમવા માટે कौलालम्-કુલાલ = કુંભાર પુત્રને, मायायै-બુદ્ધિને માટે कर्मारम्-ઉત્તમ સુશોભિત કામ કરનાર લુહારને, रूपाय-સુંદર સ્વરૂપ બનાવવા માટે मणिकारम्-ઝવેરીને शुभे-શુભ આચરણને માટે वपम्-ખેતરોમાં વાવવાવાળા ખેડૂતની સમાન વિદ્યા શુભ ગુણોને વાવનારને, शरव्यायै-શર = બાણ બનાવવા માટે इषुकारम्-બાણ બનાવનારને, हेत्यै-વજ્ર આદિ શસ્ત્રો બનાવવા માટે धनुष्कारम्-ધનુષ્ય આદિના કર્તાને, कर्मणे-ક્રિયાની સિદ્ધિને માટે ज्याकारम्-જ્યા = પ્રત્યંચા = પણછ કર્તાને, दिष्टाय-અતિ રચનાને માટે रज्जुसर्जम्-રજ્જુ = દોરી બનાવનારને आसुव-સર્વથી ઉત્પન્ન કરો. मृत्यवे-મૃત્યુ કરવા માટે પ્રવૃત્ત मृगयुम्-શિકારીને તથા अन्तकाय-અન્ત કરનારને માટે હિતકારી श्वनिनम्-અનેક શ્વા = કૂતરા પાળનારાને परा + सुव-દૂર કરો-જુદા વસાવો. (૭)

ભાવાર્થ : જેમ પરમેશ્વરની સૃષ્ટિમાં વિશિષ્ટ રચનાઓ જોવામાં આવે છે, તેમ રાજપુરુષોએ શિલ્પવિદ્યા દ્વારા સૃષ્ટિનાં દૃષ્ટાન્તથી વિશિષ્ટ રચનાઓ કરવી જોઈએ. હિંસક અને કૂતરાના પાળનારાઓ ચાંડાલ આદિને દૂર વસાવવા જોઈએ. (૭)

न॒दीभ्यः॑ पौञ्जि॒ष्ठमृ॒क्षीका॑भ्यो॒ नैषा॑दं पुरुषव्या॒घ्राय॑ दु॒र्मदं॑ गन्धर्वाप्स॒रोभ्यो॒ व्रात्यं॑ प्र॒युग्भ्य॒ऽउन्म॑त्तꣳ सर्पदेवज॒नेभ्यो॒ऽप्रति॑पद॒मये॑भ्यः कित॒वमी॒र्यता॑या॒ऽअकि॑तवं पिशा॒चेभ्यो॑ विदलका॒रीं या॑तु॒धाने॑भ्यः कण्टकीका॒रीम्॥ ८॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ नदीभ्यः-નદીઓના વિનાશ કે બગાડવામાં પ્રવૃત્ત पौञ्जिष्ठम्-

પુક્કસ = નીચ મનુષ્યને, ऋक्षीकाभ्यः-ઋક્ષા =ગતિ કરવાવાળી રીછણીઓને માટે પ્રવૃત્ત नैषादम्-નિષાદ = પારધીના પુત્રને, पुरुषव्याघ्राय-વ્યાઘ્રની સમાન હિંસક પુરુષને માટે હિતકારી, दुर्मदम्-દુષ્ટ અભિમાનીને, गन्धर्वाप्सरोभ्यः-ગંધર્વ = ગાવા અપ્સરા = નાચનારી સ્ત્રીઓને માટે પ્રવૃત્ત व्रात्यम्-સંસ્કારરહિત = અશુદ્ધ મનુષ્યને, प्रयुग्भ्यः-હળ જોડનાર અર્થાત્ પ્રયોગશીલ માટે પ્રવૃત્ત उन्मत्तम्-ઉન્માદના રોગી-ગાંડાને, सर्पदेवजनेभ्यः-સર્પ અને દેવજનોને માટે હિતકારી अप्रतिपदम्-અનિશ્ચિત બુદ્ધિ-સંશયાત્માવાળાને, अयेभ्यः-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદાર્થોને માટે પ્રવૃત્ત कितवम्-જુગારીને ईर्य्यतायै-કંપન = ભયને માટે પ્રવૃત્ત अकितवम्-જુગાર ન રમનારને, पिशाचेभ्यः-પિશિત = નાશ પામી છે જેની આશા તે હતાશ જનો અથવા પિશિત = રક્તસહિત કાચું માંસ ખાવા માટે પ્રવૃત્ત પિશાચીને માટે विदलकारीम्-માંસના પૃથક્-પૃથક્ ટુકડાઓ કરનારીને, यातुधानेभ्यः-યાતુઃ માર્ગોમાં ધન હરણ કરનારાઓને માટે પ્રવૃત્ત कण्टकीकारीम्-માર્ગોમાં કાંટા વાવનારીને परा + सुव-દૂર કરો-પૃથક્ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ પરમેશ્વર દુષ્ટોથી મહાત્માઓને દૂર વસાવે છે અને દુષ્ટ પરમેશ્વરથી દૂર રહે છે, તેમ તું દુષ્ટોથી દૂર રહે અને દુષ્ટોને પોતાથી દૂર રાખ અથવા ઉત્તમ શિક્ષા દ્વારા તેને સજ્જન = શ્રેષ્ઠ બનાવ. (૮)

सन्धये जारं गेहायोपपतिमार्त्यै परिवित्तं निर्ऋत्यै परिविविदानमराद्ध्याऽएदिधिषुःपतिं निष्कृत्यै पेशस्कारीᳬं संज्ञानाय स्मरकारीं प्रकामोद्यायोपसदं वर्णायानुरुधं बलायोपदाम्॥ ९॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા સભાપતિ રાજન્ ! આપ सन्धये-પરસ્ત્રી સમાગમને માટે પ્રવૃત્ત जारम्-વ્યભિચારીને, गेहाय-ગૃહપત્નીના સંગને માટે પ્રવૃત્ત उपपतिम्-પતિની વિદ્યમાનમાં બીજા વ્યભિચારી પતિને आर्त्यैः-કામક્રીડાને માટે પ્રવૃત્ત परिवित्तम्-નાના ભાઈના વિવાહ કરેલ છતાં અવિવાહિત મોટાભાઈને, निर्ऋत्यै-પૃથિવીને માટે પ્રવૃત્ત परिविविदानम्-મોટાભાઈ વારસાભાગને અપ્રાપ્ત તથા વારસાભાગને પ્રાપ્ત નાનાભાઈને, अराध्यै-અવિદ્યમાન પદાર્થને સિદ્ધ કરવા માટે પ્રવૃત્ત एदिधिषुःपतिम्-મોટી પુત્રી અવિવાહિત રહેવા છતાં નાની પુત્રીથી વિવાહ કરનાર પતિને, निष्कृत्यै-પ્રાયશ્ચિતને માટે પ્રવૃત્ત पेशस्कारीम्-રૂપ બનાવનારી વ્યભિચારિણીને सम्, ज्ञानाय-ઉત્કૃષ્ટ કામના પ્રબોધનને માટે પ્રવૃત્ત स्मरकारीम्-કામને ઉત્પન્ન કરનારી દૂતિકાને, प्रकामोद्याय-અત્યંત કામવાસનાઓથી ઉદ્યત મનુષ્યને માટે उपसदम्-સમીપ રહેનારા સાથીને, वर्णाय-સ્વીકાર કરવા માટે પ્રવૃત્ત अनुरुधम्-પાછળથી રોકનારાને बलाय-બળની વૃદ્ધિ માટે उपदाम्-ઉપદા = ભેટ = લાંચને परासुव-દૂર કરો. (૯)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ પરમેશ્વર વ્યભિચારી આદિ દુષ્ટોને દંડ આપે છે, તેમ તું તેને દંડ આપ [જેમ] પરમેશ્વર પાપનો ત્યાગ કરનાર પર કૃપા કરે છે, તેમ તું ધાર્મિકો પર કૃપા કર. (૯)

उत्सा॒देभ्यः॑ कु॒ब्जं प्र॒मुदे॑ वाम॒नं द्वा॒र्भ्यः स्रा॒मꣳ स्वप्ना॑या॒न्धमध॑र्माय बधि॒रं प॒वित्रा॑य भि॒षजं॑ प्र॒ज्ञाना॑य नक्षत्रद॒र्शमा॑शि॒क्षायै॑ प्र॒श्निन॑मुपशि॒क्षाया॑ऽअभिप्र॒श्निनं॑ म॒र्यादा॑यै प्रश्नविवा॒कम्॥ १०॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ उत्सादेभ्यः-નાશ કરવા માટે પ્રવૃત્ત कुब्जम्-વક્રાંગ = કૂબડાને = ઢૂંઢિયાને प्रमुदे-પ્રબલ કામાદિના આનંદને માટે वामनम्-ઠીંગણાને, द्वार्भ्यः-સુવર્ણ આચ્છાનને માટે પ્રવૃત્ત स्रामम्-જેના નેત્રથી નિરંતર જળ નીકળે તેને, स्वप्नाय-સૂવા માટે अन्धम्-અંધને તથા अधर्माय-ધર્માચરણથી રહિત बधिरम्-બહેરાને परासुव-દૂર-પૃથક્ કરો.

पवित्राय-રોગ નિવારણથી શુદ્ધિ કરવા માટે भिषजम्-વૈદ્યને, प्रज्ञानाय-ઉત્તમ જ્ઞાનની વૃદ્ધિને માટે नक्षत्रदर्शम्-નક્ષત્રોના દૃષ્ટાને અર્થાત્ તેના દ્વારા ઉત્તમ વિષયોને બતાવનાર ગણિતજ્ઞ જ્યોતિષીને, आशिक्षायै-સારી રીતે વિદ્યા ગ્રહણ કરવાને માટે प्रश्निनम्-પ્રશસ્ત પ્રશ્નકર્તાને, उपशिक्षायै-ઉપવેદ આદિની વિદ્યાને ગ્રહણ કરવા માટે अभि, प्रश्निनम्-સન્મુખ અનેક પ્રશ્ન કરનારને, मर्यादायै-ન્યાય-અન્યાયની વ્યવસ્થાને માટે प्रश्नविवाकम्-પ્રશ્નોનું વિવેચન કરી ઉત્તર આપનારને आसुव-ઉત્પન્ન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ ઈશ્વર પાપાચરણનાં ફળ પ્રદાન સ્વરૂપ મનુષ્ય આદિ કૂબડા, ઠીંગણા, ચિપડા [જલસ્રાવી નેત્રવાળા], આંધળા અને બહેરાં બનાવે છે, વૈદ્ય, જ્યોતિષી, અધ્યાપક, પરીક્ષક, પ્રશ્નોત્તરનું વિવેચન કરનારાઓને શ્રેષ્ઠ શ્રેષ્ઠ કર્મોના ફળ પ્રદાન સ્વરૂપ પવિત્રતા, બુદ્ધિ, વિદ્યાગ્રહણ, અધ્યાપન, પરીક્ષણ તથા પ્રશ્નોત્તર કરવાનું સામર્થ્ય પ્રદાન કરે છે, તેમ તું જે-જે અંગથી મનુષ્ય કુચેષ્ટા કરે છે, તે-તે અંગ ઉપર દંડ નિપાતન કરીને તથા વૈદ્ય આદિની પ્રતિષ્ઠા કરવા દ્વારા રાજધર્મની નિરંતર ઉન્નતિ કર. (૧૦)

अर्मे॑भ्यो हस्ति॒पं ज॒वाया॑श्व॒पं पुष्ट्यै॑ गोपा॒लं वी॒र्या॑यावि॒पा॒लं तेज॑सेऽजपा॒लमिरा॑यै की॒नाशं॑ की॒लाला॑य सुराका॒रं भ॒द्राय॑ गृह॒पꣳ श्रेय॑से वित्त॒धमाध्य॑क्ष्यायानु॒क्ष॒त्तार॑म्॥ ११॥

પદાર્થ : હે ઈશ્વર વા રાજન્ ! આપ अर्मेभ्यः-દેશાન્તરને પ્રાપ્ત કરાવવા માટે हस्तिपम्-હાથીઓના પાલકને, जवाय-વેગને માટે अश्वपम्-ઘોડાના રક્ષક વા શિક્ષકને, पुष्ट्यै-પુષ્ટિને માટે गोपालम्-ગાયોના પાલકને, वीर्याय-વીર્યની વૃદ્ધિને માટે अविपालम्-ઘેટાના રક્ષકને, तेजसे-તેજ વૃદ્ધિને માટે अजपालम्-બકરાઓના પાલકને, इरायै-અન્ન આદિની વૃદ્ધિને માટે कीनाशम्-ખેડૂતને, कीलालाय-અન્નને માટે सुराकारम्-સોમ ઔષધિના રસને બનાવનારને, भद्राय-કલ્યાણને માટે गृहपम्-ઘરના રક્ષકને, श्रेयसे-ધર્મ, અર્થ અને કામની પ્રાપ્તિને માટે वित्तधम्-ધન ધારણ કરનારને, आध्यक्ष्याय-અધ્યક્ષોના સ્વત્વને માટે अनुक्षत्तारम्-સારથિને અનુકૂળ મનુષ્યને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષોએ સુશિક્ષિત હાથી આદિના રક્ષક પુરુષનો સંગ્રહ કરીને તેના દ્વારા અનેક

વ્યવહારોની સિદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૧)

भायै दार्वाहारं प्रभायाऽअग्न्येधं ब्रध्नस्य विष्टपायाभिषेक्तारं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारं देवलोकाय पेशितारं मनुष्यलोकाय प्रकरितारꣳ सर्वेभ्यो लोकेभ्यऽउपसेक्तारमवऽऋत्यै वधायोपमन्थितारं मेधाय वासःपल्पूलीं प्रकामाय रजयित्रीम्॥ १२॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ भायै-દીપ્તિને માટે दार्वाहारम्-દારુ =લાકડા લાવનાર કઠિયારાને, प्रभायै-કાન્તિ-શોભાને માટે अग्न्येधम्-અગ્નિ અને ઈંધનને, ब्रध्नस्य-ઘોડાઓના विष्टपाय-માર્ગને માટે अभिषेक्तारम्-અભિષેક-રાજતિલક અથવા છંટકાવ કરનારને, वर्षिष्ठाय-અતિશ્રેષ્ઠ नाकाय-સર્વ દુઃખોથી રહિત સુખવિશેષને માટે परिवेष्टारम्-ભોજન પીરસનારને, देवलोकाय-વિદ્વાનોનાં દર્શનને માટે पेशितारम्-વિદ્યાના અવયવના જ્ઞાતાને, मनुष्यलोकाय-મનુષ્યતાનાં દર્શનના प्रकरितारम्-દોષોના વિક્ષેપ કરનારને, सर्वेभ्यः-સર્વ लोकेभ्यः-લોકોને માટે उपसेक्तारम्-ઉપસેચન કરનારને, मेधाय-સંગમને માટે वासःपल्पूलीम्-વસ્ત્રોને શુદ્ધ કરનારી ઔષધિને प्रकामाय-ઉત્તમ કામનાની સિદ્ધિને માટે रजयित्रीम्-વિવિધ ઉત્તમ રંગ કરનારી ઔષધિને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

अवऋत्यै-વિરુદ્ધ પ્રાપ્તિ = અનિષ્ટને માટે वधाय-વધ કરવાને પ્રવૃત્ત उपमन्थितारम्-તાડન આદિથી પીડા આપનાર દુષ્ટને અર્થાત્ સમીપમાં મંથન કરનાર મનુષ્યને परासुव-દૂર કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષ આદિ મનુષ્યોએ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાંથી સર્વ સામગ્રીઓ ગ્રહણ કરવી જોઈએ. તેના દ્વારા શરીરબળ, વિદ્યા અને ન્યાયનો પ્રકાશ, મહાન સુખ રાજ્યાભિષેક, દુઃખનો વિનાશ, વિદ્વાનોનો સંગ, મનુષ્ય સ્વભાવ, વસ્તુ આદિની પવિત્રતાને સિદ્ધ કરવી જોઈએ તથા વિરોધનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. (૧૨)

ऋतये स्तेनहृदयं वैरहत्याय पिशुनं विविक्त्यै क्षत्तारमौपद्रष्ट्र्यायानुक्षत्तारं बलायानुचरं भूम्ने परिष्कन्दं प्रियाय प्रियवादिनमरिष्ट्याऽअश्वसादꣳ स्वर्गाय लोकाय भागदुघं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम्॥ १३॥

પદાર્થ : હે પરમાત્મન્ વા રાજન્ ! આપ ऋतये-હિંસાને માટે પ્રવૃત્ત स्तेनहृदयम्-ચોરની સમાન છળ-કપટી તુલ્ય હૃદયવાળા મનુષ્યને, वैरहत्याय-વેર હત્યા જે કર્મમાં હોય તેને માટે પ્રવૃત્ત पिशुनम्-વિરુદ્ધ સૂચના આપનાર નિંદક-ચાડી ખાનારને परासुव-દૂર કરો.

विविक्त्यै-વિવેક કરવા માટે પ્રવૃત્ત क्षत्तारम्-ક્ષત = વિનાશના તારક ધર્માત્માને, औपद्रष्ट्र्याय-ઉપદ્રષ્ટાને માટે अनुक्षत्तारम्-ધર્માત્માનાં અનુકૂળ વર્તનારને, बलाय-બળને માટે अनुचरम्-સેવકને, भूम्ने-બહુ સંખ્યાને માટે परिष्कन्दम्-સર્વત્રથી વીર્યનું સિંચન કરનારને, प्रियाय-પ્રીતિને માટે प्रियवादिनम्-પ્રિયવાદીને, अरिष्ट्यै-કુશળ પ્રાપ્તિને માટે अश्वसादम्-ઘોડેસવારને, स्वर्गाय-સુખવિશેષ लोकाय-દર્શન

વા સંચય કરવા માટે भागदुधम्-ભાગોને પૂર્ણ કરનારને, वर्षिष्ठाय-અતિશ્રેષ્ઠ नाकाय-સર્વ દુઃખોથી રહિત આનંદને માટે परिवेष्टारम्-સર્વત્રથી વિદ્યાથી વ્યાપ્ત વિદ્વાનને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ મનુષ્યોએ દુષ્ટોનો સંગ છોડીને, શ્રેષ્ઠોનો સંગ કરીને, વિવેક આદિ ગુણોને ઉત્પન્ન કરીને સુખી બનવું જોઈએ. (૧૩)

म॒न्यवेऽयस्ता॒पं क्रोधा॑य निस॒रं योगा॑य यो॒क्तार॑ꣳ शोका॑याऽभिस॒र्त्तारं॑ क्षेमा॑य विमो॒क्तार॑मुत्कूलनिकू॒लेभ्य॑स्त्रि॒ष्ठिनं॒ वपु॑षे मानस्कृ॒तꣳ शीला॑याञ्जनीका॒रीं निर्ऋ॑त्यै कोशका॒रीं य॒माया॒सूम्॥ १४॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ मन्यवे-આંતરિક ક્રોધને માટે પ્રવૃત્ત अयस्तापम्-લોખંડ અને સુવર્ણને તપાવનારને, क्रोधाय-બાહ્ય ક્રોધને માટે પ્રવૃત્ત निसरम्-નિશ્ચય યાત્રા કરનારને, शोकाय-શોકને માટે પ્રવૃત્ત अभिसर्त्तारम्-અભિસારકને, यमाय-દંડ આપવા પ્રવૃત્ત થયેલા असूम्-ક્રોધથી હાથ આદિ અહીં-તહીં મારનાર સ્ત્રીને परासुव-દૂર કરો.

योगाय-યોગાભ્યાસને માટે પ્રવૃત્ત योक्तारम्-યોગીને, क्षेमाय-રક્ષાને માટે પ્રવૃત્ત विमोक्तारम्-દુઃખથી છોડાવનારને, उत्कूलनिकूलेभ्यः-ઊંચા-નીચા કિનારા પર ચઢાવવા-ઉતારવા માટે त्रिष्ठिनम्-જળ, સ્થળ અને અન્તરિક્ષ ત્રણેયમાં રહેનારા વિમાનાદિ યાનોથી યુક્ત પુરુષને, वपुषे-શરીરના હિતને માટે मानस्कृतम्-મનથી કરેલ વિચારોમાં કુશળ મનુષ્યને, शीलाय-જિતેન્દ્રિયતા આદિ ઉત્તમ સ્વભાવવાળાને માટે आञ्जनीकारीम्-પ્રસિદ્ધ ક્રિયા કરનારી સ્ત્રીને निर्ऋत्यै-ભૂમિને માટે कोशकारीम्-કોશ ઉત્પન્ન કરનારી સ્ત્રીને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે રાજા આદિ મનુષ્યો ! જે તપેલા લોઢાની સમાન ક્રોધી, બીજાઓને દુઃખ આપનાર અને ધાર્મિક નિયમોનો નાશ કરનારા હોય, તેને દંડિત કરીને, યોગાભ્યાસી આદિ જનોનો સત્કાર કરીને તથા સર્વત્ર યાન ચલાવનારનો સંગ્રહ કરીને તમારે યથારીતિ સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૪)

य॒माय॑ यम॒सूमथ॑र्व॒भ्योऽव॑तोकाꣳ संवत्स॒राय॑ पर्या॒यिणीं॑ परिवत्स॒राया-विजातामिदावत्स॒राया॒तीत्व॑रीमिद्वत्स॒राया॑ति॒ष्कद्व॑रीं वत्स॒राय॒ विज॑र्जराꣳ संवत्स॒राय॒ पलि॑क्नीमृ॒भुभ्यो॑ऽजिनस॒न्धꣳ सा॒ध्येभ्य॑श्चर्म॒म्नम्॥ १५॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ यमाय-નિયમકર્તાને માટે यमसूम्-નિયંતાને ઉત્પન્ન કરનારી સ્ત્રીને, अथर्वभ्यः-અહિંસકોને માટે अवतोकाम्-જેના સંતાન બહાર નીકળી ગયા છે તે સંતાનરહિત સ્ત્રીને, संवत्सराय-પ્રથમ વર્ષને માટે पर्यायिणीम्-સર્વત્રથી કાલ ક્રમને જાણનારીને परिवत्सराय-દ્વિતીયવર્ષના નિર્ણયને માટે अविजाताम्-અપ્રસૂતા બ્રહ્મચારિણીને, इदावत्सराय-તૃતીય વર્ષમાં કાર્ય સિદ્ધિને માટે अतीत्वरीम्-અત્યંત ચાલનારીને, इद्वत्सराय-પાંચમા વર્ષને માટે अतिष्कद्वरीम्-અતિજ્ઞાનવાળીને वत्सराय-

સામાન્ય વર્ષને માટે विजर्जराम्-વૃદ્ધા સ્ત્રીને, संवत्सराय-ચોથા વર્ષને માટે पलिक्नीम्-સફેદ વાળવાળીને, ऋभुभ्यः-બુદ્ધિમાનોને માટે अजिनसन्धम्-અજેય લોકોની સાથે સંધિ કરનારને, साध्येभ्यः-સાધ્ય યોગ્ય કાર્યોને માટે चर्मम्नम्-ચર્મ = વિજ્ઞાનનો અભ્યાસ કરનાર પુરુષને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : પ્રભવ આદિ સાઠ સંવત્સરો - વર્ષોમાં પાંચ-પાંચ કરીને બાર યુગ બને છે. પ્રત્યેક યુગમાં ક્રમથી સંવત્સર, પરિવત્સર, ઇદાવત્સર, અનુવત્સર તથા ઈદ્વત્સર એ પાંચ નામોવાળા પાંચ વર્ષના હોય છે. કાળનાં સમસ્ત અવયવોનાં મૂળભૂત તે વર્ષોને જાણીને વિશેષ રૂપથી જે સ્ત્રીઓ વ્યર્થ [સમય] ગુમાવતી નથી, તે સર્વ પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરી લે છે. (૧૫)

सरोभ्यो धैवरमुपस्थावराभ्यो दाशं वैशन्ताभ्यो बैन्दं नड्वलाभ्यः शौष्कलं पाराय मार्गारमवाराय कैवर्त्तं तीर्थेभ्यऽआन्दं विषमेभ्यो मैनालꣳ स्वनेभ्यः पर्णकं गुहाभ्यः किरातꣳ सानुभ्यो जम्भकं पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥ १६॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ सरोभ्यः-મોટા તળાવોને પાર કરવા માટે धैवरम्-ધીવર = નાવિક = ખલાસીના પુત્રને, उपस्थावराभ्यः-ઉપસ્થિત અવર = નિષ્કૃટ ક્રિયાઓને માટે दाशम्-દાસને वैशन्ताभ्यः-વેશન્ત = નાના જલાશયોને માટે वैन्दम्-નિષાદ = ભીલના પુત્રને, नड्वलाभ्यः-નડ = ઘાસ વિશેષવાળી ભૂમિઓને માટે शौष्कलम्-માછલી પર જીવનારાને, विषमेभ्यः-વિકટ દેશોને માટે मैनालम्-મૈન = કામદેવને રોકનાર જિતેન્દ્રિયને, अवाराय-પોતાની તરફ આવનારને માટે कैवर्त्तम्-જલમાં નાવને આરપાર લઈ જનાર-નાવિકને, तीर्थेभ्यः-પાર કરવાના સાધનો માટે आन्दम्-પુલ આદિ બાંધનારાને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

पाराय-હરણ આદિની ચેષ્ટાની સમાપ્તિ માટે પ્રવૃત્ત, मार्गारम्-શિકારીના પુત્રને, स्वनेभ्यः-શબ્દોને માટે पर्णकम्-રક્ષા કરવામાં નિંદિત ભીલને, गुहाभ्यः-કંદરા-ગુફાઓને માટે किरातम्-કિરાત = પહાડી જંગલી જનવિશેષને, सानुभ्यः-શિખરો પર રહેવાને માટે પ્રવૃત્ત जम्भकम्-નાશ કરનારને, पर्वतेभ्यः-પર્વતોને માટે किम्पूरुषम्-જંગલી કુત્સિત મનુષ્યોને परासुव-દૂર કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ, સ્વભાવોને અનુકૂળ કર્મોથી નાવિક આદિ લોકોની રક્ષા કરીને તથા શિકારી આદિ લોકોનો પરિત્યાગ કરીને ઉત્તમ સુખ પ્રાપ્ત કરે. (૧૬)

बीभत्सायै पौल्कसं वर्णाय हिरण्यकारं तुलायै वाणिजं पश्चादोषाय ग्लाविनं विश्वेभ्यो भूतेभ्यः सिध्मलं भूत्यै जागरणमभूत्यै स्वपनमार्त्यै जनवादिनं व्यृद्ध्याऽअपगल्भꣳ सꣳशराय प्रच्छिदम्॥ १७॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ बीभत्सायै-ધમકાવવા માટે પ્રવૃત્ત पौल्कसम्-અંત્યજના પુત્રને, पश्चादोषाय-પાછળથી દોષ દેવામાં પ્રવૃત્ત ग्लाविनम्-ગ્લાનિ કરનારાને, अभूत्यै-અનૈશ્વર્યને માટે

स्वपनम्-નિદ્રાને व्यृद्ध्यै-સમૃદ્ધિના અભાવને માટે अपगल्भम्-પ્રગલ્ભતા રહિતને, संशराय-સમ્યક્ હિંસાને માટે પ્રવૃત્ત प्रच्छिदम्-અધિક છેદન કરનારને परासुव-દૂર કરો.

वर्णाय-સુરૂપ બનાવવા માટે हिरण्यकारम्-સોની અથવા સૂર્યને तुलायै-તોલવા માટે वाणिजम्-વાણિયાના પુત્રને, विश्वेभ्यः-સર્વ भूतेभ्यः-પ્રાણીઓને માટે सिध्मलम्-સુખસાધકવાળા જનને, भूत्यै-ઐશ્વર્યને માટે जागरणम्-જાગરણને, आर्त्यै-પીડાની નિવૃત્તિને માટે जनवादिनम्-મનુષ્યોની પ્રશંસાને યોગ્ય વાદવિવાદ કરનારા ઉત્તમ મનુષ્યને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો નીચનો સંગ છોડીને ઉત્તમોનો સંગ કરે છે, તેઓ સમસ્ત વ્યવહારોની સિદ્ધિથી ઐશ્વર્યવાન બની જાય છે. જે આળસરહિત બનીને સિદ્ધિને માટે પ્રયત્ન કરે છે તે સુખને તથા જે આળસુ છે, તે દરિદ્રતાને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૭)

अक्षराजाय कितवं कृतायादिनवदर्शं त्रेतायै कल्पिनं द्वापरायाधिकल्पिनमास्कन्दाय सभास्थाणुं मृत्यवे गोव्यच्छमन्तकाय गोघातं क्षुधे यो गां विकृन्तन्तं भिक्षमाणऽउप तिष्ठति दुष्कृताय चरकाचार्यं पाप्मने सैलगम्॥ १८॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા રાજન્ ! આપ अक्षराजाय-अक्ष = પાસાથી રમનારાના રાજાને માટે હિતકારી कितवम्-જુગાર રમનારાઓને, मृत्यवे-મારવા માટે गोव्यच्छम्-ગાયોમાં વિવિધ ચેષ્ટા કરનારને, अन्तकाय-નાશને માટે गोघातम्-ગાયોના ઘાતકને, क्षुधे-ભૂખને માટે यः-જે गाम्-ગાયોને કાપે છે તે विकृन्तन्तम्-કસાઈને, જે भिक्षमाणः-ભીખ માગતા उपतिष्ठति-ઉપસ્થિત થાય છે તે दुष्कृताय-દુષ્ટ આચરણને માટે પ્રવૃત્ત चरकाचार्यम्-ચરક = ભક્ષણ કરનારના ગુરુને, पाप्मने-પાપાત્માને માટે હિતકારી सैलगम्-દુષ્ટનના પુત્રને परासुव-દૂર કરો.

कृताय-કરેલાને [કૃત = સતયુગને] માટે आदिनवदर्शम्-આદિમાં નવીન પુરુષોને જોનારને, त्रेतायै-ત્રણ હોવાને [ત્રેતાને] માટે कल्पिनम्-પ્રશંસનીય સામર્થ્યવાનને, द्वापराय-જેના અહીં બે સંબંધી છે તેના માટે [દ્વાપરને માટે] अधिकल्पिनम्-અધિકતર સામર્થ્યયુક્તને, आस्कन्दाय-દુષ્ટોના સર્વત્રથી શોષણને માટે सभास्थाणुम्-સભામાં સ્થિત પુરુષને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે જ્યોતિષ શાસ્ત્રના જ્ઞાતા આદિ સત્ય આચરણવાળા વિદ્વાનોનો સત્કાર કરે છે અને ગાયોના ઘાતક આદિ દુષ્ટ આચરણવાળા લોકોનું તાડન કરે છે, તેઓ રાજ્ય કરવાને સમર્થ બને છે. (૧૮)

प्रतिश्रुत्कायाऽअर्त्तनं घोषाय भषमन्ताय बहुवादिनमनन्ताय मूकꣳ शब्दायाडम्बराघातं महसे वीणावादं क्रोशाय तूणवध्ममवरस्पराय शङ्खध्मं वनाय वनपमन्यतोरण्याय दावपम्॥ १९॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ प्रतिश्रुत्कायै-પ્રતિજ્ઞા કરનારી સ્ત્રીને માટે अर्त्तनम्-વિદ્યા પ્રાપ્ત કરાવનારને, घोषाय-ઘોષણાને માટે भषम्-ઉદ્ઘોષકને, अन्ताय-સમીપવર્તી અથવા સસીમને માટે बहुवादिनम्-અધિક બોલનારને, अनन्ताय-અસીમને માટે मूकम्-વાણી રહિતને, महसे-મહાનને માટે वीणावादं-વીણા વગાડનારને, अवरस्पराय-અવરવર્તી લોકોથી પરવર્તી પુરુષને માટે शङ्खध्मम्-શંખ વગાડનારને, वनाय-વનને માટે वनपम्-વનના રક્ષકને, आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

शब्दाय-શબ્દ કરવા માટે પ્રવૃત્ત आडम्बराघातम्-શોરબકોર કરનારને, क्रोशाय-રડવા માટે પ્રવૃત્ત तूणवध्मम्-તૂણવ = વાજિંત્ર વિશેષ વગાડનારને, अन्यतोरण्याय-અન્ય અર્થાત્ ઈશ્વરીય સૃષ્ટિથી જ્યાં વન હોય તે દેશના વિનાશને માટે પ્રવૃત્ત दावपम्-વનના બાળનારને परासुव-દૂર કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પોતાના સ્ત્રી-પુરુષો આદિની સાથે અધ્યાપન અને સંવાદ આદિ વ્યવહારો સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૧૯)

न॒र्माय॑ पुँश्च॒लूꣳ हसा॑य॒ कारिं॒ यादसे शाब॒ल्यां ग्रा॑म॒ण्यं॒ गण॑कमभिक्रोश॑कं॒ तान्मह॑से वीणावा॒दं पा॑णिघ्नं तू॒णव॒ध्मं तान्नृ॒त्तायान॒न्दाय॑ तल॒वम्॥ २०॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ नर्माय-ક્રીડાને માટે પ્રવૃત્ત पुँश्चलूम्-વ્યભિચારિણી સ્ત્રીને, हसाय-હસવાને પ્રવૃત્ત થયેલને कारिम्-વિક્ષિપ્ત પાગલને, यादसे-જલ-જંતુઓને મારવાને માટે પ્રવૃત્ત शाबल्याम्-શબલ = કાબરા વર્ણના મનુષ્યની પુત્રીને परासुव-દૂર કરો.

ग्रामण्यम्-ગ્રામના નાયક, गणकम्-ગણિતના જ્ઞાતા-જ્યોતિષી, अभिक्रोशकम्-સર્વત્રથી આહ્વાન કરનારા तान्-જનોને महसे-સત્કારને માટે, वीणावादम्-વીણા વગાડનાર, पाणिघ्नम्-બન્ને હાથોથી ઢોલક વગેરે વગાડનાર, तूणवध्मम्-તૂણવ નામક વાજિંત્ર વગાડનાર तान-જનોને नृत्ताय-નાચને માટે, आनन्दाय-આનંદને માટે तलवम्-તાળી આદિ પાડનારને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન વા પ્રસિદ્ધ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ ખરાબ હાસ્ય અને વ્યભિચાર આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને, ગાવું, વગાડવું અને નૃત્ય આદિની શિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૨૦)

अ॒ग्नये॒ पीवा॑नं पृथि॒व्यै पी॑ठस॒र्पिणं॑ वा॒यवे॑ चाण्डा॒लम॒न्तरि॑क्षाय वꣳशन॒र्त्तिनं॑ दि॒वे खल॑तिꣳ सूर्या॑य हर्य॒क्षं नक्ष॑त्रेभ्यः किर्मि॒रं च॒न्द्रम॑से किलास॒मह्ने॑ शु॒क्लं पि॑ङ्गाक्षꣳ रात्र्यै॑ कृ॒ष्णं पि॑ङ्गा॒क्षम्॥ २१॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા રાજન્ ! આપ अग्नये-અગ્નિને માટે पीवानम्-સ્થૂળ પદાર્થને, पृथिव्यै-પૃથિવીને માટે पीठसर्पिणम्-પગ વિના ચાલનારા-પૃષ્ઠથી સરકનારા સર્પ આદિને, अन्तरिक्षाय-સૂર્ય અને પૃથિવીની મધ્યમાં રહેલ આકાશને માટે वंशनर्त्तिनम्-વાંસ પર નાચનાર નટને, सूर्याय-સૂર્યનો તાપ

અને પ્રકાશ મળવા માટે हर्य्यक्षम्-હરિ = વાંદરાની નાની આંખોની સમાન ઠંડા પ્રદેશના મનુષ્યોને, चन्द्रमसे-ચંદ્રમાની સમાન આનંદ આપવા માટે किलासम्-અલ્પ શ્વેત વર્ણવાળાને, अह्ने-દિવસને માટે शुक्लम्-શુદ્ધ = શ્વેત અને पिङ्गाक्षम्-પીંગળી આંખોવાળાને आसुव-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો.

वायवे-વાયુના સ્પર્શ માટે चाण्डालम्-ચાંડાળને, दिवे-ક્રીડાને માટે પ્રવૃત્ત खलतिम्-માથામાં ટાલવાળાને, नक्षत्रेभ्यः-રાજ્ય વિરોધને માટે પ્રવૃત્ત જનોને માટે किर्मिरम्-કાબરા રંગવાળાને, रात्र्यै-રાત્રિને માટે कृष्णम्-કાળા રંગવાળાને તથા पिङ्गाक्षम्-પીંગળી આંખોવાળાને परासुव-દૂર કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : અગ્નિ સ્થૂળને બાળી શકે છે, સૂક્ષ્મને નહિ. પૃથિવી પર પીઠ પર સરકનારા સર્પ આદિ નિરંતર વિચરે છે, અન્ય પક્ષી આદિ નહિ. ચાંડાલના શરીરથી આવેલો વાયુ દુર્ગંધયુક્ત હોવાથી સેવન કરવા યોગ્ય હોતો નથી. (૨૧)

अथैतानष्टौ विरूपाना लभतेऽतिदीर्घं चातिह्रस्वं चातिस्थूलं चातिकृशं चातिशुक्लं चातिकृष्णं चातिकुल्वं चातिलोमशं च। अशूद्राऽअब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः। मागधः पुँश्चली कितवः क्लीबोऽशूद्राऽअब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः ॥ २२ ॥

પદાર્થ : હે રાજા લોકો ! જેમ વિદ્વાન્ अतिदीर्घम्-અતિ લાંબા च-અને अतिह्रस्वम्-અતિ ઠીંગણા च-અને अतिस्थूलम्-અતિ જાડા च-અને अतिकृशम्-અતિ પાતળા च-અને अतिशुक्लम्-અતિ ગૌર - શ્વેતવર્ણ च-અને अतिकृष्णम्-અતિ કાળા च-અને अतिकुल्वम्-લોમરહિત = શરીર પર રૂંવાડા વગરના च-અને अतिलोमशम्-અત્યંત લોમયુક્ત [અર્થાત્ સર્વાંગમાં તથા કર્ણ આદિ અંગ-પ્રત્યાંગો પર અતિ રૂંવાડાવાળા] च-પણ एतान्-એ विरूपान्-વિવિધ સ્વરૂપવાળા अष्टौ-આઠ પ્રાણીઓને आलभते-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો.

अथ-અને अशूद्राः-શૂદ્ર નહિ, अब्राह्मणाः-બ્રાહ્મણ નહિ તેઓ प्राजापत्याः-પ્રજાપતિ દેવતાના ગુણોથી યુક્ત છે ते-તેઓ પણ પ્રાપ્ત કરે.

જે मागधः-મનુષ્યોમાં નિંદિત-નીચ पुंश्चली-પુરુષોની સાથે ચંચળ ચિત્તવાળી વ્યભિચારિણી, कितवः-જુગારી, क्लीबः-નપુંસક છે તથા अशूद्राः-જેનામાં શૂદ્ર નથી તથા अब्राह्मणाः-બ્રાહ્મણ નથી. તે ચાંડાલોને દૂર વસાવવા જોઈએ. જે प्राजापत्याः-રાજા વા ઈશ્વરના સંબંધી અર્થાત્ પ્રજાપતિના ગુણોથી યુક્ત છે, ते-તેઓને સમીપમાં વસાવવા જોઈએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાનો સૂક્ષ્મ અને વિશાળ પદાર્થોને જાણીને યથાયોગ્ય વ્યવહારને સિદ્ધ કરે છે, તેમ અન્ય લોકો પણ સિદ્ધ કરે.

સર્વ લોકોએ પ્રજાપતિ ઈશ્વરની ઉપાસના નિત્ય કરવી જોઈએ. (૨૨)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમેશ્વરનું સ્વરૂપ તથા રાજાના કૃત્યોનું વર્ણન હોવાથી

આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયની સાથે સંગતિ છે. તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति त्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथैकत्रिंशत्तमाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

स॒हस्र॑शीर्षा॒ पुरु॑षः सहस्रा॒क्षः स॒हस्र॑पात्।

स भूमि॑ꣳ स॒र्वत॑ स्पृ॒त्वाऽत्य॑तिष्ठद्दशाङ्गु॒लम्॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सहस्रशीर्षा-સર્વ પ્રાણીઓનાં સહસ્ર = અસંખ્ય શિર છે, सहस्राक्षः-સહસ્ર = અસંખ્ય નેત્રો છે અને सहस्रपात्-અસંખ્ય પાદ = પગ જેની મધ્યમાં છે, તે पुरुषः-સર્વત્ર પરિપૂર્ણ વ્યાપક જગદીશ્વર છે.

सः-તે सर्वतः-સર્વ દેશોથી भूमिम्-ભૂગોળને स्पृत्वा-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરીને दशाङ्गुलम्-પાંચ સ્થૂલભૂત અને પાંચ સૂક્ષ્મભૂત અર્થાત્ દશ અંગુલિઓ = અવયવવાળા જગતનું अति + अतिष्ठत्-ઉલ્લંઘન કરીને સ્થિત છે, અર્થાત્ સર્વથી પૃથક્ પણ સ્થિર છે. તે જગદીશ્વરની ઉપાસના કરો. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જે [પુરુષ =] પૂર્ણ પરમાત્મામાં અમારા સર્વનાં અસંખ્ય શિર, નેત્ર અને પગ આદિ અંગો વિદ્યમાન છે, જે ભૂમિ આદિથી સંકેતિત પાંચ સ્થૂલ અને પાંચ સૂક્ષ્મભૂતોથી યુક્ત સંસારને પોતાની સત્તાથી પરિપૂર્ણ કરીને, જ્યાં સંસાર નથી, ત્યાં પણ પૂર્ણ છે.

તે સર્વના નિર્માણકર્તા પરિપૂર્ણ, સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ, નિત્ય-શુદ્ધ-બુદ્ધ-મુક્તસ્વભાવવાળા પરમેશ્વરને છોડીને અન્યની ઉપાસના તમે કદી પણ ન કરો, પરંતુ તે ઈશ્વરની ઉપાસનાથી ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષને પ્રાપ્ત કરો. (૧)

पुरु॑षऽए॒वेदꣳ सर्वं॒ यद् भू॒तं यच्च॑ भा॒व्यम्।

उ॒ताමृ॑त॒त्वस्येशा॑नो॒ यदन्ने॑नाति॒रोह॑ति॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्-જે भूतम्-ઉત્પન્ન થયેલું च-અને यत्-જે भाव्यम्-ભવિષ્યમાં ઉત્પન્ન થશે, उत-અને यत्-જે अन्नेन-પૃથિવી આદિના સંબંધથી अतिरोहति-અત્યંત વિસ્તૃત છે, તે इदम्-પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષરૂપ सर्वम्-સમસ્ત જગતને अमृतत्वस्य-અવિનાશી મોક્ષસુખના તથા કારણ = પ્રકૃતિના ईशानः-અધિષ્ઠાતા पुरुषः-સત્ય ગુણ, કર્મ, સ્વભાવોથી પરિપૂર્ણ પરમાત્મા एव-જ રચે છે. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરે જ્યારે-જ્યારે સૃષ્ટિ બની ત્યારે-ત્યારે [તેને] રચી છે, વર્તમાનમાં તેને ધારણ કરી રહેલ છે, ફરી તેનો સંહાર કરીને રચશે, જેના આધારથી સર્વ વિદ્યમાન છે અને વૃદ્ધિ પામે છે, તે પરેશ = સર્વશ્રેષ્ઠ અધિષ્ઠાતા પરમેશ્વરની તમે ઉપાસના કરો. તેના સિવાય બીજા કોઈની નહિ. (૨)

एतावा॑नस्य महि॒मातो॒ ज्यायाँ॑श्च॒ पूरु॑षः।
पादो॑ऽस्य॒ विश्वा॑ भू॒तानि॑ त्रि॒पाद॑स्या॒मृतं॑ दि॒वि॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! अस्य-એ પરમેશ્વર જગદીશ્વરનું एतावान्-આ દૃશ્ય-અદૃશ્ય બ્રહ્માંડ महिमा-મહિમાસૂચક છે अतः-એ બ્રહ્માંડથી એ पूरुषः-પરિપૂર્ણ પરમાત્મા ज्यायान्-અતિ પ્રશંસિત અને મહાન છે; च-અને अस्य-એ જગદીશ્વરના विश्वा-સર્વ भूतानि-પૃથિવી આદિ ચરાચર જગત એ पादः-અંશની સમાન છે; अस्य-એ જગત્ સ્રષ્ટાના त्रिपाद्-ત્રણ પગ-અંશ अमृतम्-નાશરહિત છે, જે दिवि-દ્યોતનાત્મક = પ્રકાશાત્મક સ્વસ્વરૂપમાં વિદ્યમાન રહે છે. (૩)

ભાવાર્થ : આ સમસ્ત સૂર્ય અને ચંદ્ર આદિ લોકલોકાન્તરરૂપ ચરાચર જગત છે, તે ચિત્ર-વિચિત્ર રચનાઓનાં અનુમાનથી ઈશ્વરનાં મહત્ત્વનું પ્રતિપાદન કરીને, ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલયનાં રૂપથી ત્રણેય કાળમાં હ્રાસ અને વૃદ્ધિ આદિના દ્વારા પરમેશ્વરના ચતુર્થ અંશમાં રહે છે; [પરંતુ] એ [ઈશ્વર]ના ચતુર્થ અંશની સીમા સુધી પણ પહોંચી શકતું નથી.

એના સામર્થ્યના ત્રણ ભાગ પોતાના અવિનાશી મોક્ષસ્વરૂપમાં સદા વર્તમાન રહે છે. આ કથનથી તે [ઈશ્વર] ની અનન્તતાની હાનિ થતી નથી. પરંતુ જગતની અપેક્ષાએ તેની મહત્તા અને [તેની અપેક્ષા] જગતની ન્યૂનતા બતાવે છે. (૩)

त्रि॒पादू॒र्ध्व उदै॒त्पुरु॑षः पादो॑ऽस्ये॒हाभ॑व॒त्पुनः॑।
ततो॒ विष्व॒ङ् व्य॑क्रामत्साशनानश॒ने ऽअ॒भि॥ ४॥

પદાર્થ : પૂર્વોક્ત त्रिपात्-ત્રણ અંશોવાળા पुरुषः-પાલક પરમેશ્વર ऊर्ध्वः-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ સંસારથી પૃથક્ મુક્તિસ્વરૂપમાં उत्, ऐत्-ઉદયને પ્રાપ્ત થાય છે.

अस्य-એ પુરુષનો पादः-એક ભાગ इह-આ જગતમાં पुनः-વારંવાર ઉત્પત્તિ અને પ્રલયનાં ચક્રથી अभवत्-પ્રકટ થાય છે. ततः-ત્યાર પછી साशनानशने-શાસન =ભોજન કરનારા ચેતન પ્રાણી, અનશન= ભોજન ન કરનારા અપ્રાણી - જડ એ બે પ્રકારનાં જગતને अभि-પ્રતિ विष्वङ्-સર્વત્ર પ્રાપ્ત થતાં वि + अक्रामत्-તેને વિશેષરૂપથી વ્યાપ્ત થાય છે.

ભાવાર્થ : એ પરમેશ્વર કાર્યજગતથી પૃથક્ ત્રણ અંશથી પ્રકાશિત થઈને પોતાના સામર્થ્યથી એક અંશ [ચતુર્થાંશ] = સંપૂર્ણ જગતને વારંવાર ઉત્પન્ન કરે છે. તત્પશ્ચાત્ એ ચર =ચેતન અને અચર =જડ જગતમાં વ્યાપ્ત બનીને રહે છે. (૪)

ततो॑ वि॒राड॑जायत वि॒राजो॒ऽअधि॒ पूरु॑षः।
स जा॒तोऽ अत्य॑रिच्यत प॒श्चाद् भूमि॒मथो॑ पु॒रः॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ततः-તે સનાતન પૂર્ણ પરમાત્માથી विराट्-વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોથી પ્રકાશમાન

વિરાટ બ્રહ્માંડરૂપ સંસાર अजायत-ઉત્પન્ન થાય છે. विराजः-તે વિરાટ સંસારના अधि-સર્વોપરિ અધિષ્ઠાતા पूरुषः-પરિપૂર્ણ પરમાત્મા છે. अथो-અને सः-તે પુરુષ पुरः-પ્રથમથી વર્તમાન, जातः-પ્રાદુર્ભૂત = પ્રસિદ્ધ તથા अति + अरिच्यत-જગતથી પૃથક્ રહે છે, पश्चात्-પછી भूमिम्-પૃથિવીને ઉત્પન્ન કરે છે; તેને જાણો.

ભાવાર્થ : પરમેશ્વરથી જ સર્વ સમષ્ટિ = સંઘાતરૂપ જગત ઉત્પન્ન થાય છે અને તે તેનાથી પૃથક્ રહીને અર્થાત્ તેમાં વ્યાપ્ત થઈને પણ પાપવિકારથી અલિપ્ત રહીને સર્વના અધિષ્ઠાતા છે. આ રીતે સામાન્યરૂપથી સંસારની રચનાનું કથન કરીને વિશેષરૂપથી ભૂમિ આદિનો નિર્માણક્રમ કહેવામાં આવે છે. (૫)

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! तस्मात्-તે પૂર્વોક્ત सर्वहुतः-સર્વથી ગ્રહણ કરવાને યોગ્ય यज्ञात्-પૂજનીય પુરુષ-પરમાત્માથી સર્વ पृषदाज्यम्-દહીં આદિ ભોજ્ય વસ્તુઓ सम्भृतम्-સમ્યક્ સિદ્ધ થયેલી છે. ये-જે आरण्याः-વનના સિંહ આદિ च-અને ग्राम्याः-ગામમાં રહેનાર ગાય આદિ પશુઓ છે; तान्-તે वायव्यान्-વાયુ સમાન ગુણવાન पशून्-પશુઓને चक्रे-ઉત્પન્ન કરે છે; તેને તમે જાણો.

ભાવાર્થ : સર્વના દ્વારા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય જે પૂજ્ય જગદીશ્વરે સંપૂર્ણ સંસારનાં હિતને માટે દહીં આદિ ભોજ્ય પદાર્થો તથા ગ્રામ્ય અને વન્ય પશુઓને બનાવ્યા છે, તેની સર્વ ઉપાસના કરો. (૬)

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दाᳬसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે तस्मात्-તે પૂર્ણ, यज्ञात्-અત્યંત પૂજનીય, सर्वहुतः-જેને માટે સર્વ લોકો સમસ્ત પદાર્થો આપે છે વા સમર્પણ કરે છે, તે પરમાત્માથી ऋचः-ઋગ્વેદ અને सामानि-સામવેદ जज्ञिरे-ઉત્પન્ન થયા છે. तस्मात्-તે પરમાત્માથી छन्दांसि-અથર્વવેદ जज्ञिरे-ઉત્પન્ન થયેલ છે. तस्मात्-તે પરમાત્માથી यजुः-યજુર્વેદ अजायत-ઉત્પન્ન થયેલ છે; તેને જાણો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આપ જેના દ્વારા સર્વ વેદો ઉત્પન્ન પ્રકટ થયા છે; તે પરમાત્માની ઉપાસના કરો, વેદોનું અધ્યયન કરો અને તેની આજ્ઞાને અનુકૂળ વર્તન-આચરણ કરીને સુખી રહો. (૭)

तस्मादश्वाऽअजायन्त ये के चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારા अश्वाः-ઘોડાઓ અને ये-જે के-કોઈ च-ગધેડાં આદિ उभयादतः-ઉપર-નીચે બન્ને બાજુ દાંતોવાળા પશુઓ છે, તેઓ तस्मात्-તે પરમેશ્વરથી अजायन्त-ઉત્પન્ન થયા છે. तस्मात्-તે પરમેશ્વરથી गावः-ગાયો ह-પણ जज्ञिरे-ઉત્પન્ન થઈ છે. તે એક બાજુ દાંતવાળાનું ઉપલક્ષણ છે એથી અન્ય પણ એક બાજુ દાંતવાળાનું ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. तस्मात्-તે પરમેશ્વરથી अजावयः-

બકરીઓ અને ઘેટાંઓ પણ जाताः-ઉત્પન્ન થયાં છે, તેમ જાણો (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ગાય, ઘોડા આદિ ગ્રામ્ય સર્વ પશુઓ જે સનાતન, પૂર્ણ પુરુષ [પરમેશ્વર] થી ઉત્પન્ન થયાં છે, તેની આજ્ઞાનું ઉલ્લંઘન કદી પણ ન કરો. (૮)

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवाऽअयजन्त साध्याऽऋषयश्च ये॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ये-જે देवाः-વિદ્વાન च-અને साध्याः-યોગાભ્યાસ આદિ સાધન કરનારા જ્ઞાની અને ऋषयः-મંત્રાર્થના જ્ઞાતા ઋષિ છે; તેઓ જે अग्रतः-સૃષ્ટિથી પૂર્વ जातम्-પ્રાદુર્ભૂત, જગતના કર્તા, यज्ञम्-પૂજનીય पुरुषम्-પૂર્ણ પરમાત્માને बर्हिषि-માનસ જ્ઞાનયજ્ઞમાં प्र + औक्षन्-ઉત્તમ રીતિથી સિંચન અર્થાત્ ધારણ કરે છે, તેઓ જ तेन-તેના ઉપદેશ કરેલા વેદથી અને अयजन्त-તેની પૂજા કરે છે; तम्-તેને તમે પણ જાણો. (૯)

ભાવાર્થ : વિદ્વાન્ મનુષ્યોએ સૃષ્ટિના કર્તા ઈશ્વરનું યોગાભ્યાસ આદિ દ્વારા પોતાનાં હૃદયરૂપી અન્તરિક્ષમાં સદા ધ્યાન અને પૂજન કરવું જોઈએ. (૯)

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादाऽउच्येते॥ १०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આપ यत्-જે पुरुषम्-પૂર્ણ પરમેશ્વરને वि + अदधुः-વિવિધ પ્રકારથી ધારણ કરો છો, તેને कतिधा-કેટલા પ્રકારથી वि + अकल्पयन्-વિશેષરૂપથી કહે છે; अस्य-એ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં मुखम्-મુખની સમાન શ્રેષ્ઠ વસ્તુ किम्-કઈ आसीत्-છે ? बाहू-ભુજબળને ધારણ કરનાર किम्-કોણ કહેવાય છે ? ऊरू-જાનુ-ગોઠણથી ઉપર અવયવ-સ્થાનવાળા તથા पादौ-નીચેનાં સ્થાનવાળા किम्-કોણ उच्येते-કહેવામાં આવે છે ? (૧૦)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! આ સંસારમાં ઈશ્વરના અસંખ્ય સામર્થ્ય છે. તે સામર્થ્ય-સમુદાયમાં ઉત્તમાંગ મુખ અને બાહુ આદિ અંગ કયાં છે, તે બતાવો. (૧૦)

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याᳬ शूद्रोऽअजायत॥ ११॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુજનો ! તમે अस्य-આ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં ब्राह्मणः-વેદ અને ઈશ્વરના જ્ઞાતા તેના સેવક વા ઉપાસક પુરુષ मुखम्-મુખની સમાન ઉત્તમ બ્રાહ્મણ आसीत्-છો.

बाहू-ભુજાઓની સમાન બલ અને પરાક્રમયુક્ત राजन्यः-ક્ષત્રિય कृत-બનાવેલ છે. यत्-જે ऊरू જાંઘની સમાન વેગ આદિ કર્મ કરનાર तत्-તે अस्य-આ ઈશ્વરની સૃષ્ટિમાં वैश्यः-સર્વ દેશમાં પ્રવેશ

કરનાર વૈશ્ય છે. पद्भ्याम्-સેવાયુક્ત અને અભિમાનરહિત હોવાથી शूद्रः-મૂર્ખતા આદિ ગુણોથી યુક્ત શૂદ્ર अजायत्-ઉત્પન્ન થાય છે; એ ઉત્તર ક્રમથી જાણો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે વિદ્યા શમ, દમ આદિ ઉત્તમ ગુણોમાં મુખની સમાન ઉત્તમ છે, તે બ્રાહ્મણ; જે અધિક પરાક્રમવાળા મનુષ્ય ભુજાની સમાન કાર્યસાધક છે, તે ક્ષત્રિય; જે વ્યવહારવિદ્યામાં કુશળ છે, તે વૈશ્ય અને જે સેવામાં શ્રેષ્ઠ, વિદ્યારહિત તથા પગની સમાન મૂર્ખતા આદિ હીન ગુણોથી યુક્ત છે, તે શૂદ્ર છે તેવો નિશ્ચય કરવો અને માનવું જોઈએ. (૧૧)

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽअजायत।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! એ પૂર્ણ બ્રહ્મના मनसः-જ્ઞાનસ્વરૂપ સામર્થ્યથી चन्द्रमाः-ચંદ્રલોક जातः-ઉત્પન્ન થયેલ છે; चक्षोः-જ્યોતિસ્વરૂપ સામર્થ્યથી सूर्यः-સૂર્યમંડલ अजायत-ઉત્પન્ન થયેલ છે; श्रोत्रात्-શ્રોત્ર નામક અવકાશરૂપ સામર્થ્યથી वायुः-વાયુ च-તથા આકાશ પ્રદેશ च-તથા प्राणः-જીવનના નિમિત્ત દશ પ્રાણ તથા मुखात्-મુખ્ય જ્યોતિર્મય ભક્ષણરૂપ સામર્થ્યથી अग्निः-અગ્નિ अजायत-ઉત્પન્ન થયેલ છે; તેમ જાણો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે આ સંપૂર્ણ સંસાર કારણ = પ્રકૃતિથી ઈશ્વરે ઉત્પન્ન કરેલ છે, તેમાં ચંદ્રલોક મનરૂપ છે, સૂર્ય ચક્ષુસ્થાનીય છે, વાયુ અને પ્રાણ શ્રોત્રની સમાન, અગ્નિ મુખની સમાન, ઔષધિઓ તથા વનસ્પતિઓ રોમ-રૂંવાડાં સમાન, નદીઓ નાડીઓની સમાન તથા પર્વત આદિ અસ્થિઓની સમાન છે. એમ જાણવું જોઈએ. (૧૨)

नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ऽअकल्पयन्॥ १३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ એ પુરુષ પરમેશ્વરના नाभ्याः-અવકાશરૂપ મધ્યમ સામર્થ્યથી अन्तरिक्षम्-મધ્યવર્તી આકાશ आसीत्-ઉત્પન્ન થયેલ છે; शीर्ष्णः-શિરની સમાન ઉત્તમ સામર્થ્યથી द्यौः-પ્રકાશયુક્ત લોક તથા पद्भ्याम्-પૃથિવીના કારણરૂપ સામર્થ્યથી भूमिः-પૃથિવી सम् अवर्त्तत-સમ્યક્ ઉત્પન્ન થઈ છે; श्रोत्रात्-અવકાશરૂપ સામર્થ્યથી दिशः-પૂર્વ આદિ દિશાઓને ઉત્પન્ન अकल्पयन्-બતાવે છે; तथा-એ રીતે ઈશ્વરનાં સામર્થ્યથી અન્ય लोकान्-લોકો પણ ઉત્પન્ન થયેલાં જાણો. (૧૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જે આ સૃષ્ટિમાં કાર્યરૂપ વસ્તુ છે, તે તે સર્વ વિરાટ્ નામક કાર્યકારણની અવયવરૂપ વસ્તુ છે; તેમ જાણવું જોઈએ. (૧૩)

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः॥ १४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्-જ્યારે हविषा-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય पुरुषेण-પૂર્ણ પરમાત્માની સાથે देवाः-

વિદ્વાનજન यज्ञम्-માનસિક જ્ઞાનમય યજ્ઞને अतन्वत-વિસ્તૃત કરે છે; ત્યારે अस्य-એ યજ્ઞના वसन्तः-વસંતરૂપ પૂર્વાહ્ન કાલ જ आज्यम्-ઘૃત છે; ग्रीष्मः-મધ્યાહ્ન કાલ इध्मः-પ્રદીપ્ત ઈંધન છે; शरत्-અર્ધ રાત્રિરૂપ શરદ हविः-હોમવા યોગ્ય પદાર્થ आसीत्-છે; તેમ તમે જાણો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જ્યારે બહારની સામગ્રીના અભાવમાં વિદ્વાન લોકો સૃષ્ટિના રચિયતા ઈશ્વરની ઉપાસના નામક માનસ જ્ઞાનયજ્ઞનો વિસ્તાર કરે છે, ત્યારે પૂર્વાહ્ન આદિ કાલને જ સાધન =સામગ્રીનાં રૂપમાં કલ્પિત કરવી જોઈએ. (૧૪)

सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वानाऽअबध्नन् पुरुषं पशुम्॥ १५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्-જે यज्ञम्-માનસજ્ઞાન યજ્ઞને तन्वानाः-વિસ્તૃત કરતા देवाः-વિદ્વાન્ લોકો पशुम्-જાણવા અર્થાત્ દર્શન કરવા યોગ્ય पुरुषम्-પરમાત્માને હૃદયમાં अबध्नन्-બાંધે છે; अस्य-એ યજ્ઞને सप्त-સાત ગાયત્રી આદિ છંદ परिधयः-સર્વત્રથી દોરાની સાત લપેટ સમાન आसन्-છે;

त्रिः, सप्त-ત્રણ વાર સાત ૩ × ૭ = ૨૧ એકવીસ અર્થાત્ પ્રકૃતિ, મહત્તત્ત્વ, અહંકાર, પાંચ સૂક્ષ્મભૂત, પાંચ સ્થૂલભૂત, પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિય, સત્ત્વ, રજ, તમ, ત્રણ ગુણ, એકવીસ, समिधः-સામગ્રીરૂપ कृताः-બનાવેલ છે; તે યજ્ઞને યથાવત્ જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે અનેક પ્રકારથી કલ્પિત પરિધિ આદિ સામગ્રીથી યુક્ત એ માનસયજ્ઞ કરીને, પરિપૂર્ણ પરમેશ્વરને જાણીને સર્વ પ્રયોજનોને સિદ્ધ કરો. (૧૫)

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે देवाः-વિદ્વાન્ જન यज्ञेन-પૂર્વોક્ત જ્ઞાનયજ્ઞથી यज्ञम्-પૂજનીય, સર્વરક્ષક, અગ્નિની સમાન તેજસ્વી પરમેશ્વરની अयजन्त-પૂજા કરે છે; तानि-તે ઈશ્વર પૂજન આદિ धर्माणि-ધારણારૂપ ધર્મ प्रथमानि-અનાદિ અને મુખ્ય आसन्-છે. ते-તે વિદ્વાન महिमानः-મહત્ત્વયુક્ત બનીને यत्र-જેના મુખમાં पूर्वे-પૂર્વજ साध्याः-સાધન કરનારા देवाः-વિદ્યા આદિથી દેદીપ્યમાન વિદ્વાનો सन्ति-છે; તે नाकम्-દુઃખરહિત મુક્તિસુખને ह-જ सचन्त-પ્રાપ્ત કરે છે; તેને તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ યોગાભ્યાસ આદિ દ્વારા સદા પરમેશ્વરની ઉપાસના કરવી જોઈએ. એ અનાદિ-કાલીન ધર્મના દ્વારા મુક્તિસુખ = મોક્ષ પ્રાપ્ત કરીને, પૂર્વકાલના મુક્ત વિદ્વાનોની સમાન આનંદિત રહેવું જોઈએ. (૧૬)

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्तताग्रे।
तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अद्भ्यः-જલોથી, पृथिव्यै-પૃથિવીથી च-અને विश्वकर्मणः-સર્વ કર્મ જેના

આશ્રયે થાય છે, તે સૂર્યથી सम्भृतः-સમ્યક્ પુષ્ટ છે; તે रसात्-જિહ્વા વિષયક રસથી अग्रे-પ્રથમ આ સર્વ જગત सम् + अवर्त्तत-વર્તમાન રહે છે; तस्य-તે આ જગતના तत्-તે रूपम्-સ્વરૂપને त्वष्टा-છોલનાર-સૂક્ષ્મ કરનાર ઈશ્વર विदधत्-બનાવતા अग्रे-આદિમાં मर्त्यस्य-મનુષ્યના आजानम्-સારી રીતે કર્તવ્ય કર્મ અને देवत्वम्-વિદ્વત્તાને एति-પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સંપૂર્ણ કાર્યજગતના કર્તા પરમાત્મા કારણથી કાર્યોનું નિર્માણ કરે છે અને સંપૂર્ણ સંસારનાં શરીરોનાં રૂપોની રચના કરે છે, તેનું જ્ઞાન કરવું તથા તેની આજ્ઞાનું પાલન કરવું એ જ દૈવત્વ' છે, તેમ જાણો. (૧૭)

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय॥ १८॥

પદાર્થ : હે જિજ્ઞાસુ ! अहम्-હું જે एतम्-એ પૂર્વોક્ત महान्तम्-મહાન ગુણોથી યુક્ત, आदित्यवर्णम्-આદિત્ય = સૂર્ય સમાન પ્રકાશસ્વરૂપ છે, તે સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્માને तमसः-અંધકાર વા અજ્ઞાનથી परस्तात्-પૃથક્ વર્તમાન पुरुषम्-સ્વસ્વરૂપથી સર્વત્ર પૂર્ણ પરમાત્માને वेद-જાણું છું.

तम् + एव-તેને જ विदित्वा-જાણીને આપ मृत्युम्-દુઃખદાયક મૃત્યુનું अति + एति-ઉલ્લંઘન કરી જાઓ છો; अन्यः-આથી ભિન્ન पन्थाः-માર્ગ अयनाय-અભીષ્ટ સ્થાન મોક્ષને માટે न, विद्यते-વિદ્યમાન નથી. (૧૮)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સાંસારિક અને આધ્યાત્મિક સુખ ઈચ્છે, તો તેઓ સર્વથી મહત્તમ, સ્વયંપ્રકાશમાન, આનંદસ્વરૂપ તથા અજ્ઞાન અને ક્લેશથી પૃથક્ વર્તમાન પરમાત્માને જાણીને જ મૃત્યુ આદિ અગાધ દુઃખસાગરથી પૃથક્ થઈ શકે છે. આ જ સુખદાયી માર્ગ છે. આથી ભિન્ન અન્ય કોઈ મનુષ્યોની મુક્તિનો માર્ગ નથી. (૧૮)

प्रजापतिश्चरति गर्भेऽअन्तरजायमानो बहुधा वि जायते।
तस्य योनिं परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अजायमानः-પોતાના સ્વરૂપથી ઉત્પન્ન ના થનાર, प्रजापतिः-પ્રજાના રક્ષક જગદીશ્વર गर्भे-ગર્ભસ્થ જીવાત્મામાં અને अन्तः-સર્વના હૃદયમાં चरति-વિચરણ કરે છે; અને बहुधा-અનેક પ્રકારથી वि, जायते-વિશેષરૂપથી પ્રકટ થાય છે; तस्य-તે પ્રજાપતિનાં જે योनिम्-સ્વરૂપને धीराः-ધ્યાની = યોગી લોકો परि + पश्यन्ति-સર્વત્રથી જુએ છે.

तस्मिन्-તે જગદીશ્વરમાં ह-જ विश्वा-સર્વ भुवनानि-ભુવન = લોક-લોકાન્તર तस्थुः-સ્થિત છે. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે એ સર્વરક્ષક ઈશ્વર સ્વયં ઉત્પન્ન ન થતાં પોતાનાં સામર્થ્યથી સંસારને ઉત્પન્ન કરીને તેની અંદર પ્રવિષ્ટ થઈને સર્વત્ર વિચરણ કરે છે.

જે અનેક પ્રકારથી પ્રસિદ્ધ ઈશ્વરને વિદ્વાનો જ જાણી શકે છે, તે સંસારના આધાર અને સર્વવ્યાપક પરમાત્માને જાણીને, મનુષ્યોએ આનંદિત થવું જોઈએ. (૧૯)

यो दे॒वेभ्य॑ऽआ॒तप॑ति॒ यो दे॒वानां॑ पु॒रोहि॑तः।
पूर्वो॑ यो दे॒वेभ्यो॑ जा॒तो नमो॑ रु॒चाय॒ ब्राह्म॑ये॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે સૂર્યલોક देवेभ्यः-દિવ્યગુણોવાળા પૃથિવી આદિને માટે आ + तपति-સર્વત્રથી તપી રહેલ છે; यः-જે देवानाम्-પૃથિવી આદિ લોકોના पुरोहितः-પ્રથમથી હિતને માટે મધ્યમાં રાખેલ છે; यः-જે देवेभ्यः-પૃથિવી આદિથી पूर्वः-પ્રથમ जातः-ઉત્પન્ન થયેલ છે; તે रुचाय-રુચિકર ब्राह्मये-બ્રહ્મ = પરમેશ્વરના પુત્રની સમાન સૂર્યથી नमः-અન્ન ઉત્પન્ન થાય છે. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વરે સર્વના હિત માટે અન્ન આદિની ઉત્પત્તિ નિમિત્ સૂર્ય રચેલ છે, તે [ઈશ્વર]ની તમે નિરંતર ઉપાસના કરો. (૨૦)

रु॒चं ब्रा॒ह्मं ज॒नय॑न्तो दे॒वाऽअग्रे॒ तद॑ब्रुवन्।
यस्त्वै॒वं ब्रा॑ह्म॒णो वि॒द्यात्तस्य॑ दे॒वाऽअ॑स॒न्वशे॑॥ २१॥

પદાર્થ : હે બ્રહ્મનિષ્ઠ જિજ્ઞાસુ ! જે रुचम्-રુચિકારક ब्राह्मम्-બ્રહ્મના ઉપાસક त्वा-આપને जनयन्तः-સંપન્ન કરતા = બનાવતા देवाः-વિદ્વાનો अग्रे-પ્રથમ तत्-બ્રહ્મ, જીવ અને પ્રકૃતિનાં સ્વરૂપનો अब्रुवन्-ઉપદેશ કરે છે.

यः-જે ब्राह्मणः-વિદ્વાન્ एवम्-તે પ્રકારથી विद्यात्-બ્રહ્મ આદિને જાણી લે છે, तस्य-તેના તે देवाः-વિદ્વાનો वशे-વશમાં - આધીન असन्-બને છે. (૨૧)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોનું પ્રથમ એ જ કર્તવ્ય છે કે, વેદ, ઈશ્વર અને ધર્મ આદિમાં રુચિ, ઉપદેશ, અધ્યાપન, ધાર્મિકતા, જિતેન્દ્રિયતા, શરીર અને આત્માનાં બળની વૃદ્ધિ કરવી. આ રીતે કરવાથી સર્વ દિવ્ય ગુણ અને ભોગ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે. (૨૧)

श्रीश्च॑ ते ल॒क्ष्मीश्च॒ पत्न्या॑वहोरा॒त्रे पा॒र्श्वे नक्ष॑त्राणि रू॒पम॒श्विनौ॒ व्यात्त॑म्।
इ॒ष्णन्नि॑षाणा॒मुं म॑ऽइषाण सर्वलो॒कं म॑ऽइषाण॥ २२॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે ते-આપની श्रीः-સમગ્ર શોભા છે च-અને लक्ष्मीः-સર્વ ઐશ્વર્ય च-પણ છે; पत्न्यौ-બે સ્ત્રીઓની સમાન વિદ્યમાન अहोरात्रे-દિવસ અને રાત पार्श्वे-આપના બે પાર્શ્વ ભાગ છે; તે આપની સૃષ્ટિમાં अश्विनौ-સૂર્ય અને ચંદ્રમા व्यात्तम्-વિકસિત મુખની સમાન છે; नक्षत्राणि-નક્ષત્રો रूपम्-રૂપ છે.

તો આપ मे-મારા अमुम्-પરોક્ષ સુખને इष्णन्-ચાહતા इषाणा-મને પ્રાપ્ત કરાવવાની કામના કરો. मे-મારા માટે सर्वलोकम्-સર્વના દર્શનને इषाण-પ્રાપ્ત કરાવો, મારા માટે સર્વ સુખોને इषाण-પ્રાપ્ત કરાવો. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે રાજા આદિ લોકો ! જેમ ઈશ્વરના ન્યાય, વ્યાપકતા, કૃપા, પુરુષાર્થ, સત્ય રચના

અને સત્ય નિયમ છે, તેમ તમારામાં પણ હોય, જેથી તમારું સુખ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ પામે. (૨૨)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઈશ્વર, સૃષ્ટિ અને રાજાના ગુણોના વર્ણનથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति एकत्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ द्वात्रिंशत्तमाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः ।

तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताऽआपः स प्रजापतिः॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! तत्-તે સર્વજ્ઞ, સર્વ વ્યાપક, સનાતન, અનાદિ, સચ્ચિદાનંદ સ્વરૂપ, નિત્ય શુદ્ધ-બુદ્ધ-મુક્ત સ્વભાવ, ન્યાયકારી, દયાળુ, જગતના સ્રષ્ટા, જગતના ધર્તા અને સર્વાન્તર્યામી ઈશ્વર एव-જ अग्निः-જ્ઞાન સ્વરૂપ અને સ્વ પ્રકાશ સ્વરૂપ હોવાથી અગ્નિ છે; तत्-તે आदित्यः-પ્રલય સમયે સર્વને ગ્રહણ કરનાર - લેનાર હોવાથી આદિત્ય છે.

तत्-તે वायुः-અનંત બળવાન અને સર્વના ધારણકર્તા હોવાથી વાયુ છે; तत्-તે चन्द्रमाः-આનંદ સ્વરૂપ અને આહ્‌લાદક હોવાથી ચંદ્રમા છે; तत्, एव-તે જ शुक्रम्-શીઘ્રકારી અને શુદ્ધ ભાવ હોવાથી શુક્ર છે; तत्-તે ब्रह्म-સર્વથી મહાન હોવાથી બ્રહ્મ છે; ताः-તે आपः-સર્વત્ર વ્યાપક હોવાથી उ-અને सः-તે प्रजापतिः-સર્વ પ્રજાના સ્વામી હોવાથી પ્રજાપતિ છે; એમ તમે જાણો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઈશ્વરના એ અગ્નિ આદિ ગૌણિક = ગુણવાચક નામ છે, તેમ અન્ય ઈન્દ્ર આદિ નામો પણ છે, એ ઈશ્વરની ઉપાસના ફળદાયક છે, તેમ જાણો. (૧)

सर्वे निमेषा जज्ञिरे विद्युतः पुरुषादधि।

नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्चं न मध्ये परि जग्रभत्॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે विद्युतः-વિશેષ પ્રકાશમાન पुरुषात्-પૂર્ણ વિભુ બ્રહ્મથી सर्वे-સર્વ निमेषाः-નેત્ર ખોલવા આદિ લક્ષણવાળા, કાષ્ઠાદિ કાલના અવયવ अधि, जज्ञिरे-અધિકતર ઉત્પન્ન થાય છે; તે एनम्-એ પરમાત્માને કોઈ પણ न, ऊर्ध्वम्-ન ઉપરથી, न, तिर्यञ्चम्-ન તિર્યક વા ન નીચે અને न, मध्ये-ન મધ્યમાંથી परि, जग्रभत्-ગ્રહણ કરી શકે છે; તેની તમે સેવા =ઉપાસના કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના નિર્માણથી સર્વ કાલખંડ ઉત્પન્ન થયા છે, જેની ઉપર, નીચે, પાર્શ્વ = બરાબર, દૂર વા નજીકમાં [છે એમ] કહેવું સંભવ નથી અને જે સર્વત્ર પૂર્ણ બ્રહ્મ છે, તે બ્રહ્મને યોગાભ્યાસ દ્વારા જાણીને આપ સર્વે તેની ઉપાસના કરો. (૨)

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यशः।

हिरण्यगर्भऽइत्येष मा मा हिꣳसीदित्येषा यस्मान्न जातऽइत्येषः॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यस्य-જેનું महत्-પૂજ્ય અને મહાન, यशः-કીર્તિ કરનાર ધર્મયુક્ત કર્મોનું

આચરણ જ नाम-નામ સ્મરણ છે; જે हिरण्यगर्भः-સૂર્ય, વિદ્યુત્, આદિ પદાર્થોના આધાર, इति-એ રીતે एषः-અન્તર્યામી હોવાથી પ્રત્યક્ષ છે; જેની मा-મને જીવાત્માને मा, हिंसीत्-માર નહિ, તાડના કર નહિ, વિમુખ કર નહિ इति, एषाः-એ પ્રાર્થના વા બુદ્ધિ છે.

यस्मात्-જે કોઈ પણ કારણથી न, जातः-ઉત્પન્ન થયેલ નથી. इति, एवः-એ પરમાત્મા ઉપાસનાને યોગ્ય છે. तस्य-તે પરમેશ્વરની प्रतिमा-પરિમાણ, તેની સમાન અવધિનું સાધન, પ્રતિકૃતિ, મૂર્તિ વા આકૃતિ न, अस्ति-નથી.

દ્વિતીય પક્ષ : हिरण्यगर्भः-એ ૨૫ : ૧૦-૧૩ મંત્ર સુધી इति-એ જ રીતે एषाः-એ કહેલ અનુવાદમાં मा, हिंसीत् ૧૨-૧૦૨ એ કહેલ ઋચા અને यस्मान्न जातः-इत्येषः-૮ : ૩૬, ૩૭ એ કહેલ અનુવાદ यस्य-જે પરમેશ્વરની नाम-પ્રસિદ્ધ महत्-મહાન यशः-કીર્તિ છે, तस्य-તેની प्रतिमा-મૂર્તિ-પ્રતિબિંબ न, अस्ति-નથી. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે કદી શરીરધારી બનતો નથી, જેનું કોઈ પરિમાણ =માપ નથી, જેની આજ્ઞાનું પાલન કરવું તે જ તેના નામનું સ્મરણ કરવું છે, જે ઉપાસના કરવાથી ઉપાસકો પર અનુગ્રહ કરે છે, વેદોના અનેક સ્થાનોમાં જેનો મહિમા પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે.

જે કદી મૃત્યુ પામતો નથી, વિકારને પ્રાપ્ત થતો નથી, ક્ષીણ થતો નથી, તમે તેની નિરંતર ઉપાસના કરો. જો તેનાથી ભિન્ન - બીજા કોઈની ઉપાસના કરશો, તો મહાન પાપના ભાગી બનીને આપ લોકો દુઃખ અને ક્લેશોથી પીડિત થશો. (૩)

एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः सऽउ गर्भेऽअन्तः।
सऽएव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः॥ ४॥

પદાર્થ : હે जनाः-વિદ્વાનો ! एषः-એ ह-જ देवः-દિવ્ય સ્વરૂપ પરમાત્મા सर्वाः-સર્વ દિશાઓ તથા प्रदिशः-ઉપદિશાઓને अनु-અનુકૂળતાથી વ્યાપ્ત કરીને, सः-તે उ-જ गर्भे-અન્તઃકરણનાં अन्तः-મધ્યમાં पूर्वः-પ્રથમ કલ્પના આદિમાં ह-જ जातः-પ્રકટ થયેલ છે; सः-તે एव-જ जातः-પ્રસિદ્ધ થઈને, सः-તે जनिष्यमाणः-આગામી કલ્પોમાં પ્રથમ પ્રસિદ્ધિને પ્રાપ્ત થશે, सर्वतोमुखः-બધી બાજુથી મુખ આદિ અવયવવાળા અર્થાત્ મુખ આદિ ઇન્દ્રિયોનાં કામ સર્વત્ર કરતા, प्रत्यङ्-પ્રત્યેક પદાર્થને પ્રાપ્ત થઈને तिष्ठति-અચલ-સર્વત્ર સ્થિર છે; તે જ તમારા લોકોની ઉપાસના કરવા યોગ્ય અને જાણવા યોગ્ય છે. (૪)

ભાવાર્થ : એ પૂર્વોક્ત ઈશ્વર જગતને ઉત્પન્ન કરીને પ્રકાશિત થઈને, સર્વ દિશાઓમાં વ્યાપ્ત બનીને ઇન્દ્રિયો વિના સર્વ ઇન્દ્રિયોનાં કર્મોને, સર્વ વ્યાપક હોવાના કારણે કરતા રહીને, સર્વ પ્રાણીઓનાં હૃદયમાં રહે છે. તે અતીત = ભૂત અને અનાગત = ભવિષ્યના કલ્પોમાં જગતની ઉત્પત્તિ માટે પ્રથમ પ્રકટ = સક્રિય થાય છે. તેને ધ્યાનના અભ્યાસી મનુષ્ય જ જાણી શકે છે, અન્ય નહિ. (૪)

यस्माज्जातं न पुरा किं चनैव य आबभूव भुवनानि विश्वा।
प्रजापतिः प्रजया सꣳरराणस्त्रीणि ज्योतीꣳषि सचते स षोडशी॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यस्मात्-જે પરમેશ્વરથી पुरा-પહેલાં किञ्चन-કંઈ પણ न जातम्-ઉત્પન્ન થયું

નથી, યઃ-જે આ + બભૂવ-સર્વત્ર વિદ્યમાન છે, જેમાં વિશ્વા-સર્વ ભુવનાનિ-વસ્તુઓના આધાર લોક સમૂહ રહેલા છે.

સઃ-તે एव-જ षोडशी-સોળ કલાવાળા ઈશ્વર प्रजया-પ્રજાની સાથે संरराणः-સમ્યક્ રમણ કરતા प्रजापतिः-પ્રજાના રક્ષક અને અધિષ્ઠાતા બનીને त्रीणि-વિદ્યુત્, સૂર્ય અને ચંદ્રરૂપ ત્રણ ज्योतींषि-તેજોમય પ્રકાશક જ્યોતિઓને सचते-વ્યાપ્ત કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : જે કારણે ઈશ્વર અનાદિ છે, એથી તેના પૂર્વે કોઈ વસ્તુ થઈ શકતી નથી.

તે જ સર્વ પ્રજાઓમાં વ્યાપ્ત થઈને જીવોના કર્મોને જોઈને તેના અનુસાર ફળ આપીને ન્યાય કરે છે.

જેણે પ્રાણ આદિ ષોડશ = સોળ વસ્તુઓ રચેલ છે, તેથી તે ષોડશી કહેવાય છે. પ્રાણ, શ્રદ્ધા, આકાશ, વાયુ, અગ્નિ, જલ, પૃથિવી, ઈન્દ્રિય, મન, અન્ન, વીર્ય, તપ, મંત્ર, કર્મ લોક અને નામ એ સોળ કલાઓ પ્રશ્નોપનિષદમાં છઠ્ઠા પ્રશ્નમાં વર્ણિત છે.

આ સમસ્ત સોળ કલામય સંસાર પરમાત્મામાં રહેલ છે, તેના દ્વારા રચેલ છે અને તે જ પાલન કરી રહેલ છે. (૫)

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्तभितं येन नाकः।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! येन-જે જગદીશ્વરે उग्रा-તીવ્ર તેજવાળા द्यौः-પ્રકાશયુક્ત સૂર્ય આદિ પદાર્થ, च-અને पृथिवी-ભૂમિ दृढा-દઢ કરેલ છે; येन-જેને स्वः-સુખને स्तभितम्-ધારણ કરેલ છે; येन-જેને नाकः-સર્વ દુઃખોથી રહિત મોક્ષને ધારણ કરેલ છે; यः-જે अन्तरिक्षे-મધ્યવર્તી આકાશમાં વિદ્યમાન रजसः-લોક સમૂહનું विमानः-વિવિધ રીતે નિર્માણ કરનાર છે અર્થાત્ વિવિધ પરિમાણ કરનાર છે; તે कस्मै-સુખસ્વરૂપ देवाय-સ્વયં પ્રકાશમાન, સકળ સુખદાતા ઈશ્વરને માટે અને हविषा-પ્રેમ ભક્તિભાવથી विधेम-સેવા કરીએ વા તેને પ્રાપ્ત પ્રાપ્ત કરીએ; એ રીતે તમે પણ એની સેવા કરો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સમસ્ત જગતને ધારણ કરનાર, સર્વ સુખદાતા, મોક્ષના સાધક અને આકાશની સમાન વ્યાપક પરમેશ્વર છે, તેની જ ભક્તિ કરો. (૬)

यं क्रन्दसीऽअवसा तस्तभानेऽअभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने।
यत्राधि सूरऽउदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यम्-જે પરમાત્માને પ્રાપ્ત અર્થાત્ તેના અધિકારમાં રહેનારા, तस्तभाने-સર્વને ધારણ કરનારા, रेजमाने-ગતિમાન क्रन्दसी-સ્વગુણોથી પ્રશંસા કરવા યોગ્ય સૂર્ય અને પૃથિવી લોક, अवसा-રક્ષા આદિથી સર્વને ધારણ કરે છે.

यत्र-જે ઈશ્વરમાં सूरः-સૂર્યલોક अधि,उदितः-અધિકતર ઉદય થાય છે. यत्-જે बृहतीः-મહાન

आपः-વ્યાપક જળ છે; ह-નિશ્ચય જ यः-અને જે કંઈ आपः-આકાશ છે; તેને चित्-પણ विभाति-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશિત કરે છે.

તે ઈશ્વર તથા દ્યાવા પૃથિવીને અધ્યાપક અને ઉપદેશક मनसा-વિજ્ઞાનથી अभि, ऐक्षेताम्-મુખ્યરૂપથી જુએ અને તે कस्मै-સુખસાધક देवाय-શુદ્ધ સ્વરૂપ પરમાત્માની પ્રાપ્તિ માટે हविषा-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય યોગાભ્યાસથી અમે विधेम-સેવા-ઉપાસના કરીએ છીએ; તમે પણ તેની ઉપાસના કરો. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વવ્યાપક ઈશ્વરમાં સૂર્ય, પૃથ્વી આદિ લોક ભ્રમણ કરતા જોવામાં આવે છે, જેણે પ્રાણ અને આકાશ પણ ઉત્પન્ન કરેલ છે, તે આપણા આત્મામાં રહેલ ઈશ્વરની તમે ઉપાસના કરો. (૭)

वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सद्यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्।
तस्मिन्निदꣳ सं च वि चैति सर्वꣳ सऽओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्र-જેમાં विश्वम्-સર્વ જગત एकनीडम्-એક સ્થાન-આશ્રયની સમાન भवति-છે; तत्-તે गुहा-બુદ્ધિ વા ગુપ્ત કારણમાં निहितम्-સ્થિત सत्-નિત્ય ચેતન બ્રહ્મને वेनः-પંડિત વિદ્વાન્ જન पश्यत्-જ્ઞાન દૃષ્ટિથી જુએ છે.

तस्मिन्-તેમાં इदम्-આ सर्वम्-સર્વ જગત सम, एति, च-પ્રલયકાલમાં લીન બની જાય છે व्येति, च અને સર્ગકાલ - ઉત્પત્તિ સમયમાં વિવિધ રૂપમાં પ્રકટ થાય છે.

सः-તે विभूः-વ્યાપક ઈશ્વર प्रजासु-પ્રજાઓમાં - પ્રકૃતિ, જીવ આદિમાં ओतः-વસ્ત્રમાં તાણાની સમાન च-અને प्रोतः-વસ્ત્રમાં વાણાની સમાન વ્યાપક છે; તે જ સર્વના ઉપાસ્ય છે. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! વિદ્વાન જ જે સત્ = ઈશ્વરને બુદ્ધિ બળથી જાણે છે, જે આકાશ આદિ સર્વ પદાર્થોનો આધાર છે, જેમાં પ્રલયકાળમાં સમસ્ત સંસાર લીન થઈ જાય છે અને સર્ગ= સૃષ્ટિકાલમાં જેમાંથી નીકળે છે, જેની વ્યાપ્તિ વિનાની કોઈ વસ્તુ નથી, તેને છોડીને આ સૃષ્ટિમાં અન્ય કોઈને ઉપાસ્ય - ઈશ્વર જાણો નહિ. (૮)

प्र तद्वोचेदमृतं नु विद्वान् गन्धर्वो धाम विभृतं गुहा सत्।
त्रीणि पदानि निहिता गुहास्य यस्तानि वेद स पितुः पिताऽसत्॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે गन्धर्वः-ગો =વેદવાણીને ધારણ કરનાર विद्वान्-પંડિત गुहा-બુદ્ધિમાં विभृतम्-વિશેષ ધારણ કરીને अमृतम्-નાશરહિત, धाम-મુક્તિ સુખનું સ્થાન, तत्-તે ચેતન બ્રહ્મ सत्-નિત્ય ઈશ્વરના नु-શીઘ્ર प्रवोचेत्-ગુણ - કર્મ - સ્વભાવથી ઉપદેશ કરે છે; અને જે अस्य-એ અવિનાશી બ્રહ્મની गुहा-બુદ્ધિમાં-જ્ઞાનમાં निहिता-સ્થિત पदानि-જાણવા યોગ્ય त्रीणि-ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ, પ્રલય અથવા ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન ત્રણ કાલ છે; तानि-તેને वेद-જાણે છે; सः-તે पितुः-પિતા વા સર્વ ઈશ્વરના पिता-જ્ઞાન પ્રદાનથી વા આસ્તિકતાથી રક્ષક असत्-બને છે. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેઓ ઈશ્વરની મુક્તિ સાધક બુદ્ધિમાં સ્થિત સ્વરૂપનો ઉપદેશ કરે છે તથા યથાર્થ રૂપથી પદાર્થોના અને ઈશ્વરના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવો જાણે છે, તેઓ વયોવૃદ્ધ પિતરોના પણ પિતરો થવા યોગ્ય છે, તેમ જાણો. (૯)

स नो॒ बन्धु॑र्जनि॒ता स वि॑धा॒ता धामा॑नि वेद॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑।
यत्र॑ दे॒वाऽअ॒मृत॑मानशा॒नास्तृ॒तीये॒ धाम॑न्न॒ध्यैर॑यन्त॥ १०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्र-જે तृतीये-જીવ અને પ્રકૃતિથી વિલક્ષણ ત્રીજા धामन्-ધામ = આધારભૂત જગદીશ્વરમાં अमृतम्-મોક્ષ સુખને आनशानाः-પ્રાપ્ત કરતાં देवाः-વિદ્વાન લોકો अध्यैरयन्त-સર્વત્ર સ્વેચ્છાપૂર્વક વિચરે છે.

જે विश्वा-સર્વ भुवनानि-લોક-લોકાન્તરો અને धामानि-જન્મ, સ્થાન અને નામોને वेद-જાણે છે; सः-તે પરમાત્મા नः-અમારા बन्धुः-ભાઈની સમાન માનનીય, સહાયક છે; जनिता-ઉત્પન્ન કરનાર છે; सः-તે विधाता-સર્વ પદાર્થો અને કર્મફલોનું વિધાન કરનાર છે; તેમ તમે નિશ્ચય કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે શુદ્ધ સ્વરૂપ પરમાત્મામાં યોગી વિદ્વાન જન મુક્તિ સુખને પ્રાપ્ત કરીને પ્રસન્ન રહે છે, તેને જ સર્વજ્ઞ, સર્વના ઉત્પાદક અને સહાયક = બંધુ માનવા જોઈએ. (૧૦)

प॒रीत्य॑ भू॒तानि॑ प॒रीत्य॑ लो॒कान् प॒रीत्य॒ सर्वाः॑ प्र॒दिशो॒ दिश॑श्च।
उ॒प॒स्थाय॑ प्रथम॒जामृ॒तस्या॒त्मना॒त्मान॑म॒भि सं वि॑वेश॥ ११॥

પદાર્થ : હે વિદ્વન્ ! આપ જે भूतानि-પ્રાણીઓને परीत्य-વ્યાપ્ત કરીને; लोकान्-દર્શનીય પૃથિવી, સૂર્ય આદિ લોકોને परीत्य-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરીને, सर्वाः-સર્વ प्रदिशः-આગ્નેય આદિ ઉપદિશાઓ, दिशः-પૂર્વ આદિ દિશાઓ, च-અને ઉપર તથા નીચેની દિશાઓને परीत्य-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરીને, ऋतस्य-સત્યના आत्मानम्-સ્વરૂપ વા અધિષ્ઠાનમાં अभि, सम्, विवेश-મુખ્ય રૂપથી સમ્યક્ પ્રવિષ્ટ કરે છે. તેથી प्रथमजाम्-પ્રથમ કલ્પ આદિમાં ઉત્પન્ન ચાર વેદરૂપ વાણીને उपस्थाय-ભણીને વા સમ્યક્ સેવન કરીને आत्मना-પોતાના શુદ્ધ સ્વરૂપ વા અન્તઃકરણથી તેને પ્રાપ્ત કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે ધર્માચરણ, વેદાભ્યાસ, યોગાભ્યાસ અને સત્સંગ આદિ કર્મોથી શરીરની પુષ્ટિ, આત્મા અને અન્તઃકરણની શુદ્ધિ કરીને, સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્માને પ્રાપ્ત કરીને સુખી રહો. (૧૧)

परि॒ द्यावा॑पृथि॒वी स॒द्यऽइ॒त्वा परि॑ लो॒कान् परि॒ दिशः॒ परि॒ स्वः॑।
ऋ॒तस्य॒ तन्तुं॒ वित॑तं वि॒चृत्य॒ तद॑पश्य॒त्तद॑भव॒त्तदा॑सीत्॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વર द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને ભૂમિને सद्यः-શીઘ્ર इत्वा-પ્રાપ્ત કરીને परि, अपश्यत्-સર્વત્રથી જુએ છે; જે लोकान्-દર્શનીય સૃષ્ટિસ્થ ભૂગોલોને सद्यः-શીઘ્ર इत्वा-પ્રાપ્ત કરીને

परि, अभवत्-સર્વત્ર રહે છે. જે दिशः-પૂર્વાદિ દિશાઓને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરીને परि, आसीत्-સર્વત્ર વિદ્યમાન છે.

જે स्वः-સુખને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરીને परि + अपश्यत्-સર્વત્ર જુએ છે, જે ऋतस्य-સત્યના विततम्-વિસ્તૃત तन्तुम्-કારણરૂપ તંતુને विचृत्य- વિવિધ પ્રકારથી ગૂંથીને બાંધીને तत्-તેના સુખને अपश्यत्-જુએ છે; જેથી तत्-તે સુખ अभवत्-થાય છે; જેથી तत्-તેનું વિજ્ઞાન आसीत्-છે, તેને યથાવત્ જાણીને તેની ઉપાસના કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પરમેશ્વરનું જ ભજન કરે છે, તેની રચેલી સૃષ્ટિનો સુખને માટે ઉપયોગ કરે છે, તેઓ ઐહિક = સાંસારિક અને પારમાર્થિક = આધ્યાત્મિક તથા વિદ્યાજન્ય સુખને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર આનંદિત રહે છે. (૧૨)

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषꣳ स्वाहा॥ १३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! હું स्वाहा-સત્યક્રિયા વા વાણીથી જે सदसः-સભા, જ્ઞાન, ન્યાય વા દંડથી पतिम्-રક્ષક = સ્વામી, अद्भुतम्-આશ્ચર્યપૂર્ણ ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા इन्द्रस्य-ઈન્દ્રિયના સ્વામી જીવેને માટે काम्यम्-કામના કરવા યોગ્ય, प्रियम्-પ્રીતિ વિષયવાળા, પ્રયત્ન કરવાવાળા વા સ્વયં સદા પ્રસન્ન રહેનારા પરમાત્માની ઉપાસના અને સેવા કરીને सनिम्-સત્ય-અસત્યનો સમ્યક્ વિભાગ કરનારી मेधाम्-ઉત્તમ બુદ્ધિને अयासिषम्-પ્રાપ્ત કરું છું. તે ઈશ્વરની સેવા કરીને એ બુદ્ધિને તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વશક્તિમાન પરમાત્માની સેવા કરે છે, તેઓ સર્વ વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરીને શુદ્ધ બુદ્ધિથી સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥ १४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! અધ્યાપક ! વા સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ હોવાથી વિદ્યાના જ્ઞાપક જગદીશ્વર ! देवगणाः-અનેક વિદ્વાનો અને पितरः-રક્ષા કરનાર જ્ઞાની લોકો याम्-જે मेधाम्-બુદ્ધિ વા ધનને उपासते-પ્રાપ્ત કરીને સેવન કરે છે, तया-તે मेधया-બુદ્ધિ વા ધનથી माम्-મને अद्य-આજે स्वाहा-સત્યવાણીથી मेधाविनम्-પ્રશસ્ત બુદ્ધિ વા ધનયુક્ત कुरु-કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની ઉપાસના અને વિદ્વાનોની સેવા કરીને શુદ્ધ વિજ્ઞાન અને ધર્મથી ઉત્પન્ન કરેલ ધનને પ્રાપ્ત કરવાની ઈચ્છા કરે તથા અન્યોને પણ એ રીતે પ્રાપ્ત કરાવે. (૧૪)

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा॥ १५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वरुणः-પરમેશ્વર વા શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ स्वाहा-ધર્માચરણથી मे-મારા

માટે मेधाम्-શુદ્ધ બુદ્ધિ વા ધનને ददातु-આપે अग्निः-વિદ્યાથી પ્રકાશિત प्रजापतिः-પ્રજાના રક્ષક વિદ્વાન मेधाम्-બુદ્ધિ આપે इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન मेधाम्-બુદ્ધિને આપે च-અને वायुः-બળદાતા અને બળવાન मेधाम्-બુદ્ધિ આપે च-અને धाता-સંસાર વા રાજ્યનું ધારણ કરનાર ઈશ્વર વા વિદ્વાન मे-મારા માટે બુદ્ધિ વા ધન ददातु-આપે, તેમ તમને પણ પ્રદાન કરે. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ પોતાને માટે ગુણ, કર્મ, સ્વભાવની તથા સુખની ઈચ્છા કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ કરે. જેમ પોતાની ઉન્નતિને માટે પ્રાર્થના કરે, તેમ અન્યોની ઉન્નતિ માટે પણ પરમેશ્વર અને વિદ્વાનોથી પ્રાર્થના કરે. માત્ર પ્રાર્થના જ નહિ પરંતુ સત્ય આચરણ પણ કરે. જ્યારે જ્યારે વિદ્વાનોની પાસે જાય, ત્યારે-ત્યારે સર્વના કલ્યાણને માટે પ્રશ્નોત્તર કરે. (૧૫)

इ॒दं मे॒ ब्रह्म॑ च क्ष॒त्रं चो॒भे श्रिय॑मश्नुताम्।
मयि॑ दे॒वा द॑धतु॒ श्रिय॒मुत्त॑मां॒ तस्यै॑ ते॒ स्वाहा॑॥ १६॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી અને હે વિદ્વાન્ ! તારા પુરુષાર્થથી स्वाहा-સત્યાચરણરૂપ ક્રિયાથી मे-મારા इदम्-આ ब्रह्म-વેદ અને ઈશ્વરનું વિજ્ઞાન વા તેના જ્ઞાતાપુરુષ = બ્રહ્મકુળ, च-અને क्षत्रम्-રાજ્ય, ધનુર્વેદની વિદ્યા તથા ક્ષત્રિયકુળ च-પણ આ उभे-બન્ને श्रियम्-રાજ્યની લક્ષ્મીને अश्नुताम्-પ્રાપ્ત કરે.

જેમ देवाः-વિદ્વાનો मयि-મારામાં उत्तमाम्-અતિશ્રેષ્ઠ, श्रियम्-શોભા અને લક્ષ્મીને दधतु-સ્થાપિત કરે, તેમ અન્યોમાં પણ કરે.

હે જિજ્ઞાસુ ! ते-તારા માટે तस्यै-ઉક્ત શ્રીની પ્રાપ્તિ માટે અમે પ્રયત્ન કરીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમાત્માની આજ્ઞાનાં પાલનથી, વિદ્વાનોની સેવા તથા સત્કારથી સર્વ મનુષ્યોમાંથી બ્રાહ્મણો અને ક્ષત્રિયોને સુરક્ષિત કરીને, તેઓને વિદ્યા આદિ સદ્‌ગુણોથી સંયુક્ત કરીને, સર્વની ઉન્નતિ કરીને પોતાના આત્માની સમાન સર્વની સાથે વ્યવહાર કરે છે, તેઓ સર્વના પૂજ્ય બની શકે છે. (૧૬)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમેશ્વર, વિદ્વાન, બુદ્ધિ તથા ધનની પ્રાપ્તિના ઉપાયો અને તેના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ त्रयस्त्रिंशत्तमाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

अस्याजरासो दमामरित्राऽअर्चद्धूमासोऽअग्नयः पावकाः।
श्वितीचयः श्वात्रासो भुरण्यवो वनर्षदो वायवो न सोमाः॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अस्य-એ પૂર્વ અધ્યાયોક્ત જગદીશ્વર અને પરમેશ્વરની સૃષ્ટિમાં अजरासः-વયહાનિ રહિત - વૃદ્ધાવસ્થા રહિત, अरित्राः-શત્રુઓથી રક્ષા કરનારા, अर्चद्धूमासः-સુગંધીથી યુક્ત ધૂમવાળા, पावकाः-પવિત્રકારક, श्वितीचयः-શ્વેત વર્ણને પસંદ કરનારા, श्वात्रासः-ધનની વૃદ્ધિ કરનારા, भुरण्यवः-ધારણ અને ગતિ કરનારા, सोमाः-ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવનારા, अग्नयः-વિદ્યુત્ આદિ છે; તેઓ वनर्षदः-વન = કિરણોમાં રહેનારા वायवः-પવનોની न-સમાન दमाम्-ઘરોને ધારણ કરનારા પદાર્થો છે; તેને તમે જાણો. (૧)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો અગ્નિ અને વાયુ આદિ સૃષ્ટિના પદાર્થોને જાણે, તો તેના દ્વારા અનેક ઉપકારો ગ્રહણ કરી શકે છે. (૧)

हरयो धूमकेतवो वातजूताऽउप द्यवि। यतन्ते वृथगग्नयः॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે धूमकेतवः-કેતુ = ધ્વજાની સમાન ધૂમ જેનો જ્ઞાપક છે, वातजूताः-વાયુથી તેજને પ્રાપ્ત થનાર, हरयः-હરણશીલ = દેશાન્તરમાં પહોંચાડનાર अग्नयः-અગ્નિઓ वृथक्-પૃથક્ द्यवि-પ્રકાશમાં उप + यतन्ते-ચેષ્ટા કરે છે; તેના કાર્યોની સિદ્ધિ માટે સમ્યક્ પ્રયોગ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેનો ધૂમ વિજ્ઞાપક છે, વાયુ પ્રદીપ્ત કરનાર છે અને જેમાં હરણશીલતા છે, તે અગ્નિઓ છે; તેમ જાણો. (૨)

यजा नो मित्रावरुणा यजा देवाँ२ऽऋतं बृहत्।
अग्ने यक्षि स्वं दमम्॥ ३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! આપ नः-અમારા मित्रावरुणा-મિત્ર, શ્રેષ્ઠજન અને देवान्-વિદ્વાનોનો यज-સત્કાર કરો; बृहत्-મહાન ऋतम्-સત્ય यज-પ્રદાન કરો અને તેનો ઉપદેશ કરો; જેથી स्वम्-પોતાનાં दमम्-ઘરને यक्षि-પ્રાપ્ત કરીએ. (૩)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! અમારા મિત્રો, શ્રેષ્ઠજનો અને વિદ્વાનોનો સત્કાર કરનારા, સત્યના ઉપદેશક તથા પોતાનાં ઘરનાં કાર્યોને સિદ્ધ કરનારા તમે બનો. (૩)

युक्ष्वा हि दे॑वहूत॑माँ२ऽअश्वाँ॑२ऽअग्ने र॒थीरि॑व। नि होता॑ पू॒र्व्यः स॑दः॥ ४॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ ! આપ रथीरिव-સારથિની સમાન देवहूतमान्-વિદ્વાનો દ્વારા અત્યંત સ્તુતિ પામેલ अश्वान्-શીઘ્રગામી અગ્નિ આદિ અથવા ઘોડાઓને युक्ष्व-યુક્ત કરો; पूर्व्यः-પૂર્વજ વિદ્વાનોથી વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને होता-ગ્રહણ કરનારા हि-જ नि + सदः-કાર્યોમાં સદા સ્થિર બનો. (૪)

ભાવાર્થ : જેમ સુશિક્ષિત સારથિ ઘોડાઓ દ્વારા અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ શિક્ષિત મનુષ્યે અગ્નિ આદિથી અનેક કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪)

द्वे विरू॑पे चरत॒ः स्वर्थे॑ऽअ॒न्यान्या॑ व॒त्समुप॑ धापयेते।

हरि॑र॒न्यस्यां॒ भव॑ति स्व॒धावा॑ञ्छु॒क्रो ऽ अ॒न्यस्यां॑ ददृशे सु॒वर्चाः॑॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ स्वर्थे-ઉત્તમ પ્રયોજનવાળી द्वे-બે विरूपे-વિરુદ્ધ રૂપવાળી સ્ત્રીઓ चरतः-ભોજનાદિ આચરણ કરે છે અને अन्यान्या-ભિન્ન ભિન્ન અલગ સમયમાં वत्सम्-નિરંતર બોલનારા બાળકને उप, धापयेते-નજીક લાવીને દૂધપાન કરાવે છે, તે બન્નેમાંથી अन्यस्याम्-એકમાં स्वधावान्-પ્રશસ્ત શાન્તિ આદિ સ્વધા = અમૃત સમાન ગુણ યુક્ત हरिः-મનોહર પુત્ર भवति-ઉત્પન્ન થાય છે; अन्यस्याम्-બીજી સ્ત્રીમાં शुक्रः-શીઘ્રકારી सुवर्चाः-સુંદર તેજસ્વી अन्यस्याम् ददृशे-ઉત્પન્ન થાય છે અર્થાત્ જોવામાં આવે છે.

એ જ રીતે સુંદર પ્રયોજન વાળા બે કાળા અને સફેદ ભિન્ન રૂપવાળા રાત્રિ અને દિવસ વિદ્યમાન છે, તેમાં ભિન્ન-ભિન્ન અલગ સમયમાં એક સંસારરૂપ બાળકને દૂધ વગેરે પીવડાવે છે, તે બન્નેમાંથી એક રાત્રિમાં અમૃતરૂપ ગુણવાળો, મનને પ્રસન્ન કરનાર ચંદ્રમા ઉત્પન્ન થાય છે અને બીજા દિવસ રૂપ સમયમાં પવિત્રકર્તા, સુંદર તેજવાળો સૂર્યરૂપ પુત્ર ददृशे-જોવામાં આવે છે. તેમ બન્ને રાત-દિવસ છે; તેમ તમે જાણો. (૫)

ભાવાર્થ : જેમ સંતાનનાં પ્રયોજનવાળી બે સ્ત્રીઓ અથવા ગાયો પૃથક્-પૃથક્ રહીને કાલભેદથી એક બાળકનું પાલન કરે છે; તેમાંથી એકમાં મનોહર, મહાન ગુણવાન અને શાન્ત સ્વભાવવાળો બાળક ઉત્પન્ન થાય છે અને બીજીમાં શીઘ્રકારી અને તેજસ્વી અને શત્રુઓને તપાવનાર બાળક ઉત્પન્ન થાય છે.

એ જ રીતે રાત અને દિવસ બન્ને ભિન્ન સ્વરૂપવાળા છે, કાલભેદથી એક સંસારનું પાલન કરે છે. કેવી રીતે ? રાત અમૃતની વર્ષા કરનાર, ચિત્તને પ્રસન્ન કરનાર ચન્દ્રમાને ઉત્પન્ન કરીને તથા દિવસ અગ્નિરૂપ, સુંદર પ્રકાશવાળા સૂર્યને ઉત્પન્ન કરીને સંસારનું પાલન કરે છે. (૫)

अ॒यमि॒ह प्र॑थ॒मो धा॑यि धा॒तृभि॒र्होता॒ यजि॑ष्ठो ऽ अध्व॒रेष्वीड्यः॑।

यमप्न॑वानो॒ भृग॑वो विरुरु॒चुर्वने॑षु चि॒त्रं वि॒भ्वं॑ वि॒शेवि॑शे॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ धातृभिः-ધારણ કરનારાથી इह-આ સંસારમાં विशे-विशे-પ્રત્યેક પ્રજાજનને માટે अयम्-આ વિદ્યુત્ આદિ સ્વરૂપવાળો અગ્નિ, જે प्रथमः-વિસ્તીર્ણ, होता-સુખદાતા, यजिष्ठः-અત્યંત

સંગમ કરાવનાર, अध्वरेषु-હિંસારહિત = રક્ષણીય વ્યવહારોમાં ईड्यः-સ્તુતિને યોગ્ય છે; તે धायि-ધારણ કરવામાં આવે છે.

જેમ भृगवः-દઢ જ્ઞાનવાળા તથા अप्नवानः-ઉત્તમ સંતાનવાળા શ્રેષ્ઠ શિષ્યજન यम्-જે वनेषु-વનો વા કિરણોમાં चित्रम्-આશ્ચર્યરૂપ ગુણ, કર્મ સ્વભાવવાળા विभ्वम्-વિભુ = વ્યાપક વિદ્યુત્ નામક અગ્નિને वि + रुरुचुः-વિશેષ રૂપથી પ્રદીપ્ત કરે છે; તેને તમે ધારણ અને પ્રકાશિત કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન આ સંસારમાં વિદ્યુત્‌ની વિદ્યાને જાણે છે, તે સર્વ પ્રજાને સમસ્ત સુખોથી યુક્ત કરી શકે છે. (૬)

त्रीणि॑ श॒ता त्री स॒हस्रा॑ण्य॒ग्निं त्रि॒ꣳशच्च॑ दे॒वा नव॑ चासपर्यन्।
औक्ष॑न् घृ॒तैरस्तृ॑णन् ब॒र्हिर॑स्मा ऽ आदिद्धोता॑रं॒ न्यसादयन्त॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ त्रिंशत्-પૃથિવી આદિ ત્રીસ, च-અને નવ પ્રકારના च-આ બધાં અને नव-નવ देवाः-વિદ્વાનો त्रीणि-ત્રણ शता-સો त्री-ત્રણ सहस्राणि-હજાર કોશ માર્ગમાં अग्निम्-અગ્નિનું असपर्यन्-સેવન કરે છે; घृतैः-ઘૃત અથવા જળથી તેને औक्षन्-સિંચે છે; बर्हिः-અન્તરિક્ષને अस्तृणन्-આચ્છાદિત કરે છે; अस्मै-એ અગ્નિને માટે होतारम्-હોમ કરનારાને आत्-સર્વત્ર इत्-જ नि + असादयन्त-સર્વદા સ્થાપિત કરે છે; તેમ તમે પણ કરો. (૭)

ભાવાર્થ : જે શિલ્પી વિદ્વાન અગ્નિ તથા જળ આદિ પદાર્થોને યાનોમાં સમ્યક્ પ્રયુક્ત કરીને ઉત્તમ, મધ્યમ તથા નિમ્ન વેગોથી અનેક સો, હજારો કોશોના માર્ગોને પાર કરી શકે છે, તેઓ આકાશ ગમનમાં પણ સમર્થ બની શકે છે. (૭)

मू॒र्द्धानं॑ दि॒वोऽअ॑र॒तिं पृ॑थि॒व्या वैश्वान॒रमृ॒तऽआ जा॒तम॒ग्निम्।
क॒विꣳस॒म्राज॒मति॑थिं॒ जना॑नामा॒सन्ना पात्रं॑ जनयन्त दे॒वाः॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ देवाः-શિલ્પી વિદ્વાન જન दिवः-આકાશના मूर्धानम्-શિરની સમાન ઉન્નત પ્રદેશમાં સૂર્યરૂપમાં વિદ્યમાન, पृथिव्याः-પૃથિવીને अरतिम्-પ્રાપ્ત, वैश्वानरम्-સર્વ મનુષ્યોને હિતકારી, ऋते-યજ્ઞના નિમિત્ત, आ, जातम्-સર્વત્ર પ્રાદુર્ભૂત, कविम्-ક્રાન્ત દર્શક, सम्राजम्-સમ્યક્ પ્રકાશમાન, जनानाम्-મનુષ્યોના अतिथिम्-અતિથિની સમાન પ્રથમ ભોજનમાં ભાગ લેનાર, पात्रम्-રક્ષાનાં સાધન, आसन्-ઈશ્વરનાં મુખરૂપ સામર્થ્યમાં ઉત્પન્ન થયેલ अग्निम्-અગ્નિને आ + जनयन्त-સારી રીતે પ્રકટ = પ્રાદુર્ભાવ કરે છે; તેમ તમે પણ તેનો પ્રાદુર્ભાવ કરો. (૮)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન પૃથિવી, જળ, વાયુ અને આકાશમાં વ્યાપ્ત વિદ્યુત્ નામક અગ્નિને પ્રકટ કરીને યંત્ર આદિથી યુક્તિપૂર્વક ચલાવે છે, તે કયા કયા કાર્યોને સિદ્ધ નથી કરી શકતા ? (૮)

अ॒ग्निर्वृ॒त्राणि॑ जङ्घनद् द्रविण॒स्युर्वि॑प॒न्यया॑। समि॑द्धः शु॒क्रऽआहु॑तः॥ ९॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જેમ समिद्धः-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત, शुक्रः-શીઘ્રકારી, अग्निः-સૂર્યાદિરૂપ અગ્નિ

वृत्राणि-મેઘનાં અંગોને-વાદળાંઓનું जङ्घनत्-અત્યંત હનન કરે છે, તેમ द्रविणस्युः-પોતાને ધન મેળવવાની ઈચ્છા કરીને; आहुतः-આપને નિમંત્રિત કરે છે - બોલાવે છે, विपन्यया-વિશેષ વ્યવહારની યુક્તિથી દુષ્ટોનું અત્યંત હનન કરો. (૯)

ભાવાર્થ : જેમ વ્યવહાર કુશળ મનુષ્ય ધન અને સત્કાર પ્રાપ્ત થતાં દોષોનો નાશ કરે છે, તેમ સૂર્ય મેઘને-વાદળાંઓને છિન્ન-ભિન્ન કરે છે. (૯)

विश्वेभिः सोम्यं मध्वग्नऽइन्द्रेण वायुना। पिबा मित्रस्य धामभिः॥ १०।

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! આપ જેમ સૂર્ય विश्वेभिः-સર્વ धामभिः-સ્થાનોથી इन्द्रेण-ધનના ધારક वायुना-બળવાન વાયુની સાથે सोम्यम्-સોમ = ઉત્તમ ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન मधु-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત રસનું પાન કરે છે; તેમ मित्रस्य-મિત્રનાં સર્વ સ્થાનોથી ઉત્તમ ઔષધિઓમાં વિદ્યમાન મધુરાદિ ગુણોથી યુક્ત રસનું पिब-પાન કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ સૂર્ય સર્વ પદાર્થોમાંથી રસ ચૂસીને, વર્ષા કરીને, સર્વ પદાર્થોને પુષ્ટ કરે છે, તેમ વિદ્યા અને વિનયથી સર્વને પુષ્ટ કરો. (૧૦)

आ यदिषे नृपतिं तेजऽआनट् शुचि रेतो निषिक्तं द्यौरभीके।
अग्निः शर्द्धमनवद्यं युवानꣳस्वाध्यं जनयत्सूदयच्च॥ ११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો यत्-જ્યારે इषे-વર્ષા માટે निषिक्तम्-અગ્નિમાં ઘૃત આદિ પડવાથી સર્વથા સિક્ત = વિસ્તૃત થઈને, शुचिः-પવિત્ર तेजः-યજ્ઞથી ઉત્પન્ન તેજ नृपतिम्-રાજાની સમાન સૂર્યને आ, आनट्-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરે છે; ત્યારે अग्निः-સૂર્યરૂપ અગ્નિ शद्र्धम्-બળને માટે, अनवद्यम्-નિર્દોષ, युवानम्-યુવકતાથી સંપાદક, स्वाध्यम्-ધ્યાન કરવા યોગ્ય, रेतः-વીર્યને ઉત્પન્ન કરનાર વર્ષા જળને द्यौः-આકાશની अभीके-નજીક जनयत्-ઉત્પન્ન કરે છે च-અને सूदयत्-વરસાવે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ અગ્નિમાં હોમવામાં આવેલા દ્રવ્યો તેજની સાથે સૂર્ય-કિરણોને પ્રાપ્ત થાય છે, સૂર્ય જળ આદિનું આકર્ષણ કરીને, વરસાવીને, સર્વનું પાલન કરે છે; તેમ રાજા પ્રજાઓ પાસેથી કર લઈને, જળ આદિનો સંગ્રહ કરીને, દુકાળમાં ફરી આપીને, શ્રેષ્ઠોનું પાલન કરીને, દુષ્ટોનું તાડન કરીને, દૃઢતા અને બળને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧)

अग्ने शर्द्ध महते सौभगाय तव द्युम्नान्युत्तमानि सन्तु।
सं जास्पत्यꣳ सुयममा कृणुष्व शत्रूयतामभि तिष्ठा महाꣳसि॥ १२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્વાન્ વા રાજન્ ! આપ महते-મહાન सौभगाय-સૌભાગ્ય = ઉત્તમ ઐશ્વર્યને માટે शर्द्ध-દુષ્ટ ગુણો તથા શત્રુઓના નાશક બળને आकृणुष्व-સર્વત્રથી ઉત્પન્ન કરો, જેથી तव-આપના द्युम्नानि-ધન વા યશ उत्तमानि-શ્રેષ્ઠ सन्तु-થાય.

આપ जास्यत्यं-સ્ત્રી-પુરુષના ભાવને सुयमम्-સુંદર નિયમો યુક્ત, શાસ્ત્રાનુકૂળ બ્રહ્મચર્યયુક્ત सम,

आ-સમ્યક્ સારી રીતે બનાવો - કરો. આપ शत्रूयताम्-શત્રુતાની ઈચ્છા કરનાર મનુષ્યોના महांसि-તેજ अभि, तिष्ठ-નષ્ટો કરો - તિરસ્કૃત કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે અત્યંત સંયમી મનુષ્ય છે, તેના મહાન ઐશ્વર્ય, બળ, કીર્તિ, સુશીલ = ઉત્તમ સ્વભાવવાળી પત્ની [પ્રાપ્ત થાય છે] અને શત્રુઓનો પરાજ્ય થાય છે. (૧૨)

त्वाँहि मन्द्रतममर्कशोकैर्ववृमहे महि नः श्रोष्यग्ने।
इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमाः॥ १३॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન વર્તમાન વિદ્વાન્ ! हि-જેથી આપ नः-અમે બ્રહ્મચર્ય આદિ સત્કર્મોમાં પ્રવૃત્ત જનોના महि-મહાન - ગંભીર વચનને श्रोषि-સાંભળો છો; તેથી मन्द्रतमम्-અત્યંત પ્રશંસા આદિ સત્કારને પ્રાપ્ત त्वाम्-આપને अर्कशोकैः-અર્ક = સૂર્યની સમાન શોક =પ્રકાશ યુક્ત જનોથી અથવા પદાર્થોથી અમે ववृमहे-સ્વીકાર કરીએ છીએ.

नृतमाः-જે અત્યંત નાયક - શ્રેષ્ઠ જન છે, તે शवसा-બળથી યુક્ત इन्द्रम्-સૂર્યની न-સમાન તેજસ્વી અને वायुम्-વાયુની સમાન બળવાન देवता-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત त्वा-આપને राधसा-ધનથી पृणन्ति-પાલન વા પરિપૂર્ણ કરીએ છીએ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો દુઃખોને સહન કરીને, સૂર્યની સમાન તેજસ્વી અને વાયુની સમાન બળવાન બનીને વિદ્યા તથા સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરે છે, તેઓ વાદળોથી સૂર્યની સમાન સર્વને આનંદિત કરનારા "પુરુષોત્તમ" બને છે. (૧૩)

त्वेअग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः।
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वान्दयन्त गोनाम्॥ १४॥

પદાર્થ : હે स्वाहुत-સુંદર રીતે વિદ્યાને ગ્રહણ કરનાર अग्ने-વિદ્વાન્ ! ये-જે जनानाम्-મનુષ્યોની મધ્યમાં વીર પુરુષ यन्तारः-જિતેન્દ્રિય, मघवानः-અતિ ધનવાન, गोनाम्-પૃથ્વી વા ગાય આદિના ऊर्वान्-હિંસકોનું दयन्त-હનન કરે છે; તેઓ सूरयः-વિદ્વાન્ त्वे-આપના प्रियासः-પ્રિય सन्तु-બનો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ વિદ્વાનો અગ્નિ આદિ પદાર્થ વિદ્યાને ગ્રહણ કરીને, વિદ્વાનોમાં પ્રિય બનીને, દુષ્ટોનો નાશ તથા ગાય આદિ પશુઓની રક્ષા કરીને મનુષ્યોમાં પ્રિય બને છે, તેમ તમે પણ બનો. (૧૪)

श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिर्देवैरग्ने सयावभिः।
आ सीदन्तु बर्हिषि मित्रोऽअर्य्यमा प्रातर्यावाणोऽअध्वरम्॥ १५॥

પદાર્થ : હે श्रुत्कर्ण-પ્રાર્થીનાં વચનને સાંભળનારા કાનોથી યુક્ત अग्ने-અગ્નિની સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ વા રાજન્ ! सयावभिः-સાથે ચાલનારા, वह्निभिः-કાર્યોના નિર્વાહક देवैः-વિદ્વાનોની સાથે अध्वरम्-હિંસારહિત રાજ્ય વ્યવહારને श्रुधि-સાંભળો.

प्रातर्यावाणः-પ્રાતઃકાલ રાજકાર્યોને પ્રાપ્ત કરાવનારા मित्रः-પક્ષપાત રહિત, સર્વના મિત્ર અને अर्यमा-અર્ય = વૈશ્ય અથવા સ્વામીજનોનું માન કરનાર ન્યાયાધીશ સર્વ बर्हिषि-આકાશની સમાન વિશાળ સભામાં आ, सीदन्तु-સારી રીતે બેસો. (૧૫)

ભાવાર્થ : સભાપતિ રાજાએ સુપરીક્ષિત મંત્રીઓની પસંદગી કરીને, તેઓની સાથે સભામાં બેસીને, વાદી - પ્રતિવાદીઓનાં વચનો સાંભળીને તથા તેની સમીક્ષા કરીને યથોચિત ન્યાય કરવો જોઈએ. (૧૫)

विश्वेषामदितिर्यज्ञियानां विश्वेषामतिथिर्मानुषाणाम्।
अग्निर्देवानामवऽआवृणानः सुमृडीको भवतु जातवेदाः॥ १६॥

પદાર્થ : હે સભાપતે ! આપ विश्वेषाम्-સર્વ यज्ञियानाम्-યજ્ઞ = પૂજાને યોગ્ય देवानाम्-વિદ્વાનોની મધ્યમાં अदितिः-અખંડિત બુદ્ધિવાળા; विश्वेषाम्-સર્વ मानुषाणाम्-મનુષ્યોમાં अतिथिः-પૂજનીય अवः-રક્ષા આદિનો आवृणानः-સારી રીતે સ્વીકાર કરતા, सुमृडीकः-ઉત્તમ સુખ પ્રદાન કરનાર, जातवेदाः-વિદ્યા અને યોગમાં પ્રસિદ્ધ બુદ્ધિવાળા अग्निः-તેજસ્વી રાજા भवतु-બનો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જે સર્વ વિદ્વાનોમાં ગંભીર બુદ્ધિવાળા, સર્વ મનુષ્યોમાં માનનીય, પ્રજાના રક્ષા આદિ રાજકાર્યનો સ્વીકાર કરનાર, સર્વ સુખોના દાતા વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા અને વીર પુરુષ હોય, તેને રાજા બનાવવો જોઈએ. (૧૬)

महोऽअग्नेः समिधानस्य शर्मण्यनागा मित्रे वरुणे स्वस्तये।
श्रेष्ठे स्याम सवितुः सवीमनि तद्देवानामवोऽअद्या वृणीमहे॥ १७॥

પદાર્થ : અમે રાજપુરુષો महः-મહાન समिधानस्य-પ્રકાશમાન अग्नेः-વિજ્ઞાનવાન સભાપતિના शर्मणि-આશ્રયમાં વિદ્યમાન श्रेष्ठे-શ્રેષ્ઠ मित्रे-મિત્ર અને वरुणे-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય મનુષ્યના પ્રત્યે अनागाः-અપરાધ રહિત स्याम-બનીએ.

अद्य-આજ सवितुः-સકળ જગતના ઉત્પાદક પરમેશ્વરની सवीमनि-આજ્ઞાનું પાલન કરતા स्वस्तये-સુખને માટે देवानाम्-વિદ્વાનોની तत्-વેદોક્ત अवः-રક્ષા આદિ કર્મનો वृणीमहे-સ્વીકાર કરીએ છીએ. (૧૭)

ભાવાર્થ : ધાર્મિક વિદ્વાન રાજપુરુષોએ અધર્મનો ત્યાગ કરીને, ધર્મમાં પ્રવૃત્ત થઈને, પરમેશ્વરની સૃષ્ટિમાં વિવિધ રચનાઓને જોઈને, પોતાની તથા અન્યોની રક્ષા કરીને ઈશ્વરનો ધન્યવાદ કરવો જોઈએ. (૧૭)

आपश्चित्पिप्यु स्तर्यो न गावो नक्षन्नृतं जरितारस्तऽइन्द्र।
याहि वायुर्न नियुतो नोऽअच्छा त्वꣳहि धीभिर्दयसे वि वाजान्॥ १८॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત વિદ્વાન્ ! ते-આપની जरितारः-સ્તુતિ કરનારા आपः-જલોની

સમાન पिप्युः-વૃદ્ધિ પામે છે; स्तर्यः-આચ્છાદિત કરનારા गावः-કિરણોની न-સમાન ऋतम्-સત્યને नक्षन्-વ્યાપ્ત કરે છે; તેમ वायुः-વાયુની न-સમાન वाजान्-વિજ્ઞાનવાન नः-અમને नियुतः-વાયુના વેગ આદિ ગુણોને, त्वम्-આપ अच्छ-સારી રીતે याहि-પ્રાપ્ત થાઓ; हि-જે કારણે धीभिः-બુદ્ધિ વા કર્મોથી वि, दयसे-વિશેષ કૃપા કરો છો, તેથી चित्-પણ સત્કારને યોગ્ય છો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જો પદાર્થોના ગુણ - કર્મ - સ્વાભાવોની સ્તુતિ કરનારા ઉપદેશકો અને અધ્યાપકો હોય, તો સર્વ મનુષ્યો વિદ્યામાં વ્યાપક બનીને દયાવાન બને છે. (૧૮)

गाव॒ऽउपा॑वतावतं म॒ही य॒ज्ञस्य॑ र॒प्सुदा॑। उ॒भा कर्णा॑ हिर॒ण्यया॑॥ १९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ गावः-ગાયો વા કિરણો उभा-બન્ને रप्सुदा-રૂપ આપનારી मही-મહાન આકાશ અને પૃથ્વીની રક્ષા કરે છે; તેમ તમે हिरण्यया-સુવર્ણના આભૂષણોથી યુક્ત कर्णा-કાનોની તથા यज्ञस्य-રક્ષા યોગ્ય યજ્ઞની अवतम्-વેદી આદિ કુંડની उप + अवत-સમીપ રહીને રક્ષા કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યના કિરણો તથા ગાય આદિ પશુઓ સર્વ વસ્તુઓની રક્ષા કરે છે, તેમ સર્વ મનુષ્યોએ સુવર્ણ આદિથી બનેલા કુંડલ આદિ આભૂષણોની સદા રક્ષા કરવી જોઈએ. (૧૯)

यद॒द्य सूर॒ऽउदि॒तेऽना॑गा मि॒त्रोऽअ॒र्य्य॒मा। सु॒वाति॑ स॒विता भगः॑॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्-જે अद्य-આજ सूरे-સૂર્યનો उदिते-ઉદય થતાં અર્થાત્ પ્રાપ્તઃકાલે अनागाः-અધર્માચરણથી રહિત मित्रः-સર્વના મિત્ર सविता-રાજનિયમોથી પ્રેરણા કરનાર, भगः-ઐશ્વર્યવાન, अर्य्यमा-ન્યાયકારી રાજા પ્રજામાં આરોગ્યને सुवाति-ઉત્પન્ન કરે છે, તે રાજ્ય કરવાને યોગ્ય બને છે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્યનો ઉદય થતાં અંધકારનો નાશ તથા પ્રકાશ પ્રકટ થતા સર્વ આનંદિત બને છે, તેમ ધાર્મિક રાજાના હોવાથી પ્રજામાં સર્વ પ્રકારનું આરોગ્ય રહે છે. (૨૦)

आ सु॒ते सि॑ञ्चत॒ श्रियं॒ रोद॑स्योरभि॒श्रिय॑म्। र॒सा द॑धीत वृ॒ष॒भम् तं प्र॒त्नथा॑। अयं वेनः॥ २१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! रसा-રસ અને આનંદ પ્રદાન કરનારા તમે, सुते-ઉત્પન્ન થયેલા જગતમાં, वृषभम्-અતિ બળવાન, रोदस्योः આકાશ અને પૃથ્વીને अभिश्रियम्-સર્વથી શોભાયમાન કરનારા श्रियम्-સ્વયં શોભાયુક્ત સભાપતિનો आ + सिञ्चत-સારી રીતે અભિષેક કરો; અને તે સભાપતિ તમને दधीत-ધારણ કરે. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે જુઓ અધ્યાય-૭નો મંત્ર ૧૨ અને ૧૬મો. (૨૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ રાજ્યની ઉન્નતિ દ્વારા સંસારને પ્રકાશિત કરનાર, સૌંદર્ય આદિ ગુણોથી સંપન્ન, બળવાન, વિદ્વાન, શૂરવીર અને સંપૂર્ણ અંગોવાળા મનુષ્યનો જ રાજ્યમાં [રાજાના રૂપમાં] અભિષેક કરવો જોઈએ. અને તે પ્રજાજનોમાં સુખને સ્થાપિત કરે છે. (૨૧)

आ॒तिष्ठ॑न्तं॒ परि॒ विश्वे॑ऽअभूष॒ञ्छ्रियो॒ वसा॑नश्चरति॒ स्वरो॑चिः।
म॒हत्तद्वृ॒ष्णो॒ऽअसु॑रस्य॒ नामा वि॒श्वरू॑पोऽअ॒मृता॑नि तस्थौ॥ २२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાનો ! विश्वे-આપ સર્વ જેમ श्रियः-ધનો વા શોભાઓને वसानः-ધારણ કરનાર, स्वरोचिः-સ્વયં દીપ્તિવાન, विश्वरूपः-સમસ્ત અર્થાત્ પદાર્થોમાં તેની સમાન રૂપથી વ્યાપ્ત અગ્નિ चरति-વિચરણ કરે છે; अमृतानि-નાશ રહિત વસ્તુઓમાં आ, तस्थौ-સ્થિત છે; તેમ એ आ + तिष्ठन्तम्-સારી રીતે સ્થિર અગ્નિને परि + अभूषन्-સર્વત્રથી શોભાયમાન કરો.

કારણ કે જે वृष्णः-વર્ષા કરનારા असुरस्य-હિંસક, વિદ્યુત્ નામક અગ્નિનું महत्-મહાન तत्-તે नाम-નામ છે; તેના સર્વ કાર્યોને શોભિત કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : જે કારણે એ વિદ્યુત્ નામક અગ્નિ સર્વ પદાર્થોમાં સ્થિત હોવા છતાં કોઈને પ્રકાશિત કરતો નથી, તેથી તેનું 'અસુર' ચોથુ નામ છે. જેઓ એ વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણે છે, તેઓ સર્વથી શોભાયમાન બને છે. (૨૨)

प्र वो महे मन्दमानायान्धसोऽर्चा विश्वानराय विश्वाभुवे।
इन्द्रस्य यस्य सुमखꣳ सहो महि श्रवो नृम्णं च रोदसी सपर्यतः॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! તું रोदसी-આકાશ અને ભૂમિ यस्य-જે इन्द्रस्य-પરમેશ્વરના सुमखम्-સુંદર મખ = યજ્ઞના કારણે नृम्णम्-ધન, सहः-બળ અને महि-મહાન श्रवः-યજ્ઞની सपर्यतः-સેવા કરે છે; તે विश्वानराय-સર્વ મનુષ્યો જેનાથી છે, તે महे-મહાન मन्दमानाय-આનંદ સ્વરૂપ, विश्वाभुवे-સર્વને પ્રાપ્ત વા સર્વ પૃથ્વીના સ્વામી વા જેનાથી સંસાર છે તે ઈશ્વરની प्र + अर्च-પૂજા કર.

તે वः-તમારા માટે अन्धसः-અન્ન આદિનું સુખ પ્રદાન કરે. (૨૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેને ઉત્પન્ન કરેલા ધન અને બળ આદિનું સર્વે સેવન કરે છે, તે જ મહાન યશસ્વી, સર્વના સ્વામી, આનંદમય, સર્વ વ્યાપ્ત, ઈશ્વર તમારા પૂજ્ય અને પ્રાર્થનીય છે, તે તમને ધનાદિથી ઉત્પન્ન સુખ પ્રદાન કરશે. (૨૩)

बृहन्निदिध्मऽएषां भूरि शस्तं पृथुः स्वरुः। येषामिन्द्रो युवा सखा॥ २४॥

પદાર્થ : येषाम्-જેના इध्मः-તેજસ્વી, पृथुः-વિસ્તાર યુક્ત, स्वरुः-પ્રતાપી, युवा-યુવાન, बृहन्-મહાન इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન પરમાત્મા सखा-મિત્ર છે; एषाम्-એ મનુષ્યોનાં इत्-જ भूरि-અતિ शस्तम्-સ્તુતિ યોગ્ય કર્મ હોય છે. (૨૪)

ભાવાર્થ : જેના ઉત્તમ પરમેશ્વર સખા = મિત્ર છે, તે જેમ આ બ્રહ્માંડમાં સૂર્ય પ્રતાપથી યુક્ત છે, તેમ પ્રતાપી હોય છે. (૨૪)

इन्द्रेहि मत्स्यन्धसो विश्वेभिः सोमपर्वभिः। महाँ२ऽअभिष्टिरोजसा॥ २५॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનાર વિદ્વાન્ ! જે કારણે આપ ओजसा-પરાક્રમની સાથે महान्-મહાન अभिष्टिः-સર્વત્રથી પૂજ્ય = સત્કારને યોગ્ય છો, તથા विश्वेभिः-સર્વ सोमपर्वभिः-સોમ આદિ

ઔષધિઓનાં અવયવોની સાથે अन्धसः-અન્નથી मत्सि-તૃપ્ત થાઓ છો, તે અમને आ, इहि-પ્રાપ્ત થાય. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે કારણે અન્ન આદિથી મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓનાં શરીર આદિનો નિર્વાહ થાય છે, તેથી તેઓની વૃદ્ધિ, સેવન તથા આહાર - વિહારને યથાવત જાણો. (૨૫)

इन्द्रो॑ वृ॒त्रम॑वृणो॒च्छर्द्ध॑नीति॒: प्र मा॒यिना॑ममिना॒द्वर्प॑णीतिः।
अह॒न् व्यꣳसमु॒शध॒ग्वने॑ष्वा॒विर्धेना॑ऽअकृणोद्रा॒म्याणा॑म्॥ २६॥

પદાર્થ : शर्द्धनीतिः-શર્દ્ધ = બળને પ્રાપ્ત કરાવનાર, वर्पणीतिः-વર્ષ = અનેક પ્રકારના રૂપોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, उशधक्-પારકા ધનની ઇચ્છા કરનારનો નાશ કરનાર, इन्द्रः-સૂર્ય સમાન પ્રતાપી સભાપતિ वृत्रम्-પ્રકાશને રોકનાર મેઘની સમાન ધર્મના નિરોધક દુષ્ટ શત્રુઓનું अवृणोत्-યુદ્ધને માટે વરણ કરે છે.

मायिनाम्-માયા = દુષ્ટ બુદ્ધિવાળા છલી, કપટી આદિનો प्र, अमिनात्-નાશ કરે છે; वनेषु-વનોમાં રહેનારા व्यंसम्-કપટી, અંસ = ભૂજાનાં મૂળથી રહિત ચોરનું अहन्-હનન કરે છે; राम्याणाम्-રમણ = આનંદિત કરનારા ઉપદેશકોની धेनाः-વાણીઓને आविः + अकृणोत्-પ્રકટ કરે છે; તે જ રાજા થવાને પાત્ર છે. (૨૬)

ભાવાર્થ : જે સૂર્યની સમાન સુશિક્ષિત વાણીઓને પ્રકટ કરે છે; જેમ અગ્નિ વનોને બાળે છે, તેમ દુષ્ટ શત્રુઓને બાળે છે; જેમ દિવસ રાત્રિને દૂર કરે છે, તેમ છળ, કપટ, અવિદ્યા આદિને દૂર કરે છે; જે બળને પ્રકટ કરે છે, તે સુપ્રતિષ્ઠિત રાજપુરુષ બને છે. (૨૬)

कु॒तस्त्वमि॑न्द्र॒ माहि॑न॒: सन्नेको॑ यासि सत्पते॒ किं त॑ऽइ॒त्था।
सं पृ॑च्छसे समरा॒णः शु॑भा॒नैर्वो॒चेस्तन्नो॑ हरिवो॒ यत्ते॑ऽअ॒स्मे महाँ२ऽ इन्द्रो॒ यऽओज॑सा । कु॒दा चु॒न स्तरी॑रसि। कु॒दा चु॒न प्रयु॑च्छसि॥ २७॥

પદાર્થ : હે सत्पते-શ્રેષ્ઠ સત્ય વ્યવહાર વા સત્પુરુષોના પાલક इन्द्र-સભાપતે ! माहिनः-મહત્ત્વથી યુક્ત અને પૂજ્ય = સત્કારને યોગ્ય त्वम्-આપ एकः-અસહાયી सन्-હોવા છતાં कुतः-કેવી રીતે यासि-પ્રાપ્ત થાવ છો વા વિચરણ કરો છો ? किम् + ते + इत्था-આમ કરવાનું આપનું પ્રયોજન શું છે ?

હે हरिवः-પ્રશંસિત મનોહર ઘોડાવાળા રાજન્ ! यत्-જે કારણે अस्मे-અમે ते-આપના છીએ; તેથી समराणः-સમ્યક્ ચાલતા આપ नः-અમને सम्, पृच्छसे-પૂછો, સંમતિ લો; शुभानैः-મંગલમય વચનોની સાથે तत्-તે એકાકી = અસહાય રહેવાનાં કારણને वोचेः-કહો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદના અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૪૦; અને અધ્યાય-૮નો મંત્ર-૨ અને ૩ જુઓ. (૨૭)

ભાવાર્થ : રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોએ સભાધ્યક્ષને આ રીતે કહેવું જોઈએ - હે સભાપતે ! આપે સહાયક વિના [એકલાએ] કોઈ કાર્ય ન કરવું જોઈએ. પરંતુ સજ્જનોની રક્ષા અને દુષ્ટોનો નાશ કરવામાં અમને સહાય રૂપમાં સદા રાખવા જોઈએ. આપે શુભાચરણયુક્ત બનીને અમારી શિષ્ટ જનોની સંમતિ

અને મૃદુ વચનો દ્વારા સંપૂર્ણ પ્રજા પર શાસન કરવું જોઈએ. (૨૭)

आ तत्तऽइन्द्रायवः पनन्ताभि यऽऊर्वं गोमन्तं तितृत्सान्।
सकृत्स्वं ये पुरुपुत्रां महीꣳ सहस्रधारां बृहतीं दुदुक्षन्॥ २८॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-રાજન્ ! જે ये-જે आयवः-સત્યને પ્રાપ્ત કરનારા પ્રજાજનો - सकृत्स्वम्-એક વાર ઉત્પન્ન કરનારી, पुरुपुत्राम्-અન્ન આદિ રૂપમાં પ્રકટ અનેક પુત્રો વાળી, सहस्रधाराम्-અસંખ્ય સુવર્ણ આદિ પદાર્થોવાળી અથવા અસંખ્ય પ્રાણીઓને ધારણ કરવાવાળી, बृहतीम्-વિસ્તીર્ણ महीम्-વિશાળ ભૂમિને दुदुक्षन्-દોહવા ઇચ્છે અર્થાત્ તેનાથી ઇચ્છાની પૂર્તિ કરવા ઇચ્છે છે.

ये-જે મનુષ્ય गोमन्तम्-દુષ્ટ ઇન્દ્રિયોવાળા લંપટ ऊर्वम्-હિંસકજનને अभि, तितृत्सान्-મુખ્ય રૂપથી तर्दन-મારવા ઇચ્છે છે; જે ते-આપના तत्-તે રાજકર્મની आ, पनन्त-પ્રશંસા કરે છે; તેની આપ સદા ઉન્નતિ કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : જે રાજભક્ત, દુષ્ટોના હિંસક અને એક વારમાં અનેક ફળ આપનારી તથા સર્વને ધારણ કરનારી ભૂમિને એક વારમાં દોહવાને સમર્થ હોય, તે રાજ્ય કાર્યોને કરવાને સમર્થ બની શકે છે. (૨૮)

इमां ते धियं प्र भरे महो महीमस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तऽआनजे।
तमुत्सवे च प्रसवे च सासहिमिन्द्रं देवासः शवसामदन्ननु॥ २९॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! હું महीम्-પૂજાને યોગ્ય વાણી તથા इमाम्-એ ते-આપની धियम्-બુદ્ધિ વા કર્મને प्र, भरे-ધારણ કરું છું; स्तोत्रे-સ્તુતિમાં यस्य-એ મારી धिषणा-બુદ્ધિ यत्-જે ते-આપને आनजे-પ્રકટ કરે છે ; तम्-તે शवसा-બળથી सासहिम्-અત્યંત સહન કરનાર इन्द्रम्-પરમ બળના યોગથી શત્રુઓના વિદારક સભાપતિને महः-મહાન કાર્યના उत्सवे-આનંદ સમયમાં च-અને प्रसवे-ઉત્પત્તિ કાળમાં च-પણ देवासः-વિદ્વાન લોકો अनु + अमदन्-અનુકૂળતાપૂર્વક આનંદિત કરે. (૨૯)

ભાવાર્થ : જો રાજા આદિ લોકો વિદ્વાનો દ્વારા ઉત્તમ બુદ્ધિ અને વાણી ગ્રહણ કરે છે, તેઓ સત્યને અનુકૂળ રહીને સ્વયં આનંદિત બનીને અન્યોને પણ આનંદિત કરે છે. (૨૯)

विभ्राड् बृहत्पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविहुतम्।
वातजूतो योऽअभिरक्षति त्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा वि राजति॥ ३०॥

પદાર્થ : यः-જે वातजूतः-વાયુથી વેગને પ્રાપ્ત સૂર્યની સમાન विभ्राड्-વિશેષ રૂપથી પ્રકાશમાન રાજા - अविहुतम्-અખંડિત आयुः-જીવનને यज्ञपतौ-યજ્ઞ = યુક્ત વ્યવહારના પાલક પોતાના આત્મામાં दधत्-ધારણ કરતા त्मना-આત્માથી प्रजाः-પ્રજાની अभिरक्षति-સર્વત્રથી રક્ષા કરો છો, पुपोष-પોષણ કરો છો. અને पुरुधा-અનેક પ્રકારથી वि राजति-વિશેષ કરીને પ્રકાશમાન બનો છો; તે આપ बृहत्-મહાન सोम्यम्-સોમ = ઔષધિના मधु-મધુર રસનું पिबतु-પાન કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે રાજા આદિ મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય વર્ષા દ્વારા સર્વને જીવન આપે છે અને સર્વનું પાલન કરે છે, તેમ તમે સદ્‌ગુણોથી મહાન બનીને ન્યાય અને વિનયથી પ્રજાજનોની નિરંતર રક્ષા કરો. (૩૦)

उदु त्यं जातवैदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्॥ ३१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે जातवेदसम्-ઉત્પન્ન થયેલ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન, देवम्-પ્રકાશમાન જે सूर्यम्-સૂર્યમંડળને विश्वाय-વિશ્વના दृशे-દર્શન માટે केतवः-કિરણો उत् + वहन्ति-આશ્ચર્યથી વહન કરે છે; त्यम्-તેને उ-વિચારપૂર્વક તમે જાણો. (૩૧)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય કિરણો દ્વારા સંસારના દર્શન કરાવે છે અને સ્વયં સુશોભિત બને છે, તેમ વિદ્વાન જનો સર્વ વિદ્યાઓ અને શિક્ષાઓને બતાવીને - દર્શાવીને સુશોભિત બને. (૩૧)

येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनाँ२ऽअनु। त्वं वरुण पश्यसि॥ ३२॥

પદાર્થ : હે पावक-પવિત્ર કર્તા, वरुण-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાન્ વા રાજન્ ! त्वम्-આપ येन-જે चक्षसा-પ્રકટ દર્શન વા ઉપદેશથી भुरण्यन्तम्-પાલન કરનાર મનુષ્યને अनु, पश्यसि-અનુકૂળ જુઓ છો; તેથી जनान्-અમે સર્વ મનુષ્યોને જુઓ અને અમે આપને અનુકૂળ વર્તાવ કરીએ. (૩૨)

ભાવાર્થ : જેમ રાજા અને રાજપુરુષો જેવી રીતે વ્યવહારથી પ્રજાજનોના પ્રત્યે વ્યવહાર કરે, તેમ તેવા જ ભાવથી તેઓના પ્રત્યે પ્રજાજનો પણ વર્તાવ-વ્યવહાર કરે. (૩૨)

दैव्यावध्वर्यूऽआ गतꣳरथेन सूर्यत्वचा। मध्वा यज्ञꣳ समञ्जाथे तं प्रत्नथा।
अयं वेनः। चित्रं देवानाम् ॥ ३३॥

પદાર્થ : હે देव्यौ-શ્રેષ્ઠ વિદ્વાનો વા દિવ્ય ગુણોમાં ચતુર अध्वर्यू-પોતાના અહિંસા રૂપ યજ્ઞના ઈચ્છુક બે રાજપુરુષો ! આપ सूर्यत्वचा-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન ત્વચા - બાહ્ય આવરણવાળા, रथेन-તે ગમનશીલ વિમાનાદિ યાનથી आ + गतम्-આવો; અને मध्वा-મૃદુ સામગ્રીથી यज्ञम्-યાત્રા, સંગ્રામ વા હવન રૂપ યજ્ઞને सम्, अञ्जाथे-સમ્યક્ પ્રકટ કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદના અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨; ૧૬ અને ૪૨માં જુઓ. (૩૩)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ મનુષ્યો સૂર્યના પ્રકાશની સમાન વિમાન આદિ યાનો, સંગ્રામ તથા હવન આદિ રચીને યાત્રા આદિ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરે. (૩૩)

आ नऽइडाभिर्विदथे सुशस्ति विश्वानरः सविता देवऽएतु।
अपि यथा युवानो मत्सथा नो विश्वं जगदभिपित्वे मनीषा॥ ३४॥

પદાર્થ : હે युवानः-બ્રહ્મચર્ય પૂર્વક વિદ્યા ભણેલા યુવકો ! यथा-જેમ विश्वानरः-સર્વના નાયક, देवः-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત सविता-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન ઉપદેશક - इडाभिः-સુશિક્ષિત વાણીઓથી विदथे-બતાવવા યોગ્ય વ્યવહારમાં सुशस्ति-સુંદર પ્રશંસાયુક્ત नः-અમારા विश्वम्-સર્વ जगत्-જંગમ = પુત્ર અને ગાય આદિને आ + एतु-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ अभिपित्वे-તેની સન્મુખ ગમનમાં તમે मत्सथ-આનંદિત રહો; જે नः-અમારી मनीषा-મેધા બુદ્ધિ છે, તેને अपि-પણ શુદ્ધ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે લોકો સૂર્યની સમાન વિદ્યાથી પ્રકાશિત આત્માવાળા, શરીર તથા આત્માથી પૂર્ણ યુવાન, સુશિક્ષિત, જિતેન્દ્રિય અને સુશીલ હોય છે, તેઓ સર્વને ઉપદેશ દ્વારા જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવી શકે છે. (૩૪)

यद॒द्य कच्च॑ वृत्रहन्नु॒दगा॑ऽअ॒भि सू॑र्य। सर्वं॒ तदि॑न्द्र ते॒ वशे॑॥ ३५॥

પદાર્થ : હે वृत्रहन्-વૃત્ર = મેઘનું હનન કરનાર સૂર્ય સમાન, सूर्य-વિદ્યારૂપ ઐશ્વર્યના ઉત્પાદક इन्द्र-વિદ્વાન્ ! ते-આપના यत्-જે अद्य-આજે सर्वम्-સર્વ કંઈ वशे-વશમાં છે; तत्-તેને कत् च-સર્વથા अभि + अगाः-ઉન્નત કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સૂર્યની સમાન અવિદ્યારૂપ અંધકાર અને દુષ્ટતાનું નિવારણ કરીને સર્વને વશીભૂત કરે છે, તેઓ અભ્યુદયને પ્રાપ્ત કરે છે. (૩૫)

त॒रणि॑र्वि॒श्वद॑र्शतो ज्यो॑ति॒ष्कृद॑सि सूर्य। विश्व॒मा भा॑सि रोच॒नम्॥ ३६॥

પદાર્થ : હે सूर्य-સૂર્યની સમાન પ્રકાશમાન રાજન્ ! જેમ तरणिः-સૂર્ય - विश्वदर्शतः-સર્વને જોવા યોગ્ય, ज्योतिष्कृत्-અગ્નિ, વિદ્યુત્, ચંદ્રમા , નક્ષત્ર, ગ્રહ, તારા આદિને પ્રકાશિત કરનાર સૂર્યલોક છે; તે रोचनम्-રુચિકારક, विश्वम्-સમગ્ર રાજ્યને પ્રકાશિત કરે છે; તેવા આપ असि-છો. જેથી આપ ન્યાય અને વિનયથી રાજ્યને आ, भासि-સારી રીતે પ્રકાશિત કરો છો, તેથી સત્કારને પાત્ર છો. (૩૬)

ભાવાર્થ : જો રાજપુરુષ વિદ્યાના પ્રકાશક હોય, તો સર્વને આનંદિત કરી શકે છે. (૩૬)

तत्सूर्य॑स्य दे॒व॒त्वं तन्म॑हि॒त्वं म॒ध्या कर्त्तो॒र्वित॑तं॒ꣳसं ज॑भार।
यदेदयु॑क्त ह॒रित॑ः स॒धस्था॒दाद्रात्री॒ वास॑स्तनुते सि॒मस्मै॑॥ ३७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જગદીશ્વર આકાશનાં मध्या-મધ્યમાં हरितः-જેમાં પદાર્થોનું હરણ થાય તે દિશાઓ અને विततम्-વિસ્તૃત કાર્ય જગતનો सम्, जभार-સંહાર કરીને પોતાનામાં લીન કરે છે; सिमस्मै-સર્વને માટે रात्री-રાતની સમાન वासः-અંધકાર રૂપ આચ્છાદનને तनुते-ફેલાવે છે; आत्-તદનન્તર सधस्थात्-એક સ્થાનથી અર્થાત્ સર્વ સાક્ષી વગેરેથી નિવૃત્ત થઈને એકાગ્ર इत्-જ अयुक्त-સમાધિસ્થ થાય છે; तत्-તે कर्त्तोः-કરવાને સમર્થ सूर्यस्य-ચરાચરના આત્મા - પરમાત્માના देवत्वम्-દેવત્વ तत्-તથા તેના महित्वम्-મહિમાને તમે જાણો. (૩૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો આપ લોકો જે ઈશ્વર સર્વ જગતની રચના, ધારણ અને વિનાશ કરે છે , તેના તે મહિમાને જાણીને નિરંતર તેની ઉપાસના કરો. (૩૭)

तन्मि॒त्रस्य॒ वरु॑णस्याभि॒चक्षे॒ सूर्यो॑ रू॒पं कृ॑णु॒ते द्योरु॒पस्थे॑।
अ॒न॒न्तम॒न्यद्रु॒शद॑स्य॒ पाज॑ः कृ॒ष्णम॒न्यद्ध॒रित॑ः सं भ॑रन्ति॥ ३८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! द्यौः-પ્રકાશની उपस्थे-સમીપમાં વિદ્યમાન सूर्यः-ચરાચરના આત્મા ઈશ્વર मित्रस्य-પ્રાણ અને वरुणस्य-ઉદાનના तत्-તે रूपम्-રૂપને कृणुते-રચે છે; જેથી મનુષ્ય अभिचक्षे-જુએ છે - જાણે છે; अस्य-તે પરમાત્માના रुशत्-શુદ્ધ સ્વરૂપ, पाजः-બળ, अनन्तम्-અપરિમિત अन्यत्-

આપણાથી ભિન્ન છે; અને अन्यत्-બીજા कृष्णाम्-અવિદ્યાદિ મલિન ગુણવાળા ભિન્ન જગતને हरितः-હરણશીલ દિશાઓ सम्, भरन्ति-ધારણ કરે છે, તેમ તમે જાણો. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અનંત બ્રહ્મ છે, તે પ્રકૃતિ અને જીવોથી ભિન્ન છે, એ રીતે પ્રકૃતિ નામક જગતનું કારણ વિભુ [વ્યાપક - વિસ્તૃત] છે. તેનાથી જે ઉત્પન્ન થાય છે, તે - તે સમય પ્રાપ્ત કરીને ઈશ્વરીય નિયમથી વિનિષ્ટ થઈ જાય છે.

જેમ જીવ પ્રાણ અને ઉદાન દ્વારા સર્વ વ્યવહારોને સિદ્ધ કરે છે, તેમ જ ઈશ્વર પોતાના અનંત સામર્થ્યથી આ [જગત]ની ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલય કરે છે. (૩૮)

बण्म॒हाँ२ऽअ॑सि॒ सूर्य॒ बडा॑दित्य म॒हाँ२ऽअ॑सि।
म॒हस्ते॑ स॒तो म॑हि॒मा प॑नस्यते॒ऽद्धा दे॑व म॒हाँ२ऽअ॑सि॥ ३९॥

પદાર્થ : હે सूर्य-ચરાચરના અન્તર્યામી ઈશ્વર ! જેથી આપ बट्-સત્ય જ महान्-મહાન છો; મહત્ત્વ આદિ ગુણોથી યુક્ત असि-છો.

હે आदित्य-અવિનાશી સ્વરૂપ ઈશ્વર ! જેથી આપ बट्-અનન્ત જ્ઞાનવાન તથા महान्-મહાન = મહત્ત્વ આદિ ગુણોથી યુક્ત असि-છો; सतः-સત્ય સ્વરૂપવાળા महः-મહાન ગુણોવાળા ते-આપના महिमा-મહિમાની पनस्यते-સ્તુતિ કરવામાં આવે છે.

હે देव-દિવ્ય ગુણ - કર્મ - સ્વભાવયુક્ત ઈશ્વર ! જેથી આપ अद्धा-પ્રસિદ્ધ તથા महान्-મહત્ત્વ આદિ ગુણોથી યુક્ત असि-છો; તેથી અમારા ઉપાસ્ય असि-છો. (૩૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરના મહિમાનુ સૂર્ય અને પૃથ્વી આદિ પદાર્થો જ્ઞાન કરાવે છે અને જે સર્વથી મહાન છે, તેને છોડીને કોઈ અન્યની ઉપાસના ન કરવી જોઈએ. (૩૯)

बट् सू॑र्य॒ श्रव॑सा म॒हाँ२ऽअ॑सि स॒त्रा दे॑व म॒हाँ२ऽअ॑सि।
म॒ह्ना दे॒वाना॑मसु॒र्यः पु॒रोहि॑तो वि॒भु ज्योति॒रदा॑भ्यम्॥ ४०॥

પદાર્થ : હે बट्-સત્ય सूर्य-સૂર્ય સમાન સર્વના પ્રકાશક ઈશ્વર ! જેથી આપ श्रवसा-યશ વા ધનથી महान्-મહાન असि-છો.

હે देव-દિવ્ય સુખ પ્રદાન કરનારા ઈશ્વર ! આપ सत्रा-સત્યને કારણે महान्-મહાન असि-છો.

જેથી આપ देवानाम्-પૃથ્વી આદિ દેવો વા વિદ્વાનોનાં पुरोहितः-પ્રથમથી હિતકારી છો, मह्ना-મહત્ત્વથી असुर्यः-પ્રાણોને માટે હિતૈષી થતા अदाभ्यम्-અહિંસનીય विभु-વ્યાપક ज्योतिः-પ્રકાશ સ્વરૂપ છો, તેથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૪૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરે સર્વના પાલનને માટે અન્ન આદિને ઉત્પન્ન કરનારી ભૂમિ, મેઘ અને પ્રકાશને ઉત્પન્ન કરનાર સૂર્ય બનાવેલ છે, તે જ પરમેશ્વર ઉપાસના કરવાને યોગ્ય છે. (૪૦)

श्रा॒यन्त॑ऽइव॒ सूर्यं॒ विश्वेदिन्द्र॑स्य भक्षत।
वसू॑नि जा॒ते जन॑मान॒ऽओज॑सा॒ प्रति॑ भा॒गं न दी॑धिम॥ ४१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે ओजसा-ઈશ્વરના સામર્થ્યથી जाते-ઉત્પન્ન થયેલ અને जनमाने-ઉત્પન્ન થનારા જગતમાં सूर्यम्-સ્વપ્રકાશ સ્વરૂપ, સર્વના આત્મા જગદીશ્વરનો श्रायन्तइव-આશ્રય કરતાં સમાન विश्वा-સર્વ वसूनि-વસ્તુઓને प्रति + दीधिम-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તથા भागम्, न-સેવનીય અંશના સમાન સેવન કરીએ છીએ; તેમ इत्-જ इन्द्रस्य-ઉત્તમ ઐશ્વર્યના એ ભાગનું તમે भक्षत-સેવન કરો. (૪૧)

ભાવાર્થ : જો અમે પરમેશ્વરનું સેવન કરતા વિદ્વાનોની સમાન બની જઈએ, તો આ સંસારમાં સમસ્ત ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરી શકીએ. (૪૧)

अ॒द्या दे॑वा॒ऽउदि॑ता॒ सूर्य॑स्य॒ निर॑ꣳह॑सः पिपृ॒ता निर॑व॒द्यात्।
तन्नो॑ मि॒त्रो वरु॑णो मामहन्ता॒मदि॑तिः॒ सिन्धुः॑ पृथि॒वीऽउ॒त द्यौः॥ ४२॥

પદાર્થ : હે देवा-વિદ્વાનો ! જેથી सूर्यस्य-સૂર્યનો उदित-ઉદય થતાં अद्य-આજ अंहसः-અપરાધથી नः-અમને निः-સર્વથા દૂર કરો છો; अवद्यात्-નિંદિત દુઃખથી निः + पिपृत-સર્વથા રક્ષા કરો છો; तत्-તેથી मित्रः-મિત્ર वरुणः-શ્રેષ્ઠ જન, अदितिः-આકાશ, सिन्धुः-સમુદ્ર, पृथिवी-ભૂમિ, उत-અને द्यौः-પ્રકાશ એ સર્વ नः-અમારો मामहन्ताम्-સત્કાર કરે છે. (૪૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન મનુષ્યો પ્રાણ આદિની સમાન સર્વને સુખ આપે છે, અપરાધથી દૂર રાખે છે, તેઓ જગતને શોભિત કરનારા છે. (૪૨)

आ कृ॒ष्णेन॒ रज॑सा॒ वर्त्त॑मानो निवे॒शय॑न्न॒मृतं॒ मर्त्यं॑ च।
हि॒र॒ण्यये॑न सवि॒ता रथे॒ना दे॒वो या॑ति॒ भुव॑नानि॒ पश्य॑न्॥ ४३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે हिरण्ययेन-જ્યોતિર્મય रथेन-રમણીય સ્વરૂપ તથા कृष्णेन-આકર્ષણથી रजसा-લોક સમૂહની સાથે आ, वर्तमानः-પોતાના ભ્રમણની આવૃત્તિ કરતા વિદ્યમાન થઈને भुवनानि-સર્વ લોકોને पश्यन्-દેખાડતા રહી देवः-પ્રકાશમાન सविता-સૂર્યદેવ अमृतम्-જળ વા મરણધર્મથી રહિત આકાશ આદિ च-અને मर्त्यम्-મરણધર્મા મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને निवेशयन्-પોત-પોતાના પ્રદેશમાં સ્થાપિત કરતાં રહી आ + याति-ઉદય - અસ્ત સમયમાં આવાગમન કરે છે; તે ઈશ્વરનો રચેલો સૂર્યલોક છે. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આ ભૂગોળ આદિ લોકોની સાથે તે સૂર્યનું આકર્ષણ છે, જે વર્ષાના દ્વારા અમૃતમય જલ વરસાવે છે અને જે સર્વ મૂર્ત પદાર્થોનો પ્રકાશક છે, તેમ સૂર્ય આદિને પણ ઈશ્વરનાં આકર્ષણ દ્વારા ધારણ કરવામાં આવેલ છે, એમ જાણવું જોઈએ. (૪૩)

प्र वा॑वृजे सु॒प्र॒या ब॒र्हिरे॑षा॒मा वि॒श्पती॑व॒ बीरि॑टऽइयाते।
वि॒शाम॒क्तोरु॒षस॑: पू॒र्वहू॑तौ वा॒युः पू॒षा स्व॒स्तये॑ नि॒यु॒त्वा॑न्॥ ४४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ पूर्वहूतौ-પૂર્વજોથી પ્રશંસિત सुप्रयाः-સારી રીતે ગતિવાળા, नियुत्वान्-શીઘ્રકારી વેગ આદિ ગુણવાળા वायुः-પવન અને पूषा-સૂર્ય एषाम्-એ મનુષ્યોનાં स्वस्तये-સુખને માટે प्र, वावृजे-ગતિ કરે છે; विशाम्-પ્રજાઓની મધ્યમાં विश्वपतीव-પ્રજા રક્ષક બે રાજાઓની સમાન बीरिटे-અન્તરિક્ષમાં आ + इयाते-સર્વત્ર ચલાવે છે; તેમ अक्तोः-રાત્રિ અને उषसः-દિવસનાં बर्हिः-જળને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વાયુ અને સૂર્ય ન્યાયકારી રાજાની સમાન પાલક છે, તે બન્ને ઈશ્વરના દ્વારા રચેલ છે, તેમ જાણવું જોઈએ. (૪૪)

इ॒न्द्र॒वा॒यू बृ॒ह॒स्पतिं॑ मि॒त्राग्निं पू॒षणं॒ भग॑म्। आ॒दि॒त्यान्मारु॑तं ग॒णम्॥ ४५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે इन्द्रवायू-વિદ્યુત્ અને પવન, बृहस्पतिम्-મોટા લોકોના રક્ષક સૂર્ય, मित्रा-મિત્ર = પ્રાણ, अग्निम्-અગ્નિ, पूषणम्-પુષ્ટિકારક भगम्-ઐશ્વર્ય, आदित्यान्-બાર મહિનાઓ, मारुतम्-મરુત = વાયુ સંબંધી गणम्-ગણ = સમૂહને જાણીને ઉપયોગ કરે છે; તેમ તમે પણ તેનો પ્રયોગ કરો. (૪૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સૃષ્ટિનાં વિદ્યુત્ આદિ પદાર્થોને જાણીને, તેને સંયુક્ત કરીને કાર્યોને સિદ્ધ કરવા જોઈએ. (૪૫)

वरु॑णः प्रावि॒ता भु॑वन्मि॒त्रो विश्वा॑भिरू॒तिभि॑:। कर॑तां नः सु॒राध॑सः॥ ४६॥

પદાર્થ : હે અધ્યાપક અને ઉપદેશક વિદ્વાનો ! જેમ वरुणः-ઉદાન વાયુની સમાન ઉત્તમ વિદ્વાન અને मित्रः-પ્રાણની સમાન પ્રિયમિત્ર विश्वाभिः-સર્વ ऊतिभिः-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી प्राविता-રક્ષક भुवत्-બને છે; તેમ આપ બન્ને नः-અમને सुराधसः-ઉત્તમ ધનથી યુક્ત करताम्-કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો પ્રાણની સમાન સર્વમાં પ્રીતિવાળા, ઉદાનની સમાન શરીર અને આત્માને બળ પ્રદાન કરનારા હોય છે, તે જ સર્વના રક્ષક બનીને, સર્વને ધનવાન બનાવી શકે છે. (૪૬)

अधि॑ न इन्द्रै॑षां॒ विष्णो॑ सजा॒त्या॒नाम्। इ॒ता मरु॑तो॒ अश्वि॑ना तं प्र॒त्नथा॑। अ॒यं वे॒नः। ये दे॒वास॑:। आ न॒ऽइडा॑भिः। विश्वे॑भिः सो॒म्यं मधु॑। ओमा॑सश्चर्षणीधृतः॥ ४७॥

પદાર્થ : હે इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા વિદ્વાન્ ! હે विष्णोः-વ્યાપક ઈશ્વર ! હે मरुतः-મનુષ્યો ! હે अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! તમે સર્વ सजात्यानाम्-અમારા સહયોગી एषाम्-એ नः-અમારી

મધ્યમાં अधि-સ્વામીત્વને इत-પ્રાપ્ત કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદના અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨, ૧૬ અને ૧૯; અધ્યાય-૩૩નો મંત્ર-૩૪ અને ૧૦ અને અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૩૩ જુઓ. (૪૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન્ ઈશ્વરની સમાન પક્ષપાત છોડીને અમારી મધ્યમાં વર્તાવ કરે છે, તેની સાથે અમે પણ તેવો વર્તાવ કરીએ. (૪૭)

अग्न॒ऽइन्द्र॒ वरु॑ण॒ मित्र॒ देवा॒: शर्द्ध॒: प्र य॑न्त॒ मारु॑तो॒त विष्णो।
उ॒भा नास॑त्या रु॒द्रोऽअ॑ध॒ ग्नाः पू॒षा भग॒: सर॑स्वती जु॒षन्त॥ ४८॥

પદાર્થ : હે अग्ने-વિદ્યાના પ્રકાશક વિદ્વાન્ ! इन्द्र-મહાન ઐશ્વર્યયુક્ત રાજન્ ! वरुण-અતિ શ્રેષ્ઠ જન मित्र-મિત્ર मारुत-મનુષ્યોની મધ્યમાં વિદ્યમાન પ્રધાન પુરુષ ! उत-અને विष्णो-વિદ્યામાં વ્યાપ્ત देवाः-વિદ્વાનો ! તમે અમારા માટે शर्द्धः-શરીર અને આત્માના બળને प्र, यन्त-પ્રદાન કરો.

उभा-બન્ને नासत्या-સત્ય સ્વરૂપ અધ્યાપક અને ઉપદેશક, रुद्रः-દુષ્ટોને રડાવનાર રુદ્ર, ग्नाः-સુશિક્ષિત વાણીઓ, पूषा-પોષક, भगः-ઐશ્વર્યવાન્ अध-અને ત્યારબાદ सरस्वती-પ્રશસ્ત જ્ઞાનથી સ્ત્રી એ સર્વે અમારી जुषन्त-સેવા કરે. (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વિદ્વાનોની સેવા કરીને વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરીને અન્યોને પણ વિદ્વાન્ બનાવવા જોઈએ. (૪૮)

इ॒न्द्रा॒ग्नी मि॒त्रावरु॒णादि॑ति॒ꣳ स्व॒: पृथि॒वीं द्यां म॒रुत॒: पर्व॑ताँ२ऽअ॒पः।
हु॒वे विष्णु॑ं पू॒षणं॒ ब्रह्म॑ण॒स्पतिं॒ भगं॒ नु शꣳस॑ꣳ सवि॒तार॑मू॒तये॑॥ ४९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું અધ્યાપક - ऊतये-રક્ષા આદિને માટે इन्द्राग्नी-સંયુક્ત વિદ્યુત્ અને અગ્નિ, मित्रावरुणा-મળેલા પ્રાણ અને ઉદાન, अदितिम्-અન્તરિક્ષ, पृथिवीम्-ભૂમિ, द्याम्-સૂર્ય, मरुतः-વિચારશીલ મનુષ્યો, पर्वतान्-વાદળો અથવા પહાડો अपः-જળ, विष्णुम्-વ્યાપક ઈશ્વર, पूषणम्-પુષ્ટિકર્તા, ब्रह्मणस्पतिम्-બ્રહ્માંડ વા વેદના પાલક ઈશ્વર, भगम्-ઐશ્વર્ય शंसम्-પ્રશંસાને યોગ્ય, सवितारम्-ઐશ્વર્યકારક રાજા વા જગતના ઉત્પાદક અને स्वः-સુખની नु-શીઘ્ર हुवे-સ્તુતિ કરું છું, તેમ તમે પણ તેની સ્તુતિ કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને અધ્યેતા = શિષ્ય લોકો પ્રકૃતિથી લઈને ભૂમિ સુધીના સર્વ પદાર્થોની રક્ષા આદિને માટે જાણે. (૪૯)

अ॒स्मे रु॒द्रा मे॒हना॒ पर्व॑तासो वृ॒त्रह॒त्ये भर॑हूतौ स॒जोषा॑:।
यः शꣳस॑ते स्तु॒वते॒ धायि॑ प॒ज्रऽइन्द्र॑ज्येष्ठाऽअ॒स्माँ२ऽअ॑वन्तु दे॒वाः॥ ५०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે पज्रः-ઐશ્વર્યને પેદા કરનાર જન જેની शंसते-પ્રશંસા કરે છે; स्तुवते-સ્તુતિ કરે છે; અને જે ધનને धायि-ધારણ કરે છે, તે મનુષ્યની તથા अस्मान्-અમારી - જે अस्मे-અમારી મધ્યમાં मेहना-ધન આદિને વેરે, रुद्राः-શત્રુઓને રડાવનાર, पर्वतासः-પર્વ = ઉત્સવ કરનારા,

वृत्रहत्ये-વૃત્ર = દુષ્ટને મારવા માટે भरहूतौ-સંગ્રામમાં આહ્વાન કરવા सजोषाः-સમાન રૂપમાં પ્રીતિ અને સેવા કરનારા, इन्द्रज्येष्ठाः-ઇન્દ્ર = સભાપતિને જ્યેષ્ઠ = મોટા માનનારા देवाः-વિદ્વાનો अवन्तु-રક્ષા કરે છે; તેઓ તમારી પણ રક્ષા કરે. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષો પદાર્થોની સ્તુતિ કરનારા, શ્રેષ્ઠોના રક્ષક, દુષ્ટોની તાડના કરનારા, સંગ્રામમાં ભાગ લેનારા, મેઘની સમાન પાલન કરનારા અને પ્રશંસનીય છે, તેઓની સર્વ લોકો સેવા કરે. (૫૦)

अर्वाञ्चोऽअद्या भवता यजत्राऽआ वो हार्दि भयमानो व्ययेयम्।
त्राध्वं नो देवा निजुरो वृकस्य त्राध्वं कर्त्तादवपदो यजत्राः॥ ५१॥

પદાર્થ : હે यजत्राः-સંગતિ કરવાવાળા देवाः-વિદ્વાન રાજપુરુષો ! તમે अद्य-આજ अर्वाञ्चः-અમારા સન્મુખ भवत-બને અર્થાત્ અમારી વિરુદ્ધ વિમુખ ન બનો.

भयमानः-ભયભીત થતાં હું वः-તમારા हार्दि-હૃદયમાં વિદ્યમાન મનને आ, व्ययेयम्-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરું.

नः-અમારી निजुरः-હિંસક वृकस्य-ચોર વા વ્યાઘ્રથી त्राध्वम्-રક્ષા કરો.

હે यजत्राः-વિદ્વાનોનો સત્કાર કરનારા રાજપુરુષો ! તમે अवपदः-પડવાના સ્થાન कर्त्तात्-કૂવા વા ખાડાથી અમારી त्राध्वम्-રક્ષા કરો. (૫૧)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનોએ રાજપુરુષોથી આ રીતે પ્રાર્થના કરવી જોઈએ - હે પૂજ્ય રાજપુરુષ વિદ્વાનો ! તમે સર્વ સર્વદા અમારા અવિરોધી, કપટ આદિથી રહિત તથા ભયને દૂર કરનાર બનો. ચોર અને વ્યાઘ્ર આદિથી તથા માર્ગ આદિના શોધન [વ્યવસ્થા] દ્વારા ખાડા વગેરેથી તમે અમારી રક્ષા કરો. (૫૧)

विश्वेऽअद्य मरुतो विश्वऽऊती विश्वे भवन्त्वग्नयः समिद्धाः।
विश्वे नो देवाऽअवसा गमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजोऽअस्मे॥ ५२॥

પદાર્થ : હે રાજા આદિ મનુષ્યો ! अद्य-આજ જેમ विश्वे-આપ સર્વ લોકો विश्वे-સર્વ मरुतः-મરણધર્મા મનુષ્ય, विश्वे-સર્વ समिद्धाः-પ્રદીપ્ત अग्नयः-અગ્નિઓ ऊती-રક્ષા આદિ ક્રિયાથી नः-અમારા રક્ષક भवन्तु-બને છે.

विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો अवसा-રક્ષા આદિની સાથે नः-અમને आ + गमन्तु-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ विश्वम्-સર્વ द्रविणम्-ધન અને वाजः-અન્ન अस्मै-એ મનુષ્યને માટે अस्तु-પ્રાપ્ત થાય. (૫૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેવું સુખ પોતાના માટે ઈચ્છે, તેમ અન્યોને માટે પણ ઈચ્છે. આ સંસારમાં જે વિદ્વાનો છે, તેઓ અધર્માચરણથી પૃથક્ બનીને અન્યોને પણ તેવા બનાવે. (૫૨)

विश्वे देवाः शृणुतेमꣳ हवं मे येऽअन्तरिक्षे यऽउप द्यवि ष्ठ।
येऽअग्निजिह्वाऽ उत वा यजत्राऽआसद्यास्मिन् बर्हिषि मादयध्वम्॥ ५३॥

પદાર્થ : હે विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો ! તમે ये-જે अन्तरिक्षे-આકાશમાં અને ये-જે द्यवि-પ્રકાશમાં વિદ્યમાન પદાર્થ છે; તેને स्थ-જાણવાવાળા બનો. ये-જે अग्निजिह्वा-જિહ્વાની સમાન અગ્નિવાળા उत-અને वा-અથવા यजत्राः-સંગતિ અને પૂજાને યોગ્ય જે પદાર્થ છે; તેને स्थ-જાણવાવાળા બનો. मे-મારા इमम्-આ हवम्-અધ્યયન - અધ્યાપન રૂપ વ્યવહારને उप + श्रृणुत्-સમીપથી સાંભળો. अस्मिन्-એ बर्हिषि-સભામાં અથવા આસન પર आसद्य-બેસીને मादयध्वम्-આનંદિત બનો. (૫૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેટલા ભૂમિ, અન્તરિક્ષ અને પ્રકાશ = દ્યુલોકમાં પદાર્થો છે, તેને જાણીને, વિદ્વાનોની સભા કરીને, વિદ્યાર્થીઓની પરીક્ષા કરીને, વિદ્યા અને સુશિક્ષાની વૃદ્ધિ કરીને સ્વયં આનંદિત બનીને અન્યોને સદા આનંદિત કરો. (૫૩)

देवेभ्यो हि प्रथमं यज्ञियेभ्योऽमृतत्वꣳ सुवसि भागमुत्तमम्।
आदिद्दामानꣳ सवितर्व्यूर्णुषेऽनूचीना जीविता मानुषेभ्यः॥ ५४॥

પદાર્થ : હે सवितः-સકલ જગતના ઉત્પાદક જગદીશ્વર ! हि-કારણ કે આપ यज्ञियेभ्यः-યજ્ઞની સિદ્ધિ કરનારા देवेभ्यः-વિદ્વાનોને માટે उत्तमम्-શ્રેષ્ઠ प्रथमम्-મુખ્ય अमृतत्वम्-મોક્ષરૂપ भागम्-સેવન કરવા યોગ્ય સુખને सुवसि-પ્રેરિત કરો છો; ઉત્પન્ન કરો છો.

आत्, इत्-તદનન્તર જ दामानम्-સુખદાયક પદાર્થ અને अनूचीना-જાણવાના સાધન जीविता-જીવનના હેતુ કર્મોને मानुषेभ्यः-મનુષ્યોને માટે वि, ऊर्णुषे-વિસ્તૃત કરો છો; તેથી અમારા માટે ઉપાસના યોગ્ય છે. (૫૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે પરમેશ્વરના જ યોગથી અને વિદ્વાનોના સંગથી સર્વોત્તમ સુખ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરો. (૫૪)

प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा बृहद्रयिं विश्ववारꣳ रथप्राम्।
द्युतद्यामा नियुतः पत्यमानः कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो॥ ५५॥

પદાર્થ : હે प्रयज्यो-અત્યંત યજ્ઞ કરનાર વિદ્વાન્ ! नियुतः-નિશ્ચિત પુરુષો - પદાર્થોને पत्यमानः-પ્રાપ્ત કરનાર कविः-મેધાવી વિદ્વાન બનીને આપ જે આપની बृहती-મહાન मनीषा-પ્રજ્ઞા =બુદ્ધિ છે; તેનાથી बृहद्रयिम्-બહુ જ ધનોને માટે विश्ववारम्-સર્વને આચ્છાદિત કરનાર रथप्राम्-વિમાન આદિ યાનો વ્યાપ્ત કરનારા, द्युतद्यामा-પ્રકાશમાન અગ્નિને પ્રાપ્ત થનારા वायुम्-પ્રાણ આદિ સ્વરૂપ વાયુ અને कविम्-મેધાવી વિદ્વાનનો अच्छ-સારી રીતે प्र, इयक्षसि-સંગ કરવા ઇચ્છો છો, તેથી સર્વને માટે સત્કારને યોગ્ય છો. (૫૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય વિદ્વાનને પ્રાપ્ત કરીને પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત બુદ્ધિ તથા સર્વ ધનને પ્રાપ્ત કરે છે, તે સત્કારને યોગ્ય છે. (૫૫)

इन्द्रवायूऽइमे सुताऽउप प्रयोभिरा गतम्। इन्दवो वामुशन्ति हि॥ ५६॥

પદાર્થ : હે इन्द्रवायू-વિદ્યુત્ અને વાયુ વિદ્યાના જ્ઞાતા વિદ્વાનો ! તમારા માટે इमे-એ सुताः-તૈયાર

કરેલા પદાર્થો વિદ્યમાન છે; हि-કારણ કે इन्दवः-સોમ આદિ ઔષધિઓનો રસ वाम्-તમારી उशन्ति-કામના કરી રહેલ છે, અર્થાત્ તમારે યોગ્ય છે; તેથી प्रयोभिः-ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી તેને उप + आ + गतम्-સમીપથી સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે કારણે તમે અમારા પર કૃપા કરો છો, તેથી તમને સર્વ પ્રાપ્ત કરવા-મળવા ઈચ્છે છે. (૫૬)

मित्रꣳ हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम्। धियं घृताचीꣳ साधन्ता॥ ૫૭॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું धियम्-બુદ્ધિ અને घृताचीम्-ઘૃત્ = શીતલતા રૂપ જળને પ્રાપ્ત થનારી રાત્રિને साधन्ता-સિદ્ધ કરનારા પ્રાણ અને ઉદાનને તથા पूतदक्षम्-પવિત્ર બળયુક્ત, मित्रम्-મિત્ર, च-અને रिशादसम्-દુષ્ટ હિંસકને મારનાર, वरुणम्-ધર્માત્મા જનોનો हुवे-સ્વીકાર કરું છું; તેમ તમે પણ તેનો સ્વીકાર કરો.

ભાવાર્થ : જેમ પ્રાણ અને ઉદાન બુદ્ધિ અને રાત્રિને સિદ્ધ કરે છે, તેમ વિદ્વાનો સર્વ ઉત્તમ સાધનોને ગ્રહણ કરીને કાર્યોની સિદ્ધિ કરે. (૫૭)

दस्रा युवाकवः सुता नासत्या वृक्तबर्हिषः। आ यातꣳ रुद्रवर्त्तनी तं प्रत्नथा। अयं वेनः॥॥ ૫૮॥

પદાર્થ : હે नासत्या-અસત્ય આચરણથી રહિત, रुद्रवर्त्तनी-રુદ્રની સમાન અર્થાત્ દુષ્ટરોધક ન્યાયાધીશની સમાન આચરણ કરનારા, दस्रा-દુષ્ટોના નિવારક બે વિદ્વાનો ! જે वृक्तबर्हिषः-યજ્ઞથી પૃથક્ અર્થાત્ ભોજનને માટે, युवाकवः-તમને ઈચ્છનાર, सुताः-સિદ્ધ કરેલા પદાર્થો છે; તેને તમે आ + यातम्-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે યજુર્વેદ અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨ અને ૧૬ જુઓ. (૫૮)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોને યોગ્ય છે, કે જે મનુષ્યો વિદ્યાની કામના કરે છે, તેને વિદ્યા પ્રદાન કરે. (૫૮)

विदद्यदी सरमा रुग्णमद्रेर्महि पाथः पूर्व्यꣳ सध्र्यक्कः।
अग्रं नयत्सुपद्यक्षराणामच्छा रवं प्रथमा जानती गात्॥ ૫૯॥

પદાર્થ : यदि-જો सरमा-પતિને અનુકૂળ રમણ કરનારી, प्रथमा-પ્રખ્યાત, सुपदी-સુંદર પગોવાળી, अक्षराणाम्-અકાર આદિ વર્ણોના रवम्-ઉચ્ચારણને जानती-જાણતી સ્ત્રી; रुग्णम्-રોગી પ્રાણીને विदत्-જાણે, अग्रम्-આગળ नयत्-પ્રાપ્ત થયેલ હોય, सध्र्यक्-સાથે પ્રાપ્ત થનાર, पूर्व्यम्-પૂર્વ પ્રાપ્ત महि-મહાન ગુણયુક્ત अद्रेः-મેઘથી ઉત્પન્ન થયેલ पाथः-અન્નને कः-પેદા કરે અર્થાત્ ભોજન માટે તૈયાર કરે અને પતિને अच्छे-સારી રીતે गात्-પ્રાપ્ત કરે, તો તે સ્ત્રી સર્વ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૯)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી વૈદ્યની સમાન સર્વનું હિત કરનારી, ઔષધની સમાન [ગુણકારી] અન્નને તૈયાર કરી શકે તથા યથાયોગ્ય વાણી-વ્યવહારને જાણતી હોય, તે ઉત્તમ સુખને નિરંતર પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૫૯)

नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरऽएतारमग्नेः।
एमेनमवृधन्नमृताऽअमर्त्यं वैश्वानरं क्षैत्रजित्याय देवाः॥ ६०॥

પદાર્થ : જે अमृताः-આત્મ સ્વરૂપથી મરણધર્મથી રહિત, देवाः-વિદ્વાનો - अमर्त्यम्-નિત્ય વ્યાપક રૂપ અર્થાત્ મૃત્યુધર્મથી રહિત, वैश्वानरम्-સર્વના - વિશ્વના નાયક ઈશ્વર, क्षैत्रजित्याय-જે ક્રિયાથી ક્ષેત્રોને જીતવા માટે તે ભૂમિ રાજ્ય થવાને માટે एनम्-એ અગ્નિને आ, अवृधन्-સારી રીતે વધારે છે; તેઓ ईम्-સર્વત્રથી अस्मात्-એ वैश्वानरात्-સર્વ મનુષ્યોના હિતકારી अग्नेः-પવિત્ર કરનારા પરમેશ્વરથી पुरएतारम्-અગ્રગામી અને શીઘ્રકારી अन्यम्-અન્ય કોઈને स्पशम्-દૂત नहि + अविदन्-જાણતા નથી. (૬૦)

ભાવાર્થ : જે નાશ અને ઉત્પત્તિથી રહિત મનુષ્ય દેહધારી જીવ; વિજયને માટે ઉત્પત્તિ અને નાશ રહિત, સંસારના સ્વામી પરમાત્માની ઉપાસના કરીને, તેથી ભિન્નની તેની સમાન ઉપાસના કરતા નથી, તેઓ બંધનો ત્યાગ કરીને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૬૦)

उग्रा विघनिना मृधऽइन्द्राग्नी हवामहे। ता नो मृडातऽईदृशे॥ ६१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! અમે જે उग्रा-અધિક બળવાન તેજસ્વી સ્વભાવવાળા, मृधः-હિંસકોનું विघनिना-વિશેષ કરીને હનન કરનારા, इन्द्राग्नी-સભાપતિ અને સેનાપતિ છે, તેને हवामहे-બોલાવીએ છીએ; ता-તેઓ ईदृशे-એવા સંગ્રામ આદિ વ્યવહારમાં नः-અમને मृडातः-સુખી કરે છે. (૬૧)

ભાવાર્થ : જે સભાપતિ અને સેનાપતિ પક્ષપાતનો ત્યાગ કરીને, બળની વૃદ્ધિ કરીને શત્રુઓને જીતે છે, તેઓ સર્વને સુખ પ્રદાન કરનારા હોય છે. (૬૧)

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ२ऽइयक्षते॥ ६२॥

પદાર્થ : હે नरः-નાયક અધ્યાપક લોકો ! તમે देवान्-વિદ્વાનોનો अभि-સર્વત્રથી इयक्षते-સત્કાર કરવાના ઈચ્છુક अस्मै-એ पवमानाय-પવિત્ર કરનારા इन्दवे-સરળ વિદ્યાર્થીને उप + गायन्त-સમીપસ્થ થઈને શાસ્ત્રોનું અધ્યયન કરાવો. (૬૨)

ભાવાર્થ : જેમ જિજ્ઞાસુ લોકો અધ્યાપકોને સંતુષ્ટ કરવા ઈચ્છે છે, તેમ અધ્યાપક લોકો પણ તેને ભણાવવાની કામના - ઈચ્છા કરે. (૬૨)

ये त्वाहिहत्ये मघवन्नवर्द्धन्ये शाम्बरे हरिवो ये गविष्टौ।
ये त्वा नूनमनुमदन्ति विप्राः पिबेन्द्र सोमꣳ सगणो मरुद्भिः॥ ६३॥

પદાર્થ : હે मघवन्-ઉત્તમ પૂજિત ધનથી યુક્ત સેનાપતિ ! ये-જે विप्राः-બુદ્ધિમાન જનો अहिहत्ये-અહિ = મેઘની હત્યા કરનારા गविष्टौ-કિરણોની સંગતિમાં સૂર્યની સમાન त्वा-આપને अवर्धन्-

ઉત્સાહિત કરે છે - વૃદ્ધિ કરે છે.

હે हरिवः-હરિ = કિરણોની સમાન ચમકતા ઘોડાવાળા સેનાપતે ! ये-જે લોકો शाम्बरे-મેઘ અને સૂર્યના સંગ્રામમાં વિદ્યુત્‌ની સમાન त्वा-આપની વૃદ્ધિ કરે. ये-જે नूनम्-નિશ્ચિત રૂપથી [त्वा-આપને] अनु, मदन्ति-અનુકૂળતાથી આનંદિત કરે છે; અને ये-જે તારી રક્ષા કરે છે.

હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યથી યુક્ત વિદ્વાન્ ! આપ તે मरुद्भिः-વાયુની સમાન મનુષ્યોની સાથે सगणः-ગણ સહિત વિદ્યમાન થઈને - જેમ સૂર્ય રસનું પાન કરે છે, તેમ सोमम्-શ્રેષ્ઠ ઔષધિઓના રસનું - पिब-પાન કર. (૬૩)

ભાવાર્થ : જેમ મેઘ અને સૂર્યના સંગ્રામમાં સૂર્યની જ જીત થાય છે, તેમ મૂર્ખો અને વિદ્વાનોના સંગ્રામમાં વિદ્વાનોની જીત થાય છે. (૬૩)

जनिष्ठाऽउग्रः सहसे तुराय मन्द्रऽओजिष्ठो बहुलाभिमानः।
अवर्द्धन्निन्द्रं मरुतश्चिदत्र माता यद्वीरं दधनद्धनिष्ठा॥ ६४॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! धनिष्ठा-અત્યંત ધનવાળી माता-માતાએ यत्-જે वीरम्-શૂરતાદિ ગુણોથી યુક્ત આપ પુત્રનું दधनत्-પોષણ કરેલ છે; इन्द्रम्-સૂર્યને मरुतः-વાયુની चित्-સમાન સભાસદ લોકો જે આપની अवर्धन्-વૃદ્ધિ કરે છે; તે આપ अत्र-આ રાજ્યપાલન રૂપ વ્યવહારમાં सहसे-બળ અને तुराय-વેગને માટે उग्रः-તેજસ્વી સ્વભાવવાળા मन्द्रः-સ્તુતિ, પ્રશંસાને પ્રાપ્ત આનંદ પ્રદાન કરનારા, ओजिष्ठः-અત્યંત પરાક્રમી बहुलाभिमानः-અનેક પ્રકારના પદાર્થોનાં અભિમાનવાળા બનીને સુખને जनिष्ठाः-ઉત્પન્ન કરો. (૬૪)

ભાવાર્થ : જે [રાજા] સ્વયં, બ્રહ્મચર્ય દ્વારા શરીર અને આત્માનાં બળથી યુક્ત વિદ્વાન છે, તે દુષ્ટોના પ્રત્યે ઉગ્ર અર્થાત્ કઠોર સ્વભાવવાળા, તે શ્રેષ્ઠ પ્રત્યે મૃદુ - [શાન્ત] સ્વભાવવાળા તથા અનેક ઉત્તમ સભાસદોથી આવૃત્ત થઈને, ધર્માત્મા બનીને, ન્યાય અને વિનયપૂર્વક રાજ્યનું પાલન કરે છે, તેની સર્વત્રથી ઉન્નતિ થાય છે. (૬૪)

आ तू नऽइन्द्र वृत्रहन्नस्माकमर्द्धमा गहि। महान्महीभिरूतिभिः॥ ६५॥

પદાર્થ : હે वृत्रहन्-શત્રુઓના વિનાશક इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજન્ ! આપ अस्माकम्-અમારી अर्द्धम्-વૃદ્ધિ - ઉન્નતિને आ + गहि-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો. આપ महान्-અત્યંત પૂજ્ય બનીને महीभिः મહાન ऊतिभिः-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી नः-અમને तु-શીઘ્ર आ + दधनत्-સર્વત્રથી - સારી રીતે પુષ્ટ કરો. (૬૫)

ભાવાર્થ : હે રાજન્ ! જેમ આપ અમારા રક્ષક અને વર્ધક છો, તેમ અમે પણ આપની વૃદ્ધિ કરીએ, આપણે સર્વ મળીને દુષ્ટોનું નિવારણ કરીને શ્રેષ્ઠોને ધનાઢ્ય કરીએ. (૬૫)

त्वमि॑न्द्र प्र॒तूर्त्ति॑ष्व॒भि विश्वा॑ऽअसि॒ स्पृधः॑।
अ॒श॒स्ति॒हा ज॑नि॒ता वि॑श्व॒तूर॑सि॒ त्वं तू॑र्य्य तरुष्य॒तः॥ ६६॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાતા રાજન્ ! જે કારણે त्वम्-આપ प्रतूर्तिषु-હિંસા કર્મ કરનારા સંગ્રામોમાં विश्वाः-સર્વ स्पृधः-ઈર્ષાથી યુક્ત શત્રુઓની સેનાઓને अभि-असि-અભિભૂત કરો છો; अशस्तिहा-નિંદક શત્રુઓનું હનન કરનાર; जनिता-સુખોને કરનાર, विश्वतूः-સર્વ શત્રુઓનું હનન કરનાર બની त्वम्-આપ વિજયી असि-બનો છો, તેથી तरुष्यतः-હનન કરવા યોગ્ય શત્રુઓને तूर्य-મારો. (૬૬)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ અધર્મયુક્ત કર્મોના નિવારક, સુખોના ઉત્પાદક અને યુદ્ધ વિદ્યાઓમાં નિપુણ હોય છે, તેઓ શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૬૬)

अनु॑ ते॒ शुष्मं॑ तु॒रय॑न्तमीयतुः क्षो॒णी शिशुं॒ न मा॒तरा॑।
विश्वा॑स्ते॒ स्पृधः॑ श्नथयन्त म॒न्यवे॑ वृ॒त्रं यदि॑न्द्र॒ तूर्व॑सि॥ ६७॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-શત્રુ વિદારક રાજન્ ! ते-આપના तुरयन्तम्-શત્રુઓને હણી નાખતા शुष्मम्-શત્રુઓના શોષક બળને शिशुम्-બાળકને मातरा-માતા-પિતાની न-સમાન क्षोणी-પોતાની અને પારકી ભૂમિ अनु + ईयतुः-અનુગમન કરે છે; તે ते-આપના मन्यवे-ક્રોધથી विश्वाः, स्पृधः-સર્વ શત્રુઓની ઈર્ષા કરનારી સેનાઓ श्नथयन्त-નષ્ટ - ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે; यत्-જે वृत्रम्-ન્યાયના નિરોધક શત્રુને આપ तूर्वसि-મારો છો; તે પરાજિત થાય છે. (૬૭)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષોની જે હૃષ્ટ-પુષ્ટ અને યુદ્ધને માટે પ્રતિજ્ઞાબદ્ધ સેનાઓ હોય, તે સર્વત્ર વિજય પ્રાપ્ત કરી શકે છે. (૬૭)

य॒ज्ञो दे॒वानां॒ प्रत्ये॑ति सु॒म्नमादि॑त्यासो॒ भव॑ता मृड॒यन्तः॑।
आ वो॒ऽर्वाची॑ सु॒म॒तिर्व॑वृत्याद॒ꣳहोश्चि॒द्या व॑रिवो॒वित्त॒रास॑त्॥ ६८॥

પદાર્થ : હે आदित्यासः-સૂર્યની સમાન તેજસ્વી પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત રાજપુરુષો ! આપ જેમ देवानाम्-વિદ્વાનોનો यज्ञः-સંગતિ યોગ્ય સંગ્રામ આદિ વ્યવહાર सुम्नम्-સુખ प्रत्येति-પહોંચાડે છે, તેમ मृडयन्तः-સુખદાતા भवत-બનો.

જેમ वः-તમારી वरिवोवित्तरा-અત્યંત સેવાને પ્રાપ્ત કરનારી अर्वाची-અમારી અભિમુખ - અનુકૂળ सुमतिः-ઉત્તમ બુદ્ધિ आववृत्यात्-છે; તે अंहोः-અપરાધીઓના પ્રત્યે चित्-તેવી સુખ આપનારી અમારે અનુકૂળ બુદ્ધિ असत्-થાય. (૬૮)

ભાવાર્થ : જે દેશમાં પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત રાજકર્મચારી હોય છે, ત્યાં સર્વની એક મતિ - વિચાર થઈને અત્યંત સુખની વૃદ્ધિ થાય છે. (૬૮)

अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वꣳ शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम्।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नोऽअघशꣳसऽ ईशत॥ ६९॥

પદાર્થ : હે सवितः-અનેક પદાર્થોના ઉત્પાદક તેજસ્વી વિદ્વાન રાજન્ ! त्वम्-આપ अदब्धेभिः-અહિંસિત शिवेभिः-કલ્યાણકારી पायुभिः-રક્ષાઓથી अद्य-આજ नः-અમારા गयम्-પ્રશંસાને યોગ્ય સંતાન, ધન વા ઘરની परिपाहि-સર્વત્રથી રક્ષા કરો; हिरण्यजिह्वः-સર્વના હિતમાં રમણ કરનારી જિહ્વા = વાણીથી યુક્ત બનીને આપ नव्यसे-અત્યંત નવીન सुविताय-ઐશ્વર્યને માટે नः-અમારી रक्ष-રક્ષા કરો જેથી अघशंसः-પાપની પ્રશંસા કરનારા ચોર नः-અમારા પર माकिः + ईशत-સમર્થ ન બને. (૬૯)

ભાવાર્થ : પ્રજાજનો દ્વારા રાજપુરુષને આ રીતે સંબોધન કરવું જોઈએ - તમે અમારા સંતાન, ધન અને ઘર આદિ પદાર્થોની રક્ષાથી નવા નવા ઐશ્વર્ય અમને પ્રાપ્ત કરાવીને, અમને પીડા આપનારને અમારાથી દૂર રાખો. (૬૯)

प्र वीरया शुचयो दद्रिरे वामध्वर्युभिर्मधुमन्तः सुतासः।
वह वायो नियुतो याह्यच्छा पिबा सुतस्यान्धसो मदाय॥ ७०॥

પદાર્થ : હે રાજા અને પ્રજાજનો ! જે वाम्-તમારા બન્નેના मधुमन्तः-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનથી યુક્ત, सुतासः-વિદ્યા અને ઉત્તમ શિક્ષાથી નિષ્પન્ન, शुचयः-પવિત્ર મનુષ્ય अध्वर्युभिः-હિંસા અને અન્યાયથી વર્જિત કર્મોની સાથે वीरया-વીર પુરુષોથી યુક્ત સેનાથી શત્રુઓને प्रदद्रिरे-સારી રીતે વિદીર્ણ કરે છે; તેની સાથે - હે वायो-વાયુની સમાન બલિષ્ઠ રાજન્ ! આપ नियुतः-નિરંતર મિશ્રિત - અમિશ્રિત થનાર વાયુ આદિના ગુણોને वह-પ્રાપ્ત કરો તથા अच्छा-સારી રીતે સ્વયં याहि-પ્રાપ્ત કરો, मदाय-આનંદને માટે सुतस्य-સિદ્ધ કરેલ अन्धसः-અન્નના રસનું पिब-પાન કરો. (૭૦)

ભાવાર્થ : જે પવિત્ર આચરણવાળા, રાજા અને પ્રજાના ભક્ત, વિજ્ઞાન સંપન્ન રાજપુરુષ - વીરસેના દ્વારા શત્રુઓનો નાશ કરે છે, તેને પ્રાપ્ત કરીને રાજા આનંદિત બને.

રાજા જેમ પોતાના માટે આનંદની કામના કરે, તેમ રાજપુરુષો અને પ્રજાજનોને માટે પણ આનંદની કામના કરે. (૭૦)

गावऽउपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा। उभा कर्णा हिरण्यया॥ ७१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ रप्सुदा-સુંદર રૂપ પ્રદાન કરનારી उभा-બન્ને कर्णा-કાર્યસાધક हिरण्यया-જ્યોતિ સ્વરૂપ मही-મહત્ પરિમાણવાળા સૂર્ય અને પૃથ્વી, यज्ञस्य-સંગત સંસારની अवतम्-કૂવાના જળની સમાન રક્ષા કરનારી બને અને गावः-કિરણો પણ રક્ષક બને, તેમ તેની તમે उप + अवत-રક્ષા કરો.

ભાવાર્થ : જેમ ખેડૂતો કૂવાના જળથી ખેતર અને બગીચાઓની રક્ષા કરીને ધનવાન બને છે, તેમ પૃથ્વી અને સૂર્ય સર્વને માટે ધનકારક બને છે. (૭૧)

काव्ययोराजानेषु क्रत्वा दक्षस्य दुरोणे। रिशादसा सधस्थऽआ॥ ७२॥

પદાર્થ : હે रिसादसा-અવિદ્યા આદિ દોષોના નાશક અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો ! તમે બન્ને काव्ययोः-કવિ = વિદ્વાનોના રચિત વ્યવહાર અને પરમાર્થના પ્રતિપાદક ગ્રંથો તથા आजानेषु-સર્વત્ર વિદ્વાનોને ઉત્પન્ન કરનારા પઠન-પાઠન આદિ વ્યવહારોમાં क्रत्वा-બુદ્ધિ વા કર્મની સાથે दक्षस्य-કુશળ જનની सधस्थे-સભામાં અને दुरोणे-ઘરમાં आ-આવો. (૭૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકો રાજપુરુષ અને પ્રજાજનોને પ્રાજ્ઞ =વિદ્વાન, બળવાન, નીરોગ, પરસ્પર પ્રીતિમાન, ધર્માત્મા અને પુરુષાર્થી બનાવે છે, તેઓ પિતાની સમાન સત્કારને યોગ્ય છે. (૭૨)

दैव्यावध्वर्यू आ गतꣳ रथेन सूर्यत्वचा। मध्वा यज्ञꣳ समञ्जाथे तं प्रत्नथा। अयं वेनः॥॥ ७३॥

પદાર્થ : હે दैव्यौ-વિદ્વાનોમાં કુશળ-પ્રવીણ अध्वर्यू-પોતાની અહિંસાના ઈચ્છુક બે વિદ્વાનો ! તમે सूर्यत्वचा-સૂર્યની સમાન પ્રદીપ્ત ત્વચાયુક્ત रथेन-રમણના સાધન યાનથી आ, गतम्-આવો; આવીને मध्वा-મધુર ભાષણથી यज्ञम्-ગમન નામક વ્યવહારને सम, अञ्जाथे-સમ્યક્ પ્રકટ કરો; બતાવો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે જુઓ અધ્યાય-૭નો મંત્ર-૧૨ અને ૧૬મો. (૭૩)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ - જે પૃથ્વી, જળ અને અન્તરિક્ષમાં ચાલનારા, સુશોભિત, સૂર્યની સમાન પ્રકાશિત યાન બનાવવા જોઈએ અને તેના દ્વારા અભીષ્ટ કામનાઓને સિદ્ધ કરવી જોઈએ. (૭૩)

तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधः स्विदासी३दुपरि स्विदासी३त्।
रेतोधाऽआसन्महिमानऽआसन्त्स्वधाऽअवस्तात्प्रयतिः परस्तात्॥ ७४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! एषाम्-એ વિદ્યુત્ અને સૂર્ય આદિની तिरश्चीनः-તિરછી ગતિવાળા विततः-વિસ્તૃત रश्मिः કિરણ વા દીપ્તિ अधः-નીચેની તરફ स्वित्-પણ आसीत्-છે; उपरि-ઉપર स्वित्-પણ आसीत्-છે; अवस्तात्-અહીં અને परस्तात्-તહીં प्रयतिः-પ્રયત્નશીલ છે; તેના વિજ્ઞાનથી रेतोधाः-પરાક્રમને ધારણ કરનારા आसन्-બને તથા महिमानः-પૂજ્ય અને स्वधा-ધનને ધારણ કરનારા બનીને આપ લોકો ઉપકારી आसन्-બનો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્યુત્‌ની દીપ્તિ સર્વની અંદર સ્થિત રહીને સર્વ દિશાઓમાં વ્યાપ્ત છે, તે જ સર્વને ધારણ કરે છે, તેમ તમે જાણો. (૭૪)

आ रोदसीऽअपृणदा स्वर्महज्जातं यदेनमपसोऽअधारयन्।
सोऽअध्वराय परि णीयते कविरत्यो न वाजसातये चनोहितः॥ ७५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यत्-જે વિદ્યુત્‌રૂપી અગ્નિ रोदसी-દ્યૌ, પૃથિવી અને महत्-મહાન जातम्-પ્રસિદ્ધ स्वः-અન્તરિક્ષને आ, अपृणत्-સારી રીતે વ્યાપ્ત કરી રહેલ છે; एनम्-એ અગ્નિને अपसः-કર્મ आ, अधारयन्-ધારણ કરે છે; તથા જે कविः-શબ્દનો હેતુ અગ્નિ છે; તેને अध्वराय-અહિંસા નામક

શિલ્પમય યજ્ઞને માટે તથા वाजसातये-વેગના સમ્યક્ સેવનને માટે अत्यः-માર્ગને વ્યાપ્ત કરનાર ઘોડાઓની नः-સમાન વિદ્વાનોના દ્વારા परि + नीयते-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરી શકાય છે; सः-તે चनोहितः-ચન = પૃથ્વીનાં અન્નને માટે હિતકારી છે, તેમ તમે જાણો. (૭૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અનેક પ્રકારનાં વિજ્ઞાન અને કર્મોથી વિદ્યુત્ રૂપ અગ્નિની વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, ભૂમિ આદિમાં વ્યાપ્ત અને વિભાગકર્તા સિદ્ધ કરેલા તથા યાન આદિને શીઘ્ર ચલાવનારા અગ્નિનો કાર્યોમાં ઉપયોગ કરવો જોઈએ. (૭૫)

उक्थेभिर्वृत्रहन्तमा या मन्दाना चिदा गिरा। आङ्गूषैराविवासतः॥ ७६॥

પદાર્થ : या-જે मन्दाना-આનંદ આપનારા वृत्रहन्तमा-વૃત્ર = પાપીઓનુ હનન કરનારા સભાધ્યક્ષ અને સેનાપતિની चित्-સમાન गिरा-વાણીથી आङ्गूषैः-ઉદ્‌ઘોષો અને उक्थेभिः-પ્રશસનીય, સ્તુતિઓના સાધક, વેદના વિભાગ વિશેષ 'ઉકથ' મંત્રોથી શિલ્પ વિજ્ઞાનને आ विवासतः-સર્વથી સેવા કરે છે; તે અધ્યાપકો અને ઉપદેશકોની મનુષ્યોએ आ-સારી રીતે - સર્વત્રથી સેવા કરવી જોઈએ. (૭૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય સભાધ્યક્ષ અને સેનાધ્યક્ષની સમાન વિદ્યા આદિ કાર્યોના સાધક, ઉત્તમ ઉપદેશોથી સર્વને વિદ્વાન્ બનાવવામાં પ્રવૃત્ત હોય, તેઓનો જ સર્વ સત્કાર કરે. (૭૬)

उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये। सुमृडीका भवन्तु नः॥ ७७॥

પદાર્થ : ये-જે नः અમારા सूनवः-સંતાન अमृतस्य-નાશરહિત પરમેશ્વર વા નિત્ય વેદની गिरः-વાણીઓને उप, शृण्वन्तु-અધ્યાપક આદિની સમીપ સાંભળે છે; તેઓ नः-અમારા માટે सुमृडीकाः-ઉત્તમ સુખ આપનારા भवन्तु-બને. (૭૭)

ભાવાર્થ : જે માતા-પિતા પોતાના પુત્રો અને કન્યાઓને બ્રહ્મચર્ય, વેદ-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત કરીને શરીર અને આત્માથી બળવાન બનાવે, તો તેને માટે - સંતાનોને માટે અત્યંત સુખકારી બને. (૭૭)

ब्रह्माणि मे मतयः शꣳ सुतासः शुष्मऽइयर्त्ति प्रभृतो मेऽअद्रिः।
आ शासते प्रति हर्य्यन्त्युक्थेमा हरी वहतस्ता नोऽअच्छ॥ ७८॥

પદાર્થ : सुतासः-વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી યુક્ત, ઐશ્વર્યવાન, मतयः-બુદ્ધિમાન વિદ્વાન્ - मे-મારા માટે यानि-જે ब्रह्माणि-ધનોની प्रति + हर्यन्ति-પ્રતીતિથી કામના કરે છે, इमा-એ उक्था-પ્રશંસનીય વેદ વચનોની आ, शासते-આશા કરે છે; शुष्मः-બલકારી, प्रभृतः-સારી રીતે હવન આદિથી પુષ્ટ કરેલ अद्रिः-મેઘ मे-મારા માટે જે शम्-સુખને इयर्त्ति-અર્પિત કરે છે; ता-તેને नः-અમારે માટે हरी-હરણશીલ અધ્યાપક અને વિદ્યાર્થી अच्छा-સારી રીતે वहतः-પ્રાપ્ત કરાવે છે. (૭૮)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે કર્મથી વિદ્યા અને મેધા = બુદ્ધિની ઉન્નતિ થાય તેમ ક્રિયા કરો. જે તમારી વિદ્યા અને સુશિક્ષાની કામના કરે છે, તેને પ્રીતિપૂર્વક પ્રદાન કરો; જે આપનાથી અધિક વિદ્યાવાન હોય, તેનાથી તમે વિદ્યા ગ્રહણ કરો. (૭૮)

अनु॑त्तमा ते॑ मघव॒न्नकि॒र्नु न त्वावाँ॑२ऽअस्ति दे॒वता॒ विदा॑नः।
न जाय॑मानो॒ नश॑ते॒ न जा॒तो यानि॑ करि॒ष्या कृ॑णु॒हि प्र॑वृद्ध॥ ७९॥

પદાર્થ : હે प्रवृद्ध-સર્વથી શ્રેષ્ઠ, સર્વપૂજ્ય, मघवन्-વિપુલ ધનવાન ઈશ્વર ! જે ते-આપનું अनुत्तम्-અપ્રેરિત = ગતિરહિત સ્વરૂપ છે, त्वावान्-આપની સમાન देवता-દેવતા विदानः-વિદ્વાન नु-નિશ્ચયથી ખરેખર કોઈ न-નથી.

આપ जायमानः-ઉત્પન્ન થનાર न-નથી અને जातः-ઉત્પન્ન થયા પણ न-નથી. यानि-જગતની ઉત્પત્તિ આદિ જે કર્મોને આપ करिष्या-કરશો અને कृणुहि-કરો છો; તેને કોઈ પણ नकिः-નહિ आ, नशते-સ્મૃતિથી વ્યાપ્ત કરે છે, જેથી આપ સર્વના ઉપાસ્ય દેવ છો. (૭૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વર સમસ્ત ઐશ્વર્યવાન, અસદૃશ - કોઈની સમાન નહિ, અનંત વિદ્યાવાન, ઉત્પન્ન થયા નથી, ઉત્પન્ન થશે નહિ અને મહાન છે, તેની જ તમે નિરંતર ઉપાસના કરો. (૭૯)

तदिदा॑स॒ भुव॑नेषु॒ ज्येष्ठं॒ यतो॑ ज॒ज्ञ उ॒ग्रस्त्वे॒षनृ॑म्णः।
स॒द्यो ज॑ज्ञा॒नो निरि॑णाति॒ शत्रू॑ननु॒ यं विश्वे॒ मद॒न्त्यूमाः॑॥ ८०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यतः-જેનાથી उग्रः-તેજ સ્વભાવવાળા, त्वेषनृम्णः-અત્યંત પ્રકાશિત ધનયુક્ત વીર પુરુષ जज्ञे-ઉત્પન્ન થાય છે; જે जज्ञानः-ઉત્પન્ન થઈને शत्रून्-શત્રુઓને सद्यः-શીઘ્ર निरिणाति-નિરંતર મારે છે.

विश्वे-સર્વ ऊमाः-રક્ષાદિ કર્મ કરનારા મનુષ્યો यम्-જેના अनु + मदन्ति-પશ્ચાત્ આનંદિત થાય છે; तत्-તે इत्-જ બ્રહ્મ પરમાત્મા भुवनेषु-લોક-લોકાન્તરોમાં ज्येष्ठम्-સર્વથી મહાન અને શ્રેષ્ઠ आस-છે, તેમ તમે જાણો. (૮૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેની ઉપાસનાથી શૂરવીર લોકો વીરતાને પ્રાપ્ત કરીને શત્રુઓનો નાશ કરી શકે છે; જેની ઉપાસના કરીને વિદ્વાન લોકો આનંદિત બનીને સર્વને આનંદિત કરે છે; તે જ પરમાત્મા સર્વથી શ્રેષ્ઠ અને સર્વના ઉપાસ્ય છે, તેમ સર્વ નિશ્ચય કરો. (૮૦)

इ॒माऽउ॑ त्वा पुरूवसो॒ गिरो॑ वर्द्धन्तु॒ या मम॑।
पा॒व॒कव॑र्णाः॒ शुच॑यो वि॒प॒श्चितो॒ऽभि स्तोमै॑रनूषत॥ ८१॥

પદાર્થ : હે पुरूवसो-અનેક પદાર્થોમાં વાસ કરનારા પરમાત્મન્ ! याः-જે इमाः-એ मम-મારી गिरः-વાણીઓ त्वा-આપની उ-નિશ્ચય પૂર્વક वर्द्धन्तु-વૃદ્ધિ કરે; તેને પ્રાપ્ત કરીને पावकवर्णाः-અગ્નિની સમાન વર્ણવાળી તેજસ્વી, शुचयः-પવિત્ર થયેલા विपश्चितः-વિદ્વાનો स्तोमैः-પદાર્થ વિદ્યાની પ્રશંસાથી अभि, अनूषत-સર્વત્ર પ્રશંસા કરે. (૮૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય - સદા ઈશ્વરની સ્તુતિ, પ્રાર્થના અને ઉપાસના દ્વારા તેની સત્તાનું પ્રતિપાદન અને

અભ્યાસ સત્યભાષણથી પોતાની વાણીઓને શુદ્ધ = પવિત્ર કરીને, વિદ્વાન બનીને, સમસ્ત પદાર્થ-વિદ્યાઓને પ્રાપ્ત કરે. (૮૧)

यस्यायं विश्वऽआर्यो दासः शेवधिपाऽअरिः।
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत्सोऽअज्यते रयिः॥ ८२॥

પદાર્થ : હે રાજન્ ! यस्य-જે આપના अयम्-આ विश्वः-સર્વ आर्यः-ધર્મયુક્ત ગુણ, કર્મ, સ્વભાવવાળા दासः-સેવક આજ્ઞાકારી शेवधिपाः-શેવધિ = નિધિનો રક્ષક અર્થાત્ ધર્મ આદિ કાર્ય અને રાજના કરમાં ધન ન ખર્ચ કરનાર अरिः-શત્રુ છે, તે पवीरवि-ધન આદિની રક્ષાને માટે પવીર =શસ્ત્રને પ્રાપ્ત કરનાર, रुशमे-હિંસક વ્યવહાર વા अर्ये-ધનના સ્વામી વૈશ્ય આદિના રૂપમાં तिरः-છુપાવનારા चित्-પણ तुभ्य-આપને માટે इत्-નિશ્ચયથી सः-તે આપ रयिः-ધનની સમાન अज्यते-પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૨)

ભાવાર્થ : જે રાજાના સર્વ આર્ય રાજ્યના રક્ષક, સેવક છે, જે ધન આદિ કર ન આપનાર શત્રુ છે, તેનાથી પણ જો આપ ધન આદિ કર ગ્રહણ કરો છો, તેથી સર્વોત્તમ શ્રી = શોભાયમાન અર્થાત્ લક્ષ્મીવાળા છો. (૮૨)

अयꣳ सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्रऽइव पप्रथे।
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये॥ ८३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! अयम्-આ સભાપતિ રાજા - ऋषिभिः-વેદાર્થના જ્ઞાતા રાજર્ષિઓની સાથે सहस्रम्-અસંખ્ય પ્રકારના જ્ઞાનને પ્રાપ્ત, सहस्कृतः-બળથી યુક્ત, सत्यः-સત્ = વ્યવહારો વા વિદ્વાનોમાં શ્રેષ્ઠ છે; अस्य-એનો महिमा-મહિમા समुद्रइव-સમુદ્ર વા અન્તરિક્ષની સમાન, पप्रथे-વિસ્તૃત થાય છે, તો सः-તે પૂર્વોક્ત હું પ્રજાજન એ રાજાના यज्ञेषु-સંગત રાજકાર્યોમાં તથા विप्रराज्ये-વિપ્ર = મેધાવી જનોના રાજ્ય = રાષ્ટ્રમાં शवः-બળની गृणे-સ્તુતિ કરું છું. (૮૩)

ભાવાર્થ : જો રાજા આદિ રાજપુરુષો વિદ્વાનોના સંગથી પ્રીતિ કરનારા, સાહસી, સત્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા, મેધાવી જનોનાં રાજ્યમાં અધિકૃત, સંગત ન્યાય અને વિનયયુક્ત કાર્ય કરે છે, તેની કીર્તિ આકાશની સમાન વિસ્તાર પામે છે. (૮૩)

अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वꣳ शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम्।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नोऽअघशꣳसऽईशत॥ ८४॥

પદાર્થ : હે सवितः-સમગ્ર ઐશ્વર્યયુક્ત રાજન્ ! त्वम्-આપ अद्य-આજ अदब्धेभिः-અહિંસનીય शिवेभिः-મંગલકારી पायुभिः-અનેક પ્રકારના રક્ષાના ઉપાયોથી नः-અમારી गयम्-પ્રજાની परि, पाहि-સર્વત્રથી રક્ષા કરો.

हिरण्यजिह्वः-હિરણ્ય = હિતમાં રમણ કરનારી વાણીથી યુક્ત આપ नव्यसे-અતિશય નવીન सुविताय-ઐશ્વર્યને માટે नः-અમારી रक्ष-રક્ષા કરો. જેથી अघशंस-દુષ્ટ ચોર અમારા ઉપર माकिः + ईशत-

સમર્થ ન બને, સ્વામી ન બને. (૮૪)

ભાવાર્થ : રાજાઓને યોગ્ય છે, કે તેઓ સર્વ પ્રજાના સંતાનોની બ્રહ્મચર્ય, વિદ્યા-દાન અને સ્વયંવર વિવાહ દ્વારા દસ્યુઓ - ડાકુઓથી રક્ષા કરીને ઉન્નત કરે. (૮૪)

आ नो॑ य॒ज्ञं दि॑वि॒स्पृशं॒ वायो॑ या॒हि सु॒मन्म॑भिः।

अ॒न्तः प॒वित्र॑ऽउ॒परि॑ श्रीणा॒नो॒ऽयꣳ शु॒क्रोऽअ॑यामि ते॥ ८५॥

પદાર્થ : હે वायो-વાયુ સમાન વર્તમાન રાજન્ ! જેમ હું अन्तः-અન્તઃકરણમાં पवित्रः-શુદ્ધાત્મા બનીને उपरि-ઉત્કર્ષમાં श्रीणानः-આશ્રય કરતા, अयम्-એ शुक्रः-શીઘ્રકારી અને વીર્યવાન = પરાક્રમી બનીને सुमन्मभिः-ઉત્તમ વિજ્ઞાનોથી ते-આપના दिविस्पृशम्-વિદ્યા પ્રકાશથી યુક્ત यज्ञम्-સંગત વ્યવહારને अयामि-પ્રાપ્ત કરું છું; તેમ આપ नः-અમારા વિદ્યાપ્રકાશયુક્ત ઉત્તમ વ્યવહારને आ + याहि-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૮૫)

ભાવાર્થ : જેમ વર્તમાન વર્તાવથી રાજા પ્રજામાં ચેષ્ટા કરીને, જેવા ભાવથી પ્રજા રાજામાં વર્તાવ કરે. એ રીતે બન્ને મળીને સર્વ ન્યાય - વ્યવહારને પૂર્ણ કરે. (૮૫)

इ॒न्द्र॒वा॒यू सु॑स॒न्दृशा॑ सु॒ह॒वेह ह॑वामहे।

यथा॑ नः॒ सर्व॒ऽइज्जनो॑ऽनमी॒वः स॒ङ्गमे॑ सु॒मना॒ऽअस॑त्॥ ८६॥

પદાર્થ : હે અગ્ને ! જે सुसन्दृशा-ઉત્તમ રીતિથી સમ્યક્ જોનારા सुहवा-સુંદર રીતે બોલવવા યોગ્ય इन्द्रवायू-રાજા અને પ્રજાજનોનો इह-આ જગતમાં हवामहे-સ્વીકાર કરીએ છીએ. यथा-જેમ सङ्गमे-સંગ્રામ વા સમાગમમાં नः-અમારા सर्वः, इत्-સર્વ जनः-મનુષ્ય अनमीवः-નીરોગ सुमनाः-પ્રસન્ન ચિત્તવાળા असत्-બને, તેમ તેઓ રાજા અને પ્રજાજન કરે. (૮૬)

ભાવાર્થ : રાજા અને પ્રજાજન તેવો જ પ્રયત્ન કરે, જેમ સર્વ મનુષ્ય આદિ પ્રાણી નીરોગ અને પ્રસન્ન ચિત્ત થઈને પુરુષાર્થી બને. (૮૬)

ऋ॒ध॑गि॒त्था स मर्त्यः॑ शश॒मे दे॒वता॑तये।

यो नू॒नं मि॒त्रावरु॑णाव॒भिष्ट॑यऽआच॒क्रे ह॒व्यदा॑तये॥ ८७॥

પદાર્થ : यः-જે देवतातये-વિદ્વાનો વા દિવ્યગુણોને માટે ऋधक्-સમૃદ્ધ मर्त्यः-મનુષ્ય अभिष्टये-અભીષ્ટ = ઈચ્છિત સુખની પ્રાપ્તિને માટે તથા हव्यदातये-હવ્ય = ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોની પ્રાપ્તિને માટે मित्रावरुणौ-પ્રાણ અને ઉદાનની સમાન રાજા અને પ્રજાજનોની नूनम्-નિશ્ચિત आचक्रे-સેવા કરે છે; सः-તે જન इत्था-એ ઉક્ત હેતુથી शशमे-શાંત રહે છે અને ઉપદ્રવ રહિત રહે છે. (૮૭)

ભાવાર્થ : જો શમ, દમ આદિ ગુણોથી યુક્ત રાજા અને પ્રજાજનો ઈષ્ટ સુખની સિદ્ધિને માટે પ્રયત્ન

કરે છે, તેઓ અવશ્ય સમૃદ્ધિવાન બને છે. (૮૭)

आ या॑तमुप॑ भूषतं॒ मध्वः॑ पिबतमश्विना।

दु॒ग्धं पयो॑ वृषणा जेन्यावसू॒ मा नो॑ मर्धिष्ट॒मा ग॑तम्॥ ८८॥

પદાર્થ : હે वृषणा-વીર્યવાન - પરાક્રમવાન, जेन्यावसू-જયશીલ લોકોને વસાવનાર અથવા ધનને જીતનારા अश्विना-વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોથી વ્યાપ્ત રાજા અને પ્રજાજન ! તમે બન્ને - સુખને आ, यातम्-પ્રાપ્ત કરો; પ્રજાઓને उप, भूषतम्-સુશોભિત કરો; मध्वः-વૈદ્યક શાસ્ત્રની રીતિથી તૈયાર કરેલ મધુર રસનું पिबतम्-પાન કરો; पयः-જળને दुग्धम्-પૂર્ણ કરો; અર્થાત્ કોઈ જળ વિના દુઃખી ન રહે; नः-અમને मा + मर्द्धिष्टम्-મારો નહિ અને ધર્મથી વિજયને आ + गतम्-સારી રીતે પ્રાપ્ત કરો. (૮૮)

ભાવાર્થ : જે રાજા અને પ્રજાજનો સર્વ મનુષ્યોને વિદ્યા અને સુશિક્ષાથી સુશોભિત કરે છે, સર્વત્ર कुल्या- *નહેર આદિ દ્વારા જળ પહોંચાડે છે, શ્રેષ્ઠોની હિંસા ન કરીને દુષ્ટોની હિંસા કરે છે, તેઓ વિજેતા બનીને અતુલ શ્રી = લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરીને સદા સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૮૮)*

प्रैतु॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॒ः प्र दे॒व्ये॑तु सू॒नृता॑।

अच्छा॑ वी॒रं नर्य॑ं प॒ङ्क्तिरा॑धसं दे॒वा य॒ज्ञं न॑यन्तु नः॥ ८९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ नः-અમને ब्रह्मणः, पतिः-બ્રહ્મ =ધન વા વેદના રક્ષક અધિષ્ઠાતા વિદ્વાન प्र, एतु-પ્રાપ્ત થાય; सूनृता-સત્ય લક્ષણોથી ઉજ્જ્વળ देवी-શુભ ગુણોથી દેદીપ્યમાન વાણી प्र, एतु-પ્રાપ્ત થાય; नर्यम्-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ पंक्तिराधसम्-પંક્તિ = સમૂહની સિદ્ધિ કરનારા यज्ञम्-સંગત, ધર્મયુક્ત વ્યવહારવાળા वीरम्-શૂરવીર પુરુષને देवाः-વિદ્વાનો अच्छ-સારી રીતે नयन्तु-સ્વયં પ્રાપ્ત કરે, વા કરાવે; તેમ અમને પ્રાપ્ત થાઓ. (૮૯)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો સત્યવાણી અને સર્વના ઉપકારક વીરોને પ્રાપ્ત કરાવે છે, તેઓ સારી રીતે સુખની ઉન્નતિ કરે છે. (૮૯)

च॒न्द्रमा॑ऽअ॒प्स्व॒न्तरा सु॑प॒र्णो धा॑वते दि॒वि।

र॒यिं पि॒शङ्गं॑ बहु॒लं पु॑रु॒स्पृह॒ꣳ हरि॑रेति॒ कनि॑क्रदत्॥ ९०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે જેમ सुपर्णः-ઉત્તમ પર્ણ = પતન = ગતિઓવાળા चन्द्रमाः-શીતલ ચંદ્રમા कनिक्रदत्-શીઘ્ર - અત્યંત શબ્દ કરનારા हरिः-હણહણતા ઘોડાની સમાન - दिवि-સૂર્યના પ્રકાશમાં अप्सु-અન્તરિક્ષનાં अन्तः-મધ્યમાં आ + धावते-શીઘ્ર ગતિ કરે છે; તથા पुरूस्पृहम्-અનેકને ચાહવા યોગ્ય, बहुलम्-અધિક पिशङ्गम्-સુવર્ણ આદિની સમાન વર્ણયુક્ત रयिम्-શોભા-કાંતિને एति-પ્રાપ્ત થાય છે, તેમ પુરુષાર્થી બનીને વેગથી શ્રી = લક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરો. (૯૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્યથી પ્રકાશિત ચંદ્રલોક અન્તરિક્ષમાં આવાગમન કરે છે, જેમ શ્રેષ્ઠ ઘોડો હણહણાટ કરતો શીઘ્ર દોડે છે, તેની સમાન બનીને તમે લોકો - અત્યુત્તમ, અપૂર્વ શ્રી-લક્ષ્મી અર્થાત્ શોભાને પ્રાપ્ત કરીને સુખી બનો. (૯૦)

देवंदेवं वोऽवसे देवंदेवमभिष्टये।
देवंदेवः हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया॥ ९१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! देव्या-પ્રકાશમાન धिया-બુદ્ધિ વા કર્મથી गृणन्तः-સ્તુતિ કરતાં અમે જેમ वः-તમારી अवसे-રક્ષાદિને માટે देवन्देवम्-પ્રત્યેક વિદ્વાન્ વા પ્રત્યેક દિવ્ય પદાર્થને हुवेम-બોલાવીએ છીએ, વા સ્વીકાર કરીએ છીએ; वः-તમારા अभिष्टये-અભીષ્ટ સુખને માટે देवन्देवम्-પ્રત્યેક વિદ્વાન વા દિવ્ય પદાર્થને हुवेम-બોલાવીએ છીએ વા સ્વીકાર કરીએ છીએ. वः-તમારા वाजसातये-વાજ = વેગ આદિના સમ્યક્ સેવનને માટે देवन्देवम्-પ્રત્યેક વિદ્વાન વા દિવ્ય પદાર્થને બોલાવીએ છીએ વા સ્વીકાર કરીએ છીએ, તેમ તમે પણ અમારે માટે કરો. (૯૧)

ભાવાર્થ : જે રાજપુરુષ - સર્વ પ્રાણીઓનાં હિતને માટે વિદ્વાનોનો સત્કાર કરીને, તેના દ્વારા સત્ય ઉપદેશોનો પ્રચાર કરીને, સૃષ્ટિના પદાર્થોનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને, સર્વની કામના સિદ્ધ કરીને સંગ્રામોને જીતે છે, તેઓ દિવ્ય કીર્તિ અને બુદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯૧)

दिवि पृष्टोऽअरोचताग्निर्वैश्वानरो बृहन्।
क्ष्मया वृधानऽओजसा चनोहितो ज्योतिषा बाधते तमः॥ ९२॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જેમ दिवि-પ્રકાશમાં पृष्टः-સ્થિત वैश्वानरः-સર્વ મનુષ્યોને હિતકારી, क्ष्मया-પૃથ્વીની સાથે वृधानः-વૃદ્ધિ પામેલા ओजसा-બળથી बृहन्-મહાન चनोहितः-ઔષધિઓને પકાવવાના સામર્થ્યથી અન્ન આદિનો હિતકારી अग्निः-સૂર્યરૂપ અગ્નિ ज्योतिषा-પોતાના પ્રકાશથી तमः-રાત્રિરૂપ અંધકારને बाधते-હટાવે છે; અને अरोचत-પ્રકાશ કરે છે; તેમ શ્રેષ્ઠ ગુણોથી અવિદ્યારૂપ અંધકારને દૂર કરીને તમે પણ પ્રકાશિત કીર્તિવાળા બનો. (૯૨)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાનો - જેમ સૂર્ય અંધકારને દૂર કરે છે, તેમ દુષ્ટ આચાર અને અવિદ્યારૂપી અંધકારને દૂર કરીને વિદ્યાને પ્રકાશિત કરે છે, તેઓ સૂર્યની સમાન સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ પ્રશંસાવાળા થાય છે. (૯૨)

इन्द्राग्नीऽअपादियं पूर्वागात्पद्वतीभ्यः।
हित्वी शिरो जिह्वया वावदच्चरत्त्रिंशत्पदा न्यक्रमीत्॥ ९३॥

પદાર્થ : હે इन्द्राग्नि-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જે इयम्-આ अयात्-પગ વગરની ઊષા - पद्वतीभ्यः-અનેક પગવાળી સૂતેલી પ્રજાને માટે पूर्वा-પ્રથમ ઉત્પન્ન થનારી आ + अगात्-આવે છે; शिरः-શિરને हित्वी-છોડીને, અર્થાત્ શિર વિનાના પ્રાણીઓની जिह्वया-વાણીથી वावदत्-શીઘ્ર બોલતી અર્થાત્ કૂકડા

આદિની વાણીથી ઊષાકાલની પ્રતીતિ થાય છે; એથી બોલવાના ધર્મનું ઊષામાં આરોપણ કરવામાં આવે છે; चरत्-વિચરણ કરે છે, त्रिंशत्-ત્રીસ पदा-મુહૂર્તોની પશ્ચાત્ नि, अक्रमीत्-પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ગતિ કરે છે; તે ઊષાને તમે જાણો. (૯૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વેગવાળી, પગ અને શિર આદિ અવયવોથી રહિત, પ્રાણીઓના જાગવા પહેલાં આવનારી, જાગરણની કારણભૂતા, પ્રાણીઓના મુખોના માધ્યમથી બહુજ બોલનારી [છે.] જે ત્રીસ મુહૂર્ત [= ૬૦ ઘડી = ૨૪ કલાક]ની પશ્ચાત્ પ્રત્યેક સ્થાનમાં ગતિ કરે છે - પહોંચી જાય છે, તે ઊષા વેળા, તમારા દ્વારા નિદ્રા અને આળસનો ત્યાગ કરીને સુખને માટે સેવન કરવા યોગ્ય છે. (૯૩)

देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकꣳ सरातयः।
ते नोऽअद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः॥ ९४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે सरातयः-સમાન રાતિ =દાન કરનારા, समन्यवः-સમાન મન્યુ =ક્રોધવાળા, विश्वे-સર્વ देवासः-વિદ્વાન લોકો - साकम्-સાથે મળીને अद्य-આજ नः-અમારે मनवे-મનુષ્યને માટે स्म-પ્રસિદ્ધિપૂર્વક, वरिवोविदः-વરિવ = પરિચર્યાને જાણનારા અથવા वरिव = ધનને પ્રાપ્ત કરાવનારા भवन्तु-થાય; तु-અને ते-તેઓ अपरम्-ભવિષ્ય કાલમાં नः-અમારા तुचे-પુત્રપૌત્રાદિ સંતાનોને માટે તથા અમારા માટે वारिवोविदः-પરિચર્યાને જાણનારા અથવા ધનને પ્રાપ્ત કરાવનાર થાય. ते, हि-તેઓ નિશ્ચયથી તમારા માટે પણ પરિચર્યાને જાણનારા અથવા ધનને પ્રાપ્ત કરાવનાર થાય. (૯૪)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય પરસ્પર સુખ આપે છે, જો એક સાથે - મળીને દુષ્ટો પર ક્રોધ કરે છે, તેઓ પુત્ર-પૌત્રવાળા બનીને, તેઓ મનુષ્યોનાં સુખની ઉન્નતિને માટે સમર્થ વિદ્વાન બની શકે છે. (૯૪)

अपाधमदभिशस्तीरशस्तिहाथेन्द्रो द्युम्न्याभवत्।
देवास्तऽइन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण॥ ९५॥

પદાર્થ : હે बृहद् भानो-મહાન કિરણોની સમાન પ્રકાશિત કીર્તિવાળા मरुद्गण-મનુષ્યો વા વાયુઓના સમૂહથી કાર્યસાધક इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનારા સભાપતિ રાજન્ ! देवाः-વિદ્વાનો ते-આપની सख्याय-મિત્રતાને માટે येमिरे-સંયમ કરે છે.

अथ-અને द्युम्नी-બહુજ પ્રશંસા અને ધનથી યુક્ત इन्द्रः-પરમ ઐશ્વર્યવાન સભાપતિ રાજા આપ - अभिशस्तीः-સર્વત્રથી હિંસાઓને अपाधमत्-દૂર ભગાવો છો, अशस्तिहा-અપ્રશસ્ત = દુષ્ટોનો નાશ કરનારા आ + अभवत्-બનો. (૯૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધાર્મિક ન્યાયાધીશોની અથવા ધનવાનોની મિત્રતા કરે છે, તેઓ યશસ્વી બનીને સર્વના દુઃખ દૂર કરવા માટે સૂર્ય સમાન હોય છે. (૯૫)

प्र वऽइन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत।

वृत्रꣳ हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा॥ ९६॥

પદાર્થ : હે मरुत्तः-મનુષ્યો ! જે शतक्रतुः-અસંખ્ય પ્રકારની બુદ્ધિ વા કર્મોવાળા સેનાપતિ - शतपर्वणा-જેનાથી અસંખ્ય જીવોનું પાલન થાય એવા वज्रेण-શસ્ત્ર-અસ્ત્ર વિશેષથી वृत्रहा-મેઘનાશક સૂર્ય वृत्रम्-મેઘનો નાશ કરે છે - તેમ बृहते, इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યને માટે શત્રુઓને हनति-મારે છે; वः-તમારે માટે ब्रह्म-ધન વા અન્નને પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેનો તમે प्र, अर्चत-સત્કાર કરો. (૯૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો જેમ સૂર્ય મેઘનો નાશ કરે છે, તેમ શત્રુઓનો નાશ કરીને તમારા માટે ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે, તેનો તમે સર્વ સત્કાર કરો. સદા કૃતજ્ઞ બનીને કૃતઘ્નતાનો ત્યાગ કરીને પ્રાજ્ઞ = વિદ્વાન બનીને મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરો. (૯૬)

अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यꣳ शवो मदे सुतस्य विष्णवि।
अद्या तमस्य महिमानमायवोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा इमा उ त्वा। यस्याम्।
अय ꣳसहस्रम्। ऊर्ध्वऽऊषुणः॥ ९७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે इन्द्रः-જીવ અને પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત રાજા विष्णावि-વ્યાપક પરમેશ્વરમાં सुतस्य-ઉત્પન્ન अस्य-આ સંસારના मदे-આનંદને માટે वृष्ण्यम्-પરાક્રમ शवः-બળ અને જળની अद्य-આ વર્તમાન સમયમાં वावृधे-વૃદ્ધિ કરે છે.

अस्य-એ પરમાત્માનાં इत्-જ महिमानम्-મહિમાની पूर्वथा-પૂર્વજ લોકોની સમાન आयवः-પોતાના કર્મ ફલોને પ્રાપ્ત કરનારા મનુષ્યો अनु, स्तुवन्ति-પ્રશંસા કરે છે - અનુકૂળ સ્તુતિ કરે છે; तम्-તમે લોકો પણ તેની સ્તુતિ કરો. મંત્રના અવશિષ્ટ અર્થ માટે જુઓ યજુર્વેદના અધ્યાય-૩૩ના મંત્ર-૮૧, ૮૨, ૮૩ અધ્યાય-૧૧નો મંત્ર ૪૨મો. (૯૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો તમે સર્વત્ર વ્યાપક, સમસ્ત સંસારના ઉત્પાદક, સર્વના આધાર અને પરમ ઐશ્વર્ય પ્રાપ્ત કરાવનાર ઈશ્વરની આજ્ઞા અને મહિમાને જાણીને સમસ્ત સંસારનો ઉપકાર કરો, તો તમે નિરંતર આનંદ પ્રાપ્ત કરી શકો. (૯૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં અગ્નિ (૧-૪), પ્રાણ-ઉદાન (૩), રાત-દિવસ (૫), સૂર્ય (૩૫-૩૮), અગ્નિ (૨૨), રાજા (૨૧), ઐશ્વર્ય ઉત્તમયાન (૪૩), વિદ્વાન (૪૮), શ્રી (૨૧), વૈશ્વાનર (૨૩), ઈન્દ્ર (૨૪-૨૯), પ્રજ્ઞા (૨૯), વરુણ (૩૨), અશ્વિનૌ (૫૮), અન્ન (૫૨), સૂર્ય (૩૧), રાજા-પ્રજા (૩૦), પરીક્ષક (૧૫), ઈન્દ્ર-વાયુ (૪૫) આદિના ગુણોનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના અર્થની સાથે સંગતિ જાણવી જોઈએ.

॥ इति त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ चतुस्त्रिंशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥

यज्जाग्र॑तो दू॒रमु॒दैति॒ दैवं॒ तदु॑ सु॒प्तस्य॒ तथै॒वैति॑।

दू॒र॒ङ्ग॒मं ज्योति॑षां॒ ज्योति॒रेकं॒ तन्मे॒ मनः॑ शि॒वस॑ङ्कल्पमस्तु॥ १॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા વિદ્વાન ! આપની કૃપાથી - यत्-જે दैवम्-દેવ = આત્મામાં વિદ્યમાન વા જીવાત્માનું સાધન, दूरङ्गमम्-દૂર જનાર અથવા અનેક પદાર્થોને ગ્રહણ કરનાર, ज्योतिषाम्-શબ્દ આદિ વિષયોનું પ્રકાશક શ્રોત્ર આદિ ઈન્દ્રિયોનું ज्योतिः-પ્રવર્તક, एकम्-એક जाग्रतः-જાગૃત અવસ્થામાં दूरम्-દૂર - દૂર उत्, ऐति-જાય છે, उ-અને तत्-જે सुप्तस्य-નિદ્રાવસ્થામાં तथा, एव-એ જ રીતે एति-અંદર અન્તઃકરણમાં જાય છે; तत्-તે मे-મારું मनः-સંકલ્પ-વિકલ્પાત્મક મન शिवसंकल्पम्-શિવ = કલ્યાણકારી, ધર્મવિષયક સંકલ્પ = ઈચ્છાવાળું अस्तु-થાય. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન અને વિદ્વાનોનો સંગ કરીને, અનેક પ્રકારના સામર્થ્યથી સંપન્ન મનને શુદ્ધ કરે છે; જે મન જાગૃત અવસ્થામાં વિસ્તૃત વ્યવહારવાળું છે, તે સુષુપ્તિ અવસ્થામાં શાંત બની જાય છે.

જે વેગવાનોમાં અતિવેગવાન તથા જ્ઞાનનું સાધક હોવાથી ઈન્દ્રિયોનાં પણ પ્રવર્તક [મનને જે] વશમાં રાખે છે, તે અશુભ વ્યવહારને છોડીને [મનને] શુભ આચરણમાં પ્રેરિત કરી શકે છે. (૧)

येन॒ कर्मा॑ण्य॒पसो॑ मनी॒षिणो॑ य॒ज्ञे कृ॒ण्वन्ति॑ वि॒दथे॑षु॒ धीराः॑।

यद॑पू॒र्वं य॒क्षम॒न्तः प्र॒जानां॒ तन्मे॒ मनः॑ शि॒वस॑ङ्कल्पमस्तु॥ २॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા વિદ્વાન ! જ્યારે આપના સંગથી येन-જે મનથી अपसः-કર્મ, ધર્મનિષ્ઠ, मनीषिणः-મનનું દમન કરનારા, धीराः-ધ્યાન કરનારા, મેધાવી લોકો - यज्ञे-અગ્નિહોત્ર આદિ વા ધર્મયુક્ત વ્યવહાર વા યોગાભ્યાસમાં તથા विदथेषु-વિજ્ઞાન સંબંધી અને યુદ્ધ આદિ વ્યવહારોમાં कर्माणि-અત્યંત ઈષ્ટ કર્મોને कृण्वन्ति-કરે છે.

यत्-જે अपूर्वम्-સર્વોત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા, प्रजानाम्-પ્રાણીમાત્રના अन्तः-હૃદયમાં यक्षम्-પૂજનીય વા સંગત - એકીભૂત થઈ રહેલ છે; तत्-તે मे-મારું मनः-મનન, વિચારાત્મકરૂપ મન शिवसङ्कल्पम्-ધર્મમાં પ્રેમ કરનાર अस्तु-થાય. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, પરમેશ્વરની ઉપાસના, ઉત્તમ વિચાર, વિદ્યા અને સત્સંગથી અન્તઃકરણ [મન]ને અધર્માચરણથી હટાવીને ધર્માચરણમાં પ્રવૃત્ત કરવું જોઈએ. (૨)

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्नऽऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ३॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા પરમ યોગી વિદ્વાન ! આપના જ્ઞાપન = બોધનથી यत्-જે प्रज्ञानम्-વિશેષ કરીને જ્ઞાનના ઉત્પાદક અર્થાત્ બુદ્ધિરૂપ उत-અને પણ चेतः-સ્મૃતિનું સાધન धृतिः-ધૈર્યસ્વરૂપ છે; च-અને જે લજ્જા આદિ કર્મોનું કારણ છે. प्रजासु-જનોનાં अन्तः-અન્તઃકરણમાં આત્માનું સાથી હોવાથી अमृतम्-નાશરહિત ज्योतिः-પ્રકાશસ્વરૂપ છે.

यस्मात्-જેના ऋते-વિના किम्, चन-કોઈ પણ कर्म-કામ न, क्रियते-કરી શકાતું નથી, तत्-તે मे-મુજ જીવાત્માના मनः-સર્વ કર્મોનું સાધનરૂપ મન शिवसंकल्पम्-કલ્યાણકારી પરમાત્મામાં સંકલ્પ = ઈચ્છા રાખનારું अस्तु-થાય. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અન્તઃકરણ - બુદ્ધિ, ચિત્ત, મન અને અહંકારરૂપ વૃત્તિવાળું હોવાથી ચાર પ્રકારનું છે, જે આંતરિક પ્રકાશથી યુક્ત, પ્રજાઓનાં સર્વ કર્મોનું સાધક, નાશરહિત, મન છે, તેને તમે ન્યાય અને સત્ય આચરણમાં પ્રવૃત્ત કરીને પક્ષપાત, અન્યાય અને અધર્માચરણથી નિવૃત્ત કરો. (૩)

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! येन-જે अमृतेन-નાશરહિત પરમાત્માની સાથે સંયુક્ત મનથી भूतम्-ભૂત भुवनम्-વર્તમાન અને भविष्यत्-ભવિષ્ય सर्वम्, इदम्-એ સર્વ ત્રિકાલસ્થ વસ્તુમાત્ર परिगृहीतम्-સર્વત્રથી ગૃહિત = જ્ઞાત થાય છે –

येन-જેના દ્વારા सप्तहोता-સાત મનુષ્ય હવન કરનારા વા પાંચ પ્રાણ, છટ્ઠો જીવાત્મા અને સાતમું અવ્યક્ત એ લેવા-દેવાવાળા જેમાં છે તે यज्ञः-અગ્નિષ્ટોમાદિ વા વિજ્ઞાનરૂપ વ્યવહાર तायते-વિસ્તૃત કરવામાં આવે છે; तत्-તે मे-મારું मनः-યોગથી યુક્ત ચિત્ત शिवसंकल्पम्-શિવ = મોક્ષરૂપ સંકલ્પવાળું अस्तु-થાય. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ચિત્ત યોગાભ્યાસના સાધનો તથા ઉપસાધનોથી સિદ્ધ ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનને જાણનારા, સર્વ સૃષ્ટિને જાણનારા, કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનના સાધક છે, તેને તમે સદા કલ્યાણના પ્રેમી બનાવો. (૪)

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ५॥

પદાર્થ : यस्मिन्-જે મનમાં रथनाभाविव-જેમના ચક્ર-પૈડાની વચ્ચે કાષ્ઠમાં અવયવ લાગેલા હોય

છે તે अराः-રથના પૈડાના આરાની સમાન, ऋचः-ઋગ્વેદ, साम-સામવેદ અને यजूंषि-યજુર્વેદ प्रतिष्ठिता-સર્વત્રથી પ્રતિષ્ઠિત છે, यस्मिन्-જેમાં અથર્વવેદ પ્રતિષ્ઠિત છે; यस्मिन्-જેમનામાં प्रजानाम्-પ્રાણીઓના सर्वम्-સર્વ चित्तम्-સર્વ પદાર્થસંબંધી જ્ઞાન ओतम्-દોરામાં મણિઓની સમાન પરોવેલા છે; तत्-તે मे-મારું मनः-મન शिवसंकल्पम्-કલ્યાણકારી વેદાદિ સત્યશાસ્ત્રોના પ્રચારનો સંકલ્પ રાખવાવાળું अस्तु-થાય. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેના સ્વસ્થ રહેવાથી જ વેદાદિના પઠન-પાઠન રૂપ વ્યવહાર સંભવ બને છે, તે મન જ વેદાદિ વિદ્યાને ધારણ કરનારું છે. જેમાં સર્વ વ્યવહારોનું જ્ઞાન સંચિત થાય છે, તે અંતઃકરણ [મન]ને તમે વિદ્યા અને ધર્માચરણ દ્વારા પવિત્ર બનાવો. (૫)

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ६ ॥

પદાર્થ : यत्-જે મન सुषारथिः-જેમ ઉત્તમ ચતુર સારથિ अश्वानिव-લગામથી ઘોડાઓને ચલાવે છે, તેમ मनुष्यान्-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને नेनीयते-અત્યંત આમ - તેમ લઈ જાય છે; અને अभीशुभिः-જેમ દોરીઓ-લગામથી वाजिन, इव-વેગવાન ઘોડાઓને સારથિ વશમાં રાખે છે, બળથી - જેમ સારથિ ઘોડાઓને લઈ જાય છે, તેમ મન પ્રાણીઓને ચલાવે છે.

यत्-જે हृत्प्रतिष्ठम्-હૃદયમાં સ્થિત, अजिरम्-વિષયાદિમાં પ્રેરક અથવા વૃદ્ધ આદિ અવસ્થારહિત અને जविष्ठम्-અત્યંત વેગવાન છે; तत्-તે मे-મારું मनः-મન शिवसंकल्पम्-મંગલમય નિયમોમાં પ્રેમ કરનારું अस्तु-થાય. (૬)

ભાવાર્થ : [જો કે] જ્યાં આસક્ત થાય છે, જેમ લગામો દ્વારા સારથિ ઘોડાઓને વશમાં કરી લે છે, તેમ [મનુષ્યને] વશમાં કરનાર છે, સર્વ અવિદ્વાન તેનું અનુસરણ કરે છે - પાછળ ચાલે છે અને વિદ્વાન જેને પોતાના વશમાં રાખે છે, જો શુદ્ધ હોય તો સુખકારી અને અશુદ્ધ હોય તો દુઃખદાયક બને છે, જો જીતેલ હોય તો સિદ્ધિને અને ન જીતેલ હોય તો અસિદ્ધિને આપનાર છે, તે મનને મનુષ્યે સદા વશમાં રાખવું જોઈએ. (૬)

पितुं नु स्तोषं महो धर्माणं तविषीम्।
यस्य त्रितो व्योजसा वृत्रं विपर्वमर्दयत्॥ ७॥

પદાર્થ : હું यस्य-જેના पितुम्-અન્ન महः-મહાન धर्माणम्-પક્ષપાતરહિત ન્યાયાચરણરૂપ ધર્મની તથા तविषीम्-બળયુક્ત સેનાની नु-શીઘ્ર स्तोषम्-સ્તુતિ કરું છું; તે રાજપુરુષ त्रितः-ત્રણે કાળમાં જેમ સૂર્ય ओजसा-જળની સાથે રહેલા विपर्वम्-પર્વ = ગ્રંથિઓથી રહિત वृत्रम्-મેઘને वि + अर्दयत्-વિશેષતઃ નષ્ટ કરે છે; તેમ શત્રુઓને જીતવાને સમર્થ બને છે. (૭)

ભાવાર્થ : જે સત્ય ધર્મ, બળવાન સેના અને વિપુલ અન્ન આદિ સામગ્રીને ધારણ કરે છે, તે સૂર્ય જેમ મેઘનો નાશ કરે છે, તેમ શત્રુઓને જીતી શકે છે. (૭)

अन्विदनुमते त्वं मन्यासै शं च नस्कृधि।

क्रत्वे दक्षाय नो हिनु प्र ण आयूंꣳषि तारिषः॥ ८॥

પદાર્થ : હે अनुमते-અનુકૂળ બુદ્ધિયુક્ત સભાપતિ વિદ્વાન ! त्वम्-આપ જેને शम्-સુખકારી अनु, मन्यासै-સ્વીકાર કરો; તેથી યુક્ત नः-અમને कृधि-કરો.

क्रत्वे-બુદ્ધિ, दक्षाय-બળ વા ચતુરાઈને માટે नः-અમને हिनु-ઉન્નત કરો. च-અને नः-અમારા आयूंषि-જીવન આદિની इत्-સમાન અન્યોને પણ प्र, तारिषः-પાર કરો. [અર્થાત્ નિશ્ચયથી આયુને સારી રીતે પૂર્ણ કરો.] (૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય જેમ સ્વાર્થની પ્રાપ્તિ માટે પ્રયત્ન કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ પ્રયત્ન કરે, જેમ પોતાનું કલ્યાણ અને વૃદ્ધિ ઈચ્છે, તેમ અન્યોની પણ ઈચ્છે, આ રીતે સર્વની પૂર્ણ આયુને સિદ્ધ કરે. (૮)

अनु नोऽद्यानुमतिर्यज्ञं देवेषु मन्यताम्।

अग्निश्च हव्यवाहनो भवतं दाशुषे मयः॥ ९॥

પદાર્થ : જે अनुमतिः-અનુકૂળ વિજ્ઞાનવાળા મનુષ્ય अद्य-આજ देवेषु-વિદ્વાનોમાં नः-અમારાં यज्ञम्-સુખ આપવાના સાધનરૂપ વ્યવહારને अनु, मन्यताम्-અનુકૂળ માને છે; તે च-અને हव्यवाहनः-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરાવનાર, अग्निः-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વા અગ્નિવિદ્યાના વિદ્વાન તમે બન્ને दाशुषे-દાનશીલ મનુષ્યને માટે मयः-સુખકારી भवतम्-બનો. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો શુભકર્મોના અનુષ્ઠાનમાં અનુમતિ આપનારા છે અને દુષ્ટકર્મોનાં અનુષ્ઠાનનો નિષેધ કરનારા છે, તેઓ અગ્નિ આદિ વિદ્યાના દ્વારા સર્વને સુખ પ્રદાન કરે છે. (૯)

सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा।

जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढि नः॥ १०॥

પદાર્થ : હે सिनीवालि-સિની = પ્રેમથી બંધાયેલી અને બલકારિણી, पृथुष्टुके-જેની વિસ્તૃત સ્તુતિ, વિસ્તૃત શિરના વાળ - કેશભાર, વા અધિક કામવાળી देवि-વિદુષી કુમારી ! या-જે તું देवानाम्-વિદ્વાનોની स्वसा-બહેન असि-છે; તે તું हव्यम्-ગ્રહણ - સ્વીકાર કરવા યોગ્ય आहुतम्-સર્વત્રથી વર-દીક્ષા આદિ કર્મોથી સ્વીકારાયેલા પતિનું जुषस्व-સેવન કર, અને नः-અમારે માટે प्रजाम्-સુંદર સંતાન રૂપ પ્રજાને दिदिड्ढि-પ્રદાન કર. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે કુમારીઓ ! તમે બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને, યુવતીઓ બનીને, પોતાને અભીષ્ટ-ઈચ્છિત, સુપરીક્ષિત વરવા યોગ્ય પતિઓનું સ્વયં વરણ કરો, તેની સાથે આનંદ કરીને પ્રજા-સંતાનોને ઉત્પન્ન કરો. (૧૦)

पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः।

सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्॥ ११॥

પદાર્થ : મનુષ્ય - सस्रोतसः-એક સમાન મનરૂપ પ્રવાહો = સ્રોતોવાળી, पञ्च-પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિયોની વૃત્તિઓ, જે नद्यः-નદી સમાન પ્રવાહરૂપ છે, તે જે सरस्वतीम्-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત વાણી अपि, यन्ति-પણ પ્રાપ્ત કરે છે; सा, उ-તે પણ सरित्-નદીરૂપી - ચાલનારી सरस्वती-વાણી देशे-પોતાના નિવાસસ્થાનમાં पञ्चधा-પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિયોના શબ્દ આદિ વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવાથી પાંચ પ્રકારની तु-જ अभवत्-થાય છે; તેને જાણો. (૧૧)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જે વાણી પાંચ શબ્દ આદિ વિષયોના આશ્રિત નદીના રૂપમાં છે, તેને જાણીને, તેનો યથાવત્ વિસ્તાર - પ્રચાર કરીને તેનો મધુર અને સ્નિગ્ધરૂપમાં પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૧૧)

त्वमग्ने प्रथमोऽअङ्गिराऽऋषिर्देवो देवानामभवः शिवः सखा।

तव व्रते कवयो विद्मनापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः॥ १२॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન ! જે કારણે त्वम्-આપ प्रथमः-પ્રખ્યાત, अङ्गिराः-અંગોના રસની સમાન વા જીવાત્માઓને સુખ આપનારા, देवानाम्-વિદ્વાનોમાં देवः-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ વાળા, शिवः-કલ્યાણકારી सखा-મિત્ર ऋषिः-વેદાર્થના જ્ઞાતા अभवः-છે; એથી तव-આપના व्रते-સ્વભાવ વા નિયમને આધીન विद्मनापसः-વિદિત = પ્રસિદ્ધ કર્મોવાળા, भ्राजदृष्टयः-સુંદર ઋષિ = શસ્ત્રોવાળા कवयः-બુદ્ધિમાન मरुतः-મનુષ્ય अजायन्त-ઉત્પન્ન - પ્રકટ થાય છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્યો સર્વના મિત્ર વિદ્વાન અને સર્વના હિતૈષી પરમાત્માને મિત્ર માનીને, વિજ્ઞાન નિમિત્તનાં કર્મો કરીને, પ્રકાશિત આત્માવાળા બને, તો તેઓ વિદ્વાન બનીને પરમેશ્વરની આજ્ઞામાં રહીને વર્તી શકે છે. (૧૨)

त्वन्नोऽअग्ने तव देव पायुभिर्मघोनो रक्ष तन्वश्च वन्द्य।

त्राता तोकस्य तनये गवामस्यनिमेषꣳरक्षमाणस्तव व्रते॥ १३॥

પદાર્થ : હે देव-ઉત્તમ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ યુક્ત अग्ने-રાજન્ વા ઈશ્વર ! तव-આપના व्रते-ઉત્તમ નિયમમાં રહેલા मघोनः-અતિ ધનયુક્ત અમને तव-આપના पायुभिः-રક્ષા આદિ હેતુ કાર્યોથી त्वम्-આપ रक्ष-રક્ષા કરો; च-અને नः-અમારા तन्वः-શરીરોની રક્ષા કરો.

હે वन्द्य-વંદના = સ્તુતિને યોગ્ય ભગવન્ ! કારણ કે આપ - अनिमेषम्-નિરંતર रक्षमाणः-રક્ષા

કરનાર तोकस्य-સંતાન - પુત્ર, तनये-પૌત્ર, અને गवाम्-ગાય આદિ પશુઓના त्राता-રક્ષક असि-છો; તેથી અમારા માટે સર્વદા સત્કાર અને ઉપાસનાને યોગ્ય છો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ તથા તેની આજ્ઞા અનુસાર આચરણ કરે છે, જેના ઈશ્વર અને વિદ્વાન રક્ષક છે, તેઓ શ્રી = લક્ષ્મી, દીર્ઘ આયુ અને સંતાનોથી રહિત કદી થતા નથી. (૧૩)

उत्तानायामव भरा चिकित्वान्त्सद्यः प्रवीता वृषणं जजान।

अरुषस्तूपो रुशदस्य पाजऽइडायास्पुत्रो वयुनेऽजनिष्ट॥ १४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જેમ चिकित्वान्-જ્ઞાનવાન प्रवीता-કામના કરનાર વિદ્વાન उत्तानायाम्-સારી રીતે વિસ્તૃત ભૂમિ વા અન્તરિક્ષમાં वृषणम्-વર્ષા માટે યજ્ઞને जजान-ઉત્પન્ન કરે છે; અને अरुषस्तूपः-રક્ષકોની ઉન્નતિ કરનાર इडायाः-પ્રશંસિત સ્ત્રીના - વાણીના पुत्रः-પુત્ર वयुने-વિજ્ઞાનમાં अजनिष्ट-ઉત્પન્ન કરે છે; अस्य-એનું रुशत्-સુંદર રૂપ અને पाजः-બળ પેદા થાય છે; તેમ એને सद्यः-શીઘ્ર अव,भर-પોતાની તરફ પુષ્ટ કર. અર્થાત્ વિદ્વાન બનાવો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જો મનુષ્ય આ સૃષ્ટિમાં બ્રહ્મચર્ય આદિ દ્વારા કુમારો અને કન્યાઓને દ્વિજ બનાવે તો તેઓ શીઘ્ર વિદ્વાન બને. (૧૪)

इडायास्त्वा पदे वयं नाभा पृथिव्याऽअधि।

जातवेदो नि धीमह्यग्ने हव्याय वोढवे॥ १५॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-ઉત્પન્ન બુદ્ધિ - જ્ઞાનવાળા अग्ने-અગ્નિ સમાન તેજસ્વી વિદ્વાન વા રાજન્ ! वयम्-અમે અધ્યાપક અને ઉપદેશક લોકો - इडायाः-પ્રશંસિત વાણીની पदे-પ્રતિષ્ઠામાં पृथिव्याः-વિસ્તૃત ભૂમિની अधि-ઉપર અને नाभा-મધ્યમાં त्वा-આપને हव्याय-આપવા યોગ્ય પદાર્થોને वोढवे-પ્રાપ્ત કરવા વા કરાવવા માટે नि + धीमहि-નિરંતર અધિકારમાં સ્થાપિત કરીએ છીએ. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા રાજન્ ! જે અધિકારમાં અમે આપને સ્થાપિત કરીએ, તે અધિકારને ધર્મ અને પુરુષાર્થથી યથાવત્ સિદ્ધ કરો. (૧૫)

प्र मन्महे शवसानाय शूषमाङ्गूषं गिर्वणसेऽअङ्गिरस्वत्।

सुवृक्तिभिः स्तुवत ऋग्मियायार्चामार्कं नरे विश्रुताय॥ १६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે सुवृक्तिभिः-નિર્દોષ ક્રિયાઓથી शवसानाय-વિજ્ઞાનને માટે તથા गिर्वणसे-સુશિક્ષિત વાણીઓનું સેવન કરનારા, ऋग्मियाय-ઋચાઓને ભણનારા, विश्रुताय-વિશેષ પ્રસિદ્ધ ગુણોવાળા, स्तुवते-શાસ્ત્રોના અર્થોની સ્તુતિ કરનારા, नरे-નાયક મનુષ્યને માટે अङ्गिरस्वत्-

પ્રાણોની સમાન आङ्गूषम्-વિદ્યાશાસ્ત્રના બોધરૂપ અને शूषम्-બળને प्र, मन्महे-યાચના કરીએ છીએ; તથા अर्कम्-સત્કાર કરવા યોગ્યનો अर्चाम-સત્કાર કરીએ છીએ; તેમ એ વિદ્વાનો પ્રતિ તમે પણ વર્તો. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સત્કાર કરવા યોગ્યનો સત્કાર અને નિરાદર કરવા યોગ્યનો નિરાદર કરીને વિદ્યા અને ધર્મની નિરંતર વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૬)

प्र वो॑ म॒हे महि॒ नमो॑ भरध्वमाङ्गू॒ष्य॑ꣳ शवसा॒नाय॒ साम॑।
येना॑ नः॒ पूर्वे॑ पि॒तरः॑ पद॒ज्ञाऽअर्च॑न्तो॒ऽअङ्गि॑रसो॒ गाऽअवि॑न्दन्॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ पदज्ञाः-પદ = જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય આત્મસ્વરૂપને જાણનારા લોકો - नः-અમારો अर्चन्तः-સત્કાર કરતા, अङ्गिरसः-સર્વ સૃષ્ટિની વિદ્યાનાં અંગોના જ્ઞાતા पूर्वे-પૂર્વજ લોકો તથા नः-અમારા पितरः-રક્ષક જ્ઞાની લોકો येन-જે કારણથી महे-મહાન शवसानाय-બ્રહ્મચર્ય અને સુશિક્ષાથી શરીર અને આત્માનાં બળથી યુક્ત પુરુષને માટે અને वः-તમારે માટે आङ्गूष्यम्-સત્કાર વા બળને માટે હિતકારી साम-સામવેદને તથા गाः-સુશિક્ષિત વાણીઓને अविन्दन्-પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેથી તેને માટે તમે महि-સત્કાર માટે મહાન नमः-સત્કર્મ વા અન્નને प्र, भरध्वम्-ધારણ કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્વાનો તમને વિદ્યા અને સુશિક્ષા દ્વારા વિદ્વાન ધાર્મિક બનાવે, તે પ્રથમ વિદ્યા ભણેલા લોકોને જ પિતર જાણો. (૧૭)

इ॒च्छन्ति॑ त्वा सो॒म्यासः॒ सखा॑यः सु॒न्वन्ति॒ सोमं॒ दध॑ति॒ प्रया॑ꣳसि।
तिति॑क्षन्तेऽअ॒भिश॑स्तिं॒ जना॑ना॒मिन्द्र॒ त्वदा कश्च॒न हि प्र॑के॒तः॥ १८॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-સભાધ્યક્ષ રાજન્ ! જે सोम्यासः-ઐશ્વર્ય આદિમાં શ્રેષ્ઠ सखायः-મિત્રજન - सोमम्-ઐશ્વર્ય આદિને सुन्वन्ति-સિદ્ધ કરે છે; प्रयांसि-કામના કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાન આદિ ગુણો दधति-ધારણ કરે છે; અને जनानाम्-મનુષ્યોના अभिशस्तिम्-દુર્વચન - વાદવિવાદને आ, तितिक्षन्ते-સારી રીતે સહન કરે છે; તેનો આપ નિરંતર સત્કાર કરો.

हि-કારણ કે त्वत्-આપથી प्रकेतः-ઉત્તમ બુદ્ધિમાન कः, चन-કોઈ પણ નથી; તેથી त्वा-આપને સર્વ લોકો इच्छन्ति-ચાહે છે. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો આ સંસારમાં નિંદા - સ્તુતિ, હાનિ-લાભ આદિને સહન કરનારા, પુરુષાર્થી, સર્વની સાથે મૈત્રી કરનારા આપ્ત છે, તેઓની સર્વ સેવા કરે અને તેઓનો સત્કાર કરે, તેઓ જ સર્વના અધ્યાપક અને ઉપદેશક બને. (૧૮)

न ते॑ दू॒रे प॑र॒मा चि॒द्रजा॒ꣳस्या तु प्र या॑हि हरिवो॒ हरि॑भ्याम्।
स्थि॒राय॒ वृष्णे॒ सव॑ना कृ॒तेमा यु॒क्ता ग्रावा॑णः समिधा॒नेऽअ॒ग्नौ॥ १९॥

પદાર્થ : હે हरिवः-પ્રશસ્ત ઘોડાઓવાળા રાજન્ ! જેમ समिधाने-પ્રદીપ્ત કરેલ अग्नौ-અગ્નિમાં इमाः, सवना-એ પ્રાતઃ સવન આદિ કર્મ कृता-કરવામાં આવે છે; तु-તેથી ग्रावाणः-ગર્જના કરનાર મેઘ युक्ताः-ભેગા થઈને આવે છે; તેમ स्थिराय-દૃઢ वृष्णे-સુખદાયક વિદ્યા આદિ પદાર્થને માટે हरिभ्याम्-ધારણ, આકર્ષણ અને વેગરૂપ ગુણોથી યુક્ત ઘોડાઓ વા જળ તથા અગ્નિ દ્વારા आ + प्र + याहि-સારી રીતે આવો. આ રીતે કરવાથી परम-દૂરસ્થ रजांसि-સ્થાન चित्-પણ ते-આપથી दूरे-દૂર न-રહેતું નથી. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જેમ અગ્નિથી ઉત્પન્ન તથા વરસેલા વાદળો પૃથિવીની સમીપ રહીને, આકર્ષણથી દૂર પણ ચાલ્યા જાય છે, તેમ અગ્નિ આદિ યાનોથી યાત્રા કરવાથી કોઈ પણ દેશ દૂર રહેતો નથી. આ રીતે પુરુષાર્થ કરીને પુષ્કળ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરો. (૧૯)

अषा॑ढं युत्सु पृत॑नासु पप्रि॑ꣳ स्व॒र्षाम॒प्सां वृ॒जन॑स्य गो॒पाम्।
भ॒रे॒षु॒जाꣳ सु॑क्षि॒तिꣳ सु॒श्रव॑सं॒ जय॑न्तं॒ त्वामनु॑ मदेम सोम॥ २०॥

પદાર્થ : હે सोम-સમસ્ત ઐશ્વર્યથી સંપન્ન રાજન્ વા સેનાપતે ! અમે જે युत्सु-યુદ્ધોમાં अषाढम्-અસહ્ય, पृतनासु-મનુષ્યોની સેનાઓમાં पप्रिम्-પૂર્ણ બળ, વિદ્યાયુક્ત રક્ષક, स्वर्षाम्-સ્વ = સુખનું સેવન કરનારા, अप्साम्-અપ = જળ વા પ્રાણ પ્રદાન કરનારા, वृजनस्य-બળના गोपाम्-રક્ષક, भरेषुजाम्-ધારણ કરવા યોગ્ય સંગ્રામોમાં જીતવાવાળા, सुक्षितिम्-ક્ષિતિ = પૃથ્વીના ઉત્તમ રાજ્યવાળા, सुश्रवसम्-સુંદર श्रवः-અન્ન વા યશવાળા जयन्तम्-શત્રુઓના વિજેતા, त्वाम्-આપને अनु, मदेम-અનુમોદિત કરે-હર્ષિત કરે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે રાજા વા સેનાપતિના ઉત્તમ સ્વભાવથી રાજાની સેના તથા પ્રજાજનો પ્રસન્ન રહે, જેના પ્રસન્ન રહેવાથી રાજા પણ પ્રસન્ન હોય, ત્યાં નિશ્ચિત વિજય, નિશ્ચલ પરમ ઐશ્વર્ય અને વિપુલ પ્રતિષ્ઠા પ્રાપ્ત થાય છે. (૨૦)

सोमो॑ धे॒नुꣳ सोमो॒ अर्व॑न्तमा॒शुꣳ सोमो॑ वी॒रं क॑र्म॒ण्यं॑ ददाति।
सा॒द॒न्यं॑ विद॒थ्यꣳ स॒भेयं॑ पितृ॒श्रव॑णं॒ यो ददा॑शदस्मै॥ २१॥

પદાર્થ : यः-જે પ્રજાસ્થ મનુષ્ય अस्मै-એ સોમ = રાજા, અધ્યાપક અને ઉપદેશકને ઉચિત પદાર્થ ददाशत्-આપે છે; તેને सोमः-ઐશ્વર્યવાન અધ્યાપક धेनुम्-વિદ્યાને ધારણ કરનારી વાણી ददाति-આપે છે.

सोमः-સત્ય આચરણમાં પ્રેરણા કરનારા રાજા આદિ જન તેને अर्वन्तम्-વેગથી ચાલનારા आशुम्-માર્ગને શીઘ્ર વ્યાપ્ત કરનારા ઘોડાઓ ददाति-આપે છે.

सोमः-શરીર અને આત્માના બળથી યુક્ત રાજા આદિ कर्मण्यम्-કર્મથી યુક્ત =પુરુષાર્થી, सादन्यम्-બેસાડવામાં પ્રવીણ, विदथ्यम्-યજ્ઞ કરવામાં કુશળ, पितृश्रवणम्-આચાર્ય - પિતાથી વિદ્યા શ્રવણ કરનાર, सभेयम्-સભામાં બેસવા યોગ્ય = સભ્ય वीरम्-શત્રુઓના બળોને વ્યાપ્ત કરનાર શૂરવીર પુરુષને ददाति-

પ્રદાન કરે છે. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે અધ્યાપક, ઉપદેશક વા રાજપુરુષ સુશિક્ષિત વાણી, અગ્નિ આદિ તત્ત્વોની વિદ્યા, પુરુષનું જ્ઞાન અને સભ્યતા સર્વને પ્રદાન કરે છે, તેઓ સર્વના સત્કારને યોગ્ય છે. (૨૧)

त्वमि॒माऽओष॑धीः सोम॒ विश्वा॒स्त्वम॒पोऽअ॑जनय॒स्त्वं गाः।
त्वमा त॑तन्थो॒र्व॒न्तरि॑क्षं॒ त्वं ज्योति॑षा॒ वि तमो॑ ववर्थ॥ २२॥

પદાર્થ : હે सोम-ઉત્તમ સોમલતાની સમાન સર્વરોગનાશક રાજન્ ! त्वम्-આપ इमाः-આ विश्वाः-સર્વ ओषधीः-સોમ આદિ ઔષધિઓને; त्वम्-આપ સૂર્યની સમાન अपः-જલો વા કર્મને; તથા त्वम्-આપ गाः-પૃથ્વી વા ગાયોને अजनयः-ઉત્પન્ન વા પ્રકટ કરો છો; त्वम्-આપ સૂર્યની સમાન उरु-વિસ્તૃત अन्तरिक्षम्-જળ વા આકાશને आ + ततन्थ-સર્વત્ર વિસ્તૃત કરો છે; તથા त्वम्-આપ સૂર્ય જેમ ज्योतिषा-પ્રકાશથી तमः-અંધકારને અને રાત્રિને નિવૃત્ત કરો છો; તેમ ન્યાયથી અન્યાયને वि + ववर्थ-આચ્છાદિત વા નિવૃત્ત કરો છો; તે આપ અમારા માનનીય છો.

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો, જેમ ઔષધિઓ રોગોનું હરણ કરે છે, તેમ દુઃખોને હરે છે, પ્રાણોની સમાન બળને ઉત્પન્ન કરે છે; અને જે રાજપુરુષો - જેમ સૂર્ય રાત્રિને નિવૃત્ત કરે છે, તેમ અધર્મ અને અવિદ્યાના અંધકારને દૂર કરે છે તેઓ સંસારમાં પૂજ્ય કેમ ન બને ? (૨૨)

दे॒वेन॑ नो॒ मन॑सा देव सोम रा॒यो भा॒गꣳ स॑हसावन्न॒भि यु॑ध्य।
मा त्वा त॑न॒दीशिषे वी॒र्य॑स्यो॒भये॑भ्यः प्र चि॑कित्सा॒ गवि॑ष्टौ॥ २३॥

પદાર્થ : હે सहसावन्-સહ = અધિક સેના આદિ બળવાળા, सोम-સંપૂર્ણ ઐશ્વર્યના પ્રાપક देव-દિવ્ય ગુણોથી યુક્ત રાજન્ ! જો આપ देवेन-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી યુક્ત मनसा-મનથી रायः-ધનના भागम्-અંશને नः-અમારે માટે अभि + युध्य-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરાવો. કારણ કે આપ वीर्यस्य-વીરકર્મ કરવાને ईशिषे-સમર્થ - સ્વામી છો; त्वा-આપને કોઈ मा, आ, तनत्-સંકુચિત કરતા નથી; દબાવતા નથી.

આપ गविष्टौ-ગૌ = સ્વર્ગ અર્થાત્ સુખ વિશેષની ઈષ્ટિ = ઈચ્છા ધરાવતા उभयेभ्यः-આ લોક અને પરલોક બન્નેનાં સુખોને માટે प्र, चिकित्स-રોગ નિવારણની સમાન વિઘ્ન નિવારણના ઉપાય કરો. (૨૩)

ભાવાર્થ : રાજા આદિ વિદ્વાનો - કપટ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને, શુદ્ધભાવથી સર્વના સુખની અભિલાષા કરે, વીર્ય = બળની વૃદ્ધિ કરે. જેથી દુઃખની નિવૃત્તિ તથા સુખની વૃદ્ધિ આ લોકમાં અને પરલોકમાં થાય. તેવો સદા પ્રયત્ન કરે. (૨૩)

अ॒ष्टौ व्य॑ख्यत्क॒कुभः॑ पृथिव्यास्त्री धन्व॒ योज॑ना स॒प्त सिन्धू॑न्।
हि॒र॒ण्या॒क्षः स॑वि॒ता दे॒वऽआगा॒द्दध॒द्रत्ना॑ दा॒शुषे॒ वार्या॑णि॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ हिरण्याक्षः-નેત્રોની સમાન રૂપદર્શક જ્યોતિઓવાળા, देवः-પ્રકાશક, सविता-સૂર્ય दाशुषे-દાનશીલ પ્રાણીઓને માટે वार्याणि-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય रत्ना-પૃથ્વીના ઉત્તમ પદાર્થોને दधत्-ધારણ કરતાં, त्री-ત્રણ धन्व-અવકાશરૂપ योजना-યોજન = બાર ગાઉ, सप्त-સાત सिन्धून्-ભૂમિના સમુદ્રથી લઈને મેઘના ઉપરનાં અવયવો સુધી સમુદ્રો, पृथिव्याः-પૃથ્વી સંબંધી अष्टौ-આઠ ककुभः-દિશાઓને वि, अख्यत्-વિખ્યાત કરે છે; અને आ, अगात्-આવે છે; તેમ તમે પણ બનો. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય પૃથ્વીથી લઈને બાર ગાઉ સુધી ગુરુત્વ અને લઘુત્વથી યુક્ત સાત પ્રકારનાં જલોનાં અવયવો અને સમસ્ત દિશાઓનો વિભાગ કરે છે, વર્ષા આદિ દ્વારા સર્વને સુખ આપે છે, તેમ તમે શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોથી સર્વ દિશાઓમાં કીર્તિને પ્રાપ્ત કરીને, અનેક પ્રકારનાં ઐશ્વર્યોનાં દાનથી મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓને નિરંતર સુખી કરો. (૨૪)

हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिरुभे द्यावापृथिवीऽअन्तरीयते।
अपामीवां बाधते वेति सूर्यमभि कृष्णेन रजसा द्यामृणोति॥ २५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે हिरण्यपाणिः-હાથોના સમાન જળ આદિના ગ્રાહક પ્રકાશરૂપ કિરણોથી યુક્ત, विचर्षणिः-વિશેષદર્શક, सविता-સર્વ પદાર્થોની ઉત્પત્તિના હેતુ सूर्यम्-સૂર્યલોક - જ્યારે उभे-બન્ને द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને ભૂમિના अन्तः-મધ્યમાં ईयते-પ્રાપ્ત થઈને ગતિ કરે છે; - ઉદય થઈને ઘૂમે છે; ત્યારે अमीवाम्-વ્યાધિરૂપ અંધકારને अप + बाधते-દૂર કરે છે.

જ્યારે वेति-અસ્ત થાય છે, ત્યારે कृष्णेन-કાળા રંગના रजसा-અંધકારરૂપથી द्याम्-પ્રકાશને अभि + ऋणोति-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત - ઘેરી લે છે; તે સૂર્યને તમે જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્ય સમીપના લોકોને આકર્ષણ કરીને ધારણ કરે છે, તેમ જ અનેક લોકોથી શોભાયમાન સૂર્ય આદિ સમસ્ત જગતને વ્યાપ્ત કરીને તથા આકર્ષણ કરીને ઈશ્વર ધારણ કરી રહેલ છે, તેમ તમે જાણો.

ઈશ્વર સિવાય સર્વના વિધાતા - નિર્માણકર્તા અને ધારણકર્તા અન્ય કોઈ બની શકતા નથી. (૨૫)

हिरण्यहस्तोऽअसुरः सुनीथः सुमृडीकः स्ववाँ यात्वर्वाङ्।
अपसेधन् रक्षसो यातुधानानस्थाद्देवः प्रतिदोषं गृणानः॥ २६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે हिरण्यहस्तः-કિરણરૂપ હાથોવાળા, सुनीथः-પ્રકાશ આદિને સારી રીતે પહોંચાડનાર, असुरः-કિરણો વા જલોને ફેંકનાર, सुमृडीकः-સુંદર - અત્યંત સુખકારી, स्ववान्-પોતાના પ્રકાશ આદિ ગુણોથી યુક્ત देवः-પ્રકાશક સૂર્યલોક, रक्षसः-ચોર, ડાકુ આદિ તથા यातुधानान्-અન્યાયથી પારકા પદાર્થોને ધારણ કરનારા દુષ્ટોને अपसेधन्-નિવૃત્ત કરતા અર્થાત્ ચોર ડાકુ આદિ સૂર્યોદય થતાં પોતાનું કામ કરી શકતા નથી, પરંતુ રાત્રિમાં જ પોતાનું કામ કરે છે; તથા प्रतिदोषम्-પ્રત્યેક જનમાં રહેલ દોષને गृणानः-ઉચ્ચારણ =પ્રકટ કરતાં अस्थात्-ઉદય થાય છે. તે अर्वाङ्-પોતાના નજીકના

પદાર્થોને પ્રાપ્ત થનાર, સૂર્ય - અમારા સુખને માટે यातु-પ્રાપ્ત થાય; તેમ તે જાણો. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! સદા ઉદારતાથી યાચકોને સુવર્ણ આદિ આપીને, દુષ્ટ આચરણવાળાનો તિરસ્કાર કરીને, ધાર્મિક જનોને સુખ પ્રદાન કરીને તમે દિવસ-રાત સૂર્યની સમાન પ્રશંસિત બનો. (૨૬)

ये ते पन्थाः सवितः पूर्व्यासोऽरेणवः सुकृताऽअन्तरिक्षे।
तेभिर्नोऽअद्य पथिभिः सुगेभी रक्षा च नोऽअधि च ब्रूहि देव॥ २७॥

પદાર્થ : હે सवितः-સૂર્યની સમાન ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરવાવાળા, देव-સુખ અને વિદ્યાના દાતા આપ્ત વિદ્વાન ! ते-આપના - જેમ સૂર્યનો अन्तरिक्षे-આકાશ ગમનમાં શુદ્ધ માર્ગ છે; તેમ - ये-જે पूर्व्यासः-પૂર્વજ આપ્તજનોથી સેવિત अरेणवः-ધૂળ વગેરેથી રહિત, सुकृताः-સુંદર રીતે તૈયાર કરેલ पन्थाः-માર્ગ છે; तेभिः-તે सुगेभिः-સુખથી ગમન કરવા યોગ્ય पथिभिः-માર્ગોથી अद्य-આજ नः-અમને ચલાવો, તે માર્ગોથી ચાલતાં અમારી रक्ष-રક્ષા च-પણ કરો; च-તથા नः-અમને अधि + ब्रूहि-અધિકતર ઉપદેશ કરો. આ રીતે સર્વને બોધ કરાવો. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે જેમ સૂર્યનો આકાશમાં નિર્મળ માર્ગ છે, તેમ ઉપદેશ અને અધ્યાપનથી વિદ્યા, ધર્મ અને સુશીલતા પ્રદાન કરનારા માર્ગોનો પ્રચાર કરો. (૨૭)

उभा पिबतमश्विनोभा नः शर्म यच्छतम्। अविद्रियाभिरूतिभिः॥ २८॥

પદાર્થ : હે अश्विना-સૂર્ય અને ચંદ્રમાની સમાન અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! उभा-બન્ને તમે - જ્યાં ઉત્તમ રસનું पिबतम्-પાન કરો છો, તે शर्म-ઉત્તમ આશ્રયસ્થાન વા સુખને उभा-બન્ને તમે - अविद्रियाभिः-છિદ્રરહિત ऊतिभिः-રક્ષા આદિથી સુરક્ષિત ઘરને नः-અમને यच्छतम्-પ્રદાન કરો. (૨૮)

ભાવાર્થ : અધ્યાપક અને ઉપદેશકો સદા ઉત્તમ ઘરની રચના અને નિવાસનો ઉપદેશ કરીને જ્યાં પૂર્ણ રક્ષા હોય, ત્યાં સર્વને પ્રેરિત કરે. (૨૮)

अप्नस्वतीमश्विना वाचमस्मे कृतं नो दस्रा वृषणा मनीषाम्।
अद्यूत्येऽवसे नि ह्वये वां वृधे च नो भवतं वाजसातौ॥ २९॥

પદાર્થ : હે दस्रा-દુઃખનાશક, वृषणा-સુખની વર્ષા કરવાવાળા, अश्विना-સમસ્ત વિદ્યાઓમાં વ્યાપ્ત અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! તમે બન્ને - अस्मे-અમારી वाचम्-વાણી च-અને मनीषाम्-બુદ્ધિને अप्नस्वतीम्-પ્રશસ્ત કર્મોવાળી कृतम्-કરો' नः-અમારા अद्यूत्ये-દ્યુત =જુગાર આદિથી રહિત કર્મમાં अवसे-રક્ષાને માટે કોઈને સ્થાપિત કરો; અને वाजसातौ-વાજ =ધનના વિભાજન માટેના સંગ્રામમાં नः-જ અમારી वृधे-વૃદ્ધિને માટે भवतम्-રહો.

જે वाम्-તમારા બન્નેની હું नि + ह्वये-નિરંતર સ્તુતિ કરું છું; તેથી તમે બન્ને મારી ઉન્નતિ કરો. (૨૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો નિષ્કપટ, આપ્ત, દયાળુ વિદ્વાનોનું નિરંતર સેવન કરે છે, તેઓ ચતુર, વિજયી ધાર્મિક, વિદ્વાન બનીને, સર્વત્રથી ઉન્નતિ કરતાં વિજયી બનીને સર્વને સુખ આપનારા બને છે. (૨૯)

द्युभि॑र॒क्तुभिः॒ परि॑ पातम॒स्मानरि॑ष्टेभिरश्विना॒ सौभ॑गेभिः।

तन्नो॑ मि॒त्रो वरु॑णो मामहन्ता॒मदि॑तिः॒ सिन्धुः॑ पृथि॒वीऽउ॒त द्यौः॥ ३०॥

પદાર્થ : હે अश्विना-સભાપતિ અને સેનાપતિ ! જેમ अदितिः-પૃથ્વી, सिन्धुः-સાત પ્રકારના સમુદ્ર पृथिवी-આકાશ उत-અને द्यौः-પ્રકાશ - तत्-તેઓ नः-અમારો मामहन्ताम्-સત્કાર કરે છે; તેમ मित्रः-મિત્ર અને वरुणः-દુષ્ટોને બાંધનારા વા રોકનાર તમે બન્ને - द्युभिः-દિવસ, अक्तुभिः-રાત્રિ, अरिष्टेभिः-હિંસારહિત सौभगेभिः-શ્રેષ્ઠ ધનોથી अस्मान्-અમારી परि + पातम्-સર્વત્રથી રક્ષા કરો. (૩૦)

ભાવાર્થ : હે સભાધીશ આદિ વિદ્વાનો ! જેમ પૃથ્વી આદિ તત્ત્વ સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે, તેમ ઉન્નત ઐશ્વર્યોથી દિવસ-રાત સર્વ મનુષ્યોની ઉન્નતિ કરો. (૩૦)

आ कृ॒ष्णेन॒ रज॑सा॒ वर्त्त॑मानो निवे॒शय॑न्न॒मृतं॒ मर्त्यं॑ च।

हि॒र॒ण्यये॑न सवि॒ता रथे॒ना दे॒वो या॑ति॒ भुव॑नानि॒ पश्य॑न्॥ ३१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! આપ જે आ, कृष्णेन-સર્વત્ર આકર્ષણથી रजसा-લોકસમૂહની સાથે वर्तमानः-રહેલા, નિરંતર अमृतम्-નાશરહિત = કારણ च-અને मर्त्यम्-નાશસહિત = કાર્યને निवेशयन्-નિત્ય પ્રવિષ્ટ કરતી, हिरण्ययेन-તેજોમય रथेन-રમણીયસ્વરૂપથી सविता-ઐશ્વર્ય પ્રદાન કરનારી देवः-દેદીપ્યમાન વિદ્યુત્ भुवनानि-સંસારની સર્વ વસ્તુઓને याति-પ્રાપ્ત થાય છે, તેને पश्यन्-જોતાં સમ્યક્ રીતે તેનો પ્રયોગ કરો. (૩૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે વિદ્યુત્ કાર્ય અને કારણને પ્રકાશિત કરીને સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, તેજોમયી, શીઘ્રગામિની, સર્વની આકર્ષક છે, તેને જોતાં, તેનો સંપ્રયોગ કરીને ઈચ્છિત સુખોને શીઘ્ર પ્રાપ્ત કરો. (૩૧)

आ रा॑त्रि॒ पार्थि॑व॒ꣳ रजः॑ पि॒तुर॑प्रायि॒ धाम॑भिः।

दि॒वः सदा॑ꣳसि बृ॒ह॒ती वि ति॑ष्ठस॒ऽआ त्वे॒षं व॑र्त्तते॒ तमः॑॥ ३२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે बृहती-મહાન रात्रि-રાત दिवः-પ્રકાશના सदांसि-સ્થાનોને वि + तिष्ठसे-વ્યાપ્ત કરે છે; જે पितुः-મધ્યલોકમાં धामभिः-સર્વ સ્થાનોથી पार्थिवम्-પૃથ્વી સંબંધી रजः-લોકને आ + अप्रायि-સર્વત્રથી પૂર્ણ કરે છે; અને જેનો त्वेषम्-પોતાની કાંતિથી વૃદ્ધિ પામેલો तमः-અંધકાર आ, वर्त्तते-આવાગમન કરે છે; તે રાત્રિનું યુક્તિપૂર્વક સેવન કરો. (૩૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પૃથ્વી આદિની છાયા રાતે પ્રકાશને રોકે છે, સર્વને આચ્છાદિત કરે છે,

તેનું યથાયોગ્ય સેવન કરો. (૩૨)

उषस्तच्चित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवति। येन तोकं च तनयं च धामहे॥ ३३॥

પદાર્થ : હે वाजिनीवति-વિપુલ અન્ન આદિ ઐશ્વર્યોથી યુક્ત उषः-ઉષાની સમાન કાન્તિમાન વિદ્યમાન સ્ત્રી ! જેમ - ઐશ્વર્યયુક્ત ઉષા જેમ चित्रम्-અદ્‌ભુત સ્વરૂપને ધારણ કરે છે; तत्-તે સ્વરૂપને તું अस्मभ्यम्-અમારે માટે आ + भर-સારી રીતે પુષ્ટ કર; येन-જેથી અમે तोकम्-સદ્યોજાત શિશુને च-અને तनयम्-કુમારને च-પણ धामहे-ધારણ કરીએ. (૩૩)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ શોભાથી યુક્ત, મંગલપ્રદ, ઉષા = પ્રભાતવેળા સર્વ વ્યવહારોને ધારણ કરનારી હોય છે, તેમ જ જો સ્ત્રીઓ હોય, તો તે સદા પોત-પોતાના પતિને પ્રસન્ન કરીને પુત્ર-પૌત્ર આદિની સાથે આનંદ પ્રાપ્ત કરે. (૩૩)

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रꣳ हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रꣳ हुवेम॥ ३४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે प्रातः-પ્રાતઃકાળે अग्निम्-પવિત્ર વા પ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્મા વા અગ્નિને; प्रातः-પ્રભાતમાં इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્યને, प्रातः-પ્રભાત સમયે, मित्रावरुणा-પ્રાણ અને ઉદાનને, प्रातः-પ્રભાતમાં अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશકને हवामहे-સ્વીકાર કરીએ છીએ વા બોલાવીએ છીએ.

प्रातः-પ્રભાતમાં भगम्-સેવન કરવા યોગ્ય ભાગને, पूषणम्-પુષ્ટિકારક ભોગને, ब्रह्मणस्पतिम्-ધનના વા વેદના पतिम्-રક્ષકને - સ્વામીને, प्रातः-પ્રભાતમાં सोमम्-ઔષધિગણને उत-અને रुद्रम्-જીવને પણ हुवेम-ગ્રહણ વા સ્વીકાર કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૩૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પ્રાતઃ પરમેશ્વરની ઉપાસના, હવન, ઐશ્વર્યની ઉન્નતિના ઉપાયો, પ્રાણ અને અપાનની પુષ્ટિ, અધ્યાપકો, ઉપદેશકો અને વિદ્વાનોનો [સંગ] તથા ઔષધિઓનું સેવન અને જીવાત્માને જાણવા તથા પ્રાપ્ત કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે, તેઓ સર્વ સુખોથી સુશોભિત બની શકે છે. (૩૪)

प्रातर्जितं भगमुग्रꣳहुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्त्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह॥ ३५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वयम्-અમે प्रातः-પ્રભાતવેળામાં यः-જે विधर्त्ता-વિવિધ પદાર્થોને ધારણ કરનાર છીએ, आध्रः-ન્યાય આદિમાં તૃપ્તિ ન કરનારાના પુત્ર [आध्रः-અપુત્રનો પુત્ર] છે, चित्-અને यम्-જે ઐશ્વર્યને मन्यमानः-વિશેષ કરીને જાણતાં, तुरः-શીઘ્રકારી चित्-અને राजा-શોભાયુક્ત - પ્રકાશમાન રાજા છે, यम्-જે ઉક્ત भगम्-ઐશ્વર્યને चित्-પણ भक्षि-તું સેવન કર; इति-આ રીતે आह-પરમેશ્વર ઉપદેશ આપે છે.

તે अदितेः-અવિનાશી કારણની સમાન માતાના पुत्रम्-પુત્ર, जितम्-પોતાના પુરુષાર્થથી પ્રાપ્ત, उग्रम्-અત્યુત્તમ भगम्-ઐશ્વર્યને हुवेम-અમે ગ્રહણ કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ સ્વીકાર કરો. (૩૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમારે સદા પ્રાતઃકાલથી લઈને શયન સુધી યથાશક્તિ સામર્થ્યથી વિદ્યા તથા પુરુષાર્થથી ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરીને આનંદ ભોગવવો જોઈએ અને દરિદ્રોને સુખ આપવું જોઈએ, તેમ ઈશ્વરનો ઉપદેશ છે. (૩૫)

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र नो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम॥ ३६॥

પદાર્થ : હે भगः-ઐશ્વર્યયુક્ત, प्रणेतः-પુરુષાર્થના પ્રેરક ઈશ્વર, વા હે भग-ઐશ્વર્યના દાતા ! सत्यराधः-સત્ય ધનોથી યુક્ત, भग-ભજનીય ઈશ્વર ! આપ नः-અમારી इमाम्-આ વર્તમાન धियम्-બુદ્ધિને ददत्-આપતાં उत्, अव-ઉત્કૃષ્ટતાથી રક્ષા કરો.

હે भग-વિદ્યારૂપ ઐશ્વર્યને પ્રદાન કરનાર ઈશ્વર વા વિદ્વાન ! આપ गोभिः-ગાય આદિ પશુઓ अश्वैः-ઘોડા આદિ સવારીઓ અને नृभिः-નાયક કુળનિર્વાહક મનુષ્યોની સાથે नः-અમને प्र, जनय-પ્રકટ - પ્રસિદ્ધ કરો.

હે भग-સેવા કરતા વિદ્વાન ! જેથી અમે नृवन्तः-પ્રશસ્ત મનુષ્યોયુક્ત प्र + स्याम-સારી રીતે બનીએ; તેમ કરો. (૩૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જ્યારે - જ્યારે ઈશ્વરની પ્રાર્થના અને વિદ્વાનોનો સંગ કરે, ત્યારે - ત્યારે બુદ્ધિની જ યાચના કરે, અથવા સંત પુરુષોની કામના કરે. (૩૬)

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानांꣳ सुमतौ स्याम॥ ३७॥

પદાર્થ : હે मघवन्-ઉત્તમ ધનયુક્ત ઈશ્વર વા વિદ્વાન ! वयम्-અમે इदानीम्-વર્તમાન સમયમાં उत-અને प्रपित्वे-પદાર્થોની પ્રાપ્તિમાં, उत-અને ભવિષ્યકાળમાં उत-અને अह्नाम्-દિવસોની मध्ये-મધ્યમાં भगवन्तः-સમગ્ર ઐશ્વર્યથી યુક્ત स्याम-બનીએ.

उत-અને सूर्यस्य-સૂર્યના उदिता-ઉદય સમયમાં તથા देवानाम्-વિદ્વાનોની सुमतौ-ઉત્તમ બુદ્ધિમાં રહેતાં भगवन्तः-સમગ્ર ઐશ્વર્યથી યુક્ત श्याम-બનીએ. (૩૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળમાં યોગના ઐશ્વર્યની ઉન્નતિથી લૌકિક વ્યવહારની વૃદ્ધિ અને પ્રશંસામાં નિરંતર પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૩૭)

भगएव भगवाँ२ऽअस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह॥ ३८॥

પદાર્થ : હે देवाः-વિદ્વાનો ! જે भग-ભજનીય અને સેવનીય एव-જ भगवान्-પ્રશસ્ત ઐશ્વર્યથી યુક્ત अस्तु-છે; तेन-તે ઐશ્વર્યયુક્ત, ઐશ્વર્યવાન પરમેશ્વરની સાથે वयम्-અમે भगवन्तः-સમગ્ર શોભાથી યુક્ત स्याम-બનીએ.

હે भग-સંપૂર્ણ શોભાયુક્ત ઈશ્વર ! तम्-તે त्वा-આપને सर्वः-સર્વ જનતા इत्-જ जोहवीति-અત્યંત બોલાવે છે.

હે भग-સકલ ઐશ્વર્યના દાતા ઈશ્વર ! सः-તેથી આપ इह-આ સંસારમાં नः-અમારા पुर,एता-અગ્રગામી भव-બનો. (૩૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે - જે સકળ ઐશ્વર્યથી સંપન્ન પરમેશ્વર છે; અને તેની સાથે એના ઉપાસક વિદ્વાન અને તેની સાથે સિદ્ધ અને શ્રીમાન-લોકો છે.

જે જગદીશ્વર માતા-પિતા સમાન અમારા પર કૃપા કરે છે, તેની ભક્તિપૂર્વક આ સંસારમાં મનુષ્યોને નિરંતર ઐશ્વર્યવાન કરો. (૩૮)

समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय।

अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु॥ ३९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! उषसः-પ્રભાત સમયે दधिक्रावेव-સવારને ધારણ કરીને ગતિવિશેષવાળા ઘોડાઓની સમાન, शुचये-પવિત્ર पदाय-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય પદ તથા अध्वराय-હિંસારૂપ અધર્મરહિત વ્યવહારને માટે सम्, नमन्त-સમ્યક્ રીતિથી નમે છે; અર્થાત્ પ્રાતઃ સમયે સત્ત્વગુણની અધિકતાથી સર્વ પ્રાણીઓનાં ચિત્ત શુદ્ધ નમ્ર હોય છે; अश्वाः-શીઘ્રગામી वाजिनः-ઘોડાઓ જેમ रथमिव-રમણીય યાન - રથને લઈ જાય છે - તેમ नः-અમને अर्वाचीनम्-નવીન - આ સમયના वसुविदम्-વિવિધ ધનોને પ્રાપ્ત કરાવવાવાળા भगम्-ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરાવે છે; તેમ એ બન્ને ઘોડાઓને આપ आ + वहन्तु-સારી રીતે-સર્વત્ર ચલાવો. (૩૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉષાની સમાન વિદ્યા અને ધર્મને પ્રકાશિત કરે છે; અશ્વ-યાનોની સમાન શીઘ્ર સમગ્ર ઐશ્વર્ય સર્વને પહોંચાડે છે, તેઓને પવિત્ર વિદ્વાન જાણવા જોઈએ. (૩૯)

अश्वावतीर्गोमतीर्नऽ उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः।

घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥ ४०॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રીઓ ! જેમ अश्वावतीः-પ્રશસ્ત અશ્વ = વ્યાપ્તિશીલ જલોવાળી, गोमतीः-અનેક ગૌ = કિરણોવાળી, वीरवतीः-અનેક વીરોવાળી, भद्राः-કલ્યાણકારી घृतम्-શુદ્ધ, પ્રદીપ્ત જળને दुहानाः-પૂરણ કરનારી विश्वतः-સર્વત્ર प्रपीताः-પ્રકૃર્ષતાથી વધેલી, उषासः-પ્રભાતવેળા नः-અમારી सदम्-સભા વા ઘરને પ્રાપ્ત થાય છે; તેમ અમારા સભા નિવાસસ્થાનમાં આપ उच्छन्तु-વિશેષરૂપથી

વાસ કરો.

नः-અમારી यूयम्-તમે स्वस्तिभिः-સ્વાસ્થ્યદાયક સુખોથી सदा-સદા पात-રક્ષા કરો. (૪૦)

ભાવાર્થ : જેમ પ્રભાતવેળા જાગનાર મનુષ્યોને સુખ આપનારી છે, તેમ વિદુષી સ્ત્રીઓ - કુમારી, વિદ્યાર્થીની કન્યાઓની વિદ્યા, સુશિક્ષા અને સૌભાગ્યની ઉન્નતિ કરી તે કન્યાઓને સદા આનંદિત કરે. (૪૦)

पूषन्तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन। स्तोतारस्त इह स्मसि॥ ४१॥

પદાર્થ : હે पूषन्-પુષ્ટિકારક પરમેશ્વર વા આપ્ત વિદ્વાન ! वयम्-અમે तव-આપના व्रते-સ્વભાવ વા નિયમમાં એટલા માટે રહીએ કે જેથી न + कदाचन + रिष्येम-કદી પણ ચિત્ત ન બગાડીએ.

इह-આ જગતમાં ते-આપની स्तोतारः-સ્તુતિ કરનારા અમે સુખી स्मसि-રહીએ. (૪૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પરમેશ્વર વા આપ્ત વિદ્વાનના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને અનુકૂળ આચરણ કરે છે, તેઓ કદી પણ નષ્ટ સુખવાળા થતા નથી. (૪૧)

पथस्पथः परिपतिं वचस्या कामेन कृतो अभ्यानडर्कम्।
स नो रासच्छुरुधश्चन्द्राग्रा धियं धियः सीषधाति प्र पूषा॥ ४२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वचस्या-વચન અને कामेन-ઈચ્છાથી कृतः-સિદ્ધ पूषा-પુષ્ટિકર્તા જગદીશ્વર વા આપ્તજન - शुरुधः-શીઘ્ર દુઃખોને રોકનાર, चन्द्राग्राः-પ્રથમ જ આનંદકારી સાધનોને नः-અમારે માટે रासत्-આપે છે; धियं धियम्-પ્રત્યેક બુદ્ધિ વા કર્મને प्र + सीषधाति-ઉત્તમતાથી સિદ્ધ કરે છે; सः-તે શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવોને अभि, आनट्-સર્વત્રથી વ્યાપ્ત કરે છે; તે अर्कम्-પૂજનીય पथस्पथः-પ્રત્યેક માર્ગના परि + पतिम्-સ્વામીની અમે સ્તુતિ કરીએ. (૪૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વર સર્વના સુખને માટે વેદના પ્રકાશ માટેની કામના કરે છે, આપ્ત મનુષ્ય ભણાવવા ઈચ્છે છે અને જે [એ બન્ને] સર્વને શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ અને શુભકર્મની શિક્ષા આપે છે, તે બન્ને સર્વ સન્માર્ગોના સ્વામી સદા સત્કારને યોગ્ય છે. (૪૨)

त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन्॥ ४३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अदाभ्यः-અહિંસાધર્મવાળા હોવાથી દયાળુ, गोपाः-રક્ષક, विष्णुः-ચરાચર જગતમાં વ્યાપ્ત પરમેશ્વર - धर्माणि-પુણ્યરૂપ કર્મોના ધારક પૃથ્વી આદિને धारयन्-ધારણ કરતાં अतः-એ કારણથી त्रीणि-ત્રણ पदा-જાણવા વા પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય કારણ, સૂક્ષ્મ અને સ્થૂલ જગત विचक्रमे-વિશેષ રૂપથી રચે છે; તે અમારા પૂજનીય છે. (૪૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમેશ્વરે ભૂમિ, આકાશ અને સૂર્યરૂપથી ત્રણ પ્રકારનું જગત રચેલ

છે, સર્વનું ધારણ અને રક્ષણ કરે છે, તે જ ઉપાસના કરવા યોગ્ય ઈષ્ટદેવ છે. (૪૩)

तद्विप्रा॑सो विप॒न्यवो॑ जागृ॒वाꣳस॒ः समि॑न्धते। विष्णो॒र्यत्प॑र॒मं प॒दम्॥ ४४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે जागृवांसः-અવિદ્યારૂપ નિદ્રાથી ઊઠીને જાગરૂક થયેલા, विपन्यवः-વિશેષ સ્તુતિ કરવા યોગ્ય અથવા ઈશ્વરની સ્તુતિ કરવાવાળા, विप्रासः-બુદ્ધિમાન યોગીજન - विष्णोः-સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્માનું यत्-જે परमम्-ઉત્તમ पदम्-પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય મોક્ષદાયક સ્વરૂપ છે - तत्-તેને सम्, इन्धते-સમ્યક્ પ્રકાશિત કરે છે; તેના સત્સંગથી તમે પણ એવા બનો. (૪૪)

ભાવાર્થ : જે યોગાભ્યાસ આદિ સત્કર્મો કરીને, શુદ્ધ અન્તઃકરણ તથા આત્માવાળા, ધાર્મિક, પુરુષાર્થી લોકો છે, તે જ વ્યાપક પરમેશ્વરનાં સ્વરૂપને જાણી શકે છે; અને પ્રાપ્ત કરી શકે છે, અન્ય નહિ. (૪૪)

घृ॒तव॑ती॒ भुव॑नानामभिश्रि॒यो॒र्वी पृ॒थ्वी म॑धु॒दुघे॑ सु॒पेश॑सा।
द्यावा॑पृथि॒वी वरु॑णस्य॒ धर्म॑णा॒ विष्क॑भिते अ॒जरे॒ भूरि॑रेतसा॥ ४५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वरुणस्य-સર્વશ્રેષ્ઠ જગદીશ્વરના धर्मणा-ધારણરૂપ સામર્થ્યથી मधुदुघे-મધુ = જળને પૂર્ણ કરનારા, सुपेशसा-સુંદર પેશ = રૂપયુક્ત, पृथ्वी-વિસ્તીર્ણ उर्वी-વિપુલ પદાર્થોથી યુક્ત, घृतवती-વિપુલ ઘૃત જલયુક્ત अजरे-પોતાનાં સ્વરૂપથી નાશરહિત भूरिरेतसा-ભૂરિ = વિપુલ રેત = જળથી યુક્ત અથવા ભૂરિ = વિપુલ રેત = વીર્ય વા પરાક્રમને હેતુ भुवनानाम्-લોક-લોકાન્તરનાં अभिश्रिया-સર્વત્રથી શ્રી = શોભા અને લક્ષ્મીને માટે द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને ભૂમિ विष्कभिते-વિશેષ રૂપથી ધારણ વા દૃઢ કરેલ છે, તેને તમે ઉપાસનાને યોગ્ય જાણો. (૪૫)

ભાવાર્થ : જે પરમેશ્વર પ્રકાશરૂપ અને અપ્રકાશરૂપ બે પ્રકારના જગતને બનાવીને, ધારણ કરીને, પાલન કરે છે, તે જ મનુષ્યો માટે સર્વદા ઉપાસનીય છે. (૪૫)

ये न॑ः स॒पत्ना॒ अप॒ ते भ॑वन्त्विन्द्रा॒ग्निभ्या॒मव॑ बाधामहे॒ तान्।
वस॑वो रु॒द्रा आ॑दि॒त्या उ॑परि॒स्पृश॑ं मो॒ग्रं चेत्ता॑रमधिरा॒जम॑क्रन्॥ ४६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ये-જે नः-અમારા सपत्नाः-શત્રુજન હોય ते-તેઓ अप + भवन्तु-દૂર રહે અર્થાત્ પરાજય પામે. જેમ तान्-તે શત્રુઓને અમે इन्द्राग्निभ्याम्-વાયુ અને વિદ્યુત્નાં અસ્ત્રોથી अव + बाधामहे-પીડિત કરીએ; અને જેમ वसवः-પૃથ્વી આદિ વસુ रुद्राः-દશ પ્રાણ અને અગિયારમો આત્મા અને आदित्याः-બાર મહિના उपरिस्पृशम्-ઉચ્ચ સ્થાન પર બેસવા, उग्रम्-તેજસ્વભાવ, અને चेत्तारम्-સત્યાસત્યને યથાવત્ જાણવાવાળા मा-મને अधिराजम्-અધિપતિ, સ્વામી સમર્થ अक्रन्-બનાવે છે; તેમ તે ઉક્ત શત્રુઓનું તમે નિવારણ કરો અને મારો સત્કાર કરો. (૪૬)

ભાવાર્થ : જેના અધિકારમાં પૃથ્વી આદિ પદાર્થો હોય તે જ સર્વોપરિ રાજા બની શકે છે. જે રાજા હોય તે શસ્ત્ર-અસ્ત્રોથી શત્રુઓનું નિવારણ કરીને રાજ્યને નિષ્કંટક કરે. (૪૬)

आ नासत्या त्रिभिरेकादशैरिह देवेभिर्यातं मधुपेयमश्विना।
प्रायुस्तारिष्टं नी रपांꣳसि मृक्षतꣳ सेधतं द्वेषो भवतꣳ सचाभुवा॥ ४७॥

પદાર્થ : હે नासत्या-અસત્ય આચરણથી રહિત, अश्विना-રાજા અને પ્રજાજન ! જેમ તમે બન્ને - इह-આ જગતમાં त्रिभिः-एकादशैः-તેત્રીસ देवेभिः-ઉત્તમ પૃથ્વી આદિ [આઠ વસુ, પ્રાણાદિ અગિયાર રુદ્ર, બાર મહિના, વિદ્યુત્ અને યજ્ઞ] તેત્રીસ દેવતાઓની સાથે मधुपेयम्-મધુર ગુણોથી યુક્ત પીવા યોગ્ય ઔષધિઓના રસને आ + यातम्-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત કરો છો; रपांसि-પાપોને मृक्षतम्-શુદ્ધ કરો છો; द्वेषः-દ્વેષ આદિ દોષયુક્ત પ્રાણીઓનો निः + सेधतम्-નિષેધ કરો છો; सचाभुवा-સત્ય પુરુષાર્થની સાથે કાર્યોમાં સંયુક્ત भवतम्-બનો છો; आयुः-જીવનને प्र + तारिष्टम्-અત્યંત ઉન્નત કરો છો; તેમ અમે પણ કરીએ. (૪૭)

ભાવાર્થ : તે લોકો જ જગતના હિતૈષી છે, જે પૃથ્વી આદિ સૃષ્ટિની વિદ્યાને જાણીને, અન્યોને ગ્રહણ કરાવે છે, દોષોને દૂર કરે છે અને ચિર આયુના વિધાનનો પ્રચાર કરે છે. (૪૭)

एष व स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः।
एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम्॥ ४८॥

પદાર્થ : હે मरुतः-મરણધર્મા મનુષ્યો ! मान्दार्यस्य-પ્રશસ્ત કર્મોના સેવક ઉદાર ચિત્તવાળા मान्यस्य-સત્કારને યોગ્ય कारोः-શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતા કારીગરની एषः-એ स्तोमः-પ્રશંસા અને इयम्-આ गीः-વાણી वः-તમારે માટે ઉપયોગી બને.

તમે इषा-ઈચ્છા વા અન્નના નિમિત્તથી वयाम्-વય = અવસ્થાવાળા અથવા પ્રાણીઓની तन्वे-શરીર આદિની રક્ષાને માટે आ + यासीष्ट-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થયા કરો; અને અમે जीरदानुम्-જીવનને માટે इषम्-વિજ્ઞાન વા અન્ન તથા वृजनम्-દુઃખોને દૂર કરનાર બળને विद्याम-પ્રાપ્ત કરીએ. (૪૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સદા પ્રશંસનીય કર્મોનું સેવન કરીને, શિલ્પવિદ્યાના જ્ઞાતાઓનો સત્કાર કરીને, જીવન, બળ તથા ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. (૪૮)

सहस्तोमाः सहछन्दसऽआवृतः सहप्रमाऽऋषयः सप्त दैव्याः।
पूर्वेषां पन्थामनुदृश्य धीरा अन्वालेभिरे रथ्यो न रश्मीन्॥ ४९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ सहस्तोमाः-પ્રશંસાઓની સાથે વર્તમાન વા શાસ્ત્રોની સ્તુતિ કરવાવાળા, सहछन्दसः-છંદ = વેદાદિનું અધ્યયન વા સુખભોગવાળા, आवृतः-બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમસ્ત વિદ્યા ભણીને ગુરુકૂળથી ઘરે આવેલ, सहप्रमाः-યથાર્થ પ્રજ્ઞાનવાળા सप्त-સાત અર્થાત્ પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિય, અંતઃકરણ અને

આત્મા એ સાત, दैव्याः-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વાભાવોમાં પ્રવીણ धीराः-ધ્યાનયોગી, ऋषयः-વેદાદિ શાસ્ત્રોના જ્ઞાતા - रथ्यः-રથ ચલાવવામાં કુશળ સારથિ रश्मीन्-લગામની દોરીને न-જેમ પકડે છે-તેમ पूर्वेषाम्-પૂર્વજ વિદ્વાનોના पन्थाम्-માર્ગોને अनुदृश्य-અનુકૂળતાથી જોઈને अन्वालेभिरे-પશ્ચાત્ પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ બનીને તમે પણ આપ્તજનોના માર્ગને પ્રાપ્ત કરો. (૪૯)

ભાવાર્થ : જે રાગ-દ્વેષ આદિ દોષોનો દૂરથી ત્યાગ કરીને, પરસ્પર પ્રીતિમાન બનીને, બ્રહ્મચર્યથી ધર્માચરણપૂર્વક સર્વ વેદોને જાણીને, સત્ય તથા અસત્યનું વિવેચન કરીને, સત્ય ગ્રહણ કરીને તથા અસત્યનો ત્યાગ કરીને, આત્મભાવથી પ્રવૃત્ત રહે છે, તેઓ સુશિક્ષિત સારથિની સમાન અભીષ્ટ ધર્મયુક્ત માર્ગ પર ચાલી શકે છે, તેઓ જ ઋષિ નામને પ્રાપ્ત કરે છે. (૪૯)

आयुष्यं वर्च्चस्यꣳ रायस्पोषमौद्भिदम्।
इदꣳ हिरण्यं वर्च्चस्वज्जैत्रायाविशतादु माम्॥ ५०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે औद्भिदम्-દુઃખોના નાશક, आयुष्यम्-જીવન માટે હિતકારી, वर्चस्यम्-વર્ચ = અધ્યયનને માટે હિતકારી, रायः-ધનના पोषम्-પોષક, वर्चस्वत्-પ્રશસ્ત અન્ન =ભોજન આદિના માટે हिरण्यम्-તેજઃ સ્વરૂપ સુવર્ણ આદિ ઐશ્વર્ય છે; તે जैत्राय-વિજયને માટે माम्-મને आ, विशतात्-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત થાય અર્થાત્ મારી નજીક સ્થિર રહે; અને उ-તે તમને પણ પ્રાપ્ત થાય-તમારી નજીક સ્થિર રહે. (૫૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો પોતાના આત્મા સમાન સર્વને જાણે છે, વિદ્વાનોની સાથે પરામર્શ કરીને સત્ય અને અસત્યનો નિર્ણય કરે છે, તેઓ દીર્ઘાયુ, પૂર્ણ વિદ્યાઓ, સમસ્ત ઐશ્વર્ય અને વિજય પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૦)

न तद्रक्षाꣳसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजꣳ ह्येतत् ।
यो बिभर्ति दाक्षायणꣳ हिरण्यꣳस देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः॥ ५१॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે देवानाम्-વિદ્વાનોના प्रथमजम्-પ્રથમાવસ્થા વા બ્રહ્મચર્યાશ્રમમાં ઉત્પન્ન ओजः-બળ, પરાક્રમ છે; तत्-તેને न, रक्षांसि-ન અન્યોને પીડિત કરીને પોતાની જ રક્ષા કરનારા તથા न, पिशाचाः-ન પ્રાણીઓના રક્ત આદિનું આચમન = ભક્ષણ કરનારા હિંસક, મ્લેચ્છાચારી દુષ્ટજન तरन्ति-ઉલ્લંઘન કરે છે.

यः-જે हि-નિશ્ચય જ एतत्-તે दाक्षायणम्-દક્ષ =ચતુરજનને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય हिरण्यम्-તેજ : સ્વરૂપ બ્રહ્મચર્યને बिभर्त्ति-ધારણ વા પોષણ કરે છે; सः-તે देवेषु-વિદ્વાનોમાં दीर्घम्-અધિક आयुः-આયુને कृणुते-પ્રાપ્ત કરે છે; અને सः-તે मनुष्येषु-મનનશીલ મનુષ્યોમાં दीर्घम्-લાંબી आयुः-આયુને અને कृणुते-પ્રાપ્ત કરે છે. (૫૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્ય પ્રથમ આયુમાં દીર્ઘ ધર્મયુક્ત બ્રહ્મચર્યપૂર્વક પૂર્ણ વિદ્યા ભણે છે, તેની કોઈ ચોર ચોરી કરી શકતો નથી, કોઈ ભાઈ ભાગ માંગી શકતો નથી અને તેને વિદ્યાનો કોઈ ભાર લાગતો નથી, જે વિદ્વાનો એ રીતે ધર્મયુક્ત વ્યવહાર કરે છે, તે વિદ્વાનો અને મનુષ્યોમાં દીર્ઘાયુને પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર આનંદમાં રહે છે તથા અન્યોને આનંદિત કરે છે. (૫૧)

यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्यमानाः।
तन्म आ बध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम्॥ ५२॥

પદાર્થ : જે दाक्षायणाः-ચતુરાઈ અને વિજ્ઞાનથી યુક્ત, सुमनस्यमानाः-સુંદર વિચાર કરનારા સજ્જનો - शतानीकाय-સેંકડો સેનાઓવાળા, मे-મારા માટે यत्-જે हिरण्यम्-સત્ય - અસત્યનો પ્રકાશ કરનાર વિજ્ઞાનને आ, अबध्नन्-બાંધે છે, तत्-તે વિજ્ઞાનને હું शतशारदाय-સો વર્ષ જીવવા માટે आ + बध्नामि-બાંધું છું.

હે વિદ્વાનો ! यथा-જેમ હું युष्मान्-તમને પ્રાપ્ત કરીને जरदष्टिः-પૂર્ણ આયુને પ્રાપ્ત કરનાર असम्-બનું; તેમ તમે લોકો મારા માટે ઉપદેશ કરો. (૫૨)

ભાવાર્થ : એક બાજુ સેંકડો સેનાઓ અને બીજી બાજુ માત્ર એકલી વિદ્યા [હોય તો પણ] વિજય પ્રાપ્ત કરાવનારી બને છે.

જે દીર્ઘકાલ સુધી બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્વાનોથી વિદ્યા અને સુશિક્ષા ગ્રહણ કરીને તે અનુસાર વ્યવહાર કરે છે, તેઓ અલ્પ આયુ કદીપણ બનતા નથી. (૫૨)

उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोत्वज एकपात्पृथिवी समुद्रः।
विश्वे देवा ऋतावृधो हुवानाः स्तुता मन्त्राः कविशस्ता अवन्तु॥ ५३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! बुध्न्यः-અન્તરિક્ષમાં રહેનાર अहिः-મેઘની સમાન पृथिवी-પૃથિવી તથા समुद्रः-અન્તરિક્ષની સમાન एकपात्-એક પ્રકારના પાદ = બોધ અર્થાત્ નિશ્ચલ અવ્યભિચારી બોધવાળા अजः-અજન્મા પરમેશ્વર नः- અમારા વચનોને शृणोतु-સાંભળે.

ऋतावृधः-સત્યની વૃદ્ધિ કરનારા, हुवानाः-સ્પર્ધા કરનારા, विश्वे-સર્વ देवाः-વિદ્વાનો उत-અને कविशस्ताः-બુદ્ધિમાનોથી પ્રશંસિત स्तुताः-સ્તુતિના પ્રકાશક मन्त्राः-વિચારના સાધક મંત્ર नः-અમારી अवन्तु-રક્ષા કરે. (૫૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ પૃથિવી આદિ પદાર્થો, મેઘ અને પરમેશ્વર સર્વની રક્ષા કરે છે, તેમ જ વિદ્યા અને વિદ્વાન સર્વનું પાલન કરે છે. (૫૩)

इमा गिर आदित्येभ्यो घृतस्नूः सनाद्राजभ्यो जुह्वा जुहोमि।
शृणोतु मित्रो अर्यमा भगो नस्तुविजातो वरुणो दक्षो अꣳशः॥ ५४॥

પદાર્થ : હું आदित्येभ्यः-તેજસ્વી राजन्यः-રાજાઓને માટે જે इमाः-એ સત્ય गिरः-વાણીઓને जुह्वा-ગ્રહણ કરવાનાં સાધનથી सनात्-નિત્ય जुहोमि-ગ્રહણ - સ્વીકાર કરું છું. તે घृतसूः-ઘૃત = જળની સમાન પ્રકાશિત વ્યવહારને શુદ્ધ કરનારી नः-અમારી गिरः-વાણીઓને मित्रः-મિત્ર अर्यमा-ન્યાયકારી, भगः-ઐશ્વર્યવાન, तुविजातः-અનેક જનોમાં પ્રસિદ્ધ, दक्षः-ચતુર अंशः-વિભાગ કરનાર અને वरुणः-શ્રેષ્ઠ પુરુષો श्रृणोतु-સાંભળે. (૫૪)

ભાવાર્થ : વિદ્યાર્થીઓ દ્વારા આચાર્યોથી જે સુશિક્ષિત વાણીઓ [વિદ્યાઓ] ગ્રહણ કરેલ છે, તેની અન્ય આપ્ત વિદ્વાન ઉત્તમ રીતે સાંભળીને, પરીક્ષા કરીને [તે વિષયમાં] શિક્ષા કરે-શીખવે. (૫૪)

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम्।

सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतो अस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ॥ ५५॥

પદાર્થ : જે सप्त-પાંચ જ્ઞાનેન્દ્રિયો, મન અને બુદ્ધિ એ સાત ऋषयः-વિષયને પ્રાપ્ત કરાવનારાઓ, शरीरे-શરીરમાં प्रतिहिताः-પ્રતીતિપૂર્વક રાખેલ છે; તે જ सप्त-સાત अप्रमादम्-પ્રમાદરહિત બનીને सदम्-રહેવાના આધાર શરીરની रक्षन्ति-રક્ષા કરે છે.

તેઓ स्वपतः-સૂતેલા મનુષ્યના आपः-શરીરમાં વ્યાપ્ત થનાર ઉક્ત सप्त-સાત लोकम्-જીવાત્માને ईयुः-પ્રાપ્ત કરે છે.

तत्र-તે લોક પ્રાપ્તિ સમયે = સ્વપ્નાવસ્થામાં अस्वप्नजौ-સ્વપ્નથી રહિત અને सत्रसदौ-જીવાત્માના રક્ષક શરીરમાં રહેનારા च-અને देवौ-દિવ્ય સ્વરૂપવાળા પ્રાણ અને અપાન जागृतः-જાગે છે. (૫૫)

ભાવાર્થ : આ શરીરમાં સ્થિર, વ્યાપક અને વિષયનો બોધ કરાવનારી અન્તઃકરણ સહિત જ્ઞાનેન્દ્રિયો જ નિરંતર શરીરની રક્ષા કરે છે.

જ્યારે જીવ સૂઈ જાય છે, ત્યારે તેનો આશ્રય કરીને તમોગુણના પ્રભાવથી તે જ્ઞાનેન્દ્રિયો અન્તર્મુખ રહે છે અર્થાત્ બાહ્ય વિષયનું જ્ઞાન કરાવતી નથી.

શયન અવસ્થા - સ્વપ્નાવસ્થામાં જીવાત્માની રક્ષામાં તત્પર અને તમોગુણથી અપ્રભાવિત રહેલા પ્રાણ અને અપાન જાગતા રહે છે. અન્યથા જો એ બન્નેનું પણ શયન થઈ જાય, ત્યારે તો મરણ જ સંભવ છે. (૫૫)

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे।

उप प्र यन्तु मरुतः सुदानवः इन्द्र प्राशूर्भवा सचा॥ ५६॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मणः-ધનના पते-રક્ષક કે પાલક इन्द्र-ઐશ્વર્યકારક વિદ્વાન ! देवयन्तः-દિવ્ય વિદ્વાનોની કામના કરનારા અમે त्वा-આપથી ईमहे-વિદ્યાની યાચના કરીએ છીએ; त्वा-આપને सुदानवः-ઉત્તમ દાન આપનારા मरुतः-મનુષ્ય उप + प्र + यन्तु-સમીપથી પ્રયત્નની સાથે પ્રાપ્ત થાય છે; તે આપ उत्, तिष्ठ-ઊઠો અને सचा-સત્યના સંબંધથી प्राशूः-ઉત્તમ પદાર્થોને ભોગનાર भव-બનો. (૫૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે વિદ્યાની કામના કરનારા આપની સમીપ આવે છે, તેને વિદ્યા પ્રદાન કરવા આપ ઊઠો, ઉદ્યત બનો. (૫૬)

प्र नूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थ्यम्।

यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा देवा ओकांसि चक्रिरे॥ ५७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यस्मिन्-જે પરમાત્મામાં इन्द्रः-વિદ્યુત્ વા સૂર્ય, वरुणः-જળ વા ચંદ્રમા, मित्रः-પ્રાણ તથા અન્ય અપાનાદિ વાયુ, अर्यमा-સૂત્રાત્મક વાયુ તથા देवाः-એ સર્વ દિવ્ય ગુણોએ ओकांसि-પોત-પોતાના નિવાસ = ઘર चक्रिरे-બનાવ્યા છે; તે ब्रह्मणः-વેદવિદ્યાના पतिः-રક્ષક જગદીશ્વર उक्थ्यम्-પ્રશંસનીય પદાર્થોમાં શ્રેષ્ઠ मन्त्रम्-મંત્રરૂપ વેદનો नूनम्-નિશ્ચિત રૂપથી प्र + वदति-ઉપદેશ કરે છે; એમ જાણો. (૫૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે પરમાત્મામાં સંસારના સમસ્ત કારણ [પ્રકૃતિ], કાર્યજગત અને જીવ નિવાસ કરે છે; અને જેણે સર્વ જીવોને હિતકારક વેદોનો ઉપદેશ કરેલ છે; તેનું તમે ભજન કરો; ઉપાસના કરો. (૫૭)

ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तनयं च जिन्व।

विश्वन्तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥

य इमा विश्वा । विश्वकर्म्मा । यो नः पिता ।

अन्नपतेऽन्नस्य नो देहि ॥ ५८॥

પદાર્થ : હે ब्रह्मणः-બ્રહ્માંડના पते-રક્ષક ઈશ્વર ! देवाः-વિદ્વાન લોકો विदथे-પ્રકટ કરવા યોગ્ય વિદ્યા અને સત્ય વ્યવહારમાં यत्-જેની अवन्ति-રક્ષા કરે છે, જેનો ઉપદેશ કરે છે; यत्-જેને सुवीराः-સુંદર-ઉત્તમ વીર પુરુષ અમે લોકો बृहत्-મહાન શ્રેષ્ઠ वदेम-ઉપદેશ કરીએ છીએ; તે अस्य-એ सूकतस्य-ઉપદેશ કરવા યોગ્ય વિદ્યા અને સત્ય વ્યવહારના त्वम्-આપ यन्ता-નિયંતા બનો, च-અને અમારા तनयम्-વિદ્વાનોને શુદ્ધ વિચાર કરનારા પુત્રવત્ પ્રિય પુરુષને અર્થાત્ વિદ્યા-પુત્રને बोधि-ઉક્ત વ્યવહારનો બોધ કરાવો; तत्-તે भद्रम्-કલ્યાણકારી વ્યવહારના પ્રતિ विश्वम्-સર્વને - જીવમાત્રને जिन्व-પ્રીતિયુક્ત કરો-તૃપ્ત કરો. (૫૮)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ અમારી વિદ્યા અને સત્ય વ્યવહારના નિયંતા બનો, અમારા સંતાનોને વિદ્યાવાન બનાવો, સર્વ જગતની યથાવત્ રક્ષા કરો, સર્વત્ર ન્યાય, ધર્મ, સુશિક્ષા અને પરસ્પર પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરો. (૫૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં મનનું લક્ષણ (૧-૬), શિક્ષણ (૮), વિદ્યાની ઈચ્છા (૯), વિદ્વાનોનો સંગ (૯), કન્યાઓને પ્રબોધ (૧૦), વિદ્વાનોનું લક્ષણ (૧૨), રક્ષાની પ્રાર્થના (૧૩), બળ અને ઐશ્વર્યની ઈચ્છા (૧૪), સોમ ઔષધિનું લક્ષણ (૨૨), શુભ કર્મની ઈચ્છા (૨૩), પરમેશ્વર

અને સૂર્યનું વર્ણન (૨૪-૨૭), પોતાની રક્ષા (૨૮), પ્રાતઃકાલ ઊઠવું (૩૪-૩૮), પુરુષાર્થથી રિદ્ધિ-સિદ્ધિની પ્રાપ્તિ (૩૯), ઈશ્વર દ્વારા જગતની રચના (૪૩), મહારાજાઓનું વર્ણન (૪૬), અશ્વિનોના ગુણોનું કથન (૪૭), આયુવૃદ્ધિ (૫૦), વિદ્વાન અને પ્રાણનું લક્ષણ (૫૫) અને ઈશ્વરનાં કાર્ય (૫૭) નો ઉપદેશ કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ पञ्चत्रिंशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

अपेतो यन्तु पणयोऽसुम्ना देवपीयवः। अस्य लोकः सुतावतः।

द्युभिरहोभिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्ववसानमस्मै॥ १॥

પદાર્થ : જે देवपीयवः-વિદ્વાનોના દ્વેષી, पणयः-વ્યવહારી લોકો असुम्ना-અન્યોને અસુખ = દુઃખ આપે છે, તેઓ इतः-અહીંથી अप, यन्तु-દૂર જાય.

लोकः-દર્શનને યોગ્ય यमः-સર્વના નિયંતા પરમાત્મા द्युभिः-પ્રકાશમાન अहोभिः-દિવસ અને अक्तुभिः-રાત્રિઓથી अस्य-એ सुतावतः-વેદ વા વિદ્વાનોથી પ્રેરિત પ્રશસ્ત કર્મોવાળા જનોના સંબંધી अस्मै-એ મનુષ્ય-જીવને માટે व्यक्तम्-પ્રસિદ્ધ अवसानम्-અવકાશને ददातु-પ્રદાન કરે છે. (૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો આપ્ત વિદ્વાનોનો દ્વેષ કરે છે, તેઓ શીઘ્ર દુઃખ પ્રાપ્ત કરે છે. જે જીવ શરીર છોડીને જાય છે, તેને યથાયોગ્ય અવકાશ આપીને પરમેશ્વર તેના કર્માનુસાર સુખ-દુઃખ પ્રદાન કરે છે. (૧)

सविता ते शरीरेभ्यः पृथिव्यां लोकमिच्छतु। तस्मै युज्यन्तामुस्रियाः॥ २॥

પદાર્થ : હે જીવ ! सविता-પરમાત્મા જે ते-તારા शरीरेभ्यः-શરીરોને માટે पृथिव्याम्-અન્તરિક્ષ વા ભૂમિ પર लोकम्-કર્માનુસાર સુખ-દુઃખના સાધન પ્રાપક લોકાન્તરની इच्छतु-ઈચ્છા કરે છે; तस्मै-તે તારા માટે उस्रियाः-પ્રકાશરૂપ કિરણો युज्यन्ताम्-યુક્ત હોય, ઉપયોગી હોય. (૨)

ભાવાર્થ : હે જીવો ! જે જગદીશ્વર તમારા માટે સુખ ઈચ્છે છે અને કિરણો દ્વારા લોક-લોકાન્તરમાં પહોંચાડે છે, તેને જ તમે ન્યાયકારી માનો. (૨)

वायुः पुनातु सविता पुनात्वग्नेर्भ्राजसा सूर्यस्य वर्चसा।

वि मुच्यन्तामुस्रियाः॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે वायुः-પવન अग्नेः-વિદ્યુત્‌ની भ्राजसा-દીપ્તિથી सूर्यस्य-સૂર્યનાં वर्चसा-તેજથી અમને पुनातु-પવિત્ર કરો; सविता-સૂર્ય पुनातु-પવિત્ર કરો; उस्रियाः-કિરણો वि, मुच्यन्ताम्-મુક્ત કરો - છોડો. (૩)

ભાવાર્થ : જ્યારે જીવ શરીરોને છોડીને વિદ્યુત, સૂર્યનો પ્રકાશ અને વાયુ આદિને પ્રાપ્ત કરીને વિચરણ કરે છે તથા ગર્ભમાં પ્રવિષ્ટ થાય છે, ત્યારે કિરણો તેનો ત્યાગ કરે છે - છોડી દે છે. (૩)

अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।

गो॒भाज॒ऽ इत्किला॑सथ॒ यत्स॒नव॑थ॒ पूरु॑षम्॥ ४॥

પદાર્થ : હે જીવો ! જે જગદીશ્વરે - अश्वत्थे-કાલ રહેશે અથવા નહીં એવા અનિત્ય સંસારમાં वः-તમારી निषदनम्-સ્થિતિની पर्णे-પાંદડા જેવા ચંચળ જીવનમાં वः-તમારો वसतिः-નિવાસ कृता-બનાવ્યો છે; यत्-જે पूरुषम्-સર્વત્ર પરિપૂર્ણ પરમાત્માની किल-નિશ્ચયથી सनवथ-સેવા કરો; ઉપાસના કરો. તેની સાથે गोभाजः-ગૌ = પૃથિવી, વાણી, ઇન્દ્રિયો અથવા કિરણોનું સેવન કરવાવાળા બનીને इत्-જ તમે પ્રયત્નપૂર્વક ધર્મમાં સ્થિર असथ-રહો. (૪)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ અનિત્ય સંસારમાં અનિત્ય શરીરો અને પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને, ક્ષણભંગુર જીવનમાં ધર્માચરણપૂર્વક નિત્ય પરમાત્માની ઉપાસના કરીને, આત્મા અને પરમાત્મા [ના સંયોગથી] ઉત્પન્ન નિત્ય સુખને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૪)

स॒वि॒ता ते॒ शरी॑राणि मा॒तुरु॒पस्थ॒आ व॑पतु। तस्मै॑ पृथिवि॒ शं भ॑व॥ ५॥

પદાર્થ : હે पृथिवी-ભૂમિ સમાન સહનશીલ કન્યા ! તું જે ते-તારા शरीराणि-આશ્રય-શરીરોને मातुः-માતાની સમાન માનનીય પૃથિવીની उपस्थे-સમીપમાં તે सविता-ઉત્પત્તિકર્તા પિતા - आ + वपतु-સ્થાપિત કરે છે; તે તું तस्मै-તે માતા-પિતાને માટે शम्-સુખકારિણી भव-બન. (૫)

ભાવાર્થ : હે કન્યાઓ ! તમે વિવાહ પછી પિતા અને માતાની સાથેની પ્રીતિ ન છોડો, કારણ કે તે બન્નેએ તમારા શરીરનું નિર્માણ અને પાલન કરેલ છે. (૫)

प्र॒जाप॑तौ त्वा दे॒वता॑या॒मुपो॑दके लो॒के नि द॑धाम्यसौ। अप॑ नः॒ शोशु॑चद॒घम्॥ ६॥

પદાર્થ : હે જીવ ! જે असौ-આ લોક [તે જગદીશ્વર]नः-અમારાં अघम्-પાપને अप + शोशुचत्-અત્યંત - શીઘ્ર શોષિત કરે છે; તે प्रजापतौ-પ્રજાના પાલક - રક્ષક देवतायाम्-પૂજનીય પરમેશ્વરમાં તથા उपोदके-જલના સમીપવર્તી लोके-દર્શનીય સ્થાનમાં त्वा-આપને नि + दधामि-નિરંતર ધારણ - સ્થાપિત કરું છું. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જગદીશ્વર ઉપાસના કરવાથી પાપાચરણથી પૃથક્ કરે છે; તેની જ ભક્તિ કરવા માટે હું તમને સ્થિર કરું છું, જેથી તમે સદા શ્રેષ્ઠ સુખોનું દર્શન કરી શકો. (૬)

परं॑ मृत्यो॒ ऽ अनु॒ परे॑हि॒ पन्थां॒ यस्ते॒ऽअ॒न्यऽइत॑रो दे॒व॒याना॑त्।
चक्षु॑ष्मते शृण्व॒ते ते॑ ब्रवीमि॒ मा नः॑ प्र॒जाꣳरी॑रिषो॒ मोत वी॒रान्॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! यः-જે ते-તારો देवयानात्-વિદ્વાનોના માર્ગથી इतरः-ભિન્ન, अन्यः-અન્ય માર્ગ છે; તે पन्थाम्-માર્ગને मृत्यो-મૃત્યુ परा, इहि-દૂર કરે, જેથી તું परम्-ઉત્તમ દેવમાર્ગને अनु-અનુકૂળતાથી પ્રાપ્ત કર.

તેથી चक्षुष्मते-પ્રશસ્ત નેત્રવાળા, श्रृण्वते-સાંભળવાવાળા ते-તારા માટે હું ब्रवीमि-ઉપદેશ કરું છું.

જેથી મૃત્યુ नः-અમારી प्रजाम्-પ્રજાને મારે નહિ उत-અને વીર પુરુષોને પણ મારે નહિ, તેમ તું

प्रजाम्-સંતાનાદિને मा रीरिषः-નાશ ન કર, હિંસા ન કરવા વિષય આદિથી નષ્ટ ન કર उत-અને वीरान्-વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરેલ શરીર બળથી યુક્ત વીર પુરુષોને પણ મારે નહિ. (૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ જ્યાં સુધી જીવન રહે, ત્યાં સુધી વિદ્વાનોના માર્ગ પર ચાલીને પરમ આયુને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. કદીપણ બ્રહ્મચર્ય વિના સ્વયંવર કરીને અલ્પ આયુના સંતાનો ઉત્પન્ન ન કરવા જોઈએ. તેમજ બ્રહ્મચર્યના અતિ પાલનથી પ્રજાઓનો ઉચ્છેદ પણ ન કરવો જોઈએ. અર્થાત્ એ પ્રજાનો બ્રહ્મચર્ય અનુષ્ઠાનથી વિયોગ ન કરવો જોઈએ. (૭)

शं वातः शꣳहि ते घृणि शं ते भवन्त्विष्टकाः।
शं ते भवन्त्वग्नयः पार्थिवासो मा त्वाभि शूशुचन्॥ ८॥

પદાર્થ : હે જીવ ते-તારા માટે वातः-વાયુ शम्-સુખકારી થાય, घृणिः-કિરણયુક્ત સૂર્ય शम्; हि-સુખકારી જ થાય; इष्टकाः-વેદીમાં ચયન કરેલી ઈંટો ते-તારા માટે शम्-સુખકારી भवन्तु-થાય; पार्थिवासः-પૃથિવીમાં પ્રસિદ્ધ अग्नयः-અગ્નિઓ તારા માટે शम्-સુખકારી भवन्तु-થાય; એ સર્વ त्वा-તને मा + अभि + शूशुचन्-સર્વત્રથી શીઘ્ર શોકયુક્ત કરે નહિ. (૮)

ભાવાર્થ : હે જીવો ! તેમજ તમે ધર્મયુક્ત વ્યવહારમાં રહો, જેમ જીવવા અને મરવા પછી પણ તમને સૃષ્ટિના વાયુ આદિ પદાર્થ સુખકારી બને. (૮)

कल्पन्तां ते दिशस्तुभ्यमापः शिवतमास्तुभ्यं भवन्तु सिन्धवः।
अन्तरिक्षꣳशिवं तुभ्यं कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः॥ ९॥

પદાર્થ : હે જીવ ! ते-તારા માટે दिशः-પૂર્વ આદિ દિશાઓ शिवतमा-અત્યંત સુખકારિણી થવામાં कल्पन्ताम्-સમર્થ બને; तुभ्यम्-તારા માટે आपः-પ્રાણ વા જલ અતિ સુખકારી બને; तुभ्यम्-તારા માટે सिन्धवः-નદીઓ વા સમુદ્ર शिवतमाः-અત્યંત સુખકર भवन्तु-બને; तुभ्यम्-તારા માટે अन्तरिक्षम्-આકાશ शिवम्-કલ્યાણકારી બને અને ते-તારા માટે सर्वाः-સર્વ दिशः-ઈશાન આદિ દિશાઓ અત્યંત સુખકારી થવામાં कल्पन्ताम्-સમર્થ બને. (૯)

ભાવાર્થ : જેઓ અધર્મનો ત્યાગ કરીને સર્વથા ધર્મનું આચરણ કરે છે, તેના માટે પૃથિવી આદિ સૃષ્ટિના સર્વ પદાર્થો મંગલકારી બને છે. (૯)

अश्मन्वती रीयते सꣳरभध्वमुत्तिष्ठत प्र तरता सखायः।
अत्रा जहीमोऽशिवा येऽअसञ्छिवान्वयमुत्तरेमाभि वाजान्॥ १०॥

પદાર્થ : હે सखायः-મિત્રો ! જે अश्मन्वती-બહુ જ મેઘો વા પથ્થરવાળી સૃષ્ટિ વા નદી પ્રવાહથી रीयते-ચાલે છે; તે સાથે જેમ वयम्-અમે ये-જે अत्र-આ જગતમાં વા સમયમાં अशिवाः-અકલ્યાણકારી असन्-છે; તેને जहीमः-છોડીએ છીએ.

शिवान्-સુખકારી वाजान्-અત્યુત્તમ અન્નાદિ ભોગોને अभि, उत्, तरेम-સર્વત્રથી પાર કરીએ છીએ, અર્થાત્ ભોગવી ચૂક્યા છીએ; તેમ તમે લોકો संरभध्वम्-સમ્યક્ આરંભ કરો, उत्तिष्ठत-ઉદ્યમ કરો અને प्रतरत-દુઃખોને પાર કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો મોટી નૌકાથી સમુદ્ર સમાન-અશુભ આચરણો અને દુષ્ટોને પાર કરીને, પ્રયત્નપૂર્વક પુરુષાર્થી બનીને મંગલ કાર્ય કરે છે, તેઓ દુઃખસાગરને સહજભાવથી પાર કરી શકે છે. (૧૦)

अपाघमप किल्विषमप कृत्यामपो रपः।
अपामार्ग त्वमस्मदप दुःष्वप्न्यं सुव॥ ११॥

પદાર્થ : હે अपामार्ग-રોગ નિવારક અપામાર્ગ નામક ઔષધિની સમાન પાપોને દૂર કરનાર વિદ્વાન્ ! त्वम्-આપ अस्मत्-અમારી નજીકથી अघम्-પાપને अप + सुव-દૂર કરો; किल्विषम्-આપ મનની મલિનતાને अप-દૂર કરો; कृत्याम्-દુષ્ટ ક્રિયાઓને अप-દૂર કરો; रपः-બાહ્ય ઈન્દ્રિયોની ચંચળતાથી ઉત્પન્ન અપરાધોને अप-દૂર કરો; दुःष्वप्न्यम्-દુષ્ટ નિદ્રામાં આવતા દુષ્ટ વિચારો = અપરાધને अप-દૂર કરો. (૧૧)

ભાવાર્થ : જેમ અપામાર્ગ આદિ ઔષધિઓ રોગોનું નિવારણ કરીને પ્રાણીઓને સુખી કરે છે, તેમ સ્વયં સર્વ દોષોથી પૃથક્ બનીને, અન્યોને અશુભ આચરણથી પૃથક્ કરીને, જે સ્વયં શુદ્ધ બનીને અન્યોને શુદ્ધ કરે છે; તેઓ જ મનુષ્ય આદિને પવિત્ર કરનારા છે. (૧૧)

सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै
सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે आपः-પ્રાણ વા જળ, ओषधयः-સોમ આદિ ઔષધિઓ नः-અમારે માટે सुमित्रियाः-શ્રેષ્ઠ મિત્રો સમાન હિતકારિણી सन्तु-બને; તે તમારે માટે પણ તેમ બને.

यः-જે अस्मान्-અમારો ધર્માત્માઓનો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે છે; च-અને यम्-જે દુષ્ટાચારીથી वयम्-અમે द्विष्मः-અપ્રીતિ કરીએ છીએ; तस्मै-તેને માટે તે પદાર્થ दुर्मित्रियाः-શત્રુઓની સમાન દુઃખદાયક सन्तु-બને. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે રાગ, દ્વેષ આદિ દોષોનો ત્યાગ કરીને સર્વમાં પોતાના આત્માની સમાન આચરણ કરે છે, તે ધર્માત્માઓને માટે જળ, ઔષધિ આદિ પદાર્થો સુખકર બને છે.

જે માત્ર પોતાના આત્માના પોષક = સ્વાર્થી, અન્યોથી દ્વેષ કરનારા અધર્માત્માઓને માટે ઉક્ત સર્વ પદાર્થો દુઃખદાયી બને છે.

મનુષ્યોએ ધર્માત્માઓની સાથે પ્રીતિ અને દુષ્ટ આત્માઓ સાથે સદા અપ્રીતિ કરવી જોઈએ, પરંતુ

તે દુષ્ટોનું મનથી સદા કલ્યાણ ઈચ્છવું જોઈએ. (૧૨)

अनड्वाहमन्वारभामहे सौरभेयꣳ स्वस्तये।
स नऽइन्द्रऽइव देवेभ्यो वह्निः सन्तरणो भव॥ १३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે वह्निः-શીઘ્ર પહોંચાડનાર અગ્નિ नः-અમે देवेभ्यः-વિદ્વાનો માટે सन्तरणः-સમ્યક્ માર્ગથી પાર કરનાર હોય છે; તે सौरभेयम्-સુરભી = ગાયના સંતાન अनड्वाहम्-ગાડી આદિને ખેંચનારા બળદની સમાન વર્તમાન અગ્નિને અમે स्वस्तये-સુખને માટે अन्वारभामहे-યાનોને બનાવીને તેમાં સ્થાપિત કરીએ છીએ; सः-તે આપને માટે इन्द्र इव-વિદ્યુત્‌ની સમાન भव-બને. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત્ આદિ અગ્નિવિદ્યાથી યાન આદિનું કાર્ય કરવું આરંભ કરે છે, તેઓ બળવાન બળદોથી ખેડૂતોની સમાન પોતાના કાર્યો સિદ્ધ કરી શકે છે અને વિદ્યુત્‌ની સમાન આવાગમન કરી શકે છે. (૧૩)

उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ १४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! वयम्-અમે જે तमसः-અંધકારથી परि-પૃથક્ स्वः-સ્વયંપ્રકાશરૂપ સૂર્યની સમાન વિદ્યમાન देवत्रा-વિદ્વાનો વા પ્રકાશમય સૂર્ય આદિ પદાર્થોમાં देवम्-વિજય આદિ લાભ પ્રદાન કરનારા, ज्योतिः-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ, उत्तमम्-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ, उत्तरम्-દુઃખોથી પાર કરવાવાળા सूर्यम्-અન્તર્યામીરૂપથી પોતાની વ્યાપ્તિથી ચરાચરના આત્મા = સ્વામી પરમાત્માને पश्यन्तः-જ્ઞાનદૃષ્ટિથી નિહાળતાં परि + उत् + अगन्म-સર્વત્રથી ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક જાણીએ; તેને તમે પણ સર્વત્રથી જાણો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સૂર્યને જોઈને દીર્ઘાયુ ધર્માત્માજનો સુખને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમજ ધાર્મિક યોગીજનો - મહાદેવ, સર્વના પ્રકાશક, જન્મ-મૃત્યુ આદિ ક્લેશથી પૃથક્ વર્તમાન, સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ પરમાત્માને સાક્ષાત્ જાણીને, મોક્ષને પ્રાપ્ત કરીને નિરંતર આનંદમાં રહે છે. (૧૪)

इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरोऽअर्थमेतम्।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन॥ १५॥

પદાર્થ : હું પરમેશ્વર - एषाम्-એ જીવોનાં एतम्-પરિશ્રમથી પ્રાપ્ત કરેલ अर्थम्-પદાર્થને अपरः-બીજા કોઈ मा + नु + गात्-જલદી પ્રાપ્ત કરે નહિ; એટલા માટે इमम्-એ जीवेभ्यः-જીવોને માટે અર્થાત્ પ્રાણીઓ અને સ્થાવર વૃક્ષાદિ શરીરોને માટે परिधिम्-મર્યાદાને दधामि-વ્યવસ્થિત કરું છું.

આ રીતે આચરણ કરતાં આપ = पुरूचीः-અનેક વર્ષોથી યુક્ત शतम्-સો शरदः-શરદ ઋતુ સુધી जीवन्तु-જીવો, पर्वतेन-જ્ઞાન વા બ્રહ્મચર્ય આદિથી मृत्युम्-મૃત્યુને अन्तः दधताम्-દૂર કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો પરમેશ્વર દ્વારા વ્યવસ્થાપિત - ધર્માચરણ કરે અને અધર્માચરણનો ત્યાગ કરે = તે મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરતા નથી, અન્યાયથી પારકા પદાર્થોને લેતા નથી, તેઓ નીરોગ રહીને સો વર્ષ સુધી જીવિત રહી શકે છે, ઈશ્વરની આજ્ઞાનો ભંગ કરનારાઓ નહિ.

જે પૂર્ણ બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યાઓને ભણીને ધર્મનું આચરણ કરે છે, તેને વચ્ચે મૃત્યુ પ્રાપ્ત થતું નથી. (૧૫)

अग्नऽआयूंᳬषि पवसऽआ सुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनाम्॥ १६॥

પદાર્થ : હે अग्ने-પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! આપ आयूंषि-અન્ન આદિ પદાર્થો વા જીવન-આયુને पवसे-પવિત્ર કરો છો; नः-અમારે માટે ऊर्जम्-બળ च-અને इषम्-વિજ્ઞાનને आ, सुव-સારી રીતે ઉત્પન્ન કરો. તથા दुच्छुनाम्-કૂતરાં સમાન દુષ્ટ હિંસક પ્રાણીઓને आरे-દૂરથી વા સમીપથી बाधस्व-બાધિત કરો, તાડના કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો દુષ્ટ આચરણ અને દુષ્ટોનો સંગ છોડીને પરમેશ્વર અને આપ્ત વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તેઓ ધન-ધાન્યથી યુક્ત બનીને દીર્ઘાયુ બને છે. (૧૬)

आयुष्मानग्ने हविषा वृधानो घृतप्रतीको घृतयोनिरेधि।

घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यं पितेव पुत्रमभि रक्षतादिमान्त्स्वाहा॥ १७॥

પદાર્થ : હે अग्ने-અગ્નિ સમાન વર્તમાન તેજસ્વી રાજન્ ! જેમ हविषा-ઘૃત આદિ હવિથી वृधानः-વૃદ્ધિ પામતાં, घृतप्रतीकः-જળને પ્રસિદ્ધ કરનાર घृतयोनिः-પ્રદીપ્ત તેજ જેનું કારણ વા ઘર છે; તે અગ્નિ વૃદ્ધિ પામે છે; તેમ आयुष्मान्-મોટી આયુવાળા આપ एधि-બનો. मधु-મધુર चारु-સુંદર गव्यम्-ગાયના घृतम्-ઘીનું पीत्वा-પાન કરીને पुत्रम्-પુત્રની पितेव-પિતાની સમાન स्वाहा-સત્યાચરણથી इमान्-એ પ્રજાજનોની अभि + रक्षतात्-સદા-પ્રત્યક્ષરૂપમાં રક્ષા કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જેમ સૂર્ય આદિ રૂપથી અગ્નિ બહાર અને અંદર રહીને સર્વની રક્ષા કરે છે, તેમ જ રાજા પિતાની સમાન આચરણ કરનાર બનીને પુત્રની સમાન એવી પ્રજાની સદા રક્ષા કરે. (૧૭)

परीमे गामनेषत पर्यग्निमहृषत।

देवेष्वक्रत श्रवः कऽइमाँ२ आ दधर्षति ॥ १८॥

પદાર્થ : હે રાજપુરુષો ! જે इमे-એ તમે गाम्-વાણી વા પૃથિવીનો परि + अनेषत-સ્વીકાર કરો; अग्निम्-અગ્નિને परि + अहृषत-સર્વત્રથી હરો અર્થાત્ કાર્યમાં લાવો; એ देवेषु-વિદ્વાનોમાં श्रवः-અન્નને अक्रत-ઉત્પન્ન કરો. આ રીતે આચરણ કરનારા इमान्-આપ લોકોને कः-કોણ आ + दधर्षति-દબાવી કે ધમકાવી શકે છે ?

ભાવાર્થ : જે રાજા-રાજપુરુષો પૃથિવીની સમાન ધીર, અગ્નિની સમાન તેજસ્વી , અન્નની સમાન

આયુની વૃદ્ધિ કરનાર બનીને ધર્મથી પ્રજાની રક્ષા કરે છે, તેઓ વિપુલ રાજલક્ષ્મીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૮)

क्रव्यादम॒ग्निं प्र हि॑णोमि दू॒रं य॑म॒राज्यं॑ गच्छतु रिप्रवा॒हः।
इ॒हैवायमित॑रो जा॒तवे॑दा दे॒वेभ्यो॑ ह॒व्यं व॑हतु प्रजा॒नन्॥ १९॥

પદાર્થ : प्रजानन्-ઉત્તમ જ્ઞાનવાન હું क्रव्यादम्-ક્રવ્ય =કાચું માંસ ખાનાર તથા अग्निम्-અગ્નિની સમાન બીજાને દુઃખથી તપાવનાર દુષ્ટ મનુષ્યને, दूरम्-દૂર प्र + हिणोमि-કાઢું છું; અને જે रिप्रवाहः-પાપને પ્રાપ્ત થયેલા દુષ્ટોને દૂર કાઢું છું; તે માંસ ખાનાર यमराज्यम्-યમ =ન્યાયાધીશ રાજાના ન્યાયાલયમાં गच्छतु-જાય, અને પાપી લોકો इह-આ સંસારમાં તથા इतरः-તેનાથી ભિન્ન अयम्-એ जातवेदाः-પ્રજ્ઞાનવાળા વિદ્વાન देवेभ्यः-ધાર્મિક વિદ્વાનોને માટે हव्यम्-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિજ્ઞાનને एव-જ वहतु-પ્રાપ્ત કરે. (૧૯)

ભાવાર્થ : હે ન્યાયાધીશ રાજપુરુષો ! તમે દુષ્ટાચારીઓને તાડન તથા પ્રાણોથી પણ છોડાવીને તેમજ શ્રેષ્ઠોનો સત્કાર કરીને આ સૃષ્ટિમાં સામ્રાજ્ય કરો. (૧૯)

वह॑ व॒पां जा॑तवेदः पि॒तृभ्यो॒ यत्रै॑ना॒न्वेत्थ॒ निहि॑तान् परा॒के।
मेद॑सः कु॒ल्याऽउ॒प तान्त्स्र॑वन्तु स॒त्याऽए॑षामा॒शिष॒: सं न॑मन्ता॒ᳬ स्वाहा॑॥ २०॥

પદાર્થ : હે जातवेदः-પ્રજ્ઞાનયુક્ત વિદ્વાન ! આપ यत्र-જ્યાં एतान्-એ पराके-દૂર निहितान्-સ્થિત પિતૃજનોને वेत्थ-જાણે છે; ત્યાં पितृभ्यः-જનક વા વિદ્યા; શિક્ષાદાતા જનોને માટે वपाम्-ભૂમિને वह-પ્રાપ્ત કરો.

જેમ मेदसः-સ્નિગ્ધ कुल्याः-જલપ્રવાહથી યુક્ત ધારાઓ =નદી વા નહેરો तान्-તે સજ્જનોને उप, स्रवन्तु-પ્રાપ્ત થાય; તેમ स्वाहा-સત્યાચરણથી एषाम्-એ લોકોની सत्याः-સાચી आशिषः-ઈચ્છાઓ सम् + नमन्ताम्-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થાય અર્થાત્ સારી રીતે ફળે. (૨૦)

ભાવાર્થ : જે દૂર સ્થાન - દેશમાં રહેનારા પિતર જનો તથા વિદ્વાનોને બોલાવીને તેઓનો સત્કાર કરે છે, જેમ બગીચાના વૃક્ષ આદિની જલ અને વાયુ વૃદ્ધિ કરે છે, તેમ તેઓની ઈચ્છાઓ સત્ય અને સર્વત્રથી વધે છે. (૨૦)

स्यो॒ना पृ॑थिवि नो भवानृक्ष॒रा नि॒वेश॑नी। यच्छा॑ न॒: शर्म॑ स॒प्रथा॑:।
अप॑ न॒: शोशु॑चद॒घम्॥ २१॥

પદાર્થ : હે पृथिवी-ભૂમિની સમાન વિદ્યમાન ક્ષમાશીલ સ્ત્રી ! તું જેમ अनृक्षरा-નિષ્કંટક निवेशनी-બેસવાનો આધાર ભૂમિ स्योना-સુખદાયક હોય છે; તેમ नः-અમારે માટે भव-થાવ, તું सप्रथाः-અત્યંત પ્રશંસા સાથે વિદ્યમાન नः-અમારા માટે शर्म-સુખને यच्छ-આપ.

જેમ ન્યાયાધીશ નઃ-અમારે માટે અઘમ્-પાપને અપ + શોશુચત્-શીઘ્ર દૂર કરે વા શુદ્ધ કરે, તેમ તું અપરાધને દૂર કર. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી ધરતીની સમાન ક્ષમાશીલ, ક્રૂરતા આદિ દોષોથી રહિત, અત્યંત પ્રશંસિત, અન્યોના દોષોનું નિવારણ કરનારી હોય છે, તે જ ઘરનાં કાર્યોમાં યોગ્ય હોય છે. (૨૧)

अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वदयं जायतां पुनः।
असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा॥ २२॥

પદાર્થ : વિદ્વાન્ પુરુષ ! त्वम्-આપ अस्मात्-આ લોકથી અર્થાત્ વર્તમાન મનુષ્યોથી अधि-સર્વોપરિ जातः-પ્રસિદ્ધ વિરાજમાન असि-છો; એથી अयम्-આ પુત્ર त्वत्-આપથી ઉત્પન્ન થયા पुनः-પછી असौ-વિશેષ નામવાળો બનીને स्वाहा-સત્ય - આચરણથી स्वर्गाय-વિશેષ સુખભોગવાળા लोकाय-નિહાળવા યોગ્ય લોકને માટે - जायताम्-ઉત્પન્ન કરે - સમર્થ બને. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે આ સંસારમાં મનુષ્યનું શરીર ધારણ કરીને, વિદ્યા, સુશિક્ષા, સુશીલતા, ધર્મ, યોગ અને વિજ્ઞાનને ગ્રહણ કરીને મુક્તિસુખને માટે પ્રયત્ન કરો. તેને જ મનુષ્ય જન્મની સફળતા સમજવી જોઈએ. (૨૨)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં વ્યવહાર (૧), જીવની ગતિ (૧), જન્મ-મૃત્યુ (૮), સત્ય (૧૬), ઈચ્છા (૧૭), અગ્નિ (૧૮-૧૯), સત્ય ઈચ્છા (૨૦) આદિનું વ્યાખ્યાન હોવાથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ षट्त्रिंशाध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

ऋचं॑ वाचं॒ प्र प॑द्ये मनो॒ यजुः॒ प्र प॑द्ये साम॑ प्रा॒णं प्र प॑द्ये चक्षुः॒ श्रोत्रं॒ प्र प॑द्ये। वागोजः॑ स॒हौजो॒ मयि॑ प्राणापा॒नौ॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ मयि-મારા આત્મામાં प्राणापानौ-પ્રાણ = ઉચ્છ્વાસ અપાન = નિઃશ્વાસ દૃઢ છે; મારી वाक्-વાણી ओजः-માનસિક બળને પ્રાપ્ત કરે છે; તે વાણી અને તે શ્વાસોથી હું ओजः-શરીર બળને પ્રાપ્ત કરું છું; ऋचम्-પ્રશંસનીય ઋગ્વેદ રૂપ वाचम्-વાણીને प्रपद्ये-પ્રાપ્ત કરું છું; मनः-મનન આત્મક ચિત્તરૂપ यजुः-યજુર્વેદને प्रपद्ये-પ્રાપ્ત કરું છું; प्राणम्- પ્રાણની ક્રિયા અર્થાત્ યોગાભ્યાસાદિક ઉપાસનાના સાધક साम-સામવેદને प्रपद्ये-પ્રાપ્ત કરું છું; चक्षुः-આંખ તથા श्रोत्रम्-કાનને प्रपद्ये-પ્રાપ્ત કરું છું;-તેમ તમે પણ એને પ્રાપ્ત કરો. (૧)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમારા સંગથી મારી વાણી ઋગ્વેદની સમાન પ્રશંસનીય, મન યજુર્વેદની સમાન, પ્રાણ સામવેદની સમાન અને સત્તર તત્ત્વોથી યુક્ત લિંગ શરીર =સૂક્ષ્મ શરીર સ્વસ્થ, ઉપદ્રવ રહિત અને સમર્થ બને. (૧)

यन्मे॑ छि॒द्रं चक्षु॑षो॒ हृद॑यस्य॒ मन॑सो॒ वाति॑तृण्णं॒ बृह॒स्पति॑र्मे॒ तद्द॑धातु। शं नो॑ भवतु॒ भुव॑नस्य॒ यस्पतिः॑॥ २॥

પદાર્થ : यत्-જે मे-મારી चक्षुषः-નેત્રની વા हृदयस्य-અન્તઃકરણની छिद्रम्-ન્યૂનતા वा-અથવા मनसः-મનની अतितृण्णम्-અત્યંત વ્યાકુળતા છે; तत्-તેને बृहस्पतिः-મહાન આકાશ આદિના પાલક ઈશ્વર मे-મારા માટે दधातु-પુષ્ટ કરે - પૂર્ણ કરે; यः-જે भुवनस्य-સર્વ સંસારના पतिः-પાલક, સ્વામી ઈશ્વર છે; તે नः-અમારે માટે शम्-કલ્યાણકરી भवतु-થાય. (૨)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોએ પરમેશ્વરની ઉપાસના અને આજ્ઞાપાલનથી અહિંસા ધર્મનો સ્વીકાર કરીને જિતેન્દ્રિયતાને પ્રાપ્ત કરવી જોઈએ. (૨)

भूर्भुवः॒ स्वः॒। तत्स॑वि॒तुर्वरे॑ण्यं॒ भर्गो॑ दे॒वस्य॑ धीमहि। धियो॒ यो नः॑ प्रचो॒दया॑त्॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે भूः-કર્મકાંડની વિદ્યા भुवः-ઉપાસના કાંડની વિદ્યા અને स्वः-જ્ઞાનકાંડની વિદ્યાને સંગ્રહપૂર્વક ભણીને; यः-જે नः-અમારી धियः-ધારણાવતી બુદ્ધિઓને प्रचोदयात्-પ્રેરિત કરે છે; તે देवस्य-કામના કરવા યોગ્ય सवितुः-સમસ્ત ઐશ્વર્યના દાતા ઈશ્વરના तत्-તે ઇન્દ્રિયોથી ગ્રહણ ન કરવા યોગ્ય = પરોક્ષ वरेण्यम्-સ્વીકાર કરવા યોગ્ય भर्गः-સર્વ દુઃખોના નાશક, તેજસ્વરૂપનું

धीमहि-ધ્યાન કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ તેનું ધ્યાન કરો. (૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનની વિદ્યાઓને સારી રીતે ગ્રહણ કરીને, સમસ્ત ઐશ્વર્યોથી યુક્ત પરમેશ્વરની સાથે પોતાના આત્માઓને યુક્ત કરે છે અને અધર્મ, દરિદ્રતા તથા દુઃખોને દૂર કરીને ધર્મ, ઐશ્વર્ય અને સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેને અન્તર્યામી જગદીશ્વર સ્વયમેવ ધર્મનું અનુષ્ઠાન અને અધર્મનો ત્યાગ સદા કરાવવા ઈચ્છે છે. (૩)

कया॑ नश्चि॒त्रऽआ भु॑वदू॒ती स॒दावृ॑धः॒ सखा॑। कया॒ शचि॑ष्ठया वृ॒ता॥ ४॥

પદાર્થ : તે सदावृधः-સદા વૃદ્ધિ પામનાર અર્થાત્ કદી ન્યૂનતા પ્રાપ્ત નહીં, चित्रः-અદ્ભુત ગુણ-કર્મ-સ્વભાવયુક્ત પરમેશ્વર नः-અમારી कया-કઈ ऊती-રક્ષા આદિ ક્રિયાથી सखा-મિત્ર आ + भुवत्-બને છે; તથા कया-કઈ वृता-વર્તમાન शचिष्ठया-અત્યંત પ્રજ્ઞા = શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિથી અમને શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવમાં પ્રેરિત કરે છે. (૪)

ભાવાર્થ : અમે એ યથાર્થ રૂપમાં નથી જાણતા કે તે ઈશ્વર કઈ યુક્તિથી અમને પ્રેરિત કરે છે, જેની સહાયતાથી જ અમે ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષને પ્રાપ્ત કરી શકીએ છીએ. (૪)

कस्त्वा॑ स॒त्यो मदा॑नां॒ मꣳहि॑ष्ठो मत्स॒दन्ध॑सः। दृ॒ढा चि॑दा॒रुजे॒ वसु॑॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! मदानाम्-આનંદોની વચ્ચે मंहिष्ठः-અત્યંત વૃદ્ધિ પામેલાં, कः-સુખસ્વરૂપ, सत्यः-સર્વ પદાર્થોમાં શ્રેષ્ઠતમ ઈશ્વર અને પ્રજાપતિ - अन्धसः-અન્નાદિ પદાર્થોથી त्वाम्-તમને मत्सत्-આનંદિત કરે છે; અને आरुजे-દુઃખનાશક તારા માટે = જીવને માટે चित्-પણ दृढा-દૃઢ वसु-ધન પ્રદાન કરે છે. (૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે અન્ન આદિથી અને સત્યના ઉપદેશથી ધન પ્રદાન કરીને, સર્વને આનંદિત કરે છે, તે સુખસ્વરૂપ પરમાત્માની જ તમે નિત્ય ઉપાસના કરો. (૫)

अ॒भी षु णः॒ सखी॑नामवि॒ता ज॑रितॄ॒णाम्। श॒तं भ॑वास्यू॒तिभिः॑॥ ६॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! आप, शतम्-અસંખ્ય ઐશ્વર્ય આપતાં, अभि, ऊतिभिः-સર્વત્રથી રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી नः-અમારા सखीनाम्-મિત્રો અને जरितॄणाम्-સત્યની સ્તુતિ કરનારા જનોના अविता-રક્ષક सु + भवासि-ઉત્તમ રીતિથી બને છે; એથી આપ અમારે માટે अभि-સર્વત્રથી સત્કારને યોગ્ય છો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો જે રાગ-દ્વેષથી રહિત, અજાતશત્રુ =વેરભાવ રહિત, સર્વના મિત્ર જનોને અસંખ્ય ઐશ્વર્ય અને વિપુલ વિજ્ઞાન પ્રદાન કરીને સર્વત્રથી રક્ષા કરે છે, તે પરમેશ્વરની નિત્ય સેવા = ઉપાસના કરો. (૬)

कया॒ त्वं न॑ ऊ॒त्याभि प्र म॑न्दसे वृषन्। कया॑ स्तो॒तृभ्य॒ऽआ भ॑र॥ ७॥

પદાર્થ : હે वृषन्-સર્વત્રથી સુખની વર્ષા કરનારા ઈશ્વર ! त्वम्-આપ कया-કઈ ऊत्या-રક્ષા આદિ

ક્રિયાથી नः-અમને अभि + प्र + मन्दसे-સર્વત્રથી આનંદિત કરો છો ? कया-કઈ રીતે स्तोतृभ्यः-પ્રશંસક જનોને માટે સુખને आ, भर-સારી રીતે ધારણ-પાલન કરો છો ? (૭)

ભાવાર્થ : હે ભગવન્ પરમાત્મન્ ! જે યુક્તિથી આપ ધર્માત્માઓને આનંદિત કરો છો, તેનું સર્વત્રથી પાલન કરો છો, તે યુક્તિનો અમને બોધ કરાવો. (૭)

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥ ८॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે આપ इन्द्रः-વિદ્યુત્‌ની સમાન विश्वस्य-સંસારની મધ્યમાં राजति-પ્રકાશમાન છો; તે આપની કૃપાથી नः-અમારા द्विपदे-પુત્ર આદિને માટે शम्-સુખરૂપ अस्तु-બને; चतुष्पदे-ગાય આદિ પશુઓને માટે शम्-સુખરૂપ अस्तु-બને. (૮)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ સર્વત્ર વ્યાપક, મનુષ્ય અને પશુ આદિના સુખના ઈચ્છુક છો, તેથી સર્વના ઉપાસનીય છો. (૮)

शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्य्यमा।
शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! नः-અમારે માટે मित्रः-પ્રાણ સમાન પ્રિય મિત્ર शम्-સુખકારી भवतु-બને; वरुणः-જલની સમાન શાંતિદાતા વિદ્વાન્ शम्-સુખકારી બને; अर्यमा-પદાર્થોના સ્વામી વા વૈશ્યોને માનનારા ન્યાયાધીશ नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી भवतु-બને; इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્યવાન, बृहस्पतिः-વેદરૂપ વાણીના રક્ષક વિદ્વાન્ - नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી બને; उरुक्रमः-સંસારની રચનામાં બહુ શીઘ્રતા કરનારા विष्णुः-વ્યાપક ઈશ્વર नः-અમારે માટે शम्-કલ્યાણકરી - સુખકારી બને; તેમ તમારે માટે પણ બને. (૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો જેમ પોતાના માટે સુખની ઈચ્છા કરે, તેમ અન્યોને માટે પણ કરે; જેમ તેઓ સ્વયં સત્સંગની ઈચ્છા કરે, તેમ તેમાં અન્યોને પણ પ્રેરિત કરે. (૯)

शन्नो वातः पवताᳬ शन्नस्तपतु सूर्यः।
शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभि वर्षतु॥ १०॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ પુરુષ ! જેમ वातः-વાયુ नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી पवताम्-ચાલે; सूर्यः-સૂર્ય नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી तपतु-તપે; कनिक्रदत्-અત્યંત શબ્દ કરનાર, देवः-ઉત્તમ ગુણયુક્ત વિદ્યુત્‌રૂપ અગ્નિ नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી બને; पर्जन्यः-મેઘ = વાદળાં नः-અમારે માટે अभि + वर्षतु-સર્વત્ર વર્ષા કરે; તેવું અમને શિક્ષણ આપો. (૧૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વાયુ, સૂર્ય, વિદ્યુત્ અને મેઘ સર્વને માટે સુખકારી બને, તેમ તેવું અનુષ્ઠાન = આચરણ કરો. (૧૦)

अहानि शं भवन्तु नः शᳬरात्रीः प्रति धीयताम्। शन्नऽइन्द्राग्नी भवतामवोभिः

शन्नऽइन्द्रावरुणा रातहव्या। शन्नऽइन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः॥ ११॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જેમ अवोभिः-રક્ષા આદિથી शंयोः-સુખની सुविताय-પ્રેરણા માટે नः-અમારે માટે अहानि-દિવસ शम्-સુખકારી भवन्तु-બને; रात्रीः-રાત્રિઓ शम्-સુખને प्रतिधीयताम्-ધારણ કરે; इन्द्राग्नी-વિદ્યુત્ અને અગ્નિ नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી भवताम्-બને; रातहव्या-આપવા યોગ્ય સુખને માટે इन्द्रावरुणा-વિદ્યુત્ અને જળ नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી બને; वाजसातौ-અન્નોના સેવન માટે સંગ્રામમાં इन्द्रापूषणा-વિદ્યુત્ અને પૃથિવી नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી બને તથા इन्द्रासोमा-વિદ્યુત્ અને ઔષધિઓ અમારે માટે शम्-સુખકારી બને. તેવું અમને અનુકૂળ શિક્ષણ આપો. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો આપ લોકો ઈશ્વર અને આપ્ત વિદ્વાનોની શિક્ષામાં પ્રવૃત્ત રહો, તો દિવસ અને રાત તથા ભૂમિ આદિ સર્વ પદાર્થો તમારે માટે સુખકારી બને. (૧૧)

शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः॥ १२॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જેમ अभिष्टये-ઈષ્ટ સુખની સિદ્ધિને માટે તથા पीतये-પીવાને માટે देवीः-દિવ્ય - ઉત્તમ आपः-જળ नः-અમારે માટે शम्-સુખકારી भवन्तु-બને; नः-અમારે માટે शंयोः-સુખની વર્ષા अभि + स्रवन्तु-સર્વત્રથી કરો; તેમ ઉપદેશ આપો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો યજ્ઞ આદિથી શુદ્ધ જળ આદિ પદાર્થોનું સેવન કરે છે, તેઓના ઉપર નિરંતર સુખરૂપ અમૃતની વર્ષા થાય છે.

स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः॥ १३॥

પદાર્થ : હે ધરતીની સમાન વિદ્યમાન ક્ષમાશીલ સ્ત્રી ! જેમ अनृक्षरा-કાંટા, ખાડા આદિથી રહિત, निवेशनी-નિત્ય સ્થિર પદાર્થોનું સ્થાપન કરનારી पृथिवी-ભૂમિ नः-અમારે માટે સુખદાયક છે; તેમ તું પણ भव-બન.

તે सप्रथाः-વિસ્તૃત ભૂમિ नः-અમારે માટે शर्म-ઘર - સ્થાન આપે, તેમ स्योना-સુખકારક તું नः-અમારે માટે ઘરનું સુખ यच्छ-આપ. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ સર્વ પ્રાણીઓને સુખ અને ઐશ્વર્ય આપનારી પૃથિવી છે, તેમ જ વિદુષી પતિવ્રતા સ્ત્રી પતિ આદિને આનંદ આપનારી હોય છે. (૧૩)

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नऽऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥ १४॥

પદાર્થ : હે आपः-જળની સમાન શાંતિશીલ વિદુષી શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ ! જેમ मयोभुवः-સુખને ઉત્પન્ન કરનાર જળ हि-જે કારણે नः-અમને महे-મહાન रणाय-સંગ્રામ તથા चक्षसे-પ્રસિદ્ધ ऊर्जे-બળ વા પરાક્રમને માટે ધારણ વા પોષણ કરે છે; તેમ ताः-તમે એને दधातन-ધારણ કરો; તથા પ્યારી स्थ-બનો. (૧૪)

ભાવાર્થ : જેમ શ્રેષ્ઠ, સતી, પવિવ્રતા સ્ત્રીઓ સર્વને સુખ આપે છે, તેમ જ જળ આદિ પદાર્થો સુખકારક છે. તેમ જાણો. (૧૪)

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः॥ १५॥

પદાર્થ : હે શ્રેષ્ઠ સ્ત્રીઓ ! यः-જે वः-તમારા शिवतमः-અત્યંત કલ્યાણકારી रसः-આનંદવર્ધક સ્નેહ રૂપ રસ છે, तस्य-તેનું इह-આ જગતમાં नः-અમને उशतीरिव-કામના કરનારી मातरः-માતાઓની સમાન भाजयत-સેવન કરાવો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જો હોમ આદિથી જળની શુદ્ધિ કરવામાં આવે, તો તે જેમ માતા પોતાનાં સંતાનો અને પતિવ્રતા સ્ત્રીઓ પતિઓને સુખી કરે છે, તેમ સર્વ પ્રાણીઓને સુખી કરે છે. (૧૫)

तस्मा॒ऽअरं॑ गमाम वो॒ यस्य॒ क्षया॑य॒ जिन्व॑थ। आपो॑ ज॒नय॑था च नः॥ १६॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રીઓ ! જેમ તમે नः-અમને आपः-જળ સમાન શાંત जनयथ-કરો છો; તેમ वः-તમને અમે શાંત કરીએ છીએ; च-અને તમે यस्य-જે પતિના क्षयाय-નિવાસને માટે जिन्वथ-તેને તૃપ્ત કરો; तस्मै-તેને માટે અમે अरम्-પૂર્ણ સામર્થ્ય गमाम-પ્રાપ્ત કરીએ. (૧૬)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી-પુરુષ પરસ્પર આનંદને માટે જળની સમાન સરળતાથી વર્તે અને શુભ આચરણોથી પરસ્પર સુશોભિત રહે. (૧૬)

द्यौः शान्ति॑र॒न्तरि॑क्ष॒ꣳ शान्तिः॑ पृथिवी शान्ति॒राप॒ः शान्ति॒रोष॑धयः॒ शान्तिः॑। वनस्पत॑यः॒ शान्ति॒र्विश्वे॑ दे॒वाः शान्ति॒र्ब्रह्म॒ शान्तिः॒ सर्व॒ꣳ शान्तिः॒ शान्ति॑रे॒व शान्तिः॒ सा मा॒ शान्ति॑रेधि॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે द्यौः, शान्तिः-પ્રકાશયુક્ત પદાર્થ अन्तरिक्षम्-બન્ને લોક વચ્ચેનું આકાશ शान्तिः-શાન્તિકારી હોય, पृथिवी-ભૂમિ शान्तिः-સુખકારી નિરુપદ્રવ હોય, आपः-જળ વા પ્રાણ शान्ति-શાન્તિદાયક હોય, ओषधयः-સોમલતા આદિ ઔષધિઓ शान्तिः-સુખદાયી હોય, वनस्पतयः-વડ આદિ વનસ્પતિઓ शान्तिः-શાન્તિકારક હોય, विश्वे, देवाः-સર્વ વિદ્વાનો शान्ति-ઉપદ્રવ નિવારક હોય, ब्रह्म-પરમેશ્વર વા વેદ शान्तिः-સુખદાયી હોય, सर्वम्-સંપૂર્ણ વસ્તુઓ शान्तिः-શાન્તિકારક शान्तिरेव-શાન્તિ જ शान्तिः-શાન્તિ मा-મને एधि-પ્રાપ્ત થાય, सा-તે शान्तिः-શાન્તિ તમને પણ પ્રાપ્ત થાય. (૧૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ આકાશ આદિ પદાર્થો શાન્તિકારક બને, તેમ તમે પ્રયત્ન કરો. (૧૭)

दृते॒ दृꣳह॑ मा मि॒त्रस्य॑ मा॒ चक्षु॑षा॒ सर्वा॑णि भू॒तानि॒ समी॑क्षन्ताम्। मि॒त्रस्या॒ऽहं चक्षु॑षा॒ सर्वा॑णि भू॒तानि॒ समी॑क्षे। मि॒त्रस्य॒ चक्षु॑षा॒ समी॑क्षामहे॥ १८॥

પદાર્થ : હે दृते-અવિદ્યા અંધકારના નિવારક જગદીશ્વર વા વિદ્વાન્ ! જેથી सर्वाणि-સર્વ भूतानि-

પ્રાણીઓ मित्रस्य-મિત્રની चक्षुषा-દૃષ્ટિથી मा-મને सम् + ईक्षन्ताम्-સમ્યક્ જુએ; अहम्-હું मित्रस्य મિત્રની चक्षुषा-દૃષ્ટિથી सर्वाणि-સર્વ भूतानि-પ્રાણીઓને समीक्षे-સમ્યક્ દેખું - નિહાળું. આ રીતે અમે પરસ્પર मित्रस्य-મિત્રની चक्षुषा-દૃષ્ટિથી समीक्षामहे-નિહાળીએ. આ વિષયમાં અમને दृंह-દૃઢ કરો-સ્થિર કરો. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે પોતાના આત્માની સમાન સર્વ પ્રાણીઓને માને છે, કોઈથી પણ દ્વેષ કરતા નથી, મિત્ર સમાન સર્વનો સદા સત્કાર કરે છે, તે જ મનુષ્યો ધર્માત્મા છે. (૧૮)

दृते दृꣳह मा। ज्योक्ते संदृशि जीव्यासं ज्योक्ते संदृशि जीव्यासम्॥ १९॥

પદાર્થ : હે दृते-સમગ્ર મોહના આવરણનો નાશ કરનારા ઉપદેશક વિદ્વન્ વા પરમાત્મન્ ! જેથી અમે ते-આપના संदृशि-સમ્યક્ દર્શન વા જ્ઞાનમાં ज्योक्-નિરંતર जीव्यासम्-જીવીએ, ते-આપની संदृशि-સમાન દૃષ્ટિ વિષયમાં ज्योक्-નિરંતર जीव्यासम्-જીવન વ્યતીત કરીએ, તે જીવન વિષયમાં मा-મને दृंह-દૃઢ કરો. - સ્થિર કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : મનુષ્યે ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન અને યુક્ત આહાર-વિહાર દ્વારા સો વર્ષ સુધી જીવવું જોઈએ. (૧૯)

नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे।

अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवो भव॥ २०॥

પદાર્થ : હે ભગવન્ ઈશ્વર ! हरसे-પાપોનું હરણ કરવાવાળા, शोचिषे-પ્રકાશમાન ते-આપને માટે नमः-નમસ્કાર; તથા अर्चिषे-સ્તુતિને યોગ્ય ते-આપને માટે नमः-નમસ્કાર अस्तु-હો; हेतयः, ते-આપની વજ્રની સમાન વ્યવસ્થાઓ अस्मत्-અમારાથી अन्यान्-ભિન્ન, અન્યાયી શત્રુઓને तपन्तु-દુઃખ આપો; આપ अस्मभ्यम्-અમારે માટે पावकः-પવિત્ર કર્તા शिवः-કલ્યાણકારી भव-બનો. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! અમે આપના શુભ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ સમાન અમારા ગુણ-કર્મ-સ્વભાવ કરવા માટે આપને નમસ્કાર કરીએ છીએ. એ નિશ્ચિત રૂપમાં જાણીએ છીએ કે, આપનું શાસન=વ્યવસ્થા અધાર્મિકોને પીડિત કરે છે તથા ધાર્મિકોને આનંદિત કરે છે, તેથી અમે મંગલસ્વરૂપ આપની જ ઉપાસના કરીએ છીએ. (૨૦)

नमस्तेऽअस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे।

नमस्ते भगवन्नस्तु यतः स्वः समीहसे॥ २१॥

પદાર્થ : હે भगवन्-અત્યંત ઐશ્વર્યયુક્ત પરમેશ્વર ! यतः-જેથી આપ અમારે માટે स्वः-સુખ આપવા માટે सम् + ईहसे-સમ્યક્ ચેષ્ટા કરો છો; તેથી विद्युते-વિદ્યુત્‌ની સમાન વ્યાપક ते-આપ પરમેશ્વરને नमः-નમસ્કાર अस्तु-હો; स्तनयित्नवे-ભયંકર ગર્જના કરતી વિદ્યુત્‌ની સમાન દુષ્ટોને માટે ભયંકર ते-

આપને માટે नमः-નમસ્કાર अस्तु-હો; સર્વની સર્વ પ્રકારે રક્ષા કરનાર ते-આપને માટે नमः-નિરંતર નમસ્કાર કરીએ. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! ઈશ્વર અમને સદા આનંદને માટે સર્વ સાધનો - ઉપસાધનો આપે છે, તેથી અમારા સેવ્ય = ઉપાસ્ય છે. (૨૧)

यतोयतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु।

शं नः कुरु प्रऽजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः॥ २२॥

પદાર્થ : હે ભગવન્ ઈશ્વર ! આપ આપની કૃપા કટાક્ષથી यतो यतः-જે - જે સ્થાનથી समीहसे-સમ્યક્ ચેષ્ટા = પ્રયત્ન કરો છો; ततः-તે - તે સ્થાનથી नः-અમને अभयम्-ભયરહિત कुरु-કરો नः-અમારી प्रजाभ्यः-પ્રજા અને नः-અમારા पशुभ्यः-ગાય આદિ પશુઓ માટે शम्-સુખ અને अभयम्-નિર્ભયતા कुरु-ઉત્પન્ન કરો. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપ જે કારણે સર્વમાં વ્યાપક છો, તેથી અમને તથા અન્યોને પણ સર્વ કાલ અને સર્વ દેશોમાં સર્વ પ્રાણીઓથી નિર્ભય કરો. (૨૨)

सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જે એ आपः-પ્રાણ વા જળ તથા ओषधयः-જવ આદિ ઔષધિઓ नः-અમારે માટે सुमित्रियाः-શ્રેષ્ઠ મિત્ર સમાન હિતકારી सन्तु-બને; અને તે જ यः-જે અધર્મી अस्मान्-અમો ધર્માત્માઓનો द्वेष्टि-દ્વેષ કરે; च-અને यम्-જેથી वयम्-અમે द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ; तस्मै-તે અધાર્મિકને માટે दुर्मित्रियाः-શત્રુ સમાન વિરુદ્ધ सन्तु-બને. (૨૩)

ભાવાર્થ : જેમ અનુકૂળતાપૂર્વક જીતેલી ઈન્દ્રિય મિત્ર સમાન હિતકારી હોય છે, તેમ જળ આદિ પદાર્થ પણ દેશ–કાળ અનુસાર યોગ્ય રીતે સેવન કરવામાં આવે તો હિતકારી અને દેશ–કાળ વિરુદ્ધ લેવામાં આવે તો શત્રુ સમાન દુઃખદાયી નીવડે છે. (૨૩)

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ २४॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપ જે देवहितम्-વિદ્વાનોને માટે હિતકારી, शुक्रम्-શુદ્ધ, चक्षुः-નેત્રની સમાન સર્વના દૃષ્ટા બ્રહ્મ તથા पुरस्तात्-પૂર્વકાલ = અનાદિકાલથી उत्, चरत्-ઉત્કૃષ્ટતાથી સર્વના જ્ઞાતા

છો; तत्-તે ચેતન બ્રહ્મ આપને અમે शतम्, शरदः-સો વર્ષો સુધી पश्येम-નિહાળીએ; शतम्, शरदः-સો વર્ષો સુધી जीवेम-જીવીએ = પ્રાણોને ધારણ કરીએ; शतम्, शरदः-સો વર્ષો સુધી श्रृणुयाम-શાસ્ત્રો તથા મંગલ વચનોને સાંભળીએ; शतम्, शरदः-સો વર્ષો સુધી प्रब्रवाम-વેદાદિ ભણાવીએ વા સત્યનો ઉપદેશ કરીએ शतम्, शरदः-સો વર્ષો સુધી अदीनाः-દીનતારહિત स्याम-રહીએ; च-અને शतात्, शरदः-સો વર્ષોથી भूयः-અધિક પણ નિહાળીએ, જીવીએ, સાંભળીએ, ઉપદેશ કરીએ અને અદીન રહીએ. (૨૪)

ભાવાર્થ : હે પરમેશ્વર ! આપની કૃપાથી આપના [દ્વારા પ્રદત્ત]વિજ્ઞાનના દ્વારા આપની સૃષ્ટિને નિહાળતાં તથા તેનો ઉપયોગ કરતાં, નીરોગ અને એકાગ્ર બનીને, સમસ્ત ઈન્દ્રિયોથી યુક્ત રહીને, અમે સો વર્ષોથી પણ અધિક જીવીએ, સત્ય શાસ્ત્રો તથા આપના ગુણોને સાંભળીએ, વેદ આદિને ભણાવીએ તથા સત્યનો ઉપદેશ કરીએ, કદી પણ કોઈ પણ વસ્તુના અભાવના કારણે પરાધીન ન બનીએ તથા સદા આત્મવશ = સ્વતંત્ર કે આપના વશમાં રહીને નિરંતર આનંદિત રહીએ તથા અન્યોને પણ આનંદિત કરીએ. (૨૪)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં પરમેશ્વરની પ્રાર્થના (૩), સર્વના સુખનું ભાન (૮), પરસ્પર મિત્રતાની આવશ્યકતા (૯), દિનચર્યાની શુદ્ધિ (૧૧), ધર્મનું લક્ષણ (૧૮), આયુની વૃદ્ધિ અને પરમેશ્વરના વિજ્ઞાન (૨૪)નો ઉપદેશ કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થ સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथ सप्तत्रिंशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद् भ॒द्रं तन्न॒ आसु॑व॥

दे॒वस्य॑ त्वा सवि॒तुः प्र॑स॒वे॒ऽश्विनो॑र्बा॒हुभ्या॑ पू॒ष्णो हस्ता॑भ्याम्। आद॑दे॒ नारि॑रसि॥ १॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન ! જે કારણે આપ नारिः-નાયક असि-છો, તેથી सवितुः-જગતના ઉત્પાદક देवस्य-સમસ્ત સુખના દાતા ઈશ્વરના प्रसवे-ઉત્પન્ન કરેલા જગતમાં अश्विनोः-અધ્યાપક અને ઉપદેશકનાં बाहुभ्याम्-બળ અને પરાક્રમથી, पूष्णः-પોષક જનના हस्ताभ्याम्-હાથોથી त्वा-આપને आ + ददे-સર્વત્રથી સારી રીતે ગ્રહણ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરીને તથા તેઓની સેવા કરીને, વિદ્યા અને સુશિક્ષાને ગ્રહણ કરીને આ સૃષ્ટિમાં નાયક બનો. (૧)

यु॒ञ्जते॒ मन॑ऽउ॒त यु॑ञ्जते॒ धियो॒ विप्रा॒ विप्र॑स्य बृह॒तो वि॑प॒श्चितः॑।
वि होत्रा॑ दधे वयुना॒विदेक॒ऽ इन्म॒ही दे॒वस्य॑ सवि॒तुः परि॑ष्टुतिः॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वयुनावित्-ઉત્કૃષ્ટ જ્ઞાનોમાં પ્રવીણ एकः-અદ્વિતીય જગદીશ્વર સર્વને वि + दधे-વિશેષ રૂપથી ધારણ કરી રહેલ છે; જે सवितुः-સર્વાન્તર્યામી देवस्य-સમસ્ત જગતના પ્રકાશક ઈશ્વરની આ मही-મહાન = વિશાળ પૃથિવી परिष्टुतिः-સર્વત્રથી સ્તુતિ = પ્રશંસા છે.

होत्राः-શુભ ગુણ ગ્રહણ કરનાર विप्राः-વિવિધ પ્રકારની બુદ્ધિઓમાં વ્યાપ્ત મેધાવી યોગીજન જે बृहतः-સર્વથી મહાન विपश्चितः-અનંત વિદ્યાવાન विप्रस्य-વિશેષ રૂપથી સર્વત્ર વ્યાપક ઈશ્વરના મધ્યમાં मनः-સંકલ્પ - વિકલ્પરૂપ મનને युञ्जते-સમાહિત કરે છે; उत-અને धियः-બુદ્ધિ વા કર્મને युञ्जते-યુક્ત કરે છે; इत्-તેની જ તમે ઉપાસના કરો. (૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે યોગીજનો માટે ધ્યેય = ધ્યાન કરવા યોગ્ય છે, જેની પ્રશંસાને માટે સૂર્ય આદિ દૃષ્ટાન્ત રહેલાં છે, જે સર્વજ્ઞ, અસહાયી સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ છે, જેના માટે સર્વ ધન્યવાદ આપવા યોગ્ય છે, તેને જ તમે ઈષ્ટદેવ માનો. (૨)

देवी॑ द्यावापृथिवी म॒खस्य॑ वाम॒द्य शिरो॑ राध्यासं दे॒वयज॑ने पृथि॒व्याः।
म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे॥ ३॥

પદાર્થ : હે देवी-દિવ્ય - ઉત્તમ ગુણોથી સંપન્ન, द्यावापृथिवी-પ્રકાશ અને ભૂમિની સમાન અધ્યાપિકા અને ઉપદેશિકા સ્ત્રીઓ ! अद्य-આજે पृथिव्याः-ભૂમિની મધ્યમાં રહેલા देवयजने-વિદ્વાનોના યજ્ઞ મંદિરમાં वाम्-તમારા બન્નેના मखस्य-યજ્ઞના शिरः-ઉત્તમાંગને राध्यासम्-સિદ્ધ કરું છું.

मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-ઉત્તમાંગને માટે त्वा-તમને - અધ્યાપિકાને मखाय-યજ્ઞને માટે त्वा-તમને-ઉપદેશિકાને राध्यासम्-સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું. (૩)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ જગતમાં જેમ સૂર્ય અને ભૂમિ ઉત્તમાંગ = શિરની સમાન છે, તેમ જ આપ લોક સર્વોત્તમ બનો, જેથી સર્વની સંગતિનું અધિષ્ઠાન યજ્ઞ પૂર્ણ થાય. (૩)

देव्यो॑ वम्र्यो भू॒तस्य॑ प्रथम॒जा म॒खस्य॑ वो॒ऽद्य शिरो॑ राध्यासं देव॒यज॑ने पृथि॒व्याः। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे॥ ४॥

પદાર્થ : હે प्रथमजाः-પ્રથમથી જ ઉત્પન્ન वम्रयः-અલ્પ આયુવાળી देव्यः-વિદ્યાથી દેદીપ્યમાન વિદુષી સ્ત્રીઓ ! भूतस्य-ઉત્પન્ન થયેલ मखस्य-યજ્ઞની સંબંધિની पृथिव्याः-પૃથિવીની મધ્યમાં તથા देवयजने-વિદ્વાનોની સંગતિ કરવામાં अद्य-આજે वः-તમને शिरः-શિરની સમાન હું राध्यासम्-સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું.

मखस्य-યજ્ઞનું નિર્માણ કરનારી त्वा-તને - વિદુષીને, मखाय-યજ્ઞને માટે शीर्ष्णे-શિરની સમાન વર્તમાન યજ્ઞને માટે त्वा-તને હું राध्यासम्-સમ્યક્ ઉદ્યત વા સિદ્ધ કરું છું. (૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જ્યાં સુધી સ્ત્રીઓ વિદુષી બનતી નથી, ત્યાં સુધી ઉત્તમ શિક્ષાની પણ વૃદ્ધિ થતી નથી. (૪)

इ॒य॒त्यग्र॑ऽआसीन्म॒खस्य॑ ते॒ऽद्य शिरो॑ राध्यासं देव॒यज॑ने पृथि॒व्याः। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे॥ ५॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! હું अग्रे-પ્રથમ मखाय-સત્કાર નામક યજ્ઞને માટે त्वा-તને તથા मखस्य-સંગતિકરણની शीर्ष्णे-ઉત્તમતાને માટે त्वा-તને राध्यासम्-સિદ્ધ કરું છું.

જે ते-તારા मखस्य-યજ્ઞનો शिरः-ઉત્તમ ગુણ आसीत्-છે; તે त्वा-તને अद्य-આજે पृथिव्याः-પૃથિવીના इयति-આટલા देवयजने-વિદ્વાનોને પૂજવામાં સમ્યક્ સિદ્ધ કરું છું. (૫)

ભાવાર્થ : તે જ અધ્યાપકો શ્રેષ્ઠ છે, જેઓ પૃથિવીની મધ્યમાં સર્વને ઉત્તમ શિક્ષા અને વિદ્યાથી યુક્ત કરવામાં સમર્થ છે. (૫)

इन्द्र॒स्यौज॑ः स्थ म॒खस्य॑ वो॒ऽद्य शिरो॑ राध्यासं देव॒यज॑ने पृथि॒व्याः। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ હું इन्द्रस्य-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત ધાર્મિક પુરુષના ओजः-પરાક્રમને राध्यासम्-સિદ્ધ કરું છું; તેમ अद्य-આજે पृथिव्याः-ભૂમિના देवयजने-દેવ = વિદ્વાનોનાં પૂજનમાં शिरः-શિરની સમાન वः-તમને સિદ્ધ કરું; शीर्ष्णे-શિર સંબંધી मखाय-ધર્માત્માઓના સત્કારના વચનને માટે त्वा-

તને मखाय-પ્રિય આચરણરૂપ વ્યવહાર સંબંધી त्वा-તને સિદ્ધ કરું; शीर्ष्णे-ઉત્તમ ગુણોના પ્રચારક વચનને માટે તથા मखाय-શિલ્પ યજ્ઞના વિધાનને માટે त्वा-તને, તથા मखस्य-સત્ય આચરણ રૂપ વ્યવહાર સંબંધી त्वा-તને સિદ્ધ કરું; शीर्ष्णे-ઉત્તમ मखाय-વિજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરવા માટે त्वा-તને, मखस्य-વિદ્યા અને બુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરનાર વ્યવહારને માટે त्वा-તને સિદ્ધ કરું; તેમ તમે ઓજસ્વી = પરાક્રમી स्थ-બનો. (૬)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ધર્મયુક્ત કર્મ કરે છે, તેઓ સર્વના શિરોમણિ બને છે. (૬)

प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता। अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे॥ ७॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે वीरम्-સર્વ દુઃખોને દૂર કરનારા नर्य्यम्-મનુષ્યોમાં શ્રેષ્ઠ, पंक्तिराधसम्-પંક્તિ = સમુદાયને સિદ્ધ કરનારા, यज्ञम्-સુખ પ્રાપ્ત કરાવનાર યજ્ઞને देवाः-વિદ્વાન લોકો नः-અમને नयन्तु-પ્રાપ્ત કરાવે; ब्रह्मणः, पतिः-ધનના રક્ષક જન प्र,एतु-પ્રાપ્ત કરે; सूनृता-સત્ય ભાષણ આદિ સુશીલતાથી યુક્ત देवी-વિદુષી સ્ત્રી अच्छ + प्र + एतु-સારી રીતે તે યજ્ઞને પ્રાપ્ત કરે; તે त्वा-તને मखाय-વિદ્યા વૃદ્ધિને માટે मखस्य-સુખની રક્ષાના शीर्ष्णे-ઉત્તમ અવયવને માટે त्वा-તને, मखाय-ધર્મ રક્ષાને માટે त्वा-તને मखस्य-ધર્મ રક્ષાને માટે शीर्ष्णे-શિર સમાન હોવા માટે त्वा-તને, मखाय-સુખવર્ધક પુરુષને માટે त्वा-તને मखस्य-સુખવર્ધક પુરુષને शीर्ष्णे-ઉત્તમ સુખ પ્રદાન કરવા માટે त्वा-તને અમે આશ્રિત કરીએ છીએ; તારો આશ્રય કરીએ છીએ. (૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અને જે સ્ત્રીઓ સ્વયં વિદ્યા આદિ ગુણોને પ્રાપ્ત કરીને, અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવીને વિદ્યા, સુખ અને ધર્મની વૃદ્ધિ માટે અધિક જનોને સુશિક્ષિત વિદ્વાન બનાવે છે, તે પુરુષ અને સ્ત્રીઓ સદા આનંદિત રહે છે. (૭)

मखस्य शिरोऽसि मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखस्य शिरोऽसि मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखस्य शिरोऽसि मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे॥ ८॥

પદાર્થ : હે विद्वन्-વિદ્વાન્ ! જે કારણે આપ मखस्य-બ્રહ્મચર્ય નામક યજ્ઞના शिरः-શિરની સમાન असि-છો; તેથી मखाय-વિદ્યાગ્રહણરૂપ અનુષ્ઠાનને માટે त्वा-આપને; તથા मखस्य-જ્ઞાન સંબંધી शीर्ष्णे-ઉત્તમ વ્યવહારને માટે त्वा-આપનું સેવન કરીએ છીએ.

જે કારણે આપ मखस्य-વિચારરૂપ યજ્ઞના शिरः-ઉત્તમાંગ સમાન असि-છો; તેથી मखाय-ગૃહસ્થોના

વ્યવહારને માટે त्वा-આપને; मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-ઉત્તમાંગને માટે त्वा-આપનું સેવન કરીએ છીએ.

જે કારણે આપ मखस्य-ઘરના (= ગૃહાશ્રમના) शिरः-શિર સમાન असि-છો; તેથી मखाय-ગૃહસ્થના કાર્યોની સંગતિને માટે त्वा-આપને; मखस्य-યજ્ઞના અર્થાત્ જ્ઞાનના शीर्ष्णे-ઉત્તમ વ્યવહારને માટે त्वा-આપનું અમે સેવન કરીએ છીએ.

તેથી - मखाय-શ્રેષ્ઠ વ્યવહાર માટે त्वा-આપને, તથા मखस्य-શ્રેષ્ઠ — સદ્ વ્યવહારની સિદ્ધિ સંબંધી शीर्ष्णे-ઉત્તમાંગ સમાન થવા માટે त्वा-આપને; मखाय-યોગાભ્યાસને માટે त्वा-આપને; मखस्य-સાંગોપાંગ યોગના शीर्ष्णे-સર્વોપરિ વર્તમાન વિષયને માટે त्वा-આપને; मखाय-ઐશ્વર્ય પ્રદાતાને માટે त्वा-આપને; मखस्य-ઐશ્વર્ય પ્રદાતાના शीर्ष्णे-સર્વોત્તમ કાર્યને માટે त्वा-આપનું અમે સેવન કરીએ છીએ; આપની અમે સેવા કરીએ છીએ. (૮)

ભાવાર્થ : જે લોકો શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં ઉત્તમ છે, તેઓ અન્યોને પણ શ્રેષ્ઠ કર્મ કરનારા બનાવીને મસ્તક સમાન ઉત્તમ અંગોવાળા બને છે. (૮)

अश्व॑स्य त्वा॒ वृष्णः॑ श॒क्ना धू॑पयामि देव॒यज॑ने पृथि॒व्याः। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। अश्व॑स्य त्वा॒ वृष्णः॑ श॒क्ना धू॑पयामि देव॒यज॑ने पृथि॒व्याः। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। अश्व॑स्य त्वा॒ वृष्णः॑ श॒क्ना धू॑पयामि देव॒यज॑ने पृथि॒व्याः। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય ! જેમ હું पृथिव्या-અન્તરિક્ષ સંબંધી देवयजने-વિદ્વાનોનાં યજ્ઞ સ્થાનમાં वृष्णः-બલવાન अश्वस्य-અગ્નિ આદિના शक्ना-દુર્ગંધ આદિ નિવારણમાં સમર્થ ધૂમ આદિથી त्वा-તને; मखाय-વાયુની શુદ્ધિ કરવા માટે त्वा-તને; मखस्य-શોધક પુરુષના शीर्ष्णे-શિરના રોગની નિવૃત્તિ માટે त्वा-તને धूपयामि-ધૂપિત કરું છું, સમ્યક્ તપાવું છું.

पृथिव्याः-ભૂમિ સંબંધી देवयजने-વિદ્વાનોનાં યજ્ઞ સ્થાનમાં वृष्णः-બળવાન अश्वस्य-ઘોડાની शक्ना-શકૃત = લાદથી - મલથી त्वा-તને; मखाय-પૃથિવી આદિના વિજ્ઞાનને માટે त्वा-તને; मखस्य-તત્ત્વબોધના शीर्ष्णे-શિરની સમાન બનવા માટે त्वा-તને मखाय-યજ્ઞની સિદ્ધિને માટે त्वा-તને मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-ઉત્તમ અવયવની સિદ્ધિને માટે त्वा-તને धूपयामि-ધૂપિત કરું છું, - તપાવું છું.

पृथिव्याः-ભૂમિ સંબંધી देवयजने-વિદ્વાનોનાં પૂજન સ્થાનમાં वृष्णः-બળવાન अश्वस्य-શીઘ્રગામી અગ્નિનાં शक्ना-તેજ આદિથી त्वा-તને मखाय-ઉપયોગને માટે त्वा-તને; मखाय-ઉપયુક્ત કાર્યના शीर्ष्णे-શિર = ઉત્તમ અવયવ માટે त्वा-તને; मखाय-યશને માટે त्वा-તને; मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-ઉત્તમ અવયવને માટે त्वा-તને; मखाय-યજ્ઞને માટે त्वा-તને તથા मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-ઉત્તમ અવયવને માટે त्वा-તને धूपयामि-ધૂપિત કરું છું અર્થાત્ તપાવું છું; તેમ તું પણ ધૂપિત કર, તપાવ. (૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો રોગ આદિ ક્લેશોની નિવૃત્તિ માટે અગ્નિ આદિ પદાર્થોનો સારી રીતે પ્રયોગ કરે છે, તેઓ સુખી રહે છે. (૯)

ऋजवे॑ त्वा सा॒धवे॑ त्वा सुक्षि॒त्यै त्वा॑। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे। म॒खाय॑ त्वा म॒खस्य॑ त्वा शी॒र्ष्णे॥ १०॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! ऋजवे-સરળ સ્વભાવવાળા त्वा-આપને; मखाय-વિદ્વાનોના સત્કાર માટે त्वा-આપને; मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-ઉત્તમ અવયવ માટે त्वा-આપને; साधवे-પરોપકારના સાધક બનવા માટે त्वा-આપને; मखाय-યજ્ઞને માટે त्वा-આપને; मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-શિરને માટે त्वा-આપને; सुक्षित्यै-ઉત્તમ ભૂમિને માટે त्वा-આપને; मखाय-યજ્ઞને માટે त्वा-આપને; मखस्य-યજ્ઞના शीर्ष्णे-શિરને માટે त्वा-આપને અમે સ્થાપિત કરીએ છીએ. (૧૦)

ભાવાર્થ : જે લોકો વિનય અને સાધુતા - સરળતાથી યુક્ત રહીને સર્વોપકારક નામક યજ્ઞને સિદ્ધ કરે છે; તેઓ મહાન રાજ્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૦)

य॒माय॑ त्वा म॒खाय॑ त्वा॒ सूर्य॑स्य त्वा॒ तप॑से। दे॒वस्त्वा॑ सवि॒ता मध्वा॑नक्तु पृथि॒व्याः स॒ꣳ स्पृ॒शस्पा॑हि। अ॒र्चिर॑सि शो॒चिर॑सि तपो॑ऽसि॥ ११॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! सविता-ઐશ્વર્યનો ઉત્પાદક देवः-દાતા જન मखाय-ન્યાયાચરણને માટે यमाय-નિયમને માટે त्वा-આપને; તથા सूर्यस्य-પ્રેરક ઈશ્વરના तपसे-ધર્મના અનુષ્ઠાનને માટે त्वा-આપને ગ્રહણ કરીએ છીએ; पृथिव्याः-ભૂમિના त्वा-આપને मध्वा-મધુર ગુણથી अनक्तु -સંયુક્ત કરીએ છીએ; તે આપ संस्पृशः-દુઃખના સ્પર્શથી पाहि-રક્ષા કરો.

જે કારણે આપ अर्चिः-તેજસ્વી असि-છો; शोचिः-તેજ સમાન પવિત્ર असि-છો; तपः-ધર્મમાં શ્રમ કરનારા असि-છો; તેથી त्वा-આપનો અમે સત્કાર કરીએ છીએ. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે લોકો ન્યાયવ્યવહારથી પ્રકાશિત કીર્તિવાળા હોય છે, તેઓ દુઃખના સ્પર્શથી પૃથક્ રહીને તેજસ્વી બને છે અને દુષ્ટજનોને પરિતપ્ત કરીને શ્રેષ્ઠોને સુખી કરે છે. (૧૧)

अना॑धृष्टा पु॒रस्ता॑द॒ग्नेराधि॑पत्य॒ऽआयु॑र्मे दाः। पु॒त्रव॑ती दक्षिण॒तऽइन्द्र॒स्याधि॑पत्ये प्र॒जां मे॑ दाः। सु॒षदा॑ प॒श्चाद्दे॒वस्य॑ सवि॒तुराधि॑पत्ये॒ चक्षु॑र्मे दाः। आश्रु॑तिरु॒त्तर॒तो धा॒तुराधि॑पत्ये रा॒यस्पोषं॑ मे दाः। विधृ॑तिरु॒परि॑ष्टा॒द् बृह॒स्पते॒राधि॑पत्य॒ऽओजो॑ मे दाः विश्वा॑भ्यो मा ना॒ष्ट्राभ्य॑स्पाहि॒ मनो॒रश्वा॑सि॥ १२॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી ! તું अनाधृष्टा-અન્યોથી ન ધમકાવેલી पुरस्तात्-પૂર્વદેશથી अग्नेः-અગ્નિના आधिपत्ये-

સ્વામીત્વમાં मे-મારા માટે आयु:-જીવન પ્રદાન કરનાર અન્ન दा:-આપ.

पुत्रवती-પ્રશંસિત પુત્રોવાળી બનીને, दक्षिणतः-દક્ષિણ દેશથી इन्द्रस्य-વિદ્યુત્ વા સૂર્યના आधिपत्ये-સ્વામીત્વમાં मे-મારા માટે प्रजाम्-પ્રજા - સંતાન दा:-આપ.

सुषदा-ઉત્તમ સભાની સમાન બનીને पश्चात्-પશ્ચિમ દેશથી सवितु:-સૂર્યમંડળના देवस्य-પ્રકાશમાન आधिपत्ये-સ્વામીત્વમાં मे-મારા માટે चक्षु:-નેત્ર दा:-આપ.

आश्रुतिः-સર્વત્રથી શ્રવણ કરનારી બનીને उत्तरतः-ઉત્તર દેશથી धातु:-ધારણકર્તા વાયુના आधिपत्ये-સ્વામીત્વમાં मे-મારા માટે रायः-ધનની पोषम्-પુષ્ટિ दा:-કર.

विधृतिः-વિવિધ ધારણ શક્તિવાળી બનીને उपरिष्टात्-ઊર્ધ્વ દેશથી बृहस्पतेः-મોટા મોટા પદાર્થોના રક્ષક-પાલક સૂત્રાત્માના आधिपत्ये-સ્વામીત્વમાં मे-મારા માટે ओजः-બળ दा:-આપ.

કારણ કે તું मनो:-મનનશીલ અન્તઃકરણને अश्वा-વ્યાપ્ત કરનારી असि-છો; તેથી विश्वाभ्य:-સર્વ नाष्ट्राभ्यः-નષ્ટ-ભ્રષ્ટ સ્વભાવવાળી વ્યભિચારિણી સ્ત્રીઓથી मा-મારી पाहि-રક્ષા કર. (૧૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ જીવનને, જેમ વિદ્યુત પ્રજાને, જેમ સૂર્ય દર્શનને, ધાતા = ઈશ્વર [અથવા વાયુ] લક્ષ્મીને અને મહાશય = ઉદાર હૃદય મનુષ્ય બળ પ્રદાન કરે છે, તેમ જ ઉત્તમ લક્ષણોવાળી પત્ની સર્વ સુખોને પ્રદાન કરે છે, તેની તમે યથાવત્ રક્ષા કરો. (૧૨)

स्वाहा॑ म॒रुद्भिः॒ परि॑ श्रीयस्व दि॒वः स॒ꣳस्पृश॒स्पाहि। मधु॒ मधु॒ मधु॑॥ १३॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! આપ मरुद्भिः-મનુષ્યોની સાથે स्वाहा-સત્ય ક્રિયા, मधु-કર્મ, मधु-ઉપાસના અને मधु-વિજ્ઞાનનું श्रीयस्व-સેવન કરો.

संस्पृशः-સમ્યક્ સ્પર્શ કરનારી, दिवः-પ્રકાશરૂપ વિદ્યુત્થી અમારી परि + पाहि-સર્વત્રથી રક્ષા કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેઓ પૂર્ણ વિદ્વાનોની સાથે કર્મ, ઉપાસના અને જ્ઞાનની વિદ્યા તથા ઉત્તમ ક્રિયાને ગ્રહણ કરીને તેનું સેવન કરે છે, તેઓ સર્વત્રથી રક્ષિત બનીને મહાન ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૩)

गर्भो॑ दे॒वानां॑ पि॒ता म॑ती॒नां पतिः॑ प्र॒जाना॑म्।
सं दे॒वो दे॒वेन॑ सवि॒त्रा ग॑त॒ सꣳ सूर्ये॑ण रोचते॥ १४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે देवानाम्-વિદ્વાનો વા પૃથિવી આદિ તેત્રીસ દેવોની गर्भ:-ગર્ભની સમાન અંદર વ્યાપ્ત, मतीनाम्-મનનશીલ મેધાવી મનુષ્યોના पिता-પિતા સમાન, प्रजानाम्-ઉત્પન્ન પદાર્થોના पतिः-રક્ષક - સ્વામી देवः-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ પરમાત્મા છે; તે सवित्रा-ઉત્પત્તિને માટે देवेन-વિદ્વાન તથા सूर्येण-પ્રકાશક સૂર્યની સાથે सम् + रोचते-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે, તેને તમે सम् + गत-સમ્યક્ પ્રાપ્ત કરો. (૧૪)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે સર્વના ઉત્પાદક પિતા = પિતાની સમાન પાલનકર્તા, સૂર્ય આદિના પણ પ્રકાશક અને સર્વત્ર વ્યાપક જગદીશ્વર છે, તે પૂર્ણ પરમાત્માની આપ લોકો સદા ઉપાસના કરો. (૧૪)

समग्निरग्निना गत सं दैवेन सवित्रा सꣳसूर्येणारोचिष्ट।

स्वाहा समग्निस्तपसा गत सं दैव्येन सवित्रा सꣳसूर्येणारूरुचत॥ १५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે अग्निना-સ્વયં પ્રકાશમાન જગદીશ્વર દ્વારા अग्निः-પ્રકાશક અગ્નિ છે; दैवेन-ઈશ્વરે રચેલ सवित्रा-પ્રેરક सूर्येण-સૂર્યની સાથે सम् + अरोचिष्ट-સારી રીતે પ્રકાશિત થાય છે; તે પરમાત્માને તમે स्वाहा-સત્યાચરણથી सम् + गत-સમ્યક્ જાણો.

જે अग्निः-પ્રકાશક ઈશ્વર दैव्येन-પૃથિવી આદિ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન सवित्रा-ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારા सूर्येण-પ્રેરક સૂર્ય તથા तपसा-ધર્માનુષ્ઠાનથી सम् + अरूरुचत-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે; તેને તમે सम् + गत-સારી રીતે જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો અગ્નિના અગ્નિ, સવિતાના સવિતા = પ્રેરકના પ્રેરક, સૂર્યના સૂર્ય એવા પરમાત્માને જાણે છે, તેઓને અભ્યુદય = સંસાર સંબંધી સુખ અને નિઃશ્રેયસ્ = મોક્ષ સંબંધી સુખ સારી રીતે પ્રાપ્ત થાય છે. (૧૫)

धर्त्ता दिवो वि भाति तपसस्पृथिव्यां धर्त्ता देवा देवानाममर्त्यस्तपोजाः।

वाचमस्मे नि यच्छ देवायुवम्॥ १६॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ ! જે पृथिव्याम्-આકાશમાં तपसः-સર્વને તપાવનાર, दिवः-પ્રકાશમય સૂર્ય આદિને धर्त्ता-ધારણ કરનાર છે; જે तपोजाः-તપથી પ્રકટ થનાર, अमर्त्यः-મરણધર્મથી રહિત, देवः-પ્રકાશ સ્વરૂપ देवानाम्-પૃથિવી આદિ તેત્રીસ દેવોના ધર્ત્તા - ધારણકર્તા જગદીશ્વર वि + भाति-વિશેષ કરીને પ્રકાશિત થાય છે; તેના વિજ્ઞાનથી अस्मे-અમારે માટે देवायुवम्-દેવ અર્થાત્ પૃથિવી પદાર્થો, દિવ્યગુણ વા વિદ્વાનોને પ્રાપ્ત કરાવવાવાળી वाचम्-સુશિક્ષિત વાણીને नि + यच्छ-નિરંતર પ્રદાન કરો. (૧૬)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! જે પરમેશ્વર સર્વને ધારણ કરનાર, પ્રકાશક અને તપથી જાણવા યોગ્ય છે, તેની જ્ઞાપક = બતાવનારી વિદ્યા અમને પ્રદાન કરો. (૧૬)

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तम्।

स सध्रीचीः स विषूचीर्वसानऽआ वरीवर्त्ति भुवनेष्वन्तः॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! હું જે पथिभिः-શુદ્ધ જ્ઞાનના માર્ગોથી आ + चरन्तम्, परा + चरन्तम्-અહીં-

તહીં પ્રાપ્ત થનાર, अनिपद्यमानम्-અચલ, ગતિ રહિત, गोपाम्-રક્ષક, જગદીશ્વરને अपश्यम्-નિહાળું છું.

स, च-તે પણ सध्रीचीः-સાથે વર્તમાન દિશાઓને च-તથા सः-તે विषूचीः-વ્યાપ્ત ઉપદિશાઓને वसानः-આચ્છાદિત કરનાર બનીને भुवनेषु-લોક-લોકાન્તરની अन्तः-મધ્યમાં आ + वीरवर्त्ति-સર્વત્રથી સર્વને અત્યંત આચ્છાદિત કરી રહેલ છે; અથવા સર્વત્ર વિદ્યમાન છે; તેને તમે પણ જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સર્વ લોકોમાં વ્યાપક, અન્તર્યામી રૂપમાં પ્રાપ્ત, અધાર્મિક, અવિદ્વાન તથા અયોગી લોકોથી ન જાણવા યોગ્ય, પરમાત્માને જાણીને પોતાના આત્માની સાથે યુક્ત કરે છે, તેઓ સર્વ ધર્મયુક્ત માર્ગોને પ્રાપ્ત કરીને વિશુદ્ધ બને છે. (૧૭)

विश्वा॑सां भुवां पते विश्व॑स्य मनसस्पते। विश्व॑स्य वचसस्पते सर्व॑स्य वचसस्पते। देवश्रुत्त्वंदे॑व घर्म देवो देवान् पाह्यत्र प्रावी॒रनु॑ वां देववी॑तये। मधु माध्वी॑भ्यां मधु माधू॑चीभ्याम्॥ १८॥

પદાર્થ : હે विश्वासाम्-સર્વ भुवाम्-પૃથિવીઓના पते-સ્વામીન્ ! विश्वस्य-સર્વ मनसः-સંકલ્પ - વિકલ્પ આદિ વૃત્તિથી યુક્ત અન્તઃકરણના पते-રક્ષક ! विश्वस्य-સર્વ वचसः-વેદ વાણીના पते-પાલક ! सर्वस्य-સર્વ વચનોના पते-રક્ષક ! घर्म-પ્રકાશક ! देव-સર્વ સુખોના દાતા જગદીશ્વર ! देवश्रुत्-વિદ્વાનોની પ્રાર્થનાને સુનનારા તથા देवः-રક્ષક બનીને त्वम्-આપ अत्र-આ જગતમાં देवान्-ધાર્મિક વિદ્વાનોની पाहि-રક્ષા કરો.

આપ माध्वीभ्याम्-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત વિદ્યા અને સુશિક્ષાને मधु-મધુર વિજ્ઞાનને प्र, अवीः-પ્રકર્ષની સાથે પ્રદાન કરો.

આપ माधूचीभ्याम्-વિષનો નાશ કરનારી મધુ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરનારા અધ્યાપક અને ઉપદેશકોની સાથે मधु-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત ધર્મને તથા देववीतये-દિવ્ય ગુણોની પ્રાપ્તિને માટે વિદ્વાનોની अनु-અનુકૂળ રક્ષા કરો.

હે અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! वाम्-તમારે બન્નેને માટે હું ઉપદેશ કરું છું. (૧૮)

ભાવાર્થ : હે વિદ્વાનો ! તમે સંપૂર્ણ સંસારના, દેવોના આત્માઓના તથા મનોના સ્વામી [देवश्रुत =] સર્વનું સાંભળનાર અને સર્વની રક્ષા કરનાર પરમાત્માને જાણીને, તથા દિવ્ય સુખ પ્રાપ્ત કરીને અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૮)

हृदे त्वा मन॑से त्वा दिवे त्वा सूर्या॑य त्वा।
ऊर्ध्वोऽअ॑ध्वरं दिवि देवेषु धेहि॥ १९॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર ! જે हृदे-હૃદયમાં ચેતનાને માટે त्वा-આપનું, मनसे-વિજ્ઞાનવાન અન્તઃકરણને માટે त्वा-આપનું, दिवे-વિદ્યા પ્રકાશ વા વિદ્યુત્ વિદ્યાને માટે त्वा-આપનું, सूर्य्याय-સૂર્યાદિ લોકોના

વિજ્ઞાનને માટે त्वा-આપનું અમે ધ્યાન કરીએ છીએ; તે ऊर्ध्वः-સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ આપ दिवि-દિવ્ય - ઉત્તમ વ્યવહારમાં તથા देवेषु-વિદ્વાનોમાં अध्वरम्-અહિંસામય યજ્ઞનો धेहि-પ્રચાર કરો. (૧૯)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો સત્ય ભાવથી આત્મા અને અન્તઃકરણની શુદ્ધિ માટે તથા સૃષ્ટિવિદ્યાને માટે ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે, તેઓના તે કૃપાળુ ઈશ્વર વિદ્યા અને ધર્મના દાનથી સર્વ દુઃખોથી ઉદ્ધાર કરે છે. (૧૯)

पिता नोऽसि पिता नो बोधि नमस्तेऽअस्तु मा मा हिꣳसीः। त्वष्टृमन्तस्त्वा सपेम पुत्रान्पशून् मयि धेहि प्रजामस्मासु धेह्यरिष्टाहꣳसहपत्या भूयासम्॥ २०॥

પદાર્થ : હે જગદીશ્વર આપ नः-અમારા पिता-પિતાની સમાન असि-છો; આપ पिता-રાજાની સમાન રક્ષક બનીને नः-અમને बोधि-બોધ કરાવો.

ते-આપને માટે नमः-નમસ્કાર अस्तु-છે; આપ मा-મને मा, हिंसीः-હિંસાથી યુક્ત ન કરો.

त्वष्टृमन्तः-બહુ જ સ્વચ્છ પ્રકાશરૂપ પદાર્થોવાળા અમે त्वा-આપનાથી सपेम-સંબંધ સ્થાપિત કરીએ.

આપ पुत्रान्-પવિત્ર ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળા સંતાનોને તથા पशून्-ગાય પશુઓને मयि-મારામાં धेहि-સ્થાપિત - ધારણ કરો, अस्मासु-અમારામાં प्रजाम्-પ્રજાને धेहि-સ્થાપિત કરો, જેથી अहम्-હું अरिष्टा-અહિંસિત બનીને सहपत्या-પતિની સાથે भूयासम्-રહું. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે જગદીશ્વર ! આપ અમારા પિતા અર્થાત્ સ્વામી, બંધુ, મિત્ર અને રક્ષક છો, તેથી અમે આપની નિરંતર ઉપાસના કરીએ છીએ.

હે સ્ત્રીઓ ! તમે પરમાત્માની નિત્ય ઉપાસના કરો, જેથી સર્વ સુખોને પ્રાપ્ત કરો. (૨૦)

अहः केतुना जुषताꣳ सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा।
रात्रिः केतुना जुषताꣳ सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा॥ २१॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન્ વા વિદુષી સ્ત્રી ! આપ स्वाहा-સત્ય આચરણથી, केतुना-ઉત્કૃષ્ટ જ્ઞાન અને જાગૃત અવસ્થાથી, તથા ज्योतिषा-સૂર્ય આદિના વા તડકા આદિના પ્રકાશથી अहः-પ્રતિદિન सुज्योतिः-વિદ્યાનું जुषताम्-સેવન કરો.

स्वाहा-સત્ય વાણી, केतुना-પ્રજ્ઞા વા કર્મ તથા ज्योतिषा-પ્રકાશની સાથે सुज्योतिः-વિદ્યા પ્રકાશને रात्रिः-પ્રત્યેક રાત્રિ અમને जुषताम्-સેવન કરાવે; વિદ્યા પ્રકાશ પ્રદાન કરે. (૨૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષ દિવસે સૂવાનું અને રાત્રે અતિ જાગવું. આ બન્નેનો ત્યાગ કરીને, ઉચિત આહાર-વિહાર વાળા બનીને ઈશ્વરની ઉપાસનામાં તત્પર રહે, તો તેને દિવસ અને રાત સુખકારક વસ્તુ પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી જેમ પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિની વૃદ્ધિ થાય, તેમ સર્વ કાર્યો કરવા જોઈએ. (૨૧)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઈશ્વર (૧), યોગી (૨), સૂર્ય અને પૃથિવી (૩), યજ્ઞ (૬-૧૦), સન્માર્ગ (૧૭), સ્ત્રી અને પતિ તથા પિતા સમાન વર્તમાન (૨૦), પરમેશ્વર (૨૧) તથા

યુક્ત આહાર-વિહારનાં અનુષ્ઠાન (૨૧)નો ઉપદેશ છે, તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વના અધ્યાયની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथाष्टात्रिंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। आ ददेऽदित्यै रास्नाऽसि॥ १ ॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રી ! જે કારણે તું अदित्यै-નાશરહિત નીતિને માટે रास्ना-દાનશીલ અર્થાત્ સુખદાત્રી असि-છે; તેથી सवितुः-સમસ્ત જગતના ઉત્પાદક देवस्य-કામના કરવા યોગ્ય પરમેશ્વરના प्रसवे-ઉત્પન્ન થનાર જગતમાં अश्विनोः-સૂર્ય અને ચંદ્રમાના बाहुभ्याम्-બળ અને વીર્ય-પરાક્રમની સમાન ભુજાઓથી, पूष्णः-પોષક વાયુના हस्ताभ्याम्-ગતિ અને ધારણ શક્તિની સમાન હાથોથી त्वा-તને आ, ददे-ગ્રહણ કરું છું. (૧)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ સૂર્ય ભૂગોળોને, પ્રાણ શરીરને તથા અધ્યાપક અને ઉપદેશકો સત્યને ગ્રહણ કરે છે, તેમ જ હું તને ગ્રહણ કરું છું. તું નિરંતર અનુકૂળ અને સુખ આપનારી બન. (૧)

इडऽएह्यदितऽएहि सरस्वत्येहि। असावेह्यसावेह्यसावेहि॥ २ ॥

પદાર્થ : હે इडे-સુશુક્ષિત વાણીની સમાન સ્ત્રી ! તું મને एहि-પ્રાપ્ત થા; જે असौ-પુરુષ તને પ્રાપ્ત થાય, તેને તું एहि-પ્રાપ્ત થા.

હે अदिते-અખંડિત આનંદ આપનારી સ્ત્રી ! તું અખંડિત આનંદને एहि-પ્રાપ્ત કર. જે असौ-પુરુષ તને અખંડિત આનંદ આપે, તેને તું एहि-પ્રાપ્ત થા.

હે सरस्वति-પ્રશસ્ત વિજ્ઞાનયુક્ત સ્ત્રી ! તું વિદ્વાનને एहि-પ્રાપ્ત કર, જે असौ-એ પુરુષ ઉત્તમ શિક્ષક-સુશિક્ષિત હોય, તેને તું एहि-પ્રાપ્ત કર. (૨)

ભાવાર્થ : જ્યારે સ્ત્રી-પુરુષ વિવાહ કરવાની ઈચ્છા કરે, ત્યારે બ્રહ્મચર્યથી વિદ્યા દ્વારા સ્ત્રી-પુરુષ અને ધર્માચરણને જાણીને જ કરે. (૨)

अदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीषः। पूषासि घर्माय दीष्व॥ ३ ॥

પદાર્થ : હે કન્યા ! જે તું अदित्यै-નિત્ય વિજ્ઞાનને रास्ना-આપનારી असि-છે; उष्णीषः-શિરોવેષ્ટન = પાઘડી આદિની સમાન સુખદાયક છે; તથા इन्द्राण्यै-પરમ ઐશ્વર્યને ઉત્પન્ન કરનારી રાજનીતિને માટે पूषा-ભૂમિની સમાન પોષિકા असि-છે; તે તું घर्माय-પ્રસિદ્ધ-અપ્રસિદ્ધ સુખદાયક યજ્ઞને માટે दीष्व-દાન કર. (૩)

ભાવાર્થ : હે સ્ત્રી ! જેમ પાઘડી આદિ વસ્ત્ર સુખદાયક હોય છે, તેમ તું અપત્ય = સંતાનને સુખ પ્રદાન કર. (૩)

अ॒श्विभ्यां॑ पिन्वस्व॒ सर॑स्वत्यै पिन्व॒स्वेन्द्रा॑य पिन्वस्व।
स्वाहेन्द्र॑व॒त्स्वाहेन्द्र॑व॒त्स्वाहेन्द्र॑वत्॥ ४॥

પદાર્થ : હે વિદુષી સ્ત્રી ! તું इन्द्रवत्-પરમ ઐશ્વર્યયુક્ત વસ્તુને ગ્રહણ કરીને स्वाहा-સત્ય આચરણથી अश्विभ्याम्-સૂર્ય અને ચંદ્રમાને માટે पिन्वस्व-તૃપ્ત થા.

इन्द्रवत्-ચેતન આત્માના ગુણોથી યુક્ત શરીરને પ્રાપ્ત કરીને स्वाहा-સત્યવાણીથી सरस्वत्यै-સુશિક્ષિત વાણીને માટે पिन्वस्व-તૃપ્ત થા.

इन्द्रवत्-વિદ્યુત્ વિદ્યાને જાણીને स्वाहा-સત્ય ક્રિયાથી इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યને માટે पिन्वस्व-તૃપ્ત થા. (૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો વિદ્યુત્ આદિ વિદ્યા દ્વારા ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરે છે; તેઓ સુખને પણ પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

यस्ते॒ स्तन॑: शश॒यो यो म॑यो॒भूर्यो र॑त्न॒धा व॑सु॒विद्यः सु॒दत्र॑:। येन॒ विश्वा॒ पुष्य॑सि वार्या॑णि सर॑स्वति॒ तमि॒ह धात॑वेऽकः। उ॒र्व॒न्तरि॑क्ष॒मन्वे॑मि॥ ५॥

પદાર્થ : હે सरस्वति-બહુજ વિજ્ઞાનથી યુક્ત સ્ત્રી ! यः-જે ते-તારા शशयः-જેનો આશ્રય કરીને બાળક સૂવે છે; તે स्तनः-પયોધર =દૂધના આધાર સ્તન છે, તથા यः-જે मयोभूः-મય = સુખ ઉત્પન્ન કરનાર, यः-જે रत्नधाः-રત્નોને ધારણ કરનાર, वसुवित्-ધનને પ્રાપ્ત થનાર यः-જે सुदत्रः-ઉત્તમ દાનદાતા પતિ છે; येन-જેના આશ્રયથી विश्वा-સર્વ वार्याणि-વરણ-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય બાળકોને पुष्यसि-પુષ્ટ કરે છે; तम्-તે પતિને इह-આ સંસારમાં વા ઘરમાં धातवे-ધારણ કરવાને માટે વા દૂધ પીવડાવવાને નિયત अकः-કર. તેથી હું उरु-બહુ જ વિસ્તૃત अन्तरिक्षम्-આકાશનો अन्वेमि-અનુગામી બનું. (૫)

ભાવાર્થ : જો સ્ત્રી ન હોય તો બાળકોનું પાલન થઈ શકતું નથી. જે સ્ત્રીથી પુરુષ અધિક સુખ અને જે પુરુષથી સ્ત્રી અધિકતર સુખ પ્રાપ્ત કરી શકે, તે બન્ને પરસ્પર વિવાહ કરે. (૫)

गा॒य॒त्रं छन्दो॑ऽसि त्रैष्टु॑भं॒ छन्दो॑ऽसि द्यावा॑पृथिवीभ्या॑न्त्वा॒ परि॑
गृह्णाम्य॒न्त-रि॑क्षे॒णोप॑ यच्छामि। इन्द्रा॑श्विना॒ मधु॑नः सा॒र॒घस्य॑ घ॒र्मं पा॑त॒ वस॑वो॒
यज॑त॒ वाट्। स्वाहा॒ सूर्य॑स्य र॒श्मये॑ वृष्टि॒वन॑ये॥ ६॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-પરમ ઐશ્વર્ય યુક્ત પુરુષ ! જેમ આપ गायत्रम्-ગાયત્રી છંદથી પ્રકાશિત छन्दः-સ્વતંત્ર આનંદકારક અર્થની સમાન હૃદયને પ્રિય સ્ત્રીને પ્રાપ્ત કરી ચૂક્યા असि-છો; त्रैष्टुभम्-ત્રિષ્ટુપ્ છંદથી વ્યાખ્યાન छन्दः-સ્વતંત્ર અર્થ માત્રની સમાન પ્રશંસિત પત્નીને પ્રાપ્ત કરી ચૂક્યા असि-છો; તેમ હું त्वा-તમને જોઈને द्यावापृथिवीभ्याम्-સૂર્ય અને ભૂમિથી અતિ શોભાયમાન પ્રિયા સ્ત્રીને સ્વીકાર કરું છું; परि+गृह्णामि-સર્વત્રથી अन्तरिक्षेण-હાથમાં જળ = આચમનની સાથે પ્રતિજ્ઞા કરેલી સ્ત્રીને उप +

यच्छामि-સ્ત્રીત્વની સાથે ગ્રહણ કરું છું.

હે अश्विना-પ્રાણ અને અપાનની સમાન કાર્ય-સાધક સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને પણ તેમ જ વર્તાવ કરો.

હે वसवः-પૃથિવી આદિ વસ્તુઓની સમાન પ્રથમ કક્ષાના વિદ્વાનો ! તમે स्वाहा-સત્ય ક્રિયાથી मधुनः, सारघस्य-સરઘા = મધ માખીઓએ બનાવેલ મધુરાદિ ગુણયુક્ત મધ અને धर्मम्-સુખવર્ધક યજ્ઞની पात-રક્ષા કરો. सूर्यस्य-સૂર્યના वृष्टिवनये-વર્ષાનો વિભાગ કરનારા रश्मये-કિરણોની શુદ્ધિને માટે वाट् સારી રીતે यजत-યજ્ઞ કરો; વિદ્વાનોનો સંગ કરો. (૬)

ભાવાર્થ : જેમ શબ્દોના અર્થોની સાથે વાચ્ય-વાચક સંબંધ છે, સૂર્યની સાથે પૃથિવીનો, કિરણોની સાથે વર્ષાનો યજ્ઞની સાથે યજમાનનો અને ઋત્વિકની સાથે પણ યજમાનનો સંબંધ છે, તેમ જ વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષોનો સંબંધ રહે. (૬)

समुद्राय त्वा वाताय स्वाहा। सरिराय त्वा वाताय स्वाहा।
अनाधृष्याय त्वा वाताय स्वाहा। अप्रतिधृष्याय त्वा वाताय स्वाहा। अवस्यवे त्वा वाताय स्वाहा। अशिमिदाय त्वा वाताय स्वाहा॥ ७॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! હું स्वाहा-સત્ય વાણી વા સત્યક્રિયાથી समुद्राय-અન્તરિક્ષમાં ગમન માટે તથા वाताय-વાયુ વિદ્યા વા વાયુની શુદ્ધિને માટે त्वा-તને; स्वाहा-સત્ય વાણી વા ક્રિયાથી सरिराय-જલની શુદ્ધિને માટે તથા वाताय-ઘરના વાયુની શુદ્ધિને માટે त्वा-તને; स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી अनाधृष्याय-ભય અને ધર્ષણથી રહિત બનવા માટે તથા वाताय-ઔષધિના વાયુ વિજ્ઞાનને માટે त्वा-તને; स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી अप्रतिधृष्याय-અધર્ષણને યોગ્યજનો પ્રત્યે વર્તાવને માટે તથા वाताय-વાયુના વેગ અને ગતિને જાણવા માટે त्वा-તને; स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી अवस्यवे-આત્મા અને મનની રક્ષાના ઈચ્છુકને માટે તથા वाताय-પ્રાણ શક્તિને વિશેષ જાણવા માટે त्वा-તને; स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી अशिमिदाय-ભોગ્ય સ્નિગ્ધ અન્ન તથા રસને માટે અને वाताय-ઉદાન વાયુને માટે त्वा-તને સમીપથી ગ્રહણ વા સ્વીકાર કરું છું. (૭)

ભાવાર્થ : વિવાહિત સ્ત્રી-પુરુષોએ સૃષ્ટિ વિદ્યાની ઉન્નતિ માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. (૭)

इन्द्राय त्वा वसुमते रुद्रवते स्वाहेन्द्राय त्वादित्यवते स्वाहेन्द्राय त्वाभिमातिघ्ने स्वाहा। सवित्रे त्वऽऋभुमते विभुमते वाजवते स्वाहा बृहस्पतये त्वा विश्वदेव्यावते स्वाहा॥ ८॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! હું स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી वसुमते-બહુજ ધનથી યુક્ત તથા इन्द्राय-પરમ ઐશ્વર્યવાન સંતાનને માટે त्वा-તને; સ્ત્રી વા પુરુષને स्वाहा-ઉત્તમ ક્રિયાથી आदित्यवते-પૂર્ણ વિદ્યાયુક્ત પાંડિત્યથી યુક્ત,रुद्रवते-બહુજ रुद्र =પ્રાણોના બળવાળા इन्द्राय-દુઃખનાશક સંતાનને માટે त्वा-તને;

स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી अभिमातिघ्ने-શત્રુઓને મારનાર इन्द्राय-ઉત્તમ ઐશ્વર્યના દાતા સંતાનને માટે त्वा-તને; स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી सवित्रे-સૂર્ય વિદ્યાના જ્ઞાતા, ऋभुमते-અનેક મેધાવી = બુદ્ધિમાનોથી યુક્ત, विभुमते-આકાશ આદિ અનેક પદાર્થોના જ્ઞાતા, वाजवते -પુષ્કળ અન્નથી યુક્ત સંતાનને માટે त्वा-તને; स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી बृहस्पतये-મહાન વેદરૂપ વાણીના રક્ષક તથા विश्वदेव्यावते-સમસ્ત વિદ્વાનોનાં હિતકારી પદાર્થોવાળા સંતાનને માટે त्वा-તને ગ્રહણ કરું છું. (૮)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો પૃથિવી આદિ વસુઓ અને ચૈત્ર આદિ આદિત્યો = મહિનાઓનાં ઐશ્વર્યની વૃદ્ધિ કરે છે; તેઓ વિઘ્નોનો નાશ કરીને, બુદ્ધિમાન સંતાનોને પ્રાપ્ત કરીને, સર્વની રક્ષા કરી શકે છે. (૮)

यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा। स्वाहा घर्माय। स्वाहा घर्मः पित्रे॥ ९ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! घर्मः-યજ્ઞ સ્વરૂપ હું स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી अङ्गिरस्वते-વિદ્યુત્ આદિ વિદ્યા જાણનારા यमाय-ન્યાયાધીશને માટે, पितृमते-રક્ષક જ્ઞાનીજનોથી યુક્ત સંતાનને માટે; स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાથી घर्माय-યજ્ઞને માટે स्वाहा-સત્યવાણી વા ક્રિયાના पित्रे-રક્ષક = પાલક પિતાને માટે त्वा-તમને સ્વીકાર કરતી/કરું છું. (૯)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો પ્રાણની સમાન ન્યાય, જનક-પિતરો તથા વિદ્વાનોની સેવા કરે છે, તેઓ બન્ને યજ્ઞની સમાન સર્વને સુખકારી બને છે. (૯)

विश्वाऽआशा दक्षिणसद्विश्वान्देवानयाडिह।
स्वाहाकृतस्य घर्मस्य मधोः पिबतमश्विना॥ १० ॥

પદાર્થ : હે अश्विना-અધ્યાપક અને ઉપદેશકો ! જેમ તમે બન્ને इह-આ સંસારમાં स्वाहाकृतस्य-સત્યક્રિયાથી સિદ્ધ કરેલ घर्मस्य-मधोः-મધુર આદિ ગુણયુક્ત યજ્ઞના અવશિષ્ટ ભાગનું पिबतम्-પાન કરો છો; તેમ આ दक्षिणसत्-વેદીની દક્ષિણ દિશામાં બેસનારા આચાર્ય = બ્રહ્મા विश्वाः-સર્વ आशाः-દિશાઓ તથા विश्वान्-સમસ્ત देवान्-શુભ ગુણો વા વિદ્વાનોના अयाट्-સંગ કરો વા તેઓની સેવા-પૂજન કરો. (૧૦)

ભાવાર્થ : જેમ ઉપદેશકો અને અધ્યાપકો શિક્ષા આપે અને ભણાવે, તેમ જ સર્વ લોકો ગ્રહણ કરે. (૧૦)

दिवि धा इमं यज्ञमिमं यज्ञं दिवि धाः।
स्वाहाऽग्नये यज्ञियाय शं यजुर्भ्यः॥ ११ ॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! તું यजुर्भ्यः-યજ્ઞ કરાવનાર વા યજુર્વેદના વિભાગોથી स्वाहा-સત્યક્રિયાથી अग्नये-અગ્નિ તથા यज्ञियाय-યજ્ઞને યોગ્ય પુરુષને માટે दिवि-સૂર્ય આદિના પ્રકાશમાં इमम्-આ यज्ञम्-સંગ કરવા યોગ્ય ગૃહાશ્રમ વ્યવહારના ઉપયોગી યજ્ઞને शम्-સુખપૂર્વક धाः-ધારણ કર.

दिवि-વિજ્ઞાનના પ્રકાશમાં इमम्-આ પરમાર્થમાં સાધક સંન્યાસ આશ્રમમાં ઉપયોગી यज्ञम्-વિદ્વાનોના સંગરૂપ યજ્ઞને સુખપૂર્વક धाः-ધારણ કર. (૧૧)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો બ્રહ્મચર્યપૂર્વક સમગ્ર વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, વેદરીતિથી કર્મોનું અનુષ્ઠાન કરે છે, તેઓ અતુલ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧)

अश्विना घर्मं पातꣳ हार्द्वानमहर्दिवाभिरूतिभिः।

तन्त्रायिणे नमो द्यावापृथिवीभ्याम्॥ १२॥

પદાર્થ : હે अश्विना-સુશિક્ષિત સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને - अहः-પ્રતિદિન दिवाभिः-દિવસ રાત વર્તમાન રહેનારી ऊतिभिः-રક્ષા આદિ ક્રિયાઓથી तन्त्रायिणे-શિલ્પ વિદ્યાના શાસ્ત્રોને જાણવા વા પ્રાપ્ત કરાવનાર વિદ્વાનને માટે हार्द्वानम्-હૃદયને પ્રાપ્ત થયેલ જ્ઞાન સંબંધી घर्मम्-યજ્ઞની पातम्-રક્ષા કરો. द्यावापृथिवीभ्याम्-સૂર્ય અને અન્તરિક્ષ સંબંધીત્ શિલ્પ શાસ્ત્રજ્ઞ પુરુષને માટે नमः-અન્ન આપો. (૧૨)

ભાવાર્થ : જેમ ભૂમિ અને સૂર્ય સદા પરસ્પર ઉપકારી બનીને સાથે રહે છે, તેમ સૌહાર્દ = મિત્ર ભાવથી સ્ત્રી-પુરુષ નિરંતર વર્તાવ કરે. (૧૨)

अपातामश्विना घर्ममनु द्यावापृथिवी अमꣳसाताम्। इहैव रातयः सन्तु॥ १३॥

પદાર્થ : હે अश्विना-સુરીતિથી વર્તાવ કરનારા સ્ત્રી-પુરુષો ! તમે બન્ને વાયુ અને વિદ્યુત્‌ની સમાન घर्मम्-ગૃહાશ્રમ વ્યવહારના અનુષ્ઠાનની आपाताम्-રક્ષા કરો. द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને ભૂમિની સમાન धर्मम्-ગૃહાશ્રમ વ્યવહારના અનુષ્ઠાનનો अनु+अमंसाताम्-અનુકૂળતાપૂર્વક સ્વીકાર કરો. જેથી इह-આ ગૃહાશ્રમમાં रातयः-વિદ્યા આદિ સુખોનું દાન एव જ सन्तु-થાય. (૧૩)

ભાવાર્થ : જેમ વાયુ અને વિદ્યુત્, ભૂમિ અને સૂર્ય સાથે રહીને સુખ આપે છે, તેમ જ સ્ત્રી-પુરુષ પ્રીતિપૂર્વક રહીને સર્વને અતુલ સુખ આપે. (૧૩)

इषे पिन्वस्वोर्जे पिन्वस्व ब्रह्मणे पिन्वस्व क्षत्राय पिन्वस्व

द्यावापृथिवीभ्यां पिन्वस्व। धर्मासि सुधर्मामेन्यस्मे नृम्णानि धारय ब्रह्म धारय

क्षत्रं धारय विशं धारय॥ १४॥

પદાર્થ : હે धर्म-સત્યના ધારક सुधर्म-ઉત્તમ ધર્મયુક્ત પુરુષ વા સ્ત્રી ! તું अमेनि-હિંસાથી રહિત असि-છે; જેથી अस्मे-અમારે માટે नृम्णानि-ધનોને धारय-ધારણ કર; ब्रह्म-વેદ વા બ્રાહ્મણને धारय-ધારણ કર; क्षत्रम्-ક્ષત્રિય વા રાજ્યને धारय-ધારણ કર; विशम्-પ્રજાને धारय-ધારણ કર. તેથી इषे-અન્ન આદિને માટે पिन्वस्व-સેવન કર; ऊर्जे-બળ આદિને માટે पिन्वस्व-સેવન કર, ब्रह्मणे-વેદવિજ્ઞાન, પરમેશ્વર વા વેદજ્ઞ બ્રાહ્મણને માટે पिन्वस्व-સેવન કર, क्षत्राय-રાજ્યને માટે पिन्वस्व-સેવન કર અને द्यावापृथिवीभ्याम्-ભૂમિ અને સૂર્યને માટે पिन्वस्व-સેવન કર. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો અહિંસક અને ધાર્મિક બનીને સ્વયં ધન, વિદ્યા, રાજ્ય અને પ્રજાને ધારણ કરીને અન્યોને ધારણ કરાવે છે; તેઓ અન્ન, બળ, વિદ્યા અને રાજ્યને પ્રાપ્ત કરીને ભૂમિ અને સૂર્યની સમાન પ્રત્યક્ષ સુખવાળા બને છે. (૧૪)

स्वाहा॑ पू॒ष्णे शर॑से॒ स्वाहा॒ ग्राव॑भ्यः॒ स्वाहा॑ प्रति॒रवे॑भ्यः। स्वाहा॑ पि॒तृभ्य॑ ऽऊ॒र्ध्वब॑र्हिभ्यो॒ घ॒र्मपा॑वभ्यः॒ स्वाहा॒ द्यावा॑पृथिवीभ्या॒ᳬ स्वाहा॒ विश्वे॑भ्यो दे॒वेभ्यः॑॥ १५॥

પદાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ - पूष्णे-પુષ્ટિકારક शरसे-હિંસકને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા અર્થાત્ અધર્મથી બચાવવાનો ઉપાય, प्रतिरवेभ्यः-પ્રતિશબ્દ કરનારને માટે स्वाहा-સત્યવાણી, ग्रावभ्यः-ગર્જતા મેઘને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, ऊर्ध्वबर्हिभ्यः-ઉત્તમ બુદ્ધિને માટે घर्मपावभ्यः-ધર્મ =યજ્ઞ દ્વારા સંસારને પવિત્ર કરનારા, पितृभ्यः-ઋતુઓની સમાન પાલકજનોને માટે स्वाहा-સત્યવાણી; द्यावापृथिवीभ्याम्-સૂર્ય અને અન્તરિક્ષને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા; विश्वेभ्यः-સર્વ देवेभ्यः-દિવ્ય પૃથિવી આદિ વા વિદ્વાનોને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા વા સત્યવાણીનો સદા પ્રયોગ કરો. (૧૫)

ભાવાર્થ : સ્ત્રી અને પુરુષ સત્યવિજ્ઞાન તથા સત્યક્રિયા દ્વારા એવો પુરુષાર્થ કરે કે, જેથી વિશ્વ = સર્વને પુષ્ટિ અને આનંદ પ્રાપ્ત થાય. (૧૫)

स्वाहा॑ रु॒द्राय॑ रु॒द्रहू॑तये॒ स्वाहा॒ सं ज्योति॑षा॒ ज्योतिः॑। अहः॑ के॒तुना॑ जुषताᳬ सु॒ज्योति॒र्ज्योति॑षा॒ स्वाहा॑। रात्रिः॑ के॒तुना॑ जुषताᳬ सु॒ज्योति॒र्ज्योति॑षा॒ स्वाहा॑। मधु॑ हु॒तमिन्द्र॑तमे ऽ अ॒ग्नाव॒श्याम॑ ते देव घर्म॒ नम॑स्तेऽअस्तु॒ मा मा॑ हिᳬसीः॥ १६॥

પદાર્થ : હે સ્ત્રી વા પુરુષ ! આપ केतुना-પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ દ્વારા रुद्रहूतये-પ્રાણ વા જીવોની સ્તુતિ કરનારા रुद्राय-જીવને માટે स्वाहा-સત્યવાણીથી, ज्योतिषा-પ્રકાશની સાથે ज्योतिः-પ્રકાશને स्वाहा-સત્યક્રિયાથી, ज्योतिषा-સત્યવિદ્યાના ઉપદેશરૂપ પ્રકાશથી सुज्योतिः-ઉત્તમ વિદ્યા આદિ શુભ ગુણોના પ્રકાશથી अहः-પ્રતિદિન स्वाहा-સત્યવાણીથી संजुषताम्-સમ્યક્ સેવન કરો.

केतुना-સંકેતરૂપ ચિહ્ન અને ज्योतिषा-મનન આદિ રૂપ પ્રકાશથી सुज्योतिः-ધર્મ આદિ રૂપ શુભ ગુણોના પ્રકાશને તથા रात्रिः-રાત્રિને स्वाहा-સત્યક્રિયાથી जुषताम्-સેવન કરો.

હે घर्म-પ્રકાશમાન देव-વિદ્વાન ! જેથી ते-આપને માટે इन्द्रतमे-અત્યંત ઐશ્વર્યકારક વિદ્યુતરૂપ अग्नौ-અગ્નિમાં मधु-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત हुतम्-હોમને માટે ઘૃત આદિ પદાર્થોને ઘ્રાણ દ્વારા अश्याम-પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તેથી ते-આપને માટે नमः-નમસ્કાર अस्तु-છે; આપ मा-મને मा, हिंसीः-મારો નહિ; મારી હિંસા કરો નહિ. (૧૬)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણ, જીવન અને સમાજની રક્ષા માટે વિજ્ઞાનથી કર્મો અને દિવસ-રાતનું

યુક્તિથી સેવન કરવું જોઈએ.

પ્રતિદિન પ્રાતઃ - સાયં કસ્તૂરી આદિ સુગંધીથી યુક્ત ઘૃતનો અગ્નિમાં હોમ કરીને વાયુ આદિની શુદ્ધિના દ્વારા નિત્ય આનંદમાં રહેવું જોઈએ. (૧૬)

अभीमं महिमा दिवं विप्रो बभूव सप्रथाः। उत श्रवसा पृथिवीꣳ सꣳसीदस्व महाँ२ऽ असि रोचस्व देववीतमः। वि धूममग्नेऽअरुषं मियेध्य सृज प्रशस्त दर्शतम्॥ १७॥

પદાર્થ : હે प्रशस्त-પ્રશંસાને પ્રાપ્ત, मियेध्य-દુષ્ટોને દૂર કરનાર अग्ने-અગ્નિ સમાન પ્રકાશમાન તેજસ્વી વિદ્વાન્ ! महिमा-મહાન, सुप्रथः-પ્રસિદ્ધ ઉત્તમ કીર્તિયુક્ત विप्रः-બુદ્ધિમાન આપ इमम्-दिवम् અવિદ્યા આદિ ગુણોના પ્રકાશને अभि+बभूव-અભિભૂત કરો છો.

उत-અને श्रवसा-શ્રવણ વા અન્નની સાથે पृथिवीम्-ભૂમિ પર सम् + सीदस्व-સારી રીતે બેસો, કારણકે આપ देववीतमः-દિવ્ય ગુણો વા વિદ્વાનોને અત્યંત પ્રાપ્ત કરનાર તથા महान्-મહાન असि-છો, જેથી रोचस्व-સર્વત્રથી પ્રસન્ન રહો, अरुषम्-અલ્પ લાલ વર્ણથી યુક્ત दर्शतम्-દર્શનીય धूमम्-ધૂમાડાને वि+सृज-વિશેષ રૂપથી ઉત્પન્ન કરો. (૧૭)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોનો એ જ મહિમા છે કે, બ્રહ્મચર્યપૂર્વક વિદ્યા પ્રાપ્ત કરીને, સર્વત્ર તેનો વિસ્તાર કરીને, શુભ ગુણોનો પ્રચાર કરીને, સૃષ્ટિની વિદ્યાને ઉન્નત કરે છે. (૧૭)

या ते घर्म दिव्या शुग्या गायत्र्याꣳ हविर्धाने। सा त ऽ आ प्यायतान्निष्ट्यायतां तस्यै ते स्वाहा। या ते घर्मान्तरिक्षे शुग्या त्रिष्टुभ्याग्नीध्रे। सा त ऽ आ प्यायतान्निष्ट्यायतां तस्यै ते स्वाहा। या ते घर्म पृथिव्याꣳ शुग्या जगत्याꣳसदस्या। सा त ऽ आ प्यायतान्निष्ट्यायतां तस्यै ते स्वाहा॥ १८॥

પદાર્થ : હે घर्म-પ્રકાશસ્વરૂપ વિદ્વાન્ વા વિદુષી ! या-જે ते-તારી गायत्र्याम्-ભણનારા-ગાનારાઓની રક્ષકવિદ્યામાં તથા हविर्धाने-હોમવા યોગ્ય પદાર્થોના ધારણમાં शुक्-વિચારની સાધનરૂપ ક્રિયા અને या-જે दिव्या-દિવ્ય ક્રિયા છે; सा-તે ते-તારી બુદ્ધિ તથા દિવ્ય ક્રિયા आ+प्यायताम्-સર્વત્રથી વૃદ્ધિ પામે તથા नि, स्त्यायताम्-નિરંતર સંયુક્ત રહે; तस्यै-તે બુદ્ધિ તથા દિવ્ય ક્રિયાની પ્રાપ્તિને માટે ते-તારા માટે स्वाहा-સત્યવાણી બને.

હે घर्म-દિવસની સમાન પ્રકાશિત વિદ્યાવાળા વિદ્વાન વા વિદુષી ! या-જે ते-તારી अन्तरिक्षे-આકાશમાં शुक्-સૂર્યની દીપ્તિની સમાન વિમાન આદિની ગમન ક્રિયા; या-જે अग्नीध्रे-અગ્નિના આશ્રયમાં તથા त्रिष्टुभि-ત્રિષ્ટુપ છંદથી પ્રતિપાદિત અર્થમાં વિચારરૂપ ક્રિયા છે; सा-તે ते-તારી आ+प्यायताम्-સર્વત્રથી વધે અને नि, स्त्यायताम्-નિરંતર સંયુક્ત રહે. तस्यै-તે ક્રિયા અને ते-તારા માટે स्वाहा-સત્યવાણી બને.

હે घर्म-વિદ્યુત્‌ના પ્રકાશની સમાન વર્તમાન સ્ત્રી વા પુરુષ ! या-જે ते-તારી पृथिव्याम्-ભૂમિ પર અને या-જે सदस्या-સભામાં તથા जगत्याम्-ચેતન પ્રજાયુક્ત સૃષ્ટિમાં शुक्-પ્રકાશયુક્ત ક્રિયા છે; सा-તે ते-તારી आ + प्यायताम्-વધે અને नि, स्त्यायताम्-નિરંતર સંયુક્ત રહે, तस्यै-તે ક્રિયા તથા ते-તારા માટે स्वाहा-સત્યવાણી બને. (૧૮)

ભાવાર્થ : જે સ્ત્રી-પુરુષો દિવ્ય ક્રિયા, શુદ્ધ ઉપાસના અને પવિત્ર વિજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને પ્રકાશિત થાય છે, તેઓ જ મનુષ્ય જન્મના ફળને પ્રાપ્ત કરે છે. તેઓ અન્યોને પણ તેવા જ બનાવે. (૧૮)

क्षत्रस्य त्वा परस्पाय ब्रह्मणस्तन्वं पाहि।
विशस्त्वा धर्मणा वयमनु क्रामाम सुविताय नव्यसे॥ १९॥

પદાર્થ : હે રાજન વા રાણી ! આપ परस्पराय-બીજાઓની રક્ષાનાં સાધનોની પ્રાપ્તિને માટે क्षत्रस्य-ક્ષત્રિય કુળ વા રાજ્યના તથા ब्रह्मणः-બ્રહ્મજ્ઞાની - વેદવિત્ બ્રાહ્મણ કુળના વિદ્વાનની તથા त्वा-આપના तन्वम्-શરીરની पाहि-રક્ષા કરો.

જેમ वयम्-અમે नव्यसे-અત્યંત નવીન सुविताय ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિને માટે धर्मणा-ધર્મથી अनुक्रामाम-અનુકૂળ ચાલીએ છીએ, તેમ જ ધર્મપૂર્વક વર્તાવ કરનાર त्वा-આપને અનુકૂળ विशः-પ્રજાજન ચાલે. (૧૯)

ભાવાર્થ : રાજા અને રાજપુરુષોએ ધર્મથી વિદ્વાનો અને પ્રજાજનોની રક્ષા કરવી જોઈએ. એ જ રીતે પ્રજા અને રાજપુરુષોએ રાજાની રક્ષા કરવી જોઈએ. આ રીતે ન્યાય અને વિનયથી વર્તાવ કરીને રાજા અને પ્રજા નવીન ઐશ્વર્યને ઉન્નત કરે, અને તેમાં વૃદ્ધિ કરે. (૧૯)

चतुःस्त्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्य सप्रथाः स नो विश्वायुः सप्रथाः स नः सर्वायुः सप्रथाः। अप द्वेषोऽअप ह्वरोऽन्यव्रतस्य सश्चिम॥ २०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! चतुःस्त्रक्तिः-ચાર ખૂણાવાળી नाभिः-નાભિની સમાન सप्रथाः-વિસ્તારથી યુક્ત સત્પુરુષ अन्यव्रतस्य-અન્ય સર્વ જગતની રક્ષા કરવાના સ્વભાવવાળા ऋतस्य-સત્ય સ્વરૂપ પરમાત્માની સેવા = ઉપાસના કરે છે; सः-તે सप्रथाः-વિસ્તૃત કાર્યોવાળા विश्वायुः-સંપૂર્ણ આયુથી યુક્ત વિદ્વાન્ नः-અમને બોધ કરાવે.

सः-તે सप्रथाः-અધિક સુખી सर्वायुः-સંપૂર્ણ આયુથી યુક્ત વિદ્વાન नः-અમને ઈશ્વર સંબંધી વિદ્યાને ગ્રહણ કરાવે; જેથી અમે द्वेषः-દ્વેષી શત્રુઓને अप+सश्चिम-દૂર કરીએ તથા ह्वरः-કુટિલ ગતિયુક્ત લોકોને अप-પૃથક કરીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૨૦)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ રસોને પ્રાપ્ત થયેલી નાભિ રસને ઉત્પન્ન કરીને શરીરના સર્વ અવયવોને પુષ્ટ કરે છે, તેમ સેવન કરેલ વિદ્વાન તથા ઉપાસના કરેલ પરમેશ્વર દ્વેષ અને કુટિલતા આદિ દોષોનું

નિવારણ કરીને સર્વ જીવોની રક્ષા કરે છે, એમ માનીને તમારે તે વિદ્વાનો અને તે પરમેશ્વરનું નિરંતર સેવન કરવું જોઈએ. (૨૦)

घर्मैतत्ते पुरीषं तेन वर्द्धस्व चा च प्यायस्व।
वर्द्धिषीमहि च वयमा च प्यासिषीमहि॥ २१॥

પદાર્થ : घर्म-સર્વત્ર પ્રકાશમય, પૂજ્યતમ જગદીશ્વર વા વિદ્વાન ! જે एतत्-આ ते-આપની पुरीषम्-વ્યાપ્તિ વા પાલન છે, तेन-તેનાથી આપ वर्द्धस्व-વૃદ્ધિ પામો, च-અને બીજાની વૃદ્ધિ કરો; આપ સ્વયં आ, प्यायस्व-પુષ્ટ થાઓ च-તથા બીજાને પુષ્ટ કરો.

આપની કૃપા વા શિક્ષાથી જેમ वयम्-અમે वर्द्धिषीमहि પૂર્ણ વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ, च-તેમ અન્યોની પણ વૃદ્ધિ કરીએ. च-અને જેમ અમે आ-प्यासिषीमहि-સર્વત્રથી વૃદ્ધિ પામીએ, તેમ બીજાને નિરંતર પુષ્ટ કરીએ; તેમ તમે પણ કરો. (૨૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ સર્વવ્યાપક ઈશ્વર દ્વારા સર્વની રક્ષા અને પુષ્ટિ કરવામાં આવે છે, તેમ જ વૃદ્ધિયુક્ત અને પુષ્ટ થયેલાં આપણે લોકોએ સર્વ જીવોની વૃદ્ધિ અને પુષ્ટિ કરવી જોઈએ. (૨૧)

अचिक्रदद् वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः।
सꣳ सूर्येण दिद्युतदुदधिर्निधिः॥ २२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે वृषा-વર્ષા કરનાર, हरिः-શીઘ્રગામી महान्-સર્વથી મહાન, अचिक्रदत्-શબ્દ કરનાર, मित्रः-મિત્રની न-સમાન दर्शतः-દર્શનીય તથા सूर्येण-સૂર્યની સાથે उदधिः-જળને ધારણ કરનાર સમુદ્ર તથા આકાશ જે निधिः-પદાર્થોને ધારણ કરનાર છે; તે सम्, दिद्युतत्-સમ્યક્ પ્રકાશિત થાય છે; તે વિદ્યુતરૂપ અગ્નિનો સર્વે પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૨૨)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ બળદ અને ઘોડાઓ શબ્દ કરે છે, જેમ મિત્ર મિત્રોને પ્રેમ કરે છે, તેમ જ સર્વ લોકોની સાથે વિદ્યમાન વિદ્યુત્ સર્વને પ્રકાશિત કરે છે; તેને તમે જાણો. (૨૨)

सुमित्रिया नऽआपऽओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः॥ २३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! आपः-પ્રાણ વા જળ તથા ओषधयः-સોમ આદિ ઔષધિઓ नः-અમારે માટે सुमित्रियाः-શ્રેષ્ઠ મિત્રોની સમાન સુખદાયક सन्तु-બને.

यः-જે પક્ષપાતી અધર્મી अस्मान्-અમો ધર્માત્માઓથી द्वेष्टि-દ્વેષ કરે છે, च-અને यम्-જે દુષ્ટથી वयम्-અમે द्विष्मः-દ્વેષ કરીએ, तस्मै-તે અધર્મીને માટે પ્રાણ અને ઔષધિઓ दुर्मित्रियाः-દુષ્ટ મિત્રોની સમાન દુઃખદાયક सन्तु-બને. (૨૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ પથ્ય, ઔષધિ અને પ્રાણોની સમાન અન્યોનાં રોગો તથા દુઃખોના નિવારક છે, તેઓ 'ધન્ય' છે. અને જેઓ કુપથ્ય, વિકૃત ઔષધ અને મૃત્યુની સમાન અન્યોને દુઃખદાયી છે, તેઓને વારંવાર ધિક્કાર છે. (૨૩)

उद्वयन्तमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ २४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ वयम्-અમે तमसः-અંધકારથી પૃથક્ उतरम्-સર્વ પદાર્થોના ઉત્તરભાગમાં વિદ્યમાન देवत्रा-દિવ્ય પદાર્થોમાં देवम्-દિવ્ય ગુણ-કર્મ-સ્વભાવથી યુક્ત उत्तमम्-સર્વથી શ્રેષ્ઠ ज्योतिः-સર્વના પ્રકાશક सूर्यम्-સૂર્યસમાન પ્રકાશસ્વરૂપ ઈશ્વરને पश्यन्तः-જ્ઞાનદૃષ્ટિથી નિહાળતાં स्वः-સુખને परि + उत् + अगन्म-સર્વત્રથી ઉત્કૃષ્ટતાપૂર્વક પ્રાપ્ત કરીએ છીએ; તેમ તમે પણ પ્રાપ્ત કરો. (૨૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યુત આદિ વિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને પરમાત્માને સાક્ષાત નિહાળે છે, તેઓ પ્રકાશિત બનીને સુખને પ્રાપ્ત કરે છે. (૨૪)

एधोस्येधिषीमहि समिदसि तेजोऽसि तेजो मयि धेहि॥ २५॥

પદાર્થ : હે પરમેશ્વર ! જે આપ અમારા આત્માઓમાં एधः-પ્રકાશ પાથરનાર ઈંધણ-બળતણની સમાન પ્રકાશક असि-છો; समित्-સમ્યક્ પ્રદીપ્ત સમિધાની સમાન असि-છો; तेजः-પ્રકાશમય વિદ્યુતની સમાન સર્વ વિદ્યાના દર્શક असि-છો; તે આપ मयि-મારામાં तेजः-તેજને धेहि-ધારણ અર્થાત્ સ્થાપિત કરો. આપને પ્રાપ્ત કરીને અમે एधिषीमहि-સર્વત્રથી વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરીએ. (૨૫)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ ઈંધણથી અને ઘીથી અગ્નિની જ્વાળા વધે છે, તેમ જ જગદીશ્વરની ઉપાસનાથી યોગીજનોના આત્માઓ પ્રકાશિત થાય છે. (૨૫)

यावती द्यावापृथिवी यावच्च सप्त सिन्धवो वितस्थिरे।
तावन्तमिन्द्र ते ग्रहमूर्जा गृह्णाम्यक्षितं मयि गृह्णाम्यक्षितम्॥ २६॥

પદાર્થ : હે इन्द्र-વિદ્યુત્‌ની સમાન વર્તમાન પરમેશ્વર ! ते-આપની यावती-જેટલી द्यावापृथिवी-સૂર્ય અને ભૂમિ च-અને यावत्-જેટલા મહાન सप्त-સાત सिन्धवः સમુદ્રો वितस्थिरे-રહેલાં છે; तावन्तम्-તેટલા अक्षितम्-નાશરહિત ग्रहम्-ગ્રહણ કરવા યોગ્ય વિદ્યુત આદિ ગુણોને અર્થાત્ સામર્થ્યને ऊर्जा-બલથી હું गृह्णामि-ગ્રહણ-સ્વીકાર કરું છું, तावन्तम्-તેટલા अक्षितम्-નાશરહિત સામર્થ્યને-સુખને मयि-મારામાં गृह्णामि-ગ્રહણ કરું છું. (૨૬)

ભાવાર્થ : વિદ્વાનોએ જ્યાં સુધી બની શકે, ત્યાં સુધી પૃથિવી અને વિદ્યુત આદિના ગુણોને ગ્રહણ કરીને અક્ષય = કદી ક્ષીણ ન થનાર સુખને પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ. (૨૬)

मयि त्यदिन्द्रियं बृहन्मयि दक्षो मयि क्रतुः।

घर्मस्त्रिशुग्वि राजति विराजा ज्योतिषा सह ब्रह्मणा तेजसा सह॥ २७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ विराजा-વિશેષ પ્રકાશ તથા ज्योतिषा-પ્રદીપ્ત જ્યોતિની सह-સાથે, ब्रह्मणा-ધન અને तेजसा-सह-તેજની સાથે રહેલ त्रिशुक्-મૃદુ, મધ્ય અને તીવ્ર ત્રણ પ્રકારની દીપ્તિવાળો घर्म-પ્રતાપ વા યજ્ઞ विराजति-વિશેષ પ્રકાશિત થાય છે, તેમ मयि-મારા જીવાત્મામાં बृहत्-મહાન त्यत्-તે इन्द्रियम्-મન આદિ ઈન્દ્રિયો, मयि-મારામાં दक्षः-બળ અને मयि-મારામાં क्रतुः-પ્રજ્ઞા = બુદ્ધિ વા કર્મ વિશેષ કરીને પ્રકાશિત થાય છે; તેમ તમારામાં પણ સ્વયં પ્રકાશિત થાય. (૨૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અગ્નિ, વિદ્યુત અને સૂર્યરૂપથી ત્રણ પ્રકારનો પ્રકાશ જગતને પ્રકાશિત કરે છે, તેમ ઉત્તમ બળ, કર્મ અને બુદ્ધિ, ધર્મયુક્ત સંચિત ધન અને જીતેલી ઈન્દ્રિયો અત્યંત સુખ પ્રદાન કરે છે. (૨૭)

पयसो रेतऽआभृतं तस्य दोहमशीमह्युत्तरामुत्तराᳬं समाम्। त्विषः संवृक् क्रत्वे दक्षस्य ते सुषुम्णस्य ते सुषुम्णाग्निहुतः। इन्द्रपीतस्य प्रजापतिभक्षितस्य मधुमतऽ उपहूतऽउपहूतस्य भक्षयामि॥ २८॥

પદાર્થ : હે सुषुम्ण-શોભન સુખયુક્ત વિદ્વાન્ મનુષ્ય ! જેમ આપે જે पयसः-જળ વા દૂધના रेतः-પરાક્રમને आ + भृतम्-સર્વત્રથી પુષ્ટ વા ધારણ કરેલ છે; तस्य-તેની दोहम्-પૂર્ણતાને તથા તેના उत्तरामुत्तराम्-પ્રત્યેક આગામી समाम्-સમયને-કાલને न्-અમે अशीमहि-પ્રાપ્ત કરીએ.

તે ते-આપની क्रत्वे-બુદ્ધિને માટે त्विषः-પ્રદીપ્ત दक्षस्य-બળની અને ते-આપની आभृतम्-પુષ્ટિ વા ધારણને અમે अशीमहि-પ્રાપ્ત કરીએ.

सुषुम्णस्य-શ્રેષ્ઠ સુખદાયક इन्द्रपीतस्य-સૂર્ય વા જીવના દ્વારા પાન કરેલ प्रजापतिभक्षितस्य-પ્રજારક્ષક રાજાના દ્વારા સેવન વા ભક્ષણ કરેલ [પ્રજા રક્ષક ઈશ્વરે સેવન કરેલ વા જીવના ભોજન માટે] उपहूतस्य-સમીપ લાવેલ मधुमतः-મધુર આદિ ગુણોથી યુક્ત पयसः-જળ વા દૂધના દોષોને संवृक्-દૂર કરનાર બનીને उपहूतः-આમંત્રિત તથા अग्निहुतः-અગ્નિમાં હોમ કરનાર હું અન્નાદિનું भक्षयामि-ભક્ષણ કરું છું. (૨૮)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ સદા વીર્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ, વિદ્યા આદિ શુભ ગુણો ધારણ કરવા જોઈએ અને પ્રતિદિન સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. જેમ પોતાના સુખની ઈચ્છા કરે, તેમ બીજાના સુખને માટે પણ કામના કરવી જોઈએ. (૨૮)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં આ સૃષ્ટિમાં શુભ ગુણોનું ગ્રહણ (૧), પોતાનું અને બીજાઓનું પોષણ (૧૫), યજ્ઞ દ્વારા જગતના પદાર્થોનું શોધન (૧૬), સર્વત્ર સુખ પ્રાપ્તિનાં સાધનો (૧૧-૧૫), ધર્મનું અનુષ્ઠાન (૧૯), પુષ્ટિની વૃદ્ધિ કરવી (૨૧), ઈશ્વરના ગુણોની વ્યાખ્યા (૨૪), સર્વત્રથી બળની વૃદ્ધિ (૨૫) અને સુખ ભોગ (૨૮)નો ઉપદેશ કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત

અર્થની પૂર્વ અધ્યાયની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति अष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥



॥ अथैकोनचत्वारिंशोऽध्याय आरभ्यते ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

स्वाहा प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः। पृथिव्यै स्वाहाऽग्नये स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहा। वायवे स्वाहा दिवे स्वाहा सूर्याय स्वाहा॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે साधिपतिकेभ्यः-ઇન્દ્રિય આદિના અધિપતિ = જીવની સાથે રહેલા प्राणेभ्यः-જીવનની સમાન પ્રાણોને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા; पृथिव्यै-ભૂમિને માટે स्वाहा-સત્યવાણી; अग्नये-અગ્નિને માટે स्वाहा-સત્યવાણી; अन्तरिक्षाय-આકાશમાં ગમન કરવા માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા; वायवे-શુદ્ધ વાયુની પ્રાપ્તિને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા; दिवे-વિદ્યુતની પ્રાપ્તિને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા सूर्याय-સૂર્યમંડળની પ્રાપ્તિને માટે स्वाहा-સ્વાહા નામક સત્યક્રિયાને યથાવત્ સંયુક્ત કરો-સંપ્રયોગ કરો. (૧)

ભાવાર્થ : આ અધ્યાયમાં અન્ત્યેષ્ટિકર્મનો ઉપદેશ છે. જેને નરમેધ, પુરુષમેધ અને દાહકર્મ પણ કહે છે. જ્યારે કોઈ મરી જાય, ત્યારે મરનારના શરીરના વજન જેટલું ઘી લઈને, તેમાં પ્રતિશેરના હિસાબે એક રતી કસ્તૂરી, એક માસા કેસર અને ચંદન આદિ કાષ્ઠ-લાકડાં આવશ્યકતાનુસાર લેવા જોઈએ.

વેદી : - પુરુષ ઉભો રહી માથા તરફ હાથ ઉંચા કરે તેટલી લાંબી, સાડા ત્રણ હાથ પરિમાણ ઉપરથી પહોળી અને તેટલી ઊંડી, નીચે તળિયામાં એક વેંત જેટલી વેદી બનાવવી.

વેદીમાં નીચેથી લઈને અર્ધી ઊંચાઈ સુધી સમિધાઓ-કાષ્ઠ ભરીને, તેના પર મૃતદેહને રાખીને પછી બન્ને પાર્શ્વ ભાગમાં અને ઉપર સારી રીતે સમિધાઓને ગોઠવીને, છાતી આદિ પર કપૂર રાખીને, કપૂરથી પ્રદીપ્ત કરેલા અગ્નિને ચિતામાં દાખલ કરીને, જ્યારે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થઈ જાય, ત્યારે આ અધ્યાયના સ્વાહાન્ત મંત્રોથી પુનઃ પુનઃ આવૃત્તિ દ્વારા ઘી હોમીને શબનો સારી રીતે દાહ કરવો.

આ રીતે કરવાથી દાહ કરનારને યજ્ઞના ફલની પ્રાપ્તિ થાય છે. શબને કદી પણ ભૂમિમાં દાટવું નહિ, જંગલમાં છોડવું નહિ. તેમજ પાણીમાં ડુબાડવું નહિ. શબનો દાહ કર્યા વિના તેના સંબંધીઓ મહાપાપને પ્રાપ્ત થાય છે; કારણકે મૃત દેહના વિકૃત શરીરથી અધિક દુર્ગંધ ફેલાવાથી ચેતન અને જડ પદાર્થોમાં [પ્રાણીઓ અને અપ્રાણીઓમાં] અસંખ્ય રોગો ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી પૂર્વોક્ત વિધિથી શબનો દાહ કરવામાં ભદ્ર = કલ્યાણ છે; અન્યથા નહિ. (૧)

दिग्भ्यः स्वाहा चन्द्राय स्वाहा नक्षत्रेभ्यः स्वाहाऽद्भ्यः स्वाहा वरुणाय स्वाहा। नाभ्यै स्वाहा पूताय स्वाहा॥ २॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે શરીરનાં દાહ-કર્મમાં दिग्भ्यः-દિશાઓમાં હોમ કરેલ હુત દ્રવ્યોના

ગમન અર્થાત્ પહોંચાડવા માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, चन्द्राय-ચંદ્રલોકની પ્રાપ્તિને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, नक्षत्रेभ्यः-નક્ષત્રોના પ્રકાશની પ્રાપ્તિને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, अद्भ्यः-જલોમાં ગમન કરવા માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, वरुणाय-સમુદ્ર આદિમાં ગમનને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, नाभ्यै-નાભિને બાળવા માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, पूताय-પવિત્ર કરવા માટે स्वाहा-સ્વાહા નામક સત્યક્રિયાનો સંપ્રયોગ કરો. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્ય પૂર્વોક્ત વિધિથી શરીરનો દાહ કરીને-બાળીને સર્વ દિશાઓમાં શરીરનાં અવયવોને અગ્નિ દ્વારા ફેલાવે-પહોંચાડે. (૨)

वाचे स्वाहा प्राणाय स्वाहा प्राणाय स्वाहा।
चक्षुषे स्वाहा चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा॥ ३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે મૃત શરીરની वाचे-વાણી ઈન્દ્રિય સંબંધી હોમને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, प्राणाय-શરીરનાં અવયવોને જગતના વાયુમાં પહોંચાડવાને स्वाहा-સત્યક્રિયા, प्राणाय-ધનંજય નામક વાયુને પ્રાપ્ત થવા માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, चक्षुषे-એક નેત્રગોલકને બાળવા માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, चक्षुषे-બીજા નેત્રગોલકને બાળવા માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, श्रोत्राय-એક શ્રોત્રગોલક-કાનના વિભાગને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા, श्रोत्राय-બીજા શ્રોત્ર ગોલકના વિભાગને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા. સ્વાહા આ શબ્દ બોલીને ઉક્ત ઘીની આહુતિઓ ચિતામાં આપવી. (૩)

ભાવાર્થ : જે લોકો સુગંધયુક્ત ઘૃત આદિ સામગ્રીથી મૃત શરીરનો દાહ કરે છે, તેઓ પુણ્યભાગી બને છે. (૩)

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय।
पशूनाᳬ रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा॥ ४॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો જેમ હું स्वाहा-સત્યક્રિયાથી એમ આગળ અને પાછળ કહેલ પ્રકારથી મૃત શરીરોનો અગ્નિદાહ કરીને मनसः-અંતઃકરણ અને वाचः-વાણીના सत्यम्-સત્ય વચનોને, कामम्-ઈચ્છાપૂર્તિને, आकूतिम्-ઉત્સાહને पशूनाम्-ગાય આદિ પશુઓનાં रूपम्-સુંદર સ્વરૂપને अशीय-પ્રાપ્ત કરું છું; જેમ मयि-મુજ જીવાત્માને अन्नस्य-ખાવા યોગ્ય ઓદન =ભાત આદિના रसः-મધુર આદિ રસ, यशः-કીર્તિ અને श्रीः-શોભા વા ઐશ્વર્ય श्रयताम्-પ્રાપ્ત થાય; તેમ તમે પણ તેને પ્રાપ્ત કરો, તથા એ વાણી આદિ તમને પ્રાપ્ત થાય. (૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઉત્તમ વિજ્ઞાન, ઉત્સાહ અને સત્ય વચનોથી મૃત શરીરોનો વિધિપૂર્વક અગ્નિદાહ કરે છે, તેઓ પશુ, પ્રજા, ધન અને અન્ન આદિને પુરુષાર્થ દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે. (૪)

प्रजापतिः सम्भ्रियमाणः सम्राट् सम्भृतो वैश्वदेवः संᳬसन्नो घर्मः प्रवृक्तस्तेज

ऽ उद्यत ऽ आश्विनः पर्यस्यानीयमाने पौष्णो विष्पन्दमाने मारुतः क्लथन्। मैत्रः शरसि सन्ताय्यमाने वायव्यो ह्रियमाण ऽ आग्नेयो हूयमानो वाग्घुतः॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે ઈશ્વરના દ્વારા सम्भ्रियमाणः-સમ્યક્ પોષણ વા ધારણ કરવા યોગ્ય, सम्राट्-સમ્યક્ પ્રકાશમાન, वैश्वदेवः-સર્વ દેવ અર્થાત્ દિવ્ય જીવો વા પદાર્થોથી સંબંધ રાખનાર, संसन्नः-સમ્યક્ પ્રાપ્ત થનાર, घर्मः-પવિત્ર, तेजः-તેજ સ્વરૂપ, प्रवृक्तः-શરીરથી પૃથક્, उद्यतः-ઉપર ગતિ કરનાર, आश्विनः-પ્રાણ—અપાન સંબંધી તેજ आनीयमाने-સર્વત્રથી પ્રાપ્ત पयसि-જલમાં पौष्णः-પૃથિવી સંબંધી તેજ, विष्पन्दमाने-વિશેષ ગતિમાં मारुतः-મનુષ્યદેહસંબંધી, તથા क्लथन्-હિંસા કરનાર, मैत्रः-મિત્રથી સંબંધ રાખનાર, सन्ताय्यमाने-વિસ્તાર વા પાલનને માટે शरसि-તળાવમાં वायव्यः-વાયુમાં વિદ્યમાન, ह्रियमाणः -લજ્જાશીલ, आग्नेयः-અગ્નિના ગુણોથી યુક્ત, हूयमानः-ઉપદેશ કરવા યોગ્ય, वाक्-બોલનાર, हुतः-ઉપદેશ કરેલા અને प्रजापतिः-પ્રજાના પાલક જીવ सम्भृतः-સમ્યક્ પોષણ વા ધારણ કરેલા છે; તે જ પરમાત્માની તમે ઉપાસના કરો. (૫)

ભાવાર્થ : જ્યારે આ જીવ શરીરનો ત્યાગ કરીને પૃથિવી આદિ સર્વ પદાર્થોમાં ભ્રમણ કરતો જ્યાં-ત્યાં પ્રવિષ્ટ થઈને આમ-તેમ ગતિ કરતો કર્માનુસાર ઈશ્વરની વ્યવસ્થા અનુસાર જન્મ પ્રાપ્ત કરે છે, ત્યારે જ સુપ્રસિદ્ધ થાય છે. (૫)

सविता प्रथमेऽहन्नग्निर्द्वितीये वायुस्तृतीय ऽ आदित्यश्चतुर्थे चन्द्रमाः पञ्चम ऽ ऋतुः षष्ठे मरुतः सप्तमे बृहस्पतिरष्टमे। मित्रो नवमे वरुणो दशमऽ-इन्द्र ऽ एकादशे विश्वे देवा द्वादशे॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! આ જીવને प्रथमे-શરીર છોડતાં આ अहन्-દિવસે सविता-સૂર્ય, द्वितीये-બીજા દિવસે अग्निः-અગ્નિ, तृतीये-ત્રીજા દિવસે वायुः-વાયુ, चतुर्थे-ચોથા દિવસે आदित्यः-આદિત્ય=મહિના, पञ्चमे-પાંચમાં દિવસે - चन्द्रमाः-ચંદ્રમા, षष्ठे-છઠ્ઠા દિવસે ऋतुः-વસંત આદિ ઋતુ, सप्तमे-સાતમા દિવસે मरुतः-મનુષ્ય આદિ પ્રાણીઓ, अष्टमे-આઠમા દિવસે बृहस्पतिः-મોટાનો રક્ષક સૂક્ષ્મ વાયુ, नवमे-નવમા દિવસે मित्रः-પ્રાણ, दशमे-દશમા દિવસે वरुणः-ઉદાન, एकादशे-અગિયારમે દિવસે इन्द्रः-વિદ્યુત્ અને द्वादशे-બારમે દિવસે विश्वे- સર્વ देवाः-દિવ્ય અર્થાત્ ઉત્તમ ગુણો પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જ્યારે એ જીવ શરીરને છોડે છે, ત્યારે સૂર્યપ્રકાશ આદિ પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરીને, થોડો સમય ભ્રમણ કરીને, પોતાનાં કર્મોને અનુસાર ગર્ભાશયમાં જઈને, શરીર ધારણ કરીને જન્મ લે છે, ત્યારે પુણ્ય અને પાપ કર્મના કારણે સુખ અને દુઃખ રૂપ ફળ ભોગવે છે. (૬)

उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च।
सासह्वाँश्चाभियुग्वा च विक्षिपः स्वाहा॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! મૃત્યુને પ્રાપ્ત થયેલ જીવ स्वाहा-પોતાનાં કર્મથી उग्रः-તીવ્ર च-અને શાન્ત સ્વભાવવાળો, भीमः-ભયંકારી च-અને નિર્ભય, ध्वान्तः-અંધકાર च-અને પ્રકાશને પ્રાપ્ત, धुनिः-કાંપતો च-અને નિષ્કંપ, सासह्वान्-શીઘ્ર = અત્યંત સહનશીલ च-અને અસહનશીલ, अभियुग्वा-સર્વત્ર નિયમધારી = સંયુક્ત च-અને વિયુક્ત બધાથી અલગ થનાર અને विक्षिपः-વિક્ષેપને પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે જીવ પાપાચરણયુક્ત છે તે ઉગ્ર, જે ધર્માચરણયુક્ત છે તે શાન્ત, જે ભય પ્રદાન કરનાર છે તે ભયંકર, જે ભયયુક્ત છે તે ભીત, જે અભય પ્રદાન કરનાર છે તે નિર્ભય, જે અવિદ્યાથી યુક્ત છે તે અંધકારથી આવૃત્ત, જે વિદ્વાન યોગી છે તે પ્રકાશયુક્ત, જે અજિતેન્દ્રિય છે તે ચંચળ, જે જિતેન્દ્રિય છે તે અચંચલ = શાન્ત [કહેવાય છે આ રીતે આ બધા જીવો] પોત-પોતાના કર્મફળોને સહન કરતા સંયુક્ત [બનીને]વિક્ષેપને પ્રાપ્ત કરીને આ સંસારમાં નિત્ય ભ્રમણ કરતો રહે છે; તેમ જાણો. (૭)

अग्निꣳहृदयेनाशनिꣳ हृदयाग्रेण पशुपतिं कृत्स्नहृदयेन भवं यक्ना। शर्वं मतस्नाभ्यामीशानं मन्युना महादेवमन्तः पर्शव्येनोग्रं देवं वनिष्ठुना वसिष्ठहनुः शिङ्गीनि कोश्याभ्याम्॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! એ મૃત જીવ हृदयेन-હૃદયરૂપ અવયવથી अग्निम्-અગ્નિને, हृदयाग्रेण-હૃદયના અગ્રભાગથી अशनिम्-વિદ્યુત્‌ને कृत्स्नहृदयेन-સંપૂર્ણ હૃદયનાં અવયવોથી पशुपतिम्-પશુઓના પાલક, જગતના કર્તા, રુદ્ર, સર્વ પ્રાણોના હેતુ પરમેશ્વરને, यक्ना-યકૃતરૂપ શરીરનાં અવયવોથી भवम्-સર્વવ્યાપક ઈશ્વરને, मतस्नाभ्याम्-હૃદયના પાર્શ્વ અવયવોથી शर्वम्-વિજ્ઞાતા ઈશ્વરને, मन्युना-દુષ્ટાચારી અને પાપના પ્રતિ વર્તમાન ક્રોધથી ईशानम्-સર્વ જગતના સ્વામી ઈશ્વરને, अन्तःपर्शव्येन-આંતરિક પાર્શ્વ અવયવથી महादेवम्-મહાન દેવને, उग्रम्-देवम्-તીક્ષ્ણ સ્વભાવવાળા પ્રકાશમાન ઈશ્વરને, वनिष्ठुना-આન્ત્ર વિશેષથી वसिष्ठहनुः-અત્યંત વાસને માટે રાજાની સમાન ચિબુકવાળા જનને, कोश्याभ्याम्-કોશ = ઉદરમાં રહેલાં બે માંસપિંડોથી शिङ्गीनि-જાણવા અને પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય સુખોને પ્રાપ્ત કરે છે; તેમ તમે જાણો. (૮)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો [શરીરના] સર્વ અંગોથી ધર્માચરણ, વિદ્યાગ્રહણ, સત્સંગ અને જગદીશ્વરની ઉપાસના કરે છે, તેઓ વર્તમાન અને ભવિષ્યના જન્મોનું સર્વ સુખ પ્રાપ્ત કરે છે. (૮)

उग्रं लोहितेन मित्रꣳ सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्येनेन्द्रं प्रक्रीडेन मरुतो बलेन साध्यान् प्रमुदा। भवस्य कण्ठ्यꣳ रुद्रस्यान्तः पार्श्व्यं महादेवस्य यकृच्छर्वस्य वनिष्ठुः पशुपतेः पुरीतत्॥ ९॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ગર્ભાશયમાં સ્થિત વા બહાર રહેલ જીવ - लोहितेन-શુદ્ધ રક્તથી उग्रम्-તીક્ષ્ણ ગુણને, सौव्रत्येन-શ્રેષ્ઠ કર્મથી मित्रम्-પ્રાણની સમાન મિત્રને, दौर्व्रत्येन-દુષ્ટાચરણથી रुद्रम्- રડાવનારને,

प्रक्रीडेन-ઉત્તમ વિહારથી इन्द्रम्-પરમ ઐશ્વર્ય વા વિદ્યુત્‌ને, बलेन-બળથી मरुतः ઉત્તમ મનુષ્યોને, प्रमुदा-અત્યંત આનંદથી साध्यान्-સિદ્ધિ કરવા યોગ્ય પદાર્થોને, भवस्य-પ્રશંસિત થનાર પુરુષના कण्ठ्यम्-કંઠમાં રહેલા સ્વરને, रुद्रस्य-દુષ્ટોને રડાવનાર જનના अंतःपाश्वर्व्यम्-અંદરના પાર્શ્વ અવયવને महादेवस्य-મહાન વિદ્વાન્‌ના यकृत्-હૃદયમાં રહેલ લાલ પિંડને, शर्वस्य-સુખદાયક મનુષ્યના वनिष्ठुः- આંત્ર વિશેષને पशुपतेः-પશુઓના રક્ષક પુરુષના पुरीतत्-હૃદયની નાડીને પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ દેહધારી [જીવ] રક્ત આદિથી ઉગ્ર આદિ સ્વભાવોને પ્રાપ્ત કરે છે, તેમ જીવ ગર્ભાશયમાં પણ પ્રાપ્ત કરે છે. (૯)

लोम॑भ्यः॒ स्वाहा॒ लोम॑भ्यः॒ स्वाहा॑ त्व॒चे स्वाहा॑ त्व॒चे स्वाहा॒ लोहि॑ताय॒ स्वाहा॒ लोहि॑ताय॒ स्वाहा॒ मेदो॑भ्यः॒ स्वाहा॒ मेदो॑भ्यः॒ स्वाहा॑ मा॒ꣳसेभ्यः॒ स्वाहा॑ मा॒ꣳसेभ्यः॒ स्वाहा॒ स्नाव॑भ्यः॒ स्वाहा॒ स्नाव॑भ्यः॒ स्वाहा॒स्थभ्यः॒ स्वाहा॒स्थभ्यः॒ स्वाहा॑ म॒ज्जभ्यः॒ स्वाहा॑ म॒ज्जभ्यः॒ स्वाहा॑। रेत॑से॒ स्वाहा॑ पा॒यवे॒ स्वाहा॑॥ १०॥

પદાર્થ : મનુષ્યોએ દાહકર્મમાં ઘી વગેરેથી लोमभ्यः-ત્વચાની ઉપરના વાળ માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા એ શબ્દનો, लोमभ्यः-નખ આદિને માટે स्वाहा, त्वचे-શરીરની ત્વચા બાળવાને स्वाहा, त्वचे-અંદરની ત્વચા બાળવાને स्वाहा, लोहिताय-લોહી બાળવાને स्वाहा, लोहिताय-હૃદયમાં સ્થિત લોહ પિંડ બાળવાને स्वाहा, मेदोभ्यः સ્નિગ્ધ ધાતુઓને બાળવાને स्वाहा, मेदोभ्यः-શરીરના અવયવોને આર્દ્ર કરનાર અવયવોને બાળવાને स्वाहा, मांसेभ्यः-બહારના માંસોને બાળવાને स्वाहा, मांसेभ्यः-અંદરના માંસોને બાળવાને स्वाहा, स्नावभ्यः-સ્થૂલ નાડીઓને બાળવાને स्वाहा, स्नावभ्यः-અંદરની સૂક્ષ્મ નાડીઓને, શિરાઓને બાળવાને स्वाहा, अस्थभ्यः-શરીરના કઠિન અવયવ અસ્થિ = હાડકાંઓને બાળવાને स्वाहा, अस्थभ्यः સૂક્ષ્મ અસ્થિરૂપ અવયવો (મૃદુ અસ્થિઓને) બાળવાને स्वाहा, मज्जभ्यः-અસ્થિની અંદરની ધાતુ = મજ્જાને બાળવાને स्वाहा, मज्जभ्यः-ઉક્ત ધાતુના અન્તર્ગત ભાગને બાળવાને स्वाहा, रेतसे-વીર્યને બાળવાને स्वाहा, पायवे-પાયુ = ગુદારૂપ અવયવને બાળવાને स्वाहा સ્વાહા નામક સત્યક્રિયાનો [એ શબ્દનો સર્વ અવયવોને બાળવાના માટે સર્વની સાથે સ્વાહા શબ્દના અર્થનો] સદા પ્રયોગ કરવો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જ્યાં સુધી લોમ = રૂંવાડાના બાળવાથી લઈને વીર્ય સુધી [અવયવો] ભસ્મ થઈ જાય, ત્યાં સુધી [ચિતામાં] ઘી અને કાષ્ઠ નાખતા રહેવું જોઈએ. (૧૦)

आ॒या॒साय॒ स्वाहा॑ प्राया॒साय॒ स्वाहा॑ संया॒साय॒ स्वाहा॑ विया॒साय॒ स्वाहो॑द्या॒साय॒ स्वाहा॑। शु॒चे स्वाहा॒ शोच॑ते॒ स्वाहा॒ शोच॑मानाय॒ स्वाहा॒ शोका॑य॒ स्वाहा॑॥ ११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે आयासाय-સર્વત્રથી સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે स्वाहा-એ શબ્દનો, प्रायासाय-જવાને માટે स्वाहा, संयासाय-સારી રીતે ચાલવાને માટે स्वाहा, वियासाय-વિવિધ વસ્તુઓની પ્રાપ્તિને

માટે स्वाहा, उद्यासाय-ઊર્ધ્વ ગતિને માટે स्वाहा, शुचे-પવિત્ર થવા માટે स्वाहा, शोचते-શુદ્ધિ કરનારાને માટે स्वाहा, शोचमानाय-વિચારોના પ્રકાશને માટે स्वाहा અને शोकाय-જેમાં શોક થાય છે, તેને માટે स्वाहा-[એનો અર્થ - સત્યક્રિયા]શબ્દનો પ્રયોગ કરો.

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પુરુષાર્થ આદિની સિદ્ધિને માટે સત્યવાણી, સત્યબુદ્ધિ અને સત્યક્રિયા કરવી જોઈએ. જેથી દેહાન્તર તથા જન્માન્તરમાં મંગલ થાય. (૧૧)

तप॑से॒ स्वाहा॒ तप्य॑ते॒ स्वाहा॒ तप्य॑मानाय॒ स्वाहा॑ त॒प्ताय॒ स्वाहा॑ घ॒र्मा॑य॒ स्वाहा॑। निष्कृ॑त्यै॒ स्वाहा॒ प्राय॑श्चित्त्यै॒ स्वाहा॑ भेष॒जाय॒ स्वाहा॑॥ १२॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! तपसे- પ્રતાપને માટે स्वाहा, तप्यते-સંતાપ પામનારને માટે स्वाहा, तप्यमानाय-તાપ-ગરમી પ્રાપ્ત થયેલને માટે स्वाहा, तप्ताय-તપેલાને માટે स्वाहा, घर्माय-દિવસ થવાને માટે स्वाहा, निष्कृत्यै-નિવારણને માટે स्वाहा, प्रायश्चित्यै-પાપ નિવારણને માટે स्वाहा-અને भेषजाय-સુખને માટે स्वाहा-સત્યક્રિયા એ શબ્દનો નિરંતર પ્રયોગ કરો. (૧૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ પ્રાણાયામ આદિ સાધનો દ્વારા સર્વ કિલ્વિષ = પાપનું નિવારણ કરીને સ્વયં સુખ પ્રાપ્ત કરવું જોઈએ તથા અન્યોને પ્રાપ્ત કરાવવું જોઈએ. (૧૨)

य॒माय॒ स्वाहाऽन्त॑काय॒ स्वाहा॑ मृ॒त्यवे॒ स्वाहा॑। ब्रह्म॑णे॒ स्वाहा॑ ब्रह्मह॒त्यायै॒ स्वाहा॒ विश्वे॑भ्यो दे॒वेभ्यः॒ स्वाहा॒ द्यावा॑पृथिवीभ्या॒ᳫं स्वाहा॑॥ १३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! તમે यमाय-નિયંતા ન્યાયાધીશ વા વાયુને માટે स्वाहा-આ શબ્દનો, अन्तकाय-નાશક કાળને માટે स्वाहा, मृत्यवे-પ્રાણત્યાગ કરાવનાર સમયને માટે स्वाहा, ब्रह्मणे-સર્વથી મહાન પરમાત્મા વા બ્રહ્મજ્ઞાની વિદ્વાનને માટે स्वाहा, ब्रह्महत्यायै-બ્રહ્મ અર્થાત્ વેદ, ઈશ્વર વા વિદ્વાનની હત્યાના નિવારણ માટે स्वाहा; विश्वेभ्यः-સર્વ देवेभ्यः-દિવ્યગુણોથી યુક્ત વિદ્વાનો વા જળ આદિ પદાર્થોને માટે स्वाहा-અને द्यावापृथिवीभ्याम्-સૂર્ય તથા ભૂમિના શોધનને માટે स्वाहा-નામક સત્યક્રિયાનો પ્રયોગ કરો. (૧૩)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ન્યાય વ્યવસ્થાનું પાલન કરીને, અલ્પ આયુમાં મૃત્યુનું નિવારણ કરીને, ઈશ્વર અને વિદ્વાનોનું સેવન કરીને, બ્રહ્મહત્યા આદિ દોષોનું નિવારણ કરીને તથા સૃષ્ટિવિદ્યાને જાણીને અન્ત્યેષ્ટિ ક્રિયા કરે છે, તેઓ સર્વને મંગલ પ્રદાન કરનાર બને છે. સદા આ રીતે - વિધિથી મૃતક શરીરને બાળીને સર્વના સુખની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ. (૧૩)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં અન્ત્યેષ્ટિ કર્મનું વર્ણન હોવાથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયમાં પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે, તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ चत्वारिंशाऽध्यायारम्भः ॥

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव॥

ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥ १॥

પદાર્થ : હે મનુષ્ય તું यत्-જે इदम्-પ્રકૃતિથી લઈને પૃથિવી સુધી सर्वम्-સર્વ जगत्याम्-ચલાયમાન સૃષ્ટિમાં जगत्-જડ-ચેતન જગત્ છે, તે ईशा-ઈશ્વર અર્થાત્ સકલ ઐશ્વર્ય સંપન્ન, સર્વશક્તિમાન પરમાત્માના દ્વારા वास्य-આચ્છાદિત અર્થાત્ અભિવ્યાપ્ત થયેલ છે. तेन-તેથી त्यक्तेन-ત્યાગપૂર્વક અર્થાત્ જગતથી ચિત્ત હટાવીને भुञ्जीथाः-ભોગોનો ઉપયોગ કર.

किं च-પરંતુ कस्य, स्वित्-આ ધન કોનું છે. અર્થાત્ કોઈનું પણ નથી, એટલા માટે કોઈના પણ धनम्-ધન અર્થાત્ વસ્તુમાત્રની मा+गृधः અભિલાષા ના કર. (૧)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો ઈશ્વરનો ડર રાખે છે કે, તે અમને સદા સર્વત્રથી જોઈ રહેલ છે, તથા આ સંસાર ઈશ્વરથી વ્યાપ્ત છે અને ઈશ્વર સર્વત્ર રહેલ છે.

આ રીતે ઈશ્વરને વ્યાપક અને અન્તર્યામી નિશ્ચિત રૂપમાં જાણીને [જે] કદીપણ અન્યાયપૂર્ણ આચરણથી કોઈનો પણ કોઈ પણ પદાર્થ લેવા-ગ્રહણ કરવા ઈચ્છતો નથી, તેઓ ધાર્મિક બનીને લોકમાં અભ્યુદય = સાંસારિક ઉન્નતિ અને પરલોકમાં નિઃશ્રેયસ = મોક્ષરૂપી ફળને પ્રાપ્ત કરીને સદા આનંદમાં રહે છે. (૧)

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः।

एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥ २॥

પદાર્થ : મનુષ્ય इह-આ સંસારમાં कर्माणि-ધર્મયુક્ત, વેદોક્ત નિષ્કામ કર્મોને कुर्वन्-કરતાં કરતાં एव-જ शतम्-સો समाः-વર્ષ जिजीविषेत्-જીવવાની ઈચ્છા કરે.

एवम्-આ રીતે ધર્મયુક્ત કર્મમાં પ્રવૃત્તમાન त्वयि-તું नरे-વ્યવહારોને ચલાવનાર જીવનના ઈચ્છુક બનીને कर्म-પોતાના કામ્ય = મનોરથને માટે અધર્મયુક્ત, અવૈદિક કર્મમાં न लिप्यते-લિપ્ત થતો નથી.

इतः-આમ વેદોક્ત પ્રકારથી ભિન્ન अन्यथा-અન્ય પ્રકારના કર્મમાં લિપ્ત न + अस्ति-થવાનો અભાવ થતો નથી. (૨)

ભાવાર્થ : મનુષ્યો આળસનો ત્યાગ કરીને, સર્વના દ્રષ્ટા, ન્યાયાધીશ પરમાત્માને તથા તેની પાલન કરવા યોગ્ય આજ્ઞાને માનીને શુભ કર્મ કરતાં તથા અશુભ કર્મોનો ત્યાગ કરતાં, બ્રહ્મચર્ય દ્વારા વિદ્યા અને સુશિક્ષા પ્રાપ્ત કરીને, ઉપસ્થ-ઈન્દ્રિયના સંયમથી વીર્યની વૃદ્ધિ કરીને અર્થાત્ ઊર્ધ્વગામી બનાવીને અલ્પ આયુમાં જ થતાં મૃત્યુને દૂર કરે, તેમજ યુક્ત આહાર-વિહારથી સો વર્ષ સુધીની આયુને પ્રાપ્ત કરે.

જેમ-જેમ મનુષ્ય શુભ-શ્રેષ્ઠ કર્મોમાં પ્રયત્નશીલ રહે છે, તેમ-તેમ પાપ કર્મોથી તેની બુદ્ધિ નિવૃત્ત

થાય છે, તેથી વિદ્યા, આયુ અને સુશીલતા આદિ ગુણોની વૃદ્ધિ થાય છે. (૨)

असुर्या नाम ते लोकाऽअन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥ ३॥

પદાર્થ : જે लोकाः-જોઈ શકે એવા લોકો अन्धेन-અંધકારરૂપ तमसा-અજ્ઞાનના આવરણથી आवृताः-સર્વત્રથી આવૃત્ત = ઢંકાયેલા ये, के, च-અને જે કોઈ आत्महनः-આત્માની વિરુદ્ધ આચરણ કરનારા जनाः મનુષ્યો છે, ते-તેઓ असुर्याः-પોતાનાં પ્રાણ પોષણમાં તત્પર, અવિદ્યા આદિ દોષોથી યુક્ત અને તેના સંબંધીઓની સમાન પાપકર્મ કરનારા नाम-પ્રસિદ્ધ હોય છે, ते-તેઓ प्रेत्य-મૃત્યુ પછી अपि-અને જીવતાં પણ तान्-તે દુઃખ અને અજ્ઞાનરૂપ અંધકારથી યુક્ત ભોગોને गच्छन्ति-પ્રાપ્ત થાય છે. (૩)

ભાવાર્થ : તે જ મનુષ્યો અસુર, દૈત્ય, રાક્ષસ, પિશાચ અને દુષ્ટ છે, જે આત્મામાં અન્ય અને વાણીમાં અન્ય અને કર્મમાં જુદુ આચરણ કરે છે. તેઓ કદીપણ અવિદ્યારૂપી દુઃખસાગરને પાર કરીને આનંદને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી.

જે લોકો આત્મામાં હોય તેવું મનથી, મનમાં હોય તેવું વાણીથી અને વાણીમાં હોય તેવું કર્મમાં કપટરહિત આચરણ કરે છે, તેઓ જ દેવ, આર્ય, સૌભાગ્યવાન લોકો સંપૂર્ણ સંસારને પવિત્ર કરતા રહીને, આ લોક અને પરલોકમાં અનુપમ સુખને પ્રાપ્ત કરે છે - ભોગવે છે. (૩)

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा ऽ आप्नुवन् पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति॥ ४॥

પદાર્થ : હે વિદ્વાન મનુષ્યો ! જે एकम्-અદ્વિતીય બ્રહ્મ છે, તે अनेजत्-કંપન રહિત અર્થાત્ પોતાની અવસ્થા = સ્વરૂપથી કદી વિચલિત થતો નથી; તે मनसः-મનના વેગથી પણ जवीयः-અતિ વેગવાન पूर्वम्-સર્વનો અગ્રણી, પૂર્ણ अर्षत्-સર્વત્ર વ્યાપ્ત હોવાથી મનથી પણ પ્રથમ પહોંચનાર બ્રહ્મ છે.

एनत्-એ પૂર્વોક્ત બ્રહ્મને देवाः-અવિદ્વાન અથવા ચક્ષુ આદિ ઇન્દ્રિયો न, आप्नुवन्-પ્રાપ્ત કરી શકતી નથી. तत्-પરબ્રહ્મ સ્વયં तिष्ठत्-પોતાના સ્વરૂપમાં સ્થિર રહીને પોતાની અનંત વ્યાપકતાથી धावतः-વિષયોની તરફ દોડનારા अन्यान्-તેના પોતાના સ્વરૂપથી ભિન્ન મન, વાણી, ઇન્દ્રિયો આદિને अत्येति-ઉલ્લંઘન કરી જાય છે, પ્રાપ્ત થતો નથી.

तस्मिन्-તે સર્વત્ર અભિવ્યાપક સ્થિર બ્રહ્મમાં मातरिश्वा-અન્તરિક્ષમાં વાયુ ક્રિયાશીલ રહે છે - અર્થાત્ અન્તરિક્ષમાં પ્રાણોને ધારણ કરનાર વાયુ રહે છે - તેમ જ જીવ [તે બ્રહ્મમાં] अपः-કર્મમાં વા ક્રિયાને दधाति-ધારણ કરે છે. તેમ જાણો. (૪)

ભાવાર્થ : ઈશ્વર અનંત હોવાથી જ્યાં-જ્યાં મન જાય છે, ત્યાં-ત્યાં પ્રથમથી જ ઈશ્વર અંદર-બહાર વ્યાપ્ત અને આગળ સ્થિત છે તે બ્રહ્મનું જ્ઞાન શુદ્ધ મન દ્વારા થાય છે. તેને ચક્ષુ આદિ ઈન્દ્રિયો અને અવિદ્વાન લોકો જોઈ શકતા નથી. તે સ્વયં અચલ-સ્થિર રહેવા છતાં સર્વ જીવોને નિયમમાં ચલાવે

છે અને ધારણ કરે છે, તે બ્રહ્મ અતિ સૂક્ષ્મ અને અતીન્દ્રિય હોવાથી ધાર્મિક, વિદ્વાન્, યોગીને જ તેનો સાક્ષાત્કાર થાય છે; અન્યોને નહિ. (૪)

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।

तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः॥ ५॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! तद्-તે બ્રહ્મ एजति-મૂર્ખોની દૃષ્ટિએ ચાલે છે; तत्-તે न, एजति-ચાલતો નથી અને તેને કોઈ ચલાવી શકતું નથી. तत्-તે दूरे-અધર્માત્મા, અવિદ્વાન્ અને અયોગીઓથી દૂર રહે છે અર્થાત્ કરોડો વર્ષોમાં પણ તેઓને પ્રાપ્ત થતો નથી.

तत्-તે उ-નિશ્ચયથી જ अन्तिके-ધર્માત્મા, વિદ્વાન, યોગીઓની સમીપ છે. तत्-તે બ્રહ્મ अस्य-આ सर्वस्य-સર્વ જગત અને જીવોની अन्तः-અંદર વિરાજમાન છે. तत्-તે उ-નિશ્ચયથી अस्य, सर्वस्य-આ સર્વ પ્રત્યક્ષ અને અપ્રત્યક્ષ જગતની बहिः-બહાર પણ વિરાજમાન છે; એમ નિશ્ચિત જાણો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! તે બ્રહ્મ મૂર્ખોની દૃષ્ટિએ કંપન કરતો હોય તેવો ચાલે છે [પરન્તુ વાસ્તવમાં] તે વ્યાપક હોવાથી પોતાના સ્વરૂપથી - સ્વાભાવિક રૂપથી કદીપણ ચલાયમાન થતો નથી.

જે લોકો તેની આજ્ઞાની વિરુદ્ધ આચરણ કરે છે, તેઓ તેની પ્રાપ્તિને માટે જ્યાં-ત્યાં ભટકતા હોવા છતાં તેને જાણી શકતા નથી. જેઓ ઈશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે, તેઓ અતિ સમીપ પોતાના આત્મામાં સ્થિત બ્રહ્મને પ્રાપ્ત કરી લે છે.

જે બ્રહ્મ સર્વ પ્રકૃતિ આદિ [પદાર્થો]ની બહાર અને અંદરના અવયવોમાં વ્યાપક બનીને અંતર્યામી રૂપમાં સર્વ જીવોના સમસ્ત પાપ-પુણ્યરૂપ કર્મોને જાણીને યથાર્થ ફળ પ્રદાન કરે છે, એ જ બ્રહ્મનું સર્વેએ ધ્યાન [ઉપાસના] કરવું જોઈએ અને બધાએ તેનો ડર રાખવો જોઈએ. (૫)

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।

सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न वि चिकित्सति॥ ६॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે વિદ્વાન જન आत्मन्-પરમાત્માની અંદર एव-જ सर्वाणि-સર્વ भूतानि-જડ અને ચેતનને अनुपश्यति-વિદ્યા, ધર્માચરણ અને યોગાભ્યાસ કર્યા પછી ધ્યાનચક્ષુથી જુએ છે.

यः, तु-અને જે વિદ્વાન सर्वभूतेषु-સર્વ પ્રકૃતિ આદિ પદાર્થોમાં आत्मानम्-સર્વત્ર વ્યાપક પરમાત્માને च-પણ જુએ છે, તે વિદ્વાન ततः-એવા સમ્યક્ દર્શન પછી न, वि चिकित्सति-સર્વથા સંદેહને પ્રાપ્ત થતા નથી; તેમ તમે જાણો. (૬)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે લોકો સર્વવ્યાપક, ન્યાયકારી, સર્વજ્ઞ, સનાતન, સર્વાત્મા = સર્વ આત્માઓના આત્મા અને સર્વના દ્રષ્ટા પરમાત્માને જાણીને, સુખ-દુઃખ અને હાનિ-લાભમાં પોતાના આત્માની સમાન સર્વ પ્રાણીઓને જાણીને ધાર્મિક બને છે, તેઓ જ મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે. (૬)

यस्मि॒न्त्सर्वा॑णि भू॒तान्या॒त्मैवाभू॑द्विजान॒तः।
तत्र॒ को मोह॒ः कः शोक॑ऽ एक॒त्वम॑नु॒पश्य॑तः॥ ७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यस्मिन्-જે પરમાત્મા જ્ઞાન, વિજ્ઞાન અને ધર્મના વિષયમાં विजानतः-સમ્યક્જ્ઞાતા જનને માટે [અર્થાત્ વિશેષ કરીને ધ્યાનદૃષ્ટિથી જોનારને] सर्वाणि-સર્વ भूतानि-પ્રાણીમાત્ર आत्मा, एव પોતાના આત્માની સમાન જ સુખ-દુઃખવાળા अभूत्-હોય છે; तत्र-તે પરમાત્મામાં વિરાજમાન, एकत्वम्-પરમાત્માના એકત્વ-અદ્વિતીય ભાવને अनु, पश्यतः-અનુકૂળ યોગાભ્યાસ દ્વારા સાક્ષાત્ જોનાર યોગીજનને कः-શું मोहः-મોહ અને कः-શું शोकः-શોક વા ક્લેશ अभूत्-થાય ? અર્થાત્ કોઈ મોહ-શોક થતા નથી. (૭)

ભાવાર્થ : જે વિદ્વાન સંન્યાસી લોકો પરમાત્માની સાથે વર્તમાન પ્રાણીમાત્રને પોતાના આત્માની સમાન જાણે છે, અર્થાત્ જેમ પોતાનું હિત ઈચ્છે છે, તેમ અન્ય પ્રાણીઓના વિષયમાં વ્યવહાર કરે છે તથા એકમાત્ર અદ્વિતીય પરમાત્માનાં શરણને પ્રાપ્ત કરેલ છે, તેઓને મોહ, શોક, લોભ આદિ દોષો કદી પ્રાપ્ત થતા નથી.

અને જેઓ પોતાના આત્માને યથાવત્ રીતે જાણીને પરમાત્માને જાણે છે, તેઓ સદા સુખી રહે છે. (૭)

स पर्य॑गाच्छु॒क्रम॑का॒यम॑व्र॒णम॑स्नावि॒रꣳ शु॒द्धमपा॑पविद्धम्। क॒विर्म॑नी॒षी प॑रि॒भूः स्व॑य॒म्भूर्या॑थातथ्य॒तोऽर्था॒न् व्य॒दधाच्छाश्व॒तीभ्य॒ः समा॑भ्यः॥ ८॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે બ્રહ્મ शुक्रम्-શીઘ્રકારી, સર્વશક્તિમાન अकायम्-સ્થૂલ, સૂક્ષ્મ અને કારણ શરીરથી રહિત છે, अव्रणम्-છિદ્રરહિત અને જેના બે ટુકડા થઈ શકતા નથી, अस्नाविरम्-નાડી આદિ બંધનથી રહિત છે, शुद्धम्-અવિદ્યા આદિ દોષોથી રહિત હોવાથી સદા પવિત્ર છે, अपापविद्धम्-જે કદી પણ પાપથી યુક્ત, પાપ કરનાર અને પાપથી પ્રેમ કરનાર નથી, તે परि+अगात्-સર્વત્ર વ્યાપક છે, જે कविः-સર્વજ્ઞ, मनीषी-સર્વ જીવોની મનોવૃત્તિઓને જાણનાર, परिभूः-દુષ્ટ પાપીઓનો તિરસ્કાર કરનાર, स्वयम्भूः-અનાદિ સ્વરૂપ, જેની સંયોગથી ઉત્પત્તિ અને વિયોગથી વિનાશ થતાં નથી, જેના માતા-પિતા કોઈ નથી અને જેના ગર્ભવાસ, જન્મ, વૃદ્ધિ અને ક્ષય થતાં નથી, તે પરમાત્મા शाश्वतीभ्यः-સનાતન, અનાદિસ્વરૂપયુક્ત, પોતાનાં સ્વરૂપની દૃષ્ટિએ ઉત્પત્તિ અને વિનાશથી રહિત समाभ्यः-પ્રજાઓને માટે याथातथ्यतः-યથાર્થ ભાવથી अर्थान्-વેદો દ્વારા સર્વ પદાર્થોનો व्यदधात्-વિશેષ કરીને ઉપદેશ આપે છે. सः-તે જ પરમાત્મા તમારા માટે ઉપાસના કરવા યોગ્ય છે. (૮)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જો અનન્ત શક્તિમાન, અજન્મા, અખંડ, સદામુક્ત, ન્યાયકારી, નિર્મલ = શુદ્ધ કે પાપરહિત, સર્વજ્ઞ, સર્વના સાક્ષી = દૃષ્ટા, નિયંતા અને અનાદિસ્વરૂપ બ્રહ્મ સૃષ્ટિની આદિમાં સ્વયં ઉપદિષ્ટ વેદો દ્વારા શબ્દ, અર્થ અને સંબંધ બતાવનારી વિદ્યાનો ઉપદેશ ન કરે, તો કોઈપણ વિદ્વાન બની શકે નહિ અને ધર્મ-અર્થ-કામ અને મોક્ષ રૂપ ફળને પ્રાપ્ત કરી શકે નહિ, એટલા માટે આ બ્રહ્મની

તમે લોકો સદા ઉપાસના કરો. (૮)

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूयऽ इव ते तमो यऽ उ सम्भूत्याᳬं रताः॥ ९॥

પદાર્થ : ये-જે લોકો પરમેશ્વરને છોડીને असम्भूतिम्-અનાદિ, અનુત્પન્ન, સત્વ, રજ અને તમો-ગુણરૂપ પ્રકૃતિ નામક જડ પદાર્થને उपासते-ઉપાસનીય માને છે ते-તેઓ अन्धम्-આવરણ કરનાર तमः-અંધકારમાં प्र-સારી રીતે विशन्ति-પ્રવેશ કરે છે.

ये-જે લોકો सम्भूत्याम्-મહત્તત્ત્વાદિ સ્વરૂપમાં પરિણત થયેલી સૃષ્ટિમાં रताः-રમણ કરે છે, ते-તેઓ उ-નિઃસંદેહ ततः-તેથી भूय, इव-અધિકતર तमः-અવિદ્યારૂપ અંધકારને [प्रविशन्ति]-પ્રાપ્ત થાય છે. અર્થાત્ - અંધકારમાં પ્રવેશ કરે છે. (૯)

ભાવાર્થ : જે લોકો સમસ્ત જડ જગતનાં અનાદિ નિત્ય કારણ = પ્રકૃતિનો ઉપાસ્યરૂપમાં સ્વીકાર કરે છે, તેઓ અજ્ઞાન-અવિદ્યાને પ્રાપ્ત કરીને સદા ક્લેશ = દુઃખ ભોગવે છે.

જે તે કારણ = પ્રકૃતિથી ઉત્પન્ન થયેલ પૃથિવી આદિ સ્થૂલ અથવા સૂક્ષ્મ કાર્યકારણ નામક અનિત્ય સંયોગથી ઉત્પન્ન કાર્ય જગતને ઉપાસ્ય માને છે, તેઓ ઘોર અવિદ્યા-અજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરીને તેનાથી પણ અધિકતર ક્લેશ = દુઃખ ભોગવે છે, તેથી સચ્ચિદાનંદસ્વરૂપ પરમાત્માની જ સદા ઉપાસના કરવી જોઈએ. (૯)

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे॥ १०॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ અમે धीराणाम्-મેધાવી, વિદ્વાન્, યોગીજનોના વચન =ઉપદેશ शुश्रुमः-સાંભળીએ છીએ ये-જેઓએ नः-અમને तत्-તે સંભૂતિ અને અસંભૂતિ બન્નેનું વિવેચન विचचक्षिरे-વ્યાખ્યાપૂર્વક સમજાવેલ છે તે યોગીજનો सम्भवात्-સંયોગથી ઉત્પન્ન કાર્યથી अन्यत् एव-અન્ય જ કાર્યો વા ફળ आहुः-બતાવે છે તથા असम्भवात्-ઉત્પન્ન ન થનાર કારણથી अन्यत्-ભિન્ન કાર્ય વા ફળ आहुः-બતાવે છે. इति-એ રીતે તમે પણ સાંભળો.

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! જેમ વિદ્વાન લોકો કાર્યરૂપી અને કારણરૂપી વસ્તુથી, વક્ષ્યમાણ =આગળ કહેવામાં આવનાર ભિન્ન-ભિન્ન ઉપકારને ગ્રહણ કરે છે તથા તેના ગુણોને જાણીને અન્યોને ગ્રહણ કરાવે છે-બતાવે છે.

તે કાર્ય અને કારણના ગુણોને જાણીને અન્યોને જણાવે છે, તેમ તમે પણ નિશ્ચય કરો. (૧૦)

सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयᳬं सह।

विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते॥ ११॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! यः-જે વિદ્વાન્ सम्भूतिम्-જેમાં સર્વ પદાર્થો ઉત્પન્ન થાય છે તે કાર્યરૂપ સૃષ્ટિને च-અને સૃષ્ટિના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને તથા विनाशम्-જેમાં પદાર્થ વિનષ્ટ = અદૃશ્ય થાય છે તે કારણરૂપ જગત અર્થાત્ પ્રકૃતિને च-અને તેના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને सह-એક સાથે उभयम्- બન્ને तत्-તે કાર્ય અને કારણ રૂપ જગતને वेद-જાણે છે; તે વિદ્વાન विनाशेन-નિત્યસ્વરૂપને જાણવાના કારણે मृत्युम्-શરીર અને આત્માના વિયોગથી ઉત્પન્ન દુઃખને तीर्त्त्वा-પાર કરીને सम्भूत्या-શરીર, ઇન્દ્રિય અને અન્તઃકરણરૂપ ઉત્પન્ન થનારી કાર્યરૂપ, ધર્મકાર્યમાં પ્રવૃત્ત કરાવનારી સૃષ્ટિના સહયોગથી अमृतम्-મોક્ષસુખને अश्नुते-પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૧)

ભાવાર્થ : હે મનુષ્યો ! કાર્ય = સૃષ્ટિ, કારણ = પ્રકૃતિ નામક વસ્તુઓ નિરર્થક નથી. પરન્તુ તમે લોકો કાર્ય અને કારણ એ બન્નેના ગુણ-કર્મ-સ્વભાવને જાણીને, ધર્મથી લઈને મોક્ષ સુધીનાં સાધનોમાં તેનો ઉપયોગ કરીને, પોતાના આત્માના સંબંધી કાર્ય તથા કારણનાં વિજ્ઞાનથી અને [આત્માની] નિત્યતા [ના જ્ઞાન]થી મૃત્યુના ભયનો ત્યાગ કરીને મોક્ષની સિદ્ધિ કરો. આ રીતે કાર્ય = સૃષ્ટિ અને કારણ = પ્રકૃતિના દ્વારા ભિન્ન-ભિન્ન ધર્માદિ અને મોક્ષસિદ્ધિરૂપ ફળને પ્રાપ્ત કરવા જોઈએ. ઉપાસના પ્રકરણમાં આ કાર્યકારણની અર્થાત્ સૃષ્ટિ અને પ્રકૃતિની ઉપાસના કરવાનો નિષેધ સમજવો જોઈએ. (૧૧)

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय ऽ इव ते तमो य ऽ उ विद्यायाँ रताः॥ १२॥

પદાર્થ : ये-જે મનુષ્યો अविद्याम्-અનિત્યને નિત્ય, અપવિત્રને પવિત્ર, દુઃખને સુખ અને અનાત્મા = શરીરાદિ જડને આત્મા = ચેતન જાણવારૂપ અવિદ્યા છે, તે જ્ઞાનાદિ ગુણોથી રહિત, કારણરૂપ પરમેશ્વરથી ભિન્ન જડ વસ્તુની उपासते-ઉપાસના કરે છે, ते-તેઓ अन्धम्-જ્ઞાન દૃષ્ટિને ઢાંકનાર तमः-ઘોર અંધકાર અને અત્યંત અજ્ઞાનમાં प्र,विशन्ति-પ્રવેશ કરે છે.

ये-જે પોતાની જાતને પંડિત માનનારા विद्यायाम्-શબ્દ, અર્થ અને તેઓના સંબંધને જાણવા માત્ર તથા અવૈદિક આચરણમાં रताः-રમણ કરે છે ते-તેઓ उ-નિશ્ચયથી જ ततः-તેનાથી भूय, इव-અધિકતર तमः-અજ્ઞાનરૂપી અંધકારમાં પ્રવેશ કરે છે. (૧૨)

ભાવાર્થ : જે જે જ્ઞાન આદિ ગુણોથી યુક્ત ચેતન વસ્તુ છે, તે જ્ઞાતા અને જે અવિદ્યારૂપ છે તે માત્ર જ્ઞેય કહેવાય છે. જે ચેતન બ્રહ્મ અથવા આત્મા વિદ્વાન આત્મા છે, તે જ ઉપાસના અને સેવન કરવા યોગ્ય છે. જે તેનાથી ભિન્ન છે, તે ઉપાસના યોગ્ય નહિ પરંતુ ઉપયોગ કરવા યોગ્ય છે.

જે મનુષ્યો અવિદ્યા, અસ્મિતા, રાગ, દ્વેષ અને અભિનિવેશ એ પાંચ ક્લેશોથી યુક્ત છે, તેઓ પરમેશ્વરને છોડીને તેનાથી ભિન્ન જડ વસ્તુની ઉપાસના કરીને મહાન દુઃખસાગરમાં ડૂબે છે.

જે શબ્દ, અર્થ અને સંબંધ [શબ્દાર્થ અને અન્વય] માત્ર સંસ્કૃત ભાષા ભણીને સત્યભાષણ અને પક્ષપાતરહિત ન્યાયાચરણરૂપી ધર્મનું પાલન કરતા નથી, પરંતુ અભિમાની બનીને વિદ્યાનો તિરસ્કાર કરીને, અવિદ્યાને જ માને છે; તેઓ પણ અત્યંત અજ્ઞાનરૂપ-અંધકારરૂપ દુઃખસાગરમાં નિરંતર દુઃખી

રહે છે. (૧૨)

अ॒न्यदे॒वाहुर्वि॒द्याया॑ऽ अ॒न्यदा॑हु॒रवि॑द्यायाः।
इति॑ शुश्रु॒म धीरा॑णां॒ ये न॒स्तद्वि॑चचक्षि॒रे॥ १३॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! ये-જે વિદ્વાન લોકો नः-અમારે માટે विचचक्षिरे-વ્યાખ્યા કરી ગયા છે કે विद्यायाः-પૂર્વમંત્રમાં કહેલી વિદ્યાનું अन्यत्-જુદુ જ કાર્ય વા ફળ आहुः-કહેલ છે. अविद्यायाः-પૂર્વ મંત્રમાં પ્રતિપાદિત અવિદ્યાનું अन्यत्, एव-જુદુ જ ફળ आहुः-કહેલ છે. इति-એમ તે धीराणाम्-આત્મજ્ઞાની વિદ્વાનોની પાસેથી तत्-એ ઉપદેશ અમે शुश्रुम-સાંભળેલ છે. (૧૩)

ભાવાર્થ : જ્ઞાન આદિ ગુણોથી યુક્ત ચેતનથી જે ઉપયોગ લઈ શકાય છે, તે અજ્ઞાનયુક્ત જડ વસ્તુથી લઈ શકાતો નથી અને જે જડ વસ્તુથી જે પ્રયોજન સિદ્ધ થાય છે, તે ચેતનથી થતું નથી. આ રીતે સર્વ મનુષ્યોએ વિદ્વાનોનો સંગ, વિજ્ઞાન, યોગ અને ધર્માચરણથી એ બન્નેનો વિવેક કરીને, જડ અને ચેતન બન્નેનો સમ્યક્ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. (૧૩)

वि॒द्यां चावि॑द्यां च॒ यस्तद्वेदो॒भय॑ꣳ स॒ह।
अवि॑द्यया मृ॒त्युं ती॒र्त्वा वि॒द्यया॒ मृत॑मश्नुते॥ १४॥

પદાર્થ : यः-જે વિદ્વાન્ विद्याम्-પૂર્વમંત્રોક્ત વિદ્યા च-અને તેના સાધન ઉપસાધનોને તથા अविद्याम्-પૂર્વ પ્રતિપાદિત અવિદ્યા च-અને તેના ઉપયોગી વિવિધ સાધનોને तत्, उभयम्, सह-તે બન્નેની સાથે-સાથે वेद-જાણે છે; सः-તે अविद्यया-શરીર આદિ જડ પદાર્થોના દ્વારા કરેલા પુરુષાર્થથી मृत्युम्-મૃત્યુ દુઃખના ભયને तीर्त्वा-તરીને=પાર કરીને विद्यया-આત્મા અને શુદ્ધ અન્તઃકરણના સંયોગરૂપ ધર્મથી ઉત્પન્ન યથાર્થ દર્શનરૂપ જ્ઞાનથી अमृतम्-અવિનાશી આત્મસ્વરૂપને અથવા પરમાત્માને अश्नुते-પ્રાપ્ત કરે છે. (૧૪)

ભાવાર્થ : જે મનુષ્યો વિદ્યા અને અવિદ્યાનાં સ્વરૂપને જાણીને, એ બન્ને જડ અને ચેતન પદાર્થ સાધક છે, એવો નિશ્ચય કરીને સમસ્ત શરીર આદિ જડ અને ચેતન આત્માનો ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિને માટે એક સાથે પ્રયોગ કરે છે, તેઓ લૌકિક દુઃખથી છૂટીને પારમાર્થિક સુખ =મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે.

જો જડ = અવિદ્યા પ્રકૃતિ આદિ કારણ વસ્તુ અથવા શરીર આદિ કાર્ય વસ્તુ ન હોય, તો પરમાત્મા જગતની ઉત્પત્તિ તથા જીવ કર્મ, ઉપાસના તથા જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે કરી શકે ?

એટલા માટે માત્ર જડ = અવિદ્યા દ્વારા અને માત્ર ચેતન = વિદ્યા દ્વારા, અથવા માત્ર કર્મ = અવિદ્યા દ્વારા અને માત્ર જ્ઞાન = વિદ્યા દ્વારા કોઈપણ મનુષ્ય ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષની સિદ્ધિ કરી શકતો નથી. (૧૪)

वा॒युरनि॑लम॒मृत॒मथे॒दं भस्मा॑न्त॒ꣳ शरी॑रम्।

ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृतꣳ स्मर॥ १५॥

પદાર્થ : હે क्रतो-કર્મ કરનાર જીવ ! દેહના અન્ત સમયે ओ३म्-ઓમ્, એ જેનું નિજ નામ છે, તે ઈશ્વરનું स्मर-સ્મરણ કર; क्लिबे-પોતાના સામર્થ્યની પ્રાપ્તિ માટે પરમાત્મા અને પોતાનાં સ્વરૂપનું स्मर-સ્મરણ કર; कृतम्-અને જે કંઈ જીવનમાં [કર્મ] કરેલ છે, તેનું स्मर-સ્મરણ કર.

અહીં વિદ્યમાન वायुः-ધનંજય આદિ રૂપ વાયુ अनिलम्-કારણરૂપ વાયુને તથા અનિલ अमृतम्-નાશરહિત કારણને ધારણ કરે છે.

अथ-અને इदम्-આ शरीरम्-ચેષ્ટા આદિનું આશ્રય એવું આ નાશવાન શરીર भस्मान्तम्-અન્તમાં ભસ્મ થનાર છે; તેમ જાણો. (૧૫)

ભાવાર્થ : મનુષ્યોએ, જેમ મૃત્યુ સમયે ચિત્તની વૃત્તિ હોય છે અને શરીરથી આત્મા અલગ-છૂટો પડે છે, તેમ જ ચિત્તની વૃત્તિ અને શરીર તથા આત્માના સંબંધને જીવનકાળમાં જાણવા જોઈએ.

આ શરીરની ભસ્માન્ત = અન્ત્યેષ્ટિ ક્રિયા કરવી જોઈએ, આ દાહ ક્રિયા પછી કોઈપણ સંસ્કાર ફરી ન કરવો જોઈએ.

જીવનકાળમા એક પરમેશ્વરની આજ્ઞાનું પાલન, ઉપાસના તથા પોતાના સામર્થ્યની વૃદ્ધિ કરવી જોઈએ.

કરેલું કર્મ કદી પણ નિષ્ફળ હોતું નથી, તેમ માનીને ધર્મમાં રુચિ અને અધર્મમાં અરુચિ રાખવી જોઈએ. (૧૫)

अग्ने नय सुपथा राये ऽ अस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम ऽ उक्तिं विधेम॥ १६॥

પદાર્થ : હે देव-દિવ્યસ્વરૂપ अग्ने-સ્વપ્રકાશસ્વરૂપ કરુણામય જગદીશ્વર ! જેથી અમે ते-આપને માટે भूयिष्ठाम्-અધિકતર नमः, उक्तिम्-સત્કારપૂર્વક પ્રશંસા विधेम-કરીએ તેથી विद्वान्-સર્વને જાણનાર આપ अस्मत्-અમારાથી जुहुराणम्-કુટિલતારૂપ एनः-પાપાચરણને युयोधि-દૂર કરો.

अस्मान्-અમને-જીવોને राये-વિજ્ઞાન, ધન અને ધનથી પ્રાપ્ત થનાર સુખની પ્રાપ્તિને માટે सुपथा-ધર્માનુકૂળ માર્ગથી विश्वानि-સર્વ वयुनानि-શ્રેષ્ઠ જ્ઞાન અને શ્રેષ્ઠ બુદ્ધિ नय-પ્રાપ્ત કરાવો. (૧૬)

ભાવાર્થ : જે સત્ય ભાવનાથી ઈશ્વરની ઉપાસના કરે છે, પોતાની શક્તિ અનુસાર તેની આજ્ઞાનું પાલન કરે છે તથા પરમાત્માને સર્વથી અધિક સત્કાર કરવા યોગ્ય માને છે, તેને દયાળુ ઈશ્વર પાપાચરણના માર્ગથી પૃથક્ કરીને, ધર્મના માર્ગમાં ચલાવીને તથા વિજ્ઞાન પ્રદાન કરીને, ધર્મ-અર્થ-કામ-મોક્ષની પ્રાપ્તિને માટે સમર્થ બનાવી દે છે. તેથી સર્વ મનુષ્યોએ એક એવા અદ્વિતીય ઈશ્વરને છોડીને બીજા કોઈની ઉપાસના કદીપણ કરવી નહિ. (૧૬)

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। ओ३म् खं ब्रह्म॥ १७॥

પદાર્થ : હે મનુષ્યો ! જે हिरण्मयेन-જ્યોતિસ્વરૂપ पात्रेण-સર્વના રક્ષક મારા દ્વારા सत्यस्य-અવિનાશી સત્‌રૂપકારણ [પ્રકૃતિ]ના अपिहितम्-આચ્છાદિત-ઢાંકેલા मुखम्-મુખની સમાન ઉત્તમ અંગનો વિકાસ કરવામાં આવે છે; यः-જે असौ-તે आदित्ये-પ્રાણ વા સૂર્યમંડળમાં पुरुषः-પૂર્ણ પરમાત્મા છે, सः-તે असौ-પરોક્ષરૂપ अहम्-હું खम्-આકાશ સમાન વ્યાપક ब्रह्म-ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવની દૃષ્ટિએ સર્વથી મહાન છું ओ३म्-સર્વ જગતનો રક્ષક 'ओ३म्' છું તે નામ જાણો. (૧૭)

ભાવાર્થ : સર્વ મનુષ્યોને ઈશ્વર ઉપદેશ કરે છે - હે મનુષ્યો ! જે હું અહીં છું, તે જ અન્ય સૂર્ય આદિમાં છું; જે અન્યત્ર સૂર્ય આદિમાં છું, તે જ અહીં છું; હું સર્વત્ર પરિપૂર્ણ, આકાશની સમાન વ્યાપક છું; મારાથી મહાન બીજો કોઈ નથી, હું જ સર્વથી મહાન = મોટો છું.

શ્રેષ્ઠ લક્ષણોવાળા પુત્રની સમાન પ્રાણોથી પ્રિય મારું પોતાનું નામ 'ओ३म्' *છે.*

જે પ્રેમ અને સત્યાચરણ દ્વારા મારા શરણમાં આવે છે; તેની અવિદ્યાને હું અન્તર્યામીરૂપથી નષ્ટ કરીને, તેના આત્માને પ્રકાશિત કરીને, તેને શ્રેષ્ઠ ગુણ-કર્મ-સ્વભાવવાળો બનાવીને, તેનામાં સત્યમય આચરણ સ્થાપિત કરીને, તેને યોગથી ઉત્પન્ન થનાર શુદ્ધ વિજ્ઞાન આપીને તથા સર્વ દુઃખોથી છોડાવીને મોક્ષસુખ પ્રદાન કરું છું. યજુર્વેદભાષ્યની અહીં સમાપ્તિ પર અંતમાં ओ३म्-*નામનું સ્મરણ*
ક ર ` લ
છે. (૧૭)

[અધ્યાયનો ઉપસંહાર :] આ અધ્યાયમાં ઈશ્વરના ગુણોનું વર્ણન (૧), અધર્મના ત્યાગનો ઉપદેશ (૧), સદા શુભ કર્મનાં અનુષ્ઠાનની આવશ્યકતા (૨), અધર્માચરણની નિંદા (૩), પરમેશ્વરના અતિ સૂક્ષ્મ સ્વરૂપનું વર્ણન (૪), ઈશ્વરનું વિદ્વાનો દ્વારા જ્ઞેયત્વ અને અવિદ્વાનો દ્વારા અજ્ઞેયત્વ (૫), સર્વત્ર આત્મભાવથી અહિંસા ધર્મનું પાલન અને તેથી મોહ, શોક આદિનો ત્યાગ (૬-૭), ઈશ્વરનું જન્મ આદિ દોષરહિત હોવું (૮), વેદવિદ્યાનો ઉપદેશ (૮), કાર્ય-કારણરૂપ જડની ઉપાસનાનો નિષેધ, (૯), તે કાર્યકારણ અને કારણથી મૃત્યુનું નિવારણ (૧૦), મોક્ષની સિદ્ધિ કરવી (૧૧), જડ વસ્તુની ઉપાસનાનો નિષેધ (૧૨), ચેતનની ઉપાસનાનું વિધાન (૧૨), જડ-ચેતન બન્નેનાં સ્વરૂપનાં જ્ઞાનની આવશ્યક્તા (૧૪), શરીરના સ્વભાવનું વર્ણન (૧૫), પરમાત્માને આત્મામાં સ્થાપિત કરીને શરીરનો ત્યાગ કરવો (૧૫), શરીરના દાહ પછી અન્ય ક્રિયાના અનુષ્ઠાનનો નિષેધ (૧૫), અધર્મનો ત્યાગ અને ધર્મની વૃદ્ધિને માટે પરમેશ્વરને પ્રાર્થના (૧૬), ઈશ્વરનાં સ્વરૂપનું વર્ણન (૧૭) અને સર્વ નામોથી ઈશ્વરનાં 'ओ३म्' એ નામની પ્રધાનતાનું પ્રતિપાદન (૧૭) કરેલ છે; તેથી આ અધ્યાયના અર્થની પૂર્વ અધ્યાયના પ્રતિપાદિત અર્થની સાથે સંગતિ છે; તેમ જાણવું જોઈએ.

॥ इति चत्वारिंशोऽध्यायः ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणां श्रीपरमविदुषां विरजानन्दसरस्वतीस्वामीनां शिष्येण श्रीमद्दयानन्द-सरस्वतीस्वामीना निर्मिते यजुर्वेदभाषाभाष्ये चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः समाप्तः ।

समाप्तश्चायं ग्रन्थ इति ॥

